મળવાનું ઠેકાણું :
શ્રી અ. ભા. શ્વે. સ્થાનકવાસી
જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ,
ઠે. ગરેડિયા કૂવા રોડ, ગ્રીન લૉજ
પાસે, રાજકોટ, (સૌરાષ્ટ્ર).

Published by :
Shri Akhil Bharat S. S.
Jain Shastroddhara Samiti,
Garedia Kuva Road, RAJKOT,
(Saurashtra), W. Ry, India.

×
પ્રથમ આવૃત્તિ : પ્રત ૧૦૦૦
વીર સંવત્ : ૨૪૮૮
વિક્રમ સંવત્ : ૨૦૧૮
ઈસવીસન : ૧૯૬૨
×

: મુદ્રક :
મણિલાલ છગનલાલ શાહ
નવપ્રભાત પ્રિન્ટિંગ પ્રેસ,
ઘીકાંટા રોડ : : અમદાવાદ

प्रश्नव्याकरणसूत्रकी विषयानुक्रमाणिका

अनुक्रमांक	विषय	पृष्ठांक
१	मङ्गलाचरण	१—२
२	अवतरणिका	३–१२
	प्रथम अध्ययन–प्रथम भाग	
३	आस्रव और संवर के लक्षणों का निरूपण	१३–१८
४	पहला अधर्मद्वार का निरूपण	१९–२६
५	" मृषावादरूप " दूसरा अधर्मद्वार का निरूपण	२७–३५
६	" यथाकृत् " नामके तीसरा अधर्मद्वार का निरूपण	३६–३९
७	स्थलचर चतुष्पद प्राणीयों का निरूपण	४०–४२
८	" उरः परिसर्प " के भेदों का निरूपण	४३–४४
९	भुजपरिसर्प के भेदों का निरूपण	४५–४६
१०	खेचर जीवों का निरूपण	४७–५०
११	प्राणियों के वधके प्रकार का निरूपण	५१–५३
१२	चतुरिंद्रिय जीवोंकी हिंसा करने वालोंके प्रयोजनका निरूपण	५४–६२
१३	पृथिवीकाय जीवों के हिंसा के कारण का निरूपण	६३–६७
१४	अप्काय जीवों की हिंसा करने के प्रयोजन का निरूपण	६८–
१५	' वायुकाय ' जीवों की हिंसा करनेके प्रयोजनका निरूपण	६९–७०
१६	'वनस्पतिकाय' जीवोंकी हिंसा करनेके प्रयोजनका निरूपण	७०–७४
१७	स्थावरादि जीवों को कैसे २ भावों से युक्त होकर हिंसक जन मारते हैं उनका निरूपण	७४–८४
१८	जातिनिर्देशपूर्वक मंदबुद्धि वाले लोक कौन २ जीवों को मारते है उनका निरूपण	८५–८६
१९	कौन २ जीव पाप करते है उनका निरूपण	८७–९०
२०	जैसे २ कर्म करते है वैसा ही फल प्राप्त होनेका निरूपण	९१–९६
२१	नरक में उत्पत्ति के अनन्तर वहां के दुःखानुभवका निरूपण	९७–१०४
२२	पापि जीव नरकों में कैसी २ वेदना को कितने काल भोगते है उनका निरूपण	१०५–१०६

२३ नारकीय जीव क्या २ कहते हैं वह वर्णन १०६–१०८
२४ परमाधार्मिक नारकीय जीवों के प्रति क्या२ करते है उनका कथन १०९–११०
२५ वेदनाओं से पीडित नारक जीवों के आक्रंद का निरूपण १११–११७
२६ परमाधार्मिकों के द्वारा की गई यातनाओं के प्रकार का निरूपण ११७–११८
२७ यातना के विषय में आयुधों (शस्त्रों) के प्रकारों कों निरूपण ११९–१२१
२८ परस्पर में वेदना को उत्पन्न करते हुए नारकी यों कि दशा का वर्णन १२१–१२७
२९ नारक जीवों के पश्चात्ताप का निरूपण १२८–१३०
३० तिर्यग्गति जीवो के दुःखों का निरूपण १३१–१३६
३१ चतुरिन्द्रिय जीवों के दुःख का निरूपण १३७–१३८
३२ त्रिन्द्रिय जीवों के दु:ख का निरूपण १३८–१३९
३३ द्विन्द्रिय जीवों के दुःख का वर्णन १४०–
३४ एकेन्द्रिय जीव के दुःख का वर्णन १४१–१४४
३५ दुःखों के प्रकार का वर्णन १४५–१५१
३६ मनुष्यभव में दुःखों के प्रकार का निरूपण १५२–१६३

दूसरा अध्ययन

३७ अलीकवचन का निरूपण १६४–१६८
३८ अलीकवचन के नाम का निरूपण १६८–१७४
३९ जिस भाव से अलीक वचन कहा जाता है उसका निरूपण १७४–१७९
४० नास्तिकवादियों के मत का निरूपण १८०–२०५
४१ अन्य मनुष्यों के मृषाभाषण का निरूपण २०६–२१४
४२ मृषावादियों के जीव घातक वचन का निरूपण २१५–२४१
४३ मृषावादियों को नरक प्राप्तिरूप फलप्राप्ति का वर्णन २४२–२५२
४४ अलीक वचन का फलितार्थ निरूपण २५३–२५६

तीसरा अध्ययन

४५ अदत्तादान के स्वरूप का निरूपण २५७–२६१

४६ अदत्तादान के तीस नामों का निरूपण २६४–२६९

४७ पञ्चम अन्तर्द्वारगत तस्करों (चोरों) का वर्णन २७०–२७५

४८ परधनलुब्ध राजाओं के स्वरूप का निरूपण २७६–२८२

४९ परधन में लुब्द्ध राजाओं के संग्राम का वर्णन २८३–२९६

५० अदत्तादान (चोरी) के प्रकार का निरूपण २९७–३०१

५१ सागर के स्वरूप का निरूपण ३०२–३०६

५२ तस्कर के कार्य का निरूपण ३०७–३१७

५३ अदत्तादान के फल का निरूपण ३१७–३२२

५४ चोर लोक क्या फल पाते है उनका निरूपण ३२२–३३०

५५ अदत्तग्राही चोर कैसे होकर कैसे फल को पाते है उनका निरूपण ३३०–३४६

५६ अदत्ताग्राही चोर जिस फल को पाते है उसका निरूपण ३४७–३५४

५७ अदत्तग्राही चोर की परलोक में कौन गति होती है उनका निरूपण ३५४–३६०

५८ जीव ज्ञानावरण आदि अष्टविध कर्मो से बंधदशाको प्राप्तकर संसारसागर में रहते हैं इस प्रकार का संसारगागर के स्वरूप का निरूपण ३६०–३७७

५९ किस प्रकार के अदत्ताग्राही चोरों को किस प्रकार का फल मिलते है उनका निरूपण ३७८–३८६

६० तीसरे अध्ययन का उपसंहार ३८७–३९०

चोथा अध्ययन

६१ अब्रह्म के स्वरूप का निरूपण ३९१–३९५

६२ अब्रह्म के नामों का और उसके लक्षणों का निरूपण ३९५–४००

६३ मोह से मोहित वुद्धिवालों से अब्रह्म के सेवन के प्रकारों का निरूपण ४००–४०३

६४ चक्रवर्त्यादिकों का और उनके लक्षणों का वर्णन ४०३–४१९

६५ बलदेव और वासुदेव के स्वरूप का निरूपण ४१९–४४३

६६ अब्रह्म सेवी कौन होते है ? उनका निरूपण ४४३–४४१

६७ युगलिकों के स्वरूप का निरूपण ४४५–४६७
६८ युगलिनीयों के स्वरूप का निरूपण ४६७–४८९
६९ चौथे अन्तर्द्वार का निरूपण ४८९–४९४
७० चोथा अध्ययन का उपसंहार ४९४–४९८

पांचवा अध्ययन

७१ परिग्रह के स्वरूप का निरूपण ४९९–५०६
७२ परिग्रह के तीस नामों का निरूपण ५०७–५१२
७३ जिस प्रकार से जो जीव परिग्रह करते हैं उनका निरूपण ५१२–५२७
७४ मनुष्य के परिग्रह का निरूपण ५२८–५३९
७५ परिग्रह से जीव को किस फल की प्राप्ति होती हैं उनका निरूपण ५४०–५४६
७६ पांचवा अध्ययन का उपसंहार ५४७–५५०

दूसरा भाग–पहला अध्ययन

७७ पांचसंवर द्वारों के नाम और उनके लक्षणों का निरूपण ५५१–५५८
७८ प्रथमसंवरद्वार का निरूपण ५५९–५६९
७९ अहिंसा के महात्म्य का निरूपण ५७०–५७२
८० अहिंसा धारण करने वाले महापुरुष के स्वरूप का निरूपण ५७३–६०१
८१ अहिंसा को पालन करने को उद्यत होने वालों के कर्त्तव्य का निरूपण ६०२–६१६
८२ अहिंसाव्रत की ‘ईर्यासमिति’ नाम की प्रथम भावना का निरूपण ६१७–६२२
८३ ‘मनोगुप्ति’ नाम की दूसरी भावना का निरूपण ६२३–६२५
८४ ‘वचनसमिति’ नाम की तीसरी भावनाके स्वरूप का निरूपण ६२६–६२८
८५ ‘एषणासमिति’ नामकी चौथी भावना के स्वरूप का निरूपण ६२९–६३९
८६ ‘निक्षेप’ नामकी पांचवी भावना का निरूपण ६४०–६४२
८७ प्रथम अध्ययन का उपसंहार ६४३–६४८

दूसरा अध्ययन

८८ सत्य के स्वरूप का निरूपण ६४९–६८४
८९ ‘अनुवीचिन्त्य समिति’ नाम की प्रथम भावना के

स्वरूप का निरूपण ६८५-६८८
९० 'क्रोधनिग्रहरूप' दूसरी भावना का निरूपण ६८९-६९२
९१ 'लोभनिग्रहरूप' तीसरी भावना का निरूपण ६९३-६९६
९२ 'धैर्य' नाम की चौथी भावना के स्वरूप का निरूपण ६९७-७००
९३ पांचवी 'मौन' भावना के स्वरूप का निरूपण ७००-७०४
९४ अध्ययन का उपसंहार ७०५-७१०

तीसरा अध्ययन

९५ अदत्तदानविरमण के स्वरूप का निरूपण ७११-७२१
९६ कैसा मुनि अदत्तादानादि व्रत का आराधन नहीं करते उसका निरूपण ७२२-७२७
९७ कैसा मुनि इस व्रत का पालन कर सकते है उसका निरूपण ७२७-७४०
९८ 'विविक्तवसतिवास' नाम की प्रथम भावना का निरूपण ७४१-७४७
९९ 'अनुज्ञातसंस्तारक' नामकी दूसरी भावना का निरूपण ७४८-७५१
१०० 'शय्यापरिकर्म वर्जन' रूप तीसरी भावना का निरूपण ७५२-७५६
१०१ 'अनुज्ञातभक्त' नामक चौथी भावना का निरूपण ७५७-७६०
१०२ 'विनय' नामकी पांचवी भावना का निरूपण ७६१-७६४
१०३ अध्ययन का उपसंहार ७६५-७७०

चौथा अध्ययन

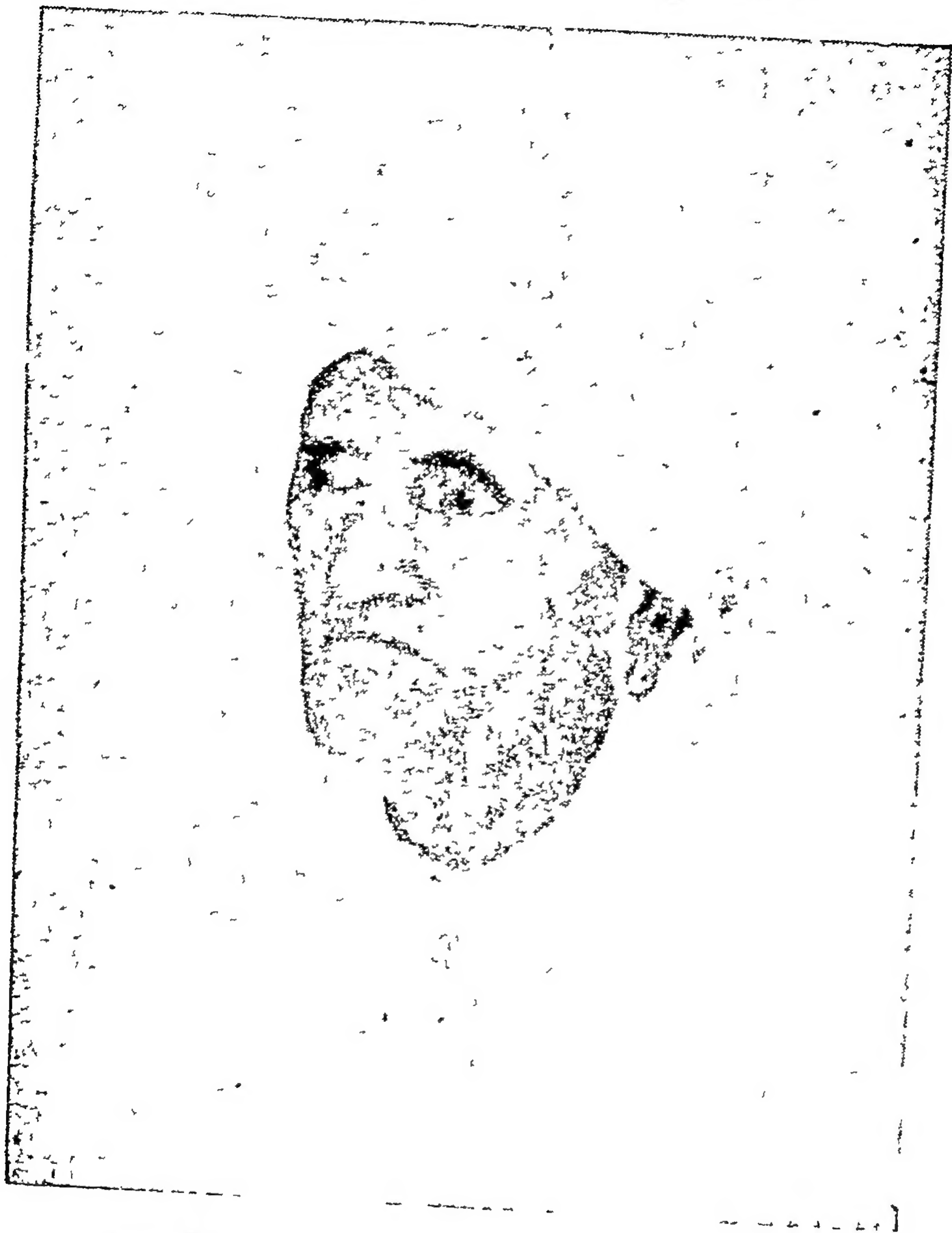
१०४ ब्रह्मचर्यके स्वरूप का निरूपण ७७१-७८८
१०५ ब्रह्मचर्य आराधन का फल ७८९-७९५
१०६ ब्रह्मचारो को आचरणीय और अनाचणीय आदिका निरूपण ७९६-८०३
१०७ 'असंसक्त वासवसति' नामकी प्रथम भावना का निरूपण ८०४-८०८
१०८ 'स्त्रीकथा विरति' नामकी दूसरी भावना का निरूपण ८०९-८१५
१०९ 'स्त्रीरूप निरीक्षण' वर्जन नामकी तीसरी भावना का निरूपण ८१६-८१८
११० 'पूर्वरत पूर्वक्रीडितादि' विरति नामकी चौथी भावना का निरूपण ८१९-८२५
१११ 'प्रणीतभोजनवर्जन' नामकी पांचवी भावना का निरूपण ८२६-८२९
११२ चतुर्थ अध्ययन का उपसंहार ८३०-८३४

पांचवा अध्ययन

११३	परिग्रहविरमण का निरूपण	८३५–८४५
११४	त्रसस्थावर विषयक अपरिग्रह का वर्णन	८४६–८५२
११५	अकल्पनीय वस्तु का निरूपण	८५३–८६०
११६	कल्पनीय अशनादिक का निरूपण	८६०–८७०
११७	संयताचार पालक की स्थिति का निरूपण	८७१–८८९
११८	' निस्पृहा ' नामकी पहली भावना का निरूपग	८९०–९००
११९	चक्षुरिन्द्रिय संवर ' नामकी दूसरी भावना का निरूपण	९०२–९१५
१२०	' घ्राणेन्द्रियसंवर ' नामकी तीसरी भावना का निरूपण	९१६–९२२
१२१	जिह्वेन्द्रियसंवर ' नामकी चौथी भावना का निरूपण	९२३–९२९
१२२	' स्पर्शेन्द्रियसंवर ' नामकी पांचवी भावना का निरूपण	९३०–९४१
१२३	अध्ययन का उपसंहार	९४२–९४८
१२४	दशमाङ्ग में श्रुतस्कंधादि का निरूपण	९४९–
१२५	शास्त्रप्रशस्ति	९५०–९५३

–ःसमाप्तः–

રૂા. ૫૦૦૧) આપનાર આદ્ય મુરબ્બીશ્રી

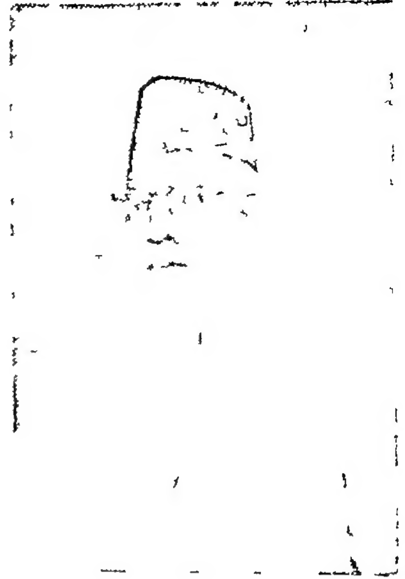


સ્વ. શેઠ મુકુન્દચંદજી બાલીયા (પાલીવાળા)

અમદાવાદ.



શેઠ શામજી વેલજી વીરાણી
રાજકોટ.



શેઠ રામજી શામજી વીરાણી
રાજકોટ.



શેઠ મીશ્રીલાલજી અને જેવંતરાજજી લુણીયા
અમદાવાદ.

श्रीमान् सेठसाहेब श्री मुकनचन्दजी बालियाजीका

संक्षेपमें जीवनचरित्र

श्रीमान् सेठ साहब श्री मुकनचन्दजी साहब पाली (मारवाड़) के निवासी थे। आपका शुभ जन्म संवत् १९४० फाल्गुन कृष्ण पक्ष८ रविवारको हुआ था। आपका पवित्र वंश सदा धर्मशील, विद्याप्रेमी और उदारचरित रहा है। आपके परम पूज्य पितामह श्रीमान् सेठ सा. श्रीपूनमचन्दजी साहब बालिया थे। सेठ सा. श्रीपूनमचन्दजी साहब बालिया के दो पुत्र थे, एक श्री राजारामजी साहब और दूसरे श्रीअगरचन्दजी साहब। आगे चलकर श्रीमान् सेठसा. श्री राजारामजी सा.के श्री ताराचन्दजी साहब और श्रीमुकनचन्दजी साहब करके दो पुत्र थे, किंतु अगरचन्दजी सा. के पुत्र नहीं था। इसी लिए श्रीमान् अगरचन्दजीसाहबने अपने भाईके ही पुत्र श्रीमुकनचन्दजी साहबको दत्तक (गोद) ले लिया। श्रीमान सेठ साहब श्री मुकनचन्दजी शुरु से ही बड़े होनहार, धर्मशील और उदार थे। सौभाग्य से आपकी धर्मपत्नी श्रीमती श्री सुगनकुंवर बाईजी भी धर्मशीलता एवं उदार व्यवहार में आपके ही समान थीं श्रीमती श्री सुगनकुंवर बाइजी की धर्मश्रद्धा का सु प्रभाव आज भी आपके कुटुंब पर अच्छी तरह दिखाई देता है। आप दोनों ने धर्म के दीपक से न केवल अपने परिवार को ही प्रकाशित किया है, किंतु जीवन में अपने संपर्क में आनेवाले सभी धर्म प्रेमी जिज्ञासुओं को धर्म श्रद्धालु बना ने का पवित्रकार्य किया है। यों सेठ साहब श्री मुकनचन्दजी सा बड़ी सरल प्रकृतिके सज्जन थे। व्यापार आपका समुद्रपार अनेक देशों में फैला हुआ था। आपकी जमींदारी भी खूब थी। आपके रहन-सहन और व्यवहार से सदा सादगी टपकती थी। जितने आप

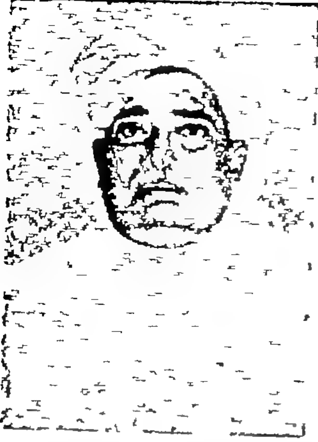
उदार-चरित थे, उतने ही आप शास्त्रों के ज्ञाता भी थे। खास करके धर्मशास्त्रमें आपका अच्छा प्रवेश था। ज्योतिषशास्त्र के भी आप मर्मज्ञ थे कहने का तात्पर्य यह है कि सोने में सुगध की तरह आप पर भगवती, सरस्वती और देवी लक्ष्मी दोनों का समान रूपसे आशीर्वाद का हाथ रहा। पाली के आबालवृद्ध सभी आपके गुणों को आज भी भूले नहीं है। आपकी तरफ से पालीमें कन्याशाला, हाईस्कूल आदि शैक्षणिक संस्थाएँ चल रही हैं, जिनमें प्रति वर्ष कई विद्यार्थी विद्यालाभ प्राप्त कर रहे हैं। गरीब, अपंग और अनाथों के लिए भी आपकी तरफ से सदाव्रत अनाथालय और प्याउएं चल रही हैं। आयंबिल खाता भी आपकी तरफ से पाली में चल रहा है आपका स्वर्गवास संवत् २०१८ कार्तिक शुक्ल द्वितीया शुक्रवारको हुआ।

श्रीमान् सेठ श्री मुकुनचन्दजी सा. के श्री हस्तिमलजी श्री मोहनराजजी श्री माणेकलालजी श्री मदनलालजी ये चार पुत्र और एक पुत्री श्री वसंतकुंवर मौजूद है, एवं सबसे बडे पुत्र श्री सोहनराजजी सा. एवं सबसे छोटी पुत्री श्री सज्जनकुंवरबाई स्वर्गस्थ हुए है। सेठ साहब के पांच पौत्र हैं, तीन पौत्रियां हैं और एक प्रपौत्र है इस तरह सेठ साहबने अपने सामने चार पीढियों को फलते फुलते देखा है।

पूज्य आचार्य श्री जैनधर्मदिवाकर आगमोद्धारक श्री महाराज साहब श्रीघासीलालजीकी देखरेखमें वर्षों से कई शास्त्र ग्रन्थोंका लेखन, प्रकाशन और संपादन होरहा है। समस्त जैनागमोंका आप भारतकी अद्यतन भाषा में संस्कृत-प्राकृत हिन्दी-गुजरातीमें-सरल व्याख्याएं करके जैन धर्मकी अभिवृद्धि कर रहे हैं। श्रीमान सेठसाहब के सुपुत्रोंने अपने पिताश्री के पुण्यस्मरणार्थ शास्त्र प्रकाशनमें उदार सहायता की है।

श्रीमान् सेठ सा. की पाली-जोधपुर-ब्यावर-अहमदाबाद-मुंबई में अनेक पेढियां हैं। ईश्वर कृपा से बालियाजीके परिवार सुखसंपत्ति का सदा अनुभव करते रहे।

આદ્યમુરબ્બીશ્રીઓ



(સ્વ.) શેઠ હરખચંદ કાલીદાસ વારીઆ
ભાણવડ.



શ્રી કોઠારી હરગોવિંદભાઈ જેચંદ
રાજકોટ.



શેઠ શ્રી શાંતિલાલ મંગળદાસભાઈ
અમદાવાદ.



(સ્વ.) શેઠ શ્રી ધારશીભાઈ જીવણભાઈ
સોલાપુર.



(સ્વ.) શેઠ આત્મારામ માણેકલાલ
અમદાવાદ.

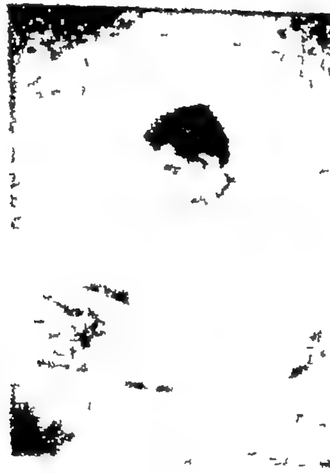
આત્મસુરભીશ્રીઓ



[illegible]



(સ્વ.) શ્રી છગનલાલ શામળદાસ ભાવસાર
અમદાવાદ.



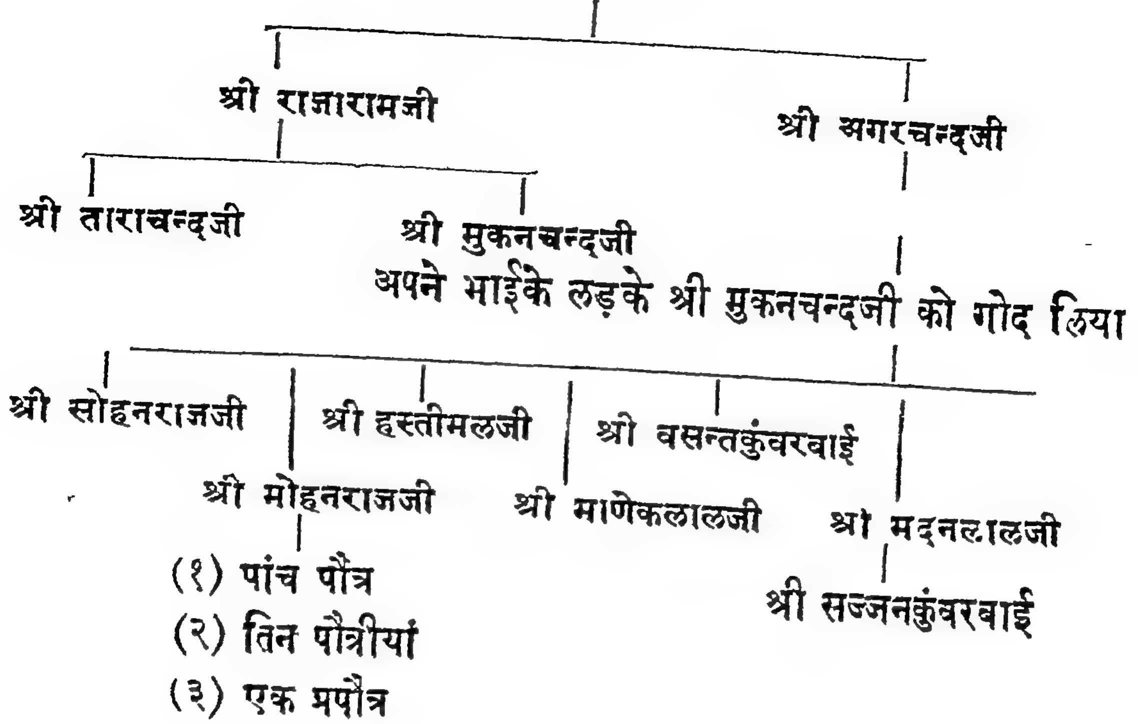
[illegible]

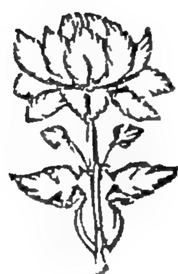


[illegible]



[illegible]


सेठ श्री पूनमचन्दजी बालिया
श्री राजारामजी
श्री अगरचन्दजी
श्री ताराचन्दजी
श्री मुकनचन्दजी
अपने भाईके लड़के श्री मुकनचन्दजी को गोद लिया
श्री सोहनराजजी
श्री हस्तीमलजी
श्री वसन्तकुंवरबाई
श्री मोहनराजजी
श्री माणेकलालजी
श्री मदनलालजी
(१) पांच पौत्र
(२) तिन पौत्रीयां
(३) एक प्रपौत्र
श्री सज्जनकुंवरबाई



શ્રી અખિલ ભારત શ્વેતામ્બર સ્થાનકવાસી

જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ.

*

ગરેડીયાકુવા રોડ—ગ્રીન લોજ પાસે,

રાજકોટ.

*

દાતાઓની નામાવલી

*

શરૂઆત તા. ૧૮-૧૦-૪૪થી તા. ૩૧-૧૨-૬૧ સુધીમાં
દાખલ થયેલ મેમ્બરોનાં મુબારક નામો.

*

લાઈફ મેમ્બરોનું ગામવાર કકાવારી લિસ્ટ.

*

(નાની ભેટની રકમો આપનારનું, તથા રૂા. ૨૫૦થી
ઓછી રકમ ભરનારનું નામ આ યાદીમાં સામેલ કરેલ નથી.)

આદ્યમુરબ્બીશ્રીઓ-૧૮

(ઓછામાં ઓછી રૂા. ૫૦૦૦ની રકમ આપનાર)

નંબર	નામ	ગામ	રૂપિયા
૧	શેઠ શાંતીલાલ મંગળદાસભાઇ જાણીતા મીલમાલીક	અમદાવાદ	૧૫૦૦૦
૨	શેઠ હરખચંદ કાળીદાસભાઈ વારીયા હા. શેઠ લાલચંદભાઈ, નગીનભાઈ વૃજલાલભાઈ તથા વલ્લભદાસભાઈ	ભાણુવડ	૬૦૦૦
૩	કોઠારી જેચંદ અજરામર હા. હરગોવિંદભાઈ જેચ દભાઇ	રાજકોટ	૫૨૫૧
૪	શેઠ ધારશીભાઈ જીવનભાઇ	બારસી	૫૦૦૧
૫	સ્વ પિતાશ્રી છગનલાલ શામલદાસના સ્મરણાર્થે હા. શ્રી ભોગીલાલ છગનલાલભાઈ ભાવસાર	અમદાવાદ	૫૨૫૧
૬	સ્વ શેઠ દિનેશભાઈના સ્મરણાર્થે હા. શેઠ કાંતિલાલ મણીલાલ જેશીંગભાઈ	અમદાવાદ	૫૦૦૦
૭	શેઠ આત્મારામ માણેકલાલ હ. શેઠ. ચીમનલાલભાઈ શાંતીલાલભાઇ તથા પ્રમુખભાઈ	અમદાવાદ	૬૦૦૧
૮	શ્રી શામજી વેલજી વીરાણી અને શ્રી કડવીબાઇ વીરાણી સ્મારક ટ્રસ્ટ હા. શેઠ શામજી વેલજી વીરાણી	રાજકોટ	૫૦૦૦
૯	શ્રી શામજી વેલજી વીરાણી અને શ્રી કડવીબાઈ વીરાણી સ્મારક ટ્રસ્ટ હા માતુશ્રી કડવીબાઈ વીરાણી	રાજકોટ	૫૦૦૦
૧૦	શેઠ પોચાલાલ પીતાંબરદાસ	અમદાવાદ	૫૨૫૧
૧૧	શાહ રંગજીભાઇ મોહનલાલ	અમદાવાદ	૫૦૦૧
૧૨	શ્રી શામજી વેલજી વીરાણી અને શ્રી કદેવીબાઇ વીરાણી સ્મારકટ્રસ્ટ હા. શેઠ દુર્લભજી વીરાણી	રાજકોટ	૫૦૦૦
૧૩	શ્રી શામજી વેલજી વીરાણી અને શ્રી કડવીબાઇ વીરાણી સ્મારકટ્રસ્ટ હા શ્રીમતિ મણીકુંવરબેનદુર્લભજી વીરાણી	રાજકોટ	૫૦૦૦
૧૪	શ્રી શામજી વેલજી વીરાણી અને શ્રી કડવીબાઇ વીરાણી સ્મારકટ્રસ્ટ હા. છોટાલાલ શામજી વીરાણી	રાજકોટ	૫૦૦૦
૧૫	સ્વ. માતૃશ્રીના સ્મરણાર્થે હ ભાવસાર ભોગીલાલ છગનલાલ અને કુટુંબજનો	અમદાવાદ	૫૦૦૦

૧૬ શેઠ મીશ્રીલાલજી જેવંતરાજજી લૂણીયા ચંડાવતવાળા અમદાવાદ ૫૫૦૨
૧૭ શેઠ રામજીભાઈ શામજી વિરાણી એન્ડ સમરતબેન
રામજી વિરાણી ટ્રસ્ટ રાજકોટ ૫૦૦૧
૧૮ એક જૈન ગૃહસ્થ અમદાવાદ ૫૪૨૫

નોટ :–ઘાટકોપરવાળા શેઠ માણેકલાલ એ. મહેતા તરફથી અમદાવાદમાં પાલડી બસ સ્ટેન્ડ પાસે પ્લોટ નં. ૨૫૦ વાળી ૬૯૮ ચો. વાર જમીન સમિતિને ભેટ મળેલ છે. અને જેનું રજીસ્ટર તા. ૨૩-૩-૬૦ ના રોજ થઈ ગયેલ છે.

મુરબ્બીશ્રીઓ–૨૫

(ઓછામાં ઓછી રૂા. ૧૦૦૦ ની રકમ આપનાર)

નંબર	નામ	ગામ	રૂપિયા
૧	વકીલ જીવરાજભાઇ વર્ધમાન કોઠારી હા. કહાનદાસભાઇ તથા વેણીલાલભાઈ કોઠારી	જેતપુર	૩૬૦૫
૨	દોશી પ્રભુદાસ મુળજીભાઇ	રાજકોટ	૩૫૦૪
૩	મ્હેતા ગુલાબચંદ પાનાચંદ	રાજકોટ	૩૨૮૯ાા–ાા
૪	મ્હેતા માણેકલાલ અમુલખરાય	ઘાટકોપર	૩૨૫૦
૫	સંઘવી પીતામ્બરદાસ ગુલાબચંદ	જામનગર	૩૧૦૧
૬	લલ્લુભાઈ ગોરધનદાસ ચેરીટેબલટ્રસ્ટ હ. શેઠ વાડીલાલ લલ્લુભાઇ	અમદાવાદ	૨૫૦૦
૭	નામદાર ઠાકોર સાહેબ લખધીરસિંહજી બહાદુર	મોરબી	૨૦૦૦
૮	શેઠ લ્હેરચંદ કુંવરજી હા. શેઠ ન્યાલચંદ લ્હેરચંદ	સિદ્ધપુર	૨૦૦૦
૯	શાહ છગનલાલ હેમચંદ વસા હા. મોહનલાલભાઈ તથા મોતીલાલભાઇ	મુંબઇ	૨૦૦૦
૧૦	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ હા. શેઠ ચન્દ્રકાંત વીકમચંદ	મોરબી	૧૯૬૩
૧૧	મ્હેતા સોમચંદ તુલસીદાસ તથા તેમનાં ધર્મપત્ની અ. સૌ. મણીગૌરી મગનલાલ	રતલામ	૨૦૦૦
૧૨	મ્હેતા પોપટલાલ માવજીભાઈ	જામજોધપુર	૧૫૦૨
૧૩	દોશી કપુરચંદ અમરશી હા. દલપતરામભાઈ	જામજોધપુર	૧૦૦૨
૧૪	બગડીયા જગજીવનદાસ રતનશી	દામનગર	૧૦૦૨
૧૫	શેઠ માણેકલાલ ભાણજીભાઇ	પોરબંદર	૧૦૦૧
૧૬	શ્રીમાન ચંદ્રસિંહજી સાહેબ મ્હેતા (રેલ્વે મેનેજર)	કલકત્તા	૧૦૦૧

૧૭	મ્હેતા સોમચંદ નેણુસીભાઇ (કરાંચીવાળા)	મોરબી	૧૦૦૧
૧૮	શાહ હરિલાલ અનોપચંદ	ખંભાત	૧૦૦૧
૧૯	મોદી કેશવલાલ હરીચંદ્ર	અમદાવાદ	૧૦૦૧
૨૦	કોઠારી છબીલદાસ હરખચંદ	મુંબઇ	૧૦૦૦
૨૧	કોઠારી રંગીલદાસ હરખચંદ	ભાવનગર	૧૦૦૦
૨૨	શાહ પ્રેમચંદ માણેકચંદ તથા અ. સૌ સમરતબેન	અમદાવાદ	૧૦૦૩
૨૩	શેઠ કરમશી જેઠાભાઈ સોમૈયા હા. અ. સૌ. સાકરબેન	મુંબઇ	૧૦૦૦
૨૪	શેઠ પોપટલાલ ચત્રભૂજ કોઠારી	સુરેન્દ્રનગર	૧૦૦૧
૨૫	શ્રી સ્થા, જૈન લીંમડી સંપ્રદાયના ક્ષમાગુણુ નીધી પુજ્ય શ્રી લાધાજી સ્વામીના શીષ્ય પ્રખર પંડીત રત્ન શ્રી ઉત્તમચંદજી મહારાજના સ્મરણાર્થે પુજ્ય લાધાજી સ્વામી પુસ્તકાલય તરફથી હ શેઠ જેશીંગભાઈ પોચાલાલ	અમદાવાદ	૧૦૦૦

સહાયક મેમ્બરો—૧૨૫

(ઓછામાં ઓછી રૂા. ૫૦૦ની રકમ આપનાર)

નંબર	નામ	ગામ	રૂપિયા
૧	શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. શેઠ ઝુંઝાભાઇ વેલશીભાઇ	વઢવાણુશહેર	૭૫૦
૨	શેઠ નરોત્તમદાસ ઓઘડભાઇ	જોરાવરનગર	૭૦૦
૩	શેઠ રતનશી હીરજીભાઈ હા ગોરધનભાઈ	જામજોધપુર	૫૫૫
૪	ખાટવીયા ગીરધર પરમાણુંદ હા. અમીચંદભાઇ	ખાખીજાળીયા	૫૨૭
૫	મોરબીવાળા સંઘવી દેવચંદ નેણુશીભાઈ તથા તેમનાં ધર્મપત્ની અ. સૌ મણીબાઇ તરફથી હા. મુળચંદ દેવચંદ સઘવી	મલાડ	૫૧૧
૬	વોરા મણીલાલ પોપટલાલ	અમદાવાદ	૫૦૨
૭	ગોસલીયા હરીલાલ લાલચંદ તથા ચંપાબેન ગોસલીયા	,,	૫૦૨
૮	શાહ મનહરલાલ પ્રાણુજીવનદાસ	મુંબઈ	૫૦૧
૯	શેઠ ઇશ્વરલાલ પુરુષોત્તમદાસ	અમદાવાદ	૫૦૧
૧૦	શેઠ ચંદુલાલ છગનલાલ	,,	૫૦૧
૧૧	શાહ શાંતિલાલ માણેકલાલ	,,	૫૦૧
૧૨	શેઠ શીવલાલ ડમરભાઈ (કરાંચીવાળા)	લીમડી	૫૦૧
૧૩	કામદાર તારાચંદ પોપટલાલ ધોરાજીવાળા	રાજકોટ	૫૦૦
૧૪	મ્હેતા મોહનલાલ કપુરચંદ	,,	૫૦૦

૧૫ શેઠ ગોવિંદજીભાઈ પોપટભાઈ ,, ૫૦૭
૧૬ શેઠ રામજી શામજી વીરાણી ,, ૫૦૧
૧૭ સ્વ. પિતાશ્રી નંદાજીના સ્મરણાર્થે હા. વેણીચંદ શાંતિલાલ
(જાબુઆવાળા) મેઘનગર ૫૦૧
૧૮ શ્રી જૈનસ્થા. સંઘ હા. શેઠ ઠાકરશી કરશનજી થાનગઢ ૫૦૦
૧૯ શેઠ તારાચંદ પુખરાજજી ઔરંગાબાદ ૫૦૦
૨૦ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ , ૫૦૦
૨૧ મ્હેતા મુળચંદ રાઘવજી હા. મગનલાલભાઈ તથા દુર્લભજીભાઈ ધ્રાફા ૭૫૦
૨૨ શેઠ હરખચંદ પુરૂષોત્તમ હા. ઇન્દુકુમાર ચોરવાડ ૫૦૦
૨૩ ,, કેશરીમલજી વસ્તીમલજી ગુગલીયા મલાડ ૫૦૧
૨૪ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા, બાટવીયા અમીચંદ ગીરધરભાઈ ખાખીજાળીયા ૫૦૧
૨૫ શ્રી ખીમજીભાઈ બાવાભાઈ કુલચંદભાઈ ગુલાબચંદભાઈ,
નાગરદાસભાઈ જમનાદાસભાઈ મુંબઈ ૫૦૧
૨૬ શેઠ મણીલાલ મોહનલાલ ડગલી હા. મુળજીભાઈ મણીલાલભાઈ મુંબઈ ૫૦૧
૨૭ સ્વ. કાંતીલાલભાઈના સ્મરણાર્થે હા. શેઠ બાલચંદ સાકરચંદ ,, ૫૦૧
૨૮ કામદાર—રતીલાલ દુર્લભજી (જેતપુરવાળા) ,, ૫૦૧
૨૯ શાહ જયંતીલાલ અમૃતલાલ શીવ ૫૦૧
૩૦ વોરા મણીલાલ લક્ષ્મીચંદ ,, ૫૦૧
૩૧ શેઠ ગુલાબચંદ ભુદરભાઈ તથા કસ્તુરબેન હા. ભાઈ અનોપચંદ ખારરોડ ૫૦૧
૩૨ મહાન ત્યાગી બેન ધીરજકુંવર ચુનીલાલ મહેતા ધ્રાફા ૫૦૧
૩૩ શ્રી સ્થા જૈન સંઘ ધ્રાફા ૫૦૧
૩૪ શ્રી મગનલાલ છગનલાલ શેઠ રાજકોટ ૫૦૧
૩૫ શેઠ ચતુરદાસ ઠાકરશી તથા અ. સૌ. નંદકુવરબેન જામનગર ૫૦૩
૩૬ શેઠ દેવચંદ અમરશી (બેન ધીરજકુંવરની દીક્ષા પ્રસંગે ભેટ) ભાણુવડ ૫૦૧
૩૭ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ (બેન ધીરજકુંવરની દીક્ષા પ્રસંગે ભેટ) ભાણુવડ ૫૦૧
૩૮ વકીલ વાડીલાલ નેમચંદ શાહ વીરમગામ ૫૦૧
૩૯ મહેતા શાન્તિલાલ મણીલાલ હા. કમળાબેન મહેતા અમદાવાદ ૫૫૬
૪૦ શ્રીયુત લાલચંદજી તથા અ. સૌ. ધીસાબેન ,, ૫૦૧
૪૧ શેઠ મોહનરાજજી મુકુનચંદજી બાલીયા ,, ૫૦૧
૪૨ સ્વ શેઠ ઉકાભાઇ ત્રીભોવનદાસના સ્મરણાર્થે તેમનાં
ધર્મપત્નીલક્ષ્મીબાઇ ગીરધર તરફથી હા. સરઘાબેન
તથા મંગુબેન અમદાવાદ ૫૦૧

૪૩ પારેખ જયંતીલાલ મનસુખલાલ રાજકોટવાળા હા. વિતુભાઈ ,, ૫૦૧
૪૪ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ વાંકાનેર ૫૦૧
૪૫ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ બોટાદ ૫૦૧
૪૬ શેઠ ગુદડમલજી શેષમલજી જોવર (બરાર) પીપળગાંવ ૫૦૧
૪૭ સ્વ. તુરખીયા લહેરચંદ માણેકચંદના સ્મરણાર્થે તેમનાં
ધર્મપત્ની જીવતીબાઈ તરફથી હા. ભાઇ
જયંતીલાલ તથા પૂનમચંદભાઇ વડોદરા ૫૦૧
૪૮ શાહ અચળુળદાસ શુકનરાજજી હા. શુકનરાજજી અમદાવાદ ૫૦૧
૪૯ ભાવસાર ખોડીદાસ ગણેશભાઇ ધંધુકા ૫૦૧
૫૦ અ. સૌ. હીરાબેન માણેકલાલ મહેતા ઘાટકોપર ૫૦૧
૫૧ મહેતા શાંતીલાલ મગનલાલ તથા અ. સૌ. પદમાવતી
શાંતિલાલ મહેતા અમદાવાદ ૫૦૦
૫૨ શેઠ હીરાચંદજી વનેચંદજી કટારીયા હુબલી ૫૦૧
૫૩ શેઠ છોટુભાઇ હરગોવિંદદાસ કટોરીવાળા મુંબઈ ૫૦૧
૫૪ પારેખ રતિલાલ નાનચંદ મોરબીવાળા તરફથી તેમના
પિતાશ્રી નાનચંદ ગોવિંદજીના સ્મરણાર્થે તથા તેમનાં
ધર્મપત્ની અ સૌ. વસંત બહેનના અઠાઇતપ નિમિત્તે
હા ભુપતલાલ રતિલાલ અમદાવાદ ૫૫૨
૫૫ સ્વ. શાહ ત્રીભોવનદાસ મગનલાલના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની
શીવકુંવરબાઇ તરફથી હા. રતીલાલ ત્રીભોવનદાસ શાહ અમદાવાદ ૫૧૧
૫૬ શ્રીમાન નાથાલાલ માણેકચંદ પારેખ મુંબઈ (માટુંગા) ૫૦૧
૫૭ શ્રી લીંમડી સપ્રદાયના ગચ્છાધીપતિ પૂ. આચાર્ય
મહરાજ શ્રી લાધાજી સ્વામીના સ્મરણાર્થે હા.
શેઠ જેશીંગભાઇ પોચાલાલ (મહરાજ શ્રી
છોટાલાલજી સદાનંદીના ઉપદેશથી) અમદાવાદ ૫૦૧
૫૮ સ્વ. શ્રી વિનયમૂર્તિ શ્રી લક્ષ્મીચંદજી મહાસજના સ્મરણાર્થે
હા શેઠ જેશીગભાઇ પોચાલાલ (મહેરાજશ્રી છોટાલાલજી
સદાનંદીના ઉપદેશથી) અમદાવાદ ૫૦૧
૫૯ બા. બ્ર. પ્રભાવતીબેન કેશવલાલ ઉજ્જૈનવાલા તરફથી
તેમની દીક્ષા પ્રસંગે વીરમગામ ૫૫૧
૬૦ શેઠ શ્રીયુત હરજીવનદાસ રાયચંદ હા. છબીલદાસ હરજીવન અમદાવાદ ૫૦૧
૬૧ શેઠ પોપટલાલ હંસરાજ તથા દિવાળીબેનના સ્મરણાર્થે
હા. શેઠ બાબુલાલ પોપટલાલ અમદાવાદ ૫૦૨

૬૨ અ. સૌ. લીલાવંતીબેન ઇશ્વરલાલ „ ૫૦૨
૬૩ હેમાણી પ્રભુદાસ ભાણુજી કલકત્તા ૫૫૧
૬૪ શેઠ લક્ષ્મણદાસ સેજરામ અમદાવાદ ૫૦૧
૬૫ શ્રી સ્થા. જૈન મોટા સંઘ રાજકોટ ૫૦૧
૬૬ શેઠ ચાંદમલ્લ ખીરધીચંદ નાસિક સીટી ૫૦૧
૬૭ ઝવેરી માણેકચંદજી પન્નાલાલ છજલાણી
હ. ધનવંતીબેન તથા કિરણબેન દિલ્હી ૫૦૧
૬૮ શેઠ હંસરાજજી પૂર્ણમલજી કાંકરીયા ગોગોળાવ ૫૦૧
૬૯ શ્રી શ્વે. સ્થા. જૈન સભા કલકત્તા ૫૦૧
૭૦ શેઠ તેજસિંહજી ફતેલાલજી છાજેડ ઉદેપુર ૫૦૧
૭૧ શેઠ રતનચંદ લક્ષ્મીચંદ મુંબઈ ૫૦૦
૭૨ શાહ ઉમરશી ભીમશીભાઈ (સ્વ. પિતાશ્રી ભીમશીભાઈ
તથા માતુશ્રી પાલાબાઈ તથા ધર્મપત્ની પાનબાઈના સ્મરણાર્થે) મુંબઈ ૫૫૨
૭૩ શાહ શામલભાઈ અમરસીભાઈ અમદાવાદ ૫૦૨
૭૪ મહેતા ચન્દ્રકાન્ત નૌતમલાલ મુંબઈ ૫૦૧
૭૫ શેઠ ભીખચંદ્ર લાલચંદ્ર પીપલગામ ૫૦૧
૭૬ બેન મોહનીબેન મહેતા મુંબઈ ૫૦૧
૭૭ શ્રીમતી મોંઘીબેન નવલચંદ શાહ લીમડી (સૌરાષ્ટ્ર) ૫૦૧
હ. મોતીબેન
૭૮ શ્રીમતી વિમલાજી સૂરજમલ મહેતા બેલગામ ૫૦૧
૭૯ ઉદાણી નિહાલચંદ્ર હાંકેમચન્દ્ર વકીલ
બી. એ. એલ. એલ. બી, રાજકોટ ૫૦૧
૮૦ સ્વ. કોઠારી મગનલાલજી કુન્દનમલજીના
સ્મરણાર્થે હ. તેમનાં ધર્મપત્ની રાજકુંવરબેન સતારા ૭૫૧
૮૧ શેઠ મોહનલાલજી મંછાલાલજી હ. રમણીકલાલ
(પૂ. મુનિશ્રી ફતેચંદ મ. ના શિષ્ય પં. મુનિશ્રી
કનૈયાલાલજી મ. ના ઉપદેશથી) જયપુર ૫૦૧
૮૨ શેઠ કનૈયાલાલજી સોહનલાલજી કાવેડિયા ધારડી ૫૦૧
૮૩ શેઠ પ્રતાપમલજી કપુરચંદજી સાંઢેરાવવાળા (પૂજ્ય
ફતેચંદજી મ. ના શિષ્ય મિશ્રીલાલજી મ.
ના શિષ્ય ચાંદમલજી મ. ના ઉપદેશથી) અમદાવાદ ૫૦૧

૮૪	શ્રીમાન લાલાજી રોશનલાલજી સમન્દરલાલજી હ. મોતીલાલજી	ખડોત ૫૦૧
૮૫	શ્રીમાન ભૂરમલજી દલીચંદજી સાંકરિયા (પૂ. મ. શ્રી સ્વામીદાસજીના સંપ્રદાય પૂ.મ. શ્રી ફતેચંદજી મ. ના શિષ્ય પં. મુની શ્રી કનૈયાલાલજી મ. ના ઉપદેશથી	સાંઢેરાવ ૫૦૧
૮૬	સ્વ. ગૌરીશંકર કાળીદાસ દેસાઇના સ્મરણાર્થે હ. ભૂપતલાલ ગૌરીશંકર	ઈંદોર ૫૦૧
૮૭	શેઠ સાહેબ શ્રી નર્ભેરામભાઇ હંસરાજભાઈ કમાણી	જમશેદપુર ૫૦૧
૮૮	સ્વ. મહાસજી શ્રી ધનદેવીજી મ. સા. ના સ્મરણાર્થે સ્વ. ખૂબચંદજી સંખલાલનાં ધર્મપત્ની શ્રીમતી જય-દેવી તરફથી (મહાસતીજી શ્રી સુદર્શનામતિજી તથા ફુલમતીજીના ઉપદેશથી	દિલ્હી ૫૦૧
૮૯	શ્રીમાન લાલાજી કપૂરચંદજી ઓથરાના ધર્મપત્ની શ્રીમતી વસંતદેવી હા. લાલા રાજમલજી હેમચંદજી તરફથી (મહાસતી શ્રી સુદર્શનામતિજી તથા ફૂલમ તિજી મહાદેવીના ઉપદેશથી)	દિલ્હી ૫૦૧
૯૦	સ્વ. મહાસતીજી શ્રી દ્રૌપતાદેવીજી મ સા. ના સ્મરણાર્થે શ્રી અસ. એસ. જૈન મહિલા સંઘ તરફથી (અનેક ગુણાલંકૃત મહાસતીજી શ્રી મોહનદેવીજી મ. સા. ની પ્રેરણાથી)	દિલ્હી ૫૦૧
૯૧	સ્વ. લક્ષ્મીચંદજીના સ્મરણાર્થે નગિનાદેવી સુજંતીના તરફથી હસ્તે સંઘવી હેમંતકુમાર જૈન	દિલ્હી ૫૦૧
૯૨	સ્વ. પિતાશ્રી લાલા ઝવેરી ઘન્નોમલજી સુજંતી ના સ્મરણાર્થે હસ્તે શ્રીમતી નગીના દેવી	દિલ્હી ૫૦૧
૯૩	લાલાજી કસ્તુરચન્દજી ખુશાલચન્દજી સંચેતી હ. જ્ઞાનચંદજી	અલવર ૫૦૧
૯૪	સ્વ. પૂજ્ય પિતાશ્રી દુર્લભજી સોમચંદ દફતરી હ. ગૌરીશંકર દુર્લભજી દફતરી	મુંબઈ ૫૦૦
૯૫	શેઠ સોમચંદ જેઠાલાલ ઘોલાણી હ. ચુનીલાલભાઇ જોડીયાવાળા	મુંબઇ ૫૦૬
૯૬	શેઠ ફોજમલ્લજી સુલતાનસીંહજી ઓરદીયા	અમદાવાદ ૫૦૧
૯૭	શેઠ છગનલાલ શામજીવિરાણી તથા શ્રીમતી વૃજકુંવરબેન છગનલાલ વિરાણી ટ્રસ્ટફંડ તરફથી શેઠ છગનલાલ ભાઈના સ્મરણાર્થે	રાજકોટ ૫૦૧

નંબર	નામ	ગામ	રૂપિયા
૯૮	શ્રી વર્ધમાન સ્થા. જૈન શ્રાવક સંઘ હ. પ્રમુખ બંસીલાલ કટારીયા	હિંગણઘાટ	૫૦૧
૯૯	લાલાજી રામલાલજી રોશનલાલજીઅનેક ગુણાંલકૃત મહાસતીજી મોહનદેવીના ઉપદેશથી)	દીલ્હી	૫૦૧
૧૦૦	સ્વ. મહેતા મંગળજી મણીલાલજીના સ્મરણાર્થે હ. તેમના ધર્મપત્ની ગુણવંતીબહેન મહેતા	પોંડેચેરી	૫૦૧
૧૦૧	બાટવીયા વનેચંદ અમીચંદ (મહાવીર ટેક્ષટાઇલ સ્ટોર્સ)	બેંગલોર	૫૫૩
૧૦૨	શ્રીયુત તારાચંદ ગેલડા ટ્રસ્ટ	મદ્રાસ	૫૦૧
૧૦૩	શેઠ ગુલરાજજી પુનમચંદજી મહેતા	કીસનગઢ	૫૫૧
૧૦૪	શેઠ અગરમલ્લજી ત્રીકમચંદજી	ઇંદોર સીટી	૫૫૧
૧૦૫	કાનુગા ધીંગડમલ્લજી મુલતાનમલ્લજી કુંવાડ ગઢસીંયાણા વાળા	અમદાવાદ	૫૦૧
૧૦૬	લાલાજી નવરતનચંદજી ચોરડીયાનાં ધર્મપત્ની શ્રીમતી રાજકુમારીબેન	દીલ્હી	૫૦૧
૧૦૭	શેઠ ચીમનલાલ રૂષભચંદ	અમદાવાદ	૫૦૧
૧૦૮	શેઠ કાનજી પાનાચંદ ભીમાણી ટ્રસ્ટ	કલકત્તા	૫૦૧
૧૦૯	શેઠ ગીરધરલાલ હંસરાજ કામાણી	,,	૫૦૧
૧૧૦	અનેક ગુણાલકૃત મહાસતી મોહનદેવીજીના ઉપદેશથી સ્વધર્મી બંધુઓ તરફથી	દીલ્હી	૫૦૧
૧૧૧	સ્વ. વિનયચંદજી પારેખના સ્મરણાર્થે લાલા પૂર્ણચંદજી રતનચંદજી પારેખની વતી હ. શ્રીમતી પ્રેમાદેવી (શાંત સ્વભાવી મહાસતીજી ફુલકુંવરબાઇના ઉપદેશથી)	દીલ્હી	૫૦૧
૧૧૨	શ્રીમતી બદામબાઇ મીશ્રીલાલજી લૂણીયા ચંડાવતવાળા	અમદાવાદ	૫૦૧
૧૧૩	શેઠ ભરતકુમાર મણીલાલ દલાલ	અમદાવાદ	૫૦૧
૧૧૪	શાહ હરખચંદ અમરચંદ	અમદાવાદ	૫૦૧
૧૧૫	શાહ જગજીવનદાસ વન્દ્રાવનદાસ	અમદાવાદ	૫૦૧
૧૧૬	શેઠ હંસરાજ લક્ષ્મીચંદ કામાણી જૈનભૂવન	કલકત્તા	૫૦૧

૧૧૭ પૂ દાદાજી સ્વ. કપુરચંદજી તથા દાદીજી કેસરબેન ચોરડીયાના સ્મરણાર્થે હ. લાલા ફુલચંદજી અને શ્રીમતી વીમલકુંવરી જવેરી નીવતી શ્રીમતી નગીનાદેવી (મહાસતીજી ફુલમતીજીના ઉપદેશથી) — દીલ્હી ૫૦૧
૧૧૮ શેઠ નગીનદાસ છોટાલાલ — અમદાવાદ ૫૦૧
૧૧૯ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હ શેઠ ગણેશમલ્લ ગુલાબચંદ — બરોરા ૫૦૧
૧૨૦ શ્રી સ્થા જૈન સંઘ — ભદેસર ૫૦૧
૧૨૧ શ્રી સરાક જૈન વિદ્યાલય — કુમારડી ૫૦૧
૧૨૨ ગાંધી ભુરાલાલ નાનચંદ — મુંબઇ ૫૦૧
૧૨૩ શ્રીમાન હિંમતસિંહજી સાહેબ ગલૂંડીયા એડીસનલ કમીશ્નર અજમેર ડીવીઝનવાળાના ધર્મપત્ની અ. સૌ માણેકકુંવરબેન તરફથી હ. ખૂશાલસિંહજી ગૃલૂંડીયા — જયપુર ૫૫૧

૫૮૪—લાઇફ મેમ્બરો

અમદાવાદ તથા પરાંઓ

નંબર	નામ	ગામ	રૂપિયા
૧	શેઠ ગીરધરલાલ કરમચંદ		૨૫૧
૨	શેઠ છોટાલાલ વખતચંદ હા. ફકીરચંદભાઈ		૨૫૧
૩	શાહ કાંતિલાલ ત્રીભોવનદાસ		૨૫૧
૪	શાહ પોપટલાલ મોહનલાલ		૨૫૧
૫	શેઠ પ્રેમચંદ સાકરચંદ		૨૫૦
૬	શાહ રતીલાલ વાડીલાલ		૨૫૧
૭	શેઠ લાલભાઇ મગળદાસ		૨૫૧
૮	સ્વ અમૃતલાલ વર્ધમાનના સ્મરણાર્થે હા. કાનજીભાઇ અમૃતલાલ દેશાઇ		૨૫૧
૯	શાહ નટવરલાલ ચંદુલાલ		૨૫૧
૧૦	શાહ નરસિંહદાસ ત્રીભોવનદાસ		૨૫૧
૧૧	શાહ બીપીનચંદ્ર તથા ઉમાકાંત ચુનીલાલ ગોપાણી		૩૦૧
૧૨	શ્રી શાહપુર દરિયાપુરી આઠકોટી સ્થા. જૈન ઉપાશ્રય હા. વહીવટ કર્તા શેઠ ઇશ્વરલાલ પુરુષોત્તમદાસ		૨૫૧

૧૩ શ્રી છીપાપોળ દરીયાપુરી આઠકોટી સ્થા. જૈન સંઘ
હા. શેઠ ચંદુલાલ અચરતલાલ ૨૫૧
૧૪ શાહ ચીનુભાઈ બાલાભાઈ C/O. શાહ બાલાભાઇ મહાસુખલાલ ૨૫૧
૧૫ શાહ ભાઈલાલ ઉજમશી ૨૫૧
૧૬ શ્રી સુખલાલ ડી શેઠ હા. ડો. કુ. સરસ્વતીબેન શેઠ ૨૫૧
૧૭ શ્રી સૌરાષ્ટ્ર સ્થા. જૈન સંઘ હા. શેઠ કાંતિલાલ જીવણલાલ ૨૫૧
૧૮ મોદી નાથાલાલ મહાદેવદાસ ૨૫૧
૧૯ શાહ મોહનલાલ ત્રીકમલાલ ૨૫૧
૨૦ શ્રી છકોટી સ્થા. જૈન સંઘ હા. શેઠ પોચાલાલ પિતાંબરદાસ ૨૫૧
૨૧ દેશાઇ અમૃતલાલ વર્ધમાનના સ્મરણાર્થે હા. ભાઇલાલ અમૃતલાલ ૨૫૧
૨૨ શાહ નવનીતરાય અમુલખરાય ૨૫૧
૨૩ શાહ મણીલાલ આશારામ ૨૫૧
૨૪ શેઠ ચીનુભાઈ સાકરચંદ ૨૫૧
૨૫ શાહ વરજીવનદાસ ઉમેદચંદ ૨૫૧
૨૬ શાહ રજનીકાંત કસ્તુરચંદ ૨૫૧
૨૭ સંઘવી જીવણલાલ છગનલાલ ૨૫૧
૨૮ શાહ શાંતિલાલ મોહનલાલ ધ્રાંગધ્રાવાળા ૨૫૨
૨૯ અ. સૌ. બેન રતનબેન નાદેચા હા શેઠ ધુલજી ચંપાલાલજી ૨૫૧
૩૦ શાહ હરિલાલ જેઠાલાલ ભાડલાવાળા ૨૫૧
૩૧ શ્રી સરસપુર દરીયાપુરી આઠ કોટી સ્થા. જૈન ઉપાશ્રય
હા. ભાવસાર ભોગીલાલ છગનલાલ ૨૫૧
૩૨ શેઠ પુખરાજજી સમતીરામજી પુનમિયા સાદડીવાળા ૨૫૧
૩૩ સ્વ. પિતાશ્રી જવાહરલાલજી તથા પૂજ્ય ચાચાજી હજારીમલજી
ખરડીયાના સ્મરણાર્થે હા. મુળચંદ જવાહરલાજી ખરડીયા ૨૫૧
૩૪ સ્વ. ભાવસાર બબાભાઈ (મંગળદાસ) પાનાચંદના સ્મરણાર્થે
હા. તેમનાં ધર્મપત્ની પુરીબેન ૨૫૧
૩૫ સ્વ. પિતાશ્રી રવજીભાઈ તથા સ્વ. માતુશ્રી મુળીબાઇના સ્મરણાર્થે
હા. કકલભાઈ કોઠારી ૩૦૧
૩૬ ભાવસાર કેશવલાલ મગનલાલ ૨૫૧
૩૭ શાહ કેશવલાલ નાનચંદ જાખડાવાળા હા. પાર્વતીબેન ૨૫૧

૩૮ શાહ જીતેન્દ્રકુમાર વાડીલાલ માણેકચંદ રાજસીતાપુરવાળા	૨૫૧
૩૯ શ્રી સાબરમતી સ્થા. જૈન સંઘ હા. શેઠ મણીલાલભાઈ	૨૫૦
૪૦ ભાવસાર છોટાલાલ છગનલાલ	૨૫૧
૪૧ ભાવસાર શકરાભાઇ છગનલાલ	૨૫૧
૪૨ અ. સૌ. બેન જીવીબેન રતિલાલ હા. ભાવસાર રતિલાલ હરગોવિંદદાસ	૨૫૧
૪૩ ભાવસાર ભોગીલાલ જમનાદાસ પાટણવાળા	૨૫૧
૪૪ સંઘવી બાલુભાઇ કમળશી તથા તેમનાં ધર્મપત્નીઓ અ. સૌ. ચંપાબેન તથા વસંતબેન તરફથી	૨૫૧
૪૫ અ. સૌ. વિદ્યાબેન વનેચંદ દેસાઈ વર્ષીતપ તથા અઠાઇ પ્રસંગે હા. ભુપેન્દ્રકુમાર વનેચંદ દેસાઈ	૪૧૭
૪૬ શાહ નટવરલાલ ગોકળદાસ	૨૫૧
૪૭ અ. સૌ. સરસ્વતીબેન મણીલાલ છગનલાલ	૩૫૧
૪૮ અ. સૌ. કંકુબેન (ભાવસાર ભોગીલાલ છગનલાલના ધર્મપત્ની)	૩૦૯
૪૯ અ. સૌ. સવિતાબેન (જયંતીલાલ ભોગીલાલનાં ધર્મપત્ની)	૨૫૧
૫૦ અ. સૌ. શાંતાબેન (દીનુભાઇ ભોગીલાલનાં ધર્મપત્ની)	૨૫૧
૫૧ અ. સૌ. સુનંદાબેન (રમણલાલ ભોગીલાલનાં ધર્મપત્ની)	૨૫૧
૫૨ શેઠ હીરાજી રૂગનાથજીના સ્મરણાર્થે હ. વાગમલજી રૂગનાથજી	૩૦૧
૫૩ શેઠ મણીલાલ બોઘાભાઇ	૨૫૧
૫૪ પટવા સુમેરમલજી અનોપચંદજી જોધપુરવાળા	૩૦૧
૫૫ સ્વ. માણેકલાલ વનમાળીદાસ શેઠના સ્મરણાર્થે હા. રમણલાલ માણેકલાલ	૨૫૧
૫૬ સ્વ. શાહ ધનરાજજી ખેમરાજજીનાં સ્મરણાર્થે હા. કનૈયાલાલ ધનરાજજી	૩૦૧
૫૭ શ્રી સારંગપુર દ. આ. કો. સ્થા. જૈન સંઘ હા. શાહ રમણલાલ ભગુભાઇ	૨૫૧
૫૮ દોશી હરજીવનદાસ જીવરાજ તથા લક્ષ્મીબાઇ લહેરચંદના સ્મરણાર્થે હ. દોશી મનહરલાલ કરશનદાસ મુળીવાળા	૨૫૧
૫૯ શાહ પુનમચંદ ફતેહચંદ	૨૫૧
૬૦ શ્રીયુત ચતુરભાઇ નંદલાલ	૨૫૧
૬૧ શ્રીયુત અમૃતલાલ ઇશ્વરલાલ મહેતા	૨૫૧
૬૨ શાહ જાદવજી મોહનલાલ તથા શાહ ચીમનલાલ અમુલખભાઇ	૨૫૧

૬૩ અ. સૌ. બેન લાભુબેન મગનલાલ હ. શાહ અમૃતલાલ ધનજીભાઇ
વઢવાણુ શહેરવાળા ૩૦૧
૬૪ અ. સૌ. બેન કાન્તાબેન ગોરધનદાસ (ચાંદમુનિના ઉપદેશથી) ૨૫૧
૬૫ દોશી ફુલચંદ સુખલાલભાઈ બોટાદવાળાના સ્મરણાર્થે
હ. દોશી છબીલદાસ ફુલચંદભાઇ ૨૫૧
૬૬ લાલાજી રામકુંવરજી જૈન ૨૫૧
૬૭ શેઠ છોટાલાલ ગુલાબચંદ પાલનપુરવાળા ૨૫૧
૬૮ શાહ ધીરજલાલ મોતીલાલ ૨૫૧
૬૯ સંઘવી સૂર્યકાંત ચુનીલાલના સ્મરણાર્થે
હ. સંઘવી જીવણુલાલ ચુનીલાલ ૨૫૧
૭૦ ભાવસાર મોહનલાલ અમુલખરાય ૨૫૧
૭૧ મહેતા મૂળચંદ મગનલાલ ૨૫૧
૭૨ વૈદ્ય નરસિંહદાસ સાકરચંદનાં ધર્મપત્ની રેવાબાઇના સ્મરણાર્થે
હ. હરીલાલ નરસિંહદાસ ૨૫૧
૭૩ શાહ ફુલચંદભાઇ મુલચંદ હ. હસમુખભાઈ ફુલચંદભાઇ ૨૫૧
૭૪ શેઠશ્રી મિશ્રીલાલજી જવાહીરલાલજી બરડીયા ૨૫૧
૭૫ શાહ લલ્લુભાઇ મગનભાઈ ચુડાવાળા હ. જશવંતલાલ લલ્લુભાઈ ૩૦૧
૭૬ કુમારી પુષ્પાબેન હીરાલાલ (ચાંદમુનિના ઉપદેશથી) ૨૫૧
૭૭ શાહ મણીલાલ ઠાકરશી હ. કમળાબેન મણીલાલ લખતરવાળા
(ચાંદમુનિના ઉપદેશથી) ૨૫૧
૭૮ કુમારી નલીનીબેન જયંતીલાલ ૨૫૧
૭૯ સ્વ. ઉમેદરામ ત્રીભુવનદાસનાં ધર્મપત્ની કાશીબાઇના સ્મરણાર્થે
હા. શાંતિલાલ ઉમેદરામ (ચાંદમુનિનાં ઉપદેશથી) ૨૫૧
૮૦ સ્વ. ભાવસાર મોહનલાલ છગનલાલના ધર્મપત્ની દિવાળીબાઇના
સ્મરણાર્થે હ. રતીલાલ માણેકલાલ (ચાંદમુનિના ઉપદેશથી) ૨૫૧
૮૧ મહેતા દેવીચંદજી ખુબચંદજી ધોકા ગઢસીયાણાવાળાના સ્મરણાર્થે
હ. મહેતા ચુનીલાલ હરમાનચંદ ૨૫૧
૮૨ ઘાસીલાલજી મોહનલાલજી કોઠારી ઠે૦ લક્ષ્મી પુસ્તક ભંડાર ૨૫૧
૮૩ સ્વ૦ શેઠ નાથાલાલ રતનાભાઈ મારૂતીયાના સ્મરણાર્થે
પુનાબેન તરફથી હ કરશનભાઈ (ચાંદમુનિના ઉપદેશથી) ૨૫૧

૮૪ શાહ મણીલાલ છગનલાલ	૨૫૧
૮૫ ભાવસાર જયંતીલાલ ભોગીલાલ	૨૫૧
૮૬ ભાવસાર દિનુભાઈ ભોગીલાલ	૨૫૧
૮૭ ભાવસાર રમણલાલ ભોગીલાલ	૨૫૧
૮૮ ભાવસાર કનુભાઇ સાકરચંદ	૨૫૧
૮૯ શેઠ ભેરૂમલજી સાહેબ જોધપુરવાળા	૨૫૧
૯૦ સ્વ. બેનાણી વર્ધમાન રામજીભાઈ કુંદણીવાળાના સ્મરણાર્થે	
હ. શાંતિલાલ વર્ધમાન	૨૫૧
૯૧ સ્વ. કચરાભાઈ લહેરાભાઈના સ્મરણાર્થે	
હ. શાંતિભાઈ કચરાભાઇ	૨૫૧
૯૨ એક સ્વધર્મી બંધુ હ. શાહ રીખભદાસજી જયંતિલાલજી	૨૫૧
૯૩ અ. સૌ. સરસ્વતીબેન મણીલાલ ચતુરભાઈ શાહ	
(સદાનંદી છોટાલાલ મહારાજશ્રીના ઉપદેશથી)	૨૫૧
૯૪ ચીમનલાલ મણીલાલ શાહ (દરીયાપુરી સંપ્રદાયના પૂ૦ તપસ્વી મહારાજશ્રી માણેકચંદ્રજીના શિષ્ય મુનિશ્રી મગનલાલજી મહારાજશ્રીના સ્મરણાર્થે)	૨૫૧
૯૫ બેન જેકુંવર વ્રજલાલ પારેખ	૨૫૧
૯૬ શેઠ પુનમચંદજી જવાહીરલાલજી ખરડીયા	૨૫૧
૯૭ અ. સૌ. લીલાવંતી ધીરજલાલ મહેતા	
ઠે. ડો ધીરજલાલ ત્રીકમલાલ મહેતા	૩૦૧
૯૮ શેઠ રાજમલજી ઘાસીલાલજી કોઠારી કોશીથલવાળા	૨૫૧
૯૯ શેઠ ચુનીલાલ ભગવાનજી ઠે. રતીલાલ ચુનીલાલ	૨૫૧
૧૦૦ ભાગ્યવતી અરવીંદકુમાર ઠે. અરવીંદકુમાર સકરાભાઈ ભાવસાર	૨૫૧
૧૦૧ અ. સૌ ચંચળબેન મનસુખલાલ	
હા. મનસુખલાલ જેઠાલાલ રૂપેરા	૨૫૧
૧૦૨ સ્વ. આસીબાઇ તથા વસ્તીમલજી ભોમાજીના સ્મરણાર્થે	
હા શેઠ મીશ્રીમલજી દેવચંદજી ઓસવાલ કેરુવાળા	૨૫૧
૧૦૩ સ્વ. શેઠ કીશનમલજી માંડોતના સ્મરણાર્થે	
હા. શીરેમલજી કીશનમલજી સોજતવાલા	૨૫૧
૧૦૪ સ્વ. શેઠ વકતાવરમલજીના સ્મરણાર્થે	
હા. શેઠ ઘીસાલાલજી મુકનરાજજી શીયારીયા (જોધપુરવાલા)	૨૫૧

૧૦૫	શાહ મહાસુખલાલ ભાઇલાલ (સદાનંદી પંડિત મુનિશ્રી છોટાલ મહારાજના ઉપદેશથી)	૨૫૧
૧૦૬	અ. સૌ. કાંતાબેન કાળીદાસ ઠે. કુમાર બુક બાઈંડીંગ વર્કસ	૨૫૧
૧૦૭	સ્વ. હીંમતલાલ મગનલાલના સ્મરણાર્થે તેમના સુપુત્રો મેસર્સ દ્વારકાદાસ એન્ડ બ્રધર્સ તરફથી	૩૦૧
૧૦૮	અ. સૌ કાન્તાબેનના સ્મરણાર્થે હા. ભાવસાર નાગરદાસ હરજીવનદાસ	૨૫૧
૧૦૯	શ્રી ઉમેદચંદ ઠાકરશી ઠે. યુ. ટી ગોપાણી એન્ડ સન્સ	૩૫૧
૧૧૦	પૂ. માતુશ્રીના સ્મરણાર્થે હા. ભાવસાર ભોગીલાલ છગનલાલ	૨૫૧
૧૧૧	શાહ શાંતીલાલ મોહનલાલ	૨૫૧
૧૧૨	સરસ્વતી પુસ્તકભંડાર હા. પ્રભુદાસ મહેતા	૨૫૧
૧૧૩	સરસ્વતી પુસ્તક ભંડાર હા. શહે ભુરાલાલ કાળીદાસ	૨૫૧
૧૧૪	સ્વ, પિતાશ્રી મોતીલાલજીના સ્મરણાર્થે હા. મહેતા રણજીતલાલજી મોતીલાલજી ઉદેપુરવાળા	૨૫૧
૧૧૫	શેઠ પરસોત્તમદાસ અમરસીનાં ધર્મપત્ની સ્વ. કુસુમબેનના સ્મરણાર્થે તથા અ સૌ. સવીતાબેનના માસખમણના નિમિત્તે હા. શેઠ સોમચંદ પરસોત્તમદાસ (પોર્ટ સુદાનવાળા)	૩૦૧
૧૧૬	શ્રીમાન જોરાવરમલજી ધર્મચંદ્રજી ડુંગરવાલ રાજાજી કાકેરડાવાળા (મુનિશ્રી માંગીલાલજીના ઉપદેશથી)	૨૫૧
૧૧૭	ડો. ધનજીભાઇ પુરસોત્તમદાસ	૨૫૧
૧૧૮	સરસ્વતી પુસ્તક ભંડાર	૩૫૧
૧૧૯	સરસ્વતી પુસ્તક ભંડાર	૩૫૧
૧૨૦	સરસ્વતી ભંડાર	૩૫૧
૧૨૧	શેઠ ગેરિલાલજી સુગનલાલજી ઉદેપુરવાળા	૨૫૧
૧૨૨	શેઠ કનૈયાલાલજી સુરાણા પીપલોદાવાળા	૨૫૨
૧૨૩	કામદાર વાડીલાલ દતીલાલ (સાબરમતી)	૨૫૨
૧૨૪	કુમારી ચંપાબેન ભોગીલાલ ભાવસાર	૨૮૦
૧૨૫	કુમારી ઉષાબેન જયંતીલાલ ભાવસાર	૪૫૧
૧૨૬	કુમારી ચંદ્રાબેન જયંતીલાલ ભાવસાર	૨૪૧
૧૨૭	કુમારી જયશ્રી રમણુલાલ ભાવસાર	૨૫૧
૧૨૮	શાહ ડાહ્યાભાઈ અંબાલાલ	૩૫૧

૧૨૯ ખરડિયા ચાંદમલ્લજી ઝવાહીર લાલજી ૫૧
૧૩૦ શ્રી વીજયદાન સુરેશ્વરજી જ્ઞાનમંદીર પોષધશાળા ૩૫૧
૧૩૧ શેઠ પાનાચંદ ઝવેરચંદ સારંગપુર ઉપાશ્રય ટ્રસ્ટ
હ. વકીલ બાબુભાઈ હીંમતલાલ ૩૫૧

અમલનેર

૧ શાહ નાગરદાસ વાઘજીભાઈ ૨૫૧
૨ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. ગાંડાલાલ ભીખાલાલ ૨૫૧

અજમેર

૧ શેઠ ભુરાલાલ મોહનલાલ ડુંગરવાલ ૨૫૧

અલ્વર

૧ શ્રીમતી ચંપાદેવી ઠે. બુદ્ધામલજી રતનમલજી સચેતી ૨૫૧
૨ શેઠ ચાંદમલ્લજી મહાવીર પ્રસાદ પાલાવત ૨૫૧
૩ શ્રીયુત રૂષભકુમાર સુમતિકુમાર જૈન ૨૫૧

આસનસોલ

૧ બાવીશી મણીલાલ ચત્રભુજના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની
મણીબાઈ તરફથી હા. રસિકલાલ, અનિલકાંત, તથા વીનોદરાય ૨૫૧

આટકોટ

૧ મહેતા ચુનીલાલ નારણદાસ ૩૦૧

આણંદ

શેઠ રમણીકલાલ એ. કપાસી હા. મનસુખલાલભાઇ ૨૫૧

આકોલા

શેઠ કંચનલાલ રાઘવજી અજમેરા ઠે. મેસર્સ અજમેરા બ્રધર્સ એન્ડ
કું. (પૂ. સદાનંદી મુનિશ્રી છોટાલાલજી મહારાજના ઉપદેશથી) ૨૫૧

ઇગતપુરી

૧ શેઠ પન્નાલાલ લખીચંદ જૈન ૨૫૧

ઈન્દોર

૧ અ. સૌ. બેન દયાબેન મોહનલાલ દેસાઇ જેતપુરવાળા
(અ. સૌ. બેન વિદ્યાબેનના વર્ષીતપ નિમિત્તે)
હા અરવિંદકુમાર તથા જીતેન્દ્રકુમાર ૨૫૧
૨ શ્રીયુત ભાઇલાલ છગનલાલ તુરખીયા ૩૫૧

ઉદયપુર

૧ શેઠ રણુજીતલાલજી મોતીલાલજી હિંગડ	૨૫૧
૨ શ્રીમતી સોહીનીબાઇ ઠે. રણુજીતલાલજી મોતીલાલજી હિંગદ	૨૫૧
૩ અ. સૌ. બેન ચન્દ્રાવતી તે શ્રીમાન અહોતલાલજી નાહરનાં ધર્મપત્ની, હા. શેઠ રણુજીતલાલજી મોતીલાલજી હિંગડ	૨૫૧
૪ શેઠ છગનલાલજી બાગ્રેચા	૨૫૧
૫ શેઠ મગનલાલજી બાગ્રેચા	૨૫૧
૬ સ્વ. શેઠ કાળુલાલજી લોઢાના સ્મરણાર્થે હા. શેઠ દોલતસિંહજી લોઢા	૨૫૧
૭ સ્વ. શેઠ પ્રતાપમલજી સાખલાના સ્મરણાર્થે હા. પ્રાણુલાલ હીરાલાલ સાખલા	૨૫૧
૮ શેઠ ભીમરાજજી થાવરચંદજી બાફણા	૨૫૧
૯ શ્રીયુત સાહેબલાલજી મહેતા	૨૫૧
૧૦ શેઠ પન્નાલાલજી ગણેશલાલજી હીંગડ	૨૫૧
૧૧ શેઠ દીપચંદજી પન્નાલાલજી લોઢા	૨૫૧
૧૨ શેઠ કસ્તૂરચંદજી નારૂમલજી	૨૫૧
૧૩ શ્રી યૂ. એલ. કોઠારી	૩૦૧
૧૪ બાબૂ પરશુરામ છગનલાલજી શેઠ	૨૫૦
૧૫ શેઠ કનૈયાલાલજી કારૂલાલજી જૈન	૨૫૧
૧૬ શ્રી વર્ધમાન સ્થા. જૈન શ્રાવક સંઘ આમડ	૩૫૧

ઉપલેટા

૧ શેઠ જેઠાલાલ ગોરધનદાસ	૨૫૧
૨ સ્વ. બેન સંતોકબેન કચરા હા. ઓતમચંદભાઇ, છોટાલાલભાઇ તથા અમૃતલાલભાઇ વાલજી (કલ્યાણવાળા)	૨૫૧
૩ શેઠ ખુશાલચંદ કાનજીભાઇ હા. પ્રતાપભાઇ	૨૫૧
૪ દોશી વીઠ્ઠલજી હરખચંદ	૨૫૧
૫ સંઘાણી મુળશંકર હરજીવનભાઇના સ્મરણાર્થે હા. તેમના પુત્રો જયંતીલાલ રમણીકલાલ	૨૫૧

ઉમરગાંવ રોડ

૧ શાહ મોહનલાલ પોપટલાલ પાનેલીવાળા ૨૫૧

એડન કેમ્પ

૧ મહેતા પ્રેમચંદ માણેકચંદના સ્મરણાર્થે
હા. રાયચંદભાઇ, પોપટલાલભાઇ તથા રસીકલાલભાઈ ૨૫૧
૨ શાહ જગજીવનદાસ પુરૂષોત્તમદાસ ૨૫૧
૩ શાહ ગોકળદાસ શામજી ઉદાણી ૨૫૧

કલકત્તા

૧ શ્રી કલકત્તા જૈન શ્વે. સ્થા. (ગુજરાતી) સંઘ ૨૫૧

કલોલ

૧ શેઠ મોહનલાલ જેઠાભાઈના સ્મરણાર્થે
હા. શેઠ આત્મારામ મોહનલાલ ૨૫૧
૨ ડૉ. મયાચંદ મગનલાલ શેઠ હા. ડૉ. રતનચંદ મયાચંદ ૨૫૧
૩ સ્વ. નાથાલાલ ઉમેદચંદના સ્મરણાર્થે હા. શાહ રતીલાલ નાથાલાલ ૨૫૧
૪ શેઠ મણીલાલ તલકચંદના સ્મરણાર્થે
હા. મારફતીયા ચંદુલાલ મણીલાલ ૨૫૧
૫ સ્વ. શ્રીયુત વાડીલાલ પરશોત્તમદાસના સ્મરણાર્થે
હા. ઘેલાભાઇ તથા આત્મારામભાઇ ૨૫૧
૬ શાહ નાગરદાસ કેશવલાલ ૨૫૧
૭ શ્રી. સ્થા. જૈન સંઘ હા. શેઠ આત્મારામભાઈ મોહનલાલભાઈ ૨૫૧

કડી

૧ શ્રી સ્થા. દરિયાપુરી જૈન સંઘ
હા. ભાવસાર દામોદરદાસભાઈ ઈશ્વરલાલભાઈ ૨૫૧
૨ પાર્વતીબેન ઠે. જેસીંગભાઇ ઈશ્વરલાલભાઇ ૨૫૧

કરજણ

૧ શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ મીયાંગામ કરજણ ૨૫૧

કઠોર

૧ સ્થા. જૈન સંઘ હ જેસીંગભાઈ પોચાલાલ તરફથી
(માધવસિંહજી મહારાજશ્રીના ઉપદેશથી)
હ. ઠાકોરભાઈ રામચંદ્ર ૨૫૧

કત્રાસગઢ

૧ શ્રી શ્વે. સ્થા. જૈન સંઘ હ. શેઠ દેવચંદ અમુલખભાઇ — ૨૫૧

કલ્યાણ

૧ સંઘવી ઠાકરશીભાઇ સંઘજીના સ્મરણાર્થે
હ. શાહ હીંમતલાલ હરખચંદ — ૨૫૧

કાનપુર

૧ શાહ રમણીકલાલ પ્રેમચંદ — ૩૦૦

કુંદણી-(આટકોટ)

૧ દોશી રતીલાલ ટોકરશી — ૨૫૧

કોલકી

૧ પટેલ ગોવિંદલાલ ભગવાનજી — ૨૫૧
૨ પટેલ ખીમજી જેઠાભાઈ વાઘાણી
(તેમના સ્વ. સુપુત્ર રામજીભાઇના સ્મરણાર્થે) — ૩૦૨

કમ્પાલા

૧ સ્વ. શેઠ નાનચંદ મોતીચંદ આફ્રીકાવાળાના સ્મરણાર્થે
હ. તેમના સુપુત્ર જમનાદાસ નાનચંદ શેઠ — ૨૫૧
૨ શ્રીમતી હીરાબેન, રતીલાલ નાનચંદ શેઠ આફ્રીકાવાળા — ૨૫૧

કુશળગઢ

૧ શેઠ ચંપાલાલજી દેવચંદજી — ૨૫૧

ખાખીજાળીયા

૧ ખાટવીયા ગુલાબચંદ લીલાધર — ૪૦૧

ખારાઘોડા

૧ સ્વ. પિતાશ્રી હરજીવનદાસ લાલચંદ શાહ તથા
સ્વ. અ. સૌ. બેન જમકુબાઇ તથા લીલાબાઈના
સ્મરણાર્થે હ નરસિંહદાસ હરજીવનદાસ — ૨૫૧
૨ સ્વ. શેઠ ઓઘડલાલ લક્ષ્મીચંદના સ્મરણાર્થે હ ભાઇચંદ ઓઘડભાઈ — ૨૫૧

ખીચન

૧ શેઠ કીશનલાલ પૃથ્વીરાજ માલુ ૩૫૨

ખુરદારોડ

૧ શેઠ ગીરધારીલાલજી સીતારામજી ખેંડપવાળા ૩૦૦
૨ શેઠ નરસિંહદાસ શાંતિલાલજી ભોરલાવાળા
(મુનિશ્રી ચાંદમલજીના ઉપદેશથી) ૨૫૧

ખંભાત

૧ શેઠ માણેકલાલ ભગવાનદાસ ૨૫૧
૨ શેઠ ત્રીભોવનદાસ મંગળદાસ ૨૫૧
૩ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ ૨૫૧
૪ શાહ ચંદુલાલ હરીલાલ ૨૫૧
૫ શાહ સાંકરચંદ મોહનલાલ ૨૫૧
૬ શાહ શકરાભાઇ દેવચંદ ૨૫૧
૭ શાહ સુખલાલ દોલતચંદ ૨૫૧
૮ ગાંધી બાપુલાલ મોહનલાલ ૨૫૧
૯ બેન લલિતા માણેકલાલ ૨૫૧

ગાંધીગામ

૧ શાહ મોરારજી નાગજી એન્ડ કંપની ૨૫૧

ગુંદાલા

૧ શાહ માલશી ઘેલાભાઈ ૨૫૧

ગુલાબપુરા

૧ શ્રી સ્થા જૈન વર્ધમાન સંઘ
હ. માંગીલાલજી ઉકારમલજી ધનોપવાળા ૨૫૧
૨ શ્રી ઓસવાલ પંચાયત હ. ગુલાબચંદજી ચોરડીયા ૨૫૧

ગોંડલ

૧ સ્વ. ભાખડા વચ્છરાજ તુલસીદાસનાં ધર્મપત્ની કમલબાઈ
તરફથી હા. માણેકચંદભાઈ તથા કપુરચંદભાઇ ૨૫૧
૨ પીપળીયા લીલાધર દામોદર તરફથી તેમનાં ધર્મપત્ની અ. સૌ.
લીલાવતી સાકરચંદ કોઠારીના બીજા વર્ષીતપની ખુશાલીમાં ૩૦૧

૩ કામદાર જુઠાલાલ કેશવજીના સ્મરણાર્થે હા. હરીલાલ જુઠાલાલ કામદાર ૩૦૧
૪ સ્વ કોઠારી કૃપાશંકર માણેકચંદના સ્મરણાર્થે હા. તેમનાં ધર્મપત્ની પ્રભાકુંવરબેન ૨૫૧
૫ કોઠારી ગુલાબચંદ રાયચંદ રંગુનવાળા ૨૫૧
૬ જસાણી રૂગનાથભાઇ નાનજી હા. ચુનીલાલભાઇ ૨૫૧
૭ માસ્તર હકીમચંદ દીપચંદ શેઠ ૨૫૧

ગોંદીયા

૧ સ્થા. જૈન સંઘ હ. શાહ પ્રેમચંદ છોટાલાલ (શેઠ પોપટલાલભાઇ તરફથી) ૨૫૧

ગોધરા

૧ શાહ ત્રીભોવનદાસ છગનલાલ ૩૦૧
૨ સ્વ. પ્રેમચંદ ઠાકરશીના સ્મરણાર્થે હા. શાહ ચુનીલાલ પ્રેમચંદ ૩૦૧

ઘટકણ

૧ શાહ ચંદુલાલ કેશવલાલ ૨૫૧

ઘોલવડ (થાણા)

૧ મહેતા ગુલાબચંદ ગંભીરમલજી ૩૦૦

ઘોડનદી

૧ શેઠ ચંદ્રભાણુ શોભાચંદ ગાદીયા ૨૫૧

ચુડા

૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. રતીલાલ મગનલાલ ગાંધી ૨૫૧

ચોટીલા

૧ શાહ વનેચંદ જેઠાલાલ શ્રી સ્થા, જૈન સંઘને ભેટ ૩૦૧

ચારભુજારોડ

૧ શેઠ માંગીલાલજી હીરાચંદજી બાબેલ ૩૦૧

જમશેદપુર

૧ દોશી ઝવેરચંદ વલભજી ૨૫૧

જલેસર (બાલાસોર)

૧ સંઘવી નાનચંદ પોપટભાઇ થાનગઢવાળા ૨૫૧

જયપુર

૧ શ્રીમાન શેઠ શીરેમલજી નવલખાનાં ધર્મપત્ની અ. સૌ. પ્રેમલતાદેવી ૨૫૧

જસવન્તગઢ

૧ શ્રીમાન સુન્દરલાલજી નેમીચંદજી તકેસરા ૩૫૧

જામખંભાળીયા

૧ શેઠ વસનજી નારણજી ૨૫૧
૨ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. મહેતા રણછોડદાસ પરમાણુનંદ ૨૫૧
૩ સંઘવી પ્રાણુલાલ લવજીભાઈ ૨૫૧

જામન ર

૧ શાહ છોટાલાલ કેશવજી ૨૫૧
૨ વોરા ચીમનલાલ દેવજીભાઇ ૨૫૧
૩ ડો' સાહેબ પી પી. શેઠ ૨૫૦
૪ શાહ રંગીલદાસ પોપટલાલ ૨૫૧
૫ વકીલ મણીલાલ ખેંગારભાઇ પુનાતર ૨૫૧

જુનારદેવ

૧ ઘેલાણી ત્રીકમજી લાધાભાઈ ૨૫૧

જુનાગઢ

૧ શેઠ મણીલાલ મીઠાભાઈ હ હરિલાલભાઈ (હાટીનામાળીયાવાળા) ૨૫૧

જામજોધપુર

૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હ મહેતા પોપટલાલ માવજીભાઈ ૩૮૭
૨ શાહ ત્રીભોવનદાસ ભગવાનજી પાનેલીવાળા ૨૫૧
૩ દોશી માણેકચંદ ભવાન ૨૫૧
૪ પટેલ લાલજી જુઠાભાઈ ૨૫૧
૫ શેઠ ખાવનજી જેઠાભાઇ ૨૫૧
૬ શેઠ વ્રજલાલ ચુનીલાલ ૨૫૧

જેત ર

૧ કોઠારી ઠાકરકુમાર વેણીલાલ ૨૫૧
૨ અ. સૌ. બેન સુરજકુંવર વેણીલાલ કોઠારી ૨૫૧

૩ શેઠ અમૃતલાલ હીરજીભાઈ હ. નરભેરામભાઈ (જસાપુરવાળા) ૨૫૧
૪ દોશી છોટાલાલ વનેચંદ ૨૫૧

જેતલસર

૧ શાહ લક્ષ્મીચંદ કપુરચંદ ૨૫૧
૨ કાઠાર લીલાધર જીવરાજના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની
જખકબેન તરફથી હ. શાંતિલાલભાઇ ગોંડલવાળા ૨૫૧

જોધપુર

૧ શેઠ નવરતમલજી ધનવંતસિંહજી ૨૫૦
૨ શેઠ હસ્તીમલજી મનરૂપલજી સામસુખા ૨૫૧
૩ શેઠ પુખરાજજી પદમરાજજી ભંડારી ૨૫૧
૪ શેઠ વસ્તીમલજી આનંદમલજી સામસુખા ૨૫૧

જોરાવરનગર

૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હ. શેઠ ચંપકલાલ ધનજીભાઇ ૨૫૧

ઝરીયા

૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હ. શેઠ કનૈયાલાલ ખી મોદી ૨૫૧

ડોંડાયચા

૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ ૨૫૦

ઢસા

૧ ઢસાગામ સ્થા. જૈન સંઘ હ. એક સદ્‌ગૃહસ્થ તરફથી ૨૫૧
૨ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હ. ખગડિયા નરભેરામ જેઠાલાલ (ઢસા જંકશન) ૨૫૧

તાસગાંવ

૧ સ્વ. ચુનીલાલજી દુગડના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની
ઢોંઢુંબાઈના તરફથી હા. શેઠ રામચંદજી ૩૫૧

થાનગઢ

૧ શાહ ઠાકરશીભાઈ કરશનજી ૨૫૧
૨ શેઠ જેઠાલાલ ત્રીભોવનદાસ ૨૫૧
૩ શાહ ધારશીભાઇ પાશવીરભાઈ હા. સુખલાલભાઇ ૨૫૧
૪ હંસાબેન અરવીંદ હા. ભાઈ રવીચંદ માણેકચંદ ૩૦૧

દહાણુરોડ

૧ શાહ હરજીવનદાસ ઓઘડ ખંધાર (કરાંચીવાળા)	૨૫૧

દાહોદ

૧ શેઠ માણેકલાલભાઈ ખેંગારજી	૨૫૧

દિલ્હી

૧ લાલાજી પૂર્ણચંદજી જૈન (સેન્ટ્રલ બેંકવાળા)	૩૫૧
૨ શ્રીયુત કીશનચંદજી મહેતાબચંદજી ચોરડીયા હા. શ્રીમતી નગીનાદેવી તથા શ્રીયુત મહેતાબચંદ જૈન	૨૫૧
૩ અ. સૌ. સજ્જનબેન ઇંદરમલજી પારેખ	૨૫૧
૪ લાલાજી મીઠનલાલજી જૈન એન્ડ સન્સ	૩૦૧
૫ લાલાજી ગુલશનલાલજી જૈન એન્ડ સન્સ	૩૦૧
૬ બેન વિજ્યાકુમારી જૈન ઠે. મહેતાબચંદ જૈન (વયોવૃદ્ધ સરલ સ્વભાવી કુલમતીજી મહાસતિજીની પ્રેરણાથી)	૨૫૧
૭ શ્રીમાન લાલાજી રતનચંદજી જૈન ઠે. આઈ સી. હોઝીયરી	૨૫૧
૮ સ્વ. લાલાશ્રીચંદજી ડુંગરીયાના સ્મરણાર્થે રાજસ્થાન ન્યાયાધિકારી હુકમચંદજી જૈનના સુપુત્ર જીતેન્દ્રકુમાર વકીલના સુપુત્ર અનિલકુમાર તરફથી ભેટ હ. વિનયકુમારી	૩૫૧
૯ સ્વ. લાલા ચંપાલાલજી ચોરડીયાના સ્મરણાર્થે લાભચંદજી તથા હીરાલાલજી તરફથી હ. શાંતાદેવી	૩૫૧
૧૦ એક સદ્‌ગૃહસ્થ તરફથી હ. મહેતાબચંદજી જૈન	૩૦૧
૧૧ એક સ્વધર્મી બંધુ તરફથી હસ્તે વિજિયાકુમારી બેન	૩૦૧
૧૨ બાબુ નિરંજન સિંહજી જૈન	૨૫૧

ધ્રાફા

૧ શેઠ મણીલાલ જેચંદભાઈ	૨૫૧

ધાર

૧ શેઠ સાગરમલજી પનાલાલજી	૨૫૧

ધ્રાંગધ્રા

૧ ભાવદીક્ષિત અ સૌ. રૂપાળીબેન હિંમતલાલ સંઘવીની તપશ્ચર્યાર્થે સંઘવી ચીમનલાલ પુરસોતમદાસ સંઘવી તરફથી	૩૦૫

૨ સંઘવી નરસિંહદાસ વખતચંદ	૩૦૧
૩ શ્રી સ્થા. જૈન મોટા સંઘ હ. મંગળજી જીવરાજ	૨૫૧
૪ ઠક્કર નારણદાસ હરગોવિંદદાસ	૨૫૧
૫ કોઠારી કપુરચંદ મંગળજી	૨૫૧

ધોરાજી

૧ મહેતા પ્રભુદાસ મુળજીભાઈ	૩૫૧
૨ અ. સૌ. બચીબેન બાબુભાઈ	૨૫૧
૩ ધી નવસૌરાષ્ટ્ર ઓઈલ મીલ પ્રા. લીમીટેડ	૨૫૧
૪ સ્વ. રાયચંદ પાનાચંદના સ્મરણાર્થે હ. ચીમનલાલ રાયચંદ શાહ	૩૦૧
૫ ગાંધી પોપટલાલ જેચંદભાઈ	૨૫૦
૬ દેસાઇ છગનલાલ ડાહ્યાભાઈ લાઠવાળાનાં ધર્મપત્ની દિવાળીબેન તરફથી હ. કુમારી હસુમતી	૨૫૧
૭ એક સદ્‌ગૃહસ્થ હ. મહેતા પ્રભુદાસ મુળજીભાઈ	૨૫૧
૮ શેઠ દલપતરામ વસનજી મહેતા	૨૫૧
૯ સ્વ. પિતાશ્રી ભગવાન કચરાભાઇના તથા ચિ. હંસાના સ્મરણાર્થે હ. પટેલ દલીચંદ ભગવાનજી	૩૦૧
૧૦ મહેતા હેમચંદ કાળીદાસ જામખંભાળીયાવાળા	૨૫૧

ધંધુકા

૧ શેઠ પોપટલાલ ધારશીભાઈ	૨૫૧
૨ સ્વ. ગુલાબચંદભાઇના સ્મરણાર્થે હ. વોરા પોપટલાલ નાનચંદ	૨૫૧
૩ શ્રી ચત્રભુજ વાઘજીભાઈ વસાણી	૨૫૧

ધુલીયા

૧ શ્રી અમોલ જૈન જ્ઞાનાલય હ. શેઠ કનૈયાલાલ છાજેડ	૨૫૧

નડીયાદ

૧ શાહ મોહનલાલ ભુરાભાઇ	૨૫૧

નારાયણ ગામ

૧ શેઠ મોતીલાલજી હીરાચંદજી ચોરડીયા બોરીવાળા	૨૫૧

નંદુરબાર

૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હ. શેઠ પ્રેમચંદ ભગવાનલાલ	૨૫૧

નાગોર

૧ શ્રીપાલભાઈ એન્ડ કું. સાગરમલજી લુંકડ ડેરવાળા તરફથી — ૨૫૧

પાલનપુર

૧ બેન લક્ષ્મીબાઈ હ. મહેતા હરીલાલ પીતાંબરદાસ — ૨૫૧

૨ લોકાગચ્છ સ્થા. જૈન પુસ્તકાલય હ. કેશવલાલ જી. શાહ — ૨૫૧

પાણસણા

૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હ. શાહ છોટાલાલ પૂંજાભાઇ — ૨૫૧

પાલેજ

૧ સ્વ. મનસુખલાલ મોહનલાલ સંઘવીના સ્મરણાર્થે
હ. ભાઇ ધીરજલાલ મનસુખલાલ — ૩૦૧

પ્રાંતીજ

૧ સ્થા. જૈન સંઘ હ. શ્રીયુત અંબાલાલ મહાસુખરામ — ૨૫૦

પૂના

૧ શેઠ ઉત્તમચંદજી કેવળચંદજી ધોકા — ૨૫૧

ફાલના

૧ મહેતા પુખરાજજી હસ્તીમલજી સાદડીવાલા — ૩૦૧

૨ મહેતા કુંદનમલજી અમરચંદજી સાદડીવાલા — ૨૫૧

બગસરા

૧ શેઠ પોપટલાલ રાઘવજી રાયડીવાળા
હ. નાનચંદ પ્રેમચંદ શાહ — ૨૫૧

૨ સ્વ. માતુશ્રી જબકબાઇના સ્મરણાર્થે
હ. દેશાઇ વૃજલાલ કાળીદાસ — ૨૫૧

બરવાળા–ઘેલાશા

૧ સ્વ. મોહનલાલ નરસિંહદાસના સ્મરણાર્થે
હ. તેમનાં ધર્મપત્ની સુરજબેન મોરારજી — ૨૫૧

બદનાવર

૧ શ્રી વર્ધમાન સ્થા. જૈન શ્રાવક સંઘ હ. મિશ્રીલાલ જૈન વકીલ — ૨૫૧

બાલોતરા

૧ શાહ જેઠમલજી હસ્તીમલજી ભગવાનદાસજી ભણસારી ૨૫૧

બીદડા

૧ શાહ કાનજી શામજીભાઈ ૨૫૧

બીકાનેર

૧ શેઠ ભેરૂદાનજી શેઠીયા ૨૫૪

બેરાજા

૧ શેઠ ગાંગજી કેશવજી (જ્ઞાનભંડાર માટે) ૨૫૧

બેલારી

૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હ. શેઠ હજારીમલજી હસ્તીમલજી રાંકા ૨૫૧

બેરમો

૧ શ્રી બેરમો સ્થા. જૈન સંઘ હ. મહેતા નવલચંદ હાકેમચંદ ૨૫૧

બેંગલોર

૧ શેઠ કીશનલાલજી ફુલચંદજી સાહેબ ૨૫૧
૨ અજમેરા છોટાલાલ માનસિંગ ૩૫૧

બોટાદ

૧ સ્વ. વસાણી હરગોવિંદદાસ છગનલાલના સ્મરણાર્થે
હા. તેમનાં ધર્મપત્ની છબલબેન ૨૫૧

બોડેલી

૧ શાહ પ્રવીણચન્દ્ર નરસિંહદાસ સાણંદવાળા ૨૫૧
૨ શાહ ગીરધરલાલ સાકરચંદ ૨૫૧

ભાણવડ

૧ શેઠ જેચંદભાઇ માણેકચંદભાઇ ૩૫૨
૨ સંઘવી માણેકચંદ માધવજી ૨૫૧
૩ શેઠ લાલજી માણેકચંદ લાલપુરવાળા ૨૫૧
૪ શેઠ રામજી જીણાભાઈ ૨૫૧
૫ શેઠ પદમશી ભીમજી ફોફરીયા ૨૫૧
૬ ફોફરીયા ગાંડાલાલ કાનજીભાઈ હા. અ. સૌ. શાંતાબેન વસનજી ૨૫૧
૭ સ્વ. મહેતા પૂનમચંદ ભવાનના સ્મરણાર્થે હા. તેમનાં
ધર્મપત્ની દિવાળીબેન લીલાધર (ગુંદાંવાળા) ૨૫૧

ભાવનગર

૧ સ્વ. કુંવરજી બાવાભાઈના સ્મરણાર્થે હા. શાહ લહેરચંદ કુંવરજી ૩૦૧

ભાદરણ

૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા પટેલ ધુલાભાઈ ઝવેરભાઈ ૨૫૧

ભીલવાડા

૧ શ્રી શાંતિ જૈન પુસ્તકાલય હા. ચાંદમલજી માનમલજી સંઘવી ૨૫૧

૨ શેઠ ભીમરાજજી મીશ્રીલાલજી ૩૦૧

ભીમ

૧ ચંપકલાલજી જૈન પુસ્તકાલય હા શેઠ છોગામલજી માંગીલાલજી ૨૫૧

ભુસાવલ

૧ શેઠ રાજમલજી નંદલાલજી ચેરીટેબલટ્રસ્ટ ૨૫૧

ભોજાય

૧ જ્ઞાન મંદિરના સેક્રેટરી શાહ કુંવરજી જીવરાજ ૨૫૧

મદ્રાસ

૧ શેઠ મેઘરાજજી દેવીચંદજી મહેતા ૨૫૧

૨ મહેતા મણીલાલ ભાઈચંદ ૨૫૧

૩ મહેતા સુરજમલ ભાઈચંદ ૨૫૧

૪ મહેતા બાપાલાલ ભાઈચંદ ૨૫૧

મનફેરા

૧ સ્થા. છકોટી સ્થા. જૈન સંઘ ૨૫૧

મનોર

૧ શાહ શેરમલજી દેવીચંદજી જશવંતગઢવાળા
હા. પૂનમચંદજી શેરમલજી ઓહ્યા. ૨૫૧

માનકુવા

૧ સ્વ. મહેતા કુંવરજી નાથાલાલના સ્મરણાર્થે હા તેમનાં ધર્મપત્ની
કુંવરબાઈ હરખચંદ (માનકુવા સ્થા. જૈન સંઘ માટે) ૨૫૧

માંડવી

૧ શ્રી. સ્થા. છકોટી જૈન સંઘ હા. મહેતા ચુનીલાલ વેલજી ૨૭૭

માંડવા

૧ શ્રી માંડવા સ્થા. જૈન સંઘ
હ. અ સૌ. કંચનગૌરી રતીલાલ ગોસલીયા (ગઢડાવાળા) ૨૫૧

માલેગાંવ

૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હ ફતેલાલ માલુ જૈન ૨૫૧

માંગરોલ

૧ શાહ ત્રીભોવનદાસ નાનજી ૨૫૦
૨ દોશી ગીરધરલાલ જેઠાલાલ ૨૫૦

મુંબઈ તથા પરાંઓ

૧ સ્વ. શ્રી પિતાશ્રી કુંદનમલજી મોતીલાલજી મુથાના સ્મરણાર્થે
હા. શેઠ મોતીલાલજી જુબરમલજી (અહમદનગરવાળા) ૨૫૧
૨ વર્ધમાન સ્થા. જૈન સંઘ હ. કામદાર રૂપચંદ શીવલાલ (અંધેરી) ૨૫૧
૩ અ. સૌ. કમળાબેન કામદાર હ. કામદાર રૂપચંદ શીવલાલ (અંધેરી) ૨૫૧
૪ સ્વ. માતુશ્રી કડવીબાઈના સ્મરણાર્થે હ. તેમના પૌત્ર
હકમીચંદ તારાચંદ દોશી (અંધેરી) ૨૫૧
૫ શાહ હરજીવન કેશવજી ૨૫૧
૬ શાહ રમણીકલાલ કાળીદાસ તથા અ. સૌ. કાન્તાબેન રમણીકલાલ ૨૫૧
૭ સંઘવી હિંમતલાલ હરજીવનદાસ ૨૫૧
૮ વોરા પાનાચંદ સંઘજીના સ્મરણાર્થે
હ. ત્રંબકલાલ પાનાચંદ એન્ડ બ્રધર્સ ૨૫૧
૯ શાહ રામજી કરશનજી થાનગઢવાળા ૨૫૧
૧૦ સ્વ. જટાશંકર દેવજીભાઇ દોશીના સ્મરણાર્થે
હ. રણછોડદાસ (બાબુલાલ) જટાશંકર દોશી ૩૦૧
૧૧ ઘેલાણી વલભજી નરભેરામ હ. નરસીંહદાસ વલભજી ૨૫૧
૧૨ કપાસી મોહનલાલ શીવલાલ ૨૫૧
૧૩ ત્રીભોવનદાસ માનસિંચભાઇ દોઢીવાળાના સ્મરણાર્થે
હ. શાહ હરખચંદ ત્રીભોવનદાસ ૨૫૧
૧૪ ખેતાણી મણીલાલ કેશવજી (વડીયાવાળા) ઘાટકોપર ૨૫૧
૧૫ સ્વ. પિતાશ્રી શામળજી કલ્યાણજી ગોંડલવાળાના સ્મરણાર્થે
હા. વૃજલાલ શામળજી બાવીસી ૩૦૧
૧૬ શાહ રવિચંદ સુખલાલભાઈ (દાદર) ૩૫૧

૧૭ સ્વ. આશારામ ગીરધરલાલના સ્મરણાર્થે હા. શાંતિલાલ
આશારામ વતી જશવંતલાલ શાંતિલાલ ૨૫૧
૧૮ ગાંધી કાંતીલાલ માણેકચંદ ૨૫૧
૧૯ શાહ રવજીભાઇ તથા ભાઇલાલભાઈની કું. (કાંદીવલી) ૨૫૧
૨૦ અ. સૌ લાછુબેન હ રવજીભાઇ શામજી „ ૨૫૧
૨૧ સ્વ. માતુશ્રી માણેકબાઇના સ્મરણાર્થે હ શેઠ વલભદાસ નાનજી ૩૦૧
૨૨ એક સદ્‌ગૃહસ્થ હ શેઠ સુંદરલાલ માણેકલાલ ૨૫૧
૨૩ શેઠ ખુશાલભાઇ ખેંગારભાઇ ૨૫૦
૨૪ શેઠ ચુનીલાલ નરભેરામ વેકરીવાળા ૨૫૧
૨૫ સ્વ માતુશ્રી ગોમતીબાઇના સ્મરણાર્થે હ શાહ પોપટલાલ પાનાચંદ ૨૫૧
૨૬ કોટેચા જયંતીલાલ રણછોડદાસ સૌભાગ્યચંદ જુનાગઢવાળા ૨૫૧
૨૭ વોરા ઠાકરશી જસરાજ ૨૫૧
૨૮ કોઠારી સુખલાલજી પુનમચંદજી (ખારરોડ) ૨૫૧
૨૯ અ. સૌ. બેન કુંદનગૌરી મનહરલાલ સંઘવી „ ૨૫૧
૩૦ કોઠારી રમણીકલાલ કસ્તુરચંદભાઇ ૨૫૧
૩૧ દેશાઈ અમૃતલાલ વર્ધમાનના સ્મરણાર્થે
હ. દલીચંદ અમૃતલાલ દેસાઇ ૨૫૧
૩૨ સ્વ. ત્રીભોવનદાસ મજપાળ વીછીયાવાળાના સ્મરણાર્થે
હા. હરગોવિંદદાસ ત્રિભોવનદાસ અજમેરા ૨૫૧
૩૩ તેજાણી કુબેરદાસ પાનાચંદ ૨૫૧
૩૪ શેઠ સરદારમલજી દેવીચંદજી કાવેડીયા (સાદડીવાળા) ૨૫૧
૩૫ શેઠ નેમચંદ સ્વરૂપચંદ ખંભાતવાળા હ. ભાઈ જેઠાલાલ નેમચંદ ૨૫૧
૩૬ શાહ કોરશીભાઈ હીરજીભાઈ ૩૦૧
૩૭ શ્રીમતી મણીબાઇ વૃજલાલ પારેખ ચેરીટેબલ ટ્રસ્ટ ફંડ
હ. વૃજલાલ દુર્લભજી પારેખ ૨૫૧
૩૮ દડિયા અમૃતલાલ મોતીચંદ (ઘાટકોપર) ૨૫૧
૩૯ દોશી ચત્રભુજ સુંદરજી „ ૪૦૧
૪૦ દોશી જુગલકિશોર ચત્રભુજ „ ૪૦૧
૪૧ દોશી પ્રવિણચંદ ચત્રભુજ „ ૩૮૧
૪૨ શેઠ મનુભાઈ માણેકચંદ હા. આટકીયા નરભેરામ મોરારજી „ ૨૫૧
૪૩ શાહ કાંતિલાલ મગનલાલ „ ૨૫૧

૪૪ શેઠ મણીલાલ ગુલાબચંદ ઘાટકોપર ૨૫૦

૪૫ શેઠ છગનલાલ નાનજીભાઇ ૨૫૧

૪૬ શાહ શીવજી માણેકભાઈ ૨૫૧

૪૭ મેસર્સ સવાણી ટ્રાન્સપોર્ટ કું. હા. શેઠ માણેકલાલ વાડીલાલ ૨૫૧

૪૮ શાહ નગીનદાસ કલ્લાણજી (વેરાવળવાળા) ૨૫૧

૪૯ મહેતા રતીલાલ ભાઇચંદ ૨૫૧

૫૦ શાહ પ્રેમજી હીરજી ગાલા ૨૫૧

૫૧ બેન કેશરબાઇ ચંદુલાલ જેશીંગભાઈ શાહ ૨૫૧

૫૨ પારેખ ચીમનલાલ લાલચંદ સાયલાવાળાના ધર્મપત્ની અ. સૌ. ચંચળબાઇના સ્મરણાર્થે હા સારાભાઇ ચીમનલાલ ૨૫૧

૫૩ ધી મરીના મોર્ડન હાઇસ્કુલ ટ્રસ્ટ ફંડ હા. શાહ મણીલાલ ઠાકરશી ૨૫૧

૫૪ મહેતા મોટર સ્ટોર્સ હા. અનોપચંદ ડી. મહેતા ૨૫૧

૫૫ શેઠ રસીકલાલ પ્રભાશંકર મોરબીવાળા તરફથી તેમનાં માતુશ્રી મણીબેનના સ્મરણાર્થે ૩૦૧

૫૬ શ્રીયુત જસવંતલાલ ચુનીલાલ વોરા ૨૫૦

૫૭ શાહ કુંવરજી હંસરાજ ૨૫૧

૫૮ દડીયા જેસીંગલાલ ત્રીકમજી ૨૫૧

૫૯ મોદી અભેચંદ સુરચંદ રાજકોટવાળા હા ડોસાલાલ અભેચંદ ૨૫૧

૬૦ શાહ જેઠાલાલ ડામરશી ધ્રાંગધ્રાવાળા હા. શાહ વાડીલાલ જેઠાલાલ ૨૫૦

૬૧ સ્વ. પિતાશ્રી ભગવાનજી હીરાચંદ જસાણીના સ્મરણાર્થે હા. લક્ષ્મીચંદભાઈ તથા કેશવલાલભાઇ ૩૫૧

૬૨ સ્વ. પિતાશ્રી શાહ અંબાલાલ પુરુષોત્તમદાસના સ્મરણાર્થે હા. શાહ બાપાલાલ અંબાલાલ ૨૫૧

૬૩ સ્વ. કસ્તુરચંદ અમરશીના સ્મરણાર્થે હા. તેમનાં ધર્મપત્ની ઝવેરબેન મગનલાલ વતી જયંતીલાલ કસ્તુરચંદ મશકારીયા (ચુડાવાળા) ૨૫૧

૬૪ શેઠ ડુંગરશી હંસરાજ વીસરીયા ૨૫૧

૬૫ શાહ રતનશી મોણશીની કું. ૧૫૧

૬૬ શેઠ શીવલાલ ગુલાબચંદ મેવાવાળા ૨૫૧

૬૭ શાહ ચંદુલાલ કેશવલાલ ૨૫૧

૬૮ સ્વ. પિતાશ્રી વીરચંદ જેસીંગ શેઠ લખતરવાળાના સ્મરણાર્થે હા. કેશવલાલ વીરચંદ ૨૫૧

૬૯ ચંદુલાલ કાનજી મહેતા ૨૫૧

૭૦ શ્રી વર્ધમાન સ્થા. જૈન સંઘ
હા. કેશરીમલજી અનોપચંદજી ગુગલીયા (મલાદ) ૨૫૧

૭૧ સ્વ. પિતાશ્રી પતુભાઈ મોનાભાઇના સ્મરણાર્થે
હા. શાહ કાનજી પતુભાઇ ,, ૨૫૧

૭૨ અ. સૌ. પાનબાઇ હા, શેઠ પદમશી નરસિંહભાઇ ,, ૨૫૧

૭૩ સ્વ. નાગશીભાઇ સેજપાલના સ્મરણાર્થે રામજી નાગશી ,, ૩૦૧

૭૪ સ્વ. ગોડા વણારશી ત્રીભોવનદાસ સરસઈવાળાના સ્મરણાર્થે
હા. જગજીવન વણારશી ગોડા ,, ૨૫૧

૭૫ સ્વ. કાનજી સુળજીના સ્મરણાર્થે તથા માતુશ્રી દિવાળીબાઇના
૧૬ ઉપવાસના પારણા પ્રસંગે હા. જ્યંતિલાલ કાનજી ૨૫૧

૭૬ શાહ પ્રેમજી માલશી ગંગર ,, ૨૫૧

૭૭ શાહ વેલશી જેસીંગભાઈ છાસરાવાળા તરફથી તેમનાં ધર્મપત્ની
સ્વ. નાનબાઇના સ્મરણાર્થે ,, ૩૦૧

૭૮ સ્વ. પિતાશ્રી રાયશી વેલશીના સ્મરણાર્થે
હા. શાહ દામજી રાયશીભાઇ ,, ૩૦૧

૭૯ શાહ વરજાંગભાઇ શીવજીભાઇ ,, ૨૫૧

૮૦ શાહ ખીમજી મુળજી પુંજા ,, ૨૫૧

૮૧ અ. સૌ. સમતાબેન શાતિલલ ઠે શાંતીલાલ ઉજમશી શાહ ,, ૨૫૧

૮૨ સ્વ. કેશવલાલ વછરાજ કોઠારીના સ્મરણાર્થે સૂરજબેન તરફથી
હા. તનસુખલાલભાઈ ,, ૨૫૧

૮૩ સ્વ. પિતાશ્રી હંસરાજ હીરાના સ્મરણાર્થે
હા. દેવશી હંસરાજ કચ્છ ખીદડાવાળા ,, ૨૫૧

૮૪ ઘેલાણી પ્રભુલાલ ત્રીકમજી (બોરીવલી) ૨૫૨

૮૫ શેઠ ત્રંબકલાલ કસ્તુરચદ લીમડી અજરામર શાસ્રભંડારને ભેટ (માટુંગા)૨૫૧

૮૬ અ. સૌ. બેન રંજનગૌરી ઠે. શાહ ચંદુલાલ લક્ષ્મીચંદ ,, ૨૫૧

૮૭ શાહ નટવરલાર દીપચંદ તરફથી તેમનાં ધર્મપત્ની અ. સૌ.
સુશીલાબેનના વર્ષીતપની ખુશાલીમાં , ૨૫૧

૮૮ દોશી ભીખાલાલ વૃજલાલ પાળીયાદવાળા ,, ૨૫૧

૮૯ શાહ ગોપાળજી માનસંગ ,, ૨૫૧

૯૦ દોશી ફુલચંદ માણેકચંદ	,,	૨૫૦
૯૧ શેઠ ચંપકલાલ ચુનીલાલ દાદભાવાળા	,,	૨૫૧
૯૨ શ્રી વર્ધમાન સ્થા. જૈન શ્રાવક સંઘ હ. શાહ રવિચંદ સુખલાલ	(દાદર)	૨૫૧
૯૩ શાંતિલાલ ડુંગરશી અદાણી	,,	૨૫૧
૯૪ શાહ કરશન લધુભાઇ	,,	૨૫૧
૯૫ કીસનલાલ સી. મહેતા	શીવ	૨૫૧
૯૬ માતુશ્રી જીવીબાઇના સ્મરણાર્થે હ. શામજી શીવજી કચ્છ ગુંદાળાવાળા	ગોરેગાંવ	૨૫૧
૯૭ સ્વ. શાહ રાયશી કચરાભાઈના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની નેણબાઇ વતી હ. જેઠાલાલ રાયશી	,,	૨૫૧
૯૮ શુશીલાબેન શકરાભાઇ ઠે. નવીનચંદ્ર વસંતલાલ શાહ	વિલેપાર્લે	૨૫૧
૯૯ બેન ચંદનબેન અમૃતલાલ વારિવા		૨૫૧
૧૦૦ સ્વ. કાળીદાસ જેઠાલાલ શાહના સ્મરણાર્થે હ. સુમનલાલ કાળીદાસ (કાનપુરવાળા)		૩૦૧
૧૦૧ શાહ ત્રીભોવન ગોપાળજી તથા અ. સૌ. બેન કસુંબા ત્રીભોવન (થાનગઢવાળા)	શીવ	૨૫૧

સુળી

૧ શેઠ ઉજમશી વીરપાળ હ. શેઠ કેશવલાલ ઉજમશી	૩૦૧

મોરબી

૧ દોશી માણેકચંદ સુંદરજી	૩૫૧

મોમ્બાસા

૧ શ્રીયુત નાથાલાલ ડી. મહેતા	૨૫૧
૨ શાહ દેવરાજ પેથરાજ	૨૫૦

મહેસાણા

૧ શાહ પદમશી સુરચંદના સ્મરણાર્થે હ. શીવલાલ પદમશી	૨૫૧

યાદગીરી

૧ શેઠ બાદરમલજી સુરજમલજી બેંકર્સ	૨૫૦

રતલામ

૧ અનેક ભક્તજનો તરફથી હ. શ્રીમાન કેશરીમલજી ડક
(શ્રી કેવળચંદ મુનિશ્રીના ઉપદેશથી) ૨૫૧

રાણપુર

૧ શ્રીમતી માતુશ્રી સમરતબાઇના સ્મરણાર્થે
હ. ડો. નરોતમદાસ ચુનીલાલ કાપડીયા ૨૫૧

૨ સ્વ. પિતાશ્રી લહેરાભાઇ ખીમજીના સ્મરણાર્થે
હ. શેઠ કાળીદાસ લહેરાભાઇ વસાણી ૩૦૧

રાણાવાસ

૧ શેઠ જવાનમલજી નેમીચંદજી હા. બાબુ રીખબચંદજી ૩૦૧

રાયચુર

૧ સ્વ. માતુશ્રી મોંઘીબાઈના સ્મરણાર્થે
હ. શાહ શીવલાલ ગુલાબચંદ વઢવાણવાળા ૨૫૧

૨ કાળુરામજી ચાંદમલજી સંચેતી ૨૫૧

રાજકોટ

૧ વાડીલાલ ડાઇંગ પ્રિન્ટીંગ વર્કસ ૪૦૦
૨ શેઠ રતીલાલ ન્યાલચંદ ચીત્તલીયા ૨૫૧
૩ શેઠ મનુભાઇ મુળચંદ (એન્જીનીયર સાહેબ) ૨૫૧
૪ શેઠ શાંતિલાલ પ્રેમચંદ તેમનાં ધર્મપત્નીના વર્ષીતપ પ્રસંગે ૨૫૧
૫ શેઠ પ્રભારામ વીઠ્ઠલજી ૨૫૧
૬ બેન સર્યુબાળા નૌતમલાલ જસાણી (વર્ષીતપની ખુશાલી) ૨૫૧
૭ મોદી સૌભાગ્યચંદ મોતીચંદ ૨૫૧
૮ બદાણી ભીમજી વેલજી તરફથી તેમના ધર્મપત્ની અ. સૌ
સમરતબેનના વર્ષીતપ નિમિત્તે ૨૫૧

૯ દોશી મોતીચંદ ધારશીભાઈ (રીટાયર્ડ એકઝીકયુટીવ એન્જીનીયર) ૨૫૧
૧૦ કામદાર ચંદુલાલ જીવરાજ (ધ્રાંગધ્રાવાળા) ૨૫૦
૧૧ હેમાણી ઘેલાભાઈ સવચંદ ૨૫૧
૧૨ દફતરી પ્રભુલાલ ન્યાલચંદ ૨૫૧
૧૩ સ્વ. મહેતા દેવચંદ પુરૂષોત્તમના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની
હેમકુંવરબાઈ તરફથી હ. જયંતીલાલ દેવચંદ મહેતા ૨૫૧
૧૪ પારેખ શીવલાલ ઝુંઝાભાઈ મોમ્બાસાવાળા હ. અ સૌ. કંચનબેન ૨૫૨

રાપર

૧ પૂજ્ય વાલજીભાઇ ન્યાલચંદભાઇ ૨૫૧

રામપુરા

૧ શેઠ તેજમલજી મનોહરલાલજી બેંકર ૩૫૧

રાવટી

૧ શેઠ મિયાચંદજી જુહારમલજી કટારિયા ૩૫૧

લખતર

૧ શાહ રાયચંદ ઠાકરશીના સ્મરણાર્થે હ. શાંતિલાલ રાયચંદ શાહ ૨૫૧
૨ ભાવસ ર હરજીવનદાસના સ્મરણાર્થે
હ. ત્રીભોવનદાસ હરજીવનદાસ ૨૫૧
૩ શાહ તલકશી હીરાચંદના સ્મરણાર્થે
હ. ભાઇ અમૃતલાલ તલકશી ૨૫૧
૪ શાહ ચુનીલાલ માણેકચંદ ૨૫૧
૫ શાહ જાદવજી ઓઘડભાઈના સ્મરણાર્થે હ. શાંતિલાલ જાદવજી ૨૫૧
૬ દોશી ઠાકરશી ગુલાબચંદના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની
સમરત બહેન તરફથી હ. જયંતિલાલ ઠાકરશી ૨૫૧

લાલપુર

૧ નેમચંદ સવજી મોદી હ. ભાઈ મગનલાલ ૨૫૧
૨ શેઠ મુલચંદ પોપટલાલ હા. મણીલાલ તથા જેશીંગભાઇ ૨૫૧

લાખેરી

૧ માસ્તર જેઠાલાલ મોનજીભાઈ હ. અમૃતલાલ જેઠાલાલ
(સીવીલ એન્જીનીયર સાહેબ) ૨૫૧

લાકડીયા

૧ શ્રી લાકડીલા સ્થા. જૈન સંઘ હ. શાહ રતનશી કરમણુ ૨૫૧

લીંબડી (સૌરાષ્ટ્ર)

૧ શાહ ચકુભાઇ વખતચંદ	૨૫૧

લીમડી (પંચમહાલ)

૧ શાહ કુંવરજી ગુલાબચંદ	૨૫૧
૨ છાજેડ ઘાસીરામ ગુલાબચંદ	૨૫૧।=
૩ શેઠ વીરચંદ પન્નાલાલજી કરણાવટ	૨૫૧
૪ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હ. શાહ શાંતીલાલ ગુલાબચંદ	૩૫૧

લોનાવાલા

૧ શેઠ ધનરાજજી મુલચંદજી મુથા	૨૫૧

લુધિયાના

૧ બાબુ રાજેન્દ્રકુમાર જૈન દિલ્હીવાળા	૨૫૧

વઢવાણ શહેર

૧ શેઠ દીલીપકુમાર સવાઇલાલ ઠે૦ શાહ સવાઇલાલ ત્રંબકલાલ	૨૫૧
૨ કામદાર મગનલાલ ગોકલદાસ હ. રતીલાલ મગનલાલ	૨૫૧
૩ સંઘવી મુળચંદ બેચરભાઈ હ. જીવણલાલ ગફલદાસ	૨૫૧
૧ શેઠ કાંતિલાલ નાગરદાસ	૨૫૧
૫ વોરા ચત્રભુજ મગનલાલ	૨૫૧
૬ સંઘવી શીવલાલ હીમજીભાઇ	૨૫૧
૭ શાહ દેવશીભાઈ દેવકરણ	૨૫૧
૮ વોરા ડોસાભાઇ લાલચંદ સ્થા. જૈન સંઘ હ વોરા નાનચંદ શીવલાલ	૨૫૧
૯ વોરા ધનજીભાઇ લાલચંદ સ્થા જૈન સંઘ હ. વોરા પાનાચંદ ગોબરદાસ	૨૫૧
૧૦ દોશી વીરચંદ સુરચંદ હા. દોશી નાનચંદ ઉજમશી	૨૫૧
૧૧ સ્વ વોરા મણીલાલ મગનલાલ તથા વોરા ચત્રભુજ મણીલાલ	૨૫૧
૧૨ શાહ વાઠીલાલ દેવજીભાઇ	૨૫૧
૧૩ કામદાર ગોરધનદાસ મગનલાલનાં ધર્મપત્ની અ સૌ કમળાબેન રગુનવાલા	૨૫૧
૧૫ શ્રી વૃજલાલ સુખલાલ	૨૫૧

વડોદરા

૧ કામદાર કેશવલાલ હિમતરામ પ્રોફેસર	૨૫૧

૨ વકીલ મણીલાલ કેશવલાલ શાહ	૨૫૧
૩ સ્વ. પિતાશ્રી ફકીરચંદ પુંજાભાઇના સ્મરણાર્થે	૨૫૧
હા. શાહ રમણુલાલ ફકીરચંદ	૨૫૧

વડીયા

૪ શેઠ ભવાનભાઇ કાળાભાઇ પંચમીયા	૨૫૧

વલસાડ

૧ શાહ ખીમચંદ મુલજીભાઇ	૨૫૧

વણી

૧ મહેતા નાનાલાલ છગનલાલનાં ધર્મપત્ની સ્વ. ચંચળબેન તથા પુરીબેનના સ્મરણાર્થે હા. મનહરલાલ નાનાલાલ મહેતા	૨૫૧

વટામણ

૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. પટેલ ડાયાભાઈ હલુભાઈ	૨૫૧

વાંડગાંવ

૧ શેઠ માણેકચંદજી રાજમલજી બાફણા	૨૫૧

વાંકાનેર

૧ ખંઢેરીયા કાંતીલાલ ત્ર્યંબકલાલ	૨૫૧
૨ દફતરી ચુનીલાલ પોપટભાઇ મોરબીવાળા હા. પ્રાણુલાલ ચુનીલાલ દફતરી	૨૫૧

વીંછીયા

૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. અજમેરા રાયચંદ વજપાળ	૨૫૧

વીરમગામ

૧ માસ્તર વીઠલભાઈ મોદી	૨૫૧
૨ શાહ નાગરદાસ માણેકચંદ	૨૫૧
૩ શાહ મણીલાલ જીવણુલાલ શાહપુરવાળા	૨૫૧
૪ શાહ અમુલખ નાગરદાસનાં ધર્મપત્ની અ. સૌ. બેન લીલાવતીના વર્ષીતપ નિમિતે હા. શાહ કાતિલાલ નાગરદાસ	૩૦૦
૫ સ્વ. શેઠ ઉજમશી નાનચદના સ્મરણાર્થે હા. ચુનીલાલ નાનચંદ	૨૫૧
૬ સ્વ. શેઠ મણિલાલ લક્ષ્મીચંદ ખારાઘોડાવાળાના સ્મરણાર્થે તેમના પુત્રો તરફથી હ ખીમચંદભાઈ	૨૫૧
૭ સ્વ. શેઠ હરિલાલ પ્રભુદાસના સ્મરણાર્થે હા. અનુભાઇ	૨૫૧

૮ સંઘવી જેચંદભાઈ નારણદાસ	૨૫૧
૯ સ્વ. શાહ વેલશીભાઈ સાકરચંદ કત્રાસગઢવાળાના સ્મરણાર્થે હ. ચીમનલાલભાઈ	૨૫૧
૧૦ પારેખ મણીલાલ ટોકરશી લાતીવાળા (મોટી બેનના સ્મરણાર્થે)	૨૫૧
૧૧ શાહ નારણદાસ નાનજીભાઈના પુત્ર વાડીલાલભાઈનાં ધર્મપત્ની અ. સૌ. નારંગીબેનના વર્ષીતપ નિમિતે હ શાંતીલાલ નારણદાસ	૨૫૧
૧૨ સ્વ. છબીલદાસ ગોકળદાસના સ્મરણાર્થે તેમના ધર્મપત્ની કમળાબેન તરફથી હ. મંજુલાકુમારી	૨૫૧
૧૩ શ્રી સ્થા જૈન શ્રાવિકા સંઘ હ. રંભાબેન વાડીલાલ	૨૫૧
૧૪ સ્વ. ત્રિભોવનદાસ દેવચદ તથા સ્વ. ચચળબેનના સ્મરણાર્થે હ. ડૉ. હિંમતલાલ સુખલાલ	૨૫૧
૧૫ શાહ મુળચંદ કાનજીભાઈ હ. શાહ નાગરદાસ ઓઘડભાઈ	૨૫૧
૧૬ શેઠ મોહનલાલ પિતાંબરદાસ હ. ભાઈ કેશવલાલ તથા મનસુખલાલ	૨૫૧
૧૭ શ્રીમતી હીરાબેન નથુભાઈના વર્ષીતપ નિમિતે હ. નથુભાઈ નાનચંદ શાહ	૩૦૧
૧૮ શેઠ મણીલાલ શીવલાલ	૨૫૧
૧૯ સ્વ. મણીયાર પરસોતમદાસ સુંદરજીના સ્મરણાર્થે હ. સાકરચંદ પરસોતમદાસ શાહ	૨૫૧
૨૦ સ્વ. મોહનદાસ ગુલાભાઈના સ્મરણાર્થે હ. તેમનાં ધર્મપત્ની નાથીબાઈ તરફથી હ. શંકરલાલ તથા શાંતીલાલ	૨૫૧

વીજયનગર

૧ શ્રી વર્ધમાન શ્વે. સ્થા. જૈન શ્રાવક સંઘ હ. છોટુમલ અજિતસિંહ	૩૫૧

વેરાવળ

૧ શાહ કેશવલાલ જેચંદભાઈ	૨૫૧
૨ શાહ ખીમચંદ સૌભાગ્યચંદ	૨૫૧
૩ સ્વ. શેઠ મદનજી જેચંદભાઈના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની લાડકુવરબાઈ તરફથી હ. ધીરજલાલ મદનજી	૨૫૧
૪ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હ શાહ શોભેચદ કરશનજી	૨૫૧
૫ શાહ હરકિશનદાસ ફુલચંદ કાનપુર વાળા	૨૫૧

સરા

૧ શ્રી સરા સ્થા. જૈન સંઘ હ દોશી પાનાચંદ સોમચંદ	૨૫૧

સાણંદ

૧ શાહ હીરાચંદ છગનલાલ હા. શાહ ચીમનલાલ હીરાચંદ ૩૦૧
૨ અ. સૌ. ચંપાબેન હા. દોશી જીવરાજ લાલચંદ ૨૫૧
૩ પટેલ મહાસુખલાલ ડોસાભાઇ ૨૫૧
૪ શાહ સાકરચંદ કાનજીભાઇ ૨૫૧
૫ પુરીબેન ચીમનલાભ કલ્યાણજી સંઘવી લીંબડીવાળાના સ્મરણાર્થે
હા. વાડીલાલ મોહનલાલ કોઠારી ૨૫૧
૬ પારેખ નેમચંદ મોતીચંદ મુળીવાળાના સ્મરણાર્થે ૨૫૧
હા. પારેખ ભીખાલાલ નેમચંદ
૭ સંઘવી નારણદાસ ધરમશીના સ્મરણાર્થે હા. જયંતિલાલ નારણદાસ ૨૫૧
૮ શાહ કસ્તુરચંદ હરજીવનદાસ
હા. ડૉ માણેકલાલ કસ્તુરચંદ શાહ
૯ શેઠ મોહનલાલ માણેકચંદ ગાંધી ચુડાવાળા તરફથી
તેમનાં ધર્મપત્ની મંછાબેન લલ્લુભાઇના સ્મરણાર્થે ૩૦૧
૧૦ સંઘવી કાન્તિલાલ હરખચંદ ૩૦૧
૧૧ શાહ ભીખાલાલ નાગરદાસ ૨૫૧

સાલબની

૧ દોશી ચુનીલાલ ફુલચંદ ૨૫૦

સાદડી

૧ શેઠ દેવરાજજી જીતમલજી પુનમીયા ૨૫૧

સાસવડ

૧ ચંદનમલજી મુથાનાં ધર્મપત્ની અ. સૌ. રંગુબાઈ મુથા તરફથી
હ. અમરચંદજી મુથા ૨૫૧

સિંગાપુર

૧ દોશી વનેચંદ વછરાજ ૨૫૧

સુરત

૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. શાહ રતિલાલ લલ્લુભાઈ ૨૫૧
૨ શ્રીયુત કલ્યાણચંદ માણેકચંદ હડાલાવાળા ૨૫૧
૩ શ્રી હરીપુરા છકોટી સ્થા જૈન સંઘ હા. બાબુલાલ છોટાલાલ ૨૫૧

સુરેન્દ્રનગર

૧ શેઠ ચાંપશીભાઈ સુખલાલ ૨૫૧
૨ ભાવસાર ચુનીલાલ પ્રેમચંદ ૨૫૧

૩ સ્વ. કેશવલાલ મુળજીભાઇનાં ધર્મપત્ની અમરતબાઇના
 સ્મરણાર્થે હા. ભાઇલાલ કેશવલાલ શાહ

૪ શાહ ન્યાલચંદ હરખચંદ ૨૫૧

૫ શાહ વાડીલાલ હરખચંદ ૨૫૧

૬ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ ૩૦૧

સુવઈ

૧ સાવળા શામજી હીરજી તરફથી સદાનંદી જૈન મુનિશ્રી છોટાલાલજી
 મહારાજના ઉપદેશથી સુવઈ સ્થા. જૈન સંઘ જ્ઞાનભંડારને ભેટ ૨૫૧

સજેલી

૧ શાહ લુણાજી ગુલાબચંદભાઇ ૨૫૧

૨ શ્રી. સ્થા. જૈન સંઘ હા. શાહ પ્રેમચંદ દલીચંદ ૨૫૧

સોજત

૧ અ. સૌ. ઘીસીબેન લાલચંદજી મહેતા (ફતેહનગર સંઘને ભેટ) ૩૫૧

હારીજ

૧ શાહ અમુલખ મુળજીભાઈ હા. પ્રકાશચંદ્ર અમુલખભાઈ ૩૦૧

૨ સ્વ. બેન ચન્દ્રકાતાના સ્મરણાર્થે હા. શાહ અમુલખ મુળજીભાઇ ૩૦૧

હાટીના માળીયા

૧ શેઠ ગોપાલજી મીઠાભાઈ ૨૫૦

૨ શ્રીમતી આનંદગૌરી ભગવાનદાસના સ્મરણાર્થે
 હા. તેમનાં નાનાબેન અ. સૌ. મંજુલાબેન ભગવાસદાસ ગાંધી ૨૫૧

*

તા. ૩૧-૧૨-૬૧ સુધીના મેમ્બરોની સંખ્યા

૧૭ આદ્ય મુરબ્બીશ્રી
૨૫ મુરબ્બીશ્રી
૧૨૩ સહાયક મેમ્બરો
૫૮૪ લાઇફ મેમ્બરો
૫૪ બીજા કલાસના જુનો મેમ્બરો

———
૮૦૩

દરેક દાતાઓનો સમિતિ તરફથી આભાર માનુ છું.

લી. સેવક,

રાજકોટ તા. ૩૧-૧૨-૬૧

સાકરચંદ ભાઇચંદ શેઠ
મંત્રી,

॥ श्रीवीतरागाय नमः ॥

जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री-घासीलाल-व्रति-विरचितया
सुदर्शिन्याख्यया व्याख्यया समलङ्कृतं

श्री-प्रश्नव्याकरणसूत्रम्

(मङ्गलाचरणम्)

(इन्द्रवज्राभेद-वृद्धिवृत्तम्)

श्रीसिद्धराजं स्थिरसिद्धिराज्य-
पदं गतं सिद्धिगतिं विशुद्धम्।
निरञ्जनं शाश्वतसौधमध्ये,
विराजमानं सततं नमामि ॥१॥

(शार्दूलविक्रीडितवृत्तम्)

नानालब्धिधरं सुरासुरनुतं सन्देहमोहच्छिदं-
दीप्तं शासनभास्करं गणधरं शुद्धं त्रिपद्धारकम्।
ज्ञाताशेषविशेषवस्तुनिचयं तेजस्विनं मुक्तिगं,
वन्दे तं सततं विशुद्धचरितं श्री गौतमं सर्वथा ॥२॥

"प्रश्नव्याकरणसूत्रका हिन्दी अनुवाद"

मङ्गलाचरण—

मैं उन सिद्ध भगवन्तको नित्य नमस्कार करता हूं कि जो निरञ्जन-अष्टकर्ममल रूप अंजन से सर्वथा विहीन-हो चुके हैं और इसी कारण जो मुक्तिरूप सौधके मध्य में विराजमान हो रहे हैं। जिनके सन्मार्गपर चलने से जीवोंको स्थिर सिद्धरूपी राज्यकी प्राप्ति हो जाती है। जो स्वयं अत्यंत विशुद्ध बन चुके हैं। और सिद्धि नामक गति प्राप्तकर चुके हैं॥१॥

પ્રશ્નવ્યાકરણસૂત્રનો ગુજરાતી અનુવાદ

મંગળાચરણ—

હું તે સિદ્ધ ભગવાનોને હમેશા નમસ્કાર કરૂં છું કે જે નિરંજન અષ્ટ-કર્મમળરૂપ અંજનથી તદ્દન રહિત થઈ ગયા છે, અને એ જ કારણે જે મુક્તિરૂપ ભવનની મધ્યમાં વિરાજમાન થયેલ છે, જેમને બતાવેલ સન્માર્ગે ચાલવાથી જીવોને સ્થિર સિદ્ધિરૂપી રાજ્યની પ્રાપ્તિ થાય છે. જેઓ પોતે અત્યંત વિશુદ્ધ બની ગયેલ છે, અને સિદ્ધિ નામની ગતિને પ્રાપ્ત કરી ચૂકયાં છે. ॥ ૧ ॥

(द्रुतविलम्बितवृत्तम्)

कमलकोमलमञ्जुपदाम्बुजं-
विमलबोधिदबोधविबोधकम् ।
मुखसुशोभिसदोरकवस्त्रिकं
गुरुवरं सदयं प्रणमाम्यहम् ॥३॥

(अनुष्टुब्वृत्तम्)

जैनीं सरस्वतीं नत्वा, वृत्तिरेषा सुदर्शिनी ।
प्रश्नव्याकरणे सूत्रे, घासिलालेन तन्यते ॥४॥

मैं उन गौतम गणधर को मन, वचन और काय से नित्य नमस्कार करता हूं कि जिन्हों ने तपस्या के प्रभाव से अनेक लब्धियो को प्राप्त कर लिया है। जिन्हें सुर और असुर आकर नमस्कार करते हैं, जीवों के संदेह और मोह जिनके प्रभाव से नष्ट हो जाते हैं, जो शरीर की कान्ति से दीप्त बने रहते हैं, जो शासन के भास्कर हैं भगवान् महावीर प्रभु के जो अन्तिम गणधर हुए है, रागादिक दोषों से सर्वथा विशुद्ध बन चुके हैं, जीवों की विपत्ति को जो नाश करने वाले हैं, केवलज्ञान के प्रभाव से जिन्हों ने समस्त जीवादिक वस्तुओं को अच्छी तरह से जान लिया है, जो तेजस्वी है तथा जो मुक्ति को प्राप्त कर चुके हैं ॥२॥

मैं उन दयालु गुरुवर को नमस्कार करता हूँ कि जिनके मनोहर चरणकमल कमल के जैसे कोमल हैं और जो विमल बोधिको देने वाले बोध के दाता हैं तथा जिनका मुख सदा सदोरकमुखवस्त्रिका से विराजित रहता है ॥३॥

હુ તે ગૌતમ ગણધરને મન, વચન અને કાયાથી નમસ્કાર કરૂં છું કે જેમણે તપસ્યાના પ્રભાવથી અનેક લબ્ધિયોને પ્રાપ્ત કરી છે, સુર અને અસુરો આવીને જેમને નમન કરે છે, જેમના પ્રભાવથી જીવોના સંદેહ તથા મોહનો નાશ થઈ જાય છે, જે શરીરની કાંતિથી જાજવલ્યમાન રહે છે, જે શાસનના દિવાકર સમાન છે, જે ભગવાન મહાવીરના અન્તિમ ગણધર છે, રાગાદિ દોષોથી જે તદ્દન વિશુદ્ધ બની ચૂકયા છે, જીવોની મુશ્કેલીઓને જે દૂર કરનારા છે, કેવળજ્ઞાનના પ્રભાવથી જેમણે સમસ્ત જીવાદિક વસ્તુઓને સારી રીતે જાણી લીધી છે, જે તેજસ્વી છે તથા જેમણે મુક્તિ પ્રાપ્ત કરી લીધેલ છે ॥ ૨ ॥

હું તે દયાળુ ગુરુવરને નમસ્કાર કરૂં છું કે જેમના મનોહર ચરણ, કમળનાં સમાન કોમળ છે, અને જે વિમળજ્ઞાન દેનાર બોધના દાતા છે, તથા જેમનું મુખ સદા દોરા સહિતની મુહપત્તિથી શોભે છે. ॥ ૩ ॥

इह खल्वतिविचित्राकारेऽपारेऽसारे संसारे धनादिभिर्विविधोपायैः सुखार्थं प्रयतमाना अपि जना न केऽपि वास्तविकं सुखमनुभवन्ति किमत्र परिहारनिदानमिति, सति विचारसंचारे मोक्ष एव निरतिशयसुखसाधनमिति सिद्धयति। आसूक्ष्मैकेन्द्रियः सकलोऽपि लोकः सुखाभिलाषी दुःखविमुखश्च दृष्टोऽतस्तस्य

तीर्थंकर प्रभुकी वाणीको नमन कर मैं घासीलाल इस प्रश्नव्याकरण सूत्र पर यह सुदर्शिनी नाम की टीका बनाता हूं ॥४॥

इस अतिविचित्रताकार अनियत स्वभाववाले अपार असार संसार में धन आदि विविध उपायों से सुखप्राप्ति के निमित्त समस्त संसारी जीव प्रयत्न करते रहते हैं फिर भी यहां संसार में कोई भी जीव वास्तविक सुख का अनुभव नहीं कर पाता है तो इसका कारण क्या है जब यह विचार किया जाता है तो मालूम देता है कि यहां पर जितना भी सुख है वह वास्तविक सुख नहीं है-सुखाभास है कारण वह इन्द्रिय और मनसे उत्पन्न होता है। वास्तविक सुख तो मोक्षमें ही है, क्यों कि वह सुख निरतिशयरूप आत्यंतिक है। त्रैकालिक दुःखके अत्यन्ताभावसे विशिष्ट जो परमानंद सद्भावरूपता है वही निरतिशयता है। इस प्रकार का निरतिशयरूप जो सुख है वह संसार में नहीं है। क्यों कि सांसारिक सुख दुःखानुषक्त है। और मोक्ष का सुख ऐसा नहीं है। इसलिये सूक्ष्म एकेन्द्रिय से लेकर समस्त पंचेन्द्रियतक के प्राणी सुख के अभि-

---

તીર્થંકર પ્રભુની વાણીને નમન કરીને હું, 'ઘાસિલાલમુનિ' આ પ્રશ્નવ્યાકરણ સૂત્ર પર આ 'સુદર્શિની' નામની ટીકા બનાવું છું. ॥ ૪ ॥

આ અતિ વિચિત્રાકાર, અનિયત સ્વભાવવાળા, અપાર, અસાર સંસારમાં ધન આદિ વિવિધ ઉપાયોથી સુખ પ્રાપ્ત કરવા માટે સમસ્ત સંસારી જીવો પ્રયત્ન કરતા રહે છે, છતા પણ આ સંસારમા કોઇપણ જીવ વાસ્તવિક સુખનો અનુભવ કરી શકતો નથી. તેનું શુ કારણ છે, એવો વિચાર જ્યારે કરવામાં આવે છે ત્યારે એવું લાગે છે કે આ સંસારનાં જેટલાં સુખ છે તે વાસ્તવિક સુખ નથી, પણ સુખનો આભાસ જ છે. કારણકે તે ઇન્દ્રિય અને મનથી ઉત્પન્ન થાય છે. વાસ્તવિક સુખ તો મોક્ષમાં જ છે કારણકે તે સુખ નિરતિશયરૂપ છે. ત્રૈકાલિક દુ.ખના અત્યંત અભાવવાળી જે પરમાનંદ સદ્ભાવરૂપતા છે, તેને જ નિરતિશયતા કહે છે. એવા પ્રકારનું નિરતિશયરૂપ જે સુખ છે તે સસારમાં મળતું નથી. કારણકે સાંસારિક સુખ દુઃખાનુષક્ત છે. મોક્ષનુ સુખ તેવુ નથી. તેથી જ સૂક્ષ્મ એકેન્દ્રિયથી લઇને પંચેન્દ્રિય સુધીના સમસ્ત પ્રાણી સુખની

निरतिशयसुखसाधनं निर्णेतव्यम् । निरतिशयं च सुखं त्रैकालिकदुःखात्यन्ताभाव-विशिष्टपरमानन्दसद्भावरूपं पारमार्थिकमेव न त्वैहिकं, तस्येन्द्रियनोइन्द्रियसंयोगजन्यतयोत्पत्तिविनाशयोरविनाभावनियमाद्दुःखानुपक्तत्वात्, मरुमरीचिचयोच्चावचजलतरङ्गभङ्गविभ्रमवदसारत्वाच्चेति मोक्षस्यैव प्राधान्यमामनन्ति महामुनयः, तस्मादात्यन्तिकसुखमधिजिगमिषुणा मोक्षार्थे यतितव्यम् । मोक्षश्च ज्ञान-क्रियासेवनेनैव भवतीति ज्ञानक्रिये एव तत्कारणं सिषाधयिषितव्यम्, अन्यथा

लाषि और दुःख से विमुख होते हुए दिखलाई पड़ते है। अतः यह निर्णय करना आवश्यक हो जाता है कि उस निरतिशय सुख का साधन क्या है? जब इस प्रकार का विचार गहराई के साथ किया जाता है तो यही निश्चित होता है कि उस सुख का साधन केवल एक मोक्ष ही है। संसार नहीं है—क्यों कि संसार जन्य जो सुख होता है वह इन्द्रिय और मन के संयोग से जन्य होने के कारण उत्पत्ति और विनाश का अविनाभावी होता है और इसलिये वह दुःख से बीच २ में मिश्रित रहा करता है। अतः मृगतृष्णा में ऊँची नीची जल तरंगों के विभ्रमकी तरह यह असार होता है। इसलिये निरतिशय सुख का साधन संसार नहीं हो सकता है—केवल एक मोक्ष ही हो सकता है। ऐसी ही महामुनियोंकी मान्यता है। इसलिये जो प्राणी इस निरतिशय सुखको प्राप्त करनेके अभिलाषी हैं उन्हें मोक्ष प्राप्तिमें ही प्रयत्न करना चाहिये, मोक्ष की प्राप्ति जीवोंको ज्ञान और क्रिया के सेवन करनेसे ही होती है। अतः ज्ञान और क्रिया ये दोनों ही उसके कारणरूपसे साधनके

ઇચ્છાવાળાં અને દુઃખથી વિમુખ થતા દેખાય છે તેથી તે નિર્ણય કરવો જરૂરી થઈ પડે છે કે તે નિરતિશય સુખનું સાધન કયું છે? જ્યારે તે પ્રકારનો ઊંડો વિચાર કરવામા આવે છે ત્યારે એ જ નિશ્ચય પર અવાય છે કે તે સુખનું સાધન કેવળ મોક્ષ જ છે, સંસાર નથી કારણકે જે સુખ સંસારજન્ય હોય છે તે ઇન્દ્રિય અને મનના સયોગથી પેદા થયેલ હોવાથી ઉત્પત્તિ અને નાશને પ્રાપ્ત કરનારૂં હોય છે, અને તેથી તે વચ્ચે વચ્ચે દુઃખથી મિશ્રિત રહ્યાં કરે છે. તેથી તે મૃગજળનાં ઊંચાં નીચાં જળતરંગોના વિભ્રમનાં જેવું અસાર હોય છે. તે કારણે નિરતિશય સુખનુ સાધન સંસાર થઈ શકતો નથી પણ એક માત્ર મોક્ષ જ તેનું સાધન બની શકે છે એવી જ મહામુનિયોની માન્યતા છે તેથી જે પ્રાણીને તે નિરતિશય સુખ પ્રાપ્ત કરવાની અભિલાષા હોય તેમણે મોક્ષ પ્રાપ્તિ માટે જ પ્રયત્નો કરવા જોઇએ. જીવોને મોક્ષની પ્રાપ્તિ જ્ઞાન અને ક્રિયાના સેવનથી જ થાય છે તેથી જ્ઞાન અને ક્રિયા એ બન્ને તેના કારણરૂપ હોવાથી

मोक्षस्याप्यभावात् सुखावाप्तेर्दूरमयाणं स्यात्। सत्येव हि ज्ञाने इष्टानिष्टोपादान-हानोपायविचारसञ्चारो भवति । तदभावे प्राणिनामास्रवेष्वेव नित्यं प्रवृत्तिः स्यात् तस्मात् ज्ञानं परमादरणीयम्। तच्चात्र श्रुतरूपं गृह्यते स्वपरोपकारित्वात्। तदत्र प्रश्नव्याकरणमेव।

ननु शास्त्रस्यादौ मध्येऽन्ते च कृतं मङ्गलं निर्विघ्नपरिसमाप्त्यर्थं भवति, अध्येतारश्च शास्त्रधारणावन्तः प्रथन्ते, शास्त्रं च शिष्योपशिष्यपरम्परागामि जायते-शिष्टाचारविषयत्वाच्च मंगलं कुतो न कृतमिति चेदुच्यते–

अत्र भगवदुक्तसाक्षाच्छ्रेयोभूतशास्त्रस्यैव मङ्गलरूपत्वात् मङ्गलमाचरितमेव तथापि श्रृणु–अस्मिन् शास्त्रे आदिमङ्गलं "जंबू इणमो" इति भगवदामन्त्रणेन,

---

लिये इष्ट हैं। अन्यथा मोक्षका अभाव हो जावेगा और इस तरहसे फिर सुख की प्राप्ति होना बहुत कठिन बात हो जावेगी। ज्ञानके होने पर ही इष्ट और अनिष्ट पदार्थों के उपादान (ग्रहण) और त्याग करनेमें जीवोंकी बुद्धि लगती है। ज्ञान के अभावमें नहीं उस समय तो केवल आस्रवोंमें ही वे रोकटोक प्रवृत्ति होती रहती है। इसीलिये ज्ञानको परम आदरणीय कहा गया है। ऐसा वह ज्ञान स्व और पर का उपकारक होने के कारण यहां श्रुतरूप ग्रहण किया गया है। वह श्रुतरूप ज्ञान यहां प्रश्न व्याकरण ही है।

शंका—शास्त्र की आदि में, मध्य में, और अंत में किया गया मंगलाचरण निर्विघ्नरूप से उसकी परिसमाप्ति के लिये होता है-तथा जो उस शास्त्र के अध्येता होते हैं वे उस शास्त्र की धारणा से सुशोभित रहा करते हैं और इस तरह से वह शास्त्र शिष्योपशिष्य परंपरागामी बन जाता है। तथा शास्त्र की आदि में, मध्य में एवं अन्त में मंगला–

સાધન તરીકે યોગ્ય છે નહી તો મોક્ષની પ્રાપ્તિ થશે નહીં અને એમ થવાથી સુખની પ્રાપ્તિ ઘણી મુશ્કેલ બની જશે. જ્ઞાન હોય તો જ ઈષ્ટ અને અનિષ્ટ પદાર્થોના ઉપાદાન-(ગ્રહણ) અને ત્યાગ કરવા બાબતમાં જીવોની બુદ્ધિ કામ કરી શકે છે, જ્ઞાન ન હોય તો નહી ત્યારે તો (તે જ્ઞાનના અભાવે) ફક્ત આસ્રવોમાં જ રોકટોક વિના પ્રવૃત્તિ ચાલ્યા કરે છે તે કારણે જ્ઞાનને અત્યંત આદરણીય બતાવ્યું છે. એવું તે જ્ઞાન સ્વ અને પરનું ઉપકારક હોવાથી અહીં શ્રુતરૂપે ગ્રહણ કરવામા આવેલ છે અહીં પ્રશ્નવ્યાકરણ જ તે શ્રુતજ્ઞાન છે

શંકા–શાસ્ત્રની શરૂઆતમા, મધ્યમા, અને અન્તે કરવામાં આવેલ મંગળાચરણ નિર્વિઘ્ને તેની પરિસમાપ્તિને માટે હોય છે તથા જેઓ તે શાસ્ત્રનું અધ્યયન કરનાર હોય છે તેઓ તે શાસ્ત્રની ધારણાથી સુશોભિત રહ્યા કરે છે, અને એ રીતે તે શાસ્ત્ર શિષ્યોપશિષ્યની પરંપરા સુધી પહોંચે છે તથા શાસ્ત્રના આરંભમાં,

मध्यमङ्गलं प्रथमसंवरद्वारे अहिंसा भगवतीवर्णनेन अन्त्यमङ्गलं च "नायपुत्तेण वीरेण भगवया पयासियं" इत्यालापकेन च विज्ञेयम्, इत्यलं विस्तरेण।

अथ प्रश्नव्याकरणमित्यस्य कः शब्दार्थः? उच्यते प्रश्नाः=अङ्गुष्ठादिविद्याः, ते व्याक्रियन्ते=प्रतिपाद्यन्ते यस्मिन्निति प्रश्नव्याकरणम्, अत्र-अष्टोत्तरं प्रश्नशतम्। अष्टोत्तरमप्रश्नशतम्। अष्टोत्तरं प्रश्नाऽप्रश्नशतम्। या विद्याः, मन्त्रा वा पृष्टा एव

चरण करना ऐसा शिष्ट पुरुषों का आचार भी है-तो फिर शास्त्रकार ने इस सूत्र में मंगलाचरण क्यों नहीं किया है?

उत्तर—इस प्रकार की आशंका ठीक नहीं है, क्यों कि भगवान् द्वारा कहा गया यह शास्त्र साक्षात् मंगल स्वरूप है अतः वह स्वयं ही मंगलरूप है अतः स्वयं मंगलरूप बने हुए शास्त्र में मंगलरूपता होने से शास्त्रकार ने उसे निबद्ध करने की अपेक्षा मंगलाचरण किया ही है। फिर भी सुनो-शास्त्रकार ने इस शास्त्र में "जंबू इणमो" इस भगवान् के आमंत्रण से आदि मंगल, प्रथम संवर द्वार में भगवती अहिंसा का वर्णन रूप मध्यमंगल, और "नायपुत्तेण वीरेण भगवया पयासियं" अन्तमें इस प्रकार के कथन से अन्त्यमंगल किया है, ऐसा जानना चाहिये। अब इस विषय में और अधिक कहनेसे क्या लाभ।

शंका—"प्रश्नव्यकरण" इसका शब्दार्थ क्या है?

उत्तर—अंगुष्ठ आदि विद्याओं का नाम प्रश्न है। ये प्रश्न इसमें विस्तार पूर्वक प्रतिपादित किये गये हैं। इसलिये इससूत्रका नाम

મધ્યમા અને અન્તે મંગળાચરણ કરવુ તેવો શિષ્ટ પુરુષોનો આચાર પણ છે. છતા પણ સૂત્રકારે આ સૂત્રમા મંગળાચરણ કેમ કર્યું નથી?

ઉત્તર—આ પ્રકારની આશંકા યોગ્ય નથી, કારણકે ભગવાન દ્વારા કહેવામા આવેલ આ શાસ્ત્ર જ સાક્ષાત્ મંગળસ્વરૂપ છે, તેથી તે પોતે જ મંગળરૂપ છે. તેથી સ્વયં મંગળરૂપ બનેલ શાસ્ત્રમા સંગળરૂપતા હોવાથી શાસ્ત્રકારે તેને સૂત્રરૂપે બાંધવાની અપેક્ષાએ મંગળાચરણ કર્યું જ છે વળી સાંભળો શાસ્ત્રકારે આ શાસ્ત્રમા "जंबू इणमो" આ પ્રમાણે ભગવાનના આમંત્રણથી આદિ મંગળ, પ્રથમ સંવરદ્વારમા ભગવતી અહિંસાના વર્ણનરૂપ મધ્યમંગળ, અને "नायपुत्तेण वीरेण भगवया पयासियं" અન્તમા એ પ્રકારના કથનથી અંત્યમંગળ કર્યું છે, એમ સમજી લેવુ હવે આ વિષયમા વધુ કહેવાથી શો લાભ?

શંકા—"પ્રશ્નવ્યાકરણ"નો શબ્દાર્થ શુ છે?

ઉત્તર—અંગુષ્ઠ આદિ વિદ્યાઓનુ નામ પ્રશ્ન છે તે પ્રશ્નોનું આ સૂત્રમાં વિસ્તારથી પ્રતિપાદન કરવામા આવ્યુ છે. તેથી તેનું નામ પ્રશ્નવ્યાકરણ પડયું છે.

शुभाशुभं प्रतिपादयन्ति ते प्रश्नाः। एवं ये अपृष्टा एव शुभाऽशुभं वदन्ति ते अप्रश्नाः। ये पृष्टा अपृष्टाश्च कथयन्ति ते प्रश्नाऽप्रश्नाः। तथा अन्येऽपि अतिशयाः, नागकुमारैः सुपर्णकुमारैः अन्यैश्च भवनपतिभिः सह साधूनां संवादाः, इत्यादयः सन्ति।

नन्दीसूत्रवाचनाकाले प्रश्नव्याकरणे पञ्चचत्वारिंशदध्ययननिबन्धः समुपलब्ध आसीत्। तदुक्तं नन्दीसूत्रे—"से किं तं पण्हावागरणाइं? पण्हावागरणेसु णं अट्ठुत्तरं पसिणसयं, अट्ठुत्तरं अपसिणसयं, अट्ठुत्तरं पसिणाऽपसिणसयं। तं जहा—अंगुट्ठपसिणाइं, बाहुपसिणाइं, अद्दागपसिणाइं, अन्नेवि विचित्ता दिव्वा विज्जाइसया, नागसुवण्णेहिं सद्धिं दिव्वा संवाया आघविज्जंति५। पण्हावागरणाणं परित्ता वायणा, संखिज्जा अणुओगदारा संखिज्जा वेढा, संखिज्जा सिलोगा संखिज्जाओ निज्जुत्तीओ, संखिज्जाओ संगहणीओ, संखिज्जाओ पडिवत्तीओ, से णं अंगट्ठयाए दसमे अंगे एगे सुयक्खंधे, पणयालीसं अज्झयणा, पणयालीसं उद्देसणकाला, पणयालीसं समुद्देसणकाला, संखिज्जाइं पयसहस्साइं पयग्गेणं, संखेज्जा अक्खरा, अणंतागमा, अणंता पज्जवा, परित्ता तसा, अणंता थावरा, सासयकडनिबद्धनिकाइया जिणपन्नत्ता भावा आघविज्जंति, पन्नविज्जंति, परूविज्जंति, दंसिज्जंति निदंसिज्जंति, उवदंसिज्जंति, से एवं आया, एवं नाया, एवं विन्नाया, एवं चरणकरणपरूवणा से तं आघविज्जइ। पण्हा वागरणाइं" ॥

प्रश्नव्याकरण हुआ है। इनमें १०८प्रश्न, १०८ अप्रश्न, और १०८ही प्रश्नाप्रश्न हैं। जो विद्याएँ अथवा मंत्र, पूछने पर शुभ और अशुभ का कथन करते हैं वे प्रश्न हैं। जो विना पूछे ही शुभ और अशुभ कहते हैं वे अप्रश्न हैं। तथा जो मिश्ररूप में पूछने पर—शुभ और अशुभ दोनों को प्रगट करते हैं। वे प्रश्नाप्रश्न हैं। इसी तरह और भी अतिशय एवं नागकुमार, सुवर्णकुमार तथा अन्य भवनपतियों के साथ, साधुओं के संवाद इसमें प्रदर्शित किये गये हैं।

नंदीसूत्र के वाचनाकाल में प्रश्नव्याकरण में पैंतालीस अध्ययनरूप

તેમાં ૧૦૮ પ્રશ્ન, ૧૦૮ અપ્રશ્ન, અને ૧૦૮ પ્રશ્નાપ્રશ્ન છે. જે વિદ્યાઓ અથવા મંત્ર, પૂછવામા આવતા શુભ અને અશુભનુ કથન કરે છે, તેમને પ્રશ્ન કહે છે પૂછ્યા વિના જ શુભ અને અશુભ બતાવનારને અપ્રશ્ન કહે છે તથા જે મિશ્રરૂપે—પૂછવામાં આવતાં શુભ અને અશુભ બન્નેને પ્રગટ કરે છે તે પ્રશ્નાપ્રશ્ન કહેવાય છે એજ રીતે બીજા પણ નાગકુમાર, સુપર્ણકુમાર તથા અન્ય ભવનપતિઓની સાથે, સાધુઓના ઘણા સંવાદ આ સૂત્રમાં બતાવવામાં આવ્યા છે

નંદીસૂત્રના વાચનકાળમા પ્રશ્નવ્યાકરણમા પિસ્તાળીશ અધ્યયન સમુપલબ્ધ

तदनन्तरं स्थानाङ्गसूत्रवाचनावेलायां पञ्चचत्वारिंशदध्ययनेषु दशाध्ययनान्येवोपलब्धान्यासन्-तदुक्तं स्थानाङ्गे—

"पण्हा वागरणदसाणं दसअज्झयणा पण्णत्ता। तं जहा—उवमा, संखा[2], इसिभासियाइं[3], आयरियभासिया[4], महावीरभासियाइं[5], खोमगपसिणाइं, कोमलपसिणाइं[7], अद्दागपसिणाइं[8], अंगुट्ठपसिणाइं[9], वाहुपसिणाइं[10] ॥ स्था० १०ठा.।

इदानीं तु पूर्वोक्तानि अध्ययनानि विच्छेदं गतानीति हेतो-पञ्चास्रवपञ्चसंवरात्मकदशाध्ययनानि समुपलभ्यन्ते।

तपः संयमाराधकाः सौधर्मादिदेवलोकेषु समुत्पद्यन्ते, उत्कृष्टतपःसंयमाराधकास्तस्मिन्नेव भवे मोक्षमाप्नुवन्ति किन्तु येषामायुष्यं सप्तलवपरिमितं हीनं ते कर्मक्षयाऽभावात् विजयादि विमानेषु समुत्पद्यन्ते, इति नवमाङ्गे अनुत्तरोपपातिकसूत्रे वर्णितम्।

निबंध समुपलब्ध था। यह बात "से किं तं पण्हावागरणाइं ? से लेकर "से तं पण्हावागरणाइं" तक के इस नंदीसूत्र के पाठ से पुष्ट होती है। इसके बाद स्थानाङ्गसूत्र के वाचनाकाल में पैंतालीस अध्ययनों में से केवल १० ही अध्ययन उपलब्ध रह गये। जैसा कि स्थानाङ्गसूत्र के इस पाठ से प्रमाणित होता है कि "पण्हावागरणदसाणं दस अज्झयणा पण्णत्ता तंजहा" इत्यादि। पर अब तो इस समय वे उपमा, संख्या, ऋषिभाषित, आचार्यभाषित, महावीरभाषित आदि दश अध्ययन भी उपलब्ध नहीं है, क्यों कि इनका विच्छेद हो चुका है। इसलिये पांच आस्रव और पांच संवर संबंधी ये दश अध्ययन ही उपलब्ध हैं।

नौमा अंग जो अनुत्तरोपपातिक सूत्र है उसमें ऐसा वर्णन किया कि तप संयमके आराधक जीव सौधर्म आदि देवलोकों में उत्पन्न होते हैं।

(પ્રાપ્ય) હતાં તે વાત "से किं तं पण्हावागरणाइं? થી લઈને "से तं पण्हावागरणाइं" સુધીના આ નદીસૂત્રના પાઠથી સિદ્ધ થાય છે. ત્યારબાદ સ્થાનાંગસૂત્રના વાચનકાળમા પિસ્તાળીશ અધ્યયનોમાથી ફક્ત દસ જ ઉપલબ્ધ હતાં તે વાતનુ સ્થાનાગસૂત્રના આ પાઠથી પ્રતિપાદન થાય છે–"पण्हावागरणदसाणं दस अज्झयणा पण्णत्ता तंजहा" ઈત્યાદિ. પણ અત્યારે તો ઉપમા, સંખ્યા, ઋષિભાસિત, આચાર્યભાસિત, મહાવીરભાસિત આદિ દશ અધ્યયન પણ ઉપલબ્ધ નથી, કારણકે તેનો વિચ્છેદ થઈ ગયો છે તેથી પાંચ આસ્રવ અને પાંચ સવર સંબંધી આ દશ અધ્યયનો જ ઉપલબ્ધ છે.

અનુત્તરોપપાતિકસૂત્ર નામનુ જે નવમું અગ છે તેમાં એવું વર્ણન કરવામાં આવેલ છે કે તપ સંયમની આરાધના કરનાર જીવ સૌધર્મ આદિ–

उत्कृष्टतपःसंयममाराधनेन संयमवतामङ्गुष्ठदर्पणविद्यादिसंसिद्धयः समुत्पद्यन्ते, ताभिस्ते प्रतिवाद्रिप्रश्नानुत्तरन्ति । तदुपलब्धिः सम्प्रति नास्ति, विच्छेदं गतत्वात् । इदानीं तु पञ्चास्रवपञ्चसंवरप्रतिपादनपरं प्रश्नव्याकरणमुपलभ्यते ।

उत्कृष्टतपःसंयमाराधनं हि पञ्चास्रवपञ्चसंवरज्ञानं विना न भवति–इति–आस्रवसंवरस्वरूपनिरूपकमिदं प्रश्नव्याकरणं निरूप्यत इति नवमाङ्गेन सहास्य संबंधः।

अस्मिन् प्रश्नव्याकरणे पञ्चास्रवपञ्चसंवरात्मकानि दशाध्ययनानि सन्ति, तस्यास्रवसंवरभेदाभ्यां द्वौ भागौ तयोरास्रवस्य बन्धकारणत्वेन पूर्वं निरूपणं,

---

तथा जो उत्कृष्ट तप संयम की आराधना करते हैं वे उसी भव में मोक्ष को प्राप्त कर लेते हैं, किन्तु जिनकी आयु सातलव परिमित है हीन है वे कर्मक्षय नहीं कर सकते हैं इसलिये कर्मक्षय के अभाव से वे विजयादिक विमानों में उत्पन्न हो जाते हैं।

उत्कृष्ट तप संयम के आराधना से संयमशाली जीवों को अंगुष्ठ–विद्या दर्पणविद्या आदि विद्याएँ सिद्ध हो जाती हैं। इनसे वे प्रतिवादियों के प्रश्नों का उत्तर देते रहते हैं। इनकी उपलब्धि इस समय इनके विच्छेद हो जाने के कारण नहीं होती है। इस समय तो पांच आस्रव और पांच संवर के प्रतिपादन करने में तत्पर मात्र यह प्रश्नव्याकरण उपलब्ध हो रहा है। उत्कृष्ट तप संयम की आराधना पांच आस्रव और पांच संवर इनके ज्ञान हुए विना नहीं हो सकती है। इसलिये आस्रव और संवर के स्वरूप को निरूपण करने वाला यह प्रश्नव्याकरण निरूपित किया जाता है। यही नौवें अंग के साथ इसका संबंध है।

દેવલોકોમાં ઉત્પન્ન થાય છે. તથા જે ઉત્કૃષ્ટ તપ સંયમની આરાધના કરે છે તેઓ એ જ ભવમા મોક્ષને પ્રાપ્ત કરે છે, પણ જેનું આયુષ્ય સાતલવ પરિમિત છે, હીન છે, તેઓ કર્મોનો ક્ષય કરી શકતા નથી. તેથી કર્મક્ષયને અભાવે તેઓ વિજયાદિક વિમાનોમાં ઉત્પન્ન થાય છે.

ઉત્કૃષ્ટ તપ સંયમની આરાધનાથી સંયમશાળી જીવોને અંગુષ્ઠ વિદ્યા, દર્પણ વિદ્યા આદિ વિદ્યાઓ પ્રાપ્ત થાય છે તેમની મદદથી તે પ્રતિવાદીઓના પ્રશ્નોના ઉત્તરો આપે છે. તેમની ઉપલબ્ધિ (પ્રાપ્તિ) આ સમયમાં તેમનો વિચ્છેદ થઈ જવાથી થઈ શકતી નથી હાલમાં તો પાંચ આસ્રવ અને પાંચ સંવરનું પ્રતિપાદન કરનાર ફક્ત આ પ્રશ્નવ્યાકરણ જ ઉપલબ્ધ થઈ શકે છે. પાંચ આસ્રવ અને પાંચ સંવરનું જ્ઞાન થયા વિના ઉત્કૃષ્ટ તપ સંયમની આરાધના થઈ શકતી નથી તે કારણે આસ્રવ અને સંવરનાં સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરનાર આ પ્રશ્નવ્યાકરણનું નિરૂપણ કરવામાં આવે છે. એ જ નવમા અંગ સાથે તેનો સંબંધ છે.

ततस्तत्परिहारोपायभूतसंवरवर्णनं भगवता कृतम् । नहि कोऽपि मेधावी दुःखस्वरूपस्याऽपरिज्ञाने तत्परिहारोपायपरिमार्गणं विधत्ते, नह्यसंसिद्धे ज्वरादिरोगे तच्चिकित्साऽऽवश्यकत्वमुपपद्यते, अतः पूर्वमास्रवपञ्चकमुद्देशक्रमप्राप्तं नामतः प्रदर्शयति। आस्रवेष्वपि पूर्वं हिंसानिरूपणं कृतम् , असत्यादिभिरपि हिंसाया एव जायमानत्वेन हिंसायाः प्रधानभूतत्वात् , अतः प्रथममास्रवद्वारमाह—" जंबूइणमो " इत्यादि ।

इस प्रश्नव्याकरण में पांच आस्रव और पांच संवर के संबंध को लेकर दस अध्ययन हैं इसलिये इसे दो भागों में विभक्त किया गया है। आस्रव का वर्णन बंध का कारण होने से प्रथम भाग में किया गया है और संवर का वर्णन आस्रव के परिहार का उपायभूत होने के कारण उसके बाद में द्वितीय भाग में किया गया है । कैसा भी बुद्धिमान् पुरुष क्यों न हो जबतक वह दुःख के स्वरूप से अपरिज्ञात रहता है तो वह उसके परिहार करने के उपायभूत मार्ग की गवेषणा नहीं करता है, तथा जैसे ज्वरादिरोग की संसिद्धि के अभाव में अर्थात् उसके पूर्ण निदान के अभाव में उसके शमन के उपाय की गवेषणा नहीं होती है, उसी तरह जबतक आस्रवतत्त्व का परिज्ञान जीव को नहीं हो जाता है, तबतक संवररूप उसके निरोधकभूत मार्ग को जानने की भी जिज्ञासा उसको उत्पन्न नहीं हो सकती है । इसलिये सब से पहिले उद्देशक्रमप्राप्त पांच आस्रवों को उनके स्वरूप को आगे विशेष स्पष्ट करने के अभिप्राय से सूत्रकार नाम लेकर प्रदर्शित करते हैं । इन पांच आस्रवों में भी सूत्र-

આ પ્રશ્નવ્યાકરણમાં પાચ આસ્રવ અને પાંચ સંવર વિષેનાં દસ અધ્યયન છે, તેથી તેના બે ભાગ પાડવામાં આવ્યા છે. આસ્રવો બધના કારણરૂપ હોવાથી આસ્રવોનું વર્ણન પહેલા ભાગમા કરવામાં આવ્યુ છે, અને સંવર આસ્રવના પરિત્યાગને માટે ઉપાયરૂપ હોવાથી તેમનું વર્ણન આસ્રવન વર્ણન પછી બીજા ભાગમાં કરેલ છે ગમે તેવો બુદ્ધિશાળી માણુસ હોય પણ જો તે દુખના સ્વરૂપથી અજાણ રહે તો તેનો પરિહાર કરવાના ઉપાયરૂપ માર્ગની પ્રાપ્તિ તે કરી-શકતો નથી તથા જેમ જ્વર આદિ રોગોમા તેનુ પૂર્ણ નિદાન કર્યા વિના તેનું શમન કરવાનો ઉપાય જડતો નથી તેમ આસ્રવતત્ત્વનુ પરિજ્ઞાન જ્યાંસુધી જીવને થાય નહીં, ત્યાંસુધી તેમને રોકનાર-તેરાના નિરોધક-સવરરૂપ માર્ગને જાણવાની જિજ્ઞાસા તેનામાં ઉત્પન્ન થઈ શકતી નથી તેથી સૌથી પહેલાં ઉદ્દેશ-પ્રાપ્ત પાચ આસ્રવોના નામ સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે તેમનું સ્વરૂપ આગળ જતાં વિસ્તારથી સ્પષ્ટ કરવામાં આવશે. તે પાંચ આસ્રવોમાં પણ સૂત્રકારે સૌથી

अत्र "तेणं कालेणं" इत्याद्युत्क्षेपवाक्यं वाच्यम्। चम्पानगर्यां सुधर्मस्वामिनः समवसरणं, तत्र कोणिको नाम राजा, धारिणी नाम देवीत्यादि वर्णनमौपपातिकसूत्रादवसेयम्। सुधर्मस्वामिनो जम्बूस्वामिनश्च वर्णनं ज्ञातासूत्रस्य प्रथमाध्ययनतो विज्ञेयम्। जम्बूस्वामिनः सुधर्मस्वामिनश्च प्रश्नोत्तरवाक्यं प्रदर्श्यते-

कार ने पहिले हिंसारूप आस्रव का जो निरूपण किया है उसका कारण यह है कि हिंसा से अतिरिक्त जो मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन, परिग्रह ये आस्रव द्वार हैं उनसे हिंसा ही उत्पन्न होती है। इसलिये उस हिंसा में प्रधानता आने से अब सूत्रकार सर्व प्रथम उसी हिंसा रूप आस्रव द्वार का निरूपण करते हैं-" जंबू इणमो " इत्यादि।

इस सूत्र की संगति के लिये इस में " तेणं कालेणं " इत्यादि उत्क्षेपक वाक्य संबंधित करलेना चाहिये-अर्थात् उसकाल में और उस समय में चम्पा नाम की नगरी थी। उसके शासक कोणिक राजा थे। उनकी रानी का नाम धारिणी देवी था। तीर्थंकर परम्परानुसार विहार करते हुए वहां सुधर्मास्वामी का आगमन हुआ-इत्यादि प्रकार का समस्त वर्णन जैसा औपपातिक सूत्र में किया गया है वैसा ही जान लेना चाहिये और उसे " जंबू इणमो " इस सूत्र की संगति निमित्त यहां लगा लेना चाहिये। सुधर्मास्वामी और जंबू स्वामी का वर्णन ज्ञाता सूत्र के प्रथम अध्ययन में किया हुआ है। सो यह भी वहां से ही जान लेना चाहिये। अब जंबूस्वामी और सुधर्मास्वामी की इस प्रश्नव्याकरण

પહેલાં હિંસારૂપ આસ્રવનું નિરૂપણ કર્યું છે તેનું કારણ એ છે કે હિંસા સિવાય મૃષાવાદ, અદત્તાદાન, મૈથુન અને પરિગ્રહ, એ જે આસ્રવ દ્વાર છે, તેમના વડે હિંસા જ ઉત્પન્ન થાય છે. તે કારણે તે હિંસામા પ્રધાનતા આવવાથી, સૂત્રકાર સૌથી પહેલાં એજ હિંસારૂપ આસ્રવદ્વારનું નિરૂપણ કરે છે-"जंबू इणमो" ઈત્યાદિ

આ સૂત્રના સંબંધને માટે તેમા "तेणं कालेणं" ઈત્યાદિ ઉત્ક્ષેપક વાકયનો સંબંધ જોડી દેવો જોઈએ એટલે કે તે કાળે અને તે સમયે ચંપા નામની એક નગરી હતી. કોણિક રાજા ત્યાંના રાજા હતા. તેમની રાણીનું નામ ધારિણી દેવી હતું. તીર્થંકર પરંપરાનુસાર વિહાર કરતાં કરતાં ત્યાં સુધર્માસ્વામીનું આગમન થયું. ઈત્યાદિ પ્રકારનું આખુ વર્ણન જેમ ઔપપાતિક સૂત્રમાં કરાયું છે તે પ્રમાણે સમજી લેવુ અને તેને " जंबू इणमो " આ સૂત્રના સંબંધને માટે અહીં જોડી દેવુ જોઈએ. સુધર્માસ્વામી અને જંબૂસ્વામીનું વર્ણન જ્ઞાતાસૂત્રના પહેલા અધ્યયનમા કરેલ છે તો તે પણ ત્યાંથી સમજી લેવું જોઈએ હવે જંબૂસ્વામી અને સુધર્માસ્વામીની વચ્ચે આ પ્રશ્નવ્યાકરણસૂત્રને વિષે જે પ્રશ્નોત્તરરૂપે

मूलम्—"जइणं भंते ! समणेणं भगवया महावीरेणं जाव संपत्तेणं नवमस्स अंगस्स अणुत्तरोववाइयदसाणं अयमट्ठे पन्नत्ते। दसमस्स णं भंते अंगस्स पण्हावागरणाणं समणेणं ३ जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते ? जंबू ! दसमस्स अंगस्स समणेणं जाव संपत्तेणं दो दारा पण्णत्ता। आसवदारा य संवरदारा य। पढमस्स णं भंते ! दारस्स समणेणं ३ जाव संपत्तेणं कइ अज्झयणा पण्णत्ता ? जंबू ! पढमस्स णं दारस्स समणेणं जाव संपत्तेणं पंच अज्झयणा पण्णत्ता। दोच्चस्स णं भंते ! एव चेव। एएसिं णं भंते ! अज्झयणाणं अण्हय संवराणं समणेणं ३ जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते? । तएणं अज्जसुहम्मे थेरे जंबू नामेणं अणगारेणं एवं वुत्ते समाणे जंबू अणगारं एवं वयासी"—

छाया—यदि खलु भदन्त! श्रमणेन भगवता महावीरेण यावत्संप्राप्तेन नवमस्याङ्गस्य अनुत्तरोपपातिकदशानामयमर्थः प्रज्ञप्तः। दशमस्य खलु भदन्त ! अङ्गस्य प्रश्नव्याकरणानां श्रमणेन भगवता महावीरेण यावत्संप्राप्तेन कोऽर्थः प्रज्ञप्तः ? जम्बू ! दशमस्य-अङ्गस्य श्रमणेन भगवता महावीरेण यावत्सम्प्राप्तेन द्वे द्वारे प्रज्ञप्ते—आस्र-

---

सूत्र के संबंध में जो प्रश्नोत्तर रूप बातचीत हुई है उसको प्रकट करते हैं— 'जइणं भंते' इत्यादि।

हे भदन्त ! श्रमण भगवान् महावीर ने कि जो यावत् सिद्धिगति नामक स्थान को प्राप्त हो चुके हैं अनुत्तरोपपातिक दशाङ्ग नामके नवमे अंग का जब इस प्रकार से अर्थ प्ररूपित किया है—तो उन्हीं यावत् सिद्धिगति नामक स्थान को प्राप्त हुए श्रमण भगवान् महावीर ने प्रश्नव्याकरण नामक दशवें अंग का क्या अर्थ निरूपित किया है ? इस प्रश्न के उत्तर में सुधर्मास्वामी ने उनसे इस प्रकार कहा—हे जंबू ! तुम्हारे प्रश्न का उत्तर इस प्रकार से है—यावत् सिद्धिगति नामक स्थान को प्राप्त हुए श्रमण भगवान् महावीर ने इस प्रश्नव्याकरणरूप दशवें अंग के दो द्वार प्ररूपित किये हैं उसमें पहिला आस्रव द्वार है और

વાતચીત થઈ છે તેને સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે—"जइणं भंते !" ઈત્યાદિ.

હે ભદન્ત ! શ્રમણ ભગવાન મહાવીર, કે જેમણે સિદ્ધિગતિ નામના સ્થાનને પ્રાપ્ત કરી લીધું છે, તેમણે અનુત્તરોપપાતિક દશાંગ નામના નવમા અંગનો જો આ પ્રમાણે અર્થ પ્રરૂપિત કર્યો છે, તો તે સિદ્ધિગતિ નામના સ્થાનને પ્રાપ્ત કરેલ શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે પ્રશ્નવ્યાકરણ નામના દસમા અંગનો કયો અર્થ નિરૂપિત કર્યો છે? તે પ્રશ્નનો ઉત્તર આપતા સુધર્માસ્વામીએ તેમને આ પ્રમાણે કહ્યુ—હે જંબૂ ! તમારા પ્રશ્નનો જવાબ આ પ્રમાણે છે—સિદ્ધિગતિ નામના સ્થાનને પ્રાપ્ત કરેલ શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે આ પ્રશ્નવ્યાકરણરૂપ દસમાં અંગનાં બે દ્વાર પ્રરૂપિત કર્યાં છે, તેમા પહેલુ

वद्वारं च संवरद्वारं च। प्रथमस्य खलु भदन्त! द्वारस्य श्रमणेन भगवता महावीरेण यावत्संप्राप्तेन कति अध्ययनानि प्रज्ञप्तानि?। जम्बूः! प्रथमस्य खलु द्वारस्य श्रमणेन भगवता महावीरेण यावत्सम्प्राप्तेन पञ्च-अध्ययनानि प्रज्ञप्तानि। द्वितीयस्य खलु भदन्त!० एवमेव। एतेषां खलु भदन्त! अध्ययनानाम् आस्रवसंवराणां श्रमणेन भगवता महावीरेण यावत्सम्प्राप्तेन कोऽर्थः प्रज्ञप्तः?। ततः खलु आर्यसुधर्मा स्थविरः जम्बूनाम्ना अनगारेण एवमुक्तः सन् जम्बूमनगारमेवमवादीत्—'जंबू इणमो' इत्यादि।

मूलम्—"जंबू इणमो अण्हय संवर,—विणिच्छियं पवयणस्स-णिस्संदं। वोच्छामि निच्छयत्थं सुभासियत्थं महेसीहिं ॥सू०१॥

टीका—'हे जंबू!' इत्यामन्त्रणेन जम्बूस्वामिनं प्रति सुधर्मास्वामी प्राह—'हे जंबू! इणमो' इदम्-अनुपदं वक्ष्यमाणं प्रश्नव्याकरणशास्त्रं 'वोच्छामि'

दूसरा संवर द्वार है। हे भदन्त! प्रथम द्वार के श्रमण भगवान् महावीर ने कि जो यावत् सिद्धिगति नामक स्थान को प्राप्त कर चुके हैं कितने अध्ययन प्ररूपित किये हैं? इस प्रकार जंबूस्वामी के पूछने पर श्री सुधर्मास्वामी ने उनसे कहा-हे जंबू! यावत् सिद्धिगति नामक स्थानको प्राप्त हुए श्रमण भगवान् महावीरने प्रथम द्वारके पांच अध्ययन प्ररूपित किये हैं।

प्रश्न-द्वितीय द्वार के हे भदंत! कितने अध्ययन प्ररूपित किये हैं।

उत्तर—जंबू! इतने ही अध्ययन द्वितीय द्वार के प्ररूपित किये हैं। जंबूस्वामी ने पुनः सुधर्मास्वामी से पूछा कि-हे भदन्त! इन आस्रव एवं संवर संबंधी अध्ययनों का अर्थ यावत् सिद्धिगति नामक स्थानों को प्राप्त हुए श्रमण भगवान् महावीर ने कैसा प्ररूपित किया है? इस प्रकार अनगार जंबू स्वामी से पूछे गये स्थविर आर्य सुधर्माने उन जंबू अनगार

આસ્રવ દ્વાર છે અને બીજું સંવર દ્વાર છે "હે ભદન્ત! સિદ્ધિગતિને પ્રાપ્ત કરેલ શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે કેટલા અધ્યયન પ્રરૂપિત કર્યાં છે?" આ પ્રમાણે જંબૂસ્વામી વડે પૂછવામાં આવતા સુધર્માસ્વામીએ તેમને કહ્યુ—'હે જંબૂ! સિદ્ધિગતિ નામના સ્થાનને પામેલ શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે પ્રથમ દ્વારના પાંચ અધ્યયન પ્રરૂપિત કર્યાં છે."

પ્રશ્ન—"બીજા દ્વારનાં કેટલાં અધ્યયન પ્રરૂપિત કર્યા છે?"

ઉત્તર—"એટલાં જ અધ્યયન બીજા દ્વારના પણ પ્રરૂપિત કર્યાં છે." જંબૂસ્વામીએ ફરીથી સુધર્માસ્વામીને પૂછ્યું કે-હે ભદન્ત! સિદ્ધિગતિ નામના સ્થાનને પામેલ શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે તે આસ્રવો અને સંવર સંબંધી અધ્યયનોનો અર્થ કેવો પ્રરૂપિત કર્યો છે? આ પ્રમાણે અણુગાર જંબૂસ્વામી

वक्ष्यामि=त्वां प्रति प्ररूपयिष्यामि। तद् कीदृशमित्याह–'अण्हये'त्यादि–'अण्हयसंवरविणिच्छियं' आस्रवसंवरविनिश्चितं, आस्रवन्ति=आगच्छन्ति कर्मजलानि आत्मसरसि यैस्ते आस्रवाः=कर्मबन्धहेतुभूताः प्राणातिपातादयः, यद्वा–आस्रवणम्–आस्रवः–आगमनम्। स द्विविधः–द्रव्यतो भावतश्च, तत्र द्रव्यतो यज्जलान्तर्गतनावादौ छिद्रैर्जलागमनम्। भावतस्तु–प्राणातिपातादिभिरात्मनि कर्मागमनम्। संसारसागरान्तर्गतात्मनौकायां प्राणातिपातादिछिद्रैः कर्मजलागमनमिति भावः। स प्राणातिपातादिरूपः पञ्चविधः। संव्रियन्ते=प्रतिरुद्ध्यन्ते

से ऐसा कहा—'जंबू इणमो०' इत्यादि।

टीकार्थ–इस सूत्रमें "जंबू" यह पद संबोधन अर्थमें प्रयुक्त हुआ है। इससे यह लक्षित होता है कि सुधर्मास्वामी जंबू स्वामी से कहते हैं कि (जंबू इणमो) हे जंबू! मैं अनुपद वक्ष्यमाण प्रश्न व्याकरणरूप शास्त्र (वोच्छामि) तुमको कहूँगा। (अण्हयसंवरविणिच्छियं) इस शास्त्र में आस्रव एवं संवर का निर्णय उनके लक्षणों एवं भेदादिकों के कथनपूर्वक किया गया है। "विणिच्छियं" पद का अर्थ है विशेषरूप से निर्धारित करना। तथा आस्रवका अर्थ है कर्मबंधके हेतुभूत प्राणातिपातादिक। इनके द्वारा ही आत्मरूपी तालावमें जलतुल्य कर्मोंका आगमन होता रहताहै। जिस प्रकार तडाग में जल के आने के लिये नाले हुआ करते हैं उसी प्रकार आत्मा में भी प्राणातिपात आदि रूप नाला द्वारा ज्ञानावरणीय आदि कर्मरूप जल का आना होता रहता है। अथवा–आना यह–आस्रव है यह आस्रव द्रव्य और भाव के भेद से दो प्रकार का कहा गया है।

વડે પૂછાતા સ્થવિર આર્યસુધર્માએ તે જંબૂ અણગારને કહ્યુ–"जंबू इणमो" ઈત્યાદિ.

ટીકાર્થ—આ સૂત્રમા "जंबू" પદ સંબોધન અર્થમાં વપરાયું છે. તેથી એ લક્ષિત થાય છે કે સુધર્માસ્વામી જંબૂસ્વામીને કહે છે કે "जंबू इणमो" હે જંબૂ! હુ આ નીચે પ્રમાણેનુ પ્રશ્નવ્યાકરણરૂપ શાસ્ત્ર "वोच्छामि" તમને કહીશ "अण्हयसंवरविणिच्छियं" આ શાસ્ત્રમાં આસ્રવ અને સંવરદ્વારનો નિર્ણય તેમનાં લક્ષણો અને ભેદાદિના કથનપૂર્વક કરવામાં આવ્યો છે. "विणिच्छियं" પદનો અર્થ વિશેષરૂપે નિર્ણિત કરવો, તથા આસ્રવનો અર્થ કર્મબંધના કારણરૂપ પ્રાણાતિપાતાદિક થાય છે. તેમના દ્વારા જ આત્મારૂપી તળાવમાં જળ સમાન કર્મોનુ આગમન થયા કરે છે. જેમ તળાવમા પાણી આવવા માટે નાળા હોય છે, તે જ પ્રમાણે આત્મામા પણ પ્રાણાતિપાત આદિરૂપ નાળાં દ્વારા જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મરૂપ જળનું આગમન થતુ રહે છે. અથવા આવવું તે આસ્રવ છે. તે આસ્રવ દ્રવ્ય અને ભાવના ભેદથી બે પ્રકારનો

प्रविशत्कर्मजलानि आत्मसरसि यैस्ते संवराः-कर्मनिरोधहेतुभूताः प्राणातिपात विरमणादयः। यद्वा-संवरणं संवरः-स्थगनम्। अयमपि द्विविधः द्रव्यतो भावतश्च। तत्र द्रव्यतस्तथाविधचिक्कणमृत्तिकादिभिः सलिलोपरि तरत्तरण्यादेरनारतमविशन्नीराणां विवराणां पिधानम्। भावतः प्राणातिपातविरमणादिभिरात्मनि प्रविशत्कर्मणां निरोधः। असावपि प्राणातिपातविरमणादिरूपः पञ्चविधः। ते विनिश्चीयन्ते=

जल के भीतर पडी हुई नौका में छिद्रों द्वारा जो जल का आना होता है वह द्रव्यास्रव है। प्राणातिपात आदि अशुभ क्रियाओं द्वारा आत्मा में जो कर्मों का आना होता है वह भावास्रव है। तात्पर्य केवल इसका यह है कि संसार रूप सागर के अन्तर्गत इस आत्म रूप नाव में प्राणा-तिपात आदि छिद्रों द्वारा कर्मरूप जल का आगमन होता रहता है वह आस्रव है। कर्मागमन हेतुभूत यह प्राणातिपातरूप आस्रव पांच प्रकार का है। आत्मारूप सरोवर में प्रवेश होने से कर्मरूप जल जिन क्रियाओं से रुकता है उनका नाम संवर है। प्राणातिपात आदि रूप क्रियाओं से विरमण होना यही कर्मों के रोकने का उपाय भूत संवर है। अथवा रुकना इसका नाम संवर है, यह संवर भी द्रव्य और भाव की अपेक्षा दो प्रकार का है-चिकनी मृत्तिका आदि से जल के ऊपर तैरती हुई नौका आदि का छेदों के कि जिनसे निरन्तर उसमें जल आ रहा हो बंद कर देना यह द्रव्य की अपेक्षा संवर है, तथा प्राणातिपातविरमण आदि उपायों से आत्मा में प्रविष्ट होते हुए कर्मों का रोकदेना यह भाव की अपेक्षा संवर है। यह संवर भी प्राणातिपात आदिकों के विरमण

બતાવ્યો છે પાણીમાં પડેલી નૌકામાં છિદ્રો દ્વારા જે જળનું આગમન થાય છે તે દ્રવ્યાસ્રવ છે. પ્રાણાતિપાત આદિ અશુભ ક્રિયાઓ દ્વારા આત્મામાં જે કર્મોનું આગમન થાય છે તે ભાવાસ્રવ છે. તેનું તાત્પર્ય એટલું જ છે કે સંસારરૂપી સાગરની અંદર આ આત્મારૂપી નાવમાં પ્રાણાતિપાત આદિ છિદ્રો દ્વારા કર્મરૂપી જળનું જે આગમન થયા કરે છે તેને આસ્રવ કહે છે કર્માગમનના કારણરૂપ તે પ્રાણાતિપાત આદિ પાંચ પ્રકારના આસ્રવ છે. કર્મરૂપ જળ જે ક્રિયાઓથી આત્મારૂપ સરોવરમાં પ્રવેશ પામતું અટકે છે તે ક્રિયાઓને સંવર કહે છે પ્રાણાતિપાત આદિ ક્રિયાઓનું વિરમણ થવું એ જ કર્મોને રોકવાના ઉપાયભૂત સંવર છે, અથવા સવર એટલે રોકવું. તે સંવર પણ દ્રવ્ય અને ભાવની અપે-ક્ષાએ બે પ્રકારનો છે પાણીમાં તરતી નૌકાના જે છિદ્રોમાંથી પાણી પ્રવેશ કરતું હોય તે છિદ્રોને ચીકણી માટિ આદિથી બંધ કરી દેવા તે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ સંવર છે, તથા પ્રાણાતિપાત વિરમણ આદિ ઉપાયોથી આત્મામાં પ્રવેશ કરતાં કર્મોને રોકી લેવાં તે ભાવની અપેક્ષાએ સંવર છે તે સંવર પણ પ્રાણાતિપાત

लक्षणप्रदर्शन पुरस्सर विशेषेण निर्धार्यन्ते यस्मिन् तत् आस्रवसंवरविनिश्रितम् आस्र-वसंवरनिर्णयात्मकम्। 'पवयणस्स' प्रवचनस्य-माधुर्यप्रसादगुणसौन्दर्यस्य भावनासुगन्धिकस्य आत्मस्वरूपानुभवपरमास्वादयतः भगवत्सुरतरुकुसुमित प्रवचन कुसुमस्य 'णिस्संदं' निस्पन्दं=प्रक्षरद्रसमिव सारभूतं 'निच्छयत्थं' निश्चयार्थं निः=निष्क्रान्तः चयः ज्ञानावरणीयादिकर्मपुञ्जः यस्मात् स निश्चयो=मोक्षः, सोऽर्थः=प्रयोजनं यस्य तत निश्चयार्थं, निश्चयो मोक्षस्तत्प्राप्त्यर्थं वा, 'महेसीहिं'

से पांच भेद रूप है। इन पांच आस्रवों का और संवरों का इस शास्त्र में सूत्रकार लक्षणप्रदर्शन पूर्वक विशेषरूप से स्वयं ही आगे निर्धारण करेंगे। यही बात "अण्हयसंवरविणिच्छियं" पद से सूत्रकार ने समझाई है। यह प्रश्नव्याकरण (पवयणस्स) प्रवचनरूप पुष्प के निकले हुए रस के समान (निस्संद) सारभूत है। जो प्रवचनपुष्प भगवान् तीर्थंकर प्रभु महावीर रूप कल्पवृक्ष पर प्रफुल्लित हुआ है। माधुर्य एवं प्रसाद रूप गुण रूप विशिष्ट शोभा से संपन्न है। भावना रूप सुगंधि से जो भरा है। आत्मानुभवनरूप परम स्वाद से जो युक्त है। तात्पर्य इसका यह है कि जिस प्रकार पुष्प का सार उसका रस माना जाता है उसी प्रकार यह प्रश्नव्याकरण तीर्थंकर प्रभु के प्रवचनों में सारभूत माना गया है। भव्यजीवों का इसके अध्ययन से सर्वोत्कृष्ट यही प्रयोजन सधता है कि वे अपनी आत्मा का अनुभव करना सीख जाते हैं। (निच्छयत्थं) पद से यह प्रकट होता है कि इस अंग में जो भी कुछ प्रतिपादित किया जावेगा, वह मोक्ष प्रयोजनीभूत हो इसलिये इस पद का ऐसा भी अर्थ

આદિના વિરમણથી પાંચ પ્રકારનો છે એ પાંચ આસ્રવોનું અને સંવરોનું આ શાસ્ત્રમાં સૂત્રકાર પોતે જ લક્ષણ પ્રદર્શનપૂર્વક વિસ્તારથી આગળ જતાં વર્ણન કરશે એજ વાત "अण्हयसंवरविणिच्छियं" પદથી સૂત્રકારે સમજાવી છે. આ પ્રશ્નવ્યાકરણ "पवयणस्स" પ્રવચનરૂપ પુષ્પમાંથી નીકળેલ રસના જેવું સારભૂત છે જે પ્રવચનપુષ્પ ભગવાન તીર્થંકર મહાવીર પ્રભુરૂપી કલ્પવૃક્ષ પર વિકસિત થયેલ છે માધુર્ય અને પ્રસાદગુણરૂપ વિશિષ્ટ શોભાથી તે યુક્ત છે, ભાવનારૂપ સુગંધિથી તે ભરેલું છે, આત્માનુભવરૂપ પરમ સ્વાદથી તે યુક્ત છે. તેનું તાત્પર્ય એ છે કે જેમ પુષ્પનો સાર તેનો રસ મનાય છે, તે જ પ્રકારે આ પ્રશ્નવ્યાકરણ તીર્થંકર પ્રભુના પ્રવચનોમાં સારરૂપ મનાયું છે ભવ્યજીવોનું તેના અધ્યયનથી એ સર્વોત્કૃષ્ટ પ્રયોજન સધાય છે કે તેઓ પોતાના આત્માનો અનુભવ કરતા શીખી જાય છે "निच्छयत्थं" આ પદથી એ પ્રગટ કરવામાં આવ્યું છે કે આ અંગમાં જે કંઈ પ્રતિપાદિત કરવામાં આવશે, તે મોક્ષના પ્રયોજનરૂપ થશે; તે કારણે આ પદનો એવો પણ અર્થ થઈ શકે છે કે સૂત્રકાર એનું જે પ્રતિપાદન

महेषिभिः, महान्=बृहत् स्वर्गादिफलापेक्षया मोक्षस्तमिच्छन्ति=अभिलषन्तीति महेषिणः। यद्वा-महान्तश्च ते सर्वज्ञत्वात् ऋषयः=महर्षयस्तैः महर्षिभिः प्रवचनप्रणेतृभिस्तीर्थङ्करगणधरादिभिः। 'सुभासियत्थं' सुभाषितार्थं सु=सुष्ठु सम्यक्तया लोकाऽलोकावलोकि केवलाऽऽलोकेन विलोक्य भाषितः द्वादशविधपरिषदि कथितः अर्थः-अर्यते गम्यते ज्ञायते इति अर्थः=आस्रवसंवरस्वरूपलक्षणः, यद्वा-अर्थ्यते साध्यते इति अर्थः=सकलकर्मप्रक्षयोपलक्षित निरतिशयसुखास्वादलक्षणो निर्वाणः यस्मिन् तत्, उक्तविशेषणविशिष्टं शास्त्रं वक्ष्ये इति पूर्वेण सम्बन्धः ॥सू०१॥

हो सकता है कि सूत्रकार जो इस का प्रतिपादन कर रहे हैं वह इस अभिप्राय से ही कर रहे हैं कि इसका अध्येता मुक्ति की प्राप्ति करें। (महेसिहिं सुभासियत्थं) इन पदोंद्वारा यह बात प्रमाणित कर प्रकट की जा रही है कि तीर्थंकर गणधरादिक देवोंने जो विषय-आस्रव संवररूप अथवा सकल कर्मों के प्रक्षय से उपलक्षित एवं निरतिशयरूप क्षायिक सुख के आस्वाद स्वरूप निर्वाण-मोक्ष-इससे कहा है वह स्वकपोल कल्पना से कल्पित कर ग्रथित नहीं किया है किन्तु केवलज्ञान रूप आलोक से अच्छी तरह छानवीन करके ही उस उस विषय का निर्दोष प्रतिपादन किया है। तीर्थंकर सर्वज्ञप्रभु ने केवलज्ञान से पहिले उस विषय को अपने ज्ञान का विषयभूत बनाकर उसे द्वादशविध परिषदा के बीच में कहा, और उसे श्रवण कर एवं बुद्धि में अवधृत कर उसी के अनुसार गणधरादि देवों ने ग्रथन किया गया है। इस तरह उक्त विशेषणों की सार्थकता टीकाकार ने प्रकट की है। संक्षिप्तार्थ केवल इस गाथाका यही

કરી રહ્યા છે તે એ હેતુથી જ કરી રહ્યા છે કે તેનું અધ્યયન કરનાર મુક્તિની પ્રાપ્તિ કરે "महेसिहिं सुभासियत्थं" આ પદો દ્વારા એ વાત પ્રતિપાદન કરીને પ્રગટ કરવામા આવી રહી છે કે તીર્થંકર ગણધર આદિ દેવોએ જે વિષય-આસ્રવ સંવરરૂપ અથવા સકળ કર્મોના ક્ષયને ઉપલક્ષિત અને નિરતિશયરૂપ ક્ષાયિક સુખના આસ્વાદ સ્વરૂપ નિર્વાણ-મોક્ષ તેમાં કહેલ છે, તે પોતે કલ્પનાથી કલ્પીને ગ્રથિત કરેલ નથી પણ કેવળજ્ઞાનરૂપ દૃષ્ટિથી સારી રીતે વીણીવીણીને તે દરેક વિષયનું નિર્દોષ પ્રતિપાદન કર્યું છે. તીર્થંકર સર્વજ્ઞપ્રભુએ કેવળજ્ઞાનથી પહેલાં તે વિષયને પોતાના જ્ઞાનના વિષયભૂત બનાવીને તેનુ બાર પ્રકારની પરિષદમાં કથન કર્યું હતું, અને તેનું શ્રવણ કરીને અને મનમાં બરાબર ઉતારીને તે પ્રમાણે જ ગણધરાદિ દેવોએ ગ્રથન કર્યું છે. આ રીતે ઉક્ત વિશેષણોની સાર્થકતા ટીકાકારે પ્રગટ કરી છે. આ ગાથાનો સંક્ષેપમાં એટલો જ

है कि यह प्रश्नव्याकरणशास्त्र प्रवचनरूप प्रफुल्लित पुष्प के रस जैसा सार भूत है। इसमें आस्रव और संवर तत्त्वका सुन्दर निर्दोष विवेचन हुआ है। और यह विवेचन तीर्थंकर परंपरा के अनुसार जैसा होता आया है वैसा ही हुआ है।

भावार्थ—टीकाकार ने "आस्रवंति–आगच्छंति, कर्मजलानि यैस्ते आस्रवाः, यद्वा–आस्रवणम् आस्रवः। संव्रियन्ते–प्रतिरुद्धयन्ते प्रविशत्कर्मजलानि यैस्ते संवराः, यद्वा संवरणं संवरः" इस प्रकार से आस्रव और संवर की व्युत्पत्ति की है, उससे प्रथम व्युत्पत्ति के अनुसार कर्म-बंध के कारणभूत प्राणातिपात आदि क्रियाओं को आस्रव कहा गया है कारण कि इन्हीं के द्वारा जीव नवीन२ कर्मों का बंध करता रहता है। दूसरी व्युत्पत्ति के अनुसार आने मात्र का नाम आस्रव कहा गया है सो यह, द्रव्य और भाव के भेद से दो प्रकार का कहा गया है। द्रव्यास्रव कर्म-बंध का कारण नहीं है। कर्मबंध का कारण तो भावास्रव ही है, क्यों कि प्राणातिपात आदिरूप भावों से ही कर्मों का आगमन होता है। इसी तरह संवर के विषय में भी जानना चाहिये। संवर, आस्रव का निरोधक होता है। छिद्रों के द्वारा नौका में जल का आना यह आस्रव के स्थानापन्न है और उन छिद्रों को बंद कर देना यह संवरके स्थानापन्न है।

અર્થ છે કે આ પ્રશ્નવ્યાકરણ શાસ્ત્ર પ્રવચનરૂપ વિકસિત પુષ્પના રસ જેવું સારભૂત છે અને આ વિવેચન તીર્થંકર પરંપરા પ્રમાણે જે પ્રમાણે થતું આવ્યું છે તે પ્રમાણે જ થયું છે

ભાવાર્થ—ટીકાકારે આ રીતે આસ્રવ અને સંવરની વ્યુત્પત્તિ કરી છે— "आस्रवंति–आगच्छंति, कर्मजलानि यैस्ते आस्रवा" (જેના દ્વારા કર્મજળ આવે છે તે આસ્રવો કહેવાય છે.) અથવા "आस्रवणम् आस्रवः" (આવવું એટલે આસ્રવ) "संव्रियन्ते–प्रतिरुद्धयन्ते प्रविशत्कर्मजलानि यैस्ते संवराः" (જેના વડે કર્મજળ પ્રવેશ પામતું અટકે છે તે સંવર છે) અથવા "संवरणं संवरः" (સંવર એટલે જવું) તેમાંથી પહેલી વ્યુત્પત્તિ પ્રમાણે કર્મબંધનાં કારણરૂપ પ્રાણાતિપાત આદિ ક્રિયાઓને આસ્રવ બતાવ્યાં છે બીજી વ્યુત્પત્તિ પ્રમાણે આગમન માત્રનું નામ આસ્રવ બતાવ્યું છે તો તે દ્રવ્ય અને ભાવના ભેદથી બે પ્રકારના કહેલ છે દ્રવ્યાસ્રવ કર્મબંધનું કારણ નથી કર્મબંધનું કારણ તો ભાવાસ્રવ જ છે, કારણકે પ્રાણાતિપાત આદિરૂપ ભાવોથી જ કર્મનું આગમન થાય છે એ જ પ્રમાણે સંવરને વિષે પણ સમજવું સંવર આસ્રવનો નિરોધક (રોકનાર) હોય છે, છિદ્રો દ્વારા નૌકામાં જળનું પ્રવેશવું તે આસ્રવના સ્થાન સમાન છે અને તે છિદ્રોને બંધ કરી દેવા તે સંવરના સ્થાન

'यथोद्देशं निर्देशः, इति न्यायेन फलतो नामतश्चास्रवप्रकारानाह— 'पंचविहो' इत्यादि ।

मूलम्—पंचविहो पण्णत्तो जिणेहिं इह अण्हओ अणादीओ।
हिंसा१ मोस२ मदत्तं ३ अबंभं४ परिग्गहं ५ चेव ॥सू०२॥

टीका—'जिणेहिं' जिनैः=रागाद्यन्तरङ्गरिपुविजेतृभिरर्हद्भिः इह=जिनशासने संसारे वा, 'अण्हओ' आस्रव 'अणादीओ' अनादिकः—नास्यादिः प्रथमोत्पत्तिर्विद्यते इत्यनादिकः। उपलक्षणत्वादस्य 'अपर्यवसितः' इत्यपि दृश्यम्,

---

प्राणातिपातादिरूप भाव, प्राणातिपात आदि विरमणरूप भावसंवर से प्रतिरुद्ध होते हैं। और ऐसा होने से ही कर्मों का आगमन रुकता है। "निश्चयार्थ"में 'निः' शब्दका अर्थ दूर होना है। तथा चयका अर्थ ज्ञानावरणीयादि कर्मपुंज है। वह कर्मपुंज जिस स्थानसे दूर हो चुका है ऐसा वह स्थान मोक्ष है, और यह मोक्ष जिसका प्रयोजन है वह निश्चयार्थ शास्त्र है। अथवा निश्चय का अर्थ मोक्ष है। इस मोक्ष की प्राप्ति के लिये ही इस शास्त्र का प्रणयन हुआ है ॥सू०१॥

उद्देशके अनुसार ही निर्देश हुआ करता है इस न्याय को लेकर सूत्रकार फल और नाम की अपेक्षा अब आस्रव के प्रकारों को प्रकट करते हैं—'पंचविहो पण्णत्तो' इत्यादि।

टीकार्थ-(जिणेहिं) जिनेन्द्र देवने (इह) अर्हन्त प्रभुके शासनमें अथवा इस संसारमें (अण्हओ) आस्रव (अणादीओ) अनादि (पण्णत्तो)

સમાન છે. પ્રાણાતિપાતાદિરૂપ ભાવ, પ્રાણાતિપાત આદિ વિરમણરૂપ ભાવસંવરથી અટકે છે. અને એમ થવાથી જ નવીન કર્મોનું આગમન રોકાય છે. "નિશ્ચયાર્થ"માં "નિઃ" શબ્દનો અર્થ 'દૂર થવું' થાય છે. તથા 'ચય'નો અર્થ જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મપુંજ છે. તે કર્મપુંજ જે સ્થાનથી દૂર થઈ ગયો છે તેવું સ્થાન મોક્ષ છે અને તે મોક્ષ જેનું પ્રયોજન છે તે નિશ્ચયાર્થ શાસ્ત્ર છે. અથવા નિશ્ચયનો અર્થ મોક્ષ પણ થાય છે. એ મોક્ષની પ્રાપ્તિને માટે જ આ શાસ્ત્રની રચના કરવામાં આવી છે. ॥ સૂ. ૧ ॥

ઉદ્દેશ પ્રમાણે જ નિર્દેશ થયા કરે છે તે ન્યાયે સૂત્રકાર ફળ અને નામની અપેક્ષાએ હવે આસ્રવોના પ્રકારોને પ્રગટ કરે છે— 'પંચવિહો પણ્ણત્તો' ઈત્યાદિ

ટીકાર્થ—"જિણેહિં" જિનેન્દ્ર દેવે "ઇહ" અર્હંત પ્રભુના શાસનમાં, એટલે કે આ સંસારમાં "અણ્હઓ" આસ્રવોને "અણાદીઓ" અનાદિ "પણ્ણત્તો" અનામ

प्रवाहापेक्षया नानाजीवापेक्षया च संसारस्यानाद्यपर्यवसितत्वात्। आस्रवस्य सादित्वे सपर्यवसितत्वे च स्वत एव विरमणे सिद्धानामिव संसारिणामपि कर्मबन्धाभाव प्रसङ्गः स्यात्। के ते पञ्चास्रवाः? इत्याह-'हिंसा' इत्यादि, हिंसा=जीव-

प्रज्ञप्त किया है। (हिंसामोसमदत्तं अबंभं परिग्गहं पंचविहो चेव) यह हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील और परिग्रह, इस प्रकार से पांच तरह का ही है। रागादिक अन्तरंग रिपुओं को जो विजित कर लेते हैं उनका नाम जिन है। जिन प्रभु ने जो आस्रव को अनादि कहा है उसका कारण यह है कि यह संसार अनादि और अपर्यवसित है। यद्यपि भव्य-जीवों की अपेक्षा संसार में अनादिता होने पर भी अपर्यवसितता नहीं बनती है फिर भी नाना जीवों की अपेक्षा यह बन जाती है। आस्रव संसारी जीवों के ही होता है, मुक्त जीवों के नहीं। संसार में रहने वाले जीव ही संसारी जीव हैं। यह संसार प्रवाह एवं नानाजीवों की अपेक्षा जब अनादि अनत है तो यह बात बन जाती है कि आस्रव भी अनादि अनंत है। अथवा यदि यों भी कह दिया जावे कि आस्रव ही संसार है और संसार ही आस्रव है। तो इस पक्षमें भी आस्रवमें अनादि अनंतता सुघटित हो जाती है। कारण इसकी प्रथमोत्पत्ति तो बनती नहीं है। यदि आस्रवको एकान्ततः सादि और सपर्यवसित ही माना जावे तो इस स्थिति में यह आस्रव जबतक संसारी जीवमें नहीं हुआ-तबतक यह जीव सिद्धों

(બતાવ્યા) કર્યા છે. "हिंसामोसमदत्तं अबंभं" परिग्गहं पंचविहो चेव" તે હિંસા, અસત્ય, ચોરી, કુશીલ અને પરિગ્રહ એમ પાચ પ્રકારના છે રાગાદિ આંતરિક દુશ્મનોને જે જીતે છે તેને જિન કહે છે જિન પ્રભુએ આસ્રવોને અનાદિ બતાવ્યા છે તેનું કારણ એ છે કે આ સંસાર અનાદિ અને અપર્યવસિત અનંત છે જો કે ભવ્યજીવોની અપેક્ષાએ સંસારમાં અનાદિતા હોવા છતાં પણ અપર્યવસિતા બનતી નથી, છતાં પણ નાના જીવોની અપેક્ષાએ તે બને છે. આસ્રવ સંસારી જીવોને જ થાય છે, મુક્ત જીવોને થતા નથી. સંસારમાં રહેનાર જીવો જ સંસારી જીવ છે આ સસાર પ્રવાહ અને નાના જીવોની અપેક્ષાએ જો અનાદિ અનંત છે તો એ વાત પણ નક્કી થઈ જાય છે કે આસ્રવ પણ અનાદિ અનન્ત છે અથવા જો એમ પણ કહેવામાં આવે કે આસ્રવ જ સસાર છે અને સસાર જ આસ્રવ છે, તો એ રીતે પણ આસ્રવમાં અનાદિ અનતતા સુઘટિત થઇ જાય છે. કારણકે તેની પ્રથમ ઉત્પત્તિ તો સંભવી શકતી નથી. જો આસ્રવને એકાન્તત. સાદિ અને સપર્યવસિત (સાન્ત) જ માનવામા આવે તો તે પરિસ્થિતિમાં તે આસ્રવ જ્યાં સુધી સસારીજીવમાં

घातः १। 'मोसं' मृषा-असत्यभाषणम् २। 'अदत्तं' नदत्तमदत्तं=परद्रव्यग्रहणम् ३। 'अबंभं' अब्रह्म-ब्रह्म=कामसेवनत्यागः न ब्रह्म अब्रह्म-अकुशलानुष्ठानं स्त्री पुंस सङ्गो मैथुनमित्यर्थः ४। 'परिग्गहं' परिग्रहः-परिगृह्यते=आदीयते इति परिग्रहः स च नवविधः—'धनं१, धान्यं२, क्षेत्रं३, वास्तुकं४, रूप्यं५, सुवर्णं६, कुप्य७, द्विपदः८, चतुष्पदश्चेति९। 'चेव' चैव चेति समुच्चयार्थः, एत्र शब्दोऽ-

की तरह कर्मबंधनसे मुक्त ही रहेगा। तथा सपर्यवसित माननेमें भी यही आपत्ति रहेगी। इस तरह संसारी जीवों के भी कर्मबंधन के अभाव का प्रसंग आकर प्राप्त होगा। इसलिये यही मानना चाहिये कि यह आस्रव-प्रवाह नाना जीवों की अपेक्षा अनादि अनंत है। अपर्यवसित यह पद मूल गाथा में नहीं है। फिर भी अनादि पद से उसका उपलक्षण किया गया है। प्रमाद के योग से जीव का घात होना यह हिंसा है। प्रमाद के योग से असत्य भाषण करना इसका नाम झूठ-मोस है। प्रमाद के योग से पर के द्रव्य का ग्रहण करना अदत्तादान चोरी है। काम सेवन करने का परित्याग करना इसका नाम ब्रह्म है। इस ब्रह्मका नहीं होना अब्रह्म है। अर्थात् मैथुन सेवन करने रूप अकुशलानुष्ठानमें प्रवृत्त रहना सो अब्रह्म है। जो ग्रहण किया जावे उसका नाम परिग्रह है, यह परिग्रह नौ प्रकारका है-धन१, धान्य२, क्षेत्र ३, वास्तु ४, रूप्य ५, सुवर्ण ६, कुप्य ७, द्विपद ८ और चतुष्पद ९। "च" यह शब्द यहां

ન થાય ત્યા સુધી તે જીવ સિદ્ધોની જેમ કર્મબંધનથી મુક્ત જ રહેશે. તથા સપર્યવસિત માનવામાં પણ તે જ મુશ્કેલી નડશે એ રીતે સંસારી જીવોમાં પણ કર્મબંધનના અભાવની સ્થિતિ આવી જશે તેથી એમ જ માનવું જોઈએ કે તે આસ્રવ પ્રવાહ નાના જીવોની અપેક્ષાએ અનાદિ અનંત છે. 'અપર્ય-વસિત' પદ મૂળ ગાથામાં નથી. છતા પણ અનાદિ પદથી તેનું ઉપલક્ષણ કરવામાં આવ્યુ છે. પ્રમાદના યોગથી જીવની હત્યા થવી તે હિંસા ગણાય છે. પ્રમાદના યોગથી અસત્ય બોલવું તેનુ નામ જૂઠ-મોસ છે. પ્રમાદના યોગથી પારકાનું દ્રવ્ય ગ્રહણ કરવુ તેને અદત્તાદાન-ચોરી કહેવાય છે કામ સેવન કરવાનો પરિત્યાગ કરવો તેનુ નામ બ્રહ્મ છે આ બ્રહ્મનો અભાવ હોવો તે અબ્રહ્મ છે. એટલે કે મૈથુન સેવન કરવા રૂપ અશુભ અનુષ્ઠાનમા પ્રવૃત્ત રહેવું તે અબ્રહ્મ કહેવાય છે પરિગ્રહ એટલે ગ્રહણ કરવું. તે પરિગ્રહ નવ પ્રકારનો છે—(૧) ધન, (૨) ધાન્ય, (૩) ક્ષેત્ર, (૪) વાસ્તુ, (૫) ચાંદી, (૬) સુવર્ણ, (૭) કુપ્ય, (૮) દ્વિપદ અને (૯) ચતુષ્પદ. "ચ" શબ્દ અહીં સમુચ્ચયાર્થક છે

वधारणार्थः। हिंसादिभेदतः पञ्चविधा एव आस्रवाः सन्तीत्यर्थः॥ अनेन दशाध्ययनस्य प्रश्नव्याकरणसूत्रस्याद्यानि पञ्चाध्ययनानि सूचितानि ॥सू०२॥

अथ प्रथमाध्ययने कतिद्वाराणि? इति द्वारनिरूपणार्थं श्री सुधर्मास्वामी जम्बूस्वामिनं प्रत्याह—'जारिसओ' इत्यादि।

मूलम्—जारिसओ१, जंनामा२, जहयकओ३, जारिसं फलं देइ४।
जेवि य करेंति पावा५, पाणवहं तं निसामेह ॥सू०३॥

टीका—स प्राणिवधरूप आस्रवः 'जारिसओ' यादृशकः=यत्स्वरूपः, यादृशं तस्य स्वरूपमस्ति, 'जं नामा' यन्नामा यानि=यत्संख्यकानि नामानि सन्ति यस्येति स यन्नामा भवति। 'जहयकओ' यथा च कृतः=प्राणिभिः यथा येन-मन्दतीव्रादिपरिणामेन कृतः=समाचरितः—आचरणविषयीकृतः। आचरितः सन् 'जारिसं' यादृशं नरकगमनादिकं फलं 'देइ' ददाति। 'जेवि य' येऽपि च 'पावा'

समुच्चयार्थक है और "एव" शब्द अवधारणार्थक है। इससे यह पुष्ट होता है कि आस्रव, हिंसा आदि के भेद से पांच ही प्रकार का है। कमती बढती नहीं है। इस कथन से सूत्रकार ने दस अध्ययनात्मक इस प्रश्नव्याकरण शास्त्र के आदि के पांच अध्ययन सूचित किये हैं ॥सू-२॥

अब सुधर्मास्वामी "प्रथम अध्ययन में कितने द्वार हैं" इस जंबू-स्वामी के प्रश्न का उत्तर देने के लिये द्वार निरूपण के निमित्त कहते हैं 'जारिसओ जं नामा' इत्यादि।

टीकार्थ—यह प्राणिवधरूप आस्रव (जारिसओ) जैसा है (जं नामा) जितने इसके नाम हैं (जहयकओ) प्राणियोंद्वारा यह जिन मन्द तीव्र आदि परिणामो से किया जाने पर (जारिसं फलं देइ) जिस प्रकार का उन्हें

છે, અને "एव" શબ્દ અવધારણાર્થક છે તેનાથી એ વાતને પુષ્ટિ મળે છે કે આસ્રવ, હિંસા આદિના ભેદથી પાચ જ પ્રકારના છે. વધારે કે ઓછા નથી. આ કથનથી સૂત્રકારે દશ અધ્યયનવાળા આ પ્રશ્નવ્યાકરણ શાસ્ત્રના શરૂઆતનાં પાચ અધ્યયન સૂચિત કર્યાં છે. ॥ સૂ ૨ ॥

હવે સુધર્માસ્વામી "પ્રથમ અધ્યયનમાં કેટલાં દ્વાર છે" એ પ્રકારના જંબૂસ્વામીના પ્રશ્નનો ઉત્તર દેવાને માટે દ્વારનિરૂપણને નિમિત્તે કહે છે— "जारिसओ जं नामा" ઈત્યાદિ.

ટીકાર્થ—આ પ્રાણીવધરૂપ આસ્રવ "जारिसओ" જેવો છે, "जं नामा" જેટલાં તેનાં નામ છે, "जहयकओ" પ્રાણીઓ દ્વારા તે મંદ, તીવ્ર આદિ પરિણામોથી કરાતા "जारिसं फलं देइ" જે પ્રકારનું તેમને નરકાદિરૂપ ફળ આપે છે, તથા

पापाः-पापकर्मशीलाः 'पाणवहं' प्राणवधं-प्राणाः सन्ति येषामिति ते प्राणाः= प्राणिनः 'अर्श आदित्वाद् च्, तेषां वधो=हिंसा प्राणवधस्तं जीवघातं 'करेंति' कुर्वन्ति 'तं' तत्=प्रथमास्रवद्वारं वक्ष्यमाणं 'निसामेह' निशामयत=शृणुत। हे जम्बूः! मम कथयतः शृणु इत्यर्थः, अत्रार्षत्वाद् बहुवचनम् ॥सू०३॥

सम्प्रति 'जारिसओ' यादृशः, इति द्वारं विवृण्वन् प्राणवधस्वरूपमाह— 'पाणवहो' इत्यादि।

मूलम्–पाणवहो नाम एसो जिणेहिं भणिओ–पावो१, चंडो२, रुद्दो३, खुद्दो४, साहसिओ५, अणारिओ६, णिग्घिणो७, णिस्संसो८, महब्भओ९, पइभओ१० अइभओ११, बीहणओ १२, तासणओ१३, अणज्जओ१४, उव्वेयणओ य, णिरवयक्खो १६, णिद्धमो१७, णिप्पिवासो१८, णिक्कलुणो१९, निरयवास निधणगमणो२०, मोहमहब्भयपयट्टओ२१, मरणवेमणस्सो२२, पढमं अहम्मं अव्वयस्स ॥ सू०४ ॥

नरकादिरूप फल देता है, तथा (जे वि य पाणवहं करेंति) जो पापी इस प्राणवध को करते हैं यह सब विषय इस प्रथम आस्रवद्वार में कहा जावेगा। सो (तं निसामेह) हे जंबू! तुम उसको सुनो।

भावर्थ—सुधर्मा स्वामी इस गाथा द्वारा यह समझा रहे हैं कि हे जंबू! अब इस हिंसारूप प्रथम आस्रवद्वार का स्वरूप, नाम और फल इन तीन द्वारोंसे इस हिंसारूप प्रथम आस्रवद्वारका निरूपण किया जायगा। तथा साथ २ में यह भी स्पष्ट कहा जायगा कि इस प्राणिवध को कौन जीव करते हैं। इस गाथा में "पाणवह" इस पद से प्राण जिनके होते हैं ऐसे प्राणी एकेन्द्रियादिक गृहीत हुए हैं। उनका जो वध है वह प्राणवध है॥ सू. ३ ॥

"जे विय पावा पाणवहं करेंति" જે પાપી આ પ્રાણવધ કરે છે, તે સમસ્ત વિષય આ પહેલા આસ્રવદ્વારમાં કહેવામાં આવશે. તો "सो तं निसामेह" હે જંબૂ! તું તે સાંભળ.

ભાવાર્થ—સુધર્માસ્વામી આ ગાથા દ્વારા એ સમજાવે છે કે હે જંબૂ! આ હિંસારૂપ પ્રથમ આસ્રવદ્વારનું સ્વરૂપ, નામ અને ફળ એ ત્રણેનું દ્વારો વડે નિરૂપણ કરવામાં આવશે તથા તેની સાથે એ પણ સ્પષ્ટ કરવામાં આવશે કે એ પ્રાણવધ કયો (પાપી) જીવ કરે છે. આ ગાથામાં "पाणवह" એ પદથી જેને પ્રાણ હોય છે તેવા એકેન્દ્રિયાદિક પ્રાણી ગ્રહણ કરાયેલ છે. તેમનો જે વધ છે તેને પ્રાણવધ કહે છે. ॥ સૂ ૩ ॥

टीका—'पाणवहो' प्राणवधो नाम 'एसो' एषः=वक्ष्यमाणः 'जिणेहिं' जिनैः 'भणिओ' भणितः=कथितः। स चायम्—'पावो' पापः—पापप्रकृतीनां बन्धकारणत्वात्। 'चंडो' चण्डः—क्रोधजनकत्वात् 'रुद्दो' रौद्रः—रौद्ररसप्रवर्तितत्वात्, 'खुद्दो' क्षुद्रः—क्षुद्रजनाचरितत्वात्, 'साहसिओ' साहसिकः—अप्रमीक्ष्यकारि जनप्रवर्त्तितत्वात्। 'अणारिओ' अनार्यः—अनार्यपुरुषैराचरितत्वात्। 'णिग्घिणो' निर्घृणः—न विद्यते घृणा=पापजुगुप्सा येषां ते निर्घृणाः=निर्दयाः, तैराचरितत्वात्। 'णिस्संसो' नृशंसः—क्रूरकर्माचरितत्वात्, 'महब्भओ' महाभयः—महाभयजनकत्वात्, 'पइभओ' प्रतिभयः—सकलप्राणिनां भयहेतुत्वात्,

---

अब सूत्रकार 'जारिसओ' इस द्वार का विवरण करते हुए प्राणवध के स्वरूप को कहते हैं—'पाणवहो नाम एसो' इत्यादि।

टीकार्थ—(एसो पाणवहो नाम) यह प्राणवध (जिणेहिं) जिनेन्द्र देवने (पावो) पाप प्रकृतियों के बंध का कारण होने से पापरूप १, (चंडो) क्रोध का जनक होने से, चंडरूप २, (रुद्दो) रौद्र रस से प्रवर्तित होने के कारण रौद्ररूप ३, (खुद्दो) क्षुद्र जनों द्वारा आचरित होने के कारण क्षुद्ररूप ४, (साहसिओ) अविचार शील मनुष्यों द्वारा किया हुआ होने के कारण साहसिक रूप ५, (अणारिओ) अनार्य जनों द्वारा विहित होने के कारण अनार्यरूप ६, (णिग्घिणो) दया विहीन हृदयवाले मनुष्यों द्वारा सेवित होने के कारण निर्घृणरूप ७, (णिस्संसो) क्रूर कर्मवाले जनों द्वारा किया हुआ होने के कारण नृशंसरूप८, (महब्भओ) महान् भयका जनक होने के कारण महा भय रूप९, (पइभओ) समस्त प्राणियोंको भयका हेतु—

હવે સૂત્રકાર "जारिसओ" આ દ્વારનું વર્ણન કરતાં પ્રાણવધનું સ્વરૂપ કહે છે—"पाणवहो नाम एसो" ઈત્યાદિ

ટીકાર્થ—"एसो पाणवहो नाम" આ પ્રાણવધ "जिणेहिं" જિનેન્દ્ર દેવે (૧) "पावो" પાપ પ્રકૃતિયોના બંધનું કારણ હોવાથી પાપરૂપ, (૨) "चंडो" ક્રોધને પેદા કરનાર હોવાથી ચંડરૂપ, (૩) "रुद्दो" રૌદ્ર રસથી પ્રવર્તિત હોવાને કારણે રૌદ્રરૂપ, (૪) "खुद्दो" ક્ષુદ્રજનો દ્વારા આચરિત હોવાથી ક્ષુદ્રરૂપ, (૫) "साहसिओ" અવિચારી મનુષ્યો દ્વારા કરાતો હોવાને કારણે સાહસિકરૂપ, (૬) "अणारिओ" અનાર્ય લોકો દ્વારા કરાતો હોવાને કારણે અનાર્યરૂપ, (૭) "णिग्घिणो" દયારહિત હૃદયવાળા લોકો દ્વારા કરાતો હોવાથી નિર્ઘૃણરૂપ, (૮) "णिस्संसो" ક્રૂર કર્મવાળા લોકો દ્વારા કરાતો હોવાને કારણે નૃશંસરૂપ, (૯) "महब्भओ" મહાન ભયનો જનક હોવાથી મહાભયરૂપ, (૧૦) "पइभओ" સમસ્ત પ્રાણીઓને ભયનો હેતુભૂત હોવાને કારણે પ્રતિભયરૂપ, (૧૧) "अइभओ"

'अइभओ' अतिभयः-मरणान्तभयजनकत्वात्, 'बीहणओ' भयानकः भयोत्पादकत्वात् 'तासणओ' त्रासनकः अकस्मात्क्षोभजनकत्वात्, 'अणज्जओ' अन्याय्यः-न्यायादनपेतः=युक्तः न्याय्य, न न्याय्यः-अन्याय्यः न्यायवर्जितत्वात्। 'उव्वेयणओ य' उद्वेजनकश्च=उद्वेगकरः-हृदयोद्वेगजनकत्वात्। चकारः समुच्चयार्थः। 'निरवयक्खो' निरपेक्षः-निर्गता अपेक्षा परहितविषया यस्य स तथा परप्राणत्राणवाञ्छावर्जितत्वात्, 'णिद्धम्मो' निर्धर्मः-श्रुतचारित्रधर्मवर्जितत्वात्, 'णिप्पिवासो' निष्पिपासः-प्राणिस्नेहरहितत्वात्, 'णिक्कलुणो' निष्करुणः-दयाभाववर्जितत्वात्, 'निरयवासनिधणगमणो' निरयवासनिधनगमनः, निरयवासः=नरकावासः, तत्र गमनमेव निधनं=पर्यवसानं अन्तिमफलं यस्य स निरयवासनिधनगमनः नरकप्रापकत्वात्।

भूत होने के कारण प्रतिभयरूप १०, (अइभओ) मरणान्तभयजनक होने से अतिभयरूप ११. (बीहणओ) भय के उत्पादक होने से भयकारकरूप १२, (तासणओ) अकस्मात् क्षोभ का कारण होने से त्रासनकरूप १३, (अणज्जओ) अवैध होने के कारण-अनीति रूप होने के कारण अन्यायरूप १४, (उव्वेयणओ) हृदयमें उद्वेग का जनक होने से उद्वेगकर्तृरूप १५, (निरवयक्खो) परप्राणी के प्राणों की रक्षा करने की वाञ्छा से रहित होने के कारण निरपेक्षरूप १६, (णिद्धम्मो) श्रुतचारित्र रूप धर्म से वर्जित होने के कारण निर्धर्मरूप १७, (णिप्पिवासो) प्राणियों के प्राणों के प्रति ममताभाव से रहित होने के कारण निष्पिपासारूप १८, (णिक्कलुणो) दयाभाव से रहित होने के कारण निष्करुणारूप १९, (निरयवासनिधणगमणो) तथा नरकगमन ही जिसका अन्तिम फल है ऐसा होने के कारण निरयवास निधनगमनरूप २०, (मोहमहब्भयपयट्टओ) यह

જાનના જોખમરૂપ હોવાથી અતિભયરૂપ, (૧૨) "बीहणओ" ભયને ઉત્પન્ન કરનાર હોવાથી ભયકારકરૂપ, (૧૩) "तासणओ" અચાનક ક્ષોભના કારણરૂપ હોવાથી ત્રાસનકરૂપ, (૧૪) "अणज्जओ" અવૈધ હોવાથી-અનીતિરૂપ હોવાને કારણે અન્યાયરૂપ, (૧૫) "उव्वेयणओ" હૃદયમાં ઉદ્વેગ પેદા કરનાર હોવાથી ઉદ્વેગકારક, (૧૬) "निरवयक्खो" પર પ્રાણીનાં પ્રાણોની રક્ષા કરવાની ઇચ્છાથી રહિત હોવાને કારણે નિરપેક્ષરૂપ, (૧૭) "णिद्धम्मो" શ્રુત-ચારિત્રરૂપ ધર્મથી રહિત હોવાને કારણે નિર્ધર્મરૂપ, (૧૮) "णिप्पिवासो" પ્રાણીઓનાં પ્રાણો તરફ સમતા ભાવથી રહિત હોવાને કારણે નિષ્પિપાસારૂપ, (૧૯) "णिक्कलुणो" દયાભાવથી રહિત હોવાથી નિષ્કરુણારૂપ, (૨૦) "निरयवासनिधणगमणो" તથા નરક ગમનજ જેનું અંતિમ ફળ છે, એવો હોવાને કારણે નિરયવાસ નિધનગમનરૂપ,

'मोहमहब्भयपयट्टओ' मोहमहाभयप्रवर्तकः, मोहः=अज्ञानम् स एव महाभयहेतुत्वात् महाभयं तस्य प्रवर्तको यः स मोहमहाभयप्रवर्तकः। 'मरणवेमणस्सो' मरणवैमनस्यः-मरणेन=मृत्युरूपकारणेन प्राणिनां वैमनस्यं=दैन्यं यस्मात् स मरणवैमनस्यः दीनमनः कारित्वात्। 'पढमं अहम्मं'= प्रथममधर्मम् अधर्मद्वारम् 'अव्वयस्स' अव्रतस्य=व्रतरहितस्य ॥ सू० ४ ॥

प्राणवध मोह-अज्ञान रूप महाभय का प्रवर्तक है २१, और (मरणवेमणस्सो) इस से प्राणियों में मृत्युरूप कारण को लेकर के दीनता आनी अतः यह मरण वैमनस्यरूप है २२, ऐसा (भणिओ) भगवान ने कहा है।

भावार्थ—इस सूत्र द्वारा प्राणिहिंसारूप आस्रव कैसा है यह बात सूत्रकार ने स्पष्ट की है, वे कहते हैं कि यह प्राणिहिंसारूप आस्रव पापप्रकृतियों के बंध का कारण है। कारण हिंसा करनेवाला जीव प्रमाद के योग से प्राणों का व्यपरोपण कर्त्ता होने से पापप्रकृतियों का ही बंधक होता है, अतः यह प्राणिहिंसा पापरूप है। पर की हिंसा करते समय आत्मा में क्रोध परिणति तीव्ररूप से रहती है, क्यों कि हिंसक जीव हिंस्य जीव जैसी २ अपनी रक्षा आदि के कारणकलाप जुटाता है उन्हें क्रोध के आवेश में तन्मय होकर नष्ट करता है-इसलिये यह प्राणहिंसा चंडरूप प्रकट किया गया है। इसी तरह रौद्र आदि रूपता भी इस में अपने २ उन २ भिन्न २ कारणों को लेकर घटित कर लेना चाहिये। इस प्रकार से ये प्रथम आस्रवरूप अधर्म द्वार है। इसमें प्राणिहिंसा का क्या स्वरूप है यह स्पष्ट किया गया है ॥सू०४॥

---

(२१) "मोहमहब्भयपयट्टओ" ते प्राणुवध, મોહ-અજ્ઞાનરૂપ મહાભયનો પ્રવર્તક છે, અને (૨૨) "मरणवेमणस्सो" તેનાથી પ્રાણીઓમા મૃત્યુરૂપ કારણને લીધે દીનતા આવે છે, તેથી તે મરણવૈમનસ્યરૂપ છે, એવું "भणिओ" ભગવાને ભાંખેલ છે.

ભાવાર્થ—આ સૂત્રદ્વારા પ્રાણીવધરૂપ આસ્રવ કેવો છે તે વાતનું સૂત્રકારે સ્પષ્ટીકરણ કર્યું છે તેઓ કહે છે કે તે પ્રાણીવધરૂપ આસ્રવ પાપ પ્રકૃતિયોના બંધનું કારણ છે કારણ કે હિંસા કરનાર જીવ પ્રમાદના યોગથી પ્રાણોનો નાશ કર્તા હોવાથી પાપપ્રકૃતિયોનો બંધક હોય છે, તેથી તે પ્રાણુવધ પાપરૂપ છે. પરની હિંસા કરતી વખતે આત્મામા ક્રોધપરિણુતિ તીવ્રરૂપે રહે છે, કારણ કે હિંસ્યજીવ જેમ જેમ પોતાના રક્ષણ માટે પ્રયત્ન કરે છે તેમ તેમ હિંસકજીવ ક્રોધના આવેશમાં તલ્લીન થઈને તેનો નાશ કરે છે, તે કારણે પ્રાણુવધને ચંડરૂપ કહેલ છે એ જ રીતે રૌદ્રરૂપતા આદિ તેના લક્ષણો પણ ભિન્ન ભિન્ન કારણોને લઈને ઘટાવી શકાય છે. આ રીતે તે પ્રથમ આસ્રવરૂપ અધર્મદ્વાર છે. તેમાં પ્રાણીવધનું કેવુ સ્વરૂપ છે તે સમજાવવામા આવ્યુ છે ॥ સૂ. ૪ ॥

पूर्वं प्राणिवधस्य स्वरूपमुक्तम् , इदानीं यन्नामेति प्रतिज्ञातानि तस्य नामान्याह—' तस्से 'त्यादि ।

मूलम्—तस्स य इमाणि नामाणि गोणाणि हुंति तं जहा—पाणवहे१, उम्मूलणा सरीरओ२, अवीसंभो३, हिंसविहिंसा४, तहा अकिच्चं च५, घायणा य६, मारणा य७, वहणा८, उद्दवणा९, निवायणा य१०, आरंभसमारंभो११, आउयकम्मस्सुवद्दवो भेयाणिट्ठवणगालणा य संवट्टगसंखेवो१२, मच्चू१३, असंजमो१४, कडगमद्दणं१५, वोरमणं१६, परभवसंकामकारओ१७, दुग्गतिप्पवाओ १८, पावकोवो य१९, पावलोभो य२०, छविच्छेओ२१, जीवियंतकरणो २२, भयंकरो२३, अणकरो२४, वज्जो२५, परितावण अण्हओ२६, विणासो२७, निज्जवणो२८, लुंपणा२९, गुणाणं विराहणा३० त्ति वि य तस्स एवमादीणि णामधेज्जाणि हुंति तीसं पाणवहस्स कलुसस्स कडुयफलदेसगाइं ॥ सू० ५ ॥

टीका—' तस्स य ' तस्य च प्राणवधस्य ' इमाणि ' इमानि अनुपदं वक्ष्यमाणानि ' नामाणि ' नामानि ' गोणाणि ' गौणानि—गुणनिष्पन्नानि ' हुंति ' भवन्ति 'तीसं' त्रिंशत् , 'तं जहा' तद्यथा—'पाणवह' प्राणवधः=जीवघातः१, ' उम्मूलणा सरीराओ ' उन्मूलना शरीरतः=वृक्षोत्पाटनमिव उन्मूलना जीवस्य

प्राणिहिंसाका इस प्रकार स्वरूप कहकर अब सूत्रकार इसके कितने नाम हैं यह प्रकट करते हैं—' तस्स य इमाणि ' इत्यादि ।

टीकार्थ—(तस्स गोणाणि इमाणि नामाणि तीसं हुंती) उस प्राणिहिंसाके ये गुणनिष्पन्न तीस नाम हैं (तं जहा) वे इस प्रकारसे हैं-(पाणवह) जीवघात१, (उम्मूलणा सरीराओ) शरीरसे वृक्षको उखाडनेकी तरह जीवकी उन्मूलना२,

---

પ્રાણીવધનું આ પ્રકારનું સ્વરૂપ સમજાવીને હવે સૂત્રકાર તેનાં કેટલાં નામ છે તે પ્રગટ કરે છે—" तस्स य इमाणि " ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—"तस्स गोणाणि इमाणि नामाणि तीसं हुंति" તે પ્રાણવધના ગુણ પ્રમાણે ત્રીસ નામ છે " तंजहा " તે ભેદ આ પ્રમાણે છે—(૧) " पाणवह " જીવહત્યા, (૨)"उम्मूलणा सरीराओ"વૃક્ષને ઉખાડવાની જેમ શરીરમાંથી જીવની ઉન્મૂલના,(૩)

शरीरादिति२। 'अवीसंभो' अविश्रम्भः-अविश्वासः-प्राणवधकारकेषु जीवानां विश्वासो नैव भवति इति हिंसाया अविश्रम्भकारणत्वादविश्रम्भव्यवहारः३, 'हिंसविहिंसा' हिंस्यविहिंसा हिंस्यानां=जीवानां विहिंसा प्राणवियोगः अजीवानां हिंसाया अभावात् 'हिंस्याना' मितिकथितम् ४। ननु अरूपिणः हिंसैव न सम्भवति इति हिंसविहिंसेत्युक्तावपि किमायातमितिचेन्न स्वरूपत एव प्राणवियोगरूपहिंसायागृह्यमाणत्वात्। उक्तञ्च—

"पञ्चेन्द्रियाणि त्रिविधं बलं च उच्छ्वासनिच्छ्वासमथान्यदायुः।
प्राणादशैते भगवद्भिरुक्तास्तेषां वियोजीकरणं तु हिंसा ॥ १ ॥"

'तहा अकिच्चं च' तथा अकृत्यं च-तथा तेनप्रकारेण अकृत्यम्-अकरणीयं भगवता निषिद्धत्वात् ५। 'घायणा य' घातना च-हननं ६। 'मारणा य' मारणा च-प्राणपीडनम् ७। 'वहणा' हननम् ८। 'उद्दवणा' उपद्रवणम् ९, 'निवायणा' निपातना-यस्य यावन्तः प्राणाः सन्ति तस्य तेभ्यः निपातनं=दूरीकरणम्, यद्वा-'तिवायणा' इति पाठे त्रिपातना-त्रयाणां मनोवाक्कायानां पातना=ध्वंसना १०, 'आरंभसमारंभो' आरभ्यन्ते=विनाश्यन्ते इति आरम्भाः=प्राणिनः तेषां समारम्भः =परितापः-"परितावकरो भवे समारंभो" इति वचनात्। आरम्भो वा कृष्यादि व्यापारः तेन समारम्भः=प्राणिपीडनम् ११। 'आउयकम्मस्सुवद्दवो भेयणिट्ठवण गालणा य संवट्टगसंखेवोत्ति' आयुःकर्मण उपद्रवः भेद निष्ठापनं गालना च संप्रवर्तकः संक्षेपः, आयुः कर्मण उपद्रवः=समुच्छेदः, भेदः=विनाशः, निष्ठापनं= समापनम्, गालना=निस्सारणम्। संवर्तकः-सर्वबलसामर्थ्यादीना संकोचनम्, संक्षेपः-अभावकरणम् १२। 'मच्चू' मृत्युः=मरणम् १३, 'असंजमो' असंयमः-न

(अवीसंभो) अविश्रंभ३, (हिंसविहिंसा) हिंस्यविहिंसा४, तथा (अकिच्चं) अकृत्य५, (घायणा) घातना६, (मारणा) मारण७, (वाहणा) हनन८, (उद्दवणा) उपद्रवणा९, (निवायणा) निपातना१०, (आरंभसमारंभो) आरंभ-समारंभ ११, (आउयकम्मस्सुवद्दवो भेयणिट्ठवणगालणा य संवट्टग संखेवो) आयुकर्म का उपद्रव, भेद, निष्ठापन, गालना, संप्रवर्त्तक, संक्षेप१२, (मच्चू) मृत्यु१३, (असंजमो) असंजम१४, (कडगमद्दणं)

"अवीसंभो" અવિશ્રંભ, (४) "हिंसविहिंसा" હિંસ્યવિહિંસા, (૫) "अकिच्च" અકૃત્ય, (૬) "घायणा" ઘાતના, (૭) "मारणा" મારણ, (૮) "वाहणा" હનન, (૯) "उद्दवणा" ઉપદ્રવણા, (૧૦) "निवायणा" નિપાતના, (૧૧) "आरंभसमारंभो" આરંભસમારંભ, (૧૨) "आउयकम्मस्सुवद्दवो भेयणिट्ठवणगालणा य संवट्टगसंखेवो" આયુકર્મનો ઉપદ્રવ, ભેદ, નિષ્ઠાપન, ગાલના, સંપ્રવર્ત્તક, સંક્ષેપ, (૧૩) "मच्चू" મૃત્યુ, (૧૪) "असजमो" અસંજમ, (૧૫) "कडगमद्दणं" કટક

संयमोऽसंयमः सावद्यानुष्ठानम् १४। 'कडगमद्दणं' कटकमर्दनं-कटकेन=सैन्येन किलिञ्जेन वा आक्रम्य मर्दनं, प्राणवधकारणत्वादौपचारिकः प्राणवधे कटकमर्दनं व्यवहारः १५। 'वोरमणं' व्युपरमणं जीवस्य प्राणतो वियोजीकरणम् १६। 'परभवसंकामकारओ' परभवसंक्रमकारकः=नरकनिगोदादि चतुर्गतिसंसार पुनः पुनः परिभ्रमणहेतुत्वात् १७। 'दुग्गइप्पवाओ' दुर्गतिप्रपातः-दुर्गतौ नरकादि दुष्टगतौ प्रपातयतीति दुर्गतिप्रपातः=नरकनिगोदादि कुगति दायकः १८। 'पावकोवो य' पापकोपश्च=पापं कोपयति=प्रवर्धयति इति पापकोपः, सकलपापोत्पादकत्वात्, यद्वा-पापस्य कोपकार्यत्वात्पापकोपः क्रोधस्वरूप इत्यर्थः १९, 'पावलोभो य' पापलोभश्च-पापं लुभ्यति=धातुनामनेकार्थत्वात् संश्लिष्यति यस्मात् स पापलोभः= पापागमनद्वारलक्षणः २०। 'छविच्छेओ' छविच्छेदः-छवि =शरीरं तस्य छेदः= कर्तनमिति छविच्छेदः=शरीरकर्तनम्। यद्वा-शरीरावयवच्छेदनम् २१।

'जीवियंतकरणो' जीवितान्तकरण =प्राणोच्छेदकरः २२। 'भयंकरो=भयदायकः २३। 'अणकरो' ऋणकरः-ऋणं=अनेकेष्वपि भवेषु नानाविधदुःखभोगैरपि दुरपनेयस्वरूपं करोतीति ऋणकरः २४। 'वज्जो' वर्ज्य =त्याज्यः। अथवा वज्रमिव गुरुत्वात्, तत्कारि प्राणिनामधःपातकत्वाद् वा वज्रम् २५। 'परितावण अण्हओ' परितापनाश्रवः=परितापनारूप आस्रवः। भव भव सन्तापकत्वात् २६, 'विणासो' विनाशः-प्राणविध्वंसनरूपः २७। 'निज्जवणो' निर्यापना=निर्यापयति= निर्गमयति प्राणिनः-प्राणानिति निर्यापना=प्राणनिस्सारणम् २८। 'लुंपणा' लोपना-प्राणिप्राणविगमनम् २९। 'गुणाणं विराहणा' गुणानां विराधना=श्रुत-

---

कटकमर्दन१५, (वोरमणं) व्युपरमण१६, (परभवसंकामकारओ) परभवसंक्रमकारक१७, (दुग्गइप्पवाओ) दुर्गतिप्रपात१८, (पावकोवो) पापकोप१९, (पावलोभो) पापलोभ२०, (छविच्छेओ) शरीरका नाश२१, (जीवियंतकरणो) जीवितान्तकरण२२, (भयंकरो) भयंकर२३, (अणकरो) ऋणकर२४, (वज्जो) वर्ज्य२५, (परितावण अण्हओ) परितापनाश्रव२६, (विणासो) विनाश२७, (निज्जवणो) निर्यापना२८, (लुंपणा) लोपना२९, (गुणाणं विराहणा)

मर्दन, (१६) "वोरमणं" व्युपरमण, (१७) "परभवसंकामकारओ" પરાભવ સંક્રમકારક, (१८) 'दुग्गइप्पवाओ' દુર્ગતિ પ્રપાત, (१९) 'पावकोवो" પાપકોપ, (२०) 'पावलोभो" પાપલોભ, (२१) "छविच्छेओ" છવિચ્છેદ, (२२) "जीवियंतकरणो" જીવિતાન્તકરણ, (२३) "भयंकरो" ભયંકર, (२४) "अणकरो" ઋણકર, (२५) "वज्जो" વર્જ્ય, (२६) "परितावण अण्हओ' પરિતાપનાશ્રવ, (२७) "विणासो' વિનાશ, (२८) "निज्जवणो" નિર્યાપના, (२९) "लुंपणा" લોપના,

चारित्रगुणानां भञ्जना ३०। 'ति त्रि य' इत्यपि च=' इति ' शब्दः समाप्तिसूचकः अपि चेति समुच्चयार्थः। 'तस्स' तस्य—प्राणिवधस्य ' एवमाईणि ' एवमादीनि= उक्तरूपाणि 'तीसं' त्रिंशत् 'नामधेज्जाणि' नामधेयानि ' पाणवहस्स ' प्राणवधस्य, 'कलुसस्स' कलुषस्य=पापरूपस्य 'कडुयफलदेसगाइं' कटुकफलदेशकानि=अशोभन-परिणामबोधकानि 'हुंति' भवन्ति। एतावता ' जं नामा ' यन्नामेति, द्वितीयं प्राणवधनामद्वारमुक्तम् ॥सू०५॥

गुणोंकी विराधना ३०,। (एवमादीणि) इत्यादिक ये (तीसं) तीस, (नामधेज्जाइं) नाम प्राणिहिंसाके (हुंति) हैं। यह प्राणिहिंसा (कलुसस्स) पापरूप है। उसके ये तीस नाम (कडुयफलदेसगाइं) अशुभ परिणाम के ही बोधक हैं। इस तरह यह 'जं नामा' इस नामका द्वितीय प्राणिहिंसा द्वार कहा है।

भावार्थ—सूत्रकार ने इस सूत्रद्वारा प्राणिहिंसाके गुणानुसार कितने नाम हैं अथवा हो सकते हैं यह कहा है। इस प्राणिहिंसाका प्रथम नाम प्राणिहिंसा है, प्राणिहिंसा का अर्थ पांच इन्द्रिय, तीनबल, आयु और श्वासोच्छ्वास इन संभवित दश प्राणों का वियोग करना। एकेन्द्रिय जीवके४ चार प्राण, दो इन्द्रिय जीवके ६छ प्राण, तीन इन्द्रियवाले जीवके७ सात प्राण, चौ इन्द्रिय जीवके८ आठ प्राण, असंज्ञीपंचेन्द्रिय जीवके९नव प्राण और संज्ञीपंचेन्द्रिय जीवके १०दस प्राण होते हैं। इस तरह भिन्न २ जीवोंमें संभवित इन प्राणोंका प्रमादके योगसे वियोग करना इसका नाम प्राणिहिंसा है, यह प्रथम भेद हुआ१। प्राणिहिंसाका यह पर्यायवाची शब्दहै।

અને (૩૦) "गुणाण विराहणा" ગુણોની વિરાધના, "एवमादीणि" ઈત્યાદિ. "तीसं" ત્રીસ "नामधेज्जाइं" નામ પ્રાણુવધના "हुंति" છે તે પ્રાણુવધ "कलुसस्स" પાપરૂપ છે. તેના આ ત્રીસ નામ "कडुयफलदेसगाइं" અશુભ પરિણામના જ બોધક છે. આ પ્રકારનું આ "जंनामा" એ નામનુ દ્વિતીય પ્રાણુવધ દ્વાર ભાખેલ છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્રદ્વારા પ્રાણુવધના ગુણાનુસાર કેટલાં નામ છે અથવા હોઈ શકે છે તે બતાવ્યું છે. તે પ્રાણુવધનું પહેલુ નામ પ્રાણુવધ છે પ્રાણુવધનો અર્થ આ પ્રમાણે છે—પાંચ ઇન્દ્રિય, ત્રણ બળ, આયુ અને શ્વાસોચ્છ્વાસ એ સભવિત દશ પ્રાણોનો વિયોગ કરવો તેને પ્રાણુવધ કહે છે એકેન્દ્રિય જીવને ચાર પ્રાણુ, દ્વિઇન્દ્રિય જીવને છ પ્રાણુ, ત્રિઇન્દ્રિય જીવને સાત પ્રાણુ, ચતુરિન્દ્રિય જીવને આઠ પ્રાણુ, અસંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય જીવને નવ પ્રાણુ અને સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય જીવને દસ પ્રાણુ હોય છે. આ રીતે જુદા જુદા જીવોમાં સંભવિત એ પ્રાણોનો પ્રમાદના યોગથી વિયોગ કરવો તેને પ્રાણુવધ કહે છે. આ પહેલો ભેદ થયો. પ્રાણુવધનો તે પર્યાયવાચી શબ્દ છે. પ્રથમ પ્રાણુવધ તે

प्रथम प्राणिहिंसा यह सामान्य अर्थका बोधक होनेसे सामान्य शब्द है और इसका पर्यायवाचीरूप प्राणिहिंसा विशेष अर्थका बोधकहोने से विशेष शब्द है। इस तरह से गुण निष्पन्नता इन सब नामों में जानना चाहिये। इसका खुलासा इस प्रकार से है-जमीन से जैसा वृक्ष उखाड़ देते हैं उसी तरहसे शरीर से जीवका निकाल देना यह जीवकी शरीरसे उन्मूलना (उखाडना) है। इस उन्मूलनामें जीवकी पर्यायका विनाश होना है, और जीव को कष्ट होता है अतः यह प्राणिहिंसा है। यह दूसरा भेद २। जो जीव हिंसक, निर्दयी, हत्यारे होते हैं उनमें जीवों का विश्वास नहीं होता है इसलिये हिंसाको अविश्वास का कारण होने से उसमें अविश्रंभ का व्यवहार करदिया गया है। यह तीसरा भेद ३। हिंस्य विहिंसा-अजीवों की हिंसा नहीं होती है-हिंसा तो जीवोंकी होती है इसलिये यहां पर हिंस्य पद से जिन जीवों की हिंसा होती है वे ग्रहण किये गये हैं। इन हिंस्य जीवों के प्राणोंका वियोग इस प्राणिहिंसा में होता है इसलिये इसे हिंस्यविहिंसा कहा गया है। यह चौथा भेद ४।

प्रश्न—जीव तो अरूपी है-जो अरूपी होता है उसकी हिंसा होती नहीं है फिर हिंस्यविहिंसाका व्यपदेश प्राणि हिंसामें क्यों किया ?

સામાન્ય અર્થનો બોધક હોવાથી સામાન્ય શબ્દ છે અને તેનો પર્યાયવાચી પ્રાણવધ શબ્દ વિશેષ અર્થનો બોધક હોવાથી વિશેષ શબ્દ છે. આ રીતે એ બધાં નામોમાં ગુણયુકતતા સમજી લેવી. તેનું સ્પષ્ટીકરણ આ પ્રમાણે છે— જમીનમાંથી જેમ વૃક્ષને ઉખાડી નાખવામાં આવે છે એ જ પ્રમાણે શરીરમાંથી જીવને કાઢી નાખવો તે જીવની શરીરથી ઉન્મૂલના કરી કહેવાય છે તે ઉન્મૂલનામાં જીવની પર્યાયનો વિનાશ થાય છે, અને જીવને કષ્ટ થાય છે, તેથી તે પ્રાણવધ ગણાય છે આ બીજો ભેદ થયો. જે જીવ હિંસક, નિર્દય, હત્યારા હોય છે, તેમનામાં જીવોને વિશ્વાસ હોતો નથી, તે કારણે હિંસાને અવિશ્વાસનું કારણ ગણીને તેમાં અવિશ્રંભનો વ્યવહાર કર્યો છે આ ત્રીજો ભેદ થયો. હિંસ્ય-વિહિંસા—અજીવોની હિંસા થતી નથી. હિંસા તો જીવોની જ થાય છે, તેથી અહીં હિંસ્ય એટલે જે જીવોની હિંસા થાય છે તે જીવો એ પ્રમાણેનો અર્થ ગ્રહણ કરવામા આવ્યો છે તે હિંસ્ય જીવોના પ્રાણોનો વિયોગ તે પ્રાણવધમાં થાય છે તેથી તેને હિંસ્યવિહિંસા કહેવામાં આવેલ છે આ ચોથો ભેદ થયો.

પ્રશ્ન—જીવ તો અરૂપી છે-જે અરૂપી હોય છે તેની હિંસા થતી નથી. તો પછી હિંસ્યવિહિંસાનું આરોપણ પ્રાણવધમાં કેમ કર્યું છે?

उत्तर—शंका ठीक है यह तो हम भी कहते हैं कि जीवरूप अरूपी पदार्थ की हिंसा नहीं होती है, परन्तु यहां हिंसा से तात्पर्य संभवित प्राणों का वियोग करना लिया गया है। पांच इन्द्रिय—कर्ण, चक्षु, घ्राण, रसना, स्पर्शन, ३ बल—मनबल, वचनबल, कायबल, आयु एवं श्वासोच्छ्वास, इन प्राणों का जिस प्रवृत्ति से वियोग होता हो उसका नाम हिंसा है ४। तथा—अकृत्य—सिद्धान्तों में जीवों की हिंसा करने का प्रभु ने निषेध किया है, क्यों कि यह कृत्य, अकृत्य—अकरणीय है, इसलिये उस रूप से यह अकृत्य होने के कारक प्राणिहिंसाको अकृत्य कहा हैं यह पांचवां भेद है ५। घातना—अर्थात्—घात करना छठा भेद है ६। प्राणों का वियोग करना केवल यही हिंसा नहीं है किन्तु जिन कृत्यो से प्राणियों के प्राणोंको पीडा पहुँचती हो ऐसे कृत्य भी हिंसा ही है, "यह बात मारणा पद से सूत्रकार ने प्रदर्शित की है। सातमा भेद ७। हनन—वध करना, यह आठवां भेद ८। उपद्रवण—विनाश करना, यह नौवां भेद ९। निपातना—जिस जीव के जितने प्राण होते हैं उन जीव के उतने प्राणों का विनाश इस प्राणवध द्वारा होता है इसलिये इसे निपातना शब्द से व्यवहृत किया गया है। अथवा इस पद की जगह

ઉત્તર—શંકા બરાબર છે એ તો અમે પણ કહીએ છીએ કે જીવરૂપ અરૂપ પદાર્થની હિંસા થતી નથી પણ અહીં સંભવિત પ્રાણોનો વિયોગ કરવો, એવુ હિંસાનુ તાત્પર્ય લેવામા આવ્યું છે પાંચ ઇન્દ્રિય—કાન, નેત્ર, નાસિકા, રસના અને સ્પર્શેન્દ્રિય, ત્રણ બળ—મનબળ, વચનબળ, કાયબળ આયુ અને શ્વાસોચ્છવાસ એ પ્રાણોનો જે પ્રવૃત્તિઓથી વિયોગ થાય તેનું નામ હિંસા છે.

તથા અકૃત્ય—સિદ્ધાંતોમાં પ્રભુએ જીવોની હિંસા કરવાનો નિષેધ કર્યો છે, કારણ કે તે કૃત્ય ન કરવા યોગ્ય છે, તેથી તે રીતે તે અકૃત્ય હોવાથી પ્રાણવધને અકૃત્ય કહ્યો છે આ પાંચમો ભેદ થયો.

ઘાતના એટલે કે ઘાત કરવો તે છઠ્ઠો ભેદ છે પ્રાણોનો વિયોગ કરવો તે જ કેવળ હિંસા નથી, પણ જે કૃત્યોથી પ્રાણીઓના પ્રાણોને પીડા પહોંચે છે એવા કૃત્યો પણ હિંસા જ છે તે વાત 'મારણા' પદથી સૂત્રકારે પ્રગટ કરી છે આ સાતમો ભેદ થયો. હનન—વધ કરવો તે આઠમો ભેદ છે. ઉપદ્રવણ વિનાશ કરવો તે નવમો ભેદ છે. નિપાતના—જે જીવોને જેટલાં પ્રાણ હોય છે તેટલા પ્રાણોનો વિનાશ આ પ્રાણવધ દ્વારા થાય છે તેને નિપાતના શબ્દથી ગૃહીત કરાયેલ છે. અથવા આ પદની જગ્યાએ "तिवायणा" પદ

"तिवायणा" ऐसा पद जब माना जावेगा तब इसकी छाया त्रिपातना होगी और इसका अर्थ तब मन वचन और काय, इनका ध्वंस करना ऐसा होगा, दशमा भेद १०। आरंभ समारंभ–आरंभ शब्द से जिनका विनाश किया जावे ऐसे, अर्थात् विनाश किया जाता है जिनका वे हैं आरंभ अर्थात् प्राणी उनका जो समारंभ–परिताप वह है आरंभ समारंभ। प्राणिहिंसामें जीवोंको परिताप होता है यह बात स्पष्ट और अनुभवगम्य है। अथवा–कृष्णादि कर्म का नाम आरंभ है, इस आरंभ से जीवोंके प्राणोंका पीड़न होताहै। यह ग्यारहवां भेद ११। इसी तरह जीवकी आयुका उपद्रव-समुच्छेद, भेद-विनाश, निष्ठापन–समासकरना, गालना–निकालना, संवर्तक–समस्तबल, सामर्थ्य आदि का संकोच करना, संक्षेप इनका अभाव करना, यह बारहवां भेद १२। मृत्यु–मरण तेरहवां भेद है १३। इन्द्रियसंयम और प्राणसंयम धारण करने से प्राणीयों की रक्षा होती रहती है। असंयमी जीव से यह रक्षा बनती नहीं है, अतः असंयम को प्राणिहिंसाका अंग कहा गया है। इसी अभिप्राय से यहां उसे उसका पर्यायवाची नाम कहा है। सावद्य अनुष्ठान का नाम ही तो असंयम है। यह चौदहवां भेद १४। कटक मर्दन का अर्थ है–कटक–

માની લેવામાં આવે તો તેની છાયા "त्रिपातना" થશે અને ત્યારે તેનો અર્થ મન, વચન અને કાયનો ધ્વંસ કરવો, એ પ્રમાણે થશે. આ દસમો ભેદ છે આરંભસમારંભ–આરંભ શબ્દથી જેમનો વિનાશ કરાય એવાં અથવા વિનાશ કરાય છે જેમનો તેવા પ્રાણી એવો અર્થ થાય છે. તેમનો જે સમારંભ પરિતાપ તેને આરંભ સમારંભ કહે છે પ્રાણવધમાં જીવોને પરિતાપ થાય છે, તે વાત સ્પષ્ટ તથા અનુભવગમ્ય છે. અથવા ખેતી આદિ કર્મનું નામ પણ આરંભ છે. તે આરંભથી જીવોનાં પ્રાણોને પીડા પહોંચે છે આ અગિયારમો ભેદ છે. એજ પ્રમાણે જીવના આયુનો ઉપદ્રવ–સમુચ્છેદ, ભેદ–વિનાશ, નિષ્ઠાપન–અંત, ગાલના–નિકાલવું, સંવર્તક–સમસ્ત બળ સામર્થ્ય આદિનો સંકોચ કરવો, સંક્ષેપ-તેમનો અભાવ કરવો, તે બારમો ભેદ છે. મૃત્યુ–મરણ તેરમો ભેદ છે ઇન્દ્રિયસંયમ અને પ્રાણસંયમ ધારણ કરવાથી પ્રાણીઓની રક્ષા થયા કરે છે અસંયમી જીવથી તે રક્ષા થઈ શકતી નથી, તેથી અસંયમને પ્રાણવધનું અંગ કહેલ છે. તે કારણે જ તેને અહી પર્યાયવાચી નામ ગણેલ છે સાવદ્યઅનુષ્ઠાનનું નામ જ અસંયમ છે આ ચૌદમો ભેદ છે. કટકમર્દન શબ્દનો અર્થ આ [illegible] છે.–કટક–સૈન્ય દ્વારા હિંસાના

सैन्य द्वारा दूसरों पर हिंसा के अभिप्राय से आक्रमण करना। यह सैन्यमर्दन प्राणिहिंसाका कारण होता है फिर भी इसे जो प्राणिहिंसा रूप कहा है वह उपचार से ही कहा गया जानना चाहिये, यह पन्द्रहवां भेद १५। जीव का प्राण से वियुक्त करना यह व्युपरमण है। यह सोलहवां भेद १६। प्राणिहिंसाको जो परभव संक्रम कारक कहा है उसका भाव यह है कि यह प्राणिहिंसा नरकनिगोदादि चतुर्गतिरूप संसारमें परिभ्रमण का कारण बनता है। यह सत्रहवां भेद हुआ १७। इस प्राणिहिंसा के प्रभाव से जीव नरकादि दुर्गतियों में ही जाकर जन्म लेता है इसलिये यह दुर्गति प्रपातरूप कहा है, यह अठारवां भेद १८। सकल पापोंका यह कोपक-उत्पादक है, इसलिये इसे पापकोप कहा गया है। अथवा पाप, कोप का कार्य होता है इस अभिप्राय से यह प्राणिहिंसा क्रोध स्वरूप है ऐसा भी कहा जा सकता है। यह उन्नीसवां भेद १९। इस प्राणिहिंसा को करने वाला व्यक्ति केवल पाप का ही आलिंगन करता है-पापकर्म को बांधता है, इसलिये प्राणवध पापलोभरूप है। यह बीसवां भेद २०। छविच्छेद-छवि का अर्थ शरीर है, इसका छेदना छविच्छेद है। प्राणवध में शरीर अथवा शरीर के अवयवों का छेदन होता ही है, इसलिये इसे

ઉદ્દેશથી બીજા ઉપર આક્રમણ કરવું. આ સૈન્યમર્દન પ્રાણિવધના કારણરૂપ હોય છે. છતા પણ તેને જે પ્રાણુવધરૂપ કહેલ છે તે ઔપચારિક રીતે જ કહેલ છે એમ સમજી લેવું. આ પંદરમો ભેદ થયો.

જીવને પ્રાણુથી વિયુક્ત—રહિત કરવો તેને વ્યુપરમણ કહે છે, આ સોળમો ભેદ છે પ્રાણુવધને જે પરભવ સંક્રમકારક કહેલ છે તેનુ તાત્પર્ય એ છે કે તે પ્રાણુવધ નરકનિગોદાદિ ચાર ગતિરૂપ સસારમા પરિભ્રમણ કરાવનાર છે. આ સત્તરમો ભેદ છે. આ પ્રાણુવધના પ્રભાવથી જીવ નરકાદિ દુર્ગતિયોમાં જ જઈને જન્મ લે છે, તેથી તેને દુર્ગતિ પ્રપાતરૂપ કહેલ છે આ અઢારમો ભેદ છે સકળ પાપોનો તે કોપક-ઉત્પાદક છે, તે કારણે તેને પાપકોપરૂપે દર્શાવ્યો છે અથવા પાપ, કોપનું કાર્ય હોય છે તે કારણે આ પ્રાણુવધ કોપસ્વરૂપ છે, એમ પણ કહી શકાય છે આ ઓગણીસમો ભેદ છે એ પ્રાણુવધ કરનાર વ્યક્તિ કેવળ પાપનુ જ આલિંગન કરે છે-પાપકર્મો બાંધે છે, તે કારણે તે પ્રાણુવધ પાપલોભરૂપ છે. આ વીસમો ભેદ છે. છવિચ્છેદ-છવિ એટલે શરીર, તેનું છેદન તે છવિચ્છેદ કહેવાય છે પ્રાણુવધમાં શરીર અથવા શરીરના અવયવોનુ છેદન થાય છેજ તેથી તેને છવિચ્છેદરૂપ કહેલ છે. આ એકવીસમો ભેદ છે પ્રાણુવધ જીવનનો

छविच्छेदरूप कहा है। यह इक्कीसवां भेद २१। प्राणवध जीवन का अंत-कर-विनाशक होने से जीवितान्तकरणरूप कहा गया है। यह बावीसवां भेद २२। प्राणवध के अवसर उपस्थित होने पर जीवों को भय होता है अतः इस भय का कारक होने से प्राणवध भयंकर है, ऐसा कहा गया है। यह तेवीसवां भेद २३। इस प्राणवध को करने वाला प्राणी अनेक भवों में भी नाना प्रकार के दुःखों को भोगता रहता है फिर भी इस से उद्भूत पापरूप ऋण का वह शोधन नहीं कर पाता है, इसलिये इसे ऋणकररूप कहा गया है। यह चौवीसवां भेद २४। विवेकी जो व्यक्ति होते हैं वे इस प्राणवध से सदा दूर रहते हैं इसलिये इसे वर्ज्य-छोड़ने योग्य-कहा है। अथवा "वज्ज" की संस्कृत छाया 'वज्र' भी हो सकती है। वज्र जिस प्रकार गुरु (भारी) होता है, उसी प्रकार यह प्राणवध भी अपन को-आचरित करने वाले प्राणी को अधःपात नरक निगोद आदि में पतन का कारण होने से वज्र के जैसा भारी होता है। यह पच्चीसवां भेद २५। भव भव में प्राणी इसके करने से सन्तापरूप परितापना को पाता है इसलिये इसे परितापनारूप आस्रव कहा गया है। यह छव्वीसवां भेद २६। विनाश प्राण का विध्वंसन करना। यह सत्ता-इसवां भेद २७। निर्यापना प्राणियों के प्राणों को निकालना। यह अट्ठाइ-सवां भेद २८। लोपना-प्राणियों के प्राणों का लोप करना-दूर करना।

અંતકર-વિનાશક હોવાથી જીવિતાન્તકરણરૂપ બતાવ્યો છે. આ બાવીસમો ભેદ છે પ્રાણવધનો પ્રસંગ ઉપસ્થિત થતાં જીવોને ભય થાય છે, તેથી તે ભયકારક હોવાથી તેને ભયંકર કહેલ છે. આ તેવીસમો ભેદ છે એ પ્રાણવધ કરનાર પ્રાણી અનેક ભવોમા અનેક પ્રકારનાં દુઃખો ભોગવ્યા કરે છે, છતાં પણ તેના કારણે ઉત્પાદિત પાપરૂપ ઋણને તે ફેડી શકતું નથી. તે કારણે તેને ઋણકર નામ આપ્યુ છે આ ચોવીસમો ભેદ છે વિવેકી વ્યક્તિ એ પ્રાણવધથી સદા દૂર રહે છે, તેથી તેને વર્જ્ય-છોડવા લાયક કહેલ છે. અથવા "वज्ज"ની સંસ્કૃત છાયા "वज्र" પણ થઈ શકે છે વજ્ર જે રીતે મોટું હોય છે તે પ્રકારે પ્રાણવધ પણ, તે કરનારે પ્રાણીને અધઃપાત-નરક નિગોદ આદિમાં પતન થવાનું કારણ હોવાથી વજ્રના જેવો ભારે હોય છે. આ પચીશમો ભેદ થયો. જે કરવાથી વ્યક્તિને દરેક ભવમાં સંતાપરૂપ પરિતાપના-પીડા સહન કરવી પડે છે, તેથી તેને પરિતાપનારૂપ આસ્રવ કહેલ છે આ છવીસમો ભેદ છે વિનાશ-પ્રાણનો વિધ્વંસ કરવો, તે સત્યાવીસમો ભેદ છે નિર્યાપના-પ્રાણીઓના પ્રાણોને નિકાલવા, તે અઠ્યાવીસમો ભેદ છે. લોપના-પ્રાણીઓના પ્રાણોને લોપવા-દૂર

अथेदानीं 'जहयकओ' यथाकृतः इति तृतीयं द्वारमाचष्टे 'तं च पुणे'त्यादि।

मूलम्—तं च पुण करेंति केइ पावा असंजया अविरया अणिहुयपरिणामदुप्पओगा पाणवहं भयकरं बहुविहं बहुप्पगारं परदुक्खुप्पायणपसत्ता इमेहिं तसथावरेहिं जीवेहिं पडिणिविट्ठा किं ते? पाठीण-तिमि-तिमिंगिल-अणेगझस-विविहजाइमंडुक्क-दुविह-कच्छभ-णक्क-मगरदुविह-गाह-दिलि-वेढय-मदुय-सीमागार-पुलुय-सुंसुमार बहुप्पगारा जलयरविहाणा कए य एवमाई॥सू०६॥

टीका—तं च=प्राणिवधं 'पुण' पुनः 'केइ' केऽपि केचिदेवेत्याशयः 'पावा' पापाः=पापप्रकृतयः 'असंजया' असंयताः=असमाहितेन्द्रियाः 'अविरया' अविरता=पापकर्मनिवृत्तिरहिताः, 'अणिहुयपरिणामदुप्पओगा' अनिभृतपरिणामदुष्प्रयोगा=अनिभृतः=उपशमवर्जितः परिणामः=अध्यवसायो येषां ते अनिभृतपरिणामाः, दुष्टाः प्रयोगाः=इन्द्रियनोइन्द्रियव्यापाराः येषां ते दुष्प्रयोगाः, अनिभृतपरिणामाश्च ते दुष्प्रयोगा इति अनिभृत् परिणामदुष्प्रयोगाः, 'परदुक्खुप्पायणपसत्ता' पर-

---

यह उन्तीसवां भेद है २९ और गुणविराधना-श्रुतचारित्रगुणों का भङ्ग करना यह तीसवाँ भेद है ३० इस तरह ये प्राणवध के ३० पर्यायवाची शब्द गुणनिष्पन्न प्रकट किये गये हैं ॥सू०-५॥

अब सूत्रकार "जह य कओ" इस तृतीय द्वार के विषय में कहते हैं—'तं च पुण' इत्यादि।

टीकार्थ-(केइ पावा) कितनेक पापप्रकृतिवाले (असंजया) असमाहित इन्द्रियवाले, (अविरया) अविरतिसंपन्न, (अणिहुयपरिणामदुप्पओगा) उपशम रहित परिणामों वाले, और इन्द्रिय एवं मन के दुष्टव्यापार वाले (परदुक्खुप्पायणपसत्ता) पर प्राणी के लिये दुःखोत्पादन में परायण

કરવા, તે ઓગણત્રીસમો ભેદ છે અને ગુણવિરાધના-શ્રુતચારિત્ર ગુણોનો ભંગ કરવો, તે ત્રીસમો ભેદ છે. આ રીતે પ્રાણવધના ૩૦ પર્યાયવાચી શબ્દ તેમના ગુણ સહિત પ્રગટ કરવામા આવ્યા છે ॥ સૂ ૫ ॥

હવે સૂત્રકાર "जह य कओ" એ તૃતીય દ્વારનું વર્ણન કરે છે—"तं च पुण" ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—"केइ पावा" કેટલાક પાપપ્રકૃતિવાળા "असंजया" અસમાહિત ઇન્દ્રિયવાળા, "अविरया" અવિરતિ યુક્ત, "अणिहुयपरिणामदुप्पओगा" ઉપશમ રહિત પરિણામોવાળા, અને ઇન્દ્રિય અને મનના દુષ્ટ વ્યાપારવાળા "परदुक्खुप्पायणपसत्ता" પર પ્રાણીને માટે દુઃખોત્પાદનમાં પરાયણ એવા જીવો "तंच पुण"

दुःखोत्पादनप्रसक्ताः=परपीडाकरणपरायणाः 'इमेहिं' एतेषु=प्रत्यक्षं लक्ष्यमाणेषु 'तसथावरेहिं' त्रसस्थावरेषु 'जीवेहिं' जीवेषु 'पडिणिविट्ठा' प्रतिनिविष्टाः=तेषां रक्षणाद् द्वेषयुक्ताः 'बहुविहं' बहुविधं 'बहुप्पगारं' बहुप्रकारम्=अनेकभेदप्रभेद-सहितं, 'भयंकरं' भयजनकं 'पाणवहं' प्राणवधं=जीवहिंसां 'करेंति' कुर्वन्ति। 'किं ते' ते=त्रसस्थावरेषु द्वेषवन्तः 'किं' किं कुर्वन्ति? पाठीनादि जीवान् 'हणंति' घ्नन्ति, इति वक्ष्यमाणेन सम्बन्धः। तानेव दर्शयति-'पाठीणे'त्यादि। 'पाठीण-तिमि-तिमिंगिल्ल-अणेग-झसविविहजाइमंडुक-दुविहकच्छभ-णक्क-मगर-दुविह-गाह-दिलिवेढय-मंदुय-सीमागारपुलुय-सुसुमार बहुप्पगारा' पाठीन-तिमि-तिमिंगिला-ऽनेकझष-विविधजातिमंडूक-द्विविध-कच्छप-नक्र-मगर-द्विविध-ग्राह-दिलिवेष्टक-मन्दुक-सीमाकार-पुलक-सुंसुमार-प्रकाराः, तत्र-पाठीनाः= तन्नामका मत्स्यविशेषाः, तिमयः मत्स्यविशेषाः, तिमिंगिलन्ति इति तिमिंगिलाश्च, महामत्स्याः।

"अस्तिमत्स्यस्तिमिर्नाम शतयोजनविस्तरः।
तिमिङ्गिलगिलोऽप्यस्ति तद्गिलोऽप्यस्ति राघवः ॥१॥" इतिवचनात्।

अनेकझषाः=विविधाः क्षुद्रमत्स्याः, विविधजातयो मण्डूकाः = नानाजा-

---

ऐसे जीव (तं च पुण) इस (भयकरं) भयप्रद, (बहुविहं) बहुविध और (बहुप्पगारं) अनेक भेद प्रभेद सहित (पाणवहं) प्राणवध को (करेंति) करते हैं। (इमेहिं तसथावरेहिं जीवेहिं) इन प्रत्यक्षीभूत त्रस और स्थावर जीवों की रक्षा करने के विषय में (पडिणिविट्ठा) द्वेषयुक्त होते हुए प्राणवध करते हैं, (किं ते) वे क्या २ करते हैं इस बात को अब सूत्रकार "पाठीण" इत्यादि पदों द्वारा प्रकट करते हैं- (पाठीण-तिमि-तिमिं-गिल-अणेगझस--विविहजाइमंडुक्क-दुविहक-च्छभ-णक्क-मगर-दुविहगाह-दिलिवेढय-मंदुय-सीमागार-पुलय-सुसुमार-

---

આ "भयकर" ભયપ્રદ, "बहुविह" બહુ વિધ અને "बहुप्पगार" અનેક ભેદ પ્રભેદ સહિત, "पाणवहं" પ્રાણુવધ કરે છે, "इमेहिं तसथावरेहिं जीवेहिं" એ પ્રત્યક્ષીભૂત ત્રસ અને સ્થાવર જીવોની રક્ષા કરવાની બાબતમાં "पडिणिविट्ठा" દ્વેષયુક્ત થઈને પ્રાણુવધ કરે છે, "किंते" તેઓ શું શું કરે છે એ વાતને હવે સૂત્રકાર "पाठीण" ઈત્યાદિ પદો દ્વારા પ્રગટ કરે છે- "पाठीण-तिमि-तिमिंगिल-अणेगझसविविहजाइ-मंडुक-दुविहकच्छभ-णक्क-मगर-दुविहगाह-दिलिवेढय-मंदुय-सीमागार-पुलय-सुंसुमार-बहुप्पगारा" એવા જીવો નીચે પ્રમાણે છે—પાઠીન, તિમિ, તિમિંગલ, અનેકઝષ, અનેક જાતિના દેડકા, બન્ને પ્રકારનાં કાચબા, નક્ર,

तीयाः-दर्दुराः, द्विविधाः=द्विभेदाः, कच्छपाः कूर्मविशेषाः-मांसकच्छपा१, अस्थिकच्छपाश्च२, नक्राः=मत्स्यविशेषाः, मकराः=जलजन्तुविशेषाः, द्विविधाः=द्विप्रकाराः ग्राहाः=शुण्डा ग्रहाः तद्भिन्नाश्च, दिल्विवेष्टकाः, मन्दुकाः, सीमाकाराः, पुलकाः, शिशुमाराः, सर्वे ग्राहविशेषा एव, एवं-विधाः बहुप्रकाराः=अनेकभेदाः, जलचरभेदाः सन्ति, तान् घ्नन्तीति। तथा 'एवमाई' एवमादीन्=एवंप्रकारान्-पाठीनादिसदृशान् अन्यान् 'जलयरविहाणाकए य' जलचरविधानककृतांश्च-जलचराणां विधानानि-जलचरविधानानि, तान्येव जलचरविधानकानि, तानि कृतानि यैस्ते तथाभूतान्-जलचरविशेषांश्च, 'घ्नन्ति'-इत्यनेन संबन्धः। 'जलयरविहाणाकए' इत्यत्र ककारलोपो दीर्घश्चार्षत्वादिति ॥सू०६॥

बहुप्पगारा) ऐसे जीव पाठीन, तिमि, तिमिंगिल, अनेकझष, अनेक जाति के मंडूक, दोनों प्रकार के कच्छप, नक्र, मकर, द्विविधग्राह, तथा दिलिवेष्टक, मन्दुक, सीमाकार, पुलक, शिशुमार, ये पाँचों ग्राह विशेष, ये सभी जलचर जीवों के प्रकार हैं इन्हें ये दुष्ट मनुष्य मारा करते हैं। तथा (एवमाई जलयरविहाणाकए य) पूर्वोक्त पाठीन आदि जीवों से भिन्न जो और जलचर जीव हैं उन्हें भी ये दुष्ट मनुष्य मारा करते हैं।

भावार्थ—सूत्रकारने इस सूत्र द्वारा यह स्पष्ट किया है कि जो प्राणी स्वभाव से पापी होते हैं, अथवा जिनका जीवन संयमरूपी लगाम से रहित होता है, इन्द्रियों के गुलाम होते हैं-पाप कर्म से जिन्हें घृणा नहीं होती है, जिनके परिणाम उपशम भाव से रहित होते हैं, मानसिक विचार धारा जिनकी सदा मलिन बनी रहती है तथा जो दूसरों को दुःखी देखकर अथवा दुःख देकर आनंद मग्न बनते हैं ऐसे जीवों को त्रस स्थावर जीवों के ऊपर दया नहीं आती है। वे उनके साथ मनमानी करते

મગર, દ્વિવિધગ્રાહ, તથા દિલિવેષ્ટક, મન્દુક, સીમાકાર, પુલક, શિશુમાર, એ પાંચે ગ્રાહ વિશેષ, એ બધા જળચર જીવોના પ્રકાર છે તેમને એ દુષ્ટ મનુષ્યો માર્યા કરે છે. તથા "एवमाइजलचरविहाणाकए य" પૂર્વોક્ત પાઠીન આદિ જીવો સિવાયના બીજાં પણ જે જળચર જીવો છે તેમની પણ તે દુષ્ટ મનુષ્યો હત્યા કર્યા કરે છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્ર દ્વારા એ સ્પષ્ટ કર્યું છે કે જે જીવ સ્વભાવથી પાપી હોય છે, અથવા જેમનું જીવન સંયમરૂપી લગામથી રહિત હોય છે જે ઇન્દ્રિયોના ગુલામ હોય છે. પાપકર્મ પ્રત્યે જેને ઘૃણા હોતી નથી, જેમની વૃત્તિઓ ઉપશમ ભાવથી રહિત હોય છે, જેમની માનસિક વિચારધારા સદા મલિન હોય છે, તથા જે બીજાને દુ:ખી જોઈને અથવા દુ:ખ દઈને આનંદિત થાય છે, એવા જીવોને ત્રસ, સ્થાવર જીવો પર દયા આવતી નથી. તેઓ

हुए थोड़ा सा भी संकोच नहीं करते हैं। उनका विचार यही बना रहता है कि मनुष्य के उपयोग के लिये ही ये सब जीव हैं, अतः मनुष्य जैसा चाहे वैसा उनका उपयोग करे। यह संसार त्रस और स्थावर प्राणियों से भरा हुआ है। त्रस स्थावर प्राणी अनेक प्रकार के हैं। इनकी जातियां भिन्न २ रूप से अनेक प्रकार की हैं। तिर्यंच जाति के जीव कि जो पंचेन्द्रिय हैं जलचर नभचर और स्थलचर के भेद से ३ तीन प्रकार के हैं। इनमें जलचर जीव वे हैं जो जल में ही रहते हैं। इन्हीं के विषय में यह सूत्रकार ने अपना अभिमत प्रकट किया है। पाठीन इस नामका एक मत्स्यविशेष होता है। तिमि भी मत्स्यविशेष होता है-इसका विस्तार बड़ा होता है। इस तिमि को जो खा जाते हैं वे तिमिंगिल हैं और ये भी मत्स्यजाति के ही प्रकार हैं। और भी जो छोटी २ मछलियां होती है वे सब " अनेक झष " इस शब्द द्वारा यहां गृहीत की गई हैं। कच्छप नाम कच्छुए का है। ये अस्थिकच्छप और मांसकच्छप के भेद से दो प्रकार के होते हैं। शुण्डाग्राह और अशुण्डाग्राह, इस प्रकार से ग्राह के भी ये दो भेद होते हैं। इसी तरह दिलिवेष्टक, मन्डुक, सीमाकार पुलक और शिशुमार भी जलजन्तु विशेष हैं। इन सब की ये निर्दयी जन हिंसा

તેમની સાથે મન ગમતું વર્તન કરતાં જરા પણ સંકોચ રાખતા નથી તેઓની માન્યતા એવી-જ હોય છે કે મનુષ્યના ઉપયોગને માટે જ આ બધા જીવો છે, તેથી મનુષ્ય ઇચ્છે તે રીતે તેમનો ઉપયોગ કરી શકે છે આ સંસાર ત્રસ અને સ્થાવર જીવોથી ભરેલો છે ત્રસ સ્થાવર જીવો અનેક પ્રકારનાં હોય છે. તેમની જાતિઓ જુદી જુદી રીતે અનેક પ્રકારની છે તિર્યંચ જાતિના જીવ કે જે પચેન્દ્રિય છે, તેમના ત્રણ પ્રકાર છે—જળચર, નભચર અને સ્થલચર. તેમાં જળમાં રહેતા જીવોને જળચર કહે છે. તેમને વિષે સૂત્રકારે અહીં પોતાનો અભિપ્રાય પ્રગટ કર્યો છે, 'પાઠીન' નામનું એક ખાસ પ્રકારનું મત્સ્ય હોય છે. તિમિ પણ એક પ્રકારના મત્સ્યનું નામ છે, તેનું કદ મોટું હોય છે એ તિમિને જે ખાઇ જાય છે તેને તિમિંગલ કહે છે, અને તે પણ એક જાતનો મત્સ્ય જ છે. બીજી પણ નાની નાની જે માછલીઓ હોય છે તેનું " अनेकझष " શબ્દ દ્વારા અહીં ગ્રહણ કરાયેલ છે કચ્છપ એટલે કાચબો, તેના અસ્થિકચ્છપ અને માંસ કચ્છપ એવા બે ભેદ છે. શુંડાગ્રાહ અને અશુંડાગ્રાહ, એ પ્રકારના ગ્રાહના પણ બે ભેદ હોય છે એજ રીતે દિલિવેષ્ટક, મન્ડુક, સીમાકાર' પુલક, અને શિશુમાર પણ ખાસ પ્રકારનાં જળચરો છે. એ બધાંની તે નિર્દય વ્યક્તિ

अथ स्थलचरेषु चतुष्पदप्रकारानाह—'कुरंग०' इत्यादि ।

मूलम्—कुरंग रुरु सरभ चमर संवर उरब्भ-ससय-पसर-गोण-रोहिय-हय-गय-खर-करभ-खग्ग-वानर.गवय-विग-सियाल-कोल-मज्जार-कोलसुणह-सिरिकंदलगावत्त-कोकंतिय--गोकण्ण-मिय-महिस वियग्घ-छगल-दीविय-साण-तरच्छ-अच्छभल्ल-सद्दूल-सीह--चिल्लल-चउप्पय-विहाणाकए य एवमाई ॥सू०७ ॥

टीका—कुरंगा=हरिणाः, रुरवो=मृगविशेषाः, सरभाः=वन्यपशुविशेषाः विशालकायाः, अष्टापदाः 'परासरे 'ति ख्याताः ये महागजानपि पृष्ठे स्थापयन्ति, चमराः=वन्यगावः येषां केशानां चामराणि भवन्ति, संवराः अनेकशाखशृङ्गाः द्विखुरा आरण्यपशवः 'सांभर' इति प्रसिद्धाः 'उरब्भ' उरभ्राः=मेषाः, 'ससय'

किया करते हैं, तथा इनके सिवाय और भी जो जलचर जीव होते हैं- उन्हें भी मार कर ये आनंद मग्न बनते हैं ॥ सू. ६ ॥

अब सूत्रकार स्थलचर तिर्यञ्चों में जो चतुष्पदों के प्रकार हैं उन्हें इस सूत्र द्वारा प्रकट करते हैं-'कुरंगरुरु' इत्यादि ।

टीकार्थ-(कुरंग) कुरंग हिरणको कहते हैं। (रुरु) रुरु नाम भी मृगका है, परन्तु यह सामान्य मृग से विशेष प्रकार का होता है । (सरभ) सरभ नाम अष्टापद का है । यह शरीर में विशाल होता है । परासर भी इस का दूसरा नाम है । ये महागजों को भी अपनी पीठ पर बैठा लेता है । (चमर) चमरी गायों का नाम चमर है । इनके बालों के चामर बनते हैं। (संवर) संवर को हिन्दी भाषा में सांभर कहते हैं। इनके सींगो में

હિંસા કર્યા કરે છે, અને તે સિવાયનાં બીજાં જે જળચર જીવો હોય છે, તેમની પણ હત્યા કરવામાં તેમને મજા આવે છે ॥ સૂ-૬॥

હવે સૂત્રકાર સ્થળચર તિર્યંચોમાં જે જાનવરોના પ્રકારો છે તેમને આ સૂત્ર દ્વારા પ્રગટ કરે છે—"कुरंगरुरु" ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ–"कुरंग" હરણને કુરંગ કહે છે. "रुरु" રુરુ પણ મૃગનો એક ખાસ પ્રકાર છે. "सरभ" સરભ અષ્ટાપદ નામના પ્રાણીને કહે છે તે શરીરે વિશાળ હોય છે તેનું બીજું નામ પરાસર પણ છે તે મોટા હાથીઓને પણ પોતાની પીઠ પર બેસાડી શકે છે "चमर" ચમરી ગાયોને ચમર કહે છે તેમના વાળમાંથી ચામર બને છે. "संवर" સંબરને સાબર કહે છે. તેના શીંગડાંમાંથી બીજી

शशकाः प्रसिद्धाः। 'पसर' प्रशराः द्विखुरा वन्यपशुविशेषाः, 'गोणा' गावः 'रोहिय' रोहिताः=चतुष्पदपशुविशेषाः, 'हयगयखर' हया गजाः खराश्च प्रसिद्धाः। करभाः=उष्ट्राः 'खग्ग' खड्गाः=एकशृङ्गा आटव्याश्चतुष्पदविशेषाः 'गेंडा' इति लोके ख्याताः येषां गमनकाले उभयोरपि पार्श्वयोः पक्षतुल्यानि चर्म्माणि लम्बन्ते, 'वानर' वानराः=प्रसिद्धाः, गवयाः=वर्तुलकण्ठा गो सदृशाः 'रोझ' इति प्रसिद्धाः। 'विग' वृकाः=श्वापदजन्तुविशेषाः 'भेड़िया' इति प्रसिद्धाः, 'सियाल' शृगालाः प्रसिद्धा, 'कोला' शूकराः 'मज्जार' मार्जाराः=विड़ाला 'कोलसुणह' कोलशुनकाः=आटव्यमहाशूकराः 'सिरिकंदलगावत्त' श्रीकन्दलका-

---

अनेक औरश्रृंग जैसी शाखाएँ फूटती हैं। इनके सींगों की जो भस्म बनती है उसे विशाण भस्म कहते हैं। इनके दो खुर होते हैं। और ये जंगल में ही रहते हैं। (उरब्भ)उरभ्र नाम मेंढे का है। (ससय) शशक नाम खरगोश का है। (पसर) प्रशर एक जाति का जानवर होता है, इसके दो खुर हुआ करते हैं। यह जंगल में ही रहता है। (रोहिय) "रोहित" यह भी चार पैरोंवाला एक जानवर विशेष होता है। (हय) हय-नाम घोड़े का है, (गय) गय-गज नाम हाथी का है। (खर) खर नाम गधे का है। (करभ) करभ ऊँटका नाम है। (खग्ग) खड्गीको हिन्दी भाषा में गेंढा कहते हैं। इसके एक ही सींग होता है, यह जंगल में ही रहता है, इस के पैर चार होते हैं, जब यह चलता है तो उस समय इसकी दोनों तरफ पंखों जैसा चमड़ा लटकने लगता है। (वानर) वानर नाम बंदर का है। (गवय) गवय रोझका नाम है, यह गायके जैसा होता है। और इसका कंठ गोल होता है। (विग) वृक यह हिंसक जंतु होता है और इसे हिन्दी भाषामें भेड़िया कहते हैं। (सियाल) "श्रृगाल" यह जंगली

અનેક ઉપશાખાઓ ફૂટે છે તેમનાં શીગડાંઓની જે ભસ્મ બને છે તેને વિષાણુ ભસ્મ કહે છે. તેમને બે ખરી હોય છે, અને તેઓ જંગલમાં જ રહે છે. "उरब्भ" ઉરભ્ર નામ ઘેટાનું છે. "ससय" શશક નામ સસલાનું છે. "पसर" પ્રશર એક જાતનું જાનવર છે, તેને બે ખરી હોય છે. અને તે જંગલમાં રહે છે "रोहिय" 'રોહિત' પણ એક ચોપગુ પ્રાણી છે "हय" હય એટલે ઘોડો, "गय" ગય એટલે હાથી, "खर" ખર એટલે ગધેડો, "करभ" કરભ એટલે ઊંટ, "खग्ग" ખંગી એટલે ગેંડો, તેને એક જ શીંગડું હોય છે, તે જંગલમાં જ રહે છે, તેને ચાર પગ હોય છે. જ્યારે તે ચાલે છે ત્યારે તેની બંને તરફ પાંખો જેવી ચામડી લટકતી રહે છે. "वानर" વાનર કપીને કહે છે. "गवय" ગવય એટલે રોઝ, તે ગાયના જેવું હોય છે અને તેની ડોક ગોળ હોય છે. "विग" વૃક એક જંગલી પ્રાણી છે. તેને રીંછ કહેવામાં આવે છે. "सियाल"

वर्त्ताः=श्रीकन्दलकाः आवर्त्ताश्च उभे सजातीया एकखुरजीवविशेषाः, 'कोकंतिय' कोकंतिकाः=लोमटकाः 'लोमड़ी' इति भाषायाम्, 'गोकण्ण' गोकर्णाः=द्विखुर चतुष्पदजन्तुविशेषाः, 'मिय' मृगाः, 'महिस' महिषा, 'वियग्घ' व्याघ्राः, 'छगला' अजा 'दीविय' द्वीपिकाः 'दीपडा' इति भाषायाम्, 'साण' श्वानः= आटव्याः कुक्कुराः 'तरच्छ' तरक्षाः, अच्छभल्लाः-भल्लूकजातिविशेषाः 'सद्दूल' शार्दूलाः='सीह' सिंहाः, 'चिल्लला' चित्रकाः-श्वापदजन्तुविशेषाः। एषां द्वन्द्व समासः। 'चउप्पयविहाणाकए य एवमाई' चतुष्पदविधानाः कृताः तांश्च एवमादीन्=चतुष्पदविशेषान् कुरङ्गादीन घ्नन्तीति परेण योजना ॥सू०७॥

जानवर है-जो रात को "हुआ हुआ" बोला करता है। (कोल) कोल-शूकर एवं (मज्जार) मार्जार ये हिंसक जानवर हैं। (कोलसुणह) "कोल शूकर" ये शूकर के ही भेद हैं और सामान्य शूकर की अपेक्षा शरीर में विशाल होता है। (सिरिकंदलगावत्त) श्रीकन्दलक और आवर्त्त ये भी जानवर हैं और इनके एक खुर होता है। इन दोनों की जाति समान होती है। (कोकंतिय) कोकंतिका नाम लोमड़ी का है, यही बड़ी चालाक होती है। (गोकण्ण) गोकर्ण एक प्रकार का जानवर होता है, इसके दो खुर होते हैं, और पैर चार होते हैं। (मिय) मृग, (महिस) महिष, (वियग्घ) व्याघ्र यह हिंसक जीव है और सिंह जैसा ही होता है। (छगल) बकरा बकरी का नाम अज है। (दीविय) द्वीपिका यह भी मांस-भक्षी शिकारी जानवर है, इसे तेंदुआ कहते हैं। (साण) जंगली जो कुत्ते हैं जिन्हें शुनी-कुत्ता कहा जाता है वे यहां "साण" शब्द से गृहीत हुए हैं। (तरच्छ) तरक्ष, (अच्छभल्ल) अच्छभल्ल, यह रीछों का ही

'શ્રૃગાલ' એક જંગલી પ્રાણી છે, જે રાત્રે "હુઆ હુઆ" બોલે છે. તેને ગુજરાતીમાં શિયાળ કહે છે "कोलसुणह" કોલ-શૂકર અને "मज्जार" માર્જાર હિંસક જાનવરો છે. "કોલ શૂકર" તે શૂકરનો જ ભેદ છે, અને તે સામાન્ય શૂકર કરતા શરીરે મોટું હોય છે, "सिरिकंदलगावत्त" શ્રીકન્દલક અને આવર્ત્ત એ પણ જાનવરો છે અને તેમને એક ખરી હોય છે તે બને સમાન જાતિનાં છે. "कोकंतिय" લોંકડીને કોકંતિક કહે છે, તે ઘણી ચાલાક હોય છે "गोकण्ण" ગોકર્ણ એક પ્રકારનું પશુ છે. "मिय" મૃગ "महिस" મહિષ અને "वियग्घ," વ્યાઘ હિંસક પ્રાણીઓ છે અને તે સિંહ જેવા જ હોય છે "छगल" બકરા બકરીને અજ કહે છે "दीविय" દ્વીપિકા માંસાહારી શિકારી પશુ છે. તેને તેદુઆ કહે છે. તે ચિત્તા જેવું હોય છે જંગલી કૂતરાઓને શુની-કુત્તા કહે છે, "साण" શબ્દથી અહીં તે જંગલી કૂતરાઓ સમજવાના છે. "तरच्छ अच्छ

साम्प्रतमुरःपरिसर्पप्रकारानाह—' अयगर ' इत्यादि।

मूलम्—अयगर—गोणस—वराहि—माउलि—काकोदर—दब्भपुप्फा-आसालिय-महोरगा उरगविहाणा कए य एवमाई॥सू०८॥

टीका—अजगर-गोणश वराहि मुकुलि-काकोदर-दर्भपुष्प-आशालिक महोरगोरगविधाना कृताश्च एवमादीन्। अजगराः=प्रसिद्धाः, गोणशाः=फणरहितद्विमुखसर्पविशेषाः 'वराहयः' दृष्टिविषसर्पाः येषां दृष्ट्या विषावेशो भवति। मुकुलिनः=ईषत्फणकारकाः, काकोदराः=सामान्यसर्पाः, दर्भपुष्पाः=सामान्यफण-

---

नाम है। (सद्दूल) शार्दूल, (सीह) सिंह एवं (चिल्लल) चित्रक ये सब मांसभक्षी जंगली जानवर हैं और स्थलचर हैं॥ सू. ७॥

अब सूत्रकार उरःपरिसर्पके भेदों को प्रकट करते हैं-' अयगर गोणस ' इत्यादि०।

टीकार्थ-(अयगर) अजगर यह बहुत अधिक मोटा सर्प होता है, धीरे २सरकता है, जिस प्रकार सामान्य सर्प आहट पाते ही बहुत शीघ्र भग जाता है वैसे यह नहीं भग सकता है। (गोणस) गोणश यह भी एक प्रकार का सर्प ही होता है, परन्तु इसके फणा नहीं होती है, व्यवहार में लोग ऐसा कहते हैं कि इसके दो मुख होते हैं. इसका दूसरा नाम दुमुही भी होता है। (वराही) वराहि-यह वह सर्प है कि जिसकी दृष्टि में विष रहता है, जिसे यह देख लेता है उसके विष का आवेश हो जाता है, इसका दूसरा नाम दृष्टिविष सर्प भी है। (माउलि) मुकुली-यह वह सर्प है जो अपने फण को थोड़ा ही विस्तारता है, ज्यादा नहीं,

---

भल्ल" तरक्ष, અચ્છ ભલ્લ, તેરીછોનાં જ નામ છે. "सद्दूल" શાર્દૂલ, "सीह" સિંહ અને "चिल्लल" ચિત્રક એ સઘળાં માંસભક્ષી જાનવરો છે, અને સ્થળચર છે. ॥સૂ.૭॥

હવે સૂત્રકાર "उरःपरिसर्प" પેટે ચાલનારા સર્પોના ભેદ બતાવે છે—

"अयगर–गोणस" ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—"अयगर" અજગર–તે બહુજ વધારે મોટો સાપ છે, તે ધીમે ધીમે સરકે છે જે રીતે સામાન્ય સાપો સહેજ પણ આવાજ થતાં તરતજ ભાગી જાય છે તેમ તેઓ ભાગી શકતા નથી. "गोणस" ગોણશ–તે પણ એક પ્રકારનો સાપ જ હોય છે, પણ તેને ફેણ હોતી નથી. વ્યવહારમાં લોકો એવું કહે છે કે તેને બે મુખ હોય છે, તેનું બીજુ નામ 'દુમુહી' પણ છે. "वराहि" વરાહિ–તે એવો સર્પ છે કે જેની દૃષ્ટિમાં જ વિષ રહે છે, જેને તે જુવે છે તેને તેનું ઝેર ચડે છે, તેનું બીજું નામ દૃષ્ટિવિષ સર્પ પણ છે. "माउली" મુકુલી તે એવી જાતનો સર્પ છે કે છે પોતાની ફેણને થોડા પ્રમાણમાં જ ફેલાવે છે,

धारिणः। आशालिकाः, उरःपरिसर्पविशेषा । एते च चक्रवर्त्तिवासुदेवबलदेवादीनां स्कन्धावारमध्ये ग्रामनगरादिषु वा एतेषां विनाशकाले सामुदानिक कर्मोदयात्-असञ्ज्ञिनो मिथ्यादृष्टयः संमूर्च्छिमपञ्चेन्द्रिया अन्तर्मुहूर्त्तायुष्काः जघन्येनाऽङ्गुलस्यासंख्येयभागपरिमितयाऽवगाहनया, उत्कर्षेण द्वादशयोजनपरिमितयाऽवगाहनया विष्कम्भबाहल्येन तथानुरूपां भूमिं विदार्य समुत्पद्यन्ते। अन्तर्मुहूर्त्तानन्तरं तन्मरणे-स्कन्धावारादीनां सहसा विनाशो भवति। 'महोरगा' योजनसहस्र-

---

क्यों कि फण को अधिक विस्तार करने की इसमें शक्ति नहीं होती है। (काकोदर) काकोदर-सामान्य सर्पका नामहै। इसी तरह (दब्भपुप्फ) दर्भपुष्प भी वह सर्प होता है जो सामान्य रूपसे फणा से युक्त होता है, परन्तु यह अपने फणा को तानता नहीं है, बीन बजाने पर भी यह प्रकृतिस्थ बना रहता है। (आसालिय) आशालिक भी सर्पों की एक विशेष जाती है। ये चक्रवर्ती, वासुदेव, बलदेव, आदिकों के सैन्य के निवासस्थानमें अथवा ग्राम नगर आदिकों में भूमि के नीचे उत्पन्न होते हैं, इनके विनाशकालमें सामुदानिक कर्मका उदय होता है, स्कन्धावार-छावनी तथा गाम नगरादि जमीन में उतर जाते हैं प्रायः मर जाते हैं ये असंज्ञी मिथ्यादृष्टि होते हैं, इनका जन्म संमूर्च्छिम होता है, इनके पांचो इन्द्रियां होती है। इनकी आयु अन्तर्मुहूर्तप्रमाण होती है इनके शरीर की अवगाहना जघन्य से अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण होती है तथा उत्कृष्ट से द्वादश योजनप्रमाण होती है, अन्तर्मुहूर्त के बाद इनका मरण हो जाता

કારણકે વધારે પ્રમાણમાં ફેલાવવાની શક્તિ તેનામાં હોતી નથી. "काकोदर" કાકોદર સામાન્ય સર્પનું નામ છે. એજ પ્રમાણે "दब्भपुप्फ" દર્ભપુષ્પ પણ એક એવા પ્રકારનો સર્પ છે કે જે સામાન્ય રીતે ફણાથી યુક્ત હોય છે, પણ તે પોતાની ફણાને ફેલાવતો નથી, મોરલી બજાવવામાં આવે તો પણ તે ફણાને વિસ્તાર્યા વિના મૂળ સ્થિતિમાં જ રહે છે "आसालिय" આશાલિક, પણ સર્પોની એક ખાસ જાતિ છે. તે ચક્રવર્તી, વાસુદેવ, બલદેવ આદિના સૈન્યના નિવાસસ્થાનમાં અથવા ગામ નગર આદિમાં ભૂમિની નીચે ઉત્પન્ન થાય છે, તેમના વિનાશ કાળે સામુદાયિક કર્મનો ઉદય થાય છે. સ્કન્ધાવાર-છાવણી તથા ગામ નગર આદિ જમીનમા ઉતરી જાય છે. સામાન્ય રીતે મરી જાય છે. તેઓ અસંજ્ઞી મિથ્યાદૃષ્ટિ હોય છે. તેમનો જન્મ સંમૂર્ચ્છિમ થાય છે, તેમને પાંચે ઇન્દ્રિયો હોય છે. તેમનું આયુષ્ય અન્તર્મુહૂર્ત પ્રમાણ છે, તેમના શરીરની અવગાહના જઘન્યથી અંગુલના અસંખ્યાતમાં ભાગ પ્રમાણ હોય છે, તથા ઉત્કૃષ્ટે બાર યોજન પ્રમાણ હોય છે. અન્તર્મુહૂર્ત પછી તેમનું મરણ થઇ જાય છે. "महोरगा"

प्रमाणशरीरा मनुष्यक्षेत्रबहिर्भाविनउरःपरिसर्पविशेषाः, एषां द्वन्द्वः। उरगविधा-नाः=उरगप्रकाराः कृताः। तान् च एवमादीन् 'घ्नन्ति' इत्यनेन सम्बन्धः ॥सू०८॥

अथ भुजपरिसर्पभेदानाह—'छीरल०' इत्यादि।

मूलम्—छीरल—सरंब—सेह—सेल्लग—गोधा—उंदुर—णउल—सरड—जाहक—मंगुस—खाडहिला—चाउप्पइय—घरोलिया—सरीसिव गणे य एवमाई ॥ सू० ९ ॥

टीका—क्षीरलाः, शरम्बाः, 'सेहाः' तीक्ष्णकण्टकाकुलकायाः, शैलयकाः, एते सर्वे भुजपरिसर्पविशेषाः। गोधाः=प्रसिद्धाः, उन्दुराः=मूषकाः, नकुलाः प्रसिद्धाः

है। (महोरगा) महोरग ये वे सर्प हैं कि जिनका शरीर एक हजार योजन का होता है, तथा ये मनुष्य क्षेत्र से बाहिरी क्षेत्रों में उत्पन्न होते हैं। (उरगविहाणाकएय) ये सब भेद उरःपरिसर्पो के हैं पापी जीव इन्हें मारते हैं ॥ सू. ८ ॥

अब भुजपरिसर्प के भेदों को सूत्रकार प्रकट करते हैं—'छीरल-सरंब' इत्यादि।

टीकार्थ—(छीरल—सरंब-सेह-गोधा-उंदुर-णउल-सरंड-जाहक-मंगुस खाड-हिला—चाउप्पइय—घरोलिया—सरीसिव गणे य एवमाई) क्षीरल, शरम्ब सेह ये वे जीव है कि जिनका शरीर कांटों से युक्त रहता है। सेह को हिन्दी भाषा में "सेही" कहते हैं, इसका आकार शृगाल जैसा होता है, इसके शरीर पर तीखे नुकीले काले और सफेद रंग वाले कांटे होते हैं। ये भेद भुजपरिसर्पो के हैं। गोधा—गुहेरेकी मांको कहते हैं यह भित्ति पर इतनी मजबूती के साथ चिपक जाती है कि इसे पकड़ कर चोर

મહોરગ, તે એવા સર્પ હોય છે કે જેમનું શરીર એક હજાર યોજનનું હોય છે, તથા તે મનુષ્ય ક્ષેત્રથી બહારનાં ક્ષેત્રોમાં ઉત્પન્ન થાય છે. "उरगविहाणाकएय" આ બધા ઉર.પરિસર્પોના ભેદ છે. પાપી જીવો તેમની હત્યા કરે છે. ॥સૂ.૮॥

હવે ભુજપરિસર્પના ભેદોને સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે—"छीरलसरंव" ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—"छीरल, सरंव, सेह, सेल्लग गोधा उंदुर, णउल, सरड, जाहक, मंगुस, खाडहिला, चाउप्पइय, घरोलिया, सरीसिव, गणे य एवमाई" ક્ષીરલ, શરમ્બ, સેહ, તે જીવો કાંટા થી યુક્ત શરીરવાળા હોય છે. સેહને ગૂજરાતી ભાષામાં સાહુડી કહે છે. તેનો દેખાવ શિયાળ જેવો હોય છે, તેના શરીર પર તીક્ષ્ણ, અણીદાર, કાળા અને સફેદ રંગના કાંટા હોય છે તે ભુજપરિસર્પોના ભેદ છે. "ગોધા" પાટલા ઘોને કહે છે. તે દિવાલ પર એટલી સજ્જડ ચોંટી જાય છે.

शरटा=कृकलाशाः, जाहकाः=कण्टकव्याप्ताङ्गाः, मंगुसाः=भुजपरिसर्पविशेषाः, खाडहिलाः=श्वेतकृष्णरेखाऽङ्कितदेहाः भुजपरिसर्पविशेषाः। चातुष्पदिकाः=चतुश्चरणा भुजपरिसर्पविशेषाः। 'घरोलिया' गृहगोधिकाः 'छिपकली-घरोली' इति प्रसिद्धाः। एतेषां द्वन्द्वः। एवमादीन् सरीसृपगणान् 'घ्नन्ती'ति सम्बन्धः ।।सू०९।।

अथ खेचरभेदानाह—'कादंब' इत्यादि।

मूलम्—कादंब—कंक—वलाका—सारस आडा—सेडी—कुलल-वंजुल—पारिप्पव—कीर-सउण—दीविय—हंस—धत्तरट्ठ—भास—कुली-

रात्रि में चोरी करने को ऊपर दुमंजिले आदि मकान पर चढ़ जाते हैं यह कमन्द की तरह भित्ती पर लटक जाती है। उन्दुर नाम मूषक का है। नकुल नौला को कहते हैं। शरट नाम कृकलाश का है, यह गले में लाल होता है और बैठा हुआ अपना मस्तक हिलाया करता है, छिप-कली जैसा इसका आकार होता है, मारवाड़ आदि राजस्थान में "करं-गेटया" कहते हैं। जाहक वे भुजपरिसर्पविशेष हैं कि जिनके शरीर पर कांटे रहते हैं। मंगुस भी इसी प्रकार के भुजपरिसर्प विशेष हैं। खाड-हिल को हिन्दी में गिलहरी कहते हैं, इसके शरीर पर जो रोमराजी होती है वह सफेद और काली रेखा से युक्त होती है, यह वृक्षों पर रहती है। चातुष्पदिक चार पैरों वाला भुजपरिसर्प विशेष होता है। घरोलिया को हिन्दी में छिपकली कहते हैं, यह मकानों के भीतर भीत पर छत पर चिपकी रहती है। निर्दयी हिंसक जीव इन्हें तथा इनसे भिन्न जो और भी भुजपरिसर्प विशेष हैं उन्हें मारते हैं ।।सू. ९ ।।

કે તેને પકડીને રાત્રે ચોર ચોરી કરવાને માટે બે ત્રણ માળના મકાનપર ચડી જાય છે, તે કબન્ધની જેમ ભીંતપર લટકી જાય છે. "उंदुर" એટલે ઉંદર. "णउल" એટલે નોળીયો, "सरड" એટલે કાચિંડો. તેનું ગળું લાલ હોય છે અને તે બેઠો બેઠો પોતાનું શિર હલાવ્યા કરે છે, ગરોળી જેવો તેનો આકાર હોય છે. માર-વાડ આદિ રાજસ્થાનમાં તેને "કરંગેટયા" કહે છે, જાહક, એ એક જાતના ભુજપરિસર્પનો ભેદ છે તેમના શરીર પર કાંટા હોય છે. મંગુસ પણ એજ પ્રકારે ભુજપરિસર્પ છે, "खांडहिल" એટલે ખિસકોલી તેના શરીરપર જે રૂવાટી હોય છે તે સફેદ અને કાળી રેખાથી યુક્ત હોય છે, તે વૃક્ષો પર રહે છે. તે ચાતુ-ષ્પદિક, ચાર પગ વાળુ ભુજપરિસર્પ વિશેષ છે 'ઘરોલિયા' તેમને ગૂજ-રાતીમા ગરોળી કહે છે તે મકાનોની અંદર ભીંત તથા છત પર ચોંટી રહે છે. નિર્દય હિંસક લોકો તેમની તથા તેમના સિવાયના બીજાં પણ જે ભુજપ-રિસર્પ વિશેષ છે તેમની હત્યા કરે છે ॥ સૂ.-૯॥

कोस–कुंच–दगतुंड–ढेणियालग–सूईमुह–कविल–पिंगलक्खग-कारंड–चक्कवाग–उक्कोस–गरुल–पिंगल–सुय–बरहिण–मयण-साल–नंदीमुह–नंदमाणग–कोरंग–भिंगारग–कोणालग-जीवंजीवक-तित्तिर–वट्टग–लावग-कपिंजलग–कवोतग–पारेवग–चडग ढिंक–कुक्कुड–मेसर–मऊर–चओरग–हयपोंडरीय–करक–चीरल्ल–सेण–वायसविहाण–सियचास–वग्गुलि–चम्मट्ठिल–विततपक्खि समुग्गपक्खि–खहयर विहाणाकए य एवमाई जल थल खचा-रिणो य पंचिंदिए पसुगणे बियति य चउरिंदिए य विविहे जीवे पिय जीविए मरणदुक्खपडिकूले वराए हणंति बहुसंकि-लिट्ठ कम्मा ॥ सू० १० ॥

टीका—कादम्बाः=कलहंसाः, कङ्काः=पक्षिविशेषाः बलाकाः='बगला' इति भाषा प्रसिद्धाः, सारसाः=प्रसिद्धाः 'आडा' जलचर पक्षिविशेषाः 'आडा' इति भाषायाम्। 'सेडी' सेटी, कुललाः, वञ्जुलाः, 'पारिप्पव' पारिप्लवाः=पक्षि-विशेषाः कीराः=शुकाः, 'सउणं' शकुनाः 'शकुनपक्षिविशेषाः, 'दीविया' दीपिकाः

अब खेचर जो तिर्यंच हैं उनके भेदों को सूत्रकार स्पष्ट करते हैं—'कादंब कंक बलाका' इत्यादि०।

टीकार्थ–(कादंब) कादम्ब–कलहँस (कंक) कंक–पक्षिविशेष (बलाका) बलाका–बगुला (सारस) सारस–इसी नामका प्रसिद्ध पक्षी है (आडा) आडा–जल में तैरने वाला पक्षी जिसे भाषामें 'आड' कहते हैं (सेडी) सेटी (कुलल) कुलल (वंजुल) वंजुल (पारिप्पव) पारि-प्लव पक्षिविशेष (कीर) कीर–तोता (सउण) शकुन–पक्षिविशेष,

---

હવે જે ખેચર–નભચર તિર્યંચો છે તેમના ભેદોને સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે- "कादंब, कंकबलाका" ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ–"कादंब" કાદમ્બ–કલહંસ "कंक" કંક–એક જાતનું પક્ષી, "बलाका" બલાકા–બગલું "सारस" સારસ–એ નામનું પ્રસિદ્ધ પક્ષી "आडा" આડા–જળમાં તરનારૂ એક પક્ષી જેને સંસ્કૃતમાં "આડા" કહે છે. "सेडी" સેટી "कुलल" કુલલ "वंजुल" વંજુલ "पारिप्पव" પારિપ્લવ એ પક્ષીઓની ખાસ જાતો છે. "कीर" કીર–પોપટ "सउण" શકુન–પક્ષીની એક જાત "दीविय"

मनुष्यक्षेत्रबहिर्भावित्रपक्षिणः=' खयहरविहाणकए य एवमाई ' खचर विधानाः कृताः, तानेवमादीनुक्तप्रकारान्। तथा 'जलथलखचारिणो य-पंचिदिए पसुगणे' जलस्थलखचारिणश्च पञ्चेन्द्रियान् पशुगणान् 'वियतिय चउरिंदिए' द्वित्रिचतुरिन्द्रियान् 'विविहे जीवे' विविधान् जीवान् 'पियजीविए' प्रियजीवितान् ' मरणदुक्खपडिकूले' मरणदुःखप्रतिकूलान् 'वराए' वराकान्=दीनान् 'बहुसंकिलिट्ठकम्मा' बहुसंक्लिष्टकर्माणः=समधिकदुष्टाचरणाः जनाः 'हणंति' घ्नन्ति=मारयन्ति॥सू०१०॥

एवं प्राणिवधस्य प्रकाराण्यभिधाय सम्प्रति तत्प्रयोजनप्रकाराण्याह— 'इमेहिं' इत्यादि।

मूलम्—इमेहिं विविहेहिं कारणेहिं, किं ते? चम्म-वसा-मंस-मेय-सोणिय-जग-फिप्फिस--मत्थुलिंग-हिय--अंत-पित्त--फोफस-दंतट्ठा-अट्ठि-मिंज-नह-नयण--कण्ण-ण्हारुणि--नक्क--धमणि-सिंग-दाढि-पिच्छ-विस-विसाण-वालहेउं ॥ सू० ११ ॥

विहाणाकए य) ये मनुष्य से बाहिर रहने वाले पक्षी। ये सब खेचर जातिके प्रकार हैं। इन्हें तथा (एवमाई) और भी इनसे भिन्न जो (जलथल खचारिणो य पंचिदिए पसुगणे) जलचर, स्थलचर, एवं खेचर पञ्चेन्द्रिय पशु हैं उनको इसी प्रकार (बियति य चउरिंदिए य) द्वीन्द्रिय, तेन्द्रिय, और चतुरिन्द्रिय ऐसे (विविहे जीवे) नानाप्रकार के जीवों को कि जिन्हें (पियजीविए) अपने प्राण प्रिय हैं और (मरण दुक्खपडिकूले) मरण जन्य दुःखों से जो सदा डरते रहे हैं, ये दुःख जिन्हें प्रतिकूल हैं, एवं जो (वराए) दीन हैं उन्हें (बहुसंकिलिट्ठकम्मा) अत्यन्त दुष्ट आचरण वाले मनुष्य (हणंति) मारते हैं॥सू १०॥

खहयर, विहाणाकए य" ते मनुष्यथी दूर रहेनार पक्षी छे. ए बधा खेचर जातिना प्रकारो छे. तेमने तथा "एवमाई" ते सिवायना बीजा पण जे "जलथल खचारिणो य पंचिदिए पसुगणे" जळचर, स्थळचर अने खेचर पंचेन्द्रिय पशुओ छे तेमने तथा एज प्रमाणे " वियतिय चउरिंदिए य " द्वीन्द्रिय, त्रिइन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय एवां " विविहे जीवे " विविध प्रकारनां जीवो के जेमने " पियजीविए " पोताना प्राण प्रिय छे अने "मरण दुक्खपडिकूले" मरणजन्य दुःखोथी जे सदा डरता रहे छे, ते दुःखो जेमने प्रतिकूळ छे, अने जे "वराए" दीन छे तेमने "बहुसंकिलिट्ठकम्मा" अत्यंत दुष्ट आचरण वाळा मनुष्यो "हणंति" हणे छे ॥ सू.-१०॥

टीका—'इमेहिं' एभिः वक्ष्यमाणैः 'विविहेहिं' विविधैः=नानाप्रकारैः 'कारणेहिं' कारणैः=वक्ष्यमाणप्रयोजनैः त्रसान् प्राणान् घ्नन्ति अवुधा जनाः इत्यग्रेण सम्बन्धः। 'किं ते' कानि तानि प्रयोजनानि? इत्याह–' चम्मे 'त्यादि। ' चम्म ' चर्म=शरीरत्वचा, तदर्थं यथा 'चर्मणि द्वीपिनं हन्ति' इत्यादि। 'वसा' वसा=शरीरस्थधातुविशेषः, ' चर्वी ' इति भाषा, ' मंस ' मांसं, मेदो=देहस्थ चतुर्थधातु-

इस प्रकार प्राणिवध के प्रकारों को कहकर अब सूत्रकार उसके प्रयोजन के प्रकारों को कहते हैं–इमेहिं विविहेहिं ' इत्यादि।

टीकार्थ-जो अवुध–अज्ञानी मनुष्य हैं वे (इमेहिं) इन वक्ष्यमाण (विविहेहिं) नानाप्रकार के (कारणेहिं) प्रयोजनों के वशवर्ती होकर (हिंसंति तसे पाणे) त्रस जीवों की घात करते है। इस प्रकार का संबंध १३वें सूत्र में कथित " अवुहा इह हिंसंति तसे पाणे " इन पदों को लेकर यहां लगा लेना चाहिये। (किं ते) जिन प्रयोजनों को लेकर अज्ञानी-प्राणी त्रस जीवों की हिंसा करते हैं वे प्रयोजन क्या २ हैं–इसी विषय को सूत्रकार " चम्म–वसा–मंस–मेय " इत्यादि पदों द्वारा स्पष्ट करते हैं, वे कहते हैं कि (चम्म–वसा–मंस–मेय–सोणिय–जग–फिप्फिस–मत्थुलिंग–हिय–अंत–पित्त–फोफस–दंतट्ठा) अवुधजन जो इन प्राणियों की घात करते हैं उसमे किननेक प्राणियों का उनकी (चम्म) त्वचा प्राप्त करने का प्रयोजन रहता है इसलिये वे उनका घात करते हैं, किननेक प्राणियों का उनकी (वसा) चर्वी प्राप्त करने का उद्देश्य होता है, कितनेक

આ પ્રમાણે પ્રાણીવધના પ્રકારો વિષે વાત કરીને હવે સૂત્રકાર તેના ક્યા ક્યા હેતુઓ હોય છે તે બતાવે છે-" इमेहिं विविहेहिं " ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ–જે અબુધ–અજ્ઞાની મનુષ્યો છે તેઓ "इमेहिं" આ પ્રમાણે "विविहेहिं" વિવિધ પ્રકારનાં "कारणेहिं" પ્રયોજનને વશ થઈને "हिंसंति तसे पाणे" ત્રસ જીવોનો ઘાત કરે છે. આ પ્રકારનો સંબંધ ૧૩ માં સૂત્રમાં કહેલ " अवुहा इह हिंसंति तसे पाणे " આ પદોની સાથે ત્યાં જોડવો જોઇએ. "किंते" જે હેતુને ખાતર અજ્ઞાની–જીવ ત્રસ જીવોની હિંસા કરે છે તે હેતુઓ ક્યા ક્યા છે–એ વિષયને સૂત્રકાર " चम्म–वसा–मंस–मेय " ઇત્યાદિ પદો દ્વારા સ્પષ્ટ કરે છે. તેઓ કહે છે કે "चम्म, वसा, मंस, मेय, सोणिय, जग, फिप्फिस, मत्थुलिंग हिय, अंत, पित्तफोफस, दंतट्ठा" અબુધ લોકો તે પ્રાણીઓની જે હિંસા કરે છે તેનો હેતુ કેટલાંક પ્રાણીઓની બાબતમાં તેમનું "चम्म" ચામડું પ્રાપ્ત કરવાનો હોય છે, કેટલાંક પ્રાણીઓની "वसा" ચરબી પ્રાપ્ત કરવા માટે તેમનો વધ કરાય છે,

=कृष्णचटकाः,हंसाः=नीरक्षीरविवेचकाः पक्षिणः 'धत्तरट्ठ' धार्तराष्ट्रकाः=श्यामचरणचञ्चु हंसाः, 'भास' भासाः 'कुलीकोस' कुलीक्रोशाः=पक्षिविशेषाः 'कुंच' क्रौञ्चाः=क्रौञ्चपक्षिणः ये शरदि ऋतौ माद्यन्ति मधुरध्वनिं च कुर्वन्ति, 'दगतुंड' दकतुण्डाः, 'ढेणियालग' ढेणिकालकाः, 'सूईमुह' सूचीमुखाः 'कविल' कपिलाः=पक्षिविशेषाः, 'पिंगलक्खग' पिङ्गलाक्षाः=पिङ्गले अक्षिणी येषां ते पिङ्गलाक्षाः=पीतलोचनपक्षिणः 'कारंड' कारण्डकाः=बतक इति लोके प्रसिद्धाः, 'चक्कवाग' चक्रवाकाः=प्रसिद्धाः, 'उक्कोस' उत्क्रोशाः=कुरराः कुरज पक्षिविशेषाः, 'गरुल' गरुडाः=प्रसिद्धाः 'पिंगल' पिङ्गलाः=रक्तशुकाः 'सुय' शुकाः=रक्तमुखशुकाः, 'बरहिण' बर्हिणः=पिच्छधारिमयूराः 'मयणसाल' मदनशलाकाः='मेना' इति भाषायाम्, 'नंदीमुह' नन्दीमुखाः, 'नंदमाणग' नन्दमानकाश्च पक्षिविशेषाः, 'कोरंग' कोरङ्काः=तन्नामकाः पक्षिणः 'भिंगारग' भृङ्गारिकाः

(दीविय) दीपिका-कालीचिड़िया (हंस) हंस-नीरक्षीर को जुदा करने वाला पक्षी (धत्तरट्ठ) धार्तराष्ट्रक-जिनके चरण और चोंच दोनों काले होते हैं ऐसे हंस (भास) भास और (कुली-कोस) कुलीक्रोश पक्षिविशेष हैं (कुंच) क्रौंचपक्षी-जो शरद ऋतु में मदोन्मत्त होते हैं एवं मधुर ध्वनि किया करते हैं (दगतुंड) दगतुड (ढेणियालग) ढेणिकालक (सूईमूह) सूचीमुख (कविल) कपिल, ये भी पक्षि विशेष हैं। (पिंगलक्खग) पिङ्गलाक्ष-पीलेनेत्रवाला एक जात का पक्षी (कारंड) कारण्डक-बतक (चक्कवाग) चक्रवाक-चकवा (उक्कोस) उत्क्रोश-कुरर, (गरुल) गरुड (पिंगलसूय) पिंगलतोते, (सूय) शुक-लालचोंच वाले तोते (बरहिण) बर्हि-पिछोंवाले मयूर (मयणसाल) मदनशाल-मैना (नंदीमुह) नंदीमुख (नंदमाणग) नन्दामानक, और (कोरंग) कोरंक इन नाम के

દીપિકા-દેવચકલી "हंस" હંસ-નીરક્ષીરને જુદા કરનારૂ પક્ષી "धत्तरट्ठ" ધાર્તરાષ્ટ્રક-જેમનાં ચરણ અને ચાંચ કાળા હોય છે તેવા હંસ "भास" ભાસ અને "कुलीकोस" કુલીક્રોશ-પક્ષીની ખાસ જાતો "कुंच" ક્રૌંચપક્ષી-જે શરદઋતુમાં મદોન્મત્ત થાય છે અને મધુર ધ્વનિ કર્યા કરે છે. "दगतुढ" દગતુંડ, "ढेणियालग" ઢેણિકાલક "सूईमुह" સૂચીમુખ "कविल" કપિલ એ પક્ષીની ખાસ જાતો છે. "पिंगलक्खग" પિંગલાક્ષ-પીળાં નેત્રવાળુ એક જાતનું પક્ષી "कारंड" કારંડક-બતક "चक्कवाग" ચક્રવાક-ચકવા "उक्कोस" ઉત્ક્રોશ-કુરર "गरुल" ગરુડ "पिंगल" પિંગલ-લાલ પોપટ 'सुय" શુક-લાલ ચાંચવાળા પોપટ "बरहिण" બર્હિ-પીંછા વાળો મોર "मयणसाल" મદનશાલ-મેના "नंदीमुह" નંદીમુખ "नंदमाणग" નન્દમાનક અને "कोरंग" કોરંક નામનાં પક્ષીઓ "भिंगारग" ભૃંગારક-

'भिंगोडी' इति प्रसिद्धाः, 'कोणालग' कोणालकाः=जलचरपक्षिविशेषाः, जीवञ्जीवकाः=चातकाः, तित्तिराः='तीतर' इति लोके प्रसिद्धाः, 'वट्टग' वर्तकाः=पक्षिविशेषाः 'वटेर' इति भाषायाम् । 'लावग' लावकाः=प्रसिद्धाः, 'कविंजलग' कपिञ्जलकाः=तन्नामकपक्षिणः 'कवोतग' कपोतकाः='कबूतर' इति प्रसिद्धाः, 'पारेवग' पारावतकाः=तज्जातीया एव 'चडग' चटकाः='चिडी' इति प्रसिद्धाः, 'ढिंक' ढिङ्काः=ढिङ्कपक्षिणः, 'कुक्कुड' कुक्कुटाः=प्रसिद्धाः, मेसरा=पक्षिविशेषाः, 'मऊर' मयूराः=प्रसिद्धाः, 'चओरग' चकोरकाः=प्रसिद्धा एव 'हयपोंडरीय' हृदपुण्डरीकाः=जलचरपक्षिविशेषाः, 'करग' करकाः 'चीरल्ल' चीरल्लाश्च पक्षिविशेषाः 'चील' इति प्रसिद्धाः 'सेण' श्येनाः 'वाज' इति भाषायां 'वायसविहाण' वायसविधानाः काकपक्षिभेदाः, 'सियचास' सितचाषाः=श्वेतचाषपक्षिणः, 'वग्गुलि' वल्गुलयः-'वागल' इति प्रसिद्धाः, 'चम्मट्ठिल' चर्मास्थिलाः चर्मचटका इति भाषायां, 'विततपक्खि' विततपक्षिणः 'समुग्गपक्खि' समुद्रपक्षिणः, एते

पक्षी (भिंगारग) भृङ्गारक-भिंगोडी (कोणालग) कोणालक-जलचर पक्षिविशेष (जीवंजीवक) जीवंजीवक-चातक (तित्तिर) तित्तिर-तीतर (वट्टग) वर्तक-वटेर (लावग) लावक-लावा (कपिंजलग) कपिंजलक इस नाम का पक्षी (कवोतग) कपोतक-कबूतर (पारेवग) पारापतक कबूतर के जातिविशेष (चडग) चटक-चिड़िया (ढिंक) ढिंकपक्षी (कुक्कुड) कुक्कुट-मुर्गा (मेसर) मेसर (मऊर) मयूर और (चओरग) चकोर ये सब पक्षिविशेष हैं (हयपोंडोरीय) हृदपुंडरीक-जलपक्षिविशेष (करक) करक-पक्षिविशेष (चीरल्ल) चीरल्ल-चील, (सेण) श्येन बाज (वायसविहाण) वायसविधान-कौवा पक्षी के भेद (सियाचास) श्वेतचाष पक्षी (वग्गुलि) वल्गुली-वागल (चम्मट्ठिल) चर्मास्थिल-चमगादड (विततपक्खि) पिततपक्षी (समुग्गपक्खि) समुद्रपक्षी, खहयर-

---

ભિંગોડી "कोणालग" કોણાલક એક જાતનું જળચર પક્ષી "जीवंजीवक" જીવંજીવક-ચાતક "तित्तिर" તિત્તિર-તેતરપક્ષી "वट्टग" વર્તક-બટેર "लावग" લાવક-લાવા "कपिंजलग" કપિંજલક-એ નામનું પક્ષી "कवोतग" કપોતક-કબૂતર "पारेवग" પારાવતક-પારેવુ કબૂતરની જાતનું પક્ષી "चडग" ચટક-ચકલી "ढिंक" ઢિંક પક્ષી "कुक्कुड" કુકકુટ-કૂકડો "मेसर" મેસર "मऊर" મયૂર અને "चओरग" ચકોર એ બધાં જુદી જુદી જાતનાં પક્ષીઓ છે. "हयपोंडरीय" હૃદપુંડરીક-તે નામનું જળચર પક્ષી "करक" કરક-પક્ષિવિશેષ "चीरल्ल" ચીરલ્લ-સમડી "सेण" શ્યેન-બાજ "वायसविहाण" વાયસ વિધાન કાગડાની એક જાત "सियचास" શ્વેતચાષ પક્ષી "वग्गुलि" વલ્ગુલી-વાગોળ "चम्मट्ठिल" ચર્માસ્થિલ-ચમગાદડ "विततपक्खि" વિતતપક્ષી "समुग्गपक्खि" સમુદ્રપક્ષી

विशेषः, 'सोणिय' शोणितं=द्वितीयधातुविशेषः, 'जग' यकृत्-उदरदक्षिणभागस्थ मांसग्रन्थिः, 'फिप्फिस' फिप्फिसं-अन्त्रस्थितमांसविशेषः, 'फेफड़ा' इति भाषायां, 'मत्थुलिंग' मस्तुलिङ्ग=मस्तक भेजकं 'हिय' हृदयं=हृदयमांसपिण्डं 'कलेजा' इति प्रसिद्धं, 'अंत' अन्त्रं 'आंत' इति भाषा, 'पित्त' पित्तं=पित्ताशयः, फोफसं=शरीरावयवविशेषः 'दंतट्ठा' दन्तार्थं=दन्ताः=प्रसिद्धाः, एतेषामर्थाय। पुनः-'अट्ठि' अस्थि प्रसिद्धं, 'मिंज' मज्जा=वीर्यजनकषष्ठधातुविशेषः। उक्तञ्च—

प्राणियों का उनके (मंस) मांस प्राप्त करने का, कितनेक प्राणियों का उनकी (मेय) मेद जो देह की चतुर्थ धातु है उसके प्राप्त करने का, कितनेक प्राणियों का उनके (सोणिय) शोणित प्राप्त करने का, कितनेक प्राणियों का उनके (जग) यकृत् को-उदर के दक्षिणभाग में रही हुई मांसग्रंथि को प्राप्त करने का, कितनेक प्राणियों का उन के "फिप्फिस" फिप्फिस को आंतों में स्थिति मांस विशेष को प्राप्त करने का, कितनेक प्राणिओं का उनके (मत्थुलिंग) मस्तक के भेजे को प्राप्त करने का, कितनेक का उनके (हिय) हृदयमांसपिंड को जिसे कलेजा कहते हैं प्राप्त करने का (अंत) आंतों को प्राप्त करने का (पित्त) पित्ताशय प्राप्त करने का, कितनेक का फोफस-शरीरावयव विशेष-प्राप्त करनेका, कितनेक का उनके दांतों को प्राप्त करने का प्रयोजन होता है तथा (अट्ठि-मिंजनह-नयण-कण्ण-ण्हारुणि-नक्क-धमणि-सिंग-दाढि-पिच्छ-विसाण-वाल हेउं) कितने का उनकी (अट्ठि) अस्थि-हड्डी प्राप्त करनेका कितनेक का उनकी (मिंज)

કેટલાક પ્રાણિયોનું "मंस" માસ પ્રાપ્ત કરવાના ઉદ્દેશથી તેમને વધ કરાય છે કેટલાંક પ્રાણીઓનો વધ તેમની "मेय" મેદ જે દેહની ચતુર્થ ધાતુ છે તેને પ્રાપ્ત કરવા માટે કરાય છે, કેટલાંક પ્રાણીઓનો વધ તેમના "जग" યકૃતને-પેટના જમણા ભાગમાં આવેલી માંસ ગ્રંથિને પ્રાપ્ત કરવા માટે કરાય છે, કેટલાંક પ્રાણીઓનો વધ તેમના આંતરડામાં રહેલ માસ વિશેષને પ્રાપ્ત કરવા માટે કરાય છે, કેટલાંક પ્રાણીઓનો વધ તેમના "मत्थुलिंग" માથાંમાંના મગજને પ્રાપ્ત કરવા માટે કરાય છે, કેટલાંક પ્રાણિઓનો વધ તેમનાં "हिय" હૃદય માંસ પિંડ કે જેને કાળજું કહે છે તેને પ્રાપ્ત કરવાને માટે કરાય છે, કેટલાક પ્રાણીઓનો વધ તેમના "अंत" આતરડાં પ્રાપ્ત કરવા માટે કરાય છે, કેટલાંક પ્રાણીઓનો વધ તેમનાં "पित्त" પિત્તાશય પ્રાપ્ત કરવાને માટે કેટલાક પ્રાણીઓનો વધ તેમનાં "फोफस" શરીરનું એક ખાસ અવયવ પ્રાપ્ત કરવાને માટે, અને કેટલાંક પ્રાણીઓનો વધ તેમના દાંત પ્રાપ્ત કરવાને માટે થાય છે તથા "अट्ठि, मिंजनह नयण, कण्ण, ण्हारुणि, नक्क, धमणि, सिंग, दाढि, पिच्छ, विसाण, वालहेउ" કેટલાકનો વધ તેમના "अट्ठि" અસ્થિ-હાડકાં પ્રાપ્ત કરવાને માટે કેટલાંકનો

[illegible]

[illegible] वस्तु विशेष को ग्रहण करने का, जिनदेव का उनके ([illegible]) [illegible] का ग्रहण करने का, जिनदेव का उनके [illegible] [illegible]-[illegible] को ग्रहण करने का, जिनदेव का ([illegible]) [illegible] ग्रहण करने का जिनदेव का ([illegible], [illegible] के [illegible] [illegible] को बांधने वाली नाडि विशेषों के ग्रहण करने का, जिनदेव का उनकी [illegible] [illegible] ग्रहण करने का, जिनदेव का उनकी ([illegible]) [illegible]-नाडियों ग्रहण करने का. जिनदेव का उनके ([illegible]) [illegible] को ग्रहण करने का. जिनदेव का उनकी [illegible] [illegible] को ग्रहण करनेका. जिनदेव का उनकी ([illegible]) [illegible] को ग्रहण करने का. जिनदेव का उनके ([illegible]) [illegible] आदि [illegible] ग्रहण करने का. [illegible]

[illegible]

अथ चतुरिन्द्रियादीनां हिंसाप्रयोजनमाह—' हिंसंति य ' इत्यादि।

मूलम्—हिंसंति य भमरमहुकारिगणे रसेसु गिद्धा, तहेव तेइंदिए सरीरोवकरणट्ठयाए किवणे, वेइंदिए बहवे वत्थोहर परिमंडणट्ठा ॥ सू० १२ ॥

टीका—'ये' च—पुनः ' रसेसु ' रसेषु=मध्वादिषु ' गिद्धा '=गृद्धा=तद्रसलोलुपाः हिंसकाः जना मध्वादि ग्रहणार्थं 'भमरमहुकरिगणे' भ्रमरमधुकरीगणान्-भ्रमराः=कृष्णवर्णाः लोकभाषया पुंस्त्वविशिष्टाः, मधुकर्यः=लघुमधुमक्षिकाः लोकभाषया स्त्रीत्वविशिष्टाः, तेषां गणान्=समूहान् हिंसन्ति। 'तहेव' तथैव ' तेइंदिए ' त्रीन्द्रियान्=यूकामत्कुणादीन् ' सरीरोवकरणट्ठयाए ' शरीरोपकरणार्थं=शरीरस्योपकारार्थं शयनकाले मत्कुणादिकृतदुःखनिवारणार्थं हिंसन्ति। तथा 'किवणे' कृप-

अब सूत्रकार चतुरिन्द्रिय आदि जीवों की हिंसा करने वालों का क्या प्रयोजन होता है—इस बात को प्रकट करते हैं—' हिंसंति य भमरमहुकरिगणे ' इत्यादि।

टीकार्थ—(रसेसु गिद्धा) जो अवुध—अज्ञानी जन मधु (शहद) आदि रसों में लोलुप होते हैं वे उन मधु आदि रसों को प्राप्त करने के अभिप्राय से (भमरमहुकरिगणे हिंसंति) भ्रमर भ्रमरियों के समूह मारते हैं। भ्रमरियों से, मधुको एकत्रित करने वाली मधु मक्खियों का यहां ग्रहण करना चाहिये। (तहेव) इसी तरह (किवणे) दीन ऐसे (तेइंदिए) जू खटमल आदि तेइन्द्रिय जीवों की (सरीरोवकरणट्ठयाए) अपने शरीर के उपकार के लिये अर्थात् शयनकाल में जो खटमल आदि द्वारा उनके शरीर में काटने जन्य दुःख होता है उस दुःख को निवारण करने

હવે ચતુરિન્દ્રિય આદિ જીવોની હિંસા કરનારનું શું પ્રયોજન હોય છે, તે સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે—"हिंसंति य भमरमहुकरिगणे" ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—"रसेसु गिद्धे" જે અબુધ—અજ્ઞાની લોકો મધુ—મધ આદિ રસોમાં લોલુપ થાય છે તેઓ તે મધ આદિ રસોને પ્રાપ્ત કરવાને માટે "भमरमहुकरगणे हिंसंति" ભ્રમરો તથા ભ્રમરીઓના સમૂહની હત્યા કરે છે. ભ્રમરીઓ એટલે અહીં મધ એકત્ર કરનારી મધમાખીઓ સમજવી "तहेव" એજ પ્રમાણે "किवणे" બિચારા "तेइंदिए" જૂ, માંકડ આદિ તેઇન્દ્રિય જીવોની હત્યા "सरीरोवकरणट्ठयाए" પોતાના શરીરના ઉપકારને માટે એટલે કે સૂતી વખતે માંકડ આદિ જે જંતુઓ કરડે છે અને ઉંઘમાં ખલેલ પહોંચાડે છે તે દુઃખના નિવા-

णान्=दीनान् 'वहवे' बहून् 'वेइंदिए' द्वीन्द्रियान 'वत्थोहरपरिमंडणट्ठा' वस्त्रोपगृहपरिमण्डनार्थम् , 'वत्थ' वस्त्राणि 'ओहर' उपगृहाः=लघुगृहाः तेषां 'परिमंडणट्ठा' परिमण्डनार्थं=शोभार्थम् , तत्र वस्त्राणां परिमण्डनं कृमिरागेण रञ्जनम् , उपगृहाणां परिमण्डनं शङ्खशुक्तिचूर्णेनावलेपनम् । यद्वा–अर्थशब्दस्य प्रत्येकमभिसम्बन्धे–वस्त्रार्थम् , उपगृहार्थं, मण्डनार्थं चेति । तत्र पट्टसूत्रादि वस्त्रनिर्माणे कृम्याद्युपघातः, उपगृहनिर्माणे मृज्जलादिषु पुतरकाद्युपमर्दनम् , हारादिपरिमण्डननिर्माणे शुक्त्याद्युपहननं भवत्येव ॥सू०१२॥

के अभिप्राय से वे उनकी हिंसा करते हैं । इसी तरह (वेइंदिए) शंख शुक्तिका आदि जो विचारे दो इन्द्रिय जीव हैं उन बहुत से दीन जीवों की भी (वत्थोहर परिमंडणट्ठा) वस्त्र, उपगृह–लघुघर की शोभानिमित्त हिंसा करते हैं । कृमिराग से वस्त्रों का रंगना यह वस्त्रों का परिमंडन हैं । शंख, शुक्तिका के चूने से छोटे २ घरों का पोतना यह उपगृहों का परिमंडन है । अथवा अर्थ शब्द का प्रत्येक के साथ संबंध करने पर ऐसा भी इस पद का अर्थ होता है कि वस्त्र के निमित्त, उपगृह के निमित्त और मण्डन–हार आदि भूषण के निमित्त पट्टसूत्र आदि वस्त्र के निर्माण में कृम्यादि जीवों का उपघात होता है, उपगृहों के निर्माण में मिट्टी जल आदि में रहे हुए लट आदि दो इन्द्रिय जीवों का उपमर्दन होता हैं, तथा हार आदि आभूषणों के निर्माण करने में शुक्ति आदि जीवों का हनन होता है ।

भावार्थ—भ्रमर, मधुकरी आदि जो चार इन्द्रिय वाले जीव हैं, तथा

રણુ માટે તેઓ તેમની હિંસા કરે છે. એ જ રીતે "वेइंदिए" શંખ શુક્તિકા આદિ જે બિચારા દ્વિન્દ્રિય જીવોની પણુ "वत्थोहरपरिमंडणट्ठा" વસ્ત્ર. ઉપગૃહ લઘુઘરની શોભાને નિમિત્તે હિંસા કરે છે કૃમિરાગથી વસ્ત્રોને રંગવા તે વસ્ત્રોનું પરિમંડન કહેવાય છે શંખ, શુક્તિકાના ચૂનાથી નાનાં નાનાં ઘરોને લીંપવા તે ઉપગૃહ પરિમંડન કહેવાય છે. અથવા 'અર્થ' શબ્દનો દરેકની સાથે સંબંધ જોડવાથી આ પદનો એવો પણ અર્થ થઈ શકે છે કે વસ્ત્રને માટે, ઉપગૃહને માટે અને મંડન–હાર આદિ ભૂષણુને માટે પટ્ટસૂત્ર આદિ વસ્ત્ર બનાવવામાં કૃમ્યાદિ જીવોનો ઉપઘાત થાય છે, ઉપગૃહોની રચનામાં માટી, જળ આદિમાં રહેલ લટ આદિ દ્વિઇન્દ્રિય જીવોને ઘાત થાય છે, તથા હાર આદિ આભૂષણો બનાવવામાં શુક્તિ આદિ જીવોની હત્યા થાય છે.

ભાવાર્થ—ભ્રમર, મધમાખી આદિ જે ચાર ઇન્દ્રિય વાળા જીવો છે, તથા

पुनरप्याह-'अण्णेहिय' इत्यादि ।

मूलम्-अण्णेहि य एवमाइएहि बहुहिं कारणेहिं अबुहा इह हिंसति तसे पाणे, इमे य-एगिंदिए बहवे वराए, तसे य अण्णे तदस्सिए चेव तणुसरीरे समारंभंति । अत्ताणे, असरणे, अणाहे, अबंधवे, कम्मनिगडबद्धे, अकुसल-परिणाम मंदबुद्धि-जणदुव्विजाणए, पुढविमए, पुढविसंसिए, जलमए, जलगए, अणलाणिलतणवणस्सइगणनिस्सिए य, तम्मय तज्जीए चेव, तदाहारे तप्परिणयवण्णगंधरसफासबोंदिरूवे अचक्खुसे य चक्खुसे य तसकाइए असंखे थावरकाए य सुहुमबायरपत्ते य सरीरनामसाधारणे अणंते हणंति अविजाणओ य परिजाणओ य जाव इमेहिं विविहेहिं कारणेहिं किं ते ? ॥सू०१३॥

जू खटमल आदि जो तीन इन्द्रिय वाले जीव हैं, एवं शंख शुक्ति आदि जो दो इन्द्रियवाले जीव हैं, इनकी हिंसा करने का उद्देश्य जीवों का क्या होता है यह बात सूत्रकार ने इस सूत्र द्वारा प्रकट की है । जो प्राणी रस में गृद्ध बने हुए हैं वे भ्रमर मधुकरी आदि जो रस को एकत्रित करने वाले जीव हैं उनकी तथा जो प्राणी अपने शरीर आदि के उपकार करने के अभिलाषी हैं वे लोक जू खटमल आदि जीवों की एवं जो वस्त्र उपगृह आदि के निर्माण करने के अभिलाषी हैं वे शंख शुक्ति आदि दो इन्द्रिय जीवों की हिंसा करते हुए बिलकुल विचार नहीं करते हैं ॥सू०१२॥

જૂ, માકડ આદિ જે ત્રણ ઈન્દ્રિયવાળા જીવો છે, અને શંખ, છીપ આદિ જે બે ઇન્દ્રિયવાળા જીવો છે, તેમની હિંસા કરવા પાછળ લોકોનો શો હેતુ હોય છે તે સૂત્રકારે આ સૂત્રદ્વારા પ્રગટ કર્યું છે. જે માણસ રસમાં ગૃદ્ધ-લોલુપ બનેલ છે તેઓ ભ્રમર આદિ રસ એકત્ર કરનારા જે જીવો છે તેમની તથા જે લોકો પોતાના શરીર આદિના સુખનો જ વિચાર કરનારા છે તેઓ જૂ, માકડ આદિ જીવોની અને જે લોકો વસ્ત્ર, ઉપગૃહ આદિના નિર્માણની અભિલાષાવાળા છે તેઓ શંખ, છીપ આદિ દ્વીન્દ્રિય જીવોની હિંસા કરતાં બિલકુલ વિચાર કરતાં નથી. ॥ સૂ. ૧૨ ॥

टीका —'अण्णेहि य' अन्यैश्च 'एवमाइएहिं' एवमादिकैः=पूर्वोक्तसदृशैः 'बहुहिं' बहुभिः=नानाविधैः 'कारणसएहिं' कारणशतैः 'अबुहा' अबुधाः=अज्ञानिनो जनाः इह=अस्मिन् जीवलोके 'तसे पाणे' त्रसान् प्राणान्=द्वीन्द्रियादीन् 'हिंसंति' हिंसन्ति=घ्नन्ति । तथा–'इमेय' इमांश्च=अग्रे वक्ष्यमाणान् 'एगिंदिए' एकेन्द्रियान् पृथिव्यप्तेजोवायुवनस्पतिलक्षणान् 'बहवे' बहून्=अनेकान् 'वराए' वराकान्=दीनान्, तथा–'तयस्सिए चेव' तदाश्रितान् चैव=पृथिव्या केन्द्रियाश्रयस्थितानपि 'अण्णे' अन्यान् 'तणुसरीरे' तनुशरीरान्=सूक्ष्मशरीरान् 'तसे य' त्रसांश्च 'समारंभंति' समारभन्ते=उपमर्दयन्ति । कीदृशान् तान्? इत्याह–'अत्ताणे' अत्राणान्=त्राणरहितान् रक्षकाभावात्, 'असरणे' अशरणान्=शरणदातुरभावात्,

---

फिर भी कहते हैं—'अण्णेहि य' इत्यादि ।

टीकार्थ–(अण्णेहि य एवमाइएहिं बहुहिं कारणसएहिं अबुहा इह हिंसंति पाणे) इत्यादि और भी नानाविध इसी प्रकार के सैकडों कारणों से अज्ञानी जीव इस लोक में द्वीन्द्रियादिक त्रस जीवों की हिंसा करते हैं। तथा (इमेय) वक्ष्यमाण इन (बहवे) अनेक प्रकार के (वराए) दीन (एगिंदिए) पृथिवीकाय, अप्काय तेजःकाय, वायुकाय, वनस्पति काय रूप एकेन्द्रिय जीवों को और (तदस्सिए चेव) इनके आश्रित रहे हुए (अण्णे) दूसरे पूर्वोक्त त्रस जीवों से अतिरिक्त (तणुसरीरे) छोटे शरीर वाले (तसे य) त्रस जीवों की (समारंभंति) हिंसा करते हैं। इनकी हिंसा करते हुए जो इन अज्ञानी प्राणियों को संकोच नहीं होता है उसाक कारण यह है कि ये (अत्ताणे) इन एकेन्द्रियादिक जीवों का कोई रक्षक नहीं है इसलिये रक्षक के अभाव से ये सब त्राण रहित है। (असरणे)

હજી પણ સૂત્રકાર કહે છે—"अण्णेहिय" ઈત્યાદિ.

"अण्णेहिंय एवमाइएहिं बहुहि कारणसएहिं अबुहा इह हिंसंति तसे पाणे" ઈત્યાદિ બીજાં પણ એવાં જ પ્રકારનાં સેંકડો વિવિધ કારણોથી અજ્ઞાની જીવ આલોકમાં દ્વીન્દ્રિયાદિક ત્રસ જીવોની હિંસા કરે છે તથા "इमेय" આ પ્રમાણે તે "बहवे" અનેક પ્રકારના "वराए" બિચારા "एगिंदिए" પૃથિવીકાય, અપ્કાય, તેજઃકાય, વાયુકાય, વનસ્પતિકાયરૂપ એકેન્દ્રિય જીવોની અને "तदस्सिए-चेव" તેમના આશ્રયે રહેલા "अण्णे" બીજાં પૂર્વોક્ત ત્રસજીવો ઉપરાંતના "तणुसरीरे" નાનાં શરીરવાળા "तसेय" ત્રસજીવોની "समारंभंति" હિંસા કરે છે. તેમની હત્યા કરતાં તે અજ્ઞાની જીવોને સંકોચ થતો નથી કારણ કે "अत्ताणे" તે એકેન્દ્રિયાદિક જીવોનું રક્ષક કોઈ નથી. તેથી રક્ષકને અભાવે તે બધા ત્રાણહીન–(નિરાધાર) છે. "असरणे" તે પૃથિવ્યાદિ જીવો ભાગી જઈ

'अणाहे' अनाथान्=स्वाम्यभावात्, 'अबंधवे' अबान्धवान्-सहायकाभावात्, 'कम्मनिगडवद्धे' कर्मनिगडवद्धान्-कर्माण्येव निगडानि वन्धकत्वात् तैर्बद्धान् कर्मराहित्याभावात्, 'अकुसलपरिणाममंदवुद्धिजणदुव्विजाणए' अकुशलपरिणाममन्दवुद्धिजनदुर्विज्ञेयान्-कुशलः=तत्त्वातत्त्वविवेकसम्पन्नः, परिणामः=अन्तःकरणं येषां ते कुशलपरिणामाः, न कुशलपरिणामाः = अकुशलपरिणामाः= आत्मौपम्यदृष्टिविकला इत्यर्थः मन्दा=हिंसाजनितनरकनिगोदाद्यनन्तभवभ्रमणकटुकफलविवेचनशून्या-वुद्धिर्येषां ते मन्दवुद्धयस्ते च जना इति अकुशलपरि-

---

ये पृथिव्यादि जीव भगकर जा नहीं सकते, इनके आश्रित त्रस जीव यदि भगकर कहीं जावें भी तो कोई ऐसा नहीं है जो इन्हें शरण प्रदान करे अतःशरणदाता के अभाव से ये अशरण हैं। (अणाहे) कोई इनका स्वामी नहीं है इसलिये अपने स्वामी के अभाव से ये बिचारे अनाथ हैं। (अबंधवे) इनकी कष्ट में कोई सहायता करने वाला नहीं है इसलिये सहायक के अभाव से ये अबान्धव हैं। (कम्मनिगडबंधे) उस प्रकार के कर्मों का सद्भाव होने के कारण कर्मरूप निगड-बेडी से ये बंधे हुएहैं। (अकुसल-परिणाम-मंदवुद्धिजणदुव्विजाणए) अकुशल परिणाम वाले मंदवुद्धि जनों द्वारा ये दुर्विज्ञेय हैं। तत्त्व और अतत्त्व का विवेक जिनके अन्तःकरण में जगता है वे कुशल परिणाम वाले जीव हैं। इस तरह का कुशल परिणाम जिनका नहीं हैं अर्थात् सब जीवों के ऊपर जिनकी दृष्टि आत्मौपम्यवाली नही हैं और जो इस बात को भी नहीं जानते हैं कि हिंसा करने से नरक निगोद आदि अनंत भवों में भ्रमण करने रूप कटुकफल को

શકતાં નથી, તેમને આશ્રિત ત્રસજીવ જો ભાગીને કોઇપણ જગ્યાએ જાય તો પણ કોઇ એવું નથી કે જે તેને શરણ આપે, તેથી શરણદાતાને અભાવે તેઓ અશરણ છે. "अणाहे" કોઇ તેમનો સ્વામી નથી, તેથી સ્વામીને અભાવે તેઓ બિચારા અનાથ છે. "अबंधवे" કષ્ટમાં તેમને સહાય કરનાર કોઇ નથી, તેથી સહાયકને અભાવે તેઓ અબાંધવ છે. "कम्मनिगडबंधे" તે પ્રકારનાં કર્મોનો સદ્ભાવ થવાને કારણે કર્મરૂપી બેડી વડે તેઓ બંધાયેલ છે "अकुसल-परिणाम-मंदवुद्धिजणदुव्विजाणए" અકુશલ પરિણામવાળા મંદબુદ્ધિયુક્ત લોકો દ્વારા તે દુર્વિજ્ઞેય-સમજવું-મુશ્કેલ છે જેમના અંતઃકરણમાં તત્ત્વ અને અતત્ત્વનો વિવેક જાગૃત થાય છે તે કુશલ પરિણામવાળા જીવ છે. આ પ્રકારનું કુશલ પરિણામ જેમનું હોતું નથી, એટલે કે સઘળા જીવો ઉપર જેમની દૃષ્ટિ આત્મવત્ નથી, અને જે એ વાતને પણ જાણતા નથી કે હિંસા કરવાથી નરક, નિગોદ આદિ અનંત ભવોમાં ભ્રમણ કરવા રૂપ કડવા ફળો ભોગવવા પડે છે,

णाममन्दबुद्धिजनाः ते मिथ्यात्वोदयेन 'दुर्विज्ञेया' 'एते हीनदीनाः प्राणिनो रक्षणीयाः, इति ज्ञातुमशक्यास्तान्, 'पुढविमए' पृथिवीमयान्=पृथिवीकायिकान्, 'पुढवि संसिए' पृथिवीसंश्रितान्=अलसप्रभृति द्वीन्द्रियान् 'जलमए' जलमयान्-अप्कायिकान् 'जलगए' जलगतान् पूतरकादि त्रसान्, अणलाणिलतणवणस्सइगणनिस्सिए य' अनलाऽनिलतृणवनस्पतिगणनिश्रितांश्च=अनलः=अग्निः, अनिलो = वायुः, तृणानि = दर्भादीनि वनस्पतयः=वनस्पतिकायभेदा अग्रबीजादयः,-तृणं वनस्पतिकायिकमेव पुनर्वनस्पतिग्रहणं स्वगत सूक्ष्मादिसकलभेदख्यापनार्थम्, तेषां गणः=समूहस्तस्य निश्रितान् अनलाद्याश्रितान् च शब्दात्-तेजस्कायिकादींश्च, तथा-'तम्मयतज्जीए' तन्मय तज्जीवान्=तत्र तन्मयान् पृथिवी कायिकादीन्

भोगना पड़ता है, इस तरह के ज्ञान के अभाव वाले मंदबुद्धि हैं, उन जनों द्वारा मिथ्यात्व के उदय से "ये हीन दीन प्राणी रक्षा करने योग्य हैं हिंसा करने योग्य नहीं है" यह बात जानी नहीं जा सकती है इसलिये ऐसे प्राणियों द्वारा ये जीव नहीं जाने जा सकते अतः ये अज्ञानी जीव (पुढविमए) पृथ्वीकायिक जीवों को तथा (पुढविसंसिए) पृथिवी के आश्रय रहे हुए अलस आदि द्वीन्द्रिय जीवों को इसी तरह (जलमए) जलकायिक जीवों को तथा (जलगए) जलकायिक जीवों के सहारे रहे हुए पूतरकादि त्रस जीवों को, तथा (अणलाणिलतण वणस्सइगणनिस्सिए) अग्निकायिक जीवों को और अग्निकाय के सहारे रहे हुए त्रस जीवों को और वायुकायिक जीवों के सहारे रहे हुए त्रस जीवों को, तृणरूप-वनस्पतिकायिक जीवों को, एवं वनस्पतिकाय के भेद प्रभेदों के सहारे रहे हुए त्रस जीवों को भी मारते है। यही बात "तम्मयतज्जीवए"

આ પ્રકારના જ્ઞાન વિનાના જીવો મંદબુદ્ધિ છે. તે લોકો દ્વારા મિથ્યાત્વના ઉદયથી "આ હીન દીન પ્રાણીઓ રક્ષા કરવાને યોગ્ય છે હિંસાને યોગ્ય નથી." એ વાત પણ સમજી શકાતી નથી. તે કારણે એવા જીવો દ્વારા તે જીવોને જાણી શકાતા નથી, તેથી તે અજ્ઞાની જીવ "पुढविमए" પૃથ્વીકાય જીવોની તથા "पुढविसंसिए" પૃથ્વીને આશ્રયે રહેલ અળસિયાં આદિ દ્વીન્દ્રિય જીવોની, એ જ પ્રમાણે "जलमए" જલકાયિક જીવોની તથા "जलगए" જલકાયિક જીવોને આશ્રયે રહેલ પૂતરકાદિ ત્રસજીવોની, તથા "अणलाणिल तणवणस्सइगण निस्सिए" અગ્નિકાય જીવોની અને અગ્નિકાયને આશ્રયે રહેલ ત્રસ જીવોની, વાયુકાય જીવોની અને તેમને આશ્રયે રહેલ ત્રસ જીવોની, તૃણરૂપ વનસ્પતિકાય જીવોની અને વનસ્પતિકાયના ભેદ પ્રભેદોના આશ્રયે રહેલ ત્રસજીવોની હિંસા કરે છે. એ જ વાત "तम्मय तज्जीवए" ઈત્યાદિ પદો દ્વારા કહેવામાં આવે

तज्जीवान् पृथिव्यादि निश्रितांश्चैव, 'तदाहारे' तदाधारान्=ते पृथिव्यादयः आधारो येषां ते तान् तदाधारान्=पृथिव्याद्याश्रयान् अथवा 'तदाहारे' तदाहारान् ते पृथिव्यप्तेजोवायवादय एव आहारो येषां ते तान् तदाहारान् 'तप्परिणयवण्णगंधरसफासबोंदिरूवे' तत्परिणतवर्णगन्धरसस्पर्शबोंदि (शरीर) रूपान्=तेषामेव पृथिव्यादीनां परिणता वर्णगन्धरसस्पर्शैं या बोंदिः=शरीरं सैव रूपं=स्वभावो येषां ते तथा तान् , 'अचक्खुसे य' अचाक्षुषान्=चक्षुरगोचरान् 'चक्खुसे य' चाक्षुषांश्च चक्षुरिन्द्रियविषयान् 'तसकाइए' त्रसकायिकान् त्रसन्ति उष्णाद्यभितप्ताः सन्तः विवक्षितस्थानादुद्विजन्ते=गच्छन्ति छायाद्यासेवनार्थं स्थानान्तरमिति त्रसाः, यद्वा-त्रस नामकर्मोदयात् त्रस्यन्ति इति त्रसाः=त्रसनाम-कर्मोदयवर्तिनइत्यर्थः, तेषां कायोराशिस्तत्र भवास्त्रसकायिकाः, तान् , कियतः ? इत्याह-'असंखे' इत्यादि-'असंखे' असंख्यान् 'थावरकाए' स्थावरकायान् , तिष्ठ-

इत्यादि पदों द्वारा कही जाती है-(तम्मयतज्जीवए) पृथिवी कायिक आदि जीवों को तथा पृथिवी आदि के सहारे रहे हुए जीवों को, (तदा-हारे) जिन जीवों के वे पृथिवी आदिक आधारभूत हैं ऐसे जीवों को अथवा पृथिवी आदिक ही जिनका आहार है ऐसे जीवों को (तप्परिणय वण्णगंधरसफासबोंदिरूवे) तथा पृथिव्यादिकों के वर्ण, गंध, रस, स्पर्शो से जिनका शरीररूप स्वभाव परणित हो रहा है, तथा (अचक्खुसे य) जो चक्षु इन्द्रिय विषयभूत नहीं है, और (चक्खुसे य) जो चक्षु इन्द्रिय के विषयभूत भी हैं ऐसे त्रस जीवों को-उष्णादिक से संतप्त होकर जो छाया आदि के सेवन के लिये एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाते हैं, अथवा त्रस नामकर्म के उदय से जो युक्त हैं वे त्रस हैं, ऐसे त्रस जीवों को, तथा-(असंखए थावरकाए य) असंख्यात स्थावर कायों को, स्था-

છે—" तम्मयतज्जीवए " પૃથિવી કાયિક જીવોને તથા પૃથિવી આદિને આશ્રયે રહેલ જીવોને " तदाहारे " જે જીવોને તે પૃથિવી આદિ આધારભૂત છે એવા જીવોને અથવા પૃથિવી આદિ જ જેમનો આહાર છે એવા જીવોને " तप्परिणय वण्णगंधरसफासबोंदिरूवे " તથા પૃથિવી આદિકોનાં વર્ણ ગંધ, રસ, સ્પર્શોથી જેમનો શરીરરૂપ સ્વભાવ પરિણત થઇ રહ્યો છે, તથા "अचक्खुसे य" જે ચક્ષુ ઇન્દ્રિયના વિષયરૂપ નથી, અને " चक्खुसे य " જે ચક્ષુ ઇન્દ્રિયના વિષયરૂપ પણ છે એવા ત્રસ જીવોને ઉષ્ણતા આદિથી દુઃખ પામીને જે છાયા આદિના સેવન માટે એક જગ્યાએથી બીજી જગ્યાએ જાય છે, અથવા ત્રસ નામકર્મના ઉદયથી જે યુક્ત છે, તેઓ ત્રસ ગણાય છે. એવા ત્રસ જીવોને, તથા " असंखए थावर काएय " અસંખ્યાત સ્થાવરકાયોને-સ્થાવર નામકર્મનો ઉદય જેમને છે તે સ્થાવર

तीति स्थावरः, स एव काय=शरीरं येषां ते स्थावरकायाः=प्रस्तशीताऽतप सन्तापाद्युपेतत्वेऽपि अन्यत्र गन्तुमशक्ताः स्थावरनामकर्मोदयवर्त्तिनः पृथिव्यप्तेजो-वायुवनस्पतयः, तान् 'सुहुम-बायर-पत्तेय-सरीरनामसाहारणे' सूक्ष्म-बादर-प्रत्येकशरीरनामसाधारणान्, सूक्ष्मं च बादरं च प्रत्येकशरीरं च-सूक्ष्मबादर-प्रत्येकशरीराणि, तानि नामानि=नामकर्माणि येषां ते सूक्ष्मबादरप्रत्येकशरीर-नामानः, ते च ते साधारणाश्च सूक्ष्मबादरप्रत्येकशरीरनामसाधारणाः, तान्। तत्र सूक्ष्माः=चर्मचक्षुरग्राह्याः पृथिव्याद्येकेन्द्रियाः, बादराः=तएव चर्मचक्षुर्ग्राह्याः, प्रत्येकशरीराः=येषामेकमेकं जीवं प्रतिभिन्नं भिन्नं शरीरमुपजायते ते पृथिव्यादयः। साधारणाः-येषामनन्तानां जीवानां साधारणमेकं शरीरं भवति ते कन्दमूलादयः,

---

वर नाम कर्म का उदय जिनके हैं वे स्थावर हैं अथवा जो शीत आतप आदि बाधा को सहते हुए भी अन्यत्र गमन करने में अशक्त हैं अपनी इच्छा से चल फिर नहीं सकते हैं-ये स्थावर है ऐसे ये स्थावर पृथिवी, अप्, तेज वायु वनस्पति जीव हैं, इन जीवों को तथा (सुहुम-बायर-पत्तेय-सरीर नाम साहारणे) सूक्ष्म, बादर, प्रत्येक शरीररूप नाम कर्म के उदय वाले जीवों को, तथा साधारण शरीर नामकर्म के उदयवाले जीवों को, चर्मचक्षुओं से जो देखने में नहीं आते हैं वे सूक्ष्म जीव हैं, तथा जो चर्मचक्षुओं द्वारा देखे जाते हैं वे बादर हैं, ये सूक्ष्म और बादर भेद पृथिवी आदि एकेन्द्रिय जीवों के होते हैं, प्रत्येक वे जीव हैं कि जिनका भिन्न २ शरीर होता है, ऐसे पृथिव्यादिक जीव होते हैं क्यों कि इनका अपना २ भिन्न २ शरीर होता है इन जीवों को, तथा साधारण वे जीव हैं कि जिन अनंत जीवों का एक ही शरीर होता है, ऐसे वे जीव कंदमूल आदि वन-

---

કહેવાય છે અથવા જે શીત, તાપ આદિની મુશ્કેલીઓ પડવા છતાં પણ અન્યત્ર ગમન કરવાને અશક્ત છે, પોતાની ઈચ્છાથી હલનચલન કરી શકતાં નથી તે સ્થાવર છે. એવા જે સ્થાવર પૃથિવી, અપ્, તેજ, વાયુ અને વનસ્પતિ જીવો છે તે જીવોને, તથા "सुहुम, बायर, पत्तेय, सरीर नामसाहारणे" સૂક્ષ્મ, બાદર, પ્રત્યેક શરીરરૂપ નામકર્મના ઉદયવાળા જીવોને, તથા સાધારણ શરીર નામકર્મના ઉદયવાળા જીવોને, ચર્મચક્ષુઓ વડે જે દેખી શકાતાં નથી તે સૂક્ષ્મ જીવો છે, તથા જે ચર્મચક્ષુઓ દ્વારા જોઈ શકાય છે તે બાદર જીવો છે. તે સૂક્ષ્મ અને બાદર પૃથિવી આદિ એકેન્દ્રિય જીવોના હોય છે 'પ્રત્યેક જીવ' એ જીવો છે કે જેમનાં અલગ અલગ શરીર હોય છે, પૃથિવ્યાદિક જીવ એવા હોય છે કારણકે તેમને પોત પોતાનું ભિન્ન ભિન્ન શરીર હોય છે. તે જીવોને, તથા સાધારણ જીવો એ છે કે જે અનંત જીવોનું એક જ શરીર હોય છે, એવા જીવો કંદમૂળ આદિ વનસ્પતિકાયિક હોય છે. તે જીવો તે પ્રકારનાં કર્મો-

ते अनन्ता अपि जीवास्तथाविधकर्मोदयसामर्थ्यात् समकमेवोत्पत्तिदेशमधिवसन्ति, समकमेव तच्छरीरमाश्रिताः पर्याप्तिं समारभन्ते, समकमेव पर्याप्ताः भवन्ति। समकमेव च प्राणापानादि योग्यपुद्गलान् गृह्णन्ति। यच्च-एकस्य जीवस्याहारयोग्यपुद्गलोपादानं तदेवान्येषामनन्तानामपि भवतीति। 'अणंते' अनन्तान् 'अविजाणओ' अविजानतः='एते घातका अस्मान् हनिष्यन्ति' इति ज्ञानविकलान् एकेन्द्रियान् 'परिजाणओ य' परिजानतश्च स्ववधदुःखमनुभवतश्च द्वीन्द्रियादीन् 'जीवे' जीवान् 'इमेहिं' एभिः=अनुपदं वक्ष्यमाणैः 'विविहेहिं' विविधैः=नानाप्रकारैः 'कारणेहिं' कारणैः=प्रयोजनैः 'हणंति' घ्नन्ति=येषां घातं कुर्वन्तीत्यर्थः। किं ते? कानि तानि पृथिव्यादि-हिंसायाः कारणानि? इत्याह-'करिसणे'त्यादिना ॥सू० १३॥

स्पति कायिक होते हैं। ये जीव तथाविध कर्मोदयों के वश से एक साथ ही उत्पत्ति देश में रहते हैं, एकसाथ ही इनकी शरीर पर्याप्ति पूर्ण होती है। इस तरह एक ही साथ पर्याप्त होकर अनंत जीव एक ही साथ प्राणापानादि योग्य पुद्गलों को ग्रहण करते हैं। इनमें जो एक जीव का आहार होता है वही अन्य अनंत जीवों का भी होता है। इस तरह के (अणंते) अनंत साधारण जीवों को कि-(अविजाणओ) "जो यह नहीं जानते हैं कि ये घातक जन हमे मारेंगे" इस प्रकार के ज्ञान से विकल हो रहे हैं ऐसे एकेन्द्रिय जीवों को, तथा (परिजाणओ य जीवे) जो अपने वधादि संबंधी दुःखों को जानते हैं, ऐसे द्वीन्द्रियादिक जीवों को, (इमेहिं) इन अनुपद वक्ष्यमाण (विविहेहिं) नाना प्रकार के (कारणेहिं) प्रयोजनों से (हणंति) मारते हैं। (किंते) वे पृथिव्यादि की हिंसा के कारण कोन२ हैं? वह 'करिसण' इत्यादि अगले सूत्र से कहते हैं॥

દયને કારણે એક સાથે જ ઉત્પત્તિ દેશમાં રહે છે, એક સાથે જ તેમની શરીર-પર્યાપ્તિ પૂર્ણ થાય છે એ રીતે એક સાથે જ પર્યાપ્ત થઇને તે અનંત જીવ એક સાથે જ પ્રાણાપાનાદિ પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરે છે તેઓમાં એક જીવનો જે આહાર હોય છે તે જ આહાર અન્ય અનંત જીવોનો પણ હોય છે. આ પ્રકારના "अणंते" અનંત સાધારણ જીવોને કે-"अविजाणओ" "જે તે નથી જાણતાં કે એ ઘાતક લોકો અમને મારી નાખશે" એ પ્રકારના જ્ઞાનથી જે રહિત છે એવા એકેન્દ્રિય જીવોને, તથા "परिजाणओ य जीवे" જે પોતાના વધાદિ સંબંધી દુઃખોને જાણે છે એવા દ્વીન્દ્રિય આદિક જીવોને, "इमेहिं" આ હવે પછીના પદોમાં દર્શાવેલ "विविहेहिं" વિવિધ પ્રકારનાં "कारेणहिं" પ્રયોજનોથી "हणंति" મારે છે. "कि ते?" તે પૃથ્વીકાય આદિની હિંસાનાં કયાં કયાં કારણો છે, તે "करिसण" ઇત્યાદિ હવે પછીના સૂત્ર દ્વારા કહેવામાં આવે છે.

अथ पूर्वं पृथिवीकायहिंसाकारणान्याह—'करिसण' इत्यादि० ।

मूलम्—करिसण-पोक्खरणी-वावि-वप्पिण-कूव सर-तलाग-चिइ चेइय-खाइय-आराम-विहार-थूम-पागार-दार-गोउर-अट्टालग-चरिया-सेउ-संकम-पासाय-विकप्प-भवण-घर-सरण-लयण-आवण-वेइय-देवकुल-चित्त-सभा-पवा-आययण-आवसह-भूमिघर-मंडवा-णकए-भायणभंडोवगरणस्स य विविहस्स य अट्ठाए पुढवि हिंसंति मंदबुद्धिया ॥ सू० १४ ॥

टीका—'करिसण' इत्यादि । 'करिसण' कर्षणं=कृषिः 'पोक्खरिणी' पुष्करिणी =समचतुष्कोणा कमलकाननकान्तिकमनिया पयःपूरपूरितपातालकुक्षितला नानाविधचित्रविचित्रपतत्त्रिकुलकूजितपुञ्जितपुलिनमण्डलमण्डनसुरम्या, 'वावि'

१ 'केयारो वप्पिणं वप्पो' इति 'पाइअलच्छीनाममाला'।

भावार्थ—जो आत्मबोध से विकल प्राणी हैं वे स्थावर और त्रस जीवों की नाना प्रकार के प्रयोजनों के वशवर्ती होकर विराधना करते हैं। पृथिवीकाय आदि स्थावर जीव हैं, क्यों कि इनके स्थावर नामकर्म का उदय है। द्वीन्द्रियादिक त्रस जीव हैं, क्यों कि इनके त्रस नामकर्म का उदय है। इसी कारण से स्थावर जीव अपनी इच्छानुसार एक स्थान से दूसरे स्थान पर चल फिर नहीं सकते हैं। त्रस जीव अपनी इच्छा-नुसार चल फिर सकते हैं ॥ सू०१३ ॥

अब सूत्रकार उन कारणों को कहते हुए प्रथम पृथिवीकाय की हिंसा के कारणों को कहते हैं—'करिसणपोक्खरिणी' इत्यादि।

टीकार्थ—(करिसण) कृषि-खेती के निमित्त, (पोक्खरिणी) पोक्ख-

ભાવાર્થ—જે પ્રાણીઓ આત્મબોધથી રહિત છે તેઓ સ્થાવર અને ત્રસ જીવોની અનેક પ્રકારના પ્રયોજનથી દોરાઇને હિંસા કરે છે. પૃથિવીકાય આદિ સ્થાવર જીવ છે, કારણકે તેમના સ્થાવર નામકર્મનો ઉદય થયો હોય છે. દ્વીન્દ્રિયાદિક ત્રસ જીવ છે, કારણકે તેમના ત્રસ નામકર્મનો ઉદય થયો હોય છે. એ જ પ્રમાણે સ્થાવર જીવ પોતાની ઇચ્છા પ્રમાણે એક જગ્યાએથી બીજી જગ્યાએ જઇ શકતા નથી. ત્રસજીવ પોતાની ઇચ્છા પ્રમાણે હરીફરી શકે છે ॥સૂ. ૧૩॥

હવે સૂત્રકાર તે કારણોને બતાવતા પ્રથમ પૃથિવીકાયની હિંસાનાં કારણો આપે છે—"करिसणपोक्खरिणी" ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—"करिसण" કૃષિ-ખેતીને નિમિત્તે "पोक्खरिणि" પોકખરિણી-

वापी = दीर्घायामा ' वप्पिण ' वप्राणि = क्षेत्राणि, 'कूव' कूपाः ' सर ' सरः-कृत्रिमजलाशयः 'तलाग' तड़ागस्तदितरः प्रसिद्धः एव, 'चिइ' चितिः, मृतकदह-नार्थं काष्ठचयनम्, 'चेइय' चैत्यम्-मृतकोपरिस्मारकचिह्नम्, 'खाइय' खातिका= परिखा, आरामः-गृहसमीपोपवनम्, विहारः=विह्रियतेऽत्रेति विहारः क्रीडास्थान-विशेषः, 'थूम' स्तूपः=स्मारकस्तम्भः 'पागार' प्राकारः 'गढ़' इति भाषाप्रसिद्धः, 'दारं' द्वारं प्रसिद्धम्, गोउर' गोपुरं=पुरद्वारम्, 'अट्टालग' अट्टालकः='छत''अटारी' इति प्रसिद्धः, 'चरिया' चरिका=दुर्गनगरयोर्मध्यस्थितः अष्टहस्तप्रमाणः हस्त्यादि संचारमार्गः, 'सेउ' सेतुः='पुल' इति प्रसिद्धः, 'संकम ' संक्रमः=संक्रम्यते येन स संक्रमः=जलगर्तपारकरणाय पाषाण काष्ठरचित मार्गः, 'पासाय' प्रासादः=नृपगृहम् विकप्प' विकल्पाः=तद्भेदाः 'भवण' भवनानि, भवनमायामापेक्षया किञ्चिदल्पमु-च्छ्रायमानं भवति, प्रासादस्तु आयामद्विगुणोच्छ्रायः, इति प्रासादभवनयोर्विशेषः,

---

रिणी-पुष्करिणी के निमित्त (वावि) वापी-वाव के निमित्त (वप्पिण) वावडी के निमित्त (कूव) कूप कुवा-के निमित्त (सर) सर-कृत्रिम जलाशय के निमित्त (तलाग) तलाग-तड़ाग के निमित्त (चिइ) चिति के निमित्त (चेइय) चैत्य के निमित्त (खाइय) खातिका के निमित्त (आराम) आराम का निमित्त (विहार) विहार के निमित्त (थूभ) स्तूप के निमित्त (पागार) प्राकार के निमित्त (दार) द्वार के निमित्त (गोउर) गोपुर के निमित्त (अट्टालग) अट्टालिका अटारी के निमित्त (चरिया) चरिका के निमित्त (सेउ) सेतु-पुल के निमित्त (संकम) संक्रम के निमित्त (पासाय) प्रासाद-राजमहल के निमित्त (विकप्प) विकप्प-विकल्प के निमित्त (भवण) राजमहल विशेष-उनके लिये

પુષ્કરિણીને નિમિત્તે "वावि" વાપી-વાવને નિમિત્તે "वप्पिण" વાવડીને નિમિત્તે "कूव" કૂવ-કૂવાને નિમિત્તે "सर" સર-કૃત્રિમ જળાશયને નિમિત્તે "तलाग" તલાગ-તળાવને નિમિત્તે "चिइ" ચિતિને નિમિત્તે "चेइय" ચૈત્યને નિમિત્તે "खाइय" ખાતિકા-ખાઇને નિમિત્તે "आराम" આરામ-બગીચાના નિમિત્તે "विहार" વિહારને નિમિત્તે "थूम" સ્તૂપને નિમિત્તે "पागार" પ્રાકાર-કિલ્લાને નિમિત્તે "दार" દ્વારને નિમિત્તે "गोउर" ગોપુરને નિમિત્તે "अट्टालग" અટ્ટાલિકાને નિમિત્તે "चरिया" ચરિકાને નિમિત્તે "सेउ" સેતુ-પુલને નિમિત્તે "संकम" સંક્રમને નિમિત્તે "पासाय" પ્રાસાદ-રાજમહેલને નિમિત્તે "विकप्प" વિકપ્પ-વિકલ્પને નિમિત્તે "भवण" એટલે કે એક પ્રકારના રાજમહેલ માટે,

'घर' गृहाः=प्रसिद्धा, 'सरण' शरणानि=सामान्यगृहाणि, 'लयण' लयनानि पर्वतवर्त्ति पाषाणगृहाणि, 'आवण' आपणाः=हट्टाः, 'वेइय' वेदिका=परिष्कृता भूमिः, 'देवकुलानि=यक्षगृहाणि, 'चित्तसभा' चित्रसभा-चित्रयुक्तसमास्थानम्, 'पवा' प्रपा=पानीयशाला 'प्याऊ' इति भाषा प्रसिद्धा, 'आययण' आयतनं=यज्ञशाला, 'आवसह' आवसथः-तापसाश्रमः, 'भूमिघर' भूमिगृहं=गुहारूपं पृथिवीगृहम्, 'मंडवाण' मण्डपाः=पटनिर्मितगृहास्तेषां, 'कए' कृते-एतन्निमित्तमित्यर्थः। तथा 'भायण भंडोवगरणस्स' भाजनभाण्डोपकरणस्य भाजनानि=सौवर्णराजतादीनि, भाण्डानि=मृण्मयानि शरावादीनि, उपकरणानि=उदूखल मुसलादीनि एतेषां समाहारद्वन्द्वे-भाजनभाण्डोपकरणम्, तस्य च 'विविहस्स य' विविधस्य च=अनेक प्रकारस्य 'अट्ठाए' अर्थाय=प्रयोजनाय 'मंदबुद्धिया' मन्दबुद्धिकाः=स्वपरहिताहितविवेकविकलाजनाः, 'पुढवीं' पृथिवीं 'हिंसंति' घ्नन्ति ॥सू०१४॥

(घर) घर के निमित्त (सरण) शरण-सामान्यगृह के निमित्त (लयण) लयन-पर्वतवर्ति पाषाण घर के निमित्त (आवण) आपण-हाट के निमित्त (वेइय) वेदिका-चोतरे के निमित्त (देवकुल) देवकुल-यक्षायतन के निमित्त (चित्तसभा) चित्रसभा-चित्रयुक्त सभा के निमित्त (पवा) प्रपा-प्याऊ के निमित्त "आययण" आयतन-यज्ञशाला के निमित्त (आवसह) अवसथ-तापसों के आश्रम के निमित्त (भूमिघर) भूमिगृह के निमित्त (मंडवाणकए) मंडप के निमित्त तथा (भायण भंडोवगरणस्स य विविहस्स य अट्ठाए पुढविं हिंसंति मंदबुद्धिया) नाना प्रकारके भाजन भांडोपकरणके निमित्त मन्दबुद्धिजन पृथिवीकाय जीवोंकी हिंसा करतेहैं।

भावार्थ—पृथिवी कायिक एकेन्द्रिय जीव है। इस एकेन्द्रिय जीव की हिंसा करने का निमित्त-प्रयोजन क्या होता है—इस विषय को सूत्र

"घर" ઘરને નિમિત્તે "सरण" શરણ-સામાન્ય ગૃહને નિમિત્તે "लयण" લયન પર્વતવર્તિ પાષણ ઘરને નિમિત્તે "आवण" આપણ-દુકાનને નિમિત્તે "वेइय" વેદિકા-ચોતરાને નિમિત્તે "देवकुल" દેવકુલ-યક્ષાયતનને નિમિત્તે "चित्तसभा" ચિત્રસભા-ચિત્રયુક્ત સભાને નિમિત્તે "पवा" પ્રપા-પરબ નિમિત્તે "आययण" આયતન યજ્ઞશાળાને નિમિત્તે "आवसह" આવસથ-તાપસોના આશ્રમોને નિમિત્તે "भूमिघर" ભૂમિગૃહને નિમિત્તે 'मडवाणकए" મંડપને નિમિત્તે, તથા "भायण भंडोवगरणस्स य विविहस्स य अट्ठाए पुढविं हिंसति मंदबुद्धिया" અનેક પ્રકારના ભાજન, ભાંડોપકરણને નિમિત્તે મંદ બુદ્ધિવાળા લોકો પૃથ્વીકાય જીવોનીહિંસા કરે છે.

ભાવાર્થ—પૃથ્વીકાયિક જીવો એક ઇન્દ્રિયવાળા હોય છે, એ એકેન્દ્રિય જીવની હિંસા કરવાનાં નિમિત્તો, પ્રયોજનો કયાં કયાં હોય છે, તે વિષે સૂત્ર-

कार ने यहां निर्दिष्ट किया है। मंदबुद्धिजनों से यहां तात्पर्य स्वपर हित के विवेक से विकल जनों से है। जिन्हें स्व और पर का विवेक नहीं है ऐसे प्राणी ही कृषी आदि इन उपर्युक्त कारणों के वशवर्ती होकर पृथिवी कायिक जीव की हिंसा किया करते हैं। कृषीकर्म प्रसिद्ध हैं। जिसके चारों कोण समान हों, कमल जिसमें विकसित हो रहे हों, अगाध जल जिसमें भरा हो, नाना प्रकार के कलरव से जिसके तट मण्डित हो ऐसे सुरम्य जलाशय का नाम पुष्करिणी है। जिसका विस्तार दीर्घ हो उसका नाम वापी है। हिन्दी में इसे वावडी कहते हैं। अनाज के बोने का जो स्थान होता है उसे क्षेत्र–खेत कहते हैं। कृत्रिम जलाशय का नाम सर है। स्वाभाविक जलाशय का नाम तडाग है, इसे हिन्दी में तालाब कहते हैं। चिता का नाम चिति है, जो मृतक के दाह संस्कार के निमित्त श्मशान में लकडियों के ढेर के रूप में चिनी जाती है। किसी मृतक की यादगार में जो उसका स्मृति चिह्न स्वरूप भवन आदि बना दिया जाता है उसका नाम चैत्य है। किले के परकोटे के चारों ओर जो गहरी खाई होती है कि जिसमें जल भी भरा रहता है उसका नाम खातिका–खाई हैं। घर के पास के बगीचे का नाम आराम है, नगर से कुछ दूर पर जो जनों का क्रीडा स्थान होता है उसका नाम विहार है। जो स्मारक

કાર આ સૂત્રમાં સ્પષ્ટીકરણ કરે છે. અહીં મંદબુદ્ધિજનોનો અર્થ, પોતાનું અને પારકાનું હિત ન જાણનાર લોકો થાય છે જેમને સ્વ અને પરનો વિવેક હોતો નથી એવા જીવોજ કૃષિ આદિ ઉપર કહેલ કારણોને વશ થઈને પૃથિવી કાયિક જીવની હિંસા કર્યા કરે છે. કૃષિકર્મ પ્રસિદ્ધ છે. એટલે તેને વિષે સ્પષ્ટીકરણની જરૂર નથી જેના ચારે ખૂણા સમાન હોય, જેમાં કમળો વિકસ્યાં હોય, જેણાં ઊંડુ પાણી ભરેલું હોય વિવિધ પ્રકારના કલરવથી જેનો તટ મંડિત હોય એવા સુંદર જળાશયને પુષ્કરિણી કહે છે જેનો વિસ્તાર લાંબો હોય તેવી વાવને વાપી કહે છે. હિંદીમાં તેને વાવડી કહે છે, અનાજ વાવવાનું જે સ્થાન હોય છે તેને ક્ષેત્ર-ખેતર કહે છે. કૃત્રિમ જળાશયને સર કહે છે. ચિતાને ચિતિ કહે છે, જે મૃત શરીરને અગ્નિદાહ દેવાને માટે લાકડાંના ઢગલા રૂપે ખડકવામાં આવે છે. કોઈ મૃત વ્યક્તિના સ્મરણાર્થે જે ભવન આદિ બનાવાય છે તેને ચૈત્ય કહે છે. કિલ્લાની દિવાલની ચારે તરફ જે ઊંડી ખાઇ હોય છે, અને જેમાં પાણી પણ ભરેલુ રહે છે. તે ખાઇને ખાતિકા ખાઈ કહે છે. ઘર પાસેના બાગને આરામ કહે છે. નગરથી દૂર જે લોકોનું ક્રીડા સ્થાન હોય છે તેને

स्तंभ बनाया जाता है वह स्तूप है। प्राकार–जिसे हिन्दी भाषा में गढ़ कहते हैं। नगर में प्रवेश करने का जो प्रधान द्वार होता है उसका नाम गोपुर है। दुमंजिले आदि मकानों के छत को अटारी कहते हैं। दुर्ग और नगर के बीच में जो आठ हाथ प्रमाण का मार्ग होता है कि जिससे होकर हाथी आदि आते जाते रहते हैं उसका नाम चरिका है। जल की धारा प्रवाह को पार करने के लिये जो पाषाण अथवा काष्ठ का उस पर मार्ग बना दिया जाता है उसका नाम संक्रम है। ऐसे स्थान नदी नालों आदि जलाशय प्रदेशों पर बने हुए रहते हैं। राजमहल प्रसिद्ध है, इसे संस्कृत भाषा में प्रासाद कहते हैं। भवन–लम्बाई की अपेक्षा कुछ थोड़ी कम ऊँचाई वाला होता है। तथा जो प्रासाद होता है वह भवन की अपेक्षा द्विगुणित ऊँचाई वाला होता है। सामान्यघर का नाम शरण है। पर्वत के पास जो पत्थरों के घर बने हुए होते हैं उनका नाम लयन है। दुकान का नाम हट्ट या हाट है। परिष्कृत भूमि का नाम वेदिका है। देवकुल–यक्षायतन–यक्ष के स्थान को कहते हैं। जिस सभा-स्थान में चित्र होते हैं उसका नाम चित्रसभा है। जहां लोगों को पानी पिलाया जाता है उसका नाम प्याऊ है। यज्ञशाला का नाम आयतन, तापसाश्रम का नाम आवसथ, पृथिवी के नीचे बने हुए घर का नाम

વિહાર કહે છે. સ્મારક-સ્તંભને સ્તૂપ કહે છે. કિલ્લાને પ્રાકાર કહે છે. નગરમાં પ્રવેશ કરવાનું જે મુખ્યદ્વાર હોય છે તેને ગોપુર કહે છે. બે માળના આદિ મકાનોની અગાશીને અટારી કહે છે. દુર્ગ અને નગરની વચ્ચે જે આઠ હાથ પહોળો માર્ગ હોય છે, કે જ્યાં થઈ હાથી આદિ આવે જાય છે, તે માર્ગને ચરિકા કહે છે. પાણીના પ્રવાહને ઓળંગવાને માટે તેના પર પથ્થર અથવા લાકડાનો જે માર્ગ બનાવવામા આવે છે તેને સંક્રમ (પુલ) કહે છે. એવાં સ્થાનો નદી, નાળાં, આદિ જળાશયો પર બનાવેલાં હોય છે રાજમહેલ શબ્દ જાણીતો છે. તેને સંસ્કૃત ભાષામાં પ્રાસાદ કહે છે. ભવનની ઊંચાઈ પ્રાસાદ કરતાં ઓછી હોય છે. ભવન કરતાં પ્રાસાદની ઊંચાઈ બમણી હોય છે. સામાન્ય ઘરને શરણુ કહે છે. પર્વતની પાસે પથ્થરોનાં જે ઘરો હોય છે તેમને લયન કહે છે. દુકાનને હટ્ટ અથવા હાટ કહે છે- ચોતરાને વેદિકા કહે છે. દેવકુલ-યક્ષાતન યક્ષના સ્થાનને કહે છે. જે સભાસ્થાનમાં ચિત્રો હોય છે, તે સભાસ્થાનને ચિત્રસભા કહે છે. જ્યાં લોકોને પાણી પાવામાં આવે છે તે જગ્યાને પ્યાઊ-પરબ કહે છે. યજ્ઞશાળાને આયતન, તાપસના આશ્રમને આવસથ, જમીનની અંદર બનાવેલ

अथाऽप्कायहिंसाकारणान्याह—'जलं च' इत्यादि ।

मूलम्— जलं च मज्जणय–पाण–भोयण–वत्थ धोवण–सोयमाइएहिं ॥सू०१५॥

टीका—'मज्जणय' मज्जनकं=स्नानं 'पाण' पानं 'भोयण' भोजनं 'वत्थधोवण' वस्त्रधावनं=वस्त्रप्रक्षालनं 'सोय' शौचम् 'आइएहिं' आदिभिः=मज्जनाद्यनेक कारणैः 'जलं च'=अप्कायं हिंसन्ति ॥सू०१५॥

अथाग्निकायहिंसाकारणान्याह—'पयण' इत्यादि ।

मूलम्—पयण–पयावण–जलण–जलावण–विदंसणेहिं अगणिं ॥सू०१६॥

टीका—'पयण' पचनं-स्वयं, 'पयावण' पाचनमन्यैः 'जलणं' ज्वलनं=स्वहस्तेन प्रदीपनम्, 'जलावण' ज्वालनम्=अन्यैः, 'विदंसण' विदर्शनं=प्रकाशकरणम्, एभिः कारणैः=प्रयोजनैः 'अगणिं' अग्निं हिंसन्ति ॥सू०१६॥

भूमिघर या तलघर, तंबू का नाम पट्टघर, अथवा मंडप है। चांदी सोने के बने हुए बर्तनों का नाम यहां भाजन एवं मिट्टी के बने हुए बर्तनों का नाम भांड है। उदूखल (ओखली) तथा मुसल आदि को यहां उपकरण से ग्रहण किया है ॥सू० १४॥

अब अप्काय की हिंसा करने के प्रयोजन को सूत्रकार स्पष्ट करते हैं 'जलं च मज्जण य' इत्यादि ।

टीकार्थ—(मज्जणय) स्नान, (पाण) पान, (भोयण) भोजन, (वत्थधोवण) वस्त्रप्रक्षालन, (सोय) शौच, इत्यादि कारणों को लेकर (जलं च) अप्काय-जलकाय की हिंसा करते हैं ॥ सू०१५ ॥

अब अग्निकाय की हिंसा करने के प्रयोजन को सूत्रकार कहते

घरने भूमिघर अथवा तलघर अने तंबूने पटघर अथवा मंडप कहे छे. चांदी सोनामांथी बनावेल वासणोने भाजन अने माटीमाथी बनावेलां वासणोनेभांड कहे छे. खांडणियो तथा सांबेला आदिने अहीं उपकरणथी ग्रहण करेल छे ॥ सू १४॥

हवे अप्काय (जळकाय)नी हिंसा करवाना प्रयोजनने सूत्रकार स्पष्ट करे "जलं च मज्जण य" ईत्यादि

टीकार्थ—"मज्जणय" स्नान, "पाण" पान "भोयण" भोजन, "वत्थधोवण" वस्त्रधोवा, "सोया" शौच ईत्यादि कारणोने लीधे अपूकाय जळकायनी हिंसा थाय छे ॥सू० १५॥

हवे अग्निकायनी हिंसा करवानां प्रयोजनोने सूत्रकार बतावे छे—

अथ वायुकायहिंसाकारणान्याह—'सुप्प' इत्यादि।

मूलम्—सुप्प-वियण-तालियंट-पेहुण-मुह-करयल सग्गपत्त-वत्थ एवमाइएहिं अणिलं ॥ सू० १७ ॥

टीका—'सुप्प' शूर्पः=अन्नशोधनोपकरणविशेषः, 'छाज' 'सूपडा' इति भाषाप्रसिद्धः 'वियण' व्यजनं=वंशशलाकादिनिर्मितम्, 'तालियंट' तालवृन्तं 'तालपंखा' इति प्रसिद्धम्, 'पेहुणग' पेहुणकं=मयूरपिच्छकृतव्यजनं 'मुह' मुखं

है—'पयणपयावण' इत्यादि।

टीकार्थ-(पयण-पयावण-जलण-जलावण-विदंसणेहिं अगणिं) स्वयं भोजन बनाना, दूसरोंसे भोजन बनवाना, स्वयं अग्नि जलाना, दूसरोंसे अग्नि जलवाना, तथा दीपक जलाकर प्रकाश करना, इत्यादि प्रयोजनों को लेकर अग्निकाय की हिंसा करते हैं॥ सू०१६ ॥

वायुकाय की हिंसा करने के प्रयोजन को सूत्रकार कहते हैं—'सुप्पवियण' इत्यादि।

टीकार्थ-(सुप्प-वियण-तालीयंट-पेहुण-मुह-करयल सगगपत्तवत्थएवमाइएहिं अणिलं) सूपसे जब पछाड़२ कर अन्न आदि शोधन करते हैं तब, वंशशलाका आदि से निर्मित पंखे से जब हवा की जाती हे तब, तालवृक्ष के पत्ते से बने हुए पंखे से जब हवा की जाती है तब; मयूर के पिच्छों से निर्मित पंखे से जब हवा की जाती है तब, मुख

"पयणपयावण" ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ-"पयण, पयावण, जलण, जलावण, विंदंसणेहिं अगणिं" જાતે ભોજન બનાવવાને, બીજા પાસે ભોજન બનાવરાવવાને, પોતે અગ્નિ સળગાવવાને, અન્ય પાસે અગ્નિ સળગાવરાવવાને, તથા દીવો સળગાવીને પ્રકાશ કરવા, ઈત્યાદિ પ્રયોજનોને માટે અગ્નિકાયની હિંસા કરે છે. ॥સૂ.૧૬॥

હવે વાયુકાયની હિંસા કરવાનાં પ્રયોજનોને સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે—

"सुप्प वियण" ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ-"सुप्प, वियण, तालियंट, पहुण, मुह, करयल सग्गपत्त वत्थ एवमाइएहिं अणिलं" જ્યારે સૂપડા વડે ઝાટકીને અનાજ સાફ કરાય છે ત્યારે, વાંસની સળીઓ આદિમાંથી બનાવેલા પંખા વડે જ્યારે હવા ખવાય છે ત્યારે, તાડનાં પાનાંમાંથી બનાવેલ પંખા વડે જ્યારે પવન નંખાય છે ત્યારે, મોરનાં પીછાંમાંથી બનાવેલ પંખા વડે જ્યારે પવન નખાય છે ત્યારે, જ્યારે કોઇ નિમિત્તે મુખથી

'करयल' करतलं=हस्ततलं 'सग्गपत्त' सागपत्रं=वृक्षविशेषपत्रं 'वत्थ' वस्त्रम्, 'एवमाइएहिं' एवमादिभिः=इत्यादिभिर्वायूदीरकविद्युद्व्यजनादिसाधनैः 'अणिलं' अनिलं=वायुं हिंसन्ति ॥सू० १७॥

अथ वनस्पतिकायहिंसाकारणान्याह—'अगारे'त्यादि।

मूलम्—अगार--परियार-भक्ख-भोयण--सयणासण-फलग-मुसल-उखल-तत-विततातोज्ज-वहण-वाहण-मंडग-विविहभवण-तोरण-विटंग-देवकुल-जालयद्धचंद-निज्जूहग-चंद-सालिय-वेइय-णिस्से-णिदोणि-चंगेरी-खील-मंडव-सभा-पवा-ऽऽवसह-गंधमल्लाणु लेवणं-वर-जुय-नंगल-मेइय-कुलिय-संदणसीया-रह-सगड-जाण-जोग्ग-अट्टालग-चरिअदार-गोपुर-फलिहा-जंत-सूलिया लउड-मुसंढि-सयग्घी-बहुपहरणा-वरणुवक्खराण कए अण्णेहिं एवमाइएहिं बहुहिं कारणसएहिं हिंसंति तरुगणे भणिए अभणिए य एवमाई ॥ सू० १८ ॥

से जब किसी निमित्त फूंक मारी जाती है तब, और खुले मुंह बोलते हैं तब, जब हाथों से ताली बजाई जाती है तब, जब पत्र शाक के पत्तों को साफ करने के लिये उन्हें हाथ पर झटकारा जाता है तब, और जब वस्त्र के अंचल से हवा की जाती है तव, तथा विजली आदि के पंखों से जब हवा की जाती है तब वायुकाय के जीवों की हिंसा होती है। तात्पर्य इसका यह है कि जितने भी वायूदीरक साधन हैं उन से वायुकाय के जीवों की हिंसा होती है ॥सू–१७॥

अब वनस्पति की हिंसा करने के प्रयोजन को सूत्रकार कहते हैं–

ફુંક મારવામાં આવે છે ત્યારે, જ્યારે ખુલ્લે મોઢે બોલવામાં આવે છે ત્યારે જ્યારે હાથો વડે તાળી વગાડવામાં આવે છે ત્યારે, જ્યારે શાકનાં પાનને સાફ કરવાને માટે હાથથી ઝાટકવામાં આવે છે. ત્યારે, તથા વીજળી આદિના પંખા વડે જ્યારે હવા ખાવામાં આવે છે ત્યારે વાયુકાય જીવોની હિંસા થાય છે. તેનું તાત્પર્ય એ છે કે હવા ખાવાનાં જેટલાં સાધનો છે તેમનાથી વાયુકાય જીવોની હિંસા થાય છે ॥સૂ. ૧૭॥

હવે વનસ્પતિકાયની હિંસા કરવાનાં પ્રયોજનોને સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે.

टीका—'अगार' अगारं=गृहं 'परियार' परिचारः=जीविकाः, खड्गादि कोशो वा 'भक्ख' भक्ष्याणि=मोदकादीनि 'भोयण' भोजनानि=ओदनादीनि, 'सयणासण' शयनासनानि-शयनानि=मञ्च पर्यङ्कादिशय्याः; आसनानि-भद्रासनादीनि 'फलग' 'फलकानि=काष्ठनिर्मितवस्तुविशेषाः 'तख्ता' इति भाषा प्रसिद्धानि 'मुसलमुदूखलं च प्रसिद्धम्, ततानि=वीणादीनि-विततानि=मुरजभेर्य्यादीनि, 'आतोज्ज' आतोद्यानि=वाद्यविशेषाः, 'वहण' वहनानि=पोतनौकादीनि यानपात्राणि 'वाहण' वाहनानि=शिविकादीनि 'भंडग' भाण्डानि=गृहोपकरणानि, 'विविहभवण' विविध भवनानि=सर्वतोभद्रादिभवनानि, तोरणानि=द्वारशोभाकारिवन्दनमालादीनि, 'विटंग' विटङ्काः=कपोतपालेयः 'छज्जा' इति भाषा प्रसिद्धाः, देवकुलानि=यक्ष गृहाः, 'जालय' जालकानि=गवाक्षविशेषाः, 'अद्धचंद' अर्धचन्द्राः=अर्धचन्द्राकार-

---

'अगार-परियार-भक्ख' इत्यादि।

टीकार्थ-(अगार) अगार-गृह, (परियार) परिचार-जीविका अथवा खड्गादिकोश-म्यान, (भक्ख) भक्ष्य-मोदक आदि खाने योग्य द्रव्य, (भोयण) भोजन-ओदनादि द्रव्य, (सायणासण) शयनासन-मञ्च पर्यङ्क आदि शय्या, भद्रासन आदि आसन, (फलग) फलक-काष्ठनिर्मित वस्तुविशेष-तख्ता, (मुसल) मुसल, उदूखल-ओखली (तत) तत-वीणा आदि वाद्य (वितत) वितत-मुरज भेरी आदि बाजे, (आतोज्ज) आतोद्य वाद्यविशेष, (वहण) वहन-पोत, नौका आदि यान पात्र, (वाहण) वाहण शिविका आदि, (भंडग) भंडक-गृहके उपकरण, (विविहभवण) विविध भवन-सर्वतोभद्र आदि मकान, (तोरण) तोरण-द्वार की शोभा वर्धक वंदन-माला आदि, (विटंग) विटंक-कपोतपाली-छज्जा, (देवकुल) देवकुल यक्षगृह, (जालय) जालकगवाक्ष-खिडकी, (अद्धचंद) अर्धचंद्राकार

"अगार, परियार-भक्ख" ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—"आगार"અગાર—ગૃહ "परियार" પરિચાર—જીવિકા અથવા તલવાર આદિનું મ્યાન "भक्ख" ભક્ષ્ય—લાડુ આદિ ખાવા લાયક દ્રવ્ય "भोयण" ભોજન-ભાત આદિદ્રવ્ય "सयणासण" શયનાસન—ખાટલો પલંગ આદિ શય્યાનાં સાધનો, ભદ્રાસન આદિ આસન "फलग" ફલક-લાકડાની પાટ, પાટિયું "मुसल" સાંબેલું, ઉદૂખલ—ખાંડણિયો "तत" તત વીણા આદિ વાદ્ય "वितत" વિતત—મુરજ ભેરી આદિ વાજીંત્રો "आतोज्ज" આતોદ્ય—એક પ્રકારનું વાદ્ય વિશેષ "वहण" વહન પોત નૌકા આદિ; વાહન—પાલખી આદિ "भंडग" ભંડક ગૃહનાં ઉપકરણો, "विविहभवण" વિવિધ ભવન—સર્વતોભદ્ર આદિ મકાન "तोरण" દ્વારની શોભા વધારનાર વંદનમાલા આદિ "विटंग" વિટંક—છજું "देवकुल" યક્ષગૃહ "जालय" જાલક—ગવાક્ષ બારી "निज्जूहग" બારી "अद्धचंद" અર્ધચન્દ્ર-અર્ધચન્દ્રાકાર સોપાન

सोपानविशेषाः, 'निज्जूहग' निर्य्यूहकाणि=द्वारोर्ध्वभागवहिर्निर्गताः घोटकाद्या-काराः काष्ठविशेषाः, 'चंदसालिय' चन्द्रशालिकाः=प्रासादोपरितनशालाः 'वेइय' वेदिका=प्राङ्गणे कृतोपवेशनस्थानम्, 'णिस्सेणि' निःश्रेणिः 'सीढी' इति प्रसिद्धा 'दोणि' द्रोणिः=लघुनौका, 'चंगेरी' तृणादिनिर्मितपात्रविशेषः 'टोकरी' इति भाषा प्रसिद्धा देशीशब्दोऽयम्, 'खील' कीलाः=प्रसिद्धाः, 'मंडव' मण्डपाः=पट-गृहाः, द्राक्षादिमण्डपा वा; सभाः=जनोपवेशनस्थानानि, 'पवा' प्रपाः पानीय-शालाः, 'आवसह' आवसथाः=तापसाश्रमाः 'गंध' गन्धाः=गन्धद्रव्याणि, 'मल्ल' माल्यानि=कुसुमानि=माल्यं=कुसुमस्रग् वा, 'अणुलेवण' अनुलेपनं=चन्दनं, 'अंबर' अम्बराणि=वस्त्राणि, 'जुय' युगानि 'झूसरा' इति भाषा प्रसिद्धानि, 'नंगल' लाङ्गलानि हलानि, 'मेइय' मेतिकानि यैः कृष्टक्षेत्रं मृद्यते, 'कुलिय' कुलि-कानि हलभेदाः 'संदण' स्यन्दनो रथविशेषाः, 'सीया' शिबिकाः-'पालखी' इति

सोपानविशेष, (निज्जूहग) निर्य्यूहक-द्वारके उर्ध्वभागमें बाहर की ओर लगे हुए घोड़ा आदि के आकार वाले काष्ठ विशेष, (चंदसालिय) चंद्रशालिका-प्रासाद के ऊपरकी शाला, (वेइय) वेदिका-आंगनमें बैठने के लिये बना हुआ स्थान, (णिस्सेणि) निःश्रेणी-नसेनी-सीढी, (दोणि) द्रोणी-लघुनौका-होडी, (चंगेरी) चंगेरी-तृणादिसे बना हुआ पात्र विशेष, जिसे चंगेर भी कहते हैं, (खील) कीला, (मंडव) मंडप-पटगृह अथवा द्राक्षादि मंडप, (सभा) सभा-मनुष्योंके बैठने का स्थान, (पवा) प्रपा-प्याऊ, (आवसह) आवसथ-तापसाश्रम, (गंध) गंध-सुगंधि द्रव्य, (मल्ल) माल्यकुसुम आदि माला-कुसुमों की गुथी हुई पुष्पमाला, (अनु-लेवणं) अनुलेपन-चंदन, अम्बर-वस्त्र, (वरयुग) युग-झूसरा-जुंवारी, (नंगल) लांगल-हल, (मेइय) मेतिक-वखर, जिससे जुता हुआ खेत

વિશેષ, નિર્યૂહક-બારણાની ઉપર બહારની બાજુએ લગાડેલ ઘોડા આદિના આકારના કાષ્ઠ વિશેષ "चंदसालिय" ચંદ્રશાલિકા-પ્રાસાદના ઉપરની શાળા "वेइय" વેદિકા-આંગણામાં બેસવા માટેનો ચોતરો, "णिस्सेणि" નિઃશ્રેણી નિસરણી, "दोणि" દ્રોણી નાની નૌકા 'चंगेरी" ચંગેરી-તૃણાદિમાંથી બનાવેલ પાત્ર-વિશેષ જેને ચંગેર પણ કહે છે. "खील" ખૂંટો "मंडव" મંડપ-તંબૂ અથવા દ્રાક્ષાદિનો મંડપ "सभा" સભા-માણસોને બેસવાનું સ્થાન "पवा" પ્રપા પરબ "आवसह" આવસથ-તાપસોનો આશ્રમ "गंध" ગંધ-સુગંધિ દ્રવ્ય "मल्लाणुलेवणं, મલ્લ-માલ્ય કુસુમ આદિની માળા, અનુલેપન ચંદન, અમ્બર વસ્ત્ર "युग" ઝૂસરા ધૂંસરી "नंगल" લાંગલ હળ "मेइय "મેતિક વખર જેનાથી ખેડેલું ખેતર એક

प्रसिद्धाः, 'रह' रथाः-प्रसिद्धाः, 'सगड' शकटानि=प्रसिद्धानि, 'जाण' यानानि=शकटविशेषाः, 'जोग्ग' युग्यानि=जम्पानविशेषाः, 'अट्टालग' अट्टालकाः=प्राकारोपरिवर्ति स्थानविशेषाः 'चरिअ' चरिकाः=नगरप्राकारमध्यस्थाष्टहस्तप्रमाणमार्गाः 'दार' द्वाराणि=प्रसिद्धानि, 'गोपुर' पुरद्वाराणि, 'फलिह' परिघाः अर्गलाः 'यंता' यन्त्राणि=प्रसिद्धानि 'सूलिया' शूलिकाः=शूलारोपणकाष्ठानि, 'लउड' लकुटाः=यष्टयः, 'मुसंढि' शस्त्रविशेषाः, 'सयग्घी' शतघ्न्यः=शस्त्र विशेषाः, महाशिलासु या उपरिष्टात् पातिता सत्यः शतानि घ्नन्ति, एवं 'बहु' बहूनि=अनेकानि 'पहरण' प्रहरणानि=शस्त्राणि खड्गतोमरतीरादीनि 'आवरण' आवरणानि=स्फुरकाणि 'छरपला' इति प्रसिद्धानि 'उवक्खराण' उपस्कराणि=गृहोपकरणानि, कपाटादीनि, तेषां 'कए' कृते=एतदर्थं, तथा 'अण्णेहिय' अन्यैश्च, 'एवमाइएहिं' एवमादिकैः

ऐसा किया जाता है, (कुलिय) कूलिक-हलविशेष, स्यंदन-रथविशेष, (सीया) शिविका-पालखी, (रह) रथ-सामन्य रथ (सगड) शकट-गाडा, (जाण) यान-वाहन विशेष, (जोग्ग) युग्य-जम्पान विशेष, (अट्टालग) अट्टालक-प्राकार के ऊपर का स्थान विशेष (चरिका) चरिका-नगर और कोट के मध्य का आठ हाथ प्रमाण का मार्गविशेष, (दार) द्वार, (गोपुर) गोपुर-पुरद्वार (फलिहा) परिघा-अर्गला बेंडा, (जंत) यंत्र, (सूलिया) शूलिका - शूलारोपण काष्ठ (लउड) लकुट-यष्टि-छडी, (मुसंढि) मुसंढी शस्त्रविशेष, (सयग्घी) शतघ्नी-शस्त्रविशेष जिससे एक ही बारमें सौ मनुष्य मार दिये जाते हैं तथा (बहुपहरणा) अनेक प्रहरण-शस्त्रखड्ग,तोमर,तीर आदि, आवरण-छरपला,(वरणुक्खराणकए) उपस्कर -कपाट आदि गृहके उपकरण इन सबके लिये तथा (अण्णेहिं एवमाइएहिं)

સરખું કરવામાં આવે છે. "कुलिय" કુલિક એક પ્રકારનું હળ "संदणं" સ્યંદન એક જાતનો રથ "सीया" શિબિકા પાલખી "रह" રથ "सगड, શકટ ગાડું "जाण" યાન વાહન વિશેષ "जोग्ग" યુગ્ય બે પ્રાણીથી ખેંચાતા વાહનો "अट्टालग" અટ્ટાલક કિલ્લાની ઉપરનું ખાસ પ્રકારનું સ્થાન "चरिय" ચરિકા નગર કોટની વચ્ચેનો આઠ હાથની પહોળાઈનો માર્ગ વિશેષ "दार" દ્વાર "गोपुर" ગોપુર શહેરનું મુખ્ય દ્વાર "फलिहा" પરિઘા આંગળિયો "जत" યંત્ર શૂલિકા "सूलिया" શૂળીએ ચડાવવા માટેનું કાષ્ઠ "लउड" લકુટ યષ્ટિ છડી "मुसंढि" મુસંઢી શસ્ત્રવિશેષ "सयग्घी" શતઘ્ની એકજાતનું શસ્ત્ર જેનાથી એક જ વારમાં સો માણસો મારી શકાય છે, તથા "बहुपहरणा" અનેક પ્રહરણ શસ્ત્ર ખડગ તોમર તીર આદિ "वरणुवक्खराणकए" આવરણ ઉપસ્કર કપાટ આદિ ઘરમાનાં ઉપકરણો એ બધાંને માટે તથા

एवं प्रकारैः 'बहुहिं' बहुभिः 'कारणसएहिं' कारणशतैः=प्रयोजनशतैः 'भणिए' भणितान् उक्तान् 'अभणिए य' अभणितांश्च=अनुक्तांश्च, एवमादीनुक्तप्रकारान् 'तरुगणे' तरुगणान्=वनस्पतिसमूहान् 'हिंसंति'=विनाशयन्ति ॥सू०१८।

कीदृशान् जीवान् कीदृशा हिंसकाः किमर्थं घ्नन्ति? इत्याह—'सत्ते' इत्यादि।

मूलम्—सत्ते सत्तपरिवज्जिए उवहणंति दढमूढा दारुणमई कोहा माणा माया लोभा हासा रती अरती सोय वेदत्थ जीय धम्मत्थ कामहेऊ सवसा अवसा अट्ठाए अणट्ठाए य तसपाणे थावरे य हिंसंति ॥ सू० १९ ॥

टीका—'दढमूढा' दृढमूढाः=सातिशयविवेकविकलाः, 'दारुणमई' दारुणमतयः=क्रूराशयाः जनाः, 'सत्तपरिवज्जिए' सत्त्वपरिवर्जितान्=बलहीनान्

और भी इनसे अतिरिक्त (बहुहिं कारणसएहिं) अनेक प्रयोजनों के लिये (भणिए अभणिए य) जो यहां पर कहे गये और जो नहीं कहे गये हैं, (एवमाई) उन सब तरुगण वनस्पति समूहकी हिंसा करते हैं। संसारी अबुधजन इन पूर्वोक्त वस्तुओं के निर्माण के लिये वृक्षों को काटते हैं। वृक्षों को काटना ही वनस्पति जीवों की हिंसा करना है। इन उपर्युक्त वस्तुओं का निर्माण वृक्षों के काष्ठ से होता है। ॥ सू० १८ ॥

त्रस स्थावर जीवों को कैसे २ भावों से युक्त होकर हिंसक जन मारते हैं सूत्रकार इस सूत्र द्वारा स्पष्ट करते हैं—'सत्ते सत्तपरिवज्जिए' इत्यादि।

टीकार्थ-(दढमूला) जो सातिशय विवेक से विकल हैं-जिनके विवेक

"अण्णेहिं एवमाइएहिं" ते सिवायना "बहुहिं कारणसएहिं" બીજાં પણ અનેક પ્રયોજનોને માટે "भणिए अभणिए य" કે જે અહીં કહેવાયાં છે કે નથી કહેવાયાં "एवमाई" તે બધા તરુગણ વનસ્પતિ સમૂહની લોકો હિંસા કરે છે. સંસારી અબુધ લોકો પૂર્વોક્ત વસ્તુઓ બનાવવાને નિમિત્તે વૃક્ષોને કાપે છે. વૃક્ષોને કાપવા એ જ વનસ્પતિ જીવોની હિંસા છે ઉપર કહેલી વસ્તુઓ વૃક્ષોનાં કાષ્ઠમાંથી થાય છે. ॥ સૂ. ૧૮ ॥

ત્રસ સ્થાવર જીવોને કેવા કેવા ભાવોથી યુક્ત થઈને હિંસકજન મારે છે તેનું આ સૂત્રદ્વારા સૂત્રકાર સ્પષ્ટીકરણ કરે છે—"सत्ते सत्तपरिवज्जिए" ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ–"दढमूला" જે અતિશય વિવેકથી વિકલ છે, જેમનાં વિવેકરૂપ ચક્ષુઓ

दीनान् 'सत्ते' सत्त्वान्=पृथिव्यादीन् 'उवहणंति' उपघ्नन्ति=मारयन्ति, कस्मादित्याह—'कोहा' क्रोधात्, 'माणा' मानात् 'माया' मायायाः=कपटात् 'लोभा' लोभात् 'हासा' हास्यात् 'रइ' रतेः=रागात् 'अरइ' अरतेः=द्वेषात् 'सोय' शोकात् 'उपघ्नन्ति' इति सम्बन्धः। किमर्थम्? इत्याह—'वेयत्थजीयधम्मत्थकामहेऊ' वेदार्थजीवधर्मार्थकामहेतोः, अत्र हेतुशब्दस्य प्रत्येकमभिसम्बन्धः। 'वेयत्थ' वेदोक्तानुष्ठानं, 'जीयः' जीवः=जीवनं, 'धम्म' धर्मः=कुलजात्यादिलक्षणः, 'अत्थ' अर्थः=धनं, 'काम' कामाः=शब्दादयः इत्येतेषां हेतोः=कारणात् 'सवसा' स्ववशाः=स्वाधीनाः सन्तः, 'अवसा' अवशाः=पराधीनाः-परनिर्देशवर्तिनः, 'अट्ठाए' अर्थाय=प्रयोजनाय 'अणट्ठाए' अनर्थाय-अप्रयोजनाय-निरर्थकमित्यर्थः

रूप चक्षुओं पर अज्ञान का पर्दा पड़ा हुआ है। और (दारुणमई) जिनके परिणाम अत्यंत क्रूर बन चुके हैं ऐसे प्राणी (सत्तपरिवज्जिए) बलहीन दीन (सत्ते) पृथिव्यादिक जीवों की (उवहणंति) विराधना करते हैं-वह विराधना किस कारण से करते है सो कहते है (कोहा, माणा, माया, लोभा, हासा, रति, अरति, सोय) क्रोध, मान, माया, लोभ, हास्य, रति, अरति, शोक से करते हैं। अर्थात् इन परिणामो से युक्त होकर हिंसक पृथिवी आदिक जीवों की हिंसा करते हैं। किसलिये करते है? (वेयत्थ जीयधम्मत्थकामहेऊ) वेदार्थ, जीवन, धर्मार्थकाम के लिये करते हैं, यहां हेतु शब्द का संबंध प्रत्येक के साथ में कर लेना चाहिये-वेदार्थ वेदोक्त अनुष्ठान के लिये, जीवन के लिये, धर्म के लिये, अर्थ-धन-के लिये, काम-शब्दादिक पांचों इन्द्रियों के विषयों के लिये, इन्हीं सब कारण कलापों को लेकर (सवसा) स्वाधीन अथवा (अवसा) पराधीन होकर (अट्ठाए) प्रयोजन के लिये अथवा (अणट्ठाए य)

પર અજ્ઞાનનો પર્દો પડેલ છે, અને "दारुणमई" જેમની વૃત્તિઓ અત્યંત ક્રૂર બની ગઈ છે એવા જીવો "सत्तपरिवज्जिए" બલહીન, દીન "सत्ते" પૃથ્વીકાય આદિ જીવોની "उवहणंति" હત્યા કરે છે. તે હિંસા કયાં કયાં કારણે કરે છે તે સૂત્રકાર કહે છે-"कोहा, माणा, माया, लोभा, हासा, रति, अरति, सोय" ક્રોધ, માન, માયા, લોભ, હાસ્ય, રતિ, અરતિ, શોક આદિ વૃત્તિઓથી યુક્ત થઈને હિંસક જીવો પૃથિવીકાય આદિ જીવોની હિંસા કરે છે. શા માટે તેમ કરે છે? "वेयत्थ जीय धम्मत्थकामहेऊ" વેદાર્થ, જીવન, ધર્માર્થકામને માટે તેમ કરે છે. વેદાર્થ-વેદોક્ત ધર્મ ક્રિયાઓને માટે, જીવનને માટે, ધર્મને માટે, અર્થ-ધનને માટે, કામ-પાંચે ઇન્દ્રિયોના વિષયને માટે, એ બધાં કારણ સમૂહોને લીધે "सवसा" સ્વાધીન અથવા "अवसा" પરાધીન દશામાં હોવાથી "अट्ठाए" પ્રયોજનને

'तसपाणे' त्रसप्राणान्=द्वीन्द्रियादीन् जीवान् 'थावरे य' स्थावरांश्च पृथिवीकायादीन् हिंसन्ति=घ्नन्ति ॥सू०१९॥

उक्तार्थमेव विशदयन्नाह—'मंदबुद्धिया' इत्यादि।

मूलम्-मंदबुद्धिया सवसा हणंति, अवसा हणंति, सवसा अवसा दुहओ हणंति, अट्ठा हणंति, अणट्ठा हणंति, अट्ठा अणट्ठा-दुहओ हणंति, हस्सा हणंति, वेरा हणंति, रती हणंति हस्सा वेरा रती हणंति। कुद्धा हणंति, लुद्धा हणंति, मुद्धा हणंति, कुद्धा-लुद्धा मुद्धा हणंति, अत्था हणंति, धम्मा हणंति, कामा हणंति, अत्था धम्मा कामा हणंति ॥ सू० २० ॥

टीका—'मंदबुद्धिया' मन्दबुद्धिकाः=मिथ्यात्वोदयात्तत्त्वाऽतत्त्वविवेकरहितमतयः, 'सवसा' स्ववशाः=स्वतन्त्राः सन्तः, स्वेच्छया 'हणंति' घ्नन्ति, 'अवसा' अवशाः=पराधीनाः सन्तः घ्नन्ति, 'सवसा अवसा' स्ववशा अवशा 'दुहओ' उभयतो

अनर्थ—विना प्रयोजन के लिये (तसपाणे) द्वीन्द्रियादिक त्रस प्राणियों की एवं (थावरे य) पृथिवीकायादिक एकेन्द्रिय स्थावर प्राणियों की (हिंसति) हिंसा करते हैं॥ सू० १९॥

इसी उक्त अर्थ को विस्तार से समजाने के लिये पुनः सूत्रकार कहते हैं—'मंद बुद्धिया सवसा हणंति' इत्यादि।

टीकार्थ-(मंदबुद्धिया) मिथ्यात्व के उदय से तत्त्व और अतत्त्व के विवेक से जिनकी बुद्धि शून्य हो रही है ऐसे प्राणी (सवसा) स्वतंत्र बनकर अपनी इच्छानुसार त्रस स्थावर जीवों की (हणंति) हिंसा करते हैं। इसी तरह जो प्राणी (अवसा हणंति) नौकरी आदि के कारण पराधीन

ખાતર અથવા "अणट्ठाए" વિના પ્રયોજને "तसपाणे" દ્વીન્દ્રિય આદિ ત્રસ જીવોની અને "थावरे य" પૃથિવીકાય આદિ એકેન્દ્રિય સ્થાવર જીવોની "हिंसंति" હિંસા કરે છે. ॥ સૂ. ૧૯ ॥

એ જ ઉપરોક્ત અર્થને સવિસ્તર સમજાવવાને માટે સૂત્રકાર કહે છે- "मंदबुद्धिया सवसा हणंति" ઈત્યાદિ.

ટીકાર્થ-"मंदबुद्धिया" મિથ્યાત્વનાઉદયથી જેમની બુદ્ધિ તત્ત્વ અને અતત્ત્વના વિવેકથી રહિત થઈ ગઈ છે એવા જીવો "सवसा" સ્વતંત્ર હોવા છતાં પણ પોતાની ઈચ્છાનુસાર ત્રસ સ્થાવર જીવોની "हणंति" હિંસા કરે છે. એ જ પ્રમાણે જે માણસ "अवसा हणंति" નોકરી વગેરેને કારણે પરાધીન છે તેઓ

घ्नन्ति, अर्थाय, अनर्थाय, तदुभयतो घ्नन्ति । हास्यात् वैरात् रतेर्घ्नन्ति, हास्यवैररतिभ्यो घ्नन्ति । किंभूताः सन्तो घ्नन्ती? त्याह 'क्रुद्धा इत्यादि । 'कुद्धा' क्रुद्धाः =क्रोधयुक्ताः, 'लुद्धाः' लुब्धान्=विषयगृद्धाः । 'मुद्धा' मुग्धाः=मोहवशाः घ्नन्ति ।

है–वे भी इन त्रस स्थावर जीवों की हिंसा करते हैं । (सवसा अवसा दुहओ हणंति) तथा स्वतंत्र और परतंत्र दोनों प्रकार से होकर भी इन जीवों की हिंसा करते हैं । तथा (अट्ठा हणंति) ये जीव जीवों की हिंसा प्रयोजन से करते हैं और (अणट्ठा हणंति) अनर्थ–विना प्रयोजन के निरर्थक भी करते हैं (अट्ठा अणट्ठा दुहओ हणंति) कोई २ ऐसे भी जीव हैं । जो कुछ जीवों की हिंसा अपने स्वार्थ से करते हैं । और कितनेक जीवों की हिंसा स्वार्थ न भी हो तो भी करते हैं । (हस्सा हणंति) संसार में ऐसे भी हिंसक जीव हैं जो जीवों की हिंसा हास्य के कारण ही कर डालते हैं, (वेरा हणंति) कितनेक ऐसे भी हैं जो जीवों की हिंसा वैर के निमित्त को लेकर करते हैं । (रई हणंति) कितनेक ऐसे भी हैं जो रति–आमोद प्रमोदके निमित्त को लेकर जीवों की हिंसा करते हैं । (हस्सा वेरा रति हणंति) कितनेक जीव ऐसे भी हैं जो एक ही साथ हास्य वैर और रति–आमोद प्रमोद के निमित्त को लेकर जीवों की हिंसा करते हैं । वे कैसे होकर हिंसा करते हैं–(कुद्धा–हणंति) कितनेक जीव ऐसे भी हैं जो क्रोधी होकर जीवों की हिंसा

પણ એ ત્રસ સ્થાવર જીવોની હિંસા કરે છે. "सवसा अवसा दुहओ हणंति" તથા સ્વતંત્ર અને પરતંત્ર, બન્ને પ્રકારથી યુક્ત થઈને પણ જીવોની હિંસા કરે છે તથા "अट्ठाहणंति" તે જીવોની હિંસા તેઓ અર્થ સકારણ કરે છે અને "अणट्ठाहणंति" અનર્થ–અકારણ–નિરર્થક પણ કરે છે. "अट्ठा अणट्ठा दुहओ हणंति" કોઈ એવા પણ જીવો હોય છે કે જેઓ કેટલાક જીવોની હિંસા પોતાના સ્વાર્થને કારણે કરે છે અને કેટલાક જીવોની હિંસા સ્વાર્થ ન હોવા છતાં પણ કરે છે. "हस्सा हणंति" સંસારમા એવા કેટલાક હિંસક જીવો પણ છે કે જેઓ જીવોની હિંસા હાસ્ય–આનંદને ખાતર જ કરે છે. "वेरा हणंति" કેટલાક એવા પણ જીવો છે કે જે જીવોની હિંસા વેરને નિમિત્તે કરે છે "रई हणंति" કેટલાક એવા પણ જીવો છે કે જે રતિઆમોદ પ્રમોદને ખાતર જીવોની હિંસા કરે છે "हस्सा वेरा रती हणंति" કેટલાક જીવો એવા પણ છે કે જેઓ એક સાથે હાસ્ય, વેર અને રતિ–આમોદ પ્રમોદને નિમિત્તે જીવોની હિંસા કરે છે. તેઓ કેવી વૃત્તિથી જીવોની હિંસા કરે છે? "कुद्धा हणंति" કેટલાક જીવો

एवं 'कुद्धा लुद्धा मुद्धा' क्रुद्धाः लुब्धाः मुग्धाः-क्रोधलोभमोहवन्तः घ्नन्ति। 'अत्था' अर्थाः=धनार्थिनः, 'धम्मा' धर्माः=धर्मार्थिनः-जाति कुलधर्माभिमानवन्तः 'कामा' कामाः=कामार्थिनो घ्नन्ति। एवं 'अत्था धम्मा कामा' अर्थ धर्मकामार्थिनो घ्नन्ति ॥सू० २०॥

करते हैं, (लुद्धा हणंति) कितनेक ऐसे हैं जो केवल लोभ के वशवर्ती होकर जीवों की हिसा करते हैं, और (मुद्धा हणंति) कितनेक ऐसे भी हैं जो केवल मोहाधीन वृत्ति होकर जीवों की हिंसा करते हैं। (कुद्धा लुद्धा मुद्धा हणंति) कितनेक ऐसे भी हैं जो क्रोध, लोभ, मोह इन तीनों के वशवर्ती बनकर जीवों की हिंसा करते हैं। (अत्था हणंति) कितनेक ऐसे भी जीव हैं जो केवल धन के अर्थी होकर ही जीवों की हिंसा करते हैं, (धम्मा हणंति) कितनेक ऐसे भी हैं जो धर्मार्थी-जाति धर्म और कुलधर्म के अभिमानी होकर जीवों की हिंसा करते हैं।(कामा हणंति कितनेक ऐसे भी हैं जो कामार्थी-इन्द्रियों के विषयों को भोगने की लालसा के वशवर्ती होकर जीवों की हिंसा करते हैं और (अत्था धम्मा कामा हणंति) कितनेक ऐसे भी हैं जो अर्थ, धर्म और काम, इन तीनों के वशवर्ती होकर जीवों की हिंसा करते हैं।

भावार्थ—इस सूत्र द्वारा सूत्रकार ने हिंसा करने की विचारधारा वाले जीवों को कहा है, वे कहते है कि कितनेक जीव ऐसे भी हुआ

ક્રોધમાં આવીને જીવોની હિંસા કરે છે. "लुद्धा हणंति" કેટલાક કેવળ લોભને વશ થઇને જીવોની હિંસા કરે છે, "मुद्धा हणंति" કેટલાક એવા પણ લોકો હોય છે કે જે કેવળ મોહાધીન થઇને જીવોની હિંસા કરે છે. "कुद्धा लुद्धा मुद्धा हणंति" કેટલાક લોકો એવા પણ છે કે જેઓ ક્રોધ, લોભ, મોહ એ ત્રણને વશ થઇને જીવોની હિંસા કરે છે. "अत्था हणंति" કેટલાક એવા પણ જીવો છે કે જે ધનને માટે જ જીવોની હિંસા કરે છે. "धम्मा हणंति" કેટલાક એવા પણ જીવો છે કે જે ધર્માર્થે-જાતિધર્મ અને કુળધર્મના અભિમાનને કારણે જીવોની હિંસા કરે છે "कामा हणंति" કેટલાક એવા પણ જીવો હોય છે કે જે કામાર્થે-ઇન્દ્રિયોની વિષય લાલસાને વશ થઇને જીવોની હિંસા કરે છે, અને "अत्था धम्मा कामा हणंति" કેટલાક એવા પણ જીવો હોય છે કે જે અર્થ, ધર્મ અને કામ, એ ત્રણને વશ થઇને જીવોની હિંસા કરે છે.

ભાવાર્થ—આ સૂત્રમાં સૂત્રકારે હિંસા કરવાની વિચારધારાવાળા જીવો બતાવ્યા છે. તેઓ કહે છે કે કેટલાક જીવો એવા પણ હોય છે કે જે સ્વાધીન

अथ यद्यपि—उद्देशक्रमानुसारेण 'जारिसं फलं देइ' इति चतुर्थं फलद्वारं पूर्वं वक्तव्यं, तथापि फलस्य कर्त्रधीनत्वेन कर्त्तुः प्राधान्यात्, अल्पवक्तव्यत्वेन सूचीकटाहन्यायाच्च पूर्वं 'जेविय करेंति पावा पाणवहं' इति प्रथमप्राणवधद्वारस्य

करते हैं जो स्वाधीन होने पर हिंसा कर्म में रत हो जाते हैं। कितनेक जीव ऐसे भी होते हैं कि जो हिंसक जीवों की संगति आदि के पराधिन होकर हिंसा करने लग जाते हैं। बहुत से ऐसे भी प्राणी है जो अपने लिये हिंसा करते है और बहुत से जीव ऐसे भी होते हैं कि उठते बैठते चलते फिरते विना किसी प्रयोजन के भी जीवों की हिंसा करते हैं। बहुत से जीव ऐसे भी हैं कि वे चाहे स्वतंत्र रहे या परतंत्र रहे किसी भी स्थिति में रहें पर फिर भी हिंसा करने से नहीं चूकते हैं। कोई जीव किसी दूसरे जीव को वैर के कारण मार डालते हैं, कोई अपनी हँसी करने के कारण मार डालते हैं। और कोई २ ऐसे भी प्राणी हैं जो रति के कारण—चित्त खुशी में रहने के कारण—जीवों की हिंसा—शिकार करते हैं। इत्यादि और भी इसी तरह के कारण सूत्रकार ने इस सूत्र द्वारा प्रकट किये हैं जो ऊपर अर्थ में कहदिये हैं। इनके सिवाय दूसरे कारणों से भी हिंसा करते हैं ॥सू०२०॥

अब सूत्रकार यह प्रकट करते हैं कि उद्देशक्रम के अनुसार यद्यपि "जारिसं फलं देइ" यह चतुर्थ फलद्वार पहिले कहना चाहिये था तो

હોવા છતાં પણ હિંસા કર્મમાં લીન રહે છે. કેટલાક જીવો એવા પણ હોય છે કે જે હિંસક જીવોની સંગતિ આદિ વડે પરાધીન હોવાને કારણે હિંસા કરવા લાગે છે. કેટલાક એવા પણ જીવો છે કે જે સ્વાર્થને ખાતર હિંસા કરે છે, અને ઘણા જીવો એવા પણ હોય છે કે જે ઉઠતાં, બેસતાં, હાલતાં, ચાલતાં, કોઈપણ પ્રયોજન વિના જીવોની હિંસા કરે છે. ઘણા જીવો એવા પણ હોય છે કે તેઓ સ્વતંત્ર હોય કે પરતંત્ર હોય. કોઈપણ સ્થિતિમાં હોવા છતાં પણ હિંસા કરતા અટકતા નથી. કોઈ જીવ બીજા જીવોને વેરને કારણે મારી નાખે છે, કોઈ હંસી–મજાકને ખાતર મારી નાખે છે, અને કોઈ કોઈ જીવો એવા પણ હોય છે કે જે રતિને કારણે–મનના આનંદને ખાતર જીવોની હિંસા (શિકાર) કરે છે. ઈત્યાદિ બીજાં પણ એ જ પ્રકારનાં કારણો સૂત્રકારે આ સૂત્ર દ્વારા પ્રગટ કર્યાં છે, જે ઉપર બતાવી દેવામાં આવ્યાં છે. તે સિવાય બીજાં કારણોથી પણ તેઓ હિંસા કરે છે. ॥ સૂ. ૨૦ ॥

હવે સૂત્રકાર એ સ્પષ્ટ કરે છે કે ઉદ્દેશોના ક્રમ પ્રમાણે જોકે 'जारिसं

पञ्चममुपद्वारमाह-'कयरेते' इत्यादि ।

मूलम्-कयरे ते ? जे ते सोयरिया मच्छबंधा साउणिय वाहा कूरकम्मा वाउरिया दीविय-बंधणप्पओग-तप्पगल-जाल-वीरल्ल-गायसदब्भ-वग्गुरा-कूडछलियाहत्था हरिएसा उणिया यविदंस-गपासहत्था वणचरगा लुद्धगा महुघाया पोयघाया एणीयारा पएणीयारा सरदह-दीहिय-तलाग-पल्लग-परिगालण-मलण सोतबं-धण सलिलासय सोसगा विसगरस्स य दायगा उत्तणवल्लरदव-ग्गिणिद्दयपलीवका कूरकम्मकारी ॥ सू० २१ ॥

टीका-'कयरे ते' कतरे ते प्राणवधकर्तारः ? इति प्रश्ने सत्युत्तरमाह-'सोयरिया' इत्यादि-'जे ते' ये ते 'सोयरिया' सौकरिकाः=सूकरघातकाः 'मच्छबंधा' मत्स्य-बन्धाः=मत्स्यघातका धीवरा इत्यर्थः, 'साउणिया' शाकुनिकाः=पक्षिवधोपजीविनः,

---

भी फलद्वार न कह कर जो प्रथमप्राणवध द्वार का पंचम उपद्वार कहा जा रहा है उसका कारण यह है कि फल, कर्त्ता के आधीन होने से पहिले कर्त्ता की प्रधानता रहती है, दूसरे कर्ता के विषय में वक्तव्य भी अल्प है तो सूची कटाहन्याय से पहिले " स वि य करेंति पावा पाणा-वहं " इस प्रथमप्राणवध द्वार का यह पंचम उपद्वार ही कहा जा रहा है ' कयरे ते ' इत्यादि ।

टीकार्थ-प्रश्न (कयरे ते) प्राणवध करनेवाले वे कौन २ से प्राणी हैं ? उत्तर-(जे ते) वे ये २ हैं-(सोयरिया, मच्छबंधा, साउणिया वाहाकूर कम्मा वाउरिया) (सोयरिया) सौकारिक-सुअर की शिकार करने

फलं वेह " એ ચોથું ફલ દ્વાર પહેલાં કહેવું જોઈતું હતું, છતાં પણ ફલ દ્વારનું વર્ણન ન કરતાં પહેલાં પ્રાણવધદ્વારનું પાંચમું ઉપદ્વાર વર્ણવવામાં આવ્યું છે, તેનું કારણ એ છે કે ફળ, કર્ત્તાને અધીન હોવાથી પહેલાં કર્ત્તાની પ્રધાનતા રહે છે અને બીજું કારણ એ છે કે કર્ત્તાની બાબતમાં વક્તવ્ય-કહેવાનું પણ થોડું છે, તેથી સૂચી કટાહન્યાયે પહેલાં " जे विय करेंति पावा पाणवहं " આ પ્રથમ પ્રાણવધ દ્વારનું આ પાંચમું ઉપદ્વાર જ વર્ણવવામાં આવી રહ્યુ છે-
" कयरे ते " ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ-પ્રશ્ન—" कयरे ते ? " પ્રાણવધ કરનારાં તે કયાં કયાં પ્રાણીઓ છે ? ઉત્તર—"जे ते" તેઓ નીચે પ્રમાણે છે-"सोयरिया, मच्छबंधा साउणिया वाहा

'वाहा' व्याधाः=मृगघातकाः, 'कूरकम्मा' क्रूरकर्माणः – दुष्टकर्मकारिणः,- 'वाउरिया' वागुरिकाः=वागुरा=मृगवन्धनं तया चरन्ति ये ते वागुरिकाः= जालेन मृगवन्धकाः, 'दीविय-बंधणप्पओग-तप्पगलजाल-चीरल्लगायसदब्भ वग्गुरा-कूड छलिया हत्था' द्वीपिक बन्धनप्रयोगतप्रगलजाल-चीरल्लगायसीदर्भवा-गुरा कूटछेलिकाहस्ताः-'दीविय' द्वीपिका=व्याधस्य कृत्रिमा हरिणी या मृगाक-र्षणार्थं स्थाप्यते 'बंधणप्पओग' बन्धनप्रयोगः=मृगादि बन्धनोपकरणं, 'तप्प' तप्रः =मत्स्यग्रहणीलघुनौका, 'गलं' बडिशं=मत्स्यवेधन कण्टक इत्यर्थः, 'जालं' प्रसिद्धं,

---

वाले मनुष्य, (मच्छबंधा) मत्स्यबंध-मछलियों को मारने वाले धीवर (साउणिया) शाकुनिक-पक्षियोंकी शिकार करने वाले चीड़ीमार, (वाहा) व्याध-मृग की शिकार करने वाले बहेलियाजन, (कूरकम्मा) क्रूर कर्मा-दुष्टकर्म करने वाले मनुष्य, (वाउरिया) वागुरिका-जाल से मृग को बांधने वाले वाघरी लोग, (दीविय-बंधणप्पओगतप्प-गल-जाल चीरल्लगा-यस-दब्भ-वग्गुरा-कूडछलिया हत्था) द्वीपिका-व्याध द्वारा मृगों को लुभाने के लिये बनाई गई कृत्रिम हरिणी, बंधन प्रयोग-मृगादि जीवों को बांधने के उपकरण, तप्र मछली पकड़कर जिसमें धीवर रखते जाते हैं ऐसी टोकरी, अथवा मछली जिस पर बैठकर पकड़ी जाती है ऐसी लघु नौका, गल-बडिश, बंशी जिसके अग्रभाग में आटा या जीव का कलेवर आदि लगाकर मच्छीमार उसे पानी में डाल देते हैं मछली जैसे ही उसे खाती है तो उसका वह नुकीला अग्र-भाग उसके कंठ में विंध जाता है, बस मच्छीमार फिर डोरे से बंधी

कूरकम्मावाउरिया" "सोयरिया"सौકરિક-સુવરનો શિકાર કરનારા મનુષ્યો,"मच्छबंधा" મત્સ્યબંધ-માછલિયોને મારનાર માછીમારો, " साउणिया " શકુનિક-પક્ષીઓને શિકાર કરનાર પારધિઓ " वाहा " વ્યાધ-મૃગનો શિકાર કરનાર શિકારીઓ, " कूरकम्मा " ક્રૂરકર્મા-દુષ્ટ કર્મ કરનારા મનુષ્યો, " वाउरिया " વાગુરિકા— જાળમાં મૃગને ફસાવનારા વાઘરી લોકો, " दीविय, बंधणप्पओगे तप्प, डाल, जाल, चीरल्लगा-यस, दब्भ' वग्गुरा, कूडछलिया हत्था " દ્વીપિકા-વ્યાધ દ્વારા મૃગોને લલચાવવાને માટે બનાવેલી કૃત્રિમ હરિણી, બંધનપ્રયોગ-મૃગાદિ જીવોને બાંધવાના સાધનો, તપ્ર-મછલીને પકડીને માછીમાર જેમાં મૂકે છે તે ટોપલી, અથવા જેમાં બેસીને માછલા પકડવામાં આવે છે તે નાની નૌકા, ગલ-બડિશ, બંશી-જેના અગ્રભાગ પર લોટની કણેક કે અળસિયાં આદિ જીવોનાં કલેવર લગાડીને માછીમાર તેને પાણીમાં નાખે છે, માછલી જેવું તે ખાવા જાય છે કે તરતજ તેનો અણીદાર અગ્રભાગ તેના કંઠમાં પરોવાઇ જાય છે.

'चीरल्लग' चीरल्लकः-श्येनाभिधो हिंसकपक्षिविशेषः-योऽन्यपक्षिवधार्थं पाल्यते, 'आयसः' लोहनिर्मितबन्धनविशेषः, 'दब्भ' दर्भः=दर्भमयबन्धनविशेषः, 'वग्गुरा' वागुरा=पाशः, कूटछेलिका=कूटाजा, सिंहादि प्रलोभनार्थं चित्रलेप्यादिमयी छगलिका एते हस्ते येषां ते तथाभूताः । 'हरिएसा' हरिकेशाः=मातङ्गाश्चाण्डला इत्यर्थः, 'उणिया य' कुणिकाश्च तत्सेवकाः 'वीदंसगपासहत्था' वीतंसकपाशहस्ताः =वीतंसकाः=मृगपक्षिबन्धनसाधनानि, पाशाश्च, ते हस्ते येषां ते वीतंसकपाशहस्ताः, 'वणचरगा' वनचरकाः=किराताः, 'लुद्धगा' लुब्धकाः=व्याधाः, 'महुघाया'

हुई इस वंशी को तान लेते हैं, विंधी हुई मछली इसी के साथ बाहर निकल आती है और मच्छीमार इसे पकड़ लेते हैं। जाल-मछली आदि पकड़ने की एक प्रकार की जाल, चीरल्लक-हिंसकपक्षिविशेष यह पक्षी अन्य पक्षियों को मारने के लिये शिकारियों द्वारा पाला जाता है, आयस लोह का बना हुआ बंधन विशेष, दर्भ-दर्भमय बंधन विशेष, वागुरा-पाश, कूट छलिका-बनावटी बकरी जो सिंहादि जानवरो को लुभाने के लिये बनाकर रखी जाती है, ये सब जिनके हाथों में हैं ऐसे प्राणी। इस सब प्राणीवध के कर्त्ता जानना चाहिये। तथा (हरिएसा) हरिकेश-चाण्डाल, (उणिया) कुणिक-चाण्डाल के सेवकजन, (वीदंगपासहत्था) वीतंसक-मृग एवं पक्षियों के बांधने का साधन और पाश जिनके हाथ में हैं ऐसे (वणचरगा) किरात। ये भी प्राणवध के करने वाले माने गये हैं। (लुद्धगा)) लुब्धक-व्याध, (महुघाया) मधुघातक-

---

ત્યાબાદ માછીમાર દોરીથી બાંધેલી તે જાળને ખેંચી લે છે, તેમાં ચોંટી ગયેલી માછલીઓ તેની સાથે જ બહાર નીકળી આવે છે અને માછીમાર તેને પકડી લે છે. જાળ-માછલાં આદિ પકડવાની એક પ્રકારની જાળ, चीरल्लक-એક હિંસક પક્ષીનું નામ, તે પક્ષી બીજાં પક્ષીઓને મારવાને માટે શિકારીઓ વડે પળાય છે આયસ-લોઢાનું બનાવેલું એક જાતનું બંધન, "दब्भ" દર્ભનુ એક જાતનું બંધન, वागुरा-પાશ, कूटछलिका-નકલી બકરી કે જે સિંહ આદિ જાનવરોને લલચાવવા માટે બનાવીને રાખવામાં આવે છે, એ સઘળી ચીજો જેમના હાથમાં છે તેવા સઘળા જીવો પ્રાણુવધ કરનારા હોય છે. તથા "हरिएसा" હરિકેશ-ચાંડાળ, "उणिया" કુણિક-ચાંડાળના સેવકો, "वींदसगपासहत्था" વીતંસક-મૃગ અને પક્ષીઓને બાંધવાનું એક સાધન અને પાશ જેના હાથમાં છે એવા "वणचरगा" કિરાત વગેરે પ્રાણુવધ કરનારા મનાય છે. "लुद्धगा" લુબ્ધક-વ્યાધ, "महुघाया" મધુ ઘાતક-મધ લેવાને માટે જે-

मधुघाताः='मधु' ग्रहणेन तन्मक्षिका घातकाः 'पोयघाया' - पोतघाता=पक्षिशिशु-हिंसकाः 'एणीयारा' एणीचारा-एणीं=हरिणीं चारयन्ति=पालयन्ति अन्यान् मृगान् गृहीतुं ये ते एणीचाराः, 'पएणीयारा' प्रैणीचाराश्च व्याधविशेषा एव। 'सरदहदीहियतलागपल्लपरिगालणमलणसोत्तबंधणसलिलासयसोसगा' सरोद्रह दीर्घिका तडाग पल्वल परिगालन मलन स्रोतोबन्धन सलिलाशयशोषकाः, तत्र-सरः=सामान्यजलाशयः, ह्रदः=अगाधजलाशयः, दीर्घिका=वापी, तडागः=प्रसिद्धः, पल्वलं=अल्पसरः, एतेषां परिगालनेन=मत्स्यादि ग्रहणाय जलनिस्सारणेन, मलनेन=मन्थनेन, स्रोतोबन्धनेन=जलप्रवाहनिरोधेन च 'सलिलाशयान्=जलाशयान् शोषयन्ति ये ते तथाभूताः, विसगरस्सय' विषगरस्य च-विषं=प्रसिद्धं, गरः=संयोगजनितं विषं, तयोः समाहारे तस्य 'दायगा' दायकाः जीवोपघातार्थं विष-

---

मधु-शहद को लेने के लिये जो मधुमक्खियों का घात कर देते हैं वे, (पोयघाया) पोतघातक-पक्षियों के बच्चों को मारने वाले, तथा (एणीयारा) जो मृगों को पकड़ने के अभिप्राय से मृगी-हरिणी को पालते हैं वे, तथा (पएणीयारा) जो प्रैणीचार-व्याधविशेष होते हैं वे, तथा-(सर-दह-दीहिय-तलाग-पल्लल-परिगालण--मलण-सोत्तबंधण--सलिलासयसोसगा) जो सर सामान्य जलाशय, द्रह-अगाधजलाशय, दीर्घिका-वापी, तडाग, पल्वल-छोटाजलाशय, इनके जल को मत्स्यादि ग्रहण करने के अभिप्राय से जो निकाल देते हैं, तथा इनके जल का जो मन्थन-विलोडन करते हैं, अथवा इनमें जिन स्रोतों से जल आता हैं उन्हें बंद कर देते हैं, इस तरह से जो सलिलाशयों को सुखा देते हैं वे, तथा (विसगरस्स य दायगा) विष-हलाहल जहर, गर-संयोग जनित

મધમાખીઓની હિંસા કરે છે તે, "पोयघाया" પોત ઘાતક-પક્ષીઓનાં બચ્ચાંને મારનારા તથા- "एणीयारा" જે મૃગોને પકડવાને માટે મૃગી-હરિણીને પાળે છે તે લોકો, તથા "पइणीयारा" જે પૈણીચાર-એક પ્રકારના વ્યાધ-હોય છે તે, તથા "सर, दह, दीहिय, तलाग, पल्लल, परिगालण, मलण, सोतबंधण, सलिलासयसोसगा" જે સર-સામાન્ય જળાશય ह्रद-અગાધ જળાશય, दीर्घिका-વાવ, તલાવ, पल्वल-નાનું જળાશય, વગેરેના પાણીને માછલાં વગેરે ગ્રહણ કરવાના હેતુથી બહાર કાઢી નાખે છે. તથા તેના જળનું ને મન્થન કરે છે. અથવા તેમાં જે સ્રોતો દ્વારા પાણી આવતું હોય તે સ્રોતોને બંધ કરી દે છે. આ રીતે જે લોકો જળાશયોને સૂકવી નાખે છે. તે લોકો તથા "विसगरस्स य दायगा" विष-હળાહળ ઝેર, [illegible] નિત વિષ આદિ જીવોને મારી

प्रयोगकर्त्तार इत्यर्थः । 'उत्तणवल्लरदवग्गिणिद्दयपलीवगा' उत्तृणवल्लरदवाग्नि-निर्दयप्रदीपकाः—उत्तृणानां=वर्धिततृणानां वनानां, वल्लराणां=गहनवनानामरण्यक्षेत्राणां वा, दवाग्निना=दावानलेन निर्दयं=दयारहितं यथास्यात्तथा प्रदीपकाः=प्रज्वालकाः, 'कूरकम्मकारी' क्रूरकर्मकारिणः=कठोरकर्मकर्तारः घातकाः घ्नन्ति=प्राणवधं कुर्वन्तीति पूर्वेण सम्बन्धः ॥सू० २१॥

तानेव जातिनिर्देशपूर्वकं वर्णयति—'इमेय बहवे' इत्यादि।

मूलम्—इमेय बहवे मिलक्खुजाईया, के ते ?, सक-जवण-सवर-बव्वर-काय-मरुंडो-द-भडग-तित्तिय पक्कणिय-कुलक्ख-गोड-सिंहल-पारस-कोंचंध-दविल-विल्लल-पुलिंद-अरोस-डोंब-पक्कण-गंध हारग-बहलिय-जल्ल-रोम-मास-बउस-मलया-चुंचुया-य चूलियग-कोंकणग-कणग-सेय-मेया-पण्हव-मालव-महुर-आभासिय-अणक्ख चीण-ल्हासिय-खस-खासिया-नेहुर-मरहट्ठ-मुट्ठिअ-आरब-डोबिलग कुहण-केकय-हूण-रोमग-रुरु-मरुया-चिलायविसयवासी य पावमइणो ॥ सू० २२ ॥

टीका—'इमेय' इमे च—अनुपदं वक्ष्यमाणाः 'बहवे' बहवः 'मिलक्खुजाईया' म्लेच्छजातीयाः=अनार्याः सन्ति। 'किं ते ?' के ते ? इत्याह—'सके' त्यादि।

विष, इन्हें जो जीवों को मारने के अभिप्राय देते हैं वे, तथा (उत्तण-वल्लर-दवग्गि-णिद्दय-पलीवगा) जो निर्दय होकर उत्तणों को—वर्धित-तृणवाले वनों को वल्लरों को गहनवनों को अथवा अरण्य के खेतों को दावानल से जला देते हैं वे सब (कूरकम्मकारी) क्रूरकर्मकारी जाने गये हैं और ऐसे प्राणी ही प्राणवध के करनेवाले होते हैं ॥सू०२१॥

सूत्रकार इन्हीं प्राणियों को जाति निर्देश पूर्वक वर्णन करते हैं—

નાખવાને માટે જેઓ તેમને ખવરાવે છે તેઓ તથા 'उत्तण-वल्लर, दवग्गि, णिद्दय पलीवगा" જે નિર્દય થઈને ઉત્તૃણોને વર્ધિત તૃણવાળાં વનોને, વલ્લરોને,—ગહન વનોને, અથવા વનનાં ક્ષેત્રોને દાવાનળ લગાડીને સળગાવે છે તે બધાને "कूरकम्मकारी" ક્રૂરકર્મ કરનારા માનવામાં આવે છે અને તેવા જીવોજ પ્રાણવધ કરનાર છે ॥ સૂ. ૨૧ ॥

સૂત્રકાર એજ પ્રાણીઓનું જાતિના નિર્દેશ સહિત વર્ણન કરે છે " इमेय

'सक' शका:=शकदेशोत्पन्नाः, 'जवण' यवनाः=प्रसिद्धाः, 'सबर' शबराः=शबरदेशोत्पन्नाः भिल्लाः 'बब्बर' बर्बराः=बर्बरोऽनार्यदेशविशेषस्तत्र भवा बर्बराः 'काय' कायाः=कायदेशविशेषोद्भवाः' मरुंड' मुरुण्डाः=मुरुण्डदेशीयाः, 'उदाः' अनार्यविशेषाः 'भडग' भटकाः=भटकदेशवासिनः 'तित्तिय' तित्तिकाः=तित्तिकदेशजाताः, 'पक्कणिय' पक्कणिकाः=तद्देशजाताः, 'कुलक्ख' कुलक्षाः=अनार्यदेशोद्भवाः, 'गोड' गौडाः=गौड़देशोत्पन्नाः, 'सिंहल' सिंहला=सिंहलद्वीपोत्पन्नाः, 'पारस' पारसाः=पारसदेशजाता', 'कोंच' क्रौञ्चाः=क्रौञ्चदेशोद्भवाः, 'अंध' आन्ध्रा=अन्ध्रदेशोत्पन्नाः, 'दविल' द्राविडा=द्रविडदेशजाताः, 'विल्लल' विल्वलाः

'इमे य बहवे मिलक्खुजाईया' इत्यादि।

टीकार्थ-(इमे य) अनुपद वक्ष्यमाण ये (बहवे) बहुत से (मिलक्खु जाईया) म्लेच्छ-जातीय-अनार्य हैं। (किंते?) वे कौन २ हैं

उत्तर—(सक) शाक-शक देशवासी, (जवण) यवन-प्रसिद्ध है, (सवर) शबर-शबर देशोत्पन्न भील, (बब्बर) बब्बर-बर्बर नाम के अनार्यदेश में उत्पन्न हुए मनुष्य, (काय) काय-इस नाम के देश विशेष में जन्मे मनुष्य, (मुरुंड) मुरुण्ड-मुरुण्डदेश में पैदा हुए मनुष्य, (उद) उद-इस जाति के अनार्य मनुष्य, (भडग) भटक-भटक देशनिवासी मनुष्य, (तित्तिय) तित्तिय-तित्तिक देश के मनुष्य, (पक्कणिय) पक्कणिक-देश के मनुष्य, (कुलक्ख) कुलक्ख-कुलक्षनाम के अनार्य देश में उत्पन्न हुए मनुष्य, (गोड़) गौड-इस जाति के मनुष्य, (सिंहल) सिंहल-सिंहल द्वीप में उत्पन्न हुए मनुष्य, (पारस) पारस-पारस देश में उत्पन्न हुए

बहवे मिलक्खुजाईया " ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ–"इमेय" નીચે પ્રમાણેની "बहवे" ઘણીખરી "मिलक्खु जाईया" મ્લેચ્છ જાતો–અનાર્ય છે. "किं ते ?" તે અનાર્ય જાતિ કયી કયી છે?

ઉત્તર–"सक" શક–શકદેશના રહેવાસી "जवण" યવન, "सवर" શબર –શબરદેશના વતની ભીલ, "बब्बर" બર્બર નામના અનાર્ય દેશના વતનીઓ, "काय" એ નામના દેશમાં જન્મેલા મનુષ્ય, "मुरुंड" મુરુંડ–દેશમાં જન્મેલા લોકો, "उद" એ જાતિના અનાર્ય લોકો, "भडग" ભટક દેશના રહેવાસી, "तित्तिय" તિત્તિક દેશના વતની, "पक्कणिक" પક્કનિક દેશના લોકો, "कुलक्ख" કુલક્ષ નામના અનાર્ય દેશના લોકો, "गोढ" ગૌડ જાતિના લોકો, "सिंहल" સિંહલ–સિંહલદ્વીપના લોકો, "पारस" પારસ–પારસ (ઇરાન)માં જન્મેલા લોકો,

बिल्वलदेशोद्भवाः, 'पुलिंद' पुलिन्दाः-पुलिन्ददेशोत्पन्नाः, 'अरोस' अरोषाः= अरोषदेशजाः, 'डोंब' डोंबाः=डोम्बदेशोद्भवाः, 'पोक्कण' पोक्कणाः पोक्कणदेश-भवाः, 'गंधहारग' गन्धहारकाः=गन्धारदेशजाताः, 'बहलिय' बहलिकाः =बहलीदेशोद्भवाः, जल्लाः-रोमाः मासाः 'बउस' बकुशाः मलयाः 'चुंचुया य' चुञ्चुकाश्च, 'चूलियग' चूलिकाः 'कोंकणग' कोंकणकाः 'कणग' कनकाः 'सेय' सयाः 'मेया' मेदाः, 'पण्हव' पह्लवाः, 'मालव' मालवाः 'महुरा' मधुराः, 'आमासिय' आभाषिकाः, 'अणक्ख' अनक्षाः 'चीण' चीनाः 'लासिय' लासिकाः खसाः 'खासिय' खासिकाः 'नेहुर' निष्ठुराः 'मरहट्ठ' महाराष्ट्राः 'मुट्ठिअ' मौष्टिकाः, 'आरबाः' 'डोविलग' 'डोविलकाः, कुहणाः केकयाः, हूणाः, 'रोमग' 'रोमकाः 'रुरु' रुरवः 'मरुया' मरुकाः, 'जल्लाः' इत्यारभ्य मरुकपर्यन्ताः, एतेऽपि तत्तन्नामक म्लेच्छदेशविशेषोद्भवाः, 'चिलाय

मनुष्य, (कोंच) क्रौंच-क्रौंच देशमें उत्पन्न हुए मनुष्य, (अंध) आंध्र-आंध्रदेश में उत्पन्न हुए मनुष्य, (दविल) द्राविड-द्राविडदेश में उत्पन्न हुए मनुष्य, (विल्लल) बिल्वल-इस नाम के देशमें उत्पन्न हुए मनुष्य, (पुलिंद) पुलिंद-पुलिंददेश में उत्पन्न हुए मनुष्य, (अरोस) अरोष-अरोषदेशज (डोंब) डोंब-डोम्ब देशोद्भव मनुष्य, (पोक्कण) पोक्कण-पोक्कण नाम के देश में उत्पन्न हुए मनुष्य, (गंध) गन्धहारक-गन्धार देश में उत्पन्न हुए मनुष्य, (बहलिय) बहलिय-बहली नाम के देश में उत्पन्न हुए मनुष्य, इसी तरह (जल्ल) रोम, मास, बकुश, मलय, चुञ्चुक, चूलिक, कोंकणक, कनक, सेय, मेद, पह्लव, मालव, मधुर, आभिषक, अनक्ष, चीन, लासिक, खस, खासिक, निष्ठुर, महाराष्ट्र, मौष्ठिक, आरव, डोविलक, कुणह, केकय, हूण, रोमक, रुरु, और मरुक, ये सब उस उस नाम के म्लेच्च देशविदेश में उत्पन्न हुए मनुष्य हैं। तथा (चिलाय-

---

"कोंच" क्रौंच-क्रौंच દેશમાં જન્મેલા લોકો, "अंध" આંધ્ર-આંધ્ર દેશમાં જન્મેલા લોકો, 'दविल" દ્રાવિડ-દ્રાવિડ દેશમાં જન્મેલાલોકો, "विल्लल" બિલ્વલ-તે નામના દેશમાં જન્મેલા લોકો, "पुलिंद" પુલિંદ-પુલિંદ દેશના લોકો, "अरोस" આરોષ-આરોષ દેશમા જન્મેલા, "डोंब" ડોંબ-ડોંબ દેશમાં જન્મેલા, "पोक्कण" પોક્કણ- દેશનાં લોકો, "गंध" -ગાંધાર દેશમાં જન્મેલા લોકો, "बहलिय" બહલિક-બહલી દેશમાં ઉત્પન્ન થયેલ લોકો, એજ રીતે "जल्ल" રોમ, માસ, બકુશ, મલય, ચુંચુક, કોંકણક, કનક, સય, મેદ, પહ્લવણ, માલવ, મધુર, આભાષિક, અનક્ષ, ચીન, લાસિક, ખસ, ખાસિક, નિષ્ઠુર, મહારાષ્ટ્ર, મૌષ્ટિક, આરબ, ડોવિલક, કુહણ, કેકય, હૂણ, રોમક, રુરુ, અને મરુક તે બધા તે તે દેશમાં જન્મેવા લોકો છે. તથા, "चिलाय विं सयवासी य" ચિલાત

विसयवासी य ' चिलात विषयवासिनश्च, चिलातदेशवासिनोऽनार्याः, 'पावमइणो ' पापमतयः=पापबुद्धयः सन्ति ॥ सू०२२ ॥

पुनरपि केके जीवाः पापं कुर्वन्तीति तान् दर्शयितुमाह-'जलयर' इत्यादि।

मूलम्-जलयर-थलयर-सणप्फय-ओरग-खहयर-संडासतोंड-जीवोवघायजीवी सण्णी य असण्णिणो पज्जत्ते अपज्जत्ते य-असुभलेस्स परिणमे एए अण्णे य एवमाई करेंति पाणाइवायकरणं। पावा पावाभिगमाः पावमई पावरुई पाणवहकयरई पाणवहरूवाणुट्ठाणा पाणवहकहासु अभिरमंता तुट्ठा पावं करेत्तु हुंतिय बहुप्पगारं ॥ सू० २३ ॥

टीका—' जलयर-थलयर-सणप्फओरग-खहयर-संडासतोंड जीवोवघायजीवी ' जलचर स्थलचर सनखपदोरग-खचर संदंशतुण्ड जीवोपघातजीविनः= जलचराः=ग्राहादयः, स्थलचराः=चतुष्पदाः, सनखपदाः=नखयुक्तचरणाः=व्या-

---

विसयवासी य) चिलात देशवासी मनुष्य, ये सब अनार्य हैं (पावमइणो) इनकी बुद्धि पापकर्म में रत रहती है। ये जितने भी नाम के कहे हैं वे सब पापकर्म में रतमतिवाले हैं और ये प्राणवध के करने वाले हैं ॥ सू० २२ ॥

अब सूत्रकार फिर यह कहते हैं कि कौन२ से जीव पाप करतेहैं— 'जलचर थलचर ' इत्यादि ।

टीकार्थ-(जलयर) ग्राह आदि जलचर जीव, (थलयर) चतुष्पद-गाय, भैंस, आदि चार पद वाले स्थलचर जीव, (सणप्फय) नखयुक्त पैरोंवाले

દેશવાસી મનુષ્ય, એ સઘળી અનાર્ય પ્રજાઓ છે. અને "पावमइणो" તેમની બુદ્ધિ પાપકર્મમાં લીન રહે છે. આ જે જે જાતિઓ બતાવી છે તે જાતિઓના લોકો પાપકર્મમાં રત-લીન મતિવાળા હોય છે અને તેઓ પ્રાણુવધ કરનારા હોય છે. ॥ સૂ. ૨૨ ॥

હવે સૂત્રકાર ફરીથી એ બતાવે છે કે કયા કયા જીવો પાપ કરે છે "जलयर थलचर " ઈત્યાદિ.

ટીકાર્થ–"जलयर" ગ્રાહ આદિ જલચર જીવ, "थलयर" ચતુષ્પદ–ગાય,ભેંસ આદિ ચોપગા સ્થળચર જીવો, " सणप्फय " નહોર યુક્ત પગવાળા વાઘ આદિ

घ्रादयः, उरगाः=सर्पाः, खचराः-पक्षिणः श्येनादयः, संदंशतुण्डाः=संदंशमिव-तुण्डो येषां ते संदंशतुण्डाः=ढङ्ककङ्कादि पक्षिणः, एषां द्वन्द्वस्ततः ते च ते 'जीवो-पघातेन=जीवहिंसया जीवन्ति – इति, जीवोपघातजीविनश्चेति तथोक्ताः। 'सण्णीय' संज्ञिनश्च 'असण्णिणो' असंज्ञिनः 'पज्जत्त अपज्जत्ते य' पर्याप्ता अपर्याप्ताश्च=सर्वे जीवा-पर्याप्ता अपर्याप्ताश्चेति द्विविधा भवन्ति तत्र पर्याप्तयो विद्यन्ते येषां ते पर्याप्ताः पर्याप्तनामकर्मोदयात् पर्याप्तियुक्ता जीवाः, ते द्विविधाः लब्धिपर्याप्ताः, करणपर्याप्ताश्च। ये सर्वा अपि पर्याप्तीः पूरयित्वा म्रियन्ते न ततः प्राक् ते लब्धिपर्याप्ताः, ये पुनः शरीरेन्द्रियादीनि करणानि

व्याघ्र आदि जीव (ओरग) उरग-छाती के सहारे चलने वाले सांप, (खहयर) श्येन आदि पक्षी खेचर जीव (संदंसतोंड) संदंश-संडासी के जैसे मुखवाले ढंक कंक आदि पक्षी (जीवोवघायजीवी) ये सब जीवों की हिंसा करके अपना जीवन निर्वाह करने वाले हैं। तथा (सण्णीय) जिनके मन है ऐसे संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव और (असण्णिणो) जिनके मन नहीं है ऐसे असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीव, ये सब पाप करके प्रसन्न होते हैं। जलचर से लेकर असंज्ञी पर्यन्त के जितने भी जीव हैं सब (पज्जत्ते अपज्जत्ते य) पर्याप्त और अपर्याप्त होते हैं। पर्याप्त नामकर्म के उदय से जिनकी अपनी२ योग्य पर्याप्तियां पूर्ण हो जाती हैं वे पर्याप्त जीव हैं, और जिनकी पर्याप्तियां पूर्ण नहीं होती हैं वे अपर्याप्त जीव हैं। ये पर्याप्त जीव लब्धिपर्याप्त और करणपर्याप्त के भेद से दो प्राकार के होते हैं। जो समस्त पर्याप्तियों को पूरण करके ही मरते हैं

જીવો, "ओरग" ઉરગ-પેટે ચાલનારા સાપ "खहयर" બાજ આદિ નભ-ચર પક્ષી, "सदंसतोंड" સંદશ-સાણુસીના જેવાં મુખવાળાં ઢંક, કંક આદિ પક્ષીઓ "जीवोवधाय जीवी" એ બધા જીવોની હિંસા કરીને પોતાનો જીવન નિર્વાહ કરનાર જીવો છે. તથા "सण्णीय" જેમને મન છે એવા સંજ્ઞી પંચે-ન્દ્રિય જીવ, અને "असण्णिणणो" જેમને મન નથી એવા અસંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય જીવ, એ બધા પાપ કરીને પ્રસન્ન થાય છે, જળચરથી લઈને અસંજ્ઞી સુધીના આ જેટલા જીવ છે તે બધા "पज्जत्त अपजत्ते य" પર્યાપ્ત અને અપર્યાપ્ત હોય છે. પર્યાપ્ત નામકર્મના ઉદયથી જેમની પોત પોતાની યોગ્ય પર્યાપ્તિઓ પૂર્ણ થઇ જાય છે તેમને પર્યાપ્ત જીવો કહે છે. અને જેમની પર્યાપ્તિઓ પૂર્ણ થતી નથી તે જીવોને અપર્યાપ્ત જીવો કહે છે પર્યાપ્ત જીવોના બે ભેદ છે. (૧) લબ્ધિ પર્યાપ્ત (૨) કરણપર્યાપ્ત જે જીવો સમસ્ત પર્યાપ્તિઓ પૂરી કરીને

निर्वर्तितवन्तस्ते करणपर्याप्ताः । तदितरे–अपर्याप्ताः । 'असुभलेस्सपरिणामे' अशुभलेश्य परिणामाः=अशुभलेश्याः=संक्लिष्टलेश्यायुक्ताः परिणामाः=अध्यवसाया येषां ते, एते पूर्वोक्ताः 'अण्णे य' अन्ये च=अन्येऽपि 'एवमाई' एवमादयः= एतादृशाः प्राणिनः, 'पाणाइवायकरणं' प्राणातिपातकरणं=प्राणातिपातानुष्ठानं 'करेंति' कुर्वन्ति, पुनरपि तदेवाह–'पावा' इत्यादि–'पावा' पापाः=पापकर्म-तत्पराः, 'पावाभिगमा' पापाभिगमाः=पापमेव अभिगमः=स्वीकारो येषां ते तथा 'पावमई' पापमतयः=पापबुद्धयः, 'पावरुई' पापरुचयः=पापे एव रुचि=रनु-रागो येषां ते तथा, 'पाणवहकयरई' प्राणवधकृतरतयः=प्राणवधे कृता–रतिः= प्रीतिर्यैस्ते तथा, 'पाणवहरूवाणुट्ठाणा' प्राणवधरूपानुष्ठाना=प्राणवधरूपमनुष्ठानं

इसके पहिले नहींवे लब्धिपर्याप्त जीव हैं । तथा जो जीव शरीर इन्द्रिय आदि करणों की रचना को पूर्ण कर चुकते हैं वे करणपर्याप्त हैं। इनसे भिन्न जो जीव हैं वे अपर्याप्त हैं तथा (असुभलेस्सपरिणामे) जिन जीवों के अध्यवसाय–परिणाम–संक्लिष्ट लेश्यायुक्त हैं (एए) ये तथा (अण्णे य एवमाई) इनसे भिन्न और भी ऐसे ही प्राणी (करेंतिपाणाइवाय करणं) प्राणातिपातरूप पाप के करने वाले होते हैं। इसी बात को सूत्रकार "पावा" इत्यादि पदों द्वारा प्रकट करते हैं (पावा) जो पापकर्म करने में तत्पर हैं, (पावाभिगमा) पाप प्रवृत्ति ही जिन्हें स्वीकृत है, (पावमई) जिनकी बुद्धि पापमय हो रही है, (पावरुई) पापकर्म में जिनकी रुचि अधिक से अधिक रूप में सजग रहती है, (पाणावहकयरई) प्राणवध में जिन्हें आनंद आता है (पाणावहरूवाणु-

---

મરે છે–તે પહેલાં મરતાં નથી, તેમને લબ્ધિ પર્યાપ્ત જીવો કહે છે. તથા જે જીવો શરીર ઇન્દ્રિય આદિ કરણોની રચના પૂર્ણ કરી નાખે છે, તે જીવોને કરણ પર્યાપ્ત કહે છે. તેમનાથી જે ભિન્ન પ્રકારના જીવો છે તેઓ અપર્યાપ્ત છે, તથા "असुभलेस्सपरिणामे" જે જીવોના અધ્યવસાય–પરિણામ– સંક્લિષ્ટ લેશ્યા યુક્ત હોય છે "एए" તેઓ તથા "अण्णेय एवमाई" તે સિવાયનાં બીજાં પણ એવાં જ પ્રાણીઓ "करेंति पाणाइ वायकरणं" પ્રાણાતિપાત રૂપ પાપ કરનારાં હોય છે. એજ વાતને સૂત્રકાર "पावा" ઇત્યાદિ પદો દ્વારા પ્રગટ કરે છે "पावा" જે પાપકર્મ કરવાને તત્પર હોય છે, "पावाभिगमा" પાપ પ્રવૃત્તિ જ જેમણે સ્વીકારેલી છે, "पावमई" જેમની બુદ્ધિ પાપમય થઈ ગઈ છે, "पावरुई" પાપકર્મમાં જ જેમની વૃત્તિ વધારેમાં વધારે જાગૃત રહે છે, "पाणवह कयरुई" પ્રાણવધમાં જેમને મજા આવે છે, "पाणवहरूवाणु

कार्यं येषां ते तथा, 'पाणवहकहासु' प्राणवधकथासु=प्राणिहिंसावार्तासु= अभिरमंता। अभिरमंतः प्रसीदन्तः सन्तस्ते 'बहुप्पगारं' बहुप्रकारं नानाविधं 'पावं' पापं 'करेंतु' कृत्वा 'तुट्ठा' तुष्टाः =प्रसन्ना 'हुंति' भवन्ति ॥सू० २३॥

पूर्वं 'जेविय करेंति पावापाणवहं इति प्रतिज्ञातं पञ्चमं प्राणवधकर्तृद्वारं निरूपितं, सम्प्रति 'जहयकओ जारिसं-फलं देइ' यथा च कृतः प्राणवधो यादृशं फलं ददाति इति चतुर्थं फलद्वारं प्रतिपादयन्नाह-'तस्से' इत्यादि।

मूलम्—तस्स य पावस्स फलविवागं अयाणमाणावड्ढंति महब्भयं अविस्सासवेयणं दीहकालबहुदुक्खसंकडं नरयतिरिक्खजोणिं। इओ आउक्खए चुया असुभकम्मबहुला उववज्जंति नरएसु हुलियं महालएसु वयरामय कुड्ड-रुंदनिस्संधि-दार विरहिय-निम्मद्दव-भूमितल-खरामरिस-विसमणि रयघर चारएसुं

ट्ठाणा) प्राणवधरूप कार्य करना ही जिनका एक अनुष्ठान है और (पाणावह कहासु अभिरमंता) प्राणियों की हिंसात्मक वार्ताओं में जिन्हें रस मिलता है, ऐसे जीव (बहुप्पगारं) नानाविध (पावं करेत्तु) पाप करके (तुट्ठा) संतुष्ट (हुंति) होते हैं।

भावार्थ—जलचर, थलचर आदि जितने भी तिर्यंच हैं, एवं पक्षी आदि जितने भी खेचर जीव हैं—चाहे वे संज्ञी हो चाहे असंज्ञी हो पर्याप्त हो चाहे अपर्याप्त हो यदि ये जीव घात करके अपना निर्वाह करते हैं तो पापी हैं—पापकर्म में रत हैं। जिन जीवों के परिणामों में अशुभलेश्या वर्तती रहती है, जो पापमय कृत्यों में आनन्द मानते हैं इत्यादि प्रकार के जीव भी पापी और पापकर्म रत हैं ॥ सू. २३ ॥

ट्ठाणा" प्राणुवधनुं कार्य ज जेमनुं એक अनुष्ठान छे, अने "पाणवहकहासु अभिरमंता" प्राणीओनी हिंसात्मक वार्ताओमां जेमने रस पडे छे, એवा જીવો "बहुप्पगारं" विविध "पावंकरेत्तु" पापो करीने "तुट्ठा" संतोष "हुंति" पामे छे.

ભાવાર્થ—જળચર, સ્થળચર આદિ જે જે તિર્યંચ છે, અને પક્ષી આદિ જેટલાં ખેચર (નભચર) જીવો છે, તેઓ સંજ્ઞી હોય કે અસંજ્ઞી હોય, પર્યાપ્ત હોય કે અપર્યાપ્ત હોય પણ જો તેઓ જીવોની હત્યા કરીને પોતાનો નિર્વાહ ચલાવતાં હોય તો તેઓ પાપી છે-પાપકર્મમાં રત છે. જે જીવોનાં પરિણામોમાં અશુભલેશ્યા પ્રવર્તતિ હોય છે જેઓ પાપમય કૃત્યોમાં આનંદ માનતા હોય તે, ઈત્યાદિ પ્રકારના જીવો પણ પાપી અને પાપકર્મમાં રત હોય છે॥સૂ ૨૩॥

महोसिण-सयापतन्त-दुग्गंधविस्स-उव्वेयजणगेसु वीभच्छदरिसणिज्जेसु य निच्चं हिमपडलसीयलेसु कालोभासेसु य भीम गंभीर लोमहरिसणेसु णिरभिरामेसु निप्पडियार वाहिरोगजरापालिएसु अईव निच्चंधयारतामिस्सेसु पइभएसु ववगयगह-चंद-सूर-णक्खत्त-जोइसेसु मेयवसामंसपडल-पोच्चड-पूय-रुहिरुक्किण्ण-विलीण-चिक्कणरसिया वावण्णकुहिय चिक्खल्लकद्दमेसु कुकूलानल-पलित्तजालमुम्मुर असिक्खुरकरवत्तधारासु निसिय विच्छुयडंक निवातोवम-फरिस अतिदुस्सहेसु य अत्ताणा असरणा कडुयदुक्खपरितावणेसु अणुबद्ध निरंतरवेयणेसु जमपुरिससंकुलेसु ॥ सू० २४ ॥

टीका—'तस्स य पावस्स' तस्य च पापस्य=प्राणबधस्वरूपस्य पाप वृक्षस्य 'फलविवागं' फलविपाकं="प्राणातिपातस्य नरकनिगोदादि दुःखरूपं कटुफलं भविष्यती"ति पापपरिणामं, 'अयणमाणा' अजानन्तः पापकर्माणः 'नरकतिर्यग्योनिं वर्धयन्ति' इत्यग्रेण सम्बन्धः, वेदनामेव वर्णयति-'महब्भयं'

इस प्रकार "जे वि य करेंति पावा पाणवहं" यह प्रतिज्ञात पांचवां प्राणवधकर्तृद्वार कह दिया-अब सूत्रकार "जह य कओ जारिसं फलं देइ" यह चतुर्थ फल द्वार कहते हैं-'तस्स य पावस्स' इत्यादि ।

टीकार्थ-(तस्स य पावस्स) इस प्राणवधरूप पाप वृक्षका (फलविवागं) नरक निगोद आदि दुःखरूप कटुक फल भोगना होगा इस बात को (अयाण माणा) नहीं जानते हुए पापीष्ठ जीव (नरयतिरिक्खजोणिं

આ રીતે "जे वि य करेंति पावा पाणवहं" તે પ્રતિજ્ઞાત પાંચમાં પ્રાણવધકર્તૃદ્વારનું વિવેચન સંપૂર્ણ થયું. હવે સૂત્રકાર "जह य कओ जारिसं फलं देइ" આ ચતુર્થ ફલદ્વારનું વિવેચન કરે છે "तस्स य पावस्स" ઈત્યાદિ.

ટીકાર્થ "—तस्स य पावस्स" આ પ્રાણવધરૂપ પાપવૃક્ષનું "फलविवाग" નરક નિગોદ આદિ દુઃખરૂપ કડવું ફળ ભોગવવું પડશે, તે વાતને "अयाणमाणाः" નહીં જાણનારા પાપી જીવો "नरयतिरिक्खजोणिं वड्ढंति" નરક તિર્યંચ

इत्यादि-'महब्भयं' महाभयां 'अविस्सामवेयणं' अविश्रासवेदनां=प्रतिसमयम-नुभूयमानाऽशातवेदनां, 'दीहकालबहुदुक्खसंकडं' दीर्घकालबहुदुःखसंकटां=दीर्घकालमभिव्याप्यवर्तमानैः बहुभिर्नानाविधैः शारीरमानसैर्दुःखैः संकटां=संकुलां, तादृशीं 'नरयतिरिक्खजोणिं' नरकतिर्यग्योनिं=नरकेषु तिर्यक्षु च या योनिः=उत्पत्तिस्थानं तां 'वडूंति' वर्धयन्ति=तासु तासु नानाविधासु योनिषूत्पद्य च महावेदनामनुभवन्तीत्यर्थः। ते प्राणवधकारकाः नरकतिर्यगादि कुयोनिषु परि-भ्रमणं कुर्वन्तो जन्म मरणाद्यविच्छिन्नपरम्परया यथा घोरातिघोरदुःखमनु-भवन्ति तथोच्यते-'इओ' इत्यादि-ते प्राणवधकारकाः 'आउक्खए' आयुः क्षये 'इओ' इतः=मनुष्य भवात् 'चुया' च्युताः-मृताः सन्तः 'असुभकम्मब-हुला' अशुभकर्मबहुलाः=प्राणिवधपापकर्मप्रचुराः सन्तः 'नरएसु' नरकेषु=

वडूंति) नरक तिर्यंच योनि को बढाते हैं जो योनि (महब्भयं) अत्यंत-भयप्रद, एवं (अविस्सामवेयणं) प्रतिसमय अनुभूयमान अशातवेदना सम्पन्न है-तथा (दीहकाल बहुदुक्खसंकडं) जिसमें दीर्घकालतक जीव नाना प्रकार के शारीरिक एवं मानसिक दुःखों को भोगा करता है। ऐसी उस विविध शारीरिक मानसिक दुःखों से संकुल नरक तिर्यंच योनि को बढाते हैं। तात्पर्य इसका यह है कि जो प्राणवध करनेवाले जीव हैं वे उन २ नाना प्रकार की योनियों में उत्पन्न होकर महान् वेदनाओंका अनुभव करते रहते हैं। इस प्रकार नरक तिर्यंच आदि कुयोनियों में परिभ्रमण करते हुए वे प्राणवधकारी जीव जन्म मरण आदि की अविच्छिन्न परम्परा से जिस प्रकार घोरातिघोर दुःखों को भोगते हैं, अब सूत्रकार इसी विषय को यहां स्पष्ट करते हैं (इओ आउक्खए चुया) आयु के क्षय होने पर मनुष्यभव से मरकर प्राणवध कारक जीव

યોનિને વધારે છે, જે યોનિ "महब्भय" અત્યંત ભયપ્રદ, અને "अविस्साम वेयणं" પ્રતિકાળે અનુભવાતી અશાતા વેદનાથી યુક્ત છે, તથા "दीहकाल बहुदुक्खसंकड" જેમા દીર્ઘકાળ સુધી જીવ વિવિધ પ્રકારના શારીરિક અને માનસિક દુઃખોને ભોગવ્યા કરે છે એવી વિવિધ શારીરિક અને માનસિક દુઃખોથી યુક્ત, તે નરક તિર્યંચ યોનિને તેઓ વધારે છે તેનું તાત્પર્ય એ છે કે પ્રાણુવધ કરનાર જીવો ઉપરોક્ત વિવિધ યોનિયોમાં ઉત્પન્ન થઈને મહાન વેદનાઓ અનુભવે છે. આ રીતે નરક તિર્યંચ આદિ કુયોનિયોમાં પરિભ્રમણ કરતાં તે પ્રાણુવધ કરનારા જીવો જન્મ મરણ આદિની અતૂટ પરંપરા પૂર્વક જે જે પ્રકારનાં ભયંકરમાં ભયંકર દુઃખો ભોગવે છે, તે વિષયનું હવે સૂત્રકાર સ્પષ્ટીકરણ કરે છે "इओ आउक्खए चुया" આયુષ્યનો ક્ષય થતાં પ્રાણુવધકારી

रत्नप्रभादिषु 'हुलियं' शीघ्रम् 'उववज्जंति' उत्पद्यन्ते । कथम्भूतेषु नरकेषु ?– इत्याह—'महालएसु' महालयेषु=क्षेत्रस्थितिभ्यां महत्सु 'वयरामयकुड्डरुंद निस्संधिदारविरहियनिम्मद्दवभूमितलखरामरिसविसमणिरयघरचारएसु' वज्रमयकुडय–रुन्द्र–निस्सन्धिद्वारविरहितनिर्मार्दवभूमितलखराऽमर्शविषमनरकघरचारकेषु =वज्रमयकुडयानि=वज्रभित्तयः, रुन्दाः=विस्तीर्णाः, देशी–शब्दोऽयम् , विस्तीर्ण-वाचकः निस्सन्धयः=सन्धिरहिताः, द्वारविरहिताः=गमनागमनद्वारवर्जिताः, निर्मार्द-वभूमितलाः=कठोरतरभूमिभागाः, तथा खरामर्शाः=कठिनस्पर्शाः, विषमाः=उच्चा-वचाः, नरकगृहाः=नरकवासा एव चारकाः=बन्दिगृहाः येषु नरकेषु ते तथा तेषु, 'महोसिण–सयापतत्त–दुग्गन्ध–विस्स–उव्वेयजणगेसु' महोष्णसदाप्रतप्त–दुर्गन्ध

(असुभ कम्मबहुला) प्राणीवधजन्य पापकर्म के भार से अत्यंत दबे हुए होकर (नरएसु) रत्नप्रभा आदि पृथियों में (हुलियं) शीघ्र ही (उववज्जंति) उत्पन्न हो जाते है। ये नरक (महालयेसु) क्षेत्र तथा स्थिति की अपेक्षा महान् हैं तथा (वयरायमकुड्डरुंदनिस्संधिदारविरहिय निम्मद्दव भूमितल खरामरिसविसमणिरयघरचारएसु) (निरयघर-चारएसु) नरकावासरूपबन्दिगृह (वयरामयकुड्ड) वज्रभित्तिवाले हैं। (रुंद) अत्यंत विस्तृत हैं (निस्संधि) सन्धि रहित हैं। (दारविरहिय) गमनागमन के साधनभूत द्वार से हीन और (निम्मद्दव) मृदुता रहित (खरामरिस) कठोरतर (विसम) ऊंचे नीचे भूमिभागवाले हैं। (महो-सिण सयापतत्त–दुग्गंधविस्स–उव्वेयजणगेसु) (महोसिण) इनमें सदा उष्णजन्य वेदना रहा करती है। (सयापतत्त) ये निरन्तर तापसे व्याप्त

જીવ મનુષ્ય ભવમાથી મરીને " असुभ कम्मबहुला " પ્રાણીવધને કારણે ઉત્પન્ન થયેલાં પાપકર્મના ભારથી અત્યંત દબાયેલ એવાં તે જીવો " नरएसु " રત્ન પ્રભા આદિ પૃથ્વીઓમાં " हुलियं " તરત જ " उववज्जति " ઉત્પન્ન થઇ જાય છે. તે નરક " महालयेसु " ક્ષેત્ર અને સ્થિતિની અપેક્ષાએ મહાન છે તથા " वयरामय कुड्ड रुंद निस्सधिदार विरहिय निम्मद्दव भूमितल खरामरिसविसम णिरयधर चारएसु " " निरयघरचारएसु " નરકાવાસરૂપ બન્દિગૃહ " वयरामय कुड्ड " વજ્રની દિવાલોવાળા છે, ' रुंद " અત્યંત વિસ્તૃત છે, " निस्संधि " સન્ધિરહિત છે. ' दारविरहिय " અવર જવર માટેનાં દ્વારોથી રહિત છે, અને " निम्मद्दव " મૃદુતાથી રહિત " खरामरिस " કઠોરમાં કઠોર " विसम " ઊંચા નીચા ભૂમિ ભાગવાળાં છે. "महोसिण सयापतत्त–दुग्गधविस्स–उव्वेयजणगेसु " " महोसिण " તેમાં સદા ઉષ્ણુતા જન્ય વેદના રહ્યા કરે છે, " सयापतत्त "

-विश्रोद्वेगजनकेषु तत्र महोष्णाः=अत्यन्तोष्णाः, सदा मतप्ताः=निरन्तरतापयुक्ताः, दुर्गन्धाः=अनिष्टगन्धयुक्ताः, विश्राः=अपक्वमांसवत्पूतिगन्धाः, अतएव-उद्वेग-जनकाः=उद्वेगोत्पादकाः, तेषु 'बीभच्छदरिसणिज्जेसु' बीभत्सदर्शनीयेषु=घृणितदर्शनेषु 'निच्चं' नित्यं 'हिमपडलसीयलेसु' हिमपटलशीतलेषु=हिमपटलमिव शीतला ये ते तथा तेषु 'कालोभासेसु' कालावभासेषु, कालः=श्यामलोऽवभासः=कान्तिर्येषां ते तथा तेषु कृष्णवर्णेषु 'भीमगंभीरलोमहरिसणेसु' भीमगम्भीरलोमहर्षणेषु-तत्र भीमाः=भयजनका गंभीराः-अतलस्पर्शा अतएव लोमहर्षणाः=रोमाञ्चकारिणस्तेषु=तत्स्वरूपश्रवणमात्रेण-रोमाञ्चोत्पादकेषु 'णिरभिरामेसु' निरभिरामेषु = अशोभनेषु 'निप्पडियारवाहिरोगजरापीलिएसु' निष्प्रतिकार व्याधिरोगजरापीडितेषु=निष्प्रतिकाराः=प्रतिकाररहिता व्याधयः=कुष्ठादयः रोगाः

रहते हैं। (दुग्गंध विस्सउव्वेयजणगेसु) अनिष्टतर दुर्गंध से भरपूर रहते है। विस्र-कच्चेमांस के जैसी यहां सदा दुर्गंध आती रहती है, इसलिये नारकियों को ये सदा उद्वेग के उत्पादक होते रहते हैं। (बीभच्छदरिसणिज्जेसु य) देखने में ये बड़े असुहावने घृणित प्रतीत होते हैं। (निचं हिमपडलसीयलेसु) सदा ये हीमपटल के जैसे शीतल होते हैं (कालोभासेसु) इनकी कांति काली होती है। (भीमगंभीरलोमहरिसणेसु) इन नरकावासों में जीव को सदा भय ही भय रहता है। ये आवास कितने गहरे हैं इनका पता नहीं पड़ता है। इनके स्वरूप श्रवण मात्र से ही जीवों के शरीर में रोमांच खडे हो आते हैं। (णिरभिरामेसु) ये सब अशोभन हैं। (निप्पडियार वाहिरोगजरापीलिएसु) यहां की जो कुष्ठ आदि व्याधियां हैं, मस्तकशूल आदि जो रोग हैं, वार्धक्य जो

તેઓ નિરંતર તાપથી વ્યાપ્ત કરે છે, "दुग्गंधविस्सउव्वेयजणगेसु" સૌથી ખરાબ દુર્ગંધથી ભરપૂર રહે છે વિસ્ર-કાચા માંસના જેવી દુર્ગંધ ત્યાં સદા આવ્યા કરે છે, તેથી નારકીઓને તેઓ સદા સંતોષ પેદા કરનારા હોય છે "बीभच्छ दरिसणिज्जेसु य" જોવામાં તે ઘણાં જ બેડોળ-ઘૃણા થાય તેવાં હોય છે. "निचं हिमपडलसीयलेसु" તેઓ સદા હિમનાં થરો જેવાં શીતળ હોય છે 'कालो भासेसु" તેઓ દેખાવે કાળા હોય છે. "भीमगंभीरलोमहरिसणेसु" તે નરકવાસોમા જીવોને સદા ભય જ રહે છે તે આવાસો કેટલાં ઊંડા છે. તેની ખબર પડતી નથી. તેના સ્વરૂપનું વર્ણન સાંભળતાંજ જીવોના શરીરના રોમાંચ ઉભાં થઇ જાય છે. "णिरभिरामेसु" તે બધાં શોભા વિનાનાં છે. "निप्पडियारवाहिरोगजरापीलिएसु" અહીંની કુષ્ઠ આદિ જે વ્યાધિયો છે,

मस्तकशूलादयः, जरा=वार्धक्यं च, तैः पीडितेषु=व्याप्तेषु, 'अईवनिच्चंधयारतमिस्सेसु' अतीवनित्यान्धकारतमिस्रेषु=अतीव=अत्यन्तं नित्यान्धकारेण तमिस्रेषु=घोरान्धकारस्वरूपं-प्राप्तेषु, अतएव 'पइभएसु' प्रतिभयेषु=प्रतिवस्तुभययुक्तेषु, 'ववगयगहचंदसूरणक्खत्तजोइसेसु' व्यपगतग्रहचन्द्रसूरनक्षत्रज्योतिष्केषु =ग्रहचन्द्रसूर्यनक्षत्रज्योतिष्कवर्जितेषु, 'मेयवसामंसपडल पोच्चडपूयरुहिरुक्किण्णविलीणचिक्कणरसियावावण्णकुहियचिक्खल्लकद्दमेसु' मेदोवसामांसपटलपोच्चडपूयरुधिरोत्कीर्णविलीनचिक्कणरसिकव्यापन्नकुथितचिक्खलकर्दमेषु=मेदः=शरीरस्नेहविशेषः, वसा=चर्बी इति भाषा, मांसं=प्रसिद्धं तेषां यत्पटलं=राशिः 'पोच्चड' गिलगिलायमानं पूयं='पीप' 'परू' इति प्रसिद्धं, रुधिरं=शोणितं तेन उत्कीर्णं=व्याप्तं विलीनं=संभृतं, चिक्कणं=गुन्द्रवत्, 'रसिका' विकृतरुधिरं व्यापन्नं=विनष्टस्वरूपम् अतएव-कुथितं=दुर्गन्धितं 'चिक्खलं' शिथिलकर्दमः, कर्दमः=घनकर्दमश्च येषु ते तथा तेषु। 'कुकूलानलपलित्तजालमुम्मुरअसिक्खुर

अवस्था है इनकी पीडा यहां प्रतिकार-उपाय रहित होती हैं। (अईव णिच्चंधयारतमिस्सेसु) यहां पर सर्वदा घोरातिघोर अंधकार रहता है। (पइभएसु) यहां की प्रत्येक वस्तु भय से भरपूर रहती है। (ववगयगहचंदसूरणक्खत्तजोइएसु) न यहां पर कोई ग्रह हैं न कोई चन्द्र है, न सूर्य है, न नक्षत्र हैं। (मेयवसामंसपडल-पोच्चड-पूय-रुहिरुक्किण्ण विलीण-चिक्कण-रसिया वावण्णकुहियचिक्खल्लकद्दमेसु) मेद, वसा-चर्बी और मांस का ढेर इन स्थानों में सदा लगा रहता है। तथा पोचड गिलगिलायमान पूय-पीब, एवं रुधिर से व्याप्त, गोंद के समान चिकने भरे हुए व्यापन्न दुर्गंधित ऐसे विकृत खून, से तथा चिकने घनकर्दम से ये स्थान सदा व्याप्त रहते हैं। (कुकूलानल-पलित्तजाल-मम्मुर-

---

માથાનો દુઃખાવો આદિ જે રોગો છે. વૃદ્ધાવસ્થા આદિ જે અવસ્થા છે, તેમની પીડાનો ત્યાં કોઇ પણ ઇલાજ હોતો નથી. તે પ્રતિકાર રહિત હોય છે, "अईव णिच्चंधयारतमिस्सेसु" અહીં કાયમ ઘોરમાં ઘોર અંધકાર રહે છે. "पइभएसु" અહીંની દરેક વસ્તુ ભયજનક હોય છે. "ववगयगहचंदसूरणक्खजोइसेसु" અહીં કોઇ ગ્રહ નથી, ચન્દ્ર નથી, સૂર્ય નથી કે નક્ષત્ર પણ નથી. "मेयवसा मंसपडल-पोचड-पूय-रुहि रुक्किण्ण-विलीण-चिक्कण, रसियावावण्णकुहिय चिक्खल्लकद्दमेसु" મેદ, વસા ચરબી અને માંસના ઢગલા તે સ્થાનોમાં સદા પડેલાં હોય છે. તથા પોચ્ચડ-કિચ્ચડ અને પૂય પીબ તથા રક્તથી વ્યાપ્ત, ગુંદરના જેવા ચીકણાં, ભરેલાં દુર્ગંધમય વિકૃત લોહીથી, તથા ચીકણા કાદવથી તે સ્થાનો સદા છવાયેલાં રહે છે "कुकूलानल-पलित्तजाल-मम्मुर-असिक्खुर

करवत्तधारसुनिसियविच्छुयडंकनिवातोवमफरिसअतिदुस्सहेसु ' कुकूलानल प्रदीप्तज्वालमुर्मुरासिक्षुरकरपत्रधारसुनिशितवृश्चिकदंशनिपातोपमातिदुस्सहेषु, कुकूलानलः=करीषाग्निः, खदिराग्निर्वा, प्रदीप्ता च ज्वालेति प्रदीप्तज्वाला=प्रवृद्धवह्निशिखा च, मुर्मुरः=भस्ममिश्रोऽग्निकणः, असिः=खड्गः, क्षुरः=नापितोपकरणं, करपत्रं=काष्ठभेदकशस्त्रविशेषः तेषां धारेति असिक्षुरकरपत्रधारा, सुनिशितवृश्चिकदंशनिपातः=सुनिशितास्तीक्ष्णा ये वृश्चिकदंशाः=तत्पुच्छकण्टकास्तेषां निपातश्चेति द्वन्द्वः एभिरुपमा=सादृश्यं यस्य स तथाविधः स्पर्शः येषां ते तथा अतएव ते च ते अति दुस्सहाः=अत्यन्तदुःखेन सहनयोग्यास्तेषु, 'कडुयदुक्खपरितावणेसु ' कटुकदुःखपरितापनेषु = कटुकैः = दारुणैर्दुःखैर्दशविधक्षेत्रवेदनारूपैः परितापनं येषु तेषु ' अणुबद्धनिरंतरवेयणेसु ' अनुबद्धनिरन्तरवेदनेषु=अनुबद्धा=अनुक्षणं व्याप्ता निरन्तरा=अविच्छिन्नवेदना=पीडा येषु तथा तेषु ' जमपुरिससंकुलेसु ' यमपुरुषसंकुलेषु, यमस्य–दक्षिणदिक् लोकपालस्य पुरुषाः–

असिक्खुर–करवत्तधार सुनिसियविच्छुयडंकनिवातोवम–फरिसअतिदुस्सहेसु) इनका स्पर्श कुकूलानल–करीषाग्नि अथवा खदिराग्नि के जैसा, प्रवृद्ध–वह्नि की ज्वाला के जैसा, मुम्मुर–भस्मभिश्रित अग्निकण के जैसा असि–तलवार की धार के जैसा, खुर–क्षुरा की धार के जैसा, करवत–करौंति की धार जैसा, एवं अत्यंत तीक्ष्णवृश्चिक के डंक के द्वारा काटने जैसा है, इसी कारण ये स्थान अत्यंत दुस्सह बन रहे हैं (कडुयदुक्खपरितावणेसु) दशविधक्षेत्र वेदनारूप दारूण दुःखों द्वारा जहां जीवों को सदा संताप ही संताप भोगना पड़ता है तथा (अणुबद्ध निरंतरवेयणेसु) यहां प्रतिक्षण अविछिन्न असह्य पीडा होती है। एवं (जमपुरिससंकुलेसु) यम–दक्षिण दिशासंबंधी लोकपाल के अम्ब अम्बरीषादिक

करवत–धारसुनिसियविच्छुयडकनिवातोवम–फरिस अतिदुस्सहेसु " તેમનો સ્પર્શ કુકૂલાનલ–કરિષાગ્નિ અથવા ખદિરાગ્નિ જેવો, પ્રવૃદ્ધ–અગ્નિની જ્વાળા જેવો, મુમ્મુર–ભસ્મ–મિશ્રિત અગ્નિકણો જેવો, અસિ–તલવારની ધારના જેવો, ખુર–ખરીની ધાર જેવો, કરવતની ધાર જેવો, અને અત્યંત તીક્ષ્ણ વીંછીના ડંખ જેવો છે. તે કારણ તે સ્થાનો અત્યત દુખદાયી હોય છે "कडुयदुक्खपारतावणेसु " દશ પ્રકારનાં ક્ષેત્ર વેદનારૂપ દારુણ દુઃખો દ્વારા જ્યાં જીવોને સદા સંતાપ જ ભોગવવો પડે છે, તથા अणुबद्धनिरंतरवेयणेसु " ત્યાં દરેક ક્ષણે અવિચ્છિન્ન અસહ્ય પીડા ભોગવવી પડે છે. અને "जमपुरिससकुलेसु " યમ દેવોથી તે સદા ઘેરાયેલાં હોય છે. યમ–દક્ષિણ દિશાના લોકપાલના અમ્બ,

अम्बाम्बरीषादयः परमाधार्मिका असुरकुमारदेवास्तैः संकुलेषु=व्याप्तेषु–एतादृशेषु नरकेषु ते प्राणवधकर्त्तारः 'अत्ताणा' अत्राणा=त्राणरहिताः दुःखनिवारकाभावात्, अतएव 'असरणा' अशरणाः=शरणरहिताः रक्षकाभावात्, 'उववज्जंति उत्पद्यन्ते इति सम्बन्धः ॥सू०२४॥

मूलम्–तत्थ य अंतोमुहुत्तलद्धिभवपच्चएणं निव्वत्तेंति उ ते सरीरं हुंडं बीभच्छदरिसणिज्जं बीहणगं अट्ठिण्हारुणह रोमवज्जियं असुभगं दुक्खविसयं, तओ य पज्जत्तिमुवगया इंदिएहिं पंचहिं वेदेंति वेदणं असुहाए वेयणाए उज्जलबल विउल–कक्खडखरफरुसपगाढपयंडघोरबीहणगदारुणाए,किंते२५॥

टीका—'तत्थ य' तत्र च नरकेषु उत्पत्त्यनन्तरं ते पापकर्माणः 'अंतोमुहुत्तलद्धिभवणपच्चएणं' अन्तर्मुहूर्तलब्धिभवप्रत्ययेन=अन्तर्मुहूर्तस्य वैक्रियलब्ध्या

परमाधार्मिक असुरकुमार जाति के देवों से ये सदा संकुल रहते हैं। ऐसे इन नरकोंमें प्राणवध के करने वाले जीव (अत्ताणा) दुःखनिवारक के अभाव से त्राण रहित एवं (असरणा) रक्षक कोई न होने से अशरण बन (उववज्जंति) उत्पन्न होते हैं।

भावार्थ—प्राणवध करनेवाले जीव जो पापपुंज का संचय करते हैं। उसके प्रभाव से वे यहां से मरकर शीघ्र ही नरक में जन्म लेते हैं। नरकों में जीव की कैसी हालत होती है एवं वहां की क्या स्थिति है यही बात सूत्रकार ने इस सूत्र द्वारा समझाई है ॥ सू. २४॥

टीकार्थ–(तत्थ य) उन नरकों में उत्पत्ति के अनन्तर (ते) वे पापकर्म वाले जीव (अंतोमुहुत्तलद्धि भवपच्चएणं) अन्तर्मुहूर्त्त में प्राप्त वैक्रियल-

---

અમ્બરીષ આદિ પરમ અધાર્મિક અસુર કુમાર જાતિના દેવો છે. પ્રાણવધ કરનારા તે જીવો એથી તે નરકોમાં "अत्ताणा" દુઃખ નિવારકને અભાવે ત્રાણ રહિત અને "असरणा" કોઈ રક્ષક નહીં હોવાથી અશરણ દશામાં "उवव–ज्जति" ઉત્પન્ન થાય છે

ભાવાર્થ—પ્રાણવધ કરનારા જીવ જે પાપપુંજનો સંચય કરે છે તેના પ્રભાવે અહીંથી મરીને તરત જ નરકમાં ઉત્પન્ન થાય છે. નરકોમાં જીવોની કેવી હાલત થાય છે અને ત્યાંની કેવી પરિસ્થિતિ છે, એ વાત સૂત્રકારે આ સૂત્રદ્વારા સમજાવી છે. ॥સૂ ૨૪॥

ટીકાર્થ–"तत्थ य" ઇત્યાદિ, "तत्थ य" તે નરકોમાં ઉત્પત્તિ થયા પછી "ते" તે પાપકર્મ કરનારા જીવ "अंतोमुहुत्तलद्धिभवपच्चएण" અન્તર્મુહૂર્તમાં પ્રાપ્ત વૈક્રિય

भवप्रत्ययेन च, = भवप्रत्ययः = भवन्ति कर्मवशाः जीवाः अस्मिन्निति भवः = नरकादिजन्म, भव एव प्रत्ययः=कारणं यस्य तत् भवप्रत्ययं=तेन–नरकजन्मकारणेन 'सरीरं=शरीरं नरकभवसम्बन्धिदेहं, 'निव्वत्तेति' निर्वर्त्तयन्ति=रचयन्ति। कीदृशं शरीरम्? इत्याह—'हुंडं' अस्फुटावयवं, बीभच्छदरिसणिज्जं' बीभत्सदर्शनीयं=विकृतस्वरूपं 'बीहणगं' भापकं भयजनकम्, 'अट्ठिण्हारुणहरोमवज्जियं' अस्थिस्नायुनखरोमवर्जितं=स्पष्टं, असुभगम्=असुन्दरम्, दुक्खविसयं' दुःखविषयं=क्लेशबहुलं शरीरं निर्वर्त्तयन्तीति सम्बन्धः। 'तओ य' ततश्च=शरीरनिर्वर्तनानन्तरं 'पज्जत्ति' पर्याप्तिं = आहारशरीरेन्द्रिय–प्राणापानभाषामनःपर्याप्तिं

ब्धि से और भवप्रत्यय से–नरक जन्म के कारण से वे (सरीरं) शरीर को-नरकभव संबंधी शरीर को (निवत्तंति) बना लेते हैं। तात्पर्य कहने का यह है कि नरकों में जो जीव नारकी जीव की पर्याय से उत्पन्न होता है उसका अन्तर्मुहूर्त्त में ही नारकी का शरीर बन जाता है, क्यों कि इस शरीर के बनने का कारण वहां पर जन्म लेना है। इस शरीर के अवयव अस्फुट रहते हैं इसलिये इसे (हुंड) हुंड कहा है और (बीभच्छदरिसणिज्जं) यह शरीर–विकृत स्वरूपवाला होता है इसलिये बीभत्स दर्शनीय कहा है। (बीहणगं) यह शरीर भयजनक होता है और (अट्ठिण्हारुणहरोमवज्जियं) अस्थि–हड्डियों से, स्नायु–नसों से तथा नख और रोम से रहित (असुभगं) असुन्दर और (दुक्खविसयं) क्लेश बहुल होता है। (तओ य) इस प्रकार शरीर की रचना

લબ્ધિથી અને ભવપ્રત્યયથી–નરકમાં જન્મ થવાને કારણે તેઓ "सरीरं" શરીરને–નરકભવ સંબંધી શરીરને "निवत्तंति" બનાવી લે છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે નરકમાં જે જીવ નારકી જીવની પર્યાયથી ઉત્પન્ન થાય છે, તેમનું અન્તર્મુહૂર્તમાં જ નારકીનું શરીર બની જાય છે, કારણ કે ત્યાં જન્મ લેવો એજ તે શરીર બનવાનું કારણ છે તે શરીરનાં અવયવો અસ્ફુટ હોય છે તેથી તેને "हुंड" હુંડ કહ્યાં છે અને "बीभच्छदरिसणिज्जं" તે શરીર વિકૃત સ્વરૂપ વાળું હોય છે તેથી તેને બીભત્સ દર્શનીય કહેલ છે. "बीहणगं" તે શરીર ભયજનક હોય છે, અને "अट्ठिण्हारुणहरोमवज्जिय" અસ્થિ–હાડકાંઓથી સ્નાયુ–નસોથી તથા નખ અને રુંવાટીથી રહિત, "असुभगं" અસુંદર અને "दुक्खविसयं" ક્લેશ યુક્ત હોય છે, "तओ य" આ પ્રકારની શરીરની

'उवगया' उपगताः=प्राप्ताः–सन्तः 'पंचहिं' पञ्चभिः 'इंदिएहिं' इन्द्रियैः= श्रोत्रादिभिः 'असुहाए' अशुभया=अशातरूपया, 'वेयणाए' वेदनया–अशातवेदनीयकर्मोदयजनितया 'वेयणं' वेदनं=कुम्भीपचनानि दुःखं 'वेदेंति' वेदयन्ति=अनुभवन्ति । कीदृशया वेदनया ? इत्याह—'उज्जलवलविउलकक्खडखरफरुसपगाढपयंडघोरबीहणगदारुणाए' उज्ज्वलवलविपुलकर्कशखरपरुषप्रचण्डघोरभीषणदारुणया=उज्ज्वला=तीव्रानुभावात्प्रकर्षत्वात्, वला=बलवती अनिवार्यत्वात्, विपुला=विशाला परिमाणरहितत्वात्, कर्कशा = कठोरा प्रत्यङ्गदुःखजनकत्वात्, खरा=तीक्ष्णा–अन्तःकरणभेदकत्वात्, परुषा=निष्ठुरा–सुखलेशरहितत्वात् प्रगाढा –प्रतिक्षणमसमाधिजनकत्वात्, प्रचण्डा=भयानका–आत्मनः–प्रतिप्रदेशव्यापित्वात्

हो जाने के अनन्तर (पज्जत्तिमुवगया) आहार, शरीर, इन्द्रिय, प्राणापान, भाषा और मन, इन पर्याप्तियों को प्राप्त हुए वे नारकी जीव (इंदिएहिं पंचहिं) श्रोत्रादिक पांच इन्द्रियों द्वारा (असुहाए वेयणाए) असाता वेदनीय कर्म के उदय से जनित अशुभ अशातरूपवेदना से (वेयणं) कुंभी पचनादि दुःखों का (वेदेंति) अनुभव करते हैं। यह अशातरूपवेदना उन नारकी जीवों की (उज्जलवल विउल–कक्खड खरफरुसपगाढपयंडघोरबीहणगदारुणाए) उज्ज्वल–तीव्रानुभावशाली होती है, वल–अनिवार्य होने से बलिष्ठ होती है, विपुल परिमाण रहित होने से विशाल होती है, (कक्खड) प्रत्येक अंग दुःख जनक होने से कर्कश–कठोर होती है। खर अंतरंग की भेदक होने से तीक्ष्ण होती है। (फरुस) सुख के लेश से रहित होने के कारण निष्ठुर होती है। (पगाढ) प्रतिक्षण असमाधि की उत्पादक होने से प्रगाढ है (पयंड) आत्मा के

રચના થઈ ગયા પછી "पज्जत्तिमुवगया" આહાર, શરીર, ઇન્દ્રિય, પ્રાણાપાન, ભાષા અને મન એ પર્યાપ્તિઓને પ્રાપ્ત કરીને નારકી જીવ "इंदिएहिं पंचहिं" શ્રોત્રાદિક પાંચ ઇન્દ્રિયો દ્વારા "असुहाए वेयणाए" અસાતા વેદનીય કર્મના ઉદયથી જનિત અશુભ અશાતારૂપ વેદનાથી "वेयणं" કુંભમાં રંધાવા આદિ દુઃખોનો "वेदेंति" અનુભવ કરે છે. તે નારકી જીવોની તે આશાતારૂપ વેદના "उज्जलवलविउल–कक्खड–खर–फरुसपगाढपयंडघोरबीहणगदारुणाए" ઉજ્જવળ–તીવ્ર અનુભવવાળી હોય છે. वल–અનિવાર્ય હોવાથી પ્રબળ હોય છે, विपुल–પરિમાણ રહિત હોવાથી વિશાળ હોય છે "कक्खड" પ્રત્યેક અંગમાં દુઃખ જનક હોવાથી કઠોર હોય છે, खर–હૃદય ભેદક હોવાથી તીક્ષ્ણ હોય છે, फरुस–સહેજ પણ સુખથી રહિત હોવાને કારણે નિષ્ઠુર હોય છે, पगाढ– દરેક પળે અસમાધિની ઉત્પાદક હોવાથી પ્રગાઢ હોય છે, पयंड

घोरा=विकटा-श्रवणेऽपि दुःखजनकत्वात्, भीषणा=भयोत्पादिका-प्रतिप्राणि-भयजनकत्वात् दारुणा=हृदयसंक्षोभकारिणी प्रतिकाररहितत्वात्, तथा-भूतया वेदनया पापिनो दुःखमनुभवन्तीति सम्बन्धः 'किं ते' कानि तानि दुःखानि? तान्यग्रेऽनुपदे वर्णयिष्यते ॥ सू०२५ ॥

अथ तान्येव दुःखानि वर्णयति-'कंदु महाकुम्भीए' इत्यादि ।

मूलम्-कंदुमहाकुंभीए पयण-पउलण-तवग-तलण-भट्ठ भज्जणाणि य लोहकडाहुक्कड्डणाणि य कोट्टबलिकरणकोट्टणाणि य सामलि तिक्खग्ग-लोहकंटग-अभिसारणा पसारणाणि, फालण विदारणाणि य अवकोडकवंधणाणि, लट्ठिसयतालणाणि य, गलगबलुल्लंबणाणियसूलग्गभेयणाणि य, आएसपवंचणाणि य खिंसणावमाणणाणि य विघुट्ठपणिज्जणाणियवज्जसयमाइयाणि य॥२६॥

टीका—'कंदुमहाकुंभीए' कन्दुमहाकुम्भ्योः=कन्दुः=लोहमयविशालपात्र-

---

प्रति प्रदेश में व्यापक होने से प्रचण्ड-भयानक होती है, घोर-सुनने में भी दुःखजक होने से विकट होती है, (वीहणग) हरएक प्राणी में भय की संचारक होने से भीषण-भयोत्पादिका होती है, (दारुणाए) इसका वहां कोई इलाज नहीं होता है इसलिये यह हृदय को संक्षोभकारिणी होने से दारुण होती है। इस प्रकारकी वेदना से पापी जीव नरकों में दुःखों का अनुभव करते हैं। (किंते) वे दुःख कौन कौन से हैं वह इसी के अगले सूत्र में कहेंगे ॥सू. २५॥

अब सूत्रकार "किंते" इन पदों द्वारा सूचित दुःखों को कहते हैं—

આત્માના દરેક પ્રદેશોમાં વ્યાપેલી હોવાથી પ્રચંડ ભયાનક હોય છે, ઘોર-સાંભળતા પણ દુઃખજનક હોવાથી વિકટ હોય છે, "वीहणग" દરેક પ્રાણીમાં ભયનો સંચાર કરનાર હોવાથી ભીષણ-ભયંકર હોય છે, "दारुणाए" તેનો ત્યાં કોઇ ઇલાજ હોતો નથી, તેથી તે હૃદયમાં ક્ષોભ ઉત્પન્ન કરનાર હોવાથી દારુણ હોય છે. આ પ્રકારની વેદનાથી પાપી જીવ નરકોમાં દુઃખોનો અનુભવ કરે છે. "किंते" તે દુઃખો ક્યાં ક્યાં છે તે હવે પછીના સૂત્રમાં બતાવવામાં આવશે ॥ સૂ ૨૫ ॥

હવે સૂત્રકાર "किंते" દ્વારા સૂચિત દુઃખોનું વર્ણન કરે છે "कंदु

विशेषः, महाकुम्भी=घटाकृतिपात्रविशेषस्तयोर्मध्ये, सूत्रे जातित्वादेकवचनम्। 'पयण' पचन-मोदनादेरिव 'पउलण' प्रकुलनम्=सीसकवद्गालनम्, 'तवग-तलण' तपकतलनं=तपको लोहपात्रविशेषः 'तवा' इति भाषाप्रसिद्धः, तस्मिन् तैलादिभिरपूपवत्तलनम्, 'भट्ठभज्जण' भ्राष्ट्रभर्जनं च-भ्राष्ट्रभर्जनपात्रं-'भाड' इति प्रसिद्धः, तत्र भर्जनं चणकादेरिव, इत्येषां द्वन्द्वस्तानि च 'लोहकडाहुक्कड्ढणाणि य' लोहकटाहोत्क्वथनानि च=लोहकटाहः='कढाई' इति भाषाप्रसिद्धः, तत्र उत्क्वथनानि=औषधिवदुत्कालनानि 'कोट्टबलिकरणकोट्टणाणि' कोट्टबलिकरणकोट्टनानि= कुट्टेन=क्रीडया बलिकरणाय, कुट्टनानि=करचरणाद्यवयवत्रोटनानि-शरीर 'खण्डशः' कृत्वा काकादिभ्योऽर्पणानीत्यर्थः, 'सामलितिक्खग्गलोहकंटगअभिसारणापसार-

---

'कंदुमहाकुंभीए' इत्यादि०।

टीकार्थ-नारकीजीव नरकों मे (कंदुमहाकुंभीए) कंदु-लोहमय विशाल पात्रविशेष में तथा घटाकृति जैसे महाकुंभी में ओदनादिक की तरह (पयण-पउलण-तवग-तलण-भट्ठभज्जणाणि य) (पयण) पकाये जाने के (पउलण) सीसक-रांग की तरह गलाये जाने के, (तवगतलण) गर्म लोह के तवा पर तैलादिक में तले गये पूआ आदि की तरह तले जाने के (भट्ठभज्जणाणि य) भांड में भुंजे गये चना आदि की तरह भुंजे जाने के दुःखों को प्राप्त करते हैं। तथा (लोहकडाहुक्कड्ढणाणि य) जैसे लोहे की कढाई में औषधियां उबाली जाती हैं उसी तरह वहां पर वे भी बड़े २ कडाहों में उबाले जाते हैं। (कोट्टबलिकरणकोट्टणाणि य) बलि देने के लिये अनायास ही उनके कर, चरण आदि अवयवों को वहां तोड दिया जाता है-शरीर को खंड २ करके वहां काकादिकों के लिये

महाकुंभीए" ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ-નરકી જીવ નરકોમાં "कंदुमहाकुंभीए" "कंदु" લોઢાના વિશાળ પાત્ર-વિશેષમાં, તથા ઘડાના આકારના મહાકુંભીમાં ઓદનાદિકની જેમ "पयण-पउलण, तवग, तलण, भट्टभज्जणाणि य" "पयण" રંધાવાનાં, "पउलण" સીસાની જેમ ઓગળવાનાં, "तवगतलण" લોઢાના ગરમ તેલના તાવડામાં તેલના માલપૂવા આદિની જેમ તળાવનાં, "भट्टभज्जणाणि य" તાવડામાં શેકાતા ચણા આદિની જેમ શેકવાનાં દુઃખો અનુભવે છે. તથા "लोहकडा हुक्कड्ढणाणि य" જેવી રીતે લોઢાની તવીઓમાં ઔષધિયો ઉકાળાય છે એજ રીતે ત્યાં તેમને પણ મોટા તાવડાઓમાં ઉકાળવામાં આવે છે, "कोट्टबलि करणकोट्टणाणि य" બલિ દેવાને માટે અચાનક તેમના હાથ પગ આદિ અવયવોનું ત્યાં છેદન કરવામાં આવે છે, શરીરના ટૂકડે ટૂકડા કરી ત્યાં કાગડા આદિને

'णाणि' शाल्मलि तीक्ष्णाग्रलोहकण्टकाभिसारणापसारणानि=शाल्मलिः=' सेमल' इति ख्यातो वृक्षविशेषस्तस्य ये तीक्ष्णाग्रा लोहकण्टका इव कण्टकाः, तेषु अभिसारणापसारणानि च = कर्षणापकर्षणानि 'फालणविदारणाणि' फालनानि=वस्त्रवत्स्फाटनानि, विदारणानि=क्रकचादिना काष्ठवद् द्वैधीकरणानि 'अवकोडगबंधणाणि' अवकोटकबन्धनानि=ग्रीवाया हस्तयोश्च पश्चाद्भागानयनेन-बन्धनानि, 'लट्ठिसयताडणाणि' यष्टिशतताडनानि=यष्टिशतैस्ताडनानि, 'गल-गबलुल्लंबणाणि' गलकबलोल्लम्बनानि=गल एव गलकः=कण्ठः, तस्मिन् बलात् =बलपूर्वकम् उल्लम्बनानि=वृक्षशाखादौ उद्बन्धनानि, 'सूलग्ग भेयणाणि य' शूलाग्रभेदनानि च=शूलाग्रेण=शूलाग्रभागेन भेदनानि, शूलारोपणानि वा, 'आएस पवंचणाणि' आदेशप्रवञ्चनानि=आदेशेन=आज्ञया असत्यवस्तु विषयया

उनका वह शरीर अर्पित किया जाता है, (सामलितिक्खग्गा-लोहकंटग अभिसारणा-पसारणाणि) सेमर वृक्ष के लोहकण्टक के समान नुकीले कांटा के ऊपर उनका कर्षणापकर्षण किया जाता है उन्हें आगे पीछे खेंचा जाता है, (फालण विदारणाणि य) फालन-वस्त्र के समान फाड़ना और करोंति आदि के द्वारा काष्ठ को तरह चीरना भी उनका वहां किया जाता है। (अवकोडगबंधणाणि) उनकी ग्रीवा और दोनों हाथ पीछे के भाग की तरफ करके बांधे जाते हैं। (लट्ठिसयताडणाणि य) सैकडों लाठियों की उन पर वहां मार पडती है। (गलगबलल्लंबणाणि य) जबर्दस्ती उनके गलों को वृक्ष की शाखा पर बांधकर लटकाया जाता है। (सूलग्गभेयणाणि य) शूल के अग्रभाग से उनके शरीर का भेदन किया जाता है। अथवा शूली के ऊपर उन्हें लटकाया जाता है। (आए-

તેમનાં તે શરીર અર્પણ કરાય છે. "सामलितिक्खग्गलोहकंटग-अभिसारणा-पसारणाणि य" સેમર વૃક્ષના લોહકંટકના સમાન અણીદાર કાંટાઓ ઉપર તેમનું કર્ષણાપકર્ષણ કરાય છે-તેમને આગળ પાછળ ખેંચવામાં આવે છે. "फालणविदारणाणि य" ત્યાં તેમને વસ્ત્રની જેમ ફાડવામાં આવે છે અને કરવત આદિ દ્વારા જેમ લાકડાને ચીરવામાં આવે છે તેમ તેમને પણ ચીર-વામાં આવે છે "अवकोडगबंधणाणि" તેમની ડોક અને બંને હાથ પાછળના ભાગમાં રખાવીને બાંધવામાં આવે છે. 'लट्ठिसयताडणाणि य" ત્યાં તેમને સેંકડો લાઠીઓનો માર પડે છે. "गलगबलल्लुंबणाणि य" જોર જુલમથી તેમનાં ગળાં બાંધીને વૃક્ષોની ડાળિયો પર તેમને લટકાવવામાં આવે છે, "सूलग्ग भेयणाणि य" શૂળની અણીથી તેમનાં શરીરનું ભેદન કરવામાં આવે છે અથવા

प्रवञ्चनानि=प्रतारणानि प्रखरोष्णसन्तप्तवालुका निकरानेकक्षणपरिक्रमणोपताप प्रदीपितपानीय पानातितृष्णस्य समुदञ्चज्जलवीचिरुचिमरीचिनिचयं जलाशयमादिश्य तत्र पानाय प्रेषणं, 'गच्छ तत्र ते पिता 'समागतः' इत्याद्यनेकविधैः प्रवञ्चना इति भावः, 'खिसण विमाणणाणि' खिसनविमाननानि=खिसनानि= जातिकुलादिनामनिर्देशपूर्वकं निन्दनानि, अत एव विमाननानि तिरस्करणानि 'विघुट्ठपणिज्जणाणि' विघुष्ट प्रणयनानि=विघुष्टानां="स्वकृतपापकर्मणां फलानि भुङ्क्ष्व" इत्यादिभिर्निष्ठुरवचोर्भिर्निर्भर्त्सितानां प्रणयनानि=वध्यस्थाननयनानि। एतानि किं हेतुकानि ? इत्याह—'वज्जसयमाइयाणि' अवद्यशतमातृकाणि— अवद्यशतमातृकाणि—अवद्यशतानि=मन्दतीव्रादिपरिणामेन कृतानि पापशतानि,

---

सपवंचणाणि य असत्य वस्तुविषयक आदेशरूप आज्ञा से उन्हें प्रतारित (ठगना) किया जाता है—वहां पर नारकीजन पहिले उस नवीन नारकी को प्रखर उष्ण से सन्तप्त वालुका पुंज की ऊपर अनेकवार घूमाते हैं। इससे उसकी गर्मी से उसकी प्यास अधिक से अधिक मात्रा में जब प्रदीपित हो जाती है तब उसे बनावटी जलाशय दिखलाकर वहां वे भेज देते हैं इस तरह उसे वहां वार २ प्रतारित किया जाता है "जाओ वहां तुम्हारा पिता आया है" इत्यादि अनेकविध वचनों द्वारा वे उसकी प्रवञ्चना किया करते हैं। (खिसणविमाणणाणि य) जाति, कुल आदि के नामनिर्देषपूर्वक उसकी वहां निंदा की जाती है। तिरस्कार किया जाता है। (विघुट्ठपणिज्जणाणि य) "अपने किये हुए पापकर्मों का तुम फल भोगो" इत्यादि निष्ठुर वचनों से उसे निर्भर्त्सितकरके वध्य स्थानों पर लाया जाता है। (वज्जसयमाइयाणि य) इस तरह नाना प्रकार के इन दुःखों को नरकों में मन्द, तीव्र आदि परिणामो द्वारा किये गये

શૂળી પર તેમને લટકાવવામાં આવે છે. "आएसपवंचणाणि य" અસત્ય વસ્તુ વિષેના આદેશ વડે તેમને ત્યાં ઠગવામાં આવે છે. ત્યાં નારકીજન પહેલાં તે નવીન નારકી જીવોને પ્રચંડ ઉષ્ણતાથી સારી રીતે તપેલી રેતી પર અનેકવાર ચલાવે છે, તેથી તેની ગરમીથી તેમની તૃષા જ્યારે વધારેમાં વધારે પ્રમાણમાં પ્રદીપ્ત થાય છે ત્યારે તેઓ તેમને બનાવટી જળાશય બતાવીને ત્યાં મોકલી દે છે, આ રીતે ત્યાં તેને વારંવાર પ્રતારિત કરાય છે-ઠગવામાં આવે છે "જાઓ, ત્યાં તમારા પિતા આવ્યા છે" ઈત્યાદિ અનેક પ્રકારનાં વચનો દ્વારા તેઓ તેની હાંસી કર્યા કરે છે. "खिसणविमाणणाणि य" જાતિ, કુળ આદિના નામનો નિર્દેષ કરીને તેની ત્યાં નિંદા કરાય છે. તિરસ્કાર કરાય છે "विघुट्ठपणिज्जणाणि य" "તે કરેલાં કર્મોનું ફળ તું ભોગવ" એવાં નિષ્ઠુર વચનોથી તેમને ધમકાવીને વધસ્થાનો પર લઈ જવામાં આવે છે. "वज्जसयमाइयाणि य" આ રીતે પાપી જીવ મંદ, તીવ્ર આદિ પરિણામો દ્વારા કરાયેલ સેંકડો પાપોને કારણે

तान्येव मातृकाणि=उत्पत्तिस्थानानि येषां तानि तथा–पापशतहेतुकानीत्यर्थः। दुःखानि वेदयन्तीति पूर्वेण सम्बन्धः 'व्व' इत्यत्र प्राकृतत्वादकारलोपः ॥२६॥

एते पापकारिणः 'कीदृशीं' वेदनां कियत्कालमनुभवन्ति ? इत्याह—'एवं ते' इत्यादि।

मूलम्—एवं ते पुव्वकम्मकयसंचओवतत्ता निरयग्गि-महग्गि संपलित्ता गाढदुक्खमहब्भयं कक्कसं असायं सारीरं माणसं च दुविहं तिव्वं वेदेंति वेयणं पावकम्मकारी। बहूणि पलिओवमसागरोवमाणि कलुणं पालेंति ॥ सू० २७ ॥

सैकडों पापों के कारण पापी जीव उत्पन्न होकर भोगा करते हैं "मातृक" पद यहां पर उत्पत्ति स्थान का वाचक है। अर्थात् इन दुखों के उत्पति-स्थान अवद्यशत सैंकडो घोर पाप करनेवाले पापी हो जाते है।

भावार्थ–पापी जीव नरकों में जन्म लेकर नाना प्रकार की वेदना भोगा करते हैं यही बात सूत्रकार ने इस सूत्र द्वारा प्रदर्शित की है। वहां पर उन्हें पकाया जाता है, उबाला जाता है, गलाया जाता है, तला जाता है, भुंजा जाता है उनके शरीर के तिल २ के बराबर खंड २ भी करदिया जाता है। सेमर जातिके वृक्षों के नुकीले कांटोंपर उन्हेंघसीटा भी जाता हैं इत्यादि भयंकर से भी भयंकर कष्ट वहां दिये जाते हैं, तात्पर्य यह है कि वेदना के जितने भी प्रकार हो सकते हैं वे सब प्रकार नरकों में होते हैं और उन सब प्रकारों से होने वाले दुःखों को मन्द तीव्र आदि परिणामोंसे किये गये पापोंके कारण पापी जीव भोगा करते हैं ॥

નરકમાં ઉત્પન્ન થઈને વિવિધ દુઃખોને ભોગવે છે. "માતૃક" પદ અહીં ઉત્પત્તિસ્થાનનું વાચક છે. એટલે કે તે દુઃખોનું ઉત્પત્તિસ્થાન સેંકડો પાપો અવદ્યશત છે.

ભાવાર્થ—પાપી જીવો નરકોમાં જન્મ લઈને અનેક પ્રકારની વેદના ભોગવ્યા કરે છે. એજ વાત સૂત્રકારે સૂત્ર દ્વારા પ્રગટ કરી છે ત્યાં તેને પકાવવામાં આવે છે, ઉકાળવામાં આવે છે, ઓગાળવામાં આવે છે, તળવામાં આવે છે, શેકવામાં આવે છે. તેમના શરીરના રાઈ રાઈ જેવડા ટૂકડા કરવામાં આવે છે સેમર વૃક્ષોના અણીદાર કાંટા ઉપર તેમને ઘસડવામાં પણ આવે છે, વગેરે ભયંકરમાં ભયંકર કષ્ટો તેમને ત્યાં આપવામાં આવે છે- તેનું તાત્પર્ય એ છે કે વેદનાના જેટલા પ્રકારો હોઈ શકે તે બધા પ્રકારો નરકોમાં હોય છે અને તે બધા પ્રકારોથી થતાં દુઃખોને મંદ, તીવ્ર આદિ પરિણામોથી કરાયેલ પાપોને કારણે પાપી જીવ ભોગવ્યા કરે છે. ॥ સૂ. ૨૬ ॥

टीका—एवम्=उक्तरीतया ते=पापकारिणः, 'पुव्वकम्मकयसंचओवतत्ता' पूर्वकर्मकृतसञ्चयोपतप्ताः=पूर्वकृतानां कर्मणां सञ्चयेन=समुपार्जनेन उपतप्ताः= सन्तापं प्राप्ताः 'निरयग्गिमहग्गिसंपलित्ता' नरकाग्निमहाग्निसंप्रदीप्ताः= नरकएवाग्निः सन्तापकारकत्वाद् नरकाग्निः, स महाग्निरिव अत्युत्कटत्वात् तेन संप्रदीप्ताः=संतप्ताः 'पावकम्मकारी' पापकर्मकारिणः, 'गाढदुक्खमहब्भयं' गाढदुःखमहाभयां=गाढेन=निविडेन दुःखेन महाभयां=विशालभययुक्तां 'कक्कस' कर्कशां=कठोराम् 'असाय' असाताम्=असातनामवेदनीयकर्मोद्भवां, 'सारीरं' शारीरीं 'मानसं' मानसीं च दुविहं=द्विविधां 'तिव्व' तीव्राम्=अतिशयां 'वेयणं' वेदनां=पीडां वेदयन्ति=अनुभवन्ति। कियत्कालम्? इत्याह—'वहूणि' वहूनि 'पलिओवमसागरोवमाणि' पल्योपमसागरोपमाणि=पल्योपमाणां कालं,

---

अब सूत्रकार यह प्रकट करते हैं कि पापी जीव नरकों में कैसी २ वेदना को कितने कालतक भोगते हैं—'एवं ते' इत्यादि-

टीकार्थ-(एवं) इस प्रकार (ते पावकम्मकारी) वे पापकारी जीव (पुव्व-कम्मकयसंचओवतत्ता) पूर्वकर्म के लिये हुए संचय से अत्यंत संतप्त होकर तथा संतापकारी होने से महाग्नि जैसी नरकरूप अग्नि से संप्र-दीप्त होकर (पावयारी) पापकारी जीव (गाढ दुक्खमहब्भयं) निविड-दुःख से अतिश दुःखवाली ऐसी (कक्कसं) कठोरातिकठोर (सरीरं) शारिरीक, एवं (माणसं) मानसिक, (दुविहं) दोनों प्रकार की (असायं वेयणं) असाता वेदनीय कर्म के उदय से जनित (तिव्वं वेयणं) तीव्र वेदना को (वेदेंति) भोगते हैं ऐसी वेदना को वे कितने काल तक भोगते हैं वह कहते हैं (वहूणि पलिओवमसागरोवमाणि) इस तरह

હવે સૂત્રકાર એ પ્રગટ કરે છે કે પાપી જીવ નરકોમાં કેવી કેવી વેદનાને કેટલા સમય સુધી ભોગવે છે "एवं ते" ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ–"एवं" આ પ્રમાણે "ते पावकम्मकारी" તે પાપકારી જીવ "पुव्वकम्मक-यसंचओवतत्ता" પૂર્વે કરેલાં કર્મોના સંચયથી અતિશય સંતપ્ત થઈને તથા સંતાપકારી હોવાથી મહા અગ્નિથી સંપ્રદીપ્ત થઈને, "पावयारी" પાપી જીવ "गाढदुक्खमहब्भयं" ભયંકર દુઃખોથી અતિશય દુઃખવાળી, "कक्कसं" અતિશય કઠોર, "सारीरं" શારીરિક અને "माणसं" માનસિક "दुविहे" બને પ્રકારની "असायं वेयण" અસાતા વેદનીય કર્મના ઉદયથી ઉત્પન્ન થયેલ "तिव्वं वेयणं" તીવ્ર વેદનાને "वेदेंति" ભોગવે છે. એવી વેદનાને તેઓ કેટલા સમય સુધી ભોગવે છે, તે સૂત્રકાર બતાવે છે "वहूणि पलिओवमसागरोवमाणि" એ રીતે અનેક પ્રકારની વેદનાને તેઓ ઘણા જ પલ્યોપમ તથા સાગરોપમ

'कलुणं' करुणं-यथास्यात्तथा दीनदशामाश्रित्येत्यर्थः, 'पालेंति' पालयन्ति=प्रतीक्षन्ते 'कदा ममायं दुःखकालः पूर्णो भविष्यती'ति प्रतीक्षमाणा नरकजीवाः कालं यापयन्तीत्यर्थः ॥ सू० २७ ॥

ते पुनः किं कुर्वन्ती ? त्याह—

मूलम्—ते अहाउयं जमकाइयतासिया य सद्दं करेंति भीया, किंते ? अवि-भाय ! सामि ! भाय ! बप्प ! ताव ! जितवं ! मुय मे मरामि दुब्बलो वाहिपीलिओ हं किं इदाणि असि, एवं दारुणो णिद्दओ य मा देहि मे पहारे, अस्सासेउं मुहुत्तं मे देहि, पसायं करेह, मा रुसह वीसमामि गेविज्जं मुयह मे, मरामि, गाढं तण्हाइओ अहं, देहि पाणियं ॥ सू० २८ ॥

टीका—ते पूर्वोक्ताः पापकर्माणः 'अहाउयं' यथायुष्कं=यथावद्धायुष्कं=पूर्वभव यावत्कालपरिमितमायुर्बद्धमासीत्तावत्परिमितं न तु न्यूनाधिकं देवनारका-

---

की वेदना वे बहुत से पल्योपम तथा सागरोपमप्रमाण कालतक (कलुणं) करुणदशा से, (पालेंति) भोगते हैं। उस समय उनकी बड़ी दीनदशा रहती है। और वे इस बात की प्रतीक्षा में उस असह्य पीड़ा को भोगते हुए कहा करते हैं कि "कब यह हमारा दुःखकाल समाप्त हो"। इस तरह विचारे वे पापी जीव वहां से निकलने के समय की प्रतिक्षा करते हुए काल को व्यतीत करते रहते हैं ॥सू. २७॥

और वे क्या करते हैं? सो सूत्रकार कहते हे-'ते अहाउयं' इत्यादि।

टीकार्थ-देव और नारकियों आदिकी आयु निरुपक्रम होती है-बीचमें छिदती भिदती नहीं हैं, तीव्र शस्त्र, तीव्र विष, तीव्र अग्नि आदि जिन

પ્રમાણુ કાળ સુધી "कलुणं" કરુણાજનક દશામાં "पालेंति" ભોગવે છે. તે સમયે તેમની ઘણી દીનદશા હોય છે. અને "ક્યારે અમારો આ દુઃખનો સમય પૂરો થાય" એ વાતની રાહ એ અસહ્ય પીડા ભોગવતા ભોગવતા તેઓ જોયા કરે છે. આ રીતે બિચારા પાપી જીવો ત્યાંથી નીકળવાના સમયની રાહ જોતાં જોતાં સમય પસાર કરે છે ॥ સૂ ૨૭ ॥

અને તેઓ શું કરે છે? તે સૂત્રકાર બતાવે છે—'ते अहाउयं" ઇત્યાદિ. દેવ અને નારકીઓ આદિનું આયુષ્ય નિરુપક્રમ હોય છે-તે વચ્ચે અકસ્માતોથી છેદાતું ભેદાતું નથી, તીવ્ર શસ્ત્ર, તીવ્ર વિષ, તીવ્ર અગ્નિ આદિ જે કારણોથી

दीनां निरुपक्रमायुष्कत्वात्, उक्तञ्च—

" देवा नेरइया वि य, असंखवासाउया तिरियमणुया ।
उत्तमपुरिसा य तहा, चरमसरीरा निरुवक्कमती ॥ १ "

निमित्तोंसे अकालमृत्यु होती है उन निमित्तोंका प्राप्त होना उपक्रम है। यह उपक्रम देव और नारकियों के तथा चरमदेहधारी एवं उत्तम देहवालों के प्राप्त नहीं होता है। चरमदेह और उत्तमपुरुषों के यह उपक्रम कदाच प्राप्त हो भी जावे तो वह उन की आयु अनपवर्तनीय ही होती है, इस नियम के अनुसार (ते) वे पापकारी जीव (अहाउयं) इतने प्रकार की प्राणान्तक वेदना को भोगने पर बीच में मरते नहीं हैं-अर्थात्-उनकी अकाल में मृत्यु नहीं होती है क्यों कि पूर्वभव में जितनी आयु यहां की उन्हें ने बांधली थी उतनी आयुतक वे वहां रहते हैं कम या ज्यादा समय तक नहीं रहते। कहा भी है—

" देवा नेरइया वि य, असंखवासाउया तिरियमणुया ।
उत्तमपुरिसा य तहा, चरमसरीरा निरुवक्कमती " ॥१॥

इस गाथा के अर्थकी सूचना यद्यपि कुछ रूप में ऊपर कर दी गई है फिर भी स्पष्टरूप में इस प्रकार है-देव, नारकी, असंख्यातवर्ष की आयुवाले, तिर्यंच और मनुष्य-तीस अकर्म भूमियों, छप्पन अन्तर्द्वीपों और भरतादिक्षेत्र में उत्पन्न युगलिक तथा ढाईद्वीप के बाहर के द्वीप

અકાળ મૃત્યુ થાય છે તે કારણોનું પ્રાપ્ત થવું તે ઉપક્રમ કહેવાય છે. તે ઉપક્રમ દેવ અને નારકીઓને તથા ચરમ દેહધારી અને ઉત્તમદેહધારીને પ્રાપ્ત થતો નથી. ચરમ દેહધારી અને ઉત્તમપુરુષોને કદાચ તે ઉપક્રમ પ્રાપ્ત થાય તો પણ તેનું આયુષ્ય અનપવર્તનીય-નિશ્ચિત કાળનું જ હોય છે. તે નિયમ પ્રમાણે 'ते" તે પાપકારી જીવો "अहाउयं" આટલા, પ્રકારની પ્રાણાંતક વેદના ભોગવવા છતાં પણ વચ્ચે મૃત્યુ પામતા નથી, એટલે કે તેમનું અકાળ મૃત્યુ થતું નથી કારણ કે પૂર્વભવમાં તેમણે અહીંનું જેટલુ આયુષ્ય બાંધ્યું છે તેટલુ આયુષ્ય પૂરૂ થાય ત્યાં સુધી તેઓ અહી જ નરકાદિમાં-રહે છે, વધારે કે ઓછો સમય રહેતો નથી. કહ્યુ પણ છે—

" देवा नेरइया वि य, असंखवासाउया तिरियमणुया ।
उत्तमपुरिसा य तहा, चरमसरीरा निरुवक्कमती " ॥ १ ॥

આ ગાથાના અર્થનું સૂચન થોડા પ્રમાણમાં કહેવામાં આવ્યું છે. તેનો સ્પષ્ટ અર્થ આ પ્રમાણે છે. દેવ, નારકી, અસંખ્યાત વર્ષના આયુષ્યવાળાં તિર્યંચ અને મનુષ્ય-ત્રીસ અકર્મ ભૂમિયો, છપ્પન અન્તર્દ્વીપો અને ભરતાદિ ક્ષેત્રમાં ઉત્પન્ન થયેલ યુગલિક તથા અઢી દ્વીપની બહારના દ્વીપ સમૂહોમાં રહેતાં

'जमकाइय तासिया' यमकायिक त्रासिताः—यमकायिकैः पञ्चदशविधैः परमाधार्मिकैः अम्बाम्बरीषादिभिस्त्रासिता=त्रासं प्रापिताः 'भीया' भीताः=भयव्याकुलाः सन्तः 'सद्दं' शब्दं=वक्ष्यमाणप्रकारमार्त्तनादं 'करेंति' कुर्वन्ति। 'किं ते' के ते आर्त्तशब्दाः ? इत्याह—'अविभाये'त्यादि 'अवि' अपि—वाक्यालङ्कारे 'भाय' भाग—हे महाभाग=सामर्थ्यवत्त्वात्, 'सामि' हे स्वामिन्! अधिपतित्वात्, 'भाय' हे भ्रातः! —सहायकत्वात्, 'बप्प' हे पितः! —पालकत्वात्, 'ताय' हे तात! —त्रायकत्वात्, 'जितवं' हे जितवन्! =हे विजयिन्! —विजयशालित्वात्, 'मुय मे' मुञ्च मां 'मरामि' म्रिये, अहं 'दुब्बलो' दुर्बलः=बलहीनः 'वाहि पीलिओ' व्याधि पीड़ितः, 'किं' किमर्थं त्वम् 'इदाणि' इदानीम्=अस्मिन्—समये 'दारुणो' कठोरः, 'णिद्दओ'

समुद्रों में भी पाये जाने वाले तिर्यंच—उत्तमपुरुष—तीर्थंकर, चक्रवर्त्ती, बलदेव, वासुदेव, आदि, एवं चरमशरीरी—उसी भव से मोक्ष जाने वाले जीव, ये सब निरूपक्रम आयुवाले होते हैं ॥१॥

पापी जीव वहां (जमकाइयतासिया) यमकायिक—पन्द्रह प्रकार के परमाधार्मिक अम्ब और अम्बरीप आदि देवों के द्वारा त्रास को प्राप्त कराये जाते हैं। (भीया) इसलिये भय से सदा व्याकुल बने हुए वे वहां पर (सद्दं) आर्त्तनाद (करेंति) किया करते हैं (किं ते ?) वे कौन २ शब्द करते हैं ? वही कहते हैं—(अविभाय) हे महाभाग ! (सामि) हे स्वामिन् ! (भाय) हे भाई ! (बप्प) हे पिता। (ताय) हे तात ! (जितवं) हे विजयन् ! (मुय मे) तू मुझे छोड़ दे, (मरामि) मैं मर रहा हूं, (दुब्बलो) मैं बलहीन हूं, (वाहिपीलिओहं) व्याधि से पीडित हो रहा हूं, (किं इयाणिं) क्यों इस समय तुम मेरे उपर (एवं) इस प्रकार से (दारुणो निदओ य असि)

તિર્યંચ, ઉત્તમ પુરૂષ—તીર્થંકર, ચક્રવર્તી, બળદેવ, વાસુદેવ આદિ, અને ચરમ-શરીરી—એજ ભવમાં મોક્ષે જનારા જીવો, એ સઘળા નિરુપક્રમ આયુષ્યવાળા હોય છે ॥૧॥ ત્યાં પાપી જીવો "जमकाइय तासिय" યમકાયિક—પંદર પ્રકારના પરમાધાર્મિક અમ્બ અને અમ્બરીષ આદિ જીવો દ્વારા ત્રાસ પામે છે, "भीया" તેથી ભયથી વ્યાકુળ બનેલા તે જીવો ત્યાં "सद्दं" આર્ત્તનાદ "करेंति" કરે છે. "किते ?"-તેઓ કેવા કેવા શબ્દો બોલે છે ? તે હવે કહેવામાં આવે છે. "अविभाय" હે મહાભાગ ! "सामि" હે સ્વામિન્ ! "भाय" હે ભાઇ ! "वप्प" હે પિતાજી ! "हे ताय" હે તાત ! "जितव" હે વિજયી ! "मुय मे" તું મને છોડી દે, "मरामि" હું મરી રહ્યો છું, "दुब्बलो" હું નિર્બળ છું, "वाहिपीलिओहं" વ્યાધિથી પીડાઇ રહ્યો છું, "किं इयाणि" અત્યારે તમે મારા પ્રત્યે "एवं" આ રીતે "दारुणो निदओ य असि" કઠોર અને નિર્દય

निर्दयः—दयारहितः, 'असि' भवसि ?, मा देहि 'मे' मह्यं 'पहारे' प्रहारान् मां मा ताडयेत्यर्थः। 'अस्सासेउं' उच्छ्वसितुं=श्वासमात्रं ग्रहीतुं 'मे' मह्यं 'मुहुत्तं' मुहूर्तं=क्षणमात्रं देहि, येन श्वासमात्रमपि सुखमनुभवामीति भावः, 'पसायं' प्रसादम्—अनुग्रहं 'करेह' कुरुत 'मा रुसह' मा रुष्यत=क्रोधं मा कुरुत। 'वीसमामि' विश्रमामि=किञ्चित्कालं विश्रामं करोमि अतः 'मे' मम 'गेविज्जं' ग्रैवेयकं=ग्रीवाबन्धनं 'मुयह' मुञ्चत=त्यजत यतो हि—अहं 'मरामि' म्रियें, गाढं=अत्यधिकं 'तण्हाइओ' तृष्णार्दितः पिपासाकुलितोऽस्मि मे=मह्यं 'पाणियं' पानीयं=जलं देहि॥ सू० २८॥

एवं नारकैः कथिते सति यमपुरुषाः यत् कुर्वन्ति तदाह—'ताहे तं' इत्यादि।

मूलम्—ताहे तं पिय इमं जलं विमलं सीयलंति घेत्तूण य नरयपाला तवियं तउयं से दिंति कलसेण अंजलीसु दट्ठूण य तं पवेवियंगोवंगा अंसुपगलं तपप्पुयच्छा छिण्णा तण्हा इयम्ह कलुणाणि जंपमाणा विप्पेक्खंता दिसोदिसिं अत्ताणा असरणा अणाहा अबंधवा बंधुविप्पहीणा विपलायंति य मियविवेगेण भउव्विग्गा, घेत्तण वला पलायमाणाणं निरणुकंपामुहं विहाडेउं लोहदंडेहि कलकलंण्हं वयणंसि छुभंति केइ जमकाइया हंसता॥२९

कठोर और निर्दय हो रहे हो, (मा देहि मे पहारे) मुझ पर प्रहार मत करो (अस्सासेउं मुहुत्तं मे देहि) मुझे कम से कम मुहूर्त्त-क्षण मात्र श्वास तो लेने दो, (पसाय करेह) मेरे ऊपर दया करो, (मा रुसह) मुझ पर क्रोध मत करो, (वीसमामि) मैं कुछ कालतक विश्राम करना चाहता हूं—अतः (गेविज्जं मुयह मे) मेरी ग्रीवा के बंधन को तुम छोड दो, देखो (गाढं तण्हाइओ अहं) गहरी प्यास से व्याकुल होकर मैं मर रहा हूं अतः मेरे लिये (देहि पाणियं) पीने को जल दो॥सू. २८॥

કેમ બની રહ્યા છો? "मा देहि मे पहारे" મારા પર પ્રહાર ન કરો. "अस्सासेउ मुहुत्तं मे देहि" મને ઓછામાં ઓછી એક ક્ષણ માટે તો શ્વાસ લેવા દો. "पसाय करेह" મારા ઉપર દયા કરો, "मा रुसह" મારા ઉપર ક્રોધ ન કરો, "वीसमामि" હું થોડો સમય વિશ્રામ કરવા માગું છું તો "गेविज्जं मुयह मे" મારી ડોકમાંનું બંધન તમે છોડી દો, જુવો "गाढं तण्हाइओ अहं" ભારે તૃષાથી વ્યાકુળ થઈને હું મરી રહ્યો છું. તો મને "देहि पाणियं" પીવાને માટે જળ આપો" ॥ સૂ. ૨૮ ॥

टीका—यदि त्वं पिपासितः 'ताहे' तदा 'तं' त्वं 'इमं' इदं 'विमलं' निर्मलं 'सीयलं' शीतलं जलं 'पिय' पिब, इति कथयित्वा 'नरयपाला' नरकपालाः=परमाधार्मिकाः 'तवियं' तापितम्=उत्कालितं 'तउयं' त्रपुकं='कथीर' इति प्रसिद्धं सीसकं वा, 'कलसेण' कलशेन=घटेन 'से' तस्मै नारकाय 'अंजलीसु य' अञ्जलिषु च 'दिंति' ददति। 'तं' तत्=तापितं त्रपु 'दहूण' दृष्ट्वा=अवलोक्य 'पवेवियंगोवंगा' प्रवेपिताङ्गोपाङ्गाः=प्रकर्षेण वेपितानि=कम्पितानि अङ्गानि उपाङ्गानि च येषां ते तथा=कम्पितसर्वशरीराः 'अंसु-पगलं-तपप्पुयच्छा' प्रगलदश्रुप्रप्लुताक्षाः=प्रगलद्भिः अश्रुभिः प्रप्लुते=व्याप्ते अक्षिणी=नयने येषां ते तथा, प्रक्षरत्प्रबलाश्रुधाराः सन्तः 'अम्ह' अस्माकं 'तण्हा' तृष्णा 'छिण्णा' छिन्ना=नष्टा 'इय' इति=एवमुक्त्वा 'कलुणाणि' करुणानि

इस प्रकार नारक जीवों के कहने पर परमाधार्मिक जो कुछ उनके साथ करते हैं वह सूत्रकार प्रदर्शित करते हैं—'ताहे' इत्यादि।

टीकार्थ-(ताहे तं) यदि तुम पिपासित हो तो (इमं) इस (विमलं) निर्मल (सीयलं) शीतल (जलं) जल को (पिय) पिओ ऐसा कह कर (नरयपाला) वे नरकपाल परमाधार्मिक देव (तवियं) उबाले हुए कथीर को अथवा सीसे को (कलसेण) कलश में भरकर (से) उस नारकी के लिये (अंजलीसु) अंजलि में (दिंति) देते हैं। (तं) उस तपे हुए त्रपु-सीसे को (दहूण य) देखकर (पवेवियंगोवंगा) उन नारकियों का समस्त शरीर-अंग-उपांग बहुत अधिक रूप में कंपने लगते हैं। और (अंसुपगलंतपप्पुयच्छा) उसी स्थिति में वे निकलते हुए आंसुओं से अपनी आंखों को व्याप्त करके उनसे कहते हैं कि (छिण्णा तण्हा अम्ह) अब हमारी प्यास शांत हो गई है (इय) इस

નારકી જીવોના એ પ્રકારના શબ્દો સાંભળીને પરમાધર્મી તેમની સાથે કેવો વર્તાવ કરે છે તે સૂત્રકાર બતાવે છે-"ताहे" ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ-"ताहे तं" જો તમને તરસ લાગી હોય તો "इमं" આ "विमलं" નિર્મળ, "सीयलं" શીતળ "जलं" પાણી "पिय" પીવો. એમ કહીને "नरयपाला" તે નરકપાલ પરમાધાર્મિક દેવો "तवियं" ઓગાળેલ ગરમ કથીર અથવા સીસાંને "कलसेण" કળશમાં ભરીને "से" તે નારકીને "अंजलीसु" અંજલિમાં "दिंति" આપે છે. "तं" તે ગરમા ગરમ ત્રપુ-સીસાને दहूण य" જોઈને "पवेवियंगोवंगा" તે નારકીઓનાં અંગ ઉપાંગ અત્યંત કંપવા લાગે છે. "असुपगलंत पप्पुयच्छा" તે સ્થિતિમાં આંસુભરી આંખે તેઓ તેમને કહે છે કે "छिण्णा तण्हा अम्ह" હવે હમારી તૃષા શાંત થઈ ગઇ છે. "इय" આ

वचनानि 'जंपमाणा' जल्पमानाः=प्रलपन्तः 'दिसोदिसिं' दिशोदिशं=एकस्याः दिशोऽन्यां दिशमितस्तत इत्यर्थः 'विप्पेक्खंत्ता' विप्रेक्षमाणाः=समन्तात् पश्यन्तः 'अत्ताणा' अत्राणाः=रक्षाहीनाः, अतएव 'असरणा' अशरणाः=शरणरहिताः, अतएव 'अणाहा' अनाथाः=दीनाः, 'अवंधवा' अवान्धवाः=वान्धवरहिताः, 'बंधुविप्पहीणा' वन्धुविप्रहीणाः=विद्यमानसम्बन्धिविप्रयुक्ताः, 'मियविव' मृगा इव 'भउव्विग्गा' भयोद्विग्नाः=भयव्याकुलाः 'वेगेण' वेगेन 'विपलायंति' विपलायन्ते=प्रधावन्ति, ततः प्रधावमानान् तान् नारकान् 'वला' बलात् 'घेत्तूण' गृहीत्वा 'निरणुकंपा' निरनुकम्पाः=दयारहिताः 'केइ' केऽपि 'जमकाइया' यमकायिकाः=परमाधार्मिकाः, हसंता' हसन्तः 'पलायमाणाणं' पलायमानानां च तेषां 'मुहं' मुखं 'लोहदंण्डेहिं' लोहदण्डैः, 'विहाडेउं' विघाटय=उद्घाट्य 'कलकलं' अतितप्तत्वात् कल-कल शब्दयुक्तं पूर्वोक्तं त्रपुकं

प्रकार कहकर वे (कलुणाणि जंपमाणा) करुणा वचनोंका उच्चारण करते हुए (दिसोदिसिं विप्पेक्खंता) वहां से दूसरी दिशा में इधर उधर देखते हुए (अत्ताणा) रक्षक रहित (असरणा) शरण रहित (अणाहा) विनानाथ के (अवंधवा) दीनदशा संपन्न (बंधुविप्पहीणा) बांधवों से रहित-रक्षक जनों से रहित, अतः (भउव्विग्गा) भय से व्याकुल बन कर वे (मियविव) मृगों की तरह वहां से (वेगेण) वेगपूर्वक (विप्पलायंति) भागते हैं। इसके बाद भागते हुए उन नारकियों को (बलाघेत्तूण) जबर्दस्ती से पकड़कर (निरणुकंपा) दयारहित बने हुए (केइ) कितनेक (जमकाइया) यमकायिक परमाधार्मिक देव (हसंता) हँस हँसकर (पलायमाणाणं) पलायन करते हुए उनके (मुहं) मुख को (लोहदंडेहिं) लोहदंडों से (विहाडेउं) फाडकर फिर उसमें (कलक-

---

પ્રમાણે કહીને "कलुणाणि जंपमाणा" કરૂણાજનક વચનો બોલતા, "दिसो दिसि विप्पेक्खंता" ત્યાંથી બીજી દિશામાં આમ તેમ જોતા, "अत्ताणा" રક્ષક વિનાનાં "असरणा", શરણ વિનાના, "अणाहा" અનાથ, "अवंधवा" દીનદશામાં મૂકાયેલા, "बंधुविप्पहीणा" બાંધવો વિનાના-રક્ષણ કરનાર વિનાના, એવા તે નારકી જીવો "भउव्विग्गा" ભયથી વ્યાકુળ બનીને "मियविव" મૃગોની જેમ ત્યાંથી 'वेगेण" વેગથી "विप्पलायंति" ભાગે છે. ત્યારબાદ ભાગતાં એવા તે નારકી જીવોને "बलाघेत्तूण" જોર જુલમથી પકડીને "निरणुकंपा" દયા રહિત બનેલા "केइ" કેટલાક "जमकाइया" યમકાયિક, પરમાધાર્મિક દેવો "हसंता" હસી હસીને "पलायमाणाणं" નાસતા એવા તેમના "मुहं" મુખને 'लोहदंडेहिं" લોઢાના

'ण्हं' इति वाक्यालङ्कारे तेषां 'वयणंसि' वदने=मुखे 'छुभंति' क्षिपन्ति=पाययन्तीत्यर्थः ॥ सू० २९ ॥

ततो नारकाः किं कुर्वन्ति ? तदाह—'तेण दड्डा' इत्यादि ।

मूलम्—तेण दड्डा संतो रसंति य भीमाइं विस्सराइं रुवंति य कलुणगाइं पारेवयगा इव एवं पलविय विलाव कलुणो कांदिय-बहुरुन्न रुइय सद्दो परिदेविय रुद्धवद्धय नारगारव संकुलो णीसिट्ठो ॥ सू० ३० ॥

टीका—'तेण' तेन=मुख निक्षिप्तेन तप्तेन त्रपुणा 'दड्डासंतो' दग्धाः सन्तः 'भीमाइं' भीमान्=भयानकान्=हृदयक्षोभजनकान् 'विस्सराइं' विस्वरान् =आर्त्तनादान् 'हा ! हा !' 'हतावयम्' इत्यादिरूपान् 'रसंति' रसन्ति= कुर्वन्ति । सूत्रे प्राकृतत्वान्नपुंसकम् । तथा 'पारेवयगाइव' पारावतकाइव=कपोता इव 'कलुणगाइं' करुणकानि हृदयद्रावकाणि 'रुवंति' रुदन्ति । एवं' 'पला-

---

लण्हं) कलकलाते उस अत्यंत गरम सीसे को (वयणंसि) मुख में (छुभंति) डाल देते हैं, अर्थात् उन नारकियों को पिला देते हैं ॥सू.२९॥

इसके बाद वे नारकी क्या करते हैं अब सूत्रकार इस विषय को स्पष्ट करते हैं-'तेण दड्डा संतो' इत्यादि ।

टीकार्थ-(तेण दड्डा संतो) मुख में जबर्दस्ती फाड़कर डाले गये उस तप्त सीसेसे दग्ध हुए वे नारकी (भीमाइं) हृदय को क्षोभ पहुँचाने वाले ऐसे (विस्सराइं) आर्त्तनादों को (रसंति) करते हैं- " हाय ! हाय ! मार डाला " इस प्रकार से चिल्लाते हैं। तथा (पारेवयगा इव) कबूतरों की तरह (कलुणगाइं) हृदय को द्रवीभूत करने वाला आक्रंदन

દંડાઓથી "विहाडेउं" પહોળાં કરીને તેમાં "कलकलण्हं" કળકળતા તે અત્યંત ગરમ સીસાને 'वयणंसि" મુખનાં "छुभंति" રેડી દે છે. એટલે કે તે નાર-કીઓને પીવરાવે છે. ॥ સૂ. ૨૯ ॥

ત્યારબાદ તે નારકી જીવો શું કરે છે, વિષયને હવે સૂત્રકાર સ્પષ્ટ કરે "तेण दड्ढा संतो" ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—"तेण दड्ढा संतो" જોર જુલમથી મોઢું પહોળું કરીને રેડવામા આવેલ તે ગરમ સીસાથી દાઝેલા તે નારકી જીવો "भीमाइं" હૃદયને ક્ષોભ પમાડે તેવા "विस्सराइं" આર્ત્તનાદો "रसति" કરે છે-" હાય ! હાય ! મારી નાખ્યા" આ પ્રકારની ચીસો પાડે છે, તથા "पारेवयगाइव" કબૂતરોની જેમ "कलुणगाइं" હૃદય દ્રાવક આક્રંદ "रुवंति" કરે છે, "एवं" આ પ્રકારના તેમના " पलविय

विय विलावकलुणो'. प्रलापितम्=अनर्थकवचनं 'विलापः' 'हा तात !' हा मात !' इत्यादि लक्षणं विलापकरणं, ताभ्यां करुणो यः स तथा। 'कंदिय बहुरुन्नरुइयसद्दो' क्रन्दित–बहुरुन्नरुदितशब्दः = क्रन्दितम्=चीत्कारः बहु=प्रचुरं 'रुन्न' रोदनम्–सशब्दमश्रुमोचनम् 'रुइय' रुदितम्=मस्तकादिताडनपूर्वकं रोदनम्., एतेषां शब्दो यस्मिन् स तथा 'परिदेवि य रुद्धवद्धय नारयारवसंकुलो' परिदेवितरुद्धबद्धकनारकारवसंकुलः = परिदेवताः = परधार्मिकैर्विलापं प्रापिताः रुद्धाः=वाटकेऽजादिवदवरुद्धाः, बद्धकाः=बन्धनं प्राप्ताश्च ये नारकास्तेषामारवैः= शब्दैः संकुलाः=व्याप्तो यः स तथा, 'णीसिट्ठो' निसृष्टः=नारकैः कृतः निर्घोषः –प्रबलदुःखजनितो महाशब्दः श्रूयते इत्यग्रेण सम्बन्धः ॥सू०३०॥

(रुवंति) करते हैं (एवं) इस प्रकार उनका (पलवियविलावकलुणो) प्रलाप–अनर्थकवचनरूप तथा विलाप रूप "हा तात! हा मात" इत्यादि रूप तथा वहां नारकियों के मुख से जो प्रबल दुःख के वेग के समय शब्द निकला करते हैं वे प्रलाप और विलाप वाले तो होते ही है साथ २ में उनमें (कंदिय बहुरुन्नरुइयसद्दो) चीत्कार प्रचुर रोदन् एवं मस्तक आदि ताडनपूर्वक रुदित, अर्थात् नारकी जो वहां चिल्लाते विल्लाते हैं वह इस ढंग से होता है कि वे उसमें बोलते २ रोते हैं, आंसुओंको ढार कर विल्लाते हैं। मस्तक, छाति आदिको कूटते पीटते हैं, और रोते जाते हैं। इस तरह (परिदेविय–रुद्ध बद्धय नारगारवसंकुलो) परमाधार्मिकों द्वारा वे नारकी वहां विलापाये जाते हैं। बाडे में जिस प्रकार बकरियां आदि रोककर बांधी जाती हैं उसी प्रकार वे भी उनके द्वारा रोक लिये जाते हैं, बांध दिये जाते हैं उनके शब्द से व्याप्त ऐसा

વિલાવ કલુણો" પ્રલાપ–અનર્થક વચનરૂપ તથા વિલાપરૂપ "હે તાત ! હે મા ! ઈત્યાદિ રૂપ તથા ત્યાં પ્રબળ દુઃખના આવેગથી નારકીઓનાં મુખમાં જે શબ્દો નીકળે છે તે પ્રલાપ અને વિલાપવાળા તો હોય જ છે, પણ તેની સાથે સાથે તેમા "कंदिय बहुरुन्नरुइयसद्दो" ચીત્કાર સહિતનું રૂદન. અને માથું આદિ પછાડીને રૂદન પણ થતું હોય છે. અટલે કે નારકીઓ ત્યાં જે ચીસો પાડે છે. અને વિલાપ કરે છે. તે એવી રીતે થાય છે કે તેઓ તે ક્રિયા કરતી વખતે બોલતાં બોલતાં રડે છે અને આંસુ સારી સારીને આક્રંદ કરે છે. માથુ, છાતી આદિને કૂટતા પટકતા જાય છે અને રડે છે. આ પ્રમાણે "परिदेविय–रुद्धबद्धय नारगारवसंकुलो" પરધાર્મિકો દ્વારા તે નારકીઓને ત્યાં રડાવવામાં–વિલાપ કરવામાં આવે છે જે રીતે વાડામાં બકરીઓ આદિને રોકીને બાંધી લેવામાં આવે છે એ જ પ્રમાણે તેઓને પણ તેમના વડે રોકવામાં આવે છે, બાંધ–

स कीदृशो निर्घोषः? इत्याह—' रसिये ' त्यादि ।

मूलम्—रसिय—भणिय—कुविय—उक्कूइय—निरयपालतज्जियं—गेण्ह कम पहर छिंद भिंद उपाडेहुक्खणाहि कत्ताहि विकत्ताहि य भंजहण विहण विच्छुभोच्छुभ आकड्ढ विकड्ढ किं ण जंपसि? सराहि पावकम्माइं कियाइं दुक्कयाइं एवं वयणमहप्पगब्भो संपडि सुयसद्दसंकुलो उत्तासओ सया निरयगोयराण महाणगरडज्झमाणसरिसो निग्घोसो सुव्वए अणिट्ठो तहियं नेरइयाणं जाइज्जंताणं जायणाहिं ॥ सू०३१ ॥

टीका—' रसिय-भणिय - कूइय - उक्कूइयनिरयपालतज्जियं ' रसित-भणित-कुपितोत्कूजित-नरकपाल-तर्जितं-तत्र-'रसिय ' रसिताः=शूकरवद् घोर-शब्दकारकाः, 'भणिय' ' भणिता=उच्चैः शब्दकारकाः, 'कूइय' कूजिताः=अव्यक्त-ध्वनिकारकाः, ' उक्कूइय ' उत्कूजिताः=भयजनकाव्यक्तशब्दकारकाः ये ' निरय-

---

(णीसिट्ठो) प्रबल दुःखजनित महा शब्द वहां ' सुना जाता है ' (यह आगे से सम्बन्ध है) ॥ सू. ३० ॥

उस समय परमाधार्मिक परस्पर में किस प्रकार की बातचीत करते है? यह सूत्रकार कहते हैं-' रसिय-भणिय ' इत्यादि ।

टीकार्थ-नरकों में नारकियों को हरएक प्रकारसे व्यथा पहुँचानेवाले वे परमाधार्मिक नारकियों को फिर अधिक कष्ट पहुँचाने के अभिप्रायसे (रसिय-भणिय-कूइय-उक्कूइय-निरयपालतज्जियं) (रसिय) सूअरके जैसे भयंकर घोर शब्दों को (भणिय) उच्चस्वर से करते हैं। उस में वे (कूइय) अव्यक्त ध्वनि करते हैं (उकूइय) इस से नारकियों को और

વામાં આવે છે અને તેના શબ્દોથી વ્યાપ્ત એવા ' णीसिट्ठो '' પ્રબળ દુઃખ-જનિત ચિત્કાર ત્યાં ' સંભળાય છે ' (આ પ્રમાણે આગળના શબ્દો સાથે સંબંધ છે.) ॥ સૂ. ૩૦ ॥

તે સમયે પરમાધાર્મિકો પરસ્પર કેવી વાતો કરે છે' તે સૂત્રકાર બતાવે છે— '' रसिय-भजिय '' ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ--નરકોમાં નારકીઓને દરેક રીતે વ્યથા પહોંચાડનાર તે પરમાધાર્મિકો, નારકીઓને હજી પણ વધારે કષ્ટ આપવાને માટે "रसिय-भणिय-कूइय, उक्कूइय -निरयपालतज्जियं " " रसिय " સૂવરનાં જેવા ભયંકર ઘોર ધ્વનિ " भणिय " ઉંચે સ્વરે કરે છે. તેઓ " कूइय " અવ્યક્ત ધ્વનિ કરે છે "उक्कूइय" તે

पाल' निरयपालाः=परमाधार्मिकाः, तेषां 'तज्जियं' तर्जितं=नारकजीवान् लक्षीकृत्य परस्परं तर्जनाज्ञावाक्यं वक्ष्यमाणप्रकारमस्ति, तथाहि–अम्बासिधः परमाधार्मिकोऽम्बरीषं कथयति–हे अम्बरीष ! एनं पलायमानं पापिनं नारकं 'गेण्ह' गृहाण । एवं परस्परमेकः परमाधार्मिको द्वितीयं कथयति–एनं नारकं 'कम' क्रम=पादप्रहारैः पीडय 'पहर' प्रहर–एनं नारकं दण्डादिभिस्ताडय 'छिंद' छिन्धि =खड्गादिभिः खण्डशः कुरु 'भिंद' भिन्धि–भल्लकादिभिर्भेदय 'उप्पाडेह' उत्पाटय=शरीरात्त्वचादिकं पृथक्कुरु 'उक्खणाहि' उत्खन=निष्कासय अक्षिगोलादिकम् 'कत्ताहि' कृन्त=छेदय–छुरिकादिभिर्नासिकादिकं, तथा–'विकत्ताहि' विकृन्त=कर्णनासिकादिकं मूलतश्छेदय, 'भंज' भञ्ज=हस्तपादादिकं त्रोटय, 'हण' जहि=शतघ्न्यादिभिर्मारय, 'विहण' विजहि–महाशिलादि पातनादिभिरनेकप्रकारैः

अधिक भय उत्पन्न हो जाता है। इस प्रकार रसित, भणित, कूजित एवं उत्कूजित शब्द करने वाले उन परमाधार्मिकों की तर्जित–नारकियों को लक्ष्य करके जो परस्पर में कष्टादि पहुँचानेवाली बातचीत होती है वह इस प्रकार है–(गेण्ह) अम्ब नाम का परमाधार्मिक अम्बरीष से कहता है–हे अम्बरीष ! तू इस भागते हुए पापी नारकी को पकड लो और (कम) इस को लातों से मारो। बाद में (पहर) इसे दंडों से खूब पीटो। (छिंद) ज्यादा और क्या कहूं–तलवार आदि से इसके शरीर के खंड २ कर डालो। (भिंद) भाला आदि से इसके शरीर को भेद डालो (उप्पाडेह) इसकी खाल उतारलो, (उक्खणाहि) इसकी आंखें निकाल लो, (कत्ताहिय) इसका नाक काट डालो (विकत्ताहि) कर्ण नासिक आदि इन्द्रियों को मूल से बिलकुल साफ कर डालो। (भंज) हाथ पैर आदि को मरोड डालो। (हण) शतघ्नी आदि से इसको बुरी तरह से मारो। (विहण) महाशिला आदि के ऊपर इसे पछार डालो। (विच्छुभ) कुए आदि में इसे पटक दो। (उच्छुभ)

કારણે નારકીઓને વળી વધારે ભય લાગે છે. એ રીતે રસીત, ભણિત, કૂજિત, અને ઉત્કૂજિત શબ્દ કરનારા તે પરમાધાર્મિકોથી તર્જિત–નારકીઓને ચીંધીને, તેમને કષ્ટ દેનારી પરસ્પરમાં જે વાતચીત થાય છે તે આ પ્રકારની હોય છે– "गेण्ह" અમ્બ નામનો પરમાધાર્મિક અમ્બરીષને કહે છે—"હે અમ્બરીષ ! તું આ નાસી જતાં પાપી નારકીને પકડી લે અને "कम" તેને લાતો માર. પછી "पहर" તેને દંડા વડે ખૂબ ફટકાર "छिंद" વધારે શું કહું ! તલવાર આદિથી તેના શરીરના ટૂકડે ટૂકડા કરી નાખ. "भिंद" ભાલા આદિ વડે તેના શરીરને વીંધી નાખ. "उप्पाडेह" તેની ચામડી ઉતારી નાંખ, "विकत्ताहि" કાન, નાક આદિ ઇન્દ્રિયોને મૂળમાથી કાપી નાખો, "भंज" હાથ પગ આદિને મરડી નાખ, "हण" શતઘ્ની આદિ વડે તેને ખરાબમા ખરાબ રીતે મારો, "विहण"

मारय, 'विच्छुभ' विक्षिप=कूपादौ प्रक्षिप, 'उच्छुभ' उत् क्षिप=उर्ध्वंक्षिप 'आकड्ढ' आकर्ष=कचादिकं गृहीत्वाऽऽकर्षय=कण्टकाकीर्णे भूमौ घर्षयेत्यर्थः, 'विकड्ढ' विकर्ष=अधो मुखं कृत्वा घर्षय। एतादृशीं वेदनां दत्त्वा नारकान् प्रति वदति, 'किं ण जंपसि' किं न जल्पसि=कथं न वदसि हे पापिन् 'सराहि' स्मर स्मरणं कुरु 'कियाइं' कृतानि = पूर्वभवसमाचरितानि, 'दुक्कयाइं' दुष्कृतानि= प्राणातिपातादीनि 'पावकम्माइं' पापकर्माणि। एवं=अनेन प्रकारेण 'वयणमहप्पगब्भो' वचनमहाप्रगल्भः=वचनैः=नरकपालवाग्भिः महाप्रगल्भः=अतिदुर्धर्षः भयावह-इत्यर्थः 'संपडिसुयसद्दसंकुलो' संप्रतिश्रुतशब्दसंकुलः=संप्रतिश्रुतः= प्रतिध्वनितः यः शब्दः, तेन संकुलः=व्याप्तः। 'सया' सदा=सर्वदा 'उत्तासओ' उत्त्रासकः=परमत्रासजनकः 'महाणगरडज्झमाणसरिसो' महानगरदह्यमानसदृशः =दह्यमानस्य=प्रज्वल्यमानस्य महानगरस्य यः शब्दस्तेन तुल्यः, एतादृशः 'तहियं' तत्र नरके-'निरयगोयराणं' निरयगोचराणां-निरयगौः=नरकभूमिः, तत्र चरन्ति =नारकत्रासार्थं विचरन्ति ये ते निरयगोचराः=परमाधार्मिकास्तेषाम्, तथा-

---

ऊपर इसको उछाल दो। (आकड्ढ) बाल आदि पकड़ कर इसे कण्टकाकीर्ण भूमि में खूब खेंचो। (विकड्ढ) इसे औंधा मुख करके जमीन पर खूब रगड़ो। इस प्रकार की वेदना देने की बात कहकर फिर वह उन नारकियों से कहता है-(किं ण जंपसि) हे पापी। तू बोलता क्यों नहीं है (सराहि पावकम्माइं कियाइं दुक्कयाइं) पूर्वभव में समाचरित प्राणातिपात आदि अपने पापकर्मो को अब तू याद कर ले। (एवं) इस प्रकार का (वयणमहप्पगब्भो नरकपाल की वाणियों द्वारा अतिदुर्धर्ष भयंकर बना हुआ, (संपडिसुयसद्दसंकुलो) प्रतिध्वनि से व्याप्त हुआ, (सया उत्तासओ) सर्वदा दूसरों को त्रास जनक एवं (महाणगरडज्झमाणसरिसो) दह्यमान महानगर के शब्द के जैसा उद्भूत हुआ (निर-

---

મહાશિલા આદિ પર તેને પછાડો "विच्छुभ" કૂવા વગેરેમાં તેને ફેંકો, "उच्छुभ" તેને ઉંચે ઉછાળો, "आकड्ढ" તેને વાળ આદિને પકડીને કાંટાળી જમીનમાં ઘસડો, "विकड्ढ" તેને ઉંધા મોઢે જમીન પર ખૂબ રગદોળો. આ પ્રમાણે વેદના પહોંચાડવાની વાત કરીને તે નારકી જીવોને કહે છે "किं ण जंपसि" હે પાપી! તું બોલતો કેમ નથી? "सराहि पावकम्माइं कियाइं दुक्कयाइं" પૂર્વભવમાં આચરેલ પ્રાણાતિપાત આદિ પાપકર્મોને તું યાદ કરી લે. "एव" આ પ્રકારનો "वयणमहप्पगब्भो" નરકપાલની વાણી વડે અતિદુર્ધર્ષ-ભયંકર લાગતો, "संपडिसुयसद्दसंकुलो" પડઘાથી વ્યાપ્ત થતો, "सया उत्तासओ" સર્વદા બીજાને ત્રાસજનક, અને "महाणगरडज्झमाणसरिसो" બળતાં મહાનગરમાંથી ઉદ્‌ભવતો હોય

'जायणाहिं' यातनाभिः=कदर्थनाभिः 'जाइज्जंताणं' यात्यमानानां=दण्डयमानानां 'नेरइयाणं' नैरयिकाणां=नारकजीवानां च उभयेषामित्यर्थः, 'अणिट्ठो' अनिष्टः-अप्रीतिकारकः 'णिग्घोसो' निर्घोषः-महानादः 'सुव्वए' श्रूयते॥सू०३१॥

कास्ता यातनाः ? इति यातना प्रकारमाह—'किं ते' इत्यादि—

मूलम्—किं ते? असिवण—दब्भवण—जंतपत्थर—सूइतलक्खारवावि—कलकलंतवेयरणि—कलंबवालुया--जलियगुहनिरुंभणं उसिणोसिण---कंटइल्ल--दुग्गमरहजोयण--तत्तलोहमग्गगमण वाहणाणि ॥ सू० ३२॥

टीका—'किं ते' कास्ता यातनाः ? उच्यते—'असिवण' असिवनं=खड्गाकारपत्रवनं, 'दब्भवण' दर्भवनं=दर्भाः-तीक्ष्णमुखातृणविशेषास्तेषां वनं,

---

यगोयराणं) परमाधार्मिकों का तथा (तहियं) वहां (जायणाहिं) यातनाओं द्वारा (जाइज्जंताणं) दण्डयमान (नेरइयाणं) नारकियों का (अणिट्ठो) अनिष्ट (णिग्घोसो) निर्घोष—शब्द उन नरकों में (सुव्वए) सुना जाता है ॥सू. ३१॥

अब सूत्रकार पूर्वोक्त यातनाओं के प्रकारों को प्रकट करते हैं—'किं ते' इत्यादि ।

टीकार्थ—प्रश्न—(किं ते) वे यातनाएँ कौन २ हैं ?

उत्तर—वे यातनाएँ इस प्रकार हैं (असिवण—दब्भवण—जंतपत्थर सूइतल—क्खारवावि—कलकलंतवेयरणि—कलंब वालुया – जलियगुह—निरुंभणं) अम्ब और अम्बरीष परमाधार्मिक उन नारकियों को (असिवण) तलवार की धार के आकार वाले पत्रों के वन में (दब्भवण)

એવા, "निरयगोयराणं" પરમાધાર્મિકોના તથા "तहिय" ત્યાં "जायणाहिं" યાતનાઓ વડે "जाइज्जंताणं" શિક્ષા સહન કરતાં "नेरइयाणं" નારકીઓનો "अणिट्ठो" અનિષ્ટ નિર્ઘોષ–શબ્દ, તે નરકોમાં "सुव्वए" સંભળાય છે ॥સૂ.૩૧॥

હવે સૂત્રકાર પૂર્વકથિત યાતનાઓના પ્રકાર બતાવે છે–"किं ते ?"ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—પ્રશ્ન "किं ते ?" તે યાતનાઓ કયી કયી છે ?

ઉત્તર—તે યાતનાઓ આ પ્રમાણે હોય છે

"असिवण, दब्भवण, जंतपत्थर, सूइतल, क्खारवावि, कलकलतवेयरणि, कलंब वालुया, जलियगुह, निरुभण" અમ્બ અને અમ્બરીષ નામના પરમાધાર્મિકો તે નારકી જીવોને "असिवण" તલવારની ધાર જેવાં આકારનાં પત્રોનાં વનમાં, "दब्भवण" તીક્ષ્ણ અણીવાળાં દર્ભ વિશેષોનાં વનમાં. "जंत पत्थर" યંત્ર

'जंत पत्थर' यन्त्र प्रस्तराः=घरट्टादयः 'सूइतल' सूचीतलं=ऊर्ध्वमुखसूचीमय भूमिभागः, 'खारवावि' क्षारवाप्यः=क्षारजलसंभृतवापिकाः, 'कलकलंतवेयरणि' कलकलायमानवैतरणी = कलकलशब्दायमानप्रतप्तत्रपुसीसकादिपूर्णा वैतरणी नामधेया नदी, 'कलंबवालुया' कदम्बवालुका=असिसन्तप्तत्वात्कदम्बपुष्पवद् रक्तवालुकामयी नदी, 'जलियगुह' ज्वलितगुहा=प्रज्वलिताग्निमयी-कन्दरा, इत्येतेषां द्वन्द्वः, तेषु असिवनादिषु 'निरुंभणं' निरोधनम्, तथा— उसिणोसिणकंटइल्लदुग्गमरहजोयणतत्तलोहमग्गगमणवाहणाणि' उष्णोष्णकण्टकाकीर्णदुर्गमरथयोजन तप्तलोहमार्गगमनवाहनानि=उष्णादप्युष्ण इत्युष्णोष्णः=अत्युष्णः कण्टकैः=सुतीक्ष्णकीलकैराकीर्णो=व्याप्तो दुर्गमः=दुःखेण गमः=गमनं यस्य स तथा, दुर्गमश्च यो रथः तस्मिन् योजनं=संयोजनं बलीवर्दानामेवेति तत्तथा, तच्च, तप्तलोहमयमार्गे गमनं=नयनं वाहनं=भारोद्वाहनं चेति तथा तानि ॥सू० ३२॥

तीक्ष्ण अग्रभागवाले दर्भ विशेषों के वन में (जंतपत्थर) यंत्र प्रस्तरों में (सूइतल) उर्ध्व मुखवाली सूइयों से युक्त भूमिभाग में, (खारवावि) खारे जल से परिपूर्ण हुई बावडियों में, (कलकलंतवेयरणि) कलकल शब्द से युक्त ऐसे द्रवीभूत हुए रांग और सीसे आदि से भरी हुई वैतरणी नाम की नदी में, (कलंबवालुया) अत्यंततप्त होने के कारण कदम्बपुष्प के समान रक्त वर्णवाली वालुका से युक्त नदी में, (जलियगुह) प्रज्वलित अग्निमयी कन्दराओं में, (निरुंभणं) रोक देते हैं। (उसिणोसिणकंटइल्लदुग्गमरहजोयणतत्तलोहमग्गगमणवाहणाणि) (उसिणोसिण) अत्यंत उष्ण, (कंटइल्ल) सुतीक्ष्णकंटकों से आकीर्ण, तथा (दुग्गम) दुर्गम—मुश्किल खींचा जा सके ऐसे (रहजोयण) रथ में उन नारकियों को बैलों की तरह जोत देते हैं। (तत्तलोहमग्गगमण) तप्त

પ્રસ્તરોમાં, "सूइतल" અણીવાળો ભાગ ઉર્ધ્વ સ્થિતિમાં હોય એવી સોયોથી યુક્ત ભૂમિ પર, "खारवावि" ખારા જળથી ભરેલી વાવોમાં, "कलकलंतवेयरणिं" ખળ ખળ અવાજથી યુક્ત. ઓગાળેલા કથીર, સીસું આદિના રસથી ભરેલ વૈતરણી નામની નદીમાં, "कलबवालुया" અતિશય તપેલી હોવાથી કદંબ પુષ્પના સમાન રક્તવર્ણી રેતીથી યુક્ત નદીમા, "जलियगुह" પ્રજવલિત અગ્નિવાળી કંદરાઓમાં "निरुंभणं" રોકી દે છે. "उसिणोसिणकंटइल्लदुग्गमरहजोयणतत्तलोहमग्गगमणवाहणाणि" "उसिणोसिण" અતિશય ઉષ્ણ, "कंटइल्ल" અતિ તીક્ષ્ણ કાંટાથી છવાયેલ, તથા "दुग्गम" દુર્ગમ—મુશ્કેલીથી ખેંચી શકાય તેવા "रहजोयण" રથ સાથે તે નારકીઓને બળદોની જેમ જોડે છે. "तत्तलोहमग्गगमण"

यातनाविषये आयुधप्रकाराह—'इमेहिं' इत्यादि—

मूलम्—इमेहिं विविहेहिं आउहेहिं किं ते ? मुग्गरमुसुंढि-करकय-सत्ति-हल-गय-मुसल-चक्क-कोंत-तोमर-सूल-लउल-भिंडि-पाल-सव्वल-पट्टिस-चम्मेट्ठ-दुहण-मुट्ठिय-असि-खेटग-खग्ग-चाव-नाराय-कणक-कप्पिणि-वासिपरसु-टंक-तिक्ख-निम्मलेहिं अण्णेहिं य एवमाइएहिं असुहेहिं वेउव्विएहिं पहरणसएहिं अणुबद्धतिव्ववेरा परोप्परं वेयणं उईरंति अभिहणंता ॥ सू० ३३ ॥

टीका—'इमेहिं' एभिः वक्ष्यमाणैः 'विविहेहिं' विविधैः=अनेकप्रकारैः 'आउहेहिं' आयुधैः=शस्त्रैः परस्परं यातनाम् उदीरयन्तीत्यग्रेण सम्बन्धः । 'किं ते' कानि तानि आयुधानि ? इत्याह—'मुग्गर' मुद्गरः प्रसिद्धः 'मुसुंढि' शस्त्र-

---

लोहमय मार्ग के ऊपर उन्हें चलाते हैं और फिर (वाहणाणि) उनसे शक्ति से भी अधिक भार को वहन कराते हैं ॥सू. ३२ ॥

अब सूत्रकार यातना के विषय में आयुधों के प्रकारों को कहते हैं—'इमेहिं विविहेहिं' इत्यादि ।

टीकार्थ-(इमेहिं) इन वक्ष्यमाण (विविहेहिं) अनेक प्रकारके (आउहेहिं) आयुधों—शस्त्रों से वे नारकी परस्पर में यातना (वेदना) को उत्पन्न करते हैं । इस प्रकर से यहां संबंध घटित कर लेना चाहिये—(किं ते) वे आयुध कौन २ से हैं ? सो उन्हें प्रकट करते हैं—(मुग्गर) मुद्गर (मुसुंढि) मुसुंढि—शस्त्र विशेष (करकय) क्रकच—करोंत (सत्ति)

તપાવેલાં લોઢાના માર્ગ ઉપર તેમને ચલાવે છે અને વળી "वाहणाणि" તેમની શક્તિ કરતાં પણ વધારે બોજો તેમની પાસે ઉપડાવે છે ॥ સૂ. ૩૨ ॥

હવે સૂત્રકાર યાતનાઓ આપવા માટે ઉપયોગમાં લેવાતાં આયુધોનું વર્ણન કરે છે–"इमेहिं विविहेहिं" ઈત્યાદિ.

"इमेहिं विविहेहिं" નીચે દર્શાવવામાં આવેલાં અનેક પ્રકારનાં "आउहेहिं" આયુધો–શસ્ત્રો વડે તે નારકીઓ પરસ્પરમાં યાતના "વેદના" ઉત્પન્ન કરે છે, એ પ્રકારનો સંબંધ અહીં સમજી લેવાનો છે.

"किं ते ?" તે આયુધો ક્યાં ક્યાં છે ? તો સૂત્રકાર તે આયુધો બતાવે છે– "मुग्गर" મગદળ, "मुसुंढि" મુસંઢી નામનું શસ્ત્ર, "करकय" ક્રકચ–કરવત,

विशेषः ' करकय ' क्रकचं=परपत्रं ' करवत ' इति भाषा प्रसिद्धं, ' सत्ति ' शक्तिः =त्रिशूलं ' हलं ' प्रसिद्धं, ' गय ' गदा=प्रसिद्धा, ' मुसलं ' प्रसिद्धमेव ' चक्क ' चक्रं=शस्त्रविशेषो रथाङ्गकारः ' कौंत ' कुन्तः ' भाला ' इति भाषाप्रसिद्धः, ' तोमर ' तोमरः ' गुरजर ' इति प्रसिद्धः ' सूल ' शूलं सुतीक्ष्णलोहकण्टकमय-शस्त्रविशेषः प्रसिद्धः, ' लउल ' लकुटः – यष्टिः, ' भिंडिपाल ' भिण्डिपालः ' गोफण ' इति प्रसिद्धः, ' सव्वल ' शर्वलः–' वरछी ' इति प्रसिद्धः, ' पट्टिस ' पट्टिशः शस्त्रविशेषः, ' चम्मेट्ठ ' चर्मेष्टः=चर्मवेष्टितपाषाणमयशस्त्रविशेषः, ' दुहण ' द्रुघणः = मुद्गरविशेषः ' मुट्ठिय ' मुष्टिकः–' घण ' इति प्रसिद्धः, ' असि ' लघु-खड्गः, ' खेडग ' खेटकः = शस्त्रप्रहाररोधकशस्त्रविशेषः, ' ढाल ' इति भाषा प्रसिद्धः, ' खग्ग ' खड्गः=सुतीक्ष्णदीर्घाकारोऽसिरेव ' चाव ' चापः=धनुः ' नाराय ' नाराचः=लोहमयबाणः, ' कणक ' कणकः=बाणविशेषः ' कप्पिणि ' कल्पनी=कर्त्तरिका ' कैंची ' इति भाषा प्रसिद्धा, ' वासि ' वासी=तक्षणशस्त्रविशेषः ' वसुला ' इति भाषा प्रसिद्धा, ' परसु ' परशुः=कुठारः, एषां द्वन्द्वः, ते च ते ' टंक तिक्ख '

शक्ति–त्रिशूल, (हल) हल (गय) गदा (मुसल) मुसल, (चक्क) चक्र–रथाङ्ग के आकार शस्त्र विशेष, (कोंत) भाला, (तोमर) तोमर–गुरजर, (सूल) अत्यंततीक्ष्ण धारवाले लोहे के कांटो वाला शस्त्रविशेष, (लउल) लकड़ी–लाठी (भिंडिपाल) गोफण, (सव्वल) बरछी, (पट्टिस) पट्टिश, इस नाम का शस्त्रविशेष, (चम्मेट्ठ) चर्मवेष्टितपाषा-णमयशस्त्रविशेष, (दुहण) द्रुघण–एक जाति का मुद्गरविशेष, (मुट्ठिय) मुष्टिक–घण–जिस पर रखकर लोहार लोहे को कूटते हैं, (असि) तल-वार (खेटक) ढाल, (खग्ग) सुतीक्ष्ण एवं दीर्घ आकार युक्त तलवार-बड़ी तलवार, (चाव) धनुष, (नाराय) लोहमय बाण, (कणक) एक प्रकार का बाण, (कप्पिणि) कर्त्तरिका–कैंची, (वासि) वसूला (परसु)

"सत्ति" शक्ति–त्रिशूल, "हल" હળ, "गय" ગદા, "मुसल" મુસળ–સાંબેલું, "चक्क" ચક્ર,–રથનાં પૈડાના આકારનું એક શસ્ત્ર, "कोंत" ભાલો, 'तोमर" તોમર–ગુરજર, "सूल" અત્યંત તીક્ષ્ણ ધારવાળાં લોઢાના કાંટા વાળુ એક શસ્ત્ર "लउल" લાકડી–લાઠી. "भिंडिपाल" ગોફણ, "सव्वल" બરછી, "पट्टिस" પટ્ટિશ નામનું એક શસ્ત્ર, "चम्मेट्ठ" ચામડાંથી મઢેલું પથ્થરનું એક પ્રકારનું શસ્ત્ર, "दुहण" દ્રુઘણ–એક જાતનું મગદળ, "मुट्ठिय" મુષ્ટિક–ઘણ, જેના પર મૂકીને લુહાર લોઢાને ટીપે છે, "असि" તલવાર, "खेटक" ઢાલ, "खग्ग' અત્યંત તીક્ષ્ણ અને લાંબી તલવાર–મોટી તલવાર, "चाव" ધનુષ, ' नाराय " લોઢાનું બાણ, "कणक" એક વિશિષ્ટ પ્રકારનું બાણ "कप्पिणि" કાતર, "वासि" વાંસલો

टङ्कतीक्ष्णाः=अग्रतीक्ष्णाः क्षाणोत्तेजितत्वात्, 'निम्मल' निर्मलाश्च—जाज्वल्यमानाः, इत्येभिः। 'अण्णेहि य' अन्यैश्च 'एवमाइएहिं' एवमादिभिः 'असुहेहिं' असुखैः=परमदुःखोत्पादकैः 'वेउव्विएहिं' वैक्रियकैः=वैक्रियशक्तिसम्पादितैः 'पहरणसएहिं' प्रहरणशतैः=अनेकशस्त्रैः 'परोप्परं' परस्परम्=अन्योन्यम्, 'अभिहणंता' अभिघ्नन्तः 'अणुवद्धतिव्ववेरा' अनुवद्धतीव्रवैराः=पूर्वभवे हिंसादिभिरनुवद्धं तीव्रं वैरं यैस्ते तथा=वद्धवैरानुवन्धिकर्माणः नारकाः, 'वेयणं' वेदनां =पीडाम् 'उईरंति' उदीरयन्ति=समुत्पादयन्ति॥ सू० ३३ ॥

परस्परं वेदनामुदीरयन्तो नारकाः कीदृशा भवन्ति? इत्याह—'तत्थय मोग्गर' इत्यादि।

मूलम्—तत्थ य मोग्गर पहार चुण्णिय-मुसंढि संभग्गमहित-देहा जंतोवपीलणफुरंतकप्पिया केइत्थ सचम्मगा विगत्ता णिम्मूलुल्लूणियकण्णोट्ठ णासिया छिण्णहत्थपाया ॥सू०३४॥

टीका—'तत्थ य' तत्र च नरके 'मोग्गरपहारचुण्णिय मुसंढि—संभग्ग-महियदेहा' मुद्गरप्रहारचूर्णित—मुसण्ढि संभग्नमथित—देहाः = मुद्गराणां प्रहारैः=

कुठार—कुल्हाडी (टंकतिक्ख) ये सब शाण पर उत्तेजित किये हुए होने से वहुत अधिक अग्रभाग में तीक्ष्ण होते हैं, और (निम्मला) चरचमाते हैं सो इन शस्त्रों से, तथा (अण्णेहिं एवमाइएहिं) इनसे भिन्न और भी (असुहेहिं) पर दुःखोत्पादक तथा (वेउव्विएहिं) वैक्रिय शक्ति से सम्पादित (पहरणसएहिं) सैकडों शस्त्रों से (परोप्परं) परस्पर में एक दूसरे को (अभिहणंता) मारते हुए वे (अणुबद्धतिव्ववेरा) पूर्वभव में हिंसादि पापों द्वारा अणुबद्ध तीव्र वैर वाले नारकी (वेयणं) वेदना—पीडा को (उईरंति) उत्पन्न करते हैं॥ सू. ३३ ॥

परस्पर में तीव्र वेदना को उत्पन्न करते हुए वे नारकी कैसे हो जाते

"परसु" કુહાડી, "टकतिक्ख" એ બધાં શસ્ત્રો સરાણ પર સજાવેલાં હોવાને કારણે તેમની ધાર તથા અણી ઘણી તીક્ષ્ણ હોય છે, અને તે "निम्मला" ચળકતાં હોય છે એ પ્રકારનાં શસ્ત્રોથી તથા "अण्णेहिं एव माइएहिं" તે ઉપરાંત બીજાં પણ "असुहेहिं" અન્યને દુઃખદાયક તથા "वेउव्विएहिं" વૈક્રિય શક્તિથી યુક્ત "पहरणसएहिं" સેંકડો શસ્ત્રોથી "परोप्परं" એક બીજાને "अभिहणंता" મારતાં, "अणुवद्धतिव्ववेरा" પૂર્વભવમાં હિંસાદી પાપો દ્વારા તીવ્ર વેરથી યુક્ત, નારકી જીવો "वेयणं" પરસ્પરમા વેદના "उईरंति" ઉત્પન્ન કરે છે.

પરસ્પર વેદના તીવ્ર વેદના ઉત્પન્ન કરતાં કરતાં તે નારકી જીવો કેવા થઈ

प्रघातैः चूर्णितः=कुट्टितः, मुसण्ढिभिः=शस्त्रविशेषैः संभग्नः=जर्जरीकृतः, मथितश्च=कुम्भ्यादौ-दधिवद् विलोडितः देहो येषां ते तथा, 'जंतोवपीलणफुरंतकप्पिया' यन्त्रोपपीडन स्फुरत्कल्पिताः=यन्त्रेषु उपपीडनेन=सम्मर्दनेन स्फुरन्तः वेपमानाः कल्पिताः=कर्त्तिता ये ते तथा 'केइत्थ' केचिदत्र-केचित् नारकाः अत्र=नरकेषु 'सचम्मगा' सचर्मका=चर्मसहिताः 'विगत्ता' विकृत्ताः=छेदिताः मृत-पशुवद् उत्पाटितचर्मशरीराः, णिम्मूलुल्लूणियकण्णोट्ठणासिया' निर्मूलोल्लूनकर्णोष्ठनासिकाः=निर्मूलं=मूलतः उल्लूनाः=कर्तिताः कर्णौ ओष्ठौ नासिका च येषां ते तथा, 'छिण्णहत्थपाया' छिन्नहस्तपादाः=छिन्ना हस्ताः पादा येषां ते तथा भूता नारकाः भवन्ति ॥ सू० ३४ ॥

अपि च—'तत्थ य असि' इत्यादि—

मूलम्—तत्थ य असि-करकय-तिक्खकोंत-परसुप्पहार-फालिय-वासीसंतच्छियंगसंगा कलकलमाणखारपरिसित्तगाढ-

---

हैं ? इस बात को सूत्रकार कहते हैं—'तत्थ य मोग्गर इत्यादि।

टीकार्थ—(मोग्गरपहारचुण्णिय-मुसंढि संभग्ग-महिय देहा) उन नरकोंमें मुद्गरों के प्रहारों से चूर्णित, मुसंढि जाति के शस्त्रविशेषों से जर्जरीकृत एवं कुंभी आदि में दही की तरह मथित है देह जिन्हों की ऐसे (केइत्थ) कितनेक नारकी नरकों में (जंतोवपीलण फुरंतकप्पिया) यंत्रों में संमर्दन से कंपित होते हुए काट दिये जाते हैं। (सचम्मणाविगत्ता) इनके शरीर के उपर की चमड़ी मृतपशु की चमड़ी की तरह उखाड़ ली जाती है। (णिम्मूलुल्लूणियकण्णोट्ठणासिया) मूलतः इनके ओष्ठ और नाक काट ली जाती हैं। (छिन्न हत्थपाया) हाथ पैर छिन्न भिन्न कर दिये जाते हैं ॥ सू. ३४ ॥

જાય છે, તે વાત સૂત્રકાર હવે બતાવે છે— "तत्थ मोग्गर" ઇત્યાદિ. "मोग्गर पहार चुण्णिय, मुसंढि सभग्ग-महिय देहा" તે નરકોમાં મગદળોના પ્રહારોથી ચૂર્ણિત, મુસંઢિ નામના શસ્ત્રથી જર્જરિત કરેલ અને કુંભી આદિમાં દહીંની જેમ જેમનાં શરીર વલોવાય છે. તેવાં "केइत्थ" કેટલાક નારકીઓને નરકોમાં "जंतोवपीलणफुरंतकप्पिया" યંત્રોમાં પીલવાની બીકે કંપતા હોય તેવી હાલતમા કાપી નાખવામાં આવે છે "सचम्मणा विगत्ता" તેમનાં શરીર ઉપરની ચામડી મૃતપશુની ચામડીની જેમ ઉતારી લેવામાં આવે છે. "णिम्मूलुल्लूणिय कण्णोट्ठणासिया" તેમના હોઠ, નાક અને કાન મૂળમાંથી કાપી લેવામાં આવે છે. "छिन्नहत्थपाया" હાથ અને પગ છિન્નભિન્ન કરવામાં આવે છે ॥સૂ-૩૪॥

उज्झंतगत्तकुंतग्गभिण्ण-जंज्जरियसव्वदेहा विलोलंति महीतले विसूणियंगमंगा ॥ सू० ३५ ॥

टीका—'तत्थ य' तत्र च 'असिकरकयतिक्खकोंतपरसुप्पहारफालिय-वासीतच्छियंगमंगा' असिक्रकचतीक्ष्णकुन्त परशुप्रहारपाटित-वासीसन्तक्षिताङ्गो-पाङ्गा=तत्र-असिः=खड्गः, क्रकचः=क्रपत्रं 'करवत' इति प्रसिद्धः, तीक्ष्णकुन्तः= तीक्ष्णभल्लः, परशुश्च - कुठारः, एतेषां प्रहारैः पाटितानि = विदारितानि, तथा वासीभिः सन्तक्षितानि=तनूकृतान्यङ्गोपाङ्गानि येषां ते तथा, 'कलकलमाणखार-परिसित्तगाढडज्झंतगत्त-कुंतग्गभिण्णजज्जरियसव्वदेहा' कलकलायमानक्षार-परिषिक्तगाढदह्यमानगात्रकुन्ताग्रभिन्नजर्ज्जरितसर्वदेहाः = अत्युत्कालितत्वात्कल-कलायमानेन=क्षारेण=सर्जिक्षारादिजलेन परिषिक्तम्, अतएव-गाढम्-अत्यन्तं दह्यमानं गात्रं येषां ते, तथा कुन्तानामग्रैः-निशितधाराभिर्भिन्नोऽत एव जर्ज्जरितो

और भी—'तत्थय असि इत्यादि।

टीकार्थ-(तत्थ य) उन नरकों में (असि-करकय-तिक्खकोंत-परसु-प्पहारफालिय-वासीतच्छियंगमंगा) असि-तलवार, क्रकच-करोंत, तीक्ष्ण कुन्त-तीक्ष्णधार वाले भाले और परशु-कुठार उनके प्रहारों से विदा-रित किये गये तथा बाद में वासी-वसूलों से छोल २ कर पतले किये गये हैं अंग उपांग जिन्हों के ऐसे (कलकलमाणखारपरिसित्तगाढ डज्झंत गत्त-कुंतग्गभिण्णजज्जरियसव्वदेहा) तथा अत्यंत उकला हुआ होने से कलकलायमान सर्जिक्षार आदि के जल से सिञ्चित किये गये होने से जिनका शरीर अत्यंत दह्यमान हो रहा है ऐसे, भालों के अग्रभाग से भिन्न होने के कारण जिनका सकल शरीर बिलकुल जर्ज-

---

વળી સૂત્રકાર કહે છે કે—" तत्थ य असि " ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—"तत्थ य" તે નરકોમાં " असि, करकय, तिक्खकोंत, परसु, प्पहार फालिय वासी तच्छियंगसंगा " અસિ—તલવાર, ક્રકચ—કરવત, તીક્ષ્ણકુન્ત—તીક્ષ્ણ અણીવાળા ભાલા અને પરશુ—ફરશીના પ્રહારોથી ચીરવામાં આવેલ અને ત્યાર-બાદ વાંસલા વડે છોલી છોલીને જેમનાં અંગ ઉપાંગો પાતળાં કરવામાં આવ્યાં છે તેવાં, તથા " कलकलमाणखारपरिसित्तगाढ डज्झंत गत्त-कुंतिग्गभिण्णजज्जरिय-सव्वदेहा " અત્યંત ઉકળેલ હોવાને કારણે કળકળતા સાજીખાર આદિના પાણીનું સિંચન કરવાના કારણે જેમનાં શરીર અત્યંત જળી રહ્યાં છે તેવા, અને ભાલાની અણીથી વીંધવાને કારણે જેમના શરીર બિલકુલ જર્જરિત થઇ ગયાં છે એવા "विसूणियंगमंगा" તથા વિવિધ-પ્રકારના પ્રહારોથી જેનાં શરીર સૂઝી ગયાં

सर्वदेहः=सकलशरीरं येषां ते तथा, 'विसूणियंगमंगा' विशूनिताङ्गोपाङ्गाः = विशूनितानि=नानाविधप्रहारैः संजातशोथानि, कलकलायमानजलसेचनेन समुत्पन्नस्फोटकानि वा अङ्गोपाङ्गानि येषां ते तथा, एवं परमाधार्मिकैः कदर्थिताः सन्तो नरकजीवा महीतले=कठोरनरकभूमौ विलोलंति' विलुलन्ति=विलुठन्ति ॥सू०३५॥

ततः किं भवती ? त्याह—'तत्थ य विग' इत्यादि।

मूलम्—तत्थ य विग-सुणग-सियाल-काक-मज्जार-सरभ-दीविय-वियग्घ-सद्दूल-सीह-दप्पिय-खुहाभिभूएहिं णिच्चकालमणसिएहिं घोरारसमाणभीमरूवेहिं अक्कमित्ता दढदाढा-गाढडक्क-कड्डिय-सुतिक्खनहफालियउद्धदेहा विच्छिप्पंते समंतओ विमुक्कसंधिबंधणा वियंगमंगा कंककुररगिद्धघोरकट्ठवायसगणेहिं य पुणो खरथिरदढणक्ख-लोहतुंडेहिं ओवइत्ता पक्खाहयतिक्खणक्खविकिन्नजिब्भछियनयणनिद्दओलुग्गविगतवयणा उक्कोसंता य उप्पयंता नियडंता भमंता ॥ सू०३६॥

टीका—तत्र च 'विग' वृकाः=ईहामृगाः 'भेडिया' इति प्रसिद्धाः

रित हो चुका है ऐसे (विसूणियंगमंगा) तथा नाना प्रकार के प्रहारों से जिनमें सूजन आगई है, अथवा कलकलायमान क्षार जल के सिंचन से जिन पर फफोले पड़ गये हैं ऐसे अंग उपांग वाले वे नारकी जीव परमाधार्मिकों द्वारा कदर्थित होकर (महीतले) नरक की कठोर भूमि पर (विलोलंति) लोटते हैं ॥ सू. ३५ ॥

इसके बाद क्या होता है ? इस बात को सूत्रकार प्रदर्शित करते हैं—'तत्थ य विग-सुणग' इत्यादि।

टीकार्थ-(तत्थ य) उन नरकोंमें (विग-सुणग-सियाल-काक-मज्जार-

છે તેવા, અથવા કળકળતા ક્ષારયુક્ત જળના સિંચનથી જેમનાં અંગ ઉપાંગો પર ફોલ્લા પડી ગયા છે. એવા નારકી જીવો પરમાધાર્મિકો દ્વારા યાતનાઓ પામીને " महीतले " નરકની કઠોર ભૂમિ પર " विलोलंति " પડી જાય છે. ॥સૂ-૩૫॥

ત્યારબાદ શું થાય છે. તે વાત સૂત્રકાર બતાવે છે—" तत्थ य विग-सुणग " ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—"तत्थ य" તે નરકોમાં " विग-सुणग-सियाल-काक-मज्जार-सरभ-दीविय-

'सुणग' श्वानः 'सियाल' शृगालाः, काकाः=प्रसिद्धा 'मज्जार' मार्जाराः = विड़ालाः, शरभाः=अष्टापदाः 'दीविय' द्वीपिकाः=चित्रकाः 'वियग्घ' व्याघ्राः प्रसिद्धाः, 'सद्दूल' शार्दूलाः=व्याघ्रविशेषाः, 'सीह' सिंहाः=केसरिणः, ते च वृकादयः कीदृशाः? 'दप्पिय' दर्पिताः=गर्विताः, तथा 'खुहाभिभूया' क्षुधाभिभूताः=क्षुधापिपासाव्याकुलास्तैः 'णिच्चकालं' नित्यकालं=सर्वदा 'अणसिएहिं' अनशितैः=अभुक्तैः 'घोरारसमाण भीमरूवेहिं घोराऽऽरसमानभीमरूपैः= घोराः=भयंकरकर्माणः आरसमानाः=अतीवाक्रोशन्तोभीमरूपाः=भयानकाकृतयश्च ये ते तथा तैः 'अक्कमित्ता' आक्रम्य=आक्रमणं कृत्वा 'दढदाढागाढडक्ककड्ढिय-सुतिक्खनहफालिय उद्धदेहा' दृढदंष्ट्रा गाढदंष्ट्रकर्पित-सुतीक्ष्णनखपाटितोर्ध्व-

---

सरभ-दीविय-वियग्घ-सद्दूल-सीह-दप्पिय-खुहाभिभूएहिं) (दप्पिय) दर्पित-गर्वित तथा (खुहाभिभूएहिं) भूख प्यास से अत्यंत व्याकुल तथा (णिच्चकालमणसिएहिं) उस समय जिन्हों ने बिलकुल कुछ भी नहीं खाया होता है ऐसे, और इसी कारण जो (घोरारसमाणभीमरूवेहिं) घोर-क्रूर कर्म करने के लिये तत्पर बन चुके हैं, अतः चीत्कार करने से भीमरूप जिनका रूप भयंकर बन रहा है ऐसे (विग) वृक-भेडिया, (सुणग) श्वान-कुत्ते, (सियाल) शृगाल-गीदड़ (काक) कौवे, (मज्जार) मार्जार-विलाव, (सरभ) अष्टापद, (दीविय) द्वीपिक-चित्ता, (वियग्घ) व्याघ्र, (सद्दूल) शार्दूल-व्याघ्र विशेष, और, सिंह इनके द्वारा (अक्कमित्ता) आक्रमण करके (दढदाढा-गाढडक्क-कड्ढिय-सुतिक्ख नहफालिय उद्धदेहा) पहिले दृढदंष्ट्राओं से डसे जाते हैं, पश्चात् पृथ्वी-

---

वियग्घ-सद्दूल-सीह-दप्पिय-खुहाभिभूएहि" "दप्पिय" દર્પિત-ગર્વિષ્ઠ તથા "खुहाभिभूएहिं" ભૂખ પ્યાસથી-અત્યંત વ્યાકુળ તથા "णिच्चकालमणसिएहि" તે કાળે જેમને બિલકુલ ખોરાક મળ્યો હોતો નથી એવા અને એજ કારણે જે "घोरारसमाणभीमरूवेहिं" ઘોર-ક્રૂર કર્મ કરવાને માટે આતુર થયેલ છે, તે કારણે ચિત્કાર કરવાથી જેમનો દેખાવ અતિ ભયંકર બની ગયો છે એવા "विग" વૃક-વરુ, "सुणग" શ્વાન-કૂતરા, 'सियाल" શિયાળ, "काक" કાગડા, "मज्जार" માર્જાર બિલાડા, સરભ અષ્ટાપદ, "दीविय" દ્વીપિક-ચિત્તા, "वियग्घ" વાઘ, "सद्दूल" શાર્દૂલ-વિશિષ્ટ પ્રકારના વાઘ, અને સિંહ વગેરે પ્રાણિઓ "अक्कमित्ता" આક્રમણ કરીને "दढदाढा-गाढडक्क-कड्ढिय-सुतिक्ख-नहफालिय उद्धदेहा" પહેલાં મજબૂત ડાઢો વડે તેમને બટકાં ભરે છે,

देहाः=दृढाभिर्दंष्ट्राभिः गाढम्=अत्यन्तं 'डक्क' दष्टाः, कर्षिताः=पृथ्वीतले इतस्ततः समाकृष्टाश्च ये ते, तथा सुतीक्ष्णनखैः पाटिताः=द्विधा कृताः ऊर्ध्वदेहाः ऊर्ध्वशरीराणि येषां ते तथा, अत एव-'विमुक्कसंधिबंधणा' विमुक्तसन्धिबन्धनाः =विमुक्तानि=शिथिलीकृतानि सन्धीनां=अङ्गसन्धानस्थानानां बन्धनानि येषां ते तथा, 'वियंगमंगा' व्यङ्गाङ्गाः=व्यङ्गानि=खण्डितानि अङ्गानि=करचरणकर्णनासिकादीनि येषां ते तथा, एवंभूता नरकजीवाः परमाधार्मिकैः 'समंतओ' समन्ततः=चतुर्दिक्षु गगने 'विच्छिप्पते' विक्षिप्यन्ते = काकबलिवत्प्रक्षिप्यन्ते, 'पुणो य' पुनश्च-प्रक्षेपणानन्तरं ते नारकाः 'कंक-कुरर-गिद्धघोरकट्ठवायसगणेहिं' कङ्ककुररगृध्रघोरकष्टवायसगणैः = कङ्काः-कुरराः पक्षिविशेषाः गृध्राः= प्रसिद्धाः, घोरकष्टवायसाः=घोरकष्टाः=असह्यक्लेशकारका ये वायसाः=काकास्ते तथा तेषां गणैः=समूहैः, कीदृशैस्तैः ? इत्याह—'खरथिरदढणक्खलोहतुंडेहिं' खरस्थिरदृढनखलोहतुण्डैः=खराः=तीक्ष्णाः स्थिराः-निश्चलाः दृढाः=कठोरवस्तु-

---

तलपर इधर से उधर खेंचे जाते हैं-घसीटे जाते हैं, तथा सुतीक्ष्ण नखों के प्रहारोंसे उनके उर्ध्व शरीर को दो टुकडे कर दिये जाते हैं। इस कारण (विमुक्कसंधिबंधणा) उनके संधियों के बंधन बिलकुल ढीले हो जाते हैं। (वियंगमंगा) वहां नारकियों के कर, चरण, कर्ण, नासिका आदि अंगों को खंडित कर दिया जाता है और (समंतओ विच्छिप्पंते) जिस प्रकार काकबलि दिशाओं में फेंक दी जाती है वे बिचारे नारकी भी इसी तरह से आकाश में इधर उधर दिशाओं में फेंक दिये जाते हैं। (पुणोय) फिर पश्चात् (कंककुररगिद्धघोरकट्ठवायसगणेहिं) कंक, कुरर, गृद्ध और असह्य क्लेश कारक वायसों-कौओं का समूह कि (खरथिरदढणक्खलोहतुंडेहिं) जिनके नखतीक्ष्ण, स्थिर कठोर वस्तु के विदारण

પછી જમીન ઉપર તેમને આમ તેમ ખેંચે છે-ઘસડે છે, તથા અતિશય તીક્ષ્ણ નખ ભરાવીને તેમનાં ઉર્ધ્વ શરીરના બે ટુકડા કરી નાખે છે તે કારણે " विमुक्कसंधिबंधणा " તેમના સાંધાઓના બંધન તદ્દન ઢીલા થઈ જાય છે " वियंगमंगा " ત્યાં નારકીઓના હાથ, પગ, કાન, નાક આદિ અંગોનું ખંડન કરવામાં આવે છે અને " समंतओ विच्छिप्पंते " જેમ કાકબલિને ચારે દિશામાં ફેંકવામાં આવે છે તેમ તે બિચારા નારકીઓને પણ આકાશમાં આમ તેમ ફેંકવામાં આવે છે. " पुणो य " ત્યાર બાદ " कंककुररगिद्धघोरकट्ठवायसगणेहिं " કંક, કુરર. ગીધ, અને અસહ્ય યાતનાઓ દેનારા કાગડાઓનો સમૂહ, " खरथिरदढणक्खलोहतुंडेहिं " કે જેમના તીક્ષ્ણ નખ કઠણ વસ્તુઓને ચીર્યા પછી

च्छेदनेऽपि अभग्नाः नखा येषां ते तथा ते च ते लोहतुण्डाः=लोहवत्कठोरचञ्चु-काश्च, तैः 'ओवइत्ता' अवपत्य=अन्तराल एव आक्रम्य 'पक्खाहयतिक्खणक्खविकिन्न जिब्भच्छित्तनयणनिद्दओलुग्गविगयवयणा' पक्षाहततीक्ष्णनखविक्षिप्त जिह्वाक्षिप्तनयननिर्दयावरुग्णविकृतवदनाः='पक्खाहय' पक्षाहताः-पक्षैराहताः= ताडिताः तीक्ष्णैर्नखैर्विक्षिप्ताः=आकृष्टा मुखाद्बहिर्निष्काशिता जिह्वाः येषां ते तथा, आक्षिप्ते=बहिष्कृते नयने येषां ते तथा, अतएव निर्दयं यथास्यात्तथा अवरुग्णं=भग्नं विकृतं विरूपी कृतं च वदनं येषां ते तथा, ततः सर्वेषां कर्मधारयः, उक्कोसंता' उत्क्रोशन्तः=हा हा शब्दैराक्रन्दं कुर्वन्तः 'उप्पयंता' उत्पतन्तः=परमवेदनाभिर्वृश्चिकदष्टकपिवद् गगने उच्छलन्तः 'निवडंता' निपतन्तः=पृथिव्यां लुठन्तः, 'भमंता' भ्रमन्तः=इतस्ततः पलायमानाः दुःखमनुभवन्ति ॥ ३६ ॥

करने पर भी-वैसे ही बने रहते हैं-नहीं टूटते हैं तथा चोंचे जिनकी लोह के जैसी कठोर होती है, वे उन्हें (ओवइत्ता) बीच ही में पकड़कर (पक्खाहय - तिक्खणक्खविकिन्नजिब्भछियनयणनिद्दओलुग्गविगत-वयणा) अपनी पांखों से आहत करते हैं, तीक्ष्ण नखों से उनकी जीभ को उनके मुख से बाहिर निकाल लेते हैं और दोनों आंखों को भी बाहिर काढ लेते हैं । इस तरह निर्दयतापूर्वक विरूपरूप वाले बनाये गये वे पाप-कारी नारकजीव (उक्कोसंता य) हाय हाय शब्द करते हुए (उप्पयंतो) विच्छु से काटे गये बंदर की तरह अत्यंत वेदनाओं से आकाश में ऊपर को उछलते हैं और फिर (निवडंता) नीचे गिरते हैं । (भमंता) गिर कर फिर इधर उधर भागते हुए दुःखों का अनुभव करते हैं ॥सू. ३६ ॥

પણ એવાને એવા જ રહે છે-તૂટતા નથી તથા જેમની ચાંચ લોઢાના જેવી કઠણ હોય છે, એવાં તે પક્ષીઓ તેમને "ओवइत्ता" વચ્ચે જ પકડીને "पक्खाहय-तिक्खणक्खविकिन्नजिब्भछियनयणनिद्दओलुग्गविगतवयणा" પોતાની પાંખો વડે મારે છે, તીક્ષ્ણ નખોની મદદથી તેમની જીભને તેમનાં મુખમાંથી બહાર ખેંચી કાઢે છે અને બન્ને આંખોને પણ બહાર કાઢી નાખે છે. આ રીતે નિર્દયતાથી બેડોળ બનાવવામાં આવેલા તે પાપકારી નારકી જીવો "उक्को-संता य" હાય ! હાય ! કરતાં "उप्पयंतो":વીંછીએ ડંખ માર્યો હોય ત્યારે કૂદાકૂદ કરતા વાનરાની જેમ, અત્યંત વેદનાથી વ્યાકુળ થઈને આકાશમાં ઉપ-રની બાજુ ઉછળે છે, અને "निवडंता" વળી પાછાં નીચે પડે છે "भमंता" નીચે પડીને વળી આમ તેમ નાસ ભાગ કરતાં તેઓ દુઃખો અનુભવે છે ।।સૂ-૩૬।।

ततस्तेषां यथा भवति तथा प्रतिपादयन्नाह-'पुव्वकम्मो०' इत्यादि ।

मूलम्—पुव्वकम्मोदयोवगया पच्छाणुसएणडज्झमाणा णिंदंता पुरेकडाइं कम्माइं पावगाइं तहिं तहिं तारिसाणि ओसण्णं चिक्कणाइं दुक्खाइं अणुभवित्ता तओ य आउक्खएणं उव्वट्टिया समाणा बहवे गच्छंति तिरिय वसहिं दुक्खुत्तारं सुदारुणं जम्मण मरण जरा वाहि परियट्टणारहट्टं जल थल खहचरपरोप्परविहिंसणपवंचं ॥ सू० ३७ ॥

टीका-'पुव्वकम्मोदयोवगया' पूर्वकर्मोदयोपगताः=कृतानां पूर्वेषां कर्मणामुदयेन उपगताः तिर्यगादिकुयोनिषु गमनोन्मुखास्ते नारकाः 'पच्छाणुसएण' पश्चादनुशयेन=पश्चात्तापेन 'डज्झमाणा' दह्यमानाः=सन्तप्यमानाः 'पुरेकडाइं' पुराकृतानि=पूर्वाचरितानि 'पावगाइं' पापकानि प्राणातिपातादीनि 'णिंदंता' निन्दन्तः=मिथ्यात्वाज्ञानमोहान्धेन महारम्भमहापरिग्रहसमासक्तेन मया पूर्वभवे कुशा-

---

इसके बाद उन नरकों की जो स्थिति होती है-विचार धारा बंधती है, सूत्रकार अब उसका प्रतिपादन करते हैं-'पुव्वकम्मोदयोवगया' इत्यादि ।

टीकार्थ-(पुव्वकम्मोदयोवगया) कृत पूर्वकर्मों के उदय से तिर्यग् आदि कुयोनियों में गमनके सन्मुख बने हुए वे नारक (पच्छाणुसएण) पश्चात्ताप से (डज्झमाणा) सन्तप्यमान होकर अपने (पुरेकडाइं) पूर्वाचरित (पावगाइं) प्राणातिपातादिक (कम्माइं) पापकर्मों की (णिंदंता) इस प्रकार निंदा करने लगते हैं-" मिथ्यात्व, अज्ञान तथा मोह से अन्ध बने हुए मैंने महा आरंभ और महा परिग्रह में आसक्त होकर पूर्वभव

ત્યાર બાદ તે નારકી જીવોની જે વિચારધારા ચાલે છે તેનું હવે સૂત્ર-કાર પ્રતિપાદન કરે છે—" पुव्वकम्मोदयोवगया " ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ-" पच्छाणुसएण " પૂર્વે કરેલાં કર્મોના ઉદયથી તિર્યગ્ આદિ કુયોનિયોમાં ગમન કરવાની પરિસ્થિતિમાં મૂકાયેલ તે નારકી જીવો " पच्छाणुसएण " પશ્ચાત્તાપથી " डज्झमाणा " સંતપ્ત થઈને પોતે " पुरेकडाइं " પૂર્વાચરિત " पावगाइं " પ્રાણાતિપાતાદિક " कम्माइं " પાપકર્મોની " णिंदंता " આ પ્રમાણે નિંદા કરવા માંડે છે-" મિથ્યાત્વ, અજ્ઞાન તથા મોહથી અંધ બનેલા એવા મેં મહા આરંભ અને મહાપરિગ્રહમાં આસક્ત થઈને, પૂર્વભવમાં દર્ભની અણી પર

ग्रजलबिन्दुवच्चञ्चलानां कमलदलगतजलबिन्दुवदापातरमणीयानां क्षणमात्रसुखानां बहुकालदुःखानां भोगानां लिप्सया–अर्थमनर्थं धर्मार्थं वा अनेके हीनादीना अत्राणा अशरणा अनाथा असहायाः प्रियजीवितामरणप्रतिकूलास्त्रसस्थावरा जीवा निर्दयं हता उपहता उपमर्दिताः परितापिताः प्राणरहिताः कृताः, सद्गुरुणा प्रतिबोधितोऽपि अहं तन्निर्दिष्टमार्गमनादृत्य कुमार्गमेव शरणीकृतवान् , तस्येदं फलं साम्प्रतमनुभवामि " इत्यादिरूपेण स्वकृतकर्मणां निन्दां कुर्वन्तः ' तहिं तहिं ' तत्र तत्र नरके रत्नप्रभादिके ' तारिसाणि ' तादृशानि–तत्तन्नरकभोग्यानि ' ओसण्णं ' इति सातिशयं देशीशब्दोऽयम् , ' चिक्कणाइं ' चिक्कणानि=दुर्भेद्यानि ' दुक्खाइं ' दुःखानि –अशातावेदनीयरूपाणि ' अणुभवित्ता ' अनुभूय ' तओ य ' ततश्च तस्मान्नरकात्

में कुश के अग्रभाग में स्थित जलबिन्दु के समान चंचल, कमल दल के ऊपर रहा हुई जलबिन्दु के समान आपातरमणीय, क्षणमात्रसुखदायी परन्तु बहुतकालतक दुःखप्रद, ऐसे भोगों की लिप्सा से अपने अर्थ से अनर्थ या धर्म के निमित्त अनेक हीन, दीन, अत्राण, अशरण, अनाथ, असहाय, प्रियजीवित और मरण से सदा भयभीत ऐसे त्रस स्थावर जीवों को निर्दय बन कर मारा, बार २ उन्हें कष्ट पहुँचाया, उपमर्दित किया, और प्राणरहित किया। इस विषय में मुझे सद्गुरु देव ने समझाया भी, तो भी मैं तन्निर्दिष्टमार्ग की अवहेलना करके कुमार्ग पर ही डटा रहा। उसी का यह फल इस समय मैं भोग रहा हूं।" इस प्रकार से अपने पूर्वाचरित पापकर्मों की निंदा करते हुए वे नारक जीव (तहिं तहिं) रत्नप्रभा आदि उन२ नरकों में (तारिसाणि) तत्तत् नरकभोग्य (ओसण्णं चिक्कणाइं) अतिशय चिक्कण–दुर्भेद्य (दुक्खाइं)

રહેલ જળબિંદુ સમાન ચંચળ, અને કમળદલના ઉપર રહેલ જળબિંદુઓ સમાન આપાતરમણીય, ક્ષણમાત્ર જ સુખદાયી પણ લાંબા સમય સુધી દુઃખદાયક, એવા ભાગોની લાલસાથી પોતાને માટે અથવા વિના કારણ અથવા ધર્મને નિમિત્તે અનેક દીન, હીન, અત્રાણ, અશરણ, અનાથ, અસહાય, જેમને જીવવું ગમે છે અને મરણથી જે બીવે છે તેવાં ત્રસ, સ્થાવર જીવોને નિર્દય બનીને મેં માર્યા, વારંવાર તેમને કષ્ટ આપ્યું, ઉપમર્દિત કર્યા, પરિતાપ પહોંચાડયા. અને પ્રાણ રહિત કર્યા તે વિષયમાં મને સદ્ગુરુએ સમજાવ્યું છતાં પણ તેમને બતાવેલ માર્ગની અવગણના કરીને હું કુમાર્ગમાં જ દૃઢ રહ્યો તેનું જ આ ફળ અત્યારે મારે ભોગવવું પડે છે " આ રીતે પોતે પૂર્વે કરેલા પાપકર્મોની નિંદા કરતા તે નારકી જીવો " तहिं तहिं " રત્નપ્રભા આદિ તે નરકોમાં "तारिसाणि " તે તે નરકભોગ્ય " ओसण्णं चिक्कणाइं " અતિશય દુર્ભેદ્ય

'आउक्खएणं' 'आयुः क्षयेण=नरकभवायुष्यक्षयेण 'उव्वट्टिया समाणा' उद्वृत्ताः निस्सृताः सन्तः 'बहवे' बहवः कतिपया नरकजीवाः 'तिरियवसहिं' तिर्यग्वसतिं=तिर्यग्योनिं गच्छन्ति=प्राप्नुवन्ति, यतो नरकान्निःसृता अल्पा एव मनुष्येषूत्पद्यन्ते। कीदृशीं तिर्यग्योनिम्? इत्याह—'दुक्खुत्तरं' दुःखोत्तरां=दुःखप्रकर्षाम् अनन्तोत्सर्पिण्यवसर्पिणी कायस्थितिकत्वात्तस्याः, अत एव 'सुदारुणं' सुदारुणां=भीषणां नानादुखनिधानत्वात्, 'जम्मणमरणजरावाहिपरियट्टणारहट्टं' जन्ममरणजराव्याधिपरिवर्तनारघट्टां=जन्म-मरण जरा व्याधीनां परिवर्तनैः=पुनः प्रापणै अरघट्ट इव=जलयन्त्र विशेष इव या सा तथा तां 'जलथलखहयरपरोप्परविहिंसणपवंचं' जल स्थल खचर परस्पर विहिंसनमपञ्चां=जलचर-स्थलचर

अशातावेदनीयरूप दुःखों को (अणुभवित्ता) भोगकर (तओ य) जब उस नरक से (आउक्खएणं) नरकभवसंबंधी आयु के क्षय होने पर (उव्वट्टियासमाणा) बाहर निकलते हैं तब (बहवे) उन में से बहुत से नारक जीव (तिरियवसहिं) तिर्यञ्च योनि को (गच्छंति) प्राप्त करते हैं, क्यों कि नरकों से निकले हुए बहुत थोड़े जीव ही मनुष्यगति में उत्पन्न होते हैं। वह तिर्यञ्च योनि कैसी है इस बात को सूत्रकार कहते हैं कि वह योनि (दुक्खुत्तरं) अनन्त उत्सर्पिणी प्रमाण कायस्थितिवाली होने से दुःखों के प्रकर्ष से युक्त है। (सुदारुणं) नाना दुःखों की निधान होने से सुदारुण-भयंकर है। (जम्मण-मरण-जरा-वाहि परियट्टणारहट्ट) जन्म, मरण, जरा एवं व्याधियों की पुनःपुनः प्राप्ति होने से अरहट जैसी है। तथा (जलथल खहयरपरोप्परविहिंसणपवंचं)

"दुक्खाइं" અશાતા વેદનીય રૂપ દુઃખો "अणुभवित्ता" ભોગવીને "तओ य" જ્યારે તે નરકમાંથી "आउक्खएणं" આયુષ્યનો ક્ષય થાય છે ત્યારે "उव्वट्टियासमाणा" બહાર નીકળે છે ત્યારબાદ "बहवे" તેમનામાંથી ઘણા ખરા નારકી જીવ "तिरियवसहिं" તિર્યંચ યોનિમાં "गच्छंति" જાય છે, કારણ કે નરકોમાંથી નીકળેલા બહુ થોડા જીવો જ મનુષ્ય ગતિ પ્રાપ્ત કરે છે. તે તિર્યંચયોનિ કેવી છે તે વાત સૂત્રકાર દર્શાવે છે-તે યોનિ "दुक्खुत्तरं" અનન્ત ઉત્સર્પિણી અવસર્પિણી પ્રમાણ કાળ સ્થિતિવાળી હોવાને લીધે દુઃખોના પ્રકર્ષવાળી છે. "सुदारुणं" વિવિધ દુઃખોનું ધામ હોવાથી ઘણી જ દારૂણ-ભયંકર છે. "जम्मण-मरण-जरा-वाहि परियट्टणारहट्ट" જન્મ, મરણ, જરા અને વ્યાધિઓની ફરી ફરીને પ્રાપ્તિ થવાને કારણે રહેંટ જેવી છે. તથા "जलथलखहयरपरोप्परविहिंसणपवंचं" જેમાં પરસ્પર જળચર, સ્થળ-

खचराणां परस्परं विहिंसनस्य=अनेकप्रकारवधस्य प्रपञ्चो=विस्तारो यस्यां सा तां तथा, सम्भूतां तिर्यग्योनिं गच्छन्तीति पूर्वेण सम्बन्धः ॥ सू० ३७ ॥

अथ तिर्यग्गति दुःखं वर्णयन्नाह—' इमं च ' इत्यादि ।

मूलम्-इमं च जगपागडं वरागा दुक्खं पावेंति दीहकालं। किं ते ? सीउण्ह-तण्हा खुह-वेयण - अप्पईयार-अडवि-जम्मण-णिच्चभउव्विग्गवास-जग्गण--वह-बंधण--ताडणं-कण निवायण-अट्ठिभंजण-नासा-भेय-प्पहार-दमण-छविच्छयण अभिओगपावण-कसंकुसाराभिवाय-दमणाणि-वाहणाणि य॥सू०३८॥

टीका—' इमं च ' इदं च = अनुपदवक्ष्यमाणं ' जगपागडं ' जगत्प्रकटं = सकललोकप्रत्यक्षं, दुःखम् = अशातवेदनीय - लक्षणं ' दीहकालं ' दीर्घकालम् = असंख्यातकालपर्यन्तं ' पावेंति ' प्राप्नुवन्ति, ' किं ते ' कानि तानि दुःखानि?, तदाह—' सीउण्ह ' इत्यादि—' सीउण्हतण्हाखुहवेयण ' शीतोष्णतृष्णा क्षुधा वेदना = शीतोष्णतृष्णा क्षुधाजनित दुःखं, तथा ' अप्पईयारअडविजम्मण '

जिस में परस्पर जलचर, स्थलचर और खेचरों के विविध प्रकार के वध का प्रपञ्च-विस्तार है, ऐसी तिर्यञ्चयोनि को प्राप्त करते हैं ॥सू० ३७॥

अब सूत्रकार तिर्यंचगतिके दुःखोंका वर्णन करते हैं-'इमंचजगपागडं'इत्या.

टीकार्थ-(इमं च जगपागडं) (इमं) अनुपद वक्ष्यमाण यह (जगपागडं) सकल लोकों के प्रत्यक्ष ऐसे (दुक्खं) दुःख को (वरागा) वे तिर्यंच-गति के जीव (दीहकालं) अनंतकालपर्यन्त (पावेंति) भोगते हैं (किं ते) वे दुःखों के प्रकार कौन २ से हैं? सो कहते हैं-उस गति में दुःखों के ये २ प्रकार हैं-(सीउण्ह) शीत-जनित दुःख, उष्णजनित दुःख, (तण्हा) पिपासाजनितदुःख और (खुह) क्षुधाजनितदुःख, तथा

ચર, અને નભચરોનાં વિવિધ પ્રકારના વધના પ્રપંચ-વિસ્તાર છે. એવી તિર્યંચ યોનિને તેઓ પ્રાપ્ત કરે છે ॥ સૂ-૩૭ ॥

હવે સૂત્રકાર તિર્યંચ ગતિના દુઃખોનું વર્ણન કરે છે "इमं च जगपागडं" ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ "-इमं च जगपागडं" "इमं" નીચે પ્રમાણેનાં "जगपागडं" સઘળા લોકોની નજરે પડે તેવાં "दुक्खं" દુઃખો "वरागा" તે બિચારા તિર્યંચ ગતિના જીવો "दीहकालं" અનંતકાળ સુધી "पावेंति" ભોગવે છે. "किं ते?", તે દુઃખોના પ્રકાર કયા કયા છે? સૂત્રકાર તેનો જવાબ આપતાં કહે છે. તે ગતિમાં નીચે પ્રમાણે દુઃખો હોય છે "सीउण्ह" શીત જનિત દુઃખ, ઉષ્ણતાજનિત દુઃખ "तण्हा" પિપાસાજનિત દુઃખ અને "खुह" ક્ષુધાજનિત

अप्रतीकारं=प्रतीकाररहितं-बद्धायुष्कत्वात् यद् अटव्यां=महारण्ये जन्म तत् तथा, तत्र 'णिच्चभउव्विग्गवास' नित्यभयोद्विग्नवासः = नित्यं = प्रतिक्षणं भयेन= व्याधादिकर्तृकवधनिग्रहादिरूपेण उद्विग्नः=उद्वेगसहितः वासः = निवासः अतएव 'जग्गण' जागरणं=निद्राक्षयः 'वह' वधः=मारणं, 'बंधण' बन्धनं=रज्ज्वादिना नियमनं, 'ताडणं' ताडनं=दण्डादिना हननम्, 'अंकण' अङ्कनं=प्रतप्तशूलादिना शरीरे चिन्हविशेषकरणं, 'निवायणं' निपातनम्=उत्थाप्य गर्त्तादौ प्रक्षेपणम् 'अट्ठिभंजण' अस्थिभञ्जनम्=मुद्गरादिनाऽस्थ्नां त्रोटनं 'नासाभेय' नासाभेदः = नासिकायां रज्जुयोजनार्थं छिद्रकरणं 'प्पहारदमण' प्रहारदमनं=प्रहारैः=यष्ट्यादिताडनैः दमनं = स्वायत्तीकरणं, 'छविच्छेयण' छविच्छेदनं = अवयवकर्तनं 'अभिओगपावण' अभियोगप्रापणम् = अनिच्छतोऽपि शकटादौ नियोजनं,

---

(वेयण अप्पडियार) प्रतिकार रहित दुःख, (अडविजम्मण) अटवी में जन्म होने का दुःख, (णिच्छभउव्विग्गवास) प्रतिक्षण व्याध आदि के वध-निग्रह आदि के भय से उद्विग्न चित्त होकर निवास करने का दुःख, (जग्गण) इच्छानुसार निद्रा नहीं ले सकने का दुःख, (वह) वधजन्य दुःख, (बंधण) रस्सी आदि द्वारा बांधे जाने का दुःख (ताडण) दण्ड आदि से मर्मस्थानों में ताडित किये जाने का दुःख, (कण) प्रतप्त शूल आदि द्वारा शरीर में दाग दिये जाने का दुःख, (णिवायण) उठा कर गर्त्त आदि में पटक दिये जाने का दुःख, (अट्ठिभंजण) मुद्गर आदि से हड्डियों को तोड़ दिये जाने का दुःख, (नासाभेय) नासिका के छेदन करने का दुःख, (प्पहारदमण) लकड़ी चाबुक आदि के प्रहारों से वशीभूत होने का दुःख (छवि-च्छेयण) शारीरिक अवयव काट दिये जानेका दुःख, (अभिओगपावग) नहीं इच्छा होनेपर भी जब गाड़ी आदि

દુઃખ અને " वेयण अप्पडियार " પ્રતિકારરહિત દુઃખ " अडविजम्मण " વનમાં જન્મ થવાનું દુઃખ, " णिच्चभउव्विग्गवास " પ્રત્યેક ક્ષણ વ્યાધ આદિ દ્વારા વધ, નિગ્રહ આદિના ભયથી ઉદ્વિગ્ન ચિત્તે રહેવાનુ દુઃખ " जग्गण " ઇચ્છા પ્રમાણે નિદ્રા ન લઈ શકવાનું દુઃખ " वह " વધ જન્ય દુઃખ, " बंधण " દોરડાં આદિ વડે બાંધવાનું દુઃખ, " ताडण " લાકડી આદિથી મર્મસ્થાનો પર માર પડવાનું દુઃખ "कण" તપાવેલ શૂળ આદિ દ્વારા શરીરે ડામ દેવાયાનું દુઃખ " णिवायण " ઉપાડીને ખાડા આદિમાં ફેંકવાનું દુઃખ " अट्ठिभंजण " મગદળ આદિથી હાડકાં તોડાવાનું દુઃખ, " नासाभेय " નાક છેદાવાનું દુઃખ " प्पहारदमण " લાકડી ચાબુક આદિના પ્રહારોથી તાબે થવાનું દુઃખ, " छविच्छेयण " શરીરના અવયવો કપાવાનું દુઃખ " अभिओगपावग " ઇચ્છા ન હોય છતાં પણ

'कसंकुसारनिवाय' कशाङ्कुशाऽऽरनिपातः = कशा = चर्मयष्टिः 'चाबुक' इति प्रसिद्धा, अङ्कुशः=प्रसिद्धः, आरा=दण्डान्तर्वर्त्तिनीतीक्ष्णलोहशलाका 'पराणी' इति प्रसिद्धा, तेषां निपातः=शरीरोपरिप्रहारः 'दमण' दमनं=शिक्षाग्राहणम्, एतेषां द्वन्द्वः, तानि तथा, 'वाहणाणि य' वाहनानि च=भारोद्वाहनानि, इत्येवं रूपाणि दुःखानि प्राप्नुवन्तीति सम्बन्धः ॥ सू० ३८ ॥

पुनरपि तान्येवाह—'मायापिइ' इत्यादि ।

मूलम्—माया-पिइ-विप्पओग-सोयपरिपीलणाणि य सत्थ-ग्गि-विसाभिघाय-गलगवलावलणमारणाणि य गलजालुच्छि-प्पणाणि य-पउलण विकप्पणाणि य—जायज्जीवगबंधणाणि य पंजरनिरोहणाणि य सजूह निद्धाउणाणि य धमणाणि य दोहणाणि य कुदंडगलबंधणाणि य वाडग परिवारणाणि य पंकजलनिमज्जणाणि य वारिप्पवेसणाणि य ओवाय निभंगविस-माणि य वडण दवग्गिजाल दहणाइयाइं य ॥ ३९ ॥

टीका—'मायापिइ विप्पयोग' मातापितृविप्रयोगः = माता च पिता च

में जोत दिये जानेका दुःख, (कसंकुसारनिवा य) कशा—चाबुक अंकुश एवं आरा—दंडे के अग्रभागमें लगी हुई लोह की कील—से पीटे जाने का तथा चुभो देने का दुःख, (दमणाणि) दमन—अच्छी चाल आदि को चलाने के लिये शिक्षा का दुःख, तथा (वाहणाणि य) भारों को वहन करने का दुःख, ये सब दुःख है और उन्हें तिर्यंचगति में रहे हुए जीव प्राप्त करते हैं ॥ सू. ३८ ॥

तिर्यंचगति के और भी ये दुःख हैं—'माया—पिय—विप्पओग' इत्यादि ।

टीकार्थ—(माया—पिय—विप्पओग सोयपरिपीलणाणि य) माता पिताका

માલિક ચાહે ત્યારે ગાડી આદિએ જોડાવાનું દુઃખ, "कसंकुसारनिवाय" કશા-ચાબુક, અંકુશ અને આર-લાકડીને છેડે ચોડેલી અણીદાર ખીલી વડે માર ખાવાનું દુઃખ, તથા તે ચીજોની અણી શરીરમાં ભોંકાવાથી દુઃખ થતું "दमणाणि" દમન-સારી ચાલ ચાલાવવા કે ગતિ વધારાવવા માટે થતી શિક્ષાનું દુઃખ તથા "वाहणाणि य" ભાર ઉપાડવાનું દુઃખ, એ બધાં દુઃખના વિવિધ પ્રકાર છે, અને તિર્યંચ ગતિમાં જન્મેલા જીવો તે દુઃખો ભોગવે છે ॥ સૂ-૩૮ ॥

તિર્યંચ ગતિના બીજાં દુઃખો આ પ્રમાણે છે—"माया—पिय—विप्पओग" ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—"माया—पिय—विप्पओगसोयपरिपीलणाणि य" માતા પિતાનો જન્મતાં

तयोर्विप्रयोगः = वियोगः, तयोर्जन्मतो मरणे वधे व्याधादिभिर्निग्रहे वा स्वस्य निग्रहे वेति भावः 'सोयपरिपीलणाणि य' शोकपरिपीड़नानि=मातापितृवियोगजनितशोकदुःखानि, अथवा-स्रोतः परिपीडनानि=स्रोतसां=नासिकादिछिद्राणां रज्जुबन्धनादिभिः परिपीडनानि=खेदोत्पादनानि। 'सत्थग्गिविसाभिघायगलगवलावलणमारणाणि य' शस्त्राग्निविषाभिघातगलगवलावलनमारणानि च, तत्र-शस्त्रं च अग्निश्च विषं च तैरभिघातः=नाश', तथा गलस्य = कण्ठस्य गवलस्य= शृङ्गस्य च आवलनेन=मोटनेन मारणानि 'गलजालुच्छिप्पणाणि' गलजालोत्क्षेपणानि=गलेन=बडिशेन जालेन च उत्क्षेपणानि = मत्स्यादीनां जलाद्बहिर्निस्सारणानि। पउलण-विकप्पणाणि' पचन विकल्पनानि=' पउलण' पचनं विकल्पनं च=अङ्गकर्तनं तानि। जावज्जीवगबंधणाणि' यावज्जीवकबन्धनानि=आजीवन रज्जुशृङ्खलादि बन्धनानि। 'पंजरनिरोहणाणि' पञ्जरनिरोधनानि-पञ्जरं=लोहवंशशलाकादिनिर्मितं पक्षिनियन्त्रणगृहं, तत्र निरोधनानि प्रतिरोधनानि 'सजूहनिद्घाडणाणि' स्वयूथ निस्सारणानि=स्वयूथात्=स्वसार्थात्=निस्साणानि-पुनः पुनः परिवारतः

जन्मते ही वियोग हो जाने से दुःख सहन करना, अथवा-नासिका आदि के छिद्रों का रज्जु आदि के द्वारा बंधन होने पर उसका कष्ट सहना, (सत्थग्गिविसाभिघायगलगवलावलण मारणाणि य) शस्त्र से, अग्नि से तथा विष से मरण हो जाना, गला और सींग के मुड़ जाना और उससे मरण हो जाना, (गलजालुच्छिप्पणाणि य) बडिश-मछली मारने का कांटा एवं जाल से अपने स्थान से अलग किया जाना, (पउलणविकप्पणाणि य) अग्नि में पकाया जाना अंग अंग का काटा जाना (जावज्जीवगबंधणाणि य) जीवनपर्यन्त रज्जु अथवा सांकल आदि से बांधा जाना, (पंजरनिरोहणाणि य) पींजरे में बंद किया जाना, (सजूहनिद्घाडणाणि य) बार २ अपने झुंड में से बाहर निकाल दिया जाना

જ વિયોગ થવાથી દુઃખ સહન કરવું પડે છે. નાક આદિના છિદ્રોનું દોરડા આદિ દ્વારા બંધન થવાથી તેનું દુઃખ સહન કરવુ પડે છે "सत्थग्गिविसाभिघायगलगवलावलणमारणाणि य" શસ્ત્રથી, અગ્નિથી તથા વિષથી મૃત્યુ થઇ જવાનું, ગળું અને શીંગડાં મરડાઈ જવાને કારણે મરણ થવાનું, "गलजालुच्छिप्पणाणि य" ગલ (માછલી મારવાનો કાંટો) અને જાળથી પોતાના સ્થાનેથી અલગ કરવાનું, "पउलणविकप्पणाणि य" અગ્નિમાં રંધાવાનું, દરેક અંગનાં છેદાવાનું, "जावज्जीवगबंधणाणि य" જીવે ત્યાં સુધી દોરડાં કે સાંકળ વડે બાંધાવાનું, "पंजरनिरोहणाणि य" પિંજરામાં પૂરાવાનું, "सजूहनिद्घाडणाणि य" વારંવાર પોતાના સમૂહમાંથી બહાર લઈ જવાનું, "धमणाणि य"

पृथक्करणानीत्यर्थः, 'निः' पूर्वकस्य 'सृ' धातोः 'धाढ' आदेशेकृतेऽपि पुनर्निरुपसर्गपूर्वकनिर्देशः पौनः पुन्यार्थसूचकः, 'धमणाणि' अग्नौ प्रक्षिप्य भस्त्रादिभिर्धमनानि । दोहणाणि' दोहनानि ''कुदंडगलबंधणाणि' कुदण्डगलबन्धनानि=कुदण्डस्य=वक्रकाष्ठस्य गले=कण्ठे वन्धनानि 'वाडगपरिवारणाणि य' वाटकपरिवारणानि=वाटके निरोधनानि 'पंकजलनिमज्जणाणि' पङ्कजलनिमज्जनानि=पङ्कमयजले निमज्जनानि ब्रोडनानि 'वारिप्पवेसणाणि' वारिप्रवेशनानि=जलप्रक्षेपणानि 'ओवायनिभंगविसमणिवडणदवग्गिजालदहणाइयाइं य' अवपातनिभङ्गविषमनिपतनदवाग्निज्वालादहनादिकनि च-अवपातेन=गर्तादिषु निपातेन यो निभङ्गः=अङ्गोपाङ्गः भञ्जनम्, अपि च-विषमेभ्यः=विषमप्रदेशेभ्यो गिरिवृक्षादिभ्यो निपतनं, तथा दवाग्निज्वालाभिर्दहनं चेति द्वन्द्वः, तानि आदिर्येषां तानि =स्वस्वजातियरोगानङ्कादीनि तान्येवम्प्रकाराणि दुःखानि प्राप्नुवन्ति ॥सू०३९॥

(धमणाणि य) अग्नि में प्रक्षिप्त करके भस्त्रा आदि से धोका जाना, (दोहणाणि य) स्तनों का दोहन होना, (कुदंड गलबंधणाणि य) कोढे वक्र-काष्ठ का गले में बांधा जाना-लटकाया जाना, (वाडगपरिवारणाणि य) कांटों आदि की वाड लगाकर किसी स्थानपर रोका जाना, (पंकजलनिमज्जणाणि य) पंक युक्त जल में फँस जाना, (वारिप्पवेसणाणि य) वारिप्रवेशन-वरसते हुए पानी में खड़े रहना अथवा तलाब वगैरह के पानी में हठात् प्रविष्ट कराया जाना, अथवा पानी में डूब कर मर जाना, (ओवायणिभंगविसमणिवडण-दवग्गिजाल दहणाइयाइं य) किसी गर्त्त खड्डा आदि में गिर जाने से अंग उपांगों का टूट जाना, पर्वत आदि के ऊँचे स्थानों से गिर जाना, दावाग्नि में जल जाना, इत्यादि नाना प्रकार के दुःखों को तिर्यञ्च गति के जीव भोगते हैं ॥सू. ३९॥

અગ્નિમાં નાખીને અણીદાર સળિયા આદિ વડે વીંધાવાનું, "दोहणाणि य" આંચળોમાંથી દૂધ દોઈ લેવાનું, "कुदंडगलबंधणाणि य" ગળામાં આડાં લટકાવવાનું, "वाडगपरिवारणाणि य" કાદવવાળા જળમાં ખૂંચી જવાનું "वारिप्पवेसणाणि य" વારિ પ્રવેશન-વરસતા વરસાદમાં ઉભા રહેવાનું અથવા તળાવ વગેરેના પાણીમાં બળ જબરીથી પ્રવેશ કરવાનું. "ओवायणिभंगविसमणिवडण-दवग्गिजालदहणाइयाइं य" કોઈ ખાડા આદિમાં પડી જવાથી અંગ ઉપાંગો તૂટી જવાનું, પર્વત આદિ ઊંચાં સ્થાનો પરથી પડી જવાનું, દાવાગ્નિમાં બળી જવાનું, ઇત્યાદિ વિવિધ પ્રકારનાં દુઃખો તિર્યંચ ગતિના જીવો ભોગવે છે॥સૂ ૩૯॥

उपसंहरन्नाह—'एवं ते' इत्यादि ।

मूलम्—एवं ते दुक्खसयसंपलित्ता नरगाओ आगया इहं सावसेसकम्मा तिरिक्खपंचिंदिएसु पावेंति पावकारी कम्माइं, पमायरागदोसबहुसंचियाइं अईव असायकक्कसाइं ॥ सू० ४० ॥

टीका—एवम्=उक्तप्रकारैः ते = जीवा प्राणातिपातकारकाः 'दुक्खसयसंपलित्ता' दुःखशतसम्प्रदीप्ताः=दुःखशतैः सम्प्रदीप्ताःसन्तप्ताः 'नरगाओ' नरकात् -इह=तिर्यग्लोके 'आगया' आगताः=उत्पन्नाः 'सावसेसकम्मा' सावशेषकर्माणः=अवशिष्टपापकर्माणः 'पावकारी' पापकारिणः 'तिरिक्खपंचिंदिएसु' तिर्यक् पञ्चेन्द्रियेषु 'पमाय-रागदोसबहुसंचियाइं' प्रमादरागद्वेषबहुसञ्चितानि-प्रमादः=विषयाद्यभिष्वङ्गलक्षणः, रागः=मायालोभलक्षणः, द्वेषःक्रोधमानलक्षणः, तैः बहूनि सञ्चितानि=उपार्जितानि 'अईव' अतीव=अत्यन्तम् 'असायकक्कसाइं' अशातकर्कशानि = अशातेषु=अशातवेदनीयकर्मोदयप्रभवेषु दुःखेषु कर्कशानि= कठोराणि 'कम्माणि' कर्माणि=कर्मजन्यानि दुःखानि 'पावेंति' प्राप्नुवन्ति,

---

अब उपसंहार करते हुए सूत्रकार कहते हैं-'एवं ते' इत्यादि ।

टीकार्थ-(एवं) इस प्रकार से (ते) वे प्राणातिपातकारक जीव (दुक्खसयसंपलित्ता) सैकड़ों दुःखों से सन्तप्त होकर (नरगाओ) नरक से (इह) इस तिर्यग्लोक में (आगया) उत्पन्न होते हैं और (सावसेसकम्मा) पापकर्म उनका अवशेष रहने के कारण वे (तिरिक्ख पंचिंदिएसु) तिर्यञ्च पंचेन्द्रियों में (पमाय - रागदोसबहुसंचियाइं) विषयाद्यभिष्वङ्गरूप प्रमाद से मायालोभरूप राग से और क्रोधमानरूप द्वेष से उपार्जित किये गये (अईव असाय कक्कसाइं कम्माइं) अशात कर्कश कर्मों

હવે ઉપસંહાર કરતાં સૂત્રકાર કહે છે-"एवं ते" ઈત્યાદિ-

ટીકાર્થ-"एवं" આ પ્રમાણે "ते" તે પ્રાણવધ કરનાર જીવ "दुक्खसयसंपलित्ता" સેકડો દુઃખોથી દુઃખી થઈને "नरगाओ" નરકમાંથી "इह" આ તિર્યંગ્લોકમાં "आगया" ઉત્પન્ન થાય છે અને "सावसेसकम्मा" તેમના પાપકર્મ બાકી રહેલ હોવાથી તેઓ "तिरिक्खपंचिदिएसु" તિર્યંચ પંચેન્દ્રિયોમાં "पमाय रागदोसबहुसंचियाइं" વિષયાદિની અભિલાષા રૂપ પ્રમાદથી, માયા લોભ રૂપ રાગથી, અને ક્રોધમાન રૂપ દ્વેષથી ઉપાર્જિત કરેલ "अईव असाय कक्कसाइं कम्माइं" અશાતા કર્કશ કર્મોને અશાતા વેદનીય કર્મોદયને કારણે ઉપાર્જિત

प्राणिवधकारकाः नरकात्प्रत्यागतास्तिर्यक्पञ्चेन्द्रिययोनिषु समुत्पन्नाः कठोरतराणि दुःखान्यनुभवन्तीति सङ्कलितोऽर्थः ॥ सू० ४० ॥

तिर्यक् पञ्चेन्द्रियदुःखानि वर्णयित्वा साम्प्रतं चतुरिन्द्रियदुःखानि वर्णयन्नाह—'भमर' इत्यादि ।

मूलम्—भमर-मसग-मच्छियाइएसु य जाइकुलकोडिसयसहस्सेहिं नवहिं चउरिंदियाण तहिं तहिं चेव जम्मण मरणाणि अणुहवंता कालं संखिज्जं भमंति नेरइयसमाण तिव्वदुक्खाफरिसरसणघाणचक्खुसहिया ॥ सू० ४१ ॥

टीका—'भमर-मसग-मच्छियाइएसु' भ्रमरमशकमक्षिकादिकेषु = प्रसिद्धेषु 'चउरिंदियाण' चतुरिन्द्रियाणां 'नवहिं' नवसु=नवसंख्यकेषु 'जाइकुलकोडिसयसहस्सेहिं' जातिकुलकोटिशतसहस्रेषु = जातौ = चतुरिन्द्रियजातौ यानि कुलानि=भ्रमराद्यनेकाकाराणि, तेषां कोटयः=विभागाः=अन्तर्भेदाः तेषां शतसहस्रेषु=लक्षेषु=नवलक्षचतुरिन्द्रियजातिकुलकोटिषु इत्यर्थः, 'तहिं तहिं चेव'

को अशातवेदनीयकर्मोदयसे उद्भूत हुए दुखों में भी कठोतर कर्मजन्य-दुःखों को (पावेंति) भोगते हैं—अर्थात्—वे प्राणिवधकारक जीव नरकसे निकलकर तिर्यञ्चपंचेन्द्रियों में उत्पन्न होते हैं और वहां कठोर :खों को प्राप्त करते हैं ॥सू. ४०॥

वे पापी जीव चतुरिन्द्रिय जीवों में उत्पन्न होकर किस प्रकार के दुःखों को भोगते हैं जिसका वर्णन करते हैं-'भमर-मसग' इत्यादि।

टीकार्थ-(भमर-मसग-मच्छियाइएसु चउरिंदियाण नवहिं जाइकुलकोडिसयसहस्सेहिं) भ्रमर, मशक, मक्षिका आदि चतुरिन्द्रिय जीवों के नौ लाख जातिकुल कोटियों में (तहिं तहिं चेव जम्मणमरणाणि) वहीं वहीं

દુઃખો કરતા પણ વધારે કઠોર કર્મજન્ય દુખોને "पावेंति" ભોગવે છે. એટલે કે પ્રાણીવધ કરનાર જીવો નરકમાથી નીકળીને તિર્યંચ પંચેન્દ્રિયોમાં ઉત્પન્ન થાય છે અને ત્યાં વધારેમા વધારે આકરાં દુઃખો પ્રાપ્ત કરે છે ॥સૂ ૪૦॥

તે પાપી જીવો ચતુરિન્દ્રિય જીવોમાં ઉત્પન્ન થઈને કેવા પ્રકારનાં દુઃખો ભોગવે છે તેનું વર્ણન કરતાં સૂત્રકાર કહે છે—"भमरमसग" ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—"भमर, मसग, मच्छियाइएसु चउरिंदियाणं नवहिं जाइकुलकोडिसयसहस्सेहिं" ભ્રમર, મશક, માખી આદિ ચૌઇન્દ્રિય જીવોની નવલાખ પ્રકારની જાતિઓમાં "तहिं तहि चेव जम्मणमरणाणि" તે તે યોનિયોમાં ચતુરિન્દ્રિય જીવોમાં

तत्र तत्रैव=चतुरिन्द्रियेष्वेव 'जम्मणमरणाणि' जन्ममरणानि 'अणुहवंता' अनुभवन्तः=कुर्वन्तः 'नेरइयसमाणतिव्वदुक्खा' नैरयिकसमानतीव्रदुःखाः=नारकैः समानानि=नरके नारकाः यादृशानि दुःखानि अनुभवन्ति तत्तुल्यान्येव तीव्राणि=कठोराणि असह्यानीत्यर्थः दुःखानि येषां ते तथा नारकदुःखतुल्यासह्यवेदनावन्तः, 'फरिस-रसण-घाण-चक्खुसहिया' स्पर्श-रसन-घ्राण-चक्षुः सहिताः=स्पर्शादीन्द्रियचतुष्टययुक्ताः 'संखिज्जं कालं' संख्यातं कालं=संख्यातवर्षसहस्रं कालं यावत् 'भमंति' भ्रमन्ति=पुनः पुनर्योनितो योनिं प्राप्नुवन्तीत्यर्थः॥४१॥

अथ त्रीन्द्रियदुःखानि वर्णयति 'तहेवे' त्यादि।

मूलम्—तहेव तेइंदिएसु कुंथु-पिवीलिया-उद्देहियाइएसु य जाइकुलकोडिसयसहस्सेहिं अट्ठाहिं अणूणगेहिं तेइंदिदियाण तहिं तहिं चेव जम्मण मरणाणि अणुहवंता कालं संखेज्जगं भमंति नेरइयसमाणतिव्वदुक्खा फरिस—रसण—घाण—संपउत्ता ॥ सू० ४२ ॥

टीका—'तहेव' तथैव=चतुरिन्द्रियेषु यथा दुःखान्यनुभवन्ति तथैव 'तेइंदिएसु' त्रीन्द्रियेषु 'कुंथु-पिवीलिया उद्देहियाइएसु' कुन्थु पिपीलिकोपदेहि-

---

पर–चतुरिन्द्रिय जीवों में ही–जन्म मरणों को (अणुहवंता) करते हुए वे पापी जीव (नेरइयसमाणतिव्वदुक्खा) नरकगति जैसे असह्य दुःखों को भोगते हुए (फरिस–रसण–घणचक्खुसहिया) स्पर्शन, रसना, घ्राण और चक्षु इन इन्द्रियों से युक्त हुए ये चतुरिन्द्रिय जीव (संखिज्जं कालं) संख्याता हजार वर्षतक (भमंति) उसी योनि में जन्म मरण करते रहते हैं ॥ सू. ४१ ॥

अब त्रीन्द्रिय जीवों के दुःखों को वे भोगते हैं ऐसा वर्णन सूत्रकार

જ જન્મ મરણ "अणुहवंता" અનુભવતા તે પાપી જીવો "नेरइयसमाणतिव्वदुक्खा" નરક ગતિ જેવાં અસહ્ય દુઃખો ભોગવે છે. અને "फरिस–रसण–घाण–चक्खुसहिया" સ્પર્શન, રસના, ઘ્રાણ, અને ચક્ષુ એ ચાર ઈન્દ્રિયોથી યુક્ત તે ચતુરિન્દ્રિય જીવો "सखिज्ज काल" સંખ્યાત હજાર વર્ષ સુધી "भमंति" તે યોનિમાં જન્મ મરણ અનુભવ્યા કરે છે, ॥सू–४१॥

હવે તે ત્રીન્દ્રિય જીવો જે દુઃખો ભોગવે છે તેનું સૂત્રકાર વર્ણન કરે

कादिकेषु=कुन्थुः=क्षुद्रजन्तुविशेषः, पिपीलिका=प्रसिद्धा, 'उद्देहिया' उपदेहिका ='उदेही' इति भाषा प्रसिद्धा, इत्यादिकेषु 'तेइंदियाण' त्रीन्द्रियाणां, 'अणूणगेहिं' अन्यूनकेषु=पूर्णेषु 'अट्ठहिं' अष्टसु 'जाइकुलकोडिसयसहस्सेहिं' जातिकुलकोटिशतसहस्रेषु–जातौ=त्रीन्द्रियजातौ यानि कुलानि = कुन्थुपिपीलिकाद्याकाराणि, तेषां कोटयः=विभागाः=अन्तर्भेदाः, तेषां शतसहस्रेषु लक्षेषु परिपूर्णाष्टलक्षत्रीन्द्रियजातिकुलकोटिषु–इत्यर्थः, 'तहिं तहिं चेव' तत्र तत्रैव त्रीन्द्रियेषु 'जम्मणमरणाणि' जन्ममरणानि 'अणुहवंता' अनुभवन्तः, 'नेरइयसमाणतिव्वदुक्खा' नैरयिकसमानतीव्रदुःखा=नरकसदृशदुःखयुक्ताः 'फरिस–रसण–घाण–संपउत्ता' स्पर्श रसनघ्राणसम्प्रयुक्ता=स्पर्शादिभिस्त्रिभिरिन्द्रियैर्युक्ताः 'संखेज्जगं' संख्यातकं=संख्यातवर्षसहस्रं कालं यावत् 'भमंति' भ्रमन्ति ॥सू०४२॥

करते हैं–'तहेव' इत्यादि।

टीकार्थ–(तहेव) जिस तरह पापी जीव चतुरिन्द्रिय जीवों में जन्म मरण करके दुःखों को भोगते हैं उसी तरह वे (कुंथु पिवीलिया उद्देहियाइएसु) कुंथु, पिपीलिका, उदेही आदिक त्रीन्द्रिय जीवों में कि जिन (तेइंदियाण) तेन्द्रिय जीवों की (अणूणगेहिं अट्ठहिं जाइकुलकोटिसयसहस्सेहिं) उन पूर्ण आठ लाख जातिकुल कोटियों में (तहिं तहिं चेव जम्ममरणाणि अणुहवंता) बार बार वहीं पर जन्म मरणों को करते हुए (नेरइयसमाणतिव्वदुक्खा) नरकगति जैसे असह्य दुःखों को भोगते हुए इनके (फरिस–रसण–घाण संपउत्ता) स्पर्शन, रसना और घ्राण इन तीन इन्द्रिय युक्त हुए ये तेन्द्रिय जीव (संखेज्जं कालं) संख्यात हजार वर्षों तक (भमंति) उसी पर्याय में परिभ्रमण करते हैं ॥सू०४२॥

છે—"तहेव" ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ–"तहेव" જેમ પાપી જીવો ચતુરિન્દ્રિ જીવોમાં જન્મ મરણ પામીને દુઃખો ભોગવે છે તેમ તેઓ "कुंथुपिवीलियाउद्देहियाइएसु" કુંથુ, કીડી, ઉધઇ આદિક ત્રિન્દ્રિય જીવોમાં જન્મ લે છે અને 'तेइंदियाण" તેન્દ્રિય જીવોની "अणूणगेहिं अट्ठहिं जाइकुलकोटिसयसहस्सेहिं" આઠલાખ પ્રકારની જાતિયોનિમાં "तहिं तहिं चेव जम्ममरणाणि अणुहवंता" વારવાર જન્મ મરણ અનુભવતાં "नेरइयसमाणेतिव्वदुक्खा" નરક ગતિ જેવાં અસહ્ય દુઃખો ભોગવે છે. જેમને "फरिस–रसण–घाण सपउत्ता" સ્પર્શન, રસના અને ઘ્રાણ એ ત્રણ ઇન્દ્રિયોજ હોય છે. એવા તે તેન્દ્રિય જીવો "सखेज्जकालं" સંખ્યાત હજાર વર્ષો સુધી "भमंति" તે જ યોનિમાં પરિભ્રમણ કર્યા કરે છે॥ સૂ–૪૨ ॥

अथ द्वीन्द्रियदुःखानि वर्णयन्नाह—'गंडूलय' इत्यादि ।

मूलम्—गंडूलय—जलूय—किमिय—चंदणग—माइएसु य जाइकुलकोडिसयसहस्सेहिं सत्तहिं अणूणगेहिं बेइंदियाण तहिं तहिं चेव जम्मणमरणाणि अणुहवंता कालं संखिज्जगं भमंति नेरइयसमाणतिव्व दुक्खा फरिस-रसण-संपउत्ता॥सू०४३॥

टीका—त्रीन्द्रियात् समागताः द्वीन्द्रियेष्वपि 'गंडूलय—जलूय किमिय—चंदणगमाइएसु' गण्डोलक—जलूक—कृमि—चन्दन—कादिकेषु—गण्डोलाः=गोमयादिषु समुत्पन्नाः कीटविशेषाः, जलूकाः=जलजन्तुकाः 'जोंक' इति प्रसिद्धाः कृमयः='लट' 'चूरणिया' इति प्रसिद्धाः, चन्दनकाः=शङ्खजातिविशेषाः, ते आदिर्येषां ते तथा तेषु 'बेइंदियाण' द्वीन्द्रियाणां 'सत्तहिं' 'सप्तसु जातिकुलकोटिशतसहस्रेषु अन्यूनेषु जन्ममरणानि अनुभवन्तो नारकसमानतीव्रदुःखाः स्पर्शरसनेतीन्द्रियद्वय सम्प्रयुक्ताः संख्यातवर्षसहस्रलक्षणं कालं यावत् भ्रमन्ति ॥४३॥

अब द्वीन्द्रिय जीवों में उत्पन्न होकर के वे किन किन दुःखों को भोगते हैं इसका सूत्रकार वर्णन करते हैं—'गंडूल य' इत्यादि ।

टीकार्थ—तेन्द्रिय योनिसे निकल कर वे पापी जीव द्वीन्द्रिय जीवों में (गंडूलय—जलूय—किमिय—चंदणग—माइएसु) गण्डोलक, जलोक, कृमि, और शंख आदिकों में भी कि जिनकी (सत्तहिं जाइकुलकोडि सयसस्सेहिं) सातलाख जातिकुल कोटि हैं (तहिं २) वहीं वहीं बार २ (जम्ममरणाणि अणुहवंता) जन्म मरण करते हुए (नेरइय समाणतिव्वदुक्खा) नारकियों जैसा तीव्र दुःख भोगते हुए (फरिस—रसण संपउत्ता) स्प-

---

હવે દ્વીન્દ્રિય જીવોમાં ઉત્પન્ન થઈને તેઓ કયાં કયાં દુઃખો ભોગવે છે, તેનું સૂત્રકાર વર્ણન કરે છે—"गडूलय" ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—તેન્દ્રિય યોનિમાંની નીકળીને તે પાપી જીવો "गंडूलय—जलूय—किमिय—चंदणग—साइएसु" ગંડોલક, જલૌક, કૃમિ, શંખ આદિ દ્વીન્દ્રિય જીવોમાં જન્મ લે છે. તે દ્વીન્દ્રિય જીવોના પણ "सत्तहिं जाइकुलकोडिसयसहस्सेहिं" જાતિ પ્રમાણે સાત લાખ પ્રકારો છે. "तहिं तहिं" તે દરેક જાતિમાં વારંવાર 'जम्ममरणाणि अणुहवंता" જન્મ મરણ અનુભવતા " नेरइयसमाणतिव्वदुक्खा " તેઓ નારકીઓ જેવાં આકરાં દુઃખો ભોગવે છે. " फरिसरसणसंपउत्ता " સ્પર્શન અને રસના ઇન્દ્રિ-

एवमेव एकेन्द्रियत्वमपि ते प्राप्ताः यासु यासु योनिषु यथा भ्रमन्ति तदाह —'पत्ता' इत्यादि।

मूलम्—पत्ता एगिंदियत्तणंपि य पुढवि जल जलण-मारुय वणप्फइसुहुमबायरं च पज्जत्तमपज्जत्तं पत्तेय सरीरणाम साहारणं च पत्तेयसरीरजीवेसु य तत्थ वि कालमसंखेज्जं भमंति अणंतकालं च अणंतकाए, फासिंदियभावसंपउत्ता दुक्खसमुदयं इमं अणिट्ठं पावंति पुणो पुणो तहिं तहिं चेव परभवतरुगणगहणे ॥ सू० ४४ ॥

टीका—'एगिंदियत्तणंपि य' एकेन्द्रियत्वमपि च='अपि चे' ति समुच्चयार्थः। एवं च न केवलं पञ्चेन्द्रियचतुरिन्द्रियादित्वमेव प्राप्ताः, अपि तु एकेन्द्रियत्वमपि 'पत्ता' प्राप्ताः सन्तः दुःखसमुदयं प्राप्नुवन्तीत्यग्रेण सम्बन्धः।

र्शन और रसना इन दो इंद्रियों से युक्तवाले ये द्वीन्द्रिय जीव (संखेज्जंकालं) संख्यात हजार वर्ष प्रमाण कालतक (भमंति) इसी द्विन्द्रिय की पर्याय में भ्रमण करते हैं ॥ सू-४३ ॥

इसी तरह एकेन्द्रिय की पर्याय को भी प्राप्त हुए वे पापी जीव जिन २ योनियों में जिस २ तरह से परिभ्रमण करते हैं अब सूत्रकार इस बात को प्रकट करते हैं–'पत्ता एगिंदियत्तणंपि य' इत्यादि।

टीकार्थ–(एगिंदियत्तणंपि य पत्ता) वे पापी जीव केवल पंचेन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय आदि पर्यायोंको ही प्राप्त नहीं करते हैं किन्तु एकेन्द्रिय पर्यायको प्राप्त करते हैं और वहां वे (दुक्खसमुदयं पावंति) दुःख समूह को भोगते

योथी युक्त ते द्वीन्द्रिय જીવો "संखेज्जकालं" સંખ્યાત હજાર વર્ષ સુધી "भमंति" એજ દ્વીન્દ્રિય યોનિમાં ભ્રમણ કરે છે ॥ सू-४३॥

એજ પ્રમાણે એકેન્દ્રિયની પર્યાયમાં ઉત્પન્ન થઈને તે પાપી જીવો જે જે યોનિમા જે જે રીતે પરિભ્રમણ કરે છે, તે વાતનું સૂત્રકાર હવે વર્ણન કરે છે–"एगिंदियत्तणंपि य" ઇત્યાદિ.

"एगिंदियत्तणंपि य पत्ता" તે પાપી જીવો ફક્ત પંચેન્દ્રિય, ચતુરિન્દ્રિય પર્યાયોને જ પ્રાપ્ત કરતા નથી પણ એકેન્દ્રિય પર્યાયને પણ પ્રાપ્ત કરે છે, અને ત્યાં તેઓ "दुक्खसमुदयं पावंति" દુઃખોના સમૂહને ભોગવ્યા કરે છે, તે

कीदृशमेकेन्द्रियत्वम् ? इत्याह–पुढवीजलजलणमारुयवणप्फइ' पृथिवी–जलज्व लनमारुतवनस्पतिकं, पृथिव्यप्तेजोवायुवनस्पतिरूपम् । तदपि पृथिव्यादिकं कीदृशम् ? इत्याह–'सुहुमबायरं' सूक्ष्मबादरं=सूक्ष्मबादरनामकर्मोदयसम्पाद्यम् 'पज्जत्तमपज्जत्तं' पर्याप्तमपर्याप्तं–पर्याप्ताऽपर्याप्तनामकर्मोदयसम्पाद्यम् । तथा 'पत्तेय सरीरणामसाहारणं' प्रत्येकशरीरनामसाधारणं, तत्र प्रत्येकशरीरनाम–यदुदयाज्जीवं जीवं प्रति भिन्नं शरीरमुपजायते तत्–पृथिव्यप्तेजोवायु–प्रत्येक वनस्पतिरूपं; साधारणं=साधारणनाम=यदुदयाद् अनन्तानां जीवानामेकं शरीरं भवति

रहते हैं, इस प्रकारका संबंध यहां लगा लेना चाहिये । एकेन्द्रियों के भेद इस प्रकार हैं–(पुढवि जल–जलण–मारुय–वणप्फइ सुहुमबायरं च) पृथिवी जल, अग्नि, वायु और वनस्पति ये सब एकेन्द्रिय जीव हैं इनके सूक्ष्म और बादर ये दो भेद हैं। सूक्ष्म नामकर्म के उदय से जीव पृथिव्यादि रूप सूक्ष्म एकेन्द्रिय और बादर नाम कर्म के उदय से बादर पृथिव्यादि एकेन्द्रिय होता है। (पज्जत्तमपज्जत्तं) ये दोनों प्रकार के जीव पर्याप्त और अपर्याप्त होते हैं। पर्याप्त नाम कर्म के उदय से जीव पर्याप्त होता है और अपर्याप्त नामकर्म के उदय से अपर्याप्त होता है। (पत्तेयसरीरणामसाहारणं च) जिसके उदय से जीव जीव का भिन्न २ शरीर होता है वह प्रत्येक शरीर नामकर्म है। यह प्रत्येक शरीर नामकर्म का उदय पृथिवी अप्तेज वायु और प्रत्येक वनस्पति के होता है। तथा जिस के उदय से अनंत जीवों का एक ही शरीर होता है वह साधारण नामकर्म

પ્રકારનો સંબંધ અહીં સમજી લેવાનો છે. એકેન્દ્રિયોના ભેદ આ પ્રમાણે છે– "पुढवि जल–जलण–मारुय–वणप्फइसुहुमबायरं च" પૃથિવી, જળ, અગ્નિ, વાયુ અને વનસ્પતિ એ સઘળા એકેન્દ્રિય જીવો છે તેના બે ભેદ છે–સૂક્ષ્મ અને બાદર સૂક્ષ્મ નામકર્મના ઉદયથી જીવ પૃથિવી આદિરૂપ સૂક્ષ્મ એકેન્દ્રિય અને બાદર નામકર્મના ઉદયથી બાદર પૃથિવી આદિ એકેન્દ્રિય થાય છે. "पजत्तमपज्जत्तं" તે બન્ને પ્રકારના જીવ પર્યાપ્ત અને અપર્યાપ્ત હોય છે. પર્યાપ્ત નામ કર્મના ઉદયથી જીવ પર્યાપ્ત થાય છે અને અપર્યાપ્ત નામકર્મના ઉદયથી અપર્યાપ્ત થાય છે "पत्तेयसरीरणामसाहारणं च" જેના ઉદયથી દરેક જીવનું ભિન્ન ભિન્ન શરીર હોય છે તે પ્રત્યેક શરીર નામકર્મ કહેવાય છે. તે પ્રત્યેક નામકર્મનો ઉદય પૃથિવી, જળ, તેજ, વાયુ અને પ્રત્યેક વનસ્પતિને હોય છે. તથા જેના ઉદયથી અનંત જીવોનું એક જ શરીર હોય છે તે સાધારણ નામકર્મ છે, અને તેનો ઉદય અનન્તકાય વનસ્પતિમાં જ હોય છે.

तत्-अनन्तकायरूपम् । 'तत्थ वि' तत्राऽपि 'पत्तेयसरीरजीवेसु य' प्रत्येकशरीरजीवेषु = पूर्वोक्तपृथिव्यादिप्रत्येकवनस्पतिपर्यन्तेषु 'असंखेज्जं' असंख्येयम् असंख्यातावसर्पिणी रूपं कालं यावत् भ्रमन्ति । 'अणंतकाए' अनन्तकाये साधारणवनस्पतिशरीरे कन्दमूलादिषु 'अनंतकालं' अनन्तकालम्=अनन्तावसर्पिण्युत्सर्पिणी लक्षणं भ्रमन्ति=पर्यटन्ति । उक्तञ्च—

"असंखोसप्पिणि उस्सप्पिणी उ अगिंदियाण य चउण्हं ।
ताओ चेव अणंता, वणस्सईए उ बोद्धव्वा ॥ १ ॥" इति ॥

छाया—असंख्यावसर्पिण्युत्सर्पिण्य एकेन्द्रियाणां च चतुर्णाम् ।
ताश्चैवाऽनन्ता वनस्पतौ तु बोद्धव्याः ॥ १ ॥" इति ।

है, और इसका उदय अनन्तकायवनस्पति के होता है । (तत्थवि पत्तेयसरीरजीवेसु) पापी जीव इन पृथिव्यादि से लेकर प्रत्येक वनस्पति की योनियों में (असंखेज्जं कालं) असंख्यात अवसर्पिणी असंख्याय उत्सर्पिणी कालतक जन्म मरण के दुःख भोगते हैं । तथा (अनंतकाए अणंतकालं च) साधारण वनस्पतिरूप कन्द मूलादिकों में अनंत उप्सर्पिणी और अनंत अवसर्पिणी कालतक जन्म मरण के कष्ट भोगते हैं। कहा भी है—

"असंखोसप्पिणि उस्सप्पिणी उ एगिंदियाण य चउण्हं ।
ताओ चेव अणंता, वणस्सईए उ बोद्धव्वा ॥१॥" इति ॥

एकेन्द्रिय पृथिवी आदि चारों में घूमने का काल असंख्यात उत्सर्पिणी अवसर्पिणी है तथा वनस्पति में-साधारण-अनंतकाय में-घूमने का काल अनंत उत्सर्पिणी अवसर्पिणीरूप है ॥१॥

"तत्थवि पत्तेयसरीरजीवेसु" પાપી જીવ આ પૃથિવી આદિથી લઈને પ્રત્યેક વનસ્પતિની યોનીમાં "असंखेज्जं कालं" અસંખ્યાત અવસર્પિણી અસંખ્યાત ઉત્સર્પિણી કાળ સુધી જન્મ મરણનાં દુઃખો ભોગવે છે, તથા "अणंत काए अणंतकालं च" સાધારણ વનસ્પતિરૂપ કન્દમૂળ આદિમાં અનંત ઉત્સર્પિણી અને અનંત અવસર્પિણી કાળ સુધી જન્મ મરણનાં કષ્ટો ભોગવે છે. કહ્યુ પણ છે.

"असंखोसप्पिणि उस्सप्पिणी उ एगिंदियाण य चउण्हं ।
तओ चेव अणंता, वणस्सईए उ बोद्धव्वा ॥ १ ॥ इति ॥

એકેન્દ્રિય પૃથિવી આદિ ચારેમાં પરિભ્રમણનો કાળ અસંખ્યાત ઉત્સર્પિણી અવસર્પિણી છે, તથા વનસ્પતિમાં-સાધારણ-અનંતકાયમા પરિભ્રમણનો કાળ અનંત ઉત્સર્પિણી અવસર્પિણી રૂપ ॥૧॥

कीदृशाः सन्तो भ्रमन्ति ? इत्याह—'फासिंदियभावसंपउत्ता' स्पर्शेन्द्रियभावसम्प्रयुक्ताः=स्पर्शमात्रैकेन्द्रियत्वं प्राप्ताः, 'तहिं तहिं चेव' तत्र तत्रैव =वनस्पतिकाय एव, कीदृशे ? इत्याह—'परभवतरुगणगहणे' परभवतरुगणगहने=पराः=प्रकृष्टाः, सर्वोत्कृष्टकायस्थितिकत्वात् भवाः=उत्पत्तिस्थानानि येषु ते तादृशाः तरुगणाः=वृक्षगुच्छगुल्मादिसमूहास्तैर्गहने=गम्भीरे 'पुणो पुणो' पुनः पुनः=मुहुर्मुहुः 'इमं' वक्ष्यमाणम् 'अणिट्ठं' अनिष्टं=प्रतिकूलं दुःखसमुदयं =दुःखसमूहं=नानाविधमशातवेदनीयरूपं 'पावंति' प्राप्नुवन्ति । सर्वासां जातीनां कुलकोटयो यथा —

"एगिंदिएसु पंचसु, बारस–सत्त–तिग–सत्त–अट्ठवीसा य ।
विगलेसु सत्त अड नव, जल–खह–चउप्पय–उरग–भुयगेसु ॥ १ ॥
अद्धत्तेरस बारस, दस दस नवगं नरामरे नरए ।
बारस छवीस पणवीस हुंति कुलकोडिलक्खाइं ॥ २ ॥" इति ।

(फासिंदिय भावसंपउत्ता) ये सब जीव एक स्पर्शन इन्द्रिय वाले

ही होते हैं । और (तहिं तहिं चेव) उसी वनस्पतिकाय में कि जहां (परभवतरुगणगहणे) वृक्ष, गुच्छ, गुल्म आदि समूहरूप भव सर्वोत्कृष्ट हैं और उनसे जो गहन बना हुआ है (पुणो पुणो) बार २ (इमं) इन वक्ष्यमाण (अणिट्ठं) अनिष्ट–प्रतिकूल (दुक्खसमुदयं) दुःखों को–नानाविध अशात वेदनीय रूप कष्टों को (पावंति) पाते हैं । समस्त जातियों के कुल कोटियों की संख्या इस प्रकार हैं—

पृथ्वीकाय के बारह लाख, अप्काय के सात लाख, तेउकाय के तीन लाख, वायुकाय के सात लाख, वनस्पतिकाय के अट्ठाईस लाख,

---

"फासिंदिय भावसंपउत्ता" ते બધા જીવો એકલી સ્પર્શન ઈન્દ્રિયથી જ યુક્ત હોય છે, અને "तहिं तहिं चेव" તે જ વનસ્પતિકાયમાં કે જ્યાં "परभव तरुगण गहणे" વૃક્ષ, ગુચ્છ, ગુલ્મ આદિ સમૂહરૂપ ભવ સર્વોત્કૃષ્ટ છે અને તેમનાથી જે ગહન બનેલ છે "पुणो पुणो" વારંવાર "इमं' આ પ્રમાણે "अणिट्ठं" અનિષ્ટ–પ્રતિકૂળ "दुक्खसमुदयं" દુઃખોને વિવિધ આશાતા વેદનીય રૂપ કષ્ટોને "पावंति" અનુભવે છે. સઘળી જાતિયોની યોનિયોના પ્રકારોની સંખ્યા નીચે પ્રમાણે છે–

પૃથ્વીકાયના બાર લાખ, અપ્કાયના સાત લાખ, તેઉકાયના ત્રણ લાખ, વાયુકાયના સાત લાખ, વનસ્પતિકાયના અઠ્ઠાવીસ લાખ, દ્વિઈન્દ્રિય જીવોના

पृ १ अ२ ते३ वा४ व. ५

छाया—एकेन्द्रियेषु पञ्चसु, द्वादश–सप्त–त्रिक–सप्त–अष्टविंशतिश्च ।

२६ ३६ ४६.

विकलेषु सप्त–अष्ट–नव, जल–ख–चतुष्पद–उरोग–भुजगेषु ॥१॥

अर्द्धत्रयोदश [१२॥] द्वादश, दशदशनवकं नरामरयोर्नरके ।

द्वादश षड्विंशतिः पञ्चविंशति,–र्भवन्ति कुलकोटिलक्षाणि ॥२॥" ॥४४॥

अथ दुःखसमुदयमाह—'कोद्दाले' त्यादि ।

मूलम्—कोद्दाल-कुलिय-दालण-सलिल-मलण-खुंभण-रुंभण-अणलाणिल-विविहसत्थघट्टण परोप्पराभिहणण-मारण-विराहणाणि य अकामगाइं-परप्पओगोदीरणाहिय कज्जप्पओयणेहि य पेस्स पसु निमित्त ओसहाहारमाइएहिं उक्खणण-उक्कत्थण-पयण-कोट्टण-पीसण-पिट्टण--भज्जण-गालण-आमोडण--सडण--फुडण-भंजण-छेयण-तच्छण-विलुंचण--पंतज्झोडण-अग्गिदहणाइयाइं,

---

द्वीन्द्रिय जीवों के सात लाख, तेन्द्रिय जीवों के आठ लाख, चोइन्द्रिय जीवों के नौ लाख, जलचरों के साढा बारहलाख, खेचरों के बारह लाख, चतुष्पदों–थलचरों के दश लाख, उरगों के दशलाख, भुजगों के नौ लाख, मनुष्यों के बारह लाख, देवों के छव्वीस लाख और नरकों के पचीस लाख कुल कोटि हैं। कुलकोटि की व्युत्पत्ति "कुलानां कोटिः" इस प्रकार है। इसका तात्पर्य अपनी २ जाति में आकार आदि को लेकर विभाग से है, अर्थात्–पृथिवीकाय आदि जीवों के जो आकार हैं उन आकारों के जो और अन्तर्भेद हैं वे कुलकोटि शब्द के वाच्यार्थ हैं ॥सू-४४॥

સાત લાખ, તેન્દ્રિય જીવોના આઠ લાખ, ચતુરિન્દ્રિય જીવોના નવ લાખ, જળ-ચરોના સાડા બાર લાખ, ખેચરોના બાર લાખ,, ચતુષ્પદોસ્થળચરોના દશ લાખ, ઉરગોના દશ લાખ, ભુજગોના નવ લાખ, મનુષ્યોના બાર લાખ, દેવોના છવીસ લાખ, અને નારકીઓના પચીસ લાખ કુલકોટિ (પ્રકાર) છે. કુલ–કોટિની વ્યુત્પત્તિ "કુલાનાં કોટિ" થાય છે તેનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે–પોત પોતાની જાતિમાં આકાર આદિ પ્રમાણે પાડેલા વિભાગોને 'કુલકોટિ' કહે છે. એટલે કે પૃથિવીકાય આદિ જીવોના જે આકારો છે તે આકારોના બીજાં જે અન્તર્ભેદ છે તે કુલકોટિ શબ્દના વાચ્યાર્થ છે.॥ સૂ–૪૪॥

एवं ते भवपरंपरादुक्खसमणुबद्धा अडंति संसारबीहणकरे जीवा पाणाइवायनिरया अणंतकालं ॥सू० ४५॥

टीका—'कोद्दाल–कुलिय–दालण–सलिल–मलण–खुंभण–रुंभण अणलाणिल विविह सत्थघट्टण परोप्पराभिहणण मारण विराहणाणि' कुद्दालकुलिकदारण सलिल मलन क्षोभण रोधनानलानिल विविध शस्त्रघट्टनपरस्पराभिहननमारण-विराधनानि, तत्र-'कोद्दाल' कुद्दालः=भूविदारक शस्त्रविशेषः 'कुलिय' कुलिकं च हलविशेषस्ताभ्यां 'दालण' दारणं–खननम्, एतद् द्वयं पृथिवी वनस्पत्योर्वेदना कारणम् सलिलस्य=जलस्य मलन क्षोभणरोधनानि, तत्र–मलनं–मर्दनं, क्षोभणं=सञ्चालनं, 'रुंभण' रोधनं=निरोधनं तडागादौ, अनेनाप्कायवेदना व्यक्तीकृता,

---

पृथिवी आदि जीवों में वेदना के कारण क्या २ हैं? सूत्रकार अब इस विषय को स्पष्ट करते हैं—'कोद्दाल–कुलिय' इत्यादि।

टीकार्थ-(कोद्दाल-कुलिय-दालण-सलिलमलण-खुंभण-रुंभण-अणला-णिल-विविह-सत्थघट्टण परोप्पराभिहणणमारणविराहणाणि य) (कोद्दाल) कुद्दाल–कुदाली और (कुलिय) कुलिक–हल विशेष, (दालण) इनसे भूमिका विदारण करना–खोदना, ये दो पृथिवी और वनस्पति जीवों के वेदना के कारण हैं (सलिलमलण) पानी का मर्दन करना, (खुंभण) चलाना, और (रुंभण) तडाग आदि में रोकना ये बातें अप्काय के जीवों के लिये वेदना के कारण हैं। चुल्ली आदि में पानी डालना आदि रूप जो क्रियाएँ की जाती हैं इसका नाम मर्दन है। क्षोभण शब्द का अर्थ चलाना है। कहीं पर भरे हुए पानी को बाहिर निकालने आदिरूप

હવે સૂત્રકાર ને વિષયને સ્પષ્ટ કરે છે કે પૃથિવી આદિ જીવોમાં વેદ-નાનાં કારણો કયાં કયાં છે–" कोद्दाल–कुलिय " ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ–" कोद्दाल–कुलिय–दालण–सलिल–मलण–खुंभण–रुंभण–अणलाणिल–विविह–सत्थ घट्टण-परोप्पराभिहणण मारण विराहणाणि य " "कोद्दाल" કોદાળી અને "कुलिय" કુલિક–હળ વિશેષ વડે, "दालण" ભૂમિને ખોદવી તે પૃથિવી અને વનસ્પતિ જીવોને વેદનાનાં કારણો છે "सउलि मलण" પાણીનુ મર્દન કરવું "खुंभण" ચલાવવું અને "रुंभण" તલાવ આદિમાં રોકવું તે અપ્કાયના જીવો માટે વેદનાનું કારણ છે ચૂલ આદિમાં પાણી નાખવા વગેરેની જે ક્રિયાઓ થાય છે તેને મર્દન કહે છે. क्षोभण નો અર્થ ચલાવવું થાય છે. કોઇ જગ્યાએ ભરાઇ રહેલા પાણીને બહાર કાઢવાની જે ક્રિયા થાય છે. તેને ચલાવવું કહે

अनलश्च अनिलश्चेत्यनलानिलौ तयोः=अग्निवाय्वोः विविधैः शस्त्रैः स्वकायपरकायोभयकायलक्षणैः घट्टनम्=उपहननम्, अनेन-अग्निवाय्वोर्वेदना दर्शिता। तत्र-अग्नेः स्वकायशस्त्रं करीषाग्नेः काष्ठाग्निः, परकायशस्त्रं धूलिजलादिकम्। उभयकायशस्त्रम्=प्रज्वलत्करीषादिकम्। वायोः स्वकायशस्त्रं=पूर्वदिग्वायोः पश्चिमदिग्वायुः, इत्यादि रूपम्, परकायशस्त्रम् अग्न्यादिकम्, उभयकायशस्त्रम्=अग्निसन्तप्तवायुः-दृतिगतमिश्रवायुश्च, इत्यादिरूपम्। अचित्तमुखवातभृतः सन् दवरकेण गाढवद्धमुखो नद्यादिजले प्लाव्यमानो दृतिर्यावत् क्षेत्रतः प्रथमं हस्तशतं गच्छति तदवधि तद्गतो वायुरचित्त एव, तत ऊर्ध्वं द्वितीयहस्तशतपर्यन्तं मिश्रो भवति,

---

जो क्रिया है इसका नाम चलाना है। पानी को एकत्रित करके कुए, तडाग आदि में रोक देना इसका नाम रोधन है। ऐसी क्रियाओं से अप्काय को वेदना होती है। (अणलानिल विविह सत्थघट्टण) अग्निकाय और वायुकाय के वेदना के कारण स्वकाय, परकाय और उभयकाय विविधशस्त्र हैं। इनसे इनकी विराधना होती है। अग्नि का-करीष की अग्नि का काष्ठ की अग्नि स्वकायरूप शस्त्र है धूलि एवं जल आदि परकायरूप शस्त्र है, एवं प्रज्वलित करीष आदिक उभयकायरूप शस्त्र हैं। वायुका-पूर्वदिशा संबंधी वायु का पश्चिमदिशा संबंधी वायु स्वकाय शस्त्र है, अग्नि आदिक परकायशस्त्र हैं तथा अग्नि संतप्त वायु और मशक के भीतर रही हुई वायु ये उभयकायशस्त्र हैं। अचित्त मुख की वायु से भरा हुआ तथा डोरे से जिसका मुखबंद कर दिया गया है ऐसी दृति (मशक) जिस स्थानसे नदी के जल में छोडी जाती है वहां से लेकर तैरती

છે. પાણીને એકત્ર કરીને કૂવા, તળાવ આદિમાં રોકી લેવાની ક્રિયાનું નામ 'રોધન' છે તેવી ક્રિયાઓથી અપ્કાયને વેદના થાય છે. "अणलाणिल-विविह सत्थघट्टण" અગ્નિકાય અને વાયુકાયને વેદનાના કારણો સ્વકાય, પરકાય અને ઉભયકાય વિવિધ શસ્ત્રો છે. તેમના વડે તેમની વિરાધના થાય છે અગ્નિનું-કરીષની અગ્નિનું કાષ્ટની અગ્નિ-સ્વકાયરૂપ શસ્ત્ર છે, ધૂળ અને જળ આદિ પરકાયરૂપ શસ્ત્ર છે, અને પ્રજવલિત કરીષ આદિ ઉભયકાયરૂપ શસ્ત્ર છે. વાયુનું પૂર્વદિશાના વાયુનું પશ્ચિમ દિશાનો વાયુ સ્વકાય શસ્ત્ર છે, અગ્નિ આદિ પરકાય શસ્ત્ર છે, તથા અગ્નિથી સંતપ્ત વાયુ અને મશકની અંદર રહેલ હવા તે ઉભયકાય શસ્ત્ર છે. અચિત્ત વાયુથી ભરેલ તથા દોરીથી જેનું મુખ બંધ કરી દેવામાં આવ્યું છે એવી મશક જે જગ્યાએથી નદીના પાણીમાં છૂટી મૂકવામાં આવે છે ત્યાંથી શરૂ કરીને તરતી તરતી જ્યારે સો હાથ આગળ નીકળી

असौ मिश्रवायुरुभयकायशस्त्रं संभवति। अत्र हस्तशतगमनकालं परिभाव्यैकस्मिन्नपि स्थाने जलमध्यगतस्योक्त क्रमेणाचित्तत्वादिकं सूक्ष्मेक्षिकया विभावनीयम्। तथा परस्पराभिहननम्=तेजसा जलतापनं जलेनाग्निवापनमित्येवं रूपः सर्वेषां पृथिव्यादीनां परस्परमभिघातः, मारणं=विहिंसनं, विराधनं=पीडनं, तानि पृथि-

हुई जब वह सौ हाथ आगे निकल जाति है वहांतक तद्गत वायु अचित्त ही रहती है, बाद में इसके जब वह दूसरे सौ हाथ क्षेत्र पर्यन्त वहां से आगे को बहती हुई जाती है तब वहां तक वही वायु मिश्रवायु रूप होती है। यही मिश्रवायु उभयकायरूप शस्त्र में परिगणित हुआ है। यहां दृतिगति (मशक में रही हुई) वायु को जो अचित्त, मिश्र आदि रूप कहा गया है वह काल की अपेक्षा समझाना चाहिये, प्रथम सौ हाथ चलने में जितना समय लगता है उस समय को लेकर वह वायु जो दृति (मशक) में भरी हुई अचित्त रहती है, बाद में दूसरे सौ हाथ चलने में जितना समय लगता है उसको लेकर वह वायु सचित्ताचित्तरूप मिश्र हो जाती है। इस तरह सूक्ष्मरीति से विचार करने पर वायु में अचित्तता सचित्ताचित्तता सध जाती है "परोप्पराभिहणण" का तात्पर्य है अग्नि से जल का तपाना, जल से अग्नि का बुझाना, इत्यादि रूप से जो पृथिव्यादिकाय का परस्पर में अभिघात करना होता है वह 'परोप्पराभिहणण' है। (मारण) मारण शब्दका अर्थ है इनका विहिंसन करना। (विराहणाणि) विराधना का अर्थ है इन्हें पीड़ा पहुँचाना। इन पृथिवी

જાય ત્યાં સુધી તેની અંદર રહેલી હવા અચિત્ત રહે છે, ત્યાર પછી ત્યાથી પણ તરતી તરતી સો હાથ આગળ નીકળી જાય ત્યાં સુધીમા તે હવા મિશ્ર-વાયુરૂપ થઇ જાય છે. એજ મિશ્રવાયુ ઉભયકાયરૂપ શસ્ત્રમાં ગણાયેલ છે અહીં મશકમાં રહેલ હવાને અચિત્ત મિશ્ર આદિરૂપ બતાવવામાં આવેલ છે, તે કાળની અપેક્ષાએ સમજવાનું છે, પહેલાં સો હાથ ચાલવામાં જેટલો સમય લાગે છે. તે સમય સુધી તે મશકમાં ભરેલ હવા અચિત્ત રહે છે. ત્યાર બાદ બીજાં સો હાથનુ અંતર ચાલવામાં જેટલો સમય લાગે છે તેટલા સમય સુધીમાં તે વાયુ સચિત્તાચિત્ત રૂપ મિશ્ર થઇ જાય છે આ રીત સૂક્ષ્મ રીતે વિચાર કરતાં હવામાં અચિત્તતા તથા સચિત્તાચિત્તતા ને સમજી શકાય છે. "परोप्पराभिहणण" એટલે અગ્નિ વડે જળને ગરમ કરવું, જળથી અગ્નિને બુઝાવવી, ઈત્યાદિ રીતે પૃથિવ્યાદિ કાયનો પરસ્પરમા ઘાત થવાની જે ક્રિયા થાય છે તે "परोप्पराभिहणण" છે. મારણ "मारण" એટલે તેમની હત્યા કરવી. "विराहणाणि" વિરાધના કરવી એટલે તેમને પીડા પહોંચાડવી. તે પૃથિવી, જળ,

वीजलतेजोवायुकायदुःखानि 'अकामगाइं' अकामकानि=अवाञ्छनीयानि भवन्ति। पुनस्तान्येव विशदयति-' परप्पओगोदीरणाहि य ' परप्रयोगोदीरणाभिश्च=परेषां =स्वभिन्नानां जनानां यः प्रयोगः=व्यापारस्तेन उदीरणा=दुःखोत्पादनप्रेरणास्ताभिः-स्वप्रयोजनविरहेऽपि परकथनैः निष्प्रयोजनैरित्यर्थः, तथा-' कज्जप्पओयणेहि य ' कार्यप्रयोजनैश्च=आवश्यकप्रयोजनैश्च। कथम्भूतैरित्याह—' पेस्सपसुनिमित्तओसहाहारमाइएहिं ' प्रेष्यपशुनिमित्तौषधाहारादिकैः=प्रेष्याः – भृत्याः पशवः=गवादयस्तन्निमित्तानि रोगवुभुक्षादि निवृत्ति हेतुकानि यानि औषधाहारादीनि तैः पृथिव्यादीनां हिंसाप्रकारानाह—उक्खणण-उक्कत्थण-पयण-कोट्टण-पीसण-पिट्टण-भज्जण-गालण-आमोडण-सडण-फुडण-भंजण-छेयण-तच्छण विलुंचण पंतज्झोडण - अग्गिदहणाइयाइं ' उत्खननोत्कथनपचनकुट्टनपेषणपिट्टनभर्जन गालना मोटनशटनस्फुटनभञ्जनच्छेदनतक्षणविलुञ्चनपात्रझोटनाग्निदहनादीनि-तत्र

जल, तेज, वायुकायों को जो इस प्रकार के दुःखों होते हैं वे (अकामगाइं) उन्हें अवाञ्छनीय होते हैं। पाप जीव पाप क्यों करते हैं-(परप्पओगोदीरणाहि य) अपना प्रयोजन हो तो भी दूसरों से कहने से, तथा (कज्जप्पओयणेहि य) अपना आवश्यक कार्य से, वे कार्य कौन हैं ? सो कहते हैं (पेस्सपसुनिमित्तओसहाहारमाइएहिं) प्रेष्य-भृत्य, पशु-गाय भैंस आदि जानवरों के रोग, बुभुक्ष अ,दि की निवृत्ति के हेतु-भूत औषध, आहार आदि के निमित्त से करते हैं। हिंसा के प्रकारों को कहते हैं (उक्खणण-उक्कत्थण-पयण-कोट्टण-पीसण-पिट्टण-भज्जण गालण-आमोडण-सडण-फुडण-भंजण-छेयण-तच्छण-विलुंचण-पंतज्झोडण-अग्गिदहणाइयाइं) उत्खनन आदि दुक्खों को एकेन्द्रिय की पर्याय में प्राप्त होकर पृथिव्यादि जीव बनकर भोगते हैं। कुदाल आदि

તેજ અને વાયુકાયોને આ પ્રકારે જે દુઃખો ભોગવવા પડે છે તે ' अकामगाइं" તેમને અવાંછનીય-અપ્રિય હોય છે. પાપી જીવ પાપ શા માટે કરે છે ? "परप्पओगोदीरणाहि य " પોતાને માટે કોઇ પણ પ્રયોજન ન હોય તો પણ બીજાના કહેવાથી, તથા " कज्जप्पओयणेहि य " પોતાના આવશ્યક કાર્યોને કારણે તેઓ પાપ કરે છે. તે કાર્યો ક્યાં ક્યાં છે ? તો સૂત્રકાર કહે છે-" पेस्सपसुनिमित्त ओसहाहारमाइएहिं " પ્રેષ્ય-નોકર, પશુ-ગાય, ભેંસ આદિ જાનવરોના રોગ, ભૂખ આદિના નિવારણને માટે, ઔષધ, આહાર આદિને નિમિત્તે તે કાર્ય કરે છે હવે હિંસાના પ્રકારો કહે છે—" उक्खणण-उक्कत्थण-पयण-कोट्टण-पीसण-पिट्टण-भज्जण-गालण-आमोडण-सडण-फुडण-भंजण-छेयण-तच्छण--विलुंचण-पंतज्झोडण-अग्गिदहणाइयाइं " તે પાપી જીવો એકેન્દ્રિયની પર્યાયમાં પૃથિવ્યાદિ

'उक्खणण' उत्खनन—कुदालादिभिः पृथिव्यादीनां विदारणम्, 'उक्कथण' उत्कथनं=वृक्षादीनां त्वचापनयन, 'पयण' पचनं 'कोट्टण' कुट्टनं=प्रसिद्धं, 'पीसण' पेषणं=घरट्टादौ चूर्णनं, 'पिट्टण' पिट्टनं=ताडनं, 'भज्जण' भर्जनं=भ्राष्ट्रे पचनं, 'गालण' गालनं=लतागुल्मादि रस निगारणम्, 'आमोडण' आमोटनम्=शाखादीनां मोटनं, 'सडणं' शटनं=स्वयमेव विकृतभवनं, 'फुडण' स्फुटनं=स्वयं द्विधा भवनं, 'भंजण' भञ्जनं=त्रुटनं-त्रोटनं वा, 'छेयण' छेदनं=कुठारादिना द्विधाकरणं, 'तच्छण' तक्षण=वास्यादिभिश्छोलनं, 'विलुंचण' विलुञ्चनं=लोमादेरिव

से पृथिवी आदि का विदारण करना—खोदना, इसका नाम (उक्खणणं) उत्खनन है। वृक्षादिकों की छाल निकालना इसका नाम (उक्कत्थण) उत्कथन है। पकानेका नाम (पयण) पचन है। कूटने का नाम (कोट्टण) कुट्टन है। घरट्ट आदि में गेहूं आदि का पीसना इसका नाम (पीसण) पेषण है। ताडन करना इसका नाम (पिट्टण) पिट्टन है। भाड में भूंजना इसका नाम (भज्जण) भर्जन है। लता गुल्म आदि का रस निकालना इसका नाम (गालण) गालन है। शाखादिक का मरोडना इसका नाम (आमोडण) आमोटन है। अपने आप विकृत हो जाना इसका नाम (सडण) शटन है। स्वतः दो टुकड़े हो जाना (फुडण) स्फुटन है। टूटना या किसी से तोड लिया जाना इसका नाम (भंजण) भंजन है। कुठार आदि से काट दिया जाना, इसका नाम (छेयण) छेदन है। वसूला आदि से छोलना इसको नाम (तच्छण) तक्षण है। रोम आदि की तरह पत्रादिक का दूर करना इसका नाम (विलुंचण)

જીવો તરીકે ઉત્પન્ન થઈને ઉત્ખનન આદિ દુઃખો ભોગવે છે. કોદાળી આદિ વડે પૃથિવી આદિને ખોદવાની ક્રિયાને "उक्खणण" ઉત્ખનન કહે છે. વૃક્ષાદિની છાલ ઉતારવી તે ક્રિયાને "उक्कत्थण" ઉત્કથન કહે છે રાંધવાની ક્રિયાને "पयण" પચન કહે છે કૂટવાની—ખાંડવાની ક્રિયાને "कोट्टण" કુટ્ટન કહે છે. ઘટી આદિમાં ઘઉં આદિને દળવાની ક્રિયાને "पीसण" પેષણ કહે છે. માર મારવાની ક્રિયાને "पिट्टण" પિટ્ટન કહે છે, ભઠ્ઠીમાં શેકવાની ક્રિયાને "भज्जण" ભર્જન કહે છે. લતા, ગુલ્મ આદિમાંથી રસ કાઢવાની ક્રિયાને "गालण" ગાલન કહે છે. શાખા આદિને મરડવાની ક્રિયાને "आमोडण" આમોટન કહે છે. આપોઆપ વિકૃત થઈ જવાની ક્રિયાને "सडण" શટન કહે છે. જાતે જ બે ટૂકડા થઇ જવાની ક્રિયાને "फुडण" સ્ફુટન કહે છે. જાતે તૂટવાની કે બીજા વડે તોડવાની ક્રિયાને "भंजण" કહે છે. કુહાડી આદિથી કાપવાની ક્રિયાને "छेयण" છેદન કહે છે. વાંસલા આદિથી છોલવાની ક્રિયાને

पत्रादीनामपनयनं, 'पंतज्झोडण' प्रान्तझोटनं=पत्रपुष्पफलादिपातनम्, 'अग्गिदहण' अग्निदहनं=अग्नि प्रज्वालनं चेतान्यादिर्येषां तानि एवम्प्रकाराणि दुःखानि एकेन्द्रियसम्बन्धीनि एकेन्द्रियत्वं प्राप्ताः पृथिव्यादिजीवाः प्राप्नुवन्तीति पूर्वेण सम्बन्धः। तदेव निगमयति-एवम्=उक्तरीत्या ते=नरकात् प्रत्यागताः जीवाः 'भव परंपरादुक्खसमणुबद्धा' भवपरम्परादुःखसमनुबद्धाः=पञ्चेन्द्रियादि योनिषु जन्मपरम्परैव दुःखं तेन समनुबद्धाः=संयुक्ताः 'पाणाइवाय-निरया' प्राणातिपातनिरताः=प्राणिवधपरायणाः जीवाः संसारे=चतुर्गतिरूपे कीदृशे? 'बीहणकरे' भयंकरे=भयकारणे 'अणंतकालं' अनन्तकालम् 'अडंति' अटन्ति=सततं भ्रमन्ति॥ सू० ४५॥

पूर्वं नरकात्प्रत्यावृत्तानां तिर्यग्योनिषु जन्म भवतीति वर्णितम्। अथ यदि ते कथ-

---

विलुञ्चन है। पत्र, पुष्प, फल आदि का गिराना इसका नाम (पंतज्झोडण) प्रान्तझाटन है। अग्नि का जलाना-इसका नाम अग्निदहन है। इत्यादि दुःखों को एकेन्द्रिय पर्याय को प्राप्त हुए पृथिव्यादि जीव भोगते हैं। अब इसका उपसंहार करते हुए सूत्रकार कहते हैं-(एवं ते) इस प्रकार नरक से निकले हुए वे जीव (भवपरंपरादुक्खसमणुबद्धा) उक्त रीति से पंचेन्द्रिय आदि योनियों में जन्मपरम्परारूप दुःखों से युक्त जीव (पाणाइवायनिरया) प्राणिवध करने में तत्पर होकर (बीहणकरे) भयंकर भय के कारणभूत इस (संसारे) चतुर्गतिरूप संसार में (अणंतकालं) अनंत कालतक (अडंति) भ्रमण करते हैं॥सू०४५॥

इस प्रकार यहांतक यह समझाया गया है कि नरक से निकले हुए वे जीव तिर्यंच योनि में जन्म लेते हैं। यदि वे कथंचित् मनुष्य पर्याय

"तच्छण" तक्षणु કહે છે. રુંવાટી આદિ જે રીતે દૂર કરાય છે તે રીતે પત્રાદિકને દૂર કરવાની ક્રિયાને "विलुंचण" વિલુંચન કહે છે. પાન, ફળ, ફૂલ આદિને પાડવાની ક્રિયાને "पंतज्झोडण" પ્રાન્તઝાટન કહે છે. અગ્નિને સળગાવવાની ક્રિયાને અગ્નિદહન કહે છે. ઈત્યાદિ પ્રકારનાં દુ ખો એકેન્દ્રિય પર્યાયમાં ઉત્પન્ન થયેલ પૃથિવ્યાદિ જીવો ભોગવે છે. હવે તેનો ઉપસંહાર કરતાં સૂત્રકાર કહે છે.

'एवं ते' આ રીતે નરકમાંથી નીકળેલા જીવો "भवपरंपरादुक्खसमणुबद्धा" ઉપરોક્ત પંચેન્દ્રિય આદિ યોનિયોમાં જન્મપરંપરારૂપ દુ ખોથી યુક્ત થાય છે, અને "पाणाइवायनिरया" પ્રાણીવધ કરવાને તત્પર થઈને "बीहणकरे" ભયંકર-ભયના કારણભૂત આ "संसारे" ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમાં "अणंतकाल" અનંતકાળ સુધી "अडंति" ભ્રમણ કરે છે. ॥ સૂ૦ ૪૫॥

આ રીતે અહીં સુધીમાં સમજાવવામા આવ્યું છે કે નરકમાંથી નીકળેલા તે જીવો તિર્યંચ યોનિમા જન્મ લે છે. જો કદાચ તેઓ મનુષ્ય યોનિમા ઉત્પન્ન

ञ्चिन्मनुष्यत्वमपि चेत्प्राप्नुयुस्तथाप्यधन्या एव जायन्ते इत्येतदाह-'जे वियेत्यादि।

मूलम्-जे विय इह माणुसत्तणं आगया कहं वि नरगा उव्वट्टिया अधन्ना ते वि य दीसंति पायसो विकयविगलरूवा खुज्जा वडभा य वामणा य बहिरा काणा कुंटा पंगुला विगल य मूया य मम्मणा य अंधयगा य चक्खुविणिहया संचिल्लया वाहिरोगपीलिय अप्पाउय-सत्थवज्झवाला कुलक्खणुक्किन्नदेहा दुब्बल-कुसंघयण-कुप्पमाण-कुसंठिया कुरूवा किविणा य हीणा हीणसत्ता निच्चं सोक्खपरिवज्जिया असुहदुक्खभागी णरगाओ इहं सावसेसकम्मा उव्वट्टिया समाणा ॥ सू० ४६ ॥

टीका—'जेवि य' येऽपि च-ये केचित् प्राणिनः 'नरगा' नरकात् 'उव्वट्टिया' उद्वर्तिताः=प्रत्यावृत्ताः निस्सृता इत्यर्थः 'कहिं वि' कथमपि=महताकष्टेन अनन्तजन्ममरणानामनन्तदुःखमनुभूयेत्यर्थः, मनुष्यलोके 'माणुसत्तणं' मनुष्यत्वं 'आगया' आगताः=प्राप्ताः 'तेवि य' तेऽपि च 'अधन्ना' अधन्याः =निन्दनीयाः 'पायसो' प्रायशो=बाहुल्येन, प्रायशो ग्रहणं तीर्थङ्करादि-व्यावृत्त्य-

---

को भी प्राप्त कर लें तो वहां भी वे खराव अवस्था में ही रहते हैं, इस बात को समझाते हैं-(जे वि य) इत्यादि ।

टीकार्थ-(जे वि य) जो कितनेक प्राणी (नरगा) नरक से (उव्वट्टिया) निकलकर (कहिं वि) कथमपि-कुछ, पुण्य के उदय से (इह) इस मनुष्यलोक में (मानुसत्तणं) मनुष्य पर्याय को (आगया) प्राप्त कर लेते हैं (ते वि पायसो अधन्ना) प्रायः करके वे यहां (पायसो) शब्द तीर्थङ्कर आदि की निवृत्ति के लिये आया है । (अधन्ना) निंदनीय होते

થાય તો ત્યા તે પણ તેઓ ખરાબ હાલતમાં જ રહે છે, તે વાત હવે સૂત્ર-કાર સમજાવે છે—"जे वि य" ઈત્યાદિ

ટીકાર્થ—"जे वि य" જે કેટલાક પ્રાણીઓ "नरगा" નરકમાંથી "उव्वट्टिया" નીકળીને "कहिं वि" થોડા પુન્યના ઉદયથી "इह" આ મનુષ્ય લોકમાં "माणुसत्तणं" મનુષ્ય પર્યાય "आगया" પ્રાપ્ત કરે છે. "ते वि पायसो" પ્રાયઃ કરીને તેઓ અહીંયા "अधन्ना" નિંદનીય હોય છે. "पायसो" શબ્દ તીર્થંકર આદિની નિવૃત્તિને માટે મૂક્યો છે. "विकय

यम्, 'विकयविगलरूवा' विकृत विकलरूपाः = विकृतं-बीभत्सं विकलं=हीनं च रूपम्=आकारो येषां ते तथा भूताः 'दीसंति' दृश्यन्ते=दृष्टिगोचरा भवन्ति। तदेव वर्ण्यते-'खुज्जा' कुब्जाः 'कूबडा' इति भाषा प्रसिद्धाः, 'वडभा' एक पार्श्वहीनाः = वक्रोपरिकायाः, यद्वा-विकृतरूपेण बहिर्निस्सृतहृदयोदरभागाः, 'वामणा' वामनाः=ह्रस्वकायाः 'बहिरा' बधिराः=श्रवणशक्तिहीनाः 'काणा' काणा=एकाक्षाः 'कुंटा' कुण्टाः=विकृतहस्ताः 'टूंटा' इति प्रसिद्धाः 'पंगुला' 'पङ्गवः=जङ्घाहीना. 'पांगला' इति प्रसिद्धाः, 'विगला' विकलाः = हीनाङ्गोपाङ्गाः 'मूया' मूकाः=वचनशक्तिहीनाः, 'मंमणा' मन्मनाः=स्खलद्वचनाः, 'अंधयगा' अन्धकाः=जन्मान्धाः, 'चक्खुविणिहया' चक्षुर्विनिहताः=विनिहतचक्षुषः=

हैं (विकय विगलरूवा दीसंति) उनका रूप विकृत और विकल-हीन होता है। इसी बात को विशेषरूप से सूत्रकार समझाते हैं (खुज्जा) उनके शरीर में पीठ पर कुबड निकली रहती है। (वडभा) वे एक पार्श्वसे हीन होते हैं, अथवा उनके हृदय और उदरका भाग विकृतरूप से बाहिर निकला हुआ रहता है। (वामणा) शरीर उनका बोना होता है। (बहिरा) उनकी श्रवणशक्ति नष्ट हो जाती है (काणा) वे आंखें से काने होते हैं। (कुंटा) हाथ उनका एक ठीक रहता है दूसरा टूट जाता है इससे वे टूंटा कहलाते हैं, (पंगुला) पांगले-जंघाहीन (विगला य) अंग और उपांगों से वे विहीन होते हैं, (मूया) मूंगे होते हैं-वचनशक्ति से वीहीन होते हैं, (मम्मणा) मम्मण होते हैं-बोलते समय वे अटकते हैं (अंधयगा) जन्मांध होते है-उनकी जन्मतः दोनों आंखें फूटी रहती हैं, (चक्खुविणिहया) चक्खुविनिहत होते हैं-उनकी

विगलरूवा दीसंति" તેમનું રૂપ વિકૃત અને વિકલ-હીન હોય છે. એજ વાતને સૂત્રકાર વિસ્તારથી સમજાવે છે—"खुज्जा" તેમના શરીરે પીઠ પર ખૂંધ નીકળી હોય છે, "वडभा" તેઓ એક પડખે ખોડવાળા હોય છે, અથવા તેમના હૃદય અને પેટનો ભાગ વિકૃત રીતે બહાર પડતો હોય છે. "वामणा" તેઓ વામનરૂપ ઠીંગણા હોય છે, "बहिरा" તેમની શ્રવણ શક્તિ નાશ પામે છે-તેઓ બહેરા થાય છે "काणा" તેઓ આંખે કાણા હોય છે "कुंटा" તેમનો એક હાથ સારો હોય છે પણ બીજો હાથ તૂટી જવાને કારણે તેઓ ઠૂંટા કહેવાય છે. "पंगुला" પાંગળા-પગે લૂલા "विगला य" અંગ અને ઉપાંગોની ખોડવાળા હોય છે, "मूया" મૂંગા હોય છે-બોલવાની શક્તિ વિનાના હોય છે. "मम्मणा" તોતડા હોય છે-બોલતા જીભ અટકે તેવા હોય છે.

रोगादिभिर्विकृतनेत्राः, 'संचिल्लिया' सञ्चिल्लकाः=चिपटनेत्राः 'वाहिरोगपीलिय' व्याधिरोगपीडिताः=व्याधिभिः=कुष्ठादिभिः, रोगैश्च=कासश्वासादिभिः पीडिताः 'अप्पाउ य' अल्पायुष्काः 'सत्थवज्झ' शस्त्रवध्याः=शस्त्रप्रयोगेण मरणशीलाः, बालाः=बुद्धिरहिताः, 'कुलक्खणुक्किन्नदेहा' कुलक्षणोत्कीर्णदेहाः=कुत्सितलक्षणैर्व्याप्तशरीराः-शुभरेखादिवर्जिता इत्यर्थः, 'दुब्बल' दुर्बलाः=बलहीनाः. 'कुसंघयणकुप्पमाणकुसंठिया' कुसंहननकुप्रमाणकुसंस्थिताः - कुसंहननाः = कुत्सितं संहननं=अस्थिरचनाविशेषो येषां ते तथा, कुप्रमाणाः=कुत्सितं शरीरस्य प्रमाणमतिलम्बातिह्रस्वादिलक्षणं येषां ते तथा, कुसंस्थिताश्च=कुत्सितसंस्थानाः एतेषां द्वन्द्वः 'कुरूवा' कुरूपा=रूपवर्जिताः 'किविणा' कृपणाः=दरिद्राः, दानशक्ति-

---

आंखों में कोई न कोई खराबी रहती है, (संचिल्लिया) संचिल्लक होते हैं उनके नेत्र चपटे होते हैं, (वाहिरोगपीलिय) व्याधि और रोग से पीडित रहते हैं-वे कुष्ठ आदि व्याधियों से, कास श्वास आदि रोगों से सदा पीडित रहते हैं, (अप्पाउय) अल्पायुवाले होते हैं, (सत्थवज्झ) शस्त्र प्रयोग से इनकी मृत्यु होती है, (बाला) बुद्धि रहित होते हैं, (कुलक्खणुक्किन्नदेहा) खोटे २ लक्षणों वाले होते हैं, अर्थात्-शुभ रेखाओं से वर्जित होते हैं, (दुब्बल) दुर्बल-बल हीन होते हैं, (कुसंघयण) इनका संहनन-अस्थियों की रचना ठीक ठीक नहीं होता है, (कुप्पमाण) शरीर का प्रमाण भी योग्य नहीं होता है, या तो वह अत्यंत लंबा होता है या अति ह्रस्व होता है। (कुसंठिया) संस्थान -आकार भी कुत्सित होता है। (कुरूवा) सुन्दर रूप से रहित होते हैं। (किविण्णा) दरिद्र होते हैं, अथवा-दान देने की शक्ति का इनके यहां

"अंधयगा" જન્માંધ હોય છે. જન્મથી જ તેમની આંખો ફૂટી ગઈ હોય- છે, "चक्खुविणिहया" ચક્ષુ વિનિહત હોય છે, તેમની આંખોમાં કોઈ ને કોઈ ખામી રહે છે, "संचल्लिया" સંચિલ્લક હોય છે. તેમનાં નેત્ર ચપટાં હોય છે, "वाहिरोगपीलिय" વ્યાધિ અને રોગથી પીડાયા કરે છે-તેઓ કોઢ આદિ વ્યાધિયોથી, ખાંસી, દમ આદિ રોગોથી પીડાયા કરે છે. "अप्पाउय" ટૂંકા આયુષ્યવાળા હોય છે, "सत्थवज्झ" શસ્ત્રપ્રયોગથી તેમનું મૃત્યુ થાય છે. "बाला" બુદ્ધિ વિનાના હોય છે, "कुलक्खणुक्किन्नदेहा" ખરાબ લક્ષણોવાળા હોય છે, એટલે કે સારી રેખાઓથી રહિત હોય છે, "दुब्बल" દુર્બળ-બળ હીન હોય છે, "कुसघयण" તેમનું સંહનન-અસ્થિયોની રચના-બરાબર હોતી નથી, "कुप्पमाण" શરીર પ્રમાણસરનું હોતું નથી-કાં તો તે અતિશય લાંબા હોય છે કે અતિ નીચા હોય છે "कुसंठिया" સંસ્થાન-આકાર દેખાવ પણ બેડોળ હોય છે. "कुरूवा" સુંદર રૂપથી રહિત હોય છે. "किविण्णा" દરિદ્ર

वर्जिता वा, 'हीणा' हीनाः=नीचजातिकुलाः 'हीणसत्ता' हीनसत्त्वाः=उत्साह वर्जिताः, भीरवो वा, 'निच्चं सोक्खपरिवज्जिया' नित्यसौख्यपरिवर्जिताः= सततदुःखाकुलाः, 'असुहदुक्खभागी' अशुभदुःखभागिनः=अशुभानुबन्धिदुःख-सम्पन्नाः प्रान्ते दृश्यन्त इति योगः, एवम्भूताः के? इत्याह—ये 'नरगाओ' नरकात् 'इहं' इह—मर्त्यलोके 'उव्वट्टा समाणा' उद्वृत्ताः=आगताः सन्तः 'सावसेस-कम्मा' सावशेषकर्माणः=अवशिष्टाशुभकर्माणस्ते ॥ सू० ४६ ॥

अथोपसंहरन्नाह—'एवं' इत्यादि ।

मूलम्—एवं णरगं तिरिक्खजोणिं कुमाणुसत्तं य हिंडमाणा पावंति अणंताइं दुक्खाइं पावकारी । एसो सो पाणवहस्स फलविवागो इहलोइयो पारलोइयो अप्पसुहो बहुदुक्खो महब्भयो बहुरयप्पगाढो दारुणो कक्कसो असाओ वाससहस्सेहिं मुच्चई णय अवेदइत्ता अत्थिहु मोक्खोत्ति एवमाहंसु नायकुल नंदणो महप्पा जिणो उ वीरवरनामधेज्जो कहेसीय पाणवहस्स

अभाव रहता है। (हीणा) इनका कुल एवं जाति ये दोनों ही हीन होते हैं। (हीणसत्ता) उत्साह शक्ति से ये वर्जित होते हैं अथवा भीरु -डरपोक-प्रकृति के होते हैं। (निच्चं सोक्खपरिवज्जिया) सुखों से नित्य वर्जित-निरन्तर दुःखी रहते हैं। (असुहदुक्खभागी) इस प्रकार इन अशुभानुबंधी दुःखों से वे सम्पन्न (दीसंति) देखे जाते हैं। जो पापी जीव (नरगाओ) नरक से (उव्वट्टिया समाणा) निकल कर (इहं) इस मनुष्य लोक में (सावसेसकम्मा) पाप कर्मों के भोगने पर भी अव-शिष्ट अशुभ कर्म वाले हो कर आते हैं ॥ सू० ४६ ॥

હોય છે, અથવા તેમનામાં દાન દેવાની શક્તિ હોતી નથી. "हीणा" તેમનું કુળ અને જાતિ બન્ને હીન હોય છે. "हीणसत्ता" તેઓ ઉત્સાહ વિનાના હોય છે અથવા ભીરુ ડરપોક સ્વભાવના હોય છે. 'निच्च सोक्खपरिवज्जिया" હંમેશા સુખથી રહિત દુઃખી હોય છે. "असुहदुक्खभागी" આ રીતે તેઓ અશુભાનુબંધી દુઃખોથી યુક્ત "दीसंति" દેખાય છે. પાપી જીવ "नरगाओ" નરકમાંથી "उव्वट्टिया समाणा" નીકળીને "इहं" આ મનુષ્યલોકમાં "साव-सेसकम्मा" પાપ કર્મોનાં અશુભ ફળો ભોગવવા છતાં પણ બાકી રહેલ અશુભ કર્મ સાથે લઈને આવે છે. ॥ સૂ૰ ૪૬ ॥

फलविवागं। एसो सो पाणवहो चंडो रुद्दो खुद्दो साहसिओ अणारिओ, निग्घिणो, निस्संसो महब्भओ, पइभओ अइभओ, बीहणओ, तासणओ, अणज्जओ, उव्वेयणओ य-णिरवयक्खो, णिद्धम्मो, णिप्पिवासो, निक्कलुणो निरयवासगमणनिधणो मोहमहब्भयपवड्ढओ मरणवेमणस्सो त्तिबेमि ॥ सू० ४७ ॥

॥ पढमं अहम्मदारं समत्तं ॥ १ ॥

टीका—'एवं' उक्तप्रकारेण 'णरगं' 'नरकं, मनुष्यलोके 'तिरिक्खजोणिं' तिर्यग्योनिं=पञ्चेन्द्रियादिभवं 'कुमाणुसत्तं' कुमानुषत्वं=कुब्जवामनादि विकृताङ्गोपाङ्गरूपां मनुष्ययोनिं च 'हिंडमाणा' हिण्डमानाः=भ्रमन्तः 'पावकारी' पापकारिणः=प्राणातिपातकारकाः जीवाः 'अणंताइ' अनन्तानि 'दुःक्खाइं' दुःखानि 'पावंति' प्राप्नुवन्ति। 'एसो सो' एष सः प्रत्यक्षं दृश्यमानः 'पाणवहस्स' प्राणवधस्य=प्राणातिपातस्य 'फलविवागो' फलविपाकः=परिणामः भवति।

अब उपसंहार करते हुए सूत्रकार कहते हैं—'एवं णरगं तिरिक्खजोणिं' इत्यादि०।

टीकार्थ—(एवं) इस उक्त प्रकार से जो (णरगं) नरक में, वहां से मनुष्यलोक में आने पर (तिरिक्खजोणिं) तिर्यञ्च योनि में एवं (कुमाणुसत्तं) कुब्ज, वामन आदि रूप से विकृत अगोपांगवाली मनुष्ययोनिमें (हिंडमाणा) भ्रमण करते हुए (पावकारी) प्राणातिपातरूप पाप को करने वाले जीव (अणंताइं दुक्खाइं) अनंत दुःखों को (पावेंति) पाते हैं। (एसो सो) प्रत्यक्ष में दृष्टिभूत बना हुआ यह (पाणवहस्स) प्राण वधरूप हिंसा का (फलविवागो) परिणाम है। प्राणवध का यह (फल-

---

હવે ઉપસંહાર કરતાં સૂત્રકાર કહે છે-" एवं णरगं तिरिक्खजोणिं " ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ--" एवं " ઉપરોક્ત પ્રકારે " णरगं " નરકમાં, ત્યાંથી મનુષ્યલોકમાં આવતા " तिरिक्खजोणिं " તિર્યંચ યોનિમા અને " कुमाणुसत्तं " કુબ્જ, વામન આદિ રૂપે વિકૃત અંગોપાંગવાળી મનુષ્ય યોનિમા " हिंडमाणा " ભ્રમણ કરતા " पावकारी " પ્રાણાતિપાતરૂપ પાપ કરનાર જીવો " अणंताइं दुक्खाइं " અનંત દુઃખો " पावेंति " ભોગવે છે. " एसो सो " પ્રત્યક્ષ દષ્ટિગોચર થતું "पाणवहस्स" પ્રાણવધરૂપ હિંસાનું " फलविवागो " તે પરિણામ છે. પ્રાણવધનો આ

स कीदृशः ? इत्याह—'इहलोइओ' ऐहलौकिकः=मनुष्यलोकमाश्रित्य, 'पारलोइओ' पारलौकिकः—नरकनिगोदादिकगत्याद्याश्रित्य 'अप्पसुहो' कुत्सितेन्द्रियभोगे सुखजनकत्वाद् अल्पसुखः, वा 'बहुदुक्खो' बहुदुःखः=नरकादिदुःखकारणत्वाद् दुःखबहुलः, 'महब्भयो' महाभयः=महाभयस्वरूपः, तथा 'बहुरयप्पगाढो' बहु-रजः प्रगाढः=अशुभकर्मबहुलः, दारुणो' दारुणः=भीषणः नरकादिभयजनकत्वात् 'कक्कसो' कर्कशः=कठोरः=दुर्भेद्यत्वात् 'असाओ' असातः=असातवेदनीयरूप-त्वात्, इत्येवंविधः फलविपाकः, 'वाससहस्सेहिं' वर्षसहस्रैः=अनेक सहस्रवर्ष-भोगैः=पल्योपमसागरोपमादिलक्षणैः 'मुच्चई' मुच्यते=क्षीयते। तदेवव्यतिरेक मुखेनाह—'नये' ति—'अवेदइत्ता' अवेदयित्वा=तं फलविपाकमनुपभुज्य 'नय'

विपाक—परिणाम (इहलोइओ) ऐहलौकिक—मनुष्यलोककी अपेक्षा से (अप्पसुहो) कुत्सित इन्द्रियों के भोग जनित सुख का उत्पादक होने से अल्पसुख वाला, तथा (पारलोइओ) पारलौकिक—नरकादि गति की अपेक्षासे (बहुदुक्खो) नरकादि गति कारण होनेसे बहुत दुःख वाला, (महब्भओ) महाभयवाला, तथा (बहुरयप्पगाढो) बहुत अशुभकर्मों वाला है। यह (दारुणो) नरकादिगति का भयजनक होने से भयंकर (कक्कसो) दुर्भेद्य होने से कर्कश—कठोर है। (असाओ) अशाता वेद-नीय रूप होने से स्वयं अशातारूप है। ऐसा यह प्राणवधपरिणाम (वास-सहस्सेहिं मुच्चई) पल्योपम तथा सागरोपमादिरूप वर्षसहस्रों में भोगते २ यह छूटता है—नष्ट होता है। इसी बात को अब व्यतिरेक से कहते हैं कि—(अवेयइत्ता न य हु मोक्खो अत्थि) (अवेयइत्ता) इसका फल

ફળવિપાક પરિણામ "इहलोइओ" આ લોકની મનુષ્યલોકની અપેક્ષાએ "अप्पसुहो" કુત્સિત ઇન્દ્રિયોના ભોગજનિત સુખનું ઉત્પાદક હોવાથી અલ્પ સુખવાળું, તથા "पारलोइओ" પરલોકની—નરકાદિ ગતિની અપેક્ષાએ "बहु-दुक्खो" નરકાદિ ગતિના કારણરૂપ હોવાથી બહુ જ દુઃખદાયી, "महब्भओ" મહા ભયવાળુ તથા "बहुरयप्पगाढो" અત્યંત અશુભ કર્મોવાળું છે. તે "दारुणो" નરકાદિ ગતિનો ભય પેદા કરનાર હોવાથી ભયંકર છે. "कक्कसो" દુર્ભેદ્ય હોવાને કારણે કર્કશ કઠોર છે. "असाओ" અશાતા—વેદનીય રૂપ હોવાથી પોતે અશાતારૂપ છે. એવું તે પ્રાણવધ પરિણામ "वाससहस्सेहिं मुच्चई" પલ્યોપમ તથા સાગરોપમ આદિરૂપ હજારો વર્ષ સુધી ભોગવતા ભોગવતા છૂટે છે—નષ્ટ થાય છે .એ જ વાતને હવે બીજી રીતે પ્રગટ કરે છે—"अवेयइत्ता न य हु मोक्खो अत्थि" "अवेयइत्ता" તેનો ફલવિપાક ભોગવ્યા વિના જીવનો

न च-नैव 'हु' निश्चयेन 'मोक्खो' मोक्षः 'अत्थि' अस्ति, 'त्ति' इति समाप्ति सूचकः। तस्य फलविपाकस्योपभोगं विना जीवस्य मोक्षो न भवतीत्यर्थः।

अथ न हि येन केनापि प्रतिपादितोऽर्थः श्रद्धेयवचनो भवति प्रामाण्यसन्देहादित्याशङ्कानिवर्तयितुमस्य साक्षात्प्रमाणभूतपरमात्मप्रतिपादितत्वेन प्रामाण्य निरूपणाय प्रमाणयन्नाह-'एवमाहंसु' इत्यादि, एवम्=उक्तरीत्या 'आहंसु' ऊचुः-अतीतास्तीर्थङ्करगणधरादयः। तथा 'नायकुलनंदणो' ज्ञातकुलनन्दनः=ज्ञातकुलं=सिद्धार्थकुल, तस्य नन्दनः=आनन्दकारकः 'महप्पा' महात्मा=परमात्मरूपः, 'जिणो' जिनः=रागाद्यन्तरङ्गशत्रुजेता, वीरवरणामधेज्जो' वीरवरनामधेयः=प्रशस्तनामा भगवान् महावीरः, 'पाणवहस्स' प्राणवधस्य 'फलविवागं' फलविपाक 'कहेसीय' कथितवान्=यथाऽतीता जिनाः कथितवन्तस्तथैवायं भगवान् महावीरोऽपि प्रतिपादयतिस्मेत्यर्थः। अस्याध्ययनस्य महावीरोक्तत्व

विपाक भोगे विना जीवका (न य हु मोक्खोअत्थि) कभी भी छुटकारा नहीं हो सकता है। इस कथन को प्रमाणभूत सिद्ध करने के लिये सूत्रकार इसमें साक्षात् प्रमाणभूत परमात्मा द्वारा प्रतिपादितता सिद्ध करने के लिये कहते हैं कि ऐसा जो मैंने कहा है वह अपनी ओर से नहीं कहा है, किन्तु (एवमाहंसु) अतीत तीर्थंकर एवं गणधर आदि देवों ने ऐसा कहा है तथा (नायकुलनंदणो महप्पा जिणो उ वीरवर णामधेज्जो पाणवहस्स फलविवागं कहेसीय) ज्ञातकुलनंदन-सिद्धार्थ के कुल को आनंद देने वाले-परमात्मरूप, जिन-रागादिक अंतरंग शत्रु के विजेता प्रशस्तनाम वाले श्री भगवान् महावीर ने भी प्राणवध का फल ऐसा ही अतीत तीर्थंकरों के कथनानुसार कहा है। (एसो सो पाणवहो चंडो रुद्दो खुद्दो साहसिओ अणारिओ निग्घिणो निस्संसो महब्भओ पइभओ

"न य हु मोक्खो अत्थि" કદી પણ છુટકારો થઈ શકતો નથી, આ કથનને પ્રમાણભૂત સિદ્ધ કરવાને માટે સૂત્રકાર તેનાં સાક્ષાત્ પ્રમાણરૂપ પરમાત્માદ્વારા તેની પ્રતિપાદિતતા સિદ્ધ કરવાને માટે કહે છે કે—એવુ મેં જે કહ્યુ છે તે મારી તરફથી કહ્યુ નથી પણ "एवमोहंसु" અતીત તીર્થંકર અને ગણધર આદિ દેવોએ એવું કહેલ છે, તથા "नायकुलनन्दणो महप्पा जिणो उ वीरवर णामधेज्जो पाणवहस्स फलविवागं कहेसीय" જ્ઞાતકુળનંદન-સિદ્ધાર્થનાં કુળને આનંદ દેનાર પરમાત્મારૂપ, જિન-રાગ આદિ આતરિક શત્રુઓ પર વિજય મેળવનાર પ્રશસ્ત નામવાળા શ્રી ભગવાન મહાવીરે પણ પ્રાણવધનું ફળ એવું જ અતીત તીર્થંકરોના કથનાનુસાર જ કહેલ છે-"एसो सो पाणवहो चण्डो रुद्दो खुद्दो साहसिओ अणारिओ निग्घिणो निस्संसो महब्भओ पइभओ अइभओ

निरूपणेनैव तदन्तर्गतफल विपाकस्यापि तदुक्तत्वसिद्धौ पुनः पृथक् तस्य महावीरोक्तत्वाभिधानं प्राणिवधस्यैकान्तिकाशुभफलदायकत्वात्तस्यात्यन्तहेयत्वद्योतनार्थम्। 'एसो सो' एष सः=पूर्वोपदर्शित स्वरूपः 'पाणवहो' प्राणवधः 'चंडो' चण्डः=क्रोधजनकत्वात्, 'रुद्दो' रौद्रः=रौद्ररसप्रवर्तितत्वात्, 'खुद्द' क्षुद्रः=अधमजनाचरितत्वात् 'साहसिओ' साहसिकः=असमीक्ष्यकारिजनप्रवर्त्तितत्वात्,

---

अइभओ बीहणओ तासणओ अणज्जओ णिरवयक्खो, निद्धम्मो, निप्पिवासो, निक्कलुणो, निरयवासगमणनिधणो, मोहमहब्भयपयट्टओ मरणवेमणस्सो, त्ति बेमि)

शंका—जब सूत्रकार ने इस अध्ययन में महाविरोक्तता निरूपित की है तब यह बात तो स्वतः सिद्ध हो ही जाती है कि तदन्तर्गत फलविपाक भी उन्हीं द्वारा कहा गया है, फिर क्या बात है जो इसमें पृथक् रूप से महावीरोक्तता प्रतिपादित की जा रही है ?

उत्तर-शंका ठीक है, परंतु इसका अभिप्राय केवल इतना ही है कि पुनः इसमें जो तदुक्तता प्रतिपादित की है उससे उसमें-प्राणिवध में-ऐकान्तिक अशुभफलदायकता होने से अत्यन्त हेयता प्रकट की गई है। यही बात सूत्रकार इन आगे के पदों द्वारा स्पष्ट करते हैं-(एसो सो) पूर्वोपदर्शित स्वरूप वाला यह (पाणवहो) प्राणवध-(चंडो) क्रोधजनक होने से चण्ड है, (रुद्दो) रौद्र रस द्वारा प्रवर्तित होने से रौद्र है, (खुद्दो) अधमजनों द्वारा आचरित होने से क्षुद्र है, (साहसिओ)

बीहणओ तासणओ अणज्जओ णिरवयक्खो, निद्धम्मो, निप्पिवासो, निक्कलुणो निरयवासगमणनिधणो, मोहमहब्भयपयट्टओ मरणवेमणस्सो त्तिबेमि "

શંકા—જ્યારે સૂત્રકારે આ અધ્યયનમાં મહાવીરોક્તતાનું નિરૂપણ કર્યું છે ત્યારે તે વાત તો આપોઆપ સિદ્ધ થઈ જ જાય છે કે તેમાં આવતો ફલવિપાક પણ તેમના દ્વારા કહેવાયેલ છે, તો શા કારણે તેમાં અલગ રીતે મહાવીરોક્તતાનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવેલ છે ?

ઉત્તર-શંકા બરાબર છે પણ તેનો ઉદ્દેશ કેવળ એટલો જ છે કે ફરીથી તેમાં જે તેમના દ્વારા કથિત હોવાનું પ્રતિપાદન કર્યું છે તેથી તેમાં પ્રાણીવધમા એકાન્તિક અશુભ ફલદાયકતા હોવાથી અત્યંત હેયતા પ્રગટ કરાઇ છે. એ જ વાત સૂત્રકાર આગળ આવતાં આ પદો દ્વારા સ્પષ્ટ કરે છે-"एसो सो" આગળ દર્શાવવામાં આવેલ સ્વરૂપવાળો તે "पाणवहो" પ્રાણવધ "चण्डो" ક્રોધજનક હોવાથી ચંડ છે, "रुद्दो" રૌદ્રરસ દ્વારા પ્રવર્તિત હોવાથી રૌદ્ર છે, "खुद्दो' અધમ લોકો દ્વારા આચરિત હોવાને કારણે ક્ષુદ્ર છે, "साहसिओ"

'अणारिओ' अनार्यः=म्लेच्छजनसमाचारितत्वात्, 'निग्घिणो' निर्घृणः=अविद्यमाना घृणा=पापजुगुप्सा यस्मिन् स तथा विधोजनस्तदाचरितत्वात्प्राणवधोऽपि तथा, 'निस्संसो' नृशंस=क्रूरजनाचरितत्वात् 'महब्भओ' महाभयः=महाभयोत्पादकत्वात्, पइभओ' प्रतिभयः=सकलप्राणिनां भयहेतुत्वात्, 'अइभओ' अतिभयः-मरणान्तभयजनकत्वात्। 'बीहणओ' भापनकः-भयोत्पादकत्वाद्, 'तासणओ' त्रासनक=अकस्मात्-हृदयोद्वेगजनकत्वात्, 'अणज्जओ' अन्याय्यः=न्यायादनपेतः=युक्तः न्याय्यः, न न्याय्यः अन्याय्यः,न्यायवर्जितत्वात्, 'उव्वेयणओ' उद्वेगजनकः मर्मपीडाकारकत्वात् 'णिरवयक्खो' निरपेक्षः=निर्गता अपेक्षा=परप्राणरक्षविषया यत्र स तथा, 'निद्धम्मो' निर्धर्म=श्रुतचारित्र धर्मरहितत्वात्, 'निप्पिवासो'

असमीक्ष्यकारी जनों द्वारा किया गया होने से साहसिक है, (अणारिओ) म्लेच्छ जनों द्वारा समाचरित होने के कारण अनार्य है। (निग्घिणो) इसे करने वाले मनुष्य को पाप के प्रति घृणा नहीं रहती है अतः यह प्राणवध भी निर्घृणरूप है (निस्संसो) क्रूरजन इसे करते रहते हैं इस लिये यह नृशंसरूप है। (महब्भओ) इसे करते समय करनेवालेको महान् भयका कारण होता है इसलिये यह महाभयरूप है। (पइभओ) समस्त प्राणियों को भय का हेतु होने से यह प्रतिभयरूप है। (अइभओ) मरणान्तभय का जनक होने से यह अतिभयरूप है। (बीहणओ) भयका उत्पादक होने से यह भयानक है। (तासणओ) अकस्मात् हृदय में उद्वेग का जनक होने से त्रासनकरूप है (अणज्जओ) न्यायवर्जित होने से यह अन्यायरूप है। (उव्वेयणओ) जीवों को उद्वेग जनक होने से यह उद्वेजकरूप है (णिरवयक्खो) पर प्राणियों की रक्षा करने की अपेक्षा

અસમીક્ષ્યકારી લોકો દ્વારા કરાતો હોવાથી સાહસિક છે, "अणारिओ" મ્લેચ્છ લોકો દ્વારા આચરિત હોવાથી અનાર્ય છે. "निग्घिणो" પ્રાણવધ કરનાર મનુષ્યને પાપ પ્રત્યે ઘૃણા થતી નથી, તેથી તે પ્રાણવધ પણ નિર્ઘૃણરૂપ છે, "निस्संसो" ક્રૂર લોકો તેનુ સેવન કરે છે તેથી તે નૃશંસરૂપ છે, "महब्भओ" તે કરતી વખતે કરનારને મહાન્ ભયનું કારણ તે બને છે તેથી તે મહા ભયરૂપ છે. "पइभओ" સઘળાં પ્રાણીઓને તે ભયના કારણરૂપ હોવાથી પ્રતિભયરૂપ છે. "अइभओ" મૃત્યુના ભયનો જનક હોવાથી તે અતિ ભયરૂપ છે. "वीहणओ" ભયનો ઉત્પાદક હોવાથી તે ભયાનક છે. "तासणओ" હૃદયમાં અકસ્માત ઉદ્વેગનો જનક હોવાથી તે ત્રાસનકરૂપ છે, "अणज्जओ" ન્યાયરહિત હોવાથી તે અન્યાય રૂપ છે, "उव्वेयणओ" જીવોમાં ઉદ્વેગ ઉત્પન્ન કરનાર હોવાથી તે ઉદ્વેગકરૂપ રૂપ છે. "णिरवयक्खो" પર પ્રાણીઓનું રક્ષણ કરવાની અપેક્ષાથી રહિત

निष्पिपासः=परजीवनस्नेहवर्जितत्वात् , 'निक्कलुणो' निष्करुणः=दयाभाववर्जितत्वात् 'निरयवासगमणनिधणो' निरयवासगमननिधनः–निरयावासः=नरकावासः, तत्र गमनमेव निधनं=पर्यवसानम्–अन्तिमफलं यस्य स तथा, नरकप्रापकत्वात् , 'मोहमहब्भयपयट्टओ' मोहमहाभयप्रवर्त्तकः=मोहः=अज्ञानं स एव महाभयं=महाभयहेतुत्वात् , तस्य प्रवर्त्तकः, 'मरणवेमणस्सो' मरणवैमनस्यः = मरणेन=मृत्युरूप कारणेन प्राणिनां वैमनस्यं = दैन्यं यस्मात्स तथा दीनमनः कारित्वात्, इत्येवं लक्षणः प्राणवधः=ज्ञपरिज्ञया तत्स्वरूपं विज्ञाय प्रत्याख्यानपरिज्ञया सर्वथा परित्याज्य इति भावः। श्री सुधर्मास्वामी जम्बूस्वामिनं कथयति—'त्तिवेमि'

से रहित होने के कारण यह निरपेक्षरूप है। (निद्धम्मो) श्रुताचारित्र रूप धर्म से रहित होने के कारण यह निर्धर्मरूप है। (निप्पिवासो) इस में दूसरों के जीवन के प्रति स्नेहभाव नहीं रहता है इसलिये यह निष्पिपासरूप है। (निक्कलुणो) दयाभाव का सर्वथा इसमें अभाव रहता है इसलिये यह निष्करुणरूप है। (निरयवासगमणनिधणो) नरक गमन ही इसका अन्तिमफल है, इसलिये यह निरयवासगमननिधनरूप है। (मोह महब्भयपयट्टओ) मोहरूप–महाभय का यह प्रवर्त्तक है इसलिये यह मोह महाभय प्रवर्त्तकरूप है। (मरणवेमणस्सो) मृत्युरूप कारण से प्राणियो को इससे दैन्यभाव होता है इस लिये यह मरणवैमनस्यरूप है। इसलिये इस प्राणवध का ज्ञ परिज्ञा से स्वरूप जानकर प्रत्याख्यानपरिज्ञा से सर्वथा परित्याग कर देना चाहिये। इस प्रकार कह कर अब सुधर्मा-

---

હોવાને કારણે તે નિરપેક્ષરૂપ છે "निद्धम्मो" શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મથી રહિત હોવાને કારણે નિર્ધર્મરૂપ છે. "निप्पिवासो" તેમાં અન્યનાં જીવન પ્રત્યે સ્નેહભાવ રહેતો નથી તેથી તે નિષ્પિપાસરૂપ છે. "निक्कलुणो" તેમાં દયાભાવનો તદ્દન અભાવ રહે છે તેથી તે નિષ્કરુણરૂપ છે. "निरयवासगमणनिधणो" નરક ગમન જ તેનુ અંતિમ ફળ હોય છે, તે કારણે તે નિરયવાસગમનનિધનરૂપ છે. "मोहमहब्भयपयट्ठओ" મોહરૂપ મહાભયનો તે પ્રવર્તક છે, તે કારણે તે મોહ મહાભય પ્રવર્ત્તક રૂપ છે. "मरणवेमणस्सो" મરણરૂપ કારણથી પ્રાણિઓમાં તેનાથી દૈન્યભાવ ઉત્પન્ન થાય છે, તેથી તે મરણવૈમનસ્ય રૂપ છે. તે કારણે તે પ્રાણવધનું જ્ઞ પરિજ્ઞાથી સ્વરૂપ જાણીને પ્રત્યાખ્યાન પરિજ્ઞાથી તેનો સર્વથા પરિત્યાગ કરવો જોઇએ. આ પ્રમાણે કહીને હવે સુધર્માસ્વામી જંબૂસ્વામીને

इति ब्रवीमि–हे जम्बूः ! इति=पूर्वोक्तं प्राणिवधस्वरूपनिरूपणं, तत्फलचतुर्गति-भ्रमणलक्षणमर्थं चेति तीर्थङ्करस्य भगवतो महावीरस्य सकाशान्मया साक्षात् श्रुतं ब्रवीमि=कथयामि न तु स्वबुद्धिपरिकल्पितम् । यतः स्वबुद्ध्या कथने श्रुतज्ञान-स्याविनयो भवति, किञ्च–छद्मस्थानां दृष्टयोऽप्यपूर्णा भवन्ति तस्माद् यथा भगव-त्प्रतिपादितमेव त्वां ब्रवीमि=उपदिशामीत्यर्थः ॥ उक्तञ्च—

"सुअणाणस्स अविणओ, परिहरणिज्जो सुहाहिलासीहिं ।
छउमत्थाणं दिट्ठी, पुण्णाणत्थि–त्ति सुइयं इइणा ॥१॥" इति । सू.४९॥

इतिश्री–जैनाचार्य–जैनधर्मदिवाकर–पूज्य श्री घासीलालव्रतिविरचितायां
प्रश्नव्याकरणसूत्रस्य सुदर्शन्याख्यायां व्याख्यायां
हिंसादि पञ्चास्रवद्वारेषु प्राणवधाख्यं प्रथमम्–
अधर्मद्वारं समाप्तम् ॥ १ ॥

स्वामी श्री जंबूस्वामी से कहते हैं– (त्तिबेमि) हे जंबू ! प्राणवध का यह पूर्वोक्त स्वरूप निरूपण तथा चतुर्गति भ्रमणरूप उसका फल मैंने साक्षात् तीर्थंकर भगवान् महावीर के पास सुना है सो उसी के अनुसार यह तुमसे कहा है। इसमें मैंने अपनी ओर से कल्पित कर कुछ भी नहीं कहा है, क्यों कि अपनी बुद्धिसे कल्पित कर कथन करने में श्रुतज्ञान का अविनय होता है। तथा जबतक छद्मस्थावस्था रहती है तबतक ज्ञानकी मात्रा भी अपूर्ण रहती है अतः अपनी ओर से प्रतिपा-दित वस्तु का स्वरूप यथवत् प्रतिपादित नहीं हो सकता है, इसलिये मैंने जो यह प्रवचन स्वरूप कहा है वह भगवान द्वारा प्ररूपित ही कहा है। कहा भी है—

કહે છે—"त्तिबेमि" હે જમ્બૂ ! પ્રાણવધનું આ પૂર્વકથિત સ્વરૂપ નિરૂપણ તથા ચાર ગતિમાં ભ્રમણરૂપ તેનું ફળ મેં સાક્ષાત્ તીર્થંકર ભગવાન મહાવીર પાસે સાંભળેલ છે, અને તેમણે કહ્યા પ્રમાણે જ તે તમને કહ્યુ છે. તેની અંદર મેં મારી પોતાની કલ્પનાનું કાંઇ પણ ઉમેર્યું નથી, કારણ કે પોતાની બુદ્ધિથી કલ્પના કરીને કહેવાથી શ્રુતજ્ઞાનનો અવિનય થાય છે તથા જ્યાં સુધી છદ્મસ્થ રહે છે ત્યાં સુધી જ્ઞાનનું પ્રમાણ પણ અપૂર્ણ હોય છે, તેથી પોતાનાથી પ્રતિ-પાદિત વસ્તુનું સ્વરૂપ યથાવત્ (જેવું હોય તેવું જ) પ્રતિપાદિત થઈ શકતું નથી, તેથી મેં આ જે પ્રવચનસ્વરૂપ કહ્યુ છે તે ભગવાનદ્વારા જે પ્રમાણે પ્રરૂપિત છે તે પ્રમાણે જ કહ્યું છે. કહ્યુ પણ છે—

" सुअणाणस्स अविणओ, परिहरणिज्जो सुहाहिलासीहिं।
छउमत्थाणं दिट्ठी, पुण्णाणत्थि-त्ति सूइयं इइणा ॥१॥ " इति।

जो सुखाभिलाषी प्राणी हैं उनका कर्त्तव्य है कि वे श्रुतज्ञान का अविनय छोड़ें। छद्मस्थों की दृष्टि अपूर्ण रहती है यही बात यहां 'इति' इस पद से सूचित की है ॥१॥ ॥सू०४७॥

॥ प्रथम आस्रव—' अधर्म ' द्वार समाप्त ॥

" सुअणाणस्स अविणओ, परिहरणिज्जो सुहाहिलासीहिं।
छउमत्थाणं दिट्ठी, पुण्णाणत्थि-त्ति सूइयं इइणा ॥१॥ इति ॥

સુખાભિલાષી જીવોનું કર્તવ્ય છે કે તેમણે શ્રુતજ્ઞાનનો અવિનય કરવાનું છોડી દેવું જોઈએ. છદ્મસ્થોની દૃષ્ટિ અપૂર્ણ રહે છે, એજ વાત " इति " પદ દ્વારા અહીં સૂચિત કરવામાં આવી છે. ॥ સૂ. ૪૭ ॥

આ રીતે હિંસાદિ પંચાસ્રવ દ્વારમાં પ્રાણવધ નામનું
પ્રથમ દ્વાર સમાપ્ત થયું.

अथ द्वितीयमध्ययनम् ।

व्याख्यातं प्रथममास्रवद्वारं, साम्प्रतं द्वितीयमारभ्यते, अस्य च पूर्वेण सहायमभिसम्बन्धः पूर्वं यादृश नाम–कर्तृ–फलादिनिरूपणपूर्वकं प्रथमास्रवद्वाररूपं प्राणवधस्वरूपमुक्तम् । तस्य हेतुत्वात् ' यथोद्देशं निर्देशः ' इति न्यायप्राप्तत्वाच्चेत्यस्मिन् द्वितीयाध्ययनेऽलीकवचनं स्वरूपादिनिरूपणपूर्वकं प्रदर्श्यते, तस्येदमादिसूत्रम्–' इह खलु ' इत्यादि ।

मूलम्–इह खलु जंबू बिइयं च अलियवयणं लहुसग-लहुचवल भणियं, भयकरं, दुहकरं, अजसकरं, वेरकारगं, रति-अरति-रागदोसमणसंकिलेसवियरणं अलियं नियडिसाति जोगबहुलं नीयजणनिसेवियं निस्संसं अप्पच्चयकारगं परमसाहुगरहणिज्जं

द्वितीय द्वार प्रारंभ

प्रथम आस्रव द्वार का अर्थ कह दिया गया है, अब द्वितीय आस्रव द्वार प्रारंभ होता है । अब आस्रवद्वार का पूर्व आस्रवद्वार के साथ इस प्रकार से संबंध है–पूर्व आस्रवद्वार में स्वरूप, नाम कर्त्ता और फल आदि के निरूपण पूर्वक प्रथम आस्रवद्वाररूप प्राणवध का स्वरूप कहा है अब उसका हेतु होने से तथा " यथोद्देशं निर्देशः " उद्देश के अनुसार ही निर्देश होता है इस नियम के अनुसार न्यायप्राप्त होने से इस द्वितीय आस्रवद्वार में अलीक वचन का उसके स्वरूप आदि का निरूपण पूर्वक कथन किया जाता है । इस आस्रवद्वार का आदिम सूत्र यह है– ' इह खलु जंबू ' इत्यादि ।

બીજા દ્વારનો પ્રારંભ

પહેલા આસ્રવદ્વારનો અર્થ કહેવાઈ ગયો, હવે બીજા આસ્રવદ્વારનું વિવેચન શરૂ થાય છે. આ આસ્રવદ્વારનો આગળના આસ્રવદ્વાર સાથે આ પ્રકારનો સંબંધ છે–આગળના આસ્રવદ્વારમાં સ્વરૂપ, નામ, કર્ત્તા, ફળ આદિનું નિરૂપણ કરીને આસ્રવદ્વારરૂપ પ્રાણવધનું સ્વરૂપ બતાવ્યું છે. હવે તેના હેતુરૂપ હોવાથી, તથા " यथोद्देशं निर्देशः " ઉદ્દેશાનુસાર જ નિર્દેશ થાય છે તે નિયમાનુસાર ન્યાયયુક્ત હોવાથી આ બીજા આસ્રવદ્વારમાં અસત્ય વચનનું–તેનાં સ્વરૂપાદિનાં નિરૂપણ સહિત વિવેચન કરવામાં આવે છે. આં આસ્રવદ્વારનું પહેલું સૂત્ર આ છે—" इह खलु जंबू " ઈત્યાદિ.

परपीलाकारगं परमकिण्हलेस्ससहियं दुग्गइ विणिवायविवड्ढणं भवपुणब्भवकरं चिरपरिचियमणुगतं दुरंतं कित्तियं बित्तियं अधम्मदारं ॥ सू० १ ॥

टीका—हे जम्बू ! इह=अस्मिन् जिनशासने 'खल्विति' निश्चयेन 'बिइयं च' द्वितीयं च आस्रवद्वारम् 'अलियवयणं' अलीकवचनम्=असत्यभाषणं नाम। अस्यापि "यादृशो १, यन्नाम २, यथाकृतो ३, यादृशं फलं ददाति ४, येऽपि च कुर्वन्ति पापाः ५," इति पञ्चभिरन्तर्द्वारैः पूर्ववत् निरूपणं क्रियते। तत्र च यथाक्रमं 'यादृशः' इति द्वारमाश्रित्यालीकवचनस्वरूपमाह-'लहु' इत्यादि-'लहुसग लहुचवल भणियं' लघुस्वकलघुचपलभणितं, लघुः=तुच्छो गौरववर्जितः स्वः=स्वभावो येषां ते लघुस्वकाः, तेभ्योऽपि लघवश्चपलाश्च=चञ्चलकाया ये तैः

टीकार्थ-(जंवू) हे जम्बू! (इह) इन जिन शासनमें (खलु) निश्चयसे (बिइयं च अलियवयणं) द्वितीयआस्रव अलीक(असत्य)वचन-असत्यभाषण नामका है। इसका भी यह "अलीकवचनरूप आस्रवद्वार जैसा है१, जितने इसके नामहै २, प्राणियों द्वारा यह जिन मंद, तीव्र आदि परिणामों से किया जाता है ३, जिस प्रकार का उन्हे नरकादिरूपफल देता है ४, तथा जो पापी जीव इस असत्यभाषण को करते हैं ५" इन पांच अन्तर्द्वारों द्वारा पूर्व की तरह निरूपण किया जावेगा। अब सूत्रकार क्रमानुसार "यादृशः" इस द्वार को आश्रित करके अलीक(असत्य)वचनके स्वरूप को कहते हैं-(लहुसगलहुचवलभाणियं) जिनका स्वभाव गौरव वर्जित है ऐसे जीवों से भी जो हीन हैं लघु हैं, वे लघुस्वक लघु हैं तथा

ટીકાર્થ—"जंवू" હે જમ્બૂ! "इह" આ જૈનશાસનમાં "खलु" ખરેખર, "बिइयं च अलियवयणं" બીજો આસ્રવ અલીક વચન-અસત્ય ભાષણ નામનો છે. તેનું પણ નીચે પ્રમાણેનાં પાંચ અંતર્દ્વારો દ્વારા, આગળના આસ્રવ દ્વારની જેમ જ, નિરૂપણ કરવામાં આવશે (૧) આ અસત્ય વચનરૂપ આસ્રવ-દ્વાર કેવું છે? (૨) તેના કેટલા નામ છે? (૩) પ્રાણીઓ દ્વારા તે કયાં કયાં મંદ, તીવ્ર આદિ પરિણામોથી સેવાય છે? (૪) કેવા પ્રકારનાં નરકાદિરૂપ ફળ તેને આપે છે? (૫) તથા કયા કયા પાપી જીવ અસત્ય બોલે છે?

હવે સૂત્રકાર અનુક્રમે "यादृशः" આ દ્વારનો આધાર લઈને અસત્ય વચનનું સ્વરૂપ દર્શાવે છે—"लहुसगलहुचवलभणियं" ગૌરવહીન સ્વભાવના જીવોથી પણ જે હીન છે-લઘુ છે, તેઓ 'લઘુસ્વક લઘુ' હીનમાં હીન ગણાય છે. એવા લઘુસ્વતક લઘુ દ્વારા તથા ચંચળ મનવાળા દ્વારા બોલવામાં આવતું

भणितम्=उक्तं, 'भयकरं' भयकरं=भयजनकम्, 'दुहकरं' दुःखकरं=दुःखजनकम्, 'अजसकरं' अयशः करं=अयशजनकं, 'वेरकारगं' वैरकारकं=वैरोत्पादकं, 'रति अरतिरागदोसमण संकिलेसवियरणं' रत्यरतिरागद्वेषमनः संक्लेशवितरणं- रतिः=प्रीतिरसंयममार्गे, अरतिः=अप्रीतिः संयममार्गे, रागः = विषयेष्वनुरञ्जनं 'दोस' द्वेषः=द्रोहः, मनः संक्लेशः=चित्त सन्तापः, एतान् वितरति = ददाति यत्तत्तथा 'अलियं' अलीकं=निष्फल 'नियडि सातिजोगवहुलं' निकृतिसातियोगवहुलं=निकृतिः=कृतदुष्कृतकर्मापलापनार्थवचनं सातिः=अविश्वासस्तयोर्योगः =प्रयोगस्तेन बहुलं यत्तत्तथा-कपटाविश्वाससंभृतमित्यर्थः, 'नीयजणनिसेवियं' नीचजननिषेवितं=नीचैः=जातिकुलगुणादिभिरधमैर्जनैर्निषेवितं, 'निस्संसं' नृशंसं

जो चञ्चल शरीर हैं उनके द्वारा कहा गया यह असत्यभाषण (भयकरं) भय देनेवाला है। (दुहकर) दुःख उत्पन्न करने वाला है, (अजसकरं) अयश बढ़ाने वाला है, (वेरकारगं) वैर भाव को उत्पन्न कराने वाला है, (रइ अरइ रागदोसमणसंकिलेसवियरणं) रति-असंयम मार्ग में प्रीति, अरति-संयममार्ग में अप्रीति, राग-विषयों में अनुराग, दोस- परसे द्रोह एवं मणसंकिलेस-चित्तसंताप, इन सब दुर्गुणों को 'वियरणं' देने वाला है (अलियं) निष्फल है (नियडिसातिजोगवहुलं) किये हुए दुष्कृतकर्म का अपलाप करने के लिए अनेक जालरचना, तथा कहीं पर भी किसी पर विश्वास नहीं होने देना इन बातों का जिसमें अधिक से अधिक योग रहता है ऐसे स्वभाववाला है अर्थात्-कपट एवं अविश्वास से भरा हुआ है। (णीयजणणिसेवियं) इसका सेवन जो जाति, कुल एवं सद्गुणो से रहित होते हैं वे जन करते हैं। (निस्संसं) यह नृशंस-

તે અસત્ય વચન "भयंकर" ભયંકર છે, "दुहकर" દુઃખ ઉત્પન્ન કરનારૂં છે, "अजसकर" અપકીર્તિ વધારનાર છે, "वेरकारगं" વેરભાવ પેદા કરનાર છે, "रइ अरइ रागदोसमणसंकिलेसवियरणं" रइ-અસંયમમાર્ગમાં પ્રીતિ अरइ-અરતિ-સંયમ માર્ગમાં અપ્રીતિ, રાગ-વિષયો પ્રત્યે આસક્તિ, દોસ-પારકાનો દ્રોહ, અને મનસંકિલેસ મનમાં સંતાપ, આદિ દુર્ગુણો "वियरणं" દેનાર છે, "अलियं" નિષ્ફળ છે, "नियडिसातिजोगवहुलं" કરેલાં દુષ્કૃત્યોને છૂપાવવા માટે અનેક જાળરચના, તથા ક્યાંય પણ કોઇના ઉપર વિશ્વાસ ઉત્પન્ન થવા ન દેવો, વગેરે બાબતોનો જેમાં વધારેમાં વધારે યોગ રહે છે એવા સ્વભાવવાળું, એટલે કે કપટ અને અવિશ્વાસથી ભરેલું હોય છે. "णीयजणणिसेवियं" તેનું સેવન જાતિ, કુળ અને સદ્‌ગુણોથી રહિત લોકો કરે છે. "निस्संसं" તે નૃશંસ-ક્રૂર છે, અથવા

=क्रूरं यद्वा–निशंसं–निर्गता शंसा प्रशंसा यस्मात्तथा–प्रशंसावर्जितमित्यर्थः, 'अप्पच्चयकारगं' अप्रत्ययकारकम्=विश्वासनाशकम्, 'परमसाहुगरहणिज्जं' परमसाधुगर्हणीयं = परमा=उत्कृष्टाश्च ते साधवस्तीर्थंकरगणधरादयस्तैर्गर्हणीयं = निन्दनीयं, 'परपीलाकारगं' परपीडाकारकं, 'परमकिण्हलेस्ससहियं' परमकृष्ण-लेश्यासहितं=परमा=उत्कृष्टा कृष्णा=मलिना लेश्या=आत्मपरिणतिः, तया सहितं 'दुग्गइ विणिवाय विवड्ढणं' दुर्गतिविनिपातविवर्धनं=दुर्गतौ=नरकनिगोदादौ यो विनिपातः=निपतनं तस्य विवर्धनं=प्रवर्धकं 'भवपुणब्भवकरं' भवपुनर्भवकरं= पुनः पुनर्जन्मकारकं 'चिरपरिचियं' चिरपरिचितं=चिरात्=अनेकजन्मजन्मान्तरात् परिचितम् =अनादिमिथ्यात्वाविरतिप्रवाहविच्छेदा – भावात् 'अनुगतं=भवपर-

---

क्रूर है, अथवा निःशंस इस भाषण की कोई भी प्रशंसा नहीं करता है इसलिये यह प्रशंसा रहित है, (अप्पच्चय कारगं) यह बोलने वाले के विश्वास का नाशक होता है। (परमासाहुगरहणिज्जं) परमसाधु जो तीर्थंकर गणधर आदि हैं उनके द्वारा यह गर्हणीय–निंदनीय कहा गया ले। (परपीलाकारगं) इस वचन से पर को पीडा होने के सिवाय और कुछ नहीं होता है। (परमकिण्हलेस्ससहियं) इसके सेवन करने वालों की लेश्या–आत्मपरणति अत्यंत मलिन रहा करती है। (दुग्गइ-विणिवायविवड्ढणं) निगोद आदि दुर्गतियों में यह जीव के पतन का विशेष रूप से वर्धक होता है। (भवपुणब्भवकरं) इसके बोलने वाले जीवों का पुनः पुनः संसार में जन्म होता रहता है। (चिर परिचियं) अनेक जन्म जन्मान्तर से यह परिचित रहता है–अर्थात्–जन्म जन्मा-न्तरों में इसका संस्कार साथ रहे आने के कारण अनादि काल से लगे

એ ભાષણની કોઇ પ્રશંસા કરતું નથી તે કારણે તે પ્રશંસા રહિત છે, "अप्प-च्चयकारगं" તે બોલનાર પ્રત્યેના અન્યના વિશ્વાસનુ નાશકર્ત્તા છે. "परमसाहु-गरहणिज्जं" પરમ સાધુ જે તીર્થંકર ગણધર આદિ છે, તેમના દ્વારા તે ગર્હ-ણીય–નિંદનીય બતાવવામાં આવેલ છે "परपीलाकारगं" તે વચનથી પરને પીડા થવા સિવાય બીજું કંઇપણ થતું નથી. "परमकिण्ह लेस्ससहियं" તેનું સેવન કરનારની લેશ્યા–આત્મપરિણતિ અત્યંત મલિન રહ્યા કરે છે- "दुग्गइ विणिवाय विवड्ढणं" નરક, નિગોદ આદિ દુર્ગતિયોમાં જીવને પાડવાને માટે તે વિશેષરૂપે વર્ધક હોય છે. "भवपुणब्भवकरं" તે અસત્ય બોલનાર જીવોને ફરી ફરીને સંસારમાં જન્મ લેવો પડે છે. "चिरपरिचियं" અનેક જન્મ જન્માંતરોથી તે પરિચિત રહે છે. એટલે કે જન્મ જન્માંતરોમાં તેના સંસ્કાર સાથે રહેતા

म्पराऽनुगतं सम्यग्ज्ञानाभावात्, दुरन्तं=विपाकदारुणत्वात् 'विइयं' द्वितीयम् 'अधम्मदारं' अधर्मद्वारं 'कित्तियं' कीर्तितं=कथितम् ॥ सू. १ ॥

एतेन यादृशं मृषावादस्वरूपमस्ति तत्प्रथमान्तद्वारे प्रोक्तम्। साम्प्रतं 'यन्नामे'ति द्वितीयान्तद्वारे तन्नामान्याह–'तस्स' इत्यादिना–

मूलम्--तस्स य णामाणि गोणाणि हुंति तीसं तं जहा–अलियं १, सढं २, अणज्जं ३, मायामोसो ४, असंतकं ५, कूडकवडमवत्थुगं च ६, निरत्थयमवत्थयं च ७, विद्देसगरहणिज्जं ८, अणुज्जुकं ९, कक्कणा य १०, वंचणा य ११, मिच्छापच्छाकडं च १२, साइ १३, उस्सुत्तं १४, उक्कूलं च १५, अट्टं १६, अब्भक्खाणं च १७, किब्बिसं १८, वलयं १९, गहणं च २० मम्मणं च २१, नूमं २२, नियई २३, अप्पच्चओ २४, असंमओ २५, असच्चसंघत्तणं २५, विवक्खो २७, उवहियं २८, उवहि असुद्धं २९, अवलोवोत्ति ३०, विइयस्स इमाणि एवमाइयाणि नामधेज्जाणि होंति तीसं सावज्जस्स अलियस्स वयजोगस्स अणेगाइं ॥ सू. २ ॥

हुए मिथ्यात्व, अविरति के प्रवाह का विच्छेद नहीं होता है। (अणुगयं) सम्यग्ज्ञानका अभाव होने से यह जीव के साथ भवपरम्परानुगत होता है। (दुरंतं) विपाक इसका बहुत ही अधिक दारुण होता है इसलिये यह जीव के लिये दुरन्त कहा गया है। इस तरह से (बिइयं) इस द्वितीय अधर्म द्वार का (कित्तियं) सूत्रकार ने तीर्थंकर परंपरा के वर्णन अनुसार वर्णन किया है ॥सू. १॥

હોવાને કારણે અનાદિ કાળથી લાગેલ મિથ્યાત્વ, અવિરતિ આદિનો પ્રવાહ તૂટતો નથી. "अणुगयं" સમ્યગ્ જ્ઞાનનો અભાવ હોવાથી તે જીવની સાથે ભવપરંપરાનુગત હોય છે. "दुरतं" તેનો વિપાક "परिणाम" ઘણો જ દારુણ હોય છે, તેથી તે જીવને માટે દુરન્ત દર્શાવાયું છે આ રીતે "बिइयं" આ બીજા અધર્મદ્વારનું 'कित्तियं" સૂત્રકારે તીર્થંકર પરંપરાએ કરેલ વર્ણન પ્રમાણેનું વર્ણન કર્યું છે. ॥ સૂ-૧ ॥

टीका—'तस्स य' तस्य च मृषावादस्य द्वितीयास्रवद्वारस्य 'गोणाणि' गौणानि=गुणनिष्पन्नानि 'तीसं' त्रिंशत् 'णामाणि' नामानि 'हुंति' भवन्ति 'तं जहा' तद्यथा-(१) 'अलियं' अलीकं=निष्फलं शुभफलवर्जितत्वात्, (२) 'सढं' शठं=कपटिजनसमाचरितत्वात्, (३) 'अणज्जं' अनार्यम्=अनार्यजनोक्त-

---

"जारिसओ" इसे प्रथम द्वार में मृषावाद का स्वरूप कहा गया है, अब सूत्रकार 'जं नामा' इस दूसरे द्वार में इसके कौन २ से नाम हैं वह कहते हैं—'तस्स य णामाणि' इत्यादि।

टीकार्थ-(तस्स) इस द्वितीय आस्रवद्वार रूप मृषावाद के (गोणाणि) गुण निष्पन्न (तीसं) तीस (णामाणि) नाम (हुंति) हैं (तंजहा) वे इस प्रकार हैं-(अलियं १, संढं २, अणज्जं ३, मायामोसो ४, असंतकं ५, कूडकवडमवत्थुगं ६, च निरत्थयमवत्थयं ७ च, विद्देसगरहणिज्जं ८, अणज्जुकं ९, कक्कणा १० य, वंचणा ११ य, मिच्छापच्छाकडं १२ च, साइ १३, उस्सुत्तं १४, उक्कूलं १५ च, अट्टं १६, अब्भक्खणं १७ च, किव्विसं १८, वलयं १९, गहणं २० च, मम्मणं २१ च, नूमं २२, नियई, २३, अप्पच्चओ २४, असंयमओ २५, असच्चसंघत्तणं २६, विविक्खो २७, उवहियं २८, उवहि असुद्धं २९, अवलवो ३० त्ति) यह असत्य-भाषण शुभफलों से रहित होने के कारण अलीकफल रहित होता है इसलिये इसका नाम अलीक है १। कपटीजनों के द्वारा यह अपना काम

"जारिसओ" આ પ્રથમ દ્વારમાં મૃષાવાદ-અસત્ય વચન-નું સ્વરૂપ કહે-વામાં આવ્યું છે. હવે સૂત્રકાર "जनामा" એ પદોથી શરૂ થતા બીજા દ્વારમાં તેનાં કયાં કયાં નામો છે તે બતાવે છે-"तस्स य णामाणि' ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ"-तस्स" આ બીજા આસ્રવદ્વારરૂપ મૃષાવાદનાં" "गोणाणि" ગુણાનુસાર "तीसं" ત્રીસ 'णामाणि" નામ "हुंति" છે "तं जहा" તે આ પ્રમાણે છે.

"अलियं १, संढं २, अणज्जं ३, मायामोसो४, असंतकं५, कूडकवडम-वत्थुगं६, च, निरत्थयमवत्थय७, च विद्देसगरहणिज्जं ८, अणज्जुकं ९, कक्कणा १० य, वंचणा ११ य, मिच्छापच्छाकडं १२ च, साइ १३, उस्सुत्त१४, उक्कूलं १५ च, अट्टं १६, अब्भक्खणं १७ च। किव्विसं १८, वलयं १९, गहणं २० च, मम्मणं २१ च, नूमं २२, नियई २३, अप्पच्चओ २४, असंयमओ २५, असच्चसघयणं २६, विविक्खो २७, उवहियं २८, उवहिअसुद्धं २९, अवलोवो ३० त्ति" (૧) તે અસત્ય ભાષણ શુભ ફળોથી રહિત હોવાને કારણ "अलीक" ફળરહિત હોય છે તેથી તેનું નામ "अलीक" પડયું છે (૨)

त्वात्, (४) 'मायामोसो' मायामृषा=मायापूर्वकत्वादसत्यभाषणस्य मायामृषेति नाम, (५) 'असंतकं' असत्कं=अविद्यमानं-सत् यस्मिंस्तदसत्कम्=असत्यम्, (६) 'कूडकवडमवत्थुगं' कूटकपटावस्तुकं=तत्र कूटं=परवञ्चनार्थं न्यूनाधिकभाषणं कपटं भाषाविपर्ययकरणम् अवस्तु=अविद्यमानवस्तु कथनम्=यथा-'जगतः कर्ता ईश्वरः' इत्यादि कथनम् कूटादीनां त्रयाणां समानार्थकत्वादेकतमत्वे नैव गणनादिदमेकं नाम, (७) निरत्थयमवत्थयं च' निरर्थकमपार्थकं च = निर्गतोऽर्थोयस्मिस्तत् = सत्यार्थ हीनम्, अपार्थम्=अपगतार्थमसम्बद्धार्थमित्यर्थः, (८) 'विद्देसगरहणिज्जं'

बनाने के लिये प्रयोग से लाया जाता है इसलिये इसका दूसरा नाम शठ है २। अनार्यजनों द्वारा यह बोला जाता है इसलिये इसका नाम अनार्य है ३। यह असत्यभाषण माया पूर्वक होता है इसलिये इसका नाम मायामृषा है ४। असत्यभाषण में जो विषय कहा जाता है वह उसरूप में नहीं होता है इसलिये इसका नाम असत्य है ५। परवंचन के लिये इसमें न्यूनाधिक बोलना पड़ता है, तथा इसमें बोलने की भाषा की शैली भी भिन्न प्रकार की होती है, और जो वस्तु इसमें कही जाती है वह अविद्यमान होती है, जैसे यों कहना कि जगत का कर्त्ता ईश्वर है सो यह कूटकपटावस्तुक नाम का असत्य है। यहां कूट कपट अव-स्तुक, इन तीनों की समानार्थकता होने के कारण एक पद रूप से गिनती करली गई है ६। यह भाषण सत्यार्थ से हीन होता है इसलिये इसका नाम निरर्थक है। इसमें वाच्य अर्थ, संबंध विहीन रहता है इस-

---

કપટી લોકો દ્વારા પોતનું કાર્ય સાધવા માટે તેનો પ્રયોગ કરાય છે, તેથી તેનું બીજું નામ "शठ" છે, (૩) અનાર્યજન દ્વારા તે બોલાય જે તેથી તેનું ત્રીજું નામ "अनार्य" છે (૪) તે અસત્ય ભાષણ માયા પૂર્વક થાય છે તેથી તેનું ચોથું નામ "मायामृषा" છે. (૫) અસત્ય ભાષણમાં જે વિષયનું કથન કરાય છે તે યથાર્થ-સાચા સ્વરૂપે-કરાતું નથી તેથી તેનું પાંચમું નામ 'असत्य" છે (૬) અન્યની વંચનાને માટે તેમાં ન્યૂનાધિક બોલવું પડે છે, અને તે બોલ-વાની શૈલી પણ જુદા જ પ્રકારની હોય છે, અને જે વસ્તુ તેમાં કહેવાય છે તે અવિદ્યમાન હોય છે, જેમ કે "જગતનો કર્ત્તા ઇશ્વર છે" તે પ્રમાણે કહેવું તે આ પ્રકારના આ પ્રકારના અસત્યને 'कूटकपटावस्तुक असत्य" કહે છે. અહીં કૂટ, કપટ અને અવસ્તુક એ ત્રણે પદોથી સમાનાર્થકતા હોવાથી એક જ પદ રૂપે ગણવામાં આવેલ છે. (૭) તે ભાષણ સત્યાર્થ રહિત હોય છે તેથી તેનું નામ નિરર્થક છે તેમાં વાચ્ય અર્થ, સંબંધ રહિત હોય છે તેથી તેનું

विद्वेपगर्हणीयं=विद्वेषात्=विद्वेपसंभृतत्वाद् इदमलीकवचनं गर्हणीयं=निन्द्यं महापुरुषैः, (९) 'अणुज्जुकं' अनृजुकम् = असरलं–सरलभाववर्जितमित्यर्थः, (१०) 'कक्कणा य' कल्कना च=पापं प्राणातिपातादिरूपम्, (११) 'वंचणा य' वञ्चना =प्रतारणा, (१२) 'मिच्छापच्छाकडं च' मिथ्यापश्चात् कृतं=मिथ्येतिबुद्ध्या साधुभिः पश्चात् कृतं = पृष्ठे कृतं तिरस्कृतमित्यर्थः, (१३) 'साइ' सातिः= अविश्वासः, (१४) 'उस्सुत्तं' उत्सूत्रम्–विरुद्धार्थ–निरूपणम्, (१५) 'उक्कूलं' उत्कूलं=सन्मार्गतटात् परिभ्रष्टकारकम्, (१६) 'अट्टं' आर्त्तम्, आर्त्तध्यानहेतु-

लिये इसका नाम अपार्थ है ७। यह विद्वेष से भरा रहने के कारण गर्हणीय होता है–महापुरुषों द्वारा निंद्य होता है इसलिए इसका नाम विद्वेप गर्हणीय है ८। इसमें भावों की सरलता नहीं होती है, अर्थात्–यह सरल स्वभाव से वर्जित रहता है इसलिये इसका नाम अनृजुक है ९। कल्कना शब्द का अर्थ पाप है, यह मृषावचन प्राणातिपातादिरूप होता है इसलिये इसका नाम कल्कना है १०। इसमें दूसरों की प्रतारणा होनी है इसलिये इसका नाम वंचना है ११। मिथ्या समझकर साधु पुरुष इसका तिरस्कार करते हैं इसलिये इसका नाम मिथ्यापश्चात्कृत है १२। साति शब्द का अर्थ अविश्वास है, मिथ्याभापण विश्वास रहित होता है। इसलिए इसका नाम साति है १३। विरुद्ध अर्थ का इसमें निरूपण होता है इसलिये इसका नाम उत्सूत्र है १४। जीव को यह सन्मार्ग रूप तट से भ्रष्टकर देता है इसलिये इसका नाम उत्कूल है १५। यह आर्त्तध्यान का हेतु होता है इसलिये इसका नाम आर्त्त है

નામ "अपार्थ" છે. (૮) તે વિદ્વેષથી પૂર્ણ હોવાથી ગર્હણીય–મહાપુરુષો દ્વારા નિંદ્ય-હોય છે, તેથી તેનું નામ "विद्वेप गर्हणीय" છે (૯) તેમાં ભાવોની સરલતા હોતી નથી, એટલે કે તે સરળ સ્વભાવથી રહિત હોય છે, તેથી તેનું નામ "अनृजुक" છે." कल्कना" શબ્દનો અર્થ પાપ થાય છે. (૧૦) તે મૃષાવચન પ્રાણાતિપાતાદિરૂપ હોય છે, તેથી તેનું નામ "कल्कना" છે. (૧૧) તે અસત્ય વચન વડે અન્યની પ્રતારણા થાય છે, તેથી તેનું નામ "वंचना" છે (૧૨) મિથ્યા સમજીને સાધુ પુરુષ તેનો તિરસ્કાર કરે છે; તેથી તેનું નામ "मिथ्यापश्चात्कृत" છે (૧૩) "साति" શબ્દનો અર્થ 'અવિશ્વાસ' થાય છે, તેથી તેનું નામ "सांति" છે. (૧૪) વિરુદ્ધ અર્થનું તેમાં નિરૂપણ થાય છે, તેથી તેનું નામ "उत्सूत्र" છે. (૧૫) જીવને તે સન્માર્ગરૂપ કિનારેથી ભ્રષ્ટ કરે છે માટે તેનું નામ "उत्कूल" છે (૧૬) તે આર્ત્તધ્યાનના હેતુરૂપ હોય છે, તેથી તેનું નામ "आर्त्त" છે. (૧૭) તેના દ્વારા અસત્–અવિદ્યમાન્

त्वात् (१७) 'अब्भक्खाणं' अभ्याख्यानम्=असद्दोषारोपणम्, (१८) 'किब्बिसं' किल्विषं=पापं-प्राणातिपातादिहेतुत्वात्, (१९) 'वलयं' वलयमिव वक्रत्वाद् कुटिलमित्यर्थः, (२०) 'गहणं' गहनं=गहनमिव गहनं-वनमिव दुरवगाहमित्यर्थः, (२१) 'मम्मणं' मन्मनम् = मन्मनमिव मन्मनम् अस्फुटत्वात्। (२२) 'नूमं' छादनं=परगुणाच्छादने पिधानमिव, (२३) 'नियई' निकृतिः=मायाच्छादनार्थ-वचनं विप्रलम्भनं वा, (२४) 'अप्पच्चओ' अप्रत्ययः=अविश्वासः (२५) 'असं·

१६। इसके द्वारा असत्-अविद्यमान दोषों का आरोपण किया जाता है इसलिये इसका नाम अभ्याख्यान है १७। यह प्राणातिपात आदि पापों का हेतु होता है इसलिये इसका नाम किल्विष है १८। वलय के जैसा यह कुटिल रहा करता है इसलिये इसका नाम वलय है १९। वन के समान यह दुरा वगाह होता है इसलिए इसका नाम गहन है २०। जिस प्रकार तोतली बोली में शब्दस्फुट नहीं हो पाते है उसी प्रकार इसमें भी वस्तु का वास्तविक भान अस्फुट रहा करता है इसलिये इसका नाम मम्मण है २१। जिस तरह ढक्कन वस्तु को ढांक देता है उसी प्रकार यह भी पर के गुणों को आच्छादन कर देता है इसलिए इसका नाम नूम है। नूम नाम छादनका है२२, इसमें बोलनेवाला अपनी मायाको ढकने का प्रयास करता है, अथवा दूसरों को ढकने का उपाय रचता है इसलिये इसका नाम निकृति है २३। कोई भी सज्जन पुरुष झूठ वचनका विश्वास नहीं करते हैं इसलिये इसका नाम अप्रत्यय-अविश्वास है २४।

દોષોનું આરોપણ કરાય છે તેથી તેનું નામ "अभ्याख्यान" છે. (૧૮) તે પ્રાણાતિપાત આદિ પાપોનું કારણ હોય છે, તેથી તેનુ નામ "किल्विष" છે. (૧૯) વલયના જેવું તે કુટિલ હોય છે, તેથી તેનું નામ "वलय" છે. (૨૦) વનના જેવું તે ગહન હોય છે, તેથી તેનું નામ "गहन" છે. (૨૧) જેમ તોતડા વચનો બરાબર સમજી શકાતાં નથી એજ પ્રમાણે અસત્ય ભાષણમાં પણ વાસ્તવિકભાવ અસ્ફુટ-અસ્પષ્ટ રહ્યા કરે છે, તેથી તેનું નામ "मम्मण" છે (૨૨) જેમ ઢાંકણા વડે વસ્તુને ઢાંકી દેવાય છે, એ જ રીતે અસત્ય વચન પણ ગુણોને ઢાંકી દેનાર હોવાથી તેનું નામ 'नूम' છે 'नूम' એટલે આચ્છા· દન-આવરણ· (૨૩) અસત્ય ભાષણમાં બોલનાર પોતાની માયાને ઢાંકવાનો પ્રયાસ કરે છે, અથવા બીજાને ઢાંકી દેવાના ઉપાય રચે છે, તેથી તેનું નામ "निकृति" છે. (૨૪) કોઇ પણ સજ્જન પુરુષ અસત્ય વચન પર વિશ્વાસ મૂકતો નથી, તેથી તેનું નામ અપ્રત્યય "अविश्वास" છે, (૨૫) ન્યાયજ્ઞ પુરુષો

मओ ' असम्मतः=न्यायज्ञैरनाचरितः, (२६) ' असच्चसंधत्तणं ' असत्यसन्धत्वम्= असत्यं-सन्दधाति=सम्मिश्रयति सततं यः सोऽसत्यसन्धस्तस्य भावोऽसत्यसन्धत्वं =मृषाभाषि धर्मः, (२७) ' विवक्खो ' विपक्षः=सत्य प्रतिकूलत्वात् (२८) उवहि यं ' औपधिकं=मायामयम्=कपटगृहमित्यर्थः, (२९) उवहि असुद्धं ' उपध्यशुद्धम् =उपधिः=सावद्यकर्म तेनाशुद्धम् , (३०) 'अवलोकोत्ति' अपलोप इति=कुर्वाणोऽपि 'नाहं करोमि किञ्चि 'दित्यादिभिर्वस्तु प्रच्छादनम् ' विइयस्स ' द्वितीयस्याधर्म-द्वारस्य ' इमाणि ' इमानि=पूर्वोक्तानि ' एवमाइयाणि ' एवमादिकानि-अलीका-दीनि ' सावज्जस्स ' सावद्यस्य पापसहितस्य ' अलियस्स ' अलीकस्य=मृषावा-

---

न्यायज्ञ पुरुषों द्वारा यह असंमत है-वे पुरुष इसका कभी भी सेवन नहीं करते हैं इसलिये यह असंमत है २५। यह मृषाभाषियों का धर्म है इसलिये इसका नाम असत्यसंघात है २६। सत्यभाषण का यह विपक्षी है इसलिये इसका नाम विपक्ष है। कपटों का यह घर है इसलिये इसका नाम औपधिक है २८। सावद्यकर्मों से यह सतत अप-वित्र बना रहता है इसलिये इसका नाम उपध्यशुद्ध है २९। उपधि शब्द का अर्थ सावद्यकर्म है। कार्य करता हुआ भी व्यक्ति इसके प्रभाव से प्रभावित होकर कहदिया करता है कि मैं कुछ भी नहीं कर रहा हूं। इस तरह इसके द्वारा वस्तु का प्रच्छांदन होता है-अतः इसका नाम अलोप है ३०। (विइयस्स) इस तरह द्वितीय अधर्मद्वार के (इमाणि) ये पूर्वोक्त अलीक आदि (तीसं नामधेज्जाणि) गुणनिष्पन्न तीस नाम हैं। तथा (एवमाइयाणि) इनसे अतिरिक्त और भी इसी

તેને માન્ય કરતા નથી-તેઓ તેનું કદી પણ સેવન કરતાં નથી, તેનું નામ "असंमत" (२६) તે અસત્ય વચન મૃષાવાદીઓનો ધર્મ છે, તેથી તેનું નામ "असत्यसंघात" છે (૨૭) સત્ય ભાષણનું તે વિપક્ષી-વિરૂદ્ધનું છે, તેથી તેનુ નામ "विपक्ष" છે (૨૮) કપટોનું તે ધામ છે, તેથી તેનું નામ "औपधिक" છે. (૨૯) સાવદ્ય કર્મોથી તે સતત અપવિત્ર રહે છે, તેથી તેનું નામ, 'उप-ध्यशुद्ध" છે 'उपधि' શબ્દનો અર્થ સાવદ્ય કર્મ છે, (૩૦) કાર્ય કરતી વ્ય-ક્તિ પણ તેના પ્રભાવની અસર નીચે આવી જઇને કહી દે છે કે " હુ કંઇ કરતો નથી. " આ રીતે તેના દ્વારા વસ્તુનું પ્રચ્છાદન થાય છે, તેથી તેનું નામ "अपलोप" છે. " विइयस्स " આ રીતે બીજા અધર્મદ્વારના " इमाणि " પૂર્વોક્ત અલીક આદિ " तीसं नाम धेज्जाणि " ગુણાનુસાર ત્રીસ નામ છે. તથા " एवमाइयाणि " તે ઉપરાન્ત બીજાં પણ તે જ પ્રકારના " सावज्जस्स " પાપ

दस्य 'वयजोगस्स' वचनयोगस्य 'अणेगाइं' अनेकानि 'तीसं' त्रिंशत् 'नामधेज्जाणि' नामधेयानि=नामानि 'होंति' भवन्ति ॥ सू० २ ॥

एवं 'यन्नामे'तिद्वारमुक्त्वा यथाकृतं=येन मन्दतीव्रादि परिणामेन अलीकं वदन्ति ये च जना वदन्ति इति तृतीयपञ्चममन्तर्द्वारद्वयमाह='तं चे'त्यादिना—

मूलम्—तं च पुण वदंति केइ अलियं पावा असंजया, अविरया, कवडकुडिल कडुय चटुल भावा कुद्धा लुद्धा भयाय हस्सट्ठिया य सक्खी चोरा चारभडा खंडरक्खा जियजूयकरा य गहिय गहणा कक्क गुरुग कारगा कुलिंगी उवहिया वाणियगा य कूडतूल-कूडमाणी कुडकाहा-वणोवजीविया पडगारका कलाया कारुइज्जा वंचणपरा चारियचाटुयार नगर गोत्तिय परियारगा दुट्ठवाइसूयक अणबलभणिया य पुव्वकालिय वयण दच्छा साहसिया लहुस्सगा असच्चा गारविया असच्चट्ठावणाहि चित्ता उच्चच्छंदा अणिगाहा अणियता छंदेण मुक्कवाया भवंति ॥ सू. ३ ॥

टीका—'तं च' तच्च 'पुण' पुनः 'अलियं' अलीकं 'केइ' केऽपि 'पावा' पापाः=पापिनो वदन्ति न तु साधवस्तेषामलीकवचननिवृत्तत्वात्।

तरह के (सावज्जस्स) पापसहित इस (अलियस्स वयजोगस्स) अलीकमृषावाद-वचनयोगके (अणेगाइं) अनेक नाम भी (होंति) हैं ॥सू–२॥

इस प्रकार से द्वितीय द्वार द्वारा इसका कथन कर अब सूत्रकार "जहयकओ–यथाकृत:" जैसे यह किया गया है इस तृतीय द्वार का, तथा "जेवि य करेंति पावा–येऽपि च कुर्वन्ति पापा:" जो पापीजन इसे करते हैं, इस पंचम द्वार का प्रतिपादन करते हैं—'तं च पुण वदंति' इत्यादि।

શુક્ત, આ "अलियस्स वयजोगस्स" અલીક–મૃષાવાદ–વચનયોગના "अणेगाइं" અનેક નામ પણ होंति" છે ॥ સૂ–૨ ॥

આ પ્રમાણે બીજા દ્વાર વડે તેનું કથન કરીને હવે સૂત્રકાર "जहयकओ –यथाकृत" ક્યી રીતે તે કરાયા છે તે ત્રીજા દ્વારનું, તથા "जेविय करेंति पावा–येऽपि च कुर्वन्ति पापाः" ક્યા પાપી જીવો તેનું સેવન કરે છે, પાંચમાં દ્વારનું પ્રતિપાદન કરે છે–" तं च पुण वदंति " ઈત્યાદિ.

कीदृशास्ते पापिन इत्याह-'असंजया' असंयताः=अवशेन्द्रियाः 'अविरया' अविरताः=पापकर्मभ्योऽनिवृत्ताः पापकर्मरता इत्यर्थः, 'कवडकुडिलकडुयचटुल-भावा' कपटकुटिलकटुकचटुल भावाः=कपटेन=छलेन हेतुना कुटिलः=वक्रः, कटुकः =अनिष्टः चटुलः=तृष्णया चञ्चलो भावः=परिणामो येषां ते असत्यभाषणजनित भावि नरकनिगोदाद्यनन्तदुःखभोगिनो जना एवासत्यं समाचरन्तीत्यर्थः। तथा 'कुद्धा' क्रुद्धाः=क्रोधिनः,-'लुद्धा' लुब्धाः-लोभिनः, क्रोधात् लोभाच्चासत्यं वदन्ति एवं मुग्धादयोऽपि अस्यैव-शास्त्रस्य प्रथमद्वारस्थ त्रिंशतितमसूत्रपाठात्

टीकार्थ-(तं च पुण अलियं केइ पावा वदंति) उस अलीक वचनको जो पापी जन होते हैं वे ही बोलते हैं सब प्राणी नहीं। क्यों कि जो साधु-जन होते हैं वे इस अलीक वचन से सदा दूर रहते हैं। असत्यभाषण करने वाले कैसे होते हैं यह बात सूत्रकार इन वक्ष्यमाण विशेषणों द्वारा अब समझाते हैं-(असंजया) वे असंयत होते हैं-इन्द्रियां उनके वश में नहीं होती हैं। (अविरया) अविरत होते हैं-पापकर्मों से निवृत्त नहीं होते हैं, अर्थात्-वे पापकर्मों में निरत रहते हैं। (कवडकुटिलकडुय-चटुलभावा) वे कपटी होने से कुटिल-वक्र, कटुक-अनिष्ट, और चटुल-तृष्णा से चंचल हैं परिणाम जिनका ऐसे होते हैं, अर्थात्-असत्यभाषण जनित पाप उदय से भावी नरकनिगोद आदि के अनंत दुःखों को भोगनेवाले मनुष्य ही असत्य वचनों को बोला करते हैं। (कुद्धा लुद्धा) वे क्रोधी होते हैं, लोभी होते हैं, अर्थात्-क्रोध एवं लोभ से असत्यभा-

---

"तं च पुण अलियं केइ पावा वदंति" "असंजया" ते असत्य वचन पापी लोको ज बोले छे बधा जीवो बोलतां नथी, कारण के सज्जनो तो ते अलीक वचनथी सदा दूर रहे छे. असत्य भाषण करनार लोको केवां होय छे, ते वातने सूत्रकार नीचे प्रमाणेनां विशेषणो द्वारा समजावे छे.

टीकार्थ-"असंजया" तेओ असंयत होय छे-ईन्द्रियो तेमने वश होती नथी. "अविरया" अविरत होय छे-तेओ पापकर्मोथी निवृत्त थतां नथी, એटले के तेओ पापकर्मोमां ज लीन रहे छे. "कवडकुटिलकडुयचटुलभावा" तेओ कपटी होवाथी कुटिल-वक्र, कटुक-अनिष्ट, अने चटुल-तृष्णाथी चंचळ वृत्ति-वाळा होय छे, એटले के असत्य भाषण जनित पापना उदयथी भावी नरक निगोद अनंत दुःखोने भोगवनार मनुष्य ज असत्य वचनो बोल्या करे छे. "कुद्धा लुद्धा" ते क्रोधी होय छे तथा लोभी होय छे એटले के क्रोध अने लोभथी असत्य वचनो बोले छे. એ ज प्रमाणे मुग्ध आदि विशेषणोथी युक्त

संग्राह्याः । ' भयाय=अन्येषां भयोत्पादनाय ' व्याघ्रः समागतः ' इतिरीत्या मृपावादः अथवा भयाच्च 'हस्सट्ठिया य ' हास्यार्थिकाः, अथवा हास्यार्थाय च= हास्यं कर्तुमपि तथा वदन्ति ' सक्खी ' साक्षिणःसाक्षिभूतान्यायालयादौ ' चोरा' चौरा-निग्रहादौ ' चारभडा ' चारभटाः=तत्र चाराः गूढपुरुषाः, भटाः=योधाः,

---

षण करते हैं । इसी तरह मुग्धादिक जो जीव होते हैं कि जिन्हें प्राण-वध के प्रकरण में २० वें सूत्र में कहा गया है वे भी असत्यभाषण करते हैं । कोई धन के लिये, कोई धर्म के लिये, कोई इन्द्रियों के भोगों के निमित्त काम के लिये, और कोई २ अर्थ, धर्म और काम इन तीनों के लिये असत्यभाषण करते हैं । (भयाय) कितनेक कितनेक जीव ऐसे भी होते हैं जो दूसरों को भय उत्पन्न करने के अभिप्राय से असत्यभाषण कर दिया करते हैं । " भयाय " की संस्कृत छाया "भयाच्च" ऐसी भी होती है-इसका तात्पर्य तब ऐसा होगा कि कितनेक जीव भय से भी असत्यभाषण कर दिया करते हैं । (हस्सट्ठियाय) कितनेक जीव ऐसे भी होते हैं जो हँसी मजाक में असत्यभाषण कर देते हैं, अथवा दूसरों की हँसी उडाने के अभिप्राय से असत्यभाषण करने लगते हैं । (सक्खी) जो न्यायालय-कचहरी आदि में दूसरों की साक्षी देते हैं वे भी असत्यभाषण करते हैं । (चोरा) चोरी करने वाले जो पुरुष होते हैं वे निग्रह आदि अवस्था के उपस्थित होने पर असत्यभाषण करते हैं।

જે જીવો હોય છે, જેમનું પ્રાણુવધના ૨૦મા પ્રકરણુમાં વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે, તે જીવો પણુ અસત્ય બોલે છે. એટલે કે કેટલાક મુગ્ધ-મોહાધીન વૃત્તિવાળા અસત્ય બોલે છે. કેટલાક ક્રોધ, લોભ અને મોહ એ ત્રણેને વશ થઈને અસત્ય બોલે છે કેટલાક લોકો ધનને માટે, કેટલાક ધર્મને માટે, કોઇ ઇન્દ્રિયોના ભોગોને નિમિત્તે, અને કોઈ કોઇ લોકો અર્થ, ધર્મ અને કામ, એ ત્રણેને નિમિત્તે અસત્ય બોલે છે. "भयाय" કેટલાક એવા જીવો પણુ હોય છે કે જે બીજાને ભય પમાડવાને માટે અસત્ય બોલે છે " भयाय " ની સંસ્કૃત છાયા " भयाच्च " પણુ થાય છે. ત્યારે તેનો અર્થ એવો થાય છે કે કેટલાક જીવો ભયને કારણે પણુ અસત્ય બોલે છે " हस्सट्ठिया य " કેટલાક લોકો એવા પણુ હોય છે. કે જેઓ મજાક-મશ્કરીમાં પણુ અસત્ય બોલી નાખે છે, અથવા બીજાની મજાક કરવાને નિમિત્તે અસત્ય બોલવા મંડે છે "सक्खी" ન્યાયાલય આદિમા બીજાની સાક્ષી આપનારા લોકો પણુ અસત્ય બોલે છે " चोरा " ચોરી કરનારા લોકો, જેલમાં જવાનો પ્રસંગ ઉપસ્થિત થતાં અસત્ય બોલે છે.

'खंडरक्खा' खण्डरक्षाः=शुल्कपालाः–राजग्राह्यद्रव्यसंग्राहका इत्यर्थः, 'जियजूयकरा' जितद्यूतकराः=तत्र जिताः=प्रतिस्पर्द्धिद्यूतकरैः पराजयं प्राप्ताः, द्यूतकराः=द्यूतक्रीडकाः 'गहियगहणा' गृहीतग्रहणाः = गृहीतानि=स्थापितानि ग्रहणानि = बन्धक द्रव्याणि यैस्ते 'कक्कगुरुगकारगा' कल्कगुरुककारका = कल्कगुरुकं =माया संभारसंभृतं वाक्यं तत्कारकाः=कपटिन इत्यर्थः, कुलिंगी' कुलिङ्गिनः= कुत्सिता लिङ्गिनः कुलिङ्गिनः=कुतीर्थिकाः 'उवहिया' औपधिकाः=मायाचारिणः कपटिन इत्यर्थः 'वाणियगा' वाणिजकाः=व्यापारकारिणः, 'कूडतुलकूडमाणी' कूटतुलाकूटमानिनः=कूटा=कपटयुक्ता–न्यूनाधिका तुला येषां ते कूटतुलाः कूटमानिनः=कूटं=वैषम्ययुक्तं यन्मानं=तोलनं तदस्ति येषां ते तथा 'कूडकाहावणोव जीवया' कूटकार्षापणोपजीविताः=कूटकार्षापणेन उपजीवन्ति ये ते तथा–कूटमुद्रोपजीविनः इत्यर्थः, 'पडकारगा' पटकारकाः-तन्तुवायाः–वस्त्रनिर्मापका इत्यर्थः,

---

इसी तरह (चारभडा) जो चार गुप्तचर–सी. आई. डी होते हैं, भट–योधा होते हैं, (खंडरक्खा) खंडरक्ष–राजग्राह्यद्रव्य के संग्राहक होते है, (जियजूयकरा) जितद्यूतकर–प्रतिस्पर्द्धी जुआरियों द्वारा पराजित हुए जुआरी होते हैं, (गहियगहणा) गृहीतग्रहण–गहना रखकर जो दूसरों को व्याज पर रूप्या देने वाले होते हैं (कक्कगुरुगकारगा) कल्क गुरुक कारक–मायाचारी से भरे हुए वचनों को बोलने वाले होते हैं, अर्थात् कपटी होते हैं, (कुलिंगी) कुतीर्थिक होते हैं, (उवहिया) औपधिक–मायाचारी होते हैं, (वाणियगा) वाणिजनक–व्यापारी होते हैं, असत्यभाषण करते हैं। (कूडतूलतूलमाणी) जो न्यूनाधिक तराजू रखते हैं, नापने तौलने के बांट कमती बढती रहते हैं (कूडकाहावणोवजीविया) बनावटी रूप्या पैसा बनाकर जो अपना निर्वाह करते हैं,

---

એજ પ્રમાણે "चारभडा" જે ગુપ્તચરો–સી. આઇ. ડી હોય છે, ભટ–યોદ્ધા હોય છે, જે "खंडरक्खा" ખંડરક્ષક–રાજ્ય ભાગના દ્રવ્યનો સંગ્રહ કરનાર હોય છે, જે "जियजूयकरा" જિતદ્યુતકર–પ્રતિસ્પર્ધિ જુગારી દ્વારા પરાજિત થયેલ જુગારી હોય છે, "गहियगहणा" ગૃહીત ગ્રહણ–ઘરેણાં રાખીને જે બીજા લોકોને વ્યાજે નાણાં ધીરનાર હોય છે, "कक्कगुरुगकारगा" કલ્ક ગુરુક કારક જે માયાચારી વચનો બોલનારા હોય છે-કપટી હોય છે, "वाणियगा" જે વ્યાપારી હોય છે, જે "कुलिंगी" કુતીર્થિક હોય છે, "उवहिया" જે ઔપધિક-માયાચારી હોય છે, તે અસત્ય બોલે છે. "कूडतूलतूलमाणी" જે ખોટાં ત્રાજવાં રાખે છે, માપવા તથા જોખવાનાં માપ વધારે કે ઓછા રાખે છે, "कूडकाहावणोवजीविया" નકલી રૂપીઆ, પૈસા આદિ બનાવીને જે લોકો

'कलाया' कलादाः=सुवर्णकाराः 'कारुइज्जा' कारुकीयाः=शिल्पिनः 'वंचणपरा' वञ्चनपराः=प्रतारणापराः 'ठग' इतिप्रसिद्धाः 'चारियचाडुयारनगरगोत्तिय परियारगा, चारिकचाटुकारनगर गुप्तिकपरिचारकाः=तत्र-चारिकाः=गुप्तचराः, चाटु काराः=मुखमाङ्गलिकाः, नगरगुप्तिकाः=कोट्टपालाः, 'कोतवाल' इति प्रसिद्धाः, परिचारकाः= सेवकाः, विषयभोगतत्पराश्च, 'दुट्ठवाइसूयकअणवलभणिया' दुष्टवादि सूचकऋणबलभणिताः, तत्र दुष्टवादिनः=असत्पक्षग्राहिणः सूचकाः-पिशुनाः, ऋणबलभणिताः=ऋणे=ऋणग्रहणे बलाः=बलवन्तस्तै भणिताः=उक्ताः 'देहि मे ऋण' मित्युत्तमर्णेनोक्ता अधमर्णा इति भावः 'पुव्वकालियवयणदच्छा' पूर्वकालिकवचनदक्षाः=वक्तुकामस्याभिप्रायमालक्ष्य पूर्वमेव ब्रुवन्ति ये ते पूर्वकालिकवचनदक्षाः, 'साहसिका' सहसा-अविचार्य भाषन्ते ये ते साहसिकाः, 'लहुस्सगा'

(पडकारगा) जो तन्तु वाय-जुलाहे होते हैं (कलाया) कलाद्-सुवर्णकार -सुनार होते हैं, (कारुइज्जा) कारुकीय-शिल्पी-कारीगर होते हैं, (वंचणपरा) जो ठग होते हैं, (चारिय) गुप्तचर होते हैं, (चाडुयार) चाटुकार-खुशामदी होते हैं, (नगरगोत्तिय) नगरगुप्तिक-कोतवाल होते हैं, (परियारग) परिचारक-सेवक तथा विषयभोगों में तत्पर होते हैं, (दुट्ठवाई) जो असत्पक्ष को ग्रहण करने वाले होते हैं, (सूयग) सूचक-चुगल खोरहोते हैं, (अणवलभणिया) मेरा ऋण अदा करो इस प्रकार जिस देनदार से साहूकार कहता है वे ऋण बलभणित कर्जदार व्यक्ति कहने वाले के अभिप्राय को लक्षित करके पहिले से ही बोलने वाले (पुव्वकालियवयणदच्छा) पूर्वकालिक वचनदक्ष मनुष्य, (साहसिया) विना विचारे बोलने वाले मनुष्य, (लहुस्सगा) अपने

પોતાનું ગુજરાન ચલાવે છે, "पडकारगा" જે વણકર હોય છે, "कलाया" સોની હોય છે, "कारुइज्जा" કારીગર હોય છે, "वंचणपरा" ઠગ હોય છે, "चारिय" ગુપ્તચર હોય છે "चाडुयार" ચાટુકાર-ખુશામતીયો હોય છે. "नगरगोत्तिय" નગરગુપ્તિક-કોટવાળ હોય છે, "परियारग" પરિચારક-સેવક તથા વિષય ભોગોના ગુલામ હોય છે, જે અસત્ય પક્ષને ગ્રહણ કરનાર હોય છે, "दुट्ठवाई" જે અસત્યપક્ષને ગ્રહણ કરનાર હોય છે, "सूयग" સૂચક-ચુગલીખોર હોય છે, "अणवलभणिया" 'મારૂ ઋણ ભરપાઇ કરો' તે પ્રમાણે જે દેણદારને શાહુકાર કહે છે તે ઋણબલ ભણિત દેણદાર વ્યક્તિ, કહેનારના અભિપ્રાયને લક્ષિત કરીને પહેલેથીજ બોલી જનાર હોય છે, "पुव्वकालिय वयणदच्छा" પૂર્વે આપેલ વચનથી બંધાયેલો મનુષ્ય, "साहसिया" વિચાર્યા વિના બોલનાર મનુષ્ય, "लहुस्सगा" પોતાની જાતને તુચ્છ માનનાર

लघुस्वकाः=पुच्छात्मोनः, 'असच्चा' असत्याः=सत्यविमुखाः 'गारविया' गौरविकाः=ऋद्ध्यादि गौरवयुक्ताः, 'असच्चट्ठावणाहिचित्ता' असत्यस्थापनाधिचित्ताः=असत्यानाम्=असदर्थानां स्थापनायां प्ररूपणायामधिचित्तं येषां ते तथा असत्यार्थमण्डनपरा इत्यर्थः, 'उच्चच्छंदा' उच्चो=महान् स्वात्मप्रशंसापरः छन्दः=अभिप्रायो येषां ते तथा स्वात्मप्रशंसापरायण इत्यर्थः, 'अणिग्गहा' अनिग्रहाः=अवशेन्द्रियाः 'अणियता' अनियताः=अनियमवन्तः छन्देन=स्वाभिप्रायेण 'मुक्कवाया' मुक्तवाचः=यथा तथा भाषिणः अथवा 'वयमेव सिद्धवादिनः' इति वदन्ति, के वदन्ति? 'जे' ये 'अलियाहिं' अलीकेभ्योऽसत्येभ्यः 'अविरया' अविरताः=अनिवृत्ताः भवन्ति ॥ सू-३ ॥

तथा—'अवरे नत्थिगवाइणो' इत्यादि—

मूलम्—अवरे नत्थिगवाइणो वामलोगवादी भणंति, नत्थि जीवो, न जाइ इह परे वा लोए, नय किंचि वि फुसइ पुन्नपावं, नत्थिफलं सुकयदुकयाणं। पंचमहाभूइयं सरीरं भासंति

आपको तुच्छ मानने वाले मनुष्य, (असच्चा) सत्य से विमुख रहने वाले मनुष्य, (गारविया) ऋद्ध्यादि के गौरव से युक्त बने हुए मनुष्य, (असच्चट्ठावणाहिचित्ता) असत्यपदार्थ की प्ररूपणा करने वाले मनुष्य, (उच्चच्छंदा) अपने आपकी प्रशंसा करने वाले मनुष्य, (अणिग्गहा) जिनकी इन्द्रियां वश में नहीं है ऐसे मनुष्य, (अणिययाछंदेणं) नियम से रहित मनुष्य, (मुक्कवाया) यथातथा बोलने वाले मनुष्य, और (जे य) जो मनुष्य (अलियाहिं) असत्यभाषण से (अविरया) विरति रहित (भवंति) होते हैं वे जो मन में आता है सो बोल दिया करते हैं। इस प्रकार के बोलने में अलीक भाषण का दोष लगा करता है ॥सू-३॥

મનુષ્યો, "असच्चा" સત્યથી વિમુખ રહેનાર મનુષ્યો, "गारविया" ઋદ્ધિ આદિના અભિમાનથી યુક્ત બનેલ મનુષ્યો, "असच्चट्ठावणा हि चित्ता" અસત્ય પદાર્થની જ પ્રરૂપણા કરનાર મનુષ્યો, "उच्चच्छंदा"- આપ વડાઈ કરનાર લોકો, "अणिग्गहा" જેમની ઇન્દ્રિયો કાબૂમાં નથી તેવા લોકો, "अणियया-छंदेणं" નિયમ વિનાના મનુષ્યો—અનિયમિત લોકો, "मुक्कवाया" જેમ તેમ બોલનારા લોકો, અને "जे य" જે મનુષ્ય "अलियाहिं" અસત્ય ભાષણથી "अविरया" વિરતિ રહિત "भवंति" હોય છે, તે લોકો મનમાં આવે તેમ બોલી નાખે છે. તે રીતે બોલવાથી અસત્યભાષણનો દોષ લાગ્યા કરે છે॥સૂ-૩॥

हे वायजोगजुत्तं, पंच य खंधे भणंति केइ, मणं मण जीविका वदंति, वाऊजीवो त्ति एवमाहंसु सरीरं साइयं सनिधणं इह भवे एगभवे, तस्स विप्पणासंमि सव्वनासो त्ति एव जंपंति मुसावाई ॥ सू० ४ ॥

टीका—'अवरे' अपरे=उक्तेभ्योऽन्ये 'नत्थिगवाइणो' नास्तिकवादिनः= 'नास्ति परलोकः' इति मतिर्येषां ते नास्तिका स्ते च ते वादिनः प्रत्यक्षप्रमाणवादिनश्चार्वाकाः, तथा 'वामलोगवाई' तथा वामलोकवादिनः, वामं=विरुद्धं लोकं-वदन्ति ये ते तथा सतामपि लोकवस्तूनामसत्त्व प्रतिपादकाः शून्य वादिनः इत्यर्थः, ते हि 'भणन्ति=वदन्ति यत् 'नत्थि जीवो' नास्ति जीवः सुखदुःखादि भोक्ता तत्साधक प्रमाणाभावात्, यतो हि न तत्र प्रत्यक्षं प्रमाणमुपक्रमते चक्षुरादीन्द्रियविषयत्वात्, नाप्यनुमानं तत्र प्रमाणम्, तस्य व्याप्तिपक्षधर्मताज्ञानाद्यधीनतया

तथा—'अवरे नत्थिगवाइणो' इत्यादि.

टीकार्थ-(अवरे) इन पूर्वोक्त व्यक्तियों से भिन्न (नत्थिगवाइणो) जो नास्तिकवादी हैं-'परलोक नहीं है' इस प्रकार की जिनकी बुद्धि है ऐसे केवल एक प्रत्यक्ष प्रमाण मानने वाले चार्वाक, तथा (वामलोगवाई) वामलोकवादी-शून्यवादी, ये लोक में रही हुई वस्तुओं को असत्रूप से प्रदिपादित करते हैं वे (भणंति) कहते हैं कि (नत्थिजीव) सुख, दुःख आदि अवस्थाओं का भोक्ता जीव नाम का कोई पदार्थ नहीं है, कारण कि इसके साधक प्रमाणों का अभाव है प्रत्यक्षप्रमाण इसका साधक इसलिये नहीं होता हैं कि चक्षुरादिक जो इन्द्रियां है वे उसे अपना विषयभूत नहीं बनाती हैं। अनुमान से भी उसका ग्रहण नहीं होता है, क्यों कि अनुमान से साध्य और साधन की व्याप्ति का एवं पक्ष-

---

તથા—"अवरे नत्थिगवाइणो" ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ-"अवरे" તે પૂર્વોક્ત વ્યક્તિયોથી જુદાજ પ્રકારના 'नत्थिगवाइणो" જે નાસ્તિકવાદી છે-"પરલોક નથી" એ પ્રકારની જેમની માન્યતા છે એવાં, ફક્ત એક પ્રત્યક્ષ પ્રમાણને જ માનનાર ચાર્વાકવાદી, તથા "वामलोगवाई" વામલોકવાદી-વામમાર્ગી, તેઓ સૃષ્ટિમા રહેલ વસ્તુઓને અસત્ રૂપે પ્રતિપાદિત કરે છે તેઓ "भणंति" કહે છે કે "नत्थि जीवो" સુખ દુ.ખ આદિ અવસ્થાઓનો ભોક્તા જીવ નામનો કોઈ પદાર્થ નથી, કારણ કે તે સિદ્ધ કરવા માટેના પ્રમાણોનો અભાવ છે. પ્રત્યક્ષ પ્રમાણ તેનું સાધક તે કારણે હોતું નથી કે ચક્ષુ આદિ જે ઈન્દ્રિયો છે તે તેને પોતાના વિષય રૂપ બનાવી શકતી નથી. અનુમાનથી તેને ગ્રહણ કરી શકાતું નથી કારણ કે અનુમાનમાં સાધ્ય

प्रत्यक्षाभावे व्याप्तिग्रहस्याप्यभावात् महानसादौ सत्येव पर्वतादौ वह्निरनुमीयते। वह्निधूमयोः प्रत्यक्षेण साहचर्यग्रहे प्रत्यक्षप्रमाणवादिभिरनुमानस्यानङ्गीकृतत्वाच्च। नाप्यागमग्राह्यस्तस्य परस्परविरुद्धत्वेनाऽप्रामाण्यात्। नाप्युपमानमत्रप्रसज्यते, असत्पदार्थे केनोपमीयते। इति। एवं च जीवस्याऽसिद्धत्वात् कोऽपि इह=मनुष्यलोके परे वा 'लोए' लोके=देवादिलोके वा 'न जाइ' न याति=न गच्छति, 'न य' न च 'किंचिवि' किञ्चिदपि 'पुन्नपावं, पुण्यपापं=पुण्यपापरूपं कर्म 'फुसइ'

धर्मता आदि का ग्रहण होना आवश्यकीय होता है इसके विना अनुमान नहीं होना है। जब उस विषय में प्रत्यक्षप्रमाण ही प्रवृत्त नहीं होता है तब साध्य साधन की व्याप्ति का ग्राहक वहां वह कैसे हो सकता है। महानस आदि में साध्य साधन की व्याप्ति पहिले प्रत्यक्ष से ग्रहण कर लेने पर ही तो अनुमाता पर्वत आदि में वह्नि का अनुमान करता है। आगम प्रमाण से भी "जीव है" यह बात नहीं कही जाति है, कारण आगमों में एकमतता नहीं है। परस्पर विरुद्धार्थ का-एक दूसरे आगम से विरोधी तत्त्व का-ये प्रणयन करते हैं, इसलिये इनमें प्रमाणता ही नहीं है। उपमान प्रमाण की यहां प्रवृत्ति इसलिये नहीं हो सकती है कि जब 'जीव' पदार्थ ही असत् है तब वह उपमेय कैसे हो सकता है। इस तरह जीव नामक पदार्थ की असिद्धि होने पर (न जाइ इह परे वा लोए) कोई भी इस मनुष्यलोक में अथवा दूसरे देवादिलोक में नहीं जाता है, और (न य किंचि वि फुसइ पुण्णपावं) न वह पुण्य एवं पापरूप कर्म को छूता है, अर्थात्-जब जीव नाम का कोई पदार्थ ही

સાધનની વ્યાપ્તિનું અને પક્ષધર્મતા આદિનું ગ્રહણ થવું આવશ્યક હોય છે, તેના વગર અનુમાન થતું નથી. જો તે વિષયમાં પ્રત્યક્ષ પ્રમાણ જ પ્રવૃત્ત હોતું નથી તો સાધ્ય સાધનની વ્યાપ્તિનો ગ્રાહક ત્યાં તે કેવી રીતે થઇ શકે! મહાનસ આદિમાં સાધ્ય સાધનની વ્યાપ્તિ પહેલાં પ્રત્યક્ષ રીતે ગ્રહણ કરી લીધા પછી તો અનુમાન કરનાર પર્વત આદિમાં અગ્નિનું અનુમાન કરે છે. આગમોનું પ્રમાણ આપીને પણ "જીવ છે" તે વાત કહી શકાય તેમ નથી, કારણ કે આગમોમાં એક મતતા નથી પરસ્પરથી વિરુદ્ધ અર્થનું-એક બીજાથી વિરોધી તત્ત્વનું-તેઓ વર્ણન-પ્રતિપાદન કરે છે, તે કારણે તેમનામાં પ્રમાણભૂતતા નથી. ઉપમાન પ્રમાણની અહીં પ્રવૃત્તિ તે કારણે થઇ શકતી નથી કે જો "जीव" પદાર્થ જ અસત્ હોય તો તે ઉપમેય કેવી રીતે થઇ શકે! આ રીતે જીવ નામના પદાર્થની અસિદ્ધિ થતાં "न जाइ इह परे वा लोए" કોઈ પણ આ મનુષ્ય લોકમાં અથવા બીજા દેવાદિ લોકમાં જતું નથી, અને "नय किंचि वि फुसइ पुण्णपावं" તે પુણ્ય અને પાપ રૂપ કર્મોને સ્પર્શતો નથી, એટલે કે-

स्पृशति। जीवस्याऽसद्भावादेव न शुभाशुभकर्मबन्धनमिति भावः। अत एव 'सुकयदुक्कयाणं' सुकृत दुष्कृतानां=पुण्यपापानां फलमपि 'नत्थि' नास्ति जीवासत्त्वेन तत्फलस्याऽप्यसत्त्वात्। तथा 'सरीरं 'पंचमहाभूइयं' पञ्चमहाभौतिकं=पृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाशमयं, 'भासंति' भाषन्ते। तत् कीदृशं भाषन्ते इत्याह–'हेवागजोगजुत्तं' हेवाकयोगयुक्तम्, हेवाकः–स्वभावस्तेन योगः–परस्परं संयोगस्तेन युक्तम्, पञ्चभूतानां परस्परं संयोगो वियोगश्च स्वभावाद् भवति, न तत्र किंचिदन्यत् कर्मादि आत्मा वा कारणमस्तीति भावः। 'केई' केऽपि बुद्ध-मतानुसारिणः 'पंचखंधे' पञ्चस्कन्धान्=रूपवेदनाविज्ञानसंज्ञासंस्काररूपान् भणन्ति=कथयन्ति, तत्र–रूपस्कन्ध, –पृथिव्यादयो रूपादयश्च १, वेदनास्कंधः–

नहीं है तो मर कर वही पुनः अपने पुण्य पापकर्मों के अनुसार मनुष्य-लोक में अथवा देवादिलोक में जन्मता है, यह कथन असत्य है। तात्पर्य इसका यही है जीव का अस्तित्व न होने से उसके (नत्थिफलं सुकयदुक्कयाणं) शुभ और अशुभ कर्मों का बंध नहीं होता है। जब शुभ अशुभ कर्मों का बंध ही नहीं होता है तब उनके फल का भी अभाव ही है। तथा (पंचमहाभूइयं सरीरं भासंति) यह जो शरीर है वह पृथिवी, अप्, तेज वायु और आकाश, इन पांचभूत स्वरूप है। (हेवाग जोगजुत्तं) पांच भूतों का यह पारस्परिक संयोग अथवा वियोग स्वभाव से ही होता रहता है। इसमें न तो कोई कर्म ही कारण है और न आत्मा ही। (केई पंच य खंधे भणंति) कितनेक वादी बौद्ध–सिद्धान्तमतानुयायी–ऐसा कहते हैं कि रूप १, वेदना २, विज्ञान ३, संज्ञा ४,

જો જીવ નામનો કોઈ પદાર્થ જ ન હોય તો તે મરીને પોતાના પુન્ય પાપ-કર્મો પ્રમાણે મનુષ્ય લોકમાં અથવા દેવાદિ લોકમાં જન્મે છે. તે કથન અસત્ય ઠરે છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે જો જીવનું અસ્તિત્વ ન હોય તો તેના "नत्थि फलं सुकयदुक्कयाणं" શુભ અને અશુભ કર્મોનો બંધ બંધાતો નથી. જો શુભાશુભ કર્મોનો બંધ જ બંધાતો ન હોય તો તેના ફળનો પણ અભાવ જ હોય. તથા "पचमहाभूइयं सरीर भासंति" આ જે શરીર છે તે પૃથિવી, અપ્ (જળ), તેજ, વાયુ અને આકાશ, એ પાંચ ભૂત સ્વરૂપ છે. "हेवागजोगजुत्तं" પાચ ભૂતોનો આ પારસ્પરિક સંબંધ અથવા વિયોગ સ્વભાવથી જ થયા કરે છે તેમા આત્મા કે કર્મ કારણરૂપ નથી.

"केई पंचेय खधे भणंति" કેટલાક વાદમાં માનનારા-બૌદ્ધ સિદ્ધાન્ત મતાનુયાયી એવું કહે છે કે (૧) રૂપ, (૨) વેદના, (૩) વિજ્ઞાન, (૪) સંજ્ઞા

सुखा १ दुःखा २ अदुःखसुखा ३ चेति त्रिविधवेदनास्वभावः २, विज्ञानस्कन्धः- रूपादिविज्ञानलक्षणः ३, संज्ञास्कन्धः-संज्ञानिमित्तोऽवग्रहणात्मकप्रत्ययः ४, संस्कारस्कन्धः-पुण्यापुण्यादिधर्मसमुदायश्चेति पञ्च स्कन्धाः, एते पञ्चैव स्कन्धाः सन्ति, नान्यः कश्चित्तद्व्यतिरिक्त आत्माऽऽख्यः पदार्थोऽस्ति, इति तेषां मतम्। नान्य आत्माभिधानइति बौद्धाः, 'मणंच' मनश्च मन एव जीवो येषां ते तथा मनोजीविकाः= मन आत्मवादिनो वदन्ति-इति मन आत्मवादिनो मतम्। तथा 'वाउजीवोत्ति' वायुर्जीव इति 'आहंसु' आहुः=केचित्, उच्छ्वासादिरूप एव जीव इति वदन्ति। प्राणवायुना सर्वक्रियासु प्रवर्तनं जायते, अतएव प्राणवायुरेव जीव इत्यर्थः। अथ तज्जीवतच्छरीरवादिमतमाह, तथाहि-'सरीरं साइयं सनिधणं'

और संस्कार ५, ये पांच स्कंध हैं। पृथिव्यादिक एवं रूपादिक ये रूप-स्कंध हैं १। सुख १, दुःख, २ और सुख दुःख ३ इन त्रिविधरूप वेदना-स्कंध, हैं २। रूपादिकों का विज्ञान स्वरूप, विज्ञानस्कंध है ३। यह अमुक है-यह देवदत्त है, इत्यादि-रूप से जो संज्ञाओं का ग्रहण होता है वह संज्ञास्कंध है ४। पुण्य अपुण्य आदि रूप जोसमुदाय है वह संस्कार स्कंध है। ये पांच स्कंध ही हैं, इनसे भिन्न आत्मा नाम का कोई स्वतंत्र पदार्थ नहीं है इस प्रकार का मंतव्य बौद्धों का है। (मणं च मणजीविया वयंति) जो मन को ही आत्मा मानते हैं वे मनोजीविक हैं तथा (वाऊ जीवोत्ति एवमाहंसु) कोई २ उच्छ्वास आदि रूप वायु ही जीव है ऐसा मानते हैं, इनका कहना है कि प्राण नामकवायु से ही समस्त क्रियाओं में प्रवर्तन होता है इसके विना नहीं, अतः प्राणवायु ही जीव है (सरीरं साइयं सनिधणं)

અને (૫) સંસ્કાર એ પાંચ સ્કંધ છે (૧) પૃથિવ્યાદિક અને રૂપાદિક તે રૂપસ્કંધ છે, (૨) સુખ, દુઃખ અને સુખદુઃખ એ ત્રણ પ્રકારનો વેદના સ્કંધ છે. (૩) ઉપાદિકોના વિજ્ઞાન સ્વરૂપ વિજ્ઞાનસ્કંધ છે. (૪) આ અમુક છે-આ દેવદત્ત છે, ઇત્યાદિ રીતે જે સંજ્ઞાઓનું ગ્રહણ થાય છે તે સંજ્ઞાસ્કંધ છે. (૫) પુન્ય અપુન્ય આદિ રૂપ જે ધર્મસમુદાય છે તે સંસ્કારસ્કંધ છે. એ પાંચ સ્કંધ જ છે, તે ભિન્ન આત્મા નામનો કોઈ સ્વતંત્ર પદાર્થ જ નથી, એ પ્રકારનું બૌદ્ધોનું મંતવ્ય છે. "मणं च मणजीविया वयंति" જે મનને જ આત્મા માને છે તે મનોજીવિક કહેવાય છે. તથા "वाऊ जीवोत्ति एवमाहंसु" કોઈ કોઈ ઉચ્છ્વાસ આદિ રૂપ વાયુ જ જીવ છે તેમ માને છે, તેમનું કહેવું એવું છે કે પ્રાણવાયુથી જ સમસ્ત ક્રિયાઓ ચાલ્યા કરે છે, તેના વિના ચલતી નથી, તેથી પ્રાણવાયુ જ જીવ છે. "सरीर साइयं सनिधणं" શરીરને જ જે

शरीरं सादिकं सनिधनम्, शरीरम् आदिसहितम् उत्पत्तिमत्त्वात् , सनिधनं-सविनाशम् अन्तवत्त्वात्, 'इह भवे' अस्मिन् भवे प्रत्यक्षं जन्म, तस्मात् 'एगे भवे' एक एव भवः=जन्म नान्यो लोकः, 'तस्स विप्पणासंमि' तस्य विप्रणाशे सति= तस्य शरीरस्य विनाशे सति 'सव्वनासोत्ति' सर्वनाशइति नाऽत्माऽवशिष्यते नाऽपि च शुभाशुभरूपंकर्म । एवं=उक्तरीत्या 'जंपंति' जल्पन्ति=कथयन्ति तज्जीवतच्छरीरवादिनः । नास्तिकादारभ्य तज्जीवतच्छरीरवादिपर्यन्ताः सर्वे 'मुसावाई' मृषावादिनः सन्ति ॥ सू०४ ॥

पुनरप्याह–'तम्हा' इत्यादि ।

मूलम्–तम्हा दाणवयपोसहाणं तवसंजमबंभचेरकल्लाणमाईयाणं नत्थिफलं, नवि य पाणवहे अलियवयणं न चेव चोरक्करणं परदारसेवणं वा सपरिग्गहपावकम्मकरणं पि

शरीर को ही जो जीव मानने वाले हैं उनका ऐसा कहना है कि यह उत्पत्तिमान् होने से सादि है और अन्तवाला होने से विनाशसहित है। (इहभवे एगे भवे) इस भव में जो इसका जन्म है वही इसका भव है, इसके अतिरिक्त और कोई दूसरा इसका भव-जन्म नहीं है, क्यों कि (तस्स विप्पणासम्मि सव्वणासोत्ति) जब इस शरीर का विनाश हो जाता है तब इस जीव का सर्वनाश हो जाता है फिर इसका अस्तित्व ही नहीं रहता है, शुभ और अशुभ कर्म कुछ भी नहीं रहते हैं, (एवं) इस तरह नास्तिक वादी से लेकर शरीर को ही जीव मानने वाले ये सब ही (मुसावाई) मृषावादी (जंपंति) कहते हैं। अर्थात् ये सब मृषावादी हैं ॥ सू-४॥

જીવ માનનારા છે તેમનું એવું કહેવું છે કે તે ઉત્પત્તિવાળું હોવાથી સાદિ (આદિ સહિતનું) છે અને અન્તવાળું હોવાથી વિનાશ યુક્ત (સાન્ત) છે. " इह भवे एगे भवे " આ જન્મમાં જે તેનો જન્મ છે, તે જ તેનો ભવ છે, તે ઉપરાંત બીજો કોઈ પણ તેનો ભવ—જન્મ નથી, કારણ કે " तस्स विप्पणासम्मि सव्वणासोत्ति " જ્યારે આ શરીરનો નાશ થાય છે ત્યારે આ જીવનો પણ સર્વનાશ થઈ જાય છે-પછી તેનું અસ્તિત્વ જ રહેતું નથી, શુભ અને અશુભ કર્મ જેવું કંઇ પણ રહેતું નથી " एवं " આ રીતે નાસ્તિક વાદીથી લઈને શરીરને જ જીવમાનનાર તે બધાને " मुसावाई " મૃષાવાદી " जंपंति " કહે છે. એટલે કે તે બધા અસત્ય વદનાર છે. ॥ સૂ-૪॥

नत्थि किं च न नेरइयतिरिक्खमणुयजोणी, न देवलोगो वा अत्थि सिद्धिगमणं, अम्मापियरो नत्थि, नवि अत्थि पुरिसकारो, पच्चक्खाणमवि नत्थि, नवि अत्थि कालमच्चू य, अरिहंता चक्कवट्टी बलदेवा वासुदेवा नत्थि, नेवत्थि केइ रिसओ, धम्माधम्मफलं वि न अत्थि किं चि बहुयं वा थोवं वा तम्हा एवं जाणिऊणं जहा सुबहु इंदियाणुकूलेसु सव्वविसएसु वट्टेह नत्थिकाइ किरिया वा एवं भणंति नत्थिकवाइणो वामलोगवाई ॥ सू० ॥५॥

टीका—यस्मात् आत्माऽपि नास्ति, शुभाशुभकर्माणि तत्फलान्यपि च न सन्ति 'तम्हा' तस्मात् 'दाणवयपोसहणं' दानव्रतपोषधानां=तत्र दानम्=अभयदानसुपात्रदानादिकम्, 'वय' व्रतानि = स्थूलप्राणातिपातविरमणादीनि पोषधः=पोषं=धर्मस्य पुष्टिं धत्ते=करोतीति पोषधः=अष्टमीचतुर्दशीपूर्णिमाऽमावास्यापर्वदिनाऽनुष्ठेय आहारादिपरित्याग पूर्वकोव्रतविशेषः, उक्तं च—

आहार तनुसत्काराऽब्रह्मसावद्यकर्मणाम् ।
त्यागः पर्वचतुष्टय्यां तद्विदुः पौषधव्रतम् ॥

फिर भी—'तम्हा दाणवयपोसहाणं' इत्यादि ।

टीकार्थ–आत्मा शुभाशुभकर्म और इनके फल ये सब कुछ भी नहीं हैं (तम्हा) इसलिये (दाणवयपोसहाणं) दान–अभयदान, सुपात्रदान आदि, व्रत–स्थूलप्राणातिपात विरमण आदि, (पोसह) पोषध–अष्टमी चतुर्दशी, पूर्णिमा एवं अमावस्या इन पर्व दिनों में आहार आदि को परित्याग पूर्वक अनुष्ठेयव्रत विशेष, कहा भी है—

વળી—"तम्हा दाणवयपोसहाणं" ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ–આત્મા શુભાશુભ કર્મ અને તેમનાં ફળ તે બધુંય નથી "तम्हा" તેથી "दाणवयपोसहाणं" દાન–અભયદાન, સુપાત્રદાન આદિ, વ્રત–પ્રાણાતિપાત વિરમણ આદિ "पोसह" પૌષધ–આઠમ, ચૌદશ, પૂનમ, અમાસ આદિ આહાર આદિના પરિત્યાગ પૂર્વકનું એક અનુષ્ઠાન કહ્યું છે કે—

"आहार, तनुसत्कारा–ऽब्रह्म–सावद्यकर्मणाम् ।
त्यागः पर्वचतुष्ट्यां, तद्विदुः पौषधव्रतम् ॥ १ ॥"

तेषां नास्ति फलमित्यग्रिमेण संबन्धः, तथा 'तवसंजमबंभचेरकल्लाण-माइयाणं तपः संयमब्रह्मचर्यकल्याणादिकानां, तत्र तपः=अनशनादिलक्षणं, संयमः=सावद्यानुष्ठानविरतिलक्षणः सप्तदशविधः, ब्रह्मचर्यं=कामसेवनपरित्यागः, तान्येव कल्याणकारित्वात्कल्याणं तदादिर्येषां ते-तथा तेषां फलं=कर्मक्षयसुगतिगमना-दिकं, 'नत्थि' नास्ति, 'नवि' नापि 'पाणवहे' प्राणवधः, 'अलियवयणं' अलीकवचनं=प्राणवधे मृषा भाषणे च न किमप्यशुभफलं भवतीत्यर्थः, तथा 'चोरिक्ककरणं' चौरिक्यकरणं=चौरिक्यस्य करणं=चौर्यं=परद्रव्यहरणमित्यर्थः, परदारसेवनं=परस्त्रीगमनं वा न चेव पापजनकं 'सपरिग्गहपावकम्मकरणंपि' सप-

"आहार, तनुसत्कारा-ऽब्रह्म-सावद्यकर्मणाम् ।
त्यागः पर्वचतुष्टय्यां, तद्विदुःपौषधव्रतम् ॥१॥"

इन पर्वचतुष्टय के दिनों में आहार, शरीर संस्कार, एवं अब्रह्म, आदि सावद्यकर्मों का जो त्याग कर दिया जाता है उसका नाम पौषधव्रत है ॥१॥

इनका तथा (तवसंजमबंभचेरकल्लाणमाइयाणं) कल्याणकारी अन-शन आदि बारह प्रकार के बहिरंग अंतरंग तपों का सावद्य अनुष्ठान से विरति कारण करने रूप सत्रह प्रकार के संयम का तथा कामसेवन करने के परित्याग रूप ब्रह्मचर्य का (नत्थिफलं) कर्मक्षय एवं सुगति-गमनादिरूप कुछ भी (नत्थिफलं) फल नहीं होता है। इसी तरह (न वि य पाणवहे अलियवयणं) प्राणवध करने पर तथा अलीकभा-षण करने पर कुछ भी अशुभ फल नहीं प्राप्त होता है। (न चेव चोरि-क्ककरणं परदारसेवणं वा) चोरी करना, परस्त्री सेवन करना इनसे भी जीवों को कोई पाप नहीं लगता है क्यों कि पापरूप कोई वस्तु ही

એ ચાર પર્વદિનોમાં આહાર, શરીર સંસ્કાર અને અબ્રહ્મચર્ય આદિ સાવદ્ય કર્મોનો ત્યાગ કરાય છે. તે વ્રતનું નામ પૌષધવ્રત છે ॥૧॥

તેનું તથા " तवसंजमबंभचेरकल्लाणमाइयाणं " કલ્યાણકારી અનશન આદિ બાર પ્રકારનાં બાહ્ય અને આંતરિક તપનું, સાવદ્ય અનુષ્ઠાનથી વિરતિ ધારણ કરવા રૂપ સત્તર પ્રકારના સંયમનું, તથા કામસેવન કરવાના પરિત્યાગ-રૂપ બ્રહ્મચર્યનું " नत्थि फलं " કર્મક્ષય અને સુગતિ ગમનાદિરૂપ કોઇ પણ " नत्थिफलं " ફળ હોતું નથી. એજ પ્રમાણે " न वि य पाणवहे अलियवयणं " પ્રાણવધ કરતા, તથા અસત્ય બોલતા પણ કોઈ અશુદ્ધ ફળ પ્રાપ્ત થતું નથી. " न चेव चोरिक्ककरणं परदारसेवणं वा " ચોરી કરવાથી, તથા પરસ્ત્રી સેવન કરવાથી પણ જીવોને કોઇ પાપ લાગતું નથી, કારણ કે પાપરૂપ કોઇ વસ્તુ જ

रिग्रहपापकर्मकरणमपि=परिग्रहेण=मूर्च्छया सहितं यत्तत्सपरिग्रहं तदेव पापकर्म-करणं=पातककर्मानुष्ठानं तदपि 'नत्थि' नास्ति। किं च 'नेरइयतिरिक्खमणुय जोणी' नारकतिर्यङ्मनुष्ययोनिरपि 'नत्थि' नास्ति, अयं भावः—नारकाणां तिरश्चां मनुष्याणां च योनि रुत्पत्तिरूपा न कर्मजनिता, किन्तु स्वभावादेव, अतो जगतो विचित्रता स्वाभाविकी न कर्मजनिता। उक्तं च—

"कण्टकस्य च तीक्ष्णत्वं, मयूरस्य विचित्रता।
वर्णाश्च ताम्रचूडानां स्वभावेन भवन्ति हि॥ १॥"

मृषावादिताचैषामेवं विज्ञेया—एतन्मते स्वभावो जीवश्च एक एव, तथा प्राणातिपातादिकं तज्जनितकर्मापि च स्वभाव एव। एवञ्च प्राणातिपातादेः स्वभाव

नहीं है। तथा (सपरिग्गहपावकम्मकरणंपि नत्थि) परिग्रह रूप पाप-कर्म भी कुछ नहीं है। अर्थात् पापकर्म का अनुष्ठान दोषावह नहीं है। (किं च नेरइयतिरिक्खमणुयजोणी नत्थि) नरकयोनि, तिर्यंचयोनि, एवं मनुष्ययोनि ये कर्मकृत नहीं है किन्तु स्वाभाविकी है। इसलिये जगत की जो यह विचित्रता दृष्टिगत हो रही है वह स्वाभाविक हि है कर्मजनित नहीं है। कहा भी है—

"कण्टकस्य च तीक्ष्णत्वं, मयूरस्य विचित्रता।
वर्णाश्च ताम्रचूडानां, स्वभावेन भवन्ति हि॥१॥"

कंटक की तीक्ष्णता, मयूर की विचित्रका और मुर्गे की विचित्र वर्णता, ये सब स्वभाव से ही हैं॥१॥

इस प्रकार यह स्वभाववादी का कथन मृषारूप इसलिये है कि इनके मतानुसार स्वभाव और जीव ये कोई भिन्न २ पदार्थ नहीं है किन्तु

नथी. तथा "सपरिग्गहपावकम्मकरणंपि नत्थि" परिग्रहरूप पापकर्म जेवुं पण कंई नथी, એटલે કે પાપકર્મનું અનુષ્ઠાન દોષપાત્ર નથી. "किं च नेरइय-तिरिक्खमणुयजोणी नत्थि" નરકયોનિ, તિર્યંચયોનિ અને મનુષ્યયોનિ, એ કર્મકૃત નથી પણ સ્વાભાવિક છે તેથી જગતમાં આ જે વિચિત્રતા નજરે પડે છે તે સ્વાભાવિક છે કર્મજનિત નથી. કહ્યું પણ છે—

"कण्टकस्य च तीक्ष्णत्वं, मयूरस्य विचित्रता।
वर्णाश्च ताम्रचूडानां, स्वभावेन भवन्ति हि॥ १॥"

કાંટાની તીક્ષ્ણતા, મોરની વિચિત્રતા, અને કૂકડાની વિચિત્રવર્ણતા, એ સઘળું સ્વભાવથી જ બનેછે. ॥૧॥

આ પ્રકારનું તે સ્વભાવવાદીઓનું કથન મૃષાવાદરૂપ તે કારણે છે કે તેમના મત પ્રમાણે સ્વભાવ અને જીવ એ કોઈ ભિન્ન ભિન્ન પદાર્થ નથી, પણ એક-

रूपत्वे जीवरूपत्वमपि स्पष्टमेव स्यात्, स्वभावत्वेन सर्वेषामेकत्वात् तथा च एकस्मिन् कार्यकारणभावस्य निरूपणाऽसम्भवान्नरकादिविचित्रता निष्कारणा स्यात् न च किमपि निष्कारणं भवति, तथा सति घटपटादेरपि निष्कारणता स्यादित्येतेषां मृषावादित्वं सुव्यक्तमेव। 'न देवलोगो वा अत्थि' न देवलोको वाऽस्ति। 'नय अत्थि सिद्धिगमणं' न चास्ति सिद्धिगमनम्। 'अम्मापियरो नत्थि' अम्बापितरौ न स्तः, उत्पत्तिमात्रकारणत्वेन मातापितृत्व कल्पना न

एक रूप ही हैं, तथा प्राणातिपात आदि से जनित कर्म ये भी सब स्वभावरूप हैं। इस प्रकार सब में एक स्वभावरूपता मानने पर इन प्राणातिपात आदिकों में जीवरूपता की प्रशक्ति आ जाती है, क्यों कि सब में भी एक स्वभावरूपता का सद्भाव पाया जाता है। इस तरह होने पर किसी एक में भी कार्यकारण भाव का निरूपण असंभव बन जाता है, अतः नरकादिरूप विचित्रता निष्कारणक ठहरती है, परन्तु विचार करने पर यह विचित्रता निष्कारणक तो है नहीं। यदि इसे निष्कारणक माना जावे तो घट पट आदि रूप जो यह पदार्थों में विचित्रता है उसे भी अथवा घट पट आदि जो पदार्थ है उन्हें भी निष्कारणक ही मानना पड़ेगा परन्तु ये सब निष्कारणक नहीं हैं,-सकारणक हैं, इस तरह सकारणक होने पर भी इन्हें निष्कारणक कहना, असत्यभाषण ही है, और यह इनका इस रूप से स्पष्ट ही है। इसी तरह (न देवलोगो वा अत्थि) देवलोक नहीं है, (न य अत्थि सिद्धिगमणं) सिद्धि-

---

રૂપ જ છે, તથા પ્રાણાતિપાત આદિ અને પ્રાણાતિપાત આદિ વડે ઉપાર્જિત કર્મ એ બધુ સ્વભાવરૂપ છે. આ રીતે બધામાં સ્વભાવરૂપતા માની લેવામાં આવે તો તે પ્રાણાતિપાત આદિમાં જીવરૂપતાની પ્રસક્તિ આવી જાય છે, કારણ કે સૌમાં એક સ્વભાવરૂપતાનો સદ્ભાવ જણાય છે. આમ હોય તો કોઈ એકમાં પણ કાર્યકારણ ભાવનું નિરૂપણ અસંભવિત બની જાય છે, એ રીતે તો નરકાદિરૂપ વિચિત્રતા નકામી ઠરે છે, પણ વિચાર કરવામાં આવે તો તે વિચિત્રતા નકામી તો નથી. જો તેને નકામી માનવામાં આવે તો પદાર્થોમાં ઘટ-ઘડો, પટ આદિરૂપ જે વિચિત્રતા છે તેને પણ અથવા ઘટ પટ આદિ જે પદાર્થો છે તેમને પણ નકામા માનવા પડશે, પણ તે બધા નિષ્કારણ-નકામા-નથી, સકારણક છે. આ રીતે સકારણક હોવા છતાં પણ તેને નિષ્કારણક કહેવી તે અસત્યભાષણ જ છે. અને તે વાત ઉપર સમજાવ્યા પ્રમાણે સ્પષ્ટ જ છે. એ જ પ્રમાણે "न देवलोगो वा अत्थि" દેવલોક નથી, "न य अत्थि सिद्धिगमणं"

युक्ता। यतो हि स्वभावत एव कुतोऽपि किञ्चिदुत्पद्यते, न तत्र कारणविशेष नियम माहात्म्यमन्यथा कथं चेतनान्मनुष्यादेश्चेतनं यूकामत्कुणादिकं चेतनादचेतनं मूत्र-पुरीपादिकम्, अचेतनात् काष्ठाच्चेतनं घुणकीटादिकम्, अचेतनात्काष्ठादचेतनं चूर्णादिकं च जायते। नहि अचेतनस्य चेतनकारणता चेतनस्य चाचेतन कारणता युक्ता। तस्माज्जन्यजनक भावमात्रमेवोत्पद्यमाना नामर्थानामस्ति नान्यो मातापितृपुत्रादि विशेष इति। मृषावादिता तु जन्यजनकभावस्य सर्वेषु तुल्यत्वेऽपि मातापित्रोरत्य-

स्थान में गमन करना नहीं है, (अम्मा पियरो नत्थि) माता पिता भी नहीं हैं-उत्पत्ति मात्र कारणता को लेकर मातृत्व पितृत्व की कल्पना युक्त नहीं है क्यों कि स्वभाव से ही चाहे जिससे चाहे जो उत्पन्न हो जाता इसमें कारणविशेष के नियम की कोई महत्ता नहीं है। यदि ऐसी बात मानी जावे तो फिर जो चेतन मनुष्यादि से चेतन यूका मत्कुण आदि उत्पन्न होते देखे जाते हैं चेतन से अचेतन मूत्र पुत्र पुरिष आदि उत्पन्न होते देखे जाते हैं, अचेतन घुण कीट आदि उत्पन्न होते देखे जाते हैं, अचेतन काष्ठ से अचेतन चूर्ण आदि होते देखे जाते हैं सो ये सब कैसे उत्पन्न हो सकेंगे, क्यों कि अचेतन चेतन को चेतन के प्रतिकारणता नहीं होती है और चेतन को अचेतन के प्रतिकाणता नहीं होती है. इसलिये उत्पद्यमान पदार्थों में केवल जन्य जनक संबंध मात्र ही सापेक्ष होता है-मातृत्व पितृत्व आदि संबंध विशेष नहीं। इस प्रकार के कथन में भी मृषावादिता इस प्रकार से आती है यद्यपि जन्य जनक

સિદ્ધિસ્થાનમા ગમન કરવાનું નથી, "अम्मापियरो नत्थि" માતા પિતા પણ નથી,-ઉત્પત્તિમાત્ર કારણતાને લઈને માતૃત્વ પિતૃત્વની કલ્પના યોગ્ય નથી કારણ કે સ્વભાવથી જ જે ઇચ્છે છે તે ઉત્પન્ન થઈ જાય છે-તેમાં કોઈ કારણ વિશેષના નિયમનું મહત્વ નથી. જો એવી વાત માની લેવામાં આવે તો પછી ચેતન મનુષ્ય આદિથી ચેતન જૂં માકડ આદિ ઉત્પન્ન થતા જોવામાં આવે છે, ચેતનથી અચેતન મૂત્ર, મળ આદિ ઉત્પન્ન થતાં જોવામાં આવે છે, અચેતન કાષ્ઠમાંથી ચેતન કીડા આદિ ઉત્પન્ન થતા જોવામાં આવે છે, અચેતન કાષ્ઠમાંથી અચેતન લાકડાનો વહેર આદિ થતા જોવામાં આવે છે. તે બધુ કેવી રીતે ઉત્પન્ન થાય ? કારણ કે અચેતનને ચેતનના પ્રત્યે કારણતા હોતી નથી અને ચેતનને અચેતનના પ્રત્યે કારણતા હોતી નથી, તેથી ઉત્પન્ન થતા પદાર્થોમાં કેવળ જન્ય જનક સંબંધ જ સાપેક્ષ થાય છે-માતૃત્વ પિતૃત્વ આદિ વિશિષ્ટ સંબંધ નહીં. તે પ્રકારના કથનમાં પણ મૃષાવાદિતા એ રીતે આવે છે. જો કે જન્ય

न्तहितसाधनत्वेन विशेषत्वात्। स्वभाववादं निरूप्य नियतिवादमाह—नापि 'पुरिसकारो' पुरुषकारः उद्योगो नास्ति, भाग्याधीनसकलार्थसिद्धेः, उद्योगस्य सुखादिसाधनत्वे सति कोऽपि जगतीतले दुःखी स्यात्, दृश्यन्ते हि उद्योगिनो दुःखिनो बहव इति न पुरुषकारोऽर्थ साधनमिति भावः।

अस्य मृषात्वं तु सिद्धमेव लोके अग्रे समुपस्थितस्यापि भोज्यस्य नहि हस्तोद्योगमन्तरा भोजनं सम्पद्यते अतएव कीटेष्वपि भोज्यानयनादौ प्रवृत्तिर्दृश्यते इत्याकीटप्रसिद्धस्य पुरुषकारस्यापलापेन प्रमाणातीत नियतिमतस्वीकारात्। 'पञ्च-

---

भाव समस्त पदार्थों में तुल्यरूप में है फिर भी मातृत्व पितृत्व संबंध माता पिता में अत्यन्त हित के साधककर्त्ता होने से एक विशेष संबंध है।

अब सूत्रकार स्वभाववादका निरूपण कर नियतिवाद का निरूपण करते हैं-(न वि अत्थि पुरिसकारो) सकल कार्यों की सिद्धिएक भाग्य के ही आधीन होती हैं इसलिये उद्योग नामकी कोई वस्तु नहीं है। यदि उद्योग को सुखादि कार्य साधक माना जावे तो दुनिया में कोई व्यक्ति दुःखी नहीं होना चाहिये परन्तु ऐसा नहीं है-अनेक उद्योगी दुःखी देखे जाते हैं, इसलिये पुरुषार्थ-अर्थ साधक नहीं होता हैं। भाग्य ही अर्थ साधक है ऐसा नियतिवाद भी मृषावादरूप इसलिये है कि हम लोक में यह प्रत्यक्ष में देखते हैं कि आगे रखा हुआ भी भोजन जबतक हस्तोद्योगरूप पुरुषार्थ से संबंधित नहीं किया जाता है तबतक वह मुंह में नहीं आता है। इसलिये कीट आदि में भी अपने भोज्य-पदार्थ के पदार्थ को लाने रूप पुरुषार्थ की प्रवृत्ति देखी जाती है। इस

જનક ભાવ જો કે સમસ્ત પદાર્થોમાં તૂલ્યરૂપે છે. છતાં પણ માતૃત્વ પિતૃત્વ સંબંધ માતા પિતામાં અત્યંત હિતના સાધક-કર્ત્તા હોવાથી એક વિશિષ્ટ સંબંધ છે. સ્વભાવવાદનું નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર નિયતિવાદનું નિરૂપણ કરે છે—"न वि अत्थि पुरिसकारो" સઘળાં કર્મોની સફળતા એક માત્ર ભાગ્યને જ આધીન હોય છે, તેથી ઉદ્યોગ નામની કોઈ વસ્તુ નથી જો ઉદ્યોગને સુખાદિની પ્રાપ્તિનુ સાધન માનવામાં આવે તો દુનિયામાં કોઈ જીવ દુઃખી હોવો જોઈએ નહીં, પણ એવી પરિસ્થિતિ હોતી નથી-અનેક ઉદ્યોગી જીવો પણ દુઃખી દેખાય છે, તેથી પુરૂષાર્થ, અર્થસાધક નથી. ભાગ્ય જ અર્થસાધક છે એવો મત ધરાવતો નિયતિવાદ પણ એ કારણે મૃષાવાદ છે કે આપણી નજર સમક્ષ મૂકેલું ભોજન પણ જ્યાં સુધી હાથ વડે ઉદ્યોગ-પુરૂષાર્થ ન કરવામાં આવે ત્યાં સુધી મોંમાં જતું નથી. તે કારણે જંતૂઓમાં પણ પોતાના ભોજન માટેના પદાર્થો લાવવાના પુરૂષાર્થની પ્રવૃત્તિ જોવા મળે છે. આ પ્રમાણે જંતૂઓમાં

क्खाणमवि नत्थि ' प्रत्याख्यानं सावद्यकर्मनिवृत्तिलक्षणमपि नास्ति धर्मस्याभावे तत्साधनस्य प्रत्याख्यानस्याप्यभावः । अस्य मृषात्वं, सर्वज्ञ वचनविरोधात् । ' न वि अत्थि ' नापि च स्तः ' कालमच्चू ' कालमृत्यू=कालः=भूतभविष्यद् वर्तमान लक्षणः कालः मृत्युः=मरणं च । अथवा नापि चास्ति कालमृत्युः=काले=आयुष्यकर्मदलिकक्षयाऽवसरे मृत्युर्मरणम्। 'अरिहंता' तथा अर्हन्तस्तीर्थंकराः 'चक्कवट्टी' चक्रवर्तिनः=बलदेवा वासुदेवा वा न सन्ति प्रमाणाभावात् । नापि सन्ति ' केइ ' केऽपि–गौतमादयः, ' रिसओ ' ऋषयः=शमदमसंयमाद्यनुष्ठानपरायणाः ऋषयो

तरह कौतुक में प्रसिद्ध पुरुषार्थ का अपलाप कर केवल प्रमाणातीत नियतिवाद स्वीकारार्ह कैसे हो सकता है। पुरुषार्थ का त्यागकर इसकी स्वीकृति से तो मृषावादिता ही इसमें आती है। (पच्चक्खाणमवि नत्थि) सावद्यकर्मों से निवृत्ति होनी इसका नाम प्रत्याख्यान है। यह कहना कि धर्म के अभाव में धर्म के साधनभूत प्रत्याख्यान का भी अभाव है ! सो यह कथन भी मृषावादरूप इसलिये है कि इसमें सर्वज्ञ के वचन से विरोध आता है ! तथा (न वि अत्थि कालमच्चू य) इस प्रकारकी मान्यता कि–भूत, भविष्यत् और वर्तमानकाल नहीं है, मरण भी नहीं है, अथवा आयुकर्म के दलिकों के क्षय होने के अवसर में भी मरण नहीं होता है, (अरिहंता चक्कवट्टी, बलदेवा वासुदेवा नत्थि) अर्हन्त–तीर्थंकर, चक्रवर्ती, बलदेव, वासुदेव ये सब प्रमाण के अभाव से कोई भी नहीं हुए हैं और (नेवत्थि केइरिसओ) न गौतम आदि ऋषि ही हुए हैं, क्योंकि–शम, दम, संयम आदि अनुष्ठानों में पराय-

---

પણ પ્રસિદ્ધ પુરૂષાર્થનું આરોપણ કર્યા પછી પ્રમાણાતીત નિયતિવાદ કેવી રીતે સ્વીકાર્ય બની શકે ? પુરૂષાર્થનો ત્યાગ કરીને તેની સ્વીકૃતિ કરવામાં તો મૃષાવાદિતા જ રહેલ છે. " पच्चक्खाणमवि नत्थि " સાવદ્ય કર્મો–પાપકર્મોથી નિવૃત્ત થવું તેનું નામ પ્રત્યાખ્યાન છે એમ કહેવું કે ધર્મના અભાવે ધર્મના સાધનરૂપ પ્રત્યાખ્યાનનો પણ અભાવ છે. એવું કથન પણ તે કારણે મૃષાવાદરૂપ છે કે તેમાં સર્વજ્ઞનાં વચનોનો વિરોધ થાય છે તથા " न वि अत्थि कालमच्चू य" આ પ્રકારની માન્યતા કે ભૂત, ભવિષ્ય અને વર્તમાનકાળ નથી, મરણ પણ નથી, અથવા આયુ કર્મના સમૂહનો ક્ષય થવાનો અવસર આવે તો પણ મરણ થતું નથી, " अरिहंता चक्कवट्टी, बलदेवा वासुदेवा नत्थि " પ્રમાણના અભાવે, અર્હન્ત–તીર્થંકર, ચક્રવર્તી, બળદેવ, વાસુદેવ વગેરે કોઈ પણ થયાં નથી અને " नेवत्थि केइरिसओ " ગૌતમ આદિ ઋષિ થયાં નથી, કારણ કે–શમ, દમ સંયમ આદિ અનુષ્ઠાનોમા પરાયણ હોય તે જ વ્યક્તિને ઋષિ

विवक्षिताः किन्तु शमदमादेर्वस्तुत्वाभावान्न तस्यानुष्ठानवतां ऋपित्वसिद्धिः। नेदं सत्यं, शास्त्राध्ययनशिष्यशिक्षापरम्पराऽनादिप्रवाहस्यार्हदाद्यभावे उच्छेद प्रसङ्गात्। 'धम्माधम्मफलं वि' धर्माधर्मफलमपि = देवलोकनरकादिप्राप्तिलक्षणं किञ्चित् 'बहुयं' बहुकम्=अधिकं 'थोवं वा' स्तोकमल्पं नास्ति, धर्माधर्मयो-रप्रत्यक्षत्वेन वस्तुत्वाभावात् 'तम्हा' तस्मात् न किमपि सुकृतादिकमिति एवं 'जाणिऊण' ज्ञात्वा 'जहा' यथा=येन केनापि प्रकारेण सुबहु=अत्यन्तम् 'इंदि-याणुकूलेसु' इन्द्रियानुकूलेषु=श्रोत्रादीन्द्रियप्रियेषु 'सव्वविसएसु' सर्वविषयेषु=

णभूत व्यक्ति ही ऋषि कहलाते हैं, किन्तु शम, दम आदि ही जब वस्तु भूत-वास्तविक-नहीं हैं तो फिर इनके अनुष्ठान करने वलो में ऋपित्व की सिद्धि कैसे हो सकती है-मृषावादरूप ही है-सत्य नहीं है, कारण-शास्त्राध्ययन, शिष्यशिक्षा आदि का जो यह अनादिकाल से परम्परारूप से प्रवाह चला आ रहा है वह यदि तीर्थंकर आदि न हुए होते तो उच्छेद को प्राप्त हो जाता। इसी तरह से (धम्माधम्मं फलं वि न अत्थि किंचिबहुयं वा थोवं वा) जो और यह कि-"धर्मका फल स्वर्गादि की प्राप्ति और अधर्म का फल नरक आदि की प्राप्ति होना यह न थोड़े रूप में है और न बहुत रूप में है, क्यों कि धर्म और अधर्म ये अप्रत्य-क्षभूत हैं अतः इनमें वस्तुतः-अर्थ क्रिया कारित्व का अभाव है। (तम्हा) इसलिये जब पुण्यपाप आदि कोई वस्तुभूत पदार्थ हैं ही. तब (एवं जाणिऊण) ऐसा समझकर (जहा) जिस किसी भी तरह से (सुबहु इंदियाणुकूलेसु) इन्द्रियों को अत्यन्त प्रिय लगने वामें (सव्वविसएसु)

કહેવાય છે, પણ શમ, દમ આદિ જ જો વાસ્તવિક ન હોય તો તેનું અનુ-ષ્ઠાન કરનારમાં ઋષિત્વની સિદ્ધિ કેવી રીતે સંભવી શકે છે-એ તો મૃષાવાદ રૂપ જ છે-સત્ય નથી, કારણ કે શાસ્ત્રાધ્યયન, શિષ્યશિક્ષા આદિનો જે પ્રવાહ અનાદિકાળથી પરંપરા રૂપે ચાલ્યો આવે છે તે જો તીર્થંકર આદિ થયાં ન હોત તો ઉચ્છેદ-નાશ પામ્યો હોત. એ જ પ્રમાણે "धम्माधम्मफलं वि न अत्थि किंचि-बहुयं वा थोवं वा" બીજી આ પ્રકારની માન્યતા કે "ધર્મનું ફળ સ્વર્ગાદિની પ્રાપ્તિ અને અધર્મનું ફળ નરકાદિની પ્રાપ્તિ તે થોડા કે વધારે પ્રમાણમાં અસ્તિત્વ ધરાવતું નથી, કારણ કે ધર્મ અને અધર્મ અપ્રત્યક્ષભૂત છે તેથી તેમનામાં વસ્તુત્વ-અર્થ ક્રિયા કારિત્વનો અભાવ છે. "तम्हा" તેથી જો પુન્યપાપ આદિ કોઈ વસ્તુભૂત પદાર્થ છે જ નહીં "एवं जाणिऊण" એવું સમજીને 'जहा" જે કોઈ પણ પ્રકારે "सुबहु इंदियाणुकूलेसु" ઇન્દ્રિ-યોને અત્યન્ત પ્રિય લાગે તેવા "सव्वविसएसु" શબ્દાદિ સઘળા વિષયોમાં

शब्दादिषु 'वट्टेह' वर्तध्वं शब्दादीन् सर्वविषयान् यथेच्छमुपभुङ्ग्ध्वम् , 'नत्थि' नास्ति 'काइ' काचिदपि 'किरिया अकिरिया वा' क्रिया = तत्र – सत्क्रिया शास्त्रोक्तानुष्ठानरूपा । अक्रिया=असत्क्रिया सावद्यकर्मानुष्ठानरूपा, आस्तिक कल्पितेनाप्रमाणत्वात् , एवं 'नत्थिकवादिणो' नास्तिकवादिनः 'वामलोगवादी' वामलोकवादिनश्च भणन्ति=कथयन्ति ॥ सू० ५ ॥

पुनरपि तानेवाह—'इमंपि' इत्यादि—

मूलम्—इमंपि बिइयं कुदंसणं असब्भाववाइणो पण्णवेंति मूढा संभूओ अंडकाओ लोगो सयंभुणा सयं च निम्मिओ एवं एयं अलियं पयं पंति ॥ सू० ६ ॥

टीका—इदमनुपदवक्ष्यमाणमपि 'बिइयं' द्वितीयं 'कुदंसणं' कुदर्शनं = कुत्सितं दर्शनं=असत्यसिद्धान्तम् 'असब्भाववाइणो' असद्भाववादिनः = असन्तो भावाः=येषां ते तथा ते च ते वादिनस्तथा मूढाः 'पण्णवेंति' प्रज्ञापयन्ति यत्

शब्दादि सब विषयों में (वट्टेह) इच्छानुसार प्रवृत्ति करते रहना चाहिये। (नत्थि काइ किरिया अकिरिया वा) शास्त्रोक्तअनुष्टान रूप न कोई क्रिया–सत्क्रिया है और न सावद्यकर्मानुष्टान रूप कोई अक्रिया-असत्क्रिया है तो केवल आस्तिकवादियों की कोरी कल्पनाएँ हैं। इनमें वास्तविकता कुछ भी नहीं है। (नत्थियवाइणो वामलोगवाई) नास्तिकवादी और वामलोकवादी (एवं भणंति) इस प्रकार कहते हैं वह सब कथन मृषावादरूप है ॥सू. ५॥

फिर कहते है—'इमं पि बिइयं' इत्यादि।

टीकार्थ—अनुपद वक्ष्यमाण (इमंपि बिइयं) यह दूसरा कुदर्शन भी कि जिसे (असब्भाववाइणो) असद्भाववादी तथा (मूढा) मूढजन

"वट्टेह" ઇચ્છાનુસાર પ્રવૃત્તિ કર્યા કરવી જોઈએ. "नत्थि काइकिरिया अकिरिया वा" શાસ્ત્રોક્ત અનુષ્ઠાનરૂપ કોઈ ક્રિયા સત્ ક્રિયા નથી, કે સાવદ્યકર્માનુષ્ઠાન રૂપ કોઈ અક્રિયા અસત્ક્રિયા નથી, તે તો કેવળ આસ્તિકવાદીઓની ખાલી કલ્પનાઓ જ છે તેમા કોઇ પણ વાસ્તવિકતા નથી" "नत्थियवाइणो वाम- लोगवाई" નાસ્તિકવાદી અને વામલોકવાદી "एवं भणंति" તે આ પ્રમાણે કહે છે, તે તેમનું કથન મૃષાવાદ છે ॥ સૂ–૫ ॥

વળી કહે છે—"इमं पि बिइयं" ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ–નીચે પ્રમાણેનું "इमं पि बिइयं" બીજું કુદર્શન કે જે "असब्भाव- वाइणो" અસદ્ભાવવાદી તથા "मूढा" મૂઢ લોકો "पण्णवेंति" પ્રરૂપિત કરે

'लोगो' लोकः=पृथिव्यप्तेजोवायुवनस्पतितिर्यङ्नरामरनारकरूपः, 'अंडकाओ' अण्डकात् 'संभूओ' संभूतः=उत्पन्नः, तत्र अण्डकोद्भूतलोकवादिनां मतमित्थं यत् पूर्वं पृथिव्यादिपञ्चभूतरहितं जगत् केवलं जलमयमासीत् तत्र महदण्डं चिरकालविक्लेदितं सत् स्फुटितं द्विधाजातं पृथिवीरूपम् आकाशरूपं च, तत्र सुराऽसुरनारकतिर्यग् रूपं जगत् सर्वं समुत्पन्नमित्येवमण्डकात् सृष्टिः। 'सयंभुणा' स्वयम्भुवा च=ब्रह्मणा 'सयं' स्वयं 'निम्मिओ' निर्मितः=निष्पादितः इति केचित् ब्रुवन्ति। तथाहि दृश्यमान-जगदुत्पत्तेः पूर्वं पृथिव्यादि पञ्चभूतरहितं विनष्ट स्थावरजङ्गमामरनरगन्धर्वयक्षराक्षसकिन्नरगरुडमहोरगादि सकलविविध

(पण्णवेंति) प्ररूपित करते हैं, मृषावारूप वह दर्शन यह है-(लोगो अंड-काओ संभूओ) यह पृथिवी अप्, तेज, वायु वनस्पति, तिर्यंच, मनुष्य, देव, नारकरूप लोक अंडे से उत्पन्न हुआ है। अंडे से लोक को उत्पन्न हुआ मानने वालों का मत इस प्रकार है यह लोक पहले पृथिवी आदि पाँचभूतों से रहित था, और केवल जलमय ही था। इसमें एक चिरकाल से गीला अंडा पड़ा हुआ था, जब वह फटा तो इसके दो टुकडे हुए-एक टुकडा पृथिवीरूप हुआ और दूसरा टुकड़ा आकाशरूप हुआ- पृथिवी रूप टुकड़े में मनुष्य, तिर्यंच, नारक आदिरूप तथा आकशरूप टुकड़े में सुर असुर आदिरूप समस्त जगत् उत्पन्न हो गया। इस तरह अंडे से यह सृष्टि हुई वे कहतेहैं। (सयंभूणा सयं च निम्मिओ) कोई २ ऐसा भी कहते हैं कि यह जो दृश्यमान जगत् है वह उत्पत्ति से पहिले पहिले पृथिवी आदि पंचभूतों से रहित था। इसमें स्थावर, जंगम, अमर,

---

છે. તે મૃષાવાદરૂપ દર્શન આ પ્રમાણેનું છે-"लोगो अंडकाओ संभूओ" આ પૃથ્વી, અપ્, તેજ વાયુ, વનસ્પતિ, તિર્યંચ, મનુષ્ય, દેવ અને નારકરૂપ લોકો ઇંડામાંથી ઉત્પન્ન થયા છે. ઇંડાંમાંથી સૃષ્ટિ ઉત્પન્ન થયેલ માનનારની આ પ્રકારની માન્યતા છે-આ લોકો પહેલાં, પૃથિવી આદિ પાંચ ભૂતોથી રહિત હતો. અને ફક્ત જળમય જ હતો તેમાં એક ચિરકાળથી ભીનું ઇંડું પડેલું હતું જ્યારે તે ફાટયું ત્યારે તેના બે ટુકડા થયા-એક ટુકડો તે પૃથિવીરૂપ થયો અને બીજો ટુકડો આકાશરૂપ થયો પૃથિવીરૂપ ટુકડામા મનુષ્ય, તિર્યંચ, નારક આદિ રૂપ તથા આકાશ રૂપ ટુકડામાં સુર અસુર આદિ રૂપ સમસ્ત સૃષ્ટિ ઉત્પન્ન થઈ ગઈ. આ રીતે ઇંડામાંથી સૃષ્ટિ ઉત્પન્ન થયાનું તેઓ દર્શાવે છે 'सयंभुणा सयं च निम्मिओ" કોઇ કોઇ એવું પણ કહે છે કે આ જે જગત નજરે પડે છે તે ઉત્પત્તિ પહેલાં પૃથિવી આદિ પાંચ ભૂતોથી રહિત હતું. તેમાં સ્થાવર,

भेदं केवलमर्णवस्वरूप तमोभूतमासीत्, तत्र-तपस्तप्यमानस्य शयानस्य विभो-र्भगवतो नाभेः कमलमुदपद्यत, तत्र ब्रह्मा समुत्पन्नस्तस्मात् सुरासुरमनुजतिर्यक् स्थावरजङ्गमभूतप्रभूतभेदविशेषविशिष्टं जगदुत्पन्नम्। इति एवमुक्तरीत्या 'अलियं' अलीकम्=असत्यं 'पयंपंति' प्रजल्पन्ति। एतेषामलीकत्वं भ्रान्तज्ञानिभिर्निरूपितत्वात् ॥ सू० ६ ॥

पुनरप्याह—'पयावइणा' इत्यादि।

मूलम्—पयावइणा इस्सरेण य कयत्तिकेइ। एवं विण्हुमयं कसिणमेव य जगंति केइ। एवमेके वदंति मोसं-एगो आया अकारगो वेदगो य सुकयस्स य दुक्कयस्स य करणाणि कारणाणि य सव्वहा सव्वहिं च णिच्चो य णिक्किओ निग्गुणो य अणुवलेवओ त्ति ॥ सू० ७ ॥

टीका-'पयावइणा' प्रजापतिना=कृतमिदं जगदिति केचित्। एतदलीकता प्रमाणवादितत्वात्। तथा 'इस्सरेण' इश्वरेण च 'कयति' कृतमिति 'केइ'

नर, गंधर्व, यक्ष, राक्षस, किन्नर, गरुड, महोरग आदि समस्त विविध भेद नष्ट थे-यह तो केवल अंधकाराच्छादित अर्णव स्वरूप था। इसमें तपस्या करते हुए विभु भगवान् की नाभि से एक कमल उत्पन्न हुआ। उस कमल में ब्रह्माजीने जन्म लिया। उनसे फिर सुर, असुर, मनुज, तियंच, स्थावर आदि अनेक जीवों के भेद प्रभेद वाला यह जगत् उत्पन्न हुआ। इस प्रकार असद्भाववादियों की ये दोनों प्रकारकी मान्यताएँ भ्रान्त ज्ञानियों द्वारा निरूपित होने के कारण मृषावादरूप ही हैं ॥सू०६॥

फिरभी इन्हीं को कहते हैं—'पयावइणा' इत्यादि।

टीकार्थ—(पयावइणा इस्सरेण य कयत्ति केइ) कितनेक व्यक्ति

જંગમ અમર, નર, ગંધર્વ, યક્ષ, રાક્ષસ, કિન્નર ગરુડ, મહોરગ, આદિ સમસ્ત વિવિધ ભેદનું અસ્તિત્વ ન હતું તે તો કેવળ અંધકારથી છવાયેલ સાગર સ્વરૂપ હતું. તેમાં તપસ્યા કરતા વિષ્ણુ ભગવાનની નાભિમાંથી એક કમળ પેદા થયું તે કમળમા બ્રહ્માજીએ જન્મ લીધો, તેમણે સુર, અસુર, મનુષ્ય, તિર્યંચ, સ્થાવર આદિ અનેક જીવોના ભેદ પ્રભેદથી યુક્ત આ જગત રચ્યું. આ પ્રકારની અસદ્ભાવવાદીઓની તે બને પ્રકારની માન્યતાઓ ભ્રાન્તજ્ઞાનીઓ દ્વારા નિરૂપિત થયેલ હોવાથી મૃષાવાદ રૂપ જ છે. ॥ સૂ-૫ ॥

केचित् नैयायिका इत्यर्थः, तद् यथा क्षित्यङ्कुरादिकं कर्तृजन्यं कार्यत्वात् घटवदिति। जलदबुदादौ हेतोरनैकान्तिकत्वेनास्यालीकता। एवं 'कसिणमेव' कृत्स्नमेव=सकलमेव 'जगं' जगत् 'विण्हुमयं' विष्णुमयं = विष्णुस्वरूपमिति 'केइ' केचित् वदन्ति तन्मतानुयायिनः, यथा—

"जले विष्णुः स्थले विष्णु,-र्विष्णुः पर्वतमस्तके।
ज्वालामालाकुले विष्णुः, सर्वं विष्णुमयं जगत्॥१॥" इति।

ऐसा मानते हैं कि यह जगत् प्रजापति-ब्रह्माने बनाया है। कितनेक कहते हैं कि यह जगत् ईश्वरने बनाया है सो इस प्रकार की मान्यता में अलीकता प्रमाणबाधित होने के कारण आती है। तथा जो नैयायिक जन ऐसा कहते हैं कि यह जगत् ईश्वर ने बनाया है, क्यों कि यह घटादिकी तरह कार्य है "क्षित्यङ्कुरादिकं कर्तृजन्यं कार्यत्वात् घटवत्" सो कार्यत्वरूप हेतु मेंजल बुद्बुद आदि द्वारा अनैकान्तिक दोष आता है, इसलिये यह उनकाकथन असत्यरूप प्रमाणित हो जाता है। (एवं विण्हुमयं कसिणमेव य जगंति केइ) इसी तरह यह सकल जगत् विष्णुमय है ऐसा भी कोई २ कहते हैं, क्यों कि उनकी ऐसी मान्यता है कि—

"जले विष्णुः स्थले विष्णु-र्विष्णुः पर्वतमस्तके।
ज्वालामाला कुले विष्णुः सर्वं विष्णुमयं जगत्॥१॥"

जल में विष्णु हैं, थल में विष्णु हैं, पर्वत की चोटी ऊपर विष्णु हैं,

હવે પણ એ વિષે જે કહે છે.—'पयावइणा" ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—"पयावइणा इस्सरेण य कयत्ति केइ" કેટલાક લોકો એવું માને છે કે આ જગત પ્રજાપતિ-બ્રહ્માએ બનાવ્યું છે કેટલાક કહે છે કે આ જગત ઇશ્વરે બનાવ્યું છે, તો તે પ્રકારની માન્યતામાં મૃષાવાદ-અસત્ય દોષ પ્રમાણબાધિત હોવાને કારણે આવે છે તથા જે નૈયાયિકો એવું કહે છે કે આ જગત ઇશ્વરે બનાવ્યું છે. કારણ કે તે ઘટાદિના જેવું કાર્ય છે, "क्षित्यङ्कुरादिकं कर्तृजन्यं कार्यत्वात् घटवत्" તો કાર્યત્વરૂપ હેતુમાં બુદબુદ આદિ દ્વારા અનૈકાન્તિક દોષ આવે છે, તેથી તેમનું તે કથન અસત્ય રૂપ સિદ્ધ થાય છે "एवं विण्हुमयं कसिणमेव य जगंति केइ" એ જ પ્રમાણે આ સમસ્ત જગત વિષ્ણુમય છે એવું પણ કેટલાક લોકો કહે છે, કારણ કે તેમની એવી માન્યતા છે કે—

"जले विष्णुः स्थले विष्णुः विष्णुः पर्वतमस्तके।
ज्वालामालाकुले विष्णुः, सर्वं विष्णुमयं जगत्॥१॥

જળમાં વિષ્ણુ છે, સ્થળમાં વિષ્ણુ છે, પર્વતનાં શિખરપર વિષ્ણુ છે,

एतदलीकता प्रमाणाभावात् मातापित्रादि सकलव्यवहारविच्छेदकत्वाच्च। अथ वेदान्तिमतमाह—एवं=अमुना प्रकारेण ऐके=अद्वैतब्रह्मवादिनः वदन्ति यत् 'एगो आया' एक एव आत्मा 'मोसं' मृषा=जगत् मिथ्या तदुक्तं "ब्रह्मसत्यं जगन्मिथ्या" इति, उक्तञ्च—

"एक एव हि भूतात्मा, भूते भूते व्यवस्थितः।
एकधा बहुधा चैव, दृश्यते जलचन्द्रवत्॥" इति।

तदलीकता च — सकललोकप्रत्यक्षभेदमूलकसुखदुःखधर्माधर्मादिजगद् व्यवहारोच्छेदप्रसङ्गात्। अथात्माऽकर्तृत्वमतमाह—'अकारगो' अकारकः=

अग्नि में विष्णु हैं, तात्पर्य यह कि यह सब जगत् विष्णुमय है ॥१॥

यह मान्यता भी अलीकस्वरूप ही है, क्यों कि इस मान्यता को सत्यरूप में प्रमाणित करने वाला कोई भी प्रमाण नहीं हैं। यदि सब जगत् को केवल विष्णुमय ही माना जावे तो फिर यह जो उसमें माता पिता आदि रूप समस्त व्यवहार है उसका उच्छेद प्राप्त होता है। (एवमेगे वदंति मोसं एगो आया) इसी तरह वेदान्तियों का जो यह कथन है कि एक ही आत्मा है-जगत् मिथ्या है-"ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या।" कहा भी है—

"एक एव हि भूतात्मा, भूते भूते व्यवस्थितः।
एकधा बहुधा चैव, दृश्यते जलचन्द्रवत् ॥१॥" इति।

प्रत्येक प्राणी में एक ही भूतात्मा व्यवस्थित है। वही जलचन्द्र की तरह एकरूप व अनेकरूप दिखलाई देता है ॥१॥

અગ્નિમાં વિષ્ણુ છે. મતલબ એ કે આ સમસ્ત જગત વિષ્ણુમય ॥૧॥

આ માન્યતા પણ અસત્ય છે કારણ કે આ માન્યતાને સત્યરૂપે સિદ્ધ કરવાને માટે કોઈ પણ પ્રમાણ નથી જો સમસ્ત જગતને કેવળ વિષ્ણુમય જ માની લેવામાં આવે તો તેમાં માતા પિતા આદિ રૂપ જે વ્યવહાર છે તેનું ખંડન થાય છે "एवमेगे वदंति मोसं एगो आया" એ જ પ્રમાણે વેદાન્તીઓનું આ પ્રકારનું જે કથન છે કે "આત્મા એક જ જે-જગત મિથ્યા છે-"ब्रह्मसत्यं जगन्मिथ्या" કહ્યું પણ છે-

"एक एव हि भूतात्मा, भूते भूते व्यवस्थितः।
एकधा बहुधा चैव, दृश्यते जलचन्द्रवत्" ॥ १ ॥ इति।

પ્રત્યેક પ્રાણીમાં એક જ ભૂતાત્મા રહેલ છે. તે જ જલચન્દ્રની જેમ એક રૂપે કે અનેકરૂપે દેખાય છે ॥૧॥

अयमात्मा अकर्ता–पुण्यपापादीनाम् । वेदकः=भोक्ता पुण्यपापकर्मफलस्य प्रति-विम्बोदयन्यायादिति भावः, तथा–'सुकयस्स' सुकृतस्य–पुण्यस्य 'दुक्कयस्स' दुष्कृतस्य पापस्य च 'सव्वहा' सर्वथा' 'सव्वहिं' सर्वत्र सर्वस्मिन् काले 'कारणाणि' कारणानि=निमित्तभूतानि 'करणाणि' करणानि=चक्षुरादीनीन्द्रियाणि, नायमात्मा । अलीकताचास्य संसार्य्यात्मनो मूर्तत्वेन परिणामित्वेन कर्तृत्वोपपत्तेः तथा 'णिच्चो' नित्य इति=केचित्, तदपि न युक्तम्, एकान्तनित्यत्वे सुख

यह कथन भी मिथ्यारूप ही है, क्यों कि इसे सत्य मानने पर जो सकललोक के प्रत्यक्षभूत भेदमूलक धर्म अधर्म आदिका व्यवहार होता है उसके उच्छेद का प्रसंग प्राप्त होता है । इसी तरह जो आत्मा को एकान्तरूप से अकर्त्ता मानते हैं ऐसे सांख्यो की यह मान्यता है कि (अकारगो वेदगोय) यह आत्मा पुण्यपाप आदिका अकर्त्ता है, और उनके फल भूत सुख दुःख आदिका (१) [1]प्रतिविम्बोदयन्यायसे भोक्ता है । तथा कोई कहते हैं कि (सुकयस्स दुक्कयस्स य सव्वहा सव्वहिं कारणाणि य करणाणि) पुण्य और पाप के सर्व प्रकार से सर्वकाल में कर्त्ता निमित्तभूतचक्षुरादि इन्द्रियां हैं । आत्मा नहीं है, यह उनकी मान्यता असत्य है, क्यों कि संसारी आत्मा कथंचित् मूर्तिक है और परिणामी है इसलिये कर्तृत्व और भोक्तृत्व बन जाता है । सर्वथा अमू-

તે કથન પણ મિથ્યારૂપ જ છે, કારણ કે તેને સત્ય માનવામાં આવે તો સમસ્ત જગતમાં નજરે પડતો મૂળભૂત ભેદવાળો ધર્મ અધર્મ આદિનો જે વ્ય-વહાર થાય છે તેનું ખંડન થવાનો પ્રસંગ ઉપસ્થિત થાય છે. એ જ રીતે આત્માને એકાન્તરૂપે અકર્ત્તા માનનાર સાંખ્ય મતવાદીઓની એવી માન્યતા છે કે " अकारगो वेदगोय " આ આત્મા પુન્ય પાપ આદિનો કર્ત્તા નથી, અને તેમનાં ફળરૂપ સુખ દુ ખ આદિનો "[1]प्रतिविम्बोदय न्यायथी" ભોકતા છે. તથા કેઇ કોઈ લોકો કહે છે કે " सुकयस्स दुक्कयस्स य सव्वहा सव्वहि कारणाणि य करणाणि " પુન્ય અને પાપના સર્વ પ્રકારનો કર્તા સર્વકાળે આત્મા નહીં પણ ચક્ષુ આદિ ઈન્દ્રિયો છે તેમની તે માન્યતા અસત્ય છે, કારણ કે સંસારી આત્મા કેટલાક પ્રમાણમાં મૂર્તિક છે અને પરિણામી છે, તેથી તેમાં કર્તૃત્વ અને

१ प्रतिबिम्बोदय न्याय का तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार स्फटिकमणि के साथ जिस वर्णका संयोग होगा स्फटिक मणि वैसा ही वर्णका दीखने लग जाता है ।

૧પ્રતિબિમ્બોદય ન્યાયનું તાત્પર્ય એ છે કે જેમ સ્ફટિક મણીની સાથે જે રંગનો સંયોગ થશે, એવા જ રંગનો સ્ફટિક મણી દેખાશે.

दुःखबन्धमोक्षाद्यभावप्रसङ्गात्। 'निक्किओ' निष्क्रियः गमनागमनादिक्रियावर्जितः सर्वव्यापित्वेनावकाशाभावात्, एतदप्यसत्, देहमात्रोपलभ्यमानत्वात्। 'निग्गुणो' निर्गुणः=सत्त्वरजस्तमोगुणरहितः, 'अणुवलेवओ' अनुपलेपकः=निर्लेपः सङ्गवर्जितः आत्मेति कापिलाः, उक्तं च-"अकर्त्ता निर्गुणोभोक्ता, आत्मा कपिलदर्शने" इति। सत्त्वरजस्तमोगुणानां साम्यावस्था प्रकृतिः, सैव कर्त्री, पुरुषस्तु पुष्करपलाशवन्निर्लेपश्चेतनोऽकर्ता, इति साङ्ख्यानां मतम्। कुदर्शनत्वं

र्तिक आत्मा में ये नहीं बनते हैं। (णिच्चो) कोई २ आत्मा को सर्वथा नित्य मानते हैं, सो आत्मा की यह नित्य मान्यता सत्य नहीं है, क्यों कि आत्मा को सर्वथा नित्य मानने पर सुख दुःख एवं बंध, मोक्ष आदि के अभाव का प्रसंग प्राप्त होता है। (निक्किओ) आत्मा को निष्क्रिय मानना इस अभिप्राय से, कि आत्मा व्यापक है और जो व्यापक होता है उसमें अवकाश के अभाव से गमनागमन रूप क्रियाएँ बन नहीं सकती हैं सो ऐसी मान्यता भी मृषावादरूप ही है, कारण कि-आत्मा शरीर में ही उपलब्ध होती है अन्यत्र नहीं। (निग्गुणो) तथा ऐसा कहना कि "यह आत्मा सत्त्व, रज और तमोगुण से रहित है और (अणुवलेवओ) पुष्करपलाशवत् निर्लेप-संगवर्जित है। सांख्यों का यही कहना है कि सत्त्व, रज और तमोगुण की साम्यावस्था का नाम प्रकृति है। यह प्रकृति ही करनेवाली होनेसे कर्त्री है, चेतयिता-प्रकृति द्वारा किये गये कार्यों का जानने वाला पुरुषआत्मा तो कमलपत्र के

ભોકતૃત્વ આવી જાય છે. સર્વથા અમૂર્ત્તિક આત્મામા તે બનતું નથી, "णिच्चो" કોઈ કોઈ મતવાળા આત્માને સર્વથા નિત્ય માને છે આત્માને એ રીતે નિત્ય માનવું તે સત્ય નથી, કારણ કે આત્માને સર્વથા નિત્ય માનવામાં આવે તો સુખ દુઃખ અને બંધ મોક્ષ આદિનો અભાવ હોવાનો પ્રસંગ ઉપસ્થિત થશે- "निक्किओ" કોઈ કોઈ લોકો આત્માને એ કારણે નિષ્ક્રિય માને છે કે આત્મા વ્યાપક છે. અને જે વ્યાપક હોય તેમાં અવકાશનો અભાવ હોવાથી ગમનાગમનરૂપ ક્રિયાઓ થઈ શકતી નથી. તે માન્યતા પણ મૃષાવાદરૂપ જ છે કારણ કે આત્મા શરીરમાં જ હોય છે અન્યત્ર હોતો નથી "निग्गुणो" તથા "આ આત્મા સત્ત્વ, રજ અને તમોગુણથી રહિત છે" એવી માન્યતા "अणुवलेवओ" તથા કમળ પત્ર પર રહેલા પાણીના બિંદુથી કમળ પત્ર જેમ અલિપ્ત રહે છે, તેમ આત્મા પણ તે તત્ત્વોથી નિર્લેપ રહે છે તે માન્યતા પણ મૃષાવાદ છે. સાંખ્યોની એવી માન્યતા છે કે સત્ત્વ, રજ અને તમોગુણની સામ્યાવસ્થાનું નામ પ્રકૃતિ છે. એ પ્રકૃતિ જ કરનાર હોવાથી કર્ત્રી છે-પ્રકૃતિ દ્વારા કરાયેલ કાર્યોને જાણનાર પુરુષ

चास्य तथाहि—न तावन्निर्गुणत्वं चेतनास्वरूपत्वाभ्युपगमात् । अनुपलेपकत्वमपि न बद्धमुक्तावस्था व्यवस्थाविच्छेदप्रसङ्गात् ॥ सू० ७ ॥

पुनरप्याह—' अवि य ' इत्यादि—

मूलम्—अवि य एवमाहंसु असब्भाव जंपि एहिं किंचि जीवलोगे दीसई सुकयं वा दुक्कयं वा, एवं जइच्छाए वा सहावेण वावि दयिवयप्पभावओ वावि भवइ, नत्थि तत्थ किंचिकयकं तत्तं लक्खणं विहाणं नियइ कारिया एवं केइ जंपंति इड्ढिरससायगारवपरावहवे करणालसा परूवेंति धम्मवीमंसएणं मोसं ॥ सू० ८ ॥

टीका—' अवि य ' अपि च एवं=वक्ष्यमाणरीत्या ' असब्भावं ' असद्भावं ' आहंसु ' आहुः=कथयन्ति कथमित्याह—' जंपि ' यदपि किंचि ' किञ्चित् ' एहिं '

समान निर्लिप्त है । अतः कहा है " अकर्त्ता निर्गुणो भोक्ता " आत्मा कपिल दर्शने " यह भी युक्ति युक्त नहीं है कारण आत्माको सर्वथा निर्गुण मानने पर उसमें चेतनत्व गुण का भी अभाव होने से अचेतनत्व का प्रसंग प्राप्त होगा, परन्तु ऐसी बात तो वहां मानी नहीं गई है, क्यों कि आतमा को चेतना गुण स्वरूप स्वीकार किया गया है । तथा पुष्कर पलाशवत् सर्वथा निर्लिप्त मानने पर उसकी जो बद्ध—संसारी—और मुक्त ये जो दो अवस्थाएँ होती हैं उनकी व्यवस्था का विच्छेद प्राप्त होता है ॥ सू—६ ॥

तथा—' अवि य ' इत्यादि ।

टीकार्थ—(अवि य एवं असब्भावं आहंसु) इस प्रकार से जो अस-

આત્માતો કમળપત્ર સમાન નિર્લિપ્ત છે. તેથી જ કહ્યુ છે કે " अकर्त्ता निर्गुणो भोक्ता आत्मा कपिलदर्शने " તે પણુ યુક્તિયુક્ત નથી, કારણુ કે આત્માને સર્વથા નિર્ગુણુ માનવામાં આવે તો તેમાં ચેતનત્વ ગુણુનો પણુ અભાવ હોવાથી અચેતનત્વનો પ્રસગ ઉપસ્થિત થશે, પણુ એમ તો ત્યાં માનેલ નથી, કારણુ કે આત્માને ચેતનગુણુ સ્વરૂપ સ્વીકાર્યો છે. તથા કમલપત્ર પર રહેલ જળબિન્દુથી અલિપ્ત કમળ જેવો તેને માનવામાં આવે તો તેની બદ્ધ—સંસારી અને મુક્ત એ બે અવસ્થાઓ જે હોય છે તેની વ્યાવસ્થાનું ખંડન થશે. ॥ સૂ—૬॥

તથા—" अवि य " ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—"अवि य एवं असब्भावं आहंसु" આ પ્રમાણે જ અસદ્ભાવ કહેવાયો

इह जीवलोके 'सुकयं वा' सुकृतं वा=सुकृतफलं–सुखमास्तिकमतेन 'दुक्कयं वा' दुष्कृतं=दुष्कर्मफलं दुःखं वा 'दीसई' दृश्यते 'जइच्छाए' यदृच्छया=अकस्मात् काकतालीयन्यायेन अवितर्कितमेव सर्वं समुत्पद्यते। यथा काकागमनसमये अबुद्धिपूर्वकं काकोपरितालपतनं नहि काकस्यैवं बुद्धिरस्तियन्मदुपरितालं निपतिष्यति, तथा तालस्यापि नायमभिप्रायो यदहं काकोपरि पतिष्यामि, एवमेव सर्वं सुखदुःखादिजातमतर्कितोपस्थितमेव न कर्तृविशेषबुद्धिपूर्वकम्। तदसत् इदमस्य कारणमिदमस्य कार्यमिति सकललोकप्रसिद्ध व्यवस्था विच्छेदापत्तेः अन्यथा कथं

द्वाव कहा गया है कि (जंपि किंचि एहिं जीव लोगे सुकयं वा दुक्कयं वा दीसई) जो कुछ भी इस जीवलोक में सुकृत अथवा सुकृत का फलरूप सुख दुष्कृत अथवा दुष्कृत का फलरूप दुःख दिखलाई देता है वह सब (जइच्छाए वा) अकस्मात् काकतालीय न्याय से अवितर्कित ही उत्पन्न हो जाता है. जिस प्रकार उड़ता हुआ कौवा तालवृक्ष के नीचे आया और आते ही उस पर ताड़ का फल गिर पड़ा तो उसके इस पतन में न तो काकने ही ऐसा विचार किया कि मेरे ऊपर ताड़ का फल गिर पड़े, और न ताड़फल ने ही ऐसा सोचा कि मैं काक के आते ही उस पर गिर पड़ूँ किन्तु यह उसका पतन अवितर्कित ही हुआ इसी तरह सुख दुःख आदि जो कुछ भी होता है वह सब अतर्कित ही उपस्थित होता रहता है इसमें कर्त्ता कि विशेष बुद्धि पूर्वकता नहीं है। सो ऐसी मान्यता भी असत्य ही है कारण कि लोक में जो यह व्यवस्था बन रही है कि "यह इसका कारण है यह इसका कार्य है" वह सब इस प्रकार की मान्यता में विच्छेद को प्राप्त हो जावेगा। देखो जो

છે કે 'जंपि किंचि एहिं जीवलोगे सुकयं वा दुक्कयं वा दीसई" આ જીવલોકમાં જે કોઈ પણ સુકૃત અથવા સુકૃતના ફળરૂપ સુખ, દુષ્કૃત અથવા દુષ્કૃતના ફળરૂપ દુઃખ નજરે પડે છે તે બધા "जइच्छाए वा" અકસ્માત્ કાકતાલીય ન્યાયે અવિતર્કિત જ ઉત્પન્ન થઇ જાય છે જેમ ઉડતો કાગડો તાડના ઝાડની નીચે આવે અને આવતાં જ તેના ઉપર તાડનું ફળ પડયું, તો તેના તે પતનમાં કાગડાએ એવો વિચાર કર્યો ન હતો કે મારા ઉપર તાડનું ફળ પડે અને તાડના ફળે પણ એવો વિચાર કર્યો ન હતો કે કાગડો આવતા જ હું તેના ઉપર પડું પણ તેનું તે પતન અવિતર્કિત જ થયુ હોય છે, એ જ પ્રકારે સુખ દુ:ખ આદિ જે કંઇ થાય છે તે બધું અવિતર્કિત જ થયા કરે છે તેમાં કર્તાની વિશેષબુદ્ધિ કારણરૂપ નથી તો એવી માન્યતા પણ અસત્ય જ છે કારણ કે સૃષ્ટિમા એવી જે વ્યવસ્થા ચાલી રહી છે કે "તે આનું કારણ છે, તે આનું કાર્ય છે" એ બધાનું તે માન્યતાથી ખંડન થઈ જશે. જુવો જેને તેલ

तैलार्थी तिलमेवोपादद्यात् दध्यर्थी च दुग्धं, दुग्धार्थी च गाम् । अथ स्वभाववादीप्राह-

"कः कण्टकानां प्रकरोति तैक्ष्ण्यं,
विचित्रभावं मृगपक्षिणां च ।
स्वभावतः सर्वमिदं प्रवृत्तं,
न कामचारोऽस्ति कुतः प्रयत्नः ॥ १ ॥"

तदप्यसत्—अत्रापि कार्यकारणव्यवस्था विच्छेदात् ।

तैलार्थी होता है वह तिलों को ही तो ग्रहण करता है, दध्यर्थी दुग्ध को और दुग्धार्थी गाय को । यह ऐसा क्यों होता है इसलिये कि ये तिलादिक अपने २ कार्य के कारण हैं ।

अब स्वभाववादी का स्वरूप कहते हैं-' सहावेण वावि ' इत्यादि ।

स्वभाववादी का ऐसा कहना है कि जगत् में जो कुछ होता है वह स्वभाव से ही होता है, कहा भी है—

"कः कण्टकानां प्रकरोति तैक्ष्ण्यं, विचित्रभावं मृगपक्षिणां च ।
स्वभावतः सर्वमिदं प्रवृत्तं, न कामचारोऽस्ति कुतःप्रयत्नः ॥१॥"

कांटों में तीक्ष्णता कौन करता है ? मृगों में पक्षियों में विचित्रता कौन उत्पन्न करता है ? तो इसका केवल उत्तर यही है कि स्वभाव से ही यह सब कुछ होता है, इसमें कामचार-यदृच्छा-कारण नहीं है और न कोई प्रयत्न ही कारण है ॥१॥

यह स्वभाववादी का कथन भी ठीक नहीं है । कारण इसमें भी

જોઈતું હોય તે તલને જ ગ્રહણ કરશે, દહીંની ઇચ્છાવાળો દૂધને અને દૂધની ઇચ્છાવાળો ગાયને ગ્રહણ કરશે તે પ્રમાણે થવાનું કારણ શું છે? કારણ એ જ છે કે તલ આદિ પોત પોતાના કાર્યને માટે કારણરૂપ-ઉપયોગી છે

હવે સ્વભાવવાદીનું સ્વરૂપ કહે છે—" सहावेण वावि " ઇત્યાદિ

સ્વભાવવાદીનું એવું કહેવું છે કે જગતમાં જે કંઇ થાય છે તે સ્વભાવથી જ થાય છે, કહ્યું પણ છે-

" कः कण्टकानां प्रकरोति तैक्ष्ण्यं, विचित्रभावं मृगपक्षिणां च ।
स्वभावतः सर्वमिदं प्रवृत्तं, नकामचारोऽस्ति कुतः प्रयत्नः " ॥१॥

કાંટામા તીક્ષ્ણતા કોણ કરે છે? મૃગોમાં તથા પક્ષીઓમાં વિચિત્રતા કોણ ઉત્પન્ન કરે છે? તેનો કેવળ એક જ ઉત્તર છે કે સ્વભાવથી જ તે બધું થાય છે, તેમાં કામચાર-તેની ઇચ્છા-કારણરૂપ નથી કે કોઈ પ્રયત્ન કારણરૂપનથી ॥૧॥

સ્વભાવવાદીનું તે કથન પણ બરાબર નથી. કારણ કે તેમાં પણ કાર્ય કારણ કે તેમાં પણ કાર્ય-કારણભાવનું ખંડન થાય છે.

तथा दैववादिनः—

"प्राप्तव्यमर्थं लभते मनुष्यः, किं कारणं दैवमलङ्घनीयम्।
तस्मान्न शोचामि न विस्मयो मे, यदस्मदीयं नहितत्परेषाम्॥"

तथा 'नत्थि' नास्ति 'तत्थ' तत्र मर्त्यलोके 'किंचि' किञ्चित् 'कयकं' कृतकं=कर्मनिष्पन्नं 'तत्तं' तत्त्वं=वस्तु। तथा 'लक्खणविहाणं' लक्षणविधानां =पदार्थस्वरूपप्रकाराणां नियतिः=भाग्यमेव 'कारिया' कारिका=कर्त्री, तथा यत्र

कार्यकारणभाव का विच्छेद प्राप्त होता है।

अब दैववादियों का स्वरूप कहते हैं–'दवियप्पभावओ वावि भवइ' इत्यादि। दैववादियों कि ऐसी मान्यता है—

"प्राप्तव्यमर्थं लभते मनुष्यः, किं कारणं दैवमलङ्घनीयम्।
तस्मान्न शोचामि न विस्मयो मे, यदस्मदीयं नहि तत् परेषाम्॥१॥"

जो कुछ प्राप्त होने योग्य वस्तु है वह हमें भाग्य की कृपा से ही प्राप्त होती है। यह भाग्य अलंघनीय है। अतः ऐसा समझकर कि जो हमारी है वह दूसरों की कभी नहीं हो सकती है कभी भी किसी प्राणी को शोक फिकर और आश्चर्य आदि नहीं करना चाहिये ॥१॥

अतः हे भाइयो! तुम एक मात्र दैव–भाग्य पर ही भरोसा रखो। (नत्थि तस्स किंचि कयकं तत्तं) लोकमें कोई ऐसी वस्तु नहीं है जो कृतक हो परुषार्थ रूप कर्म से प्राप्त की जा सके–ऐसी हो। इसी प्रकार (लक्खणविहाणं) पदार्थों का जितना भी कुछ अपना रूप है तथा उनके जितने भी प्रकार–भेद हैं इन सबकी (कारिया) कारिका करने

હવે દૈવવાદીઓનું સ્વરૂપ કહે છે–"दवियप्पभावओवावि ,भवइ" ઇત્યાદિ. દૈવવાદીઓની માન્યતા છે કે–

"प्राप्तव्यमर्थं लभते मनुष्यः, किं कारण दैवमलङ्घनीयम्।
तस्मान्न शोचामि न विस्मयो मे, यदस्मदीयं नहि तत् परेषाम्" ॥१॥

પ્રાપ્ત થવા લાયક જે કોઇ વસ્તુ હોય છે તે આપણને ભાગ્યની કૃપાથી જ મળે છે. તે ભાગ્ય અલઘનીય–અફર છે. જે અમારી ચીજ છે તે બીજાની કદી પણ થઈ શકતી નથી, એવું સમજીને કદીપણ કોઇ પ્રાણીએ શોક, ચિન્તા આશ્ચર્ય આદિ કરવા જોઇએ નહીં ॥૧॥

તો હે ભાઇઓ! તમે એક માત્ર ભાગ્ય ઉપર જ વિશ્વાસ રાખો

"नत्थि तस्स किंचि कयकं तत्तं" જગતમા એવી કોઈ વસ્તુ નથી કે જે કૃતક હોય–પુરુષાર્થથી પ્રાપ્ત કરી શકાય તેવી હોય. એ જ રીતે "लक्खण–विहाणं" પદાર્થોનું જે કોઇ પોતાનું રૂપ છે તથા તેમના જેટલા પ્રકાર–ભેદ છે, તે બધાની "कारिया" કારીકા–કરનારી "नियई" આ નિયતિ–ભાગ્ય–જ

भाव्यं तत् कोटि यत्नैरपि न भवति यद् भाव्यं तद् विनापि यत्नेन भवति, तदसत् —सकलप्रत्यक्षोद्यमादीनां व्यर्थत्वापत्तेः । वा शब्देन–कालवादादयोऽपि विज्ञेयाः ।

तथाहि–" कालः सृजति भूतानि, कालः संहरते प्रजाः ।
कालः सुप्तेषु जागर्ति कालो हि दुरतिक्रमः ॥ १ ॥ "

वाली (नियई) यह नियति–भाग्य ही है । तथा जो होने योग्य नहीं है वह करोड यत्नों से भी नहीं हो सकता है, और जो होने योग्य है वह विना यत्न के भी हो जाता है। सो इस प्रकार की दैव (भाग्य) वादियों की यह मान्यता केवल कल्पनामात्र है कारण-इसका इस प्रकार की एकान्ततः कल्पना मानने पर सकल प्राणीयों के प्रत्यक्ष-भूत उद्यमादिकों में व्यर्थता की आपत्ति आती है।

'वा' शब्द से कालवादियों का स्वरूप कहते हैं–यहां "वा" शब्द से कालवाद आदि भी मृषारूप हैं ऐसा जानना चाहिये। काल-वादियों की ऐसी मान्यता है कि–

" कालः सृजति भूतानि, कालः संहरते प्रजाः ।
कालः सुप्तेषु जागर्ति, कालो हि दुरतिक्रमः ॥१॥ "

काल ही भूतों को–जीवों को–बनाता है और नष्ट करता है। काल ही सोये हुओं में जगाता है इसलिये काल दुरतिक्रम–अलंघनीय है। अर्थात्–यह अविनश्वर है।

છે. તથા જે થવા લાયક નથી તે કરોડ પ્રયત્નો કરવા છતાં પણ થઇ શકતું નથી, તથા જે થવા લાયક છે તે વિના પ્રયત્ને પણ થાય છે. તો આ પ્રકારની દૈવ " ભાગ્ય " વાદીઓની માન્યતા કેવળ કલ્પના જ છે, કારણ કે તેમની તે પ્રકારની એકાન્તતઃ કલ્પનાને માની લેવામા આવે તો સમસ્ત પ્રાણીઓના પ્રત્ય-ક્ષભૂત ઉદ્યમાદિમાં વ્યર્થતા હોવાની આપત્તિ ઉપસ્થિત થાય છે

" वा " શબ્દથી કાળવાદીઓનું સ્વરૂપ કહે છે—અહીં " वा " શબ્દથી કાળવાદ આદિ પણ મૃષા–અસત્ય રૂપ છે, એમ સમજી લેવાનું છે કાળવાદી ઓની એવી માન્યતા છે કે–

" कालः सृजति भूतानि, कालः संहरते प्रजाः ।
कालः सुप्तेषु जागर्त्ति, कालो हि दुरतिक्रमः " ॥ १ ॥

કાળ જ ભૂતોને–જીવોને બનાવે છે અને તેમનો નાશ કરે છે. કાળ જ સૂતેલાઓમા જાગૃત હોય છે તેથી કાળ દુરતિક્રમ–અલંઘનીય છે એટલે કે

तदसत्-कालस्यैव कर्तृत्वे कालप्राप्तौ स्त्रीश्मश्रुवन्ध्या पुत्रहस्ततलकेशादीनामपि सद्भावः स्यात्, इत्यपि मतवादिनो मिथ्या जल्पन्ति। तथा 'इड्ढिरससायगारवपरा' ऋद्धिरससातगौरवपराः, 'बहवे' बहवः=अनेके करणालसाः=कर्तव्याचरणालसाः अनुयोगिनः 'धम्मवीमंसएण' धर्मविमर्शनेन=धर्मविचारेण 'मोसं' मृषा-असत्यं वस्तु अधर्ममपि धर्ममेव 'परूवेंति' प्ररूपयन्ति=प्रतिपादयन्ति ॥७

अन्येऽपि जना यथा मृषा भाषणपरा भवन्ति तत्प्ररूपयति 'अवरे' इत्यादि-

मूलम्-अवरे अहम्माओ रायदुट्ठं अब्भक्खाणं भणंति अलियं चोरोत्ति अचोरियं करेंतं। डामरिओ त्ति वि य एमेव उदासीणं। दुस्सीलोत्ति य परदारं गच्छइत्ति मइलिंति सीलकलियं। अयंपि गुरुतप्पओ त्ति। अण्णे एमेव भणंति

कालवादियों की यह मान्यता असत्यरूप इसलिये है कि काल को ही कर्त्ता मानने पर स्त्री जब तरुण अवस्था संपन्न हो जाती है तो पुरुष की तरह उसके भी दाढी मूछ का आना, तथा वंध्या के पुत्र होना, हथेली में बाल उगना आदि भी होना चाहिये-परन्तु यह सब कुछ नहीं होता है। इसलिये ये पूर्वोक्त सब ही वाद मिथ्या प्ररूपणा करते हैं ऐसा जानना चाहिये। (एवं) इस प्रकार (केइ) कितनेक (करणालसा) अपने कर्तव्य करने पर योग्य आचरण में आलसी बने हुए, और (इड्ढिरससायगारवपरा) ऋद्धि, रस, सातगौरव में तत्पर रहे हुए, (बहवे) अनेक अनुयोगी व्यक्ति (धम्म वीमंसएणं) धर्म के विचार से (मोसं) मृषा-असत्य-अधर्म को भी धर्मरूप से (परूवेंति) प्ररूपित करते हैं ॥ सू-७ ॥

શાશ્વત છે. કાળવાદીઓની તે માન્યતા અસત્યરૂપ તે કારણે છે કે કાળને જ જો કર્તા માનવામાં આવે તો સ્ત્રી જ્યારે તરુણ અવસ્થાએ પહોંચે ત્યારે તેને પણ પુરુષની જેમ દાઢી મૂછ આવવી જોઈએ, તથા વંધ્યાને પુત્ર થવો જોઈએ, હથેલીમાં બાલ ઉગવા જોઈએ, પણ તેમાંનું કંઈ પણ બનતું નથી. તેથી પૂર્વોક્ત એ બધા વાદ મિથ્યા પ્રરૂપણા કરે છે એમ માનવું જોઈએ, "एवं" એ જ પ્રમાણે "केइ" કેટલાક "करणालसा" પોતાના કર્તવ્ય પાલનમાં આળસુ થઈને અને "इड्ढिरससायगारवपरा" ઋદ્ધિ, રસ અને સાત અભિમાનમાં રત થઈને "बहवे" અનેક અનુયોગી લોકો "धम्मवीमंसएणं" ધર્મના ખ્યાલથી "मोसं" મૃષા-અસત્ય-અધર્મને પણ ધર્મરૂપે "परूवेंति" પ્રરૂપિત કરે છે ॥સૂ-૭॥

उवहणंता–सित्तकलत्ताइं सेवइ । अयंपि लुत्तधम्मो । इमो वि वीसंभघायओ, पावकम्मकारी अगम्मगामी । अयं दुरप्पा बहुएसु य पातगेसु जुत्तो त्ति । एवं जंपंति मच्छरी भद्दगे वा गुणकित्तिनेहपरलोगनिप्पिवासा। एवं एए अलियवयणदक्खा परदोसुप्पायण संसत्ता वेढेंति अक्खइय बीएणं अप्पाणं कम्मबंधणेण मुहरी असमिक्खियप्पलावी ॥सू०॥८॥

टीका–अवरे=अपरे अन्ये केचित् 'अहम्माओ' अधर्मतः=असत्यवचनरूपमधर्ममेव स्वीकृत्य 'रायदुट्ठं' राजदुष्टं=नीतिविरुद्धम्, 'अब्भक्खाणं' अभ्याख्यानम्=असत्यदोषारोपणं 'अलियं' अलीकं 'भणंति'=अकृतमपि कार्यंकल्पयित्वा जनसमक्षे कथयन्ति । कथमित्याह–'चोरोत्ति' इत्यादिना–'अचोरियं करेंतं' औचार्यं कुर्वन्तं=अचोरयन्तं जनं प्रति 'चोरोत्ति' चोर इति कथयन्ति । 'एमेव'

और भी मनुष्य जिस प्रकार असत्य भाषण करते हैं उसीको दिखलाते हैं–'अवरे अहम्माओ' इत्यादि ।

टीकार्थ—(अवरे) कितनेक मनुष्य (अहम्माओ) असत्य वचन–रूप अधर्म को ही स्वीकार करके (रायदुट्ठं) नीति विरुद्ध (अब्भक्खाणं) असत्य दोषारोपणरूप (अलियं) अलीक वचन को (भणंति) कहते हैं, नहीं किये गये भी कार्य को उसमें कल्पित कर जन समक्ष में कह दिया करते हैं कि (अचोरियं करेंतं चोरोत्ति) चोरी नहीं करने वाले को भी 'यह चोर है' ऐसा कह देते हैं, अर्थात् जिसने कभी भी चोरी नहीं की है–ऐसे पुरुष को भी चोर कह देते हैं, तथा (एमेव) इसी

બીજાં મનુષ્યો પણ જે પ્રકારે અસત્ય બોલે છે તે સૂત્રકાર બતાવે છે–"अवरे अहम्माओ" ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ–"अवरे" કેટલાક માણસો "अहम्माओ" અસત્ય વચનરૂપ અધર્મનો જ સ્વીકાર કરીને "रायदुट्ठं" નીતિવિરૂદ્ધ "अब्भक्खाणं" અસત્ય દોષારોપણ રૂપ "अलिय" અલીક વચનો "भणत्ति" કહે છે, ન કરાયેલ કાર્યની પણ કલ્પના કરીને લોકોની સમક્ષ કહ્યા કરે છે જેમકે–"अचोरियं करेंतं चोरोत्ति" ચોરી ન કરનારને પણ "આ ચોર છે" એવું કહે છે એટલે કે જેણે કદિ પણ ચોરી કરી હોય તેવા પુરુષને પણ ચોર તરીકે ઓળખાવે છે, તથા "एमेव"

एवमेव 'उदासीणं' उदासीनं=अविग्रहकारकं तटस्थं प्रति 'डामरिउत्ति वि य' डामरिकः=विग्रहकारी-इत्यपि च भणन्ति। तथा-'दुस्सीलोत्ति' दुश्शील इति= दुष्टाचरणोऽयं जन इति, 'परदारं गच्छति' परदारान् गच्छति=परस्त्रीगमनं करोति, इति च असत्यदूषणवचनेन 'सीयकलियं' शीलकलितं=सदाचारयुक्तं जनं 'मइलिंति' मलिनयन्ति=लोके कलङ्कयन्ति, 'अयंपि' अयमपि अपिना पूर्वोक्तोऽपि 'गुरुतप्पओ' गुरुतल्पगः कलाचार्यस्त्रीगामि इति भणन्ति। 'अण्णे' अन्ये मृषावादिनः 'उवहणंता' उपघ्नन्तः=परस्य वृत्तिं कीर्त्तिं च नाशयन्तः 'एमेव' एवमेव भणन्ति-अयं 'मित्तकत्ताइं' मित्रकलत्राणि=सुहृद्दारान् 'सेवइ' सेवते। 'अयंपि' अयमपि 'लुत्तधम्मा' लुप्तधर्मा=लुप्तो धर्मो यस्य स तथा=धर्मविहीनः अस्ति। तथा 'इमो वि' अयमपि 'विस्संभघायओ' विस्रम्भघातकः=विश्वास-

---

तरह (उदासीणं) उदासीन-तटस्थ होता है उसको (डामरिओत्तिवि य) अर्थात्-झगड़ा नहीं करने वाला 'यह डामरिक-विग्रहकारी-झगड़ा करने वाला है' ऐसा कह दिया करते हैं। (दुस्सीलोत्ति) यह दुःशील-दुष्ट आचरण वाला है' और (परदारं गच्छइ) यह परस्त्री गामी है' इस तरह के असत्यदोषारोपक वचनो से (सीलकलियं) सदाचारी पुरुष को (मइलिंति) कलङ्कित कर देते हैं। और (अयंपि गुरुतप्पओ) यह और वह भी गुरुपत्नी के साथ सहवास करने वाला है। (अन्ने) कितनेक मृषावादीजन (उवाहणंता) परकी आजीविका एवं कीर्त्ति का नाश करते हुए (एमेव) इसी तरह बोलते हैं कि यह (मित्तकलत्ताइं सेवेइ) अपने मित्र की स्त्री को सेवन करने वाला है तथा (अयंपि) यह (लुत्तधम्मा) धर्म विहीन है। तथा (इमो वि)

એ જ રીતે "उदासीणं" ઉદાસીન-જે તટસ્થ હોય તેને "डामरिओत्तिवि य" એટલે કે ઝગડો ન કરનારને "આ ઝગડો કરનાર છે" એવું કહે છે તથા "दुस्सिलोत्ति" "આ દુષ્ટ આચરણવાળો છે" અને "परदारं गच्छइ" "આ પરસ્ત્રીગામી છે" આ પ્રકારનાં અસત્ય દોષારોપણ યુક્ત વચનોથી "सीलकलियं" સદાચારી પુરુષને "मइलिंति" તે કલંકિત કરે છે અને अयं पि गुरुतप्पओ" "તે પણ ગુરૂપત્ની સાથે સહવાસ કરનારો છે" એવું ખોટું દોષારોપણ કરે છે. "अन्ने" કેટલાક મૃષાવાદી લોકો "उवाहणंता' અન્યની આજીવિકા અને કીર્તિનો નાશ કરવાને માટે "एमेव" આ પ્રમાણે બોલે છે- "मित्तकलत्ताइं सेवइ" "તે પોતાની મિત્રપત્નીનું સેવન કરનાર છે" તથા "अयं पि" તે "लुत्तधम्मा" ધર્મરહિત છે. તથા "इमो

घाती ' पावकम्मकारी ' पापकर्मकारी=दुष्कर्माचरणशीलः ' अकम्मकारी ' अकर्मकारी=अनुचितकर्मकारी ' अगम्मगामी ' अगम्मगामी=भगिन्यादिगमनकारी, चास्ति। अयं ' दुरप्पा ' दुरात्मा=दुष्टात्मा ' बहुएसु य ' बहुकैः च = अनेकैः ' पातगेसु ' पातकेषु=पापकर्मसु ' जुत्तो ' युक्तः=संलग्न इति । एवं ' भद्दगे ' भद्रके=निर्दोषे ' मच्छरी ' मत्सरिणः = परगुणद्वेषिणः ' जंपंति ' जल्पन्ति= ब्रुवन्ति । कीदृशास्ते मृषावादिनः ? इत्याह–' गुणकित्तिनेहपरलोगनिप्पिवासा ' गुणकीर्तिस्नेहपरलोकनिष्पिपासाः=गुणाः = विनयार्जवादयः, कीर्तिः= यशः स्नेहः=भूतेषु प्रीतिः, परलोकः=जन्मान्तरं तेषु निष्पिपासाः=निराकाङ्क्षाः एवमुक्तप्रकारेण एते ' अलियवयणदक्खा ' अलीकवचनदक्षाः=मृषाभाषणनिपुणाः, ' परदोसुप्पायणसंसत्ता ' परदोषोत्पादनसंसक्ताः = परदोषाविष्करणतत्पराः

यह (विस्संभघायओ) विश्वासघाती है (पावकम्मकारी) पापकर्मकारी है, (अकम्मकारी) अनुचित कामों को करता रहता है, तथा (अगम्मगामी) अगम्यगामी है–भगिनी आदिका सेवन करने वाला है । (अयं दुरप्पा) यह दुरात्मा (बहुएसु य पातगेसु जुत्तो) अनेक पापकर्मों में लगा रहता है । (भद्दगे) निर्दोष पुरुष में (मच्छरी) दूसरों के गुणों से द्वेष करने वाले, तथा (गुणकित्तिनेहपरलोगनिप्पिवासा) विनय आर्जव आदि गुणों में, कीर्ति में तथा स्नेह–जीवों के ऊपर प्रीति रखने में और परलोक में आकांक्षा विहीन पुरुष (एवं पंजंति) इस प्रकार बोलते हैं । इन्हें अपने परलोकके सुधार की भी कोई चिंता नहीं होती है । (एवं एए) इस प्रकार ये (अलियवयणदक्खा) असत्य बोलने में बड़े चतुर, तथा (परदोसुप्पायणसंसत्ता) दूसरों के दोषों को प्रकट

वि विस्संभघायओ " ते विश्वासघाती छे, " पावकम्मकारी " पापकृत्यो करे छे, " अकम्मकारी " अनुचित कृत्यो करनारो छे, " अगम्मगामी " अगम्यगामी छे–भगिनी आदिनुं सेवन करनार छे, " अयं दुरप्पा " आ दुरात्मा " बहुएसु य पातगेसु जुत्तो " अनेक पापकर्मोमां लीन रहे छे " " भद्दगे " निर्दोषपुरुषोनो ' मच्छरी " तथा अन्यना गुणोनो द्वेष करनार, तथा " गुणकित्ति नेह परलोग निप्पिवासा " विनय आर्जव आदि गुणोथी रहित, कीर्ति तथा स्नेहथी रहित, अने परलोकनी आकांक्षा रहित " एवं जपंति " उपर प्रमाणे बोले छे. तेने पोतानो परलोक सुधारवानी पण चिन्ता होती नथी " एवं एए " आ रीते ते " अलियवयणदक्खा " असत्य बोलवामां घणो निपुण, तथा " परदोसुप्पायणसंसत्ता " अन्यना दोषोने जाहेर करवामां ज लीन एवो ते मृषा·

'अक्खइ य वीएणं' अक्षतिकबीजेन=अक्षय दुःखकारणेन 'कम्मवधणेण' कर्मबन्धनेन 'अप्पाणं' आत्मानं 'वेढेंति' वेष्टयन्ति, नरकनिगोदाद्यनन्तदुःखदायक कर्माणि समुपार्जयन्तीत्यर्थः । के ते ? इत्याह-'मुहरो' मुखारयः=मुखमेव अरिः =शत्रुः-शत्रुत्वजनकवचनभाषित्वाद् येषां ते तथा । 'असमिक्खियप्पलावी' असमीक्षितप्रलापिनः=अविचारितानर्थवक्तार इति ॥ सू० ८ ॥

पुनस्ते किं कुर्वन्ति ? तदाह-निक्खेवे' इत्यादि ।

मूलम्-निक्खेवे अवहरंति परस्स अत्थम्मि गढिय गिद्धा अभिजुंजंति य पर असंतएहिं लुद्धा य करेंति कूड सक्खित्तणं, असच्चा अत्थालियं च कन्नालियं च, भोमालियं च तहा गवालियं च, गरुयं भणंति, अहरगइ गमणं अण्णं पि य जाइकुलरूवसीलपच्चयमाया निगुणं चवला पिसुणं परमट्ठभेदगमसंतकं विद्देसमणत्थकारगं पावकम्ममूलं दुद्दिट्ठं दुस्सुयं अमुणियं निल्लज्जं लोगगरहणिज्जं वहबंध परिकिलेसबहुलं जरामरणदुक्खसोगनेमं असुद्धं परिणाम संकिलिट्ठं भणंति ॥ सू० ९ ॥

करने में ही लगे हुए मृषावादी पुरुष (अक्खइयवीएणं) अक्षतिक बीज अक्षय दुःख के कारणभूत (कम्मबंधणेण) कर्मबंधन से (अप्पाणं) अपने आपको (वेढेंति) परिवेष्टित करते हैं, अर्थात्-नरकनिगोद आदि के अनंत) दुःखों को देनेवाले कर्मों को उपार्जित करते हैं। वैसे कौन होते हैं ?—(मुहरी) जिनका मुख ही शत्रु होता है, (असमिक्खियप्पलावी) जो बिना विचार किये ही अनर्थक प्रलाप करनेवाले होते हैं। वे ही पूर्वोक्त प्रकार का असत्यभाषण करते हैं ॥ सू-८ ॥

વાદી પુરુષ "अक्खइयवीएणं" અક્ષતિક બીજ-અક્ષય દુઃખને માટે કારણ રૂપ "कम्मबंधणेण" કર્મબંધનથી "अप्पाणं" પોતાની જાતને "वेढेंति" પરિવેષ્ટિત કરે છે, એટલે કે નરક નિગોદ આદિનાં અનન્ત દુઃખો દેનાર કર્મોનું ઉપાર્જન કરે છે એવા કોણ હોય છે ?-"मुहरी" જેમનું મુખ જ તેમનો શત્રુ હોય છે, અને "असमिक्खियप्पलावी" જે વિના વિચાર્યે અનર્થક પ્રલાપ કરનાર હોય છે. તેઓ જ પૂર્વોક્ત પ્રકારનું અસત્ય ભાષણ કરે છે ॥ સૂ-૮॥

टीका-'परस्स' परस्य=अन्य सम्बन्धिनि 'अत्थम्मि' अर्थे=धने 'गढियगिद्धा' ग्रथितगृद्धाः=अत्यन्तलोलुपाः 'निक्खेवे' निक्षेपान्=न्यासान् 'धरोहर' तथा 'थापन' इति भाषाप्रसिद्धम्, 'अवहरंति' अपहरन्ति 'न हि त्वया मत्पार्श्वे स्थापित' मित्युक्त्वा सर्वथा अपलपन्ति। 'अभिजुंजंति य' अभियोजयन्ति च=परम् 'असंतएहिं' असद्भिः=अविद्यमानैर्दोषैः। तथा 'लुद्धा य' लुब्धाश्च=परधनलोलुपाः धनलोभेन 'कूडसक्खित्तणं' कूटसाक्षित्वं 'करेंति' कुर्वन्ति। चकाराद् ग्रन्थिमोचकत्वपश्यतो हरत्वादिकमपि विज्ञेयम्। 'असच्चा' असत्याः = असत्यवादिनः 'अत्थालियं' अर्थालीकं=अर्थाय=धनादि प्रयोजनाय अलीकं, तथा 'कन्नालियं' कन्यालीकं-कुमारी विषयकमलीकं, यथा-सुशीलां कन्यां दुःशीलां, दुशीलां च सुशीला मित्यादि कथयन्ति। इदं लोकेऽतिगर्हितत्वादुपात्तं तेन उपलक्षणमेतत्-मनुष्यजातिविषयकसमस्तालोकस्य। 'भोमालीयं' भूम्यलीकं=पृथिवीनिमित्तमसत्यं-'तहा' तथा 'गवालियं' गवालीकं=गोसम्बन्धिकमसत्यं 'गरुयं' गुरुकं

फिर वे क्या करते हैं सो कहते हैं-'निक्खेवे' इत्यादि।

टीकार्थ-(परस्स अत्थम्मि गढियगिद्धा) दूसरों के धन में अत्यंत लोलुप बने हुए ये (निक्खेवे अवहरंति) धरोहर को-"तुमने मेरे पास नहीं रखी है" ऐसा कहकर दबा लेते हैं। तथा (अभिजुंजंति य परं असंतएहिं) दूसरों को अविद्यमान दोषों से दूषित कर देते हैं। (लुद्धा य कूडसक्खित्तणं करेंति) परधन के लोभ से लुब्ध बने हुए ये झूठी गवाही देते हैं तथा (च) शब्द से दूसरों की गांठ कतर लेते हैं तथा देखते देखते धन भी चुरा लेते हैं। (असच्चा) ये असत्यवादी (अत्थालियं) अर्थालीक, (कन्नालीयं) कन्यालीक, (भोमालियं) भूम्य-

---

વળી તેઓ શું કરે છે તે સૂત્રકાર કહે છે-"निक्खेवे" ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ-"परस्स अत्थम्मि गढियगिद्धा" બીજાના ધનને માટે લોલુપ બનેલા તે "निक्खेवे अवहरंति" ધરોહરને-અનામત થાપણને પચાવી પાડવા માટે આ પ્રમાણે કહે છે-"તમે મારે ત્યાં તમારી થાપણ મૂકી જ નથી" તથા 'अभिजुंजंति य परं असंतएहिं" બીજા લોકોમાં-તેમનામાં ન હોય તેવા દોષોનું આરોપણ કરીને તેમને કલંકિત કરે છે

"लुद्धा य कूडसक्खित्तणं, करेंति" પારકાના ધનને લોભે તેઓ ખોટી સાક્ષી આપે છે તથા "च" શબ્દથી બીજાનાં ખીસ્સા કાપે છે અને જોત જોતામા ધન પણ ચોરી લે છે "असच्चा" તે અસત્યવાદી લોકો 'अत्थालियं" અર્થાલીક, "कन्नालियं", કન્યાલીક, 'भोमालियं" ભૂમ્યલીક, "तहा"

=महदसत्यं भणन्ति येन जिह्वाछेदनादिकं भवतीत्यर्थः। 'अहरगइगमनं=अधरगतिगमनं=अधरगतौ गमनं येन तत् तथा=नरकाद्यधोगतिगमनकारणम्। 'अण्णंपि य' अन्यदपि च असत्यं ब्रुवन्ति, तदेवाह—' जाइकुलरूवसीलपच्चयमायानिगुणं जातिकुलरूपशीलप्रत्ययमायानिगुणं=तत्र जातिः=मातृपक्षः, कुलं=पितृपक्षः, रूपम्=

लीक, (तहा) तथा (गवालियं) गवालीक, (गरुयं) बहुत अधिकरूप में (भणंति) बोलते हैं। धनादि प्रयोजन के लिये जो झूठ वचन बोले जाते हैं। वह अर्थालीक है, धनादि प्रयोजन के लिये जो झूठ कहना होता है वह कन्यालीक है—जैसे—सुशीला कहना, और दुःशीला को सुशीला कहना आदि। पृथिवी निमित्त जो झूठ बोला जाता— वह भूम्यलीक है जैसे—अनुर्वरा भूमिको उर्वरा कहना आदि। गाय के विषय में जो असत्य बोला जाता है उसका नाम गवालीक है, जैसे—नहीं दूध देनेवाली गाय को दूध देनेवाली कहना, कम दूध देनेवाली गाय को बहुत दूध देनेवाली कहना आदि। इस असत्य में जिह्वाछेद आदि दंड होता है इसलिये उसको गुरुकवड़ा असत्य कहा है, तथा (अहरगईगमणं) नरक आदि अधोगतियों में गमन कराने वाले ऐसे (अण्णंपि) और भी विविध प्रकार के (जाइकुलरूवसीलपच्चयमायानिगुणं) अपनी जाति, कुल, रूप, स्वभाव ये हैं कारण जिनके ऐसे तथा मायानिगुणं-अप्रशनीय की प्रशंसा—प्रशंसनीयजन की निन्दारूपमाया वाला होने से निगुण—

તથા "ગવાલિય" ગવાલીક "ગુરુયં" બહુ જ વધારે પ્રમાણમાં "ભणંતિ" બોલે છે. ધન આદિને ખાતર જેજૂઠાં વચનો બોલાય છે તે અર્થાલીક કહેવાય છે કન્યાની બાબતમાં જે અસત્ય કહેવામા આવે છે તે કન્યાલીક કહેવાય છે, જેમ કે સુશીલ કન્યાને દુઃશીલ કહેવી અને દુઃશીલને સુશીલ કહેવી. જમીન આદિને નિમિત્તે જે જૂઠાં વચનો બોલાય છે તે ભૂમ્યલીક છે જેમ કે અનુપજાઉ જમીનને ઉપજાઉ બતાવી આદિ ગાયને વિષે જે અસત્ય બોલાય છે તેને ગવાલીક કહે છે, જેમ કે દૂધ ન દેનારી ગાયને દૂધ દેનારી કહેવી, ઓછું દૂધ દેનારી ગાયને વધુ દૂધ દેનારી કહેવી આદિ ગવાલિકનાં દૃષ્ટાંતો છે આ અસત્યમાં જીહ્વાનું છેદન આદિ શિક્ષા થાય છે તેથી તેને ગુરુક—મોટું અસત્ય કહેલ છે. તથા "अहरगईगमणं" નરક આદિ અધોગતિયોમાં ગમન કરાવનાર એવાં "अण्णंपि" બીજાં પણ વિવિધ પ્રકારના "जाइकुलरूवसीलपच्चयमाया· निगुणं" પોતાની જાતિ, કુળ. રૂપ, સ્વભાવ આદિ જેના કારણો છે એવાં, તથા માયાનિગુણ—અપ્રશંસનીયની પ્રશંસા અને પ્રશંસનીય જનની નિંદારૂપ— માયાવાળાં હોવાથી નિગુણ—સ્વપરહિત, એવા વચનોને બોલ્યા કરે છે. માતૃ

आकृतिः, शीलं च=स्वभावः, एतानि प्रत्ययः=कारणं यस्य तत् मायानिगुणं च= निन्दनीयस्य प्रशंसा प्रशंसनीयस्य निन्दा माया तत्सत्त्वादेव निगुणं=गुणरहितं स्वपरहितादिवर्जितं 'चवला' चपलाः=अस्थिरान्तःकरणाः मृषावादिनो भणन्ति। पुनः कथं भूतमलीकमित्याह–'पिसुणं' पिशुनं=परदोषाविष्करणरूपं 'परमट्ठभेदगं' परमार्थभेदकं=परमार्थो=मोक्षः, तत्प्रतिघातकम् 'असंतकं' असत्कम्=परमार्थ-वर्जितं 'विद्देसं' विद्वेष्यम्=अप्रियम् 'अणत्थकारगं' अनर्थकारकं=धर्मादिपुरुषार्थ विघातेन नरकगमनजननमरणाद्यनर्थजनकं 'पावकम्ममूलं=पापकर्ममूलं पापं ज्ञाना-वरणादिकर्म तत्कारणं 'दुद्दिट्ठं' दुर्दृष्टं=दुष्टं दृष्टं यत्र तत् दुर्दृष्टं=कुत्सितदर्शनं 'दुस्सुयं' दुःश्रुतं=दुष्टं श्रुतं यत्र तत्तथा दुश्रुतं=दुष्टश्रवणम् 'अमुणिय' अज्ञानं=अज्ञानरूपं

स्वपरहितवर्जित ऐसे वचनों को बोला करते हैं। मातृ पक्ष का नाम जाति, पितृपक्ष का नाम कुल, रूप का नाम आकृति और शील का नाम स्वभाव है। तथा (चवला) जो अस्थिर अन्तः करणवाले मृषावादी जन होते है वे पिशुनादि विशेषणों वाले असत्य वचन बोलते हैं। वे इस प्रकार जो वचन (पिसुणं) पर के दोषों के प्रकट करने वाले होते हैं। (परमट्ठभेदगं) परमार्थ–मोक्ष के भेदक होते हैं। (असंतगं) असत्कं परमार्थ से रहित होते हैं। (विद्देसं) विद्वेष्य–अप्रिय होते हैं। (अण-त्थकारगं) अनर्थकारक–धर्मादिक पुरुषार्थ के विघातक होने से नरक गमन जनन मरणादिरूप अनर्थ के उत्पादक होते हैं। (पावकम्ममूलं) पापकर्म के मूल–ज्ञानावरणादिरूप कर्म के कारण–होते हैं। (दुद्दिट्ठं) दुर्दष्ट–दुष्ट दर्शनवाले हैं–अर्थात्–इन वचनों द्वारा जो दर्शन प्रतिपादित किया जाता है वह कुत्सित–सदोष होता है। (दुस्सुयं) दुःश्रुत होते हैं–

પક્ષને જાતિ, પિતૃ પક્ષને કુળ, રૂપને આકૃતિ અને શીલને સ્વભાવ કહે છે. તથા "चवला" ચંચળ મનવાળા મૃષાવાદી લોકો પિશુનાદિ વિશેષણોવાળાં અસત્ય વચનો બોલે છે તે આ પ્રમાણે છે જે વચન "पिसुणं" અન્યના દોષોને પ્રગટ કરનારા હોય છે, "परमट्ठभेदगं" પરમાર્થ–મોક્ષને ભેદનાર હોયછે. "असंतगं" અસત્ક–પરમાર્થ રહિત હોય છે, "विद्देसं" વિદ્વેષ્ય–અપ્રિય હોય છે, "अणत्थकारगं" અનર્થકારક–ધર્માદિ પુરુષાર્થના વિઘાતક હોવાથી નરક ગમન જનક મરણાદિરૂપ અનર્થના ઉત્પાદક હોય છે, "पावकम्ममूलं" પાપ-કર્મનું મૂળ–જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મનું–કારણ હોય છે, "दुद्दिट्ठं" દુર્દષ્ટ–દુષ્ટ-દર્શનવાળાં છે, એટલે કે ને વચનો દ્વારા જે દર્શનનું પ્રતિપાદન કરવામા આવે છે તે કુત્સિત–સદોષ હોય છે, "दुस्सुयं" દુઃશ્રુત–જેને સાંભળવાનું પણ કોઈ

'निल्लज्जं' निर्लज्जं=लज्जावर्जितं 'लोगगरहणिज्जं' लोकगर्हणीयं = सर्वजन निन्दनीयं 'वहबंधपरिकिलेसबहुलं' वधबन्धपरिक्लेशबहुलं=तत्र वधः=मारणं बन्धः=रज्ज्वादिना बन्धनं परिक्लेशः=दुःखसन्तापस्ते बहुला अधिकाः यस्मिन्नलीके तत्तथा मृषाभाषणेन हि एते भवन्त्येव मृषा भाषिणां 'जरामरणदुक्खसोगनेमं' जरामरणदुःखशोकानां नेमम्=अवधिभूतम् 'असुद्धपरिणामसंकिलिट्ठं' अशुद्धपरिणामसंक्लिष्टं = अशुद्धेन=अशुभेन परिणामेन संक्लिष्टं=व्याप्तमलीकं भणन्ति चपला इति पूर्वेण सम्बन्धः ॥ सू० ९ ॥

कीदृशास्ते ? इत्याह—'अलिया हि' इत्यादि ।

मूलम्—अलियाहि संधिसंनिविट्ठा असंतगुणुदीरगा य संतगुण नासका य हिंसा भूओवघाइयं अलियं संपउत्ता वयणं

इनका सुनना भी कोई भी सत्यवादी पसंद नहीं करता है। (अमुणियं) ये अमनोज्ञ होते हैं। अथवा अज्ञानरूप होते है-इनसे वास्तविक वस्तु का बोध नहीं होता है। (निल्लज्जं) निर्लज्ज-लज्जावर्जित होते हैं-अर्थात् ऐसे वचन बोलने वालों को किसी भी प्रकार की लज्जा नहीं आती है। (लोगगरहणिज्जं) जिन वचनों की समस्तजन निन्दा किया करते हैं। (वहबंधपरिकिलेसबहुलं) जो इन वचनों को बोलते हैं वे व्यक्ति इन वचनों के कारण बहुत अधिक वध, बंधन और परिक्लेश को पाते हैं। (जरामरणदुक्खसोगनेमं) ये वचन जरा, मरण, दुःख एवं शोक के हेतुभूत होते हैं। (असुद्धपरिणामसंकिलिट्ठं) इनके बोलने वालों के परिणाम अशुभहोते हैं। इस प्रकार के असत्य वचनों को चपल पुरुष बोलते हैं ॥सू-९॥

સત્યવાદી પસંદ કરતાં નથી। "अमणुयं" તે અમનોજ્ઞ હોય છે-અજ્ઞાનરૂપ હોય છે-તેમનાથી વાસ્તવિક વસ્તુનો બોધ થતો નથી, "निल्लज्जं" નિર્લજ્જ લજ્જારહિત હોય છે, એટલે કે એવા વચનો બોલનારને કોઈ પ્રકારની શરમ આવતી નથી, "लोगगरहणिज्जं" જે વચનોની સઘળા લોકો નિંદા કરે છે, "वहबंधपरिकिलेसबहुलं" એવા વચનો બોલનાર માણસ તે વચનોને કારણે ઘણો વધારે વધ, બંધન અને પરિકલેશ પામે છે. "जरामरणदुक्ख सोगनेमं" તે વચનો જરા, મરણ, દુઃખ અને શોકનાં હેતુભૂત હોય છે "असुद्ध परिणामसंकिलिट्ठं" તેવાં વચનો બોલનારના પરિણામ-મનોભાવ-અશુભ હોય છે. આ પ્રકારના અસત્ય વચનો ચંચળ વૃત્તિના માણસો બોલે છે. ॥ સૂ-૯ ॥

सावज्जमकुसलं साहुगरहणिज्जं अधम्मजणणं भणंति अणहिगय-पुण्णपावा पुणो वि अहिकरण किरियपवत्तगा बहुविहं अनत्थं अवमद्दं अप्पणो परस्स करेंति ॥ सू० १० ॥

टीका—'अलियाहि संधि संनिविट्ठा' अलीकाभि सन्धिसन्निविष्टाः=अलीकवादे योऽभिसन्धिः=अभिप्रायस्तत्र सन्निविष्टाः=संस्थिताः 'असंतगुणुदीरगा' असद्गुणोदीरकाः=अविद्यमानगुणकथकाः 'संतगुणनासगा य' सद्गुणनाशकाश्च =विद्यमानगुणापलापकाः 'अलियसंपउत्ता' अलीकसम्प्रयुक्ताः = असत्यभाषणतत्पराः 'हिंसा भूओवघाइयं' हिंसाभूतोपघातिकं = यस्य कथनेन जायमानया हिंसया भूतानां=प्राणिनाम्=उपघातः=विनाशो येन भवति तत्तादृशं 'सावज्जं' सावद्यं=सपापम् 'अकुसलं' अकुशलम्=सर्वप्राणिनामहितकरं 'साहुगरहणिज्जं' साधुगर्हणीयम्=महापुरुषैस्तीर्थंकरगणधरैर्निन्दितं 'अधम्मजणणं' अधर्मजननम्=पापोत्पादकम् एतादृशं 'वयणं' वचनं भणन्ति । पुनः कथं भूतास्ते ? इत्याह—

फिर वे कैसे होते हैं सो कहते हैं—'अलियाहि' इत्यादि।

टीकार्थ—(अलियाहि संधिसंनिविट्ठा) अलीकवाद के अभिप्राय में संस्थित मृषावादी (असंतगुणुदीरगा) अविद्यमानगुणों के कहने वाले और (संतगुणनासगा य) विद्यमान गुणों के लोप करने वाले होते हैं (अलिय संपउत्ता) इसी तरह असत्यभाषण करने में तत्पर बने हुए वे (हिंसाभुओवघाइयं) जिनवचनों के कहने से प्राणियों का हिंसा द्वारा विनाश हो जाता है ऐसे (सावज्जं, सावद्य, (अकुसलं) सर्व-प्राणियों के अहितकारक, (साहुगरहणिज्जं) साधु पुरुषों द्वारा गर्हणीय, एवं (अधम्मजणगं) अधर्मजनक (वयणं) वचनों के कहने से (भणंति)

વળી તે કેવાં હોય છે તે સૂત્રકાર કહે છે—"अलियाहि" ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ–"अलियाहि संधिसंनिविट्ठा" અલીકવાદના અભિપ્રાયમાં રહેલ મૃષાવાદી "असंतगुणुदीरगा" અવિદ્યમાન–અસ્તિત્વ વિનાના ગુણોનું કથન કરનાર અને "संतगुणनासगा य" વિદ્યમાન ગુણોને છુપાવનાર હોય છે, "अलियसंपउत्ता" આ રીતે અસત્ય બોલવાને તત્પર થયેલ તેઓ "हिंसाभूओवघाइयं" પ્રાણીઓની હિંસા થાય તેવાં "सावज्ज" સાવદ્ય, "अकुसल" સમસ્ત પ્રાણીઓનું અહિત કરનારાં "साहुगरहणिज्जं" સાધુ પુરુષો દ્વારા નિંદ્ય અને "अधम्मजणगं" અધર્મજનક "वयणं" વચનો "भणंति" બોલે છે. "अणहिगयपुण्णपावा"

'अणहिगयपुण्णपावाः अनधिगतपुण्यपापाः = पुण्यपापजनितफलज्ञानविकलाः, 'पुणो वि' पुनरपि 'अहिकरणकिरियापवत्तगा' अधिकरणक्रियाप्रवर्त्तकाः-अधिकरणं पापारम्भः तस्य क्रिया=व्यापारः तस्य प्रवर्त्तकाः, 'अप्पणो परस्स य' आत्मनः परस्य च 'बहुविहं' बहुविधम् 'अणत्थं' अनर्थं 'अवमद्दं' अवमर्दं = विनाशं 'करेति' कुर्वन्ति ॥ सू० १० ॥

पुनः किं कुर्वन्ती ? त्याह—'एवमेवे' त्यादि ।

मूलम्—एवमेव जंपमाणा महिसे सूयकरे य साहेंति घायगाणं, ससपसयरोहिसे य साहेंति वागुराणं, तित्तिरवट्टकलावे य कविंजल-कवोयगे, य साहेंति सउणीणं, झसमगरकच्छभे य साहेंति मच्छियाणं, संखंके खुल्लए य साहेंति मगराणं, अयगर-गोणस-मंडलि दव्वीकर मउली य साहेंति वालियाणं, गोहा सेहा य सल्लग सरडए य साहेंति लुद्धगाणं, गयकुल वानरकुले य साहेंति पासियाणं, सुकबरहिणमयणसालकोइल हंसकुले सारसे य साहेंति पोसगाणं, वधवंधजायणं च साहेंति गोम्मियाणं, धणधन्नगवेलए य साहेंति तक्कराणं, गामनगर पट्टणे य साहेंति चारगाणं पारघायग पंथघायगे साहेंति गंथि भेयाणं, कयं च चोरियं णगरगुत्तियाणं साहेंति लंछणं निल्लंछण-

---

बोलते हैं। (अणहिगयपुण्णपावा) तथा जो पुण्य और पाप के फल ज्ञान से रहित होते हैं। तथा (पुणो वि अहिगरणकिरियापवत्तगा) वार २ पापारंभ की क्रियाओं के प्रवर्त्तक होते हैं वे (अप्पणो परस्स य) अपना और पर का (बहुविहं) अनेकविध (अणत्थं) अनर्थ और (अवमद्दं) विनाश (विराधना) (करेंति) करते हैं ॥सू-१०॥

તથા જે પુન્ય અને પાપના ફળજ્ઞાનથી રહિત હોય છે, તથા " पुणो वि अहिगरण किरियापवत्तगा " વારંવાર પાપારંભની ક્રિયાઓનાં પ્રવર્તક હોય છે, તે " अप्पणो परस्स य " પોતાનું અને પારકાનું " बहुविहं " અનેક પ્રકારે "अणत्थं" અહિત અને "अवमद्द" વિનાશ "विराधना" "करेंति" કરે છે ॥સૂ-૧૦॥

धमणदुहणपोसणवणणदुवणवाहणादियाइं साहेंति बहूणि गोमियाणं, धाउ-मणि-सिल-प्पवाल-रयणागरे य साहेंति आगरीणं, पुप्फविहिं च फलविहिं च साहेंति मालियाणं अत्थमहुकोसए य साहेंति वणचराणं ॥ सू० ११ ॥

टीका--' एवमेव जंपमाणा ' एवमेव जल्पन्तः=पूर्वोक्तरीत्या सावद्यसबुद्धि-पूर्वकं वक्ष्यमाणं भाषमाणा', ' महिसे सूकरे य साहेंति घायगाणं ' महिषान् सूकरांश्च साधयन्ति घातकानां=' तस्मिन् वने बहवो महिषास्सूकराश्च सन्ति गच्छ तत्रे ' त्यादि तेषां घातकान् प्रति कथयन्ति तथा ' ससपसयरोहिसे य साहेंति वागुरीणं ' शशपसयरोहिषांश्च साधयन्ति वागुरिणां=तत्र शशाः=प्रसिद्धाः पसय= देशी शब्दोऽयं मृगवाचकः, रोहिषाः=मृगविशेषा एव, तान् जालेन मृगघातकान् प्रति ' तत्र मृगाः-सन्ती 'ति साधयन्ति=कथयन्ति, तित्तिरवट्टगलावगे य कविंजल-

---

फिर क्या करते हैं सो कहते हैं-' एवमेव ' इत्यादि ।

टीकार्थ—(एवमेव) पूर्वोक्त रीति से अबुद्धिपूर्वक (जंपमाणा) वक्ष्य-माण आगे कहे जाने वाले सावद्य वचनों को कहते हुए वे महिषादि प्राणियों को शिकारी के लिये बतला देते हैं वे इस प्रकार-(महिसे सूकरे य घायगाणं साहेंति) महिषों और सूकरों को मरवाने के अभिप्राय से घातकों के प्रति " उस वन में जाओ वहां अनेक महिष और सूकर हैं " इस प्रकार कहते हैं । तथा (ससपसयरोहिसे य साहेंति वागुरीणं) शश-खरगोश, पसय-मृग एवं रोहिष-मृग विशेष, इन्हें वागुरिकों-जाल से पकड़ने वाले मृग घातकों से अर्थात् अहेरियों से-जाओ उस वन में बहुत से मृग आदि जानवर हैं उन्हें मारो " इस प्रकार कहते

વળી તે મૃષાવાદી શું કરે છે તે કહે છે—" एवमेव " ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ-"एवमेव" પૂર્વોક્ત પ્રકારે અબુદ્ધિપૂર્વક "जंपमाणा" આગળ કહેવામાં આવનાર સાવદ્ય (પાપયુક્ત) વચનો કહીને તેઓ મહિષાદિ પ્રાણીઓ શિકારીને બતાવી દે છે. તે આ પ્રમાણે છે.

" महिसे सूकरे य घायगाणं साहेंति " પાડા અને સૂવરની હત્યા કરવાને માટે શિકારીઓને તે કહે છે કે " આ વનમા જાઓ. ત્યાં અનેક પાડા અને સૂવર છે " તથા " ससपसयरोहिसे य साहेंति वागुरीणं ' તથા સસલાં, મૃગ અને રોહિષ-મૃગ વિશેષ-ને જાળથી પકડનાર વાઘરી આદિ મૃગઘાતકોને તે કહે છે કે " જાઓ, આ વનમાં ઘણાં મૃગાદિ જાનવરો છે, તેમને મારો " ' तित्ति-

कवोयए य साहेंति सउणीणं ' तित्तिरवर्तकलावकांश्च कपिञ्जलकपोतकांश्च साधयन्ति शाकुनिकानां, तित्तिराः-प्रसिद्धाः, वर्तका=' वटेर ' इति भाषा प्रसिद्धाः लावकाः=लावा इति भाषा प्रसिद्धाः कपिञ्जलाः=तन्नामकपक्षिविशेषाः ' कुरङ्ग ' इति प्रसिद्धाः, कापोतकाः=पारापतकाः ' कबूतर ' इति भाषा प्रसिद्धाः एतान् शाकुनिकानां=पक्षिघातकान् प्रति दर्शयन्ति ' झसमगरकच्छभे य साहेंति मच्छियाणं ' झषमकरकच्छपांश्च साधयन्ति मत्सिकानां=झषाः मत्स्याः मकरकच्छपाश्च =प्रसिद्धास्तान् हन्तुं मत्सिकानां=मत्स्याः पण्यं येषां ते मात्सिका धीवरास्तान् प्रति जलाशयादिकं दर्शयन्ति ' संखंकेखुल्लगे य साहेंति मगराणं ' शङ्खाङ्कान् क्षुल्लकांश्च साधयन्ति मकराणां शङ्खाः=प्रसिद्धा अङ्काः=तज्जातीयाः क्षुल्लकाः ' कौडी ' इति भाषा प्रसिद्धा एतान् मकरतुल्यजलविहारि धीवरान् कथयन्ति ' अयगर=गोणसमंडलिदव्वीकरमंडलीय साहेति वालियाणं ' अजगर गोनसमण्डलि दर्वीकर मुकुलिनश्च साधयन्ति व्यलपानां=तत्र अजगराः=प्रतीताः सर्पविशेषाः, गोनसाः फणरहिताः द्विमुखसर्पाः, मण्डलिनः=सर्पविशेषाः, दर्वीकराः=फणकारकाः सर्पाः, मुकुलिनः=ईषत् फणकारकास्तान् व्यालपानां=व्यालग्राहकान् प्रति सर्पस्थलानि

हैं (तित्तिर वट्टग लावगे य कविंजलकवोयए य साहेंति सउणीणं) तथा तीतरों को, वटेरों को लावापक्षियों को, कपिंजलों को और कबूतरों को शाकुनिकों-इनके मारने वालों के लिये बतला देते हैं (झसमगरकच्छभे य साहेंति मच्छियाणं) तथा धीवरों-मच्छीमारों के लिये मच्छियों, मगरों एवं कच्छपों के जलाशयों को दिखला देते हैं। (संखंके खुल्लगे य साहेंति मगराणं) तथा (मगराणं) जल में फिरने वाले धीवरों के लिये ये शंखों के, अंकों के-विशेष प्रकार के शंखों के, क्षुल्लकों के-कोडियों के स्थानों को बतला देते हैं। (अयगर-गोणस-मंडलि-दव्वीकर-मंडली य साहेंति वालियाणं) तथा जो व्यालिक सपेरे-सांप पकडने वाले होते हैं उन्हें अजगर के, गोनस दुमुही के, मंडली के, दर्विकर-फणा फैलाने वाले सांप के, मुकुली-थोड़े रूप में फणा तानने वाले

वट्टगलावगे य कविंजलकवोयए य साहेंति सउणीण " तथा तेतर, બટેરપક્ષીઓ લાવા પક્ષીઓ, કપિંજલો અને કબૂતર આદિ પક્ષીઓ શાકુનિકો (પારધીઓ) ને બતાવી દે છે. " झसमगरकच्छभे य साहेंति मच्छियाणं " તથા માછીમારોને માછલીઓ, મગરો અને કાચબા જે જળાશયોમા હોય તે જળાશયો બતાવી દે છે. " संखंके खुल्लगे य साहेंति मगराणं' તથા " मगराण " જળમા ફરનારા ધીવરોને શંખોનાં, અંકોના વિશેષ પ્રકારના શંખકો, અને ક્ષુલ્લકોનાં-કોડીઓના સ્થાનો બતાવી દે છે "अयगर-गोणस-मउलि-दव्वीकर मडलीय साहेंति वालियाणं" તથા વ્યાલિકને સાપ પકડનારને અજગરના, બે મુખવાળા ગોનસનાં, મંડલીનાં, દર્વીકરનાં-

कथयन्ति, 'गोहासेहायसल्लगसरडगे य साहेंति लुद्धकाणं' गोधाः सेहांश्च शल्यक शरटकांश्च साधयन्ति लुब्धकानां गोधाः=भुजपरिसर्पविशेषाः 'गोहाः' इति भाषा प्रसिद्धाः, सेहाश्च=भुजपरिसर्पविशेषा एव 'सहसहेली' इति भाषा प्रसिद्धास्तान्, शल्यक शरकटांश्च—शल्यकाः 'सीसोलिया' इति प्रसिद्धाः, शरटकाश्च=कृकलासाश्च 'गिरगिट' करगेटिया इति भाषा प्रसिद्धास्तान् , लुब्धकानां=पापर्धिकान् 'शिकरी' इति प्रसिद्धान् प्रति कथयन्ति। 'गयकुलवानरकुले य साहेंति पासियाणं' गजकुलवानरकुलानि च साधयन्ति पाशिकानां=गजकुलानि वानरकुलानि च पाशिकानां पाशेन=गजवन्ध विशेषेण चरन्ति ये ते पाशिकाः गजादिवन्धनकारकास्तान् कथयन्ति। 'सुकवरहिणमयणसालकोइलहंसकुले सारसे य साहेंति पोसगाणं' शुकवर्हिमदनशालकोकिलहंसकुलानि सारसांश्च साधयन्ति पोषकाणां=तत्र शुकाः प्रसिद्धाः, वर्हिणो मयूराः मदनशालाः=सारिकाः, कोकिलाः, हंसाश्च प्रतीताः तेषां यानि कुलानि=वृन्दानि तानि तथा सारसांश्च, पोषकाणां=पक्षिपालकान् प्रति कथयन्ति। 'वधबंधजायणं च साहेंति गोम्मियाणं' वधवन्धयातनं च

सर्प के निवासस्थानों को बतला देते हैं। (गोहा सेहा य सल्लग सरडगे य साहंति लुद्धगाणं) गोधा—गोह—सेह—सहेली, शल्यक—सीसोलिया, शरटक—कृकलास गिरगिट—गिरदीला; इन जीवों को जो शिकारी होतेहैं। उन्हें बतला देते (गयकुल वानर कुले य साहेंति पासियाणं) तथा पाशिक-जो गज आदिकों को पकड़ने वाले होते हैं उन्हें हाथियों को बंदरों को दिखला देते हैं, अर्थात् इनके रहने के स्थानों को कह देते हैं। (सुक वरहिण मयणसालकोइलहंसकुले सारसे य साहेंति पोसगाणं) तथा—जो पक्षिपोषक होते हैं उनसे तोता, मयूर, मैना, कोकिल, हँस इनके विषय में "इनको तुम पालो" ऐसा कहते हैं और "सारसपक्षियों को भी पालो" ऐसी सलाह देते हैं। (वधबंधजायणं च साहेंति गोम्मियाणं)

ફણા ફેલાવનાર સાપનાં, મુકુલીનાં-થોડાં પ્રમાણમા ફણા ફેલાવનારા સાપનાં નિવાસ સ્થાનો બતાવી દે છે "गोहा सेहा य सल्लग सरडगे य साहेंति लुद्धगाणं" ગોધા-ઘો, સેહ-સહેલી, શલ્યક-સીસોલીયા,ત શરટક-કૃકલાસ ગિરગિટ-કાચંડા વગેરે જીવો શિકારીઓને બતાવી દે છે. "गयकुलवानरकुलेय साहेंति पासियाणं" તથા પાશિકોને-ગજ આદિને પકડનારાને હાથીઓ તથા વાનરોનાં નિવાસસ્થાન બતાવી દે છે "सुकवरहिणमयणसालकोइलहंसकुले सारसे य साहेंति पोसगाणं" તથા પક્ષીઓને પાળનારને તે પોપટ, મોર, મેના કોયલ, હંસ વગેરે પાળવાનુ કહે છે. અને સારસ પક્ષીઓને પણ પાળવાની સલાહ આપે છે "वधबंधजायणं च साहेंति गोम्मियाणं" અપરાધોને જાહેર

साधयन्ति गौल्मिकानां–वधबन्धयातनं च–वधः=मारणं बन्धः=बन्धनं रज्ज्वादिना यातनं=दमनं कशादिभिरित्येतानि गौल्मिकानां=कोटपालान् कथयन्ति, अपराधादिकं कथयित्वा कोटपालादिभिः वधादिकं कारयन्तीत्यर्थः, धणधन्नगवेलए य साहेंति तक्कराणं ' धनधान्यगवेलकांश्च साधयन्ति तस्कराणां=धनधान्यगवेलकांश्च= धनं च धान्यं च गावश्च एलकाः=मेषाश्च तान् चोरयितुं तस्करान् प्रति कथयन्ति, 'गामनगरपट्टणे य साहेंति चारगाणं ' ग्रामनगरपत्तनानि साधयन्ति चारकाणां =ग्रामादीनि गुप्तपुरुषान् प्रति भेदाद्यर्थं कथयन्ति, 'पारघाइयपंथघाइयाओ साहेंति गंथिभेयाणं ' पारघातिक पथघातकान् साधयन्ति ग्रन्थिभेदकानां, पारघातिकाः पारे=ग्रामनगरादि सीमान्ते घातकाः – पारघातिकाः, पथि=मार्गे घातिकाः= मार्गघातकास्तान् लुण्टितुं ग्रन्थिभेदकान्=चोरविशेषान् प्रति कथयन्ति । 'कयं चोरियं णगरगुत्तियाणं साहेंति ' कृतां च चौरिकां चौर्यं नगरगुप्तिकानां=कोटपालान् साधयन्ति । तथा 'लंछण निल्लंछण धमण दुहण पोसणवणणदुवणवाहणादि-

---

अपराधों को प्रकाशित करके जीवों का कोतवाल से वधबंधन, यातना करवाते हैं। (धनधन्नगवेलए य साहेंति तक्कराणं) जो चोर होते हैं उनसे मिलकर धन, धान्य, गाय और एलक–मेषों की चोरी करने को कहते हैं (गामनगरपट्टणे य साहेंति चारगाणं) जो गुप्तचर होते हैं– उन्हें ग्राम आदि का भेद लाने के लिये प्रेरित करते हैं, अथवा उन्हें ग्राम आदि का भेद कहते हैं। (पारघाइयपंथघाइयाओ साहेंति गंथिभेयाणं) जो ग्रन्थिभेदक, चोर विशेष–अर्थात्–चोरी का माल खाने वाले होते हैं उनसे पारघातिकों–ग्राम की सीमापर घात करने वालों को मार्गघातकों मार्गमें लूटने वालोंको लूटनेके लिये कहते हैं (कयं य चोरियं णगरगुत्तियाणं साहेंति) कोटपालों के लिये नगर आदि में हुई चोरी का पता कहते हैं (लंछण–निल्लंछण–धमण–दुहण–पोसण–वणण–

કરીને કોટવાલ પાસે જીવોનો વધ કરાવે છે, બંધનમા નખાવે છે અને પીડા પહોંચાડે છે. "धनधन्नगवेलए य साहेंति तक्कराणं" ચોરોને મળી તેમને ધન, ધાન્ય, ગાય અને ઘેટાંઓની ચોરી કરવાનું કહે છે "गामनगरपट्टणे य साहेंति चारगाणं" ગુપ્તચરોને ગ્રામ આદિનો ભેદ શોધી લાવવા પ્રેરે છે, અથવા તેમને ગ્રામ આદિનો ભેદ બતાવે છે "पारघाइयपंथघाइयाओ- साहेंति गंथिभेयाणं" જે ગ્રન્થિભેદક હોય––એટલે કે ચોરીનો માલ ખાનાર હોય છે તેમને, તથા પરઘાતિકો–ગામની સીમા પર ઘાત કરનારાને તથા માર્ગમાં લૂટી લેનારને "कयं य चोरियं णगरगुत्तियाणं साहेंति" કોટવાળોને નગર આદિમા થયેલ ચોરી કરનારને બતાવવામા મદદ કરે છે

याइं साहेंति वहूणि गोमियाणं' लाञ्छननिर्लाञ्छनध्मानदोहनपोषणवननदुवनवाहनादिकानि साधयन्ति बहूनि गोमिनां, लाञ्छनं=गवादीनां देहे तप्तलोहादिभिश्चिन्हविशेषकरणं, निर्लाञ्छनं=वर्धितकरणं ध्मान=गवादीनां शरीरे वायुपूरणं दोहनं =प्रसिद्धंपोषणं=यवचणकादिदानेन पुष्टिकरणं वननं=अन्यमातरि वत्सादि संयोजनं दावनम्=उपतापनं=रज्ज्वादिनापादबन्धनम् । वाहनं=शकटादिषु योजनमित्यादिकानि 'वहूणि' बहूनि गोमतां=गोपालादीन् प्रति कथयन्ति, ' धाउमणिसिलप्पवाल रयणागरे य साहेंति आगरीणं' धातुमणिशिलाप्रवालरत्नाकरान् साधयन्ति आकरिणां=धातवः=लौहादयो मणयः=चन्द्रकान्तादयः, शिलाः=पाषाणाः, प्रवाला =प्रसिद्धाः, रत्नानि=मरकतादीनि, तेषामाकराः=उत्पत्तिस्थानानि, आकरिणां=

दुवण-वाहणा-दियाइं साहेंति वहूणि गोमियाणं) जो गोपालकजन-ग्वाले होते हैं-उनसे ये ('लंछण) गाय आदि जानवरों के शरीर में डांभ देने के लिये, (निलंछण) उन्हें निर्लाछण-वधिया करने के लिये, (धम्मण) उनके शरीर में वायु भरने के लिये, (दुहण) दोहन के लिये, (पोसण) पोषण करने के लिये, जव चना आदि देकर पुष्ट बनाने के लिये, (वणण) वनन-मृतवत्सा गाय को दोहन करनेके अभिप्राय से उसके साथ दूसरी गायका बच्चा चुखाने के लिये, (दुवण) दावन-दुहते समय दोरी से पैर आदि को वांधने के लिये और (वाहण) गाड़ी आदि में जोतने के लिये वार २ कहा करते हैं (धाउमणिसिलप्पवालरयणागरे य साहेंति आगरीणं) जो खनिपति होते हैं उनके लिये लोहादिक धातुओं, चन्द्रकान्त आदि मणियों पत्थरों, प्रवालों एवं रत्नादिकों

"लंछण-निल्लछण-धम्मण-दुहण-पोसण-वणण-दुवण-वाहणादियाइ साहेंति वहूणि गोमियाणं" ગોવાળોને તેઓ ગાય આદિનાં શરીર પર ડામ દેવાને, "निल्छण" તેમને નિર્લાછન-વંધ્યા કરવાને માટે "धमण" તેમના શરીરમાં હવા ભરવાને માટે, "दुहण' દોહવાને માટે "पोसण" પોષણ કરવાને માટે જવ, ચણા આદિ આપીને પુષ્ટ બનાવવાને માટે "वणण" વનન-જે ગાયનું વાછરડું મરી ગયું હોય તે ગાયને દોહવાને નિમિત્તે તેને બીજી ગાયનું બચ્ચું ધવરાવવા માટે, "दुवण" દાવણુ-દોવાને વખતે દોરડા વડે પગ આદિ બાંધવાને માટે અને 'वाहण" ગાડી આદિ વાહને જોડવાને માટે વારંવાર કહ્યા કરે છે. "धाउ मणिसिलप्पवालरयणागरे य साहेंति आगरीणं" ખાણોના માલિકોને લોખંડ આદિ ધાતુઓ, ચન્દ્રકાન્ત આદિ મણીઓ, પથ્થરો, પ્રવાલો અને રત્ન

खनिपतीन् कथयन्ति । तथा 'पुप्फविहिं फलविहिं च साहेंति मालियाणं' पुष्पविधिं फलविधिं च=पुष्पजातिं फलजातिं च साधयन्ति मालिकानां=वनपालकानाम्, 'अग्घमहुकोसए य साहेंति वणचराणं' अर्घमधुकोशकांश्च साधयन्ति वनचराणां=अर्घश्च=मूल्यप्रमाणं मधुकोशकाश्च=मधुत्पत्तिस्थानानीत्यर्थमधुकोशकास्तान् वनचराणां=भिल्लान् प्रति कथयन्ति ॥ सू० ११ ॥

पुनरप्याह—'जताइं' इत्यादि ।

मूलम्—जंताइं विसाइं, मूलकम्म-आहेवण-आविंधण-आभिओग-संतोसहिप्पओगे चोरिय परदारगमणबहुपावकम्मकरणं अवक्खंदेगामघायणं, वणदहणतडागभेयणए बुद्धिविसय वसीकरणमाइयाइं भयमरण किलेसुव्वेगजणयाइं भावबहुसंकिलिट्ठ-

---

के उत्पत्तिस्थानों को कहते हैं। तथा (पुप्फविहिं फलविहिं च साहेंति मालियाणं) जो माली होते हैं उन्हें ये पुष्पजाति, फलजाति समजातेहैं-अर्थात्–'बागमें अमुक जातिका फुल लगाओ, अमुक जाति के फल उत्पन्न करो' इस प्रकार से कहा करते हैं। (अग्घमहुकोसए य साहेंति वणचराणं) तथा जो वनचरभील हैं उनसे ये इस प्रकार कहते हैं कि तुम शहद या शहद का छाना ही ले आया करो अमुक मूल्य तुम्हें मिल जावेगा–बैठे २ क्या करते रहते हो। मृषावाद पाप करने वाले जीव जीवों को बाधा आदि पहुँचे इसका थोड़ा सा भी ध्यान नहीं रखते हैं, तथा जो जीवों को कष्ट पहुँचाने वाले मनुष्य हैं उन्हे हर एक प्रकार से जीवों को कष्ट पहुँचाने में उकसाया करते हैं ॥ सू ११॥

આદિનાં ઉત્પત્તિ સ્થાનો બતાવે છે તથા "पुप्फविहिं फलविहिं च साहेंति मालियाणं" માળીઓને પુષ્પજાતિ તથા ફળજાતિ બતાવે છે, એટલે કે "બાગમાં અમુક જાતિમાં ફૂલ ઉગાડો, અમુક જાતિનાં ફળ ઉત્પન્ન કરો" એ પ્રકારની સલાહ આપે છે. "अग्घमहुकोसए य साहेंति वणचराणं" તથા વનમાં ફરનારા-ભીલોને તે આ પ્રમાણે કહે છે "તમે મધ અથવા મધપુડો લાવ્યા કરો. તમને અમુક કિંમત મળશે–અમસ્તા બેસી રહે શું વળશે ?" મૃષાવાદ પાપ કરનાર વ્યક્તિ જીવોને કષ્ટ આદિ પહોંચશે તેનું સહેજ પણ ધ્યાન રાખતી નથી, તથા જીવોને કષ્ટ પહોંચાડનાર જે માણસો હોય છે તેમને દરેક પ્રકારે જીવોને કષ્ટ પહોંચાડવા ને ઉશ્કેર્યા કરે છે ॥ સૂ–૧૧ ॥

मलिणाइं भूयघाओवघाइयाइं सच्चाणि वि ताइं हिंसगाइं वयणाइं उयाहरंति पुट्ठा वा अपुट्ठा वा ॥ सू० १२ ॥

टीका—'जंताइं' यन्त्राणि तिलनिष्पीडनादि यन्त्राणि उदाहरन्तीति वक्ष्यमाणेन सम्बन्धः। 'विसाइं' विषाणि=क्षणमात्रप्राणहारकतालपुटसर्पादीनि स्थावरजङ्गमभेदानि। मूलकम्मआहेवणआविंधणआभिओगमंतोसहिप्पओगे' मूलकर्माक्षेपणावर्धनाभियोग्यमन्त्रौषधिप्रयोगान्=मूलकर्म=गर्भघातनादिकम्, अथवा मूलनक्षत्रादि जातस्य तद्दोषशान्त्यर्थं स्नानकर्मादिकम्, आक्षेपणं=नगरादि क्षोभोत्पादनम्, आवर्धनं=धनादीनां मन्त्रप्रयोगेण हरणं आभियोग्यं च=वशीकरणादि तच्च द्रव्यतो द्रव्यसंयोगजनित भावतो विद्यामन्त्रादिसंजातं बलात्कारजनितं वा, तथा मन्त्रौषधिप्रयोगान् मन्त्रप्रयोगान् औषधिप्रयोगांश्च, तथा 'चोरियपरदारगमणबहुपावकम्मकरणं' चौर्यपरदारगमनबहुपापकर्मकरणं = चौर्यपरस्त्रीगमनादि

फिर भी कहते हैं—'जंताइं विसाइं' इत्यादि।

टीकार्थ—(जंताइं) यंत्रों को–तिल आदि के निष्पीडक कोल्हू आदि पदार्थों को (विसाइं) क्षणमात्र में प्राणों को नष्ट करने वाले तालपुट, सर्प आदि स्थावर जंगम विषोंको (मूलकम्म–आहेवण–आविंधण–आभिओग–मंतोसहि-प्पओगे) गर्भघातन आदि रूप मूलकर्म को, अथवा मूल नक्षत्र में उत्पन्न हुए बालक के दोषशांति के लिये स्नान कर्म आदि को, नगरादिक में क्षोभोत्पादनरूप आक्षेपण को, मंत्र के प्रयोग से धनादिकों के हरणरूप आवर्धन को, वशीकरणादिरूप आभियोग्य कर्म को, तथा मंत्र प्रयोगों को, औषधि के प्रयोगों को तथा (चोरियपरदारगमणबहुपावकम्मकरणं) चोरी, परदारगमन आदि रूप पापकर्मों के

હજી પણ સૂત્રકાર કહે છે—"जंताइं विसाइं" ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—"जंताइं" તેલ આદિ પીલવાનાં ઘાણી આદિ પદાર્થોને "विसाइं" એક ક્ષણમાંજ પ્રાણ હરી લેનાર તાલપુટ, સર્પ આદિ સ્થાવરજંગમ વિષોને, "मूलकम्म–आहेवण आविंधण–आभिओग–मंतोसहि–प्पओगे" ગર્ભઘાતન આદિ રૂપ મૂલકર્મને, અથવા મૂળનક્ષત્રમા જન્મેલા બાળકની દોષશાન્તિ માટે સ્નાનકર્મ આદિને, નગરાદિમાં ક્ષોભ ઉત્પન્ન કરવારૂપ આક્ષેપણને, મંત્રપ્રયોગ વડે ધનાદિનાં હરણરૂપ આવર્ધનને, વશીકરણાદિરૂપ આભિયોગ્યકર્મને, તથા મંત્ર પ્રયોગોને, ઔષધિ પ્રયોગોને તથા "चोरियपरदारगमणबहुपावकम्मकरणं" ચોરી, પરદારગમન, આદિ પાપકર્મો કરવાને, તથા 'अवक्खंदे" સૈન્ય શિબિર

पापकर्मसमाचरणम् , तथा 'अवक्खंदे' अवस्कन्दान्=सैन्यशिविरादिभिराक्रमणेन-परबलमर्दनानि धाटीकर्मकरणानि वा 'गामघायणं' ग्रामघातनं=ग्रामादिनाशनं 'वणदहणतडागभेयणए' वनदहन-तडाग-भेदनानि=वनज्वालनानि जलाशय ध्वंसनानि च 'वुद्धिविसयवसीकरणाइयाइं' बुद्धिविषयवशीकरणादिकानि परस्य बुद्धेर्विषयस्य च शब्दादेः वशीकरणानि=मन्त्रादिप्रयोगेणु स्वायत्तीकरणानि 'भय-मरणकिलेसुव्वेगजणयाइं' भयमरणक्लेशोद्वेगजनकानि भयं च मरणं च क्लेशश्च शारीरिकउद्वेगश्च=हार्दिकं दुःखमित्येतेषां जनकानि तथा 'भावबहुसंकिलिट्ठ-भावमलिणाणि' भावबहुसंक्लिष्टमलिनानि=भावेन=अध्यवसायेन बहुसंक्लिष्टेन=अतिशयपरसन्तापजनकेन मलिनानि=कलुषितानि तथा 'भूयघाओवघाइयाइं' भूतघातोपघातकानि=भूतानां प्राणिनां घातः=साक्षात् हननं उपघातश्च=परम्परया-हननं तौ येषु तानि भूतघातोपघातकानि पूर्वोक्तानि 'सच्चाणिवि' सत्या-

---

करने को, तथा (अवक्खंदे) सैन्य शिविर आदिके द्वारा आक्रमण करके पर के बलको मर्दन करने रूप कर्म को अथवा धाड़पाड़ने रूप डकैतीकर्म को, (गामघायणं) ग्रामघातकरूपकुकृत्य को, (वणदहणत-डागभेयणए) जंगलों में आग लगाने रूप, तथा जलाशयों को ध्वंस करने रूप दुष्कृत्यों को, (बुद्धिविसयवसीकरणमाइयाइं) मंत्रादिकों के प्रयोग से पर की बुद्धि को, एवं शब्दादिक पांचों इन्द्रियों के विषयोंकों स्ववश करने रूप अकृत्यों को कोई पूछे अथवा न पूछे तो भी बताया करते हैं, तथा (भयमरणकिलेसुव्वेगजणयाइं) भय, मरण, क्लेश, उद्वेग, इनके उत्पादक असत्यवचनों को, तथा (भावबहुसंकिलिट्ठमलि-णाणि) अत्यंत संक्लिष्ट अतिशयरूपमें पर को संतापजनक, ऐसे अध्य-वसाय से मलिन हुए तथा (भूयघाओवघाइयाइं) प्राणियों के साक्षात्

આદિ દ્વારા આક્રમણ કરીને અન્યના બળનું મર્દન કરવારૂપ કર્મ તથા ધાડ પાડવાના કાર્યને, "गामगायणं" ગામ ભાંગવારૂપ દુષ્કૃત્યને, "वणदहणतडाग भेयणए" જંગલોમાં આગ લગાડવાના તથા જળાશયોને તોડી પાડવાના દુષ્કૃત્યોને, "वुद्धिविसयवसीकरणमाइयाइं" મંત્રાદિના પ્રયોગથી પારકાની બુદ્ધિને, અને, શબ્દાદિક પાંચઇન્દ્રિયોના વિષયોને પોતાને વશ કરી લેવા રૂપ દુષ્કૃત્યોને કોઇ પૂછે અથવા ન પૂછે તો પણ તે મૃષાવાદી બતાવ્યા કરે છે, તથા "भय मरण किलेसुव्वेगजणयाइं" ભય મરણ, ક્લેશ, ઉદ્વેગ આદિ ઉત્પન્ન કરનાર અસત્ય વચનો, તથા "भावबहुसंकिलिट्ठमलिणाणि" અત્યંત સંક્લિષ્ટ, અન્યને અતિશય સંતાપજનક એવા અધ્યવસાયથી મલિન થયેલ તથા "भूयघाओव-

न्यपि=स्वरूपतस्तथ्यान्यपि. किन्तु–अपि–निश्चयेन 'हिंसगाइं' हिंसकानि=परिणामतः प्राणिप्राणोपघातकानि तस्मादसत्यस्वरूपाणि, 'वयणाइं' वचनानि. 'पुट्ठा वा अपुट्ठा वा' पृष्टा वा केनापि, अपृष्टा वाऽपि–अलीकवादिनः 'उयाहरंति' उदाहरन्ति=कथयन्ति ॥ सू० १२ ॥

अथवा परम्परा रूप से घात करने वाले ऐसे (सच्चाणि वि) स्वरूप से सत्य भी हो किन्तु निश्चय में (हिंसगाइं) परिणामतः प्राणियों के प्राणों के उपघातक होने के कारण असत्य स्वरूप ही होते हैं। ऐसे (वयणाइं) वचनों को (पुट्ठा वा अपुट्ठा वा) असत्यवादी जन चाहे उनसे कोई पूछे अथवा न पूछे तो भी (उयाहरंति) कह दिया करते हैं।

भावार्थ—मृषावादीजन अनेकविध प्राणिपीडक यंत्रों को बनाने के लिये, विविध प्रकार के विषों का निर्माण करने के लिये दूसरों को उपाय बतलाया करते हैं। गर्भ का पतन कैसे किया जाता है, नगरादिकों में क्षोभ उत्पन्न कैसे हो सकता है, दूसरों को वश में कैसे किया जा सकता है. चोरी करने के क्या २ साधन हैं, परस्त्रीगमन करने का क्या उपाय है. दूसरों की सेना को कैसे पगस्त किया जाता है, ग्राम आदि में उपद्रव कैसे उत्पन्न किया जाता है, जंगल आदि में आग लगाना. तडाग आदि जलाशयों को शुष्क करना–सुखाना, इत्यादि सब प्रकार के इष्ट प्रयोगों को मृषावादी जन चाहे उनसे कोई पूछे अथवा न

घाइयाइं" પ્રાણીઓનો સાક્ષાત ઘાત કરનાર અથવા પરમ્પરા રૂપે ઘાત કરનાર એવાં "सच्चाणि वि" સ્વરૂપ સત્ય હોય તો પણ અવશ્ય "हिंसगाइं" પરિણામ જોતાં પ્રાણીઓના પ્રાણોની હત્યા કરનાર હોવાથી અસત્ય સ્વરૂપ જ હોય છે એવાં "वयणाइं" વચનો "पुट्ठा वा अपुट्ठा वा" અસત્યવાદી માણસ. તેને કોઇ પૂછે કે ન પૂછે છતાં પણ "उयाहरंति" બોલ્યા કરે છે

ભાવાર્થ—મૃષાવાદી માણસ અનેક પ્રકારનાં પ્રાણીપીડક યંત્રો બનાવવાને માટે તથા વિવિધ પ્રકારના વિષ બનાવવાને માટે બીજા લોકોને ઉપાયો બતાવ્યા કરે છે. ગર્ભપાત કેવી રીતે કરાવાય છે, નગર આદિમા કેવી રીત ક્ષોભ ઉત્પન્ન કરી શકાય છે, બીજાને કેવી રીતે વશ કરી શકાય છે, ચોરી કરવાનાં ક્યાં ક્યાં સાધનો છે, પરસ્ત્રીગમન કરવાના ક્યા ક્યા ઉપાય છે. અન્યનાં સૈન્યને કેવી રીતે પરાજય આપી શકાય છે, ગામ આદિમાં કેવી રીતે ઉપદ્રવ પેદા કરી શકાય છે, જંગલ આદિમાં કેવી રીતે આગ લગાડાય છે, તળાવ આદિ જળાશયોને કેવી રીતે સૂકવી નખાય છે, ઇત્યાદિ સર્વે પ્રકારના ઇષ્ટ પ્રયોગો

पुनरप्याह—' परतत्ति ' इत्यादि ।

मूलम्—परतत्तिवावडाय असमिक्खियभासिणो उवदिसंति सहसाउट्टा—गोणा—गवया दमंतु, परिणयवया अस्सा हत्थीगवेलगकुक्कडा य किज्जंतु किणावेह विक्केहय पचह सयणस्स देह पीयह दासीदास—भयग—भाइल्लगा य सिस्सा य पेसकजणो कम्मकरा किंकरा य एए सयणपरिजणा य कीस अच्छंति भारिया भे करेतु कम्मं, गहणाइं वणाइं खित्तखिलभूमिवल्लराइं उत्तणघणसंकडाइं डज्झंतु सूडिज्जंतु य रुक्खा भिज्जंतु जंताइं भंडाइयस्स उवहिस्स कारणाए, बहुविहस्स अट्ठाए उच्छू दुज्जंतु पीलिज्जंतु य तिला, पयावेह इट्टयाओ मम घरट्ठयाए खेत्ता य कसह कसावेह वा, लहुं गामनगरखेडकब्बडे संनिवेसेह, अडवीदेसेसु विउलसीमे, पुप्फाणि फलानि य कंदमूलाइं कालपत्ताइं गिण्ह, करेह संचयं परिजणस्स अट्ठाए ॥ १३ ॥

भी पूछे तो भी बताया करते हैं। जिन वचनों से भय मरण आदि उपद्रव खड़े हो जावें, दूसरोंको सुनकर जिन से चित्त में मलिनता आ जावे, ऐसे वचन भी वे बोल दिया करते हैं। सत्य होने पर भी जो प्राणियों के प्राणों को संकट में डाल देते हों—प्राणियों की साक्षात् अथवा परम्परा से हिंसा के जो साधनभूत बनते हों ऐसे सब ही वचन असत्य ही हैं, और उन्हें ये असत्यवादीजन बोला करते हैं ॥ सू०१२ ॥

વિષે મૃષાવાદી માણુસને કોઈ પૂછે કે ન પૂછે તો પણ તે બતાવ્યા કરે છે. જે વચનોથી ભય, મરણ આદિ ઉપદ્રવ પેદા થાય, જે વચનો સાંભળીને અન્યનાં મનમાં મલિનતા ઉત્પન્ન થાય, એવા વચનો પણ તેઓ બોલ્યા કરે છે. સત્ય હોવા છતા પણ જે વચનોથી પ્રાણીઓનાં પ્રાણ ભયમાં મૂકાય—પ્રાણીઓની સાક્ષાત્ હિંસાના અથવા પર પરાથી હિંસાના જે કારણરૂપ બનતા હોય એવાં બધાં વચનો અસત્ય જ છે, અને તે અસત્યવાદી માણુસ તેવાં વચનો બોલ્યાં કરે છે. ॥સૂ-૧૨॥

टीका—'परतत्तिवावडाय' परतृप्तिव्यापृताश्च = परप्रसन्नताकरणतत्पराः अथवा परतप्तिव्यापृताः=परचिन्तापरायणा वा 'असमिक्खियभासिणो' असमीक्षितभाषिणः=अपर्यालोचितवक्तारः 'उवदिसंति' उपदिशन्ति=आज्ञापयन्ति सहसा =अकस्मात् अकारणमेवेत्यर्थः तदेवाह-यत् 'उट्टा' उष्ट्राः=प्रसिद्धाः 'गोणा' गावः बलीवर्दाः, गवयाः=गोसदृशा वन्याः 'रोझ' इति भाषा प्रसिद्धाः पशुविशेषाः 'दमंतु' दम्यतां=एते शिक्ष्यन्ताम्। तथा 'परिणयवया' परिणतवयसः=तरुणाः 'अस्सा' अश्वाः 'हत्थी' हस्तिनः=प्रसिद्धाः गवेलकाः=मेषाः 'कुक्कुडा' कुक्कुटाश्च=प्रतीताः 'किज्जतु' क्रीयन्तां=मूल्येन गृह्यन्तां 'किणावेहय' क्रापयत= पूर्वोक्तानामेव क्रयणं कारयत 'विक्केह' विक्रीणीध्वं=विक्रयं कुरुत 'पचह' पचत=पाकं कुरुत तथा 'सयणस्स' स्वजनाय 'देह' दत्त=मांसादिकं दीयतां

फिर भी कहते हैं—'परतत्ति' इत्यादि

टीकार्थ—(परतत्तिवावडा य) जो दूसरों को प्रसन्न करने में तत्पर रहते हैं, अथवा पर को चिन्ता में परायण रहा करते हैं वे (असमिक्खियभासिणो) विना विचारे ही बोल दिया करते हैं, इस बात का वे विचार नहीं करते हैं कि हमारे इन वचनों से दूसरे प्राणियों को कष्ट होगा, (सहसा उवदिसंति) विना कारण के ही यों दूसरों से कह देते हैं कि तुम लोग (उट्टागोणागवया दमंतु) ऊँटों को, बैलों को तथा रोझों को दमनकरो-अच्छी चाल चलना सिखलाओ, (परिणयवया अस्सा हत्थी गवेलका कुक्कुडा किज्जंतु) तरुण, घोड़े, हाथी, मेष, कुक्कुट, इन जानवरों को स्वयं खरीदो और (किणावेह) दूसरों को खरीदवाओ तथा (विक्केह य) बेंचो और (पचह) ओदनादि पकाओ (सयणस्स-

તે વિષે હજી પણ સૂત્રકાર કહે છે— "परतत्ति" ઈત્યાદિ.

ટીકાર્થ—"परतत्ति वावडाय" જે બીજા લોકોને ખુશ કરવાને આતુર હોય છે, અથવા પારકાની ચિન્તામાં પરાયણ રહે છે, તેઓ "असमिक्खियभासिणो" વિચાર કર્યા વિના બોલ્યા કરે છે તેઓ એવો વિચાર કરતાં નથી કે અમારા આ વચનોથી બીજાં પ્રાણીઓને કષ્ટ પહોંચશે. "सहसा उवदिसंति" તેઓ વિના કારણ બીજા લોકોને કહે છે કે તમે "उट्टागोणा गवया दमंतु" ઉંટોનું, બળદોનુ તથા રોઝોનુ દમન કરો-સારી ચાલ ચાલતા શિખવો. "परिणयवया अस्सा हत्थी गवेलका कुक्कुडा किज्जंतु" યુવાન, ઘોડા, હાથી ઘેટાં કૂકડા, આદિ તમે જાતે ખરીદો અને "किणावेह" બીજા પાસે

'पीयह' पिवत=मदिरादिकं 'दासीदासभयगभाइल्लगा' दासीदासभृतकभागिकाः=दास्यः=सेविकाः दासाः=प्रसिद्धाः, भृतकाः=भृत्या-भक्तदानादिना पोषिताः, भागिकाः=धनादेश्चतुर्थादि भागग्राहकाः 'सिस्सा य' शिष्याश्च=प्रसिद्धाः 'पेसकजणो' प्रेष्यकजनः=कार्यप्रयोजनेषु प्रेषणीयो जनः 'कम्मकरा' कर्मकरा=नियतकालं कर्मकुर्वन्ति ये ते कर्मकराः, किंकराश्च=प्रश्नपूर्वककार्यकारिणः 'एए' एते 'सयणपरिजणे' स्वजनपरिजनाश्च स्वजनाः मातापितृभ्रात्रादयः, परिजनाः =सम्बन्धिनः 'कीस' कस्मात् कारणात् 'अच्छंति' आसते=कार्य परित्यज्योपविष्टाः सन्ति 'भे' भवतां 'भारिया' भारिकाः=भारवाहिनः 'कम्म' कर्म 'करेंतु' कुर्वन्तु, तथा 'गहणाइं वणाइं' गहनानि वनानि 'खित्तखिलभूमिवल्लराइं' क्षेत्र

देह) मांसादिको अपने स्वजन संबंधियोंके लिये दिया करो, (पीयह) मदिरादि का पान किया करो, (दासीदास भयगभाइल्लगा य सिस्सा य पेसकजणो कम्मकरा किंकरा य एए सयणपरिजणा य कीस अच्छंति) ये तुम्हारे दासी, दास, भृत्य भागीदार, शिष्यजन, प्रेष्यकजन, कर्मकर और किंकर तथा स्वजन परिजन किस कारण से अपने २ काम को-छोड़ कर बैठे हुए हैं। इनमें कठिन शब्दोंका अर्थ इस प्रकार है-अपने घर पर ही जो भोजनादि से पुष्ट किये जाते हैं वे भृत्य हैं। कोई प्रयोजन वश जो कामके लिये भेजे जाते हैं वे प्रेष्यकजन हैं। नियत कालतक जो मजूरी करते हैं वे कर्मकर हैं। प्रश्नपूर्वक पूछकर काम करनेवाले जन किंकर हैं। माता पिता भाई आदि स्वजन सम्बन्धीजन आदि परिजन हैं। (भे भारीया कम्मं करेंतु) तुम भारिक-अपने भारढोनेवाले मनुष्यों से-

---

ખરીદ કરાવો, તથા "विक्केहय" વેચો, અને "पचह" ઓદનાદિ (ભાત વિગેરે) રાંધો "सयणस्स देह" માંસ આદિ તમારા સગા સંબંધીને ભોજનમાં પીરસો "पीयह" મદિરા (દારૂ) આદિ પાન કરો, "दासीदासभयगभाइल्लगा य सिस्सा य पेसकजणो कम्मकरा किंकरा य एए सयणपरिजणा य कीस अच्छंति" એ તમારા દાસી, દાસ, ભૃત્ય, ભાગીદાર, શિષ્યજન, પ્રેષ્યકજન, કર્મકર કિંકર અને સ્વજન પરિજન કયા કારણે પોત પોતાનાં કામો છોડીને બેઠા છે। ઉપરના સૂત્રમા આવેલ કઠિન શબ્દના અર્થ આ પ્રમાણે છે-પોતાને ઘેર જ ભોજનાદિ આપીને જેમનું પોષણ કરાય છે, તે લોકોને ભૃત્ય કહે છે કોઈ પ્રયોજનથી જેમને કોઈ કામે મોકલાય છે તેમને પ્રેષ્યજન કહે છે નક્કી કરેલા સમય સુધીજે મજૂરી કરે છે તેમને કર્મકર-કારીગર કહે છે. પૂછી પૂછીને કામ કરનારા સેવકોને કિંકર કહે છે. માતા પિતા ભાઈ આદિ સ્વજન ગણાય છે, સંબંધીઓને પરિજન કહે છે. "भे भारिया कम्मं करेंतु" તમે ભારિકો-આપણો ભાર વહન કરનારા પાસે

खिलभूमिवल्लराणि=क्षेत्राणि=प्रसिद्धानि खिलभूमयः=हलाऽकृष्टभूमयः वल्लराणि=क्षेत्रविशेषाश्च तानि 'उत्तणघणसंकडाइं' उत्तृणघनसंकटानि=तत्रउत्तृणैः=उद्गतैः घासैः घनम्=अतिशयं संकटानि=व्यापनियानि तानि 'डज्झंतु' दह्यन्तां=भस्मीभूतानि क्रियताम्। रुक्खा' वृक्षाः 'मूडिज्जंतु' मूड्यन्तां = मूलत उन्मूल्यन्ताम्। 'जंताइं' यन्त्राणि = तिलेक्षुसर्षपादिपीडनयन्त्राणि 'भिज्जंतु' भिन्दन्तु। किमर्थमित्याह—'भांडाइयस्स' भाण्डादिकस्य=भाण्डपात्रादेः 'उवहिस्स' उपधेः=उपकरणस्य 'कारणाए' कारणाय=प्रयोजनाय। तथा 'बहुविहस्स' बहुविधस्य 'अनेकप्रकारस्य 'अट्ठाए' अर्थाय=वक्ष्यमाणप्रयोजनस्य 'सिद्धये 'उच्छू' इक्षवः 'दुज्जंतु' दूयन्तां=छिद्यन्तां 'तिलाय' तिलाश्च 'पीलिज्जंतु' पीड्यन्तां=निष्पीड्यन्तां यन्त्रे। तथा मम 'घरट्ठए' गृहार्थाय=गृहनिर्माणप्रयोजनाय 'इट्टयाओ' इष्टकाः='ईंट' इति प्रसिद्धाः 'पचावेह' पाचयत। 'खेत्ताय कसह कसावेह'

नौकर चाकरों से काम कराओ वे (गहणाइं वणाइं) गहन वनों को, (खित्तखिलभूमिवल्लराइं) खेतों को, हलाकृष्टभूमिको-वल्लरों-खेतविशेषों को (उत्तणघणसंकडाइं) घास आदिसे व्याप्त है, (डज्झंतु) उनमें आग लगाकर वहांकी भूमिको साफ करें (रुक्खा सूडिज्जंतु) वहां जितने भी वृक्ष खडे हों उन्हें जड़मूल से उखाड़ डालें (जंताइं भिज्जंतु) तिल इक्षु आदि के पीलनेके यंत्रोंको ये चीर फाड़ डालें कि जिससे (भांडायइस्स उवहिस्स कारणाए) भांड पात्र आदि उपकरण बनाये जा सकें। तथा (बहुविहस्स अट्ठाए उच्छू दुज्जंतु) अनेक विध प्रयोजनों की सिद्धि निमित्त ये इक्षु-गन्ना को काटें, (तिला य पीलिज्जंतु घरट्ठयाए) तिलों को घानी में पिले तथा (इट्टयाओ पयावेह) गृह निर्माण के लिये ये ईटों को पकावें, (खेत्ता य कसह कसावेह) खेतों को जोतें व जुतवावें = हाकना और हकवाना चोकना और चोकवाना

નોકર ચાકરો પાસે કામ કરાવો, 'गहणाइं वणाइं" ગહન વનોને, "खित्तखिलभूमिवल्लराइं" ખેતરો, વલ્લરો (એક પ્રકારનું ખેતર) કે જે "उत्तणघणसंकडाइं" ઘાસ આદિથી છવાયેલ છે, "डज्झंतु" તેમાં આગ લગાડીને તે જમીનને સાફ કરાવો, "रुक्खा सूडिज्जतु" ત્યાં જેટલાં વૃક્ષો છે તેમને જડમૂળમાંથી ઉખેડી નાખો, "जंताइं भिज्जतु" તલ, શેરડી આદિ પીલવાના યંત્રોને તેઓ તોડી ફોડી નાખે કે જેથી "भांडाइयस्स उवहिस्स कारणाए" ભાંડ, પાત્ર આદિ સાધનો બનાવી શકાય તથા "बहुविहस्स अट्ठाए उच्छू दुज्जंतु" અનેક પ્રકારના પ્રયોજનની સફળતા માટે તેઓ શેરડીને કાપે "तिलाय पीलिज्जंतु घरट्ठयाए" તલને ઘાણીમાં પીલે, તથા "इट्टयाओ पयावेह" ઘર બંધાવવાને માટે ઈંટો પકાવે, "खेत्ता य कसह कसावेह" ખેતરો ખેડે અને ખેડાવે, તથા

क्षेत्राणि च 'कस' कर्षत-कर्षयत वा। तथा 'अडवीदेसेसु' अटवीदेशेषु=वन प्रदेशेषु 'गामनगरखेडकव्वडे' ग्रामनगरखेटकर्वटानि=तत्र ग्रामश्च नगरं च प्रसिद्धं खेटं च=नद्यादिवेष्टितं धूलिप्राकाररहितं कर्वटं च=कुत्सितजननिवासस्थानम्, तानि कीदृशानीत्याह-विउलसीमे' विपुलसीमानि=विस्तीर्णसीमायुक्तानि 'लहु' लघु=सुन्दररीत्या शीघ्रं वा 'संनिवेसेह' सन्निवेशयत=निवासयत तथा 'पुप्फाणि फलाणि य' पुष्पाणि फलानि च 'कंदमूलाइं' कन्दमूलानि तत्र कन्दाः=स्वर्णकन्द-शर्कराकन्दलशुनादयः मूलानि=वृक्षमूलकानि 'कालपत्ताइं' कालप्राप्तानि=उचित-समयलब्धानि 'गिण्ह' गृह्णीत=ग्रहणं कुरुत, तथा 'परिजणस्स' परिजनस्य=कुटुम्बस्य, 'अट्ठाय' अर्थाय=प्रयोजनाय सञ्चयं 'करेह' कुरुत ॥ सू० १३ ॥

तथा (अडवीदेसेसु गामनगरखेडकव्वडे विउलसीमे लहु संनिवेसेह) ग्राम, नगर, खेट, कर्वट आदि स्थानोंको विस्तृत सीमायुक्त कर के अटवी देशोंमें सुन्दर रीति से शीघ्र बसावें, (पुप्फाणि फलाणि य कंद-मूलाइं कालपत्ताइं गिण्ह) तुम लोग (कालपत्ताइं) कालप्राप्त फूले हुए (पुप्फाइं) फूलों को (फलाणि) पके हुए फलों को तथा (कंदमूलाइं) पके हुए स्वर्णकन्द, शर्कराकंद, लहसुन आदि कंदों को और पिप्पलीमूल आदि मूलों को (गिण्ह) ले आया करो, तथा (करेह संचयं परिजणस्स अट्ठाए) कुटुम्ब के लिये धन आदि का संचय कर रख जाओ।

भावार्थ-ये असत्यवादीजन दूसरे व्यक्ति हमसे प्रसन्न रहें इसलिये सुहाती बातें उनसे कहते रहते हैं। इनका परिणाम क्या होगा ? इसका वे जरा सा भी ध्यान नहीं रखते। जो ऊँट पालते हैं अथवा ऊँटसे जो

"अडवीदेसेसु गामनगरखेडकव्वडे विउलसीमे लहु संनिवेसह" ગામ, નગર, ખેટ, કર્બટ, આદિ સ્થાનોને વિસ્તૃત સીમાવાળાં કરીને ઉજ્જડ પ્રદેશોમાં સુંદર રીતે ઝડપથી વસાવે, "पुप्फाणि फलाणि य कंदमूलाई कालपत्ताइ गिण्ह" તમે લોકો "कालपत्ताइं" વિકસવાને સમય આવતાં વિકસેલાં "पुप्फाइ" ફૂલોને "फलाणि" પાકેલા ફળોનો તથા "कदमूलाइं" પાકેલાં સ્વર્ણકન્દ-શકરીયાં લસણ આદિ કંદોને તથા પિપ્પલી મૂળ આદિ મૂળોને "गिण्ह" લઈ આવ્યા કરો, તથા "करेह संचयं परिजणस्स अट्ठाए" કુટુંબ આદિને માટે ધન આદિનો સંચય કર્યા કરો" એ પ્રકારની સલાહ આપ્યા કરે છે.

ભાવાર્થ—તે અસત્યવાદી લોકો બીજા લોકોને ખુશ કરવાને માટે તેમને ગમે તેવી વાતો તેમની સાથે કર્યા કરે છે પણ તેનું શું પરિણામ આવશે ? તે બાબતનો તેઓ જરા પણ વિચાર કરતાં નથી. ઊંટ પાળનારને અથવા ઊંટનો

अपना व्यापार आदि करते हैं उनसे ये यों कह दिया करते हैं कि तुम्हारा यह ऊँट देखने में तो बड़ा सुहावना लगता है परंतु इसकी चाल तो कोई ढंग की ही नहीं है, इसे जैसे भी हो सुन्दर चाल चलना सिखलाओ! इसी तरह जो बैलों के मालिक होते हैं उनसे भी ये समयर पर ही उपदेश भरी बातें बनाया करते हैं, उनसे कहते हैं-तुम्हारे बैलों की यह जोड़ी देखनेमें तो बड़ी सुन्दर मालूम पड़ती है, परन्तु देखो इसकी चाल कुछ भी नहीं है, अतः यह गाड़ी आदिमें जोतने पर खूब तेज चाल चले इस तरह की चाल सीखाओ, जंगलमें एक गाय जैसा जानवर होता है जिसे रोझ कहते हैं, यह चलनेमें बड़ा तेज होता है। सो तुम जैसे भी हो सके इसको पकड़वा कर मंगाओ और अपने घर पर रख कर उस रोझको जैसे भी हो सके पहिले वशमें लाओ, बादमें उसको जंगली चाल छुड़ाकर अच्छी चाल चलने में ढालो, इससे तुम्हें आने जानेमें समयकी बड़ी बचत होती रहेगी। इसी तरह तुम बैठेर क्या करते रहते हो? घोड़ों के बछेड़ोंको, हाथियों के बच्चों को, मेषों (मेंढे)को, कुक्कुटों (मुर्गों)को, पैसे देकर खरीदो, और खिला पिलाकर जब ये खूब मस्त हो जावे तब इन्हें बेच दिया करो इसमें तुम्हें बहुत अधिक लाभ होगा। तथा कुछ रुजगार कहीं चलता हो तो इस प्रकार बैठे रहने में तुम्हें क्या लाभ

વ્યાપારની ચીજો લાવવા લઇ જવામાં ઉપયોગ કરનારને તે કહે છે કે તમારો આ ઊંટ દેખાવમાં તો ઘણો સુંદર લાગે છે પણ તેની ચાલ કઢંગી છે તેને ગમે તે પ્રકારે સારી ચાલ ચાલતાં શીખવાડો. એ જ રીતે બળદોના માલિકોને પણ તે વારંવાર ઉપદેશ-સલાહ આપ્યા કરે છે કે તમારા બળદોની આ જોડી દેખાવમાં તો ઘણી સુંદર છે, પણ તેની ચાલ ઘણી ધીમી છે, તો તેને ગાડી આદિની સાથે જોડવામાં આવે તો ઝડપથી ચાલે એવી ચાલ શીખવાડો. જંગલમાં ગાય જેવું એક પ્રાણી હોય છે, તેને રોઝ કહે છે, તે ચાલવામા ઘણું ઝડપી હોય છે. તમે ગમે તે રીતે તે રોઝને પકડી મંગાવો, અને તમારે ઘેર રાખીને તેને ગમે તે રીતે પહેલા વશ કરો, પછી તેને જંગલી ચાલ છોડાવીને સારી ચાલ ચાલતા શીખવો, તેમ કરવાથી તમને અવર જવરમાં સમયનો સારો બચાવ થશે. એજ રીતે તે અસત્યવાદી લોકો બીજાને કહે છે કે-તમે બેઠાં બેઠાં શું કરો છો? ઘોડાના વછેરાંને, હાથીઓનાં બચ્ચાંને ઘેટાંઓને, કૂકડાઓને પૈસા આપીને ખરીદ કરો, અને તેમને ખવરાવી પીવરાવીને જ્યારે તેઓ સારી રીતે હૃષ્ટ પુષ્ટ થાય ત્યારે વેચી દો, તેથી તમને સારો લાભ થશે. તથા કોઈ ધંધો ન ચાલતો હોય તો આ રીતે બેસી રહે-

है ? कम से कम चना ही भूंजकर बेचा करो। तुम तो पैसे वाले हो, तुमने इस मनुष्य जन्म को पाकर क्या आनंद पाया मदिरा आदिमें जो आनंद है वह और कहां हो सकता है, इसलिये इन्हें खूब खाओ पीओ और बचने पर अपने मित्र दोस्तों को भी खिलाया पिलाया करो। देखो-तुम्हारे ये नौकर चाकर दासी दास आदि जन बैठे २ क्या करते हैं ? कम से कम तुम इनसे गहन जंगलों को ही साफ कराकर उन्हें खेत आदि के योग्य बनवालो। वृक्ष आदि कट जाने पर वहां बडी अच्छी तरह से खेती के योग्य भूमि तैयार हो सकती है। तुम्हारे पास जो ये यंत्र पड़े हुए हैं वे अब तो कुछ काम में तो नहीं आ रहे हैं पड़े २ और खराब हो जावेंगे, अतः क्यों नहीं इनके भाजन पात्र आदि बनवा लेते हो, ताकि उनसे तुम्हारा बहुत सा काम सध सकता है। गुड़ का बाजार इस समय बहुत तेज जा रहा है, खांड भी बहुत मँहगी बिक रही है, अतः क्यों नहीं तुम समझ से काम लेते हो ? जहां तक होसके इन इक्षुओं(सेलडी)को जल्दीसे जल्दी पिलवालो,ताकि गुड़ आदि तयार होकर तुम्हें बाजार से अच्छा लाभ हो सके। सरसों का तेल भी बहुत तेज बिक रहा है सो घानी में पिलवाकर इसका तेल निकलवालो और बेच

વાથી શો લાભ ? બીજું કંઇ ન બની શકે તો ચણા શેકીને વેચ્યા કરો પૈસાદારોને અસત્યવાદી કહે છે કે-'તમે તો પૈસાદાર છો, તમે આ મનુષ્ય અવતાર પામીને શો આનંદ લૂટયો છે! મદિરા આદિમાં જે આનંદ મળે છે તે બીજે કયાં મળે તેમ છે ? તો ખૂબ ખાઓ, પીઓ, તથા ખાતા પીતાં વધે તો તમારા મિત્રોને પણ ખવરાવ્યા કરો પીવરાવ્યા કરો જુઓ! તમારા આ નોકર ચાકર, દાસ, દાસી આદિ લોકો બેઠાં બેઠાં શું કામ કરે છે ? તો તેમની પાસે ગહન જંગલોને સાફ કરાવીને તે સ્થાનને ખેતી કરવાને લાયક બનાવરાવો. વૃક્ષ આદિ કપાવી નાખવામાં આવે તો ત્યાં સારામાં સારી ખેતી થાય એવી જમીન તૈયાર થઈ શકે છે તમારી પાસે જે યંત્રો છે તે હાલમાં કોઇ ઉપયોગમાં આવતા નથી, તો પડયાં પડયા તે ખરાબ થઇ જશે, તો તેને તોડાવીને તેમાંથી ભાજન પાત્ર આદિ કેમ બનાવરાવતા નથી ? તેમ કરવાથી તમારૂં ઘણું કામ સરળ થશે હાલમાં ગોળનાં બજાર ઘણાં ચડી ગયા છે ખાંડ પણ ઘણી મોંઘી વેચાય છે. તો તમે બુદ્ધિ પૂર્વક કેમ કામ લેતા નથી ? બની શકે એટલી ઝડપથી આ શેરડીને પીલાવી નાખો જેથી ગોળ આદિ તૈયાર કરીને વેચવાથી તમને વેપારમાં સારો લાભ મળે સરસીયું પણ ઘણું મોંઘું વેચાય છે, તો સરસવને ઘાણીમા પીલાવીને તેનું તેલ કઢાવો અને તે તેલ વેચીને સારી એવી

पुनरप्याह—'सालि' इत्यादि ।

मूलम्—सालीवीहिजवा य लुच्चंतु मलिज्जंतु उप्पूयंतु य लहुं च पविसंतु कोट्ठागारं, अप्पमहुक्कोसगा य हम्मंतु पोतसत्था सेणाणिज्जाउ जाउडमरं, घोरा वट्टंतु जयंतु य संगामा, पवहंतु य सगडवाहणाइं, उवणयणं चोलगं विवाहो जन्नो अमुगम्मि होउ दिवसे सुकरणे सुमुहुत्ते सुनक्खत्ते सुतिहिम्मि य अज्ज होउण्हवणं, मुदियं बहुखज्जपेज्जकलियं, कोउग विण्हावणसंतिकम्माणि कुणह ससि-रवि-गहोवराग-विसमेसु सजणस्स परिजणस्स य नियगस्स य जीवियस्स य परिरक्खणट्ठाए। पडिसीसगाइं च देह, देह य सीसोवहारे विविहोसहिमज्जमंसभक्खण्णपाणमल्लाणुलेवण पईव जलि-उज्जल सुगंधधूवोवयारपुप्फफलसमिद्धे, पायच्छित्ते करेह पाणाइवायकरणेण बहुविहेण विवरीउप्पायदुस्सुविण पावसउणअसोम्मग्गहचरियअमंगलनिमित्तपडिघायहेउं, वित्तिच्छेयं करेह, मादेह किंचिदाणं, सुट्ठुहओ सुट्ठुछिण्णो भिण्णोत्ति उवदिसंता एवंविहं करेंति अलियं मणेणं वायाए कम्मुणा य अकुसला अणज्जा अलियाणा अलियधम्मनिरया

कर रकम इकट्ठी कर लो। इत्यादि नाना प्रकार की बातें बना २ कर मृषावादी जन भिन्न २ पुरुषों को सदा प्रसन्न करने की चेष्टा में लगे रहते हैं। यही सब विषय इस सूत्र द्वारा सूत्रकार ने प्रकट किया है॥सू-१३॥

રકમ એકત્ર કરી લો " ઇત્યાદિ વિવિધ પ્રકારની વાતો કરીને મૃષાવાદી માણસો જુદા જુદા પુરુષોને હમેશ રાજી રાખવાની પ્રવૃત્તિમાં રચ્યા પચ્યા રહે છે. એ બધી વાત સૂત્રકારે આ સૂત્ર દ્વારા પ્રગટ કરી છે ॥સૂ-૧૩॥

अलियासु कहासु अभिरमंता तुट्ठा अलियं करेउं हुंति य बहुप्पगारं ॥ सू० ॥१४॥

टीका—'सालीवीही' इत्यादि। 'सालीव्रीहीजवा य' शालिव्रीहियवाश्च=तत्र शालयः षष्टयहोरात्रपरिपाकयोग्या व्रीहयश्च धान्यविशेषाः यवाश्च=जव इति भाषा प्रसिद्धाः एते 'लुच्चं तु' लूयन्तां=छिद्यन्ताम्। 'मलिज्जंतु' मृद्यन्तां=पलालादिभ्यः पृथक् क्रियन्ताम्। 'उप्पूयंतु' उत्पूयन्ताम्=परिशोध्यन्तां 'लहुं च' लघु च=शीघ्रं सुन्दररीत्या च। 'कोट्ठागारं' कोष्ठागारं=कोष्ठेषु 'पविसंतु' प्रवेश्यन्तां=संभ्रियन्तां शाल्यादयः 'अप्पमहुक्कोसगा हम्मंतु पोतसत्था' अल्पमहदुत्कर्षका हन्यन्तां पोतसार्थाः तत्र अल्पाः=ह्रस्वास्तदपेक्षया महान्तश्च=मध्यमा उत्कर्षका=उत्कृष्टा पोतसार्थाःनौकास्थितजनसमुदायाः—पक्षिशिशुसमुदाया वा हन्यन्तां=नाश्यन्ताम्। तथा 'सेणाणिज्जाउ' सेना निर्यातु=कटकं निर्गच्छतु, निर्गत्य च 'जाउडमरं' यातुडमरं=

तथा—'सालि' इत्यादि।

टीकार्थ—(सालि वीहिजवा य लुच्चंतु) शालि-साठ दिनरात में परिपाक के योग्य धान्य को तथा व्रीहि को, और जव को काट लो (मलिज्जंतु) इन्हें पलाल आदि से पृथक् करलो (उप्पयंतु) अच्छी तरह से इनकी दांय (गाहट) करवाकर उड़ावनी करलो-(उफणलो) अभी वायु अनुकूल अच्छी चल रही है। (लहुं च कोट्ठागारं पविसंतु) जल्दी से जल्दी कोठारमें इन्हें भरवा दो। (अप्पमहुक्कोसगा हम्मंतु पोतसत्था) छोटे बीचके-मध्यम श्रेणिके, एवं उत्तम श्रेणिके पोतसार्थ-नौकास्थित (नौकामें रहे हुए) जन समूहको मार डालो, अथवा छोटेबड़े तथा बीचके सब

તથા- 'सालि" ઈત્યાદિ

ટીકાર્થ- "सालिव्रीहिजवा य लुच्चतु" શાલી (સાઈઠ દિવસોમા પાકતું અનાજ) તથા વ્રીહિ (ચોખા) અને જવની કાપણી કરાવિ લો "मलिज्जंतु" તેમાંથી પરાળ વગેરે છૂટું પડાવી દો, "उप्पयंतु" સારી રીતે ખળુ કરાવીને તેને ઉપણી લો "उफणलो" અત્યારે અનુકૂળ પવન વાય છે તો તેને ઉપણવાનું સરળ પડશે "लहुं च कोट्टागारं पविसंतु" તેને વહેલામા વહેલી તકે કોઠારમા ભરાવી દો. "अ पमहुक्कोसगा हम्मंतु पोतसत्था" નાના, મધ્યમ શ્રેણિના અને ઉત્તમ શ્રેણિના પોતસાર્થ-નાવમાં રહેલ જનસમૂહને મારી નાખો, અથવા નાના, મધ્યમ તથા મોટા-સમસ્ત પક્ષીસમુદાયને મારી નાખો. "सेणाणिज्जाउ" અહીંથી સેના

उपद्रवस्थानम् । 'घोरा संगामा वट्टंतु' घोरा संग्रामा वर्तन्तां=भवन्तु 'जयंतु' जयन्तु=विजयं प्राप्नुवन्तु च । 'सगडवाहणाइं य पवहंतु' शकटवाहनानि च प्रवहन्तु=शकटानि=यन्त्रः वाहनानि च=नौकादीनि प्रवहन्तु=प्रचालयन्तु । उवणयणं चोलगं विवाहो जन्नो अमुगम्मिहोउ दिवसे सुकरणे सुमुहुत्ते सुनक्खत्ते सुतिहिम्मि य' तत्र 'उवणयणं' उपनयनं=कलाग्रहणं 'चोलगं' चोलकं बालकानां प्रथम शिरोमुण्डनं, विवाहः=पाणिग्रहणं प्रसिद्धं 'जन्नो' यज्ञः एतत्सर्वम्'अमुगंमि'अमुकस्मिन् दिवसे सुकरणे=करणानि एकादश, तत्र–बव–बालव–कौलव–तैत्तिल–गर–वणिज विष्टयश्चैतानि सप्त करणाणि, शकुनि चतुष्पद नागकिंस्तुघ्नानि चत्वारि स्थिराणि, इत्येषामन्यतमकरणे शुभे 'सुमुहुत्ते' सुमुहूर्त्ते=शोभने रौद्रादित्रिंशदन्यतमे 'सुन-क्खत्ते' सुनक्षत्रे=अश्विन्यादिषु शोभने पुष्पादिके 'सुतिहिम्मि' सुतिथौ नन्दादिषु अन्यतमे 'होउ' भवतु । तथा 'अज्ज' अद्य अस्मिन्नहनि 'होउण्हवणं' भवतु स्नपनं=सौभाग्यसन्ततिसमृध्यर्थं वध्वादेः स्नानं प्रसूतिकास्नान च । किंभूत ?

ही पक्षि समुदाय को नष्ट कर दो । (सेणाणिज्जाउं) सेना यहांसे निकले और निकल कर उपद्रवग्रस्त स्थान पर जावे (घोरा संगामा वट्टंतु जयँतु) वहां घोर संग्राम वह करें और विजयश्री को पावें (सगडवाहणाइं य पवहंतु) शकट–गाड़ी और वाहन–नौका आदि वे चलावें, (उवणयणं चोलगं विवाहो जन्नो अमुगम्मि होउ दिवसे सुकरणे सुमुहुत्ते सुनक्खत्ते सुतिहिम्मिय) उपनयन(जनोइ)–कलाग्रहण, चोलक–प्रथम शिरोमुडन, विवाह, यज्ञ ये सब अमुक दिवसमें, अमुक बवादि शुभकरण में, रौद्रादि तीस ३० मुहूर्त्तों में, अमुक अच्छे मुहूर्त में अश्विनी आदि सत्तावीस नक्षत्रों में से किसी अमुक शुभ नक्षत्र में नंदा आदि तिथियों में से किसी अच्छी तिथि में होना चाहिये । तथा (अज्ज होउण्हवणं) आज सौभाग्य एवं सन्तति समृद्धि के निमित्त वधू (वहु) आदि का स्नान

નીકળે અને તોફાનવાળા વિસ્તારમા જાય "घोरा संगामा वट्टंतु जयंतु" त्या ते ભયંકર યુદ્ધ કરે અને વિજય પ્રાપ્ત કરે "सगडवाहणाइं य पवहंतु" શકટ–ગાડા અને વાહન–નૌકા આદિ તે ચલાવે, "उवणयण चोलग विवाहो जन्नो अमुगम्मि होउ दिवसे सुकरणे सुमुहुत्त सुनक्खत्त सुतिहिम्मिय" ઉપનયન-કલાગ્રહણ, ચોલક–પ્રથમ મોવાળા ઉતરવાની ક્રિયા, વિવાહ, યજ્ઞ એ સઘળુ અમુક દિવસે, અમુક બવાદિ શુભ કરણમાં, રૌદ્રાદિ ત્રીસ (૩૦) મુહૂર્તોમાના અશ્વિની આદિ સત્તાવીસ નક્ષત્રોમાના કોઈ શુભ નક્ષત્રમાં, નંદા આદિ તિથિ-ઓમાની કોઇ શુભ તિથિએ થવુ જોઇએ તથા "अज्ज होउण्हवणं" આજે સૌભાગ્ય અને સંતતિ સમૃદ્ધિને માટે વધૂ (વહુ) આદિને સ્નાન કરાવવું જોઇએ.

मित्याह–मुदितं=हर्षसहितं 'बहुखज्जपेज्जकलियं' बहुखाद्यपेयकलितं=बहु=प्रचुरं खाद्यं = भोज्यं मोदकमांसादिकं पेयं=मदिरादिकं तेन कलितं=युक्तम् । तथा 'कोउगविण्हावणसंतिकम्माणि कुणह ससिरविगहोवरागविसमेसु सजणस्स परिजणस्स य नियस्स य जीवियस्स य परिरक्खणट्ठाए' तत्र कौतुकविस्नापनशान्तिकर्माणि =कौतुकं=सौभाग्यवृद्ध्यर्थं दृष्टिदोषनिवृत्त्यर्थं च रक्षापोट्टलिकादोरकादिबन्धनं, विस्नापनं=विविधैर्मन्त्रौषधादिभिः संमिलितजलैः, स्नापनं शान्तिकर्म च=होमजपादिकमित्येतानि 'सजणस्स' स्वजनस्य=आत्मीयजनस्य पुत्रादेः 'परिजणस्स' परिजनस्य च=दासदास्यादेश्च पुनः 'नियस्स य' निजकस्य च=स्वस्य 'जीवियस्स' जीवितस्य 'परिरक्खणट्ठयाए' परिरक्षणार्थाय कदा ? इत्याह—'ससिरविगहोवरागविसमेसु' शशिरविग्रहोपरागविषमेषु=शशिरव्योः=तत्र चन्द्रसूर्ययोः ग्रहेण=राहुलक्षणेनोपरागः=उपरञ्जनं ग्रहणमित्यर्थस्तेन विषमेषु=कष्टयुक्तेषु दिवसेषु अथवा शशिरवि एव नवग्रहेषु मध्ये ग्रहौ तयोरुपरागः=तत्तुधनादिकष्टकरस्थानेषु-

हो, अथवा प्रसूतिका का स्नपन हो । (मुदियं बहुखज्जपेज्जकलियं) उसमें बडा हर्ष मनाया जावे, अनेक प्रकारके खाद्य–मोदक मांस आदि भोज्य, एवं मदिरा आदि पेय (पीनेयोग्य) पदार्थ रहें । तथा (कोउगविण्हावणसंतिकम्माणि) सौभाग्यवृद्धिके निमित्त एवं दृष्टिदोष की निवृत्ति के अर्थ रक्षापोट्टलिका, दोरक आदिके बंधनरूप कौतुकको, अनेक प्रकार के मंत्रोंसे औषध आदिकोंसे मिश्रित जलसे स्नान करानेरूप विस्नापनको होमजपादिरूप शांति कर्मको तुम (सजणस्स परिजणस्स य नियस्सय जीवियस्स परिरक्खणट्ठाए) स्व पुत्रादिरूप आत्मीयजन की, दासीदास आदिरूप परिजनों की; तथा अपने जीवनकी रक्षाके अर्थ तथा जब (ससिरविगहोवरागविसमेसु कुणह) चन्द्र और सूर्य जिन दिनों में राहु ग्रसित हो रहे हों उन दिनों में करो' अथवा इन कौतुक विस्नापन, एव शांतिकर्मों

અથવા પ્રસૂતિકાને આજ સ્નાન કરાવવું જોઈએ "मुदियं बहुखज्जपेज्जकलियं" તે પ્રસંગે ખૂબ આનંદ મનાવવો જોઈએ–અનેક પ્રકારના ખાદ્ય–લાડુ, માંસ આદિ ભોજ્ય, અને મદિરા આદિ પેય પદાર્થોની વ્યવસ્થા થવી જોઈએ તથા "कोउगविण्हावणसंतिकम्माणि" સૌભાગ્ય વૃદ્ધિને નિમિત્તે અને દૃષ્ટિદોષના નિવારણને માટે રક્ષાપોટ્ટલિકા, દોરી આદિના બંધનરૂપ કૌતુક, અનેક પ્રકારનાં મંત્રોથી ઔષધો આદિથી મિશ્રિત જળથી સ્નાન કરવારૂપ વિસ્નાપન, હોમ જપાદિ રૂપ શાંતિ કર્મ, તમે "सजणस्स परिजणस्स य नियस्स य जीवियस्स परिरक्खणट्ठाए" પુત્રાદિ રૂપ આત્મીય જનની, દાસ દાસી આદિ રૂપ પરિજનોની તથા પોતાના જીવનની રક્ષાને માટે જ્યારે "ससिरविगहोवरागविसमेसु कुणह"

स्थितिः, तथा विषमाणि च दुःस्वप्नादीनि, तेषु शान्त्यर्थं 'करेह' कुरुत । तथा 'पडिसीसगाइं च देह' प्रीतिशीर्षकाणि च दत्त=पिष्टनिर्मितस्वशिरःप्रतिरूपकाणि च महाकाल्यादिभ्यो दीयन्तां—युष्माभिरिति वदन्ति । तथा 'देह य सीसोवहारे विविहोसहिमज्जमंसभक्खन्नपाणमल्लाणुलेवणपईवजलिउज्जलसुगंधधूवोवयारपुप्फफलसमिद्धे' दत्त च शीर्षोपहारान् विविधौषधिमद्यमांसभक्ष्यान्नपानमाल्यानुलेपनप्रदीपज्वलितोज्ज्वलसुगन्धधूपोपचारपुष्पफलसमृद्धान्, तत्र विविधाः औषधयश्च मद्यमांसानि च भक्ष्याणि च अन्नानि पानानि च माल्यान्यनुलेपनानि च तानि, प्रदीपाश्च ज्वलितोज्ज्वलाश्च=आरार्तिक्याद्याः, तथा—सुगन्धाः=शोभनगन्ध

को स्वजनादि की रक्षा के लिये उस समय करो जब नवग्रहों में चन्द्र सूर्य ये दो ग्रह तनु धन आदि कष्ट कर स्थानों में स्थिति हों, और दुःस्वप्न आदि विषम चीजों का अवलोकन हुआ हो । तथा (पडिसीसगाइं च देह) तुम लोग पिष्ट निर्मित अपने २ प्रतिनिधिरूप शिरोंको महाकाली आदि देवियों के लिये बलि रूप में दो, अर्थात् शांति आदि के निमित्त अपने शिर के जैसा शिर आटे का बनाकर काली आदि देवियों के समक्ष बलिरूप में चढाओ, इस प्रकार मृषावादीजन कहते हैं । तथा (देह य सीसोवहारे) पशु आदि के शिरों को चढाओ, जब तुम लोग पशु आदि के शिरों को काली देवी के लिये भेट में प्रदान करो उस समय (विविहोसहिमज्जमंसभक्खन्नपाणमल्लाणुलेवणपईवजलिउज्जलसुगंधधूवोवयारपुप्फफलसमिद्धे) विविध प्रकार की औषधियों से, मद्यमांसरूप भक्ष्यान्नपान से, माल्यों से, अनुलेपनों से,

---

ચન્દ્ર અને સૂર્ય જે દિવસોએ રાહુથી ગ્રસિત થાય તે દિવસોએ કરો અથવા તે કૌતુક, વિસ્નાપન, અને શાન્તિકર્મોને સ્વજનાદિની રક્ષાને માટે તે સમયે કરો કે જ્યારે નવગ્રહોમાના ચન્દ્ર અને સૂર્ય એ બે ગ્રહો તનુ, ધન આદિ કષ્ટકારી સ્થાનોમા રહેલ હોય અને દુ સ્વપ્ન આદિ વિષમ ચીજો જોવામાં આવતી હોય તથા 'पडिसीसगाइं च देह" તમે લોકો પિષ્ટ નિર્મિત પોત પોતાના પ્રતિનિધિ રૂપ મસ્તકોનું મહાકાળી આદિ દેવીઓને બલિદાન દો, એટલે કે શાતિ આદિ નિમિત્તે પોતાના મસ્તક જેવુ લોટનુ બનાવેલું મસ્તક કાળીકા દેવીઓને બલિદાન રૂપે અર્પણ કરો, એ પ્રમાણે મૃષાવાદી લોકો કહે છે "देह य सीसोवहारे" પશુ આદિના મસ્તકો ચડાવો જ્યારે પશુ આદિનાં મસ્તકો કાળીકા દેવીને માટે અર્પણ કરો ત્યારે "विविहोसहिमज्जमंस भक्खन्नपाणमल्लाणुलेवणपईवजलिउज्जलसुगंधधूवोवयारपुप्फफलसमिद्धे" વિવિધ પ્રકારની ઔષધિયોથી, મધમાંસ રૂપ ભક્ષ્યાન્ન અને પીણાથી, માળાઓથી

सम्पन्ना ये धूपाः=गुग्गुलादयस्तेषामुपचारः=अङ्गारे प्रक्षेपणं तथा पुष्पाणि च फलानि च तैः समृद्धान्=परिपूर्णान् शीर्षोपहारांश्च=पश्वादिशिरोबलीन् दत्त देवादिभ्यः। तथा 'पायच्छित्ते करेह पणाइवायकरणेण बहुविहेण विवरीउप्पायदुस्सुविणपावसउण असोम्मग्गहचरिय अमंगलनिमित्तपडिघायहेउं' प्रायश्चित्तानि कुरुत-विपरीतोत्पा-तदु:स्वप्नपापशकुनासौम्यग्रहचरिताऽमंगलनिमित्तप्रतिघातहेतुं=तत्र विपरीता ये उत्पाताः=अशुभसूचका धूमकेत्वादयः दुस्स्वप्नाश्च=अस्थिसञ्चयगर्दभारोहणादि स्वप्नदर्शनरूपाः पापशकुनाः=प्रसिद्धाः असौम्यग्रहचरितं-क्रूरग्रहदशा, अमङ्गलनिमि-त्तानि-अङ्गस्फुरणादीनि तेषां प्रतिघातहेतुं=निवारणनिमित्तं बहुविधेन=नानाप्रका-रेण प्राणातिपातकरणेन=प्राणिहिंसया प्रायश्चित्तानि कुरुत। 'वित्तिच्छेयं करेह' वृत्तिच्छेदं कुरुत=जीविकाविनाशं कुरुत, इति किमपि निमित्तादिकमुपादाय ब्रुवन्ति 'मादेह किंचिदाणं' मादत्त किञ्चिद्दानं 'सुहुहओ २' सुष्ठुहतः सुष्ठुहतः-सुष्ठु=शोभ-

---

जलते हुए उज्ज्वल आरतीरूप दीपकों से, तथा शोभनगंध से संपन्न गुग्गुल आदि धूपों के उपचार से, एवं पुष्पों और फलों से परिपूर्ण वह भेट होनी चाहिये। तथा (विवरीउप्पायदुप्सुविणपावसउणअसो म्मग्गहचरियअमंगलनिमित्तपडिघायहेउं) अशुभसूचक धूमकेतु आदि विविध विपरीत उत्पात, अस्थिसंचय, गर्दभारोहण आदि दुस्स्वप्न, खोटे २ शकुन, क्रूरग्रहदशारूप असौम्यग्रहचरित, अमंगल के निमित्त-भूत अंगस्फुरण आदि इन सबके निवारणके लिये (बहुविहेण पाणाइ-वायकरणेण पायच्छित्ते करेह) अनेक प्रकार से प्राणिहिंसा करो, इसीसे इन सबका प्रायश्चित्त होगा। (वित्तिच्छेयं करेह) हरेक व्यक्ति की जीविका का विनाश करो। (मा देह किंचिदाणं) किसी को भी

અનુલેપનોથી, જલતા તેજસ્વી આરતીના દીપકોથી તથા સુંદરગંધ વાળા ગુગળ આદિ ધૂપથી અને પુષ્પો અને ફળોથી પરિપૂર્ણ તે બલિદાન હોવું જોઈએ. તથા "विवरीउप्पायदुस्सुविणपावसउणअसोम्मग्गहचरियअमंगलनिमित्त पडिघायहेउं" અશુભ સૂચક ધૂમકેતુ આદિ વિવિધ વિપરીત ઉત્પાત, અસ્થિ સંચય, ગર્દભારોહણ આદિ દુસ્વપ્ન, અશુભ શકુન ક્રૂરગ્રહદશારૂપ અસૌમ્ય ગ્રહચરિત અમંગ થવાના નિમિત્તરૂપ અંગળ ફરકવું આદિ અમંગળ બના-વોના નિવારણને માટે "बहुविहेण पाणाइवायकरणेण, पायच्छित्ते करेह" અનેક પ્રકારે પ્રાણીહિંસા કરો, તેથી તે બધા અમંગળોનું નિવારણ થશે. "वित्ति-च्छेय करेह" દરેક વ્યક્તિની આજીવિકાનો વિનાશ કરો "मादेह किंचिदाण"

नतया हतो दुष्टः, अत्र संभ्रमे द्वित्वम्' तथा 'सुट्ठु छिन्नो भिन्नो' सुष्ठु छिन्नो भिन्नश्च स दुर्जनेन इति पूर्वोक्तप्रकारैः 'उवदिसंता' उपदिशन्तः=कथयन्तः 'एवं विहं' एवंविधं=स्वरूपतः सत्यमपि प्राणिनां हिंसाकारणत्वात् परिणामतोऽलीकं 'मणेणं वायाए कम्मुणा य' मनसा-वचसा कर्मणा च त्रिधा 'अलीय' अलीकम्=असत्यं 'करे ति' कुर्वन्ति भाषन्ते इत्यर्थ, कीदृशास्ते अलीकभाषिण ? इत्याह 'अकुसला' अकुशलाः=भाषासमितिविकलाः 'अणज्जा' अनार्याः=म्लेच्छाः

कुछ भी दान मत दो। (सुट्ठुहओ सुट्ठुछिण्णो भिण्णोत्ति) 'तुमने उस दुष्ट को अच्छा मारा, बहुत अच्छा किया जो उसे छिन्न भिन्न कर डाला। (त्ति) इस पूर्वोक्त प्रकार से (उवदिसंता) दूसरों के प्रति कहते हुए मृषावादी जन (एवं विहं) यद्यपि स्वरूप की अपेक्षा अपने वाच्यार्थ से संबंधित होने के कारण-सत्य होने पर भी प्राणि हिंसा के कारण होने से असत्यवाणी को (मणेणं वायाए कम्मुणा) मन से, वचन से और काय से, (अलियं करेंति) अलीक-झूठ बोला करते हैं। तात्पर्य इसका यह है कि अपने अभिधेय(वक्तव्य)से असंबंधित वाणी ही मृषास्वरूप नहीं है किन्तु जिस सत्यवाणीसे पर प्राणियोंको कष्ट हो आपत्तिमें पड़ जाना पड़े उनके प्राणों की हिंसा आदि हो जावे वह वाणी भी असत्य ही है। ऐसी वाणी केवल वचनयोग की अपेक्षा से ही असत्यरूप नहीं मानी जाती है किन्तु वह मन और काय इन अंगोंकी अपेक्षा भी असत्य मानी जाती हैं। इस तरह की असत्यवाणी का जो (अकुसला)

કોઈ ને પણ કંઈ પણ દાન ન આપો " सुट्ठुहओ सुट्ठुछिण्णो भिण्णोत्ति " " તમે તે દુષ્ટને માર્યો તે ઠીક કર્યું, તેને છિન્ન ભિન્ન કરી નાખ્યો તે ઘણું સારૂં કર્યું " " त्ति " આ પૂર્વોક્ત પ્રકારે " उवदिसंता " બીજાને કહેતા તે અસત્ય બોલનારા લોકો " एव विहं " જો કે સ્વરૂપની અપેક્ષાએ પોતાના વાચ્યાર્થ સાથે સાથે સંબધિત હોવાને કારણે-સત્ય હોવા છતા પણ પ્રાણી હિંસાના કારણ રૂપ હોવાથી અસત્યવાદીને " मणेणं वायाए कम्मुणा " મનથી, વચનથી અને કાર્યથી " अलियं करेंति " અલીક-અસત્ય બોલ્યા કરે છે- તેનું તાત્પર્ય એ છે કે પોતાના અભિધેયથી અસંબધિત વાણી જ મૃષાવાદ રૂપ નથી પણ જે સત્ય વાણીથી બીજા પ્રાણીઓને કષ્ટ થાય, આપત્તિમાં મૂકાવુ પડે, તેમનાં પ્રાણોની હિંસા આદી થાય, તે વાણી પણ અસત્ય જ છે એવી વાણી કેવળ વચનયોગની અપેક્ષાએ જ અસત્યરૂપ માનવામાં આવતી નથી પણ તે મનયોગ અને કાયયોગની અપેક્ષાએ પણ અસત્ય મનાય છે આ પ્રકારની અસત્ય વાણી કે જે " अकुसला " ભાષા સમિતિથી રહિત જીવો હોય છે તથા " अलि.

'अलियाणा' अलीकाज्ञाः=अलीका आज्ञा=आगमो येषां ते तथा 'अलियधम्मनिरया' अलीकधर्मनिरताः=असद्धर्मपरायणा· 'अलियासु कहासु' अलीकासु आत्मगुणहानिकरासु कथासु अभिरमन्तः=प्रसीदन्तः 'बहुप्पगारं' बहुप्रकारम् 'अलियं करेउं' अलीकं कृत्वा=भाषित्वा 'तुट्ठा' तुष्टाः=प्रसन्ना भवन्ति ॥सू० १४॥

भाषा समिति से रहित प्राणी होते हैं तथा (अलियाणा) जिनका आगम भी असत्य होता है जो (अलियधम्मनिरया) असत्य धर्म में निरत रहते हैं, तथा (अलियासु कहासु अभिरमंता) आत्मगुण हानि कराने वाली कथाओं में जिनका मन मोद पाता है ऐसे अनार्यजन (बहुप्पगारं अलियं) इन विविध प्रकारके अलीक वचनों को (करेउं तुट्ठा) बोलकर वे भविष्यमें पश्चात्ताप नहीं करते हैं प्रत्युत (उलटे)प्रसन्न होते हैं।

भावार्थ—सूत्रकारने इस सूत्रद्वारा यह प्रकट किया है कि जो प्राणी असत्यभाषण करनेमें ही आनंद मानता है वे किस प्रकारसे बैठे बैठे दूसरे जनोंको प्राणिहिंसा वर्धक कार्यों में उकसाया करते हैं, जब ये किसीकी शालिकी खेतीको पकी हुई देख लेते हैं तो उसके मालिकको चाहे वह माने या न मानें सलाह देते हैं-तुम्हारी यह खेती पक चुकी है, तुम बैठे २ क्या करते हो ? क्यों नहीं जल्दी से जल्दी इसे काटकर और दाय (गाहटा) करके साफसूफ कर अपने घरमें भरकर रख देते हो ?। इसे तो भंडार में भर कर रखनेमें ही लाभ है। ये वणिक् जन बड़े स्वार्थी होते हैं-बाहर परदेशमें नौकाओं से यात्रा कर खूब कमाई

याणा" જેમના આગમ પણ અસત્ય હોય છે જે "अलिय धम्मनिरिया" અસત્ય ધર્મમાં લીન રહે છે, તથા "अलियासु कहासु अभिरमंता" આત્મગુણ હાનિ કરાવનાર કથાઓમા જેમનું મન આનંદ પામે છે એવા અનાર્યજન "बहुप्पगारं अलियं" એ વિવિધ પ્રકારના અલીક વચનો "करेउं तुट्ठा" બોલીને ભવિષ્યમા પશ્ચાત્તાપ કરતા નથી પણ રાજી થાય છે

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્ર દ્વારા એ પ્રગટ કર્યું છે કે જે જીવો અસત્ય બોલવામાં જ આનંદ માને છે જેઓ બેઠા બેઠાં કઇ રીતે અન્ય જીવોને પ્રાણિહિંસા વર્ધક કાર્યો કરવાને ઉશ્કેરે છે જ્યારે તે કોઇના ખેતરમા શાલિ ડાંગરનો પાક તૈયાર થયેલો જુવે છે ત્યારે તે તેના માલિકને તે માને કે ન માને છતા પણ તે સલાહ આપે છે કે આ ડાંગર પાકી ગઈ છે તમે બેસી કેમ રહ્યા છો ? તેને જલ્દી કાપીને, ખળું કરીને, ઉપણીને શા માટે ઘરમા ભરી લેતા નથી ? તેને ઘરમા કોઠારમા જ ભરી રાખવી હિતાવહ છે આ વેપારીઓ ભારે સ્વાર્થી હોય છે. વહાણોમા પરદેશની સફર કરીને તેઓ

करते हैं और फिर बैठे २ खाते हैं, एक अपनलोग हैं जो रात दिन परिश्रम करके भी उदरपूर्ति के लायक साधन सामग्री नहीं जुटा पाते हैं, अतः अच्छा हो इन सबको जब ये नौकाओं द्वारा बाहर जाने लगें तब इनको नष्ट कर दिया जावे। पक्षि समूह भी खेती आदिका बहुत नुकसान करतें है अतः इन्हें भी मार डालो। अमुक जगह पर बड़ा भारी उपद्रव इस समय हो रहा है, सेना वहां जावे और उपद्रवकारियोंको नष्ट कर वहांसे विजयश्री प्राप्तकर लौट आवे तो बहुत अच्छी बात है। इस तरह फिर झगड़ा करनेवाले लोग अपना माथा भविष्यमें ऊँचा नहीं उठा सकेंगे। यदि तुम्हारे पास व्यापार आदिसे इस समय कोई आय (आमदानी)का साधन नहीं है तो गाड़ी वाहन आदिको भाड़ेपर क्यों नहीं चलाते हो चलाओ, इससे ही तुम्हें लाभ होगा देखो उपनयन(जनोइ), चोलक, विवाह यज्ञ आदि जितने भी ये शुभ कृत्य हैं वे ऐसे ही थोड़े किये जाते हैं, इन्हें तो अमुक शुभ दिवसमें, अमुक तिथिमें, ववादि ग्यारह करणों से अमुक शुभ करण में एवं अमुक शुभमुहूर्त्त आदिमें किया जाता है, इसलिये भाई! तुम्हे ऐसा मौका आवे तव तुम इन कृत्यों को शुभ दिवस आदिमें करना। देखो घरमें यह नवीन वहू

ખૂબ નાણા કમાય છે, અને પછી બેઠાં બેઠાં ખાય છે. આપણે જ એવા છીએ કે જે રાત દિનપરિશ્રમ કરવા જતા પણ ભરણપોષણને લાયક વસ્તુ પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી, તો તે બધા જ્યારે નૌકાઓમા સફર કરતા હોય ત્યારે તેમનો નાશ કરવામાં આવે તો ઘણુ સારૂ થાય પક્ષિગણ પણ ખેતીના પાકને ઘણું જ નુકશાન કરે છે, તો તેમને પણ મારી નાખો અત્યારે અમુક જગ્યાએ ભારે તોફાન ચાલે છે, ત્યા લશ્કર જાય અને તોફાનીઓની કતલ કરીને ત્યાંથી વિજય પ્રાપ્ત કરીને પાછું આવે તે બહુ જ ઇચ્છિનીય છે આમ કરવાથી તોફાની માણસો ભવિષ્યમા કદી પણ રાજ્ય સામે માથું ઊચકશે નહીં જો તમારી પાસે વ્યાપાર આદિ આવકનુ કોઇ પણ સાધન ન હોય તો ગાડી, વાહન આદિને ભાડે કેમ ચલાવતા નથી? તે સાધનો ભાડે ચલાવશો તો તમને લાભ થશે. ઉપનયન, ચોલક-મોવાળા ઉતરાવવાની ક્રિયા, વિવાહ, યજ્ઞ આદિ જે શુભ કૃત્યો છે તે એમને એમ થોડાં થાય છે! એ શુભકૃત્યો તો અમુક શુભ દિવસોએ અમુક શુભ તિથિએ, બવાદિ અગ્યાર કરણોમાંથી અમુક શુભ કરણમા. અને અમુક શુભ મુહૂર્ત આદિમા કરવા જોઇએ તો ભાઈ! તમારે ત્યાં પણ એવો અવસર આવે ત્યારે તમે પણ તે કૃત્યો શુભ દિવસ આદિમા કરો, જુવો!

आई है—प्रथम समय जब इसका स्नान करनेका हो तब वह शुभ घड़ी आदिमें ही कराना, इससे इसका सौभाग्य सन्तति एवं समृद्धिकी वृद्धि होगी। इसी तरह प्रसूतिका का जब स्नान कराना हो तब भी इन सब बातों का ध्यान रखना। शुभ कृत्यों को करते समय इस बात का भी पूरा २ ख्याल रखना चाहिये कि उस समय चित्तमें किसी प्रकारकी ग्लानिका भाव न जगने पावे, हर्षविभोर (हर्षमग्न) बन कर ही सब काम किया करो। खूब ठाटबाटसे मद्य, मांसादिकों का उपयोग करो। कौतुक, विस्नापन्न, तथा शांतिकर्म आदि सत्कृत्य अपने जीवन आदि की रक्षा के लिये शशि सूर्यग्रहों पर जब २ राहुद्वारा आक्रमण हो तब २ अवश्य करो। काली आदि देवियों की प्रसन्नता संपादन करनेके लिये बड़े आनन्दके साथ पिष्ट से अपने मस्तककी आकृति बना कर उनके समक्ष बलि चढाया करो। तथा पशुबलि भी चढाओ, बलि चढाते समय खूब उत्सव मनाओ। उनकी आरती उतारो, उस उत्सवमें इच्छानुसार विविध औषधियोंका, वाजीकरण आदि दवाईयोंका भक्ष्यान्नपान माल्यानुलेपन आदि का खूब उपयोग करो। मानवजीवनका यह

ઘરમા નવવધૂ આવી છે, તેને જ્યારે સૌથી પહેલી વખત સ્નાન કરવાનું આવે ત્યારે તે શુભ ઘડિ આદિમા કરાવવુ જોઇએ તેમ કરવાથી તેનું સૌભાગ્ય સંતતિ અને સમૃદ્ધિ વધશે-એ જ પ્રમાણે પ્રસૂતિકાને પણ જ્યારે સ્નાન કરાવવાનું હોય ત્યારે પણ આ બધી બાબતોનુ ધ્યાન રાખવુ જોઈએ શુભકૃત્યો કરતી વખતે તે વાતની પણ પૂરે પૂરી કાળજી રાખવી કે ત્યારે ચિત્તમા કોઇ પણ પ્રકારની ગ્લાનિનો ભાવ ન જાગે, હર્ષવિભોર થઇને જ સઘળાં કામો કર્યા કરો. ખૂબ ઠાઠ માઠથી માંસ મદિરા આદિનો ઉપયોગ કરો. જ્યારે જ્યારે સૂર્ય ચન્દ્ર પર રાહુનું આક્રમણ થાય-ચન્દ્ર કે સૂર્ય ગ્રહણ થાય ત્યારે પોતાના જીવન આદિની રક્ષાને માટે કૌતુક, વિસ્નાપન, શાતિકર્મ આદિ સત્કૃત્યો અવશ્ય કરો. કાલીકા આદિ દેવીને પ્રસન્ન કરવા માટે ઘણા આનંદ પૂર્વક લોટથી પોતાના મસ્તક જેવો આકાર બનાવીને તેમને બલિ આપ્યા કરો, તથા પશુઓનુ બલિદાન પણ આપો, અને આ બલિ અર્પતી વખતે ખૂબ ઉત્સવ મનાવો તેમની આરતી ઉતારો, તે ઉત્સવમાં ઇચ્છાનુસાર વિવિધ ઔષધિઓનો, વાજીકરણ આદિ દવાઓનો, ભક્ષ્યાન્નપાનનો, ફૂલની માળાઓનો અને અનુલેપનોનો ખૂબ ઉપયોગ કરો માનવ જીવનનો આવો સમય વારવાર થોડો જ મલે છે? જ્યારે અશુભસૂચક ધૂમકેતુ આદિ ગ્રહો દેખાય ખરાબ સ્વપ્નાં આવે, ખરાબ

एतावता 'यथाकृत' इति तृतीयद्वारं 'येऽपि च-कुर्वन्ति' इति पञ्चमद्वारं च मिलितमुक्तम्। अथ 'जारिसं फलं देइ' इत्यलीकवचनस्य चतुर्थं फलद्वारमाह—

मूलम्—तस्स य अलियस्स फलविवागं अयाणमाणा वड्ढेंति महब्भयं अविस्सामवेयणं दीहकालबहुदुक्खसंकडं, णरयतिरियजोणिं, तेण य अलिएण समणुबद्धा आइद्धा पुणब्भवंधयारे भमंति भीमे दुग्गइवसहिमुवगया ते य दीसंति इह दुग्गया दुरंता परवसा अत्थभोगपरिवज्जिया असुहिया फुडियच्छवीबीभच्छविवण्णा, खरफरुसविरत्तज्झामज्झुसिरा निच्छाया लल्लविफलवाया असक्कयमसक्कया अगंधा अचेयणा दुब्भगा अकंता काकस्सरा हीणभिन्नघोसा विहिंसा जडबहिरमूया य मम्मणा अकंतविकयकरणा णीया णीयजणणिसेविणो लोगगरहणिज्जा भिच्चा असरिसजणस्स पेस्सा दुम्मेहा लोगवेदअज्झप्पसमयसुइवज्जिया

समय बार २ थोड़े ही मिलता है। जब अशुभसूचक धूमकेतु आदि ग्रह हों, दुःस्वप्न आते होवें, अशुभ शकुन हों, क्रूर ग्रहों की दशावर्त रही हो, अमंगलजनक निमित्त होवें तो ऐसी स्थितिमें इनकी अशुभता दूर करनेके लिये प्राणियोंकी हिंसा प्रायश्चित्त करो। देखो—उसने अपने शत्रु को अच्छा किया जो मार दिया। उसे अच्छा छिन्नभिन्न किया। इत्यादि प्राणि प्राणपीडक वचनों को मृषावादी बोलते हैं और आनंदमग्न बनते हैं॥ सू० १४॥

શુકન થાય, ક્રૂરગ્રહોનીદશા બેઠી હોય, અને અમંગળ જનક નિમિત્તો જણાય ત્યારે તેમની અશુભતા દૂર કરવાને માટે પ્રાણીઓનીતહિંસા દ્વારા પ્રાયશ્ચિત્ત કરો. જુવો! તેણે તેના શત્રુને મારી નાખ્યો તે સારૂં થયું તેને છિન્ન ભિન્ન કર્યો તે સારૂં કર્યું." ઇત્યાદિ પ્રાણી પ્રાણપીડક વચનો તે મૃષાવાદી બોલે છે અને તેમાં આનંદ અનુભવે છે. ॥ સૂ-૧૪ ॥

नरा धम्मबुद्धिवियला अलिएण य तेणय डज्झमाणा असंतएणं अवमाणणपिट्टिमंसाहिक्खेवपिसुणभेयणगुरुबंधवसयणमित्ताऽवक्खारणाऽऽइं अब्भक्खाणादियाइं बहुविहाइं पावंति, अमणोरमाइं हिययमणदूमगाइं जावज्जीवं दुरुद्धराइं, अणिट्ठखरफरुसवयणतज्जणनिब्भच्छणदीणवदणविमणा कुभोयणा कुवाससा, कुवसहीसु किलिस्संता नेव सुहं नेव निव्वुइं उवलभंति अच्चंत विउल दुक्खसय संपलित्ता ॥ सू० ॥१५॥

टीका—'तस्स य' तस्य च 'अलियस्स' अलीकस्य मृषावादस्य–द्वितीयास्रवद्वारस्य 'फलविवागं' फलविपाकं=फलपरिणामं 'अयाणमाणा' अजानन्तः 'महब्भयं' महाभयां=महद्भयं यस्यां सा तथा 'अविस्सामवेयणं' अविश्रामवेदनाम्=निरन्तरपीडां 'दीहकालबहुदुक्खसंकडं' दीर्घकालबहुदुःखसंकटां–दीर्घकालं=पल्यसागरप्रमाणां यावत् विविधदुःखसंकुला 'णिरयतिरियजोणिं' नरकतिर्यग्योनिं

इस तरह यहां तक सूत्रकार ने अलीक भाषणका व्याख्यान "यथा कृत" इस तृतीय द्वार से तथा "येऽपि च कुर्वन्ति" इस पंचम द्वारसे मिलितरूप में किया। अब "जारिसं फलं देइ" इस चतुर्थ द्वारसे वे इसका विवरण करते हैं—'तस्स य' इत्यादि।

टीकार्थ-(तस्स य अलियस्स) उस मृषावादरूप द्वितीय आस्रवद्वारके (फलविवागं) फलरूप विपाक को (अयाणमाणा) नहीं जानते हुए मृषावादीजन (महब्भयं) अत्यंत भयवाली (अविस्सामवेयणं) निरन्तर वेदनावाली तथा (दीहकालबहुदुक्खसंकडं) पल्य तथा सागरोपम प्रमाण काल तक विविध प्रकारके दुःखोंवाली ऐसी (निरयतिरियजोणिं) नरक

આ રીતે અહીં સુધી સૂત્રકારે અલીક ભાષણનું વ્યાખ્યાન "यथाकृत" એ ત્રીજા દ્વારથી તથા "येऽपि च कुर्वन्ति" એ પાંચમાં દ્વારથી એકત્ર રીતે કર્યું હવે "जारिसं फलं देइ" એ ચોથા દ્વારથી તેઓ-તેનું વર્ણન કરે છે "तस्स य" ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—"तस्स य अलियस्स" તે મૃષાવાદ રૂપ બીજા આસ્રવ દ્વારના "फलविवागं" ફળરૂપ વિપાકને "अयाणमाणा" ન જાણતા તે તે મૃષાવાદી લોકો "महब्भयं" અત્યંત ભયંકર "अविस्सामवेयणं" નિરંતર વેદનામય તથા "दीहकालबहुदुक्खसंकडं" પલ્ય તથા સાગરોપમ પ્રમાણ કાળ સુધી વિવિધ પ્રકારના દુઃખો

=नरकतिर्यग्योनिः संख्याऽसख्यकालप्रमाणा, वनस्पत्यपेक्षयाऽनन्तकालप्रमाणा, तत्रोत्पत्तिरूपां 'वड्ढंति' वर्धयन्ति, 'तेण य अलिएण' तेन चालीकेन=असत्य भाषणकर्मणा 'समणुबद्धा' समनुबद्धाः=बन्धं प्राप्ताः 'आइद्धा' आविष्टाः= आश्लिष्टाः 'पुणब्भवंधयारे' पुनर्भवान्धकारे = पुनः पुनर्जन्मैवान्धकारस्तस्मिन् भीमे=भयंकरे 'भमंति' भ्रमन्ति-मृषाभाषिणो जीवाः जन्मजरामरणघोरनिविड़-दुःखान्धकारकान्तारे निपतिताः सन्तो विविधानि कष्टान्यनुभवन्तीत्यर्थः। तथा कथंचित् इह मनुष्यलोके समुत्पन्ना अपि 'दुग्गइवसहिमुवगया' दुर्गतिवसति-मुपगता=क्लेशबहुलस्थितिं प्राप्ता 'दीसंति' दृश्यन्ते। अयं भावः-मृषाभाषिणो नरकतिर्यग्योनिषु समुत्पद्यन्ते। अथ कथञ्चिन्नरकादितो निस्सृत्य मनुष्यशरीरं

तथा तिर्यंच योनिको (वड्ढंति) बढाते हैं। अर्थात् मृषावादी जन मृषा-भाषणसे उत्पन्न पापों के उदयसे पल्यप्रमाणवाली तिर्यंच योनिको तथा उत्कृष्ट तेतीस सागरोपम प्रमाणकालवाली नरकगतिको अपनी उत्पत्ति स्थान बनाते हैं। वहां वे संख्यात काल, असंख्यात काल एवं वनस्पति अपेक्षा अनंतकाल तक रहते हैं। (तेण य अलिएण) उस अलीक भाषणकर्मसे (समणुबद्धा) बंध को प्राप्त हुए (आइद्धा) क्षीर नीरकी तरह परस्पर एक क्षेत्रावगाहरूप संबंध से विशिष्ट हुए वे जीव (पुणब्भ-वंधयारे भीमे) पुनः पुनः जन्मरूप भयंकर अंधकार में (भमंति) भ्रमण करते हैं। अर्थात् जो मृषावादी जन होते हैं वे जन्म, जरा, मरण रूप घोर गाढ अंधकारमें पतित हो कर विविध कष्टों को भोगा करते हैं। तथा (दुग्गइवसहिमुवगया तेय दीसंति) यदि वे कदाच किसी भी तरहसे इस मनुष्यलोकमें उत्पन्न हो जावें तो भी क्लेश बहुल स्थिति

વાળી "निरयतिरियजोणिं" નરક તથા તિર્યંચ યોનિને "वड्ढंति" વધારે છે. એટલે કે મૃષાવાદી લોકો અસત્ય વાણીથી જનિત પાપોના ઉદયથી પલ્ય પ્રમાણવાળી તિર્યંચ યોનિને તથા ઉત્કૃષ્ટ તેત્રીસ સાગરોપમ પ્રમાણ વાળી નરકગતિને પોતાની ઉત્પત્તિનુ સ્થાન બનાવે છે ત્યા તેઓ સખ્યાતકાળ, અસંખ્યાતકાળ અને વનસ્પતિની અપેક્ષાએ અનંતકાળ સુધી રહે છે "तेण य अलिएण" તે અસત્યભાષણ કર્મથી "समणुबद्धा બધાયેલા "आइद्धा" દૂધ અને પાણીની જેમ પરસ્પર એક ક્ષેત્રાવગાહરૂપ સંબધી વિશિષ્ટ થયેલ તે જીવો "पुणब्भवंधयारे भीमे" ફરી ફરીને જન્મ લેવા રૂપ ભયકર અંધકારમાં "भमंति" ભ્રમણ કરે છે, એટલે કે મૃષાવાદી લોકો જન્મ, જરા, અને મરણરૂપ ગાઢ અધકારમા પડીને વિવિધ કષ્ટોને ભોગવ્યા કરે છે તથા "दुग्ग-इवसहिमुवगया तेय दीसंति" જો કદાચ તેઓ કોઇ પણ કારણે મનુષ્ય લોકમાં

प्राप्नुवन्त्यपिचेत् तर्हि हीनदीनतुच्छजातिकुलादिभिः अधन्या एव वक्ष्यमाणरूपेण दुःखबहुलशरीरं प्राप्ता दृश्यन्ते। कथंभूताः? इत्याह—'दुग्गया' दुर्गताः= दुरवस्थां प्राप्ताः सर्वथा दरिद्रा–इत्यर्थः, दुरन्ताः=दुःखेन अन्तः=जीवनस्याव- सानं येषां ते तथा 'परवसा' परवशाः=पराधीनाः 'अत्थभोगपरिवज्जिया' अर्थ भोगपरिवर्जिताः=अर्थाः=धनानि भोगाश्च=शब्दादयो विषयास्तै परिवर्जिताः= रहिताः। तथा 'असुहिया' असुखिताः=सुखरहिता – निरन्तरमाधिव्याध्यादि

को प्राप्त हुए दृष्टिगत होते हैं। तात्पर्य इसका यही है कि मृषावादी जन नरक तिर्यञ्च योनिमें जन्मते हैं। यदि वे किसी तरह नरकादिसे निकल कर मनुष्य भव को प्राप्त कर भी लेवें तो भी वहां वे हीन, दीन, तुच्छ जाति कुल आदि में ही जन्म धारण करते हैं और अधन्य होकर दुःख बहुल शरीर को धारण करते हुए दिखलाई देते हैं। यही बात सूत्रकार (दुग्गया) इत्यादि पदों द्वारा प्रकट कर रहे हैं, वे कहते हैं कि यदि वे किसी प्रकार मनुष्य पर्याय धारण भी कर लेवें तो भी वहां उनकी परिस्थिति ठीक नहीं रहती है–वे सदा (दुग्गया) दारिद्र्यदुःख से सन्तप्त रहते हैं (दुरंता) उनके जीवन का अन्त दुःखों से होता है (परवसा) जीवन भर वे पराधीन बने रहते हैं। (अत्थभोगपरिव- ज्जिया) अर्थ संपत्ति एवं शब्दादिक भोग पनसे, रहित होते हैं। (असुहिया) निरन्तर आधि, व्याधि, उपाधियों से पीडित रहने के कारण उन्हे सुख का अंश भी प्राप्त नहीं होता है। अथवा "असुहिया"

ઉત્પન્ન થાય છે તો પણ અત્યંત દુઃખયુક્ત સ્થિતિમાં નજરે પડે છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે મૃષાવાદી લોકો નરક તિર્યંચ યોનિમાં જન્મ લે છે, પણ તેઓ કોઇ પણ પ્રકારે નરકાદિમાંથી બહાર નીકળીને મનુષ્યભવને પ્રાપ્ત કરે તો પણ ત્યાં તેઓ હીન, દીન, તુચ્છ જાતિ કુળ આદિમાં જ જન્મ પામે છે અને અધન્ય–તિરસ્કૃત થઇને અત્યંત દુઃખયુક્ત દશામા મનુષ્ય જીવન વ્યતીત કરે છે. એ જ વાત સૂત્રકાર "दुग्गया" ઇત્યાદિ પદો દ્વારા પ્રગટ કરે છે. તેઓ કહે છે કે તેઓ કોઈ પણ પ્રકારે મનુષ્ય યોનિમાં જન્મ લે છે તો ત્યાં તેમની હાલત સારી હોતી નથી—તેઓ સદા "दुग्गया" દારિદ્ર્યના દુઃખોથી પીડાય છે, "दुरंता" તેમના જીવનનો અંત દુઃખોથી જ આવે છે, "पर- वसा" આખું જીવન તેઓ પરાધીન દશા ભોગવે છે, "अत्थभोगपरिवज्जिया" અર્થ–સંપત્તિ તથા શબ્દાદિ ભોગથી તેઓ રહિત હોય છે, "असुहिया" નિરં- તર આધિ, વ્યાધિ અને ઉપાધિયોથી પીડાયા કરે છે અને તે કારણે તેમને સુખનો અંશ પણ પ્રાપ્ત થતો નથી, અથવા "असुहिया" ની સંસ્કૃત છાયા "असुहृदः"

पीड़िता, अथवा-असुहृदः=मित्रादिहीनाः 'फुडियच्छवी' स्फुटितच्छवयः= कुष्ठादिभिर्गलितत्वचः 'वीभच्छविवण्णा' वीभत्सविवर्णाः=वीभत्सः=चित्तोद्वेगजनको विरूपो वर्णो येषां ते तथा गलितकुष्ठादिभिर्घृणाजनकशरीरवन्तः, 'खरफरुसविरत्तज्झामज्झुसिरा' खरस्पर्शविरक्तध्यामशुषिराः=खरः=कठोरः स्पर्शो येषां ते खरस्पर्शाः, तथा विरक्ताः=चिन्ताऽऽक्रान्ताः ध्यामाः = कान्तिहीनाः शुषिराः=निस्सारशरीरवन्तश्चेति ते तथा 'निच्छाया' निश्छायाः = गतप्रभाः 'लल्लविफलवाया' लल्लविफलवाचः=लल्लाः=अस्पष्टाः-देशीशब्दोयं अस्पष्टार्थवाचकः, अत एव विफलाः=निष्फलावाचो येषां ते तथा व्यक्तवचनरहिता इत्यर्थः, 'असक्कयमसक्कया' असंस्कृताऽसंस्कृताः=नास्ति संस्कृतं=संस्कारो येषां तेऽसंस्कृतास्तेष्वप्यसंस्कृताः=अत्यन्तसंस्काररहिता अतिमलिनशरीरा इत्यर्थः, अत एव अगंधाः =दुर्गन्धाः=दुर्गन्धदेहाः इत्यर्थः 'अचेयणा' अचेतनाः = विशिष्टचेतनाशून्या

की संस्कृत छाया "असुहृदः" ऐसी भी हो सकती है, इसलिये इसका तात्पर्य मित्रादिकों से वे हीन होते हैं ऐसा भी हो जाता है। (फुडियच्छवी) कुष्ठादिक रोग से इनके शरीर की त्वचा गलित हो जाती है। (वीभच्छविवण्णा) इनका विरूपवर्ण चित्त को उद्वेगकारी होता है, तथा गलित कुष्ठादिसे इनका शरीर घृणित होता है (खरफरुसविरत्तज्झामज्झुसिरा) इनका शरीर कठोर स्पर्श वाला होता है। ये सदा चिन्ताओं से रातदिन घिरे रहते हैं। कान्ति से हीन होते हैं। तथा इनके शरीर में कुछ भी सार-बल-नहीं होता है। (निच्छाया) प्रभा इनकी चली जाती है (लल्लविफलवाया) ये व्यक्त वचन रहित और निष्फल वचन वाले होते हैं (असक्कयमसक्कया) मलिनों से भी ये और अधिक मलिन होते हैं (अगंधा) इसी कारण इनके शरीर में दुर्गंध आया करती है

પણ થઇ શકે છે, તેથી તેનો અર્થ એવો પણ ઘટાવી શકાય કે તેઓ મિત્રાદિ વિનાના હોય છે, "फुडियच्छवी" કોઢ આદિ રોગોથી તેમના શરીરની ત્વચા ગલિત થઇ જાય છે, "विभच्छविवण्णा" તેમનો બેડોળ દેખાવ ચિત્તને ઉદ્વેગકારી થાય છે, તથા ગલિત કોઢ આદિથી તેમના શરીર પ્રત્યે લોકો ઘૃણાની નજરે દેખે છે "खरफरुसविरत्तज्झामज्झुसिरा" તેમનાં શરીરનો સ્પર્શ કઠોર હોય છે, તેઓ સદા ચિન્તાઓથી ઘેરાયેલા રહે છે, સૌંદર્ય રહિત હોય છે, તથા તેમનાં શરીરમાં બિલકુલ તાકાત હોતી નથી, "निच्छाया" તેમનું તેજ ચાલ્યું જાય છે, "लल्लविफलवाया" તેઓ વ્યક્ત-સ્પષ્ટ વચન રહિત અને નિષ્ફળ વચન વાળા હોય છે "असक्कयमसक्कया" તેઓ મલિનો કરતાં

'दुब्भगा' दुर्भगाः=भाग्यहीनाः तथा 'अकंता' अकान्ता=अमनोज्ञाः 'काकस्सरा' काकस्वराः=काकस्य स्वर इव कठोरः स्वरो येषां ते काकस्वराः=नीरसवचनाः 'हीणभिन्नघोसा' हीनभिन्नघोषाः=हीनः=ह्रस्वः भिन्नः=गर्दभवत् त्रुटितः घोषः=स्वरो येषां ते तथा मन्दघुर्घुरितस्वराः 'विहिंसा' विहिंस्याः=जनैस्ताडनतर्जनादिभिर्विशेषेण हिंस्यन्ते ये ते विहिंसकाः 'जडवहिरमूया' जडबधिरमूकाः =जडाः=ज्ञानशून्या वधिराश्च=श्रवणशक्तिविकलाः 'मम्मणा' मन्मनाः=अव्यक्तवचनाः 'अकंतविकयकरणा' अकान्तविकृतकरणाः=अकान्तानि=अमनोज्ञानि विकृतानि=विरूपाणि च करणानि=इन्द्रियाणि चक्षुरादीनि येषां ते तथा विकृतेन्द्रिया इत्यर्थः, 'णीया' नीचाः=नीचजातिकुलगोत्रादिभिरधमाः, 'णीयजण-

---

(अचेयणा) इनकी चेतना शक्ति विशिष्ट चेतना शक्ति से रहित होती है (दुब्भगा) ये भाग्य हीन होते हैं (अकंता) मनोज्ञ नहीं होते हैं (काकस्सरा) काक के स्वर जैसा कठोर-अरुचिकारक-इनका स्वर होता है और वे (हीणभिन्नघोसा) हीन हृस्व, भिन्न-गधे के स्वर की तरह बीच २ में त्रुटित स्वरवाले होते हैं (विहिंसा) मनुष्य इनसे पीछे पड़कर इन्हें ताडन-तर्जन आदि द्वारा विशेषरूप से दुःखित करते रहते हैं (जडबहिरमूया) ये जड-ज्ञानशून्य, बधिर-श्रवण शक्ति विकल और गूँगे होते हैं (मम्मणा) इनके वचन स्पष्टरूप में मुख से नहीं निकलते हैं अर्थात्-बोलते समय तुतलाते अथवा हलकाते हैं। (अकंतविकयकरणा) इनकी चक्षुरादिक इन्द्रियां अमनोज्ञ एवं विकृत रूप रहा करती हैं (णीया) इनकी जाति, कुल एवं गोत्र आदि सब अधम होते हैं,

---

પણ વધારે મલિન હોય છે, "अगंधा" એ કારણે તેમના શરીરમાં દુર્ગંધ આવતી હોય છે, "अचेयणा" તેમની ચેતના શક્તિ વિશિષ્ટ ચેતના શક્તિથી રહિત હોય છે, "दुब्भगा" તેઓ કમનસીબ હોય છે, "अकता" મનોજ્ઞ હોતા નથી, "काकस्सरा" કાગડાના આવાજ જેવો કર્કશ તેમનો આવાજ હોય છે. અને તેઓ "हीणभिन्नघोसा" હીન-હ્રસ્વ, ભિન્ન-ગધેડાના સ્વરની જેમ વચ્ચે વચ્ચે ત્રુટિત સ્વરવાળા હોય છે, "विहिंसा" માણસો તેમની પાછળ પડીને તેમને માર, ક્રોધભર્યા શબ્દો આદિ દ્વારા વધારે દુઃખી કર્યા કરે છે "जडवहिरमूया" તેઓ જડ-જ્ઞાનશૂન્ય બહેરા અને મૂંગા હોય છે, "मम्मणा" તેઓના શબ્દો સ્પષ્ટ હોતા નથી એટલે તે બોલતી વખતે તેઓ તોતડાય છે કે અટકી અટકીને બોલે છે "अकंतविकयकरणा" તેમની ચક્ષુ આદિ ઈન્દ્રિયો અમનોજ્ઞ અને વિકૃત હોય છે, "णीया" તેમની જાતિ, કુળ

णिसेविणो ' नीचजननिषेविणः=जातिगुणकर्मभिर्नीचा ये जनास्तेषां निषेविणः= उत्थानोपवेशनशयनभोजनपानादिभिः सहनिवासिनः ' लोगगरहिणिज्जा ' लोक-गर्हणीया=सकलजननिन्दनीयाः ' भिच्चा ' भृत्याः=भरणीया एवान्यैः तथा 'अस-रिसजणस्स पेस्सा' असदृशजनस्य=असमानशीलस्य-म्लेच्छाचारलोकस्य 'पेस्सा' प्रैष्याः=तदाज्ञाकारकाः ' दुम्मेहा ' दुर्मेधाः=सद्बुद्धिवर्जिताः, ' लोगवेदअज्झ-प्पसमयसुइवज्जिया ' लोकवेदाध्यात्मसमयश्रुतिवर्जिताः श्रुतिशब्दस्य प्रत्येकं सम्बन्धात् लोकश्रुतिः=लोकाभिमतं शास्त्रं भारतादिः, वेदश्रुतिः=ऋग्यजुः सामाथर्व-वेदशास्त्रम् , अध्यात्मश्रुतिः=आत्मस्वरूपनिर्णायकं शास्त्रं, समयश्रुतिः=अर्हत्प्रवचनं ताभिर्वर्जिताः=रहिता ये ते तथा, ' धम्मबुद्धिवियला ' धर्मबुद्धिविकलाः=श्रुत-चारित्रधर्मरहिताः नराः=मनुष्याः ' दृश्यन्ते ' इति पूर्वेण सम्बन्धः । तथा 'तेण य ' तेन च=पूर्वोक्तप्रकारेण ' अलिएण ' अलीकेन=मृषावादेन ' असंतएण '

(णीयजणणिसेविणो) नीच जनों के साथ ही ये उठा बैठा करते हैं और इन्हीं के साथ ये खाते पीते हैं तथा उन्हीं के साथ रहते हैं। (लोग-गरहणिज्जा) समस्त जन इनकी निंदा करते रहते हैं। (भिच्चा) दूसरों के दास होकर रहते हैं (असरिसजणस्स पेस्सा) असमानशील-वाले-म्लेच्छाचार वाले-लोगों के ये दास होते हैं (दुम्मेहा) सद्बुद्धि से ये वर्जित होते हैं (लोगवेयअज्झप्पसमयसुइवज्जिया) लोकश्रुति वेदश्रुति, अध्यात्मश्रुति और समयश्रुति से ये रहित होते हैं। लोकाभि-मत भारत आदि शास्त्रों का नाम लोकश्रुति है। ऋग्वेद, यजुर्वेद, साम-वेद, अथर्ववेद, इनका नाम वेदश्रुति है। आत्मा के स्वरूप के निर्णा-यक शास्त्र अध्यात्मशास्त्र हैं। अर्हत्प्रवचन का नाम समयश्रुति है। (धम्मबुद्धिवियला) श्रुतचारित्ररूप धर्म से विमुख रहते हैं। तथा (तेण

અને ગોત્ર અધમ હોય છે, " णीयजणणिसेविणो " નીચ લોકો સાથે જ તે ઉઠે બેસે છે, તેમની સાથે જ તેઓ ખાય પીવે છે તથા તેમની જ સાથે રહે છે, " लोगगहरणिज्जा " સઘળા લોકો તેમની નિંદા કરે છે " भिच्चा " અન્યના દાસ થઈને રહે છે, " असरिसजणस्स पेस्सा" અસમાન શીલવાળા-મ્લેચ્છા-ચાર વાળા લોકોના તેઓ દાસ થાય છે " दुम्मेहा " તેઓ સદ્બુદ્ધિ રહિત હોય છે, " लोगवेयअज्झप्पसमयसुइवज्जिया " લોકશ્રુતિ, વેદશ્રુતિ અધ્યા-ત્મશ્રુતિ અને સમયશ્રુતિથી તેઓ રહિત હોય છે લોકાભિમત ભારત આદિ શાસ્ત્રોને લોકશ્રુતિ કહે છે, ઋગ્વેદ, યજુર્વેદ, સામવેદ અને અથર્વવેદને વેદશ્રુતિ કહે છે આત્માના સ્વરૂપનું નિર્ણાયક શાસ્ત્ર અધ્યાત્મશાસ્ત્ર છે અર્હંત પ્રવચનને સમયશ્રુતિ કહે છે " धम्मबुद्धिवियला " તેઓ શ્રુતચારિત્ર રૂપ ધર્મથી

असत्केन-असद्रूपेण अथवा अशान्तकेन=अनुपशान्तेन 'डज्झमाणा' दह्यमानाः= प्रज्वल्यमाना 'अवमाणणा पिट्टिममाहिक्खेवपिसुणभेयणगुरुबंधवसयणमित्ताव-क्खारणादियाइं' अपमाननपृष्टिमांसाधिक्षेपपिशुनभेदनगुरुबान्धव स्वजनमित्रापक्षा-रणादिकानि=तत्र अपमाननम्=मानभङ्गः, पृष्टिमांसं=परोक्षे दोषभाषणं, अधिक्षेपः= धिक्कारपूर्वकनिन्दनं, पिशुनभेदनं=पिशुनैः=खलैः भेदनं=प्रेमसम्बन्धविच्छेदनं, गुरुबान्धवस्वजनमित्राणामपक्षारणं=रूक्षवचनैस्तर्जन, अथवा-मित्रादिभिर्बहिष्करणं च एतानि आदि येषां तानि तथा भूतानि, 'अब्भक्खाणाइ' अभ्याख्यानानि= असत्यदोषारोपणवचनानि 'बहुविहाइ' बहुविधानि=नानाप्रकाराणि 'अमणोर-माइं' अमनोरमाणि=मनःप्रतिकूलानि 'हियमणदूमगाइं' हृदयमनोदावकानि

य अलिएण असंतएणं) मृषावादीजन इस असद्रूप अथवा अनुपशान्त मृषावाद से (डज्झमाणा) रातदिन जलते रहते हैं और (अवमाणण-पिट्ठिमंसाहिक्खेवपिसुणभेयणगुरुबंधवसयणमित्ताऽवक्खारणादियाइं) (अवमाणण) अपमान सहन करते हैं। (पिट्ठिमंस) हरएक कोई इनकी पीठ पीछे निंदा करते हैं। (अहिक्खेव) प्रत्येक व्यक्ति इन्हें धिक्कारता रहता है। (पिसुण भेयण) दुष्ट लोग इनके प्रेमसंबंध को विच्छेद करा देते हैं (गुरुबंधवसयणमित्ता) गुरुजन, बंधुजन, स्वजन एवं मित्र (अवक्खारणाइयाइं) रूक्ष वचनों द्वारा इनका अनादर करते हैं-डाटते डपते रहते हैं, अथवा ये सब इन्हें अपने में से बाहर निकाल देते हैं (अब्भक्खाणाइं) चाहे जो मनुष्य इन पर असत्य दोषारोपण कर दिया करता है। इस प्रकार ये लोग असत्यदोषारोपण वचनों को कि जो (बहुविहाइं) नाना प्रकार के होते हैं, (अमणोरमाइं) मन को

વિમુખ રહે છે તથા " तेण य अलिएण असंतएणं " મૃષાવાદીજન આ અસદ્રૂપ અથવા અનુપશાન્ત મૃષાવાદથી " डज्झमाणा " રાતદિન જલતા રહે છે અને " अवमाणणपिट्ठिमंसाहिक्खेवपिसुणभेयणगुरुबंधवसयणमित्ताऽवक्खारणादियाइं " ' अवमाणण " અપમાન સહન કરે છે, " पिट्ठिमंस " દરેક વ્યક્તિ તેની પીઠ પાછળ નિંદા કરે છે, " अहिक्खेव " દરેક વ્યક્તિ તેને ધિક્કારે છે, " पिसुण भेयण " દુષ્ટ લોકો તેમના પ્રેમ સબંધમા ભંગાણ પડાવે છે, " गुरु-बंधवसयणमित्त " ગુરુજન, બંધુજન, સ્વજન અને મિત્ર " अवक्खारणाइ-याइं " કઠોર વચનો દ્વારા તેમનો અનાદર કરે છે-ધાક ધમકી આપતા રહે છે અથવા તે બધા તેમને પોતાની વચ્ચેથી બહાર કાઢી મૂકે છે " अब्भक्खाणाइ " તેમના ઉપર લોકો ગમે તે પ્રકારનું દોષારોપણ કર્યા કરે છે આ રીતે તે લોકો અસત્ય દોષારોપણ કારક વચનો, કે જે " बहुविहाइं " વિવિધપ્રકારનાં હોય છે, " अमणोरमाइं " મનને ન ગમે તેવાં હોય છે, તથા " हियमणदूमगाइं "

=हृदयस्य मनसश्च दावकानि=तापजनकानि 'जावज्जीवं' यावज्जीवं=जीवन पर्यन्तं 'दुरुद्धराइं' दुरुद्धराणि=दुस्तराणि 'पावंति' प्राप्नुवन्ति। पुनः कि मित्याह—'अणिट्ठखरफरुसवयणतज्जणणिब्भच्छणदीणवयणविमणा' अनिष्टखर-फरुपवचनतर्जननिर्भत्सनदीनवचनविमनसः=तत्र अनिष्टेन=अप्रियेण खरपरुषेण= अतिकठोरेण वचनेन यानि तर्जनानि='रे नीच! कथमेवं करोषि' इत्यादि लक्ष-णानि निर्भर्त्सनानि='अरे दुष्टकर्मकारिन्=गृहान्निस्सर दृष्टिपथाद्वा' इत्यादि रूपाणि, तैर्दीनं वदनं=मुखं विकृतं—विषाक्तयुक्तं च मनो येषां ते तथा 'कुभोयणा' कुभोजनाः=कुत्सितम्=अरसविरसं भोजनं येषां ते तथा तुच्छान्नाहारिणः 'कुवाससा' कुवाससः=कुचेलिनः 'कुवसहीसु' कुवसतिषु—कुत्सितस्थानेषु 'किलिस्संता'

नहीं रुचने वाले तथा (हिययमणदूमगाइं) हृदय और चित्त को संता-पजनक होते हैं ऐसे वचन (जावज्जीवं) जीवन पर्यन्त (दुरुद्धराइं) जो इन्हें आघात पहुँचाने वाले होते हैं उनको (पावंति) प्राप्त करते हैं अर्थात् सुना करते हैं। फिर क्या सो कहते हैं-(अणिट्ठखरफरुस वयण-तज्जणणिब्भच्छण दीणवयणविमणा) ऐसे ये लोग अप्रिय, अतिक-ठोर वचनों से तथा-"रे नीच! ऐसा क्यों करता है" इत्यादिरूप तर्जना से, "ओ दुष्टकर्मकारिन्! तू मेरे घर से बाहिर निकलजा-मेरे साम्हने मत आ-यहां से दूर हटजा" इत्यादि हृदय विदारक निर्भर्त्सना से अनादृत हुए ये दीन वदन और विकृत मन वाले तथा (कुभोयणा) अपनी जिन्दगी भर कभी अच्छा भोजन नहीं पाने वाले तुच्छाहारी तथा (कुवाससा) मैले कुचैले वस्त्र पहनने वाले तथा (कु वसहीसु) गन्दी जगहों में रह कर (किलिस्संता) अनेक कष्टों को

હૃદય અને ચિત્તમાં સંતાપ પેદા કરનાર હોય છે તથા "दुरुद्धराइं" જે તેમને આઘાત લગાડનાર હોય છે એવાં ,વચનો "जावज्जीव" જીવે ત્યાં સુધી તેઓ "पावंति" પ્રાપ્ત કરે છે એટલે સાંભળ્યા કરે છે. વળી બીજું શુ બને છે તે કહે છે—"अणिट्ठखरफरुसवयणतज्जणणिब्भच्छणदीणवयणविमणा" તેવા એ લોકો અપ્રિય, અતિ કઠોર વચનોથી તથા "અરે નીચ! આવું કેમ કરે છે?" ઇત્યાદિ પ્રકારની તર્જનાથી, "હે દુષ્ટકર્મકારિન્! તું મારા ઘરમાંથી બહાર નીકળી જા—મારી સામે આવીશ મા—અહીંથી દૂર ચાલ્યો જા" ઇત્યાદિ હૃદય ભેદક નિર્ભર્ત્સનાથી અનાદર પામેલ તે દીન વદનવાળા તથા વિકૃત મન વાળા તથા "कुभोयणा" તથા જીવન પર્યન્ત સારૂં ભોજન પ્રાપ્ત નહીં કરનારા હલકા પ્રકારનું ભોજન પ્રાપ્ત કરનારા તથા "कुवाससा" મેલા તથા ફાટેલાં તૂટેલાં વસ્ત્ર પહેરનારા તથા "कुवसहीसु" ગંદી જગ્યાઓમા રહીને "किलि-

'क्लिश्यन्त'=सन्तप्यमाना अतएव 'अच्चंतविउलदुक्खसयसंपलित्ता' अत्यन्त विपुलदुःखशतसंप्रदीप्ताः=अत्यन्तं विपुलानि विशालानि यानि दुःखशतानि तैः सम्प्रदीप्ताः-प्रतप्ताः='उवलभंति' उपलभन्ते=प्राप्नुवन्ति 'नेवसुहं' नैवसुखं 'नेवनिव्वुइं' नैवनिर्वृतिं=मनः स्वास्थ्यं, किन्तु दुःखमेवानुभवन्तीति भावः। एवं मृषावादफलमुक्तम् ॥ सू० १५ ॥

उठाते हुए (अच्चतविउलदुक्खसयसंपलित्ता) बहुत अधिक कठिन से कठिन सैकड़ों दुःखों से सन्तप्त बने हुए ये लोग (नेवसुहं) न तो कभी सुख पाते हैं और (नेवनिव्वुइं) न कभी निर्वृति-मनः स्वास्थ्य-शांति को (उवलभंति) पाते हैं अर्थात्-रातदिन दुःख भोगा करते हैं। इस प्रकार यह मृषावाद का फल कहा है।

भावार्थ—मृषावाद का फल स्पष्ट करते हुए सूत्रकार कहते हैं कि-मृषवादीजन कभी भी अपने जीवन में सच्ची सुखशांति नहीं पा सकते हैं। ये मृषावाद से उपार्जित पापकर्म के उदय से मरकर तिर्यंच एवं नरकगतिके अत्यंत कठिन दुःखोंको भोगा करते हैं। तिर्यंच योनिमें रहने वाले जीवों की आयु उत्कृष्ट तीन पल्य की वनस्पति की अपेक्षा अनंतकाल की और नरक में रहने वाले जीवों की उत्कृष्ट तेतीस सागर प्रमाण है। इतने काल तक वहां रहकर कष्ट परम्पराओं का अनुभव वे करते रहते हैं। फिर भी जो पाप कर्म भोगने से अवशिष्ट रहता है उसे वे वहां से निकलकर किसी तरह भी मिली हुई मनुष्य पर्याय में भोगते हैं। यहां जो इन्हें मनुष्य पर्याय प्राप्त होती है वह बिलकुल जघ-

---

સ્સંતા" અનેક કષ્ટો સહન કરતા "अच्चंतविउलदुक्खसयसंपलित्ता" ઘણાંજ વધારે આકરામા આકરાં સેંકડો દુ ખોથી દુઃખી બનેલા તે લોકો "नेव-सुहं" કદી પણ સુખ પ્રાપ્ત કરતાં નથી "नेव निव्वुइ" કે કદી પણ નિવૃત્તિ મનની શાન્તિ "उवलभंति" અનુભવતા નથી એટલે કે દિનરાત દુઃખ ભોગ-વ્યા કરે છે, આ પ્રકારનુ મૃષાવાદનું ફળ કહેલ છે.

ભાવાર્થ—મૃષાવાદનુ ફળ બતાવતા સૂત્રકાર કહે છે કે-મૃષાવાદી વ્યક્તિ પોતાના જીવનમાં કદી પણ સાચાં સુખ શાંતિ પામી શકતો નથી. તેઓ મૃષા-વાદથી ઉપાર્જિત પાપકર્મોના ઉદયથી મરીને તિર્યંચ અને નરકગતિના અત્યંત કઠિન દુઃખો ભોગવ્યાં કરે છે. તિર્યંચ યોનિમાં જન્મ પામતા જીવોનું આયુષ્ય ઉત્કૃષ્ટ ત્રણ પલ્યનુ અને વનસ્પતિની અપેક્ષાએ અનંતકાળનું અને નરકની અપેક્ષાએ ઉત્કૃષ્ટ તેત્રીસ સાગર પ્રમાણનું હોય છે એટલો સમય ત્યાં રહીને તેઓ કષ્ટ પરંપરાઓને સહન કરે છે, ત્યાર પછી પણ જે પાપકર્મો ભોગવવાનાં

न्यस्थिति की होती है। उस सर्वथा जघन्य स्थिति को मनुष्य पर्याय में उत्पन्न होकर ये कभी भी थोड़ा आनंद भी नहीं प्राप्त कर सकते हैं। सदा पराधीनता की जंजीरों में जकड़ा जाकर इनका जीवन व्यवहार चलता है। इनकी शारीरिक आकृति दुर्दर्शनीय एवं उद्वेगजनक होती है। कोई भी इनसे मोह ममता नहीं रखता है। हरएक व्यक्ति इनका तिरस्कार करता रहता है। चेतनशक्ति इनकी अविकसित रहा करती है। लक्ष्मी नहीं रहने से ये सदा दुःखी बने रहते हैं। मांगखूंग करके ये जो भी लाते हैं वह रस विरस होता है। भरपेट भोजन इन्हें मिलता नहीं है। वाणी भी इनकी इतनी अच्छी नहीं होती जो दूसरों के चित्त को अपनी ओर आकृष्ट कर सके। काक जैसा कठोर इनका स्वर होता है। गर्दभ जैसी इनकी बोली होती है। कोई २ तो जन्मांध होते हैं। कोई २ बहिरे और गूंगे होते हैं। दुःख में भी इनका साथ देने वाला कोई नहीं होता है। इनकी मित्रता अपने जैसे नीचों से ही होती है। उन्हीं के पास ये उठा बैठा करते हैं। गन्दे स्थानों में इन्हें रहने को मिलता है। सब कोई इनकी निंदा करते हैं। दूसरों के हृदय विदारक शब्दों को सुनकर ये मनोमन दुःखित होकर रह जाते हैं। तात्पर्य यह है

બાકી રહ્યા હોય તેમને ત્યાંથી નીકળીને કોઈ પણ રીતે પ્રાપ્ત થયેલ મનુષ્ય યોનિમાં તેઓ ભોગવે છે તેને જે માનવ પર્યાય પ્રાપ્ત થાય છે તે બિલકુલ જઘન્ય સ્થિતિની હોય છે તે તદ્દન જઘન્ય સ્થિતિની મનુષ્ય પર્યાયમા ઉત્પન્ન થઈને તેઓ કદી પણ થોડો સરખોએ આનંદ પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી તેમનો જીવન વ્યવહાર સદા પરાધીનતાની બેડીમા જકડાઈને ચાલે છે તેમના શરીરનો દેખાવ બેડોળ અને ઉદ્વેગજનક હોય છે તેમના પ્રત્યે કોઈ પણ મોહ અથવા મમતા રાખતું નથી, દરેક વ્યક્તિ તેનો તિરસ્કાર કર્યા કરે છે. તેમની ચેતના શક્તિ અવિકસિત રહે છે લક્ષ્મી નહીં રહેવાથી તે સદા દુઃખી રહે છે. માગી કરીને તે જે કંઇ લાવે છે તે વિરસ હોય છે તેને ધરાઈને ખાવા પણ મળતું નથી. બીજાના ચિત્તને પોતાની તરફ આકર્ષી શકે તેવી મીઠી વાણી પણ તેની હોતી નથી. તેનો સ્વર કાગડા જેવો કર્કશ હોય છે. ગર્દભ જેવી તેની બોલી હોય છે, કોઈ કોઈ તો જન્માધ હોય છે કોઇ બહેરા અને મૂગા હોય છે દુ ખમાં પણ તેને મદદ કરનાર કોઇ હોતુ નથી તેને પોતાના જેવા અધમ લોકો સાથે જ મિત્રતા થાય છે તેમની પાસે જ તે ઉઠે બેસે છે તેમને ગદાં સ્થાનોમાં જ રહેવું પડે છે સૌ તેમની નિંદા કરે છે બીજા લોકો હૃદયવિદારક શબ્દો સાભળીને તેઓ પોતાના મનમા જ દુઃખ અનુભવીને શાંત રહે છે, તાત્પર્ય

अथ प्रकृतद्वारं साकल्येन संकलय्य निगमयति सूत्रकारः 'एसो सो' इत्यादि।

मूलम्—एसो सो अलियवयणस्स फलविवाओ इहलोइओ परलोइओ अप्पसुहो बहुदुक्खो महब्भओ बहुरयप्पगाढो दारुणो कक्कसो असाओ वाससहस्सेहिं मुच्चइणय अवेदयित्ता अत्थि हु मोक्खोत्ति, एवमाहंसु नायकुलनंदणो महप्पा जिणोउ वीरवर नामधेज्जो कहेसीयं अलियवयणस्स फलविवागं, एयं तं बिइयं पि अलियवयणं लहुस्सग लहुचवलभणियं भयंकरं दुहकरं अयसकरं वेरकरं अरतिरतिरागदोसमणसंकिलेसवियरणं अलियनियडिसातियोगं बहुलं नीयजणनिसेवियं निसंसं अप्पच्चयकारगं परमसाहुगरहणिज्जं परपीडाकारगं परमकिण्हलेससहियं दुग्गइविणिवायवड्ढणं भवपुणब्भवकरं चिरपरिचियमणुगयं दुरंतं त्तिबेमि ॥ सू० १६ ॥

॥ बिइयं अधम्मदारं समत्तं ॥ २ ॥

टीका—'एसो सो' एष स 'अलियवयणस्स' अलीकवचनस्य 'फलविवाओ' फलविपाकः 'इहलोइओ' ऐहलौकिकः=मनुष्यभवापेक्षया 'परलोइओ'

कि दुःखों के जितने प्रकार हैं वे सब भयंकर से भयंकर इन्हें भोगना पड़ता है। उस स्थिति में इनका कोई साथी नहीं होता है ॥ सू-१५ ॥

अब सूत्रकार इस अलिकवचन द्वार का संपूर्णरूप से संकलन करके फलितार्थ कहते है-'एसो सो' इत्यादि।

टीकार्थ-(एसो सो अलियवयणस्स फल विवाओ) अलीक वचनका यह जो मनुष्यगति की अपेक्षा इहलोक संबंधी तथा नरक निगोदगति की

એ છે કે દુઃખોના ભયંકરમાં ભયંકર જે પ્રકારો છે, તે તેમને ભોગવવા પડે છે એ સ્થિતિમાં તેમનું કોઈ સાથીદાર હોતું નથી ॥સૂ-૧૫॥

હવે સૂત્રકાર આ દ્વારનુ સંપૂર્ણ રીતે સંકલન કરીને ફલિતાર્થ બતાવે છે—"एसो सो" ઈત્યાદિ,

ટીકાર્થ-"एसो सो अलियवयणस्स फलविवाओ" અલીક વચનનો મનુષ્યગતિની અપેક્ષાએ આલોક સંબંધી તથા નરકગતિની અપેક્ષાએ પરલોક સંબંધી આ જે ફલ-

पारलौकिकः=नरकाद्यपेक्षया 'अप्पसुहो' अल्पसुखः=सुखवर्जितः 'बहुदुक्खो' दुःखबहुलः 'महब्भओ' महाभयः=महाभयजनकः 'बहुरयप्पगाढो' बहुरजः प्रगाढः=प्रचुरकर्मरजोभिः सम्भृतः दारुणः=भीषणः 'कक्कसो' कर्कशः=कठोरः 'असाओ' अशातः=असुखोऽशातकर्मवेदनीयस्वरूपः इत्येवंविधः फलविपाकः 'वाससहस्सेहिं' वर्षसहस्रैः=पल्योपमसागरोपमप्रमाणकालैः 'मुच्चइ' मुच्यते=क्षीयते। तदेवव्यतिरेकमुखेनाह-'णय' न च तं फलविपाकम् 'अवेदयित्ता' अवेदयित्वा=अनुपभुज्य उपभोगं विनेत्यर्थः, 'हु' निश्चयेन 'मोक्खो' मोक्षः 'अत्थि' अस्ति 'त्ति' इति शब्दः समाप्तिसूचकः। एतस्यार्थस्य साक्षात्प्रमाणभूतपरमात्मप्रतिपादितत्वेन प्रमाण्यनिरूपणाय प्रमाणयन्नाह-'एवमाहंसु' इत्यादि, एवम्=

अपेक्षासे परलोक संबंधी फलरूप विपाक कहा गया है, उससे यह अच्छी तरह ज्ञात हो जाता है कि यह (अप्पसुहो) सुखवर्जित एवं (बहुदुक्खो) दुःख बहुल है। (महब्भओ) महाभयजनक, और (बहुरयप्पगाढो) प्रचुर कर्मरूपी रज से भरा हुआ है। (दारुणो) दारुण तथा (कक्कसो) कठोर है। और (असाओ) असाता वेदनीय कर्म स्वरूप है। (वाससहस्सेहिं मुच्चइ) यह फलविपाक जीव पल्योपम एवं सागरोपमप्रमाण कालतक भोगा करता है तभी जाकर उससे यह छुटकारा पाता है, अर्थात् वह फलरूप विपाक नष्ट हो पाता है। (णय अवेदयित्ता हु मोक्खो अत्थि त्ति) भोगे विना जीव इससे मुक्त नहीं होता है। यहां (त्ति) यह समाप्ति अर्थ का सूचक है।

अब सूत्रकार इस अर्थ में साक्षात् प्रमाणभूत परमात्मा द्वारा प्रतिपादित होनेके कारण प्रमाणभूतता प्रकट करने के लिये कहते हैं-(एव-

रूप विपाक बताववामां आव्यो छे तेनाथी ते सारी रीते जाणवा मळे छे के ते 'अप्पसुहो' सुखवर्जित अने "बहुदुक्खो" अत्यंत दुःखमय छे "महब्भओ" महा भयजनक, अने "बहुरयप्पगाढो" प्रचूर कर्मरूपी रजथी भरपूर छे "दारुणो" दारुण तथा "कक्कसो" कठोर छे अने "असाओ" असाता वेदनीय कर्म स्वरूप छे "वाससहस्सेहिं मुच्चइ" ते फलविपाक पल्योपम अने सागरोपम प्रमाण काळ सुधी जीव भोगव्या करे छे, त्यारे ज ते तेमाथी छूटी शके छे, एटले के ते फलरूप विपाक एटला लांबा समये नष्ट थाय छे "णय अवेदयित्ता हु मोक्खो अत्थि त्ति" ते फलविपाक भोगव्या विना जीव तेनाथी मुक्त थई शकतो नथी अहीं "त्ति" ते समाप्ति अर्थनो सूचक छे

हवे सूत्रसार आ अर्थमा प्रत्यक्ष प्रमाणभूत परमात्मा द्वारा प्रतिपादित होवाने कारणे, प्रमाणभूततां दर्शाववाने माटे कहे छे-"एवमाहंसु" आ पूर्वोक्त रीते तीर्थंकर गणधरादिक देवोए तथा "नायकुलनंदणो महप्पा जिणो वीरवर

उक्तरीत्या 'आहंसु' ऊचुस्तीर्थङ्करगणधरादयः। तथा तदनुसारेणैव 'नायकुलनंदणो' ज्ञातकुलनन्दनः = सिद्धार्थकुलानन्दकरः, 'महप्पा' महात्मा= परमात्मरूपः 'जिणो' जिनः वीरवरनामधेज्जो' वीरवरनामधेयः प्रख्यातनामा भयवान् महावीर इमम् 'अलियवयणस्स' अलीकवचनस्य 'फलविवागं' फलविपाकं 'कहेसी' कथितवान्। एवं 'तं' तत् पूर्वोपदर्शितस्वरूपम् 'अलियवयणं' अलीकवचनं 'लहुस्सग लहु चवलभणियं' लघुस्वकलघुचपलभणितं=लघुस्वकाः= तुच्छात्मानश्च ते लघवः अतिनीचाश्चपलाश्च तै र्भणितं= जल्पितं 'भयकरं' भयङ्करं 'दुहकरं' दुःखकरं 'अयसकरं वेरकरं' अयस्करं वैरकरम्, 'अरतिरतिरागदोसमणसंकिलेसवियरणं' अरतिरतिरागद्वेषमनः संक्लेशवितरणम्, 'अलियनियडिसातिजोगवहुलं' अलीकनिकृतिसातियोग बहुलं 'नीयजणनिसेवियं' नीचजननिषेवितं 'निसंसं' नृशंसम् 'अपच्चयकारगं'

माहंसु) इस पूर्वोक्त रीतिसे तिर्थंकर गणधरादिक देवोंने तथा (नायकुलनंदणो महप्पा जिणो वीरवरनामधेज्जो) उन्हीं के अनुसार ज्ञातकुलनंदन सिद्धार्थकुलके आनंदकारक-परमात्मस्वरूप, जिन महावीरने कि जिनका "वीर" यह उत्तम नाम प्रख्यात है उन्होंने (इमं अलियवयणस्स फलविवागं कहेंसी) यह मृषावादका फल बतलाया है। अब उपसंहार करते हैं- (एयं तं वितियं पि अलियवयणं) इस द्वितीय अलीक वचन को जो (लहुसगलहुचवलभणियं) लघुस्वक-तुच्छात्मा होते हैं अतिनीच एवं चपल होते है वे ही बोलते हैं। (भयंकरं) यह अलीक वचन भयंकर, (दुहकरं) दुःखकर, (अजसकरं) अयस्कारक, (वेरकरं) वैरकारक, (अरतिरतिरागदोसमणसंकिलेसवियरणं) अरति, रति, राग, द्वेष और मनः संक्लेश प्रदाता है। (अलियनियडिसाइजोगबहुलं) अलीक-

---

नामधेज्जो" तेमना प्रमाणे ज ज्ञातकुलनंदन सिद्धार्थना कुळने आनंददायक परमात्मास्वरूप, जिन महावीरे के जेमनुं "वीर" ए उत्तम नाम प्रख्यात छे, तेमणे "इमं अलियवयणस्स फलविवागं कहेसी" आ मृषावादनुं स्वरूप बताव्युं छे हवे सूत्रकार उपसंहार करे छे—"एयं तं विइय पि अलियवयणं" आ द्वितीय द्वार रूप अधर्म वचनने जे "लहुसगबहुचवलभणिय" लघुस्वक-तुच्छात्मा होय छे, जे अति नीच अने चचळ होय छे तेओ ज बोले छे. "भयकरं" ते असत्यवचन भयकारक, "दुहकरं" दुःखकर, "अजसकरं" अपकीर्तिकारक, "वेरकरं" वैरकारक, "अरतिरतिरागदोसमणसंकिलेसवियरणं" अरति, रति, राग, द्वेष अने मनने क्लेश करनार छे. "अलियनियडिसाइजोगबहुलं" अलीक—निष्फळ छे, निकृति, सातिना प्रयोगथी युक्त

अप्रत्ययकारकं, 'परमसाहुगरहणिज्जं परमसाधुगर्हणीयं परपीडाकारकं 'परमकिण्हलेससहियं' परमकृष्णलेश्यासहितं 'दुग्गइविणिवायवड्ढणं' दुर्गतिविनिपातवर्द्धनं 'भवपुणब्भवकरं 'चिरपरिचियं' चिरपरिचितम्, 'अणुगय' अनुगतम्, 'दुरंत' दुरन्तम्। एतानि सर्वाणि पदानि पूर्वमस्यैव द्वारस्य प्रथमसूत्रे व्याख्यातानि ततो विज्ञेयम्। 'त्तिबेमि' पूर्ववत् ॥सू० १६॥

इतिश्री-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्य श्री घासीलालव्रतिविरचितायां
प्रश्नव्याकरणसूत्रस्य सुदर्शिन्याख्यायां व्याख्यायां
हिंसादि पञ्चास्रवद्वारेषु मृषावादाख्यं द्वितीयम्-
आस्रव (अधर्म) द्वारं समाप्तम् ॥२॥

निष्कृत है निकृति, साति के प्रयोग से बहुल है अर्थात् कपट बहुल है। (णीयजणनिसेवियं) जाति, कुल आदि से अधम बने हुए व्यक्तिओं द्वारा निषेवित है। (निसंसं) क्रूर-अथवा प्रशंसा से रहित है। अप्रत्यय-अविश्वास का कारक है। (परमसाहुगरहणिज्जं) परमसाधु-तीर्थंकरों द्वारा गर्हणीय है। (परपीडाकरणं) दूसरों को पीड़ा पहुंचाने वाला है। (परमकिण्हलेससहियं) अत्यन्तमलिन आत्म परिणति से युक्त है (दुग्गइविणिवायवड्ढणं) दुर्गति का वर्धक है। (भवपुणब्भवकरं) पुनः पुनः जन्म प्रदाता है। (चिरपरिचयं) चिरपरिचित् यह जीवों के साथ अनेक भवों की परम्परा तक रहनेवाला है। (अणुगयं) भव भव में साथ चलने वाला है। (दुरंतं) इसका फल दुरन्त-कटुफलका देने वाला है"त्ति बेमि" इसकी व्याख्या की जा चुकी है॥सू-१६॥

॥ द्वितीय आस्रव—'अधर्म' द्वार समाप्त ॥

છે એટલે કે કપટ મય છે "णीयजणनिसेवियं" જાતિ, કુળ આદિથી અધમ એવી વ્યક્તિઓ દ્વારા સેવાયેલ છે "निसंस" ક્રૂર-એટલે કે પ્રશંસાથી રહિત છે अप्रत्यय-અવિશ્વાસ ઉત્પન્ન કરનાર છે. "परमसाहुगरहणिज्जं" પરમસાધુ-તીર્થંકરો દ્વારા નિંદ્ય છે. "परपीडाकरणं" બીજાને પીડા પહોંચાડનાર છે. "परमकिण्हलेससहियं" અત્યંત મલિન આત્મ પરિણતિથી યુક્ત છે. "दुग्गइविणिवायवड्ढणं" દુર્ગતીનું વધારનાર છે. "भवपुणब्भवकरं" ફરી ફરીને જન્મ લેવડાવનાર છે "चिरपरिचियं" ચિરપરિચિત્ એવુ તે જીવોની સાથે અનેક ભવોની પરંપરા સુધી રહેનાર છે "अणुगयं" દરેક ભવમાં સાથે ચાલનારૂં છે "दुरंत" તેનું ફળ દુરન્ત છે-કટુ ફલ દેનાર છે. "त्तिबेमि" આ વાકયનો અર્થ આવી ગયો છે (સૂ-૧૬)

આ રીતે હિંસાદિ પંચાસ્રવ દ્વારમાં પ્રાણવધ નામનું
બીજું આસ્રવ (અધર્મ)દ્વાર સમાપ્ત થયું.

अथ तृतीयमध्ययनम् ।

व्याख्यातं द्वितीयमधर्मद्वारं सांप्रतं तृतीयमारभ्यते–अस्य च पूर्वेण सहायमभिसम्बन्धः । द्वितीयाधर्मद्वारे यादृशनामादिनिर्देशपुरस्सरमलीकवचनस्वरूपमुक्तम् । अलीकवचनं च अदत्ताऽऽदायिनो वदन्त्येवेति हेतोः सूत्रक्रमनिर्देशानुसाराच्च मृषावादानन्तरमुचितप्राप्तमदत्तादानं स्वरूपनामादिनिर्देपपूर्वकं प्रदर्श्यते, तत्र पूर्वयोरधर्मद्वारयोरिवास्यापि 'यादृक् १, यन्नाम २, यथा च कृतं ३, यत्फलं ददाति ४, ये च कुर्वन्ति ५, इति पञ्चभिरन्तर्द्वारैर्निरूपणं चिकीर्षुरादौ क्रमप्राप्तं 'यादृश' इति द्वारमाश्रित्य अदत्तादानस्वरूपं निरूप्यते–'जंबू तइयं च' इत्यादि

तृतीय आस्रव-(अधर्म) द्वार प्रारंभ–

द्वितीय आस्रव-(अधर्म) द्वार कहा गया, अब तृतीय आस्रवद्वार की व्याख्या प्रारंभ होती है । इस अधर्मद्वार का पूर्व अधर्मद्वार के साथ इस प्रकार से संबंध है कि-द्वितीय आस्रव-(अधर्म) द्वार में (यादृशनामादि निर्देश पूर्वक) अलीक (झूठ)वचनका स्वरूप कहा है सो इस अलीक वचन को जो अदत्त को लेने वाले व्यक्ति होते हैं, वे ही बोलते हैं तथा सूत्रक्रम निर्देश भी ऐसा ही है, इसलिये मृषावाद के अनन्तर उचितरूप से प्राप्त अदत्तादान का स्वरूप नामादि निर्देशपूर्वक इस अध्ययन में कहा जावेगा । जिस प्रकार पूर्व दो आस्रव (अधर्म) द्वारों का सूत्रकार ने (यादृश यन्नाम) इत्यादि पांच अन्तर्द्वारों द्वारा निरूपण किया है उसी तरह से वे इस तृतीय आस्रव (अधर्म) द्वार का भी निरूपण करना चाहते हैं इसलिये वे सर्व प्रथम इसमें क्रम प्राप्त अदत्तादान का (यादृश) इस द्वार को लेकर स्वरूप कहते हैं—

ત્રીજા આસ્રવ–અધર્મ દ્વારનો પ્રારંભ

બીજા આસ્રવ-(અધર્મ) દ્વારનું કથન પૂરૂં થયું, હવે ત્રીજા આસ્રવ દ્વારનું વર્ણન શરૂ થાય છે. આ અધર્મદ્વારનો આગળનાં અધર્મદ્વાર સાથે આ રીતે સબંધ છે—બીજા આસ્રવ-(અધર્મ) દ્વારમાં " यादृशनामादि निर्देशपूर्वक " અલીક વચનનું સ્વરૂપ પ્રગટ કરવામાં આવ્યું છે પણ તે અલીક વચનો અદત્ત દીધેલું લેનારી વ્યક્તિ જ બોલે છે, તથા સૂત્રક્રમ નિર્દેશ પણ એવો જ છે, તે કારણે મૃષાવાદનું નિરૂપણ કર્યા પછી યોગ્ય રીતે અદત્તાદાનનું સ્વરૂપ નામાદિ નિર્દેશ પૂર્વક આ અધ્યયનમાં બતાવવામાં આવશે જેમ આગળના બે આસ્રવ-(અધર્મ) દ્વારોનું સૂત્રકારે "यादृश यन्नाम"ઇત્યાદિ પાંચ અન્તર્દ્વારો દ્વારા નિરૂપણ કર્યું છે, એજ પ્રમાણે તેઓ આ ત્રીજા આસ્રવ (અધર્મ) દ્વારનું પણ નિરૂપણ કરવા માગે છે. તેથી તેઓ સૌથી પહેલાં ક્રમ પ્રમાણે

मूलम्-जंबू तइयं च अदिण्णादाणं हरदहमरणभयकलुस तासणपरसंतगगिज्झलोभमूलं कालविसमसंसियं अहो अच्छिन्नं तण्हपत्थाणपत्थोइमइयं अकित्तिकरं अणज्जं छिद्दमंतरविधुरवसणमग्गणउस्सवमत्तप्पमत्तपसुत्तवंचणाऽऽ-खिवणघायणपराऽणिहुयपरिणामतक्करजणबहुमयं अकलुणं रायपुरिसरक्खियं सयासाहुगरहणिज्जं पियजणमित्तजण-भेदविप्पीइकारगं रागदोसबहुलं पुणो य उप्पूरसमरसं-गामडमरकलिकलहवहकरणं दुग्गइविणिवायवड्ढणं भवपुण-ब्भवकरं चिरपरिचियं अणुगयं दुरंतं तइयं अधम्मदारं॥सू०१॥

टीका—हे जम्बू ! 'तइयं' तृतीयमास्रवद्वारं 'अदिण्णादाणं' अदत्तादानम्=अदत्तस्य=देव-गुरु-राज-गाथापति-साधर्मिभिरसमर्पितस्य सचित्ताचित्त-मिश्रवस्तुविशेषस्य आदानं=ग्रहणमदत्तादानं नाम चौर्यमित्यर्थः। कीदृशं तदित्याह 'जंबू ! तइयं' इत्यादि।

टीकार्थ—जंबूस्वामी श्री सुधर्मा स्वामी से पूछते हैं कि-हे भदंत ! तृतीय आस्रव द्वार का सिद्धिगति को प्राप्त हुए श्री महावीर प्रभुने क्या स्वरूप कहा है ? इसका उत्तर देते हुए श्री सुधर्मा स्वामी उनसे कहते हैं कि (जंबू) हे जंबू ! (तइयं च अदिण्णादाण) तृतीय अदत्ता-दान का स्वरूप सिद्धिगति स्थान को प्राप्त हुए श्री महावीर ने इस प्रकार कहा है। अदत्त का-देव, गुरु, राजा, गाथापति और साधर्मी द्वारा नहीं समर्पित की गई वस्तु का-आदान-ग्रहण करना इसका नाम अद-

અદત્તાદાનનું "યાદૃશ" એ દ્વારને લઈને સ્વરૂપ કહે છે "जंबू ! तइय" ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—જંબૂ સ્વામી શ્રી સુધર્માસ્વામીને પૂછે છે કે હે ભદન્ત ! સિદ્ધિ ગતિ પામેલ શ્રી મહાવીર પ્રભુએ ત્રીજા આસ્રવદ્વારનું કેવુ સ્વરૂપ કહેલ છે? તેનો ઉત્તર આપતા શ્રી સુધર્મા સ્વામી તેમને કહે છે કે-હે જમ્બૂ ! 'तइयं च अदिण्णादाणं" સિદ્ધિગતિને પામેલ શ્રી મહાવીર પ્રભુએ અદત્તાદાનનું આ પ્રકારનું સ્વરૂપ કહેલ છે-

અદત્તનું-દેવ, ગુરુ, રાજા, ગાથાપતિ અને સાધર્મી દ્વારા અર્પણ ન કરાયેલ વસ્તુનું-આ દાન-ગ્રહણ કરવુ તેને અદત્તાદાન કહે છે તે કેવું હોય છે?

—'हरदहे 'त्यादि—

'हरदहमरणभयकलुसतासणपरसंतगगिज्झलोभमूलं' हरदहमरणभयकलुषत्रासनपरसत्कगृद्धिलोभमूलं, तत्र हर=हरणं कुरु, दह=गृहादिकं भज्वालय, इति वचनद्वयं हरणदाहविषये चोराणां प्रवृत्तिकारकम्। तथा मरणं मृत्युः भयं=भीतिः कलुषं च=पापं तैस्त्रसवं—भयजननस्वरूपं यस्य ततथा, तच्च परसत्कगृद्धिलोभमूलं च=परसत्के=परकीयधने गृद्धिः=आसक्तिः तथा लोभश्च—रौद्रध्यानयुक्ता-मूर्च्छा मूलं=कारणं यस्य ततथा 'कालविसमसंसियं' कालविषमसंश्रितं च=कालः अर्धरात्रादिलक्षणः, विषमाणि पर्वतादिदुर्गमस्थानानि तैः संश्रितम् = आश्रितं यत्तथा। एतादृशेषु निर्जनस्थानेषु चौराः प्रायो निवसन्ति। तथा 'अहोअच्छि-

---

त्तादान है। यह कैसा होता है? इस पर कहते हैं—यह अदत्तादान (हरदहमरणभयकलुस तासणपरसंगगिज्झलोभमूलं) (हर) इसके द्रव्य का हरण करलो, (दह) इसके गृहादिक को जलादो, (मरण) इसे मार डालो, इत्यादि रूपसे (भय) भय दिखाकर दूसरों के द्रव्यादि का हरण करना, (कलुस) एक दूसरों में कलुषभाव जगाकर उनके द्रव्यादिक को ले लेना, (तासण) इत्यादि अनेक प्रकारसे त्रास पहुँचाना, तथा (परसंतग) दूसरों के धन में (गिज्झ) आसक्ति रखना तथा (लोभ) रौद्रध्यानसे युक्त इसमें मूर्छाभाव रखना, ये सब (मूलं) अदत्तादान के मूल कारण है। (कालविसमसंसियं) अर्धरात्र आदि काल तथा विषम—पर्वतादि दुर्गमस्थान. इनके द्वारा यह अदत्तादान संश्रित—आश्रित होता है—बनता है, तात्पर्य इसका यह है कि जो अदत्तादान—चोरी—किया करते हैं, वे चोर प्रायः अर्धरात्रि के समय में निकलते हैं, एवं पर्वतादि दुर्गम स्थानों पर छिपे रहते हैं, इस अपेक्षा काल और

તો તેના જવાબમા કહે છે—તે અદત્તાદાન "हरदहमरणभयकलुसतासण-परसतगगिज्झलोभमूलं" "हर" "આ વ્યક્તિનુ દ્રવ્ય પડાવી લો "दह" તેના ઘર આદિને સળગાવી દો, "मरण" તેને મારી નાખો" ઇત્યાદિ રીતે "भय" ભય બતાવીને અન્યનું દ્રવ્ય વસ્ત્ર આદિ હરી લેવું, "कलुस" એક બીજા વચ્ચે કલેશ જગાડીને તેમના દ્રવ્ય આદિને લઈ લેવું, "तासण" ઇત્યાદિ રીતે ત્રાસ પહોંચાડવો, તથા "परसंतग" બીજાના ધનમાં "गिज्झि" આસક્તિ રાખવી તથા "लोभ" રૌદ્રધ્યાનથી યુક્ત મૂર્છાભાવ તેમાં રાખવો, તે બધાં "मूलं" અદત્તાદાનના મૂળ કારણો છે "कालविसमसंसियं" અર્ધરાત્રી આદિ કાળ તથા પર્વતાદિ દુર્ગમસ્થાન તે અદત્તાદનનાં આશ્રય સ્થાનો છે, એટલે કે જે અદત્તાદાનચોરી કરે છે તે ચોર સામાન્ય રીતે મધ્યરાત્રે ચોરી કરવા નીકળે છે, અને પર્વતાદિ દુર્ગમ સ્થાનોમા છૂપાઇ રહે છે, તે અપેક્ષાએ કાળ

न्नतण्हपत्थाणपत्थोइमइयं' अधोऽच्छिन्नतृष्णप्रस्थान-प्रस्तोतृमतिकं = अधोगतौ अच्छिन्नतृष्णानां=विषयलोलुपानां यत् प्रस्थानं=गमनं तत्र प्रस्तोत्री=प्रवर्तिका मतिः = बुद्धिरस्ति यस्मिन्नदत्तादाने तत्तथा नरकाद्यधोगतिकारणमित्यर्थः, 'अकित्तिकरं' अकीर्तिकरम्=अयशस्करम् 'अणज्जं=अनार्यम् = अनार्याचरितत्वात् अथवा अन्यायं=न्यायवर्जितं न्यायरहितमित्यर्थः 'छिद्दमंतरविधुरवसणमग्गण-उस्सवमत्तप्पमत्त-पसुत्तवंचणाक्खिवण-घायणपराणिहुय-परिणामतक्करजणबहुमयं' छिद्रान्तरविधुरव्यसनमार्गणोत्सवमत्तप्रमत्तप्रसुप्तवञ्चनाऽऽक्षेपणघातनपरानिभृतपरि-णामतस्करजनबहुमतं=तत्र छिद्रं = 'केन मार्गेण गन्तव्य' मित्यादिकम्, अन्तरम्=अवसरः जनानां निद्रादिलक्षणः, विधुर = अपायः कष्टप्राप्त्यादिलक्षणः,

---

विषमस्थानों को अदत्तादान का कारण कहा गया है। (अहो अच्छिन्नतण्हपत्थाणपत्थोइमइय) जिन व्यक्तियों की विषय तृष्णा छिन्न नहीं होती है ऐसे व्यक्ति ही अधोगति में पहुँचाने वाली अपनी बुद्धि के द्वारा इस अदत्तादान में प्रवृत्ति करते हैं, अतः अधोगति में गमन की कारणभूत जो विषय लोलुपों की मति है वह भी इस अदत्तादान की एक कारणभूत है। यह अदत्तादान (अकित्तिकरं) अयश कारक है। (अणज्जं) अनार्यो द्वारा ही आचरित किया जाता है इसलिये अनार्यरूप है। अथवा नीतिमार्ग से विरुद्ध होने के कारण अन्यास्य है। (छिद्दं) इस अदत्तादानको करने वाले व्यक्ति इस बातकी गवेषणामें रहते हैं कि हमें इस कामको करनेके लिये किस मार्गसे होकर जाना चाहिये तथा (अंतर) अन्तर की-कौनसा अवसर इस कामको सिद्ध करनेवाला होगा इस तरहके मनुष्योंके निद्रादिरूप समयकी (विधुर) विधुरकी-कष्ट

અને દુર્ગમસ્થાનોને અદત્તાદાનનાં આશ્રયસ્થાનો બતાવ્યા છે 'अहो अच्छिन्न-तण्हपत्थाणपत्थोइमइयं" જે લોકોની વિષય વાસના નષ્ટ થતી નથી એવા લોકો જ અધોગતિમાં લઈ જનાર પોતાની બુદ્ધિ દ્વારા આ અદત્તાદાનમાં પ્રવૃત્ત રહે છે, તેથી અધોગતિમા ગમન કરવાના કારણરૂપ વિષય લોલુપોની જે મતિ છે તે પણ આ અદત્તાદાન માટે કારણરૂપ છે, ને અદત્તાદાન "अकित्ति-करं" અપકીર્તિ અપાવનાર છે, "अणज्जं" અનાર્યોદ્વારા સેવાતુ હોવાથી અનાર્યરૂપ છે, અથવા નીતિ માર્ગથી વિરુદ્ધ હોવાથી અન્યાયયુક્ત છે. "छिद्दं" આ અદત્તાદાન સેવનાર વ્યક્તિ એ વાતની શોધમાં રહે છે કે આ કામ કરવા માટે આપણે કયા માર્ગે થઈને જવું જોઈએ તથા "अंतर" અંતરની-કયો વખત આ કામને સિદ્ધ કરવા માટે અનુકૂળ થશે તેની શોધમાં રહે છે આ રીતે માણસના નિદ્રાદિરૂપ સમયની શોધમાં

व्यसनं=राजादि कृतोपद्रवः, इत्येतेषां मार्गणम्=गवेषणम् , तथा उत्सवेषु=विवाहादिलक्षणेषु मत्तानां=मद्यपानाद्यासक्तानां अत एव प्रमत्तानाम्=असावधानानां प्रसुप्तानां=निद्रितानां च वञ्चनं=धनापहरणं, तथा आक्षेपणं=मन्त्रौषध्यादिभिश्चित्तविक्षेपकरणं, घातनं=प्राणवियोजीकरणं वयस्यादिभिस्ताडनं वा तेषु पराः= तथा अनिभृतः=अशान्तः परिणामः = अन्तःकरणवृत्तिविशेषः येषां ते तथा, ते च ते तस्करजनाः चौरगणास्तैर्बहुमतं=सातिशयमादृतं स्वीकृतं यत्तत्तथाभूतमदत्तादानम् 'अकलुणं' अकरुणं=दयारहितं निर्दयजनप्रवर्तितत्वात् 'रायपुरिस-

---

प्राप्ति आदिरूप आपत्ति की, (वसण) व्यसन को-राजा आदि द्वारा कृत उपद्रव की-भी (मग्गण) गवेषणा-ताक में तत्पर रहते हैं। तथा (उस्सव) विवाह आदि उत्सवों में (मत्तप्पमत्त) मद्यपान आदि के कर लेने से असावधानी में पडे हुए मस्त व्यक्तियों के तथा (पसुत्त) निद्रा में पडे हुए व्यक्तियों के (वंचण) धनापहरण करने में (आखिवण) आक्षेपणमंत्र औषधि आदिद्वारा चित्त के विक्षेप करने में, तथा (घायणपर) प्राणों के अपहरण करने में अथवा अपने मित्रादिकों द्वारा ताडन करवाने में तत्पर रहा करते हैं। (अइणिहुयपरिणाम) इस अदत्तादानरूप कुकृत्य को करने वाले जीवों के परिणाम-अन्तःकरण की वृत्ति-अशान्त रहती हैं। (तक्करजणबहुमयं) यह अदत्तादान चोर व्यक्तियों द्वारा ही सातिशयरूप में आदृत हुआ हैं। अतः यह दुष्कर्म (अकलुणं) निर्दयजनों द्वारा प्रवर्तित होने के कारण स्वयं दया रहितरूप है इसीलिये (रायपुरिसरक्खियं) राजपुरुषों द्वारा यह निषिद्ध

રહે છે "विधुर" વિધુરની-ઇષ્ટ પ્રાપ્તિ આદિ રૂપ આપત્તિની," वसण " વ્યસનની રાજાદિ દ્વારા કરાયેલ ઉપદ્રવની-પણ ' मग्गण " ગવેષણા-તપાસને માટે તૈયાર રહે છે. તથા " उस्सव " વિવાહ આદિ ઉત્સવોમા, " मत्तप्पमत्त " મદ્યપાન આદિ કરીને અસાવધાનીમા રહેલ મસ્ત વ્યક્તિઓના તથા " पसुत्त " નિદ્રામાં પડેલ વ્યક્તિઓના " वचण " ધનને હરી લેવાને " आखिवण " આક્ષેપણ-મંત્ર ઔષધિ આદિ દ્વારા ચિત્તમાં વિક્ષેપન કરવાને તથા " घायण पर " પ્રાણો હરી લેવાને અથવા પોતાના મિત્રાદિ દ્વારા માર મરાવવાને તત્પર રહે છે. " अयणिहुयपरिणाम " તે અદત્તાદાનરૂપ દુષ્કૃત્ય કરનાર જીવોની મનોવૃત્તિ અશાન્ત રહે છે. " तक्करजणवहुमयं " આ અદત્તાદાન ચોર લોકો દ્વારા જ વધારે પ્રમાણમા સેવવામાં આવે છે. તેથી તે દુષ્કર્મ " अकलुणं " નિર્દય જનો દ્વારા આચરિત હોવાને કારણે દયારહિત હોય છે. તેથી " राय-

रक्खियं ' राजपुरुषरक्षितं=राजपुरुषैर्निषिद्धं, 'सया साहुगरहणिज्जं' सदा साधु गर्हणीयं=निरन्तरं महापुरुषैर्निंदितं ' पियजणमित्तजणभेयविप्पीइकारगं ' प्रिय-जनमित्रजनभेदविप्रीतिकारकं=प्रियजनानां==बान्धवानां मित्रजनानां च भेदः वियोगः विप्रीतिः=द्वेषस्तत्कारकं ' रागदोसबहुलं ' रागद्वेषबहुलं=स्पष्टम् । ' पुणो य ' पुनश्च ' उप्पूरसमरसंगामडमरकलिकलहवहकरणं ' उत्पूरसमर-संग्रामडमरकलिकलहवधकरणम्=तत्रोत्पूरः=प्रचुरो यः समरः = मरेण=मृत्युना सहितः समर एतादृशः संग्रामः=युद्धं डमरः=स्वचक्रपरचक्रभयलक्षणः कलिः= स्वपक्षराटिः कलहश्च=वाग्युद्धं वधः=ताडनमेतेषां करणं=कारकं यत्तत्था 'दुग्गइवि-

---

किया गया है। (सया साहुगरहणिज्जं) तथा महा पुरुषों द्वारा सदा निन्दित प्रकट किया गया है। (पियजणमित्तजणभेयविप्पीइकारगं) इस कृत्य को करने वाले पुरुषों को अपने बंधव जनों का तथा मित्रजनों का वियोग हो जाता है, अर्थात् उनकी अप्रीति का भाजन बन जाता है। (रागदोसबहुलं) रागद्वेषकी मात्रा इसमें सबसे अधिक रहती है। (पुणोय) यह फिर (उप्पूरसमरसंगाम) मृत्युसहित संग्राम का कारक है,-अर्थात् धन आदि हरण करने के लिए जब चोर किसी के यहां जाता है तब वह डटकर इसका साम्हना करता है तो ऐसी स्थिति में चोर की मृत्यु भी हो जाती है। (डमर) इसमें सदा स्वचक्र और परचक्रका चोरों को भय रहा करता है (कलि) कभी २ अपने ही पक्ष के लोगों के साथ तकरार भी हो जाती है। (कलह) वाग्युद्ध आपस में कहा सुनी हो जाती है। (वह) वध-मार पीट हो जाती है। (दुग्गइविणिवायव-

---

पुरिसरक्खियं " રાજપુરુષો દ્વારા તેનો નિષેધ કરાયેલ છે " सया साहुगरहणिज्ज " તથા સાધુ પુરુષો દ્વારા-મહાપુરુષો દ્વારા તે સદા નિંદ્ય ગણાયેલ છે " पियजणमित्तजणभेयविप्पीइकारगं " આ કૃત્ય કરનાર પુરુષોને પોતાના બંધુજનોનો તથા મિત્રજનોનો વિયોગ થાય છે, એટલે કે તેમની અપ્રીતિનું પાત્ર બનવું પડે છે "रागदोसबहुलं" તેમાં રાગદ્વેષનુ પ્રમાણુ સૌથી વધારે હોય છે. "पुणो य" વળી તે "उप्पूरसमरसंगाम" મૃત્યુ સહિત સંગ્રામનું કારક છે-એટલે કે જ્યારે ધન આદિ ચોરવાને માટે ચોર કોઈને ઘેર જાય છે અને તે ઘર વાળો તેનો મજબૂત સામનો કરે તો ચોરનું મોત થાય છે "डमर' તેમા સદા સ્વચક્ર અને પરચક્રનો ચોરી કરનારને ભય રહ્યા કરે છે, " कलि " કોઈ કોઇ વાર પોતાના જ પક્ષના માણસો સાથે તકરાર પણ થઈ જાય છે, " कलह " આપસમાં વાગ્યુદ્ધ-બોલાચાલી પણ થાય છે. " वह " વધ-મારા મારી પણ

णिवायवड्ढणं ' दुर्गति विनिपातवर्द्धनं=दुर्गतौ= नरकादिके यो विनिपातः=अवशतया गमनं तस्य वर्धनं=वर्धकं ' भवपुणब्भवकरं' भवपुनर्भवकरं=पुनःपुनर्जन्ममरणकरं ' चिरपरिचियं ' चिरपरिचितं=चिरं जन्मजन्मान्तरेण अविच्छिन्नतया परिचितम् , ' अणुगयं ' अनुगतम्=अनुवृत्तमविच्छिन्नप्रवाहतया प्रवृत्तं, 'दुरंतं' दुरन्तं=दुःखावसानं- विपाकदारुणत्वात् ' तइयं अधम्मदारं ' तृतीयमधर्मद्वारम्॥ सू० १ ॥

ड्ढणं) यह करने वालों के दुर्गति-नरकादि में अवश होकर गमनरूप विनिपात का वर्धक होता है। (भवपुणब्भवकरं) पुनः पुनः इसके प्रभाव से संसार में ही जन्म मरण करने पडते हैं। (चिरपरिचियं) भव भव में इस कुकृत्य जन्य पाप का उदय साथ में रहता है। (अणुगयं) इसका प्रवाह विच्छिन्न न होने के कारण यह जीव के साथ अनुगत रहता है। (दुरंतं) विपाक समयमें दारुण होनेसे यह दुरन्त होता है। (तइयं अधम्मदारं) इस प्रकार तृतीय अधर्मद्वारका यहां तक स्वरूप कहा।

भावार्थ—सूत्रकार ने इस सूत्र द्वारा तृतीय अधर्मद्वार जो अदत्तादान है उसका स्वरूप निरूपण किया है। वे इसमें कह रहे हैं कि कीसीके धनादिक द्रव्यको ऐसा भय दिखलाकर कि ' मैं तुझे मार डालूंगा, मैं तेरे घरमें आग लगा दूंगा' ऐसा कहकर धनादिका हरण कर लेना अदत्तादान है। इस आदत्तादानका कारण लोभ होता हैं। तथा परके धनमें गृद्धि होती है। तात्पर्य इसका केवल यही है कि विना दी हुई पर की वस्तु को हरण

થઈ જાય છે, " दुग्गइविणिवायवड्ढण " તે કરનારનું દુર્ગતિ—નરકાદિમાં અવશ થઈને ગમનરૂપ વિનિપાતનું-વર્ધક હોય છે " भवपुणब्भवकरं " તેના કારણે વારંવાર સંસારમાં જન્મ મરણ અનુભવવા પડે છે. " चिरपरिचय " દરેક ભવમાં આ દુષ્કૃત્ય જન્ય પાપનો ઉદય સાથે રહે છે. " अणुगय " તેનો પ્રવાહ અતૂટ હોવાને કારણે તે જીવની સાથે અનુગત રહે છે " दुरंतं " વિપાકના સમયે દારુણ અને દુરન્ત હોય છે. " तइयं अधम्मदारं " આ પ્રમાણે ત્રીજા અધર્મ દ્વારનું સ્વરૂપ અહીં સુધીમાં કહેવાયું

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્ર દ્વારા અદત્તાદાન નામના ત્રીજા અધર્મદ્વારનું સ્વરૂપ પ્રગટ કર્યું છે તેઓ તેમાં એ બતાવે છે કે કોઈના ધનાદિનું એવો ભય બતાવીને કે " હું તને મારી નાખીશ, હું તારા ઘરને આગ લગાડીશ " એવું કહીને ધનાદિકનું હરણ કરી લેવું તે અદત્તાદાન છે. આ અદત્તાદાનનું કારણ લોભ તથા બીજાના ધન પ્રત્યેની લાલસા હોય છે આ બધી વાતનું તાત્પર્ય એ છે કે કોઈ આપણને વસ્તુ ન આપે તેનું હરણ કરવું તે

अथ यन्नामेतिद्वारमाश्रित्यादत्तादानस्य नामान्याह 'तस्स य' इत्यादि—

मूलम्—तस्स य नामाणि गोणाणि हुंति तीसं । तं जहा-चोरिक्कं १, परहडं २, अदत्तं ३, कूरिकडं ४, परलाभो ५, असंजमो ६, परधणम्मि गेही ७, लोलिक्कं ८, तक्करत्तणं तिय ९, अवहारो १०, हत्थलहुत्तणं ११, पावकम्मकरणं १२, तेणिक्कं १३, हरणविप्पणासो १४, आइयणा १५, लुंपणा धणाणं १६, अपच्चओ १७, ओवीलो १८, ओक्खेवो १९, क्खेवो २०, विक्खेवो २१, कूडया २२, कुलमसी य २३, कंखा २४, लालप्पणं पत्थणा य २५, आससणा य वसणं २६, इच्छामुच्छाय २७, तण्हागेही य २८, नियडिकम्मं २९, अवरोच्छ त्ति वि य ३० । तस्स एयाणि एवमाईणि नामधेज्जाणि हुंति तीसं अदिण्णादाणस्स पावकलिकलुसकम्मबहुलस्स ॥ सू० २ ॥

टीका—'तस्स य' तस्य च पूर्वोपदर्शितस्वरूपस्यादत्तादानस्य 'गोणाणि' गोणानि=गुणनिष्पन्नानि नामानि वक्ष्यमाणानि 'तीसं' त्रिंशत् 'हुंति' भवन्ति

करना सब चोरी है। इस चोरी में जितने भी निमित्त कारण पड़ते हैं वे भी कारण में कार्य के उपचार से चोरी रूप ही माने जाते हैं। दूसरे की भूली हुई, विसरी हुई, पड़ी हुई, धरोहररूप में रखी हुई, वस्तु का हरण करना और दबा लेना, ये सब अदत्तादान के ही प्रकार हैं। यह अदत्तादान हिंसादि पापों की तरह चोरो के लिये नरकादि दुर्गतियों में गमन का कारण होता है ॥सू०१॥

अब सूत्रकार "यन्नाम" इस द्वार को लेकर अदत्तादान के नामों

ચોરી કહેવાય છે તે ચોરીના જેટલા નિમિત્તો હોય છે તેમને પણ કારણમાં કાર્યના ઉપચારથી ચોરી રૂપ જ માનવામા આવે છે બીજાની ભૂલથી પડી રહેલી, ભૂલાઈ ગયેલી, પડી રહેલી, અને થાપણ રૂપે મૂકેલી વસ્તુનું હરણ કરવું કે તેમને પચાવી પાડવી તે બધા અદત્તાદાનના જ પ્રકાર છે તે અદત્તાદાન હિંસાદિ પાપોની જેમ ચોરોને નરકાદિ દુર્ગતિયોમા ગમન કરાવનાર હોય છે॥સૂ૦૧॥

હવે સૂત્રકાર "યન્નામ" એ દ્વારને લઈને અદત્તાદાનનાં નામો પ્રગટ

' तं जहा ' तानि यथा-' चोरिक्कं ' चौरिक्यं=चोरणं चोरिका सैवेति चौरिक्य१, ' परहडं ' परहृतं=परस्मात्=अन्यस्मात् हृतम्=अनुमतिं विनैव गृहीतम्२, 'अदत्तं' केनापि न दत्तमदत्त ३, ' कूरिकडं ' क्रूरिकृतं- क्रूरैभिः=निर्दयैः कृतं ४, 'परलाभो' परद्रव्यस्य लाभः ५, ' असंजमो' असंयमः=आस्रवानुष्ठानं ६, 'परधणम्मि गेही ' परधने गृद्धिः=परद्रव्याऽभिकाङ्क्षा ७, 'लोलिक्कं' लौल्यं=लौलुपत्वं ८, 'तक्करत्तणं' तस्करत्वमिति च 'अवहारो'अपहारः=अपहरणं परधनस्य१०,'हत्थलहुत्तणं' हस्तलघुत्वं हस्तलाघवं-हस्तचापल्यम् , अथवा हस्तयोः लघुत्वं = परद्रव्यापहरणकुत्सितत्वात् नीचत्वं ११, ' पावकम्मकरणं ' पापकर्मकरणं=पापानुष्ठानं १२, ' तेणिक्कं ' स्तैन्यं=स्तेनस्य=चोरस्य कर्म चौर्यमित्यर्थः १३, ' हरणविप्पणासो ' हरणविप्रणाशः=हरणेन परद्रव्यहरणेन विप्रणाशः=नाशइत्यर्थः १४, ' आइयणा ' आदानम्=अननुमतपरद्रव्यग्रहणं १५, ' लुंपणा धणाणं ' धनानां लोपना=परद्रव्य

को प्रकट करते हैं—' तस्स य नामाणि ' इत्यादि ।

टीकार्थ—(तस्स य) पूर्व में उपदर्शित स्वरूपवाले इस अदत्तादान के (गोणाणि) गुणनिष्पन्न (नामाणि) नाम (तीसं हुंति) ३० तीस होते हैं (तंजहा) वे इस प्रकार हैं-(चोरिक्कं) चोरी १, (परहडं) परहृत-विना अनुमति से दूसरे से वस्तु लेना २, (अदत्तं) अदत्त ३, (कूरिकडं) क्रूरिकृत ४, (परलाभो) परलाभ ५, (असंजमो) असंयम ६, (परधणम्मि गेही) परधनगृद्धि ७ (लोलिक्कं) लोलुपता ८, (तक्करत्तणं) तस्करता ९, (अवहारो) अपहार १०, (हत्थलहुत्तणं) हस्तलाघव ११, (पावकम्मकरणं) पापकर्मकरण १२, (तेणिक्कं) स्तैन्य१३, (हरणविप्पणासो) हरणविप्रणाश१४, (आइयणा) आदान१५,

---

કરે છે-" तस्स य नामाणि " ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—" तस्स य " આગળ બતાવવામાં આવેલ સ્વરૂપ વાળા અદત્તાદાનના " गोणाणि " ગુણ પ્રમાણે " नामाणि " નામ " तीस हुंति " ત્રીસ છે. " तं जहा " તે આ પ્રમાણે છે-(૧) " चोरिक्कं " ચોરી (૨) " परहडं " પરહૃત-અનુમતિ વિના બીજાની વસ્તુ લેવી, (૩) " अदत्तं " અદત્ત, (૪) " कूरिकडं " ક્રૂરિકૃત, (૫) " परलाभो " પરલાભ, (૬) " असंजमो " અસંયમ, (૭) " परधणम्मि गेही " પરધનગૃદ્ધિ-પરધનની લાલસા, (૮) " लोलिक्कं " લોલુપતા, (૯) " तक्करत्तणं " તસ્કરતા, (૧૦) " अवहारो " અપહાર, (૧૧) " हत्थलहुत्तणं " હસ્તલાઘવ, (૧૨) " पावकम्मकरणं " પાપકર્મકરણ, (૧૩) " तेणिक्कं " સ્તૈન્ય, (૧૪) " हरणविप्पणासो " હરણવિપ્રણાશ, (૧૫) "आइ

विच्छेदः १६, 'अप्पच्चओ' अप्रत्ययः=अविश्वासः-अविश्वासोत्पादकत्वात् १७, 'ओवीलो' अवपीडः=पीडाजनकं १८, 'ओक्खेवो' अवक्षेपः=परद्रव्यविच्छेदः १९, 'उक्खेवो' उत्क्षेपः=परहस्तात् द्रव्यस्य निर्गमनं २०, विक्खेवो' विक्षेपः= परधनस्य प्रक्षेपणं२१, 'कूडया' कूटता=द्रव्यस्य कूट तुलादिभिरन्यथाकरणं २२, 'कुलमसी' कुलमषी=कुलकलङ्कजनकं च २३, 'कंखा' काङ्क्षा=परद्रव्यतृष्णा२४, 'लालप्पणं पत्थणा य' लालपनं प्रार्थना च=लालपनं=गर्हितजल्पनं, प्रार्थना च चौर्यकृते तदपलापकवचनविन्यास, प्रार्थनारूपाणि वचनानि जल्पन्ति चौराः २५, 'आससणा य वसणं' आशसनाच व्यसनं-आशसना=विनाशः-विनाशहेतुत्वात्, व्यसनं=सर्वापत्तिकारणम् २६, 'इच्छामुच्छा य' इच्छामूर्च्छा च=तत्रेच्छा पर-धनाभिलाषः, मूर्च्छा च=तत्रैव गाढाभिष्वङ्गरूपा २७, 'तण्हागेही य' तृष्णा गृद्धिश्च,तत्र तृष्णा=अप्राप्तद्रव्यस्य प्राप्तिवाञ्छा, गृद्धिश्च=प्राप्तस्याऽविनाशेच्छा अद-त्तादानस्य हेतुकत्वात् तृष्णागृद्धित्युच्यते २८, 'नियडिकम्मं' निकृतिकर्म= निकृतिः=कपटं तत्कर्म=कपटकार्यमित्यर्थः२९, 'अवरोच्छ त्ति वि य' अपरोक्ष-मिति च=न विद्यन्ते परेषाम् अक्षीणि द्रष्टव्यतया यत्र चौरकर्मणि तदपरोक्षम्= अप्रत्यक्षसम्पाद्यमित्यर्थः३०। तस्य 'पावकलिकलुसकम्मबहुलस्स' पापकलिकलुष-

(धणाणं लुंपणा) धनकी लोपना१६, (अप्पच्चओ) अप्रत्यय(अविश्वास)१७, (ओवीलो) अवपीड-दुःखरूप १८, (ओक्खेवो) अवक्षेप१९, (उक्खेवो) उत्क्षेप २०, (विक्खेवो) विक्षेप २१' (कूडया) कूटता २२, (कुलमसी य) कुलमषी २३, (कंखा) कांक्षा २४, (लालप्पणं पत्थणा य) लाल-पन प्रार्थना २५, (आससणा य वसणं) आशासना व्यसन २६, (इच्छा मुच्छा य) इच्छामूर्च्छा२७, (तण्हागेही य) तृष्णागृद्धी२८, (नियडिकम्मं) निकृतिकर्म (कपटकरण)२९, (अवरोच्छत्तिवि य) तथा अपरोक्ष ३०। (तस्स) इस तरह उस कि जिस में (पावकलिकलुसकम्मबहुलस्स)

यणा" આદાન, (૧૬) "धणाणं लुंपणा" ધનની લોપના, (૧૭)"अप्पच्चओ" અપ્રત્યય, (૧૮) "ओवीलो" અવપીડ, (૧૯) "ओक्खेवो" અવક્ષેપ (૨૦) "उक्खेवो" ઉત્ક્ષેપ, (૨૧) "विक्खेवो" વિક્ષેપ, (૨૨) "कूडया" કૂટતા (૨૩) "कुलमसी य" કુલમષી, (૨૪) 'कंखा" કાંક્ષા (૨૫) "लालप्पणं पत्थणा य" લાલપન પ્રાર્થના (૨૬) "आससणा य वसणं" આશસના વ્યસન, (૨૭) "इच्छामुच्छाय" ઈચ્છામૂર્છા, (૨૮) "तण्हागेही य" તૃષ્ણાગૃદ્ધિ, (૨૯) "नियडिकम्मं" નિકૃતિકર્મ, અને (૩૦) "अवरोच्छत्ति वि य" અપરોક્ષ "तस्स" આ પ્રમાણે કે જેમા "पावकलिकलुसकम्मबहुलस्स" પ્રાણાતિપાતાદિક પાપ, યુદ્ધ મિત્રદ્રોહ આદિરૂપ મલિન કર્મ વધારે પ્રમાણમા રહે છે "अदिण्णा-

कर्मबहुलस्य=तत्र पापं=प्राणातिपातादिकं कलिः=युद्धं कलुषाणि=मलिनानि कर्माणि=मित्रद्रोहादिव्यापाररूपाणि बहुलानि=बहूनि यत्र तत्तथा तस्य 'आदिण्णादाणस्स' अदत्तादानस्य 'एयाणि' एतानि पूर्वोक्तप्रकाराणि 'एवमाईणि' एवमादीनि =चौरिक्यादीनि 'तीसं' त्रिंशत् 'नामधेज्जाणि हुंति' नामधेयानि भवन्ति ॥सू०२॥

प्राणातिपातादिक पाप, युद्ध, मित्रद्रोह आदिरूप मलिनकर्म अधिकता से रहते हैं (अदिण्णादाणस्स) अदत्तादान के (एयाणि एवमाईणि) ये चोरी आदि (तीसं) तीस (नामधेज्जाणि) नाम (हुंति) है।

भावार्थ—चोरी चोरों का कर्म है इसलिये अदत्तादान का नाम चौरिक्य है १। चोरी करने वाला विना पूछे ही दूसरों के द्रव्य का हरण करते हैं इसलिये इसका नाम परहृत है २। चोरों को कोई बुलाकर अपना द्रव्य नहीं देता है इसलिये इसका नाम अदत्त है ३। निर्दय बनकर ही यह कर्म किया जाता है सदय होकर नहीं, इसलिये इसका नाम क्रूरिकृत है ४। इसमें दूसरे के द्रव्य का लाभ होता है अतः यह पर लाभ कहा जाता है ५। इस कृत्य में न इन्द्रिय संयम रहता है और न प्राणि संयम ही, अत यह असंयम नाम से कहा गया है ६। इसमें परधन में गृद्धि होती है अतः इसका नाम परधनगृद्धि है ७। इसमें परिणामों में लोलुपता अधिक रहती है इस लिये इसका नाम लौल्य है ८। तस्करों का यह भाव है इसलिये इसका नाम तस्करता है ९। इसमें

दाणस्स " અદત્તાદાનના "एयाणि एवमाईणि" તે ચોરી આદિ "तीसं" ત્રીસ "नामधेज्जाणि" નામ "हुंति" છે,

ભાવાર્થ—(૧) ચોરી કરવી તે ચોર લોકોનુ કાર્ય છે તેથી અદત્તાદાનનું "चौरिक्य" નામ છે. (૨) ચોરી કરનારા પૂછ્યા વિના જ બીજાનાં દ્રવ્યનું હરણ કરે છે, તેથી તેનુ નામ "परहृत" છે (૩) ચોરોને બોલાવીને કોઇ પોતાનું દ્રવ્ય દેતું નથી, તેથી તેનુ નામ "अदत्त" છે (૪) નિર્દય બનીને જ ચોરી કરાય છે, સદય થઇને નહીં, માટે જ તેનુ નામ "क्रूरिकृत" (૫) તેમાં બીજાના દ્રવ્યનો લાભ (પ્રાપ્તિ) થાય છે, તેથી તેને "लाभ" કહેવામાં આવે છે. (૬) આ કૃત્ય કરતી વખતે ઇન્દ્રિયોનો સયમ રહેતો નથી અને પ્રાણી સંયમ પણ રહેતો નથી. તેથી તેનું નામ "असंयम" છે (૭) તે કરનારને પરધનમાં ગૃદ્ધિ—લાલસા થાય છે, તેથી તેનુ નામ "परधनगृद्धि" છે (૮) તેનાથી પરિણામોમાં—વૃત્તિમા લોલુપતા વધારે પ્રમાણમા રહે છે, તેથી તેનું નામ "लौल्य" છે. (૯) તસ્કરોની તે વૃત્તિ ભાવના હોય છે, તેથી તેનું નામ

परके धनका अपहरण होता है इसलिये इसका नाम अपहरण है१०। पर-द्रव्य चुरानेमें हाथकी कुशलता काम देती है, अथवा परद्रव्यके चुरानेसे हाथमें लघुता-नीचता आती है इसलिये इसका नाम हस्तलघुत्व है ११। यह कृत्य पापानुष्ठान स्वरूप है, इसलिये इसका नाम पापकर्मकरण है १२। यह चोरों का कर्म है इसलिये इसका नाम स्तैन्य है। १३। पर-द्रव्यके हरण से हरने वाले का नाश ही हो जाता है। इसलिये इसका नाम हरण विप्रणाश है १४। दूसरों की अनुमति विना ही धनादिक का इसमें ग्रहण होता है इसलिये इसका नाम आदान है १५। दूसरों के द्रव्य का हरण करना ही द्रव्य का विनाश करना है, इसलिए इसका नाम परद्रव्यविच्छेद है १६। कोई भी पुरुष चोरों का विश्वास नहीं करता है, अतः अविश्वास का उत्पादक होने से इसका नाम अप्रत्यय है १७। द्रव्य का हरण हो जाने से दूसरों को पीड़ा होती है इसलिये पर को पीड़ा का कारण होने से इसका नाम अवपीड है १८। परद्रव्य का इस क्रिया से विच्छेद होता है, अर्थात्-चोरे गये द्रव्य को चोर यद्वा तद्वा खर्च कर डालते है, यही परके द्रव्य का विच्छेद है इसलिये इसका नाम परद्रव्यविच्छेद है १९। स्वामी के हाथ से यह चुराया हुआ द्रव्य निकल जाता है-चोरों के हाथों में आ जाता है, इसलिये इसका

"तस्करता" છે. (૧૦) તેમા ધનનુ અપહરણ થાય છે, તેથી તેનું નામ अपहरण છે (૧૧) પરધન ચોરવામાં હાથની કુશળતા કામ આવે છે, અથવા પરધનની ચોરીથી હાથમાં લઘુતા-નીચતા પ્રવેશે છે તેથી તેનું નામ हस्तलघुत्व છે (૧૨) તે કૃત્ય પાપકૃત્ય હોવાથી તેનું નામ पापकर्मकरण છે (૧૩) પર-ધનનું અપહરણ કરવાથી હરનારનો નાશ થાય છે, તેથી તેનું નામ हरणवि प्रणाश છે (૧૫) બીજાની અનુમતિ વિના જ તેમા ધન આદિ ગ્રહણ કરાય છે, તેથી તેનુ નામ आदान છે (૧૬) બીજાના દ્રવ્યનુ હરણ કરવું એ જ દ્રવ્યનો વિનાશ ગણાય છે, તેથી તેનું નામ परद्रव्यविच्छेद છે (૧૭) કોઈપણ માણસ ચોરોનો વિશ્વાસ કરતો નથી એ રીતે અવિશ્વાસ જનક હોવાથી તેનું નામ "अप्रत्यय" છે (૧૮) દ્રવ્યનુ અપહરણ થવાથી અન્યને પીડા થાય છે, તેથી પીડાનુ કારણ હોવાથી તેનુ નામ "अवपीड" છે (૧૯) પરધનનો આ ક્રિયાથી નાશ થાય છે, એટલે કે ચોર લોકો ગમે તે પ્રકારે તેને વેડફી નાખે છે આ પ્રમાણે તે દ્રવ્યનો વિચ્છેદ કરાવનાર હોવાથી તેનુ નામ "परद्रव्य-विच्छेद" છે(૨૦) તે ચોરાયેલુ દ્રવ્ય તેના માલિકના હાથમાંથી ચાલ્યું જઈને

नाम उत्क्षेप है २०। चोर इस द्रव्य को ले जाकर असुरक्षित अवस्था में इधर उधर रख देते हैं-डाल देते हैं, इसलिये इसका नाम विक्षेप है २१। चोर चुराकर जब इस द्रव्य का विभाग करते हैं, तब तुलादिक से कमती बढ़ती तौलते हैं-एकसा हिस्सा नहीं करते हैं, इसलिये इसका नाम कूटता है २२। यह कर्म करनेवालों के कुलों को कलंक लगता है इसलिये इसका नाम कुलमषी है २३। अदत्तादानमें परके द्रव्यको हरण करने में तृष्णा रहती है इसलिये इसका नाम कांक्षा है २४। चोर गर्हित जल्पना करते हैं, अर्थात् चोरी करलेने पर भी "मैंने चोरी की है" इस बात को स्वीकार नहीं करते प्रत्युत उसे छुपाने की ही चेष्टा करते हैं, तथा जिस समय वे चोरी करने के लिये चलते है तो किसी अपने इष्ट की प्रार्थना करके ही चलते हैं, इसलिये इसका नाम लालपन और प्रार्थना है २५। यह कृत्य विनाश का हेतु होने से विनाशरूप एवं समस्त आपत्तियों का कारण होने से व्यसनरूप है इसलिये इसका नाम आशंसना एवं व्यसन है २६। परधन के हरण करने की अभिलाषा इसमें बनी रहती है इसलिये इसका नाम इच्छा, तथा पर के धन को हरण करने के लिये इसमें अत्यंत मूर्च्छाभाव होता है इसलिये इसका नाम मूर्च्छा है २७। अप्राप्त द्रव्य की प्राप्ति की वाञ्छा तथा प्राप्त द्रव्य की अविनाशेच्छा, ये दोनों अदत्तादान का हेतु हैं-इसलिये इसका नाम

ચોરોના હાથમા જાય છે, તેથી તેનું નામ उत्क्षेप છે (૨૧) ચોર તે દ્રવ્યને ચોરી જઈને અસુરક્ષિત હાલતમાં ગમે ત્યાં મૂકી દે છે. તેથી તેનું નામ विक्षेप છે. (૨૨) ચોર ચોરી કર્યા પછી જ્યારે તેના ભાગ પાડે છે ત્યારે ત્રાજવા આદિથી વધારે કે ઓછું તોલે છે-એક સરખા ભાગ પાડતા નથી, તેથી તેનું નામ कूटता છે (૨૩) આ કૃત્ય કરનારના કુળને કલંક લાગે છે, તેથી તેનું નામ कुलमषी છે (૨૪) અદત્તાદાન ગ્રહણ કરવામાં બીજાનું દ્રવ્ય હરી લેવાની તૃષ્ણા રહે છે, તેથી તેનું નામ कांक्षा છે. (૨૫) ચોર ગર્હિત જલ્પના કરે છે. એટલે કે ચોરી કર્યા પછી પણ પોતે ચોરી કરી છે, તે વાતનો સ્વીકાર કરતો નથી, પણ તેને છૂપાવવાનો પ્રયત્ન કરે છે, તથા જ્યારે તેઓ ચોરી કરવા ઉપડે છે ત્યારે પોતાના કોઈ ઇષ્ટ દેવની પ્રાર્થના કરીને જ જાય છે તેથી તેનું નામ लालपन અને प्रार्थना છે (૨૬) તે કૃત્ય વિનાશનુ કારણ હોવાથી વિનાશનુંરૂપ અને સઘળી આપત્તિયોનું કારણ હોવાથી વ્યસનરૂપ છે, તેથી તેનું નામ आशसना અને व्यसन છે (૨૭) તે કૃત્ય કરનારને પરધનનું હરણ કરવાની અભિલાષા રહે છે, તેથી તેનું નામ इच्छा તથા પારકાનું ધન ગ્રહણ કરવાની

पूर्वं ' यन्नामे ' ति द्वितीयमन्तर्द्वारं निरूपितम्, साम्प्रतं ' जे वि य करेति पावा '-इति पञ्चमान्तर्द्वारगतांस्तस्करानाह-' तं पुण ' इत्यादि.

मूलम्-तं पुण करेंति चोरियं तक्करा परदव्वहरा छेया कयकरणलद्धलक्खा साहसिया लहुस्सगा अइमहिच्छा लोभघत्था, दद्दरओवीलगा य गेहिया अहिमरा अणभंजगा भग्गसंधिया रायदुट्ठकारी य विसय निच्छूढलोगवज्झाउद्दहग-गामघायगपुरघायग — पंथघायग — आदीवगतित्थभेयया, लहुहत्थसंपउत्ता जूयगरा खंडरक्खत्थी-चोरपुरिस-चोरसंधिच्छेयया, य गंठिभेयगा परधणहरणलोमावहारअक्खेवी हडकारग-निम्मद्दग-गूढचोर, गोचोर अस्सचोर-दासीचोरा य एगचोरा य अकड्ढग-संपदायग-ओछिंपग-सत्थघायग-बिलकोलीकारगा य निग्गहविप्पलुंपगा-बहुविह-तेणिक्क-हरणबुद्धी, एते अण्णे य एवमादी परस्स दव्वाहिं जे अविरया ॥सू०३॥

तृष्णागृद्धि है २८। चोरी एक प्रकारका कपटरूप कार्य है अतः इसका नाम निकृति है २९। चोरको चोरी करते समय कोई देखता नहीं है इस लिये इसका नाम अपरोक्ष है ३०॥ सू०२॥

' यन्नाम ' नाम का द्वितीय अन्तर्द्वार कह कर अब सूत्रकार ' येऽपि च कुर्वन्ति पापाः ' इस पञ्चम अन्तर्द्वारगत तस्करों का वर्णन करते

તેમા અત્યંત આસક્તિ રહે છે, તેથી તેનું નામ मूर्च्छा છે અપ્રાપ્ત દ્રવ્ય મેળવવાની ઈચ્છા તથા પ્રાપ્ત થયેલ દ્રવ્યનો વિનાશ ન થાય તેવી ઈચ્છા, તે અદત્તાદાનના હેતુ હોવાથી તેનું નામ तृष्णागृद्धि છે (૨૯) ચોરી એક પ્રકારનું કપટ યુક્ત કૃત્ય હોવાથી તેનું નામ निकृति છે. (૩૦) ચોરી કરતી વખતે ચોર કોઈની નજરે પડતો નથી તેથી તેનું નામ अपरोक्ष છે ॥સૂ-૨॥

" यन्नाम " નામનું બીજું અંતર્દ્વાર વર્ણવીને હવે સૂત્રકાર "येऽपि च कुर्वन्ति पापाः" એ પાચમા અન્તર્દ્વારગત ચોરોનું વર્ણન કરે છે

टीका–'तं पुण' तत् पुनः 'चोरियं' चौर्यं 'करे ति' कुर्वन्ति 'तक्करा' तस्कराः। कथंभूताः ? इत्याह––' परदव्वहरा ' परद्रव्यहराः=परेषां द्रव्याणि हरन्ति ये ते परद्रव्यहराः ' छेया ' छेकाः=चौर्यकर्मनिपुणाः तथा ' कयकरणलद्धलक्खा ' कृत-करणलब्धलक्षाः कृतकरणाः=पुनःपुनः कृतचौर्यानुष्ठानास्ते च ते लब्धलक्षाः= चौर्यकर्मावसरज्ञास्ते तथा ' साहसिया ' साहसिकाः=परद्रव्यहरणे मनोबलयुक्ताः, 'लहुस्सगा' लघुस्वकाः=तुच्छात्मानः ' अइमहिच्छा ' अतिमहेच्छा=अतिशयिता महती=प्रगाढा इच्छा=तृष्णा येषां ते अतिमहेच्छा=महाभिलाषिणः, 'लोभघत्था' लोभग्रस्ताः = लोभग्रथितान्तःकरणाः ' दद्दरओवीलगा ' दर्दराऽपव्रीडकाः = वचनाटोपेन स्वात्मप्रच्छादकाः, तथा ' गेहिया ' गृद्धिकाः=परद्रव्यलोलुपाः

हैं–' तं पुण ' इत्यादि ।

टीकार्थ–(तं पुण चोरियं तक्करा करेंति) इस चौर्य कर्मको चोर करते हैं (परदव्वहरा) ये चोर परद्रव्य को हरण करने वाले होने के कारण परद्रव्य हर कहे जाते हैं (छेया) चोर अपने चौर्यकर्म में निपुण होते हैं (कयकरणलद्धलक्खा) वार २ चोरी करते रहनेसे ये चौर्य कर्मके अवसर के ज्ञाता होते हैं (साहसिया) परद्रव्य के हरण करने में इनका मानसिक बल बहुत बढा चढा रहता है । (लहुस्सगा) इनकी आत्मा अतितुच्छ होती है । तथा पर के द्रव्य को अपहरण करने में इनकी (अइमहिच्छा) महती लालसा रहती है, इसलिये महा इच्छा वाले हैं (लोभघत्था) ये लोभ से बहुत अधिक ग्रसित अन्तःकरण वाले होते हैं। (दद्दरओवी-लगा) इनके बोलने की पद्धति कुछ ऐसी होती है कि जिससे ये देखने वालों को सहसा चोर रूप में भासित नहीं होने पाते हैं। (गेहिया)

" तं पुण " ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ–"तं पुण चोरियं तक्करा करे ति " આ ચોરીનું કૃત્ય ચોર લોકો કરે છે. "परदव्वहरा" તે ચોરો બીજાનું દ્રવ્ય હરી લેનાર હોવાથી તેમને પરદ્રવ્ય હર કહેવામાં આવે છે "छेया" ચોરલોકો પોતાના ચોરી કરવાના કાર્યમાં નિપુણ હોય છે. "कयकरण लद्धलक्खा" વારવાર ચોરી કરતા રહે છે તેથી તેઓ ચોરી કરવાના અવસરના જાણકાર હોય છે " साहसिया " અન્યનું દ્રવ્ય હરી લેવામા તેમનું માનસિક બળ ઘણું જ તીવ્ર હોય છે " लहुस्सगा " તેમનો આત્મા અતિશય તુચ્છ હોય છે, તથા બીજાના દ્રવ્યનું અપહરણ કરવાની તેમની " अइमहिच्छा " અતિશય લાલસા હોય છે, તેથી તેઓ મહેચ્છાવાળા છે " लोभघत्था " તેઓ લોભથી અતિશય વધારે જકડાયેલાં અંતકરણ વાળા હોય છે " दद्दरओवीलगा " તેમની બોલવાની રીત એવી હોય છે કે જેથી તેઓ તેમને જોનારની નજરે જલ્દી ચોર રૂપે દેખાતા નથી. " गेहिया "

'अहिमरा' अभिमराः=धनादिलोभेन मरणाभिमुखाः, मरणभयरहिता इत्यर्थः, अथवा चौर्याभिमुखाः सन्तः परान् मारयन्ति ये ते तथा इहान्तर्भावितण्यर्थः, 'अणभंजगा' ऋणभञ्जका=ऋणं भञ्जन्ति=न ददति ये ते तथा 'भग्गसंधिया' भग्गसन्धिकाः=भग्नः सन्धिः=मित्रादिस्नेहो यैस्ते तथा इष्टजनप्रेमवर्जिता 'रायदुट्ठगारी' राजदुष्टकारिणः=राजनीतिविरुद्धाचरणाः 'विसयनिच्छूढलोगवज्झा' विषयनिक्षिप्तलोकबाह्याः=विषयात्=जनपदात् निक्षिप्ताः=निष्कासिताः अत एव लोकबाह्याः=जनबहिर्भूताः 'उदहगगामघायगपुरघायगपंथघायगआदीवगतित्थभेयगा' उद्रोहक ग्रामघातक–पुरघातक–पथिघातक–ऽऽदीपकतीर्थभेदका=तत्र उद्रोहकाश्च=हिंसकाः ग्रामघातकाः=ग्रामनाशकाः, पुरघातकाः=नगरविध्वंसकाः पथि-

---

ये परद्रव्य में विशेष लोलुप होते हैं। (अहिमरा) धनादिक के लोभ में पड़कर ये मरण के भी अभिमुख रहते हैं–इन्हें मरण का भय नहीं होता है। अथवा चौर्य कर्म में प्रवृत्ति करने पर दूसरों को भी उस समय बाधा डालने पर मार डालते हैं। (अणभजगा) इनके ऊपर किसी का कर्जा हो तो भी ये उसे नहीं देते हैं। (भग्गसंधिया) ये अपने इष्ट मित्रादिकों से भी प्रेम नहीं करते हैं। उन पर स्नेह करने से अथवा उनके स्नेह से ये वर्जित रहते हैं। (रायदुट्ठगारी) राजनीति के विरुद्ध इनका सदा आचरण रहता है। (विसयनिच्छूढलोगवज्झा) जनपद से ये निकाल दिये जाते हैं, इसलिये ये लोकबाह्य होते है। (उदहगगामघायगपुरघायगपंथघायगआदीवगतित्थभेयया) (उद्दहग) ये बड़े भारी द्रोही होते हैं जिनपर इनकी वक्रदृष्टि पड़ जाती है उसकी फिर कुशल नहीं। (गामघायग) गांवों के गांव नष्ट कर डालते हैं। (पुर घायग) नगरों

તેઓ પરદ્રવ્યમાં અતિશય લોલુપ હોય છે "अहिमरा" ધનાદિના લોભમાં પડીને તેઓ મરણની પણ સન્મુખ રહે છે-તેમને મોતની બીક લાગતી નથી. અથવા ચોરી કરવા જતાં તેમાં આડખીલી રૂપ થનારને મારી નાખે છે "अणभंजगा" તેમની પાસે કોઈનુ લેણુ હોય તો તેઓ તે ચુકવતા નથી. "भग्गसधिया" તેઓ પોતાના ઇષ્ટ મિત્રાદિ તરફ પણ પ્રેમ રાખતા નથી, તેમના પર સ્નેહ રાખવાથી અથવા તેમનો સ્નેહ પ્રાપ્ત કરવાથી તેઓ રહિત હોય છે "रायदुट्ठगारी" રાજનીતિથી વિરુદ્ધનું તેનુ આચરણ હમેશા રહે છે "विसयनिच्छूढलोगवज्झा" રાજ્યમાથી તેમને હાંકી કાઢવામા આવે છે તેથી તેઓ લોકબાહ્ય હોય છે. "उदहगगामघायगपुरघायगपथघायगआदीवगतित्थभेयया" "उद्दहग" તેઓ ભારે દ્રોહી હોય છે, જેમના ઉપર તેમની વક્રદષ્ટિ પડે છે તેમની સલામતી રહેતી નથી. "गामघायगा" તેઓ ગામોનાં ગામો નષ્ટ કરી નાખે છે. "पुरघायग" નગરોનો નાશ

घातकाः=पथि=मार्गे जनानां घातकाः=द्रव्यलुण्ठनार्थं प्रहारकाः आदीपकाश्च=गृहादिदाहकाः तीर्थभेदकाश्च=यात्रिकजनधनापहारकाश्च 'लहुहत्थसंपउत्ता' लघुहस्तसम्प्रयुक्ताः लघुः=परद्रव्यहरणे निपुणो हस्तः=हस्तव्यापारपरायणाः, 'जूयगरा' द्यूतकराः, 'खंडरक्खत्थीचोरपुरिसचोरसंधिच्छेयया य' खण्डरक्षस्त्रीचौरपुरुषचौरसन्धिच्छेदकाः = तत्र खण्डरक्षाः=शुल्कपालाः उत्कोचग्राहित्वाच्चौराः, स्त्रीचौरा =स्त्रियश्चोरकाः स्त्रीसकाशाच्चौरकाः=स्त्रियमेव चोरयतीति स्त्रीचोरकाः, तथा स्त्री वेशेन चोरका वा । तथैव पुरुष चौराश्च सन्धिच्छेदकाः=सन्धिं=भित्यादौ विवरं 'सेंध' 'खात्र' इति भाषा प्रसिद्धं छिन्दन्ति=खनन्ति ये ते सन्धिच्छेदकाः 'गंठिभेयगा' ग्रन्थिभेदकाः=प्रसिद्धाः 'परधणहरणलोमावहारअक्खेवी' पर-

---

को विध्वंस कर देते हैं। (पथघायग) द्रव्य हरण करने के अभिप्राय से मार्ग में चलने वाले मनुष्यों को ये देखते २ मार डालते हैं। (आदीवग) गृहादिकों में आग लगा देते हैं। (तित्थभेयगा) यात्रिजनों के भी द्रव्य लूट लिया करते हैं। (लहुहत्थसंपउत्ता) हाथकी सफाई इनकी इतनी जवर्दस्त होती है कि ये देखते २ ही दूसरों के धन को चुरा लेते हैं। (खंडरक्खत्थीचोरपुरिसचोरसंधिच्छेयया य) इसी तरह जो खंडरक्ष-शुल्कपाल होते हैं ये जो घूसखोरी करने वाले होते है वे चोर माने जाते हैं वे यहां लिये गये हैं स्त्रीचोर-स्त्रियों के पास से द्रव्यादि चुराने वाले, अथवा स्त्रियों को उठाकर ले जाने वाले, अथवा स्त्री के वेश में रहकर चोरी करने वाले होते हैं, इसी प्रकार पुरुषचोर भी होते हैं-पुरुषों के पास से द्रव्यादिक चुराने वाले होते हैं, अथवा पुरुषों को धोखा देकर इधर उधर ले जाने वाले होते हैं अथवा पुरुष के वेश में

करी नाखे छे, "पंथघायगा" द्रव्य हरीलेवाने माटे तेओ प्रवासीओने जोत जोतामा मारी नाखे छे "आदीवग" घर वगेरेमा आग लगाडे छे, "तित्थभेयगा" यात्राळुनां द्रव्यने पण लूटी ले छे, "लहुहत्थसंपउत्ता" चोरी करवामा तेमनो हाथ एटलो कुशळ होय छे के तेओ जोत जोतामा अन्यनुं धन चोरी ले छे "खंडरक्खत्थीचोरपुरिसचोरसंधिच्छेयया य" ए ज प्रमाणे जे खंडरक्ष-शुल्कपाल होय छे-जे घूसखोरी करनारा (लांच लेनार) होय छे तेमने चोर गणवामा आवे छे. स्त्रीचोर-स्त्रीओनी पासेथी द्रव्य चोरनारा, अथवा स्त्रीओने उपाडी जनारा अथवा स्त्रीना वेशमा जईने चोरी करनारा होय छे, ए ज प्रमाणे पुरुषचोर पण होय छे- पुरुषोनी पासेथी द्रव्यादिकने चोरनारा, अथवा पुरुषोने दगो दईने गमे त्या लई जनारा, अथवा पुरुषना

धनहरणलोमावहाराऽऽक्षेपिणः=तत्र परधनं हरन्ति ये ते परधनहरणाः, लोमान्य-वहरन्ति ये ते लोमावहराः=वधपूर्वकलुण्ठनकारिण. आक्षेपिणः=वशीकरणादिना चौर्यकारिणः ' हडकारगनिम्मद्दगगूढचोरगोचरअस्सचोरदासीचोरा य ' हठकारकनिर्मर्दकगूढचौरगोचौराश्वचौरदासीचौराश्च तत्र हठं=बलात्कारं कुर्वन्तीति हठकारकाः,निर्मर्दकाश्च=निरतिशयेन मर्दनकारिणः युद्धेन धनापहारिणः,गूढचौराः= गुप्तचौरा, गौ चौरा अश्वचौरा दासीचौराश्च=प्रख्याताः=त एव ' एगचोरा ' एक चौराः=एकाकिन एव चोरयन्ति ये ते ' ओकड्ढगसंपदायगा ओछिंपगसत्थघायग, विलकोलीकारगा य ' अपकर्षक सम्प्रदायकावच्छिपक सार्थघातकविलकोलीकार-

---

रहकर चोरी करते हैं, संधिच्छेदक-भित्यादिक में सेंध करके चोरी करते है, (गंठिभेयगा) ग्रन्थिभेदक - गांठ कतरते हैं (परधणहरणलोमावहारअक्खेवी) परधनहरणलोमापहाराक्षेपी होते हैं परके धन को हरण करने वाले, वध करके धनको हरण करने वाले वशीकरण मंत्र से वश करके धन को हरण करने वाले होते हैं (हडकारगनिम्मद्दगगूढचोरगोचोरअस्सचोरदासीचोरा य) (हडकारग)बलात्कार से धन को हरण करने वाले, (निम्मद्दग) निर्मर्दक-युद्ध करके धन को हरण करने वाले, (गूढचोर) गुप्तरूप में रहकर पर के धन को हरण करने वाले, (गोचोर) गाय को हरण करने वाले, (अस्सचोर) अश्व को हरण करने वाले, (दासीचोर) दासी को हरण करने वाले, (एगचोरा य) अकेले रहकर पर के धन को हरण करने वाले, (ओकड्ढगसंपदायगा ओछिंपगसत्थघायगविलकोलीकारगा य) (ओकड्ढग)

વેશમા જઈને ચોરી કરનારા હોય છે, સ ધિચ્છેદક—દિવાલ આદિમાં કાણું પાડીને ચોરી કરનારા હોય છે, " गंठिभेयगा " ગ્રન્થિભેદક-ખિસ્સા કાતરે છે, " परधणहरणलोभावहारअक्खेवी " પરધનહરણ લોભાપહારાક્ષેપી હોય છે—પરધનનું હરણ કરનારા, હત્યાકરીને ધનનું હરણ કરનારા વશીકરણ મંત્રથી વશ કરીને ધનનું અપહરણ કરનારા હોય છે, " हडकारग निम्मद्दग गूढचोरगोचोर अस्सचोरदासीचोरा य " " हडकारग " બળાત્કારથી ધનને હરી લેનારા, ' निम्मद्दग " નિર્મર્દક-યુદ્ધ કરીને ધનને હરી લેનારા. " गूढचोर " ગુપ્તરીતે રહીને પરનુ ધન હરી લેનારા, "गोचर" ગાયનુ અપહરણ કરનારા, " अस्सचोर " ઘોડાની ચોરી કરનાર, " दासीचोर " દાસીની ચોરી કરનાર, " एगचोराय " એકલો જઈને પારકાના ધનનુ હરણ કરનારા " ओकड्ढगसंपदायगा ओछिंपग सत्थघायगविलकोलीकारगा च " " ओकड्ढग " આકર્ષક-બીજાના ઘરમાંથી

काश्च तत्र अपकर्षकाः=अपकर्षयन्ति परगृहेषु चोरयितु चौरानाह्वयन्ति ये तेऽपकर्षका, यद्वा—चोरितं धनमपनीयाऽन्यस्थाने नयन्ति ये ते तथा, तथा शरीरादितो भूषणादि निष्कासका वा, सम्प्रदायकाः=चौरान् स्वगृहे संस्थाप्य भोजनादिदायकाः, अवच्छिपकाः=चोरविशेषाः सार्थघातकाः=प्रसिद्धाः बिलकोलीकारकाश्च=परव्यामोहार्थ विश्वासवचनवादिनः, देशीशब्दोऽयम् । 'निग्गहविप्पलुंपगा' निग्रहविप्रलुम्पकाः=तत्र निग्रहेण=वशीकरणेन शस्त्रादिभयप्रदर्शनपूर्वकं परं निरुध्येत्यर्थः- विप्रलुम्पकाः—लुण्टनकारिणः, 'बहुविहतेणिक्कहरणबुद्धी' बहुविधस्तैन्यहरणबुद्धयः=बहुविधेन स्तैन्येन=चौर्येण हरणे=परद्रव्यापहरणे बुद्धिर्येषां ते तथा परद्रव्यहरणबुद्धिशालिनः एते=पूर्वोक्ताः 'अण्णे य' अन्ये च 'एवमादी जे' एवमादयो ये=एवम्प्रकाराः ये 'परस्स दव्वाहिं अविरया' परस्य द्रव्येषु अविरताः, सूत्रे तृतीया सप्तम्यर्थे परस्य धनधान्यादि ग्रहणे अनिवृत्ताः परद्रव्यग्रहणासक्ता इत्यर्थः सन्ति ते चौर्य कुर्वन्तीति पूर्वेण सम्बन्धः ॥सू०३॥

अपकर्षक—पर के घर से द्रव्यादिकों को चुराने के लिये साथ में दूसरे चोरों को बुलाकर चोरी करने वाले, अथवा चुराये हुए धन को दूसरे स्थान में ले जाने वाले, अथवा शरीर आदि से भूषण निकालने वाले, (संपदायग) संप्रदायक—चोरों को अपने घर में रखकर उन्हें भोजन आदि देने वाले, अवछिंपक—ये भी चोर होते हैं सार्थघातक जनसमूहका घात करने वाले, बिलकोलीकारक—पर को व्यामोह करने के लिये विश्वास वचन बोलने वाले (निग्गहविप्पलुंपगा) शस्त्रादिक का भय दिखला करके दूसरों को रोक कर लूट करने वाले (बहुविहतेणिक्कहरणबुद्धी) तथा अनेकविधचौर्यकर्म करने में निपुण बुद्धिवाले होते हैं ऐसे (एते अण्णे य एवमादी परस्स दव्वाहिं जे अविरया) ये सब व्यक्ति तथा इनसे

દ્રવ્યાદિની ચોરી કરવાને માટે બીજા ચોરોનો સાથ લઇને ચોરી કરનારા, અથવા ચોરેલા ધનને બીજી જગ્યાએ લઈ જનારા. અથવા શરીર આદિ પરથી આ ભૂષણો હરી લેનારા, "सपदायग" સંપ્રદાયક—ચોરોને પોતાના ઘરમાં આશરો આપીને ભોજન આદિ દેનારા, અવછિંપક—તે પણ ચોર જ હોય છે, સાર્થઘાતક—જનસમૂહની હત્યા કરનારા, બિલકોલીકારક—બીજાને ફસાવવાને માટે વિશ્વાસ ઉત્પન્ન કરે તેવા વચનો બોલનારા, "निग्गहविप्पलुंपगा" શસ્ત્રાદિનો ભય બતાવી બીજાને અટકાવીને લૂટી લેનારા, 'बहुविहतेणिक्कहरणवुद्धी" તથા અનેક પ્રકારની ચોરી કરવામાં કુશળ બુદ્ધિવાળા હોય છે. એવા "एते अण्णेय एवमादी परस्स दव्वाहिं जे अविरया" એ બધા લોકો તથા તે સિવાયના બીજા

एवं 'येऽपि च कुर्वन्त्यदत्तादान' मिति पञ्चमान्तर्द्वारं निरूप्य 'यथा च कृतम्' इत्यदत्तादानस्य तृतीयान्तर्द्वारमाह-'विउलबले'त्यादि

मूलम्—विउलबलपरिग्गहा य बहवो रायाणो परधणम्मि गिद्धा सए दव्वे असंतुट्ठा परविसए अहिहणंति लुद्धा परधणस्स कए, चउरंग समत्तबलसमग्गा निच्छिय वरजोहजुद्धसद्धा य अहमहमितिदप्पिएहिं सेन्नेहिं संपरिवुडा पउमसगडसूइचक्कसागरगरुलबूहादिएहिं अणीएहिं उच्छरंता अहिभूय हरंति परधणाइं ॥ सू० ४ ॥

टीका—'विउलबलपरिग्गहा य' विपुलबलपरिग्रहाश्च=तत्र विपुलम्=विशालं बलं=सामर्थ्यं सैन्यं वा परिग्रहाः=परिवारो येषां ते तथा, बहवः=अनेके 'रायाणो' राजानः 'परधणम्मि गिद्धा' परधने गृद्धाः=परद्रव्यासक्ताः 'सए दव्वे' स्वके द्रव्ये =निजधने 'असंतुट्ठा' असन्तुष्टाः 'लुद्धा' लोभवन्तः सन्तः 'परविसए' परविषयान्

भिन्न इसी तरह से और भी व्यक्ति जो दूसरों के द्रव्यहरण करने रूप कार्य में विरति भाव से रहित होते हैं, इन सबको चोरों की श्रेणि में ही परिगणित जानना चाहिये ॥ सू० ३ ॥

इस तरह "जो अदत्तादान को करते हैं" इस रूप यह पंचम अन्तर्द्वार कहकर अब सूत्रकार "यथा च कृतम्" इस तृतीय अन्तर्द्वार को कहते हैं—'विउलबलपरिग्गहा' इत्यादि।

टीकार्थ—(विउलबलपरिग्गहा) विपुल सैन्य एवं परिवारवाले (बहवो रायाणो) अनेक राजा लोग (परधणम्मि गिद्धा) परधन में आसक्त तथा (सए दव्वे असंतुट्ठा) अपने पास के द्रव्य में असंतुष्ट और

લોકો કે જે બીજાના દ્રવ્યનું અપહરણ કરવાના કાર્યમા વિરતિભાવથી રહિત હોય છે—તે કાર્યમા લીન હોય છે—તે બધાને ચોરોની શ્રેણીમાજ મૂકવા જોઈએ॥ સૂ૦૩॥

આ રીતે "જે અદત્તાદાનનુ સેવન કરે છે" તે પ્રકારના આ પાંચમાં અન્તર્દ્વારનુ કથન કરીને હવે સૂત્રકાર "यथा च कृतम्" તે ત્રીજા અન્તર્દ્વારનું કથન કરે છે—"विउलबलपरिग्गहा" ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—"विउलबलपरिग्गहा" વિપુલ સૈન્ય અને પરિવાર વાળા "बहवो-रायाणो" અનેક રાજાઓ "परधणम्मि गिद्धा" પરધનમાં આસક્ત તથા "सए-दव्वे असंतुट्ठा" પોતાની પાસેના દ્રવ્યથી અસંતુષ્ટ અને "लुद्धा" લોભયુક્ત

=अन्यजनपदान् देशानित्यर्थः'परधणस्स कए'परधनस्य कृते=परद्रव्यग्रहणार्थम् 'अहिहणंति' अभिघ्नन्ति=आक्रमन्ति आक्रमणं कुर्वन्ति इत्यर्थः। तथा 'चाउरंगमसत्तबल समग्गा' चतुरङ्गसमस्तबलसमग्राः=चतुर्भिरङ्गैः=गजरथाश्वपदातिरूपैः सेनाऽवयवैः समस्तं=सम्पूर्णं बलं=सैन्यं तेन समग्राः=युक्ताः चतुरङ्गसेनायुक्ताः 'निच्छियवरजोहजुद्धसद्धा य' निश्चितवरयोधयुद्धश्रद्धाश्च=तत्र निश्चितैः=निर्धारितैः स्थायिरूपेण नियुक्तैर्निश्चयवद्भिर्वा वरैः=प्रशस्तैः योधैः=भटैर्यद् युद्धं तत्र श्रद्धा=प्रेमादरो येषां ते तथा 'अहमह'मिति दप्पिएहिं' अहमहमितिदर्पितैः='अहमेवैकवीरः' इत्येवं दर्पितैः=गर्वितैः 'सेन्नेहिं' सैन्यैः 'संपरिवुडा' सम्परिवृताः=सन्नद्धाः सज्जीभूता 'पउमसगडसूइचक्कसागरगरुलवूहादिएहिं' पद्मशकटसूचीचक्रसागरगरुडव्यूहादिकैः= पद्माकारव्यूहशकटव्यूहसूचीव्यूहचक्रव्यूहसागरव्यूहगरुडव्यूहादिकाः सैन्यरचनाविशेषास्ते विद्यन्ते येषु तैस्तथाभूतैः, 'अणीएहिं' अनीकैः=

(लुद्धा) लुब्ध होकर (परधणस्स कए) दूसरों का धन लेने के लिये (परविसए) दूसरे राजाओं के देशों के ऊपर (अहिहणंति) आक्रमण करते हैं, तथा (चाउरंगसमत्तबलसमग्गा) गज, रथ, अश्व एवं पदाति रूप चार अंगों वाली सेना से युक्त एवं (निच्छियवरजोहजुद्धसद्धा य) स्थायी रूप से नियुक्त किये हुए अथवा अटल निश्चय से युक्त हुए ऐसे प्रशस्त योद्धाओंके साथ युद्ध करने में आदरभाव वाले और (अहमहमिति दप्पिएहिं) "मैं ही एक वीर हूं" इस प्रकार के गर्व वाले (सेन्नेहिं) सैन्य से (संपरिवुडा) परिवृत-युक्त होकर (पउमसगडसूइचक्कसागरगरुलवूहादिएहिं) पद्माकार व्यूहवाले, शकटव्यूहवाले, सूचीव्यूहवाले, चक्रव्यूहवाले, सागरव्यूहवाले, एवं गरुडव्यूह आदि वाले (अणीएहिं) सैन्य से प्रतिपक्षी के सैन्य को (उच्छरंता)

થઈને "परधणस्स कए" બીજાનું ધન પ્રાપ્ત કરવાને માટે "परविसए" બીજા રાજાના પ્રદેશો ઉપર "अहिहणंति" આક્રમણ કરે છે, તથા 'चाउरंग समत्त-बलसमग्गा" હાથી, રથ, અશ્વ અને પાયદળ એ ચતુરંગી સેના સહિત અને "निच्छियवरजोहजुद्धसद्धा य' સ્થાયી રીતે કરેલ અથવા દૃઢ નિશ્ચયવાળા અને યુદ્ધ કરવામાં આદરભાવ રાખનારા પ્રશસ્ત યોદ્ધાઓની સાથે અને "अहमहमिति दप्पिएहि" "હું જ એક વીર છું" એ પ્રકારના ગર્વવાળા "सेन्नेहिं" સૈન્યથી "संपरिवुडा" પરિવૃત-યુક્ત થઈને "पउमसगडसूइचक्कसागर-गरुलवूहादिएहि" પદ્માકાર વ્યૂહવાળા, શકટવ્યૂહવાળા, સૂચીવ્યૂહવાળા, ચક્રવ્યૂહ વાળા, સાગર વ્યૂહવાળા અને ગરુડ આદિ વ્યૂહવાળા, "अणीएहिं" સૈન્યથી

सैन्यैः 'उच्छरंता' आस्तृण्वन्तः=प्रतिपक्षसेनामाच्छादयन्तः, 'अहिभूय' अभिभूय=आक्रमणेन शत्रुसैन्यं पराजित्य हठात् 'परधणाइं' परधनानि हरन्ति ॥सू०४॥

तथान्ये राजादयो यथा परधनादीन्यपहरन्ति तदाह—'अवरे' इत्यादि—

मूलम्—अवरे रणसीसलद्धलक्खा संगामं अइवयंति, सण्णद्धबद्धपरियरउप्पाडियचिंधपट्टगहियाउहपहरणा माढीवरवम्मगुंडिया, आविद्धजालिया कवयकंडगिया, उरसिरमुहबंद्धकंठतोणा, पासियवरफलगरइयपहकरसरभसखरचावकरकरंचियसुनिसियसरवरिसवडकरगमुयंतघणचंडवेगधारानिवायमग्गे, अणेगधणुमंडलग्गसंधियउच्छलियसत्ति——कणग——वामकर——गहिय——खेडग——निम्मल——निक्किट्ठ—खग्ग—पहरंत-कुंत—तोमर-चक्क—गया—परसु—मुसल—लंगल—सूल—लउड—भिंडिपाल—सव्वल—पट्टिस—चम्मेट्ठ—घण—मोट्ठिय—मोग्गरवर—फलिह—जंत पत्थर—दुहण—तोण कुवेणी—पीढाकलिए ॥ सू० ५ ॥

टीका—'अवरे' अपरे=केचित् नृपाः 'रणसीसलद्धलक्खा' रणशीर्षलब्धलक्ष्याः=रणशीर्षे=संग्रामशिरसि लब्धलक्ष्याः=वैरीवेधने—सिद्धहस्ताः सन्तः स्वयमेव 'संगामं'

आच्छादित करते हुए (अहिभूय) अपने आक्रमणों से उसे पराजित करके (परधणाइं) परधन को (हरंति) हरण करते हैं ॥सू०४॥

जो अन्य राजादिक पर के धन आदि हरण करते हैं उनको कहते हैं—'अवरे' इत्यादि

टीकार्थ—(अवरे) कितनेक राजा (रणसीसलद्धलक्खा) जो रणशीर्षलब्ध लक्ष्यवाले होते हैं—वैरी को मारने में सिद्ध हस्त होते हैं

પ્રતિપક્ષીના સૈન્યને " उच्छरंता " ઘેરી લઈને " अहिभूय " પોતાના હુમલાથી તેને હરાવીને " परधणाइं " પરધનનું " हरति " હરણ કરે છે ॥ સૂ ૪ ॥

જે બીજા રાજાદિકો પરધન આદિનુ હરણ કરે છે તેમનું વર્ણન કરતા સૂત્રકાર કહે છે—" अवरे " ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—"अवरे" બીજા કેટલાક રાજાઓ "रणसीसलद्धलक्खा" જે રણશીર્ષલબ્ધરક્ષ્યવાળા હોય છે-દુશ્મનની હત્યા કરવામા નિપુણ હોય છે " संगामं-

संग्रामे 'अइवयंति' अतिपतन्ति=युद्धं कर्तुं प्रवर्तन्ते। कथं भूताः? इत्याह— 'सण्णद्धबद्धपडियर-उप्पाडियचिंधपट्टगहियाउहपहरणा' सन्नद्धबद्धपरिकरोत्पाटितचिन्हपटगृहीतायुधप्रहरणाः=तत्र सन्नद्धाः=युद्धसामग्रीभिः सज्जीभूतास्तथा, बद्धः परिकरः=कवचो यैस्ते बद्धपरिकराः=बद्धकवचाः तथोत्पाटितः=दृढं बद्धो मस्तके चिन्हपटः रक्तपट्टादि स्वचिन्हविशेषो यैस्ते तथा,गृहीतानि=परिधृतानि रिपुहननार्थमायुधानि—बाणादीनि प्रहरणानि=खड्गादीनि यैस्ते च ,तथा पदत्रयस्य कर्मधारयः। 'माढीवरवम्मगुंडिया' माढीवरवर्मगुण्डिताः=तत्र-माढी=शरीरत्राणविशेषाः देशीशब्दोऽयं वरवर्माणि=प्रधानकवचानि तैर्गुण्डिताः=आच्छादितशरीरा', आविद्धजालिकाः=निबद्धलोहकञ्चुकाः 'कवयकंडगिया' कवचकण्टकिताः=सकण्टक कवचेन कण्टकिताः, 'उरसिरमुहबद्धकंठतोणा' उरः शिरोमुखबद्धकण्ठतोणाः=तत्र

(संगामं अइवयंति) वे स्वयमेव संग्राम में उतर आते हैं—युद्ध करने में प्रवृत्ति वाले हो जाते हैं ऐसे ये राजा लोग (सण्णद्धबद्धपडियर उप्पाडियचिंधपट्टगहियाउहपहरणा) (सण्णद्ध) पहिले तो युद्धसामग्री से सज्जीभूत होते है, (बद्धपडियर) कवच से बांधकर अपने शरीर को सुरक्षित रखते हैं, (उप्पाडियचिंधपट्ट) मस्तक पर रक्तपट्टादिरूप चिह्नविशेष को दृढतररूप में बाँधते हैं, (गहियाउहपहरणा) रिपु को नष्ट करने के लिये बाण आदि आयुधों को और खड्ग आदि प्रहरणों को अपने पासमें रखते हैं (माढीवरवम्मगुंडिया) माढी—शरीर त्राणविशेष एवं उत्तम कवच से इनका शरीर आच्छादित रहता है, (आविद्धजालिका) इनके शरीर पर लोहनिर्मित कवच बंधा रहता है (कवयकंडगिया) काँण्टें वाले कवच से ये युक्त होते हैं, (उरसिरमुहबद्ध

अइवयंति" તેઓ જાતે જ રણસંગ્રામમાં ઉતરી પડે છે—યુદ્ધ કરવાને તૈયાર થઇ જાય છે, એવા તે રાજાઓ "सण्णद्धबद्धपडियरउप्पडिय-चिंधपट्टगहियाउहपहरणा" "सण्णद्धा" પહેલાં તો યુદ્ધની સામગ્રી સજ્જ કરાવે છે, "बद्धपडियर" બખતર પહેરીને પોતાના શરીરને સુરક્ષિતબનાવે છે "उप्पाडिय चिंधपट्ट" મસ્તક પર લાલ પટ્ટિ આદિ ખાસ ચિહ્નને મજબૂત રીતે બાંધે "गहियाउहपहरणा" દુશ્મનનો નાશ કરવાને માટે બાણ આદિ આયુધો અને તલવાર આદિ શસ્ત્રો પોતાની પાસે રાખે છે "माढीवरवम्मगुंडिया" માઢી—શરીરના રક્ષણ માટેનું એક સાધન, અને ઉત્તમ બખતરથી પોતાના શરીરને આચ્છાદિત કરે છે, "आविद्धजालिका" તેમના શરીર પર લોઢાનું બખ્તર બાંધેલું હોય છે, "कवयकंडगिया" તેઓ કાંટાળાં કવચથી યુક્ત હોય છે,

उरसा=वक्षःस्थलेन सह शिरोमुखाः=उर्ध्वमुखा बद्धाः कण्ठे=ग्रीवायां तोणाः=तूणीराः 'तरकस' इति 'तीरभाता' इति वा भाषाप्रतीता यैस्ते तथा एतादृशा नृपाः गच्छन्ति संग्रामे इत्याह — 'पासियवरफलगरइयपहकरसरभसखरचावकर-करंचियसुनिसियसरवरिसवड्डकरकमुयंतघगचंडवेगधारानिवायमग्गे' पाशित-वरफलकरचितप्रकरसरभसखरचापकरकराञ्चितसुनिशितगरवर्षच्छकरकमुच्यमानघन-चण्डवेगधारानिपातमार्गे=तत्र 'पासिय' इति स्पृष्टानि= हस्ते धृतानि वरफलकानि=परशस्त्रप्रहारप्रतिरोधकशस्त्राणि 'ढाल' इतिप्रसिद्धानि यैस्ते, तथा रचितः=कृतो रिपुशस्त्रप्रतिघातार्थे 'पहकर' इति प्रकरः = रचनाविशेषेण सैन्यसमूहो यैस्ते, तथा सरभसाः=सहर्षा सवेगा वा खरचापकराः=निष्ठुरधनु-

---

कंठतोणा) इनके वक्षस्थल पर तूणीर–तरकस–बांधा जाता है, इनमें उर्ध्वमुख करके बाणग्रीवा के पास भरे रहते हैं। इस प्रकार से पहिले सज्जित होकर कितनेक राजा संग्रामभूमि में युद्ध करने के लिये (अइ-वयंति) उतरते हैं। इस प्रकार से यहां संबंध लगा लेना चाहिये। जिस युद्ध में राजा उतरते हैं वह युद्ध किस प्रकारका होता है? सो कहते हैं– जिस संग्रामभूमिमें (पासियवरफलग) निष्ठुर धनुर्धारीजन अपने ऊपरसे परके शस्त्रप्रहारोंको रोकनेके लिये ढालोंको हाथोंमें लिये होतेहैं, (रइयप-कर) शत्रु के शस्त्रों का प्रतिघात करने के लिये वे अपनी २ सेना को एक विशेष प्रकार की रचना में स्थापित किये हुए रहते हैं तथा (सर-भस) परस्पर में युद्ध करने का चाव जहां आपसमें खूब चढ़ा बढ़ा होता है–हर्ष अथवा वेग से जो युक्त होते हैं ऐसे (चावकर) धनुर्धारियों

"उरसिरमुहवद्धकठतोणा" તેમનાં વક્ષસ્થળ પર તૂણીર—ભાથા બાંધેલા હોય છે તે ભાથામાં બાણો ઉર્ધ્વમુખ રહે તેમ, ડોકની પાસે ભરેલા રહે છે. આ રીતે પહેલા સજ્જ થઈને કેટલાક રાજાઓ યુદ્ધ કરવાને માટે રણમેદાનમા "अइ-वयंति" ઉતરી પડે છે, એ પ્રકારનો સંબંધ અહીં સમજી લેવાનો છે. જે યુદ્ધમાં રાજા ઉતરે છે તે યુદ્ધ કેવુ હોય છે? તેના જવાબમા કહે છે— જે રણમેદાનમાં "पासियवरफलग" નિર્દય ધનુર્ધારીઓ દુશ્મનોના શસ્ત્ર પ્રહારોને રોકવાને માટે પોતાના હાથમાં ઢાલ રાખે છે, તથા "रइयपहकर" શત્રુના શસ્ત્રોનો મુકાબલો કરવાને માટે તેઓ પોતપોતાની સેનાને એક વિશિષ્ટ પ્રકારની વ્યૂહ રચ-નામાં ગોઠવે છે, તથા "सरभस" અન્યોન્ય લડવાનો શોખ જ્યા ખૂબ રહે છે. હર્ષ અથવા વેગથી જે યુક્ત હોય છે એવા "चावकर" ધનુર્ધારીઓ દ્વારા જ્યાં "करंचि-

धारिणः तैः कराञ्चिताः=कराकृष्टा ये सुनिशिताः=अतितीक्ष्णाः शराः=बाणास्तेषां यो वर्षः=वर्षणं स वृद्धकरकमुञ्चद् घनचण्डवेगधारानिपात इव यत्र, स तथा, यथा मेघस्य प्रचण्डवेगयुक्तः स्थूलोपलधारानिपातो भवति तद्वत् शरवर्षणं यत्रेत्यर्थः तस्य मार्गद्वारभूतस्तस्मिन् संग्रामे पुनः कीदृशे ? इत्याह–'अणेगधणुमंडलग्गसंधियउच्छलियसत्तिकणगवामकरगहियखेडगनिम्मलनिक्किट्ठखग्गपहरंतकुंततोमरचक्कगयापरसुमुसललंगलसूलल उडभिंडिपालसव्वलपट्टिसचम्मेट्ठघणमोट्ठिमोग्गरवरफलिहजंतपत्थरदुहणतोणकुवेणीपीढाकलिए' तत्र 'अणेगधणुमंडलग्ग' अनेकधनुर्मण्डलाग्राः = अनेकानि धनूंषि मण्डलाग्रानि = खड्गविशेषाश्च तथा 'संधियउच्छलियसत्तिकणग' सन्धितोच्छलितशक्तिकनकाः = सन्धिताः= सन्धानीकृताः=सज्जीकृता इत्यर्थः उच्छलिताः=उर्ध्वंगताश्च शक्तयः=शस्त्रविशेषाः कनकाः=बाणाश्च तथा 'वामकरगहियखेडगनिम्मलनिक्किट्ठखग्ग' वामकरगृहीत खेटकनिर्मलनिकृष्टखड्गा=तत्र वामकरे गृहीतानि खेटकानि = परप्रहारप्रतिरोधकशस्त्राणि 'ढाल' इति प्रसिद्धानि निर्मलाः=उज्ज्वलीकृताः तीक्ष्णीकृताः खड्गाः

द्वारा जहां पर (करंचियसुनिसियसरवरिस) अति तीक्ष्ण बाणों की वर्षा मेघों के द्वारा (वड्डुकरकमुयंतघणचंडवेगधारानिवायमग्गे) प्रचण्डवेगवाली स्थूल ओलों की वर्षा जैसी की जाती हैं। तथा जो संग्राम (अणेगधणुमंडलग्ग) अनेक धनुषों से एवं मंडलाग्रों–तलवार विशेषों से (संधियउच्छलियसत्ति) सज्जीकृत उच्छलित शक्तियों से–इस नाम के शस्त्र विशेषों से, (कणग) कनकों से–बाणों से (वामकर गहिय खेडग) वामकर में गृहीत ढालों से, (निम्मलनिक्किट्ठखग्ग) तीक्ष्णीकृत खड्गों से, (पहरंत) प्रहार करनेमें व्याप्रियमाण ऐसे (कुंत)

यसुनिसियसरवरिस' અતિશય તીક્ષ્ણ બાણોની વૃષ્ટિ વાદળાઓ દ્વારા "वड्डुकरकमुयंतघणचडवेगधारानिवायमग्गे" પ્રચંડ વેગવાળાં મોટા કરાની વૃષ્ટિની જેમ કરાય છે. તથા જે સંગ્રામ "अणेगधणुमंडलग्ग" અનેક ધનુષોથી અને મંડલાગ્રો (તલવારથી–વિશેષો)થી "संघिय–उच्छलिय सत्ति" સજ્જ કરેલ ઉચ્છલિત શક્તિયોથી (એ નામનાં શસ્ત્ર વિશેષોથી) "कणग" કનકોથી બાણોથી, "वामकरगहिय खेडग" ડાબા હાથમા રાખેલ ઢાલોથી, "निम्मल निक्किट्ठखग्ग" તીક્ષ્ણ બનાવેલ ખડ્ગોથી "पहरंत" પ્રહાર કરવામાં વપરાતા "कुंत" ભાલાઓથી "तोमर"

तथा 'पहरंत' प्रहियमाणाः=प्रहारे व्याप्रियमाणा ये कुन्ताः=भल्लाः तोमराश्च= 'सुरज' इति भाषा प्रसिद्धाः 'चक्क' चक्राणि 'गया' गदाः=प्रसिद्धाः 'परसु' परशवः =कुठाराः तथा मुसलाः=प्रसिद्धाः 'लंगल' लाङ्गलानि=हलानि शूलानि= लौहास्त्रविशेषाः 'लउड' लगुडाः=यष्टयः 'भिंडिपाल' भिन्दिपालाः=गोफण' इति ख्याताः 'सव्वल' इतिशस्त्रविशेषाः 'पट्टिस' पट्टिशाः=भल्लप्रभेदाः 'चम्मेट्ठ' चर्मेष्टाः=चर्मवद्धपाषाणमयास्त्रविशेषाः 'घण' घनाः=अयोघनाः 'घण' इति भाषा प्रसिद्धाः 'मोट्ठिया' मौष्टिकाः=मुष्टिप्रमाणास्त्रविशेषाः मोग्गर' मुद्गराश्च =प्रतीताः 'वरफलिह' वरपरिघाः=लोहबद्धलगुडाः 'जंतपत्थर' यन्त्र प्रस्तरा= गोफणादि यन्त्रपाषाणाः 'दुहण' द्रुघणाः मुद्गरविशेषाः, तोणाः=तूणीराः–

कुन्तों से–भालों से, (तोमर) तोमरों से–सुरजों से (चक्क)चक्रोंसे (गया) गदाओं से, (परसु) परशुओं से–कुठारों से (मुसल) मुसलों से, (हल) हलों से, (सूल) शूलों से, (लउड) लकुटों–(लाठियों) से (भिंडिपाल) भिंदिपालों से–गोफणों से, (सव्वल) सव्वलों से (सव्वल) यह शस्त्र विशेष है जो अग्रभाग में तीक्ष्ण ऐसा लोहे का डंडा होता है, (हिन्दी में भी इसे सव्वल ही कहते हैं) (पट्टिस) पट्टिशों से–भाले के आकार जैसे एक प्रकार के शस्त्रों से, चर्मेष्टों से–चर्मवद्धपाषाणमय अस्त्रविशेषों से (घण) घण–लोहपिंड, इसे भाषा में भी घण कहते हैं घणों से, (मोट्ठिय) मौष्टिकों से–मुष्टिप्रमाण अस्त्रविशेषों से, (मोग्गर) मुद्गरों से, (वरफलिह) वरपरिघों से–लोहबद्ध लाठियों से, (जंतपत्थर) यंत्र प्रस्तरों से, गोफण आदि यंत्रों से, फेंके गये पत्थरों से, (दुघण) द्रुघणों से एक प्रकार के मुद्गर विशेषों से, (तोण)

તોમરથી–સુરજોથી, "चक्क" ચક્રોથી, 'गया" ગદાઓથી, 'परसु" પરશુ-ઓથી, "मुसल" મુસળોથી, 'हल" હળોથી, "सूल" ત્રિશૂળોથી, "लउड" લાઠીઓથી, "भिंडिपाल" ભિંદિપાલો (ગોફણ)થી, "सव्वल" સબ્બલોથી, (તે એક શસ્ત્ર છે તે લોઢાના દંડા જેવું હોય છે અને તીક્ષ્ણ અણીવાળુ હોય છે તેને ગુજરાતીમાં કોશ કહે છે) "पट्टिस" પટ્ટિશોથી (પટ્ટિશ ભાલાના આકારનું શસ્ત્ર હોય છે) ચર્મેષ્ટોથી (ચર્મ બદ્ધ પાષાણ મય અસ્ત્ર વિશે-શોથી) "घण" ઘણથી, "मोट्ठिय" મૌષ્ટિકોથી (મુષ્ટિ પ્રમાણ અસ્ત્ર વિશે- "मोग्गर" મગદળોથી, "वरफलिह" વર પરિઘોથી–(લોહબદ્ધ લાઠીઓથી "जंतपत्थर" યંત્ર પ્રસ્તરોથી (ગોફણ આદિ સાધનોથી ફેંકાયેલા પથ્થરોથી) "दुघण" ઘણોથી (એક પ્રકારના મગદળોથી) "तोण" તૂણીરોથી (ભાથા-

'भाता' इति प्रसिद्धाः कुवेण्यः=शस्त्रविशेषाः 'पीढा' पीठानि=यन्त्ररूपास्त्रविशेषाश्च, इत्येतैशस्त्रविशेषैः 'कलिए' कलिते=युक्ते संग्रामे अतिपतन्तीत्यन्वयः॥सू० ५।

पुनरपि सङ्ग्रामं वर्णयति—'इली' इत्यादि ।

मूलम्—इलीपहरणमिलिमिलितं खिप्पंतविज्जुज्जलविरचियसमप्पहनहतलफुडपहरणे, महारणसंखभेरीवरतूरपउरपडुपडहाहयनिनायगंभीरणंदियपक्खुभिय विउलघोसे, हयगयरहजोहतुरियपसरियरयुद्धयतमंधयारबहुले, कायरनरनयणहिययवाउलकरे, विलुलियउक्कडवरमउडकिरीडकुंडलोडुदामाडोविए, पडगपडागउच्छियधयवेजयंतीचामरचलंतछत्तंधयारगंभीरे, हयहेसियहत्थिगुलगुलाइयरहघणघणाइयपाइक्कहरहराइयअप्फोडियसीहनायछिलियविघुट्ठुक्किट्ठकंठकयसद्दभीमगज्जिए सयराहहसंतरुसंतकलकलरवे, आसूणिय वयणरुद्दभीमदंसणाधरोट्ठगाढदट्ठसप्पहारकरणुज्जयकरे, अमरिसवसतिव्वरत्तनिद्दारितच्छे, वेरदिट्ठिकुद्धचेट्ठियतिवलीकुडिलभिउडीकयललाडे वह परिणयनरसहस्सविक्कमवियंभियबले॥ सू०६ ॥

टीका—'इलीपहरणमिलिमिलितखिप्पंतविज्जुज्जलविरइयसमप्पहनहतले' इलीपहरणमिलिमिलिन्तक्षिप्यमाणविद्युदुज्ज्वलविरचितसमप्रभनभस्तले

तूणीरों से-भाताओं से, (कुवेणी) कुवेणियों से-एक प्रकार के शस्त्रों से, (पीठ) पीठों से-यन्त्ररूप अस्त्रविशेषों से (आकलिए) युक्त रहते हैं। ऐसे उस भयंकर संग्राम में कितनेक राजा लोक परधन को हरण करने के लिये ही उतरते हैं ॥ सू०५ ॥

ओथी) "कुवेणी" कुवेणीओथी (એક પ્રકારના શસ્ત્રો) 'पीठ" पीठोथी (—यंत्ररूप અસ્ત્ર વિશેષોથી) "आकलिए" युक्त रहे छे. એવા તે ભયંકર સંગ્રામમાં કેટલાક રાજાઓ પરધનનું હરણ કરવાને માટેજ ઉતરે છે. ॥સૂ૦૫॥

=तत्र इलीभीः=द्विधाधारैः खड्गविशेषैः महरणैः=शस्त्रैश्चानेकविधैः 'मिलिमिलित' इति चाकचिक्ययुक्तैःक्षिप्यमाणैः भटैर्निपात्यमानैः प्रह्रियमाणैरित्यर्थः, पुनः कीदृशैः खड्गादिशस्त्रैः ? विद्युदुज्ज्वलैः=विद्युद्वद्विद्योतमानैःविरचितं=कृतं समप्रभं=स्वदृशप्रकाशयुक्तं नभस्तलं यत्र स तथा तस्मिन्, तथा' फुडपहरणे ' स्फुटप्रहरणे स्फुटानि=स्पष्टानि प्रहरणानि=शस्त्राणि यस्मिन् स तथा तस्मिन् । ' महारणसंखभेरिवरतूरपउरपडुपडहाहयनिनायगंभीरणंदियपक्खुभियविउलघोसे ' महारणशङ्खभेरिवरतूर्यप्रचुरपटुपटहाहतनिनादगम्भीरनन्दितप्रक्षुभितविपुलघोषे = तत्र महारणे=महायुद्धे ये शङ्खाः=प्रतीताः भेर्यः=रणभेर्यः वरतूर्याणि=प्रधानवादित्राणि तानि च प्रचुराणि=प्रभूतानि पटूनि=स्पष्टध्वनीनि च पटहाश्च=' ढोल ' इति प्रसिद्धास्तेषामाहतानां=वादितानां निनादेन=शब्देन गम्भीरेण नन्दिताः=हर्षिताः वीराः

फिर भी संग्राम का वर्णन करते हैं-' इली पहरण ' इत्यादि ।

टीकार्थ—(इली) दोनों तरफ जिनपर धार निकल रहि है ऐसे दुधारे (पहरण) खड्गादि अनेक शस्त्र जो (मिलिमिलित) अत्यन्त चमकीले हैं और (खिप्पत) शत्रुओं पर फेंके जाते समय (विज्जुज्जल) विजली जैसे चमकते हैं, ऐसे शस्त्रों ने (विरइयसमप्पहनहतले) नभस्तल को अपने सामान प्रकाश वाला वना दिया है अर्थात् जो लपलपाते हुए अति तीक्ष्ण चमकीले शस्त्रों से आकाशमण्डल चमकीला वन रहा है ऐसे संग्राम में (फुडपहरणे) तथा जिसमें शस्त्र दिखलाई दे रहे हैं तथा जो (महारणे) महासंग्राम में वजने वाले (संख) शंखों से, (भेरी) रणभेरियों से (वरतूरपउरे) स्पष्टध्वनिसंपन्न प्रधान २ तूर्य-वादित्रों से, (पडुपडहाहयनिनायगंभीर) बजते हुए ढोलों के गंभीर शब्दों से (णंदिय) हर्षित बने हुए जोशीले

હજી પણ સૂત્રકાર સંગ્રામનું વર્ણન કરે છે-" इली पहरण " ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ-"इली"બન્ને તરફ જેને ધાર છે તેવાં બેધારા 'पहरण' ખડગ વગેરે અનેક શસ્ત્રો જે " मिलिमिलित " અતિશય ચળકતા છે, અને "खिप्पंत" શત્રુઓ તરફ ફેંકવામાં આવે ત્યારે " विज्जुज्जल " વિજળી જેવા ચમકે છે, એવા શસ્ત્રોએ " विरइयसमप्पहनहतले " આકાશને પોતાના જેવું પ્રકાશિત બનાવી દીધું છે, એટલે કે જે ચકચકિત અતિ તીક્ષ્ણ ચળકતા શસ્ત્રોથી આકાશ મંડળ ચળકતું બની રહ્યું છે એવા સંગ્રામમા " फुडपहरणे " તથા જેમા શસ્ત્રો નજરે પડે છે તથા જે " महारण " મહાસંગ્રામમાં વાગતા " संख " શંખોથી, " भेरी " રણભેરીઓથી, " वरतूरपउर " સ્પષ્ટ ધ્વનિવાળાં મુખ્ય મુખ્ય તૂર્ય - વાજિંત્રોથી, " पडुपडहाहयनिनायगभीरे " વાગતા ઢોલોના ગંભીર

प्रक्षुभिताः=क्षोभमापन्नाश्च ये कातरा जनास्तेषां विपुलः=विशालः घोषो ध्वनिर्यस्मिन् स तथा तस्मिन् 'हयगयरहजोहतुरियपसरियरयुद्धयतमंधयारबहुले' हयगजरथयोधत्वरितप्रसृतरजउद्धततमाऽन्धकारबहुले=तत्र हयाः = अश्वाः, गजाः-प्रसिद्धाः, रथाः-स्यन्दनाः, योधाः-सुभटास्तेषां पादाभिघातेन त्वरितं=शीघ्रं प्रसृतं-विस्तारमुपगतं रजः-धूली, तद् उद्धततमम्-अतिशयेनोद्धूतमुड्डीयमानं तेनाऽन्धकारबहुले। तथा "कायरनरनयणहिययवाउलकरे" कातरनयनहृदयव्याकुलकरे, तत्र = कातराः-अधीराः युद्धे पलायनस्वभावा ये नरास्तेषां नयनहृदययोः व्याकुलकरे=क्षोभजनके तथा 'विलुलियउक्कडवरमउडकिरिडकुंडलोडुदामाडोविए' विलुलितोत्कटवरमुकुटकिरिटकुण्डलोडुदामाटोपिते=तत्र विलुलितानि=इतस्ततश्चलितानि उत्कटवराणि=उत्तमप्रकृष्टानि यानि मुकुटानि=प्रसिद्धानि किरीटानि=त्रिशिखरशिरोभूषणानि कुण्डलानि=कर्णाभरणानि उडुदामानि=नक्षत्रमालाकारभूषणानि च तैराटोपितः=विस्तारितो यः स तथा तस्मिन्

वीरों के एवं (पक्खुभिय) क्षुभित हुए कायर जनों के (विउलघोसे) विपुल घोषों से व्याप्त हो रहा है, तथा (हयगयरहजोहतुरियपसरियरययुद्धयतमंधयारबहुले) (हय) घोड़ों के, (गय) गजों के, (रह) रथों के, (जोह) योद्धाओं के, (उद्धयतम) पैरों के अत्यन्त आघात से उडकर (तुरियपसरिय) शीघ्र फैली हुई (रय) धूली से जहां पर (अंधयारबहुले) अंधकार ही अंधकार हो रहा है (कायरनरनयणहियय-वाउलकरे) कायरजनों के नयन और हृदयको जो व्याकुल बनारहा है। (विलुलिय) इधर उधर लटकते हुए (उक्कडवर) उत्तमोत्तम ऐसे (मउड) मुकुटों से, (किरीड) किरीटों से-तीनशिखर वाले शिरो भूषणों से (कुंडल) कुण्डलों से, (उडुदाम) नक्षत्र मालाकार भूषणों

નાદથી, "णंदीय" આનંદિત બનેલા જોશીલા વીરોના અને "पक्खुभिय" ક્ષોભ પામેલ કાયર જનોના "विउलघोसे" વિપુલ આવાજથી વ્યાપ્ત થઇ ગયું છે. તથા "हयगयरहजोहतुरियपसरियरयुद्धयतमंधयारबहुले" "हय" ઘોડાના, "गय" હાથીઓના, "रह" રથોના "जोह" યોદ્ધાઓના "उद्धयतम" પગના અત્યંત આઘાતથી ઉડીને "तुरियपसरिय" ઝડપથી ફેલાયલી "रय" ધૂળથી જ્યાં 'अधयारबहुले" અતિશય અંધકાર થઈ ગયો છે, "कायरनरनयणहिययवाउलकरे" કાયર લોકોના નયન અને હૃદયને જે વ્યાકુળ કરી રહેલ છે, 'विलुलिय" અહીં તહીં લટકતા "उक्कडवर" ઉત્તમોત્તમ 'मउड" મુગટોથી, "किरीड" કિરીટોથી-ત્રણ શિખરવાળા શિરોભૂષણોથી, "कुंडल" કુંડળોથી "उडुदाम" નક્ષત્ર માલાકાર ભૂષણોથી, "आडोविए" જે આડંબર યુક્ત બનેલ છે. "पगढ"

'पगडपडागउच्छियधयवेजयती.चामरचलंतछत्तधयारगंभीरे' प्रकटपताकोच्छ्रित-ध्वजवैजयन्तीचामरचलच्छत्रान्धकारगम्भीरे=तत्र प्रकटाः=दूरस्था अपि दृश्यमाना याः पताकाः=विशालपताकाः उच्छ्रिताः=अत्यूर्ध्वस्थिताः ये ध्वजाः=लघुपताकाः वैजयन्त्यश्च=विजयपताका तथा चामराणि चलन्ति छत्राणि च तैः कृतेनान्धकारेण गम्भीरे=गहने तथा 'हयहेसियहत्थिगुलगुलाइयरहघणघणाइयपाइक्कहरहराइय आफोडियसीहनायछिलिय विघुट्ठुक्किट्ठकंठकयसद्दभीमगज्जिए' तत्र 'हयहेसिय' हयहेषितं=हयानाम्=अश्वानां हेषितं=शब्दितं 'हत्थिगुलगुलाइय' हस्तिगुलगुलायितं हस्तिनां=गजानां गुलगुलायितं=गुलगुलशब्दः 'रहघणघणाइय' रथघनघनायितं= धावतां रथानां घनघनेति शब्दः तथा 'पाइक्कहरहराइय' पदाति हरहरायितं= पदातीनां सैनिकानां हरहरेति शब्दितं 'आफोडिय' आस्फोटितं=बाहुपरिस्फोटनं 'सीहनाय' सिंहनादः=सिंहस्येव शब्दकरण 'छिलिय' सण्टितं=सीत्कारकरणं

से (आडोविए) जो आडंबर युक्त बना हुआ है। (पगड) दूर रहने पर भी दृश्यमान ऐसी (पडाग) विशाल पताकाओं से, (उच्छिय) ऊँची की हुई ऐसी (धय) लघुपताकाओं से, (वेजयंती) वैजयन्ती-विजय-सूचक ऐसी ध्वजाओं से, तथा (चामर) चामरों से एवं (चलंतछत्त) चंचलछत्रोंसे किये गये (अंधयार) अंधकारसे जो (गंभीरे) गहन हो रहाहै, तथा जहां (हयहेसिय) घोड़ों की हिनहिनाटके शब्द हो रहे हैं, (हत्थिगु-लगुलाइय) हाथियों की गुरगुलाहट हो रही है, (रहघणघणाइय) इधर उधर दौड़ते हुए रथों का जहां घनघनाट शब्द हो रहा है, (पाइक्कहर-हराइय) पदातियों की जहां हर हराट-'हरहर' इस प्रकार को तुमुल ध्वनि हो रही है, (आफोडिय) वीर अपनी २ भुजाओं का जहां आस्फालन-कर रहे हैं-फटकार रहे हैं, (सीहनाय) सिंह के जैसी जहां

દૂર દૂર હોવા છતા પણ નજરે પડતી એવી "पडाग" વિશાળ પતાકાઓથી, "उच्छिय" ઉંચી રાખેલી એવી 'धय" લઘુપતાકાઓથી, "वेजयंती" વિજય સૂચક ધ્વજાઓથી, તથા "चामर" ચામરોથી અને "चलंतछत्त" ચંચળ છત્રોથી કરાયેલ "अंधयार" અંધકારથી જે 'गंभीरे" ગહન થઇ ગયુ છે, તથા જ્યાં "हयहेसिय" ઘોડાઓની હણ હણાટીનો આવાજ થઇ રહ્યો છે, "हत्थिगुलगुलाइय" હાથીઓની ગુલગુલાહટ થઇ રહી છે, "रहघणघणाइय" આમ તેમ દોડતા રથોનો ઘણઘણાટ જ્યા ચાલી રહ્યો છે, "पाइक्क हरहराइय" પદાતી-પાયદળનો જ્યાં હર હરાટ "હર હર" એ પ્રકારનો ભયંકર ધ્વનિ ચાલી રહ્યો છે, "आफोडिय" જ્યાં વીરો પોત પોતાની ભુજાઓનું આસ્ફાલન કરી રહ્યા છે-ફટકારી રહ્યા છે "सीहनाय" સિંહના જેવી ગર્જના જ્યા થઇ રહી છે,

'विघुट्ठ' विघुष्टं=विरूपघोपकरणम् 'उक्किट्ठकंठकयसद्द' उत्कृष्टकण्ठकृतशब्दः= हर्षात् उत्कृष्टः-अतिशयितः कण्ठेन कृतः शब्दः गलगलाटरूपः स एव 'भीमगज्जिय' भीमगर्जितं-मेघध्वनिश्च, इत्येतानि हयहेषितादीनि सन्ति यत्र स तथा तस्मिन्। पुनः कीदृशे? तदाह—'सयराहहसंतरुसंतकलकलरवे' सयराहहसत् रुष्यत् कलकलरवे='सयराह' इति युगपत् हसतां रुष्यतां=क्रुध्यतां सैनिकानां कलकलरवः=कोलाहलो यत्र स तथा तत्र। तथा-'आसूणियवयणरुद्दभीमदसणाधरोट्ठगाढदट्ठसप्पहारकरणुज्जयकरे' आशूनितवदनरौद्रभीमदशनाधरोष्ठगाढदष्टसत्प्रहारकरणोद्यतकरे=तत्र आशूनितेन=ईषत्स्थूलीकृतेन वदनेन=मुखेन ये रौद्राः=क्रोधचण्डास्ते तथा, तथा-भीमं-क्रोधावेशाद् भयङ्करं यथास्यात्तथा दशनैः=दन्तैरधरोष्ठं गाढं दष्टं यैस्ते तथा परसुभटास्तेषां सत्प्रहारकरणे = शोभनतया शस्त्र

गर्जना हो रही है (छिल्लिय) 'सी सी' इस प्रकार का जहां सीत्कार शब्द हो रहा है, (विघुट्ठ) योद्धाओं द्वारा विरूपघोप जहां किया जा रहा है, (उक्किट्ठकंठकयसद्द) हर्ष से फूले हुए जहां अपने २ कंठों से उत्कृष्ट गलगलाट रूप शब्द कर रहे हैं (भीमगज्जिए) इस कारण ऐसा वहां ज्ञात होता है कि मानों मेघ ही यहां गर्ज रहा है। (सयराहहसंतरुसंतकलकलरवे) (हसंत) हँसते तथा (रुसंत) क्रोध से रुष्ट हुए सैनिक जनों का (सयराह) एक साथ जहां पर (कलकलरवे) कलकल शब्द हो रहा है, तथा जहां सैनिकजन (आसूणियवयण) अपना२ मुँह थोड़े से रूपमें फुलाकर (रुद्द) क्रोध से चण्ड बन रहे हैं तथा (भीम) क्रोध के आवेश से भयङ्कररूप में जहां वे (दसणाधरोट्ठगाढदट्ठ) अपने २ अधरोष्ठों को दृढ़ता पूर्वक डस रहे हैं, तथा (सप्प-

---

"छिल्लिय" 'सीसी' એવો જ્યા સિત્કાર શબ્દો થઇ રહ્યા છે. તથા "विघुट्ठ" યોદ્ધાઓ દ્વારા વિરૂપ ઘોષ જ્યા કરાઇ રહ્યો છે, "उक्किट्ठकंठकयसद्द" આનંદથી ફુલાઈ ગયેલા સૈનિકો જ્યા પોત પોતાના કંઠમાથી ઉત્કૃષ્ટ ગર્જના જેવા શબ્દો કાઢી રહ્યા છે, "भीमगज्जिए" તે કારણે ત્યા મેઘ જ ગર્જના કરી રહ્યો હોય તેવું લાગે છે. "सयराहहसतरुसंतकलकलरवे" "हसंत" હસતા તથા "रुसंत" કોપાયમાન થયેલ સૈનિકોનો 'सयराह" એક સાથે જ્યાં "कलकलरवे" કલ કલ શબ્દ-ધ્વનિ થઈ રહ્યો છે, તથા જ્યાં સૈનિકો "आसूणिय वयण" પોત પોતાનું મુખ થોડા પ્રમાણમાં ફુલાવીને 'रुद्द" ક્રોધથી ઉગ્ર બની રહેલ છે. તથા "भीम" ક્રોધના આવેશમાં ભયંકર રીતે જ્યાં તેઓ "दसणाधरोट्ठगाढदट्ठ" પોતપોતાના અધરોષ્ઠોને દઢતાર્થી કરડી રહેલ

सञ्चालने, उद्यताः=प्रवृत्ताः कराः=हस्ताः सैनिकानां यत्र स तथा तत्र, अति क्रोधशोणीकृताननाः भयङ्कररवरूपा योधाः सततमव्यग्रा अश्रान्ता अविच्छेदेन शस्त्रप्रहरणसमावृता यस्मिन् संग्रामे सन्तीत्यर्थः । 'अमरिसवसतिव्वरत्तनिद्दारिवच्छे' अमर्षवशतीव्ररक्तनिर्दारिताक्षे=अमर्षवशेन=क्रोधवशेन तीव्ररक्ते=अत्यन्त लोहिते, निर्दारिते=स्फारिते चाक्षिणी योधानां यस्मिन्, तत्र । तथा 'वेरदिट्ठिकुद्धचेट्ठियतिवलीकुडिलभिउडिकयललाडे' वैरदृष्टिक्रुद्धचेष्टितत्रिवलीकुटिलभ्रुकुटीकृतललाटे=तत्र वैरदृष्ट्या=वैरभावनया ये क्रुद्धा=कुपिता भटास्तैश्चेष्टिता त्रिवली=ललाटसङ्कोचजनितत्रिरेखारूपा तथा कुटिला भ्रुकुटी कृता ललाटे=भाले यत्र स तथा तत्र 'वधपरिणयनरसहस्सविक्कमवियंभियवले' वधपरिणतनरसहस्रविक्रमविजृम्भितवले=वधे=प्रतिपक्षिहनने परिणतानां=तत्पराणां नरसहस्राणाम्=अनेकसहस्रसुभटानां पराक्रमेण विजृम्भितं=विक्षोभितं वलं=शत्रुसैन्य शत्रुसामर्थ्यं वा यत्र स तथा तस्मिन्, एतादृशे संग्रामे अतिपतन्तीत्यनेनाऽन्वयः ॥ सू० ६ ॥

हारकरणुज्जयकरे) द्विपक्षी सुभटों के ऊपर प्रहार करने के लिये जहां सुभटों के हाथों का संचालन हो रहा है तथा (अमरिसवसतिव्वरत्तनिद्दारितच्छे) जहाँ पर (अच्छे) वीरों के दोनों नेत्र (अमरिसवस) क्रोधके वशसे (निद्दारित) अपलक-निर्निमेष होकर (तिव्वरत्ता) अत्यंत रक्तवर्ण के बन रहे हैं,तथा (वेरदिट्ठि) वैरकी भावनासे (कुद्ध) कुपित हुए भटों द्वारा (चेट्ठिय) चेष्टित-की गई (तिवली) अपनी २ त्रिवली-तीन रेखाएँ, तथा (कुडिलभिउडिकय) कुटिल- टेढी भ्रकुटी ललाट ऊपर जहां की गई है, तथा (वहपरिणयनसहस्सविक्कमवियंभियवले) प्रतिपक्षीभूत सुभटों को मारने में तत्पर बने हुए अनेक सहस्र सुभटों के पराक्रम से जहां पर शत्रु का सैन्य-अथवा बल-सामर्थ्य विक्षोभित

છે, તથા " सप्पहारकरणुज्जयकरे " દુશ્મનદળના સૈનિકો ઉપર પ્રહાર કરવાને માટે જ્યાં સુભટોના હાથો ચાલી રહ્યા છે, તથા "अमरिसवसतिव्वरत्तनिद्दारितच्छे" જ્યાં "अच्छे" વીરોની બન્ને આંખો "अमरिसवस" ક્રોધાવેશથી 'निद्दारित" અપલક-પલકારા રહિત થઈને "तिव्वरत्ता" અત્યંત લાલ બની રહેલ છે, તથા "वेरदिट्ठि" વૈરવૃત્તિથી " कुद्ध " કોપાયમાન થયેલ સુભટો દ્વારા " चोट्ठिय " કરાતી "तिवली" પોત પોતાની ત્રણ રેખાઓ "त्रिवली" (કોપાયમાન થતાં કપાળમાં પડતી કરચલીઓ) તથા " कुडिलभिउडिकय " જ્યાં ભમરો-ભ્રકુટી કપાળે ચડી ગઇ છે, તથા " वहपरिणयनसहस्सविक्कमवियंभियवले " દુશ્મનોના મારવાને આતુર બનેલા અનેક હજાર સુભટોનાં પરાક્રમથી જ્યાં દુશ્મનના સૈન્યને શક્તિ

पुनः कीदृशे संग्रामे ? इत्याह ' वग्गंतं ' इत्यादि ।

मूलम्—वग्गंततुरंगरहपहावियसमरभडे आवाडियछेयलाघवपहारसाहिए समूसियबाहुजुयले मुक्कट्टहासपुक्कंतबोलबहुले, फुरफलगावरणगहियगयवरपत्थंतदरियखलभडपरोप्परपलग्गजुद्धगव्वियविक्कोसियवरासिरोसतुरियअभिमुहपहरंतछिण्णकरिकरविअंगियकरे, अवइद्धनिसुट्टभिन्नफालियपगलियरुहिरकयभूमिकद्दमचिलिचिल्लपहे कुच्छिदालियगलियनिब्भेलियंतफुरफुरंतविगलमम्महयविगयगाढदिण्णप्पहारमुच्छियरुलंतविब्भलविलावकलुणे, हयजोहभमंततुरगउद्दाममत्तकुंजरपरिसंकिय जणणिव्वुक्कछिण्णज्झयभग्गरहवरनट्ठसिरकरिकलेवराकिण्णपडियपहरणविकिन्नाभरणभूमिभागे नच्चंतकबंधपउरे, भयंकरवायसपरिलित्तगिद्धमंडलभमंतछायंधयारगंभीरे ॥ सू० ७ ॥

टीका—" वग्गंततुरंगरहपहावियसमरभडे ' वलात्तुरंगरथप्रधावितसमरभटे =तत्र वलान्तः=हेषमाणाः ये तुरगाः=अश्वाः रथाः तैः प्रधाविताः = वेगेन नीताः

किया जा रहा है ऐसे संग्राम में कितनेक राजा उतरते हैं ऐसा संबंध यहां लगा लेना चाहिये ॥ सू०६ ॥

फिर कैसे संग्राम में उतरते हैं सो कहते हैं–'वग्गंत तुरंग' इत्यादि।

टीकार्थ- (वग्गंततुरंगरहपहावियसमरभडे) हणहणाट करते हुए घोड़ों से एवं रथों से जहां पर जल्दी २ भट पहुँचाये जा रहे हैं, तथा

હીન કરવામા આવી રહ્યુ છે, એવા સંગ્રામમાં કેટલાક રાજાઓ ઉતરે છે, એવો સંબંધ સમજી લેવાનો છે ॥સૂ૦૬॥

તેઓ તેવા સંગ્રામમાં ઉતરે છે તેનું વધુ વર્ણન કરે છે— " वग्गंत तुरंग " ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—" वग्गंततुरंगरहपहावियसमरभडे " હણહણાટી કરતા ઘોડાઓથી અને રથોની મદદથી જ્યાં જલ્દીથી સૈનિકોને મોકલાઈ રહ્યા છે, તથા

समरे भटा यत्र स तथा तत्र "आडवियछेयलाघवपहारसाहिए" आपतितछेकलाघवप्रहारसाधिते=तत्र आपतिताः=योद्धुमुद्यता ये छेकाः=निपुणाः भटाः, तेषां तत्कर्तृका इत्यर्थः, ये लाघवप्रहाराः=चातुर्यपूर्णप्रहारास्तैः साधितो=निर्मितः यः स तथा तस्मिन् । तथा 'समूसियवाहुजुयले' समुच्छ्रितबाहुयुगले=समुच्छ्रितानि =हर्षाधिक्यादूर्ध्वीकृतानि बाहुयुगलानि भटैर्यत्र स तथा तत्र, तथा 'मुक्कट्टहासपुक्कंतवोलबहुले' मुक्ताट्टहासपूत्कुर्वद्बोलबहुले = मुक्ताट्टहासः=कृतमहाहासध्वनयः, पूत्कुर्वन्तः=नामनिर्देशपूर्वकं परमाह्वयन्तो ये सुभटास्तेषां बोलाः=कोलाहलः, स बहुलो यस्मिन् स तथा तस्मिन् । 'फुरफलग्गावरणगहियगयवरपत्थंतदरियभडखलपरोप्परपलग्गजुद्धगव्वियविकोसियवरासिरोसतुरियअभिमुहपहरंतछिण्णकरिकरविअंगियकरे' स्फुरफलकावरणगृहीतगजवरप्रार्थयमानदृप्तभटखल–परस्परप्रलग्नयुद्धगर्वितविकोशितवरासि–रोषत्वरिताभिमुखप्रहर–च्छिन्न–करिकर–व्यङ्गित–करे तत्र 'फुरफलगावरणगहिय' स्फुरफलकावरणाः=स्फुराः=अस्त्रप्रतिघातनिवारकचर्ममयपट्टविशेषाः, फलकानि='ढाल' इति भाषा प्रसिद्धानि आवरणानि च=कवचानि, तानि गृहीतानि=धृतानि यैस्ते तथा स्फुरकादि शस्त्रधारिणः, तथा

(आडवियछेयलाघवपहारसाहिए) जो युद्ध करने के लिये उद्यत हुए ऐसे निपुण भटों के चातुर्य पूर्ण प्रहारों से निर्मित किया गया है, (समूसियबाहुजुयले) तथा जिसमें हर्षित बने हुए भट हर्ष की अधिकता से अपने २ बाहुयुगलों को ऊपर उठा रहे हैं (मुक्कट्टहासपुक्कंतबोलबहुले) तथा जिसमें सुभटजनों की महाहास्यध्वनि द्वारा एवं दूसरों को नाम निर्देशपूर्वक बुलाने के शब्दों द्वारा बहुत कोलाहल मचा रहता है तथा जिसमें योद्धागण (फुरफलगावरणगहिय) अस्त्रप्रतिघातको निवारण करनेवाले चर्ममय-पट्टविशेषोंको, फलकोंको ढालोंको लिये रहते हैं, तथा कवच आदि आवरणोंसे सज्जित रहाकरते हैं, तथा (गयवरपत्थंत) जिसमें

"आडवियछेयलाघवपहारसाहिए" જે યુદ્ધ કરવાને તૈયાર થયેલા એવા નિપુણ સુભટોના ચાતુર્યપૂર્ણ પ્રહારોથી યુક્ત છે "समूसियबाहुजुयले" તથા જેમાં આનંદિત બનેલા સુભટો આનંદની અધિકતાથી પોત પોતાની ભુજાઓ ઉંચી કરી રહેલ છે "मुक्कट्टहासपुक्कंतवोलबहुले" તથા જેમાં સુભટોના મુક્ત હાસ્યનો ધ્વનિ તથા બીજાને નામ દઈને બોલાવવાના શબ્દો દ્વારા ભારે કોલાહલ મચી રહ્યો છે, તથા જેમા યોદ્ધાઓનો સમૂહ "फुरफलगावरण-गहिय" શસ્ત્રોના ઘાને રોકવાને માટે ચર્મમય પટ્ટ વિશેષોને, ફલકોને–ઢાલોને ધારણ કરે છે. તથા બખતર આદિ આવરણોથી સજ્જ રહે છે તથા "गयव.

'गयवरपत्थंत' गजवरप्रार्थयमानाः = गजवरान्=शत्रुकुञ्जरान् हन्तुमारोढुं वा प्रार्थयमानाः=अभिलषमाणा ये ते तथा 'दरियखलभड' दृप्तखलभटाः=दृप्ताः स्वबलगर्विताः, खलाः=दुष्टाः-भटाः=योधास्ते, तथा 'परोप्परपलग्ग' परस्पर प्रलग्नाः=परस्परं शत्रुमभिहन्तुं प्रवृत्ताः 'जुद्धगव्विय' युद्धगर्विताश्च=युद्धकौशलाऽहङ्कारपूर्णाः, 'विकोसियवरासि' विकोशितवरासयः-विकोशिताः=कोशान्निष्कासिताः असयः=खड्गाः यैस्ते तथा, 'रोस' रोषेण=क्रोधेन 'तुरिय' त्वरितं=शीघ्रम्, 'अभिमुह' अभिमुखं 'पहरंत' प्रहरन्तस्ते छिन्नकरिकराः-छिन्नाः करिकराः=हस्तिशुण्डाः यैस्ते तथा, 'वियंगियकरे' व्यङ्गिताः=विकर्तिताः कराः येषां ते तथा, एते विद्यन्ते यस्मिन् स तथा तस्मिन्-परस्पराभिहननभेदनछेदनप्रहरणतत्परैर्योधैश्छिन्नभिन्नैः-' हयगजरथपदातीनां परिभ्रष्टशुण्डमुण्डहस्तपादादिभिर्व्याप्तं स्थलं यत्रैवं भूते संग्रामे इत्यर्थः। अवइद्धनिसुट्ठभिन्नफालियपगलियरुहिरकय-

---

एक योधा दूसरे योधा के हाथीको मारनेके लिये अथवा उस पर सवार होनेके लिये उत्सुक रहता है, तथा जिसमें (दरियखलभड) दुष्ट योधा गण अपने बल से अधिक गर्वित बने रहते हैं, (परोप्परपलग्ग) एक दूसरों को मारने के लिये जहां वीर प्रयत्नशील रहते हैं, अथवा प्रवृत्त होते हैं, (जुद्धगव्विय) युद्ध करने का कौशल योद्धाओं में विशेषरूप से जगकर उन्हें जहां गर्वित बना दिया है, तथा (विकोसियवरासि) जहां पर योद्धा अपनी २ श्रेष्ठ तलवारों को म्यान से बाहिर किये हुए ही रहते हैं, और जहां (रोसतुरियअभिमुहपहरंतछिण्णकरिकर) क्रोध से भरकर एक योधा दूसरे योधाके ऊपर प्रहार कर उसके हाथी के शुण्डादण्ड को भग्न कर देता है, तथा (वियंगियकरे) परस्परमें जहां योद्धायोद्धा-

---

रपत्थंत" જેમા એક યોદ્ધો બીજા યોદ્ધાના હાથીને મારી નાખવાને માટે, અથવા તેના પર સવાર થવાને માટે આતુર રહે છે, તથા જેમાં "दरियखलभड" દુષ્ટ યોદ્ધાઓ પોતાના બળને લીધે વધારે ગર્વિષ્ટ બનેલા રહે છે, "परोप्परपलग्ग" જ્યા એક બીજાને મારવાને માટે વીર પુરુષો પ્રયત્નશીલ રહે છે, અથવા પ્રવૃત્ત હોય છે, "जुद्धगव्विय" જ્યાં યોદ્ધાઓનું યુદ્ધ કૌશલ્ય વધારે પ્રમાણમાં જાગૃત થયું છે, અને તે કારણે તેઓ વધારે ગર્વિષ્ટ બન્યા છે, તથા "विकोसियवरासि" જ્યાં યોદ્ધાઓ પોત પોતાથી શ્રેષ્ઠ તલવારોને મ્યાનમાંથી બહાર કાઢીને લડવાને તૈયાર હોય છે, અને જ્યાં "रोसतुरिय अभिमुहपहरंतछिण्णकरिकर" ક્રોધાયમાન થઈને એક યોદ્ધો બીજા યોદ્ધાના ઉપર પ્રહાર કરીને તેના હાથીની સૂંઢને કાપી નાખે છે, તથા "वियंगियकरे" જ્યાં

भूमिकद्दमचिक्खिल्लपहे ' अपविद्धनिसुट्टभिन्नफालितप्रगलितरुधिरकृतभूमिकर्दमचि-क्खिल्लपथे तत्र अपविद्धा=बाणादिभिः, निसुट्टा=निपातिताः गलहस्तादिभिः, भिन्नाः त्रिशूलादिभिः फलिताः=स्फाटिताः=विदारिताश्च कुठारादिभिर्ये, तेभ्यः प्रगलितेन =क्षरितेन रुधिरेण कृतः=जातो यो भूमौ=पृथिव्यां कर्दमस्तेन चिलिचिल्ला:=आर्द्राः पन्थानः = मार्गाः यत्र स तथा तत्र, 'कुच्छिदालियगलियनिम्मेलियंतफुरफुरं-तविगलमम्महयविगयगाढदिण्णप्पहारमुच्छियरुलंतविब्भलविलावकलुणे ' कुक्षि-दारितगलितनिर्भेलितान्त्रफुरफुरायमाणविगलमर्महतविकृतगाढदत्तप्रहारमूर्च्छितलु-ठद्विह्वलविलापकरुणे=दारितात्=विदारितात् कुक्षेः उदरात् गलितं रुधिरं निर्भेलितानि = उदराद्बहिर्निर्गलितानि च अन्त्राणि = 'आँतडियाँ ' इति भाषा प्रसिद्धानि येषां ते तथा, अतएव-फुरफुरायमाणाः = कम्पमानाः विकलाः=निरुद्धेन्द्रियवृत्तित्वेन व्याकुलाः, मर्महताः=कण्ठादिमर्मस्थाने हतास्तथा

ओंके हाथों को काट दिया करते हैं तथा (अवइद्ध) बाणों से वेधे गये, (निसुट्ट) गले में हाथ डालकर हठात् जमीन पर पटक दिये गये, (भिन्न) त्रिशूल आदि के द्वारा भेदे गये एव (फालिय) कुठार आदि द्वारा फाड दिये गये-विदारित किये गये ऐसे योद्धाओं के शरीर से (पगलिय) झरते हुए (रुहिर) रक्तसे (कयभूमिकद्दमचिखिल्लपहे) जहां की भूमिमें कीचड मच रही है और इसी से जहांके मार्ग चिकने हो रहे हैं तथा (कुच्छिदालिय)विदारित हुए उदरसे जिनके (गलिय) खून बहरहा है और (निम्मेलियत) आंतें भी जिनकी पेटसे बाहिर निकलआई हैं, इसी कारण जो (फुरफुरंत) कंप रहे हैं और (विगल) विकल हो रहे हैं ऐसे योधा कि जिन पर (मम्महयविगयगाढदिण्णप्पहार) क्रोध के आवेश

યોદ્ધાઓ એક બીજાના હાથ છેદી નાખે છે, તથા "अवइद्ध" બાણોથી વીંધાયેલા "निसुट्ट" ગળામા હાથ ભરાવીને બળપૂર્વક જમીન પર પટકાયેલ, "भिन्न" ત્રિશૂળ આદિ દ્વારા ભેદાયેલા, અને "फालिय" ફરસી આદિ દ્વારા ચીરી નાખેલ, યોદ્ધાઓનાં શરીરમાં "पगलिय" વહેતા "रुहिर" લોહીથી 'कयभूमिकद्दमचिखिल्लपहे" જ્યાં જમીનમા કીચડ થઇ ગયો છે, અને તે કારણે જ્યાં માર્ગ લપસણો થઇ ગયો છે, તથા "कुच्छिदालिय" જેમના વિદારિત થયેલા ઉદરમાથી "गलिय" લોહી વહી રહ્યું છે અને " निम्मेलियते " જેમનાં આંતરડાં પણ પેટમાંથી બહાર નીકળી પડયાં છે. એ જ કારણે જે " फुरफुरंत " કંપી રહ્યા છે, અને "विगल" વ્યાકુળ થઇ ગયાં છે, જેમના પર " मम्महयविगयगाढदिण्णप्पहार " ક્રોધના આવેશમા

विकृतः=क्रोधावेशेन विचित्ररूपः गाढः=मर्मभेदी दत्तः शत्रुभिः प्रहारो येषां ते तथा, अत एव मूर्च्छिताः=मूर्छां प्राप्ताः, लुठन्तः = भूमौ विलुठन्तः, विह्वलाः= व्याकुलाश्च तेषां विलापाः=' हा हतोऽस्मि'–इत्याद्याक्रन्दशब्दाः, तैः करुणो= दयाजनको यः स तथा तत्र, पुनः कीदृशे ? इत्याह–' हयजोह–भमंत तुरग– उद्दाममत्तकुंजरपरिसंकियजण–णिव्वुकछिण्णज्झय–भग्ग–रहवर – नट्ठसिरकरिकले- वराकिण्ण–पडियपहरण–विकिन्नाभरणभूमिभागे ' हतयोधभ्रमत्तुरङ्गोद्दाममत्तकुञ्जर- परिशङ्कितजननिर्मूलछिन्नध्वजभग्नरथवरनष्टशिरः करिकलेवराकीर्णपतितप्रहरणवि- कीर्णाभरणभूमिभागे' तत्र–'हयजोहभमंततुरग'–हतयोधभ्राम्यत्तुरगः–हताः=मृता योधाः=अश्वारोहा सवार इति भाषा प्रसिद्धाः येषां, तथाभूता भ्राम्यन्तः=इतस्ततो धावन्तः तुरगाः=अश्वा यस्मिन् स तथा, ' उद्दाममत्तकुंजरपरिसंकियजण'–उद्दाम- मत्तकुञ्जरपरिशङ्कितजनः–उद्दाममत्तकुञ्जरेभ्यो=निरङ्कुशमदोन्मत्तहस्तिभ्यः परिश- ङ्किताः=वधशङ्काकुलाः जना यस्मिन् स तथा, ' णिव्वुकछिण्णज्झयभग्गरहवर '– निर्मूलछिन्न ध्वजभग्नरथवराः–तत्र निर्मूलाः=मूलरहिताः=ध्वजदण्डेभ्यो निस्सृताः

से विचित्ररूप गाढ मर्म भेदी प्रहार शत्रुओं द्वारा दिया गया है और इसीसे जो (मुच्छिय) मूर्च्छा को प्राप्त होकर (रुलंत) भूमि पर इधर से उधर लोट रहे हैं एवं (विब्भल) व्याकुल होकर (विलाव) " हा मैं मारा गया " इत्यादिरूप से विलाप कर रहे हैं ऐसे योद्धाओं के विलापों से जो (कलुणे) दयाजनक बना हुआ है तथा जो (हयजोह- भमंततुरग) अपने सवारों के मर जाने से इच्छानुसार इधर उधर घूमते हुए घोड़ों से युक्त हो रहा है, तथा जहां (उद्दाममत्तकुंजरपरि- संकियजणे) उत्कट मदवाले हाथियों से, वध की शंका के भय से मनु- ष्य व्याकुल हो रहे हैं (णिव्वुकछिण्णज्झयभग्गरहवरे) जहां निर्मूल दंडा रहित और छिन्न–फटी हुई ध्वजाएँ और भग्न हुए श्रेष्ठ रथ पड़े हैं

આવેલા શત્રુઓ દ્વારા વિચિત્ર રીતે ભયંકર મર્મભેદી પ્રહાર કરાયો છે અને તે કારણે જેઓ " मुच्छिय " મૂર્છાવશ થઈને " रुलंत " જમીન ઉપર આમ તેમ આળોટે છે અને " विब्भल " દયાજનક બનેલ છે, ' विलाव " અરે ! મને મારી નાખ્યો " ઇત્યાદિ પ્રકારે વિલાપ કરે છે, યોદ્ધાઓના વિલાપથી જે "कलुणे" દયાજનક બનેલ છે, તથા જે "हयजोहभमंततुरंग" પોતાના સવારો મરી જવાથી ઇચ્છાનુસાર આમ તેમ ઘૂમતા ઘોડાઓથી જે યુક્ત છે, તથા જ્યાં "उद्दामम- त्तकुंजरपरिसंकियजण " મદોન્મત્ત હાથીઓદ્વારા કચરાઈ જવાના ભયથી માણસો વ્યાકુળ બનેલા છે, " णिव्वुकछिण्णज्झयभग्गरहवर " જ્યા નિર્મળ દંડા રહિત

छिन्ना ध्वजाः, भग्नारथवराश्च यस्मिन् स तथा, 'नट्ठसिरकरिकलेवराकिण्ण'-नष्ट शिरः करिकलेवराकीर्णः-नष्टानि शिरांसि येषामेतादृशा ये करिणः=हस्तिनः, तेषां यानि कलेवराणि=शरीराणि तैः आकीर्णः=व्याप्तः, 'पडियपहरण'-पतितप्रहरणः-पतितानि प्रहरणानि=शस्त्रास्त्राणि यस्मिन् स तथा, 'विकिण्णाभरण'-विकीर्णाभरणः-विकीर्णानि=इतस्ततो विक्षिप्तानि आभरणानि=मृतयोधानाम् अलङ्करणानि यस्मिन् स तथा, एतादृशो भूमिभागो यस्मिन् स तथा तस्मिन्, 'नच्चंतकबंधपउरे' नृत्यत्कबन्धप्रचुरे=नृत्यन्तः कबन्धाः=मस्तकरहितकलेवराणि, प्रचुरा यत्र स तथा तत्र, 'भयंकरवायसपरिलित्तगिद्धमंडलभमंतछायंधयारगंभीरे' भयङ्करवायसपरिलीयमानगृध्रमण्डलभ्रमच्छायान्धकारगम्भीरे=तत्र भ्रमताम्=आकाशे पर्यटतां भयङ्करवायसानां-भयंकरकाकानां तथा परलीयमानानां=गतिविशेषैरुड्डीयमानानां गृध्राणां च यन्मण्डलं=समूहः, तस्य छायया योऽन्धकारस्तेन गम्भीरे=घनीभूते घनान्धकारयुक्ते संग्रामे अतिपतन्ति राजानः परधनलुब्धा इति पूर्वेण सम्बन्धः॥७॥

(नट्ठसिरकरिकलेवराकिण्ण) तथा जो छिन्नमस्तकवाले हाथियों के कलेवरों से व्याप्त है, (पडियपहरण) जहां प्रहरण-अस्त्रशस्त्रादिक इधर उधर पड़े हुए हैं, तथा (विकिण्णाभरण) मारेगये दूसरे कितनेक योधाओं के पड़े हुए आभरणों से व्याप्त ऐसे (भूमिभागे) भूमिभाग वाले संग्राम में (नच्चंतकबंधपउरे) तथा जहां पर योद्धाओं के कबंध (धड़) प्रचुररूप में नृत्य कररहे हैं, (भयंकरवायसपरिलित्तगिद्धमंडलभमंतछायंधयारगंभीरे) तथा जो आकाश में उडते हुए भयंकर कौवो की, एवं परिलीयमान-गतिविशेषों से उड्डीयमान-गिद्धों की छायाजन्य अंधकार से गंभीर बन रहा है ऐसे संग्राम में परधनलुब्ध बने हुए राजा लोक उतरते हैं॥ सू०७॥

અને ફાટેલી ધજાઓ તથા ભાગેલા શ્રેષ્ઠ રથો પડ્યા છે "नट्ठसिरकरिकलेवराकिण्ण" તથા જે છેદાયેલા મસ્તકવાળા હાથીઓના કલેવરોથી છવાયેલ છે, "पडियपहरण" જ્યાં અસ્ત્ર-શસ્ત્રાદિ અહીં તહીં પડેલાં છે, તથા "विकिण्णाभरण" મરી ગયેલા કેટલાક યોદ્ધાઓના આભૂષણોથી જે છવાયેલ છે, "भूमिभागे" એવા ભૂમિભાગ વાળા સંગ્રામમાં "नच्चंतकबधपउरे" તથા જ્યાં યોદ્ધાઓના ધડ અતિશય નૃત્ય કરી રહેલ છે, "भयंकरवायसपरिलित्त गिद्ध मंडलभमंतछायंधयारगभीरे" તથા જે આકાશમાં ઉડતા ભયંકર કાગડાઓની તથા પરિલીયમાન-વિશિષ્ટ ગતિથી ઉડતાં ગીધોની છાયાને કારણે ઉત્પન્ન થયેલ અંધકારથી ગંભીર દેખાય છે, એવા સંગ્રામમાં પરધન પ્રાપ્ત કરવાની લાલસા વાળા રાજાઓ ઉતરે છે ॥ સૂ૦૭॥

पूर्वोदितमेव संक्षेपेण प्रतिपादयन्नाह—' वसु ' इत्यादि ।

मूलम्—वसुवसुहविकंपियव्व–पच्चक्खपिउवणं परमरुद्द-वीहणगं दुप्पवेसतरंग–अभिवडंति–संगामसंकडं, परधणं महंता । अवरे पाइक्कचोरसंघा सेणावइचोरवंद–पागड्डियाय अडविदेसदुग्गवासी काल-हरिय-रत्त पीय सुक्किल्ल-अणेगसयचिंध-पट्टबंधा परविसए अभिहणंति लुद्धा धणस्स कज्जे ॥ सू० ८॥

टीका—' वसुवसुहविकंपियव्व ' वसुवसुधाविकम्पिता इव=तत्र वसवः=देवा वसुधा=पृथ्वी च विकम्पिताः–त्रासिता यैस्ते तथा तथैवापरे राजानः ' परधणं ' परधनं ' महंता ' काङ्क्षन्तः परद्रव्यलुब्धा सन्तः ' पच्चक्खपिउवणं ' प्रत्यक्षपितृवनं=साक्षात् श्मशानमिव ' परमरुद्दवीहणगं ' परमरुद्रभयानकं=अत्यन्तप्रचण्डभयजनकं ' दुप्पवेसतरगं ' दुष्प्रवेशतरकं=अत्यन्तदुर्गम वीराणामपि, का कथा कातराणामित्येवंविधमपि ' संगामसंकडं ' संग्रामसंकटं=गहनयुद्धं ' अभिवडंति ' अभिपतन्ति=प्रविशन्ति । तथा ' अवरे ' अपरे ' पाइक्कचोरसंघा ' पदातिकचौर

फिर इसी बात को संक्षेप से कहते हैं–' वसुवसुह ' इत्यादि ।

टीकार्थ–(वसुवसुहविकंपियव्व) जिन्होंने देवोंको एवं पृथ्वीमंडलको भी कंपित जैसा करदिया है ऐसे और भी अनेक राजा (परधणंमहंता) दूसरों के धनमें लुब्ध होकर (पच्चक्खपिउवणं) साक्षात् पितृवन जैसे–प्रत्यक्ष में श्मशान सरीखे प्रतीत होने वाले तथा (परमरुद्दवीहणगं) जो अत्यंत प्रचंड एवं भयजनक हो रहा हो, तथा (दुप्पवेसतरगं) वीरों के लिये भी जो अत्यंत दुर्गम बना हुआ हो ऐसे (संगामसंकडं) गहनयुद्ध में (अभिवडंति) प्रवेश कर जाते हैं । तथा (अवरे) दूसरे भी (पाइक्क-

---

હવે એ જ વાતને સંક્ષિપ્તમાં કહે છે— " वसुवसुह " ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—" वसुवसुहविकंपियव्व " જેમણે દેવોને તથા પૃથ્વીમંડળને પણ જાણે કંપાયમાન કરી દીધા છે એવા બીજા પણ અનેક રાજાઓ " परधणं महंता " બીજાના ધનમાં લુબ્ધ થઈને " पच्चक्खपिउवणं " પ્રત્યક્ષ પિતૃવન જેવા–પ્રત્યક્ષ શ્મશાન જેવા લાગતા, તથા " परमरुद्दवीहणग " જે અત્યંત પ્રચંડ અને ભયંકર ભાસતું હોય, તથા " दुप्पवेसतरग " વીરોને માટે પણ જે અતિશય દુર્ગમ હોય એવા " संगामसकड " ગહન યુદ્ધમાં " अभिवडंति " પ્રવેશ કરે છે તથા " अवरे " બીજા પણ " पाइक्कचोरसंघा " પદાતિરૂપ

सङ्घाः=पदातिरूपचौरसमूहाः, 'सेणावइचोरवंदपागड्ढिया य' सेनापतिचौरवृन्द प्रकर्षकाः=सेनापतिचौरसमूहयुक्ताश्च 'अडविदेसदुग्गवासी' अटवीदेशदुर्गवासिनः=अटवीदेशे=अरण्यदेशे यानि दुर्गाणि=जलस्थलरूपाणि दुर्गमस्थानानि तेषु निवासिनः कालहरियरत्तपीयसुक्किलअणेगसयचिंधपट्टबंधा ' कालहरितरक्तपीतशुक्लानेकशतचिन्हपट्टबन्धाः = कृष्णहरितरक्तपीतशुक्लवर्णा अनेकशतसंख्यका ये चिन्हपट्टास्तेषां बन्ध =मस्तकादौ बन्धनं येषां ते तथा 'धणस्स' धनस्य=पर द्रव्यस्य 'कज्जे' कार्ये=अर्थाय 'लुद्धा' लुब्धाः=लोलुपाः सन्तः 'परविसए' परविषयान्=अन्यभूपदेशान् 'अभिहणंति' अभिघ्नन्ति=विनाशयन्ति ॥ सू०८॥

पुनरदत्तादानं कथं कुर्वन्ति? तदाह—'रयणागर' इत्यादि—

मूलम्—रयणागरसागरं च उम्मीसहस्समालाऽऽकुलविगयपोयकलकलंतकलितं, पायालकलससहस्सवायवसवेगसलिलउद्धम्ममाणदगरयरयंधयारं, वरफेणपउरधवलपुलंपुलसमुट्ठियाट्टहासं, मारुयविक्खुब्भमाणपाणियजलमालुप्पलहुलियं अवियसमंत-

---

चोरसंघा) पदातिरूप चौरसमूह कि जिसमें (सेणावइ चोरवंदपागड्ढिया य) सेनापति एवं चौरों का जत्था एकत्रित रहता है, तथा (अडवीदेसदुग्गवासी) जो जंगल के बीचमें जितने भी प्रायः दुर्गमस्थान होते हैं–चाहे वे जलरूप हों या थलरूप हो–उनमें रहते हैं तथा (कालहरियरत्तपीयसुक्किलअणेगसकचिंधपट्टबंधा) कृष्ण, हरित, रक्त, पीत, शुक्ल, वर्णवाले सैकडों चिह्नपट्टों को जो अपने मस्तक ऊपर बांधा करते हैं ऐसे वे पदातिरूप चौर समुदाय (धणस्स कज्जे) पर के द्रव्य में (लुद्धा) लोलुप होकर (परविसए) अन्य राजाओं के देशों को (अभिहणंति) विनाश करते हैं ॥ सू०८॥

ચોર સમૂહ કે જેમા "सेणावइचोरवंदपागड्ढिया य" સેનાપતિ અને ચોરોનો સમૂહ એકત્ર રહે છે, તથા "अडवीदेसदुग्गवासी" જે જંગલની વચ્ચે જેટલાં દુર્ગમ સ્થાનો હોય છે-પછી તે જળરૂપ હોય કે સ્થળરૂપ-તેમા રહે છે, તથા "कालहरियरत्तपीयसुक्किलअणेगसयचिंधपट्टबंधा" કાળાં, લીલાં, લાલ, પીળા, સફેદ આદિ રંગની સેંકડો પટ્ટીઓને જે પોતાના મસ્તક ઉપર બાંધે છે, એવો પદાતિ-પગપાળો-ચોર સમુદાય "धणस्स कज्जे" પરધનમાં 'लुद्धा" લોલુપ થઈને "परविसए" અન્ય રાજાઓના દેશોનો "अभिहणंति" વિનાશ કરે છે ॥ સૂ-૮॥

ओखुभियलुलियंखोखुम्भमाणपक्खलियचलियविउलजलचक्कवालमहानइवेगतुरियआपूरमाणगंभीरविउलआवत्तचंचलभममाणगुप्पमाणुच्छलंतपच्चोणियंतपाणिय – पहावियखरफरुसपयंडवाउलियसलिलफुट्टंतवीचिकल्लोलं संकुलं, महामगरमच्छकच्छभोहारगाहतिमिसुंसुमारसावयसमाहय समुद्दायमाणयपूघोरपउरं॥९॥

टीका—अपि च परद्रव्यहरानराः 'रयणागरसागरं च' रत्नाकरसागरं च= रत्नानामाकरः-निधिभूतो यः सागरः समुद्रस्तं प्रविश्य तन्मध्ये गत्वा पोतान् घ्नन्ति, इत्यग्रेण सम्बन्धः, कीदृशं सागरम्? इत्याह–'उम्मीसहस्समालाकुलविगयपोयकलकलंतकलितं' ऊर्मिसहस्रमालाकुलविगतपोतकलकलकलितम् = ऊर्मीणां= तरङ्गाणां सहस्रमालाभिः=सहस्रसंख्यकपंक्तिभिराकुलत्वात् विगताः– भग्नाः ये पोताः=नौकाः 'जहाज–'स्टीमर' इति प्रसिद्धाः तेषां=तत्र स्थितानां व्यापारि

'अदत्तादान किस प्रकार किया जाता है?' अब सूत्रकार इस बात को समझाते हैं—'रयणागर' इत्यादि ।

टीकार्थ—पर के द्रव्य को हरण करने में तत्पर बने हुए मनुष्य चोर (रयणागरसागरं च) रत्नों के निधिभूत समुद्र में घुस कर के–उसके मध्य में जाकर के जहाजों को नष्ट कर देते हैं, इस प्रकार का संबंध यहां लगा लेना चाहिये । अब सूत्रकार समुद्र का वर्णन करते हैं–(उम्मीसहस्समालाकुलविगयपोयकलकलंतकलितं) हजारों लहरों के समूह से आकुल होने के कारण जहां पर व्यापारी आदि जनों के जहाज नष्ट हो जाते हैं, और इसी कारण उन जहाजों पर बैठे हुए व्यक्तियों

"અદત્તાદાન–ચોરી કયી રીતે કરાય છે" એ વાતને સૂત્રકાર હવે સમજાવે છે–"रयणागर" ઇત્યાદિ

પરધનને હરી લેવાને આતુર બનેલો મનુષ્ય–ચોર "रयणागरसागरं च" રત્નોના નિધિ એવા સમુદ્રની વચ્ચે જઈને જહાજોને ડૂબાવી દે છે, એવો સંબંધ અહીં જોડવાનો છે–હવે સૂત્રકાર સમુદ્રનું વર્ણન કરે છે–

"उम्मीसहस्समालाकुलविगयपोयकलकलंतकलितं" હજારો મોજાઓનાં સમૂહના આક્રમણને કારણે જ્યાં વ્યાપારી આદિ લોકોનાં જહાજો નાશ પામે છે, અને તે કારણે તે જહાજોમાં બેઠેલા લોકોના કકળાટથી જે યુક્ત બનેલ છે,

प्रभृतीनां कलकलेन=कोलाहलेन कलितं=युक्तम्, 'पायालकलससहस्सवायवसवेगसलिलउद्धम्ममाणदगरयरयंधयारं' पातालकलशसहस्रवातवशवेगसलिलोद्धम्यमानोदकरजोरयाऽन्धकारं = तत्र 'पायालकलससहस्स' पातालकलशानां यानि सहस्राणि तैः 'वायवसवेग' वातवशात्=वायुवशाद् वेगयुक्तं यत् 'सलिलउद्धमाणदगरयरयंधयारे' तत्र सलिलं=समुद्रजलं तस्मादुद्धम्यमानम्=उच्छलद् यदुदकरजः=जलबिन्दुस्तस्य रयो वेगस्तेनाऽन्धकारो यत्र स तथा तम्, 'वरफेणपउरधवलपुलंपुलसमुट्ठियाट्टहासं' वरफेनप्रचुरधवलपुलंपुलसमुत्थिताट्टहासं = वरफेनः =वरः= अतिस्वच्छः फेनः 'समुद्र झाग' इति प्रसिद्धः स प्रचुरो धवलः = श्वेतवर्णः 'पुलंपुल' इति निरन्तरं समुत्थितः=उद्गतः स एव अट्टहासो यत्र स तथा तं फेन हासयोः शुक्लत्वेन साम्याद् रूपकालङ्कारेण निरूपितम्। 'मारुयविक्खुब्भमाणपाणियं' मारुतविक्षोभ्यमाणपानीयं मारुतेन=वायुना विक्षोभ्यमाणम्=आलोड्यमानं पानीयं यत्र स तथा तं 'जलमालुप्पलहुलियं' जलमालोत्पलहुलियं=जलमालानां =नीरतरङ्गाणामुत्पलः=समूहः 'हुलियं' शीघ्रं=पुनः पुनस्तरङ्गान्तरमुत्पद्यमानं यत्र स तथा तं 'अवि य' अपि च 'समंतओक्खुभिय - लुलिय - खोक्खुब्भमाण-

---

के कल कल शब्द से जो युक्त हो रहा है, तथा (पायालकलससहस्स) सैकडों पाताल कलशों के (वायुवसवेग) वायु के संयोग से वेगयुक्त बने हुए (सलिल उद्धम्ममाणदगरयरयंधयारं) जल की उछलती हुई बून्दों के समुदाय से जो अंधकार युक्त जैसा बना हुआ है, (वरफेण-पउर-धवल-पुलंपुल-समुट्ठियाट्टहासं) जो अपने स्वच्छ प्रचुर धवल वर्ण-वाले फेन से मानों निरन्तर हँस ही रहा है, तथा (मारुयविक्खुब्भमाणपाणियं) वायु से जिसका जल आलोड्यमान हो रहा है, तथा (जलमालुप्पलहुलियं) जिसमें पानी का समूह जल्दी से दूसरी तरंग उत्पन्न कर रहा है, (अविय) तथा जो (समंतओ खुभिय) पवन के आघात

તથા "पायालकलससहस्स" સેંકડો પાતાળ કળશોના "वायुवसवेग" વાયુના સંયોગથી વેગયુક્ત બનેલ "सलिलउद्धम्ममाणदगरयरयधयारं" જળનાં ઉડતાં બિન્દુઓના સમુદાયથી જે અંધકાર યુક્ત બનેલ છે, "वरफेण-पउर-धवल पुलंपुल-समुट्ठियाट्टहासं" જે પોતાના સ્વચ્છ અને અત્યંત સફેદ રંગનાં ફીણ વડે જાણે નિરંતર હસી રહ્યો છે, તથા "मारुयविक्खुब्भमाणपाणिय" વાયુથી જેનું પાણી કંપી રહ્યું છે- ગતિમાન બન્યું છે. તથા "जलमालुप्पलहुलियं" જેમાં પાણીનો સમૂહ જલ્દીથી એક તરંગમાંથી બીજું તરંગ-(મોજું) ઉત્પન્ન કરી રહેલ છે, "अविय" તથા જે "समंतओखुभिय" પવનના આઘાતથી

पक्खलिय - चलिय-विपुलजलचक्कवाल-महानईवेग-तुरिय आपूरमाण-गभीर-विपुल-आवत्त-चंचल-भममाण-गुप्पमाणु-च्छलंत-पच्चोणियंत - पाणिय-पधाविय-खर-फरुस-पयंड-वाउलिय-सलिल-फुट्टंत-वीचि-कल्लोल-संकुलं' समन्ततः क्षुभितलुलितचोक्षुभ्यमाणप्रस्खलितचलितविपुलजलचक्रवालमहानदीवेगत्वरितापूर्यमाणगभीरविपुलावर्त्तचञ्चलभ्रमद्गोप्यमानोच्छलत्प्रत्यवनिवृत्तपानीयप्रधावितखरपरुषप्रचण्डव्याकुलितसलिलस्फुटद्वीचिकल्लोलसङ्कुलम्, तत्र 'समंतओखुभिय' समन्ततः क्षुभितं=पवनाऽऽघातेन सर्वतो व्याकुलितं 'लुलिय' लुलितं च तटप्रदेशप्राप्तं तथा 'खोखुब्भमाण' चोक्षुभ्यमाणम्=अतिशयेन पुनः पुनर्वा महामत्स्यादिभिर्व्याकुलीक्रियमाणं 'पक्खलियं' प्रस्खलितं = पर्वतादीनां महाशिलादिष्वाघातेन स्खलितं पश्चात् 'चलियं' चलितं=स्वस्थानाद् गमनं प्रवृत्तं 'विउल' विपुलं=विस्तीर्णं 'जलचक्कवाल' जलचक्रवालं=जलसमूहः यत्र ताः — क्षुभितलुलितचोक्षुभ्यमाणप्रस्खलितचलितविपुलजलचक्रवालास्तथाविधाश्च या 'महानईवेग' महानद्यः=गङ्गायमुनाद्यास्तासां वेगैः 'तुरिय' त्वरितं =शीघ्रम् 'आपूरमाण' आपूर्यमाणो यः सागरः स तथा। गभीराः=आगाधाः विपुलाः=विशालाः ये 'आवत्त' आवर्त्ताः=चक्राकारजलभ्रमाः तथा चञ्चलं यथास्यात्तथा 'भममाणा' भ्रमन्ति 'गुप्पमाणा' गोप्यमानानि=व्याकुली भवन्ति

से चारों तरफ क्षुब्ध हुआ (लुलिय) तट प्रदेश को प्राप्त हुआ-तटतक पहुँचा हुआ (खोक्खुब्भमाण) महामत्स्यादि जलचर जन्तुओं से व्याकुल किया गया (पक्खलिय) पर्वतादि की महाशिलाओं आदि के आघात से स्खलित हुआ फिर (चलिय) चलित-स्वस्थान से चलित हुआ (विउला) विस्तीर्ण (जलचक्कवाल) जलसमूह जहां है ऐसी (महानईवेगो) गंगा यमुना आदि महानदी के वेगों से (तुरिय) त्वरित-शीघ्र (आपूरमाण) जो भरा जा रहा है। तथा जो (गभीर) अगाध (विउल) विशाल (आवत्त) आवर्तों - (चक्राकार जलभ्रमणों) से तथा (चंचल) चपल (भममाण) घूमते हुए (गुप्पमाण) व्याकुल हुए

ચોમેર ક્ષુબ્ધ થઈને "लुलिय" તટપ્રદેશ સુધી પહોંચીને "खोक्खुब्भमाण" મહામત્સ્યાદિ જળચર જીવો દ્વારા વ્યાકુળ કરાયેલ "पक्खलिय" પર્વતાદિની મહાશિલાઓ આદિના આઘાતથી સ્ખલિત થઈને પછી "चलिय" ચલિત-સ્વસ્થાનથી ચલિત થઈને "विउल" વિસ્તીર્ણ "जलचक्कवाल" જળસમૂહ જ્યાં છે એવી 'महानईवेगो' ગંગા યમુના આદિ મહાનદીઓના વેગથી 'तुरिय' ઝડપથી 'आपूरमाण' જે ભરાઈ રહેલ છે. તથા જે 'गभीर' અગાધ 'विउल' વિશાળ "आवत्त" વમળોથી તથા "चंचल" ચપળ "भममाण" ઘૂમતાં

'उच्छलंत' उच्छलन्ति आकाशे उत्पतन्ति पुनः 'पच्चोणियंत' प्रत्यवनिवृत्तानि=अधोगच्छन्ति च यानि 'पाणिय' पानीयानि प्राणिनो वा यत्र स तथा 'पधाविय' प्रधाविताः=शीघ्रं गताः 'खरफरुस' खरपरुषाः=वेगातिशयाद् अतिकर्कशाः 'पयंड' प्रचण्डाः=दारुणाः 'वाउलियसलिल' व्याकुलित सलिलाः=व्याकुलीकृतानि उन्मथितानि सलिलानि=जलानि यैस्ते तथा 'फुट्टंत' स्फुटन्तः=परस्परसङ्घर्षं प्राप्य विच्छेदं गच्छन्तश्च ये 'वीचिकल्लोलसकुलं' वीचयः=तरङ्गाः कल्लोलाः=महातरङ्गास्तैः सङ्कुलो यः स तथेति पूर्वेषां कर्मधारयस्तं तथाविधं 'महासा-

(उच्छलंत) आकाश में उछलते हुए (पच्चोणियंत) फिर नीचे गिरते हुए (पाणिय) पानी अथवा प्राणी जिन में है ऐसी, तथा (पधाविय) शीघ्रता से उठी हुई (खरफरुस) अतिवेग से अत्यन्त कठोर (पयंड) दारुण–भयंकर अतएव (वाउलियसलिल) जल को मथित जैसा कर दिया ऐसी, तथा (फुट्टंत) परस्पर के संघर्षसे विच्छिन्न–जुदी जुदी हुई ऐसी (वीचिकल्लोल) छोटी बड़ी तरंगों से (संकुलं) व्याप्त ऐसे समुद्र को, अर्थात्–जो गंगा यमुना आदि नदियों के वेगों से कि जिनका विपुल जल चक्रवाल–समूह पवन के आघात से सर्वतः व्याकुलित होता रहता है, और तटप्रदेश तक आता रहता है, तथा महामत्स्य आदि जलचर जानवर जिसे अत्यंत चंचल बनाते रहते हैं, एवं जो पर्वत आदिकों की महाशिलाओं पर आघातयुक्त होकर अपने स्थान से आगे को बढ़ता रहता है, तथा जो गंभीर एवं विपुल आवर्त्तों से सदा व्याप्त बना रहता है, तथा जिसमें चंचल होकर पानी अथवा प्राणी बार २ इधर से उधर

"गुप्पमाण" व्याकुળ "उच्छलंत" આકાશમા ઉછળતા "पच्चोणियंत" અને ફરી પાછા નીચે પડતાં "पाणिय" પાણી અથવા જેમાં પ્રાણી છે, એવાં તથા "पधाविय" ઝડપથી ઉત્પન્ન થતાં, "खरफरुस" અતિવેગને કારણે અતિશય કઠોર અને "पयंड" દારુણ હોવાને કારણે "वाउलियसलिल" પાણીનું મન્થન કરાતું હોય એવા, તથા "फुट्टंत" એક બીજા સાથે અથડાવાથી વિચ્છિન્ન થતાં "वीचिकल्लोल" નાનાં મોટાં મોજાંઓથી "संकुल" વ્યાપ્ત એવા સમુદ્રને, એટલે કે જે ગંગા યમુના આદિ નદીઓના વેગથી કે જેમનું વિપુલ જળ ચક્રવાતના આઘાતથી સર્વતઃ વ્યાકુલિત થતું રહે છે, અને તટપ્રદેશ સુધી આવતું રહે છે તથા મહામત્સ્ય આદિ જળચર પશુઓ જેને અતિશય બનાવતાં રહે છે, અને જે પર્વત આદિની જે મહાશિલાઓ સાથે અથડાઈને પોતાના સ્થાનથી આગળ વધતુ રહે છે, જલ્દી ભરાતું રહે છે, તથા જે ગંભીર અને વિશાળ વમળોથી હમેશાં વ્યાપ્ત રહે છે, તથા જેમાં પાણી અને પ્રાણી ચંચળ

गर-मच्छ-कच्छ-भोहारगाह-तिमि-सुंसुमार-सावय-समाहय समुद्धायमाणय-पूर-घोरपउरं' महामकरमत्स्यकच्छपोहारग्राहतिमिशिशुमारश्वापदसमाहतसमुद्धावत्पूरघोरप्रचुरं महान्तो मकराः, तथा मत्स्याः कच्छपाश्च 'उहार' इति जलचरविशेषाः ग्राहास्तिमयः शिशुमाराः श्वापदकाश्च सर्वे जलचरविशेषाः ते च ते समाहताः=परस्परं सङ्घर्षं प्राप्ताः समुद्धावतः=अन्यान् स्वसमान्निर्बलान् जन्तून् हन्तुं धावन्तो ये पूराः=समुदायाः ते च ते घोराः=भयङ्कराः प्रचुराः यस्मिन् स तथा तमेवंविधं महासागरं धनार्थं गत्वा घ्नन्ति पोतानिति च वक्ष्यमाणेन सम्बन्धः॥९॥

पुनः कीदृशं सागरमित्याह—'कायर' इत्यादि ।

मूलम्—कायरजणहिययकंपणं घोरमारसंतं महब्भयं भयंकरं पडिभयं उत्तासणगं अणोरपारं आगासं चेव निरवलंबं उप्पा-

---

घूमते रहते हैं जिससे वह व्याकुल जैसा होता रहता है, आकाश में उछलता रहता है, और पुनः ऊपर से नीचे आ जाता है। तथा जो शीघ्र उद्भूत वेगातिशय से अतिकर्कश, प्रचंड, व्याकुलित—मथित किया है पानी जिन्हों ने एवं परस्पर संघर्ष को प्राप्त होकर विच्छेद को प्राप्त हुई ऐसी लहरों से संकुलित बना रहता है, (महामगरमच्छकच्छभोहारगाहतिमिसुंसुमारसावयसमाइयसमुद्घायमाणपूरघोरपउरं) तथा बडे २ मकर, मत्स्य, कच्छप, उहार, ग्राह, तिमि, शिशुमार, श्वापद, आदि जलचर जन्तुविशेष जिसमें परस्पर संघर्ष को प्राप्त होते रहते हैं और अपने से निर्बलों को मारने के लिये सदा जिसमें दौड़ते रहते हैं ऐसे महासागर में धन की लालसा से जाकर चोर लोग जहाजों को नष्ट कर डालते हैं॥ सू०९॥

થઈને વારંવાર આમ તેમ ફર્યા કરે છે. જેથી તે જાણે વ્યાકુળ રહે છે, આકાશમાં ઉછળતું રહે છે અને ફરી પાછું નીચે આવીને પડે છે. તથા જે શીઘ્ર ઉત્પન્ન થયેલ અતિશય વેગને લીધે અતિ કર્કશ, પ્રચંડ, વ્યાકુલિત, પાણીનું મંથન કરનાર, અને એક બીજાં સાથે અથડાઈને વિચ્છેદ પામેલ મોજાંઓથી વ્યાપ્ત રહે છે. "મહામગરમચ્છકચ્છભોહારગાહતિમિસુંસુમારસાવયસમાઇયસમુદ્ઘાયમાણપૂરઘોરપઉરં" તથા મોટા મગરો, મત્સ્ય, કાચબા, ઉહાર, ગ્રાહ, તિમિ, શિશુમાર, શ્વાપદ, આદિ જળચર પ્રાણીઓ જેમાં પરસ્પર અથડામણમાં આવ્યા કરે છે, અને પોતાના કરતા નિર્બળને મારવાને માટે સદા દોડતાં હોય છે, એવા મહાસાગરમાં જઈને ચોરલોકો ધનની લાલચથી જહાજોનો નાશ કરે છે. ॥ સૂ૦૯ ॥

इय पवणधणियणोल्लियउवरुवारितरंगदरियअइवेगचक्खुपह-मोच्छरंतं कत्थइगंभीरविउलगज्जियगुंजियनिग्घायगरुय-निवडियसुदीह नीहारिदूरसुच्चंतगंभीरधुगधुगंति सद्दंपडिपह-रुंभंतजक्खरक्खसकुहंडपिसायरुसियतज्जायउवसग्गसहस्ससं-कुलं बहूप्पाइयभूयं विरइयबलिहोमधूवउवयारदिण्णरुहिर-ऽच्चणाकरणपज्जयजोगपययचरियं परियंतजुगंतकालकप्पोवमं दुरंतमहानईवइसहाभीमदरिसणिज्जं दुरणुचरं विससप्पवेसं दुक्खुत्तारं दुरासयं लवणसलिल पुण्णं असियसिय समुच्छियगेहिं हत्थतरगेहिं वाहणेहिं अइवइत्ता समुद्दमज्झे हणंति गंतूण जणस्स पोरा परदव्वहरा नरा निरणुकंपा णिरवेक्खा ॥सू० १०॥

टीका—'कायरजणहियकंपणं' कातरजनहृदयकम्पनं=कातरजनानां = भीरुपुरुषाणां हृदयस्य कम्पनं=कम्पकारकं घोरं=भयङ्करं यथास्यात्तथा आरसन्तं=शब्दायमानं—शब्दं कुर्वन्तं कोलाहलसङ्कुलमित्यर्थः । 'महब्भयं' प्रतिभयं महाभयं=अत्यन्तभयजनकम् , अत एव भयङ्करं 'पडिभयं' प्रतिभयं=प्रतिप्राणिनं भयोत्पादकम्

फिर यह समुद्र कैसा है सो कहते हैं—' कायरजण ' इत्यादि ।

टीकार्थ—जो समुद्र (कायरजणहियकंपणं) कायरजनों के हृदय को कँपा देता है (घोरं) भयंकर होकर जो (आरसंतं) शब्दायमान होता है (महब्भयं) देखते ही जिसे लोगों को भय का संचार होने लग जाता है (पड़िभयं) हर एक प्राणी का रोम २ जिसकी आकृति के समक्ष भय के मारे खडा हो जाता है, और इस लिये जो (भयंकरं)

તે સમુદ્ર કેવો હોય છે તેનું વધુ વર્ણન કરે છે—" कायरजण० " ઇત્યાદિ

જે સમુદ્ર " कायरजणहियकंपणं " " घोर " કાયર લોકોના હૃદયને કંપાવી દે છે, " घोरं " ભયંકર રીતે જે " आरसंतं " ઘુઘવાટ કરે છે, " महब्भयं " જેને જોતાં જ લોકોના દિલમાં ભય ઉત્પન્ન થાય છે, " पडिभयं " જેનો દેખાવ જોતાં જ ભયથી દરેક પ્રાણીઓના રુવાટાં ખડા થઇ જાય છે,

'उत्तासणगं' उत्रासनकं=चित्तक्षोभकारकम् 'अणोरपारं' अनर्वाक्पारम्=अलब्धापारपर्यन्तं 'आगासं चेव निरवलंबं' आकाशमिव निरवलम्बम् आधाररहितं तत्र पतद्भिर्न किञ्चिदालम्बनमुपलभ्यते इति भावः, उप्पाइय पवणधणियणोल्लिय उवरुवरितरंगदरियअइवेगं' तथा औत्पातिकपवनघनोदितोपर्युपरितरङ्गदृप्तातिवेगम्=औत्पातिकेन = उत्पातजनितेन पवनेन=वायुना='धणिय' इति अत्यन्तं नोदिताः=प्रेरिताः उपर्युपरि=उर्ध्वोर्ध्वं ये तरङ्गास्ते च ते दृप्ताः=गर्विता इव अतिवेगाः=महावेगाः यत्र स तथा तं उत्पातजनितपवनेन अतिवेगतरङ्गयुक्तमतएव 'चक्खुपहमोच्छरंतं' चक्षुष्पथमवस्तृणन्तं चक्षुष्पथं=दृष्टिपथम् अवस्तृणन्तम्=आच्छादयन्तं द्रष्टुमप्यशक्यं किं पुनस्तर्तुमित्यर्थः, तथा 'कत्थइ' कुत्रचित् क्वचित्प्रदेशे गम्भीरं = अलब्धं मध्यं पुनः 'विउलगज्जियगुंजियनिग्घायगरुयनिवडियसुदीहनीहारिदूरसुच्चंतगंभीरधुगधुगंतिसद्दं' विपुलगर्जितगुञ्जितनिर्घातगुरुकनिपतितसुदीर्घनिर्हादिदूरश्रूयमाणगम्भीरधुगधुगितिशब्दं = तत्र विपुलं = विशालं गर्जितं = मेघवद् ध्वनिः तथा गुञ्जितं=

भय का प्रतिस्वरूप बना रहता है (उत्तासणगं) चित्त में जिसे अवलोकन कर क्षोभ हो जाता है, (अणोरपारं) जिसका दूसरा तट अलब्ध होता है (आगासं चेव निरविलंबं) आकाश की तरह जिसमें प्राणियों को पड़ जाने पर कोई भी आधार प्राप्त नहीं होता है, (उप्पाइयपवण) उत्पात जनित पवन से (धणिय णोल्लिय) अतिशय वेगशाली होकर (उवरुवरि) एक दूसरे के ऊपर पड़ती हुई (तरंगदरिय) गर्वित तरंगों से (अइवेगं) अत्यंतवेग हो रहा है। (चक्खुपहमोच्छरंतं) जिसका देखना भी अशक्य है तो फिर वहां तैरने की तो बात ही क्या है (कत्थइगंभीरं) कीसी २ प्रदेश में जो बहुत ही अधिक गंभीर

અને તેથી જ "भयंकरं" ભયની પ્રતિમૂર્તિ લાગે છે, "उत्तासणगं" જેનું અવલોકન કરીને ચિત્તમાં ક્ષોભ થાય છે, "अणोरपारं" જેનો બીજો કિનારો અપ્રાપ્ય હોય છે-જેનો પાર પામવો દુષ્કર છે, "आगासंचेव निरवलंबं" આકાશની જેમ જેમાં પ્રાણીઓને પડી જતાં કોઈપણ આધાર મળતો નથી "उप्पाइय पवण" ઉત્પાત જનિત પવનથી "धणिय णोल्लिय" અતિશય વેગમાં આવી જઈને "उवरुवरि" એક બીજાના ઉપર પડતાં "तरंगदरिय" ગર્વિત મોજાંઓથી "अइवेगं" જે અત્યંત વેગયુક્ત બની રહેલ છે, "चक्खुपहमोच्छरंतं" જેને જોઈ શકવો પણ અશકય છે તો ત્યાં તરવાની તો વાત જ કયાં છે! "कत्थइगंभीरं" કોઈ કોઈ પ્રદેશમાં જે ઘણો વધારે ગંભીર હોય છે,

भ्रमरगुञ्जितमिव गुञ्जितं तथा निर्घान्तः व्यन्तरकृतो महाध्वनिः गुरुकनिपतित=विद्युद्विशेषादि संपातेन च जायमानोध्वनिः सुदीर्घः=अत्यर्थं निह्रादी=प्रतिध्वनियुक्तो निर्घोषः दूरश्रूयमाणः=अतिदूरदेशादपि श्रूयमाणः गम्भीरो धुगुधुगिति शब्दश्च यत्र स तथा तं 'पडिपहरुंभंत–जक्खरक्खस कुहंड–पिसाय–रुसिय – तज्जायउवसग्गसहस्ससंकुलं ' प्रतिपथरुन्धानयक्षराक्षसकूष्माण्ड पिशाचरुष्टतज्जातोपसर्गसहस्रसंकुलं = तत्र प्रतिपथं=प्रतिमार्गं रुन्धानाः=पथिकानां मार्गावरोधं कुर्वाणा ये यक्षाः राक्षसाः कूष्माण्डाः पिशाचाश्च सर्वे व्यन्तरविशेषास्ते च ते रुष्टाः=रोषयुक्ता स्तै र्जातानि यान्युपसर्गसहस्राणि=उपद्रवसहस्राणि तैः संकुलः=व्याप्तो यः स तथा तं ' बहूप्पाइयभूयं ' बह्वौत्पातिकभूतं=बहून्यौत्पातिकानि=उत्पातभवानि दुःखानि भूतानि यत्र स तथा तं ' विरइय

होता है। तथा (विउलगज्जिय गुंजिय) जिसका मेघ की तरह विशाल गर्जित एवं भ्रमरों के जैसा विशाल गुजित्त, (निग्घाय) निर्घात–व्यन्तरों की ध्वनि, तथा (गरुयनिवडिय) बिजली आदि का जो इसमें गिरना होता है उस समय निला हुआ जो अत्यन्त निर्ह्रादी प्रतिध्वनि युक्त विशेष निर्घोष (दूरसुच्चंत) दूर से सुनाई देने वाले (गंभीर) गम्भीर (धुगधुगंति) ' धुग धुग ' ऐसा शब्द, ये (सद्दं) शब्द हैं जिसमें, तथा (पडिपहरुंभंत–जक्ख–रक्खस–कुहंड–पिसाय–रुसिय–तजायउवसग्गसहस्ससंकुलं) जो रुष्ट होकर पथिकों के मार्ग का अवरोध करने वाले यक्ष, राक्षस, कूष्माण्ड (व्यन्तरविशेषदेव) एवं पिशाचों के हजारों उपसर्गों से सदा व्याप्त रहता है (बहूप्पाइय भूयं) तथा जिसमें जीवों को अनेक उत्पातजन्य दुःखों का साम्हना

તથા "विउलगज्जियगुंजिय" જે મેઘના જેવી મોટી ગર્જના કરે છે અને ભ્રમરો જેવો વિશાળ ગુંજારવ કરે છે, "निग्घाय" निर्घात—વ્યન્તરોનો મહાધ્વનિ તથા "गरुयनिवडिय" વીજળી આદિ તેમાં પડે ત્યારે તેમાંથી નીકળતો निर्ह्रादी–પ્રતિધ્વનિ યુક્ત નિર્ઘોષ, "दूरसुच्चंत" દૂરથી સંભળાતો "गंभीर" ગંભીર "धुगधुगंति" "धुग धुग" જેવો આવાજ, આદિ "सद्दं" શબ્દો જેમાં સંભળાય છે તથા "पडिपहरुंभंत–जक्ख–रक्खस–कुहंड–पिसाय–रुसिय–तज्जाय उवसग्गसहस्ससंकुलं" જે રુષ્ટ થઈને મુસાફરોના માર્ગનો અવરોધ કરનારા યક્ષ, રાક્ષસ, કુષ્માંડ, (વ્યન્તર વિશેષ દેવ) અને પિશાચોના હજારો ઉપસર્ગોથી સદા વ્યાપ્ત રહે છે, "बहूप्पाइयभूय" તથા જેમા જીવોને અનેક ઉત્પાત જન્ય દુઃખોનો સામનો કરવો પડે છે, "विरइय

वलिहोमधूवउवयारदिण्णरुहिरच्चणाकरणपययजोगपययचरियं ' विरचितवलिहोमधूपोपचारदत्तरुधिरार्चनाकरणप्रयतयोगप्रयतचरितं = तत्र विरचितः = कृतः वलिना=द्रव्योपहारेण होमेन=अग्नौ हवनेन धूपेन-धूपेनचोपचारो यैस्ते तथा दत्तं रुधिरं=समर्पितं शोणितं यत्र तदेवंभूतं यदर्चनाकरणं तत्र प्रयताः=तत्परा ये ते तथा, योगप्रयताश्च=पोतादिभिर्व्यापारे निरता ये ते तथा तैः तत्रस्थितैः चरितः संश्रितो यः स तथा तमेतादृशं सागरम् । पुनः कीदृश ? मित्याह—' परियंतजुगंतकालकप्पोवमं ' पर्यन्तयुगान्तकालकल्पोपमं=पर्यन्तयुगस्य=सकलेषु युगेषु मध्ये चरमयुगस्य योऽन्तकालः=प्रलयकालः स एव कल्पस्तेनोपमा=सादृश्यं यस्य स तथा तं ' दुरंतमहानई-नईवइ-महाभीमदरिसणिज्जं ' दुरंतमहानदी नदीपति-महाभीमदर्शनीयं-दुरन्ताः=दुष्पाराः या महानद्यः=गङ्गाद्यानद्यश्च=अन्याः सामान्या-

---

करना पड़ता है (विरइयवलिहोम-धूव-उवयार-दिण्ण-रुहिर-च्चणाकरण-पयय-जोगपययचरियं) तथा (विरइयवलिहोमधूवउवयार) नौकाओंके अटक जाने पर जहां जहाजों से व्यापार करने में लगे हुए मनुष्यों द्वारा-सार्थवाहो द्वारा-विविध प्रकार की भेंटें दी जाती है, अग्निमें धूप जलाया जाता है- तथा (दिण्ण रुहिरच्चणाकरणपयय) रुधिर का समर्पण रूप पूजा में लगे हुए ऐसे (जोगपयय) व्यापारी लोगों से (चरियं) सेवित है । तथा (परियंत जुगंतकालकप्पोवमं) समस्त युगों के मध्य में चरम युग का प्रलयकालरूप कल्प के जैसा तु (दुरंतमहानई नईवइ-महाभीम दरिसणिज्जं) (दुरंत) जिनका पार करना कठिन है ऐसी (महानई नईवइ) गंगा आदि महानदियों का तथा अन्यसाधारण नदियों को जो पति हैं, इसी कारण यह (महाभीमदरिसणिज्जं) देखने

बलिहोम-धूव-उवयार-दिण्ण-रुहिर-च्चणाकरण-पयय-जोगपययचरियं " तथा "विरइयवलिहोमधूवउवयार" નૌકાઓ અટકી જતા જ્યાં વહાણો દ્વારા વેપાર કરનાર લોકો દ્વારા (સાર્થવાહો દ્વારા) વિવિધ પ્રકારની ભેટો દેવાય છે, અગ્નિમાં ધૂપ બાળવામાં આવે છે, તથા "दिण्णरुहिरच्चणाकरणपयय" રુધિરના સમર્પણ રૂપ પૂજામાં લાગેલા એવા " जोगपयय " વ્યાપારી લોકોથી " चरियं " જે સેવિત છે, તથા " परियंतजुगंतकालकप्पोवमं " જે સઘળા યુગોની વચ્ચે છેલ્લા યુગના પ્રલયકાળરૂપ કલ્પના જેવો છે, " दुरंतमहानईनईवइ-महाभीमदरिसणिज्जं " " दुरंत " જેને ઓળંગવી મુશ્કેલ છે એવી " महानई-नईवइ " ગંગા આદિ મહા નદીઓનો તથા બીજી સામાન્ય નદીઓનો જે પતિ છે, અને તે કારણે જે " महाभीमदरिसणिज्जं " જે દેખાવમાં ભયંકર

स्तासां 'वइ' पतिः, स च महाभीमदर्शनीयः स तथा तं 'दुरणुचरं' दुःखेनाऽनुचर्यते इति दुरनुचरं 'विसमप्पवेसं' विषमप्रवेशं=विषमः=दुस्साध्यः प्रवेशो यस्मिन् स तथा तं 'दुक्खुत्तारं' दुःखोत्तारं=दुःखेनोत्तरणं यस्य स तथा तं 'दुरासयं' दुरासदं=दुष्प्रापं दुराश्रयं=दुःखदस्थानरूपं 'लवणसलिलपुण्णं' लवणसलिलपूर्णं = क्षारजलभृतम्, 'असियसियसमुच्छियगेहिं' असितसितसमुच्छ्रितकैः=तत्र असिताः-कृष्णाः सिताः=शुक्लाश्च पटाः समुच्छ्रितकाः=उपरि बद्धा येषु प्रवहणेषु तानि तथा तैः 'हत्थंतरगेहिं' दक्षतरकैः=अन्य यानपात्राद्यपेक्षयाऽतिशयवेगशीलैः 'वाहणेहिं' वाहनैः=स्कन्धवाहैः प्रवहणैः 'अइवइत्ता' अतिपत्य=आक्रम्य 'परदव्वहरा' परद्रव्यहराः=परधनापहरणशीलाः 'निरणुकंपा' निरनुकम्पाः=कृपारहिताः 'णिरवयक्खा' निरपेक्षाः=अपेक्षारहिताः परलोकभयरहिताः नराः=जना 'समुद्दमज्झे' समुद्रमध्ये 'गंतूण' गत्वा जणस्स 'पोत्ते' पोतान्=नौकान् 'हणंति' घ्नन्ति=विनाशयन्ति ॥ सू-१० ॥

में भयंकर है (दुरणुचरं) तथा जिसमें अनुचरण करना-फिरना बहुत ही आयास साध्य-कठिन है। इसीलिये (विसमप्पवेसं) जिसमें प्रवेश करना बहुत कठिन होता है। (दुक्खोत्तारं) जिसका पार करना बड़ा मुश्किल होता है (दुरासयं) जो सदा दुःखदस्थानरूप है। (लवणसलिलपुण्णं) क्षार जल से सदा भरा रहता है ऐसे समुद्र को (असियसिय समुच्छियगेहिं) कृष्ण एवं शुभ्रवस्त्र जिनके ऊपर बांधा गया है ऐसी (हत्थंतरगेहिं) जो अन्य यान पात्रों की अपेक्षा पानी के ऊपर बहुत जल्दी तैरती है ऐसे (वाहणेहिं) नौकाओं द्वारा (अइवइत्ता) आक्रमित करके (परदव्वहरा) परद्रव्य को हरण करने वाले (निरणुकंपा) निर्दयी (णिरवयक्खा) जो अपने परभव को सुधार ने की भावना से रहित होते हैं ऐसे (नरा) चोर मनुष्य (समुद्दमज्झे गंतूण)

છે, "दुरणुचरं" તથા જેમાં ફરવું અતિશય કઠિન છે, "विसमप्पवेसं" જેમાં પ્રવેશ કરવો ઘણો મુશ્કેલ છે, "दुक्खोत्तारं" જેને ઓળંગવો અતિશય મુશ્કેલ છે, "दुरासयं" જે સદા દુઃખદ સ્થાન રૂપ છે, "लवणसलिलपुण्णं" જે ખારા પાણીથી સદા ભરપૂર રહે છે, એવા સમુદ્રને "असियसिय समुच्छियगेहिं" જેમના ઉપર કાળા અને સફેદ વસ્ત્ર બાંધેલાં છે એવી "हत्थंतरगेहिं" જે અન્ય વાહનો કરતા પાણી ઉપર વધારે ઝડપથી તરે છે એવી "वाहणेहिं" નૌકાઓ દ્વારા "अइवइत्ता' આક્રમણ કરીને "परदव्वहरा" પરધનનું હરણ કરનારા, "निरणुकंपा" નિર્દય અને "णिरवयक्खा" પોતાના પરભવને સુધારવાની ભાવનાથી રહિત એવા 'नरा" ચોર લોકો "समुद्दमज्झे

पुनः किं कुर्वन्तीत्याह—'गामागर०' इत्यादि

मूलम्—गामागर-नगर-खेड-कव्वड-मडंब-दोणमुह-पट्टणा-समणिगम—जणवए ते य धणसमिद्धे हणंति, थिर हियय-च्छिन्नलज्जा वंदिग्गह—गोग्गहा य गेण्हंति, दारुणमई निक्किवा णियं हणंति छिंदंति गेहसंधि निक्खित्ताणि य हरंति, धणधण्णदव्वजायाणि जणवयकुलाणं निग्घिणमई परदव्वाहिं जे अविरया, तहेव केइ अदिण्णादाणं गवेसमाण कालाकालेसु संचरंता चितगपज्जलिय—सरसदर—दड्ढकड्ढिय-कलेवरे रुहिरलित्तवयण — अक्खय — खादिय — पीतडाइणि-भमंतभयंकरे जंबुयखिक्खियंते घूयकयघोरसद्दे वेयालुट्ठिय विसुद्धकहकहेंत पहसियबीहणग निरभिरामे अइदुब्भिगंधे बीभच्छदरिसणिज्जे सुसाणे वणे सुण्णघरलेणअंतरावण गिरिकंदरेसु विसमसावय समाउलासु वसहिसु किलिस्संता सीयायवसोसियसरीरा दड्ढच्छवीनिरय तिरिय भवसंकडदुक्ख संभारवेयणिज्जाणि पावकम्माणि संचिणंता दुल्लभभक्खण पाणभोयणापिवासिया झुंझिया किलंतामंसकुणिमकंदमूलजं किंचिकयाहारा उव्विग्गा उप्पुया असरणा अडवीवासं उवेंति वालसयसंकणीयं ॥ सू० ११ ॥

समुद्र के बीच में जाकर (जणस्स) मनुष्यों की (पोते) नौकाओं को (हणंति) नष्ट कर डालते हैं ॥सू० १०॥

गंतूण " समुद्रनी वच्चे जईने " जणस्स " माणुसोनी " पोते " नौकाओने " हणंति " नाश करी नाखे छे ॥ सू-१० ॥

टीका—'ते य' ते च=पूर्वोक्तप्रकाराजनाः 'गामागरनगरखेडकव्वड-मडंवदोणमुहपट्टणासमणिगमजणवए' ग्रामाकरनगरखेटकर्वटमडम्बद्रोणमुखपत्त-नाश्रमनिगमजनपदान्=तत्र ग्रामः, ग्रसति बुद्धयादिगुणानितिग्रामः, आकरः=सुवर्णरजतादि धातूनां खनिस्थानं, नगरं=अष्टादशकरवर्जितं, खेटं=धूलिप्राकारमयं, कर्वटं=अल्पजननिवासस्थानं, मडम्बः सार्धक्रोशद्वयग्रामान्तरशून्यः, द्रोणमुखं=जलस्थलमार्गौ यत्र भवेत् तद्द्रोणमुखं, पत्तनं=सकलवस्तुप्राप्तिस्थानम्, आश्रमः=

परद्रव्य हरण करने वाले तस्करजन फिर क्या करते हैं? सो इस सूत्र द्वारा सूत्रकार प्रदर्शित करते हैं—'गामागर०' इत्यादि।

टीकार्थ—(धणसमिद्धे गामागरनगर खेडकव्वडमडंवदोणमुहपट्ट-णासमणिगमजणवए) धनधान्यादि से समृद्ध हुए ग्राम, आकर, नगर, खेट, कर्बट, मडंब, द्रोणमुख, पत्तन, आश्रम, निगम एवं जनपद, इन सब को (ते य) परद्रव्य हरण करने वाले चोर आदिक (हणंति-) नष्ट कर देते हैं। जहां बुद्धयादिगुणों का ह्रास होता है वह ग्राम है। सुवर्ण रजत आदि धातुओं की उत्पत्ति का जो स्थान होता है उसका नाम आकर है। अठारह प्रकार का राजकर जिसमें नहीं लिया जाता है उसका नाम नगर है। धूलिका प्राकार जिसमें होता है उसका नाम खेट है। जिसमें थोड़ेसे मनुष्य निवास करते है उसका नाम कर्वट है। चारों दिशाओंमें अढाई२ कोसतक जिसके आसपासमें गांव नहीं होते हैं उसका नाम मडंव है। जलमार्ग के एवं स्थलमार्ग दोनों प्रकारके मार्गसे होकर जिसमें जाया जाता हो उसका नाम द्रोणमुख है। सकल वस्तुओं की प्राप्ति का जो

પરદ્રવ્યનું હરણ કરનારા ચોરો પછી શું કરે છે? સૂત્રકાર આ સૂત્રદ્વારા તે પ્રગટ કરે છે—"गामागर" ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—"धणसमिद्धे गामागारनगरखेडकव्वडमडंवदोणमुहपट्टणासमणिगम-जणवए" ધનધાન્યથી સમૃદ્ધ બનેલ ગામ, આકર, નગર, ખેટ, કર્બટ, મડંબ, દ્રોણમુખ, પત્તન, આશ્રમ, નિગમ અને જનપદ એ બધાંનો "तेय" પરધન હરી લેનાર ચોર આદિ લોકો નાશ કરે છે. જ્યાં બુદ્ધિ આદિ ગુણોનો હ્રાસ થાય છે તે ગામ છે. સોનુ, ચાંદી આદિ ધાતુઓનાં ઉત્પત્તિ સ્થાનને આકાર–ખાણ કહે છે. અઢાર પ્રકારનો રાજકર જ્યાં લેવાતો નથી તેને નગર કહે છે. ધૂળનો કિલ્લો જ્યા હોય છે તે સ્થાનને ખેટ કહે છે જેમાં થોડા જ માણસો વસતા હોય તે સ્થાનને કર્બટ કહે છે. જેની આસપાસમાં અઢી ગાઉમાં ગામ હોતાં નથી તેને મડંબ કહે છે. જ્યાં જળમાર્ગે તથા સ્થળમાર્ગે જઇ શકાય છે તે સ્થાનને દ્રોણમુખ કહે છે. જ્યાં બધી વસ્તુઓ મળી શકે છે તે

तापसनिवासः, निगमः=वणिग्जननिवासः जनपदो देशस्तान् ' धणसमिद्धे ' धन-समृद्धान्=धनधान्यसम्पन्नान् ' हणंति ' घ्नन्ति=विनाशयन्ति तथा ' थिरहियया ' स्थिरहृदया=अदत्तादाने निश्चलचित्ताः छिन्नलज्जाः=जातिकुलादिलज्जावर्जिताः ' वंदिग्गहगोग्गहा य ' वन्दिग्रहगोग्रहांश्च = वन्दिनः स्तुतिपाठोपजीविनस्तेषां ग्रहः=ग्रहणं गवां च ग्रहणं चोरणमित्यर्थः, ' गेण्हंति ' गृह्णन्ति=कुर्वन्ति तथा ' दारुणमई ' दारुणमतयः=घोरकर्माचरणबुद्धयः ' निक्किवा ' निष्कृपाः=निर्दयाश्च ' णियं ' निजं = स्वजनमपि ' हणंति ' घ्नन्ति = नाशयन्ति तथा गेहसन्धि= गृहभित्तिं ' छिंदंति ' छिन्दन्ति । ततश्च ' जणवयकुलाणं' जनपदकुलानां 'निक्खि-

---

स्थान होता है उसका नाम पत्तन है। तापस लोगों का जो निवास स्थान होता है उसका नाम आश्रम है। वणिग्जन जिसमें रहते हों उसका नाम निगम, एवं देश का नाम जनपद है। इन स्थानों को लूटने वाले तथा-नष्ट भ्रष्ट करने वाले ये जन (थिरहियया) अदत्तादान करने में निश्चलचित्त रहते हैं (छिन्नलज्जा) इन्हें जाति, कुल आदि की लज्जा कुछ भी नहीं होती है। (वंदिग्गहगोग्गहा य) ये स्तुति पाठकों को लूट लिया करते है और गायों को भी चुरा लिया करते हैं। (दारुणमई) इनकी मति बडी दारुण (भयंकर) होती है-भयंकरसे भयंकर कर्म करनेमें भी उन्हें संकोच नहीं होता है। (निक्किवा) ये सदा दया से रहित होते हैं। (णियं हणंति) अपने निजजन को भी ये जान से मार डालते हैं (गेहसंधिं) घरों की भित्तियों तक को भी ये (छिंदंति) तोड़ डालते हैं। (जणवयकुलाणं) दूसरों की रक्खी हुई-धरोहररूप में स्थापित की

સ્થાનને પત્તન કહે છે. તાપસ લોકનાં નિવાસસ્થાનને આશ્રમ કહે છે. વણિક લોકો જ્યાં રહે છે તે નિગમ અને દેશને જનપદ કહે છે. તે સ્થાનોને લૂટ-નારા તથા નષ્ટભ્રષ્ટ કરનારા તે લોકો " थिरहियया " અદત્તાદાન-ચોરી કરવાને માટે દૃઢ નિશ્ચયી હોય છે. " छिन्नलज्जा " તેમને જાતિ. કુળ આદિની સહેજ પણ લાજ હોતી નથી. " वंदिग्गहगोग्गहाय " તેઓ સ્તુતિ કરનારાને પણ લૂંટી લે છે, અને ગાયોને પણ ચોરી જાય છે " दारुणमई " તેમની જાતિ અતિ દારુણ હોય છે-ભયંકરમાં ભયંકર કૃત્ય કરતાં પણ તેમને સંકોચ થતો નથી " निक्किया " તેઓ સદા દયાહીન હોય છે, " णियं हणंति " પોતાના સ્વજનોને પણ તેઓ મારી નાખે છે, " गेहसंधिं " ઘરની દિવાલોને પણ તેઓ " छिंदंति " ઘરની દિવાલોને પણ તેઓ " छिंदंति " તોડી પાડે છે. " जणवयकुलाणं " બીજાએ અનામત થાપણ તરીકે મૂકેલ " धणधण्णदव्व-

त्ताणि ' निक्षिप्तानि=स्थापितानि ' धणधण्णदव्वजायानि ' धनधान्यद्रव्यजातानि= धनधान्यसुवर्णरजतादीनि हरन्ति ' के इत्याह-ये ' परदव्वाहिं ' परद्रव्यैः 'अविरया ' अविरताः=अनिवृत्ताः=' निग्घिणमई ' निर्घृणमतयः=करुणारहिताः 'तहेव' तथैव-पूर्वोक्तप्रकारेण ' केई ' केऽपि ' अदिण्णादाणं ' अदत्तादानं=स्वाम्यादिभिरवितीर्णं धनं गवेषमाणाः=अन्वेषमाणाः कालाकालेषु=कालेषु=सकललोकव्यवहारोचितकालेषु दिनादिलक्षणेषु तथा अकालेषु=अनुचितकालेषु अर्धरात्रादिलक्षणेषु च सञ्चरन्तः=भ्रमन्तोऽदत्तग्राहिणः, ' चितगपज्जलियसरसदरदड्ढकड्ढियकलेवरे ' चितकप्रज्वलितसरसदरदग्धकृष्टकलेवरे=चितकेषु=चितासु, कीदृशेषु ? प्रज्वलि-

---

हुई (धणधण्णदव्वजायाणि) धन, धान्य, सुवर्ण रजत आदि संपत्ति को (हरंति) हर लिया करते हैं। (परदव्वाहिं अविरया) क्यों कि ये लोग परके द्रव्य को चुराने रूप कृत्य से विरक्त नहीं होते हैं-" दूसरों का द्रव्य विना पूछे नहीं लूंगा " इस प्रकार का नियम इन्हें नहीं होता है। (निग्घिणमई) ये सर्वथा दयाभाव से रहित मति वाले होते हैं। (तहेव केइ) इसी तरह कितनेक व्यक्ति (अदिण्णादाण) स्वामी आदि द्वारा वितीर्ण नहीं किये हुए धन धन्यादि की (गवेसमाणा) गवेषणा करते हुए (कालाकालेसु) समस्त लोक व्यवहार के उचित दिन आदि रूपकाल में तथा अर्धरात्रि आदि रूप अकाल-अनुचित काल में (संचरंता) इधर उधर घूमते हुए श्मशान शून्यगृह आदि में भटकते रहते हैं, यह सम्बन्ध यहां जोड़ लेना चाहिये। वह श्मशान आदि कैसे हैं सो वर्णन करते हैं-जहां (चितगपज्जलिय) प्रज्वलित चिताओं में

जायाणि" धन, धान्य, सोनुं, रूपुं, आदि संपत्तिने "हरंति" पण तेओ हरी ले छे. "परदव्वाहिं अविरया" कारण के ते लोको परधनने चोरवाना कृत्यथी विरक्त होता नथी, "बीजानु द्रव्य तेने पूछ्या विना नहीं लउं" एवो तेमने नियम होतो नथी. ' निग्घिणमई" तेओ सदा दयाभावथी रहित मतिवाळा होय छे. "तहेव केइ" ए ज प्रमाणे केटलाक लोको "अदिण्णादाण" मालिक आदि द्वारा अर्पण न करवामा आवेल धन धान्यादिनी "गवेसमाणा" शोध करतां "कालाकालेसु" बधा लोको साथे व्यवहार माटेना दिवस आदि योग्य समय अथवा मध्य रात्रि आदि अकाले-अयोग्य समये "संचरंता" आम तेम श्मशान, शून्यगृह-खालीघर-आदिमां भटकया करे छे. ते श्मशान आदि केवां होय छे, तेनुं वर्णन करे छे-"चितगपज्जलिय" सळगती चिताओमां "सरस"

तेषु=प्रदीप्तेषु यानि सरसानि=रुधिरमांसादिसहितानि अतएव दग्धानि=ईषद्भस्मीभूतानि तानि कृष्टानि=श्वशृगालादिभिश्चितातो निष्काशितानि कलेवराणि=मृतकशरीराणि यत्र तत्तथा तत्र श्मशाते। पुनः कीदृशे—'रुहिरलित्तवयणअक्खयखादियपीयडाइणिभमंतभयंकरे' रुधिरलिप्तवदनाऽक्षतखादितपीतडाकिनी भ्रमद्भयङ्करे=तत्र रुधिरेण लिप्तानि वदनानि = मुखानि तथा अक्षतानि=समग्राणि खादितानि मृतकानां शरीराणि तथा पीतानि रुधिराणि याभिस्तास्तथा भ्रमन्त्यश्च या डाकिन्यस्ताभिर्भयङ्करे, 'जंबुयखिक्खियंते' जम्बुकानां 'खिखि' इति शब्दयुक्ते तथा 'घूयकयघोरसद्दे' घूककृत घोरशब्दे=घूकैः=उलूकैः कृतः घोरः=भयङ्करः शब्दस्तेन युक्ते तथा 'वेयालुट्ठियविसुद्धकहकहंतपहसियवीहणगनिरभिरामे' वेतालोत्थितविशुद्धकहकहायमानमहसितभीषणकनिरभिरामे = वेतालेभ्यः = विकृत पिशाचेभ्यः उत्थितं=समुत्पन्नं विशुद्धम्=अन्यशब्दाऽमिश्रितं यत् कहकहायमानं=

(सरस) रस–रुधिर आदिसे लिप्त मुर्दे (दरदड्ढ) पूरे नहीं जल सकनेके कारण (कड्ढियकलेवरे) कुत्ते एवं श्रृगाल आदि द्वारा चिताओंसे बाहिर निकाल लिये जाते हैं (रुहिरलित्तवयण) जिनके मुख रुधिरसे लिप्त हो रहे हैं, तथा (अक्खयखादियपीय) जिन्होंने समग्ररूपसे मृतक कलेवरोंको खाया है और उनकाखून पी लिया है ऐसी (डाइणीभमंतभयंकरे) घूमती हुई डाकिनियोंसे जो भयंकर बने हुए हैं (जंबुयखिक्खियंते) तथा जो गीदड़ों के 'खि–खि' शब्दोंसे युक्त हो रहे हैं (घूयकयघोरसद्दे) उल्लू जहां घोर शब्द कर रहे हैं, तथा जहां (वेयालुट्ठिय) वेताल विकृत बनकर जोर२ से कह कहाय मार कर हँसा करते हैं। (विसुद्धकह कहंत पहसिय) उनका यह हँसना जहाँ अन्य और शब्दों से मिश्रित नहीं हो रहा है–केवल "कह कह" ऐसी ही ध्वनि जहां उनके मुख से निकल रही है, इस–

રસ–રુધિર આદિથી ખરડાયેલાં મુડદાં, "दरदड्ढ" પૂરા બળી શકેલા ન હોવાથી "कड्ढियकलेवरे" કૂતરાં શિયાળ આદિ દ્વારા ચિતાઓમાંથી બહાર ખેંચી કઢાય છે "रुहिरलित्तवयणअक्खयखादियपीयडाइणीभमंतभयंकरे" "रुहिरलित्तवयण" જેમનાં મુખ લોહીથી ખરડાયેલાં છે તથા જેમણે સંપૂર્ણ રીતે મૃતશરીરેનું ભક્ષણકર્યું છે અને તેમનું લોહી પીધું છે એવી "डाइणीभमंतभयकरे" ત્યાં ભમતી ડાકણોથી જે ભયંકર લાગે તે, "जबुयखिक्खियते" તથા જે શિયાળોના "ખિ–ખિ" શબ્દોથી યુક્ત છે, "घूयकयघोरसद्दे" ઘુવડો જ્યાં ભયંકર શબ્દો કરે છે, તથા જ્યાં "वेयालुट्ठिय" વેતાળકૃત બનીને જોર શોરથી ખડખડાટ હસી રહ્યા છે, "विसुद्धकहकहंत पहसिय" તેમનું તે હાસ્ય જ્યાં બીજા કોઈ શબ્દ સાથે મિશ્રિત થતું નથી–કેવળ "કહ કહ" એવો ધ્વનિજ તેમનાં

शब्दायमानं हसितं=हसनं तेन भीषणकं=भयानकमतएव निरभिरामम्=असुन्दरं यत्तत्तथा तत्र, तथा 'अइदुब्भिगंधे' अतिदुरभिगन्धे-शटितमृतककलेवरदुर्गन्ध-युक्ते, 'बीभच्छदरिसणिज्जे' बीभत्सदर्शनीये=बीभत्सं=अस्थिमृतककलेवरादि-युक्तत्वाज्जुगुप्सोत्पादकं दर्शनीयं=दर्शनं यस्य तत् तस्मिन् 'सुसाणे' श्मशाने 'वणे' वने=अरण्ये च तथा 'सुण्णघरलेणअंतरावणगिरिकंदरेसु' शून्यगृहलय-नाऽन्तराऽऽपणगिरिकन्दरेषु=शून्यानि गृहाणि अन्तरापणाः=अन्तरा=ग्रामादीना-मर्द्धपथे विश्रामार्थं निर्मिता आपणाः=गृहाः=ग्रामाद्बाह्याः गिरिकन्दराणि च=गिरिगह्वराणि, तेषु, तथा-'विसमसावयसमाउलासु' विषमैः श्वापदैः हिंस्रप्राणि-भिः समाकुलाः=व्याप्ताः तास्वेवं विधासु 'वसहिसु' वसतिषु=वासस्थानेषु 'किलि-स्संता' क्लिश्यन्तः=दुःखानि प्राप्नुवन्तः, 'सीयायवसोसियसरीरा' शीतातप-शोषितशरीराः = शीतैरातपैश्च शोषितानि शरीराणि येषां ते तथा 'दड्ढच्छवी'

लिये इस विशुद्ध कह कह ध्वनि संयुक्त पिशाचों के हास्यसे जो (बीह-णग) भयप्रद और (निरभिरामे) असुन्दर बने हुए हैं (अइदुब्भिगंधे) अतिदुरभिगंध-सड़े हुए मृतकों के कलेवरों की दुर्गन्ध से जो युक्त हो रहा है (बीभच्छदरिसणिज्जे) तथा जो हाड़ मृतक कलेवर आदि से युक्त होने के कारण घृणोत्पादक दिखलाई पड़ते हैं ऐसे (सुसाणे) उन श्मशानों में (सुण्णघर) शून्य गृहों में, (लेण) लयनों में-पर्वतो के निकटवर्ती पाषाणगृहों में, (अंतरावण) ग्राम आदिकों के आधे मार्ग में विश्राम निमित्त बने हुए घरों में, (गिरिकंदरेसु) पर्वत की गुफाओं में, तथा (विसमसावयसमाउलासु) हिंसक प्राणियों से युक्त (वस-हिसु) वसतियों में-वासस्थानों में, (किलिस्संता) नाना प्रकार के दुःखों को सहन किया करते हैं। तथा (सीया य वसोसियसरीरा) शीत और आतप से इनके शरीर शोषित-सूके हुए रहते हैं। (दड्ढ-

---

મુખમાંથી નીકળતો હોય છે, તેથી પિશાચોનાં તે વિશુદ્ધ કહકહ ધ્વનિ યુક્ત હાસ્યથી જે "बीहणग" ભયંકર અને "निरभिरामे" અસુંદર બનેલ છે, "अइदुब्भिगंधे" સડેલાં મૃત કલેવરોની અતિશય દુર્ગન્ધથી જે યુક્ત છે, "बीभच्छदरिसणिज्जे" તથા જે હાડકાં, મુડદાં આદિથી યુક્ત હોવાને કારણે ઘૃણાજનક દેખાય છે, એવાં "सुसाणे" શ્મશાનોમાં, "वणे" વનોમાં, "सुण्णघर" શૂન્યઘરોમાં, "लेण" લયનોમાં પહાડની સમીપનાં પાષાણગૃહોમાં "गिरिकंदरेसु" પર્વતની ગુફાઓમાં, તથા "विसमसावयसमाउलासु" હિંસક પ્રાણીઓથી યુક્ત "वसहिसु" નિવાસ સ્થાનોમાં, "किलिस्संता" વિવિધ પ્રકારનાં દુઃખો સહન કર્યા કરે છે. તથા "सीया य वसोसियसरीरा" શીત અને તાપથી તેમનાં શરીર સૂકાં રહે છે. "दड्ढच्छवी" તેમનાં શરીરની

दग्घच्छवयः=नष्टकान्तयः ' निरयतिरियभवसंकडदुक्खसंभारवेदणिज्जाणि पावकम्माणि संचिणंता ' नरकतिर्यग् भवसङ्कटदुःखसम्भारवेदनीयानि पापकर्माणि संचिन्वन्तः=तत्र नरकतिर्यग्भवेषु सङ्कटानि=विषमाणि दुःखानि=परमाधार्मिककृत छेदनभेदनादिरूपाणि–तेषां यः संभारः=बहुलता तेन वेदनीयानि=अनुभवनीयानि ' पावकम्माणि ' पापकर्माणि=परद्रव्यापहरणादीनि सञ्चिन्वन्तः=समुपार्जयन्तः ' दुल्लभभक्खणपाणभोयणा ' दुर्लभभक्षणपानभोजनाः – दुर्लभं=दुष्प्राप्यं भक्षणं=अन्नादिकं पानं=दुग्धजलादिकं च भोजनं=कल्यावर्तं प्रातरशनादिकं 'नाशता' 'कले वा ' इति प्रसिद्धं येषां ते तथा अतएव ' पिवासिया ' पिपासिताः = तृषिताः ' झुंझिया ' बुभुक्षिताः ' किलंता ' क्लान्ताः=ग्लानियुक्ताः ' मंसकुणिमकंदमूलजं किंचिकयाहारा' मांसकुणवकन्दमूलयत्किञ्चित् कृताहाराः=तत्र मांसं=प्रसिद्धं कुणपः=मृतकदेहः कन्दमूलानि तेषां यत् किञ्चित्=यथावसरं यत्किञ्चि-

च्छवी) शरीर की कांति इनकी नष्ट हो जाती है। (निरयतिरियभवसंकडदुक्खसंभारवेयणिज्जाणि) नरक तिर्यञ्च भवों में परमाधार्मिक कृत छेदन भेदन आदिरूप विषम दुःखो के संभार से वेदनीय ऐसे परद्रव्यापहरण आदिरूप (पावकम्माणि) पापकर्मों को (संचिणंता) उपार्जित करते हुए (दुल्लभभक्खणपाणभोयणा) ये जीव दुर्लभ अन्नादि सामग्री वाले, दुर्लभदुग्ध जलादि वाले, तथा दुर्लभ भोजनादिरूप कलेवावाले होते हैं। (पिवासिया) इन्हें पानी तक पीने को नहीं मिलता हैं (झुंझिया) सदा ये बुभुक्षित–भूखे रहा करते हैं। (किलंता) क्लान्त–हरएक कोई इनसे ग्लानि किया करता है। (मंसकुणिम, कंदमूल जं किंचि कयाहारा) असमय में अथवा यथा अवसर जो कुछ इन्हें खाने को मिल जाता है--चाहे वह मांस हो, चाहे कुणप–मृतकदेह–मुर्दा हो,

કાન્તિ નાશ પામે છે " निरयतिरियभवसंकडदुक्खसंभारवेयणिज्जाणि " નરક તિર્યંચ આદિ ભવોમાં પરમાધાર્મિક દેવોદ્વારા કરાતા છેદન ભેદન આદિ રૂપ વિષમ દુઃખોના સમૂહથી વેદનીય (સહન કરવાં પડતાં) એવાં પરધન હરણ આદિરૂપ પાપકર્મોનું " संचिणंता " ઉપાર્જન તેઓ કરે છે. ' दुल्लभभक्खणपाणभोयणा " તે જીવોને અન્નાદિ સામગ્રી ઘણી મુશ્કેલીએ પ્રાપ્ત થાય છે, પાણી દૂધ આદિ પીણાં પણ તેમને માટે દુર્લભ હોય છે, અને નાસ્તો ભોજનાદિ પણ તેમના માટે દુર્લભ હોય છે ' पिवासिया" તેમને પીવા માટે પાણી પણ મળતું નથી. " झुंझिया " તેઓ સદા ભૂખ્યા રહે છે, " किलंता " કલાન્ત–દરેક વ્યક્તિ તેમણે ગ્લાની પમાડયા કરે છે. " मंसकुणिमकंदमूल जं-किंचि कयाहारा " કાળે અથવા અકાળે તેમને જે કંઈ ખાવા મળે છે–પછી તે માંસ હોય, કુણપમૃતશરીર હોય, કંદમૂળ હોય– તે તેઓ ખાય છે. તે ચીજો

त्माप्तं तदपि स्वल्पमात्रं कृत आहारो यैस्ते तथा 'उव्विग्गा' उद्विग्नाः=उद्वेगयुक्ता अशान्तचित्ता इत्यर्थः, 'उप्पुया' उत्प्लुताः=चापलाः 'असरणा' अशरणाः= त्राणरहिताः गृहवर्जिता वा 'अडवीवासं' अटवीवासं=अरण्यवासं 'वालसय-संकणीयं' व्यालशतशङ्कनीयं = व्यालानां=सर्पादिदुष्टश्वापदानां शतैः शङ्कनीयं भुजङ्गादिभिर्भयङ्करम् 'उवंति' उपयन्ति=प्राप्नुवन्ति ॥ सू० ११ ॥

पुनस्ते कीदृशा भवन्ति ? इत्याह—'अयसकरा' इत्यादि—

मूलम्—अयसकरातक्करा भयंकरा कस्सहरामोत्ति अज्जदव्वं इति समामंतणं करेंति गुज्झं, बहुयस्स जणस्स कज्जकरणेसु विग्घकरामत्तप्पमत्तपसुत्तवीसत्थछिद्दघाती वसणब्भुदएसु हरणबुद्धी विगव्वरुहिरमहिया परेंति नरवईमज्जायमतिक्कंता सज्जणजणदुगंछिया सकम्मेहिं पावकम्मकारी असुभपरिणया य दुक्खभागी निच्चाउलदुहमनिव्वुइमणा इहलोगे चेव किलिस्संता परदव्वहरा नरा वसणसयमावण्णा ॥सू०१२॥

चाहे कंदमूल आदि हो सो भी वह भरपेट नहीं मिलता स्वल्पमात्रा में ही मिलता है, उसे ये खालिया करते हैं, (उव्विग्गा) इनका चित्त सदा अशान्त रहता हैं। (उप्पुया) ये बड़े भारी चपल होते हैं। (अस-रणा) इनका एक जगह स्थिर वास नहीं होता इसलिये ये त्राण रहित होकर इधर से उधर भागते रहते हैं और (अडवीवासं) जंगल में ही बसेरा करते हैं। (वालसयसंकणीयं) सर्पादि सैकड़ों दुष्ट जानवरों के भय से शंका शील ऐसे स्थानों को ये (उवेंति) प्राप्त करते हैं ॥सू०११॥

પણ તેમણે ધરાઈને ખાવા મળતી નથી, થોડા પ્રમાણુમા જ મળે છે "उव्विग्गा" તેમનું ચિત્ત સદા અશાન્ત રહે છે. "उप्पुया" તેઓ ઘણા જ ચપળ હોય છે. "असरणा" તેમનું રહેઠાણ કાયમ એક જ જગ્યાએ હોતું નથી, તેથી તેઓ અશરણુની જેમ આમતેમ ભમ્યા કરે છે "अडवीवासं" જંગલમા જ "वालसयसंकणीयं" સર્પાદિ સેકડો- ભયંકર જીવોના ભયથી વ્યાપ્ત સ્થાનોએ "उवेंति" તેઓ પ્રાપ્ત કરે છે ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

टीका—'अयसकरा' अयशस्कराः=अकीर्तिमन्तः भयङ्कराः 'तक्करा' तस्कराः=अदत्तग्राहिणः चौरा इत्यर्थः, 'अज्ज' अद्य=अस्मिन् दिवसे 'कस्स' कस्य धनिनः इति=एवं विधं यन्मनसि चिन्तितं तत् 'दव्वं' द्रव्यं=धनं हरामः=चोरयाम इति=एवं प्रकारं 'गुज्झं' गुह्यं=गुप्तं 'समामंतणं' समामन्त्रणं=विचारणां 'करेंति' कुर्वन्ति। तथा 'बहुयस्सजणस्स' बहुकस्य जनस्य 'कज्झकरणेसु' कार्यकारणेसु=कर्मानुष्ठानेषु 'विग्घकरा' विघ्नकराः=विघ्नोत्पादकाः 'मत्तप्पमत्तपसुत्तवीसत्थछिद्दघाई' मत्तप्रमत्तप्रसुप्तविश्वस्तछिद्रघातिनः=तत्र मद्यपानादिना मत्तान् प्रमत्तान् प्रकर्षेण मत्तान् प्रसुप्तान् विश्वस्तांश्च छिद्रेण=छिद्रं=प्राप्य घ्नन्ति

फिर वे कैसे होते हैं सो कहते हैं–'अयसकरा' इत्यादि।

टीकार्थ—(अयस करा) इनकी दुनिया में अकीर्त्ति फैल जाती है ये सब जगह बुराई से विख्यात हो जाते हैं, (भयंकरा) इनके नाम श्रवण से भी लोगों के हृदयों में भय का संचार हो जाता है। इस तरह के ये (तक्करा) अदत्तग्राही–चोर (अज्ज कस्स दव्वं हरामो त्ति) "आज किस धनी का मन धारा द्रव्य हरण करना चाहिये" इस प्रकार की (गुज्झं) गुप्त (समामंतणं) विचारणा (करेंति) किया करते हैं। तथा (बहुयस्स जणस्स) अनेक मनुष्यों के (कज्जकरणेसु) कार्यों में ये (विग्घकरा) विघ्नोत्पादक हुआ करते हैं। (मत्त–प्पमत्त-पसुत्त वीसत्थछिद्दघाई) (मत्तप्पमत्त) मद्यपानादिक से मत्त तथा प्रमत्त बने हुए व्यक्तियों को (पसुत्त) सोये हुए मनुष्यों को, एवं (वीसत्थ) अपने ऊपर विश्वास करने वाले प्राणिओं को ये (छिद्दघाई)

તેઓ કેવાં હોય તે નું વધુ વર્ણન કરે છે—"अयसकरा" ઈત્યાદિ

ટીકાર્થ–"अयसकरा" આખી દુનિયામા તેમની અપકીર્તિ ફેલાય છે. તેઓ દુષ્કૃત્યોથી દરેક સ્થળે પંકાય છે, "भयंकरा" તેમનું નામ સાંભળીને પણ લોકોના દિલમાં ભય પેદા થાય છે. એવા તે "तक्करा" ચોર "अज्जकस्स दव्वं हरामो त्ति" "આજે કયા ધનિકનું ધન હરી લેવું જોઈએ" એ પ્રકારની "गुज्झं" ગુપ્ત "समामंतणं" વિચારણા "करेंति" કર્યા કરે છે. તથા "बहुयस्स जणस्स" અનેક માણસોનાં "कज्जकरणेसु" કાર્યોમાં તેઓ विग्घकरा" વિઘ્નકર્તા થયા કરે છે. "मत्त–प्पमत्त–पसुत्तवीसत्थछिद्दघाई" "मत्तपमत्त" દારૂ

આદિ પીને મત્ત તથા પ્રમત્ત બનેલા લોકોને "पसुत्त" ઊંઘતા લોકોને, અને "वीसत्थ" પોતાના ઉપર વિશ્વાસ મૂકનાર લોકોને તેઓ "छिद्दघाई"

एवं शीलाः 'वसणब्भुदएसु' व्यसनाभ्युदयेषु हरणवुद्धयः=व्यसनेषु=रोगाद्यव स्थायां राजादिकृतोपद्रवेषु च अभ्युदयेषु=विवाहादिमहोत्सवेषु 'हरणवुद्धी' हरणवुद्धयः 'विगव्व' वृका इव='भेडिया' इति प्रसिद्धा नखधारिणः श्वापद जन्तु विशेषा इव 'रुहिरमहिया' रुधिरमहिताः=रुधिरस्य=रुधिरपानस्य महः= उत्सवः रुधिरमहः, स जातो येषां ते तथा-रुधिरचूषणे तत्पराः, 'परे ति' परियन्ति=पर्यटन्ति सर्वत्र भ्रमन्ति। कथं भूतास्ते इत्याह-'नरवइमज्जा-य मइक्कंता' नरपति मर्यादामतिक्रान्ताः=राजाज्ञावहिर्वर्तिनः 'सज्जणजणदुगुंछिया' सज्जनजनजुगुप्सिताः=सत्पुरुषैर्निन्दिताः 'सकम्मेहि' स्वकर्मभिः=अदत्तादान रूपैः 'पावकम्मकारी' पापकर्मकारिणः=चौर्यादिपापकर्मकारकाः 'असुभपरि णयाय' अशुभपरिणताश्च=शुभपरिणामवर्जिताः 'दुक्खभागी' दुःखभागिनः=

छिद्र प्राप्तकर बात की बात में मार डालते है (वसणब्भुदएसु) रोगादिक अवस्थारूप तथा राजादिकृत उपद्रवकृत व्यसन के समय पर, अथवा विवाह आदि रूप महोत्सव के अवसर पर भी ये (हरणवुद्धी) अपना कार्य कर दिया करते हैं। (विगव्व) भेडिया को रुधिर चूषने में तत्परता रहती है ईसी प्रकार ये चोर जन भी (रुहिर महिया) पर के खून चूसने में तत्पर रहते हुए (परेंति) सर्वत्र घूमते हैं। (नरवइमइकंता) राजा की आज्ञा का सदा ये उल्लंघन किया करते हैं। (सज्जणजणेदुगुंछिया) सज्जन पुरुषों की निंदा करने में इन्हें आनंद मिलता है, अथवा इनके इस कर्म की सज्जन पुरुष निंदा करते हैं। (सकम्मेहिं) अदत्तादानरूप अपने कर्मो से ये (पावकम्मकारी) पापकर्मकारी पापकर्म करने वाले वे चोर (असुभपरिणयाय) अशुभ आत्मा परिणति

ધનનું રહસ્ય જાણીને જોતજોતામાં મારી નાખે છે. "वसणब्भुदएसु" રોગાદિક અવસ્થામાં, તથા રાજાદિકૃત ઉપદ્રવ રૂપ સંકટને સમયે, અથવા વિવાહ આદિ મહોત્સવને પ્રસંગે પણ તે "हरणवुद्धी" પોતાનું પરધન હરણનું કૃત્ય કર્યા કરે છે. "विगव्व" વરુની જેમ-એટલે કે જેમ વરુ લોહી ચૂસવાને તત્પર હોય છે તેમ ચોર પણ "रुहिरमहिया" અન્યનું લોહી ચૂસવાને તત્પર થઈને "परेंति" સર્વત્ર ભ્રમણ કરે છે "नरवइमज्झाय मइकता" રાજાની આજ્ઞાનું સદા ઉલ્લંઘન કરે છે, "सज्जणजणे दुगुंछिया" સજ્જનોની નિંદા કરવામાં તેમને મજા આવે છે, અથવા તે દુષ્કૃત્યોની સજ્જનો નિંદા કરે છે "सकम्मेहिं" અદત્તાદાન-ચોરી રૂપ પોતાનાં કર્મોથી તે "पावकम्मकारी" પાપકૃત્યો કરનારા ચોરો "असुभपरिणयाय" અશુભ આત્મપરિણતિ-ભાવથી યુક્ત બને છે.

नरकनिगोदादिदुःखभागिनः, 'निच्चाउलदुहमनिव्वुइमणा' नित्याकुलदुःखाऽनिर्वृतिकमनसः=नित्यमाकुलं=व्याकुलितं दुःखयुक्तम्, अनिर्वृतिकं=स्वास्थ्यरहितं मनो येषां ते तथा निरन्तरसंतापसंकुलाः, इहलोके चैव, चात् परलोकेऽपि 'किलिस्संता' क्लिश्यन्तः-क्लेशमनुभवन्तः 'परदव्वहरा' परद्रव्यहराः=परधनापहरणशीलाः नराः=मनुष्याः 'वसणसयं' व्यसनशतं=दुःखप्रचुरम् 'आवण्णा' आपन्नाः=प्राप्ताः परियन्तीत्यनेन सम्बन्धः ॥ सू० १२ ॥

एवं 'यथाकृत' इत्यन्तद्वारमुक्तम्, अथ 'यथाफलंदेइ' इति अदत्तादान फलप्रतिपादकं चतुर्थद्वारं प्राह—'तहेव केइ' इत्यादि—

मूलम्—तहेव केइ परस्सदव्वं गवेसमाणा गहिया य हया य बद्धा रुद्धा य तुरियं अइधाडिया पुरवरं समप्पिया चोरग्गाह चारभडचाडुकराण, तेहि य कप्पडप्पहारनिद्दयाऽऽरक्खिय खरफरुसवयणतज्जणगलत्थल्ल उत्थलणाहिं विमणाचारगवसहिं पवेसिया निरयवसहिसरिसं तत्थ वि

से युक्त होते हैं। (दुक्खभागी) शुभपरिणामों से रहित होने के कारण ये परभव में नरक निगोद आदि के दुःखों को भोगा करते हैं। (णिच्चाउलदुहमणिव्वुइमणा) इनका मन सदा व्याकुल बना रहता है, इसी से ये निरन्तर मानसिक स्वास्थ्य से रहित होकर संताप से संकुल होते रहते हैं। इस तरह (इहलोगे चेव) इस लोक में तथा 'च' शब्द से परलोक में भी (किलिस्संता) क्लेशों का अनुभव करते हुए ये (परदव्वहरा) पर द्रव्यापहारी चोर (वसणसयं) अनेक दुःखों को (आवण्णा) प्राप्त होकर (परेंति) भ्रमण करते हैं अर्थात् अपने समय को दुर्गतियों के भ्रमण करने में ही व्यतीत करते रहते हैं॥ १२॥

"दुक्खभागी" શુભ પરિણામો-ભાવોથી રહિત હોવાને કારણે તેઓ પરભવમાં નરક નિગોદ આદિનાં દુઃખો ભોગવ્યા કરે છે. "णिच्चाउलदुहमणिव्वुइमणा" તેમનું મન સદા વ્યાકુળ રહે છે, તેથી તેઓ નિરંતર માનસિક સ્વાસ્થ્યથી રહિત બનીને સંતાપથી યુક્ત રહે છે. આ રીતે "इहलोगेचेव" આ લોકમાં તથા 'च' શબ્દથી પરલોકમાં પણ "किलिस्संता" દુઃખોને અનુભવતા તે "परदव्वहरा" પરધનનું હરણ કરનારા ચોર લોકો "वसणसयं" અનેક દુઃખો "आवण्णा" અનુભવતા "परेंति" ભ્રમણ કરે છે, એટલે કે દુર્ગતીયોમાં ભ્રમણ કરવામાં જ પોતાનો કાળ વ્યતીત કરે છે. ॥સૂ-૧૨॥

गोम्मिक पहारदुम्मणा निब्भच्छणकडुयवयणभेसणागभया-भिभूया अक्खित्तणिवसणा मलिणडंडिखंडवसणा उक्कोडालं-चनपासुम्मग्गणपरायणेहिं गोम्मियभडेहिं विविहेहिं बंधणेहिं किंते-हडिनियडबालरज्जुयकुंडंडगवरत्तलोहसंकलं हत्थंदु य वज्झपट्टदामकणिक्कोडणेहिं अण्णेहिं य एवमाइएहिं गो-म्मियभंडोवगरणेहिं दुक्खसमुदीरणेहिं संकोडणमोडणेहिं वज्झंति मंदपुण्णा ॥ सू० १३ ॥

टीका—'तहेव' तथैव=पूर्वोक्तप्रकारेण 'केइ' केचित् 'परस्स' परस्य 'दव्वं' द्रव्यं चोरयितुं 'गवेसमाणा' गवेषयन्तः=अन्वेषणं कुर्वन्तः 'गहिया' गृहीताः=राजपुरुषैर्निगृहीता हताश्च=ताडिताः दण्डादिभिस्ततोबद्धाः = रज्ज्वादि-भिर्बन्धनं प्रापिताः तथा—रुद्धाः=कारागारादौ निरुद्धाश्च 'तुरियं' त्वरितं=शीघ्रम् 'अइधाडिया' अतिधाटिताः=राजपुरुषैर्भ्रामिताः कुत्र? इत्याह—पुरवरं=सकल नगरम् । नागरिकजनान् प्रतिदर्शिता इत्यर्थः पुनश्च 'समप्पिया' समर्पिताः=

अब सूत्रकार "जहा फलं देइ" इस चतुर्थ द्वार का प्रतिपादन करते हैं—'तहेवकेइ' इत्यादि ।

टीकार्थ—(तहेव) इसी पूर्वोक्त प्रकार से (केइ) कितनेक व्यक्ति (परस्स दव्वं गवेसमाणा) पर के द्रव्य को चुराने की खोजमें रहते हुए (गाहिया य) राजपुरुषों द्वारा निगृहीत होकर (हयाय) दण्डादिकों द्वारा ताडित किये जाते हैं (बद्धा) रज्ज्वादिकों द्वारा बांध दिये जाते हैं (रुद्धाय) कारागार आदि में बंद कर दिये जाते हैं। (तुरियं अइधाडिया पुरवरं) और नगर निवासियों के समक्ष नगरभर में घुमाये जाते हैं।

હવે સૂત્રકાર "जहा फलं देइ" એ ચોથા દ્વારનું પ્રતિપાદન કરે છે—"तहेव केइ" ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—"तहेव" પૂર્વોક્ત પ્રકારે "केइ" કેટલાક લોકો "परस्स दव्वं गवेसमाणा" પારકાનાં દ્રવ્યને ચોરવાની શોધમાં રહે છે. "गोहियाय" તેઓ રાજપુરુષો દ્વારા પકડાઈને "हयाय" દંડા વગેરે દ્વારા મરાય છે. "बद्धा" દોરડાં આદિ વડે બંધાય છે, "रुद्धाय" અને જેલખાનાં આદિમાં કેદ કરાય છે, "तुरियं अइधाडिया पुरवरं" અને શહેરીઓની સમક્ષ આખા શહેરમાં

उपस्थापिताः, केभ्यः ? इत्याह–' चोरग्गहचारभडचाडुकराण ' चौरग्राहचारभट-चाटुकरेभ्यः=तत्र चौरग्राहिणः चारभटाः=गुप्तचराः, चाटुकरणाः=मुखप्रियामृदु-भाषणेन चौरग्राहका इत्यर्थः, तेभ्यः ' तेहिय ' तैश्च चोरग्राहादि पुरुषैः 'कप्प-डप्पहारनिद्दया रक्खियखरफरुसवयणतज्जणगलत्थल्लउत्थलणाहिं ' कर्पटप्रहार निर्दयाऽऽरक्षिकखरपरुषवचनतर्जनगलत्थल्लउत्थलणाभिः=तत्र कर्पटैः=यष्ट्याकार-वलितवस्त्रैः ' कोडा ' इति भाषा प्रसिद्धैः प्रहाराः=ताडनानि तथा निर्दया ये आरक्षिकाः=कोट्टपालपालास्तेषां खरपुरुषैः=अतिनिष्ठुरैर्वचनैस्तर्जनानि–गलत्थ-ल्लोत्थलनाश्च=गलत्थल्लाः = गलहस्तदानानि उत्थलनाः=परिवर्त्तनाश्चेत्येताभिः ' विमणा ' विमनसः=खिन्नचित्ताः सन्तः ' निरयवसहिसरिसं ' नरकवसतिसदृशां =नरकवासतुल्यां ' चारगवसहिं ' चारकवसतिं=कारागृह ' पवेसिया ' प्रवेशिताः ।

(समप्पिया चोरगाहचारभडचाडुकराण) बाद में वे राजपुरुष उन चोरों को चोरग्राही–चोरों को पकड़ने वाले गुप्तचरों के (कि जो मधुर बोलकर चोरोंको पकड़ने में सिद्धहस्त होते हैं उनके) आधीन कर देते हैं (तेहि य) वे चोरग्राही चारभट आदि उन चोरों को पहिले तो (कप्पडप्पहार) कोड़ों की मार मारते हैं, तथा (निद्दयारक्खिय) निर्दय होकर कोटपाल उन्हें (खरपरुषवयणतज्जिय) अतिनिष्ठुर अत्यन्त कटु वचनों से तर्जित करते हैं, तथा (गलत्थल्ल उत्थलणाहि य) गला पकड़कर दबोच देते हैं। (विमणा) इस तरह की क्रियाओं से अपमान जनक व्यवहारों से–चोरों को ये बहुत अधिक खिन्नचित्त कर डालते हैं। जब ये बहुत बुरी तरह खिन्नचित्त हो जाते हैं तो बाद में वे उन्हें (निरयवसहि सरिसं) नरकावास तुल्य (चारगवसहिं) कारागृह में (पवेसिया) बंद कर देते हैं।

ફેરવાય છે. “समप्पिया चोरगाहचारभडचाडुकराण” ત્યાર બાદ તે રાજપુરુષો તે ચોરોને ચોરગ્રાહી–ચોરને પકડનારા ગુપ્તચરોને સોંપી દે છે. તે ગુપ્તચરો મીઠાં વચનો બોલીને ચોરોને પકડવામાં નિપુણ હોય છે. “तेहि य” તે ચોરગ્રાહી–ગુપ્તચર આદિ પહેલાં તો તે ચોરોને “कप्पडप्पहार” કોરડાઓ વડે ફટકારે છે, તથા “निद्दयारक्खिय” નિર્દય થઈને કોટવાલ તેમને “खर-परुसवयणतज्जिय” અતિશય નિષ્ઠુર તથા અતિશય કડવાં વચનો સંભળાવે છે, “गलत्थल्लउत्थलणाहिय” ગળું પકડીને દબાવે છે,“विमणा” આ પ્રકારની અપમાનજનક ક્રિયાઓ તથા વર્તનથી તેઓ તે ચોરના ચિત્તમાં અત્યંત ખિન્નતા ઉત્પન્ન કરે છે. જ્યારે તેઓ અત્યંત ખિન્ન થાય છે ત્યારે તેમને તે લોકો ‘ निरयवसहि सरीरं ” નરકાગાર સમાન “चारगवसहिं” કારાગૃહમાં

'तत्थ वि' तत्रापि 'गोम्मिकपहारदूमणनिब्भच्छणकडुयवयणभेसणगभयाभिभूया' गौल्मिकप्रहारदवननिर्भर्त्सनकटुकवचन भीषणकभयाभिभूताः=तत्र गौल्मिकानां=कोटपालानां ये प्रहाराः=कशाद्याघाताः दवनानि=सूर्यतापादौ उपतापनानि निर्भर्त्सनानि = जातिकुलादिनामोच्चारणपूर्वकगालिदानानि कटुकवचनानि च 'रे नीच! रे दुष्ट!' इत्यादि रूपाणि भीषणकानि=भयजनकानि 'जीवनपर्यन्तं कारागृह एव म्रियस्व' इत्येवमादिरूपाणि तेषां भयेन अभिभूता ये ते तथा 'अक्खित्तणिवसणा' आक्षिप्तनिवसनाः = कर्षणघर्षणादिभिराकृष्टपरिधानवस्त्रा नग्नीकृता इत्यर्थः, 'मलिगडंडिखंडवसणा' मलिनदण्डिखण्डवसनाः=तत्र मलिनं 'डण्डि' सीवितं 'डण्डि' इति सीवितवस्त्रवाचको देशीशब्दः, खण्डं=फाटितं च

(तत्थ वि) वहां पर भी वे (गोम्मियप्पहार) कोटपालोंके कशा(कोडा)दिद्वारा प्रदत्त आघातों को, (दूमण) दवनों को-सूर्यताप आदि में खड़े करने रूप उपतापनों को, (निब्भच्छण) निर्भर्त्सनो को-जातिकुल आदि के नामोच्चारणपूर्वक गालीगलौज आदिको तथा (कडुयवयग) कटुक वचनों को जो कि "अरे नीच! ओ दुष्ट! जीवनपर्यन्त तू इस कारागार में ही सड २ कर मर" इत्यादिरूप से (भेसणग) भयप्रदर्शक होते हैं-सहते रहते हैं (भयाभिभूया) उनके भय से अभिभूत होते हैं, तथा (अक्खित्तणिवसणा) कर्षण घर्षण आदि के करने से इनका परिधान वस्त्र खुल जाता है, अर्थात्-ये नग्न हो जाते हैं-नंगे कर दिये जाते हैं। (मलिणडंडिखंडवसणा) ऐसी स्थिति में इन्हें जो वहां वस्त्र खंड पहिरे को मिलता है वह बिलकुल मलिन होता है। बीच २ में सिला हुया रहता है। तथा कहीं २ फटा भी रहता है। यहा "डण्डि" शब्द

"पवेसिवा" પૂરી દે છે. "तत्थ वि" ત્યાં પણ તે લોકો "गोम्मियप्पहार" કોટવાલો દ્વારા કરવામાં આવતાં ચાબુકના પ્રહારો "दूमण" દહન-સૂર્યના તાપમાં ઉભા રાખીને કરવામા આવતું દહન, "निब्भच्छण" નિર્ભર્ત્સના— જાતિ કુળ આદિના ઉલ્લેખ સહિત અપાતી ગાળોને, તથા "कडुयवयण" કટુ વચનોને જેમ કે "હે નીચ! હે દુષ્ટ! તું આખું જીવન આ કારાગૃહમાં જ સડીને સડીને મર!" "भेसणग" સહન કર્યા કરે છે, "भयाभिभूया" તે પ્રકારના ભયથી ભયભીત રહે છે, તથા "अक्खित्तणिवसणा" ખેંચાખેંચી કરવાથી તથા ઘસડવાથી તેમના વસ્ત્રો ખસી જાય છે-તેઓ નગ્ન થઈ જાય છે. તેમને નગ્ન કરાય છે "मलिणडंडिखंडवसणा" એવી હાલતમાં તેમને ત્યા જે વસ્ત્રખંડો પહેરવાને મળ્યાં હોય છે. વચ્ચે વચ્ચે થિગડાં વાળા હોય છે, તથા

वसनं=वस्त्रं येषां ते तथा मलिनस्फाटितसीवितवस्त्रखण्डधारिण इत्यर्थः, 'उक्कोडालंचनपासुम्मग्गणपरायणेहिं' उत्कोटालञ्चनपार्श्वोन्मार्गणपरायणैः=उत्कोटालञ्चने=उत्कोटविशेषे 'लाँच-रिश्वत' इति भाषाप्रसिद्धभेदविशिष्टे पार्श्वोन्मार्गणं च=चौरपार्श्वस्थितचोरितद्रव्यान्वेषणं, तेषु परायणाः=तत्परा ये ते तथा तैः 'गोम्मियभडेहिं' गौल्मिकभटैः कोटपालैः 'विविहेहिं बंधणेहिं' विविधैः बन्धनैः हेतुभूतैस्ते चौरपुरुषाः बध्यन्ते इति वक्ष्यमाणेन सम्बन्धः 'किं ते' आर्षत्वात्तृतीयार्थे प्रथमा तेन किम्भूतैस्तैरित्यर्थः, तथा च किम्भूतैः=कथं भूतैस्तैर्बन्धनैरित्याह— 'हडिनियडवालरज्जुयकुडंडगवरत्तलोहसंकलहत्थंदुयवज्झपट्टदामकणिकोडणेहिं' हडिनिगडबालरज्जुककुदण्डकवरत्रालोहशृङ्खलहस्तान्दुकवर्ध्रपट्टदामकनिष्कोटनैः=तत्र 'हडि' इति काष्ठनिर्मित निगडबन्धनानि 'खोडा' इति भाषाप्रसिद्धानि, निगडानि='लोहमयवेडी' इति प्रसिद्धानि वालरज्जुकाः=गवादि-

---

बीच में सिले हुए पुराने जीर्ण वस्त्र का वाचक है। (उक्कोडालंचणपासुम्मग्गणपरायणेहिं) उत्कोट, लांच-रिश्वत-में तथा चोरों के पास में रहे हुए चुराये द्रव्यकी तपास करने में परायण ऐसे (गोम्मियभडेहिं) गौल्मिकभट-कोटपाल (विविहेहिं बंधणेहिं) नाना प्रकार के बंधनों से उन चोरों को बांध देते हैं, (किंते) वे बंधन किस प्रकार के होते सो कहते हैं-(हडिनियडवालरज्जुयकुडंडगवरत्तलोह संकलहत्थंदुयवज्झपट्टदामकणिकोडणेहिं) (हडि) काष्ठ निर्मित बांधने का बंधन विशेष, जिसमें चोर के पैर डाल दिये जाते हैं-सो वह वहीं पर खड़ा रहता है इधर उधर चल फिर नहीं सकता। भाषामें इसे खोड़ा कहते हैं। (नियडि) निगड-लोहे की बनी हुई बेडी, वालरज्जुक गाय आदि के बालों से बनी हुई रस्सी, कुदण्डक-जिसके अन्तभाग में काष्ठ लगे हुए

કોઇ કોઇ સ્થળે ફાટેલાં હોય છે. અહીં "डण्डि" શબ્દ વચ્ચે વચ્ચે સીવેલાં પુરાણાં જીર્ણ વસ્ત્રનો સૂચક છે "उक्कोडालचणपासुम्मग्गणपरायणेहिं" ઉત્કોટ, લાંચ-રુશવત, તથા ચોરીની પાસે રહેલ ચોરાયેલ દ્રવ્યની તપાસ કરવામાં પ્રવીણ એવા "गोम्मिय भडेहिं" ગૌલ્મિક ભટ-કોટવાળ "विविहेहिं बंधणेहिं" વિવિધ પ્રકારનાં બંધનોથી તે ચોરોને બાંધે છે. "किं ते ?" તે બંધનો કયા કયા પ્રકારના હોય છે, તે કહે છે-"हडिनियडवालरज्जुयकुडंडगवरत्तलोहसंकलहत्थंदुयवज्झपट्टदामकणिकोडणेहिं" "हडि" હેડ — લાકડાનું એક સાધન, જેમાં ચોરના પગ રાખવામાં આવે છે. તેમાં પગનું હલનચલન થઇ શકતું નથી "नियडि" નિગડ લોઢાની બનાવેલી બેડી, "वालरज्जुक" ગાય આદિના વાળમાંથી બનાવેલ દોરડું, "कुदण्डक" જેને છેડે લાકડું હોય એવો

वालमय्योरज्जुकाः, कुदण्डकानि=काष्ठमयप्रान्तभागरज्जुपाशाः वस्त्राः=चर्ममय्यो महारज्जवः लोहशृङ्खलाश्च = प्रसिद्धाः हस्तान्दुकाः=हस्तनियन्त्रकबन्धनविशेषाः 'हथकडी' इति भाषाप्रसिद्धाः वर्ध्रपट्टा=चर्मपट्टिकाः दामकानि=पादबन्धनरज्जुविशेषाः निष्कोटनानि=बन्धनविशेषा एव तैः 'अण्णेहिं य' अन्यैश्चानुक्तैः 'एवमाइएहिं' एवमादिकैः=उक्तप्रकारैः 'गोम्मियभंडोवगरणेहिं' गौल्मिकभाण्डोपकरणैः=कोट्टपालानां चोरबन्धकोपकरणैः, दुक्खसमुदीरणेहिं' दुःखसमुदीरणैः = दुःखदायकैः 'संकोडणमोडणेहिं' संकोटनमोटनैः=संकोचनानि हस्तपादादीनां मोटनानि गलादीनि तैः 'मंदपुण्णा' मन्दपुण्याः=पापिनोऽदत्तग्राहिणः 'वज्झंति' वध्यन्ते=बन्धनं प्राप्नुवन्ति ॥ सू० १३ ॥

पुनस्ते किं फलं प्राप्नुवन्ति ? इत्याह—'संपुड' इत्यादि—

मूलम्—संपुडकवाडलोहपंजर-भूमिघर-निरोहकुवचारग-कीलगजूवचक्क-विततबंधणखभालण-उद्धचलण बंधण विहंमणाहि य विहेडियंता अहकोडगगाढउरसिरबद्धउद्धपूरिय-

हों ऐसी दोरीकी फांसी, वरत्रा-चमड़े से बनाई गई रस्सी, (लोहसंकल) लोहकी सांकल, (हत्थंदुय) हस्तान्दुक-हथनकडी, (वज्झपट्ट दामकणिकोडणेहिं) वर्ध्रपट्ट-चमड़ेकी पट्टिकाएँ और दामनक-पैरों को बांधने के बंधन विशेष हैं, निष्कोटन-बंधनविशेष हैं; इन बंधनों से (अण्णेहिं एवमाइहिं) तथा इन बंधनोंसे अतिरिक्त जो और भी (गोम्मिय भंडोवगरणेहिं) उनकोतवालों के चोरोंको बांधनेके लिये उपकरण विशेष हैं कि जो (दुक्खसमुदीरणेहिं) बहुत ही अधिक दुःखप्रद होते हैं उनसे, एवं (संकोडणमोडणेहिं) हस्त पैर आदि संकोचन से तथा गले वगैरह के मोटन से (मंदपुण्णा) वे अभागे चोर (वज्झंति) बंधनोंको प्राप्त होते हैं ॥ सू-१३ ॥

દોરડાનો ફાંસો વરત્રા-ચામડાની દોરી, "लोहसंकल" લોઢાની સાંકળ, "हत्थंदुय" હાથકડી, "वज्झपट्टदामकणिक्कोडणेहिं" વર્ધ્રપટ્ટ-ચામડાની પટ્ટીઓ, અને દામનક-પગ બાંધવાનું ખાસ બંધન, નિષ્કોટન-એક પ્રકારનું બંધન-આદિ બંધનોથી "अण्णेहिं एवमाइएहिं" તથા તે સિવાયના બીજાં બંધનો કે "गोम्मियभंडोवगरणेहिं" જેમનો ચોરોને બાંધવાને માટે કોટવાળો ઉપયોગ કરે છે અને જે "दुक्खसमुदीरणेहिं" બંધનો અત્યંત દુઃખદાયક હોય છે, અને જેનાથી "संकोडणमोडणेहिं" હાથ પગ આદિનું સંકોચન તથા ગળાં વગેરેનું મોટન (મરોડવાની ક્રિયા) તે "मंदपुण्णा" કમનસીબ ચોરો "वज्झंति" અનુભવે છે. ॥ સૂ-૧૩ ॥

फुरंतउरकंडग-मोडणेहिं संबद्धाय नीससंता सीसावेढ ऊरुयालचप्पडगसंधिबंधण तत्तसलागसूइ आकोडणाणि तच्छण विमाणणाणि य खारकडुय तित्तनावणजायणकारण-सयाणि बहुयाणि पावियंता, उरघोडीदिण्णगाढपेल्लण-अट्ठिकसंभग्ग-सपंसुलिया-गलकालक-लोहदंड-उर-उदर-वत्थि-पिट्ठि-परिपीलिया मत्थंतहियय-संचुण्णियंगुवंगा आणत्ति किं करेंहि केइअविराहिं य वेरिएहि जमपुरिससंनिभेहिं पहया ते तत्थ मंदपुण्णा चडवेलावद्ध पट्टपोराच्छिवा कसलत्तवरत्तवेत्तपहारसयतालियंगुवगा किवणालंबंतवम्मवणवेयणाविमुहियमणाघणकोट्टणानियलजुयल-संकोडियमोडिया य कीरंति निरुच्चारा असंचरणा एया अण्णाय एवमाईओ वेयणाओ पावा पावंति ॥ सू० १४॥

टीका-पूर्वोक्ताः मन्दपुण्याः 'संपुडकवाड-लोहपंजर-भूमिघरनिरोहकूवचारग कीलगजूवचक्कवितत्तबंधणखंभालणउद्धचलणबंधणविहम्मणाहिय विहेडियंता' तत्र 'संपुडकवाड'-सम्पुटकपाटं = पिहितकपाटं लोहपञ्जरं तथा 'भूमिघर' भूमिगृहं=भूमेरन्तर्गृहं 'भोवरा' इति भाषा प्रसिद्धं च तत्र यो 'निरोह' निरोधः= प्रवेशनं, तथा 'कूव' कूपः=अन्धकूपः, 'चारग' चारकः=बन्दिगृहं 'कीलग'

फिर वे क्या फल पाते हैं? सो कहते हैं-'संपुडकवाड' इत्यादि।

टीकार्थ-ये चोरजन (संपुडकवाड लोहपंजर-भूमिघरनिरोह-कूव-चारग कीलग-जूयचक्कवितत्तबंधण-खंभालण-उद्धचलणबंधण-विहम्मणाहिय विहेडियंता) (संपुडकवाडलोहपंजर) बंद हैं कपाट-युगल जिन्हों के ऐसे लोह के पिंजरों में तथा (भूमिघरनिरोह) तलघरों में बंद कर दिये जाते हैं, (कूव) अंधकूप में पटक दिये जाते हैं, (चारगकीलग) बंदिगृह में

બીજું કયું ફળ મળે છે તે સૂત્રકાર કહે છે-"संपुडकवाडलोहपंजर" ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ-તે ચોરોને "संपुडकवाडलोहपंजर" બંધ બારણાવાળા લોઢાના પાંજરામાં, તથા "भूमिघरनिरोह" ભોંયરામાં પૂરી દેવામા આવે છે, "कूव" અંધારીયા કૂવામા પટકવામાં આવે છે, "चारगकीलग" કારાગૃહમાં હાથકડી

कीलकाः 'खूंटा' इति प्रसिद्धाः 'जूव' यूपाः=स्तम्भविशेषाः 'चक्क' चक्राणि रथाङ्गानि 'पहिया' इति भाषा प्रसिद्धानि तेषु विततबन्धनं=बाहुजङ्घादिविघाटनेन नियन्त्रणं तथा 'खंभालण' स्तम्भालगनं=स्तम्भैः-सह रज्ज्वादिभिरावेष्टनं गले रज्जुं बद्ध्वा स्तम्भेषु समालम्बनं वा तथा 'उद्धचलणबंधण' ऊर्ध्वचरणबन्धनं च=पादयोरुपरिकृत्य बन्धनमित्यादिर्या 'विहम्मणाहिं' विधर्षणाः=पीडास्ताभिः 'विहेडियंता' विहेड्यमाना =पीड्यमानाः संकोटिता मोटिताः क्रियन्त इत्यग्रेण सम्बन्धः। तथा--' अहकोडगगाढउरसिरबद्धउद्धपूरियफुरंतउरकंडगमोडणेहिं' अधः कोटकगाढोरः शिरोबद्धोर्ध्वपूरितस्फुरदुरःकाण्डकमोटनैः, तत्र--अधः कोटकेन=अधो नमयनेन गाढम्=अत्यर्थमुरसि=वक्षःस्थले शिरः=मस्तकं बद्धं येषां ते तथा अतएव ऊर्ध्वपूरिताः=श्वासप्रश्वासैः पूरितशरीरोर्ध्वभागास्तथा स्फुरदुरः कण्डकाश्च=कम्पमानवक्षःस्थलपृष्ठास्थिका ये चौरास्तेषां यानि मोटनानि=पुनः पुन-

---

हथकडी आदि में बांध दिये जाते हैं, खूटों पर लटका दिये जाते हैं, (जूव) स्तंभविशेषों से जकड़ कर बांध दिये जाते हैं, (चक्क) पहियों से (विततबंधण) हाथ पैर बाहर निकालकर रस्सियों से बहुत बुरी रतह से जकड़ दिये जाते हैं, (खंभालण) बड़े २ खंभों के ऊपर गले में रज्जु आदि बांधकर लटका दिये जाते है। तथा (उद्धचलणबंधण) पैरों में रस्सी आदि से बांधकर मुँह नीचा करके वृक्षादिकों में लटका दिये जाते हैं। (विहम्मणाहिंय) इस प्रकार की-विविध प्रकार की पीडाओं से वे (विहेडियंता) पीडित किये जाते हैं। तथा (अहकोडगगाढउरसिरबद्ध उद्धपूरियफुरंतउरकंडगमोडणेहिं) (अहकोडगगाढउरसिरबद्धपूरिय) इनका मस्तक इतने अधिक रूप में नीचे झुकाया जाता है कि जिससे वह वक्षस्थल पर आकर चिपक जाता है, और इसी कारण श्वास उच्छ्वासों से इनका शरीर का उर्ध्वभाग पूरित होता रहता है, (फुरंतउर

આદિ વડે બાધવામા આવે છે, ખૂંટા ઉપર લટકાવવામા આવે છે, "जूव" સ્થંભો સાથે બાંધવામા આવે છે, "चक्क" ચક્રોથી જકડવામાં આવે છે. "विततबंधण" હાથ પગ દોરડા વડે ઘણી જ ખરાબ રીતે બાંધવામાં આવે છે. 'खंभालण" મોટા મોટા થાંભલાઓ ઉપર ગળે દોરડાં બાંધીને લટકાવવામા આવે છે, તથા "उद्धचलणबंधण" પગે દોરડાં બાધીને વૃક્ષાદિ ઉપર ઊંધે માથે લટકાવવામાં આવે છે, "विहम्मणाहिय" આ પ્રકારની વિવિધ યાતનાઓથી તેમને "विहोडियंता" પીડવામા આવે છે. તથા "अहकोडगगाढउरसिरबद्धपूरिय" તેમનાં મસ્તકને એટલું બધું નીચે નમાવવામાં આવે છે કે જેથી તે છાતી ઉપર ચોંટી જાય છે, અને તે કારણે શ્વાસોચ્છ્વાસથી તેમનાં શરીરનો ઉર્ધ્વભાગ પૂર્ણ રહે છે, "फुरंतउरकंडग"

मर्दनपूर्वकमुर्ध्वाधः करणादीनि तैर्विहेड्यमाना इति पूर्वेण सम्बन्धः । तथा 'संबद्धा' संबद्धाः=रज्ज्वादिभिर्दृढंबद्धाः सन्तः ' नीससंता ' निःश्वसन्तः=निश्वासं विमुञ्चतः 'सीसावेढउरुयालवप्पडगसंधिवंधणतत्तसलागसूइआकोडणाणि' शीर्षावेष्टनोरुदारवप्पदसंधिवन्धनतप्तशलाकासूच्याकुट्टनानि=शीर्षावेष्टनं=आर्द्रचर्मादिभिः शिरोवन्धनमूरुदारः=जङ्घाविदारणं चप्पडगसन्धिवन्धनं=' चप्पडग ' इतिकाष्ठयन्त्रविशेषस्तेषां काष्ठयन्त्रविशेषाणां सन्धिस्थानेषु जानुकूर्परादिषु वन्धनं, तथा तप्तानां शलाकानां=लोहकीलकानां सूचीनां च=प्रतीतानामाकुट्टनानि=शरीरे प्रवेशनानि यानि तान्येतानि, तथा-' तच्छणविमाणणाणि ' तक्षणविमाननानि=वासिभिस्त-

कंडग) इनके वक्षस्थल की तथा पृष्ठभाग हड्डियां कंपित होने लग जाती हैं। (मोडणेहिं) बार २ इन चोरों का वे कोतवाल लोग मर्दन करते हैं बार २ ऊँचे नीचे उठाते बैठाते हैं, इस तरह से बहुत दुःखित करते रहते हैं। (संबद्धा) रज्ज्वादिक से ईन्हें बहुत ही दृढता के साथ हाथ पैर आदि अवयवों में बांध देते हैं (नीससंता) इस कारण जोर २ से हाँफने लग जाते हैं। (सीसावेढउरुयाल-वप्पडसंधिबंधणतत्तसलाग सूइ आकोडणाणि) (सीसावेढ) गीले चमड़े आदि से इनका शिर बांध दिया जाता है, (उरुयाल) ऊरुदार-जंघाएँ इनकी इतनी अधिक चौड़ी करवाई जाती हैं कि जिससे उनका विदारण (टूट जाना) हो जाता है। (चप्पडगसंधिबंधणा) जानुकूर्पर (कोणी) आदि संधि स्थानोंमें एक प्रकारके काष्ठयंत्र बांध दिये जाते हैं तथा (लोहसलाग) शरीरमें तप्तलोहे की शलाईयों से दाग दिये जाते हैं और (सूई आकोडणाणि) गरम लोहेकी सूईयां उसमें प्रविष्ट की जाती हैं, तथा (तच्छणविमाणणाणि) वसूला आदिसे

તેમની છાતી તથા પીઠના હાડકા કપવા લાગે છે, " माडणेहिं " તે ચોરોનું તે કોટવાળો વારવાર મર્દન કરે છે. તેમને વારંવાર ઊઠ બેસ કરાવે છે, અને એ રીતે તેને બહુ જ દુઃખ છે "संबद्धा" તેમના હાથ પગ આદિ અવયવોને દોરડાં આદિ વડે મજબૂત રીતે બાંધી દેવામા આવે છે, "नीससंता" તે કારણે તે બિચારા હાંફી જાય છે. "सीसावेढ" ભીનાં ચામડાં આદિથી તેમનાં શિર બાંધી દે છે, "उरुयाल" તેમની જાંઘ એટલી બધી પહોળી કરવામા આવે છે કે તે કારણે તેમનું વિદારણ થાય છે, "चप्पडगसंधि- बंधणा" જાનુ કૂર્પર (ગુદા) આદિ સાંધાવાળી જગ્યાઓમાં એક પ્રકારનાં કાષ્ઠયંત્ર બાંધી દેવામાં આવે છે, તથા "लोहसलाग" તપાવેલા લોઢાના સળિયાઓ વડે શરીર પર ડામ દેવામાં આવે છે, અને "सूइआकोडणाणि" ગરમ કરેલી લોઢાની સોયો શરીરમાં ભોંકવામાં આવે છે, તથા "तच्छण विमा-

क्षणानि=वासीभिः काष्ठस्येव गात्रक्षोलनानि, विमानानि=गालीप्रदानादिभिर्विविधरीत्याऽपमानकरणानि तथा 'खारकडुयतित्तनावणजायणकारणसयाणि' क्षारकटुकतिक्तनावणयातनाकारणशतानि = तत्र क्षाराणि=सर्जीक्षारादीनि कटुकानि=निम्बादीनि तिक्तानि च=मरीचादीनि तेषां 'नावणं' इति मुखनासिकादौ प्रक्षेपणं, तदादीनि यानि यातनाकारणशतानि=विविधवेदनाकारणशतानि तानि 'बहुयाणि' बहुकानि 'पावियंता' प्राप्नुवन्तः, 'उरघोडीदिण्णगाढपेल्लण-अट्ठिकसंभग्गसपंसुलिया' उरोघोटीदत्तगाढप्रेरणसंभग्नास्थिकसपंशुलिकाः = तत्र उरसि=वक्षःस्थले दत्ताः=स्थापिताः या घोटी 'घोडी' इति प्रसिद्धं महाकाष्ठं तस्या गाढम्=अत्यर्थं यत्प्रेरणं=घर्षणपूर्वकं सञ्चालनं तेन संभग्नानि=त्रुटितानि

उनके शरीर को छीलते हैं और विमानन गाली आदि से उनको अपमानित करते हैं। (खारकडुयतित्तनावणजायणकारणसयाणि) (खार) मुख नासिका आदि में सर्जी क्षार आदि क्षार पदार्थों का (कडुय) आदि कटुक पदार्थों का एवं (तित्त) मरीचि आदि तिक्त पदार्थों को चूरण (नावण) प्रक्षिप्त किया जाता है, (जायणकारणसयाणि) इत्यादि रूपसे (कारणसयाणि) वेदना प्रदानके जितने भी सैकड़ों प्रकार हैं उन सबका उन द्रव्य हरण करनेवाले चोरोंपर प्रयोग किया जाता है। इस तरह (बहुयाणि) बहुत प्रकारकी घोरातिघोर वेदनाको (पावियंता) प्राप्त हुए वे जीव (उरघोडीदिण्ण गाढ पेल्लण अट्ठिकं संभग्गसपंसुलिया) (उरघोडी) जब उनके वक्षःस्थल पर बहुत अधिक बोझवाली काष्ठ की घोड़ी (दिण्णगाढपेल्लण) इधर से उधर खेंचकर फिराई जाती है इससे (अट्ठिकसंभ-

---

णणाणि" વાંસલા આદિથી તેમના શરીરને છોલે છે, અને ગાળો આદિથી તેમને અપમાનિત કરે છે. "खारकडुयतित्तनावणजायणकारणसयाणि" "खार" મુખ, નાક આદિમાં સાજીખાર આદિ ક્ષાર યુક્ત પદાર્થોની "कडुय" લીંબોળી આદિ કડવા પદાર્થોની, અને "तित्त" મરચા આદિ તીખાં પદાર્થોની ભૂકી "नावण" નાખવામાં આવે છે, "जायणकारणसयाणि" ઇત્યાદિ પ્રકારની પીડા પહોંચાડવાની જે સેંકડો પદ્ધતિયો છે, તે બધીને તે દ્રવ્ય હરણ કરનારા ચોરો ઉપર પ્રયોગ કરવામાં આવે છે, આ રીતે "बहुयाणि" અનેક પ્રકારની ભયંકરમા ભયંકર વેદનાઓ "पावियंता" તે લોકો અનુભવે છે. "उरघोडीदिण्णगाढपेल्लणअट्ठिकसंभग्गसपंसुलिया" "उरघोडी" જ્યારે

सपंशुलिकानि=पार्श्वास्थिसहितान्यस्थीनि येषां ते तथा उरसि महाकाष्ठस्य-चालनेन भग्नपार्श्वास्थिका इत्यर्थः, 'गलकालकलोहदंडउरउदरवत्थिपिट्ठिपरिपीलिया' गलकालकलोहदण्डोरउदरवस्तिपृष्ठपरिपीडिताः=गल इव=मत्स्यभेदककण्टकवत् कालकलोहदण्डः=श्यामलोहदण्डस्तेनोरसि=वक्षःस्थले, उदरे वस्तौ=नाभ्यधोगुह्य-प्रदेशे पृष्ठे च परिपीडिताः=आहता ये ते तथा, 'मत्थंतहियसंचुण्णियंगुवंगा' मथ्यमानहृदयसञ्चूर्णिताङ्गोपाङ्गाः=तत्र मथ्यमानं=महाकाष्ठादिभिर्विलोड्यमानं हृदयं=वक्षःस्थलं येषां ते मथ्यमानहृदयाः, तथा कठोरभूम्यादौ घर्षणादिना सञ्चूर्णितान्यङ्गानि=शिर उर उदर पृष्टवाहुद्वयचरणद्वयलक्षणाष्टाङ्गानि उपाङ्गानि च=कर्णनासिका करचरणाङ्गुल्यादीनि येषां ते सञ्चूर्णिताङ्गोपाङ्गाश्च ये ते तथा, एते पापा वेदनाः प्राप्नुवन्तीत्यग्रेण सम्बन्धः । 'केइ' केचित्=केचन 'अविराहिय-वेरिएहिं'

ग्गपंसुलिया) उनकी पांसली सहित हड्डियां पीस जाती है तब, तथा (गलकालकलोहदंडउरउदरवत्थिपिट्ठपरीपीलिया) (गल) मत्स्य भेदक कंटक की तरह (कालकलोहदंड) काले लोहे के दण्ड से (उर वक्षस्थल, (उदर) पेट, (वत्थि) वस्ति-नाभि के नीचे का गुह्यप्रदेश, एवं (पिट्ठ) पृष्ठ इन स्थानों पर जब वे (परिपीलिया) आहत होते हैं तब, तथा (मत्थंतहियसंचुण्णियंगुवंगा) (मत्थंतहियय) जब उनका हृदय महाकाष्ठ आदि से मथित किया जाता है तब, तथा (संचुणिगय-गुवंगा) कठोर भूमि के ऊपर घर्षण आदि से जब उनके अंग और उपांग अच्छी तरह चूर्णित हो जाते हैं तब, बहुत ही अधिक दुःखी होते हैं। शिर, उर, उदर, पृष्ठ, बाहुद्वय और चरणद्वय, ये आठ अंग हैं। तथा कर्ण, नासिका, कराङ्गुली एवं चरणांगुली आदि उपांग हैं। इस प्रकार ये (केइ) कितनेक अदत्तग्राही चोर (अविराहियवेरिएहिं)

તેમની છાતી ઉપર ઘણા ભારે વજનવાળી લાકડાની ઘોડી "दिण्णगाढपेल्लण" ખેંચીને આમ તેમ ફેરવવામાં આવે છે, ત્યારે "अट्ठिक संभग्गपंसुलिया" તેમની પાસળીઓનાં હાડકા પીસાઇ જાય છે, તથા "गल" માછલીને વીંધનાર કાંટાની જેમ "कालकलोहदण्ड" લોઢાના કાળા દંડા વડે "उर" છાતી "उदर" પેટ, "वत्थि" બસ્તિ-ગુહ્ય પ્રદેશ, અને "पिट्ठ" પીઠ વગેરે સ્થાનો પર જ્યારે "परिपीलिया" તેમને માર પડે છે ત્યારે, તથા "मत्थंत हियय संचुण्णियंगुवंगा" "मत्थंत हियय" જ્યારે તેમના હૃદયનું મહાકાષ્ઠ આદિ દ્વારા મંથન કરવામાં આવે છે ત્યારે, તથા "संचुण्णियंगुवंगा" કઠણ જમીન ઉપર ઘસડવાને લીધે જ્યારે તેમનાં અંગ ઉપાંગોનો સારી રીતે ચૂરો થાય છે ત્યારે તેઓ ઘણા જ દુઃખી થાય છે. શિર, ઉર, ઉદર પૃષ્ઠ, બે હાથ અને બે પગ એ આઠ અંગો ગણાય છે. તથા કાન, નાક, હાથ પગનાં આંગળાં વગેરે ઉપાંગો કહેવાય છે. એ પ્રમાણે તે "केइ" કેટલાક અદત્તગ્રાહી-ચોર,

अविराधितवैरिकैः=निरपराद्धा एव वैरिणः शत्रवः=निष्कारणवैरिण इत्यर्थः, तैः 'जमपुरिससंनिभेहिं' यमपुरुषसन्निभैः=परमाधार्मिकदेवसदृशैः भयोत्पादकत्वात्तै- रेवंभूतैः 'आणत्तिकिंकरेहिं' आज्ञप्तिकिङ्करैः=राजनिदेशकारिभिः पुरुषैः 'पहया' प्रहतास्ते=अदत्ताऽऽदायिनः 'तत्थ' तत्र=कारागारे 'मंदपुण्णा' मन्दपुण्याः= भाग्यहीनाः 'चडवेलाबद्धपट्टपोराच्छिवाकसलत्तवरत्तवेत्तपहारसततालियंगुवंगा' 'चडवेलाबद्धपट्टपोराच्छिवाकशालत्तावरत्रावेत्रप्रहारशतताडिताङ्गोपाङ्गाः, तत्र- चडवेला=चपेटा 'बद्धपट्ट' बध्रपट्ट' बद्धपट्टः=चर्मपट्टः 'पोरा' लोहकीलकाः, देशीशब्दोऽयम् 'च्छिवा' चिक्कणचर्मकशा 'चाबुक' इति भाषा प्रसिद्धा, देशी शब्दोऽयं, कशाः=अश्वादिताडनचर्मयष्टिः, 'लया' लता=लम्बाहरितवृक्षशाखा- यष्टिः 'छड़ी' 'कामडी' इति भाषा प्रसिद्धा 'वरत्त' वरत्रा=चर्ममयीरज्जुः 'वेत्त' वेत्रं=वेत्रयष्टिः, एतेषां 'पहारसय' प्रहारशतैः 'तालियंगुपंगा' ताडि- ताङ्गोपाङ्गाः=ताडितान्यङ्गोपाङ्गानि येषां ते तथा, 'किविणा' कृपणाः=दीनाः,

---

विना अपराध के ही बैरी बने हुए-निष्कारण शत्रु भाव को प्राप्त हुए ऐसे (आणत्ति किंकरेहिं) राजनिदेशकारी पुरुषों के द्वारा कि जो (जमपुरिससंनिभेहिं) यमपुरुष-परमाधार्मिक जैसे होते हैं (तत्थ) उस कारागार में (पहया) आहत-दुःखि किये जाते हैं। वहां पर वे (मंद- पुण्णा) अभागे (चडवेलाबद्धपट्टपोराच्छिवाकसलत्तवरत्तवेत्तपहारस- यतालियंगुवंगा) (चडवेला) थप्पड़ों के, (बद्धपट्ट) चर्म पट्टोंके, (पोरा) पोर- लोहे के खीलों के, (छिवा) चिकने चमड़ा के कोड़ो के (कस) चाबुक के, (लत्त) लता-हरे वृक्षकी शाखा की छडी के, (वरत्त) वरत्रा- चमड़े की रस्सी के, वेतों के (पहारसय) सैकड़ो प्रहारों से (तालियंगु- वंगा) अंग उपांगों में ताडित किये जाते हैं। (किविणा) दीनदशासं-

---

"अविराहिय वेरीएहिं" विना वांके दुश्मन બનેલા-વિના કારણ શત્રુ બની બેઠેલા, "जमपुरिससंनिभेहिं" યમ દેવ જેવા "आणत्ति किंकरेहिं" રાજ પુરુષો દ્વારા, તે કારાગારમાં "पहया" પ્રહારો વડે દુઃખી કરાય છે. ત્યાં તે "मंदपुण्णा" અભાગી લોકો "चडवेलाबद्धपट्टपोराच्छिवाकसलत्तवरत्तवेत्त- पहारसयतालियंगुवंगा" "चडवेला" થપ્પડોના, "बद्धपट्ट" ચર્મપટ્ટાઓના "पोरा" લોઢાના ખીલાઓના, "छिवा" ચીકણાં ચામડાના કોરડાના, "कस" ચાબુકના, "लत्त" લીલા વૃક્ષની ડાળીઓની સોટીઓના "वरत्त" વરતના ચામડાના દોરડાંના અને નેતરની સોટીઓના, "पहारसय" સેંકડો પ્રહારો "तालियंगुवंगा" તેમનાં અંગ ઉપાંગો પર મારવામાં આવે છે. "किविणा"

तथा 'लंबंतचम्मवणवेयणविमुहियमणा' लम्बमानचर्मव्रणवेदनाविमुखितमनसः= लम्बमानचर्माणि=गलच्चर्माणि यानि व्रणानि=क्षतानि 'घाव' इति प्रसिद्धानि तेषां या वेदनाः=पीडाः ताभिः विमुखितं=चौर्यकरणाद् विरक्तं मनो येषां ते तथा, 'घणकोट्टणनियलजुयलसंकोडियमोडियाय' घनकुट्टननिगडयुगलसंकोटित-मोटिताश्च=तत्र घनकुट्टनेन=लोहमयमुद्गरताडनेन निगडयुगलेन=शृङ्खलाद्वयबन्धने-नेत्यर्थः, संकोटिताः=सङ्कोचिता मोटिताः=वक्रीकृताश्च ये ते तथा 'कीरंति' 'क्रियन्ते=राजपुरुषैरितिपूर्वेण सम्बन्धः। तथा निरुच्चाराः=निरुद्धमूत्रपुरीषोत्सर्गाः, यद्वा-निरुच्चाराः=स्वपीडाप्रतीकारार्थमेकशब्दोच्चारणमात्रमपि कर्तुमशक्ताः, अत एव असञ्चरणाः=गमनागमनवर्जिताः एकस्थानप्रतिबद्धा एव 'पावा' पापाः=पाप-

---

पन्न बने हुए तथा (लंबंतचम्मवणवेयणविमुहियमणा) (लंबंतचम्म) कोड़ो आदि की मार से शरीर की खाल खिंच जाने के कारण लटकते हुए चमड़े से युक्त (वण) घावों की (वेयण) वेदना से (विमुहिय-मणा) जिनका मन चौरी करने से विरक्त हो चुका है ऐसे, तथा (घणकोट्टणनियलजुयलसंकोडियमोडिया य) (घणकोट्टण लोहमय मुद्गरों की चोट से, एवं (नियलजुय) दो सांकलों द्वारा किये गये बंधनों के (संकोडियमोडिया) जिनका शरीर संकुचित होकर वक्रीभूत हो चुका है तथा (निरुच्चारा) अपनी पीड़ा को प्रकट करने के लिये जो एक शब्द के उच्चारण करने में भी असमर्थ बन चुके हैं, अथवा-वेहद मार के कारण मल सूत्रका उत्सर्ग जिनका बंद हो चुका है और इसी कारण जो (असंचरणा) एक ही स्थान में प्रतिबद्ध रहने के कारण जो चलने फिरने में असमर्थ बन चुके हैं ऐसे ये अदत्तग्राही (पावा) पापी

એવી દીનદશાઓમાં મૂકાયેલા તથા "लंबंतचम्मवणवेयणविमुहियमाणा" "लंबंतचम्म" કેરડા આદિના પ્રહારથી શરીરની ચામડી ઉતરી જવાથી લટકતી ચામડી વાળા "वण" ઘાવોની વેદનાથી 'विमुहियमणा" જેમનાં મન ચોરી કરવાથી વિરક્ત થઈ ગયાં છે, તથા "घणकोट्टण नियलजुयल संकोडिय मोडियाय" "घणकोट्टण" લોહમય મગદળોની ચોટથી અને "नियलजोयल" બે સાંકળો દ્વારા બધાયેલા બધનોથી "संकोडियमोडिया" જેમનાં શરીર સકોચાઈને વળી ગયાં છે તથા "निरुच्चारा" પોતાની વેદનાને પ્રગટ કરવાને માટે એક શબ્દ પણ બોલવાને જે અસમર્થ છે, અથવા બેહદ મારને લીધે જેમની મળમૂત્ર આદિના ઉત્સર્ગની ક્રિયા બધ થઈ ગઈ છે અને "असंच-रणा" એક જ સ્થાનમાં પૂરાયેલ રહેવાને કારણે જેવો હલન ચલન કરવાને

कारका अदत्तहारिणो जनाः 'एया अण्णा य एवमादीओ वेयणाओ' एताः पूर्वोक्ताः, अन्याश्च अन्यप्रकारा एवमादिकाः=एवं प्रकारानानाविधा वेदनाः = दुःखानि 'पावंति' प्राप्नुवन्ति ॥ सू० १४ ॥

पुनस्ते कीदृशाः कीदृशं फलं लभन्ते ? तदाह–' अदंतिंदिया ' इत्यादि ।

मूलम्—अदंतिंदिया वसट्टा बहुमोहमोहिया परधणम्मि लुद्धा फासिंदियविसयतिव्वगिद्धा इत्थिगयरूवसद्दरसगंध-इट्टरइमहियभोगतण्हाइया य धणतोसगा गहिया य जे नर-गणा पुणरवितेकम्मदुवियड्ढा उवणीया रायकिंकराणं तेसिं वह सत्थग–पाढयाणं विल उलीकारगाणं लंचसयगेण्हयाणं कूडकवडमायाणियडि-आयरण-पणिहिवंचण-विसारयाणं बहुविह-अलियसयजंपगाणं परलोगपरम्मुहाणं निरयगइ गामियाणं तेहि य आणत्तजीवदंडा तुरियं उग्घाडिया पुरवरेहिं सिंघाड-गतियचउक्कचच्चरमहापहपहेसु वेत्तदंडलउडकट्ठलेट्टुपत्थर–प-णालिय पणोलिमुट्ठिलत्तपादपण्हि जाणुकोप्परप्पहरसंभग्गमहि-यगत्ता अट्ठारसकम्मकारिणो पाइयंगुवंगा कलुणा सुक्कोट्ठकंठ-गलतालु जिब्भा जायंता पाणियं विगयजीवियासा तण्हाइया वरागा तंपि य न लहंति वज्झपुरिसेहिं धाडियंता ॥सू०१५॥

जीव (एया) इन पूर्वोक्त वेदनाओं के तथा (अण्णाय एवमाईओ) इनसे अतिरिक्त और भी नाना प्रकार की (वेयणाओ) वेदनाओं के (पावंति) प्राप्त होते हैं ॥ सू–१४ ॥

अब ये अदत्तग्राही चोर कैसे होकर किस प्रकारके फलको भोगते

અસમર્થ થઈ ગયા છે, એવાં તે અદત્તગ્રાહી "पावा" પાપી જીવો "एया" એ પૂર્વોક્ત વેદનાઓ તથા "अण्णाय एवमाईओ' તે સિવાયની બીજી પણ અનેક પ્રકારની "वेयणाओ" વેદનાઓ 'पावंति" પામે છે ॥ સૂ–૧૪ ॥

હવે અદત્તાગ્રાહી–ચોર કેવા હોય છે અને કેવા પ્રકારનાં ફળ ભોગવે છે

टीका—' अदंतिंदिया ' अदान्तेन्द्रियाः=अवशेन्द्रियाः ' वसट्टा ' वशार्ता शब्दादिविषया सक्तिपीडिताः ' बहुमोहमोहिया ' बहुमोहमोहिता प्रचुरऽज्ञानमूर्छिताः ' परधणम्मि लुद्धा ' परधने लुब्धा=परद्रव्यतृष्णाक्रान्त इत्यर्थः, 'फासिंदियविसयतिव्वगिद्धा' स्पर्शेन्द्रियविषयतीव्रगृद्धा=स्पर्शेन्द्रियविषये स्त्र्यादौ गाढासक्ताः ' इत्थिगयरूवसद्दरसगंधइट्ठरतिमहियभोगतण्हाइया य ' स्त्रीगतरूपशब्दरसगन्धेष्टरतिमहितभोगतृष्णार्दिताश्च=तत्र स्त्रीगताः स्त्रीसम्बन्धिनो ये रूपशब्दरसगन्धास्तेषु इष्टा=अभीप्सिता या रतिः=रमणं तथा स्त्री गत एव महितः = वाञ्छितो यो भोगः= विलासः तयो र्या तृष्णा तया अर्दिताः=पीडिताः ' धणतोसगा ' धनतो-

---

हैं ? यह कहते हैं—' अदंतिंदिया ' इत्यादि ।

टीकार्थ—(अदंतिंदिया) ये अदत्तग्राही चोर (अदंतिंदिया) ऐसे होते हैं कि इनकी इन्द्रियां इनके वशमें नहीं रहती है, (वसट्टा) शब्दादिक विषयों में ये अधिकरूप में आसक्तिवाले होते हैं, (बहुमोहमोहिया) अज्ञानकी सत्ता इनमें अधिकसे अधिक रहती है (परधणम्मिलुद्धा) परके द्रव्यमें इन्हें बहुत भारी तृष्णा रहती है । (फासिंदियविसयतिव्वगिद्धा) स्पर्शन इन्द्रियके विषयभूत स्त्री आदि पदार्थ में इनकी गाढ आसक्ति होती है । (इत्थिगयरूवसद्दरसगंधइट्ठरइमहियभोगतण्हाइया य) (इत्थिगय) स्त्री संबंधी (रूवसद्दरसगंधइट्ठरइ) रूप शब्द, रस, गंधमें इच्छानुसार रमण करनेकी तथा (महिय) स्त्रीके भोगनेकी वाञ्छा इनमें अधिक रहती है । परन्तु (भोगतण्हाइया) उन भोगोंकी पूर्ति नहीं हो सकने के कारण ये उनकी तृष्णासे रातदिन

તે સૂત્રકાર બતાવે છે—' अदंतिदिया " ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ—" अदंतिंदिया " તે અદત્તાગ્રાહી ચોર એવા હોય છે કે તેમની ઇન્દ્રિયો ઉપર તેમનો કાબૂ હોતો નથી, " वसट्टा " શબ્દાદિક વિષયોમાં તે વધારે પ્રમાણમાં આસક્ત હોય છે, " बहुमोहमोहिया " તેમના પર અજ્ઞાનની સત્તા વધારેમાં વધારે ચાલે છે, " परघणम्मि लुद्धा " પરધનની તૃષ્ણા તેમનામાં બહુજ વધારે હોય છે, " फासिंदियविसयतिव्वगिद्धा " સ્પર્શેન્દ્રિયને વિષયભૂત સ્ત્રી આદિ પદાર્થોમા તેમની તીવ્ર આસક્તિ હોય છે, " इत्थिगयरूवसद्दरसगंधइट्ठरइमहियभोगतण्हाइया य " " इत्थिगय " સ્ત્રી સંબંધી " रूवसद्दरसगंध इट्ठरइ " રૂપ, શબ્દ, અને ગંધમા ઇચ્છાનુસાર રમણ " महिय 'કરવાની તથા સ્ત્રીઓ સાથે રતિરમણ કરવાની વાસના તેમનામા વધારે હોય છે. પણ " भोगतण्हाइया" તે ભોગો પૂરા નહીં થવાને કારણે, તેમની

पका'=परधनचौर्येण तुष्यन्ति ये ते तथा राजपुरुषैः 'गहियाय' गृहीताश्च ये नरगणाः=चौरजनसमूहाः पूर्वं कोट्टपालादिभिः प्राप्तदण्डाः 'पुणरवि ते' पुनरपि ते 'कम्मदुव्वियड्ढा' कर्मदुर्विदग्धाः=अदत्तादानादिकर्मजनितकटुकफलज्ञानरहिताः चौर्यकर्माऽपराधेन 'तेसिं रायकिंकराणं' तेषां प्रसिद्धानां निर्दयानां राजकिंकराणां=राजपुरुषाणामग्रे 'उवणीया' उपनीताः= समीपं प्रापिताः कथं भूतानां राजकिंकराणामित्याह 'वधसत्थगपाढयाणं' वधशास्त्रकपाठकानां=वधबन्धमारणयातनमात्रशिक्षाशिक्षितानां 'विलउलीकारगाणं' विलउली=दीनदीनादिवचनैः श्चौरादीनां निर्णयः देशी शब्दोऽय, तत् कारकाणां 'लंचसयगेण्हयाणं' लञ्चशत-

दुःखी होते रहते हैं। (धणतोसगा) यदि इन्हें संतोष प्राप्त होता है तो वह एक परके धनके अपहरण करनेसे ही होता है। परन्तु यह संतोष इनका स्थायी नहीं रहता है कारण जब (जे नरगणा) ये अदत्त-ग्राही चौर लोक (गहिया य) राजपुरुषों द्वारा गृहीत पकड़ लिये जाते हैं, तब (पुणरवि ते) फिर भी वे विविध प्रकारके दंडों से इन्हें विशेष दुःख भोगना पड़ता है। तथा (कम्मदुव्वियड्ढा) अदत्तादानादि कर्म-जनित कटुक फलके ज्ञानसे रहित बने हुए चौर्यकर्मरूप अपराधके कारण (तेसिं) उन (रायकिंकराणं) निर्दय राजपुरुषों के आगे जब (उवणीया) ले जाये जाते हैं तब वे इन्हें प्राणदंड की आज्ञा देते हैं, तथा और भी इनके साथ क्या २ व्यवहार करते हैं यह बात सूत्रकार स्पष्ट नीचेके अवतरणों द्वारा करते है–राजपुरुष कैसे होते हैं? पहले यह बात सूत्रकार कहते हैं–(वधसत्थगपाढयाणं) वध, बंध, मारण, घातन,

तृष्णाने કારણે તેવા રાતદિન દુઃખી થયા કરે છે. 'धणतोसगा' તેને પરધનનુ અપહરણ કરવા સિવાય બીજા કોઇ કાર્યથી સંતોષ થતો નથી, પણ તેનો તે સંતોષ સ્થાયી હોતો નથી કારણ કે જ્યારે "ते नरगणा" તે અદત્તાગ્રાહી ચોરો "गहियाय" રાજપુરુષો દ્વારા પકડાઈ જાય છે ત્યારે "पुणरवि ते" ફરીથી પણ તેમને અનેક પ્રકારની શિક્ષાઓ દ્વારા વધારે દુઃખો ભોગવવા પડે છે, તથા "कम्म दुव्वियड्ढा" અદત્તાદાન આદિ કર્મનાં કટુ પરિણામ જ્ઞાનથી અજ્ઞાનથી એવા તે ચોરોને, ચોરીના ગુનાને કારણે "तेसिं" તે "रायकिंकराणं" નિર્દય રાજપુરુષો પાસે જ્યારે "उवणीया" લઈ જવામાં આવે છે ત્યારે તેમને મૃત્યુદંડની સજા થાય છે, તથા તેમની સાથે બીજા પણ કેવો વર્તાવ રાખવામા આવે છે, તે વાતને સૂત્રકાર નીચેનાં, વાક્યો દ્વારા સ્પષ્ટ કરે છે–પહેલાં તે રાજપુરુષો કેવા હોય છે, તે વાત સૂત્રકાર બતાવે છે.

"वधसत्थगपाढयाण" વધ, બંધ, મારણ, ઘાતન, આદિ વિદ્યાઓના

ग्राहकाणां=नानाविधलञ्चग्राहकाणां 'रिश्वत खोर' इति भाषा प्रसिद्धानां तथा 'कूडकवडमायाणियडि—आयरणपणिहिवंचणविसारयाण' कूटकपटमायानिकृत्याचरणप्रणिधिवञ्चनविशारदानां—तत्र कूटं=भ्रमोत्पादनं, कपटं=वेशभाषानानारूपधारणं माया=चौरादीन् निग्रहीतुं भिक्षावृत्त्यादिभिश्छलकरण, भोजनादिभिरादरसत्कारकरणैर्वञ्चनं निकृतिः तथा प्रणिधिवञ्चनं प्रणिधिना=छलेन एकाग्रचित्तेन वा वञ्चनं, यद्वा—प्रणिधीनां=राजगुप्तपुरुषाणां यद्वञ्चनं तत्र विशारदाः=प्रागल्भा ये ते तथा तेषां 'बहुविहअलियसयजंपगाणं' बहुविधालीकशतजल्पकानां=चौरादीनां

आदि की शिक्षा से ये राजपुरुष शिक्षित होते हैं (बिलउलीकारगाणं) दीन-हीन आदि वचनों को बोल कर चोर आदिकों का निर्णय कराने वाले होते हैं, अर्थात्-ये राजपुरुष ऐसे निपुण होते हैं कि चोरों का पता बहु जल्दी लगा लेते हैं, इस प्रकार की उनकी बात चीत का ढंग होता है कि जिससे "यही चोर है" इस बात का उन्हें ज्ञान हो जाता है। (लंचसयगेण्हयाणं) ये रिश्वतखोर-घूंस खाने वाले होते हैं। तथा (कूडकवडमायाणियडि आयरणपणिहि-वंचणविसारयाणं)(कूड) कूट में-भ्रमोत्पादन में, (कवड) कपट में-वेश भाषा के नानारूप धारण करने में, (माया) माया में चोरोंको पकड़ने के लिये भिक्षावृत्ति आदिसे छल करने में, (नियडि आयरण) निकृत्याचरण में-भोजनादि द्वारा आदर सत्कार से प्रतारणा करने में, तथा (पणिहिवंचणा) प्रणिधि-वञ्चनमें कोई बहाने से ठगने में, अथवा राजा के गुप्तचर पुरुषों को ठगने में, (विसारयाणं) बड़े विशारद-चतुर होते हैं । (बहुविहअलियसयजंप-

---

તે જાણકાર હોય છે "बिलउलीकारगाणं" દીન-હીન આદિ વચનો બોલી ચોર આદિનો નિર્ણય કરનાર હોય છે, એટલે કે તે રાજપુરુષો ચોરોને જલ્દી શોધી કાઢવામાં નિપુણ હોય છે તેમની વાતચીતની ઢબ એવી હોય છે કે જેથી "આ માણસ જ ચોર છે," એ વાત તેમને સમજાઈ જાય છે. "लंचसयगेण्हयाणं" તેવો લાંચીયા હોય છે, તથા "कूडकवडमायाणियडि-आयरणपणिहिवंचणविसारयाणं" "कूड" કૂડ કરવામાં ભ્રમોત્પાદનમાં, "कवड" કપટમાં-વિવિધ વેશ લેવામાં, "माया" માયા ચોરોને પકડવાને માટે ભિક્ષાવૃત્તિ આદિ છળ ખેલવામાં, "नियडिआयरण" નિકૃત્યાચરણમા ભોજનાદિ દ્વારા આદરસત્કારથી પ્રતારણા કરવામાં તથા "पणिहिवंचणा" પ્રણિધિ વંચનમાં, કોઈ પણ બહાને ઠગવામાં અથવા રાજાના ગુપ્તચરને ઠગવામાં, "विसारयाणं" ભારે નિપુણ હોય છે. "बहुविहअलियसयजंपगाणं"

भेदग्रहणाय नानाविध मिथ्याभाषिणं, 'परलोकपरम्मुहाणं' परलोक पराङ्मुखानां= परलोकभयरहितानामित्यर्थः, 'निरयगइगामियाणं' नरकगतिगामिकानामेवंभूतानां राजपुरुषाणां पुरत उपनीताः 'तेहि य' तैश्च राजपुरुषैः 'आणत्तजीवदंडा' आज्ञप्त जीवदण्डाः=आज्ञप्तः=आज्ञापितः जीवदण्डः=शूलारोपणादिकः येभ्यस्ते तथा आज्ञप्तमृत्युदण्डा इत्यर्थः, तथा 'तुरियं उग्घाडिया पुरवरेहिं सिंघाडगतियचउक्कच च्चरमहापहपहेसु' शृंगाटकत्रिकचतुष्कचत्वरमहापथपथेषु=तत्र-शृङ्गाटकः=त्रिकोणमार्गः त्रिकः=यत्र मार्गत्रयसम्मेलनं भवति, चतुष्कः=चतुर्मार्गस्थानं चत्वरः=

गाणं) चौरादिकों का भेद लेने के लिये अनेक प्रकार की सैकड़ों झूठी२ बातें बनाने में बड़े चतुर होते हैं, (परलोकपरम्मुहाणं) परलोकका भय इन्हें बिलकुल नहीं होता है। जो मनमें आता है वही अच्छा मानकर करते रहते हैं। (निरयगइगामियाणं) इसी कारण मरने पर ये नरकगति में जाते हैं। अब ये राजपुरुष इन्हें क्या २ दंड देते हैं? सो सूत्रकार प्रदर्शित करते हैं (तेहिं य) ये राजपुरुष (आणत्तजीयदंडा) इन चोरों को शूलारोपण आदि मृत्युदंड देते हैं। (पुरवरेहिं) नगर के (सिंघाडगतियचउक्कचच्चरमहापहपहेसु) शृंगाटक, त्रिक, चतुष्क, चत्वर, महापथ एवं पथ इन सब मार्गों में (तुरियं उग्घाडिया) शीघ्र उन्हें दिखा २ कर यह घोषित करते हैं कि "देखो भाईयों! ये महाचोर हैं और आज ही इनको मृत्युदंड दिया जायगा। सिंघाडे जैसा तिकानों जो मार्ग होता है उसका नाम शृंगाटक, जहां तीन मार्गो का संमेलन है उसका नाम त्रिक, जिस रास्ते में चार रास्ता आकर मिलते हैं उस का

ચોર આદિનો ભેદ જાણવાને માટે અનેક પ્રકારની સેંકડો જુઠી વાતો બનાવી કાઢવામાં તે નિપુણ હોય છે, "परलोकपरम्मुहाणं" તેમને પરલોકનો ડર બિલકુલ હોતો નથી, તેમને મનમાં આવે તે જ સારું માનીને કરે છે 'निरयगइगामियाणं" તે કારણે મરીને તેઓ નરકગતિમા જાય છે હવે તે રાજ પુરુષો તેમને કેવી કેવી સજા કરે છે, તે સૂત્રકાર બતાવે છે—"तेहिं य" તે રાજપુરુષો "आणत्तजीयदंडा" તે ચોરોને શૂલારોપણ આદિ મૃત્યુદંડ દે છે "पुरवरेहिं" નગરના "सिंघाडगतियचउक्कचच्चरमहापहपहेसु" શૃંગાટક, ચતુષ્ક, ચત્વર, મહાપથ અને પથ એ બધા માર્ગો પર "तुरियं उग्घाडिया" તેમને ઝડપથી બતાવીને એવું જાહેર કરે છે કે "ભાઈઓ! જુવો, આ મહાન ચોર છે, અને આજે જ તેને મૃત્યુદંડ આપવાનો છે" શિંગોડા જેવા ત્રિકોણાકાર માર્ગને શૃંગાટક કહે છે, જ્યા ત્રણ રસ્તા મળે તે ત્રિક, જ્યાં ચાર રસ્તા મળે તે ચતુષ્ક, જ્યાં અનેક માર્ગો મળે તેને ચત્વર કહે

अनेकमार्गसम्मेलनस्थानं महापथः=राजमार्गः पन्थाः=सामान्यमार्गस्तेषु त्वरितं=शीघ्रमुद्घाटिताः=जनसमक्षे प्रदर्शिताः ' इमे महाचौरा : शीघ्रमद्यैववध्याः ' इति जनसमक्षे प्रदर्शिताः, कथं भूताः ? इत्याह—' वेत्त-दंड-लउड-कट्ठलेट्ठु-पत्थर-पणालिय-पणोलियमुट्ठिलत्तपायपण्हि-जाणुकोप्परप्पहारसंभग्गमहियगत्ता ' वेत्र-दण्ड- लगुट- काष्ठ- प्रस्तर- प्रणाली-प्रणोदी मुष्टिलत्ता-पादपार्ष्णि-जानु-कूर्पर-प्रहारसंभग्नमथितगात्राः, तत्र ' वेत्तदंड ' वेत्रदण्डः ' लउड ' लकुटः=यष्टिः ' कट्ठ ' काष्ठं च=प्रतीतं ' लेट्ठु ' लेष्टुः=मृत्तिका खण्डं ' पत्थर ' प्रस्तरश्च=पाषाणः ' पणालिय ' प्रणालीः=प्रकृष्टा, नाली पुरुषप्रमाणदीर्घयष्टिः ' पणोली ' प्रणोदी =ताडनदण्डो, ' मुट्ठी ' मुष्टिः। इति भाषा प्रसिद्धः ' लत्ता ' पादः ' लात ' इति भाषा प्रसिद्धः, ' पादपण्हि ' पादपार्ष्णिः=चरणपश्चाद्भागः ' एडी ' इति भाषा प्रसिद्धः, जानुः=' घुटना ' इति प्रसिद्धः ' कोप्पर ' कूर्परश्च=भुजमध्यग्रन्थिः ' कूणि ' इति भाषा प्रसिद्धः, एतेषां प्रहारैः ' संभग्ग ' संभग्नानि=त्रुटितानि, ' महिय ' मथितानि च=सम्मर्दितानि ' गत्त ' गात्राणि=शरीराणि येषां ते तथा

नाम चतुष्क, जहां अनेक मार्ग आकर मिले हों उसका नाम चत्वर, राजमार्ग का नाम महापथ एवं सामान्यमार्ग का नाम पथ है। (वेत्तदंड लउंड-कट्ठ-लट्ठु-पत्थर-पणालिय-पणोलिय मुट्ठि-लत्त-पायू-पण्हि-जाणू कोप्परप्पहारसंभग्गमथितगत्ता) राजपुरुष इन चोरों को (वेत्तदंड) वेतों के डंडों की मार से, (लउड) लकडियों की मार से, (कट्ठ) काष्ठों की मार से, (लेट्ठु) मृत्तिकाके खंडोंकी मार से, (पत्थर) पत्थरों की मार से, (पणलिय) पुरुषप्रमाणदीर्घ यष्टियों की मार से, (पणोलिय) प्रणोली-ताडन दंडों की मार से, (मुट्ठि) मुष्टियों-मुक्कों की मार से, (लत्त) लातों की मार से, (पायपण्हि) एडियों की मार से, (जाणु) घुटनों की मार से तथा कोहनियों की मार से हड्डी पसली सब एक कर देते हैं-मतलब ये कि वे इन्हें जो इनके हाथ में आ जाता है उसी से

છે. રાજમાર્ગને મહાપથ અને સામાન્ય માર્ગને પથ કહે છે " वेत्तदंड-लउड -कट्ठ लेट्ठु-पत्थर-पणालिय पणोलिय-मुट्ठि-लत्त-पायू-पण्हि-जाणू-कोप्पर-प्पहार-संभग्गमथितगत्ता " રાજપુરુષો ને ચોરોને નેતરની સોટીઓથી, લાકડીઓથી લાકડાંથી, માટીના ઢેફાથી પથ્થરોથી, " पणलिय " પુરુષ માપની લાકડીથી, " पणोलिय " દંડાઓથી, મુક્કાઓથી, લાતોથી, એડીથી, ઘુટણથી તથા કોણીથી સારી રીતે મારે છે, એટલે કે તેમના હાથમાં જે સાધન આવે તેનાથી તે લોકો તેમને બહુ જ ખરાબ રીતે માર મારે છે. " अट्ठारसकम्मकारिणो " તે

'अट्ठारसकम्मकारिणो' अष्टादशकर्मकारिणः=अष्टादशचौरप्रसूतिकारकाः अष्टादशप्रकारैश्चौर्यं भवति तत्कारका इत्यर्थः। अथ चौरस्य चौर्यकर्मणश्च लक्षणमुक्तं ग्रन्थान्तरे—

"चौरः १, चौरापको २, मन्त्री ३, भेदज्ञः ४, काणकक्रयी ५।
अन्नदः ६, स्थानदश्चैव ७, चौरः सप्तविधः स्मृतः ॥ १ ॥"

चौरः=चौर्यकारकः १, चौरापकः=चौराय वस्तुसमर्पकः २, मन्त्री=चौराय सम्मतिदायकः ३, भेदज्ञः='कुत्र कस्य गृहे कया रीत्या कस्मिन् समये चौर्यं कर्तव्य'-त्यादि भेदज्ञातारः ४, काणकक्रयी=चौरा नीतं बहुमूल्यवस्तुकाणकं हीनं कृत्वा यः क्रीणाति सः ५, अन्नदः=चौराय-चौर्यार्थमन्नदायकः, ६, स्थानदः=चौराय विश्रामार्थं स्वगृहादौ स्थानदायकः ७, इति सप्तविधश्चौरः। अथ चौर्यकर्म यथा—

बुरी तरह मारते हैं। (अट्ठारसकम्मकारिणो) ये चौर अठारह प्रकार से जो चौर्यकर्म किया जाना है उसमें निपुण होते हैं। ग्रन्थान्तर मेंचोर और चोरी के लक्षण इस प्रकार कहे हुए हैं—

"चौरः १ चौरापको २ मंत्री ३, भेदज्ञः ४, काणकक्रयी ५।
अन्नदः ६ स्थानदश्चैव, चौरः सप्तविधः स्मृतः ॥१॥"

जो स्वयं चोरी करता है १, चोरों को वस्तु देता है २, चोरों को संमति देता है ३, किस समय किसके घर में किस रीति से कहां चोरी करनी चाहिये इत्यादि रूप से जो चोरों को चोरी करने का भेद देता है ४, चोरों के द्वारा लाई गई बहु मूल्य वस्तु को जो अल्पमूल्य देकर खरीदता है ५, जो चोरों के लिये खाने पीने की व्यवस्था करता है ६, तथा चोरों के लिये विश्रामनिमित्त जो अपने घर आदि में स्थान देता है७ ये सब चोर हैं। इस प्रकार ये सात तरहके चोर कहे गये हैं ॥१॥

ચોર જે અઢાર પ્રકારે ચોરી કરવામાં આવે છે તેમાં નિપુણ હોય છે. બીજા ગ્રન્થમાં ચોર અને ચોરીના આ પ્રમાણે લક્ષણો બતાવ્યાં છે.

"चौरः १ चौरापको २ मत्री ३ भेदज्ञः ४ काणकक्रयी ५।
अन्नदः ६ स्थानदश्चैव, चौरः सप्तविधः स्मृतः ॥ १ ॥"

(૧) જે પોતે જ ચોરી કરે છે, (૨) જે ચોરોને વસ્તુઓ આપે છે, (૩) જે ચોરોને સંમતિ આપે છે, (૪) ક્યારે, કોના ઘરમાં, કઇ રીતે ચોરી કરવી જોઇએ ઇત્યાદિ પ્રકારે જે ચોરોને ચોરી કરવાનું રહસ્ય બતાવે છે, (૫) ચોરો દ્વારા ચોરી લાવવામા આવેલી કીમતિ ચીજોને જે ઓછી કીમતે ખરીદે છે, (૬) જે ચોરોને માટે ખાવા પીવાની વ્યવસ્થા કરે છે તથા (૭) જે ચોરોને પોતાના ઘરમા આશ્રય આપે છે, તે બધા ચોર ગણાય છે, આ રીતે સાત પ્રકારના ચોર બતાવ્યા છે ॥ ૧ ॥

भलनं १, कुशलं २, तर्जा ३, राजभागो ४, ऽवलोकनम् ५ ।
अमार्गदर्शनं ६, शय्या ७, पदभङ्ग ८, स्तथैव च ॥ १ ॥
विश्रामः ९, पादपतन १०. मासनं ११, गोपनं १२ तथा ।
खण्डस्य खादनं चैव १३, तथान्यन्मोहराजिकम् १४ ॥ २ ॥
पद्या १५, ग्न्यु १६, दक १७ रज्जूनां १८, प्रदानं ज्ञानपूर्वकम् ।
एताः प्रसूतयो ज्ञेया अष्टादश मनीषिभिः ॥ ३ ॥

तत्र भलनं='न भेतव्यं भवता तव पक्षेऽहमपि सम्मिलिष्यामी 'त्यादि वचनैः

चोरी अठारह प्रकार की इस तरह से है—

" भलनं १ कुशल २ तर्जा ३ । राजभागो ४ऽवलोकनम् ५ ।
अमार्गदर्शनं ६ शय्या । पदभङ्ग ८ स्तथैव च ॥ १ ॥
विश्रामः ८ पादपतन १० । मासन ११ गोपनं १२ तथा ।
खण्डस्य खादनं चैव १३ । तथान्यन्मोहराजिकम् १४ ॥२॥
पद्या १५ ग्न्यु १६ दक १७ रज्जूनां १८ । प्रदानं ज्ञानपूर्वकम् ।
एताः प्रसूतयो ज्ञेया । अष्टादश मनीषिभिः ॥ ३ ॥

भलन १, कुशल २, तर्जा ३, राजभाग ४, अवलोकन ५, अमार्गदर्शन ६, शय्या ७, पदभंग ८ ॥१॥ विश्राम ९, पादपतन १०, आसन ११, गोपन १२, खंडखादन १३, मोहराजिक १४ ॥२॥ पद्यदान १५, अग्निदान १६, उदकदान १७, रज्जुप्रदान १८ ॥ ३ ॥

" तुम डरो मत–मैं भी तुम्हारे पक्षमें मिल जाऊँगा " इत्यादि

ચોરીના અઢાર પ્રકાર નીચે પ્રમાણે છે—

" भलनं १, कुशलं २, तर्जा ३ राजभागो ४ ऽवलोकनम् ५ ।
अमार्गदर्शनं ६ शय्या ७ पदभङ्ग ८ स्तथैव च ॥ १ ॥
विश्रामः ९ पादपतन १० मासनं ११ गोपनं १२ तथा ।
खण्डस्य खादनं चैव १३ तथान्यन्मोहराजिकम् १४ ॥ २ ॥
पद्या १५ ग्न्यु १६ दक १७ रज्जूनां १८ प्रदानं ज्ञानपूर्वकम् ।
एताः प्रसूतयो ज्ञेया अष्टादश मनीषिभिः ॥ ३ ॥

(૧) ભલન, (૨) કુશલ, (૩) તર્જા (૪) રાજભાગ (૫) અવલોકન, (૬) અમાર્ગદર્શન, (૭) શય્યા, (૮) પદભંગ ॥૧॥ (૯) વિશ્રામ, (૧૦) પાદપતન (૧૧) આસન, (૧૨) ગોપન, (૧૩) ખંડખાદન, (૧૪) મોહરાજિક ॥૨॥ (૧૫) પદ્યદાન, (૧૬) અગ્નિદાન, (૧૭) ઉદકદાન અને (૧૮) રજ્જુપ્રદાન ॥૩॥

(૧) " તમે ડરશો મા-હું પણ તમારા પક્ષમા મળી જઇશ " વગેરે

चौराणामुत्साहदानं १, कुशलं=सुखदुःखादि पृच्छा २, तर्जा=चौरस्य हस्तादिसङ्केत-करणं ३, राजभागः=राजकरस्याऽप्रदानम् ४, अवलोकनं=चौर्यं कुर्वत-उपेक्षापूर्वक प्रेक्षणं ५, चौर्यमवलोक्याऽपि स्वामिनं प्रत्यकथनमित्यर्थः, अमार्गदर्शनं=चौराणां-रक्षार्थमुन्मार्गप्रदर्शनं, चौरमार्गप्रच्छकानामन्यमार्गदर्शनं वा ६, शय्या=चौराय श-य्यादानं७, पदभङ्ग=पशूनां सञ्चालनेन चौराणां गमनाऽऽगमनमार्गाङ्कितचरणचिह्न-लुप्तकरणं८, तथैव विश्रामः=स्वगृहे निवासदानं९, शय्यादानमन्यत्राप्युपवेशनाद्यर्थं

उत्साह वर्धक वचनोंसे चोरोंका उत्साह अधिकबढाना इसका नाम भलन है १। चोरों के सुख-दुःख आदि के समाचार पूछना इसका नाम कुशल है २, हाथ आदि के संकेत से चोरों को इशारा करना इसका नाम तर्जा है ३। निर्धारित राजटेक्स का नहीं देना इसका नाम राजभाग है ४। चोरी करते हुए चोर को उपेक्षापूर्वक देखना, इसका नाम अवलोकन है, अर्थात् चोर को चोरी करते हुए देखकर के भी अपने मालिक से नहीं कहना-यह भी चोरी का प्रकार है ५। चोरों की रक्षा के अभिप्राय से अन्वेषण करने वालों को उन्मार्ग प्रदर्शन करना इसका नाम अमार्ग-दर्शन है६। चोरों के लिये सोनेको शय्या देना इसका नाम शय्या है ७। चोरों ने जहां चोरी की हो वहां उनके मार्ग में चरणचिह्न अंकित हो गये हो तो उन चिह्नों को नष्ट करने के लिये उन पर से पशुओं को निकालना कि जिससे वे नष्ट हो जावें और पहिचानने में न आने पावे, इसका नाम पदभङ्ग है ८। अपने घर में चोरों को

ઉત્સાહ વર્ધક વચનો દ્વારા ચોરોનો ઉત્સાહ વધારવાની ક્રિયાને ભલન કહે છે (૨) ચોરોને સુખ દુ ખ વગેરેના સમાચાર લાવનારને કુશલ કહે છે (૩) હાથ આદિના સ કેતથી ચોરોને ઇશારા કરવા તેનું નામ તર્જા છે (૪) નક્કી થયેલ રાજભાગ-રાજ્યના કર ન દેવા તેનુ નામ રાજભાગ છે, (૫) ચોરી કરતાં ચોરને ઉપેક્ષાપૂર્વક જોવો તેને અવલોકન કહે છે, એટલે કે ચોરને ચોરી કરતો જોવા છતાં પણ પોતાના માલિકને નહી કહેવુ તે પણ ચોરીનો જ પ્રકાર છે. (૬) ચોરોની રક્ષા કરવાને માટે તેમની શોધ કરનારને ખોટો માર્ગ બતાવવો તેને અમાર્ગદર્શન કહે છે (૭) ચોરોને સૂવાને માટે પથારી દેવી તેને શય્યા કહે છે. (૮) ચોરોએ જ્યાં ચોરી કરી હોય ત્યા તેના માર્ગમાં તેનાં પગલાં પડયા હોય તો તે પગલાનો નાશ કરવાને માટે તેમના પર પશુ-ઓને દોડાવવા. કે જેથી તે પગલાં ભૂસાઈ જાય અને ઓળખી ન શકાય. આ પ્રકારે પગલાંના નિશાનનો નાશ કરવાની ક્રિયાને પદભઙ્ગ કહે છે (૯)

शयनीयवस्तुदानमित्युभयोर्भेदः पादपतनं=प्रणामादिना चौराणां सत्कारसम्मान-करणम् १०, आसनम्=आसनदानं ११, गोपनं=नाऽनेन चौर्यं कृतं स्वगृहे स्थापयित्वा नास्त्यत्रेति वा कथनेन चौरसङ्गोपनं १२, खण्डस्य खादनं=चौरेभ्यो-मिष्टान्नादिदानं १३, तथाऽन्यन्मोहराजिकम्=लोकप्रसिद्ध्या परराष्ट्रे गत्वा वस्तु विक्रयः १४, तथा ज्ञानपूर्वकं=' चोरोऽय ' मिति बुद्धिपूर्वकं पाद्याग्न्युदकरज्जूनां प्रदानं=मार्गगमनश्रमापनोदार्थं पाद्यं=पादाय हितमुष्णतैलजलादि, तस्य दानं १५, पाकाद्यर्थमग्निदानम् १६, उदकदानं=पानार्थं जलदानं १७, तथा चोरीतगोम-

---

ठहराना–विश्राम देना इसका नाम विश्राम है ९। शय्यादान और विश्राम में अन्तर केवल इतना ही है कि शय्योदान तो दूसरी जगह ठहरने पर भी दिया जा सकता है परन्तु विश्राम अपने घर में ही दिया जाता है ९। चौरों के चरणों पर गिरकर उनका आदर सत्कार करना इसका नाम पादपतन है १०। वैठने को आसन देना यह आस-नदान है ११। " इसने चोरी नहीं की है, घर में होने पर भी घर में चोर नहीं है " इस प्रकार कह कर चोर की रक्षा करना इसका नाम गोपन है १२। चोरों के लिये खाने को मिष्टान्न आदि देना इसका नाम खण्ड खादन है १३। नाका बंदी होने पर दूसरे स्थान में, अथवा लोक प्रसिद्धि से परराष्ट्र में एकदेशसे ले जाकद दूसरे देशमें वेचना इसका नाम मोहराजिक है १४। " यह चोर है " ऐसा जानकर भी उसे पद्य, अग्नि, उदक, रज्जु देना, पैरों की थकावट मिटाने के लिए गर्म जल तैल आदि का देना पद्य है १५। भोजन बनाने के लिये अग्नि देना १६।

ચોરોને પોતાના ઘરમા આશ્રય આપવો તેને વિશ્રામ કહે છે. શય્યાદાન તથા વિશ્રામમા તફાવત એટલો જ છે કે શય્યાદાન તો બીજી જગ્યાએ રહે તો પણ આપી શકાય છે પણ વિશ્રામ પોતાના ઘરમાં જ અપાય છે. (૧૦) ચોરોને ચરણે નમીને તેનો આદર સત્કાર કરવો, તેણે પાદપતન કહે છે, (૧૧) બેસવાને આસન આપવુ, તેને आसनदान કહે છે, (૧૨) " આ માણસે ચોરી કરી નથી, ઘરમા ચોર છુપાવ્યો હોય છતા પણ ચોર ઘરમા નથી " એ પ્રમાણે કહીને ચોરની રક્ષા કરવી, તેને गोपन કહે છે (૧૩) ચોરોને ખાવાને માટે મિષ્ટાન્ન દેવુ, તેને खण्डखादन કહે છે. (૧૪) નાકાબંધી હોવા છતાં બીજી જગ્યાએ અથવા એક દેશમાંથી લઈ જઈને બીજા દેશમા માલ વેચવો, તેને मोहराजिक કહે છે (૧૫) " આ ચોર છે" એવી ખબર હોવા છતા પણ તેને પદ્ય, અગ્નિ, ઉદક (પાણી), રજ્જુ (દોરડું) દેવુ તે પણ ચોરીના જ પ્રકારો છે, પગને થાક દૂર કરવાને માટે ગરમ પાણી, તેલ આદિ

हिष्मादि बन्धनार्थं प्रासादादिष्वारोढुं वा रज्जुदानम् १८, इत्येतान्यष्टादशविधानि प्रसूतयः चौर्यकरणानि ।

पुनः कीदृशास्ते परद्रव्यापहारिणः ? इत्याह—'पाइयंगुवंगा' पतिताङ्गोपाङ्गाः=पातितानि=त्रोटितान्यङ्गानि=हस्तपादादीनि, उपाङ्गानि च=अङ्गुलिकेशश्मश्वादीनि येषां ते तथा, कलुणा ' करुणाः=दीनाः–पापमलिना इत्यर्थः ' सुक्कोट्ठकंठगलतालुजिब्भा' शुष्कोष्ठकण्ठगलतालुजिह्वाः=ओष्ठौ कण्ठः=अक्षरोच्चारणस्थानं गलः–तदधो भागः तालु=प्रसिद्धं एतेषां समाहारः, जलं विना शुष्कमोष्ठकण्ठगलतालु जिह्वं येषां ते तथा, ' तण्हा इत्ता ' तृष्णार्दिताः=पिपासाऽऽकुलिताः सन्तः ' पाणियं जायंता ' पानीय याचमानाः ' विगयजीवियासा ' विगतजीविताशा =जीवनाशारहिताः ' वराकाः=मन्दपुण्याः ' वज्झपुरिसेहिं घाडियंता ' वध्यपुरुषै-

पीने के लिये जल देना १७, चुराई गई भैंस आदिको बांधने के लिये तथा मकान आदि की छत पर चढाने के लिये रस्सी देना १८। ये १८ प्रकारकी की चोरियां हैं ॥ ३ ॥

(पाइयंगुवंगा) ये परद्रव्यापहारी चोर हाथ पैर आदि अंगों में तथा अंगुली, केश, श्मश्रु दाढीमूछ आदि उपांगोंमें कभी भी अक्षत नहीं रहते हैं। (कलुणा) ये सदा पाप से मलिन बने रहते हैं। तथा (सुक्कोट्ठ कंठगलतालुजिब्भा) पानी के बिना ओष्ठ कंठ गला ताल तथा जिह्वा ये सब इसके शुष्क होते (सूकते) रहते हैं। (तण्हाइया) पिपासा से आकुलित होकर ये (पाणियं जायंता) "पानी लाओ पानी लाओ" इस प्रकार याचना करते हुए (विगयजीवियासा) कभी २ अपने जीवन की आशा से भी रहित हो जाते हैं। (वरागा) इन अभागों को (वज्झ-

દેવાં તે ક્રિયાને પથ્ય કહે છે, (૧૬) ભોજન બનાવવાને અગ્નિ આપવો, (૧૭) પીવાને માટે પાણી આપવું અને (૧૮) ચોરેલી ગાય, ભેંસ આદિને બાંધવા માટે અને મકાન આદિના છાપરા પર ચડવાને માટે દોરડું દેવું, એ ૧૮ (અઢાર) પ્રકારની ચોરી હોય છે. ॥૩॥

ટીકાર્થ—" पाइयंगुवगा " તે પરધનનું અપહરણ કરનારા ચોર લોકોના હાથ પગ આદિ અંગો, તથા આંગળીઓ, કેશ, નાક, કાન આદિ ઉપાંગો કદી પણ અક્ષત (છેદાયા વિનાના) હોતાં નથી " कलुणा " તેઓ પાપથી સદા મલિન રહે છે, તથા " सुकोट्ठकंठगलवालुजिब्भा " તેમના હોઠ, કંઠ, ગળું, તાળવું તથા જીભ પાણી વિના શુષ્ક (સૂકાયલા) રહે છે. " तण्हाइया " તરસથી વ્યાકુળ થઈને તે લોકો " पाणियं जायंता " " પાણી લાવો, પાણી, પાણી લાવો " એવી યાચના કરતા કરતા "विगय जीवियासा" ક્યારેક તો જીવવાની આશા પણ છોડી દે છે. "वरागा" તે બિચારાઓને "वज्झपुरिसेहिं" વધસ્થાન

प्रोटचमानाः=वध्ये=वध्यस्थाने=शूलारोपणस्थाने पुरुषैः=तत्र नियुक्तैः राजपुरुषैः ग्राह्यमाणाः=प्रेर्यमाणाः नीयमाना इत्यर्थः, 'तं पि य न लहंति' तदपि च न लभन्ते=जलमात्रमपि पातुं न प्राप्नुवन्ति, किमन्य? दित्यर्थः ॥ सू० १५ ॥

अपि च—'तत्थ य' इत्यादि।

मूलम्—तत्थ य खरफरुस-पडह-घट्टिया-कूडग्गहगाढरुट्ठनिसिट्ठ परामट्ठा वज्झकरकुडिजुयनिवासिया सुरत्तकणवीरगढियविमुकुल कंठे गुणवज्झ-दूय-आविद्धमल्लदामरण भयुप्पण्ण सेयआयतणे-हुत्तप्पियकिलिण्णगत्ताचुण्णगुंडियसरीररयरेणुभरियकेसा कुसंभ-गुक्किण्णमुद्धया छिण्णजीवियासा घुण्णंता वज्झपाणप्पिया तिलं-तिलं चेव छिज्जमाणासरीरविकत्तलोहिओ-लित्तकागणिमंसा-णिखावियंता पावा खरकरसएहिं तालिज्जमाणदेहा वातिगनर-नारिसंपरिवुडा पिच्छिज्जंता य नागरजणेण वज्झनेवत्थिया पणिज्जंति णगरमज्जेण किवणकलुणा अत्ताणा असरणा अणाहा अबंधवा बंधुविप्पहीणा विपिक्खंता दिसोदिसिमर-णभयुव्विग्गा अघायणपडिदुवारसंपाविया अधण्णा सूलग्ग-विलग्गभिण्णदेहा, ते य तत्थ कीरंति परिकप्पियंगुवंगा ॥सू०१६॥

टीका—'तत्थ य' तत्र च वध्यस्थाने 'खरफरुसपडहघट्टिया' खरफरुषपटहघट्टिताः—तत्र खरपरुष =शूलारोपणादि सङ्केतसूचकत्वादत्यन्तकठोरो यः पटहः='ढोल'

पुरिसेहिं) वध्यस्थान पर नियुक्त हुए पुरुष जब (घाडियंता) वध्यस्थान पर लेकर चलते हैं तो इन्हें वहां (तंपि य) एक बिंदु जल भी पीने को (न लहंति) नहीं मिलता है। ऐसी इनकी दशा बन जाती है ॥सू०१५॥

फिर भी कहते हैं—'तत्थ य' इत्यादि।

टीकार्थ—(तत्थ य खरफरुस पडहघट्टिया) वहां वध्यस्थान पर एक ढोल

પરનિયુક્ત થયેલ પુરુષો જ્યારે "घाडियंता" વધસ્થાન તરફ લઈ જાય છે, ત્યારે તેમને ત્યા "तंपि य" પીવાને પાણીનું એક ટીપું પણ "न लहंति" મળતું નથી. તેમની એવી દશા થાય છે ॥ સૂ. ૧૫ ॥

વળી સૂત્રકાર આગળ વર્ણન કરે છે–"तत्थ य" ઈત્યાદિ.

ટીકાર્થ—"तत्थयखरफरुसपडहघट्टिया" ત્યાં વધસ્થાને એક ઢોલ રહે છે.

इति भाषा प्रसिद्धस्तेन वाद्यमानेन सह राजपुरुषै नीयमानाः सन्तो घट्टिताः= वेत्र यष्टयादिभिस्ताडिताः मार्यमाणा इत्यर्थः, 'कूडग्गहगाढरुट्ठनिसिट्ठपरामट्ठा' कूटग्रहगाढरुष्टनिसृष्टपरामृष्टाः= तत्र कूटग्रहत्वात्=कूटेन=छलप्रपञ्चेन चौरस्य परधनग्राहित्वाद् गाढरुष्टैः= अतिक्रुद्धैः राजपुरुषैः निसृष्टा := अपहृतधनाः, निर्धना इत्यर्थः, पुनः परामृष्टाश्च=गृहीता ये ते तथा 'वज्झकरकुडिजुय निवसिया' वध्यकरकुटीयुगनिवसिताः = वध्यानां यत् करकुटीयुगं = निन्द्यवस्त्रविशेषद्वयं तन्निवसितं=परिधापितं येषां ते तथा वध्यवस्त्रधारिण इत्यर्थः, 'सुरत्तकणवीरगहियविमुकुलकंठे गुणलज्झदूय आविद्धमल्लदामा' सुरक्तकणवीरग्रथितविमुकुलकण्ठे

रहता है और जब जिसका शूलारोपण का होता है तब वह बजता है अतः शूलारोपण आदि संकेत का सूचक होने से वह खरपरुष–अत्यंत कठोर माना गया है, जैसे ही वह बजाता है कि राजपुरुष उस वध्य व्यक्ति को साथमें लेकर चल देतें हैं। और रास्ते में वे उनचोरों को वेत्र–यष्टयादि से ताडित भी करते जाते हैं। (कूडग्गहगाढरुट्ठनिसिट्ठ परामट्ठा) ये राजपुरुष उन चोरों पर(कूडग्गह) छलप्रपंच से परधन को अपहरण करने के कारण (गाढरुट्ठ) अत्यंत रुष्ट हो जाते हैं, और इसीसे (निसिट्ठ) अपहृत द्रव्य को छीन भी लेते है, और बाद में उन्हें (परामट्ठा) पकड़ लेते हैं (वज्झकर कुडि जुयनिवसिया) जब वे शूली पर उन्हें चढाने के लिये ले जाते हैं तो इसके पहिले उन्हें वे वध्यपुरुषों को (वज्झकरकुडिजुय) पहिराने के योग्य निंद्य दो वस्त्र (निवसिया) पहिरा देते हैं (सुरत्तकणवीरगहिय विमुकुल कंठे गुणवज्झ दूय आविद्ध-

જ્યારે કોઈને શૂળી પર ચડાવવાનો સમય થાય છે ત્યારે તે વગાડવામાં આવે છે. તેથી શૂલારોપણ આદિ સંકેત દર્શાવનાર હોવાથી તેને ખરપરુષ અત્યંત કઠોર કહેલ છે જેવો તે ઢોલ વાગે છે, કે તે રાજપુરુષો તે વધ્ય વ્યક્તિને લઈને ઉપડે છે, અને રસ્તામાં તે લોકો તે ચોરોને સોટી, લાકડી આદિથી ફટકારે છે "कूडग्गहगाढरुट्ठनिसिट्ठपरामट्ठा" તે રાજપુરુષો તે ચોરો પર "कूडग्गह" છળકપટથી પરધનનું હરણ કરવાને લીધે "गाढरुट्ठ" અત્યંત ક્રોધે ભરાય છે, અને તેમની પાસેથી તે લોકો "निसिट्ठ" ચોરેલા દ્રવ્યને છીનવી પણ લે છે અને પછી તેમને "परामट्ठा" પકડી લે છે "वज्झकरकुडिजुयनिवसिया" જ્યારે તેઓ તેમને શૂળીએ ચડાવવા લઈ જાય છે ત્યારે વધ્ય પુરુષોને પહેરાવવા "वज्झकरकुडिजुय" લાયક, બે નિંદ્ય વસ્ત્રો "निवसिया" તેમને પહેરાવે છે "सुरत्तकणवीरगहियविमुकुलकंठे गुणव-

गुणवध्यदूताविद्धमाल्यदामानः, तत्र सुरक्तैः कणवीरैः=पुष्पविशेषैः ग्रथितं= गुम्फितं विमुकुलं=विकासितं कण्ठे गुण इव=कण्ठसूत्रमिव तथा वध सूचकत्वात् वध्यदूतः=वधचिन्हम्,–आविद्धं=परिहितं माल्यदाम=पुष्पमाल्यं येषां ते तथा, 'मरणभयुप्पण्णसेयआयतणेहुत्तप्पियकिलिण्णगत्ता' मरणभयोत्पन्नस्वेदायतस्नेहोत्तपितक्लिन्नगात्राः, तत्र मरणभयादुत्पन्नेन स्वेदेन=प्रस्वेदेन आयतः=सर्वाङ्गे व्याप्तो यः स्नेहः= आर्द्रता तेनोत्तपितानि=सन्तप्तानि क्लिन्नानि=आर्द्रीकृतानि च गात्राणि=शरीराणि येषां ते तथा, मरणभयोत्पन्नप्रस्वेदार्द्रीभूतशरीरा इत्यर्थः, 'चुण्णगुंडियसरीरा' चूर्णगुण्डितशरीराः = 'चूना' इति भाषाप्रसिद्धचूर्णद्रव्यावगुण्ठितसर्वाङ्गाः, 'रयरेणुभरियकेसा' रजो रेणुभरितकेशाः=रजोरेणुभिः= धूलिभिर्भरिताः=संभृताः केशा येषां ते तथा, 'कुसंभगुक्किण्णमुद्धया' कुसम्भ-

मल्लदामा) (सुरत्तकणवीरगहिय) कनेर के लालफूलों से गूंथी हुई (विमुकुल) विकसित कंठे गुणकंठसूत्र तथा (वज्झदूय) वधसूचक होने से वध्यदूत–वधचिह्न स्वरूप ऐसी (आविद्धमल्लदामा) फूलमाल जिनको पहिनाई जाती है (मरणभयुप्पण्णसेयआयतणेहु त्तप्पिय किलिण्णगत्ता) (मरणभयुप्पण्णसेय) मरण के भय से उत्पन्न हुए स्वेद–पसीने से (आयतणेह) इनके अंग गीले हो जाते हैं इससे इनका शरीर (उत्तप्पिय) जलने लगता है जिससे (किलिण्णगत्ता) इनका सब शरीर पसीने से झरता रहता है(चुण्णगुंडियसरीरा) इनके शरीर पर चूना लपेट दिया जाता है जिससे अधिक जलन होती है। तथा (रयरेणुभरियकेसा) इनके केशों पर बाहर की धूलि उड़कर भर जाती है। कारण उनके पास उस समय ऐसे साधन नहीं होते हैं जिससे

ज्झदूयआविद्धमल्लदामा" "सुरत्तकणवीरगहिय" કરેણના લાલ ફૂલોમાથી ગૂંથેલી "विमुकुल" કંઠમાં રહેલા કંઠાભરણ જેવી, "वज्झदूय" વધ સૂચક હોવાથી–વધ્યદૂતવધચિહ્ન જેવી "आविद्ध मल्लदामा" ફૂલમાળા તેમને પહેરાવવામાં આવે છે "मरणभयुप्पण्णसेयआयतणेहुत्तप्पियकिलिण्णगत्ता" "मरणभयुप्पण्णसेय" મરણના ભયથી ઉત્પન્ન થયેલ પસીનાથી "आयतणेह" તેમનાં અંગ ભીના થાય છે, તે ભયથી તેમનાં શરીર "उत्तप्पिय" બળવાં લાગે છે, અને તે કારણે "किलिण्णगत्ता" તેમનું આખું શરીર તરબોળ થાય છે "चुण्णगुंडिय सरीरा" તેમનાં શરીર પર ચૂનો ચોપડ્યો હોય છે, જેથી શરીરમા વધારે બળતરા થાય છે, તથા "रयरेणुभरियकेसा" તેમના વાળમાં બહારની ધૂળ ઉડીને ભરાય છે, કારણ કે તે સમયે વાળ ઓળવાનાં સાધનો તેમની પાસે હોતાં નથી. "कुसुमगुक्किण्णमुद्धया" "कुसुंमग" કૌસુંબી

कोत्कीर्णमूर्धजाः=कुसुम्भकेन=रागविशेषेण उत्कीर्णाः=व्याप्ता मूर्धजाः केशा येषां ते तथा रक्तरागरञ्जितकेशधारिण इत्यर्थः, ' छिण्णजीवियासा ' छिन्नजीविताशाः =जीवनाशारहिताः ' घुण्णंता ' घूर्णमानाः=मरणभयव्याकुलत्वात् ' वज्झपाणप्पिया वध्यप्राणप्रियाः=वध्याः=हन्तव्या एव प्राणाः प्रियाः येषां ते तथा, ' तिलं तिलं चेव छिज्जमाणा ' तिलं तिलमिवच्छिद्यमानाः राजपुरुषैः प्रत्यङ्गोपाङ्गं त्रोटयमाना इत्यर्थः, ' सरीर विकत्तलोहिओलित्तकागणिमंसाणि खावियंता ' शरीरविकृत्तलोहितावलिप्तकाकणी मांसानि खाद्यमानाः, तत्र–चौरस्यैव शरीराद् विकृत्तानि= खण्डितानि लोहितावलिप्तानि यानि काकणी मांसानि=मांसखण्डानि तानि खाद्यमानाः राजपुरुषैः शस्त्रादिकर्तितस्वमांसखण्डानि खाद्यमाना इत्यर्थः, 'पावा' पपाः

केश संस्कारित किये जा सकें (कुसुंभमुक्किण्णमुद्धया) (कुसुंभग) कुसुम्भ रंग से (उक्किण्णमुद्धया) इनके केश रंजित कर दिये जाते हैं। (छिन्नजीवियासा) ये विचारे अपने आपको मानने लगते हैं कि अब हम थोड़ी देर में ही मरने वाले हैं, अतः इनके जीवन की आशा टूट जाती है। (घुण्णंता) मरणभय से व्याकुल होने के कारण इनका दिमाग चिकर खाने घूमने लग जाता है। (वज्झपाणप्पिया) इन्हें वध्य–मारे जाने वाले अपने प्राण ही बड़े प्रिय होते हैं। अर्थात् उस समय इन्हें कोई भी वस्तु प्रिय नहीं होती है, केवल अपने प्राण ही–जो कुछ देर बाद नष्ट हो जानेवाले हैं–सबसे अधिक प्रिय लगते हैं। (तिलं तिलं चेव छिज्जमाणा) राजपुरुष इनके अंगोंपांगों को तिल तिल की तरह काट २ कर अलग २ कर डालते हैं। (सरीरविकत्तलोहिओलित्तकागणिमंसाणि खावियंता) वे राजपुरुष (सरीराविकत्त) काटे गये इनके शरीर से निकले हुए (लोहिओवलित्त) लोही से लिप्त ऐसे (कागणिमंसाणि) मांस के छोटे छोटे टुकड़ों को (खावियंता) उन्हें खिलाते हैं (पावा)

રંગથી " उक्किण्णमुद्धया " તેમના વાળ રંગી નાખવામાં આવે છે. " छिन्नजीवियासा " તે બિચારા સમજી જાય છે કે હવે અમે થોડા સમયના મહેમાન છીએ, એટલે કે તેમની જીવવાની આશા તૂટી જાય છે घुण्णंता " મોતના ભયથી વ્યાકુળ થવાથી તેમના મગજ ચક્કર ચક્કર ઘૂમવા લાગે છે " वज्झपाणप्पिया " તેને વધ્ય—જેનો વધ થવાનો છે તેને પોતાના પ્રાણ જ સૌથી વહાલા લાગે છે, એટલે કે તે સમયે તેને બીજી કોઇ પણ ચીજ ગમતી નથી, પણ થોડા સમય પછી જેનો નાશ થવાનો છે તે પ્રાણ જ સૌથી વધારે પ્રિય લાગે છે. " तिलंतिल चेव छिज्जमाणा " રાજ પુરુષો તો તેમના અંગ ઉપાંગોના તલ તલ જેવડા ટુકડા કરે છે " सरीरविकत्तलोहिओलित्तकागणिमंसाणिखाविंयंता " તે રાજપુરુષો લોહીથી ખરડાયેલા માંસના નાના ટુકડાઓ તેમને ખવ-

पापिनः ' खरकरसएहिं तालिज्जमाणदेहा ' खरकरशतैस्ताड्यमानदेहाः=अतिचिक्कणपाषाणभृतचर्मकोशशतैः 'कंकरभरे चाबुक' इति भाषाप्रसिद्धैः ताड्यमानदेहा =ताड्यमानशरीराः तथा 'वातिगनरनारिसंपरिवुडा' वातिक नरनारीसम्परिवृताः तत्र-वातिकैः=उच्छृङ्खलैः नरैर्नारीमिश्रैः संपरिवृताः=युक्ताः मर्यादावर्जितनरनारीवृन्दवेष्टिता इत्यर्थः, ' पिच्छिज्जंता य नागरजणेण ' नागरजनेन द्रष्टुं समागतेन प्रेक्ष्यमानाः ' वज्झनेवत्थिया ' वध्यनेपथ्यिकाः=वधयोग्यं नेपथ्यं येषां ते वधनेपथ्यिकाः=परिधृतवधातवस्त्रवेषाः, ' णगरमज्झेण' नगरमध्येन=पुरमध्यभागमार्गेण 'पणिज्जंति ' प्रणीयन्ते=नीयन्ते ' किविणकलुणा' कृपणकरुणा =कृपणेष्वपि करुणा अतिदीना इत्यर्थः, 'अत्ताणा ' अत्राणा=त्राणवर्जिताः अनर्थनिवारकाभावात् ' असरणा ' अशरणाः=शरणहीनाः-योगक्षेमकारिरहितत्वात् अतएव 'अणाहा ' अनाथाः=नाथवर्जिता ' अबंधवा ' अबान्धवाः=बान्धवरहिताः तथा

ये बड़े अधिक पापी होते हैं। (खरकरसएहिं) अतिचिक्कण पाषाण-खंडों से भरे हुए ऐसे सैकड़ों कोड़ों की (तालिज्जमाणदेहा) इनके शरीर पर मारपड़ती है। तथा (वातिगनरनारिसंपरिवुडा) मर्यादा वर्जित नरनारि गण से ये वेष्टित रहते हैं। (पिच्छिज्जंता य नागरजणेण) इन्हें देखनेके लिये नागरिकजन आते हैं। (वज्झ नेवत्थिया) इनकी वेश-भूषा वध्ययोग्य होती है। (णगरमज्झेण पणिज्जंति) राजपुरुष इन्हें नगर के भीतर से होकर ही निकालते हैं। (किविणकलुणा) उस समय ये दीनों से भी अतिदीन होते हैं (अत्ताणा) अनर्थ को निवारण करने वाला कोई नहीं होने से इनकी कोई रक्षा करने वाला नहीं होता है, इसलिये ये अत्राण होते हैं, (असरणा) योग, क्षेमकारी पुरुष से रहित होनेके कारण ये अशरण-शरण हीन होते हैं। (अणाहा) अनाथ रक्षकके अभाव से ये अनाथ होते हैं, तथा (अबंधवा) बंधुओं के अभाव से

રાવે । . "पावा" તે ઘણા જ પાપી હોય છે "खरकरसएहिं" અતિશય ચિકણા પત્થરના ટુકડાઓથી ભરેલા સેંકડો કોરડાઓનો "तालिज्जमाणदेहा" તેમનાં શરીર પર માર પડે છે. તથા "वातिगनरनारिसंपरिवुडा" મર્યાદા રહિત સ્ત્રી પુરુષોના સમૂહથી તેઓ વીંટળાયેલા રહે છે "पिच्छिज्जता य नागरजणेण" તેમને જોવાને માટે નાગરિકો આવ્યા કરે છે "वज्झनेवत्थिया" તેનો પોષાક વધ્યને યોગ્ય હોયછે. "णगरमज्झेण पणिज्जति" રાજપુરુષો તેમને નગરની વચ્ચે થઈને લઇ જાય છે "किविणकलुणा" ત્યારે તે લોકોને અતિશય દીનદશા અનુભવે છે. "अत्ताणा" તે યાતનામાંથી તેમને બચાવનાર કોઇ ન હોવાથી તે લોકો अत्राणा રક્ષણવગરના હોય છે, "असरणा" તેમને શરણુ આપનાર કોઈ પુરુષ ન હોવાથી તેઓ અશરણ હોય છે. "अणाहा" રક્ષકને અભાવે તેઓ અનાથ હોય છે, "अबंधवा"

'बंधुविप्पहीणा' बन्धुविप्रहीणाः=बन्धुवियुक्ताः, 'दिसोदिसिं विपिक्खंता' दिशो दिशं विप्रेक्षमाणाः=एकस्या दिशोऽन्यां दिश पश्यन्तः 'मरणभयुव्विग्गा' मरण-भयोद्विग्नाः=मृत्युभयव्याकुलाः='आघायणपडिदुवारसंपाविया' आघातनप्रतिद्वार-संप्रापिताः=आघातनप्रतिद्वारं=वध्यभूमिद्वारं तत्र संप्रापिताः=नीता ये ते तथा, 'अधण्णा' अधन्याः=भाग्यहीनाः अदत्तादायित्वात्, 'सूलग्गविलग्गभिण्णदेहा' शूलाग्रविलग्नभिन्नदेहाः, तत्र-शूलाग्रे विलग्नः=आरोपणेन संलग्नः भिन्नश्च देहो येषां ते तथा 'ते य' ते च=अदत्तादायिनः 'तत्थ' तत्र=घातनद्वारे वधबन्ध-मारणनिर्भर्त्सनशूलारोपणादि यातनास्थाने 'परिकप्पियंगुवंगा' परिकल्पिता-ङ्गोपाङ्गाः कर्त्रीप्रभृतिशस्त्रैः कर्त्तितकर्णनासिकाद्यवयवाः 'कीरंति' क्रियन्ते, दण्डविधायिराजपुरुषैरिति ॥ सू० १६ ॥

ये बिना बंधु के होते हैं। (बंधुविप्पहीणा) बांधवजन होने पर भी वे इन्हें छोड़ देते हैं। इसलिये ये बन्धु हीन होते हैं (दिसोदिसं विपेक्खंता) विचारे ये एक दिशा से दूसरी दिशा का ही अवलोकन करते रहते हैं और (मरणभयुव्विग्गा) मृत्यु के भय से व्याकुल बने रहते हैं। इस तरह की स्थिति संपन्न बने हुए इन अदत्तादायी जनों को वे राजपुरुष लाकर (आघायणपडिदुवार संपाविया) वध्यभूमि के द्वार पर उपस्थित कर दिये जाते हैं। क्यों कि (अधण्णा) ये अदत्तग्राही जन अभागे होते हैं। (सूलग्गविलग्गभिण्णदेहा) इन चौरों का शरीर शूल के अग्रभाग पर आरोपित कर देने के कारण छिन्न भिन्न हो जाता है। (ते य तत्थ) वहां उस वध, बंध, मालण, निर्भर्त्सन, शूलारोपण आदि यातना के स्थानमें उनके (परिकप्पियंगुवंगा) अंग एवं उपांग अर्थात् नाक कान आदिको कैंची आदि शस्त्रों से काट दिये जाते हैं ॥ सू-१६ ॥

બંધુઓને અભાવે તેઓ અબન્ધુ હોય છે "बंधुविप्पहीणा" બંધુજનો હોય તો પણ તેમના દ્વારા તેમનો ત્યાગ કરાય છે, "दिसोदिसं विपेक्खंता" એવી પરિસ્થિતિમાં તે બિચારા એક દિશા તરફથી બીજી દિશા તરફ જોયા કરે છે. અને "मरणभयुव्विग्गा" મરણના ભયથી વ્યાકુળ બને છે આ પ્રકારની સ્થિતિમાં મૂકાયેલા તે ચોરોને રાજપુરુષો લાવીને "आघायणपडिदुवारसंपाविया" વધસ્થાનનાં દરવાજે હાજર કરે છે કારણ કે "अधण्णा" તે અદત્ત-ગ્રાહી-ચોર લોકો કમનસીબ હોય છે "सूलग्गविलग्गभिण्णदेहा" તે ચોરોનાં શરીર શૂળીના અણીદાર ભાગો પર ચડાવવાને કારણે છિન્ન ભિન્ન થઈ જાય છે. અને "ते य तत्थ" ત્યાં તે વધ, બંધ, મારણ, નિર્ભર્ત્સન, શૂલારોપણ આદિ યાતના દેવાને સ્થાને તેમનાં 'परिकप्पियंगुवंगा" અંગોપાંગો, એટલે કે નાક, કાન આદિને કાતર આદિ શસ્ત્રો વડે કાપી નાખવામાં આવે છે. ॥સૂ ૧૬॥

पुनरप्यदत्तादायिनो यथाफलं प्राप्नुवन्ति तदाह—' केइ ' इत्यादि ।

मूलम्—केइ उल्लं बिज्जंति रुक्खसालेहिं कलुणाइ विलवमाणा । अवरे चउरंगधणि य बद्धा पव्वयकडगा पमुच्चंते दूरपातबहुविसमपत्थरसहा । अण्णे य गयचलणमिलण निम्मद्दिया कीरंति । पावकारी अट्ठारस खंडिया य कीरंति मुंडपरसुहिं । केइ उक्खित्तकण्णोट्ठनासा उप्पाडिथनयण - दसण वसणा जिब्भिंदियं छिया छिण्णकण्णसिरा पणिज्जंति । छिज्जंति य असिणा निव्विसया छिण्णहत्थपाया य पमुच्चंति।जाव जीवबंधणाय कीरंति । केइ परदव्वहरणलुद्धा कारग्गलनियल—जुयलरुद्धा चारगालये हयसारा सयणविप्पमुक्का मित्तजण निरक्खिया निरासा बहुजण धिक्कारसद्दलज्जाइया अलज्जा अणुबद्ध खुहापरद्धा सीउण्ह तण्हवेयणदुघट्टघट्टिया विवण्णमुहविच्छविया विहलमालिण दुब्बला किलंता कासंता वाहिया य आमाभिभूयगत्ता परूढ नहकेसमंसुरोमामलमुत्तम्मि णियगम्मि खुत्ता तत्थेव मया अकामना वंधिऊण पाएसु कड्डिया खाइयाए छूढा, तत्थ य विग—सुणय—सियाल—कोलमज्जार—वंद संडासतुंडपक्खिगण—विविहमुहसय—विलुत्तगत्ता कयविहंगा । केई किमिजाय कुहिय देहा अणिट्ठ वयणेहिं सप्पमाणा सुट्ठुकयं जं मओ त्ति पावो तुट्ठेण जणेण हयमाणा लज्जावणगा य हुंति सयणस्स वि य दीहकालं ॥ सू० १७ ॥

टीका—केइ ' केचित्=अदत्तादायिनः महाकष्टानुभवनेन ' कलुणाइ विलवमाणा' करुणानि वचनानि विलपन्तः 'रुक्खसालेहिं' वृक्षशाखासु 'उल्लं विज्जंति' उल्लम्ब्यन्ते=रज्ज्वादिभिर्गलेवन्धनेन वृक्षशाखासु आरोप्यन्ते इत्यर्थः । ' अवरे, अपरे केचनाऽदत्तादायिनः ' चउरंगधणियबद्धा ' चतुरङ्गधणियबद्धाः = चतुर-

ङ्गानि=हस्तद्वयपादद्वयरूपाणि 'धणियं' अत्यर्थं बद्धानि येषां ते तथा दृढबद्धहस्तपादाः, 'पव्वयकडगापमुच्चंते' पर्वतकटकात् प्रमुच्यन्ते=गिरिशिखरान्निपात्यन्तेऽत एव 'दूरपातबहुविसमपत्थरसहा' दूरपातबहुविषमप्रस्तरसहाः = बहुविषमेषु= अत्यन्तविषमेषु निम्नोन्नतेषु प्रस्तरेषु=पाषाणेषु यो दूरात् पातः निपतनं तं सहन्ते ये ते तथा भवन्ति। 'अण्णेय' अन्ये च 'गयचलणमलणनिम्मद्दिया कीरंति' गजचरणमलननिर्मर्दिताः, तत्र – गजचरणेन=हस्तिपादेन यन्मलनं=मर्दनं तेन निर्मर्दिताः=सम्मर्दितशरीराः क्रियन्ते। तथा 'पावकारी' पापकारिणः

फिर वे अदत्तग्राही चोर जिस फल को पाते हैं–'केइ' इत्यादि।

टीकार्थ–(केइ) कितनेक अदत्तग्राही मनुष्य (कलुणाइ विलवमाणा) महाकष्टोंको भोगनेके कारण करुणवचनों से विलाप करते हुए (रुक्खसालेहिं) वृक्षोंकी शाखाओं में (उल्लं बिज्जंति) रस्सी आदि से बांधकर लटका दिये जाते हैं। तथा (अवरे) कितनेक अदत्तग्राही मनुष्य (चउरंग धणियबद्धा) दोनों हाथ पैर खूब जकड़ कर बांधकर (पव्वयकडगा) पर्वत की चोटी से (पमुचंते) गिरा दिये जाते हैं, अतः वे (दूरपातविसमपत्थरसहा) वहां से गिर कर नीचे ऊँचे पत्थरों पर बहुत दूरतक गुडकते आने के कारण शरीर में बहुत बुरी तरह छुल जाते हैं। इस तरह वे महाभयंकर वेदना को सहन करते हैं। (अण्णे य) कितनेक अदत्तग्राही चोर (गयचलणमलणनिम्मद्दिया) हाथी के पैरों के तले डाल कर मर्दित (कीरंति) करवाये जाते हैं। इस तरह उनके शरीर

તે અદત્તાગ્રાહી ચોર જે ફળ પામે છે તેનુ વધું વર્ણન કરે છે–"केइ" ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ– "केइ" કેટલાક અદત્તાગ્રાહી માણુસોને "कलुणाइविलवमाणा" મહાકષ્ટો ભોગવવાને કારણે કરુણ વચનોથી વિલાપ કરતા "रुक्खसालेहिं" વૃક્ષની ડાળીઓ પર "उल्लंबिज्जंति" દોરડા આદિથી બાધીને લટકાવી દેવામાં આવે છે. તથા "अवरे" કેટલાક અદત્તગ્રાહી માણુસોને "चउरंगधणियबद्धा" બન્ને હાથ પગને મજબૂત બાંધીને "पव्वकडगा" પર્વતની ટોચેથી "पमुच्चंते" નીચે હડસેલી દેવામા આવે છે, તેથી "दूरपातविसमपत्थरसहा" ત્યાથી ઊંચા નીચા. પથ્થર ગબડાવાને કારણે તેમના શરીર ખરાબ રીતે છોલાઈ જાય છે અને તે રીતે તે લોકો અતિ ભયંકર વેદના સહન કરે છે. તથા "अण्णेय" કેટલાક અદત્તગ્રાહી ચોરોને "गयचलणमलणनिमद्दिया" હાથીના પગ નીચે નાખીને "कीरंति" કચડાવવામાં આવે છે. એ રીતે હાથીના પગ નીચે કચ-

'मुंडपरसुहिं' मुण्डपरशुभिः=भग्नधारकुठारैः 'अट्ठारसखंडिया' अष्टादश-स्थानेषु खण्डिता क्रियन्ते कर्ण=नयन–नासिकौ–ष्ठ–कर–चरणानां द्वयं द्वयमिति द्वादश, जिह्वा–ग्रीवा–कण्ठ–पृष्ठ–वक्षः स्थल–गुह्येन्द्रियमिति षड्मिलित्वाऽष्टादश-स्थानानि भवन्ति। तथा 'केइ' केचित् 'उक्कत्तकण्णोट्ठनासा' उत्कृत्तकर्णौष्ठनासाः= उत्कृत्ताः=छिन्नाः कर्णः ओष्ठः नासा=नासिका च येषां ते तथा 'उप्पाडिनयण-दसणवसणा' उत्पाटितनयनदशनवृषणाः, तत्र–उत्पाटितानि=उन्मूलितानि नय-नानि दशनाः=दन्ताः वृषणाः=अण्डकोशा येषां ते तथा 'जिब्भिदियंचिया' जिह्वेन्द्रियाञ्चिताः जिह्वेन्द्रियं=अञ्चितं=गमितम्–आकृष्टं येषां ते तथा आकृष्ट-जिह्वेन्द्रियाः 'छिण्णकण्णसिरा' छिन्नकर्णशिराः=छिन्नकर्णनाड्यः, 'पणिज्जंति' प्रणीयन्ते=शूलाद्यारोपणाय वध्यभूमौ नीयन्ते। केचित् 'असिणा छिज्जंति'

हाथी के पैरों से मर्दित होने के कारण हड्डिपसलियां चूर–चूर हो जाती है और वे बड़े दुःखी होते हैं। तथा कितनेक (पावकारी) पाप-कारी अदत्तग्राही जन (मुंडपरसुहिं) भग्न धार वाले कुठारों से अट्ठा-रह स्थानों में–कर्ण २, नासिका २, नयन २, ओष्ठ २, कर२, चरण २, (१२) जिह्वा १३, ग्रीवा १४, कंठ १५, पृष्ठ १६, वक्षस्थल १७, एवं गुह्ये-न्द्रिय १८, में–बड़ी बुरी तरह से खंडित कर दिये जाते हैं। तथा (केइ) कितनेक चोरों के (उक्कत्तकण्णोट्ठनासा) कान नाक एवं ओंठ काट दिये जाते हैं तथा (उप्पाडियनयणदसणवसणा) नेत्र फोड़ दिये जाते हैं दांत और अंडकोश उखाड़ लिये जाते हैं। (जिब्भिदियंचिया) जीभ खेंच ली जाती है। (छिण्णकण्णसिरा) कान की नसें तोड़ दी जाती हैं। एवं इस तरह की स्थिति में करके चोरों को वे राजपुरुष (पणिज्जंति)

રવાને કારણે તેમનાં શરીરના હાડકા અને પાંસળીઓના ચૂરે ચૂરા થઇ જવાથી તે લોકો ઘણી પીડા અનુભવે છે તથા કેટલાક "पावकारी" પાપી અદત્તગ્રાહી લોકોને "मुंडपरसुहिं" ધાર વગરની (બુઠી)કુહાડીઓથી "अट्ठारसखंडिया" અઢાર જગ્યાએ ઘણીજ ખરાબ રીતે મારવામા આવે છે. તે અઢાર અંગો આ પ્રમાણે છે કાન ૨, નાસિકા ૨, નયન ૨, હોઠ. ૨, હાથ ૨, પગ ૨, જીભ, ગ્રીવા, કંઠ, પૃષ્ઠ, વક્ષસ્થલ, અને ગુહ્યેન્દ્રિય, તથા "केइ" કેટલાક ચોરોના "उक्कत्तकण्णोट्ठनासा" કાન, નાક અને હોઠ કાપી નાખવામાં આવે છે તથા "उप्पाडियनयणदसणवसणा" આંખો ફોડી નાખે છે, દાંત અને ગુપ્ત અંગ ઉખેડી નાખે છે, "जिब्भिदियंचिया" જીભ ખેંચી કાઢવામાં આવે છે, "छिण्णकण्णसिरा" કાનની નસો તોડી નાખવામા આવે છે. તેમની એવી હાલત કરીને રાજપુરુષો તે ચોરોને "पणिज्जंति" શૂળી પર ચડાવવાને લઇ

असिना=खड्गेन छिद्यन्ते=खण्डशः क्रियन्ते । तथा 'निव्विसिया' निर्विषयाः= विषयात् देशान्निष्कासिताः क्रियन्ते । केचित् 'छिण्णहत्थपाया य' छिन्नहस्त-पादाश्च 'पमुच्चंति' प्रमुच्यन्ते, राजकिङ्करैर्हस्तपाद छित्वा त्यज्यन्त इत्यर्थः । केचित् 'जावजीवबंधणा य कीरंति' यावज्जीवबन्धनाश्च क्रियन्ते=जीवनपर्यन्तं कारागारे बध्यन्ते । 'केइ परदव्वहरणलुद्धा' केचित् परद्रव्यहरणलुब्धाः-पापिनः 'चारगालये' चारकालये=कारागारे 'कारग्गलनियलजुयलरुद्धा' कारार्गलानिगडयुगलरुद्धाः=कारार्गलया=कारागृहार्गलया निगडयुगलेन=लोह-शृङ्खलाद्वयेन रुद्धा=नियन्त्रिताः भवन्ति । कथंभूताः ? इत्याह—'हयसारा' हतसाराः = अपहृतद्रव्याः । पुनः कीदृशाः 'सयणविप्पमुक्का' स्वजनवि-प्रमुक्ताः = स्वकीयज्ञातिविरहिताः "मित्तजणनिरक्किया" मित्रजननिराकृताः

शूली पर चढाने के लिये ले जाते हैं। कितनेक चोर उन राजपुरुषोंद्वारा (असिणा छिज्जंति) तलवारों से काटे जाते हैं (निव्विसया) कितनेक देश से बाहर निकाल दिये जाते हैं। और (छिण्णहत्थपायाय) कितनेक हाथ पैरों को काट कर यों ही (पमुचंति) छोड़ दिये जाते हैं। तथा कितनेक (जावज्जीव बंधणा य कीरंति) जीवन पर्यंत कारावास में ही रख दिये जाते हैं। (केइ परदव्वहरणलुद्धा) तथा परद्रव्यहरण करने में लुब्धक बने हुए कितनेक चोर (करग्गलनियलजुयल रुद्धा) कारागार की अर्गला के साथ लोह की जंजीरों से जकड़कर (चरगालये) कारागार में ही बंद कर दिये जाते हैं। (हयसारा) इनका द्रव्य समस्त रूप से अपहृत कर लिया जाता है। (सयणविप्पमुक्का) इनके किसी भी स्वजन से इन्हें नहीं मिलने दिया जाता है। (मित्तजणनिरक्किया) इनके

જાય છે. કેટલાક ચોર તે રાજસેવકો દ્વારા "असिणा छिज्जंति" તલવારોથી કપાઇ જાય છે, "निव्विसया" કેટલાક દેશમાંથી હાંકી કાઢવામાં આવે છે, અને "छिण्ण हत्थपाया य" કેટલાકને હાથપગ કાપી નાખીને "पमुच्चति" છોડી મૂકવામાં આવે છે. તથા "जावज्जीवबंधणाय कीरंति કેટલાકને જીવે ત્યાં સુધી કારાગૃહમાં પૂરી રાખે છે "केइ परदव्वहरणलुद्धा" તથા પરધનનું અપહરણ કરવાની લાલસા વાળા કેટલાક ચોરોને "करगालनियलजुयलरुद्धा" કારાગૃહના આંગળીયા સાથે લોઢાની સાંકળોથી બાંધીને "चरगालये" કારા-ગારમાં જ કેદ રાખવામાં આવે છે. "हयसारा" તેમનું સઘળું દ્રવ્ય જપ્ત કરવામાં આવે છે. "सयणविप्पमुक्का" તેમના કોઈ પણ સ્વજનની મુલાકાત તેમની સાથે થવા દેતા નથી, "मित्तजणनिरक्किया" તેમના મિત્રો પણ

मित्रैस्त्यक्ताः 'निरासा' निराशाः = जीवनाद्याशारहिताः 'बहुजण-धिक्कारसद्दलज्जाइया' बहुजनधिक्कारशब्दलज्जायिताः=बहूनां जनानां धिक्कार-वचनैः लज्जायिताः=लज्जा भाविताः तथापि अलज्जाः = निर्लज्जाः धृष्ट-त्वात् 'अणुबद्धखुहापरद्धा' अनुबद्धक्षुधापराद्धाः=अनुबद्धक्षुधया=सततबुभुक्षया अपराद्धाः=पीडिताः 'सीउण्हतण्हवेयणदुघट्टघट्टिया' शीतोष्णतृष्णावेदनादुर्घट्ट घट्टिताः, तत्र शीतेन उष्णेन तथा तृष्णया=पिपासया क्षुधयाच या दुर्घटाः= असह्याः वेदनाः=पीडास्ताभिः - दुर्घट्टं=अतिविकटम्-अतिशयेन घट्टिताः =पी-डिताः 'विवण्णमुहविच्छविया' विवर्णमुखविच्छविकाः = तत्र विवर्णं मुखं= वि-रूपयुक्तं मुखं येषां ते तथा विच्छविकाः = कान्तिरहिता निस्तेजसः । 'वि-हलमलिणदुब्बला' विफलमलिनदुर्बलाः=तत्र विफला=कारागारे निर्यातना-दनिष्टफलाः मलिनाः=मलिनवदना दुर्बलाश्च=शक्तिरहिता ये ते तथा 'किलता'

मित्रजन भी इन्हें छोड़ देते हैं। (निरासा) ये चोर वहां जीवत पर्यन्त रहने के कारण अपने जीवन की आशा छोड़ देते हैं। (बहुजणधिक्कार सद्दलज्जाइया) अनेक जनों द्वारा धिक्कार के शब्दों से ये लज्जित किये जाते हैं। फिर भी इन्हें जैसी लज्जा आनी चाहिये वैसी नहीं आती है। कारण ये बहुत अधिक धृष्ट बन जाते हैं। (अणुबद्धखुहापरद्धा) रातदिन ये क्षुधा से पीडित बने रहते हैं। (सीउण्हतण्हवेयणदुगट्टघट्टिया) शीत, उष्ण, तृष्णा, क्षुधा जन्य असह्यवेदनाओंसे ये सदा (दुघट्टघट्टिया) अत्यन्त दुःखित बने रहते हैं। (विवण्णमुहविच्छविया) इनका मुख सदा कुम्हलाया हुआ रहता है और कांति भी इनकी मलिन रहती है। (विहलमलिणदुब्बला) कारागार में बंद रहने के कारण ये (विहल) अनिष्ट फलवाले होते हैं-अर्थात् जो ये चाहते हैं वह इन्हें नहीं मिलता

તેમનો ત્યાગ કરે છે. "निरासा" તે ચોરો ત્યાં જીવન સુધી રહેવાના કારણે પોતાના જીવવાની આશા છોડી દે છે. "बहुजणधिक्कारसद्दलज्जाइया" અનેક લોકો ધિક્કારના શબ્દોથી તેમને શરમિંદા કરે છે, છતાંપણ તેમને એવી શરમ થતી નથી, કારણ કે તેઓ ધૃષ્ટ થઈ ગયા હોય છે, "अणुबद्धखुहापरद्धा" રાત દિવસ તે ભૂખથી પીડાયા કરે છે "सीउण्हतण्हवेयणदुघट्टघट्टिया" ઠંડી, ગરમી, ક્ષુધા તૃષા આદિની અસહ્ય વેદનાથી તેઓ સદા "दुघट्टघट्टिया" અત્યંત દુ ખી રહે છે "विवण्णमुहविच्छविया" તેમનું મુખ સદા મ્લાન-ઉદાસ રહે છે અને તેમની કાંતિ પણ મલિન રહે છે "विहलमलिणदुब्बला" કારાગૃહમાં કેદ રહેવાને કારણે તેઓ "विहल" અનિષ્ટ ફળવાળા હોય છે, એટલે કે તેઓ

क्लान्ताः ग्लानाः ' कासंता ' काशमानाः कासरोगेण ' खूं खूं ' इति शब्दायमानाः ' वाहिया य ' व्याधिताश्च=कुष्ठादिविविधरोगपीडिताः, ' आमाभिभूयगत्ता ' आमाभिभूतगात्राः=आमैः = भुक्तान्नाऽपरिपाकजनितैरतीसारादी नानारोगैरभिभूतानी गात्राणि=शरीराणि येषां ते तथा । ' परूढनहकेसमंसुरोमा ' प्ररूढनखकेशश्मश्रुरोमाणः, तत्र प्ररूढाः । असंस्कारात् प्रवृद्धाः नखाः केशाः श्मश्रूणि=मुखजातानि 'दाढी' इति भाषा प्रसिद्धानि रोमाणि च येषां ते तथा 'मलमुत्तम्मि णियगम्मि खुत्ता' निजके मलमूत्रे खुत्ता=स्वकीये पुरीषमूत्रे 'खुत्ता' निमग्नाः ' खुत्ता ' इति देशी शब्दः, कारागारे बद्धाः अन्यत्र गन्तुमशक्यत्वात् स्वकृतमलमूत्रपुरीषपङ्क एव निमग्नास्तिष्ठन्त्यद तत्राहिण इत्यर्थः । तथा ' अकामगा ' अकामकाः = मरणेच्छारहिताः ' तत्थेव मया तत्रैव कारागृहे मृताः सन्तः

है । (मलिण) ये मलिन वदन एवं (दुब्बला) शक्तिविहीन बने रहते हैं । (किलंता) ग्लान रहते हैं । तथा (कासंता) कासरोग से " खूं-खूं " इस प्रकार का शब्द इनके मुख से निकलने लगता है । और (वाहिया य) कुष्ठादि विविध रोगों से ये पीडित होते हैं (आमाभिभूयगत्ता) इनका शरीर अतिसार आदि नाना प्रकार के रोगों का घर बन जाता है । (परूढनहकेसमंसुरोमा) नख, केश, तथा श्मश्रु-दाढी के बाल समारे नहीं जानेके कारण बहुत बढ़ जाते हैं । और (नियगम्मि-मलमुत्तम्मि) इनकी हालत अधिक गंभीर बन जाती है कि जिससे कारागार में बद्ध ये बिचारे अन्य जगह जाने में असमर्थ होने के कारण अपने ही मलमूत्र में (खुत्ता) भरे हुए पड़े रहते हैं । तथा (अकामगा) नहीं इच्छा होने पर भी (तत्थेव) उसी में पड़े पड़े वहीं पर (मया)

જે વસ્તુની ઇચ્છા કરે તે વસ્તુ તેમને મળતી નથી " मलिण " તે લોકો મલિન વદન વાળા તથા "दुब्बला" શક્તિ વિનાના થઈ જાય છે, " किलंता " ગ્લાનિયુક્ત રહે છે, તથા " कासंता " ઉધરસને કારણે " ખૂં-ખૂં " કર્યા કરતાં હોય છે અને " वाहियाय " તે લોકો કોઢ આદિ અનેક રોગોથી પીડાતાં હોય છે " आमाभिभूयगत्ता " તેમનાં શરીર અતિસાર આદિ વિવિધ રોગોનાં ઘર બની જાય છે, " परूढनहकेसमंसुरोमा " નખ, કેશ તથા દાઢીના વાળ નહીં કપાતા હોવાથી ઘણાજ વધી જાય છે અને " नियगम्मि मलमुत्तम्मि " તેમની હાલત એવી ગંભીર થઇ જાય છે કે, કારાગૃહમાં પૂરાયેલા તે લોકો બીજી જગ્યાએ જવાને અસમર્થ હોવાથી પોતાના જ મળમૂત્રમાં " खुत्ता " ભરાઇ રહે છે. તથા " अकामगा " ઇચ્છા ન હોવા છતાં પણ " तत्थेव " ત્યાંજ પડ્યા પડ્યા " मया " મરી જાય છે. ત્યાર બાદ " बधि-

'बंधिऊणपाएसु कड्ढिया' पादेषु बद्ध्वा कृष्टाः=रज्ज्वादिभिर्हस्तपादबन्धनेन कृष्टाः = वहिर्निष्कासिता 'खाइयाए छूढा' खातायां छूढाः क्षिप्ताः = गर्ते चाण्डालादिभि प्रक्षिप्ताः क्रियन्ते। 'तत्थय' तत्र च विगसुणयसियालकोलमज्जारवंदसंडासतुंडपक्खिगणविविहमुहसयविलुत्तगत्ता' वृक-शुनक-शृगाल-कोल-मार्जार वृन्द-संडासतुण्डपक्षिगणविविधमुखशतविलुप्तगात्राः, तत्र 'विग' वृकाः = 'वरगडा' इति भाषा प्रसिद्धाः, 'सुणय' शुनकाः = कक्कुराः 'सियाल' शृगालाः कोलाः शूकरा' मार्जाराः, तेषां वृन्दं समूहस्तेन तथा संदंश-तुण्डैः = संदंशवत्तीक्ष्णमुखतुण्डैः-पक्षिगणानां=काकादीनां विविधमुखशतैश्च विलुप्तानि=निःशेषेण खादितत्वाद् अलक्षितानि गात्राणि येषां ते तथा वृककुकुर-शृगालादिभिः विविधपक्षिगणैश्च भक्षितशरीराः 'कयविहंगा' कृतविभङ्गाः= वृकादिभिरेव खण्डशः कृता । तथा 'केइ' केचित् मृतेभ्योऽन्ये 'किमि-

---

मर जाते हैं। बाद में (बंधिऊणपाएसु) रज्जु आदि से पैर बांधकर (इन्हें चांडाल आदि जन (कड्ढिया) बाहर निकाल कर (खाइयाए छूढा) किसी खड्डे में ले जाकर पटक देते हैं। (तत्थ य) वहां फिर उनके कलेवरों को (विगसुणयसियालकोलमज्जारवंदसंडासतुंडपक्खिगणविविहमुहसयविलुत्तगत्ता) (विग) वृक-वगेरे, (सुणय) शुनक-कुत्ते, (सियाल) श्रगाल, (कोल) सुअर, (मज्जार वंद) मार्जार-वन विलाव आदि हिंसक जानवरों के (वृन्द-समूह) एवं (संडासतुंडपक्खिगण) संडासी के जैसे तीक्ष्ण तुण्डवाले गृद्ध आदि पक्षियों के समूह (विविहमुहसय) नाना प्रकारके सैकडों मुखों से (विलुत्तगत्ता) तहस नहस कर डालते हैं जिससे 'यह शरीर किस का है' यह नहीं जाना जाता। (कयविहंगा) इस प्रकार वृकादिक जानवरों एवं विविधपक्षिगणों से कितनेक इन अभागों के शरीर खाया जाकर खंड २ कर

ऊपाणएसु" દોરડા આદિથી પગ બાધીને ચ'ડાલ આદિ લોકો તેમને "कड्ढिया" બહાર કાઢીને "खाइयाए छूढा" કોઇ ખાડામા લઈ જઈને ફેંકી દે છે. "तत्थ य" ત્યાં તેમના મુડદાને विगसुणयसियालकोलमज्जारवंदसंडासतुंड-पक्खिगणविविहमुहसयविलुत्तगत्ता" "विग" વરૂ, "सुणय" શુનક-કૂતરાં, "सियाल" શિયાળ, "कोल" સુઅર, "मज्जारवंद" મર્જાર-જંગલી બિલાડા, આદિ હિંસક પશુઓનો સમૂહ અને "संडासतुंड पक्खिगण" સાણસી જેવી તીક્ષ્ણ ચાંચવાળા ગીધ વગેરે પક્ષીઓનો સમૂહ "विविहमुह-सय" વિવિધ પ્રકારના સેંકડો મુખો દ્વારા "विलुगत्ता" ઠોલી ખાય છે, તેથી "આ કોનુ શરીર છે" તે જાણી શકાતુ નથી "कयविहंगा" આ રીતે વરૂ આદિ જાનવરો તથા વિવિધ પક્ષીગણો દ્વારા તે કમભાગીઓન શરીર

जाय कुहियदेहा ' कृमिजातकुथितदेहाः कृमिजातेन = रोगादि कारणात् समूत्पन्नकृमिसमूहेन कुथितदेहाः=दुर्गन्धयुक्तशरीराः 'अणिट्ठवयणेहिं' अनिष्टवचनैः =अप्रियवचनैः ' सुट्ठुकयं जं मओत्ति पावे ' सुष्ठुकृतं = शोभनं जातं यत् =यस्मात् मृतोऽयं पापः = पापी इत्येवं रूपः ' सप्पमाणा ' शप्यमानाः= आक्रोश्यमानाः 'तुट्ठेण जणेण हण्णमाणा ' तुष्टेन जनेन हन्यमानाः तेषां मारणेन प्रसन्नो यो जनस्तेन ताडयमानाः सन्तः ' सयणस्स विय ' स्वजनस्यापि च किं पुनरन्येषाम् ' दीहकालं ' दीर्घकालं यावत् 'लज्जावणगाय' लज्जापनकाः= लज्जालज्जारहिता इत्यर्थः ' हुंति ' भवन्ति ॥ सू० १७ ॥

एवमिह लोके दुःखमाप्नुवन्तीत्युक्तम्, अथ परलोके किं भवती ? त्याह— ' भयासंता ' इत्यादि

मूलम्—भयासंता पुणो परलोगसमावण्णा नरए गच्छंति निरभिरामे अंगारपलित्तगकप्पअच्चत्थसीयवेयणा असायणो

दिये जाते हैं। तथा (केइ) कितनेक अदत्तग्राही चोर जो मरने से बाकी बचे रहते हैं वे (किमिजायकुहियदेहा) रोगादिक कारण के वश से अपने शरीर में उत्पन्न हुए कीड़ों से दुर्गंधित शरीर वाले होकर (अणिट्ठवयणेहिं) लोगों के इस प्रकार के अप्रियवचनों से कि-(सुट्ठुकयं जं मओत्ति पावो) भला हुआ जो यह पापी मर रहा है " अथवा मरे हुए सा हो रहा है " इस प्रकार (सप्पमाणा) गालियों से अपमानित होते हैं। तथा उनकी मृत्यु से प्रसन्न होने वाले मनुष्यों से ताडित होकर (सयणस्स वि य) स्वजनोंसे भी और दूसरोंसे भी (दीहकालं) बहुत समयतक (लज्जावगाय) लज्जित (हुंति) होते हैं ॥ सू-१७ ॥

ખવાય છે અને તેના ટુકડે ટુકડા કરાય છે તથા ' केइ " કેટલાક અદત્ત-ગ્રાહી ચોરો જો મોતમાંથી બચે છે તો " किमिजायकुहियदेहा " રોગાદિક કારણોથી તેમનાં શરીરમાં ઉત્પન્ન થયેલ કીડાઓથી દુર્ગંધ યુક્ત શરીરવાળા થઈને " अणिट्ठवयणेहिं " લોકોનાં આ પ્રકારનાં અપ્રિય વચનોથી ' सप्पमाणा " અપમાનિત થાય છે-" सुट्ठुकयं जं मओत्ति पावो " " સારુ થયું કે આ પાપી આ રીતે મરી રહ્યો છે " અથવા " મરેલાના જેવી સ્થિતિ અનુભવે છે. " તથા તેમના મૃત્યુથી ખુશી થનારા માણસો દ્વારા માર ખાઈને "सयणस्सविय" સ્વજનો તથા બીજા લોકોથી " दीहकालं" લાંબા સમય સુધી 'लज्जावगाय " લજ્જિત ' हुंति " પામે છે ॥ સૂ-૧૭ ॥

दिण्णसयय दुक्खसयसमभिभूए । तओ विउव्वट्टिया समाणा-पुणो वि पव्वज्जंति तिरियजोणिं । तहिं पि निरओवमं-अणुभवंति वेयणं । ते अणंतकालेणं जइणाम कहिं वि मणुयभावं लहिंति णेगेहिं णिरयगइगमण तिरियभवसयसहस्सपरियट्टएहिं तत्थ वि य भवंत णारिया नीयकुलसमुप्पण्णालोयवज्झातिरिक्ख भूया य अकुसला कामभोगतिसिया जहिं निबंधंति निरयवत्तणी भवप्पवंचकरणपणोल्लि पुणो वि संसारावत्तणेमिमूले धम्मसुइ विवज्जिया अणज्जा कूरा मिच्छत्तसुइ पवण्णा य हुंति। एगंतदंडरुइणो वेढेंति कोसिगारकीडेव अप्पगं अट्ठकम्मतंतुघणबंधणेणं ॥ सू० १८ ॥

टीका—'मयासंता' मृताः सन्तः 'पुणो' पुनर्मरणानन्तरं 'परलोगसमावण्णा' परलोकसमापन्नाः परलोकं प्राप्ताः 'नरगे गच्छंति' नरके गच्छन्ति। कीदृशे नरके ? इत्याह-निरभिरामे=असुन्दरे, तथा 'अंगारपलित्तगकप्प, अच्चत्थ सीयवेयणा आसायणो दिण्णसययदुक्खसयसमभिभूए'

अब सूत्रकार यह कहते हैं कि ये अदत्तग्राही चोर इस लोक में तो इस प्रकार के अनेक दुःखों को भोगते हैं परन्तु परलोक में भी इनकी कैसी दुर्दशा होती है सो कहते हैं—'मयासंता' इत्यादि।

टीकार्थ-ये अदत्तग्राही चोर जब (मयासंता) मर जाते हैं तब (पुणो) उसके अनन्तर (परलोगसमावण्णा) परलोकमें जाकर (नरगे गच्छंति) नरक में उत्पन्न होते हैं। जो नरक (निरभिरामे) सुन्दरता से रहित अर्थात् असुहावने हैं, तथा (अंगारपलित्तगकप्प) अतिप्रज्वलित अंगार

હવે સૂત્રકાર એ બતાવે છે કે તે ચોરલોકો આ લોકમાં તો ઉપરોક્ત પ્રકારનાં દુઃખો અનુભવે છે પણ પરલોકમાં પણ તેમનીકેવી દુર્દશા થાય છે—"मयासंता" ઈત્યાદિ

ટીકાર્થ–તે અદત્તગ્રાહી ચોર "मयासता" મરીને "पुणो" પછી "परलोग समावण्णा" પરલોકમાં જઈને "नरगे गच्छंति" નરકગતિમાં ઉત્પન્ન થાય છે જે નરકાગર "निराभिरामे" સુન્દરતાથી રહિત છે, તથા "अंगारपलित्त

अङ्गारप्रदीप्तककल्पाऽत्यर्थशीतवेदनाऽऽसादनोदीर्णसततदुःखशतसमभिभूते, तत्र 'अङ्गारपलित्तगकप्प' प्रदीप्तकः = अतिप्रज्वलितो योऽङ्गारः = धूमरहितवह्निस्तेन कल्पं तत्सदृशम्-उष्णं, तथा 'अच्चत्थसीयवेयणा आसायणो' अत्यर्थ शीतं=अत्यर्थं हिमकालोद्भवशीतं तयोर्वेदना तस्याः आसादनं-प्रापणं तेन 'उदिण्णसययपुक्खसय' उदीर्णानि समुद्भूतानि यानि सतत दुःख शतानि=अनेकशतसंख्यकनिरन्तरदुःखानि, तैः 'समभिभूए' समभिभूतः= युक्तः यः स तथा तस्मिन्, यद्वा-उष्णशीतवेदना, सा कीदृशी? इत्याह आशातनेन=चिरकालानुबन्धिकटुक फलदायकाऽदत्ताऽऽदानजनिताऽशातवेदनीयकर्मणा उदीर्णा प्रकटिभूता तस्याः तज्जनितानि यानि सततदुःखशतानि तैः समभिभूतः =व्याप्तो यः स तथा तस्मिन्नेवं भूते नरके अदत्ताऽऽदायिनो मृताः सन्तो गच्छन्तीति पूर्वेण सम्बन्धः। तत्र नरके गत्वा सन्तप्तलोहवालुका निकरप्रखरकठोरसूची-

के जैसी उष्णता, और (अच्चत्थसीय) हिमकाल जैसा अत्यंत शीत है। यहां नारकियों को इस उष्णता और शीत की (वेयणा आसायणोदिण्ण) वेदना की प्राप्ति से उदीर्ण-उत्पन्न (सययदुक्खसय) निरन्तर सैकड़ों दुःख प्राप्त होकर (समभिभूए) दुःखित करते हैं। "आसादन" यह पद जो सूत्र में आया है उसका अर्थ एक तो प्राप्त होना है-जैसा कि अभी लिख दिया गया है। तथा दूसरा अर्थ इसका इस प्रकार से है-कि वे अदत्तग्राही चोर जो वहां मर कर नारकी की पर्याय से उत्पन्न हो चुके हैं चिरकालानुबंधी-भव भव में कटुक फल दायक अदत्तादान के प्रभाव से उत्पन्न हुए अशात वेदनीय कर्म के द्वारा प्रकटी भूत वेदना से व्याप्त उन नरकों में निरन्तर सैकड़ों प्रकार के दुःखों को

गकप्प" અતિ પ્રજ્વલિત અંગારા જેવું ઉષ્ણ અને "अच्चत्थसीय" હિમકાળ જેવું અત્યંત શીતળ છે. ત્યાં નારકી જીવોને તે ઉષ્ણતા અને શીતની "वेयणा आसायणो दिण्ण" વેદનાની પ્રાપ્તિથી ઉત્પન્ન થયેલ "सययदुक्खसय" સેંકડો દુઃખો નિરંતર "समभिभूए" દુઃખી કરે છે. "आसादन" આ પદનો સૂત્રમાં ઉપયોગ થયો છે. તેનો એક અર્થ તો "પ્રાપ્ત થવું" છે, જે સૂત્રમાં હમણાં જ અપાયો છે તથા તેનો બીજો અર્થ આ પ્રમાણે છે—તે અદત્તગ્રાહી ચોર કે જે મરીને નારકીની પર્યાયમાં ઉત્પન્ન થઈ ચુકયો છે, ચિરકાલાનુબંધી-ભવભવમાં કડવા ફળ દેનાર અદત્તાદાનના પ્રભાવે ઉત્પન્ન થયેલ અશાતા વેદનીય કર્મ દ્વારા ઉત્પન્ન થયેલ વેદનાથી વ્યાપ્ત તે નરકોમાં નિરંતર સેંકડો દુઃખો ભોગવ્યા કરે છે.

मुखदुस्तरमार्गसञ्चरणविविधत्रसामांसपूयशोणित पूर्णनदीनिमज्जनपरमाधार्मिकसंतप्तशलाकाशरीरप्रवेशनविविधशस्त्रास्त्रभेदनच्छेदनताडनापक्षारणादिकानि विपुलानि घोराणि दुःखानि भुक्त्वा 'तओवि उव्वट्टिया समाणा, ततोऽपि नरकादुद्वृत्ताः सन्तः=निस्सृताः सन्तः 'पुणो वि' पुनरपि 'तिरियजोणिं पवज्जंति' तिर्यग्योनिं प्रपद्यन्ते 'तहिंपि' तत्रापि 'निरयोवमं अणु भवंति वेयणं' नरकोपमामनुभवन्ति वेदनां =नरकसदृशमेवदुःखं प्राप्नुवन्ति। अथ 'जइनाम' यदिनाम 'अणंतकालेन'अनन्तकालेन=निगोद्भवा पेक्षया 'णेगेहिं' अनेकेषु=बहुषु 'निरयगतिगमणतिरियभवसयसहस्सपरियट्टएहिं' नरकगतिगमनतिर्यग्भवशतसहस्रपरिवर्तेषु=नरकगतौ यानि पुनः पुनर्गमनानि तेषां तथा तिर्यग्भवानां=तिर्यग्योनीनां च ये शतसहस्रपरि वर्ताः=अनेकशतसहस्रसंभ्रमणानि तेषु अतिक्रान्तेषु सत्सु 'कहिं वि मणुयभावं लहिंति' कथ-

भोगा करते हैं। इस प्रकार इस नरकों में शीतऔर उष्ण जन्य अनेक प्रकार की वेदनाएँ हैं जो नारकियों को व्यथित करती रहती हैं। (तओ-वि उव्वट्टिया समाणा) नरकों में जाकर वहां के विविध प्रकार के दुःखों को भोगते २ जब उन जीवों की एक सागर आदि अनेक सागर प्रमाणवाली भुज्यमान आयु वहां की जब समाप्त हो जाती है तब वे वहां से निकल कर पुनरपि (तिरियजोणिं पवज्जंति) तिर्यंचयोनि में जन्म धारण करते हैं। (तहिंपि) वहां पर भी वे (निरयोवमं) नरकोपम (वेयणं) वेदना को दुःखों को (अणुभवंति) भोगते रहते हैं। (जइनामणेगेहिं णिरयगतिगमनतिरियभवसयसहस्सपरियट्टएहिं) यदि अनेक नरकगति तिर्यंचगति के लाखों भवोंको धारण करते २ व्यतीत हुए (अणंतकालेण) निगोद की अपेक्षा अनंतकाल के बाद (कहिं वि) किसी तरह (मणुयभावं) मनुष्ययोनि भी उन्हें (लहिंति) प्राप्त हो गई

આ પ્રમાણે તે નરકોમા શીત અને ઉષ્ણુતા જન્ય અનેક પ્રકારની વેદનાઓ નારકી જીવોને પીડા પહોંચાડયા કરે છે. " तओ वि उव्वट्टिया समाणा " નરકોમાં જઈને ત્યાંનાં વિવિધ પ્રકારનાં દુઃખો ભોગવતાં ભોગવતાં તે જીવોનું અનેક સાગર પ્રમાણુ આયુષ્ય ત્યા પૂરૂં થાય છે ત્યારે તેઓ ત્યાથી નીકળીને વળી પાછાં " तिरियजोणिं पवज्जंति " તિર્યંચ યોનિમાં જન્મ ધારણુ કરે છે. " तिहिं पि " ત્યાં પણુ તેઓ " निरयोवमं " નરક સમાન" वेयण " વેદનાઓ દુઃખો " अणुभवंति " ભોગવે છે. " जइनामणेगेहिं णिरयगतिगमनतिरियभवसयसहस्सपरियट्टएहिं " જો અનેક નરક ગતિ, તિર્યંચગતિના લાખો ભવો ધારણુ કરતાં કરતાં નિગોદની અપેક્ષાએ પસાર થયેલ " अणंतकालेण " અનંતકાળ પછી " कहि वि " કોઈ પણુ રીતે " मणुयभावं " મનુષ્યગતિમાં તેમનો

मपि मनुजभावं=मनुष्योनिं लभन्ते=प्राप्नुवन्त्यपि चेत्तर्हि 'तत्थवि य' तत्रापि च भवन्ति=जायन्ते, 'अणारिया' अनार्याः=म्लेच्छाः शकयवनादयः कीदृशाः? इत्याह-'नीयकुलसमुप्पण्णा' नीचकुलसमुत्पन्नाः 'आरियजणे वि लोयवज्झा' आर्यजनेऽपि लोकबाह्याः=यदि कदाचिन्मगधाद्यार्यदेशे समुत्पन्ना अपि लोकवर्जनीयाः श्वपाकादिकुलसंभूता भवन्ति जनैस्तिरस्कृता इत्यर्थः, पुनश्च 'तिरिक्खभूया य' तिर्यग्भूताश्च पशु तुल्या विवेकशून्यत्वात् 'अकुसला' अकुशलाः=वस्तुतत्त्वाऽनभिज्ञाः 'कामभोगतिसिया' कामभोगतृषिताः=तत्र कामौ=शब्दरूपलक्षणौ भोगाः=गन्धरसस्पर्शलक्षणास्तेषु तृषिताः=आसक्ताः 'जहिं' यत्र मनुष्यभवेऽपि लोकबाह्यकुले 'निरयवत्तणी भवप्पवंचकरणपणोल्लि पुणो वि संसाराव-

तो (तत्थवि य) वहां पर भी वे (अणारिया) अनार्यमनुष्यों-म्लेच्छो शक यवन आदि पर्यायों में ही (भवंति) उत्पन्न होते हैं। (नीचकुल-समुप्पण्णा) ये अनार्यजन नीचकुल के होते हैं। (आरियजणेवि) यदि कदाचित् मगध आदि आर्यदेश में उत्पन्न हुए तो ये वहां (लोयवज्झा) लोकबाह्यजनों में-चाण्डाल आदि निंदित नीचकुलों में-उत्पन्नहोते हैं। वहां सदा ये तिरस्कृत होते रहते हैं। (तिरियभूयाय) विवेक शून्य होने के कारण ये तिर्यंच जैसे ही वहां बने रहते हैं (अकुसला) वस्तु-तत्त्व से अनभिज्ञ रहते हैं। (कामभोगतिसया) शब्द, रूप लक्षण काम एवं गंध रस, स्पर्श लक्षण भोगों में आसक्त रहते हैं, (जहिं) लोक बाह्य कुलों में मनुष्य भव प्राप्त कर लेने पर भी (निरियवत्तणी) नरक-गमन के मार्गभूत, (भवप्पवंचकरणपणोल्लि) भव परंपरारूप प्रवाह के

"लहिंति" જન્મ થાય તો પણ "तत्थवि च" તે લોકો "अणारिया" અનાર્ય મ્લેચ્છ, શક, યવન આદિ જાતિમાં જ "भवंति" ઉત્પન્ન થાય છે. 'नीचकुल समुप्पण्णा" તે અનાર્ય લોકો નીચા કુળના હોય છે "आरियजणेवि" જો તેઓ કદાચ મગધ આદિ આર્યભૂમિમાં જન્મ પામે છે તો તેઓ ત્યાં "लोय-वज्झा" લોકબાહ્ય જનોમાં-ચાંડાળ આદિ નિંદિત નીચકુળોમાં ઉત્પન્ન થાય છે. ત્યાં તેઓ સદા તિરસ્કૃત થયા કરે છે. "तिरिच भूयाय" વિવેકહીન હોવાને કારણે તેઓ. તે મનુષ્ય યોનિમાં હોવા છતાં પણ તિર્યંચ જેવાં જ હોય છે, 'अकुसला" વસ્તુ તત્ત્વથી તેઓ (અનભિજ્ઞ) અજાણ રહે છે, "कामभोगति-सया" શબ્દ, કામ, રસ, ગંધ, સ્પર્શ આદિ ભાગોમા અસક્ત રહે છે. "जहिं" લોકબાહ્ય કુળોમાં મનુષ્ય ભવ પામ્યા છતાં પણ "निरयवत्तणी" નરક ગમનના કારણભૂત "भवप्पवंचकरणपणोल्लि" ભવ પરંપરારૂપ પ્રવાહના પ્રવર્તક, તથા

त्तणेममूले' नरकवर्तनी:=नरकमार्गभूतानि भवप्रपञ्चकरणप्रणोदीनि=भवप्रपञ्चस्य=जन्मपरम्पराप्रवाहस्य करणं=भवनं तस्य प्रणोदीनि = प्रवर्त्तकानि नरकगमनकारणानीत्यर्थः, तथा पुनरपि=पुनश्च संसारावर्तनेमिमूलानि=तत्र ससारवर्त्ते=संसारभ्रमणे नेमिमूलानि=रथचक्रपरिधिरूपाणि कर्माणीति गम्यते 'निबंधंति' निबध्नन्ति चतुर्गतिसंसारपरिभ्रमणकारणानि महारम्भमहापरिग्रहरूपाणि कुर्वन्तीत्यर्थः। तथा 'धम्मसुइवज्जिया' धर्मश्रुतिवर्जिताः = धर्मः = श्रुतचारित्रलक्षणस्तस्य श्रुतिः= श्रवणं तद् वर्जिताः 'अणज्जा' अन्याय्याः=न्यायवर्जिताः 'कूरा' क्रूराः=जीवोपघातकाः 'मिच्छत्त सुइपवण्णा य' मिथ्यात्व श्रुति प्रपन्नाश्च=मिथ्यात्वश्रुतिं=मिथ्यात्वप्रधाना "न प्राणिवधे दोषा नाप्यदत्तादाने दोषाः" इत्यादिरूप विपरीततत्त्वोपदेशिका या श्रुतिः= सिद्धान्तस्तां प्रपन्नाः तदङ्गीकारकाः 'हुंति' भवन्ति। तथा एगंतदंडरुइणो' एकान्तदण्डरुचयः = एकान्तम्=अत्यन्तं दण्डे=हिंसादिके रुचिः = श्रद्धा येषां ते तथा केवलं परसन्तापोत्पादनपरा-

---

प्रवर्त्तक, तथा (पुणोवि संसारावत्तणेममूले) बार बार चतुर्गतिरूप संसार में परिभ्रमण के नेमिभूत-रथचक्र के परिधिरूप ऐसे कर्मों का ही (निबंधंति) बंध करते रहते हैं। अर्थात्-नरक, तिर्यंच, मनुष्य गतिरूप संसार में परिभ्रमण के कारणभूत ऐसे महारम्भ, महापरिग्रह रूप कर्मों को करते रहते हैं। तथा (धम्मसुइवज्जिया) धर्मश्रुति से-श्रुतचारित्ररूप धर्म के श्रवण से वर्जित रहते हैं। (अणज्जा) न्यायमार्ग से हीन होते हैं। (कूरा) क्रूर-स्वभाव के-जीवों का उपघात करने वाले होते हैं। (य) और (मिच्छत्त सुइपवण्ण) "न प्राणिवध में दोष है और न अदत्तादान में दोष है" इत्यादि प्रकार से विपरीत तत्त्वोपदेशक मिथ्यात्वप्रधान श्रुति को-सिद्धांतको अंगीकार करने वाले (हुंति) होते हैं। तथा (एगंतदंड-रुइणो) इनकी श्रद्धा हिंसादिरूपापकार्यों में ही अत्यंत रूपमें

"पुणोवि ससारावत्तणेममूले" वारंवार ચારગતિરૂપ સંસારમાં પરિભ્રમણના નેમિભૂત-રથચક્રના પરિધિરૂપ એવા કર્મોનો જ "निबंधंति" બંધ બાંધતા રહે છે, એટલે કે નરક, તિર્યંચ, મનુષ્યગતિરૂપ સંસારમા પરિભ્રમણના કારણરૂપ એવા મહારમ્ભ, મહાપરિગ્રહરૂપ કર્મો કર્યા કરે છે. તથા "धम्म सुइवज्जिया" શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મના શ્રવણથી રહિત રહે છે, 'अणज्जा" ન્યાય માર્ગથી રહિત હોય છે, "कूरा" ક્રૂર સ્વભાવના-જીવોની હિંસા કરતા હોય છે "य" તથા "मिच्छत्त सुइपवण्ण" "પ્રાણિવધમાં દોષ નથી અને અદત્તાદાનમાં દોષ નથી" ઇત્યાદિ પ્રકારના વિપરીત તત્ત્વોપદેશક મિથ્યાત્વ પ્રધાન સિદ્ધાંતોને સ્વીકારનાર "हुति" હોય છે, તથા "एगंतदंडरुइणो" હિંસાદિ

यणा इत्यर्थः 'कोसिगारकीडे' कोशिकारकीट इव 'अट्ठकम्मतंतुघणबंधणेणं' अष्टकर्मतन्तुघनबन्धनेन=अष्टकर्मभिः=ज्ञानावरणादिलक्षणैः तन्तुभिः=सूत्रै रिव यद् घनं=दृढं बन्धनं तेन 'अप्पगं' आत्मानं 'वेढेंति' वेष्टयन्ति। यथा कोशीकारकीटाः सूत्राणि सृजन्तस्तैरेव बन्धनभूतै र्वेष्टिताः भवन्ति तथैव अदत्तादायिनः स्वेनैव क्रियमाणैः ज्ञानावरणादि लक्षणैरष्टकर्मभिः सूत्रस्थानीयै-र्बन्धनैर्बध्यन्ते इति भावः ॥ सू० १८ ॥

अष्टविधकर्मभिर्बद्धाः सन्तः संसारसागरं वसन्तीति तमेव वर्णयन्नाह—'एवं नरग' इत्यादि।

मूलम्—एवं नरगतिरियनरअमरगमण – परंतचक्कवालं जम्मजरामरणकरणगंभीरदुक्खपक्खुभियपउरसलिलं संजोग विजोगवीचि--चिंतापसंगपसारिय–वहबंधमहल्लविउलकल्लोल-- कलुणविलविय–लोभकलकलंतबोलबहुलं अवमाणणफेणं तिव्व-खिंसण-पुलंपुलप्पभूय-रोगवेयण-पराभवविणिवाय-फरुसधरिसण-

---

रहती है। अर्थात् ये सदा परजीवोंको संताप पहुंचाने में ही परायण बने रहते हैं तथा (कोसिगारकीडेव) कोशिकार कीडे की तरह वे (अट्ठ-कम्मतंतुघणबंधणेण) आठकर्म रूप तन्तुओं के घनिष्ठ बन्धन से (अप्पाणं) अपने आपको (वेढेंति) वेष्टित करते हैं अर्थात् जिस प्रकार कोशिकार कीट सूत्रों का सर्जन करते हुए बंधनभूत उन्हीं सूत्रों से वेष्टित हो जाते है उसी तरह अदत्तग्राहीजन अपने द्वारा किये गये सूत्रस्थानीय ज्ञाना-वरण आदि अष्ट कर्मों से जो कि आत्मा को दृढ़रूप बांधनेवाले हैं बंधदशा को प्राप्त हो जाते हैं॥ सू-१८॥

પાપકૃત્યમાં જ તેમને વધારે શ્રદ્ધા હોય છે, એટલે કે અન્ય જીવોને કષ્ટ પહોંચાડવાને તેઓ સદા તત્પર રહે છે. તથા "कोसिगारकीडेव" કોશેટાની જેમ તેઓ "अट्ठकम्मतंतुघणबंधणेण" આઠ કર્મરૂપી તંતુઓના મજબૂત બંધનથી "अप्पाणं" પોતાની જાતને "वेढेंति" લપેટી લે છે એટલે કે જેમ રેશમનો કીડો (કોશેટો) તંતુઓનું સર્જન કરીને તે તંતુઓને પોતનાં શરીર ફરતા તેમાં લપેટીને તેમાં બંધાઈ જાય છે, તેમ અદત્તાદાન લેનાર માણસ પોતે કરેલા જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મો કે જે આત્માને મજબૂત રીતે બાંધનારા છે, તે કર્મોરૂપ તંતુથી બંધનની સ્થિતિ પ્રાપ્ત કરે છે॥ સૂ- ૧૮॥

समावडिय-कठिणकम्मपत्थरतरंग—रिंगंतनिच्चमच्चुभयतोयपट्ठं कसायपायालकलससंकुलं भवसयसहस्सजलसंचयं अणंतं उव्वेगजणयं अणोरपारं महब्भयं भयंकरं पइभयं अपरिमियमहिच्छकलुसमइ वा उव्वेग उद्धम्ममाणाऽऽसापिवासा पायालं कामरइरागदोसबंधणबहुविहसंकप्पविउलदगरयरयंधयारं, मोहमहावत्तभोगभममाणगुप्पमाणुच्छलंतबहुगब्भवासपच्चोणियंत—पाणियं पधावियवसण—समावण्णरुण्णचंडमारुय —समाहयामणुण्णवीचिवाकुलियभंगफुट्टंतनिट्ठकल्लोलसंकुलजलं पमायबहुचंडदुट्ठसावयसमाहयउद्धायमाणगपूरघोरविद्धंसणत्थबहुलं अण्णाणभमंतमच्छपरिहत्थं अनिहुतिंदिय—महामगरतुरियचरियखोक्खुब्भमाणसंतावनिच्चयचलंतचवलचंचलअत्ताणा—सरणपुव्वकम्मसंचयोदिण्णवज्जवेदिज्जमाणदुहसयविवागघुणंतजलसमूहं, इड्डिरससायगारवोहारगहिय — कम्मपडिबद्धसत्तकड्डिज्जमाण—निरयतलहुत्तसण्णविसण्णबहुलं, अरइरइभय—विसाय-सोगमिच्छत्तसल्लसंकडं अणाइसंताणकम्मबंधणकिलेसचिक्खिल्लदुत्तारं अमरनरतिरियनिरयगइगमणकुडिलपरिवट्टविउलवेलं—हिंसालियअदत्तादाणमेहुणपरिग्गहारंभकरणकारावणाणुमोयण—अट्ठविहअणिट्ठकम्मपिंडियगुरुभाराक्कंतदुग्गजलोघदूरनिब्बोलिज्जमाणउम्मग्गनिमग्गदुल्लहतलं सरीरमणोमयाणिदुक्खाणि उप्पियंता सायासायपरितावणमयं उव्वुड्डनिव्वुड्डयंकरेंताचउरंतमहंतमणवयग्गं रुदं संसारसायरंअट्ठिय अणालंवणपइट्ठाणमप्पमेयं चुलसीइजोणिसयसहस्सगुविलं अणालोगमंधयारं अणंतकालं जावणिच्चं उत्तत्थसुण्णभयसण्णसंपउत्ता वसंति उव्विग्गवासवसहिं ॥ सू० १९॥

टीका-'एवम्' अमुना प्रकारेण आत्मनः कर्मभिर्बन्धनेन 'नरगतिरियनरअमर गमण पेरंतचक्कवालं' नरकतिर्यङ्नराऽमरगमनपर्यन्तचक्रवालं=तत्र 'नरकः, तिर्यङ्, नरः, अमरः,' इति चतुर्गतिषु गमनं = तदेव पर्यन्तचक्रवालं=बाह्यपरिधिमण्डलं यस्य स तथा तमेवम्भूतं संसारसागरं वसन्तीति वक्ष्यमाणेन सम्बन्धः। पुनः कथं भूतमित्याह—'जम्मजरामरणकरणगंभीरदुक्खपक्खुभियपउरसलिलं' जन्मजरामरणकरणगम्भीरदुःखप्रक्षुभितप्रचुरसलिलं=तत्र जन्मजरामरणादिभिः करणैः= साधनभूतैर्यद्गम्भीरदुःखम्=अतिमहाक्लेशस्तदेव प्रक्षुभितं = अतिवेगव्याकुलितं प्रचुरं सलिलं=जलं यत्र स तथा तम्, यथा समुद्रो विपुलजलराशिपूर्णो भवति तथैव समुद्ररूपः संसारोऽपि जलस्वरूपविविधदुःखव्याप्त इत्यर्थः, एवमेवाग्रेऽपि समुद्रधर्मान् रूपकाऽलङ्कारेण संसारेऽपि प्रदर्शयति पुनर्यथा—'संजोगविजोग

ये जीव ज्ञानावरण आदि अष्टविध कर्मों से बंधदशा को प्राप्त होकर संसार सागर में रहते हैं सूत्रकार अब वर्णन करते हैं—

'एवं नरग' इत्यादि।

टीकार्थ-(एवं) इस प्रकार अपनी आत्माको कर्मोंके साथ एक क्षेत्रावगाहरूप बंधदशा से बांधनेके कारण ये अदत्तग्राहीजन (नरगतिरियनर अमरगमणपेरंतचक्कवालं) नरक, तिर्यञ्च, मनुष्य एवं देवगतियों में परिभ्रमण रूप बाह्य परिधिमंडल वाले, तथा (जम्मजरामरणकरणगंभीर दुक्खपक्खुभियपउरसलिलं) जन्म, जरा, मरण जन्य अति महाक्लेश-रूप प्रक्षुभित एवं प्रचुर जलवाले संसार सागर में ही चक्कर काटा करते हैं-परिभ्रमण किया करते हैं। सूत्रकार रूपकालंकार से इसी संसार

તે જીવો જ્ઞાનાવરણ આદિ આઠ પ્રકારના કર્મોથી બંધનની દશા પ્રાપ્ત કરીને સંસાર સાગરમાં રહે છે. હવે સૂત્રકાર તેનું વર્ણન કરે છે—

"एवं नरग" ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ-"एवं" તે રીતે પોતાના આત્માને કર્મોની સાથે એક ક્ષેત્રાવગાહરૂપ બંધદશાથી બાંધવાને કારણે તે અદત્તગ્રાહી માણસો "नरगतिरियनरअमर-गमणपेरंतचक्कवालं" નરક, તિર્યંચ, મનુષ્ય અને દેવ ગતિયોમાં પરિ-ભ્રમણરૂપ બાહ્ય પરિધિમંડળવાળા, તથા "जम्मजरामरणकरणगंभीरदुक्ख पक्खुभियपउरसलिलं" જન્મ, જરા, મરણ જન્ય અતિશય મોટા ક્લેશરૂપ પ્રક્ષુભિત અને પ્રચુર જળવાળા સંસાર સાગરમાં જ ચક્કર લગાવ્યા કરે છે-પરિભ્રમણ કર્યા કરે છે, સૂત્રકાર રૂપક અલંકારથી આ સંસારસાગરનું વર્ણન

वीचि-चिंतापसंग पसारिय - वहबंधमहल्लविउलकल्लोलकलुणविलवियलोभकलक-लंतवोलबहुलं ' 'तत्र='संजोगविजोगवीचि' संयोगवियोगा एव वीचयः=तरङ्गा यत्र स तथा, समुद्रो यथा—जलतरङ्गयुक्त एवं संसारोऽप्यनिष्टसंयोगेष्टवियोग रूप-तरङ्गयुक्त', तथा 'चिंतापसंगपसारिय' चिन्तापसङ्गमसारितः=शोकसमूह विस्तृतः 'वहबंधमहल्लविउलकल्लोल' वधबन्धमहाविपुलकल्लोलाः, तत्र वधाः = यष्ट्यादि ताडनानि, बन्धाः=रज्ज्वादि बन्धनानि तान्येव महान्तः=सुदीर्घाः विपुलाः=विशालाश्च कल्लोलाः=महातरङ्गा यत्र स तं, तथा 'कलुणविलवियलोह-कलकलंतवोलबहुलं' करुणविलपितलोभकलकलायमानवोलबहुलः=करुणविलपितं=

सागर का वर्णन करते हुए कह रहे हैं कि-जिस प्रकार समुद्र का बाह्य परिधिमंडल होता है उसी तरह इस संसार रूप समुद्र का बाह्यमंडल चतुर्गतियों में परिभ्रमण करना रूप है। जिस तरह समुद्र अपार जल-राशि से सदा परिपूर्ण रहता है, उसी तरह यह संसार भी जन्म जरा एवं मरण जन्य गंभीर दुःखरूप जल से पूर्ण भरा हुआ है। (संजोग विजोग वीचिं-चिंता पसंग-पसारिय-वह-बंध-महल्ल-विउल-कल्लोल कलुण-विलविय-लोभकलकलंतवोलबहुलं) इस संसार में (संजोग विजोग वीचिं) अनिष्ट संयोग एवं इष्टवियोग जीवों को प्रतिक्षण प्राप्त होते रहते हैं सो ये अनिष्टसंयोग इष्टवियोग ही इसमें वीचि-लहरों जैसे हैं। तथा (चिंतापसंगपसारियं) विविध प्रकार के शोक समूह से यह विस्तृत हो रहा है। (वहबंध) वध-यष्टयादि द्वारा बांधना ये ही जिसमें (महल्ल) बड़ी २ (विउल) विशाल (कल्लोल) कल्लोलें हैं।

કરતાં કહે છે કે-જેમ સમુદ્રનું બાહ્ય પરિધિમંડળ હોય છે, એ જ પ્રમાણે આ સંસાર રૂપી સમુદ્રનું ચતુર્ગતિયોમાં ભ્રમણ કરવા રૂપ બાહ્યપરિધિમંડળ છે. જેમ સમુદ્ર અપાર જળ રાશિથી સદા પરિપૂર્ણ રહે છે, તે જ પ્રમાણે આ સંસાર પણ જન્મ, જરા અને મરણ જન્ય ગંભીર દુઃખરૂપી જળથી પૂરેપૂરો ભરેલો છે. "सजोगविजोगवीचि-चिंता पसग पसारिय-वहवंधमहल्ल विउलकल्लोलकलुणविलवियलोभकलकलंतवोलवहुल" આ સંસારમાં "संजोगविजोगवीचि" અનિષ્ટનો વિયોગ જીવોને ક્ષણે ક્ષણે પ્રાપ્ત થયા કરે છે તે અનિષ્ટ સંયોગ અને ઈષ્ટવિયોગ જ તેમાં વીચિ-લહેરો જેવો છે. તથા "चिंतापसगपसारिय" વિવિધ પ્રકારના શોકસમૂહથી તે વિસ્તૃત થઈ રહેલ છે. "वहवंध" વધ-યષ્ટી આદિ દ્વારા બંધન જ જેમા "महल्ल" મોટાં મોટાં "विउल" વિશાળ "कल्लोल" મોજાં સમાન છે. "कलुणविलविय"

रोगदुःखादिजनितदीनविलापएव लोभमोहेन कलकलायमानः=कलकलशब्दयुक्तो यो बोलः=ध्वनिः स बहुलो यत्र स तथेति संयोगादोनां पदानां कर्मधारयस्तं तथा 'अवमाणणफेणं' अपमाननफेनम्=अपमानफेनयुक्तं 'तिव्वखिंसणपुलंपुलप्पभूयरोगवेयणपराभवविणिवायफरुसधरिसणसमावडियकठिणकम्मपत्थरतरंगरिंगंतनिच्चमच्चुभयतोयपट्ठं' तत्र 'तिव्वखिंसण' तीव्रखिंसनम्=तीव्रनिन्दा तथा 'पुलंपुल' निरन्तरं प्रभूता=बहूला जायमाना या 'रोगवेयण' रोगवेदनाः=नानाविधाऽऽधिव्याधि-पीडास्ताः, तथा 'पराभवविणिवाय' पराभवः=अनादरः, तस्य विनिपातः=विशेषेण प्राप्तं, तथा 'फरुसधरिसण' परुषधर्षणानि=कठोरवचनैः भर्त्सनानि च तानि 'समावडिय' समापतितानि=समापन्नानि येभ्यस्तान्येवम्भूतानि यानि 'कठिणकम्म' कठिनकर्माणि=ज्ञानावरणादीनि क्लिष्ट

(कलुणविलविय) रोग से एवं दुःखादि से जन्य करुण विलाप तथा (लोभ) लोभ एवं मोह से जन्य जो (कलकलंत) कलकल शब्द, इन से युक्त (बोल) ध्वनियां ही जहां (बहुलं) बहुलरूप में वर्तमान हैं (अवमाणणफेणं) अपमानरूप फेन से जो युक्त बना हुआ है, (तिव्वखिंसण पुलंपुल-भूयरोग-वेयणपराभव-विणिवायफरुसधरिसण-समावडियकठिणकम्म पत्थर तरंग रिंगंतनिच्चमुच्चुभयतोयपट्ठं) (तिव्वखिंसण) तीव्र निंदाएँ तथा (पभूयरोगवेयण) निरंतर जायमान अनेक रोग वेदनाएँ–नाना प्रकार की आधि व्याधि रूप पीडाएँ, (पराभवविणिवाय) अनादर की विशेष रूप से प्राप्ति, तथा (फरुसधरिसणसमावडिय) कठोर वचनों द्वारा निर्भर्त्सन–फटकारना, ये सब जिनके उदय से जीवों को प्राप्त होते रहते हैं, ऐसे (कढिणकम्मपत्थर) ज्ञानावरण आदि क्लिष्ट

રોગ તથા દુઃખાદિથી ઉત્પન્ન થયેલ કરુણ વિલાપ તથા "लोभ" લોભ અને મોહથી જન્ય જે "कलकलंत" 'કલકલ' શબ્દથી યુક્ત "बोल" અવાજો જ જ્યાં "बहुलं" વધારે પ્રમાણમાં વિદ્યમાન છે, "अवमाणणफेणं" અપમાનરૂપ ફીણથી જે યુક્ત છે, "तिव्वखिंसणपुल पुलभूयरोगवेयणपराभवविणिवायफरुसधरिसणसमावडियकठिणकम्मपत्थरतरंगरिंगंतनिच्चमच्चुभयतोयपट्ठं" "तिव्वखिंसण" તીવ્ર નિંદાઓ તથા "पभूयरोगवेयण" નિરંતર ઉત્પન્ન થતી અનેક રોગ વેદનાઓ–વિવિધ પ્રકારની આધિ વ્યાધિ રૂપ પીડાઓ "पराभवविणिवाय" મોટે ભાગે અનાદરની પ્રાપ્તિ, તથા "फरुसधरिसणसमावडिय" કઠોર વચનો દ્વારા નિર્ભર્ત્સનધિક્કાર, એ બધુ જેમના ઉદયથી જીવોને પ્રાપ્ત થયા કરે છે, એવાં "कढिणकम्मपत्थर" જ્ઞાનાવરણ

कर्माणि तान्येव ये प्रस्तराः=सागरपाषाणरूपास्तैः कृत्वा 'तरंगरिंगंत' तरङ्गरिङ्गत् =तरङ्गैः=कल्लोलैः रिङ्गत्=चलत् 'निच्चमच्चुभयतोयपट्ठं' नित्यमृत्युभयतोयपृष्ठ= नित्यं=ध्रुवं मृत्युभयं=मरणभयमेव तोयपृष्ठं=जलोपरितलभागो यत्र स तथा तं महापाषाणाद्याघातोत्थितमहातरङ्गचञ्चलजलौघमृत्युभयसङ्कुलः सागरो यथा भवति तथा संसारोऽपि भर्त्सनापमाननादि नानादुःखफलप्रदज्ञानावरणादि क्लिष्टकर्म-पाषाणसमुत्थित पुनः पुनर्जन्मजरामरणभयतरङ्गव्याप्त इत्यर्थः। 'कसायपायाल-कलससंकुलं' कषायपातालकलशसङ्कुलं=कषायाः=क्रोधादयश्चत्वारस्ते एव पाता-लकलशास्तैः सङ्कुलो यः स तथा तं, 'भवसयसहस्सजलसंचय' भवशतसहस्रज-लसञ्चयं=भवशतसहस्राण्येवजलसञ्चयः = जलराशिर्यत्र स तथा तम्, 'अणंतं'

कर्मरूप पाषाणों से उठी हुई, (तरंगरिंगंत) तरंगों से जो चंचल बना हुआ है, तथा जो (निच्चमच्चुभय) अवश्यंभावी मृत्यु के भयरूप (तोयपट्ठं) जलके उपरितन भाग से युक्त हो रहा है, अर्थात्-जिस प्रकार समुद्र महापाषाणों आदि के आघात से उत्थित महातरंगों से चंचल तथा जल से भरा हुआ होने के कारण मृत्यु के भय से संकुल होता है उसी तरह संसार भी भर्त्सना अपमान आदि ननादुःखरूप फलको देने वाले क्लिष्टकर्मरूप पाषाणों से समुत्थित वारं वार जन्म, जरा, मरण, के भयरूप तरंगों से व्याप्त हो रहा हैं। (कसायपायाल-कलससंकुलं) तथा यह संसार सागर क्रोधादिक चार कषायरूप पाताल कलशों से युक्त है (भवसयसहस्सजलसंचय) लाखों भवरूप जलसंचय से यह युक्त है। (अणंतं) अनन्त संसारी जीवों की अपेक्षा यह अन्त

આદિ કિલષ્ટ કર્મરૂપ પાષણોથી પેદા થયેલ "तरंग रिंगंत" તરંગોથી જે ચંચળ બનેલ છે, તથા જે "निच्चमच्चुभय" અવશ્ય ભાવી (જરૂર થનારા) મૃત્યુના ભયરૂપી "तोयपट्ठं" જળના ઉપરિતન ભાગથી યુક્ત છે, એવા સંસાર સાગરમાં તે પરિભ્રમણ કર્યા કરે છે- એટલે કે જેમ સમુદ્ર મહાપાષાણો આદિના આઘાતથી ઉત્પન્ન થયેલ તરંગોથી ચંચળ બનેલ હોય છે તથા પાણીથી ભરપૂર હોવાને કારણે તેમાં પડનારને માટે મોતનો ભય રહે છે તેમ સંસાર પણ ભર્ત્સના અપમાન આદિ ત્રિવિધ દુઃખરૂપ ફળ દેનારા કિલષ્ટ કર્મરૂપ પાષાણોથી ઉત્પન્ન થતાં, વારવાર અનુભવાતા જન્મ, જરા, મરણ આદિના ભયરૂપ તરંગોથી વ્યાપ્ત છે "कसायपायालकलससंकुलं" તથા આ સંસાર સાગર ક્રોધ આદિ કષાયરૂપ પાતાળ કળશોથી યુક્ત છે. "भवसयसहस्सजल संचयं" લાખો ભવરૂપ જળસંચયથી તે યુક્ત છે. "अणंतं" અનન્ત સંસારી

अनन्तम्=संसारि जीवापेक्षया अन्तरहितम् 'उव्वेगजणयं' उद्वेगजनकं=आधि-व्याधि प्रभृतिदुःखशतयुक्तत्वात् 'अणोरपारं' अनर्वाक् पारम्=अदृष्टपारं 'महब्भयं' महाभयं=महाभयजनकं दुस्तरत्वात्, भयङ्करं=कर्मप्रकृतिमहामत्स्यमकरादिभिः व्याप्तत्वात्, 'पइभयं' प्रतिभयं=प्रतिप्राणिनं भयजनकं सकलप्राणिभयोत्पादकत्वात् 'अपरिमिय महिच्छकलुसमति वाउरोग उद्धम्ममाणासापिवासापायालं' अपरिमितमहेच्छाकलुषमतिवायुवेगोद्धम्यमानाशापिपासापातालम्, तत्र अपरिमिता=अपरिमाणा महती=विशाला चेच्छा=विषयाभिलाषा, 'कलुस' कलुषा=मलिना या मतिः=बुद्धिः सा एव 'वायुवेग' वायुवेगस्तेन 'उद्धम्मम्माण' उद्धम्यमाना==प्रवर्द्धमाना या आशाः=अप्राप्तार्थस्य प्राप्ति सम्भावनाः, पिपासाः=प्राप्तार्थस्योपभोगवाञ्छाः, एता एव पातालं यत्र स तथा तम्, अपरिमितमहेच्छामलिनबुद्धि-

---

रहित है। (उव्वेगजणयं) आधि व्याधि आदि सैकड़ों दुःखों से युक्त होने के कारण यह उद्वेगजनक है। तथा (अणोरपारं) यह अदृष्ट पारवाला है-इसका पार अदृष्ट है। (महब्भयं) दुस्तर होने से यह जीवों को महाभय का जनक है। कर्मों की १४८ उत्तर प्रकृतिरूप महामत्स्य मकर आदि जलचर जीवों से यह व्याप्त है। समस्त प्राणियों के लिये भय का उत्पादक होने के कारण यह (पइभयं) हरएक जीव के लिये भय का जनक बना हुआ है। (अपरिमियमहिच्छकलुसमतिवाउवेग उद्धम्ममाणासापिवासापायालं) (अपरिमिय) अपरिमित तथा (महिच्छ) महता विषयाशारूप एवं (कलुसमति) मलिनबुद्धिरूप (वाउवेग) वायु के वेग से (उद्धम्ममाण) प्रवर्द्धमान ऐसी (आसा) आशा-अप्राप्त अर्थ के प्राप्त करने की संभावनारूप तथा (पिवासा) पिपासा-अर्थ का उप-

---

જીવોની અપેક્ષાએ તે અન્તરહિત છે. "उव्वेगजणयं" આધિવ્યાધિ આદિ સેંકડો દુઃખોથી યુક્ત હોવાથી તે ઉદ્વેગજનક છે. તથા "अणोरपारं" તે અસીમ-અપાર છે "महब्भय" દુસ્તર હોવાથી તે જીવોને માટે મહાભય પેદા કરનાર છે કર્મોની ૧૪૮ ઉત્તર પ્રકૃતિરૂપ મહામત્સ્ય, મગર આદિ જળચર જીવોથી તે વ્યાપ્ત છે. સમસ્ત પ્રાણીઓને માટે તે ભય પેદા કરનાર હોવાથી તે "पइभयं" દરેક જીવને માટે ભયજન છે "अपरिमिय महिच्छकलुसमतिवाउवेगउद्धम्ममाणासापिवासापायाल" "अपरिमिय" અપરિમિત તથા 'मिहिच्छ" મોટી વિષય વાસના રૂપ અને "कलुसमति" મલિન મતિરૂપ, "वाउवेग" વાયુના વેગથી "उद्धम्ममाण" વધતી જતી એવી "आसा" આશા-અપ્રાપ્ત વસ્તુને પ્રાપ્ત કરવાની સંભાવના-તથા "पिवासा"

वायुप्रवर्द्धमानाशातृष्णादिरूपाऽस्तोघपातालयुक्तमित्यर्थः। तथा-'कामरइरागदोसबंधणवहुविहसंकप्पविउलदगरयरयंधयारं' कामरति-रागद्वेप-वंधन-वहुविधसंकल्पविपुलदकरजोरयान्धकारम्, तत्र - कामरतिः = शब्दादिष्वभिरुचिः, रागः = अनुकूलविपयेषु प्रीतिः, द्वेपः = तेष्वेवप्रतिकूलेष्वप्रीतिश्चेत्येतान्येव वन्धनानि= वन्धकारणानि तथा वहुविधाश्च संकल्पाः=मनः संकल्पा इत्येतेषां द्वन्द्वः ते कामरत्यादय एव विपुलदक रजांसि=विस्तीर्णजलकणिकाः तेपां यो रयः=वेगस्तद्रूपोऽन्धकारो यत्र स तथा तम्। कामरत्यादिरूपजलकणिका वेग समुत्पन्नान्धकारयुक्तमित्यर्थः। पुनः कीदृग ? मित्याह-'मोहमहावत्तभोगभममाणगुप्पमाणुच्छलंतवहुगब्भवासपच्चोणियत्तपाणियं' मोहमहावर्त्तभोगभ्रमद्गुप्यदुच्छलद्बहुगर्भवासप्रत्यवनिवृत्तप्राणिकम्, तत्र-'मोहमहावत्त' मोहमहावर्त=मोह एव महाना-

---

भोग करने की वाञ्छारूप (पायालं) पाताल से यह युक्त है, तथा (कामरइरागदोस बंधण वहुविहसंकप्पविउलदगरयरयंधयारं) (कामरइ) शब्दादिक विषयों में अभिरुचिरूप कामरति, (राग) अनुकूल विषयों में प्रीति रूप राग, एवं (दोस) प्रतिकूल शब्दादिविषयों में अप्रीति द्वेष, जो (बंधण) बंध के कारण हैं, तथा (वहुविह संकप्प) बहुत प्रकार के जो मनः संकल्प हैं ये ही सब इस संसारसमुद्र में (विउल दगरय) वीस्तीर्णदकरज-जलकण हैं। इनका (रयधयारं) वेगरूप अंधकार इसमें सदा व्याप्त हो रहा है अर्थात्-कामरत्यादिरूप जलकणों के वेगों से समुत्पन्न अधकार से यह युक्त बना हुआ है (मोह महावत्त-भोगभममाणगुप्पमाणुच्छलंतवहुगब्भवास पच्चोणियपाणियं) तथा (मोहमहावत्त) मोहरूप महान् आवर्त्त इसमें उठ रहे हैं। और इन आवर्त्तों में जहां

પિપાસા-પ્રાપ્ત ચીજનો ઉપભોગ કરવાની ઇચ્છા-રૂપ "पायालं" પાતાળથી તે યુક્ત છે, તથા "कामरइरागदोसबंधणवहुविहसंकप्पविउलदगरयरयंधयारं" "कमरइ" શબ્દાદિ વિષયોમાં અભિરુચિરૂપ કામરતિ, "राग" અનુકૂળ વિષયોમાં પ્રીતિરૂપ રાગ, અને "दोस" પ્રતિકૂળ શબ્દાદિ વિષયોમા અપ્રીતિરૂપ દ્વેષ, જે "बंधण" બંધનનાં કારણો છે, તથા "वहुविहसंकप्प" અનેક પ્રકારના જે મનઃસંકલ્પો છે એ બધા આ સંસાર સાગરમા "विउलदगरय" વિસ્તીર્ણ જળ બિન્દુઓ છે. "रयंधयार" તેમના વેગરૂપ અંધકારથી તે વ્યાપ્ત છે. એટલે કે કામરતિ આદિ રૂપ જળકણોના વેગથી ઉત્પન્ન થયેલ અંધકારથી તે યુક્ત છે. "मोहमहावत्तभोगभममाणगुप्पमाणुच्छलंतवहुगब्भवासपच्चोणियत्तपाणिय" તથા "मोहमहावत्त" મોહરૂપ મહા વમળો તેમાં ઉત્પન્ન થયા કરે છે. અને તે આવર્તોમાં-વમળમાં જ્યાં "भोग" વિષય-ભોગ જ "भम-

र्वतः=जलभ्रमस्तत्र भोगाः=विषया एव 'भममाण' भ्रमन्तः 'गुप्पमाण' गुप्यन्तः =व्याकुली भवन्तः, उच्छलन्तः=उत्पतन्तः 'बहुगब्भवास' बहुषु = बहुविधेषु गर्भवासेषु=पशुपक्ष्यादिलक्षणेषु 'पच्चोणियत्त' प्रत्यवनिवृत्ताः=उत्पत्य निपतिताः 'पाणिय' प्राणिनो=जीवाः समुद्रपक्षे मकरादयः, संसारपक्षे संसारिणो यत्र तत्तथा भूतं, तथा-पधाविययवसणसमावण्णरुण्णचंडमारुय समाहयाऽमणुण्णवीचिवाकुलिय-भंगफुट्टंतनिट्ठकल्लोलसंकुलजलं ' प्रधावितव्यसनसमापन्नरुदितचण्डमारुतसमाहतामनोज्ञवीचिव्याकुलितभङ्गस्फुटदनिष्टकल्लोलसकुलजलम्, तत्र - पधाविय' प्रधावितानि=प्रकर्षेणेतस्ततोगतानि यानि 'वसण' व्यसनानि=कष्टानि तानि 'समावण्ण' समापन्नाः=प्राप्ता ये प्राणिनः तेषां 'रुण्ण' रुदितमेव 'चंडमारुय' चण्डमारुतः=प्रचण्डवायुस्तेन 'समाहय' समाहताः=परस्पर संघट्टिता याः 'अमणुण्ण' अमनोज्ञा=भयंकराः वीचयः दुःखपरम्परारूप तरङ्गास्तैः 'वाउलिय' व्या-

---

(भोग) विषय-भोग ही (भममाण) भ्रमण कर रहे हैं, (गुप्पमाण) व्याकुल हो रहे हैं तथा (उच्छलंत) उछल रहे हैं। एवं इस संसार समुद्र में (बहुगब्भवास) मनुष्य, पशु पक्षी आदि योनि रूप नाना प्रकार के गर्भों में संसारी जीव तथा समुद्रपक्ष में मगरमच्छ आदि जलचर जीव आकर निपतित हो रहे हैं। (पधाविय-वसण-समावण्ण रुण्णचंडमारुयसमाहयाऽमुणणवीचि वाकुलियभंगफुट्टंतनिट्ठकल्लोलसं-कुलजलं) तथा यह संसार समुद्र (पधाविय) इधर उधर से संप्राप्त (वसणसमावण्णा) अनेक व्यसनों-दुःखोंसे पीडित हुए प्राणियोंके (रुण्ण) रुदनरूप (चंड मारुय) प्रचण्ड वायु से (समाहय) परस्पर संघर्ष को प्राप्त हुई (अमणुण्णवीचि) अमनोज्ञ दुःखों की परंपरारूप तरङ्गों से (वाकुलिय)

माण" ભ્રમણ કરી રહ્યા છે, "गुप्पमाण" વ્યાકુળ થઈ રહેલ છે, તથા "उच्छलंत' ઉછળી રહ્યા છે. અને તે સંસાર સાગરમાં "बहुगब्भवास" મનુષ્ય, પશુ, પક્ષી આદિ યોનિરૂપ વિવિધ પ્રકારના ગર્ભોમાં પ્રાણીઓ-સંસારની અપેક્ષાએ જીવો તથા સમુદ્રની અપેક્ષાએ મગર મચ્છ આદિ જળચર જીવો આવી આવીને નિપતિત થઈ રહેલ છે. એટલે કે તેમાં જન્મ લઈ રહેલ છે. "पधाविय-वसण-रुण्ण-चंड-मारुय-समाहयाऽमुणणवीचि-वाकुलिय-भंग—फुट्टंत-निट्ठकल्लोल-संकुलजलं" તથા આ સંસાર સમુદ્ર "पधाविय" અહીં તહીંથી પ્રાપ્ત "वसणसमावण्ण" અનેક (વ્યસનો) દુઃખોથી પીડાતાં પ્રાણીઓનાં 'रुण्ण" રુદનરૂપ "चंडमारुय" પ્રચંડ વાયુથી "समाहय" પરસ્પર અથડાતાં "अमणुण्णवीचि" અમનોજ્ઞ દુઃખોની પરંપરા રૂપ તરંગોથી

कुलितं=विक्षोभितं तथा भङ्गैः=तरङ्गैः सह संघट्टनेन 'फुट्टंत' स्फुटन्त-=पृथग् भवन्तो ये 'निट्ठुकल्लोल' अनिष्टकल्लोलाः = दारुण दुःखमहातरङ्गास्तैः संकुलं =व्याप्तं जलं = जन्मजरामरणरूपं यत्र स तथा तम् । मोहमहावर्तनिपतितविषयोपभोगभ्रमणनिमग्नप्राणियुक्तं पशुपक्षिनरकनराऽमरादिविषमोन्नतावनतयोनि विभ्रमणतरङ्गभङ्गयुक्तं विविधदारुणदुःखदुःखितं प्राणिरोदनाऽऽक्रन्दनरूपवायु समाघातभवृद्धदुःखतरङ्गयुक्तं पुन पुनर्जन्ममरणरूपजल यत्र संसारसागरं वसन्तीति सम्बन्धः पुन. कीदृश ? मित्याह — 'पमादबहुचंडदुट्ठसावयसमाहयउद्धायमाणगपूरघोरविद्धंसणत्थबहुलं' प्रमादबहुचण्डदुष्टश्वापदसमाहतोद्धावपूरघोरविध्वंसानर्थबहुलं' तत्र-प्रमादबहुचण्डदुष्टश्वापदाः=प्रमदाः = मद्यविषयकषायनिद्रा विकथारूपास्ते एव बहुचण्डा =अतिशयरौद्राः 'दुट्ठसावय' दुष्टश्वापदाः=हिंसक

क्षुभित हो रहा है। एवं (भंगफुट्टंत) तरङ्गों के साथ संघट्टन से पृथक् हुई ऐसी (निट्ठकल्लोल) अनिष्टकल्लोलों-दारुण दुःखरूप महातरंगों से (संकुलं) संकुल बना हुआ ऐसा (जलं) जन्म, जरा, मरणरूप जल इसमें भरा हुआ है। अर्थात् मोहरूप महा आवर्त्त में जहां विषयोपभोग की वाञ्छा से इतस्ततः भ्रमण करते हुए जीव निमग्न हो रहे हैं। तथा पशु, पक्षी, नरक, नर, अमर, आदि ऊँची नीची योनियों में परिभ्रमण रूप तरंगें इस में उठ रही हैं, और विविध दारुण आदि दुःखों से दुःखित हुए प्राणियों के रोदन-आक्रंदन रूप वायु के आघातों से जहां दुःखरूप महा तरंगें जन्म जरा मरण रूप जल को आलोडित कर रही हैं। (पमादबहुचंडदुट्ठ सावय समाहयउद्धायमाणगपूरघोरविद्धंसणत्थबहुलं) तथा इस संसाररूप समुद्र में (पमाद) मद्य, विषय, कषाय, निद्रा, विकथा, इन पांच प्रमादरूप (चंड) भयंकर (दुट्ठसावय) रौद्र

"वाकुलिय" ખળભળી રહ્યો છે. અને "भंगफुट्टंत" તરંગોની સાથે અથડાવાથી જુદી પડેલી "निट्ठकल्लोल" અનિષ્ટ કલ્લોલો-દારુણ દુ.ખરૂપ મહાતરંગોથી "संकुलं" વ્યાપ્ત એવું "जलं" જન્મ, જરા, મરણ રૂપ જળ તેમાં ભરેલું છે. એટલે કે મોહરૂપી મહાવમળમાં વિષયભોગની ઇચ્છાથી આમ તેમ ભ્રમણ કરતા જીવો ત્યાં ડૂબેલા છે તથા પશુ, પક્ષી નારકી, નર, દેવ આદિ ઊંચી નીચી યોનિયોમા પરિભ્રમણરૂપ તરંગોમાં તેમા ઉછળી રહ્યાં છે, અને વિવિધ દારુણ દુ ખોથી પીડાતા જીવોના આક્રંદ રૂપ પવનના આઘાતથી જ્યા દુ ખરૂપ મહાતરંગો જન્મ, જરા મરણ રૂપ જળને ખળભળાવી રહેલ છે. "पमाद-बहु-चंड-दुट्ठसावयसमाहयउद्धायमाणगपूरघोरं विद्धंसणत्थबहुलं" આ સંસાર રૂપી સાગરમા "पमाद" મદ્ય, વિષય કષાય. નિદ્રા અને વિકથા, એ પાચ પ્રમાદરૂપી "चंड" ભયંકર "दुट्ठसावयं" રૌદ્ર દેખાવના હિંસક

जन्तवः, तैः 'समाहय' समाहताः=आघातं प्राप्ताः ये जीवास्ते 'उद्धायमाणग-पूरघोर, उद्धावन्तः=उत्तिष्ठन्तो विविधचेष्टासु, समुद्रपक्षे मत्स्यादयः संसारपक्षे पुरुषादयः तेषां पूरः=समूहः तस्य ये घोराः=दारुणाः 'विद्धंसणत्थ' विध्वंसा-नर्थाः=विनाशरूपा अनर्थास्ते बहुला यत्र स तथा तम् । 'अण्णाणभमंतमच्छपरि-हत्थअनिहुतिंदियमहामगरतुरियचरियखोक्खुब्भमाणसंतावनिच्चयचलंतचवलचंचल अत्ताणसरणपुव्वकम्मसंचयोदिण्णवज्जवेदिज्जमाणदुहसयविवागघुणंतजलसमूहं' अ-ज्ञानभ्रमन्मत्स्यपरिग्रस्तानिभृतेन्द्रियमहामकरत्वरितचरितचोक्षुभ्यमाणसन्तापनित्य-कचलच्चपलचञ्चलात्राणाशरणपूर्वकर्मसञ्चयोदीर्णावद्यवेद्यमानदुःखशतविपाकघूर्ण-ज्जलसमूहम् , तत्र—अण्णाणभमंतमच्छपरिहत्थ' अज्ञानभ्रमन्मत्स्यपरिग्रस्तम् = अज्ञानान्येव भ्रमन्तो मत्स्याः=अज्ञानरूपमहामत्स्यास्तैः परिग्रस्तं=व्याप्तम् , तथा 'अनिहुतिंदियमहामगर' अनिभृतेन्द्रियमहामकराः=अनिभृतानि=अनुपशान्तानि यानि इन्द्रियाणि तान्येव महामकरास्तेषां यानि 'तुरियचरिय' त्वरितचरितानि =शीघ्रसञ्चरणानि तैः 'खोक्खुब्भमाण' चोक्षुभ्यमाणः = अतिशयेन व्याकुली

आकृतिवाले हिंसक जंतुओं द्वारा (समाहय) आघात को प्राप्त करते (उद्धायमाणग) विविधचेष्टाओं में उछलते हुए समुद्रपक्ष में मत्स्या-दिक, संसारपक्ष में पुरुषादि के (पूर) समूह से जहां (घोर) भयंकर ऐसे (विद्धंसणत्थबहुलं) विनाशरूप अनेक अनर्थ उत्पन्न होते रहते हैं (अण्णाणभमंतमच्छपरिहत्थ—अनिहुतिंदियमहामगर—तुरिय—चरिय खो-क्खुब्भमाण-संतावनिच्चय-चलंत-चवल-चंचल—अत्ताणासरणपुव्वकम्म-संचयो दिण्णवज्ज वेदिज्जमाण—दुहसयविवाग—घुणंत—जलसमूहं) तथा यहां संसार समुद्र (अण्णाणभमंतमच्छपरिहत्थ) अज्ञानरूप घूमते हुए महामत्स्यो से व्याप्त हो रहा है और (अनिहुतिंदियमहामगर) अनुपशान्त इन्द्रियरूप महामकरों के (तुरियचरिय) शीघ्र संचरणों से

જંતુઓ દ્વારા "समाहय" આઘાત પામીને "उद्धायमाणग" વિવિધ રીતે ઉછળતા (સમુદ્રપક્ષે) મત્સ્યાદિક (સંસારપક્ષે) પુરુષાદિના "पूर" સમૂહથી જ્યાં "घोर" ભયંકર એવા "विद्धंसणत्थबहुल" વિનાશરૂપ અનેક અનર્થો ઉત્પન્ન કરતા રહે છે "अण्णाण—भमंत—मच्छ परिहत्थ—अनिहुतिंदिय—महामगर तुरिय—चरिय—खोक्खुब्भमाण—संताव—निच्चय—चलंत—चवलचचल—अत्ताणासरणपुव्वक-म्म—संचयो—दिण्णवज्ज—वेदिज्जमाण—दुहसय—विवाग—घुणंतजलसमूहं" તથા આ સંસાર સાગર "अण्णाणभमंत—मच्छ—परिहत्थ" અજ્ઞાનરૂપ ઘૂમતા મહામ-ત્સ્યોથી વ્યાપ્ત છે, અને "अनिहुतिंदिय महामगर" અનુપશાન્ત (ઉપશાન્ત ન થયેલી) ઈન્દ્રિયો રૂપ મહામગરોના "तुरियचरिय" ઝડપી હલનચલનથી

क्रियमाणो यः सः ' तथा ' संतावणिच्चय ' सन्तापनित्यकः=सन्तापः=विविधाधि व्याधिबन्धुवियोगादि जातः सागरस्थवडवाग्निसन्तापरूपो दुःखसन्तापो नित्यं यत्र स सन्तापनित्यकः, अतएव–' चलंतचवलचंचल ' चलच्चपलचञ्चलः=अत्यन्त-मस्थिरः, सततपरिवर्तनशीलमित्यर्थः तम् , तथा ' अत्ताणासरण ' अत्राणाऽशर-णानां, अत्राणानामशरणानां ' पुव्वकम्मसंचय ' पूर्वकर्मसञ्चयानां प्राणिनां उदीर्णम् =उदयमानं यत् ' वज्जं ' अवद्यं=पापं तस्य यः ' वेदिज्जमाण ' वेद्यमानः=उप-भुज्यमानः ' दुहसयविवाग ' दुःखशतरूपो विपाकः स एव घुर्णन्=भ्रमन् जल समूहो अत्र स तथा तम्, इड्ढिरससायगारवोहारगहियकम्मपडिबद्धसत्तकड्ढि-ज्जमाणनिरयतलदुत्तसण्णविसण्णबहुलं ' ऋद्धिरससातगौरवोपहारगृहीतकर्मप्रति-बद्धसत्त्वकृष्यमाणनिरयतलदुत्तसन्नविषण्णबहुलम् , तत्र ' इड्ढिरससायगारवो-हार ' ऋद्धि रससातगौरवोपहाराः=ऋद्धिरससातलक्षणानि गौरवाण्येव उपहाराः= जलचरविशेषास्तैः ' गहिय ' गृहीताः ' कम्मपडिबद्ध ' कर्मप्रतिबद्धाः=ज्ञानावर-

(खोक्खुब्भमाण) यह अत्यंत क्षुभित बना हुआ है । (संतावणिच्चय) विविध व्याधि, बन्धु वियोग आदि जन्य दुःखरूप वडवाग्नि का इसमें नित्य संताप छाया हुआ है । और यह (चलंतचवलचंचल) निरन्तर परिवर्तन शील है । एवं इस समुद्र में (अत्ताणा सरण) त्राण एवं शरण रहित ऐसे प्राणियों के जिनके पास (पुव्वकम्मसंचय) पूर्वकृत कर्मों का संचय मौजूद है (उदिण्णवज्ज) उदय में आया हुआ जो पापकर्म का (वेदिज्जमाणदुहसयविवागं) उपभुज्यमान जो दुःखशत (सैकड़ोंदुःख) रूप फल है वह फल ही वहां (घुणंतजलसमूहं) चलता हुआ जल भरा हुआ है .(इड्ढिरससायगारवोहारगहियकम्मपडिबद्धसत्तकड्ढिज्जमाणनि-रयतलदुत्तसण्णविसण्णबहुलं) ऋद्धि रससातरूप गौरव ही इस संसार समुद्र में (उवहार) उपहार जलचर जन्तु विशेष भरे हुए हैं

" खोक्खुब्भमाण " અત્યંત ખળભળી ઉઠેલ છે, " संतावणिच्चय " વિવિધ આધિ વ્યાધિ, બંધુ વિયોગ આદિ જન્ય દુઃખરૂપ વડવાનલનો સંતાપ તેમા નિત્ય વ્યાપેલો હોય છે, અને તે " चलंतचवलचंचल " નિરંતર પરિવર્તન શીલ છે, અને આ સંસારમાં " अत्ताणासरण " ત્રાણ અને શરણ રહિત એવા જીવો છે કે જેમની પાસે " पुव्वकम्मसंचय " પૂર્વે કરેલાં કર્મોનો સમૂહ રહેલો છે, " उदिण्णवज्ज" અને જે પાપકર્મોનો ઉદય થયો છે તે પાપકર્મોને " वेदिज्जमाण-दुहसयविवाग " ભોગવવા રૂપ સેંકડો દુઃખ " सैकडोदुःख " રૂપ જે ફળ છે, તે ફળ જ ત્યાં " घुणंतजलसमूह " વહેતા જળ સમાન છે. " इड्ढिरस-सायगारवोहार–गहियकम्म–पडिबद्ध–सत्त-कड्ढिज्जमाणनिर–यतलदुत्तसण्ण–विसण्ण-बहुलं " ઋદ્ધિ રસસાત રૂપ ગૌરવ જ આ સંસાર સાગરમા " उवहार "

णादिलक्षणैः कर्मभिर्बद्धाश्च ये 'सत्त' सत्त्वाः=प्राणिनस्तथा 'कड्ढिज्जमाण' कृष्यमाणाः=कृष्यकर्मबन्धनेन रज्जुबद्धकाष्टमिव नरकं प्रत्याकृष्यमानाः 'निरय-तल' नरक एव तलं=पातालं 'दुत्त' तदभिमुखं 'सण्ण' सन्नाः=नरकरूपपातालगमनाभिमुखत्वात् खिन्नाः तथा 'विसण्ण' विषण्णाश्च 'शोकातिशयं प्राप्ताः ये प्राणिनस्तै बहुलो यः स तथा तम् । तथा 'अरइरइभयविसायसोगमिच्छत्त-सेलसंकडं' अरतिरतिभयविषादशोकमिथ्यात्वशैलसंकटं = तत्र-अरतिः = धर्मेऽन्-रुचिः रतिः=विषयेषु रुचिः भयं=इहलोकादि सप्तभयानि विपादः=अनिष्टसंयोग-जनितदुःखं शोकः=इष्टवियोगजनितदैन्यं मिथ्यात्वं च कुदेवकुगुरुकुधर्मश्रद्धाल-क्षणमित्येतान्येव शैलाः=पर्वतास्तैः सङ्कटः=विषमो यः स तथा तम्, अरत्यादि

और इन उपहारों से इसमें (गहियकम्मपडियद्धसत्त) ज्ञानावरण आदि कर्मों से बद्ध प्राणी गृहीत बने हुए हैं। तथा (कड्ढिज्जमाण) पूर्वकृत कर्मबंधन के द्वारा रज्जु बद्ध काष्ठ की तरह यहां वह प्राणिवर्ग नरक की ओर खेंचा जा रहा है और (निरयतलदुत्त) नरकतक की ओर गमन करने में सन्मुख होनेकी वजह से यहां वह प्राणीवर्ग (सण्ण-विसण्णबहुलं) सन्न-खिन्न, एवं विषण्ण शोकातिशय को प्राप्त-हो रहा है। तथा (अरइरइभयविसायसोगमिच्छत्तसेलसंकडं) (अरइ) अरति-धर्ममें अरुचि, (रइ) रति-विषयों में रुचि, (भय) इहलोकभय, परलोक-भय आदि सात भय, (विसाय) विषाद-अनिष्ट संयोग जनित दुःख, (सोग) शोक-इष्ट वियोग जनित दैन्यभाव, (मिच्छत्त) मिथ्यात्व-कुगुरु, कुदेव और कुधर्म की श्रद्धा, ये ही सब इस संसारसमुद्र में (सेल) पर्वत जैसे हैं सो इन पर्वतोंसे यह (संकडं) विषम बना हुआ है।

ઉપહાર જળચર જન્તુ વિશેષ ભરેલ છે અને તે ઉપહારોથી તેમા " गहियकम्म-पडिवद्धसत्त " જ્ઞાનાવરણ આદિ કર્મોથી બંધાયેલ પ્રાણી સપડાયેલ છે. તથા " कड्ढिज्जमाण " પૂર્વે કરેલા કર્મો દ્વારા, દોરડાથી બાંધેલા કાષ્ઠની જેમ તે પ્રાણીઓ નરકની તરફ ખેંચાઈ રહ્યા છે, અને "निरयलदुत्त" નરક તરફ ગમન કરવાને અભિમુખ હોવાને કારણે તે પ્રાણીઓ "सण्णविसण्णबहुलं" ખિન્ન અને અતિશય શોક યુક્ત થઈ રહ્યાં છે. તથા " अरइ-रइभय-विसाय-सोगमिच्छत्त सेलसंकडं " " अरइ " અરતિ-ધર્મમા અરુચિ, " रइ " રતિ-વિષયોમાં રતિ, "भय" આલોકનો ભય, પરલોકનો ભય આદિ સાત ભય, "विसाय" વિષાદ-અનિષ્ટ સંયોગ જનિત દુઃખ " सोग " શોક-ઇષ્ટ વિયોગ જનિત દૈન્યભાવ, " मिच्छत्त " મિથ્યાત્વ. કુગુરુ, કુદેવ અને કુધર્મની શ્રદ્ધા, એ બધું આ સંસારસાગરમાં " सेल " પર્વત જેવુ છે, એ પર્વતોથી તે "संकडं" વિષમ

दुःखैर्व्याप्तमित्यर्थः। तथा 'अणाइसंताणकम्मबंधणकिलेसचिक्खिल्लदुट्टुत्तार' अनादिसन्तानबन्धनक्लेशचिक्खिल्लदुष्टूत्तारम् , तत्र-अनादिः=आदि रहितः सन्तानः=विस्तारो यस्य तत्तथाभूतं यत् कर्मबन्धनं तद्रूप एव 'किलेस' क्लेशः=दुःखं तद्रूपमेव चिक्खिल्लं=कर्दमस्तेन दुष्टूत्तारः=दुस्तरः यः स तथा तम्। तथा-'अमरनरतिरियनिरयगइगमणकुडिलपरिवट्टविउलवेलं' अमरनरतिर्यङ्नरकगतिगमन-कुटिलपरिवर्तविपुलवेलं=तत्र- अमरनरतिर्यङ्नरकचतुर्गतिषु-यद् गमनं तदेव कुटिला वक्रा परिवर्ताः=गोलाकारा एव विपुला=विस्तीर्णा वेला=समुद्रजलवृद्धि-रूपा यत्र स तथा तं, नरकादि चतुर्गतिचक्रभ्रमणपरम्पराभिः समुद्रजलवृद्धिरूपा-भिर्युक्तमित्याशयः। तथा 'हिंसालियअदत्तादाणमेहुणपरिग्गहारंभकरणकरावणा-णुमोयण-अट्ठविहअणिट्ठकम्मपिंडियगुरुभरक्कंतदुग्गजलोघदूरनिवोलिज्जमाणउम्मग्ग-निम्मग्गदुल्लहतलं' हिंसाऽलीकादत्तादानमैथुनपरिग्रहारम्भकरणकारणानुमोदना-ष्टविधानिष्टकर्मपिण्डितगुरुभाराक्रान्तदुर्गजलौघदूरनिवोल्यमानोन्मार्गनिमग्नदुर्लभ-तलम् , तत्र-'हिंसालियअदत्तादाणमेहुणपरिग्गहारंभ' हिंसाऽलीकाऽदत्तादान-

---

तथा (अणाइसंताणकम्मबंधण किलेसचिक्खिल्लदुट्टुत्तारं) जिसका विस्तार आदि से रहित है ऐसे कर्मबंधन जन्य क्लेशरूप (चिक्खिल्ल) कीचड से यह (दुट्टुत्तारं) दुस्तर बना हुआ है तथा (अमरनरतिरियनिरयगइगमणकुडिलपरिवट्टविउलवेलं) देव, नर, तिर्यंच और नरक, इन चार गतियों में जो जीवोंका गमन है वही इस समुद्र की कुटिल गोलाकार विस्तर्ण वेला है, अर्थात् नरकादि चतुर्गतिरूप यह संसार है। इसमें जीवचक्र की तरह परिभ्रमण करते रहते हैं। यह परिभ्रमण की जो परंपरा है वही इस समुद्र की जल वृद्धि रूप वेला है। (हिंसालिय अदत्तादान मेहुणपरिग्गहारंभकरणकरावणाणुमोयण) हिंसा, झूठ, अदत्तादान, मैथुन, परिग्रहरूप आरम्भों का करना

બનેલ છે તથા "अणाइ-संतण-कम्मबंधण-किलेसचिक्खिल्ल-दुट्टुत्तार" અનાદિ કર્મબંધન જન્ય ક્લેશરૂપ "चिक्खिल्ल" કીચડથી તે "दुट्टुत्तारं" દુસ્તર બનેલ છે, તથા "अमरनरतिरियगइगमणकुडिलपरिवट्टविउलवेलं" દેવ, નર, તિર્યંચ અને નરક, એ ચાર ગતિયોમાં જીવોનું જે ગમન થાય છે એ જ આ સંસાર સમુદ્રની કુટિલ ગોળાકાર વિસ્તીર્ણ વેલા છે, એટલે કે નરકાદિ ચાર ગતિરૂપ આ સંસાર છે. તેમાં ચક્રની જેમ જીવો પરિભ્રમણ કરે છે. આ પરિભ્રમણની જે પરંપરા છે તેજ આ સમુદ્રની જળ વૃદ્ધિરૂપ વેલા છે. "हिंसालिय-अदत्तादान-मेहुणपरिग्गहारंभकरणकरावणाणुमोयण" હિંસા, જૂઠ, અદત્તાદાન, મૈથુન, પરિગ્રહરૂપ આરંભો કરવા, અને તેની અનુમોદના

मैथुनपरिग्रहरूपा ये आरम्भाः=व्यापारास्तेषां यानि करणकारणानुमोदनानि=करणं स्वयं, कारणं=अन्यैरनुष्ठापनम् , अनुमोदनं च=कृतकारितादेः प्रशंसन मित्येतैः प्रकारैः 'अट्ठविह' अष्टविधं यत् 'अनिट्ठकम्मपिंडिय' अनिष्टकर्मपिण्डितं=दुःखदकर्मसञ्चयः तदेवगुरुभारस्तेन 'अक्कंत' अक्रान्ता ये जीवास्तेषां दुर्गाण्येव=दुःखान्येव यो 'जलोघ' जलौघः=जलपूरः तत्र दूरं=अत्यर्थं 'निवोलिज्जमाण' निवोल्यमानाः=क्षुब्ध्यमानाः, 'उम्मग्गनिमग्ग' उन्मग्ननिमग्नाश्च =दुखरूपजले उर्ध्वाऽधो गम्यमानाः ये प्राणिनस्तैः 'दुल्लहतलं' दुर्लभतलं=दुर्लभं=दुष्प्राप्यं तलं यस्य स तथा तं–हिंसाऽलीकादिपञ्चास्रवजनिताऽष्टविधकर्मभाराक्रान्तैः नानाविधदुःखरूपागाधजले निमज्जनोन्मज्जनं कुर्वद्भिर्जीवैर्दुष्पाराऽ-

---

कराना अनुमोदन करना, इन पूर्वोक्त प्रकारों से जो (अट्ठविह अणिट्ठ कम्मपिंडिय) दुःखद आठ प्रकारके कर्मोंका संचय होता है, उस कर्म संचय रूप भार से (अक्कंत) आक्रान्त–भारी बने हुए तथा (दुग्गजलोघ) दुःख रूप जलसमूह में (दूरनिव्वोलिज्जमाण) अत्यन्त डूबते हुए तथा (उमग्गनिम्मग्ग) ऊब डूब करते हुए अर्थात् ऊँचे नीचे आते हुए ऐसे प्राणियों के लिये यह संसार समुद्र (दुल्लहतलं) अलभ्य तलवाला है अर्थात् इस संसार समुद्र को पूर्वोक्त प्रकार के जीव पार नहीं कर सकते हैं। अर्थात् इस संसारसमुद्र का तल–थाह ऐसे जीवोंसे अप्राप्त है जो हिंसा, झूठ, अदत्तादान, मैथुन, परिग्रहरूप आरंभो के करना, कराना, एवं उनकी अनुमोदना में लगे हुए हैं, क्यों कि इन पूर्वोक्त प्रकारों से वे जीव दुःखद अष्टविध कर्मों का संचय कर लेते हैं इस कारण उन पर इसका बहुत भारी भार हो जाता है। इससे वे दब जाते

કરવી, એ પૂર્વોક્ત પ્રકારે જે "अट्ठविहअणिट्ठकम्मपिंडिय" આઠ પ્રકારનાં, દુઃખદ કર્મોનો સંચય થાય છે, તે કર્મસંચયરૂપ ભારથી "अक्कंत" આક્રાંત–ભારે બનેલ તથા दुग्गजलोघ " દુઃખરૂપ જળસમૂહમાં दूरनिव्वोलिज्जमाण " અત્યંત ડૂબતા, તથા "उम्मगनिमग्ग" પાણીમાં ડૂબા ડૂબ કરતાં–ઊંચે નીચે આવતાં એવાં પ્રાણીઓને માટે આ સંસાર સમુદ્ર "दुल्लहतलं" અલભ્ય તલવાળો છે એટલે કે આ સંસારસાગરને પૂર્વોકત પ્રકારના જીવો તરી શકતાં નથી એટલે કે હિંસા, જૂઠ, અદત્તાદાન, મૈથુન, પરિગ્રહરૂપ આરંભો કરનાર, કરાવનાર અને તેમની અનુમોદના કરનાર જીવોને આ સંસારસાગરનો કિનારો પ્રાપ્ત કરવો અશક્ય છે કારણ કે પૂર્વોકત પ્રકારે તે જીવો આઠ પ્રકારનાં દુઃખદ કર્મોનો સંચય કરે છે તેથી તેમના પર તેમનો ઘણો ભારે બોજો હોય છે. તેનાથી તેઓ દબાઈ જાય છે, અને વિવિધ પ્રકારનાં

न्तस्तलमित्यर्थः तमेवंभूतं संसारसागरं 'सरीरमणोमयाणि दुक्खाणि उप्पियंता' शरीरमनोमयानि दुःखानि उत्पिबन्तः=कायिकानि मानसिकानि च विविधानि दुःखानि आस्वादयन्तः अनुभवन्त इत्यर्थः, 'सायासायपरितावणमयं उव्वुड्डनिव्वुड्डयं करेंता' साताऽसातपरितापनमयमुद्बुडननिब्रुडनकं कुर्वन्तः=सुखदुःखतापात्मकमुन्मज्जननिमज्जनमनुभवन्तः सातं=सुखं तदात्मकमुन्मज्जनमसातपरितापनं दुःखसन्तापस्तदात्मकं निमज्जनमनुभवन्तः 'चउरंतमहंतं' चतुरन्तमहान्तं =चतुरन्तं=नरकादि चतुर्विभागयुक्तं महान्तम् अनन्तं जन्ममरणादिदुःखयुक्तत्वात्। तथा 'अणवयग्गं' अनवदग्रं=अनन्तम्-अन्तरहितमित्यर्थः, 'रुद्द' रुद्रं=सकल

हैं और नाना प्रकार के दुःखोंको भोगा करते हैं. अतः यह दुःख समूह ही इस संसार समुद्र में अथाह जल भरा हुआ है। उसमें ही ये जीव बहुत अधिक रूप में डूबकियां लेते रहते हैं, उन्मग्न, निमग्न होते रहते हैं। फिर वे इसके अन्तस्तल को कैसे प्राप्त कर सकते हैं? नहीं कर सकते। इसलिये सूत्रकार ने ऐसे जीवों के लिये इसका पार पाना थाह प्राप्त करना-दुःशक्य-असंभव कहा है। (सरीरमणोमयाणी) इस संसार सागर में पडे हुऐ जीव शारीरिक एवं मानसिक (दुक्खाणि) दुःखोंका ही (उप्पियंता) अनुभव करते हैं। तथा (सायासायपरितावणमयं) सातासात परितापन रूप (उव्वुडनिव्वुडयं) उन्मज्जन निमज्जन अर्थात् सातात्मक उन्मज्जन तथा असातात्मक एवं परितापात्मक निमज्जन (करेंता) करने में तल्लीन हुए ये जीव (चाउरंतमहंतं) नरकादि गति रूप चार विभागों से युक्त तथा जन्म मरणादि के अनन्त दुःखों से महान्, (अणवयग्गं) अन्तरहित (रुद्दं) समस्त प्राणियोंको भयजनक,

---

દુઃખો ભોગવ્યા કરે છે તેથી આ સંસારસાગરમાં દુઃખ સમૂહરૂપ અપાર જળ ભરેલુ છે. તેમાં જ તે જીવો વરંવાર ડુબકીઓ ખાધાં કરે છે તો પછી તેઓ તેના કિનારે તો પહોંચી કેવી રીતે શકે? તે કારણે સૂત્રકારે એવા જીવોને માટે તેનો પાર પામવાનું કાર્ય અશક્ય બતાવ્યું છે "सरीरमणोमयाणि" આ સંસાર સાગરમાં પડેલા જીવો શારીરિક માનસિક "दुक्खाणि" દુઃખોનો જ "उप्पियंता" અનુભવ કરે છે. તથા "सायासायपरितावणमयं" સાતાસાત પરિતાપન રૂપ "उव्वुडनिव्वुडयं" ઉન્મજ્જન નિમજ્જન એટલે કે સાતાત્મક ઉન્મજ્જન (પાણીની ઉપર આવવું તે) તથા અસાતાત્મક અને પરિતાપાત્મક નિમજ્જન (ડૂબવું તે) "करेंता" કરવામાં લીન થયેલ તે જીવો "चाउरंतमहंतं" નરકાદિ ગતિરૂપ ચાર વિભાગોવાળા તથા જન્મ મરણાદિ દુખોથી મહાન, "अणवयग्गं" અન્તરહિત, "रुद्दं" બધાં પ્રાણીઓને

प्राणिभयजनकं, 'संसारसायरं' संसारसागरं, वसन्तीत्यग्रेण सम्बन्धः कीदृशं संसारसागरमित्याह–'अट्ठिय अणालंबणपइट्ठाणं' अस्थिताऽनालम्बनप्रतिष्ठानम्=अस्थितानाम्=संयमानुष्ठानरहितानां न विद्यते आलम्बनम्=अवलम्बः प्रतिष्ठानं=रक्षाकरणं यत्र स तथा तं असंयमिनामाधारवर्जितं त्राणवर्जितं चेत्यर्थः, तथा 'अप्पमेयं' अप्रमेयम्=असर्वज्ञेनाऽपरिच्छेद्यं 'चुलसीयजोणिसयसहस्सगुविलं' चतुरशीतियोनिशतसहस्रगुपिलं=चतुरशीतिलक्षयोनिव्याप्तं योनिनाम संख्यातत्वेऽपि समवर्णगन्धरसस्पर्शानामेकत्वविवक्षणादुक्तसंख्यासामञ्जस्यं बोध्यं तत्र गाथा यथा–

ऐसे (संसारसायरं) संसार सागर में (वसंति) बसते हैं, ऐसा सम्बन्ध कर लेना चाहिये। किस प्रकार के संसारसागर में बसते हैं सो कहते हैं–(अट्ठि य अणालंबणपइट्ठाणं) असंयमी जीवों के आलम्बन एवं रक्षा करने के साधनसे रहित (अप्पमेयं) कोल्हूका बेल चारों तरफ फिरनेसे पार नहीं पाता वैसे ही चतुर्गतिमें जन्ममरणसे पार नहीं पानेसे अप्रमेय, (चुलसीइजोणिसयसहस्सगुविल) चौरासीलक्ष जीव योनीयों से युक्त, (अणालोगं) प्रकाशवर्जित, एवं (अंधयारं) अंधकार से युक्त इस संसार में (अणंतकालं जाव) अनन्तकाल तक (णिच्चं) सदा (उत्तत्थ सुण्णभय-सण्णसंपउत्ता) भयभीत बने हुए तथा किंकर्तव्यता से विमूढ हुए भय से एवं संज्ञा–आहार, परिग्रह एवं मैथुन संज्ञाओं से सम्बद्ध बनें हुए जीव (उव्विग्गवासवसहिं) उद्विग्नों के वासस्वरूप इस संसार में (वसंति) बसते हैं। जो अदत्तग्राही जीव हैं वे चतुर्गतिरूप तथा अनंत दुःखो से युक्त इस संसारसागर में अनंत काल तक परिभ्रमण करते रहते हैं। चौरासी लाख योनियां इस प्रकार से हैं—

માટે ભયજનક, એવા "संसारसायरं" સંસાર સાગરમાં "वसंति" વાસ કરે છે. તેઓ કેવા પ્રકારના સંસાર સાગરમાં વસે છે? "अट्ठिय अणालंवण-पइट्ठाणं" અસંયમી જીવોને આધાર આપવાનો તથા તેમનું રક્ષણ કરવાના સાધનોથી રહિત, "अप्पमेयं" અસર્વજ્ઞની અપેક્ષાએ અપ્રમેય, "चुलसीइ-जोणिसयसहस्सगुविलं" ચોર્યાશી લાખ જીવ યોનિયોથી યુક્ત, "अणालोगं" પ્રકાશ રહિત, અને "अंधयारं" અંધકારથી યુક્ત આ સંસારમા "अणंतकाल-जाव" અનન્ત કાળ સુધી "णिच्चं" સદા "उत्तत्थसुण्णभयसण्णसंपउत्ता" ભયભીત બનેલ, તથા કિંકર્તવ્યતાથી વિમૂઢ બનેલ, ભય સંજ્ઞા, આહાર સંજ્ઞા, મૈથુન સંજ્ઞા, અને પરિગ્રહ સંજ્ઞાઓથી યુક્ત બનેલ જીવો "उव्विग्गवासवसहिं" ઉદ્વિગ્નોના–(દુઃખીયારાના) વાસ જેવા આ સંસારમાં "वसति" વસે છે અદત્તાદાન લેનાર જીવો ચાર ગતિરૂપ તથા અનંત દુઃખોથી યુક્ત આ સંસાર સાગરમાં અનંત કાળ સુધી પરિભ્રમણ કર્યા કરે છે. ચોર્યાશી લાખ યોનિયો આ પ્રમાણે છે.

"पुढवि७ दग७ अगणि७ मारुय७, एक्केक्कसत्तजोणि लक्खाओ।
वणपत्तेय अणंते, दसचोदस जोणिलक्खाओ ॥ १ ॥
विगलिंदिएसु दो दो, चउरो चउरो य नारय सुरेसु।
तिरिएसु हुंति चउरो, चोदसलक्खा य मणुएसु" ॥ २ ॥

तथा 'अणालोगं' अनालोकं=प्रकाशवर्जितम् अन्धकारम्=अन्धकारयुक्तमेव-संसारसागरम् 'अणंतकालं जाव' अनन्तकालं यावत् 'णिच्चं' नित्यं=सदा 'उत्तत्थसुण्णभयसण्णसंपउत्ता' उत्त्रस्तशून्यभयसंज्ञासंप्रयुक्ताः=तत्र उत्त्रस्ताः=भयभीताः शून्याः=किं कर्तव्यविमूढाः, तथा भयसंज्ञासम्प्रयुक्ताः=भयेन संज्ञाभिश्च=आहारमैथुनपरिग्रहादिभिः सम्प्रयुक्ताः=सम्बद्धाः 'उव्विग्गवासवसहिं' उद्विग्नवासवसतिं=उद्विग्नानां वासो यत्र स तथा तं संसारं वसन्ति, अदत्तादायिनः चतुर्गतिलक्षणमनन्तदुःखं संसारसागरमनन्तकालं भ्रमन्तीत्यर्थः, इह वसेर्निरुपसर्गस्यापि सकर्मकत्वमार्षत्वात् ॥ सू० १९ ॥

"पुढवि७ दग७ अगणि७ मारुय७ एक्केक सत्तजोणिलक्खाओ।
वणपत्ते य अणंते, दस चोद्दस जोणि लक्खाओ ॥१॥
विगलिंदिएसु दो दो, चउरो चउरो य नारयसुरेसु।
तिरिएसु हुंति चउरो, चोद्दस लक्खाय मणुएसु ॥२॥" इति।

(१) पृथिवीकाय, (२) अप्काय, (३) तेजःकाय, (४) वायुकाय (५) इनकी सात सात लाख, प्रत्येक वनस्पति दश लाख, अनन्त (साधारण) वनस्पति चौदह लाख, दो इन्द्रिय, ते इन्द्रिय, चौ इन्द्रिय इनकी दो दो २-२ लाख, नारकी तथा देव इनकी चार चार ४-४ लाख तथा तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय की चार ४ लाख और मनुष्य की चौदह १४ लाख। इस प्रकार ये सब मिल कर चोरासी ८४ लाख योनीयां होती हैं ॥सू. १९॥

"पुढवि ७ दग ७ अगणि ७ मारुय ७ एक्केक सत्तजोणि लक्खाओ।
वणपत्ते य अणंते, दस चोदस जोणि लक्खाओ ॥ १ ॥
विगलिंदिएसु दो दो, चउरो चउरो य नारयसुरेसु।
तिरिएसु हुंति चउरो, चोदस लक्खाय मणुएसु ॥ २ ॥ इति।

(१) પૃથિવીકાય (૨) અપ્કાય (૩) તેજઃકાય (૪) વાયુકાય, એ દરેકની સાત સાત લાખ, પ્રત્યેક વનસ્પતિની દસ લાખ અનન્ત (સાધારણ) વનસ્પતિની ચૌદ લાખ બે ઇન્દ્રિની બે લાખ, ત્રીન્દ્રિની બે લાખ, ચતુરિન્દ્રિની બે લાખ, નારકી તથા દેવની ચાર ચાર લાખ તથા તિર્યંચ પંચેન્દ્રિની ચાર લાખ, અને મનુષ્યની ચૌદ લાખ. એ પ્રમાણે બધી મળીને ચોર્યાશી લાખ યોનિયો થાય છે. ॥સૂ૦ ૧૯॥

पुनरप्यदत्तादायिनः कीदृशाः सन्तः किं फलं प्राप्नुवन्तीत्याह-'जहिं' इत्यादि

मूलम्—जहिं जहिं आउयं निबंधंति पावकम्मकारी बंधवजणसयणमित्तपरिवज्जिया अणिट्ठा भवंति अणादेज्जा दुव्विणोया कुट्ठाणासण कुसेज्जा कुभोयणा असुइणो कुसंघयणकुप्पमाणा कुसंठिया कुरूवा बहुकोहमाणमायालोभा बहुमोहाधम्मसण्णसम्मत्तपब्भट्ठा दारिद्दोवद्दवाभिभूया निच्चं परकम्मकारिणो जीवणत्थरहिया किविणा परपिंडतक्कगा दुक्खलद्धाहारा अरसविरसतुच्छकयकुक्खिपूरापरस्सपेच्छंता रिद्धिसक्कारभोयणविसेससमुदयविहिं निंदंता अप्पयंकयं तं च परिवयंता । इह य पुरेकडाइं कम्माइं पावगाइं विमणसो सोएण डज्झमाणा परिभूया हुंति सत्तपरिवज्जिया य छोभा सिप्पकलासमयसत्थपरिवज्जिया जहाजायपसुभूया अचियत्ता निच्चं नीयकम्मोवजीविणो लोयकुच्छणिज्जा मोहमणोरहा निरासबहुला आसापासपडिबद्धपाणा अत्थोप्पायण कामसोक्खे य लोयसारेहुंति अफलवंतगा य सुट्ठुअवि उज्जमंता तद्दिवसुज्जुत्तकम्मकयदुक्खसंठवियसित्थपिंडसंचयपराखीणदव्वसारा णिच्चं धणधण्णकोसपरिभोगविवज्जिया रहियकामभोगपरिभोगसव्वसोक्खा परसिरि भोगोवभोगनिस्साणमग्गणपरायणा वरागा अकामिकाए विणियंति दुक्खं, णेवसुहं णेवणिव्वुइं उवलंभंति अच्चंतविउल दुक्खसयसंपलित्ता परस्स दव्वेहिं जे अविरया ॥सू० २०॥

टीका—' पावकम्मकारी ' पापकर्मकारिणस्तेऽदत्तादायिनः ' जहिं-जहिं आउयं निबंधंति ' यत्र यत्र आयुर्निबध्नन्ति=यत्र यत्र ग्रामकुलादौ आयुर्निबध्नन्ति तत्र तत्र समुत्पद्यन्ते इत्यर्थः । तत्र कीदृशा भवन्ती ? त्याह–' बंधवजणसयणमित्त-परिवज्जिया ' बान्धवस्वजनमित्रपरिवर्जिताः = तत्र बान्धवजनैः=भ्रात्रादिभिः, स्वजनैः=पुत्रादिभिः, स्नेहिजनरूपमित्रैश्च परिवर्जिताः=रहितास्त्यक्ता वा भवन्ति, पुनः ' अणिट्ठा ' अनिष्टाः=सकललोकस्याऽप्रियाः, तथा ' अणादेज्जा ' अनादेयाः =अनादेयवचननामगोत्रादिमन्तः । तथा ' दुव्विणीया ' दुर्विनीताः = उद्धताः ' कुट्ठाणासणकुसेज्जा ' कुस्थानासनकुशय्याः=कुत्सितं स्थानं=कुग्रामवासादिरूप-

ये अदत्तग्राही और भी क्या फल प्राप्त करते है ? इसी विषय को सूत्रकार पुनः स्पष्ट करते हैं—' जहिं जहिं ' इत्यादि० ।

टीकार्थ–(पावकम्मकारी) अदत्तादानरूप पाप कर्मकारी मनुष्य (जहिं२-आउयं निबंधंति) जिस२ पर्याय की आयु बांधते हैं वे उस२ पर्याय में उत्पन्न होते हैं वहां पर उनकी स्थिति कैसी होती है ? सूत्रकार इसी बातको आगे के पदों द्वारा प्रकट करते हैं, वे कहते हैं कि (बंधवजण-सयणमित्तपरिवज्जिया) वे वहां भ्रातृ आदी बांधवजनों से, पुत्र आदि रूप स्वजनों से एवं स्नेहीजन रूप मित्रों से सदा परिवर्जित होते हैं। (अणिट्ठा) कोइ भी लोग इनसे प्रीति नहीं करते हैं, तथा (अणादेज्जा) ये ऐसे गोत्रादि वाले होते हैं, की जिनका वचन कोइ नहीं मानते हैं यहां तक कि जिनका नाम लेना भी भले मनुष्य अच्छा नहीं समझते हैं। (दुव्विणीया) दुर्विनीत–उद्धत होते हैं। (कुट्ठाणासणकुसेज्जा)

તે અદત્તગ્રાહી બીજું કયું ફળ પ્રાપ્ત કરે છે, તે વિષયનું સૂત્રકાર હજી પણ વધારે સ્પષ્ટીકરણ કરે છે–" जहिं जहिं " ઈત્યાદિ

ટીકાર્થ–"पावकम्मकारी" અદત્તાદાનરૂપ પાપકર્મ કરનાર મનુષ્ય "जहिं२ आउयं-निबंधंति" જે જે પર્યાયની આયુ બાંધે છે તે તે પર્યાયમાં ઉત્પન્ન થાય છે. ત્યાં તેમની કેવી હાલત થાય છે? સૂત્રકાર એ જ વાતને હવેના પદો દ્વારા પ્રગટ કરે છે. તેઓ કહે છે કે— "बंधवजणसयणमित्तपरिवज्जिया" તે લોકો ત્યાં ભાઈ આદિ બન્ધુજનોથી, પુત્ર આદિ સ્વજનોથી, અને સ્નેહીજનરૂપ મિત્રોથી સદા ત્યજાયેલા રહે છે, "अणिट्ठा" કોઈ પણ લોકો તેમના પ્રત્યે પ્રીતિ ધરાવતા નથી, તથા "अणादेज्जा" તેઓ એવાં ગોત્રાદિ વાળા હોય છે કે તેમની વાત કોઇ માનતુ નથી, એટલુ જ નહી પણ તેમનું નામ લેવુ તે પણ સારા માણસોને યોગ્ય લાગતું નથી. "दुव्विणीया" દુર્વિનીત–ઉદ્ધત હોય છે, "कुट्ठाणासणकुसेज्जा" કુગ્રામોમાં તેમનું રહેઠાણ હોય છે, અને તેમની રહેણી

ईर्ष्याबुद्ध्यापश्यन्तः, ततश्च 'अप्पयं' आत्मानं 'कयंतं' कृतान्तं=कर्तव्यं च 'निंदंता' निन्दन्तः=निन्दां कुर्वन्तः, 'इह य पुरे कडाइं कम्माइं पावगाइं' इह=लोके पुरा=जन्मान्तरे च कृतानि पापकानि=पापानि कर्माणि 'परिवयंता' परिवदन्तः=निन्दन्तः 'विमणसो' विमनसः=दीनाः सन्तः 'सोएण डज्झमाणा' शोकेन दह्यमानाः=अभीष्टवस्तूनामप्राप्तिदुःखेन सन्तप्यमानाः सन्तः 'परिभूया· हुंति' परिभूताः=जनैरनादृतादुःखमाप्ताश्च भवन्ति । तथा 'सत्तपरिवज्जिया य' सत्त्वपरिवर्जिताश्च मनोबलहीनाः 'छोभा' क्षोभ्याः=निस्सहायत्वात्परिभवनीयाः, 'सिप्पकलासमयसत्थपरिवज्जिया' शिल्पकलासमयशास्त्रपरिवर्जिताः=तत्र शिल्पं

संपत्ति, सत्कार, सन्मान, तथा भोजन, इनके विशेष प्रकारों की समुदय विधिको ईर्ष्याभाव से देखते हैं और अपने भाग्यकी आत्माकी तथा अपने पापकारी कर्त्तव्य की निंदा करते हैं । हमने (इह य) इस संसार में (पुरे) पूर्वभव में (पावगाइं कडाइ) पापकर्म किये हैं उनका ही यह फल हमें भोगने को मिला है इस प्रकार (परिवयंता) दूसरों से कहते हुए (विमणसो) स्वयं दीन होकर (सोएण डज्झमाणा) शोक से जलते हुए (परिभूया) दुःखी (हुंति) होते हैं अर्थात् अभीष्ट वस्तु की अप्राप्ति के दुःख से निरन्तर सन्तप्यमान होते हुए भीतर ही भीतर खेद खीन्न बने हुए ये दूसरों के द्वारा अनादृत होते रहते हैं एवं दुःखों को भोगते रहते है । तथा (सत्तपरिवज्जिया य) मनोबल से रहित बने हुए ये (छोभा) निस्सहाय होनेके कारण हरएक व्यक्ति के द्वारा अनादरणीय होते रहते हैं । तथा (सिप्प) चित्रादिकों को

सन्मान, तथा ભોજન, तथा तेना सद्भाग्य प्रत्ये तेओ ईर्ष्या भावथी जुवे छे, तथा पोताना भाग्यनी, आत्मानी तथा पोतानां पापकृत्योनी निंदा करे छे. 'अमे "इहय" आ संसारमां "पुरे" पूर्वभवमां "पावगाइं कडाइं" पापकर्मो कर्यां छे, एनुं ज आ फळ अमारे भोगववुं पडे छे,' ए प्रमाणे "परिवयंता" बीजाने कहेता "विमणसो" पोते दीन थईने "सोएण डज्झमाणा" शोकथी जळता "परिभूया" दु:खी "हुंति" थाय छे. एटले के ईच्छित वस्तुनी प्राप्ति न थवाना दु:खथी निरंतर संतापयुक्त थईने मनमां ने मनमां उद्विग्न बनीने तेओ बीजा लोको द्वारा तिरस्कृत थया करे छे, अने दु:खो भोगव्या करे छे. तथा "सत्तपरिवज्जिया य" मनोबळथी रहित एवां ते "छोभा" असहाय होवाने कारणे दरेक व्यक्ति द्वारा अनादरणीय (तिरस्कृत) थया करे छे. तथा "सिप्प" चित्रादिनी रचना करवाना विज्ञानथी, "कला"

चित्रादि विज्ञानं कला=धनुर्वेदादिका समयशास्त्रं=आर्हतादिकं, तैः परिवर्जिताः= रहिताः 'जहाजायपसुभूया' यथाजातपशुभूताः=यथा जाता=जन्मकाले यादृश गुणविशिष्टास्तथैव स्थिता नतु शिक्षादिना विशेषतां प्राप्ताः एवंभूता ये पशवः= बलीवर्दादयस्तद्वद्भूताः=तत्सदृशाः 'अवियत्ता' अयं देशीशब्दः अप्रीतिकाः= अप्रीतिकारकाः 'निच्चं नीयकम्मोवजीविणो' नित्यं नीचकर्मोपजीविनः = सदा हिंसादिवृत्त्युपजीविनः 'लोयकुच्छणिज्जा' लोककुत्सनीयाः = सर्वजनैर्निन्दनीयाः 'मोहमणोरहा' मोघमनोरथाः = निष्फलमनोरथाः,

---

उत्कीर्ण करने रूप विज्ञान से, (कला) धनुर्वेद आदि रूप कलाओं से एवं (समय सत्थ) अर्हत प्रणीत शास्त्रों के अभ्यास से, (परिवज्जिया) रहित होकर (जहा जायपसुभूया) यथाजात पशु जैसे बने हुए ये (अवियत्ता) किसी के भी साथ प्रीति नहीं करते हैं क्यों कि ये (निच्चं नीयकम्मोवजीविणो) नित्य ही नीच कर्मोपजीवी होते हैं। यथा जात पशुभूतका वाच्यार्थ इस प्रकार है-उत्पन्न होते समय पशु जिन गुणों से युक्त रहता है आगे भी वह वडा होने पर भी शिक्षादिक की प्राप्ति से अपनी तरक्की नहीं कर सकने के कारण वैसा ही बना रहता हैं, इसी तरह ये अदत्तग्राही व्यक्ति भी होते है हेय और उपादेय के ज्ञान से विकल जैसे ये जन्मते समय में थे वैसे ही ये वड़े होने पर भी रहते हैं, अतःइन्हे यथा जात पशुभूत कहा गया है। (लोय कुच्छ-णिज्जा) समस्तजन इनकी निंदा किया करते हैं। (मोहमणोरहा) इनके जितने भी मनोरथ होते हैं वे सब मोघ-असफल ही रहते हैं।

ધનુર્વેદ આદિ કલાઓથી, અને "समयसत्थ" અહંત પ્રણીત શાસ્ત્રોના અભ્યાસથી. "परिवज्जिया" રહિત હોવાને કારણે "जहा जाय पसुभूया" યથાજાત પશુના જેવા લાગતા તેઓ "अवियत्ता" કોઈની પણ સાથે પ્રીતિ રાખતા નથી, કારણ કે તેઓ "निच्चं नीयकम्मोवजीविणो" હંમેશા નીચ કર્મોપજીવી હોય છે. 'यथा जात पशुभूत' નો વાચ્યાર્થ આ પ્રમાણે છે- ઉત્પન્ન થતી વખતે પશુ જે ગુણોથી યુક્ત હોય છે એ જ ગુણોથી યુક્ત મોટું થતાં પણ રહે છે-તે મોટું થાય તો પણ શિક્ષાદિકની પ્રાપ્તિ વડે પોતાની ઉન્નતિ કરી શકતું નથી. એ જ રીતે અદત્તાદાન લેનાર વ્યક્તિ પણ જન્મ સમયે હેય અને ઉપાદેયના જ્ઞાનથી જેટલી રહિત હોય છે એટલી જ મોટી ઉંમરે પણ તે જ્ઞાનથી રહિત રહે છે તેથી તેને "यथा जात पशुभूत" કહેલ છે "लोयकुच्छणिज्जा" સઘળા લોકો તેમની નિંદા કરે છે, "मोहमणोहरा" તેમના સઘળા મનોરથો અપૂર્ણ રહે છે. "निरासबहुला" ઇચ્છિત વસ્તુ ન

मासनं=नीचावस्थानादिलक्षणं तथा कुत्सिता शय्या विषमभूम्यादिरूपा येषां ते तथा, 'कुभोयणा' कुभोजनाः क्रोद्रवादिकदन्नाशिनः 'असुइणो' अशुचयः= शुचिवर्जिताः, 'कुसंघयणकुप्पमाणा' कुसंहनन कुप्रमाणाः=कुसंहननाः=सेवार्तादि संहननयुक्ताः कुप्रमाणाः=कुत्सित शरीरस्य प्रमाणं येषां ते तथा अतिदीर्घा अति-ह्रस्वावेत्यर्थः, तथा 'कुसंठिया' कुसंस्थिताः=कुत्सिता हुण्डादि संस्थानयुक्ताः 'कुरूवा' 'कुरूपाः' 'वहुकोहमाणमायालोभा' वहुक्रोधमानमायालोभाः अति-क्रोधादियुक्ताः वहुमोहाः=अतिकामाः 'धम्मसण्णासम्मत्तपब्भट्ठा' धर्मसंज्ञास-म्यक्त्वपरिभ्रष्टाः=धर्मसंज्ञायाः=श्रुतचरित्रलक्षणधर्मबुद्धेः सम्यक्त्वाच्च=जिनवच-नरुचेः परिभ्रष्टाः=स्खलिता 'दारिद्दोवद्दवाभिभूया' दारिद्र्योपद्रवाभिभूताः= अत्यन्तदरिद्राः, अतएव 'णिच्चं' नित्यं=सदा 'परकम्मकारिणः= परगृहे

कुग्रामों में इनका वास होता है, अवस्थान=रहन सहन इनकी नीच होती है, विषमभूमि आदि रूप इनकी शय्या होती है। (कुभोयणा) कोद्रव आदि कदन्न (कुत्सितअन्न) इनका भोजन होता है। (असुइणो) शुचिता-शारिरिक एवं आत्मिक पवित्रता इनमें होती नहीं हैं ये लोग पवित्रतासे सदा रहित रहते हैं। (कुसंघयणकुप्पमाणा) इनका संहनन खराव होता हैं और शरीर इनका अतिदीर्घ या अति ह्रस्व होता है। (कुसंठिया) संस्थान इनका हुण्डादि होता है। (कुरूवा) रूप भी इनका असुहावना होता है। (बहुकोहमाणमायालोभा) बहुत ये क्रोधी होते है। मान, माया एवं लोभ की इनमें बहुत अधिकता रहती है। (बहुमोहा) ये बहुत कामी होते हैं। (धम्मसण्णासम्मत्तपब्भट्ठा) श्रुतचारित्र रूप धर्मबुद्धि से एवं जिन वचनों में श्रद्धारूप सम्यत्क्व रुचि से ये सदा रहित होते हैं। (दारिद्दो वद्दवाभिभूया) दारिद्रय इनके घरों में सदा

કરણી નીચ હોય છે, વિષમ ભૂમિ આદિ જગ્યા તેમની શય્યા બને છે. "कुभोयणा" કોદરા આદિ કદન્ન (ખરાબ અન્ન) તેમનું ભોજન બને છે. "असुइणो" તેમનામાં શારીરિક અને માનસિક પવિત્રતા હોતી નથી, તે લોકો હંમેશાં તેનાથી રહિત હોય છે. "कुसंघयण कुप्पमाणा" તેમનું સંહનન ખરાબ હોય છે, એટલે કે તેમનાં શરીર કાંતો અતિશય ઊંચા અને કાંતો અતિશય નીચા હોય છે. "कुसंठिया" તેમનાં અંગો અપ્રમાણસરનાં હોય છે, "कुरूवा" તેમનુ રૂપ પણ સુંદર હોતું નથી "बहुकोहमाणमाया लोभा" તેઓ ઘણા ક્રોધી હોય છે, અને માન, માયા અને લોભનું પ્રમાણ તેમનામાં વધારે હોય છે. "वहुमोहा" તે ઘણા કામી હોયછે. "धम्मसण्णासम्मत्तपब्भट्ठा" શ્રુત ચારિત્રરૂપ ધર્મબુદ્ધિથી તથા જિન વચનોમાં શ્રદ્ધારૂપ સમ્યકત્વ રુચિથી તે લોકો સદા રહિત હોયછે.'दारिद्दोवद्दवाभिभूया' તેમનાં ઘરોમાં.સદા દારિદ્રય રહેછે.અને તે દરિદ્રય

नीचकर्मकारकाः 'जीवणत्थरहिया' जीवनार्थरहिताः=जीवनस्य=मनुष्यजन्मनः अर्थः = प्रयोजनं धर्मध्यानादि समाचरणं तद्रहिताः, जीवनयापनहेतुद्रव्यहीना वा, 'कीविणा' कृपणाः=दीनाः 'परपिंडतक्कगा' परपिण्डतर्ककाः=परदत्तभोजनगवेषकाः 'दुक्खलद्धारा' दुःखलब्धाहाराः=दुःखादुदरपूरकाः 'अरसविरसतुच्छकयकुक्खिपूरा' अरसविरसतुच्छकृतकुक्षिपूराः= तत्र अरसं=नीरसं-हिङ्ग्वादिभिरसंस्कृतं विरसं=पुराणं तत्रापि पुच्छं=कुलत्थाद्यन्नं येन कनापि प्रकारेण प्राप्तं तेन कृतः कुक्षिपूरः=उदरपूरणं यैस्तै तथा 'परस्स' परस्य=अन्यस्य 'रिद्धिसक्कारभोयणविसेससमुदयविहिं' ऋद्धिसत्कारभोजनविशेषसमुदयविधिं=तत्र ऋद्धिः= सम्पत्तिः सत्कारः=सम्मानं तथा भोजनं चेत्येतेषां ये विशेषाः प्रकाराः तेषां यः समुदयः उदयवर्तित्वं तस्य यो विधिः=विधानं स तथा तं 'पेच्छंता' प्रेक्षमाणाः=

रहता है और यह दारिद्र्य इनका सदा तिरस्कार करवाया करता है, इसी लिये ये (णिच्चं) सर्वदा (परकम्मकारिणो) पर कर्मकारी होते हैं-दूसरोंके घरोंमें नीच कामों को करने वाले होते हैं, (जीवणत्थरहिया) मनुष्य जन्म के प्रयोजनभूत धर्मध्यानादि सदाचारों से रहित होते हैं, (किविणा) दीन होते हैं, (परपिंडतक्कगा) परपिंड के ऊपर आश्रित रहा करते हैं परदत्त भोजन की इच्छा में रहते हैं, (दुक्खलद्धाहारा) बडी मुश्किल से अपने उदर की पूर्ति कर पाते हैं, (अरसविरसतुच्छकयकुक्खिपूरा) अरस-हिंग्वादि के वधार से रहित, विरस-पुराना-अति पुराना, उसमें भी तुच्छ-कुलत्थादि अन्न जो इन्हे बडी कठिनाईसे प्राप्त होता है उससे ही ये अपने उदर की पूर्त्ति करते हैं। (परस्स-रिद्धिसक्कारभोयणविसेससमुदयविहिं पेच्छंता) दूसरोंकी ऋद्धि-

---

તેમનો સદા તિરસ્કાર કરાવે છે, તેથી તેઓ "णिच्चं" સદા "परकम्मकारिणो" પારકાની નોકરી કરનાર હોય છે, બીજાનાં ઘરોમા નીચ કામ કરનારા હોય છે, "जीवणत्थरहिया" મનુષ્ય જન્મના પ્રયોજન રૂપ ધર્મધ્યાન આદિ -સદાચારોથી રહિત હોય છે, "किविणा" દીન હોય છે, "परपिंडतक्कगा" પરપિંડ ઉપર સદા આધાર રાખનાર હોય છે-પરદત્ત ભોજનની ઇચ્છા રાખનાર હોય છે, ,, दुक्खलद्धाहारा" મહા મુશ્કેલીથી પોતાનું પેટ ભરી શકે છે. "अरसविरसतुच्छकयकुक्खिपूरा" અરસ-હિંગ આદિના વઘાર રહિત, વિરસ-પુરાણું-અતિપુરાણું અને વળી તુચ્છ-કળથી આદિ અન્ન, કે જે તેને ઘણી મુશ્કેલીએ મળે છે, તેના વડે જ તેઓ પોતાનું પેટ ભરે છે. "परस्स रिद्धिसक्कार-भोयणविसेससमुदयविहिं पेच्छंता" બીજાની ऋद्धि — સંપત્તિ, સત્કાર

निराशबहुलाः = इष्टवस्तुप्राप्त्यभावादतिनिराशाः, 'आसपासपडिबद्ध-पाणा' आशापाशप्रतिबद्धप्राणाः=आशैव पाशः=बन्धनं तेन प्रतिबद्धाः=निरुद्धाः =प्राणा येषांते तथा आशामात्रजीविनः, 'लोयसारे' लोकसारे=लोकसारभूते 'अत्थोप्पायणकामसोक्खे' अर्थोत्पादनकामसौख्ये=तत्र अर्थोत्पादनं=द्रव्योपार्जनं कामसौख्यं=इन्द्रियजनित सौख्यं तत्र 'सुट्ठुअवि उज्जमंता' सुष्ठु अपि उद्यमन्तः =उद्योगं कुर्वन्तः 'अफलवंतगा' अफलवन्तश्च=अभिलषितवस्तुप्राप्तिरहिताः 'हुंति' भवन्ति। पुनः कीदृशा भवन्ति? त्याह 'तद्दिव सुज्जुत्तकम्मकयदुक्खसंठविसि-त्थपिंडसंचयपरा' तद्दिवसोद्युक्तकर्मकृतदुःखसंस्थापितसिक्थपिण्डसञ्चयपराः, तत्र तद्दिवसेषु=तत्तद्दिनेषु उद्युक्तैः=उद्योगवद्भिः सद्भिः कर्मणा=व्यापारेण कृते-नापि दुःखेन=अतिक्लेशेन संस्थापितः=प्राप्तो यः सिक्थानां=धान्यकणानां पिण्डस्तस्य सञ्चये पराः=तत्परा ये ते तथा—सम्पूर्णदिनमुद्योगपराः सन्तोऽपि—

(निरास बहुला) इष्टवस्तुकी प्राप्ति नहीं होने के कारण ये सदा निराश ही बने रहते हैं। (आसापासपडिबद्धपाणा) फिर भी ये जो जीते हैं उसका कारण इनकी आशा है। इसी आशाकी पाशमें ही इनके प्राण ही बंधे हुए रहते हैं। (लोयसारे) यद्यपि ये लोक में सारभूत माने गये (अत्थोप्पायणकामसोक्खे) अर्थार्जन एवं इन्द्रिय जनित सुख में (सुट्ठु अविउज्जमंता) अच्छी तरह से उद्यम शील रहते हैं, परन्तु फिर भी (अफलवंतगा) इन्हे अभिलषित वस्तुकी प्राप्ति नहीं होती है। उससे ये रहित (हुंति) बने रहते हैं। (तद्दिव-सुज्जुत्तकम्मकयदुक्खसंठवियसित्थपिंडसंचयपरा) (तद्दिवसुज्जत्त) प्रतिदिन उद्योग करते रहने पर भी (कम्मकय) किये गये काम से (दुक्खसंठविय) मुश्किल से प्राप्त हुए (सित्थपिंड संचयपरा) धान्य-

મળવાને કારણે તેઓ સદા નિરાશ જ રહે છે "आसपासपडिबद्धपाणो" છતાં પણ તેઓ જીવી શકે છે તેનું કારણ તેમની આશા છે. તે આશાના પાશમાં જ તેમના પ્રાણ બંધાયેલા રહે છે "लोयसारे" જો કે તેઓ લોકોમાં સારભૂત મનાતા "अत्थोप्पायणकामसोक्खे" અર્થાર્જન (ધન કમાવામા) તથા ઇન્દ્રિય જનિત સુખમાં "सुट्ठुअविउज्जमंता" સારી રીતે પ્રયત્નશીલ રહે છે, પણ "अफलवंतगा" તેમને ઇચ્છિત વસ્તુ મળતી નથી. તેનાથી તેઓ રહિત "हुंति" રહે છે "तद्दिव सुज्जुत्तकम्मकयदुक्खसंठविय सित्थपिंडसंचयपरा" "तद्दिव सुज्जुत्त" દરરોજ ઉદ્યોગ કરવા છતાં પણ "कम्मकय" કરેલા કામથી "दुक्खसंठविय" મુશ્કેલીથી મળેલ "सित्थपिंडसंचयपरा" ધાન્યકણોનાં

कठिनपरिश्रमेणापि दिनमात्राहारयोग्यमेवकथञ्चित् अन्नादिकं प्राप्नुवन्तीत्यर्थः, 'खीणदव्वसारा' क्षीणद्रव्यसाराः=दरिद्राः णिच्चं धणधण्णकोसपरिभोगविवज्जिया' नित्यं धनधान्यकोशपरिभोगविवर्जिताः=तत्र नित्यं=सदा धनं–गणिमादिकं धान्यं शाल्यादिकं कोशाः=भाण्डागारास्तेषां परिभोगेन=उपभोगेन विवर्जिताः, रहिताः, तथा 'रहियकामभोगपरिभोगसव्वसोक्खा' रहितकामभोगपरिभोगसर्वसौख्याः =रहितं कामयोः=शब्दरूपयोः भोगानां=गन्धरूपस्पर्शानां परिभोगसौख्यं–उपभोग जनित आनन्दः=येषां ते तथा कामभोगसुखवर्जिता इत्यर्थः, 'परसिरिभोगोवभोगनिस्साणमग्गणपरायणा' परश्री भोगोपभोगनिश्वाणमार्गणपरायणाः, तत्र–परेषाम्=अन्येषां श्रियाः=सम्पत्तेः यौ भोगोपभोगौ=भोगः=सकृत् भुज्यते यः सः =आहार पुष्पादिरूपः, उपभोगश्च=गृहवस्त्रादिलक्षणः तयोर्यन्निश्राणं तस्य मार्गणं=

कणों के पिण्ड के संचय करने में ही लगे रहते हैं अर्थात् सम्पूर्ण दिन उद्योग में तत्पर रहने पर भी ये बडे कठिन परिश्रम से केवल उसी दिन के योग्य अन्नादि सामग्री को जिस किसी प्रकार से अर्जित कर पाते हैं। (खीणदव्वसारा) द्रव्य रूप सार से रहित न होने के कारण ये दरिद्र होते हैं। (णिच्चं धणधण्णकोसपरिभोगविवज्जिया) सर्वदा ये गणिमादि रूप धन, शाली आदि धान्य एवं भाण्डागार इनके परि–भोग–उपभोगसे रहित होते हैं। (रहियकामभोगपरिभोगसव्वसोक्खा) शब्द एवं रूप स्वरूप कामके, गन्ध रस और स्पर्श स्वरूप भोगों के परिभोग के सुखों से रहित होते है, (परसिरिभोगोवभोगनिस्साणमग्गणपरायणा) (परसिरि) दूसरे व्यक्तियोंकी लक्ष्मी के (भोगोवभोग) भोग और उपभोग के (निस्साणमग्गणपरायणा) आश्रय की वांछा में ही सदा लगे रहते हैं। जो एक बार भोगने में आते हैं ऐसे आहार,

---

સમૂહને સંગ્રહ કરવામાં જ લાગ્યા રહે છે. એટલે કે આખો દિવસ મહેનત કરવા છતાં પણ તેઓ અતિ ભારે પરિશ્રમથી ફક્ત એ એક દિવસ ચાલે એટલી અન્ન સામગ્રી માંડ માંડ પ્રાપ્ત કરી શકે છે "खीण दव्वसारा" દ્રવ્યરૂપ સારથી રહિત હોવાને કારણે તેઓ દરિદ્ર હોયછે. " णिच्चं धणधण्णकोसपरिभोगविवज्जिया સર્વદા તેઓ સોનામહોરો આદિ ધન, શાલી આદિ ધાન્ય અને વાસણોના ભંડારની તેમના ઉપભોગથી રહિત રહે છે, " रहियकामभोगपरिभोगसव्वसोक्खा " શબ્દ અને રૂપ સ્વરૂપ કામના, ગંધ, રસ, અને સ્પર્શસ્વરૂપ પરિભોગના સુખોથી તેઓ રહિત હોયછે " परसिरिभोगोवभोगनिस्साणमग्गणपरायणा " " परसिरि " તેઓ અન્ય વ્યક્તિઓની લક્ષ્મીના " भोगवभोग " ભોગ તથા ઉપભોગના " निस्साण-मग्गणपरायणा " આશ્રયની વાસનામાં જ સદા લીન રહે છે, જે

गवेषणं तत्र परायणाः परसम्पत्तिभोगाभिलाषका इत्यर्थः, 'वरागा' वराकाः= दीनाः 'अकामियाए' अकामिकया=अनिच्छयाऽपि 'विणिहुंतिदुक्खं' विनयन्ति दुःखं=दुखं प्राप्नुवन्ति तथा 'णेव सुहं णेव णिव्वुइं उवलभति' नैवसुखं नैव निर्वृतिं=मनः शान्तिमुपलभन्ते=प्राप्नुवन्ति, ते के? इत्याह—'अच्चंतविउलदुक्खसयसपलित्ता' अत्यन्तविपुलदुःखशतसम्प्रदीप्ताः =अत्यन्तविपुलम्=अतिविस्तीर्णं यद् दुखशत तेन सम्प्रदीप्ताः=संतप्ताः 'परस्स दव्वेहिं–जे अविरया' परस्य द्रव्येषु ये अविरताः=निवृत्तिभावरहितास्तेऽत्र परत्र च नैव सुखं नैव शान्तिं चोपलभन्ते इति सम्बन्धः सू० २० ॥

पुष्प आदि पदार्थ भोग और जो बार २ भोगने में आते हैं ऐसे गृह वस्त्र आदि पदार्थ उपभोग है। (वरागा) ये सदा दीनावस्था संपन्न होते हैं। (अकामियाए) इनकी यह अभिलाषा नहीं होती है की हम दुःख भोगे परन्तु इन्हें विना इच्छा के भी (विणिहुति दुःक्खं) दुःख सहना पडता है। इन्हे (णेव सुहं णेवणिव्वुइं उवलभंति) जीवनभर कभी भी सुख नहीं मिलता और न कभी निर्वृत्ति मनको शांति ही इन्हे प्राप्त होती है। कारण की ये (अच्चंत विउलदुक्खसयसंपलित्ता) अत्यंत विपुल सैकडो दुःखों से संतप्त होते रहते हैं। इन दुःखो से भी संतप्त होने का कारण यह है कि ये (परस्स दव्वेहिं- जे अविरया) परके द्रव्य को अपहरण करने रूप कुकृत्य से विरतिभाव धारण करने से रहित होते है। इसी कारण इन विचारों को न सुख मिलता है और न शांति ही मिलती है ॥ सू० २० ॥

એક વાર ભોગવવામાં આવે છે એવા આહાર પુષ્પ આદિ પદાર્થ ભોગ ગણાય છે, અને જે વરંવાર ભોગવાય છે એવાં ઘર, વસ્ત્ર આદિ પદાર્થોને ઉપભોગ કહે છે " वरागा " તેઓ હમેશ દીન દશામાં રહે છે, " अकामियाए " તેમને દુખ ભોગવવાની ઇચ્છા હોતી નથી, પણ તેમને ઇચ્છયા વિના પણ "विणिहुति दुक्खं" દુઃખો સહન કરવા પડે છે તેમને "णेव सुहं णेव णिव्वुइं उवलभंति" આખું જીવન કદી પણ સુખ મળતું નથી, અને તેમને કદી નિવૃત્તિ-(મનની શાંતિ) પણ પ્રાપ્ત થતી નથી, કારણ કે તે લોકો "अच्चंतविउलदुक्खसयसंपलित्ता" અત્યંત વિપુલ, સેકડો દુઃખોથી દુઃખી થયા કરે છે, એ દુખોથી પણ દુઃખી થવાનું કારણ એ છે કે તેઓ " परस्स दव्वेहिं जे अवरिया " પરધનનું અપહરણ કરવા રૂપ કુકૃત્યથી વિરક્ત થઈ શકતાં નથી, તે કારણે તે બિચારાઓને સુખ મળતું નથી અને શાંતિ પણ મળતી નથી ॥ સૂ૦ ૨૦ ॥

एवमदत्तादानस्य चतुर्थं फलद्वारं निरूपितम् । साम्प्रतमध्ययनार्थमुपसंहरन्नाह —'एसो सो' इत्यादि ।

मूलम्—एसो सो अदिण्णादाणस्स फलविवागो इहलोइयो परलोइओ अप्पसुहो बहुदुक्खो महब्भओ बहुरयप्पगाढो दारुणो कक्कसो असाओ वाससहस्सेहिं मुच्चइ, न य अवेयइत्ता अत्थिहु मोक्खोत्ति, एवमाहंसु णायकुलनंदणो महप्पा जिणो उ वीरवरनामधेज्जो कहेसी अदिण्णादाणस्स फलविवागं एवं तं तइयंपि अदिण्णादाणं हर-दर-मरण-कलुस—तासण—परसंति भेज्जलोभमूलं एवं जाव चिरपरिचियमणुगतं दुरंतं त्तिवेमि ॥ सू० २१ ॥

॥ तइयं अहम्मदारं सम्मत्तं ॥

टीका—'एसो सो' एषः स=दर्शितस्वरूपः 'अदिण्णादानस्य' अदत्तादानस्य 'फलविवागो, फलविपाकः 'इहलोइओ' ऐहलौकिकः=मनुष्यभवापेक्षया 'परलोइओ' पारलौकिकः=नरकाद्यपेक्षया 'अप्पसुहो' अल्पसुख=आपातमात्र-

---

इस प्रकार यह अदत्तादान के चौथे फल द्वार का निरूपण किया गया है, अब सूत्रकार इस अध्ययन के अर्थका उपसंहार करते हुए कहते है — 'एसो सो' इत्यादि० ।

टीकार्थ-(एसोसो) जीसका इस प्रकारसे स्वरूप प्रदर्शित कीया जा चुका है ऐसा (अदिण्णादाणस्स फलविवागो) अदत्तादानका यह फलरूप विपाक (इहलोइओ) मनुष्य भवकी अपेक्षा तथा (परलोइओ) नरकादि गतियोंकी अपेक्षासे प्रदर्शित किया गया है । इससे हम यह बात भली भाँती जान सकते है कि यह फलरूप विपाक (अप्पसुहो)

આ પ્રમાણે અદત્તાદાનના ચોથા ફલદ્વારનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું, હવે સૂત્રકાર આ અધ્યયનના અર્થના ઉપસંહાર કરતાં કહે છે—"एसो सो" ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—"एसो सो" જેનું ઉપરોક્ત પ્રકારે સ્વરૂપ પ્રગટ કરવામાં આવ્યું તે "अदिण्णादाणस्स फलविवागो" અદત્તાદાનનો તે ફલરૂપ વિપાક "इह-लोइओ" મનુષ્યભવની અપેક્ષાએ તથા "परलोइओ" નરકાદિ ગતિયોની અપેક્ષાએ બતાવવામાં આવ્યો છે. તેની મદદથી આપણે તે વાત સારી રીતે સમજી શકીએ છીએ

सुखजनकः, 'बहुदुक्खो' बहुदुःखः=दुःखबहुलः 'महब्भओ' महाभयः=महा-भयजनकः 'बहुरयप्पगाढो' बहुरजः प्रगाढः=प्रचुरकर्मरजोभिः सम्भृतः 'दारुणो' दारुणः=भीषणः 'कक्कसो' कर्कशः=कठोरः 'असाओ' अशातः=असुखोऽशात-कर्मवेदनीयस्वरूपः इत्येवंविधफलविपाकः 'वाससहस्सेहिं' वर्षसहस्रैः=पल्यो-पमसागरप्रमाणकालैः 'मुच्चइ' मुच्यते=क्षीयते। तदेव व्यतिरेकमुखेनाह-'नय' न च तं फल-विपाकम्, 'अवेयइत्ता' अवेदयित्वा = अनुपभुज्य उपभोगं विनेत्यर्थः 'हु' निश्चयेन 'मोक्खो' मोक्षः 'अत्थि' अस्ति 'त्ति' इति शब्दः समाप्ति सूचकः।

एतस्यार्थस्य साक्षात्प्रमाणभूतपरमात्मप्रतिपादितत्वेन प्रमाणयन्नाह-- 'एवमाहंसु' इत्यादि।

एवम्=उक्तरीत्या 'आहंसु' ऊचुः ऋषभादि तीर्थङ्करगणधरादय। तथा

केवल आपातमात्र सुख जनक है। (बहु दुक्खो) जीवों के इससे वास्तविक सुख नहीं मिलता है किन्तु भयंकर से भयंकर दुःखो का ही यह प्रदाता है। (बहुब्भओ) यह महा भयजनक है (बहुरयप्प-गाढो) प्रचुर कर्म रूपी रज से यह भरा हुआ है। (दारुणो) बड़ा भीषण है। (कक्कसो) कठोर है। (असाओ) अशात कर्म वेदनीय स्वरूप है। इस तरह का यह फलविपाक (वाससहस्सेहिं) हजारों वर्षों में अर्थात् पल्योपम तथा सागरोपर प्रमाणकाल में (मुच्चइ) छूटता है॥ (न य अवेयइत्ता हु मोक्खो अत्थि त्ति) विना इसका फल भोगे जीव इससे मुक्त नहीं होता है। इस अर्थ में प्रमाणता प्रति-पादन करने के लिये सूत्रकारइसमें साक्षात्प्रमाणभूतपरमात्म के द्वारा प्रतिपादितता प्रकट करते है, वे कहते हैं- (एवमाहंसु) ऋषभ आदि

તે ફલરૂપ વિપાક "अप्पसुहो" કેવળ ક્ષણિક સુખજનક છે. "बहुदुक्खो" જીવોને તેનાથી વાસ્તવિક સુખ મળતું નથી, પણ તે ભયંકરમા ભયંકર દુઃખો દેનાર છે. "बहुब्भओ" તે મહા ભયજનક છે. "बहुरयप्पगाढो" વિપુલ કર્મરૂપી રજથી તે પૂર્ણ છે, "दारुणो" ઘણો ભીષણ છે, "कक्कसो" કઠોર છે, "असाओ,, અશાતકર્મવેદનીય સ્વરૂપ છે. આ પ્રકારનો આ ફળવિપાક "वाससहस्सेहिं" હજારો વર્ષે એટલે કે પલ્યોપમ તથા સાગરોપમ પ્રમાણ કાળે છૂટે છે. "नय अवेयइत्ताँ हु मोक्खो अत्थि त्ति" તેનું ફળ ભોગવ્યા વિના જીવ તેનાથી મુક્ત થતાં નથી. તે અર્થમાં પ્રમાણ ભૂતના પ્રતિપાદિત કરવાને માટે સૂત્રકાર તેમાં સાક્ષાત પ્રમાણભૂત પરમાત્મા દ્વારા પ્રતિપાદિતતા પ્રગટ કરે છે. તેઓ કહે છે-

तदनुसारेणैव 'णायकुलनंदणो' ज्ञातकुलनन्दनः=सिद्धार्थकुलानन्दकरः 'महप्पा' महात्मा=परमात्मस्वरूपः 'जिणो' जिनो-रागद्वेषविजेता 'वीरवरनामधेज्जो' वीरवरनामधेयः=प्रख्यातनामा भगवान् महावीरः 'अदिण्णादाणस्स' अदत्तादानस्य फलविवागं' फलविपाकं 'कहेसी' कथितवान्। एवं 'तं' तत् पूर्वोपदर्शित स्वरूपम्, 'तइयंपि अदिण्णादाणं' तृतीयमप्यदत्तादानं-'हर-दह-मरण-कलुस-तासण-परसंतिगिज्झलोभमूलं' हर-दह-मरण-कलुष-त्रासनपरसत्कग्राह्यलोभ-मूलम्, तत्र 'हर' इति हरणं=परद्रव्यापहरणं, 'दह' दहनं=दाहः-हृदयसन्तापः, 'मरणं' मृत्युः, 'कलुस' कलुषं=मनोमालिन्यं, 'तासण' त्रासनं=त्रासः-अकस्माद्भयम् 'परसंतियगिज्झलोभ' परसत्कग्राह्यलोभः=परवस्तुग्राहको लोभः, एतेषां मूलं=मूलकारणमिदमदत्तादानम्। एवं 'जाव' यावत्-यावच्छब्देन द्वितीयालीक-

---

तीर्थंकरों ने इस अदत्तादान का ऐसा ही फल कहा है तथा उन्हीं तीर्थंकरों के अनुसार (णायकुलनंदणो) ज्ञातकुलनंदन-सिद्धार्थ के कुलको आनंद कारक (महप्पा) परमात्मस्वरूप (जिणो) रागद्वेष विजेता (वीरवरनामधेज्जो) श्री भगवान महावीर ने भी (अदिण्णादाणस्स) इस अदत्तादान का (फलविवागं) ऐसा ही फल (कहेसी) कहा है। (एवं) इस प्रकार (तं) पूर्वोपदर्शित स्वरूपवाला यह (तइयंपि) तीसरा अदत्तादान भी (हर-दह-मरण-कलुस-परसंतिगिज्ज-लोभमूलं) (हर) परद्रव्य का हरण करना, (दह) हृदय में संताप पहुँचाना, (मरण) मृत्यु (कलुस) मनोमालिन्य (तासण) अकस्मात् भय होना, (परसंतिगिज्झ लोभमूलं) दूसरे की वस्तु का हरण कराने वाला लोभ, इन सबका मूल-कारण यह अदत्तादान है। यहां पर

"एवमाहंसु" ઋષભદેવ આદિ તીર્થંકરોએ આ અદત્તાદાનનું આવું જ ફળ કહેલ છે તથા તે તીર્થંકરોના પ્રમાણે "णायकुलनदणो" જ્ઞાતકુલ નંદન-સિદ્ધાર્થના કુળને આનંદ દાયક "महप्पा" પરમાત્મ રૂપ, "जिणो" રાગદ્વેષ વિજેતા, "वीरवरनामधेज्जो" શ્રી ભગવાન મહાવીરે પણ "अदिण्णा-दाणस्स" આ અદત્તાદાનનું "फलविवागं" એવું જ ફળ કહેલ છે. "एवं" આ પ્રમાણે "तं" પૂર્વોપદર્શિત સ્વરૂપવાળુ તે "तइयंपि" ત્રીજું અદત્તાદાન પણ "हर-दह-मरण-कलुस-तासण-परसंति गिज्झ लोभमूलं" "हर" પરદ્રવ્યનું હરણ કરવું. "दह" હૃદયમાં સંતાપ પહોંચાડવો, "मरण" મૃત્યુ, "कलुस" મનની મલિનતા, "तासण" અકસ્માત ભય થવો, "परसतिगिज्झ लोभमूलं"

वचनाध्ययनोक्तविशेषणानि यथायोग्यानि संग्राह्याणि । चिरपरिचियं ' चिरपरिचितम्=अनादिकालादनुभूयमानम्, ' अणुगयं ' अनुगतं=प्राणिनां पृष्ठतो लग्नम्, ' दुरंतं ' दुरन्तम्=दुःखावसानम्, ' त्तिवेमि ' इति ब्रवीमि = एतद् जम्बूस्वामिनं प्रति सुधर्मस्वामिवाक्यम् ॥ सू० २१ ॥

इति श्रीप्रश्नव्याकरणस्य सुदर्शन्याख्यायां व्याख्यायां हिंसादि पञ्चास्रवद्वारेषु अदत्तादानाख्यं तृतीयधर्मद्वारं समाप्तम् ॥ ३ ॥

' यावत् ' शब्द से द्वितीय अलीक वचन संबंधी अध्ययन में जो विशेषण कह गये हैं उनका यहां यथायोग्यरूप में संग्रह कर लेना चाहिये । यह अदत्तादान (चिरपरिच्चियं) अनादिकाल से जीवों के अनुभव में आ रहा है (अणुगयं (मिथ्यात्व) के कारग यह आतमा के पीछे लगा हुआ हे । (दुरंतं) दुःखप्रद ही इसका परिणाम-फल है । (त्तिवेमि) ऐसा मैं कहता हूं । इस प्रकार से यह जंत्रू स्वामी के प्रति सुधर्मा स्वामी ने कहा है ॥ सू० २१ ॥

॥ तीसरा आस्रव— ' अधर्म ' द्वार समाप्त ॥

બીજાની વસ્તુનું હરણ કરાવનાર લોભ, વગેરે સઘળી બાબતોનું મૂળ કારણ આ અદત્તાદાન છે, અહીં " यावत् " શબ્દથી અલીક વચન વિષેના બીજા અધ્યયનમાં જે વિશેષણોનો ઉપયોગ કરાયો છે, તેમનો સંગ્રહ અહીં યોગ્ય રીતે કરી લેવાનો છે, આ અદત્તાદાન " चिरपरिचियं " અનાદિ કાળથી જીવોના અનુભવમાંઆવી રહ્યું છે, (अणुगयं) મિથ્યાત્વને કારણે તે આત્માની પાછળ લાગેલું છે, (दुरत्तं) તેનુ ફળ-પરિણામ દુઃખદાયી છે, (त्तिवेमि) એવું હું કહુ છું, આ પ્રમાણે સુધર્માસ્વામીએ જબૂસ્વામીને કહ્યું, ॥ સૂ, ૨૧ ॥

॥ ત્રીજો આસ્રવ – ' અધર્મ ' દ્વાર સમાપ્ત ॥

अथ चतुर्थमध्ययनम् ।

व्याख्यातं तृतीयमध्ययनं साम्प्रतं चतुर्थमारभ्यते अस्य च पूर्वेण सहायमभिसम्बन्धः । तृतीयाध्ययने यादृश नामादिनिर्देशपुरस्सरमदत्तादानस्वरूपमुक्तम् । अदत्तादानं च प्रायोऽब्रह्मासक्तचित्ताः कुर्वन्त्येवेति हेतोः सूत्रक्रमनिर्देशानुसाराच्चाऽदत्तादाननिरूपणानन्तरमुचितप्राप्तमब्रह्मस्वरूपं नामादिनिर्देशपूर्वकं प्रदर्श्यते तस्येदमाद्यं सूत्रम्—' जंबू अबंभं च चउत्थं ' इत्यादि—तत्र पूर्वेषाम्निवास्यापि ' यादृशं १ यन्नाम २ यथा चकृतं ३ यत्फलं ददाति ४ ये च कुर्वन्ति ५ इति-पञ्चभिरन्तर्द्वारैर्निरूपणं चिकीर्षु रादौ क्रममाप्तं, यादृशद्वारमाश्रित्य अब्रह्म-स्वरूपं निरूप्यते—' जंबू अबंभं ' इत्यादि ।

चतुर्थ अधर्मद्वार प्रारंभ—

तृतीय अधर्मद्वार समाप्त हो चुका । अब चतुर्थ अधर्मद्वार प्रारंभ होता है । इस अदर्मद्वार के साथ इस प्रकार का संबंध है -तृतीय-अधर्मद्वारमें यादृशनामादि निर्देशपूर्वक जो अदत्तादानका स्वरूप कहा है सो इस अदत्तादान को जो अब्रह्ममें आसक्त चित्तवाले प्राणी होते हैं प्रायः वे करते ही हैं इस कारण से, तथा सूत्रक्रम के निर्देश के अनुसार से अदत्तादान के निरूपण के बाद अब्रह्मका स्वरूप नामादिनिर्देशक कहना यह अवसर प्राप्त हैं । अतः सूत्रकार उसे अधर्मद्वार में प्रदर्शित करते हैं । जिस तरह पूर्व अध्ययनों का निरूपण सूत्रकार ने " यादृशं, १ यन्नाम, २ यथा च कृतं, ३ यत् फलं ददाति, ४ ये च कुर्वन्ति ५ " इन पांच अन्तर्द्वारों से किया है उसी तरह वे इसका भी

ચોથા અધર્મદ્વારની શરૂઆત

ત્રીજું અધર્મદ્વાર પૂરૂં થયું, સવે ચોથા અધર્મદ્વારનું વર્ણન શરૂ થાય છે, આ અધર્મદ્વારનો આગળના અધર્મદ્વાર સાથે આ પ્રકારનો સંબધ છે

ત્રીજા અધર્મદ્વારમાં પ્રકાર નામો આદિના નિર્દેશ પૂર્વક અદત્તાદાનનું સ્વરૂપ બતાવવામાં આવ્યું છે. તે અદત્તાદાન જે અબ્રહ્મમાં આસકત પ્રાણીઓ હોય તે સામાન્ય રીતે આચરે છે, એ કારણે તથા સૂત્રક્રમના નિર્દેશ પ્રમાણે અદત્તાદાનના નિરૂપણ પછી અબ્રહ્મનું સ્વરૂપ નામાદિના નિર્દેશ પૂર્વક કહેવું તે યોગ્ય જ છે તેથી સૂત્રકાર તેને આ અધર્મદ્વારમાં પ્રગટ કરે છે. જે રીતે આગળનાં અધ્યયનોનું નિરૂપણ સૂત્રકારે " यादृशं "૧ (કેવા પ્રકારનું) "यन्नाम"૨ (કયાં કયાં નામો) "यथा च कृतं" ૩ (કયારે કરાય છે.) " यत फल ददाति " ૪ (કયું ફળ આપે છે) " ये च कुर्वन्ति " ૫ (કોણ તે આચરે છે) આ પાંચ અંતર્દ્વારો દ્વારા કર્યું છે, એ જ પ્રમાણે આ અધર્મદ્વારનું પણ નિરૂપણ કરવા

मूलम्—जंबू ! अबंभं च चउत्थं सदेवमणुयासुरस्स लोयस्स पत्थणिज्जं पंकपणगपासजालभूयं इत्थीपुरिसनपुंसगवेदचिह्नं तवसंजमबंभचेरविग्घं भेदायतणबहुपमादमूलं कायरकापुरिससेवियं सुयणजणवज्जणिज्जं उड्ढ-नरय-तिरिय-तिलोक्कपइट्ठाणं जरामरणरोगसोगबहुलं वधबंधविघायदुव्विघायं दंसणचरित्तमोहस्स हेउभूयं चिरपरिचियं मणुगयं दुरंतं चउत्थं अहम्मदारं ॥ सू० १ ॥

टीका:—हे जम्बूः ! 'चउत्थं' चतुर्थं=हिंसामृषाऽदत्तादानापेक्षया चतुर्थमास्रवद्वारम् 'अबंभं च' अब्रह्म=अकुशलं कर्म तच्चेह मैथुनम्–अधर्महेतुत्वेन सकलानर्थजनकत्वात्। चकारः पुनरर्थः कीदृशं तदित्याह–'सदेवमणुयासुरस्स लोयस्सपत्थणिज्जं' सदेवमनुजासुरस्य लोकस्य प्रार्थनीयं=देवमनुष्यासुरलोकस्य प्रार्थ-

---

निरूपण करना चाहते हैं। अतः सर्व प्रथम वे क्रम प्राप्त "यादृश" इस द्वार को लेकर अब्रह्म के स्वरूप का निरूपण करते हैं— 'जंबू-अबंभं' इत्यादि।

टीकार्थ–श्रीसुधर्मा स्वामी जंबूस्वामी से कहते हैं कि हे जंबू ! (चउत्थं) हिंसा, मृषा एवं अदत्तादान इन तीन की अपेक्षा यह चतुर्थ आस्रव द्वार (अबंभं च) अब्रह्म है। यह अब्रह्म अकुशल कर्म हैं और वह यहां स्वरूप से गृहित हुआ है। क्योंकि यह अधर्म का हेतु होने से सकल अनर्थों का जनक होता है।

अब सूत्रकार इसी अब्रह्मका आगेके विशेषणों द्वारा विशेष स्पष्टीकरण करते हैं, वे कहते हैं कि–यह अब्रह्म–मैथुनसेवनरूप अकुशल कर्म

માગે છે. તેથી સૌથી પહેલાં તેઓ અનુક્રમે આવતા "यादृश" એ નામના દ્વારને લઈને અબ્રહ્મના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે. "जंबू अबंभं" ઈત્યાદિ

ટીકાર્થ–શ્રી. સુધર્મા સ્વામી જંબૂ સ્વામીને કહે છે કે હે જંબૂ! "चउत्थ" હિંસા, મૃષા અને અદત્તાદાન એ ત્રણની અપેક્ષાએ ચોથું અધર્મદ્વાર "अबंभं च" અબ્રહ્મ છે. તે અબ્રહ્મ અયોગ્ય કૃત્ય છે અને તે અહીં મૈથુનરૂપે જે ગૃહિત થયેલ છે, કારણ કે તે અધર્મનું કારણ હોવાથી સઘળા અનર્થનું ઉત્પાદક છે. હવે સૂત્રકાર એ જ અબ્રહ્મનું આગળ આવતાં વિશેષણો દ્વારા વિશેષ સ્પષ્ટીકરણ કરે છે, તેઓ કહે છે કે–તે અબ્રહ્મ–મૈથુન સેવનરૂપ પાપકર્મ

नीयम्=अभिलषणीयम्। 'पंकपणगपासजालभूयं' पङ्कपनकपाशजालभूतं=तत्र पङ्कः =कर्दमः–निमज्जनहेतुत्वात्, पनकः=शैवालं–चरणन्यासमात्रेण स्खलनहेतुत्वात्, पाशः=बन्धनविशेषः, जालं च=प्रतीतं तद्भूतं=तत्सदृशम्। तथा 'इत्थीपुरिसनपुंसग –वेदचिंहणं' स्त्री पुरुषनपूंसकवेदचिह्न=स्त्रीपुरुषनपुंसकवेदलक्षणं, तत्र स्त्री–वेदः= पुरुषाभिलाषलक्षणः पुरुषवेदः स्त्रियोऽभिलाषलक्षणः, नपुंसकवेदः= उभयाभिलाष-लक्षणः। 'तवसंजमबंभचेरविग्घं ' तपःसंयमब्रह्मचर्यविघ्नः=तपः संयम ब्रह्मचर्य-विघातरूपम्, 'भेदाययणबहुपमादमूलं' भेदायतनबहुप्रमादमूलं=भेदः=चारित्र-विनाशः तस्य आयातनानि=स्थानानि ये बहवः=अनेकविधाः प्रमादाः=मद्यविकथा दयः, तेषां मूलं=कारणं यत्तत्तथा। 'कायरकापुरिससेवियं' कातरकापुरुषसेवितं= कातराः=परीषहभीरवः, अतएव कापुरुषाः = धैर्यवर्जितास्तैः सेवितं यत्तत्तथा। 'सुयणजणवज्जणिज्जं' सुजनजनवर्जनीयं=सुजनजनाः=साधुजनास्तैः वर्जनियं

(सदेव मणुयासुरस्स लोयस्स पत्थणिज्जं) देव, मनुष्य, एवं असुर लोक द्वारा अभिलषणीय है–चाहे देव हो चाहे मनुष्य हो या असुर हो कोई भी क्यों न हो सब ही इसे चाहते हैं। यह कर्म (पंकपणगपासजालभूयं) पंककर्दम, पनकशैवाल–काई, पाश और जाल के जैसा है। तथा (इत्थी-पुरिसनपुंसगवेदचिंधं) पुरुष अभिलाष रूप स्त्रीवेद स्त्रीचाहनारूप-पुरुषवेदउभयकी वाञ्छारूप नपुसकवेद, ये जिसके चिह्न हैं। यह (तवसं-जमबंभचेरविग्घं) तप, संयम, और ब्रह्मचर्य का विघातक है। (भेया-ययणबहुपमादमूलं) चारित्र को विनाश करने वाले जो मद्य विकथादिक अनेक प्रमाद हैं उनका यह मूल कारण है। (कायरकापुरिससेवियं) जो व्यक्ति कातर परीषह सहने में भीरू होते हैं, और इसीसे जिनका धैर्य नष्ट हो जाता है ऐसे व्यक्ति ही इसका सेवन करते हैं। तथा (सुय-

"सदेवमणुया सुरस्स पत्थणिज्जं" દેવ, મનુષ્ય અને અસુર લોકો દ્વારા અભિલષણીય છે ભલે દેવ હોય, મનુષ્ય હોય કે અસુર હોય-દરેક તેને ચાહેછે. તે કર્મ "पंकपणगपासलजालभूयं" પંક-કાદવ, પનક-શેવાળ, પાશ અનેજાળ જેવું છે. તથા "इत्थीपुरिसनपुंसगवेदचिंधं" પુરુષ અભિલાષારૂપ સ્ત્રી વેદ સ્ત્રીચાહનારૂપ પુરુષ વેદ, અને બન્નેની ચાહનારૂપ નપુંસક વેદ જેનાં ચિહ્નો છે, તે "तवसंजमबंभचेर विग्घं" તપ, સંયમ અને બ્રહ્મચર્યનું વિઘાતક છે 'भेयाययण बहुपमादमूलं" ચારિત્રનો નાશ કરનાર જે મદ્ય, વિકથા આદિ અનેક પ્રમાદ છે, "कायरकापुरिससेवियं" જે વ્યક્તિ કાયર-પરીષહો સહન કરવામાં ભીરુ હોય છે, અને તેથી જ જેમનું ધૈર્ય નષ્ટ થયું હોય છે એવી વ્યક્તિઓ જ તેનું સેવન કરે છે. તથા

=त्याज्यम् , 'उड्ढनरयतिरियतिलोकपइट्ठाणं' ऊर्ध्व नरकतिर्यक्त्रिलोकप्रतिष्ठानम्=ऊर्ध्वलोको नरकलोकस्तिर्यग्लोकश्चेत्येतद्रूपं यत् त्रैलोक्यं तत्र प्रतिष्ठानम्=अवस्थिति र्येन मैथुनेन यत्तत्तथा लोकत्रये चतुर्गतिभ्रामकमित्यर्थः, तथा 'जरामरणरोगसोगबहुलं' जन्मजरामरणरोगशोकाद्यनन्तदुःखसम्भृतम् , 'वधबंधविघायदुव्विघायं' वधबन्धविघातदुर्विघातम्=तत्र वधः=हननं बन्धः=रज्ज्वादिभिः संयमनं, विघातः=मारणं चेत्येतैः दुर्विघातः=दुस्सह्यो विघातो=दुःखं यस्मिन् तत्तथा वधबन्धादिविविधदुःखजनकमित्यर्थः, 'दंसणचरित्तमोहस्स-हेउभूयं' दर्शनचारित्रमोहस्य हेतुभूतं=दर्शनमोहस्य चारित्रमोहस्य च बन्धकारणम्-इदमब्रह्मजिनवचने शङ्काकाङ्क्षादिदोषोद्भावकत्वाद् दर्शनमोहस्य कारणं, चारित्रभेदजनकत्वाच्चारित्रमोहस्येति भावः । तथा 'चिरपचियं' चिरपरिचितं=

णजणवज्जणिज्जं) जो साधुजन हैं वे तो इस कृत्य को सदा त्याज्य ही मानते हैं (उड्ढ नरयतिरियतिलोकपइट्ठाणं) इस मैथुन सेवन से जीवका परिभ्रमण उर्ध्वलोक मध्यलोक एवं पाताललोक रूप त्रैलोक्य में होता हैं। (जरामरण रोगसोगमूलं) यह कर्म जन्म, जरा, मरण, शोक आदि अनंत दुःखोंसे भरा हुआ है। (वधबंधविघायदुव्विघायं) इसमें वध, बंधन एवं मरण जन्य दुः सह दुःख भरे हुए हैं। (दंसणचरित्तमोहस्स हेउभूयं) दर्शन मोहनीय तथा चारित्रमोहनीय का यह हेतुभूत है। अर्थात-यह अब्रह्म जिनवचन में शंका कांक्षा आदि दोषों का जनक होने के कारण दर्शन मोहका और चारित्रका विनाशक होने से चारित्र मोहनीय कर्म के बंध को कारण माना गया है। (चिरपरिचियं) जीवों के साथ इसका परिचय चिरकाल से जन्म जन्मान्तरों में आसेवित होते रहने के कारण चला आ रहा है। इसीलिये (अणुगयं) यह

"सुयणजणवज्जणिज्जं" પણ સંતપુરુષો તો એ કૃત્યને સદા ત્યજવાં યોગ્ય માને છે, 'उड्ढनरयतिरियतिलोकपइट्ठाणं" એ મૈથુનના સેવનથી જીવને ઉર્ધ્વલોક અને પાતાળલોક, એ રીતે ત્રણલોકમાં પરિભ્રમણ કરવું પડે છે, "जरामरणरोगसोगमूलं" તે કર્મ જન્મ, જરા, મરણ, શોક આદિ અનંત દુઃખોથી ભરેલુ છે, "वधबधविघायदुव्विघायं" તેમાં વધ, બંધન અને મરણ જન્ય દુઃસહ દુઃખો ભરેલાં છે, "दंसणचरित मोहस्स हेउभूय" તે દર્શન મોહનીય તથા ચારિત્ર મોહનીયના કારણરૂપ છે, એટલે કે તે અબ્રહ્મ જિન-વચનોમાં શંકા કાંક્ષા આદિ દોષોનું જનક હોવાથી દર્શનમોહનીય અને ચારિત્રનું વિનાશક હોવાથી ચારિત્ર મોહનીય કર્મનાં બંધનું કારણ મનાયું છે ' चिरपरि-चिय" તે જન્મ જન્માન્તરોથી સેવાતુ હોવાને કારણે તેનો જીવોની સાથે

जन्मजन्मान्तरासेवितम्, 'अणुगयं' अनुगतम् = अनादिकालतः समनुगतम्, 'दुरंतं' दुरन्तम्=दुःखावसानम्, दुष्टफलमित्यर्थः । 'चउत्थं अहम्मदारं' चतुर्थमधर्मद्वारम्=आस्रवद्वारमब्रह्मेति नामकम् ॥ १ ॥ सू० ॥

एवमब्रह्मस्वरूपमुक्तं साम्प्रतं 'यन्नामे' ति द्वितीयान्तर्द्वारमाश्रित्य तस्य नामान्याह 'तस्स य णामाणि' इत्यादि—

मूलम्—तस्स य णामाणि गोणाणि इमाणि हुंति तीसं—अबंभं १ मेहुणं २ चरंतं ३ संसग्गि ४ सेवणाहिगारो ५ संकप्पो ६ वाहणापदाण ७ दप्पो ८ मोहो ९ मणसंखोभो १० अणिग्गहो ११ विग्गहो १२ विघाओ १३ विभंगो १४ विब्भमो १५ अहम्मो १६ असीलया १७ गामधम्मतत्ती १८ रती १९ रागचिंता २० कामभोगमारो २१ वेरं २२ रहस्सं २३ गुज्झं २४ वहुमाणो २५ वंभचेरं विग्घो २६ वावत्ती २७ विराहणा २८ पसंगो २९ कामगुणोत्ति ३० विय। तस्स एयाणि एवमाइणि नामधेज्जाणि हुंति तीसं ॥ सू० २ ॥

टीका—'तस्स य' तस्य च=अब्रह्मणो मैथुनस्येत्यर्थः, 'गोणाणि' गौणानि=गुणनिष्पन्नानि 'णामाणि' नामानि 'इमाणि इमानि=वक्ष्यमाणानि

जीवों के पीछे अनादिकाल से पडा हुआ है । (दुरंतं) इसका अवसान (अंत) बहुत ही अधीक कष्ठप्रद होता है । (चउत्थं अहम्मदारं) इस प्रकार यह चतुर्थ अब्रह्म नामका अधर्मद्वार है ॥ सू० १ ॥

इस तरह सूत्रकार अब्रह्म के स्वरूप का प्रतिपादन कर अब "यन्नाम" नामक द्वितीय अन्तर्द्वार से उसका प्रतिपादन करते हैं—'तस्स य' इत्यादि ० ।

टीकार्थ—(तस्स य) उस अब्रह्म रूप मैथुन कर्मके (गोणाणि)

ચિરકાળથી પરિચય ચાલ્યો આવે છે. તેથી "अणुगयं" તે અનાદિકાળથી જીવોની પાછળ પડેલુ છે "दुरंतं" તેનો નાશ થવો અતિશય દુષ્કર છે. "चउत्थ अहम्मदारं" આ પ્રકારનું તે ચોથુ અબ્રહ્મ નામનું અધર્મદ્વાર છે. ॥ સૂ૦ ૧ ॥

ઉપરોકત રીતે અબ્રહ્મના સ્વરૂપનુ પ્રતિપાદન કરીને હવે સૂત્રકાર "यन्नाम" નામના બીજા અન્તર્દ્વારથી તેનું પ્રતિપાદન કરે છે. "तस्स य" ઈત્યાદિ

ટીકાર્થ–"तस्स य" તે અબ્રહ્મરૂપ મૈથુન કર્મના "गोणाणि" ગુણાનુસાર "णामाणि"

' तीसं हुंति ' त्रिंशद् भवन्ति ' तंजहा ' तानि यथा ' अबंभं ' अब्रह्म=अकुशला-नुष्ठानम् १, ' मेहुणं ' मैथुनं=मिथुनस्य=स्त्रीपुंसयुगलस्य कर्म मैथुनम् २, 'चरंतं' चरत्=संसारव्यापकम्३, ' संसग्गि' संसर्गि=स्त्रीपुंससम्बन्धसंजातम्४, ' सेवणाहि-गारो ' सेवनाधिकारः=सेवनायां=चौर्यादिप्रतिसेवनायामधिकारः, मैथुनसेवी प्रायश्चौर्यादिषु प्रवृत्तो भवति५ । ' संकप्पो ' सङ्कल्पः = सङ्कल्पविकल्पजातत्वात् सङ्कल्पः ६, उक्तं च—

गुणनिष्पन्न (णामाणि) नाम (इमाणि) ये (तीसं) तीस (हुंति) हैं । (तं जहा) वे इस प्रकार हैं-(अबंभं १, मेहुणं२, चरंतं३, संसग्गि ४, सेवणा-हिगारो५, संकप्पो६, बाहणापदाण ७, दप्पो८, मोहो९, मणसंखोभो१०, अणिग्गहो ११, विग्गहो १२ विघाओ १३, विभंगो १४, विब्भमो १५, अहम्मो १६, असीलया १७, गामधम्मतत्ती १८, रत्ती १९, रागचिंता २०, कामभोगमारो २१, वेरं २२, रहस्सं २३, गुज्जं २४, बहुमाणो २५, बंभचेरविग्घो २६, वावत्ती २७, विराहणा २८, पसंगो २९, कामगुणो ३० त्ति वि य । तस्स एयाणि एवमाइणि नामधेज्जाणि तीसं हुंति) यह कर्म अकुशलानुष्ठानरूप है, इसलिये इसका नाम अब्रह्म है १ । स्त्री और पुरुष रूप मिथुन परस्पर मिलकर इसे करते हैं, इस-लिये इसका नाम मैथुन है २ । यह समस्त संसार में व्यापक है इस-लिये इसका नाम चरंत है ३ । स्त्री और पुरुषों के पारस्परिक संसर्ग से यह उत्पन्न होता है इसलिये इसका नाम संसर्गी है ४ । जो मैथुन सेवी होता है वह प्रायःचौर्यादिकुकर्मों में प्रवृत्त हो जाता है इसलिये इसका

" इमाणि " આ " तीसं " ત્રીસ નામ " हुंति " છે. " तंजहा " તે આ પ્રમાણે છે." अबभं १, मेहुणं २, चरंतं ३, संसग्गि ४, सेवणाहिगारो ५, संकप्पो ६, बाहणापदाण ७ दप्पो ८, मोहो ९, मणसंखोभो १०, अणिग्गहो ११, विग्गहो १२, विघाओ १३, विभंगो १४, विब्भमो १५, अहम्मो १६, असीलया १७, गामधम्थतत्ती १८, रत्ती १९, रागचित्ता २०, कामभोगमारो २१, वेरं २२, रहस्सं २३ गुज्झं २४, बहुमाणो २५, बभचेरविग्घो २६, वावत्ती २७, विराहणा २८, पसंगो २९, कामगुणो ३० त्ति वि य । तस्स एयाणि एवमाइणि नामधेज्जाणि तीसं हुंति " (१) આ કર્મ અકુશલ અનુષ્ઠાન હોવાથી તેનું નામ "अब्रह्म" છે (૨) સ્ત્રી અને પુરુષનું " मिथुन " (જોડું) પરસ્પર મળીને તેનું સેવન કરે છે, તે કારણે તેનું નામ " मैथुन " છે. (૩) તે સમસ્ત સંસારમાં વ્યાપક હોવાથી તેનું નામ " चरंत " છે (૪) સ્ત્રી અને પુરુષના અરસ પરસના સંસર્ગથી તે ઉત્પન્ન થતું હોવાથી તેનું નામ " संसर्गी " છે, (૫) મૈથુન સેવનાર હોય છે તે સામાન્ય રીતે ચોરી આદિ કુકર્મો પણ સેવવા

काम ? जानामि ते रूपं, सङ्कल्पात् किल जायसे ।
न त्वां संकल्पयिष्यामि, ततो मे न भविष्यसि ॥ १ ॥

'वाहणा पदाणं' बाधना पदानां=पदानां=संयमस्थानानां बाधना बाधोत्पादकत्वात् ७ । 'दप्पो' दर्पः=दृप्तजनैराचरितत्वात् ८, मोहः=मोहजननात्-वेदमोहनीयकर्मोदयसम्पाद्यत्वाद्वा मोहस्वरूपः ९, 'मणसंखोभो' मनः सङ्क्षोभः=चित्तव्याकुलतोत्पादकत्वात् १०, 'अणिग्गहो' अनिग्रहः=विषयेषु प्रवर्त्तमानस्य-

नाम सेवनाधिकार है ५ । संकल्प विकल्पों से यह उत्पन्न होता है इसलिये इसका नाम संकल्प है ६ । कहा भी है--

" काम ! जानामि ते रूपं, संकल्पात् किल जायसे ।
न त्वां संकल्पयिष्यामि, ततो मे न भविष्यसि ॥ १ ॥

हे काम ! मैं तेरे स्वरूपको जानता हूं, तूं निश्चयतःमानसिक संकल्प से उद्भूत होता है । अतः में जब तेरा संकल्प ही नहीं करूँगा तो फिर तूं कैसे उत्पन्न होगा ? ॥

यह संयम के स्थानों में बाधा का उत्पादक होता है इसलिये इसका नाम पद बाधना है ७ । जो मनुष्य दृप्त-मदोन्मत्त होते हैं-उन्हीं के द्वारा यह आचरित किया जाता है अतः इसका नाम दर्प है । यह वेदरूप मोहनीय कर्म के उदय से उद्भूत होता है इसलीये इसका नाम मोह है ९ । इसके निमित्त से चित्त में एक प्रकार की व्याकुलता उत्पन्न होती है इसलिये इसका नाम मनःसंक्षोभ है १० । जिस समय इसका

લાગે છે, તેથી તેનું નાથ "सेवनाधिकार" છે, '૬' સંકલ્પ વિકલ્પોથી તે ઉત્પન્ન થાય છે, તેથી તેનું નામ "संकल्प" છે, કહ્યું પણ છે—

" काम ! जानामि ते रूप, संकल्पात् किल जायसे ।
न त्वां संकल्पयिष्यामि, ततो मे न भविष्यसि ॥ १ ॥ "

હે કામ ! હું તારા સ્વરૂપને ઓળખું છું, તું અવશ્ય માનસિક સંકલ્પોથી જ ઉત્પન્ન થાય છે, તો હું તારો સંકલ્પ જ નહીં કરૂં તો તું ક્યાંથી ઉત્પન્ન થઇશ ? ॥ ૨ ॥

'૭' તે સંયમનાં સ્થાનોમાં મુશ્કેલીઓ પેદા કરનાર છે, તેથી તેનું નામ "पदबाधना" છે, '૮' મદોન્મત્ત મનુષ્ય દ્વારા જ તે સેવાય છે, તેથી તેનું "दर्प" છે, '૯' તે વેદરૂપ મોહનીય કર્મના ઉદયથી ઉત્પન્ન થાય છે, તેથી તેનું નામ "मोह" છે, ૧૦' તેને કારણે ચિત્તમાં એક પ્રકારની વ્યાકુળતા ઉત્પન્ન થાય છે તેથી તેનું નામ "मन.संक्षोभ" છે '૧૧' જ્યારે શરીરમા તેનો

मनसोऽनिषेधः ११। 'विग्गहो' विग्रहः=विग्रहकारित्वात् १२, 'विघाओ' विघातः=चारित्रविनाशरूपः १३, 'विभंगो' विभङ्गः=संयमादिगुणानां विशेषेण भञ्जकत्वात् १४, 'विब्भमो' विभ्रमः = अनुपादेयेष्वप्युपादेयत्वेन नानाविध-भ्रान्तिजनकत्वात् १५, 'अहम्मो' अधर्मः=श्रुतचारित्रलक्षणधर्मप्रतिकूलत्वात् १६, 'असीलया' अशीलता=चारित्र वर्जितत्वात् १७, 'गामधम्मतत्ती' ग्रामधर्म-तृप्तिः=ग्रामधर्माः=शब्दादयः कामगुणास्तेषां तृप्तिः=आसेवनम् १८, 'रत्ती' रतिः =अशुभरागः१९, रागचिन्ता=रागः=रागकारणत्वात् स्त्रीश्रृङ्गाररूपलाण्यादिः तस्य

आवेग शरीर में जागृत होता है उस समय इन्द्रियां अथवा मन वेकाबू हो जाता है अतः इसका नाम अनिग्रह है ११। इसके पीछे ही भयंकरसे भयंकर विग्रह उत्पात खड़े होते हैं इसलिये इसका नाम विग्रह हैं १२। यह चारित्रका विघातक होता है। इसलिये इसका नाम विघात है१३। संयम आदि गुणोंका यह विशेषरूपसे भंजक होता है इसलिये इसका नाम विभंग है १४। जो अनुपादेय पदार्थ होते हैं उनमें भी यह उपादेयरूपसे नानाप्रकार की भ्रान्ति का जनक होता है इसलिये इसका नाम विभ्रम है १५। श्रुतचारित्र रूप धर्म से यह प्रतिकूल है इसलिये इसका नाम अधर्म है १६। इसमें चारित्र नहीं होता है इसलिये इसका नाम अशीलता है १७। इसमें ग्रामधर्म जो शब्दादिक काम गुण हैं उनका सेवन होता है इसलिये इसका नाम ग्रामधर्म है १८। यह अशुभ रागरूप है इसलिये इसका नाम रति है १९। इसमें स्त्रियों के श्रृंगार

આવેગ જાગૃત થાય છે ત્યારે ઈન્દ્રિયો તથા મન કાબૂમા રહેતા નથી, તેથી તેનું નામ "अनिग्रह" છે '૧૨' તેને કારણે જ ભયંકરમાં ભયંકર વિગ્રહ–ઉત્પાત ઉત્પન્ન થાય છે, તેથી તેનું નામ "विग्रह" છે, '૧૩' તે ચારિત્રનું વિઘાતક હોવાથી તેનું નામ "विघात" છે, '૧૪ સંયમ આદિ ગુણોનું ભંજક 'નાશ કરનાર' હોવાથી તેનું નામ "विभंग" છે, '૧૫' જે અનુપા-દેય પદાર્થો હોય છે તેમા પણ ઉપાદેયરૂપે વિવિધ પ્રકારની ભ્રાન્તિ 'ભ્રમ' નું જનક હોવાથી તેને "विभ्रम" કહે છે '૧૬, શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની વિરૂદ્ધ હોવાને કારણે તેને "अधर्म" કહે છે '૧૭' તેનુ સેવન કરનારમાં ચારિત્ર હોતું નથી, તેથી તેનું નામ "अशीलता" છે, '૧૮' તેમાં ગ્રામધર્મ કે જે શબ્દાદિક કામગુણ છે તેમનું સેવન થાય છે' તેથી તેનું નામ "ग्रामधर्मतृप्ति" છે, '૧૯' છે અશુભ રાગ રૂપ હોવાથી તેનું નામ "रति" છે '૨૦' તેમાં સ્ત્રીઓના શ્રૃગારનું, તથ તેમના રૂપ લાવણ્ય આદિનું ચિન્તવન થાય છે, તેથી

चिन्ता-चिन्तनम् २०, कामभोगमारः=कामभोगमाररूपम्-कामरूपं, भोगरूपं, माररूपं, चेत्यर्थः २१, 'वेरं' वैरं=शत्रुत्वोत्पादकत्वात् २२, 'रहस्सं' रहस्यम् =एकान्तसम्पादनीयत्वात् २३, 'गुज्झं' गुह्यं=गोपनीयत्वात् २४, 'बहुमाणो' बहुमानः=बहु-अतिशयेन मानः=आदरो यस्मिन् प्राणिनां सः२५,'बंभचेरविग्घो' ब्रह्मचर्यविघ्नं=ब्रह्मचर्यस्य=विघातकत्वाद् विघ्न=विघ्नभूतः २६, 'वावत्ती' व्यापत्तिः=विनाशः आत्मगुणविनाशकत्वात् २७, 'विराहणा' विराधना=चारित्र-धर्मस्य विराधकत्वात् २८, 'पसंगो' प्रसङ्गः=स्त्रीपुंससंयोगः २९, कामगुणः = शब्दादिविषयभोगजनकत्वात् ३० 'त्ति विय' इत्यपि च त्रिंशत्तमं नाम।

का उनके रूप लावण्य आदि का चिन्तवन होता है इसलिये इसका नाम रागचिन्ता है २०। यह कामरूप, भोगरूप और भाररूप होता है इसलिये इसका नाम कामभोगभार हैं २१। इसके निमित्त से जीवों में परस्पर शत्रुता उत्पन्न हो जाती है इसलिये इसका नाम वैर है २२। यह कर्म एकान्त में किया जाता है इसलिये इसका नाम रहस्य है २३। यह सदा गोपनीय होता है इसलिये इसका नाम गुह्य है २४। इसमें प्राणीयों को अतिशय आदर भाव-सेवन करने में लालसा-रहता है, इसलिये इसका नाम बहुमान है २५। यह ब्रह्मचर्य व्रतका विघातक होता है इसलिये इसका नाम ब्रह्मचर्य विघ्न है २६। आत्मगुणों का इसमें विनाश हो जाता है इसलिये इसका नाम व्यापत्ति है २७। चारित्र धर्मका यह विराधक होता है इसलिये इसका नाम विराधना-है २८। इसमें स्त्री और पुरुष दोनों के शरीर का संयोग होता है इसलिये इसका नाम प्रसंग है २९। शब्दादिक विषयों में यह भोगने की रुचिका जनक होता है इसलिये इसका नाम कामगुण है ३०। इस

તેનું નામ "रागचिन्ता" છે, '૨૧' તે કામરૂપ, ભોગરૂપ અને મારરૂપ હોય છે, તેથી તેનું નામ "कामभोगमार" છે '૨૨' તેને કારણે જીવોમાં પરસ્પર દુશ્મનાવટ પેદા થાય છે, તેથી તેનું નામ "वैर" છે '૨૩' તે કર્મ એકાંતમાં કરાતું હોવાથી તેનું નામ "रहस्य" છે, '૨૪' તે સદા ગોપનીય હોય છે, તેથી તેનું નામ "गुह्यं" છે, ૨૫' તેના પ્રત્યે પ્રાણીઓને અત્યંત આદરભાવ-લાલસા રહે છે, તેથી તેનું નામ "बहुमान" છે, '૨૬' તે બ્રહ્મચર્યવ્રતનું વિઘાતક 'તોડાવનાર' હોવાથી તેનુ નામ "ब्रह्मचर्यविघ्न" છે '૨૭' તેના સેવનથી આત્મગુણોનો નાશ થાય છે, તેથી તેનુ નામ "व्यापत्ति" છે (૨૮) તે ચારિત્રધર્મનું વિરાધક હોવાથી તેનું નામ "विराधना" છે. (૨૯) તેમાં સ્ત્રી તથા પુરુષનાં શરીરનો સંયોગ થાય છે, તેથી તેનું નામ "प्रसंग" છે' ૩૦' શબ્દાદિક વિષયોના ઉપભોગની રુચિનું જનક હોવાથી તેનું નામ "कामगुण" છે, આ

'एयाणि' एतानि = पूर्वोक्तानि 'एवमाईणि' एवमादीनि=अब्रह्मेत्यादीनि 'तस्स' तस्य=अब्रह्मणः 'नामधेज्जाणि' नामधेयानि=नामानि 'तीसं' त्रिंशद् 'हुंति' भवन्ति ॥ सू० २ ॥

एवमब्रह्मणः 'यन्नामे' ति द्वितीयमन्तर्द्वारमुक्तम् । अथ तृतीयं चतुर्थंचान्तर्द्वारमनुक्त्वा साम्प्रतं ये च कुर्वन्ती' इत्येतत्पञ्चममन्तर्द्वारमाह–'तं च पुण' इत्यादि

मूलम्—तं च पुण निसेविंति सुरगणा स अच्छरा मोह-मोहियमई - असुर-भुयग-गरुल-विज्जु-जलण--दीव-उदहि-दिसिपवण-थणिय अणपन्निय-पणपन्निय-इसिवाइय-भूय-वाइय-कंदिय-महाकंदिय-कूहंड-पयंगदेवा, पिसायभूय-जक्ख-रक्खस-किण्णर-किंपुरिस-महोरग - गंधव्वा, तिरिय-जोइसविमाणवासि - मणुयगणा जल - यर - थलयर खहयरा य मोहपडिवद्धचित्ता अवितण्हा कामभोगतिसिया तण्हाए बलवइए महईए समभिभूया गढिया य अतिमुच्छिया य अबंभे ओसण्णा तामसेण भावेण अणुमुक्का दंसण चरित्तमोहस्स पंजरं पिव करेंति अण्णमण्णं सेवमाणा ॥सू०३॥

टीका—'तं च पुण' तच्चपुनरब्रह्म 'निसेविंति' निषेवन्ते । के ते ? इत्याह–सुरगणाः=देवसमूहाः 'स अच्छरा' साप्सरसः=अप्सरोभिः सहिताः 'मोहमहिय' मोहमोहितमतयः=मोहेन–मोहिता मतिः=बुद्धिर्येषां ते तथा । पुनः

प्रकार ये अब्रह्म आदि पूर्वोक्त तीस नाम इस चतुर्थद्वारके हैं ॥ सू०२॥

अब सूत्रकार तृतीय चतुर्थ द्वार को न कह कर पंचम अन्तर्द्वारको कहते हैं— 'तंच पुण' इत्यादि ० ।

टीकार्थः-(तंच पुण) इस चतुर्थ द्वार अब्रह्म का(सुरगणा) सुरगण की जिनकी (मोहमोहियमई) मति मोह से मोहित हो रही है (स अच्छरा)

પ્રમાણે ચોથા અધર્મ દ્વારના અબ્રહ્મ આદિ ત્રીસ પૂર્વોક્તનામ છે ॥ સૂ૦ ૨ ॥

હવે સૂત્રકાર ત્રીજા તથા ચોથા દ્વારનુ વર્ણન ન કરતાં પહેલાં પાંચમાં અન્તર્દ્વારનુ વર્ણન કરે છે— "तं च पुण" ઈત્યાદિ

ટીકાર્થ–"तं च पुण" તે ચોથા દ્વારરૂપ અબ્રહ્મનુ "सुरगणा" સુરગણ કે જેમની "मोहमोहियमई" મતિ મોહથી મોહિત થયેલ હોય છે "सअच्छ-

के ? इत्याह–'असुर–भुयग-गरुल-विज्जु-जलण–दीव–उदहि–दिसि–पवण-थणिय अणपन्निय – पणपन्निय–इसिवाइय–भूयजाइय–कंदिय–महाकंदिय–कूहंड– पयंग देवा ' तत्र असुराः=असुरकुमाराः, 'भुयग' भुजगाः=नागकुमाराः 'गरुल' गरुडाः=सुपर्णकुमाराः 'विज्जु' विद्युत् कुमाराः 'जलण' ज्वलनाः=अग्निकुमाराः 'दीव' द्वीपाः=द्वीपकुमाराः 'उदधिकुमाराः 'दिसि' दिक्कुक्कुमाराः 'पवण' वायुकुमाराः 'थणिय' स्तनितकुमाराः, दशैते भवनपतिदेवाः । 'अणपन्निय पणपन्निय' अणपन्निकाः पणपन्निकाः 'इसिवाइय' ऋषिवादिकाः 'भूयवाइय' भूतवादिकाः 'कंदिय' क्रन्दिताः 'महाकंदिय' महाक्रन्दिताः 'कूहंड' कुष्माण्डाः 'पयंग' पतङ्गाश्च ते च ते देवाः, एतेऽष्टौ व्यन्तरनिकायोपरिवर्तिनः। व्यन्तरदेवजातिविशेषाः । तथा 'पिसाय–भूय–जक्ख–रक्खस–किण्णर–किंपुरिस महोरग–गंधव्व–तिरिय–जोइस–विमाणवासि–मणुयगणा' तत्र 'पिसाय' पिशाचाः १ ।'भूय' भूता २ । 'जक्ख' यक्षाः ३, 'रक्खस' राक्षसाः ४, 'किण्णर' किन्नराः५, 'किं पुरिस' किम्पुरुषाः६, 'महोरग' महोरगाः७, 'गंधव्व' गन्धर्वाश्च

अप्सराओं के साथ (निसेविंति) सेवन करते हैं । तथा (असुर-भुयग-गरुल– विज्जु –जलण – दीव–उदहि–दिसि–पवण–थणिय–अणपन्निय-पणपन्निय–इसिवाइय–भूयवाइय–कंदिय–महाकंदिय–कूहंड पयंग-देवा) असुरकुमार, नागकुमार, सुपर्णकुमार, विद्युत्कुमार, अग्निकुमार, द्वीपकुमार,उदधिकुमार,दिकुमार, वायुकुमार, स्तनितकुमार, ये१० दस भनवपति देव, तथा–अणपन्निक, पणपन्निक, ऋषिवादिक, भूतवादिक, क्रंदित महाक्रंन्द्रित कुष्मांड़, पतंग, ये आठ व्यन्तर जातिके देव विशेष, (पिसाय भूय-जक्ख-रक्खस-किन्नर-किंपुरिस– महोरग–गंधव्व–तिरिय– जोइस–विमाणवासि–मणुयगणा) तथा पिशाच, भूत, यक्ष, राक्षस, किन्नर,

रा" અપ્સરાઓ સાથે "निसेविंति" સેવન કરે છે તથા "असुर, गरुल, विज्जु, जलण, दीवउदहि, दिसि, पवण, थणिय, अणपन्निय, पणपन्निय, इसिवाइय, भूयवाइस, कंदिय, महाकंदिय, कूहंड पयंग–देवा" અસુરકુમાર, નાગકુમાર સુપર્ણકુમાર, વિદ્યુતકુમાર, અગ્નિકુમાર, દ્વીપકુમાર, ઉદધિકુમાર, દિકકુમાર, વાયુકુમાર, અને સ્તનિતકુમાર, એ દસ ભવનપતિ દેવ, તથા અણપન્નિક, પણપન્નિક ઋષિવાદિક, ભૂતવાદિક, ક્રંદિત, મહાક્રંદિત, અને પતંગ, તે આઠ વ્યન્તર જાતિના દેવ, "पिसाय, भूय, जक्ख, रक्खस, किन्नर, किंपुरिस, महोरग, गंधव्व, तिरिय, जोइस, विमाणवासि, मणुयगणा" તથા પિશાચ, ભૂત, યક્ષ, રાક્ષસ, કિન્નર, કિંપુરુષ, મહોરગ, ગંધર્વ એ આઠ વ્યન્તર દેવ તથા તિર્યગ્

८, एतेऽष्टौ व्यन्तरभेदाः । तथा तिरिय-जोइस-विमाण-वासि' तिर्यग्ज्योतिर्विमानवासिनः=तिरश्चि=तिर्यग्लोके यानिज्योतिर्विमानानि तेषु निवासिनोऽसख्याता ज्योतिष्काः 'मणुय' मनुजाः=मनुष्याश्च तेषां गणाः=समूहाः । तथा 'जलयर थलयर खह-चराय' जलचर स्थलचर खेचराश्च, तत्र जलचराः = मत्स्यादयः, स्थलचराः=गोमहिष्यादयः खेचराश्च=पक्षिणस्ते तथा, एते सर्वे मैथुनं निषेवन्त इति पूर्वेण सम्बन्धः । कीदृशास्ते इत्याह—'मोहपडिवद्धचित्ता' मोहप्रतिवद्धचित्ताः=मोहेन=अज्ञानेन प्रतिवद्धं=ग्रसितं चित्तं येषां ते तथा 'अवितण्हा' अवितृष्णाः=विषयलोलुपाः-प्राप्तकामोपभोगेनाप्यनुपशान्तचित्ता इत्यर्थः, 'कामभोगतिसिया' कामभोगतृषिताः-अप्राप्तकामभोगेषु तत्प्राप्तिचिन्तापरायणाः, एतादृशास्ते 'वलवईए' वलवत्या=प्रगाढया 'महईए' महत्या विशालया 'तण्हाए' तृष्णया=विषयवाञ्छया 'अभिभूया' अभिभूताः=अक्रान्ताः 'गढिया

किं पुरुष, महोरग, गंधर्व, ये आठ व्यन्तर देव, तथा तिर्यग्लोक में जितने ज्योतिषियों के विमान हैं उन विमानों में रहने वाले असंख्यात ज्योतिषी देव, तथा मनुष्यों का समूह, (जलयरथलयरखहचरा य) मत्स्य आदि जलचर जीव, गोमहिषी आदि स्थलचर जीव, एवं आकाश में उड़ने वाले पक्षी, सब मैथुन सेवन करते हैं। क्यों कि ये सब (मोहपडिबद्धचित्ता) अज्ञान से ग्रसित है चित्त जिन्हों का ऐसे होते हैं। एवं (अवितण्हा) प्राप्तकामोपभोग में भी इनका चित्त शांत नहीं हो पाता है। कारण (काम भोगतिसिया) जो कामभोग इन्हें प्राप्त नहीं होते हैं उनमें उनकी प्राप्तिकी आज्ञासे चिन्ता से इनका चित्त चलायमान होता रहता है। ऐसा इसलिये होता है कि ये (बलवईए) प्रगाढ एवं (महईए) विशाल (तण्हाए) विषयाभिलाषा से (अभिभूया) आक्रान्त हो जाते हैं। इसीलिये ये (गढियाय) विषयों के

લોકમાં જેટલાં જ્યોતિષીઓના વિમાન છે તે વિમાનોમાં રહેતા અસંખ્યાત જ્યોતિષદેવ, તથા મનુષ્યોનો સમૂહ, તથા "जलयर, थलयर, खहचराय" મત્સ્ય આદિ જળચર જીવો, ગાય ભેંસ આદિ સ્થળચર જીવ, અને આકાશમાં ઉડતાં પક્ષીઓ, તે સૌ મૈથુનનું સેવન કરે છે, કારણ કે તે સૌનાં ચિત્ત "मोहपडिबद्धचित्ता" અજ્ઞાનથી જકડાયેલાં હોય છે, અને "अवितण्हा" કામભોગ ભોગવવા મળે તો પણ તેમના ચિત્તને શાંતિ મળતી નથી. કારણ કે "कामभोग तिसिया" જે કામભોગ તેમને પ્રાપ્ત થતા નથી તેની લાલસાથી તેમતાં ચિત્ત ચલાયમાન રહે છે. એમ થવાનું કારણ એ છે કે "बलवईए" પ્રગાઢ અને "महईए" વિશાળ "तण्हाए" વિષયાભિલાષાથી "अभिभूया"

य' ग्रथिताश्च=विषयगुम्फितमानसाः, तथा 'अइमुच्छियाय' अतिमूर्छिताश्च= अतिमोहातिशयमुपगताः 'अवंभे ओसण्णा' अब्रह्मणि अवसन्नाः=मैथुने समासक्ताः, 'तामसेण भावेण अणुमुक्का' तामसेन भावेन=अनुमुक्ताः, तामसेन भावेन= अज्ञानप्रवर्तितेन परिणामेन अनुमुक्ताः=आवद्धाः सन्तः, अत्र–'अन्नोन्नं सेव- माणा' इत्यग्रेण सम्बन्धः अन्योन्यं=परस्परं पुरुषैः सह स्त्रियः, स्त्रीभिः सह पुरुषा इत्यर्थः सेवमानाः=अब्रह्मसमाचरन्तः, 'दंसणचरित्तमोहस्स' दर्शनचारित्रमोह- स्य=' अत्र कर्मणः सम्बन्धमात्रविवक्षायां षष्ठी, दर्शनमोहनीयचारित्रमोहनीयरूपं द्विविधं कर्म 'पंजरं पिव' पञ्जरमिव 'करेंति' कुर्वन्ति–अब्रह्मसेविनो देवादयः खलु दर्शनमोहनीय–चारित्रमोहनीयरूपपञ्जरे स्वात्मानं नयन्तीति भावः ॥सू० ३॥

साम्प्रतं चक्रवर्त्यादीन् वर्णयति 'भुज्जो असुरसुर' इत्यादि—

मूलम्–भुज्जो असुर-सुर-तिरिय-मणुय–भोगरति–विहार संपउत्ता य चक्कवट्टी-सुर-नरवाइ-सक्कया, सुरवरव्व देवलोए

सेवन करने की आज्ञा से गुम्फित मन होकर (अइमुच्छिया य) उन विषयों में अत्यंत मोहको प्राप्त होते रहते हैं और (अवंभे ओसण्णा) अब्रह्म के सेवन करने के लिये अत्यंत आसक्त हो जाते हैं। (तामसेण- भावेणं अणुमुक्का) तामसभाव से–अज्ञानप्रवर्तित परिणाम से–आबद्ध होकर परस्पर में–एक दूसरे के साथ पुरुष के साथ स्त्री, और स्त्री के साथ पुरुष रमण करने लग जाते हैं। इस तरह (अन्नोन्नं सेवमाणा) इस अब्रह्मरूप पापकर्मको सेवन करने वाले ये देवादिक अपनी आत्मा को (दंसणचरित्तमोहस्स पंजरं पि व करेति) पंजर के जैसे दर्शन मोह- नीय एवं चारित्र मोहनीय कर्म में निक्षिप्त कर देते हैं। अर्थात् इन कर्मों का बंध करते हैं ॥ सू० ३ ॥

તેઓ વ્યાકુળ થાય છે તેથી "गढियाय" વિષયોનું સેવન કરવાની આશામાં લીન થઈને "अइमुच्छियाय,, તેમનું મન તે વિષયો પ્રત્યે અત્યંત મોહાસકત થયા કરે છે, અને "अबंभेओसण्णा" તેઓ મૈથુનનું સેવન કરવાને અત્યંત આસકત થાય છે. भावेण अणुमुक्का" તામસ ભાવથી–અજ્ઞાન પ્રવર્તિત પરિણામથી- જકડાઈને પરસ્પરમાં–પુરુષની સાથે સ્ત્રી, અને સ્ત્રીની સાથે પુરુષ–રમણ કરવા લાગી જાય છે. આ રીતે "अन्नोन्नं सेवमाण" આ અબ્રહ્મચર્યરૂપ પાપકર્મનું સેવન કરનાર દેવાદિક પોતાના આત્માને "दंसणचरित्तमोहस्स पंजरं पि व करेंति'- પિંજરા જેવા દર્શનમોહનીય અને ચારિત્ર મોહનીય કર્મમાં નાખી દે છે. એટલે કે તે કર્મોનો બંધ બાંધે છે ॥ સૂ૦ ૩ ॥

भरह-नग-णगर-निगमजणवय-पुरवणदोणमुह-खेड-कव्वड-मडंबसंवाहपट्टणसहस्स-मंडिय-थिमिय-मेयणियं एगच्छत्तं ससागरं भुंजिऊणवसुहं नरसीहा-नरवई-नरिंदा-नरवसहा मरुयवसभकप्पा अब्भहियं रायतेयलच्छीए दीप्पमाणा सोम्मा रायवंसतिलगा रवि-ससि-संख-वरचक्क-सोत्थिय-पडाग-जव-मच्छकुम्मरहवर-भग-भवण-विमाण-तुरंग-तोरण-गोपुर-मणि-रणय-नंदियावत्त-मुसल-लंगल-सुरइयवरकप्प रुक्ख सिगवइ -भद्दासण-सुरुइ-थूभ-वरमउड-सरिय-कुंडल-कुंजर-वरवसभ-दीव-मंदर-गरुलज्झय-इंदकेउ-दप्पण--अट्ठा-वय-चाव-बाण-नक्खत्त-मेह-मेहल-वीणा-जुग-छत्त-दाम-दामिणि-कमंडलु-कमल-घंटा-वरपोत-सूची-सागर-कुमुदागर-मगर-हार-गागर-नेउर-णग-णगर-वइर-किण्णर-मयूर-वररायहंस-सारस-चकोर-चक्कवाग-मिहुण-चामर-खेडग-पव्वीसग-विपंचि-वरतालियंट-सिरिया-भिसेय-मेयणि-खग्गं-कुस-विमल-कलस-भिंगार-वद्ध-माणगपसत्थउत्तमविभत्तवरपुरिसलक्खणधरा ॥ सू० ४ ॥

टीका—'भुज्जो' भूयः=पुनरपि 'असुर-सुर-तिरिय मणुय भोगरइ-विहारसंपउत्ताय' असुरसुरतिर्यङ्मनुजभोगरतिविहारसंप्रयुक्ताश्च तत्र असुराः=व्यन्तराः अत्र-असुरशब्देन व्यन्तरा गृह्यन्ते, सुराः=यक्षाः, तिर्यञ्चः=अश्वरत्नगजरत्नादयः,

---

अब सूत्रकार चक्रवर्त्ती आदि को का वर्णन करते हैं—'भुज्जो असुर०' इत्यादि० ।

टीकार्थः—(असुर-सुर-तिरिय मणुय भोगरइ विहारसंपउत्ताय) असुरों - व्यन्तरदेवों, सुरो - यक्षों तिर्यंचों—अश्वरत्न गजरत्न आदि

હવે સૂત્રકાર ચક્રવર્તી આદિનુ વર્ણન કરે છે—" भुज्जो असुर " ઈત્યાદિ "असुर, सुर, तिरिय मणुय, भोगरइविहारसंपउत्ताय" અસુરો-વ્યંતર દેવો, સુરો, યક્ષો, તિર્યંચો-અશ્વરત્ન, ગજરત્ન, આદિ પ્રાણિઓ, મનુષ્યો માંડલિક

मनुजाः=मनुष्या-मांडलिकादयश्च तेभ्यः-तत्सकाशाद् ये भोगाः=शब्दादयः, तेषु या रतिः=अनुरागस्तेन ये विहाराः=विविधप्रकारचेष्टारूपाः क्रीडाः, तैः सम्प्रयुक्ताः=सहिताः ये ते तथा के ते ? इत्याह—'चक्कवट्टी' चक्रवर्तिनः, कीदृशास्तेचक्रवर्तिन ? इत्याह—'सुरनरवइ सक्कया' सुरनरपतिसत्कृताः= सुरैः=देवैः नरपतिभिः=नृपैश्च, यद्वा 'पति' शब्दस्य प्रत्येकं सम्बन्धात् सुरपतिभिर्नरपतिभिश्चेत्यर्थः, सत्कृताः=सम्मानिताः, 'देवलोए' देवलोके 'सुरवरव्व' सुरवरा इव=महर्द्धिक देवा इव। देवलोके यथा देवाः सुखमनुभवन्तः 'भरहनगणगर — निगमजणवयपुरवरदोणमुहखेडकव्वडमडंवसंवाहपट्टणसहस्समंडियं' तत्र 'भरह' भरतस्य=भारतवर्षस्य सम्बन्धिनो ये नगाः=पर्वताः 'णगर' नगराणि=अष्टादशकरवर्जितानि, 'णिगम' निगमाः=वणिग्जननिवासाः 'जणवय' जनपदाः=देशाः, पुरवराणि=राजधानीरूपाणि, 'दोणमुह' द्रोणमुखानि=जलस्थलमार्गयुक्तानि 'खेड' खेटानि=धूलिप्राकारमयानि 'कव्वड' कर्वटानि=

प्राणियों मनुष्यों-मांडलिक राजा आदि जनों के द्वारा संपादित शब्दादिक भोगो में अनुराग जन्य विविध प्रकारकी चेष्टारूप क्रीडाओं से युक्त ऐसे(चक्कवट्टी)चक्रवर्ती भी इन कामभोगों से तृप्त नहीं होते हैं (सुरनरवइसक्कया) जो चक्रवर्ती सुरों से-देवताओं से, अथवा सुरपतियों-इन्द्रों से एवं नरपतियों-राजाओं से विशेषरूप में सदा सन्मानित किये जाते हैं तथा (देवलोए सुरवरव्व) जिस प्रकार देवलोक में महर्द्धिक देव सुखोंको भोगा करते हैं उसी प्रकार जो सुखोंको भोगते हैं। तथा जो (भरहनग-णगर-णिगम-जणवय-पुरवर-दोणमुह- खेडकव्वड--मडंब संवाहपट्टण-सहस्स-मंडियं) भारतवर्ष संबंधी हजारों १८अठारहप्रकार के करों से रहित नगरों से, वणिग्जननिवासभूत हजारों निगमों से, हजारों देशों से, राजधानियांरूप श्रेष्ठ पुरों से, जलमार्ग स्थलमार्ग

રાજા આદિ લોકો દ્વારા સંપાદિત શબ્દાદિક ભોગોમા અનુરાગ જન્ય વિવિધ પ્રકારની ચેષ્ટારૂપ ક્રીડાઓથી યુક્ત એવા "चक्कवट्टी" ચક્રવર્તી પણ કામભોગોથી તૃપ્ત થતા નથી. "सुरनरवइसक्कया" જે ચક્રવર્તીઓનું દેવતાઓ વડે, સુરપતિઓ ઇન્દ્રો વડે અને નૃપતિઓ વડે સદા વિશેષરૂપે સન્માન કરાય છે, તથા "देवलोए सुरवरव्व" દેવલોકમાં જેમ મહર્દ્ધિક દેવો સુખો ભોગવ્યા કરે છે, એજ પ્રમાણે જે સુખો ભોગવે છે, એવા ચક્રવર્તીઓ પણ કામભોગોથી તૃપ્તિ પામતા નથી, તથા જે "भरह-नग-णगर-णिगम-जणवय-पुरवर-दोणमुह-खेडकव्वड-मडंब-संवाह-पट्टण-सहस्स-मंडियं" ભારતવર્ષના હજારો પર્વતોથી, અઢાર પ્રકારના કરોથી રહિત નગરોથી, વણિક લોકો રહેતા હોય એવાં હજારો નિગમોથી, હજારો દેશોથી, હજારો રાજધાનીરૂપ શ્રેષ્ઠ શહેરોથી, જળમાર્ગ

अल्पजननिवासस्थानानि 'मडंब' मडंबाः=सार्धक्रोशद्वयग्रामान्तरशून्याः, संवाहाः =धान्यादिरक्षणदुर्गविशेषा 'पट्टण' पत्तनानि=सकलवस्तुप्राप्तिस्थानानि चैत्ये-तेषां यानि सहस्राणि तैः 'मंडियं' मण्डिता या सा तथा तां 'थिमियमेयणियं' स्तिमितमेदनीकां = निश्चलप्रजां निरस्तसमस्तशत्रुजनादिभयरहितजनयुक्ताम्, 'एगच्छत्तं' एकच्छत्राम्=इतरभूपतीनां तद्वशवर्त्तित्वादेकस्यैव राज्ञः स्वातन्त्र्येण प्राधान्यादेकमेव छत्रं यत्र सा तथा तां, तथा 'ससागरं' ससागरां=समुद्रसहितां 'वसुहं' वसुधां=पृथिवीं-भरतार्द्धादिरूपां 'भुंजिऊण' भुक्त्वा इदं चक्रवर्त्तिनो-

---

वाले हजारों द्रोणमुखोंसे से, धूलिप्राकारमय हजारों खेटों से, अल्पजन-निवासभूत हजारों कर्वटों से, अढाईकोशतक ग्रामान्तरों से शून्य हजारों मडंबों से, हजारों संवाहों से-धान्यादिकोंकी जिनकेद्वारा रक्षा की जाती है ऐसे दुर्गविशेषों से एवं सकल वस्तुओं की प्राप्ति के स्थान-भूत हजारों पत्तनों से मंडित (थिमिय मेयणियं) तथा शत्रु आदि के भय से रहित होकर प्रजाजन जिसमें आनंद के साथ निवास कर रहे है (एगच्छत्तं) और जिस में किसी अन्य राजा कीस्वतंत्र आज्ञा नहीं चलती है-दूसरे राजाओं के होनेपर भी उसी एक के वशवर्ती होने के कारण स्वतंत्ररूप से अपनी आज्ञा नहीं चला सकते हैं-किन्तु उसी एक की आज्ञा के अनुसार ही अपनी आज्ञा चलाते हैं, ऐसी स्थिति वाला साम्राज्य जहां होता है-उस साम्राज्य संपन्नभूमि को एकच्छत्रवाली भूमि कही जाती है। ऐसी (ससागरां) आसमुद्रान्त-(वसुहं) पृथिवी को-भरतार्द्ध रूप भूमि को (भुंजिऊण) भोगकर के (नरसीहा) जो

સ્થળમાર્ગ વાળા હજારો દ્રોણમુખોથી, ધૂળના કિલ્લાવાળા હજારો ખેટોથી, થોડી વસ્તીવાળાં હજારો કર્બટોથી, જ્યાંથી અઢી ગાઉ સુધી બીજા ગામો ન હોય તેવાં હજારો મડંબોથી, હજારો સંવાહોથી-(ધાન્યાદિની જેનાથી રક્ષા કરાય છે એવા દુર્ગ વિશેષો) અને સઘળી વસ્તુના પ્રાપ્તિ સ્થાનરૂપ હજારો પત્તનોથી યુક્ત, તથા "थिमियमेयाणियं" શત્રુ આદિ ભયથી રહિત બનીને પ્રજાજનો જેમાં આનંદપૂર્વક રહે છે, "एगच्छत्त" અને જેમા બીજા કોઈ રાજાની સ્વતંત્ર આજ્ઞા ચાલતી નથી-બીજા રાજાઓ હોવાછતાં પણ તેઓ તે એકને જ "ચક્રવર્તી રાજાને" વશ હોવાને કારણે સ્વતંત્ર રીતે પોતાની આજ્ઞા ચલાવી શકતાં નથી. પણ તે એકની આજ્ઞા પ્રમાણે તેમને વર્તવુ પડે છે, એવી સ્થિતિવાળું સામ્રાજય જ્યા હોય છે, એ પ્રકારના સામ્રાજયવાળી ભૂમિને એક છત્ર નીચેની ભૂમિ કહે છે. એવી "ससागरं" સમુદ્રના અન્ત સુધીની "वसुह" પૃથ્વીને- ભરતાર્દ્ધરૂપ ભૂમિને "भुंजिऊण" ભોગવીને "नरसीहा" જે વિશિષ્ટ

माण्डलिकावस्थाऽपेक्षयोक्तम् । अग्रे तु ' हिमवंतसागरं तं धीरा भोत्तूणभरहवासं ' इत्युक्तं तत् चक्रवर्त्तिपदप्राप्त्यनन्तरं समस्तभरतक्षेत्रभोक्तृत्वापेक्षया प्रोक्तमिति वोध्यत् चक्रवर्त्तिन एव विशिनष्टि, ' नरसीहा' नरसिंहाः=नरेषु सिंहा इव शौर्यादिमत्त्वात् ' नरवई ' नरपतयः=नराणां स्वामिकत्वात् ' नरिंदा ' नरेन्द्राः=नरेषु इन्द्रभूतत्वात् ' नरवसहा' नरवृषभाः=राज्यधुराधरणसामर्थ्यात् 'मरुयवसभकप्पा ' मरुजवृषभकल्पाः=मरुजाः=मरुदेशोत्पन्नाः वृषभाः=वलिवर्दाः, तत्कल्पाः=तत्समानाः ये ते तथा मरुदेशवृषभाहि शरीरसम्पत्त्या वहुभारवहनसमर्था भवन्तीति, तैः सहोपमानम् । ' अब्भहियं ' अभ्यधिकम्-अत्यधिक यथास्यात्तथा ' रायतेयलच्छीए दीप्पमाणा ' राजतेजोलक्ष्म्या दीप्यमानाः=राजप्रतापश्रिया देदीप्यमानाः ' सोम्मा ' सौम्याः=शान्तस्वरूपाः ' रायवंसतिलगा ' राजवंशतिलकाः= राजकुलमण्डनभूताः, तथा ' रविः=सूर्यः १, ' ससि' शशी=चन्द्रः २, ' संख '

विशिष्ट शौर्यादि संपन्न होने के कारण नरों में सिंह की तरह होकर नरसिंह (नरवई) मनुष्यों के स्वामी होने के कारण नरों के पति (नरिंदा) नरों में इन्द्र जैसे होने के कारण नरेन्द्र (नरवसहा) समस्त राज्य धुराके धारण करने में सामर्थ्यशाली होने के कारण मरुज वृषम जैसे- मारवाड़ के वलीवर्द जैसे-मारवाड़ के बैल अपनी शरीररूपी संपत्ति से बहुत अधिक भार को वहन करने वाले होते हैं-इसलिये उन के साथ यह सादृश्य घटित किया है। तथा (अब्भहियं रायतेयलच्छीए दीप्पमाणा) बहुत अधिकरूप में राजलक्ष्मी से देदीप्यमान, (सोम्मा), शांतस्वरूप और (रायवंसतिलगा) राजकुल के मंडनभूत होते हैं एवं जो (रविससिसंखवरचक्क) रवि शशि शंख चक्र इत्यादि-लक्षणों के धारण-करनेवाले, अर्थात्-रवि-सूर्य शशि-चंद्रमा तथा शंख, श्रेष्ठचक्र

શૌર્ય આદિથી યુક્ત હોવાને કારણે નરોમા સિંહ જેવા હોવાથી નરસિંહ, "नरवई" મનુષ્યોના સ્વામી હોવાને કારણે નૃપતિ, "नरिंदा" નરોમાં ઇન્દ્ર સમાન હોવાથી નરેન્દ્ર, " नरवसहा" સમસ્ત રાજ્યધુરાનું વહન કરવાને સમર્થ હોવાને કારણે નરવૃષભ અથવા મરુજવૃષભ જેવા,-મારવાડના બળદ જેવા-" મારવાડના બળદ મજબૂત હોવાને કારણે વધારે ભાર ઉપાડી શકે છે તેથી તેમની સાથે આ સરખામણી કરવામાં આવી છે' તથા ' अब्भहियं-रायतेयलच्छीए दीप्पमाणा " રાજલક્ષ્મી વડે બહુ જ વધારે દેદીપ્યમાન, " साम्मा " શાન્ત સ્વરૂપ સૌમ્ય, અને " रायवसतिलगा" રાજવંશોની શરૂઆત કરનારા, અને જે " रविससिसंखवरचक्क " " સૂર્ય, ચન્દ્ર, શંખ ચક્ર " ઇત્યાદિ લક્ષણોને ધારણ કરનારા, એટલે કે સૂર્ય ચન્દ્ર, શંખ, શ્રેષ્ઠ ચક્ર,

शङ्खः=प्रतीतः ३, 'वरचक्क' वरचक्र=श्रेष्ठचक्रं ४, 'सोत्थिय' स्वस्तिकः=चतुष्कविशेषः ५, 'पडाग' पताका=ध्वजा ६, 'जव' यवः=स्वनामख्यातो धान्यविशेषः ७, 'मच्छ' मत्स्यः=प्रसिद्धः 'कुम्म' कूर्मः=कच्छपः९, 'रहवर' रथवरः=विशिष्ट रथः१०, 'भग' योनिः११ 'भवण' भवनं=प्रासादः१२ 'विमाणा'विमानं=प्रतीत १३, 'तुरंग' तुरङ्गः=अश्वः १४, 'तोरण' तोरणं=बहिर्द्वारं १५, गोपुरं=नगरद्वारं १६, मणिः=चन्द्रकान्तादिकः १७, 'रयण' रत्नं=कर्केतनादिकं १८, 'नंदियावत्त' नन्द्यावर्त्तः = नवकोणस्वस्तीकविशेषः १९, 'मुसल' मुसलं=प्रसिद्धं २०, 'लांगलं' लाङ्गलं-हलं २१, 'सुरइयवरकप्परुक्ख' सुरचितवरकल्पवृक्षः=सुरचितः=सुष्ठु कृतो यो वरः=श्रेष्ठः कल्पवृक्षः अथवा सुरतिदः=सुखप्रदः कल्पवृक्षः २२, 'सिगवइ' मृगपतिः=सिंहः २३, 'भद्दासण' भद्रासनं=सिंहासनं २४, 'सुरुइ' सुरुचिः=आभूषणविशेषः२५, 'थूभ' स्तूपः=स्तम्भविशेषः २६, 'वरमउड' वरमुकुटं=श्रेष्ठमुकुटं २७, 'सरिय' मुक्तावली देशी शब्दोऽयं २८, 'कुंडल' कुण्डलं=कर्णाभरणं २९, 'कुंजर' कुञ्जरः=हस्ती ३०, 'वरवसभ' वरवृषभः३१, 'दीव' द्वीपः३२, 'मंदर' मन्दरः=मन्दराचलः३३, 'गरुल' गरुडः=प्रसिद्धः३४, 'ज्झय' ध्वजः=प्रतीतः३५, 'इंदकेऊ' इन्द्रकेतुः= इन्द्रध्वजः३६, 'दप्पण' दर्पणः=प्रसिद्धः ३७ 'अट्ठावय' अष्टापदं=द्युतफलकं ३८, 'चाव' चापः=धनुः३९, वाणः=प्रतीतः४०, 'नक्खत्त' नक्षत्रं ४१, 'मेह' मेघः=प्रसिद्धः ४२, 'मेहल' मेखला=काञ्ची ४३, वीणा=प्रतीता ४४, 'जुग' युगं=वृषभस्कन्धे स्थाप्यमानःशकटाङ्गविशेषः, 'जुहाडा' इति भाषा

स्वस्तिक, पताका, यव मत्स्य, कूर्म, विशिष्ट रथ, योनि, भवन, विमान तुरंग, तोरण,गोपुर, चन्द्रकान्तादिकमणि,कर्केतनादिरत्न,नवकोणवाले स्वस्तिक, मुसल, लांगल, सुरचित-सुन्दर श्रेष्ठकल्पवृक्ष , सिंह, भद्रासन सिंहासन, सुरुचि इसनामका एक आभूषण विशेष, स्तूप,-स्तंभविशेष, श्रेष्ठमुकुट, मुक्तावली, कुंडल, कुंजर हाथी, सुन्दरबैल, द्वीप, मंदराचल, गरूड, ध्वजा, इन्द्रध्वजा, दर्पण, अष्टापद-द्यूतफलक, चाप-धनुष, बाण, नक्षत्र, मेघ, मेखला-कांची, बीणा, युग-गाड़ी का जुंआ-जो बैलों के

સ્વસ્તિક, પતાકા, યવ, મત્સ્ય, કૂર્મ, વિશિષ્ટ રથ, યોની, ભવન, વિમાન, તુરગ તોરણ, ગોપુર, ચન્દ્રકાન્ત આદિ મણિ- કર્કેતનાદિ રત્ન, નવકોણ વાળા સ્વસ્તિક મુસલ, લાંગલ, સુરચિત સુંદર શ્રેષ્ઠ કલ્પવૃક્ષ, સિંહ, ભદ્રાસન-સિંહાસન, સુરૂચિ-એક આભૂષણ, સ્તૂપ-સ્તંભ વિશેષ, શ્રેષ્ઠ મુગટ, મુક્તાવલી, કુંડલ કુંજર-હાથી, સુંદર વૃષભ, દ્વીપ, મંદરાચલ, ગરૂડ, ધ્વજા, ઇન્દ્રધ્વજા, દર્પણ, અષ્ટાપદ-ધૂત ફલક, ધનુષ્ય. બાણ, નક્ષત્ર, મેઘ, મેખલા-કંદોરો, વીણા, યુગ-ગાડીની-

प्रसिद्धं ४५, 'छत्त' छत्र=प्रसिद्धं ४६, दाम=माला ४७, 'दामिणि' दामनी=रज्जुः४८, 'कमडलु' कमण्डलु=जलपात्रविशेषः, प्रतीतः४९, कमलं=प्रतीतं-५०, घण्टा=प्रतीता ५१, 'वरपोय' वरपोतः=नौका ५२, 'सूई' सूची=वस्त्र-सीवनसाधनं ५३, 'सागर' सागरः=समुद्रः५४, 'कुमुदागर' कुमुदाकरः=कुमुदवनं ५५, 'मगर' मकरः५६, हारः=प्रतीतः५७, 'गागर' इति स्त्रिय आभरणविशेषः, ५८, 'नेउर' नूपुरं=पदभूषण ५९, 'णग' नगः=पर्वतः६०, 'णगर' नगर=प्रसिद्धं ६१, 'वइर' वज्रं ६२, 'किण्णर' किन्नरः=व्यन्तरदेव विशेषः६३, मयूरः=प्रसिद्धः६४, 'वररायहंस' वरराजहंसः=प्रशस्तराजहंसः६५, सारसः=प्रसिद्धः-पक्षिविशेषः६६, 'चकोर' चकोरः६७, 'चक्कवागमिहुण' चक्रवाकमिथुनं=चक्रवाकयुगलं ६८, चामरं=प्रतीतं ६९, 'खेडग' खेटकं='ढाल' इति भाषा प्रसिद्धं ७०, 'पव्वीसग' इति वाद्यविशेषः देशी शब्दोयं ७१, 'विपंचि' विपञ्ची=सप्ततन्त्रीवीणा ७२, 'वरतालियंट' वरतालवृन्तं=प्रशस्तं-तालव्यजनं ७३, 'सिरियाभिसेय' श्रीकाऽभिषेकः=लक्ष्म्या अभिषेकः७४, 'मेयणि' मेदिनी=पृथ्वी ७५, 'खग्ग' खड्गः७६ 'अंकुस' अङ्कुशः=प्रसिद्धः७७, 'विमलकलस' विमलकलश-उज्ज्वलकलशः-७८, 'भिंगार' भृङ्गारः-पात्रविशेषः 'झारी' इति भाषा प्रसिद्धः७९, 'वद्धमाणग' वर्धमानकः=शरावः८०, चैत्ये-

कंधो पर रक्खा जाता है, छत्त-छत्र, दाममाला, दामनी-रस्सी, कमंडलु कमल, घंटा, नौका, सुई, समुद्र, कुमुदवन, मकर, हार, गागर,-स्त्रियोंका एक प्रकार का आभूषण, नूपुर-पदभूषण, पर्वत, नगर, वज्र, किन्नर जातिके व्यन्तरदेव, मयूर, प्रशस्त राजहंस, सारसपक्षी, चकोर, चक्रवाकका जोड़ा, चामर, खेटक-ढाल, पव्वीसग-इस नामका एक वाद्यविशेष, विपञ्ची-सात तार वाली वीणा, सुन्दरताडवृक्ष का पंखा, लक्ष्मी का अभिषेक, पृथिवी, खड्ग-तलवार, अंकुश, उज्ज्वलकलशभृंगार, वर्द्धमा-नक-शराव, इन सब के चिन्हों को कि जो प्रशस्त चक्रवर्तित्व के सूचक

ધૂંસરી, છત્ર, દામમાલા, દામની-રસ્સી, કમંડળ, કમળ, ઘંટ, નૌકા, સોય, સમુદ્ર, કુમુદવન, મગર, હાર, ગાગર-સ્ત્રીઓનું એક પ્રકારનું આભૂષણ, નૂપુર-ઝાંઝર, પર્વત, નગર, વજ્ર, કિન્નર જાતીના વ્યંતર દેવ, મયૂર,, પ્રશસ્ત રાજહંસ, સારસપક્ષી, ચકોર, ચક્રવાકનું જોડુ, ચામર, ઢાલ, પવ્વીસગ-એક વાદ્યવિશેષ, વિપંચી-સાત તાર વાળી વીણા, સુંદર તાડવૃક્ષનો પંખો, લક્ષ્મીનો અભિષેક, પૃથિવી, તલવાર, અંકુશ, ઉજ્જવળ કળશ, ભૃંગાર, વર્દ્ધમાનક-શરાબ, એ બધાં ચિન્હો કે જે પ્રશસ્ત ચક્રવર્તિત્વના સૂચક અને શ્રેષ્ઠ હોય છે તથા જે

तानि, 'पसत्थ' प्रशस्तानि=चक्रवर्तित्वसूचकानि उत्तमानि=उत्कृष्टानि 'विभत्त' विभक्तानि=स्पष्टानि यानि 'वरपुरिसलक्खण' वरपुरुषलक्षणानि—वरपुरुषाणां-महापुरुषाणां लक्षणानि=हस्तरेखादिरूपाणि महत्त्वसूचकानि तानि धारयन्ति ये ते तथा सूर्यचन्द्रशङ्खचक्रादिरूपविशिष्टचक्रवर्तिलक्षणवन्तः तेऽपि कामभोगैरवितृप्ता एव मरणधर्मं प्राप्नुवन्तीति सम्बन्धः ॥ सू० ४ ॥

पुनस्ते चक्रवर्तिनः कीदृशाः? इत्याह—'बत्तीस' इत्यादि—

मूलम्—बत्तीस—रायवर—सहस्साणुजायमग्गा चउसट्ठिसहस्स पवरजुवतीणयणकंता रत्ताभा पउमपम्हकोरंटगदामचंपगसुतवियवरकणक—निघसवण्णा सुजाय सव्वंगसुदरंगा महग्घवरपट्टणुग्गयविचित्त-रागएणी-पएणी-निम्मिय-दुगुल्ल-वरचीणपट्टकोसेज्ज--सोणीसुत्तकविभूसियंगा-वरसुरभिगंध-वरचुण्णवासवरकुसुमभरिय-सिरियाकप्पियछेया-यरियसुकयरइयमालकडगंगयतुडियवर—भूसणपिणद्धदेहा एगावलिकंठसुरइयवच्छा पालंब पलंबमाणसुकयपडउत्तरिज्जामुद्दिया पिंगलंगुलिया उज्जल नेवत्थरइयचिल्लगविरायमाणा तेएण दिवाकरोव्वदित्ता सारयनवत्थणिय—महुर—गंभीर—निद्धघोसा उप्पण्ण समत्तरयणचक्करयणपहाणा नवनिहिवइणोसमिद्धकोसा चा-

---

एवं उत्कृष्ट होते हैं तथा जो रेखारूप में स्पष्ट झलकते थे—और जो महापुरुषों के हस्त आदिकों में रेखादि रूप से पाये जाते हैं इन सब को धारण करने वाले होते हैं। ऐसे महाभाग्य शाली चक्रवर्ती भी काम-भोगों से अतृप्त होकर ही मृत्यु को प्राप्त करते हैं। इस प्रकार का संबंध इस सूत्र की व्याख्या करते समय लगा लेना चाहिये ॥ सू०४ ॥

મહાપુરુષોના હાથ આદિમાં રેખાઓ રૂપે જોવા મળે છે, તે બધાં ચિહ્નોને ધારણ કરનારા હોય છે. એવા મહાભાગ્યશાળી ચક્રવર્તી રાજાઓ પણ કામ-ભોગોથી અતૃપ્ત રહીને જ મૃત્યુ પામે છે એ પ્રકારનો સંબંધ આ સૂત્રની વ્યાખ્યા કરતી વખતે સમજી લેવાનો છે. ॥ સૂ૦ ૪ ॥

उरंताचाउराहिं सेणाहिं समणुजाइज्जमाणमग्गा तुरंगवई गयवई रहवई नरवई विउलकुला वीसुयजसा सारयससिसकलसोम्मवयणा, सूरा, तिलोक्क निग्गयपभावा लद्धसद्दा समत्तभरहाहिवा नरिंदा ससेलवणकाणणं च हिमवंतसागरं तं धीरा भोत्तूणं भरहवासं जियसत्तपवररायसीहापुव्वकडतवप्पभावा निविट्ठसंचियसुहा अणेगवाससयमाउव्वंतो भज्जाहि य जयवयप्पहाणाहिं लालियंता अतुल सद्दफरिसरसरूवगंधे य अणुभवित्ता तेवि उवणमंति मरणधम्मं अवितित्ता कामाणं ॥ सू० ५ ॥

टीका:—'बत्तीसरायवरसहस्साणुजायमग्गा' द्वात्रिंशद् राजवरसहस्रानुयातमार्गाः=द्वात्रिंशद् यानि राजवराणां=राजप्रमुखानां सहस्राणि तैरनुयातः=अनुगतो मार्गो येषां ते तथा अनुगामि द्वात्रिंशत्सहस्रराजप्रमुखानामधिपतय इत्यर्थः, 'चउसट्ठिसहस्सपवरजुवतीणयणकंता' चतुः—षष्टिसहस्रप्रवरयुवतिनयनकान्ताः=चतुःषष्ठिसहस्रप्रौढतरुणीनां नयनकान्ताः=नयनप्रियाः स्वामीन इत्यर्थः 'रत्ताभा' रक्ताभाः=रक्ता=विमलशोणीतबाहुल्याद् रक्तवर्णा आभा=

फिर वे चक्रवर्ती कैसे होते हैं सो कहते हैं-'बत्तीसरायवर०' इत्यादि०।

टीकार्थः— (बत्तीसरायवरसहस्साणुजायमग्गा) जिनके पीछे २ बतीस हजार मुकुटबद्ध राजा चला करते हैं, अर्थात्-जो अपने अनुगामी ३२ हजार नरेशों के अधिपति होते हैं। (चउसट्ठिसहस्सपवर जुवतीनयणकंता) तथा ६४ चोसठ हजार सर्वश्रेष्ठ युवती स्त्रियों के नयनों को जो आनंदप्रद होते हैं अर्थात् उनके स्वामी होते हैं, तथा (रत्ताभा) जिनके

તે ચક્રવર્તિઓ કેવા હોય છે તેનું સૂત્રકાર વધુ વર્ણન કરે છે-"बत्तीसरायवर" ઈત્યાદી

ટીકાર્થ-"बत्तीसरायवरसहस्साणुजायमग्गा" જેમની પાછળ બત્રીસ હજાર મુગટ-ધારી રાજાઓ ચાલે છે-એટલે કે જેવો તેમના અનુગામી બત્રીસ હજાર નૃપતિયોના અધિપતિ હોય છે "चउसट्ठिसहस्सपवरजुवतीनयणकंता" ચોસઠ હજાર સર્વશ્રેષ્ઠ યુવતીઓના નયનોને જે આનંદદાયી હોય છે, એટલે કે તેમના સ્વામી હોય છે, તથા "रत्ताभा" જેમના શરીરની આભા વિમળ રક્તની

शरीरप्रभा येषां ते तथा विशिष्टलावण्यसंपन्ना इत्यर्थः, 'पउमपम्हकोरंटगदाम चंपगसुतवियवरकणगनिघसवण्णा' पद्मपक्ष्मकोरण्टकदामचम्पकसुतप्त-वरकनक-निकषवर्णाः, तत्र पद्मपक्ष्म = कमलकेसरः कोरण्टकदाम=कोरण्टकपुष्पमाला चम्पकः = पुष्पविशेषः तथा सुतप्तवरकनकस्य=सुतप्तसुवर्णस्य यो निकषः= रेखा चेत्येतेषां वर्ण इव वर्णो येषां ते तथा पद्मकेसरसुवर्णादिवद् भास्वरकान्तय इत्यर्थः, 'सुजायसव्वंगसुंदरंगा' सुजातसर्वाङ्गसुन्दराङ्गाः=सुजातानि= शोभनं पुष्टानि सर्वाङ्गेण=सर्वप्रकारेण सुन्दराण्यङ्गानि=अवयवा येषां ते तथा सुपुष्टशोभनाङ्गोपाङ्गसम्पन्नाः तथा 'महग्घवरपट्टणुग्गयविचित्तरागएणीपएणी-निम्मिय दुगुल्लवरचीणपट्टकोसेज्जसोणीसुत्तकविभूसियंगा' महार्घवरपत्तनोद्गत-विचित्ररागैणीप्रैणीनिर्मितदुकूलवरचीनपट्टकौशेयश्रोणीसूत्रकविभूषिताङ्गाः = तत्र महार्घाणि = बहुमूल्यानि वरपत्तनोद्गतानि=प्रधाननगरसमुत्पन्नानि तथा विचित्र-रागाणि=अनेकविविधरङ्गरञ्जितानि एणी प्रैणी निर्मितानि=एणी = मृगी प्रैणी

शरीर की आभा विमल शोणित की बहुलता से रक्तवर्ण की सी होती हैं, अर्थात् जो विशिष्ट लावण्य से युक्त होता हैं। तथा (पउमपम्हकोरंट गदामचंपगसुतवियवरकणकनिघसवण्णा) पद्मपक्ष्म-कमलकेशर, कोर-ण्टकदाम-कोरंटपुष्पों की माला, चम्पक-पुष्पविशेष, एवं तापे हुए सुवर्ण की रेखा इनके वर्ण के समान जिनका वर्ण होता है, अर्थात्-पद्मकेशर तप्तसुवर्ण आदि के समान भास्वर कान्ति से जो युक्त होते हैं, तथा (सुजायसव्वंग सुंदरंगा) जिनके शारीरिक अवयव अच्छीतरह से पुष्ट एवं सब प्रकार से सुन्दर होते हैं (महग्घवरपट्टग्गयविचित्तराग एणी पएणी निम्मियदुगुल्ल वरचीणपट्टकोसेज्ज सोणीसुत्तगविभूसियंगा) तथा जिनका शरीर बहुमूल्य वस्त्रों से कि जो वस्त्र प्रधान नगरों के जो बने हुए होते हैं, विविध रंगों से रंगे रहते हैं, एणी प्रैणी-मृगी और

અધિકતાને લીધે રતાશ પડતી હોય છે, તથાં જે વિશિષ્ટ લાવણ્યથી યુક્ત હોય છે, તથા "पउम-पम्हकोरंट-गदाम-चंपग-सुतवियवर-कणक-निघसव्वण्णा" પદ્મપક્ષ્મ-કમળ કેશર, કોરંટકદામ-કોરંટ પુષ્પોની માલા, ચંપાના ફૂલ, અને તપાવેલ સુવર્ણની રેખા જેવો જેમનો વર્ણ હોય છે. એટલે કે જે પદ્મકેશર તપ્ત સુવર્ણ આદિનાં જેવી સુંદર કાંતિવાળા હોય છે, તથા सुजायसव्वंगसुंद-रंगा" જેમનાં શરીરનાં અંગો સારી રીતે પુષ્ટ અને દરેક રીતે સુંદર હોય છે, "महग्घवर-पट्टणुग्गय-विचित्तराग-एणी-पएणी दुगुल्लवरचीण-पट्टकोसेज्ज सोणीसु-त्तगविभूसियंगा" તથા જેમનાં શરીર બહુ કીમતિ વસ્ત્રોથી સુશોભિત રહે છે. જે મુખ્ય શહેરોમાં બનેલા હોય છે, વિવિધ રંગોથી રંગેલાં હોય છે,

त्र= मृगीविशेष एव तद्रोमनिर्मितानि यानि वस्त्राणि तानि, तथा दुकूलानि= दुकूलो वृक्षविशेषः, तन्निर्मितानि वस्त्राणि, वल्कलमुलूखले जलेन सह कुट्टयित्वा चूर्णीकृत्य सूत्राणि निर्माय ऊतानि दुकूलानीत्युच्यन्ते तानि । तथा वरचीनानि= चीनदेशोत्पन्नानि 'पट्ट' पट्ट सूत्रमयानि-मलयदेशविशेषसमुत्पन्नानि, कौशेयानि= कृमिकोषसूत्रनीर्मितानि 'रेशमी' इति प्रसिद्धानि वस्त्राणि तथा श्रोणीसूत्रकं= कटिसूत्रकं 'कणदोरा' इति प्रसिद्धं चेत्यैतैः विभूषितानि=अलङ्कृतानि अङ्गानि येषां ते तथा बहुमूल्यसुकोमलाऽतिसूक्ष्मतमरङ्गविरङ्गविविधवस्त्रकटिसूत्र-सुशोभितशरीरा इत्यर्थः, 'वरसुरभिगंधवरचुण्णवासवरकुसुमभरियसिरया' वरसुरभिगन्धवरचूर्णवासवरकुसुमभृतशिरसः=वरसुरभिगन्धः=उत्तम सुगन्धयुक्तग-न्धद्रव्यं, तथा वरचूर्णवासाः=वराः=श्रेष्ठाः=चूर्णवासाः=चूर्णरूपाणि गन्धद्रव्याणि, वरकुसुमानि च-चम्पक मालती प्रभृतीनि ते भृतानि=व्याप्तानि शिरांसि=मस्तकानी

मृगीविशेष के रोमों से निर्मित होते हैं उनसे सुशोभित रहते हैं। ये वस्त्र धोती के स्थानापन्न होते हैं। तथा जिस दुकूल—दुपट्टे—को ये ओढते हैं वह रेशमी होता है, एवं चीन देशका बना हुआ होता है। दुकूलवृक्ष के वल्कल को ओखली में जल के साथ पहिले मूसल से खूब कूटा जाता है, बाद में जब वह चूर्णरूप में हो जाता है तब उसके सूत्र तैयार किये जाते हैं और फिर उन्हें अच्छी तरह बुनकर यह दुकूल बनाया जाता है। ऐसे दुकूलों से एवं कटिसूत्र से जिनका शरीर सदा अलंकृत रहा करता है, अर्थात् जो बहुमूल्य, सुकोमल, अतिसूक्ष्मतम-एवं रंगविरंगे अनेकविधवस्त्रों से, तथा कटिसूत्र से विभूषित शरीर रहते हैं (वरसुरभिगंधवरचुणवासवरकुसुमभरियसिरया) तथा उत्तम सुगंध युक्त गंधद्रव्यों से, श्रेष्ठचूर्ण वासों से चंपक, मालती आदि

એણી પ્રૈણી-મૃગલી અને વિશિષ્ટ પ્રકારની મૃગલીની રૂંવાટીમાંથી બનાવેલાં હોય છે. તે વસ્ત્રો ધોતીની જગ્યાએ પહેરાય છે. તથા તેમના દુપટ્ટા રેશમી હોય છે, અને તે ચીનમાં બનેલા હોય છે. દુકૂલ-વૃક્ષની છાલને પાણી નાખીને પહેલાં ખાંડણીયામાં સાંબેલાથી ખૂબ ખાંડવામાં આવે છે, જ્યારે તેનો ભૂકો થઈ જાય ત્યારે તેમાંથી તાર કાઢવામા આવે છે, પછી તેને સારી રીતે વણીને તે દુકૂલ-દુપટ્ટા બનાવવામાં આવે છે. એવા દુપટ્ટા અને કટિસૂત્રથી જેમનાં શરીર સદા આભૂષિત રહે છે, એટલે કે જેમનાં શરીર બહુ મુલ્ય, સુકોમળ, અતિશય બારીક અને રંગબેરંગી અનેક પ્રકારનાં વસ્ત્રોથી, તથા કટિસૂત્રથી વિભૂષિત રહે છે, "વરસુરભિ-ગધવર-ચુણવાસવર-કુસુમ-ભરિયસિરિયા" તથા ઉત્તમ સુગંધવાળા દ્રવ્યોથી, શ્રેષ્ઠચૂર્ણની સુગંધથી, ચંપક, માલતિ આદિ

येषां ते तथा परमसुगन्धिद्रव्यचन्दनचूर्णचम्पकादिकुसुमसम्भारसम्भृतमस्तका इत्यर्थः, 'कप्पियछेयायरियसुकयरइयमालकडगंगयतुडियवरभूसणपिणद्धदेहा' —कल्पितछेकाचार्यसुकृतरतिदमालाकटकाङ्गदत्रुटितवरभूषणपिनद्ध देहाः = तत्र कल्पितानि = परिधृतानि छेकाचार्येण = शिल्पिवरेण सुकृतानि = सुष्ठु रचितानि रतिदानि = प्रेमजनकानि यानि माला कटकाङ्गदत्रुटितवरभूषणानि= मालाः=सुवर्णमालाःकटकाः=कङ्कणानि 'कडा' इति प्रसिद्धानि, अङ्गदानि= केयूराणि त्रुटिताः=बाहुरक्षिकाः, तथा वरभूषणानि=मुकुटकुण्डलादिनि च तैः पिनद्धः=व्याप्तो देहो येषां ते तथा मुकुटकेयूरकङ्कणादिविविधभूषणभूपितदेहा इत्यर्थः, 'एकावलिकंठसुरइयवच्छपालंबपलंबमाणसुकयपडउत्तरिज्जमुद्दियापिंगलंगुलिया' तत्र—'एकावलिकंठसुरइयवच्छा' एकावलीकण्ठसुरचितवक्षस्काः= एकावली=विविधमणिग्रथितहारः कण्ठे=कण्ठप्रदेशे सुरचिता=परिधृता वक्षसि=वक्षःस्थले येषां ते तथा 'पालंबपलंबमाणसुकयपडउत्तरिज्जा' प्रालम्बप्रलम्बमान—

के पुष्पों से जिनका मस्तक सदा शोभित रहता है, अर्थात्-परमसुगंधित द्रव्यों से चंदन के चूर्ण से चम्पकादि कुसुमों के संभार से जिनका मस्तक निरन्तर भरा रहता है। तथा (कप्पिय छेयायरिय-सुकय-रइय माल-कडंग गय-तुडिय-वर भूसणपिणद्ध देहा) जिनकी देह अच्छी तरह से पहिरे गये आभूषणों से, सुवर्ण की मालाओं से, कटकों कड़ों से, अंगदों-(भुजबंधों) से, त्रुटितों से बाहुरक्षिकों से, एवं मुकुट कुंडल आदि उत्तम अलंकारों से, कि जो कारीगरों के द्वारा बहुत ही अच्छी तरह बनाये हुए होते हैं तथा प्रेमोत्पादक होते हैं इनसे इनकी देह व्याप्त रहती है (एगावलिकंठ सुरइय वच्छपालंबपलंबमाणसुकयपड उत्तरिज्ज-

---

પુષ્પોથી જેમનાં મસ્તક સદા સુશોભિત રહે છે, એટલે કે અતિશય સુગંધ-યુક્ત દ્રવ્યોથી, ચન્દનના ચૂર્ણથી, ચંપક આદિ પુષ્પોના સંભારથી જેમનાં મસ્તક સદા યુક્ત રહે છે, તથા "कप्पिय छेयायरिय,-सुकय,-रइय,-माल, कडंग-गय, तुडिय, वर भूसणपिणद्धदेहा" જેમનાં શરીર સારી રીતે પહેરેલ આભૂષણોથી, સુવર્ણની માળાઓથી. કડાંઓથી, "અંગદો" 'ભૂજબંધો' થી, તૃટિતોથી-બાહુરક્ષિકોથી, અને મુગટ કુંડળ આદિ ઉત્તમ અલંકારોથી આભૂષિત રહે છે. જે અલંકારો સારા કારીગરોએ સારી રીતે બનાવેલાં હોય છે તથા પ્રેમોત્પાદક હોય છે. "एगावलि-कंठ-सुरइवच्छ-पालंब-पलंबमाण-सुकय पडउत्तरिज्ज-मुद्दिया-पिंगलंगुलिया" તથા વિવિધ મણીઓ જડેલો હાર જેમની

सुकृतपटोत्तरीयाः=प्रालम्बवत्=आनाभिलम्बितकण्ठिकावत् प्रलम्बमानः, तथा सुकृतः=शोभनरचनाविशेषयुक्तः पटः=शाटकः उत्तरीयम्=उत्तरीयवस्त्रं च येषां ते तथा रचनाविशेषेण परिधृतशाटकोत्तरीया इत्यर्थः, 'मुद्दियापिंगलंगुलिया' मुद्रिकापिङ्गलाङ्गुलिका=मुद्रिकाभिः=अङ्गुलीयकैः पिङ्गलाः=स्वर्णादिमयत्वात् पीत-कान्तयोऽङ्गुलयो येषां ते तथा 'उज्जलनेवत्थरइयचिल्लगविरायमाणा' उज्ज्वल-नेपथ्यरतिदचिल्लगविराजमानाः = उज्ज्वलं=निर्मलं नेपथ्यं=वेषः 'पोशाक' इति प्रसिद्धः रतिदं=आनन्दजनकं 'चिल्लगं' इति वस्त्र चाकचिक्यं, तेन विराज-मानाः=शोभमानाः, तथा 'तेएण दिवाकरोव्वदित्ता' तेजसा दिवाकरइव दीप्ताः= प्रतापेन सूर्यसदृशाः 'सारयनवत्थणियमहुरगंभीरनिद्धघोसा' शारदनवस्तनित-मधुरगम्भीरस्निग्धघोषाः=शारदं=शरत्कालिकं यन्नवस्तनितं=नूतनमेघध्वनिः तद्व-न्मधुरो गम्भीरः स्निग्धश्च=हृदयाह्लादकरो घोषः=शब्दो येषां ते तथा 'उप्पण्ण समत्तरयणचक्करयणपहाणा' उत्पन्नसमस्तरत्नचक्ररत्नप्रधानाः=उत्पन्नानि=प्राप्तानि

मुद्दियापिंगलंगुलिया) तथा कंठ में विविधमणियों से ग्रथित पहिरा हुआ हार जिनके वक्षस्थल पर लटकता रहता है, तथा नाभिप्रदेश पर्यंत कंठी के समान लटकते हुए उत्तरीयवस्त्रको एवं शोभन रचना विशेष से युक्त करके धोती को जो धारण करते है। स्वर्ण आदिकी बनी हुई अंगूठियों से युक्त होने के कारण जिनकी हाथों की अंगुलियां सदा पीली कांतिवाली बनीं रहती हैं (उज्जलनेवत्थ रइयचिल्लगविरायमाणा) उज्वल, आनंदजनक एवं चिलकती हुई पोशाक से जो सदा विराजमान रहते हैं (तेएण-दिवाकरोव्व दित्ता सारय-नवत्थणिय-महुर-गंभीर— निद्धघोसा) तथा जो अपने तेज से सूर्य के जैसे प्रतापशाली होते हैं। तथा जिनका शब्द शरत्काल के मेघ की नवीन ध्वनि के जैसा गंभीर और हृदयाह्लादक होता है (उप्पण्णसमत्तरयणचक्करयणपहाणा) तथा

ડોકમાં પહેરેલી હોય છે અને વક્ષસ્થળ પર લટકતો હોય છે તથા નાભિ-પ્રદેશ સુધી કંઠીની જેમ લટકતાં ઉત્તરીય વસ્ત્રોને તથા સુંદર વિશિષ્ટ રચનાથી યુક્ત ધોતીને જેઓ ધારણ કરે છે, સુવર્ણ આદિમાંથી બનાવેલી વીંટીઓથી યુક્ત હોવાને લીધે જેમનાં હાથની આંગળીઓ સદા પીળા તેજથી યુક્ત રહે છે, "उज्जलनेवत्थरइयचिल्लगविरायमाणा" ઉજ્જવળ, આનંદદાયક અને ચળકતા પોષાકથી જેઓ સદા શોભી રહ્યા હોય છે, "तेएण-दिवाकरोव्वदित्ता सारय-नवत्थणिय-महुर-गंभीर-निद्धघोसा" તથા જે પોતાના તેજથી સૂર્ય સમાન પ્રતાપશાળી હોય છે, તથા જેમના શબ્દો શરદઋતુના મેઘના નવીન ધ્વનિના જેવા ગંભીર અને હૃદયમાં આનંદ ઉત્પન્ન કરનાર હોય છે, "उप्पण्ण

समस्तरत्नानि चक्ररत्नानि च येस्ते तथा, अत एव प्रधानाः=प्रधानभूताः चतुर्दश रत्नानि यथा "सेणावइ १ गाहावइ २ पुरोहिय ३ तुरग ४ वड्ढइ ५ गय ६ इत्थी ७। चक्कं ८ छत्तं ९ चम्मं १०, मणि ११ कागणि १२ खग्ग १३ दंडो य १४ ॥"
छाया-सेनापति १ गृहपति २ पुरोहित ३ तुरग ४ वर्धकि ५ गज ६ स्त्रिय ७।
चक्रं ८ छत्रं ९ चर्म १० मणि ११ काकिणी १२ खड्गः १३ दंडश्च १४ ॥"
इति चतुर्दशरत्नानि। तथा 'नवनिहिपइणो' नवनिधिपतयः=नवनिधिनां स्वामिनः। नवनिधयो यथा—

" नेसप्पे १ पंडुय २ पिंगले य ३ सव्वरयणे ४ तहामहापउमे ५।
कालेय ६ महाकाले ७ माणवगमहानिहि ८ संखे ९ ॥ १ ॥ " इति,

छाया-नैसर्पः१ पण्डुकः२ पिङ्गलश्च ३ सर्वरत्नं ४ तथा महापद्मम् ५।
कालश्च ६ महाकालः७ माणवकमहानिधिः८ शङ्खः९ ॥ १ ॥ "

'समिद्धकोसा' समृद्धकोशाः=परिपूर्णभाण्डागाराः, 'चाउरंता' चतुरन्ताः=त्रिष्वन्तेषु समुद्रः, चतुर्थेऽन्ते च हिमवान् पर्वतः, एवं चत्वारोऽन्ताः=भूविभागाः

जो प्राप्त समस्त रत्नों से एवं चक्ररत्न से पुरुषों में प्रधानभूत माने जाते हैं चक्रवर्ती जिन १४ चौदह रत्नों के अधिपति माने जाते हैं-वे रत्न ये हैं—(१) सेनापति, (२) गाथापति, (३) पुरोहित (४) तुरंग (५) वर्धकि, (६) गज, (७) स्त्री, (८) चक्र, (९) छत्र, (१०) चर्म, (११) मणि, (१२) काकिणी, (१३) खड्ग (१४) दंड। (नवनिहिपइणो) तथा नवनिधियों के जो भोक्ता होते हैं, नवनिधियां इस प्रकार हैं—(१) नैसर्प, (२) पंडुक, (३) पिंगल, (४)सर्वरत्न, (५) महापद्म, (६) काल, (७) महाकाल (८) माणवक और (९) शंख। (समिद्ध कोसा) भाण्डागार सदा हरएक वस्तु से भरपुर बना रहता है, तथा (चाउरंता) जो हिमवत् पर्वत

समत्तरयणचक्करयणपहाणा" તથા જે પ્રાપ્ત થયેલાં સમસ્ત રત્નોથી અને ચક્રરત્નથી પુરુષોમાં શ્રેષ્ઠ ગણાય છે. ચક્રવર્તિ જે ૧૪ 'ચૌદ' રત્નોના અધિપતિ મનાય છે, તે ચૌદ રત્નો નીચે પ્રમાણે છે—(૧) સેનાપતિ, (૨) ગાથાપતિ, (૩) પુરોહિત, (૪) તુરંગ, (૫) વર્ધકિ, (૬) ગજ, (૭) સ્ત્રી, (૮) ચક્ર, (૯) છત્ર, (૧૦) ચર્મ, (૧૧) મણિ, (૧૨) કાકિણી, (૧૩) ખડ્ગ અને (૧૪) દંડ. તથા તે ચક્રવર્તિ રાજાઓ નવનિધિયોને ભોગવે છે તે નવનિધિ નીચે પ્રમાણે છે—(૧) નૈસર્પ, (૨) પંડુક (૩) પિંગલ, (૪) સર્વરત્ન, ૫ મહાપદ્મ, (૬) કાલ, (૭) મહાકાલ, (૮) માણવક અને (૯) શંખ. " समिद्ध-कोसा" તેમના ભંડાર સદા દરેક વસ્તુથી ભરપૂર રહે છે, " चाउरंता "

येषां ते तथा हिमवत्समुद्रपर्यन्तपृथिवीशासकाः 'चाउरार्हि सेणार्हि समणुजाइज्जमाणमग्गा' चतसृभिः सेनाभिः समनुयायमानमार्गाः=हस्त्यश्वरथपदातिरूपचतुरङ्गसेनाभिः समनुयायमानः=अनुगम्यमानो मार्गो येषां ते तथा तदेव दर्शयति 'तुरंगवई-गयवई-रहवई-नरवई' तत्र 'तुरंगवई' तुरङ्गपतयः 'गयवई' गजपतयः 'रहवई' रथपतयः 'नरवई' नरपतयः=पदाति सेनापतयः 'विउलकुला' विपुलकुलाः = उच्चकुला, विश्रुतयशसः=विख्यातकीर्तय 'सारयससिसकलसोम्मवयणा' शारदशशिसकलसौम्यवदनाः=शारदाः=शरत्कालिको शशी=चन्द्रः कीदृशः सकलः=सम्पूर्णकलायुक्तः शरत्पूर्णिमाचन्द्र इत्यर्थः, तद्वत् सौम्यं=सुन्दरं, वदनं=मुखं येषां ते तथा। 'सूरा' शूराः=शत्रुमर्दकाः 'तिलोकनिग्गयपभावा' त्रैलोक्यनिर्गतप्रभावाः=त्रिलोकव्यापिप्रभावसम्पन्नाः, 'लद्धसद्दा' लब्धशब्दाः=

पर्यंत तक की भूमि के शासक होते हैं, (चाउरार्हि सेणार्हि समणुजाइज्जमाणमग्गा) हस्ती, अश्व, रथ एवं पैदल सैन्य, इन चार अंगों वाली सेना से जो सदा अनुगम्यमान मार्गवाले होते हैं, अर्थात् वे (तुरंगवई-गयवई रहवई नरवई) अश्वपति, गजपति, रथपति, और नरपति होते हैं। (विउलकुला) तथा उनका कुल बहुत ऊँचा होता हैं, (वीसुयजसा) कीर्ति भी उनकी चारों दिशाओं में व्याप्त होती है, तथा (सारयससिसकलसोम्मवयणा) उनकी मुख शरत्काल की पूर्णिमा के चन्द्रमा जैसा सौम्य होता है तथा वे (सूरा) अपने शत्रुओं के मर्दक होने से शूरवीर होते हैं, तथा (तिलोकनिग्गयपभावा) उनका प्रभाव तीनलोक में व्याप्त रहता है, इसलिये वे (लद्धसद्दा) उनकी प्रसिद्धि तीनों लोकों

તેઓનું હિમાલય પર્યંત સુધીના પ્રદેશ પર શાસન ચાલે છે "चाउराहि-सेणाहिं समणुजाइज्जमाणमग्गा" તથા તે ચક્રવર્તિ રાજાઓ ગજદળ, અશ્વદળ, રથદળ, અને પાયદળ, એ ચતુરંગી સેના સહિત માર્ગપર કૂચ કરનારા હોય છે, એટલે કે "तुरंगवई गयवई रहवई नरवई" તેઓ અશ્વપતિ, ગજપતિ, રથપતિ અને નરપતિ હોય છે. "विउलकुला" તથા તેઓ ઊંચાં કુળના હોય છે. "विसुयजसा" તેમની કીર્તિ ચારે દિશાઓમાં ફેલાયેલી હોય છે. તથા "सारयससिसकलसोम्मवयणा" તેમનાં મુખ શરદ ઋતુની પૂર્ણિમાના ચન્દ્ર સમાન સૌમ્ય હોય છે, તથા તેઓ "सूरा" પોતાના શત્રુઓનું મર્દન કરનાર હોવાથી શૂરવીર હોય છે, "तिलोकनिग्गयपभावा" તેમનો પ્રભાવ ત્રણે લોકમા વ્યાપેલો હોય છે. તેથી "लद्धसद्दा" તેઓ ત્રણે

त्रिजगत्प्रसिद्धाः, 'समत्तभरहाहि वा' समस्तभरताधिपाः=दक्षिणोत्तरभरताधिपतयः 'नरिंदा' नरेन्द्राः, धीराः=संग्रामादिष्वप्रतिहतशक्तिसम्पन्नाः. 'ससेलवणकाणणं' सशैलवनकाननं=शैलैः=पर्वतैःवनैः=नगरदूरस्थैः, काननैः=नगरसमीपस्थैः सह=सहितं यत्तत्तथाविधं 'हिमवंतसागरंतं' हिमवत्सागरान्तं=हिमवान्=क्षुल्लहिमवत्पर्वतः सागरश्च=समुद्रः तदन्तं=तावत्पर्यन्तं 'भरहवासं' भारतवर्षं 'भोत्तूण' भुक्त्वा=उपभुज्य 'जियसत्तू' जितशत्रवः=पराजितसमस्तशत्रवः,'पवररायसीहा' प्रवरराजसिंहाः=प्रवरेषु=महापराक्रमेष्वपि राजसु मध्ये सिंहाः=सिंहसदृशाः, प्रवराश्चते राजसिंहा इति वा विग्रहः= 'पुव्वकडतवप्पभावा' पूर्वकृततपःप्रभावात्= पूर्वजन्मकृततपो माहात्म्यात् 'निव्विट्ठसंचियसुहा' निर्विष्ट सञ्चितसुखाः= उपभुक्तसञ्चितसुखराशयः 'अणेगवाससयमाउव्वंतो' अनेकवर्षशतायुष्मन्तः,

---

में हो जाती है, और वे (समत्तभरहाहि वा) समस्त भरतखंड के अधिपति होते हैं, अर्थात्–५ म्लेच्छखंड और १ आर्यखंड इस प्रकार संपूर्णभरतक्षेत्र के स्वामी होते हैं, (नरिंदा) तथा वे मनुष्यों के इन्द्र माने जाते हैं (धीरा) तथा वे संग्राम आदि में अप्रतिहत शक्ति से संपन्न होते हैं (ससेलवणकाणणं च हिमवंतसागरंतं भोत्तूण भरहवासं जियसत्तू पवररायसीहा) तथा वे पर्वतों, वनों–नगर से दूर रहे हुए जंगलों, एवं काननों–नगर समीपस्थ जंगलों से युक्त तथा क्षुल्लकहिमवान् पर्वत और समुद्रपर्यंत प्रसृत ऐसे भारतवर्ष का उपभोग करके समस्त शत्रुओं को पराजित करने के कारण महापराक्रम शाली राजाओं के बीच में केशरी के समान चमकते हैं, और (पुव्वकडतवप्प भावा निविट्ठ संचियसुहा) पूर्वजन्म में आचरित तप के प्रभाव से वे

લોકમાં પ્રસિદ્ધ હોય છે, અને તેઓ "समत्तभरहाहिवा" સમસ્ત ભરતખંડના અધિપતિ હોય છે, એટલે કે પાંચ મ્લેચ્છ ખંડ અને એક આર્યખંડ, એ રીતે સંપૂર્ણ ભરતક્ષેત્રના અધિપતિ હોય છે "नरिंदा" તથા તેમને મનુષ્યોના ઇન્દ્ર ગણવામાં આવે છે, "धीरा" તેઓ સંગ્રામ આદિમાં અજીત શક્તિ ધરાવનાર હોય છે, "ससेलवणकाणणं च हिमवंतसागरतं भोत्तुणभरहवासं-जियसत्तू पवररायसीहा" તથા તેઓ પર્વતો, વનો–નગરથી દૂર આવેલાં જંગલો, કાનનો–નગરની પાસેનાં જંગલોથી યુક્ત તથા હિમાલય પર્વતથી સમુદ્ર સુધી વિસ્તૃત એવા ભારત વર્ષનો ઉપભોગ કરીને સઘળા શત્રુઓને મહાત કરવાને કારણે મહાપરાક્રમી રાજાઓની વચ્ચે કેશરી "सिंह" સમાન ચમકે છે, અને "पुव्वकडतवप्पभावा निविट्ठ संचियसुहा" પૂર્વજન્મમાં કરેલા તપના પ્રભા-

'जणवयप्पहाणाहिं' जनपदप्रधानाभिः=जनपदेषु=देशेषु प्रधानाभिः=सर्वोत्कृष्टाभिः 'भज्जाहिं' भार्याभिः=स्त्रीभिः 'लालियंता' लाल्यमानाः=क्रीडयमानाः 'अतुलसद्दफरिसरसरूवगंधेय अणुभवित्ता' अतुलशब्दस्पर्शरसरूपगन्धांश्चाऽनुभवन्तः=अनुपमशब्दादि विषयसुखान्यास्वादयन्तः 'ते वि' तेऽपि=तादृशा अपि चक्रवर्तिनः, 'कामाणं अवितित्ता' कामानामवितृप्ताः=कामभोगेषु तृप्तिरहिता एव, 'मरणधम्मं' मरणधर्मं=मृत्युं 'उवणमंति' उपनमन्ति=प्राप्नुवन्ति म्रियन्ते इत्यर्थः ॥ सू० ५ ॥

पुनः के इत्याह— 'भुज्जो' इत्यादि—

मूलम्—भुज्जो वलदेवा वासुदेवा य पवरपुरिसा महाबलपरक्कमा महाधणुवियट्टगा महासत्तसागरा दुद्धरा धणुधरानरवसहा रामकेसवा भायरो सपरिसा समुद्दविजयमाइयदसाराणं पज्जुण्ण–पयिवसंबअनिरुद्धा निसढउम्मुय–सारणगय सुमुहदुम्मुहादीणं जायवाणं अध्धुट्ठाणविकुमारकोडीणं हिययदइया देवीए रोहिणीए देवीए देवईए य आणंदहियभा-

संचित सुख की राशिको भोगते हैं, तथा उनकी (अणेगवाससयमाउव्वंतो) सैकड़ों वर्षों की आयु होती है (जणवयप्पहाणाहिं भज्जाहिं लालियंता) तथा वे समस्त देशों में सर्वोत्कृष्ट ऐसी ६४ चौसठ हजार स्त्रियों के साथ क्रीडा किया करते हैं (अतूलसद्दफरिस रसरूवगंध य अणुभवित्ता) और उनके साथ जो अनुपम शब्द, स्पर्श, रस, रूप, गंध आदि पांचो इन्द्रियों के विषयों से जन्य सुखों का आस्वादन करते रहते हैं ऐसे (ते वि) वे चक्रवर्त्ती आदी भी (कामाणं अवितित्ता मरणधम्मं उवणमंति) कामसुखों से अतृप्त ही बने रहते हैं और अन्त में मरण को प्राप्त हो जाते हैं ॥ सू०५ ॥

વથી પ્રાપ્ત કરેલ સુખની રાશિનો ઉપભોગ કરે છે, તથા "अणेगवाससयमाउव्वंतो" તેમનું આયુષ્ય સેંકડો વર્ષનું હોય છે, તથા "जणवयप्पहाणाहिं–लालियंता" સમસ્ત દેશોમાં અનુપમ એવી ચોસઠ હજાર સ્ત્રીઓ સાથે ક્રીડા કરે છે, અને "अतुलसद्दफरिसरसरूवगंधेयअणुभवित्ता" તેમની સાથે અનુપમ શબ્દ, સ્પર્શ, રસ, રૂપ, ગંધ આદિ પાંચે ઈન્દ્રિયના વિષયોથી જનિત સુખો અનુભવે છે. એવા તે "ते वि" ચક્રવર્તિ આદિ પણ "कामाणं" अवितित्ता मरणधम्मं उवणमंति" કામભોગથી અતૃપ્ત જ રહે છે અને અંતે મરણ પામે છે ॥સૂ.૫॥

वनंदणकरा सोलसरायवरसहस्साणुजायमग्गा सोलसदेवी सहस्सवरणयणहिययदइया णाणामणिकणगरयणमोत्तियपवाल धणधण्णसंचया रिद्धिसमिद्धकोसा हय-गय-रहसहस्ससामी गामागर-णगर-खेड-कब्बड-मडंब-दोणमुह-पट्टण-समसंवाह-सहस्सथिमिय निव्वुयप्पमुइयजणविविहसहस्सनिप्पज्जमाणमेइणी सरसरियतलाग-सेलकाणण-आरामुज्जाणमणाभिराम-परिमंडियस्स दाहिणड्ढ-वेयड्ढ गिरिविभत्तस्स लवणजलपरिगयस्स-छव्विह-कालगुणकमजुत्तस्स अद्धभरहस्स सामिया धीरकित्ति पुरिसा ओहबला अतिबला अनिहया ॥ सू० ६ ॥

टीका:-'भुज्जो' भूयः=पुनःबलदेवा वासुदेवाश्च तेऽपि मरणधर्ममुपनमन्तीति सम्बन्धःकीदृशास्ते इत्याह-'पवरपुरिसा' प्रवरपुरुषाः=प्रधानपुरुषा 'महाबलपरक्कमो' महाबलपराक्रमाः=महाबला महापराक्रमाश्च तत्र बलं=मानसिकशक्तिः पराक्रमः=कायिकशक्तिः। 'महाधणुवियट्टगा' महाधनुर्विवर्त्तकाः-शार्ङ्गादिधनुर्विकर्षकाः,

फिर इस प्रकारके कौन होते हैं ? सो कहते हैं-' भुज्जो बलदेवा ' इत्यादि ० ।

टीकार्थ-(भुज्जो बलदेवा वासुदेवा य) देखो-फिर जो बलदेव और वासुदेव होते हैं वे भी काम से अतृप्त ही मरणधर्म को प्राप्त होते हैं; इस प्रकार से इस सूत्र की व्याख्या में संबंध लगा लेना चाहीये। अब ये बलदेव और वासुदेव कैसे होते हैं इसका वर्णन सूत्रकार करते हैं (पवरपुरिसा) ये बलदेव और वासुदेव प्रवर पुरुष-प्रधानपुरुष होते हैं (महाबलपरक्कमो) इनकी मानसिक शक्ति तथा कायिकशक्ति अनोखी होती है(महाधणुवियट्टगा) शार्ङ्ग आदि धनुष्य के ये विकर्षक होते

વળી એવા કોણ હોય છે? તો કહે છે કે "भुज्जोबलदेवा" ઈત્યાદિ

ટીકાર્થ—"भुज्जो बलदेवा वासुदेवा य" વળી જે બળદેવો અને વાસુદેવો હોય છે, તેઓ પણ કામથી અતૃપ્ત રહીને જ મૃત્યુ પામે છે, આ પ્રમાણે આ સૂત્રની વ્યાખ્યામાં સંબંધ સમજવાનો છે હવે તે બળદેવ અને વાસુદેવ કેવા હોયછે, તે સૂત્રકાર વર્ણવે છે— "पवरपुरिसा" તે બળદેવ અને વાસુદેવ પ્રવર પુરૂષ-પ્રધાન પુરૂષ હોય છે "महाबलपरक्कमो" તેમની માનસિક અને શારીરિક શક્તિ અદ્ભુત હોય છે "महाधणुवियट्टगा" તેઓ શાર્ઙ્ગ આદિ ધનુષ્યના વિકર્ષક

'महासत्तसागरा' महासत्त्वसागराः=महाबलस्य विशालवलस्य सागरा इव सागराः प्रभूतवलसम्पन्ना इत्यर्थः 'दुद्धरा' दुर्धराः=दुर्धर्षाः-शत्रुभिरनिवार्याः 'धणुधरा' धनुर्धराः=शार्ङ्गादिधनुर्धारिणः 'नरवसभा' नरवृषभाः = पुरुषेषु श्रेष्ठाः 'रामकेसवा' रामकेशवाः=वलदेववासुदेवा 'भायरो' भ्रातरः 'सपरिसा' सपर्षदः=सपरिवाराः 'समुद्दविजयमादियदसाराणं' समुद्रविजयादिदशार्हाणां=समुद्रविजय आदिर्येषां ते तथा ते च ते दशार्हास्तेषां ते च यथा—

समुद्रविजयो १ ऽक्षोभ्यः २ स्तिमितः ३ सागरस्तथा ४ ।
हिमवान ५ चलश्चैव ६ धरणः ७ पूरणस्तथा ८ ॥
अभिचन्द्रश्च ९ नवमो वसुदेवश्च १० वीर्यवान् ॥

तथा—'पज्जुण्णपयिवसंवअनिरुद्धनिसढउम्मुयसारणगयसुमुहदुम्मुहादीण'

हैं-चढाने वाले होते हैं, (महासत्तसागरा) विशालबल के ये सागर होते हैं अर्थात् बहुत अधिकबल के ये अधिपति होते हैं, (दुद्धरा) शत्रुओं द्वारा ये अनिवार्य होते हैं (धणुधरा) शार्ङ्ग आदि धनुषों के ये धारण—करने वाले होते हैं, (नरवसभा) पुरुषों में श्रेष्ठ होते हैं (रामकेसवा) बलदेव की अपर संज्ञा राम और वासुदेव की केशव होती है। (भायरो) ये संबंध में भाई भाई होते हैं। (सपरिसा) परिवारसहित होते हैं। (समुद्दविजय मादियदसाराणं पज्जुण्ण पइव संब अनिरुद्धा निसढ उम्मुय सारणगय सुमुहदुम्मुहादीणं जायवणं अद्धुट्ठाण वि कुमारकोडीणं हियय-दइया) तथा समुद्रविजय १, अक्षोभ्य २, स्तिमित ३, सागर ४, हिमवान् ५, चल ६, धरण ७, पूरण ८, अभिचंद्र ९ और वसुदेव इन समुद्रविजय आदि १० दशार्हों के लिये तथा प्रद्युम्न प्रतिवसांव, अनिरुद्ध,

---

(ચડાવનારા) હોય છે, "महासत्तसागरा" વિશાળ બળના સાગર હોય છે, એટલે કે ઘણા જ બળવાળા હોય છે, અથવા મોટા સૈન્યના અધિપતિ હોય છે. "दुद्धरा" શત્રુઓ દ્વારા અપરાજિત હોય છે, "धणुधरा" શાર્ઙ્ગ આદિ ધનુષ્યોને ધારણ કરનારા હોય છે, "नरवसभा" પુરૂષોમાં શ્રેષ્ઠ હોય છે. "रामकेसवो" બળદેવનું બીજું નામ રામ અને વાસુદેવનું બીજું નામ કેશવ હોય છે. "भायरो" તેઓ ભાઈઓનું સગપણ ધરાવે છે, અને "सपरिसा" પરિવાર વાળા હોય છે. "समुद्दविजयमादिय दसाराणं पज्जुण्ण पइव संब-अनिरुद्धा निसढउम्मुयसारणगयसुमुहदुम्मुहादीणं जायवाणं अध्धुट्ठाण वि कुमारकोडीणं हियियदइया" તથા (૧) સમુદ્ર વિજય, (૨) અક્ષોભ્ય, (૩) સ્તિમિત (૪) સાગર (૫) હિમવાન, (૬) ચલ, (૭) ધરણ (૮) પૂરણ (૯) અભિચંદ્ર અને (૧૦) વસુદેવ, તે સમુદ્ર વિજય આદિ ૧૦ દશાર્હોને, તથા પ્રદ્યુમ્ન,

प्रद्युम्न — प्रतिवसांवाऽनिरुद्धनिषधोल्मुक—सारण—गज—सुमुखदुर्मुखादीनां 'जायवाणं' यादवानां = यदुवंशिनां 'अद्धुट्ठाण वि' अर्द्धचतुर्थानामपि= सार्धतिसृणामपि 'कुमारकोडीणं' कुमारकोटीनां 'हिययदइया' हृदयदयिताः= हृदयप्रियाः 'देवीए रोहिणीए देवीए देवईए य आणंदहिययभावनंदणकरा' देव्या रोहिण्याः=बलदेवमातुः देव्यादेवक्याः=कृष्णमातुश्च आनन्दरूपो यो हृदयभाव-स्तस्य नन्दनकराः=वृद्धिकारकाः 'सोलसरायवरसहस्साणुजायमग्गा' षोडश-राजवरसहस्रानुयातमार्गाः = षोडशसहस्रसंख्यका राजवरा अनुमता भवन्ति मार्गे येषां ते तथा। तत्प्रदर्शितनीतिमार्गानुवर्त्तिन इत्यर्थः तदाज्ञाकारिण इति यावत्। सोलसदेवीसहस्सवरणयणहिययदइया' षोडशदेवीसहस्रवरनयनहृदय-दयिताः=षोडशसहस्रदेवीनां वरनयनानां=चारु लोचनानां सुन्दरीणां हृदयदयिताः= हृदयवल्लभाः, विशेषणमिदं वासुदेवापेक्षया। 'णाणामणिकणगरयणमोत्तियप-

निषध, उल्मुक, सारण, गज, सुमुख, दुर्मुख आदि साढातीन ३॥ करोड़ यादवकुमारों के लिये ये हृदय से अधिक प्यारे होते हैं। (देवीए रोहिणीए देवीए देवईए य आणंदहिय भावनंदणकरा) देवी रोहणी के तथा देवी देवकी के आनंदरूप हृदयभाव की ये वृद्धि करनेवाले होते हैं, देवी रोहिणी ये बलदेव की माता तथा देवी देवकी ये कृष्णकी माता हैं। (सोलसरायवरसहस्साणुजायमग्गा) १६ सोल हजार राजा जिनके पीछेर मार्ग में चला करते हैं, अर्थात् जिस प्रकार वे इन्हें नीतिमार्ग का प्रद-र्शन करते हैं उसी नीतिमार्गका ये अनुसरण करते हैं, अथवा उनकी आज्ञानुसार चलते हैं। (सोलस देवीसहस्सवरणयणहिययदइया) १६ सोल हजार स्त्रियों के नयनों को और हृदयोंको ये अत्यंतप्रिय होते हैं, यह विशेषण वासुदेवकी अपेक्षा से कहा गया जानना चाहिये। (णाणाम-

પ્રતિવસાંબ, અનિરુદ્ધ, નિષધ, ઉલ્મુક. સારણ, ગજ, સુમુખ, દુર્મુખ આદિ સાડા ત્રણ કરોડ યાદવ કુમારોને તે પ્રાણથી પણ અધિક વહાલા હોય છે, "देवीए रोहिणीए देवीए देवईए य आणंदहियभावनहणकरा" દેવી રોહિણી તથા દેવી દેવકીના હ્રદયના આનંદમાં તેઓ વૃદ્ધિ કરનારા હોય છે. દેવી રોહિણી બળદેવની માતા તથા દેવી દેવકી કૃષ્ણની માતા છે. "सोलसरायर-सहस्साणुजायमग्गा" ૧૬ સોળ હજાર રાજાઓ તેમને અનુસરે છે, એટલે કે તેમના દ્વારા જે નીતિમાર્ગ તેઓ બતાવે છે, એ જ નીતિમાર્ગનુ તેઓ અનુસરણ કરે છે, અથવા તેમની આજ્ઞા પ્રમાણે તે બધા ચાલે છે. "सोलस देवीसहस्सवर-णयणहिययदेइया" ૧૬ સોળ હજાર સ્ત્રીઓના નયનો તથા હ્રદયને તેઓ અત્યંત પ્રિય હોય છે. આ વિશેષણ વાસુદેવને અનુલક્ષી અપાયેલુ છે. "णाणामणि-

वालधणधण्णसंचया ' नानामणिकनकरत्नमौक्तिकप्रवालधनधान्यसञ्चयाः, तत्र नानाविधा मणयः=चन्द्रकान्तादयः कनकानि=सुवर्णानि रत्नानि=कर्केतनादीनि मौक्तिकानि=मुक्ताफलानि प्रवालानि=' मूंगा ' इति प्रसिद्धानि धनानि=गणिमादीनि, तत्र गणिमं-गणयित्वा यद्दीयते तद्वस्तु गणिममित्युच्यते नालिकेरपूगीफलादिकम्, एवं धरिमं-यत्तुलायां धृत्वा दीयते तत्, सुवर्णरजतादिकम्, मेयं-कुडवेन-मानविशेषेण ' पायली ' इति प्रसिद्धेन परिमीय यद्दीयते तत्, शालीगोधूमादिकम्, परिच्छेद्यं परीक्ष्य यद्दीयते तत्, रत्नवस्त्रादिकम्, धान्यानि शालियवादीनि तेषां सञ्चयाः=राशयो येषां ते तथा 'रिद्धसमिद्धकोसा' ऋद्धि समृद्धकोशाः=विविधसम्पत्तिपूर्णभाण्डागाराः ' हयगयरहसहस्ससामी ' हयगजरथसहस्रस्वामिनः=स्पष्टम् । ' गामागरणगरखेडकब्बडमडंबदोणमुहपट्टणाऽऽसमसंवाहसहस्स थिमियनिव्वुयप्पमुइयजणविविह-सस्सनिप्फज्जमाणमेइणि सरसरियतला-

---

णिकणग-रयण-मोत्तिय पवालधणधण्णसंचया) चन्द्रकान्त आदि नाना प्रकारके मणियों की, सुवर्ण की, कर्केतनादि रत्नोंकी, मुक्ताफलों की, मुंगाओं की, तथा धन-गणिमादि, तथा गणिम-गिनकर दी जानेवाली नालिकेर पूगीफल आदि वस्तुओंकी, तथा धरिम-तुला से तौल कर दी जानेयोग्य सुवर्ण रजत आदि द्रव्योंकी, तथा मेय-कुडव 'पायली' नापके नामविशेष से नापकर दिये जानेयोग्य शालि गोधूम आदि अनाजोंकी, तथापरिच्छेद्य-परीक्षा करके दी जानेयोग्य रत्न वस्त्र आदि चीजों की तथा धान्य शालि यव आदि धान्यों की इनके यहां राशि रहा करती है। तथा—(रिद्धसमिद्ध कोसा) विविध संपत्तिसे इनका भाण्डागार (भंडार) पूर्ण भरा रहता है। तथा (हयगयरहसहस्ससामी) हयों के घोड़ों के, हाथियोंके एवं रथों के ये स्वामी होते हैं। (गामागरणगरखेडकव्वडमडंबदोणमुहपट्टणासम

कणगरयणमोत्तिय पवालधणधण्णसंचया " चन्द्रकान्त આદિ વિવિધ મણીઓનો, સુવર્ણનો, કર્કેતનાદિ રત્નોનો, સાચા મોતીનો, મુંગાઓનો, તથા, ધન-ગણિમાદિનો, (ગણિમ-ગણીને અપાતી નાળિયેર પૂગીફળ આદિ વસ્તુઓનો) ધરિમનો (" ધરિમ—ત્રાજવાથી જોખીને આપવા યોગ્ય સુવર્ણ, ચાંદી આદિ દ્રવ્ય) મેય-કુડવનો (" પાયલી " (માણુ) આદિથી ભરીને આપવા યોગ્ય ચોખા, ઘઉં આદિ અનાજ) પરિચ્છેદ—પરીક્ષા કરીને આપવા યોગ્ય રત્ન-વસ્ત્ર આદિ ચીજોનો, તથા ધાન્યનો (ચોખા જવ આદિ અનાજનો) તેમને ત્યાં ભંડાર ભરેલ હોય છે તથા " रिद्धिसमिद्धकोसा " વિવિધ સંપત્તિથી તેમનો ભંડાર સદા ભરપૂર રહે છે. તથા " हयगयरहसहस्ससामी " ઘોડા, હાથી અને રથોના તેઓ અધિપતિ હોય છે " गामागरणगरखेडकव्वडमडंब

गसेलकाणणआरामुज्जाणमणाभिरामपरिमंडियस्स ' तत्र ग्रामाऽऽगरनगर खेटकर्बटमडंबद्रोणमुखपत्तनाऽऽश्रमसंवाहाः = तत्र ग्रामः = ग्रसते बुद्ध्यादि गुणानिति ग्रामःपृषोदरादित्वात्सकारस्य मकारः । अन्ये संवाहपर्यन्ताः पूर्वस्मिन् चक्रवर्त्तिसूत्रे व्याख्यातपूर्वाः, तेषां यानि सहस्राणि तैः, ' थिमिय ' स्तिमिताः= स्वचक्रपरचक्रभयरहिताः 'निब्बुय' निर्वृताः=सुशान्तचित्ताः तथा 'पमुइय' प्रमुदिताश्च=अतिप्रसन्ना ये जनास्तैः, तथा 'विविहसस्सनिप्पज्जमाणमेइणी ' विविधसस्यनिष्पद्यमानमेदिनी-विविधानि सस्यानि=धान्यानि,तैःनिष्पद्यमाना सम्पद्यमाना या ' मेइणी ' मेदिनी=पृथिवी तया तथा ' सर ' सरांसि=जलाशयविशेषाः, 'सरिय' सरितः=नद्यः ' तलाग ' तडाकाः=महाजलाशयाः ' सेल ' शैलाः=पर्वताः'काणण' काननानि=सामान्यवृक्षोपेतानि नगरासन्नवर्त्तिवनानि, आरामाः=लतामण्डपाद्युपेतानि,राज्ञामन्तः पुरोद्यानानि, उद्यानानि=विविधपादपकुसुमसमुल्लसितसर्वजनविहारो-

---

संबाहसहस्सथिमियनिव्वुयप्पमुइयजण-विविहसस्सनिप्फज्जमाणमेइणि-सर सरियतलागसेलकाणण आरामुज्जाणमणाभिरामपरिमंडियस्स) ग्राम आकर, नगर, खेट, कर्बट, मडंब, द्रोणमुख, पत्तन, आश्रम, संवाह इन सबकी हजारोंकी संख्यासे स्वचक्र एवं परचक्रके भयसे रहित ऐसे तथा जिनका चित्त सदा सुशान्त बना हुआ रहता है ऐसे अति प्रमुदित मनुष्यों से तथा विविध प्रकारकी धान्य राशि जिसमें उत्पन्न होती है ऐसी मेदनीसे, तथा मनोहर जलाशय विशेषोंसे, नदियोंसे, तलावों से, पर्वतों से, सामान्यवृक्षोंसे युक्त, एवं नगरके पास रहे हुए ऐसे काननों(वनों) से तथा लतामण्डप आदि से युक्त ऐसे राजाओं के अन्तःपुरके उद्यानों से, तथा अनेक प्रकार के वृक्षोंसे एवं कुसुमों से समुल्लसित एवं सर्व जनों के विहार योग्य ऐसे उपवनों से परिमंडित हुए, तथा (दाणिद्धवे-

---

दोणमुहपट्टणासमसंवाह-सहस्स-थिमिय-निव्वुयप्पमुइयजणविविहसस्स निप्फज्जमाण मेइणिसर—सरिय—तलाग—सेल—काणण-आरामुज्जाणमणाभिरामपरिमंडियस्स ” ગામ, આકર નગર, ખેટ, કર્બટ, મડંબ, દ્રોણમુખ, પત્તન, આશ્રમ, સંવાહ, વગેરે હજારોની સંખ્યામાં તેઓની સત્તા નીચે હોય છે સ્વચક્ર અને પરચક્રના ભયથી રહિત તથા સદા શાંત અને અતિ આનંદિત ચિત્તવાળા મનુષ્યોથી, તથા વિવિધ પ્રકારના ધાન્ય રાશિ (ઢગલા) જેમાં ઉત્પન્ન થાય છે એવી ભૂમિથી, તથા મનોહર જળાશયોથી , નદીઓથી, તળાવોથી, પર્વતોથી. સામાન્ય વૃક્ષોથી નગરની પાસે આવેલાં કાનનોથી, તથા લતામંડપ આદિથી યુક્ત એવાં રાજાઓનાં અન્તઃપુરનાં ઉદ્યાનોથી, તથા અનેક પ્રકારનાં વૃક્ષોથી, અને વિકસિત કુસુમોથી શોભતાં અને સર્વે લોકોને ફરવાને યોગ્ય એવાં ઉપવનોથી વીંટળાયેલા, તથા

पवनानि तानि च 'मणाभिराम' मनोऽभिरामाणि=मनोहराणि तैश्च 'परिमंडियस्स' परिमण्डितस्य=शोभितस्य 'दाहिणड्ढवेयड्ढगिरिविभत्तस्स' दक्षिणार्धं वैताढ्य गिरिविभक्तस्य=दक्षिणार्धे यो वैताढ्यः = तन्नामको गिरिः = पर्वतविशेषस्तेन विभक्तस्य=कृतविभागस्य 'लवणजलपरिगयस्स' लवणजलपरिगतस्य=लवण-जलेन=लवणसमुद्रेन परिगतस्य=वेष्टितस्य 'छव्विहकालगुणकमजुत्तस्स' षडविध-कालगुणक्रमयुक्तस्य=षड्विधस्य कालस्य=वर्षा शरद् हेमन्तशिशिरवसन्तग्रीष्माभिध-षड्ऋतुसमयस्य ये गुणाः=कार्याणि नवपल्लवकुसुमविविधफलसमुदयादि रूपाणि, तेषां यः क्रमः=यथोचितरूपेण भवनं तेन युक्तस्य=समुपेतस्य एवंविधस्य 'अद्धभर-हस्स' अर्धभरतस्य—दक्षिणभरतस्य 'सामिया' स्वामिकाः=अधिपतयः 'धीरा', धीराः=शत्रुभिरपरिभवनीयाः 'कित्ति पुरिसा' कीर्त्तिपुरुषाःकीर्त्तिप्रधानाःपुरुषाः 'ओहबला' ओघबलाः=ओघेन=प्रवाहेणाच्छिन्नं बलं येषां ते तथा अविच्छिन्न बला इत्यर्थः, 'अइबला' अतिबलाः=अन्यबलान्यतिक्रान्ताः। 'अनिहया' अनिहताः = शत्रुशस्त्राघातवर्जिताः एवंभूताःबलदेववासुदेवा अपि कामभोगतृप्ति रहिता एव मरणधर्ममुपनमन्तीति सम्बन्धः ॥ ६ ॥ सू० ॥

यड्ढगिरिविभत्तस्स) दक्षिणार्ध में वैताढ्य पर्वतसे विभक्त हुए (लवण-जलपरिगयस्स) लवण समुद्र से वेष्टित हुए तथा (छव्विहकालगुणकम्म-जुत्तस्स) वर्षा, शरद् , हेमन्त, शिशिर, वसन्त, ग्रीष्म, इन छह ऋतु-ओंरूप समय के नवीन पत्तों, कुसुमों, एवं फलों के आगमनरूप कार्यों के क्रम से युक्त बने हुए ऐसे (अद्धभरहस्स) दक्षिण भरतके ये (सामिया) स्वामी होते हैं (धीरा) धीर होते हैं अर्थात्—शत्रुओं द्वारा अपरिभवनीय होते हैं। तथा (कित्तिपुरिसा) कीर्ति ही है प्रधान जिन्होंकी ऐसे ये कीर्त्ति पुरुष होते हैं। (ओहबला) इनका बल कभी नष्ट नहीं होना है अतः ये (अइबला) अविच्छिन्न बलवाले होते हैं,

---

"दाहिण्णड्ढवेयड्ढगिरिविवत्तस्स" દક્ષિણાર્ધમાં વૈતાઢય પર્વતથી વિભક્ત થયેલ "लवणजलपरिगयस्स" લવણસમુદ્રથી ઘેરાયેલા તથા "छव्विहकालगुणकमजुत्तस्स-"વર્ષા, શરદ, હેમન્ત, શિશિર, વસંત અને ગ્રીષ્મ એ છએ ઋતુઓને અનુરૂપ નવીન પાન, ફૂલો, અને ફળોના આગમનરૂપ કાર્યોથી યુક્ત બનેલ એવા "अद्धभरहस्स" દક્ષિણ ભારતનાં તેઓ ' सामिया " સ્વામી હોય છે. "धीरा" તેઓ ધીર હોય છે એટલે કે શત્રુઓ દ્વારા અપરાજિત હોય છે તથા "कि-त्तिपुरिसा" કીર્તિ જ પ્રધાન છે જેમની એવા કીર્તિપુરુષ હોય છે-કીર્તિશાળી હોય છે "ओहबला" તેમનુ બળ કદી નાશ પામતું નથી તેથી તેઓ "अ-इबला "અવિચ્છિન્ન બળવાળા હોય છે, તથા "अनिहया" શત્રુઓના શસ્ત્રોના

हस्तरेखादीनि सामुद्रिकशास्त्रोक्तानि, तथा व्यञ्जनानि च=मषतिलकादीनि गुणाः= शौर्यादयस्तैरुपेताः युक्ताः, 'माणुम्माणपमाणपडिपुण्णा सुजायसव्वंगसुंदरंगा' मानोन्मानप्रमाणप्रतिपूर्णसुजातसर्वाङ्गसुन्दराङ्गाः = मानोन्मानः प्रमाणैः = तत्र मानं-शरीरभारः, उन्मानं=शरीरोच्छ्रय, प्रमाणं=समुचितशरीरावयववत्त्वं, तैः प्रतिपूर्णानि=सुजातानि=सुष्ठुतया समुत्पन्नानि सर्वाण्यङ्गानि=अवयवा यस्मिन् तदेवं विधं सुन्दरमङ्गं=शरीरं येषां ते तथा सकलसुलक्षणलक्षितसुपुष्टसप्रमाणसुन्दरशरीरा इत्यर्थः 'ससिसोमागारा' शशिसौम्याकारा-चन्द्र-वत्सौम्याकृतिसम्पन्नाः, 'कंता' 'कान्ताः=कमनीयाः 'पियदंसणा' प्रियदर्शनाः=मनोजरूपा 'अमरिसणा' अमर्षणः = अत्याचाराऽसहिष्णवः 'पयंडदंडप्पयारगंभीरदरिसणिज्जा'

स्नेहशील होते हैं (सरण्णा) शरणागतकी रक्षा करते हैं (लक्खणवंजण गुणोववेया) जो सामुद्रिक शास्त्रोक्त रेखा आदि शुभचिन्होंसे, तथा मषा तिलक आदि शुभ व्यंजनोंसे एवं शौर्यादिक सद्गुणोंसे युक्त होते हैं माणुम्माणपमाणपडिपुण्णा सुजाय सव्वंगसुंदरंगा) शरीर भाररूप मानसे, शरीरकी ऊँचाई रूप उन्मानसे तथा समुचित शरीरावयवरूप प्रमाणसे, प्रतिपूर्ण, एवं सुन्दर रूपवाले समस्त अवयव जिसमें हैं ऐसे सुहावने शरीर से जो युक्त होते हैं अर्थात् उनका शरीर समस्त सुलक्षणों से युक्त, सुपुष्ट और प्रमाणोपेत होने से पूर्ण सुन्दर होता है, (ससि-सोमागारा) जिनकी आकृती चंद्रमा के जैसी सौम्य होती है, (कंता) जो सबके लिये बड़े प्रिय लगते हैं (पियदंसणा) उनका दर्शन मन को बहुत अधिक आह्लाद जनक होता है (अमरिसणा) जो अत्याचार को सहना बहुत ही बुरा मानते हैं-अर्थात्-जो अत्याचार को सहन नहीं

જે રક્ષા કરનાર હોય છે, "लक्खणवंजणगुणोववेया" જેવા સામુદ્રિક શાસ્ત્રોક્ત રેખા આદિ શુભ ચિન્હોથી તથા મષા તિલક આદિ શુભ વ્યંજનોથી અને શૌર્યાદિક સદ્‌ગુણોથી યુક્ત હોય છે, "माणुम्माणपमाण पडिपुन्नासुजायसव्व ग-सुंदरंगा" શરીરભાર રૂપ માનથી, શરીરની ઉંચાઇરૂપ ઉન્માનથી, તથા સપ્રમાણ શરીરાવયવરૂપ પ્રમાણથી, પ્રતિપૂર્ણ અને સુંદર શરીરથી જે યુક્ત છે, એટલે કે તેમનું શરીર સમસ્ત સુલક્ષણો વાળુ, સુપુષ્ટ અને સપ્રમાણ હોવાથી સંપૂર્ણ રીતે સુંદર હોય છે, "ससिसोमागारा" જેમની આકૃતિ ચન્દ્રમાના જેવી સૌમ્ય હોય છે, "कंता" જે સૌને ઘણા જ પ્રિય લાગે છે. "पियदंसणा" જેમનાં દર્શન મનને અત્યંત આનંદદાયક હોય છે. "अमरिसणा" જે અત્યાચારોને સહન કરવો તે બહુજ ખરાબ ગણે છે એટલે કે અત્યાચારને સહન કરી શકતા

प्रचण्डः = दारुणोद्दण्डप्रचारः = दुष्टदमनाऽऽज्ञाविशेषस्तत्र गम्भीरदर्शनीयाः = गम्भीरं = दुष्टजनचित्तक्षोभोत्पादकं दर्शनीयं = स्वरूपं येषां ते तथा सत्पुरुषाणां कृते चन्द्रवत् प्रियदर्शनाः, दुर्जनानां कृतेषु कालसदृशा इति भावः 'तालज्झया' तालध्वजाः=तालः=तालवृक्षाङ्कितो ध्वजो येषां ते तथा तालध्वजा बलदेवाः, 'तालाङ्को मुसलीहली' इत्यमरः, तथा 'उव्विज्झगरुलकेऊ' उद्विद्धगरुडकेतवः–उद्विद्धः=अत्युच्छ्रितो गरुडकेतुः=गरुडाङ्कितो ध्वजो येषां ते तथा वासुदेवाः 'बलवगगज्जंतदरियदप्पियमुट्ठियचाणूरचूरगा' बलवद् गर्जद् दृप्तदर्पितमौष्टिकचाणूरचूरकाः = तत्र बलवन्तं — महाशक्तिसम्पन्न गर्जन्तं= 'कोऽन्योऽस्मादृशो मल्लः, इति महाघोषं कुर्वन्तः, तथा दृप्तदर्पितं=दृप्तेष्वपि दर्पितं=अतिगर्वयुक्त मौष्टिकं चाणूरं च=तत्तन्नामकं मल्लं चुरयन्ति ये ते तथा

कर सकते हैं– (पयंडदंडप्पयारगंभीरदरिसणिज्जा) दारुण दंड के प्रचार में जिनकी आकृति बहुतभारी गंभीर बन जाती है, अर्थात् दुष्टों को दमन करने रूप आज्ञा में जिनकी आकृति दुष्टजनों के लिये चित्तमें कालकी तरह क्षोभोत्पादक बनती है और सज्जनोंके लिये चन्द्र की तरह प्रियदर्शन वाली होती है। (तालज्झया उव्विज्झगरुलकेऊबलगज्जंतदरियदप्पिअमुट्ठिचाणूरचूरगा) तथा इनमें बलदेव की ध्वजा तालवृक्ष के चिह्न से अंकित होती है और वासुदेव की ध्वजा गरुड के चिह्न से अंकित रहती है और बहुत ऊंची होती है। बलदेव ने कृष्ण को मारने के लिये कंस द्वारा प्रवर्तित किये हुए मल्लयुद्ध में 'कौन हमारे जैसा पहलवान है' इस अभीमान से जो मदोन्मत्त बनकर घोषणा कर रहे–एवं अत्यंत मद से उन्मत्त बने हुए थे–ऐसे मौष्टिक नामके मल्ल को

નથી. "पयंड-दंडप्पयार-गभीर-दरिसणिज्जा" દારૂણ દંડ પ્રદાન કરતી વખતે જેમનો દેખાવ ઘણો ગંભીર થઈ જાય છે. એટલે કે દુષ્ટોને શિક્ષા કરવાની આજ્ઞા આપતી વખતે જેમનો દેખાવ દુષ્ટ લોકોને માટે યમદેવના જેવો ક્ષોભ ઉત્પાદક બની જાય છે અને સજ્જનો માટે તેમની મુખાકૃતિ ચન્દ્રની જેમ પ્રિયદર્શનવાળી હોય છે "तालज्झया उव्विज्झ गरुलं केऊबलगज्जंतदरियदप्पिय मुट्ठियचाणुरचूरगा" તેઓમાંના બળદેવની ધ્વજા તાલવૃક્ષની નિશાની વાળી હોય છે અને વાસુદેવની ધ્વજા ગરુડના નિશાનવાળી હોય છે અને ઘણી ઉંચી હોય છે. કૃષ્ણને મારવા માટે કંસ દ્વારા કરવાયેલ મલ્લયુદ્ધમાં બળદેવે "મારા જેવો પહેલવાન કોણ છે" એવા અભિમાનથી જે મદોન્મત્ત બનીને ઘોષણા કરી રહ્યો હતો એવા મૌષ્ટિક નામના મલ્લને મારી નાખ્યો અને વાસુદેવ

महावलमौष्टिकचाणूरादिमल्लविध्वंसकाः कृष्णवधार्थं कंसेन प्रवर्तिते मल्लयुद्धे वलरामेण मौष्टिकाभिधाना मल्लो वासुदेवेन च चाणूराभिधानो मल्लो निहतः इति । 'रिट्ठवसभघाइणो' रिष्टवृषभघातिनः = रिष्टाभिधानकंसवलीवर्दघातकाः, 'केसरिमुहविप्फाडगा' केसरिमुखविस्फाटकाः=इदं विशेषणं त्रिपृष्टकाभिधप्रथम-वासुदेवापेक्षया वोध्यम् । स हि नगरोपद्रवकारि घनकाननिवासि महासिंह मुखं विदारितवान् । 'दरियनागदप्पमहणा' दृप्तनागदर्पमथनाः=यमुना निवासि महाविषकालनागगर्वविनाशकाः, 'जमलज्जुणभंजणा' यमलार्जुनभञ्जकाः = यमलार्जुनवृक्षविनाशकाः तौ हि पितृवैरिणौ विद्याधरौ यमलार्जुननामकौ वृक्षरूपं विकुर्व्य पथि स्थितौ चुर्णितवन्तः । 'महासउणिपूयणरिऊ' महाशकुनिपूतना-रिपवः=महाशकुनिः पूतना च विद्याधरपत्न्यौ, तयोः रिपवः । वाल्यावस्थायां

मारा, तथा वासुदेव कृष्ण ने चाणूर नामके मल्ल को मारा यही वात "बलवग गज्जंत०" इस पद द्वारा प्रदर्शित की गई है। तथा (रिट्ठवसभघाइणो) जो कंस के रिष्ट नाम के मायावी वलीवर्द के घातक थे तथा (केसरिमुहविप्फाडगा) केशरी सिंह के मुख को भी फाड़ देते थे, यह विशेषण त्रिपृष्ट नारायण की अपेक्षा कहा गया जानना चाहिये, क्यों कि उन्हीं ने नगर में उपद्रव मचाने वाले जंगली सिंह के मुख को विदारित किया है। (दरियनागदप्पमहणा) तथा जिस नारायणने यमुना निवासी महाविषैले काली नामकसर्प का विनाश किया है-तथा (जमलज्जुणभंजणा) नारायण ने पिता के वैरी दो विद्याधरों को की जिनका नाम यमल और अर्जुन था और जो मार्ग में वृक्ष का रूप अपनी विक्रिया से बनाकर खड़े हो गये थे उनको मारा है (महासउणि पूयणरिऊ) तथा जो विद्याधर की महाशकुनि एवं पूतना नामक दो

કૃષ્ણે ચાણુર નામના મલ્લને માર્યો એ જ વાત "बलवगगज्जंत" પદ દ્વારા બતાવવામા આવી છે. તથા "रिट्ठवसभघाइणो" જે કંસના રિષ્ટ નામના માયાવી બલીવર્દના ઘાતક હતા તથા "केसरीमुहविप्फाडगा" સિંહના મુખને પણ ફાડી નાખતા હતા તે વિશેષણ ત્રિપૃષ્ઠ નારાયણને અનુલક્ષીને વપરાયું છે, કારણ કે તેમણે નગરમા ઉપદ્રવ મચાવનાર જંગલી સિંહના મુખને ચીરી નાખ્યું હતું "दरियनागदप्पमेहणा" તથા જે નારાયણે યમુનામા રહેતા અતિશય ઝેરી કાળીનાગને વશ કર્યો છે, તથા "जमलज्जुणभंजणा" નારાયણે તેમના પિતા યમળ અને અર્જુન નામના બે દુશ્મન વિદ્યાધરો, કે જે માર્ગમાં પોતાની વૈક્રિય શક્તિથી વૃક્ષના રૂપ લઈ ઉભા થઈ ગયા હતા તેમને માર્યા હતા. "महासउणिपूयणरिऊ" તથા જે વિદ્યાધરની મહાશકુનિ અને

कृष्णस्ते हतवानित्यर्थः 'कंसमउडमोडगा' कंसमुकुटमोटकाः=कंसमुकुटसञ्चूरकाः, कृष्णो हि चाणूरवधानन्तरं कुपितं कंसं युयुत्सं मुकुटदेशं गृहीत्वा सिंहासनादाकृष्य भुविनिपात्य जघान । तथा 'जरासंधमाणमहणा' जरासन्धमानमथनाः=जरासन्धगर्वविनाशकाः, जरासन्धघातका इत्यर्थः, कंसवधकुपितं राजगृहनगरपतिं जरासन्धाभिधानं युद्धायोद्यतं हतवान् । पुनः कीदृशाः ? इत्याह—'तेहि य अविरलसमसंहिय चंदमंडलसमप्पभेहिं सूरमरीइ कवयं विणिम्मुयंतेहिं सप्पडि दंडेहिं आयवत्तेहिं धरिज्जंतेहिं विरायंता' तत्र 'तेहिं' तैश्चातिशयवद्भिश्छत्रैर्विराजमानाः, इति सम्बन्धः कीदृशैश्छत्रैः ? इत्याह-अविरलसमसंहितचन्द्रमण्डलसमप्रभैः=अविरलानि =घनानि—घनशलाकावत्वात्, समानि = तुल्यानि स्थूलत्वेन दीर्घत्वेन च शलाका-

---

स्त्रियों के रिपु थे—क्यों कि बाल्यावस्था में कृष्ण ने इन दोनों को मारा था, तथा (कंसमउडमोडगा) कृष्ण ने कंस के मुकुट को चूर २ कर दिया था—अर्थात्—चाणूर मल्ल के वध करने के अनन्तर जब कंस युद्ध करनेकी इच्छावाला हो गया-तो उसे मुकुट को पकड़ कर कृष्णने सिंहासन से नीचे खेंच लिया और जमीन पर पटक कर मार डाला, इसी तरह (जरासंघमाणमहणाा) कृष्णने—राजगृह नगर के अधिपति जरासंध नाम के राजाओं को मारा हैं, कंस के वध हो जाने के बाद जब जरासंध कुपित होकर युद्ध करने के लिये उद्यत हो गया था तो कृष्ण ने उसे बात की—बात में संग्राम भूमि मे नष्ट कर दिया था, तथा (तेहि-य अविरल समसंहियचंद मंडलसमप्पभेहि सूरमरीइकवयं विणिमुयंते-हिं सप्पडिदंडेहिं आयवत्तेहि धरिज्जंतेहिं विरायंता) जो अतिशय शाली छत्रों से विराजमान होते हैं अर्थात्—जिन छत्रों से बलदेव और वासुदेव सुशोभित होते हैं उन छात्रों की शलाईयां बहुत अधिक घनीभूत होती

પૂતના નામની બે સ્ત્રીઓના દુશ્મન હતા અને તે કારણે બાળપણમાં તેમણે એ બન્નેને મારી હતી, તથા "कंसमउडमोडगा" કૃષ્ણે કંસના મુગટના ચૂરે ચૂરા કરી નાખ્યા હતા ચાણુર મલ્લનો કૃષ્ણે વધ કર્યા પછી જ્યારે કંસે કૃષ્ણ સાથે લડવાની ઇચ્છા બતાવી ત્યારે કૃષ્ણે તેનો મુગટ પકડીને તેને સિંહાસન ઉપરથી નીચે ખેંચીને જમીન ઉપર પછાડીને મારી નાખ્યો, આ રીતે "जरासघमाण:महणा" કૃષ્ણે રાજગૃહ નગરના રાજા જરાસંધનો વધ કર્યો હતો. કંસનો વધ થયા પછી જ્યારે જરાસંધ ક્રોધે ભરાઈને લડવાને તૈયાર થયો ત્યારે કૃષ્ણે એક ઘડીમા તેનો રણમેદાનમાં વધ કર્યો હતો. તથા "तेहि य अविरलसमसहियच दमंडलसमप्पभेहिं सूरमरीइ कवयं विणिमुयंतेहिं द डेहिं आयवत्तेहिं धरिज्जंतेहिं विरायंता" તેઓ ઘણા સળિયા વાળાં છત્રોથી શોભતા

नां समत्वात् द्वयोर्द्वयोः शलाकयोरन्तरालस्यापि समत्वाच्च, संहितानि-शलाकानां निम्नोन्नतरहितत्वात्, तानि तथा-चन्द्रमण्डलसमप्रभाणि वृत्तत्वेन चन्द्रमण्डल-समा प्रभा येषां तानि तथा तैः-तथा 'सूरमरीइकवयं विणिम्मुयंतेहिं' सूरमरीचि कवचं विनिर्मुञ्चद्भिः-सूरमरीचयः=सूर्यकिरणास्त इव मरीचयः देदीप्यमानप्रभूत मणिरत्नैः सर्वतः खचितत्वात्, तेषां कवचमिव कवचं=परिकरःमण्डलाकारपरिण-तत्वात्, तं विनिर्मुञ्चद्भिः=प्रसारयद्भिः, तथा 'सप्पडिदंडेहिं' सप्रतिदण्डैः=अतिवि-शालत्वादेकेन दण्डेन धारणा शक्यत्वात्प्रतिदण्डसहितैः 'आयवत्तेहिं' आतपत्रैः=

हैं, स्थूलता एवं दोर्घता में समान होती हैं तथा दो दो शलाकाओं का अन्तराल भी सम होता है तथा ये सब शलाकाएँ ऊँची नीची नहीं होने के कारण, अर्थात्-एक सी होने के कारण परस्पर में संहित-मिली हुई होती हैं, इसलिये ये छत्र अविरल, सम और संहित होते हैं। तथा इन सब छत्रों की प्रभावृत्त-गोल-होने के कारण पूर्णचंद्र मंडल जैसी होती है। तथा-ये समस्त छत्र देदीप्यमान अनेक मणियों एवं रत्नों से जड़े हुए होने के कारण जिस किरण जाल को छोड़ते हैं वह ऐसा मालूम पड़ता है कि यह सूर्य की किरणों का ही जाल है, क्यों कि वह आसपास में मंडलाकार से परिणत बना रहता है। तथा इन छत्रों में विशाल आकारवाले होने के कारण भिन्न २ दंडे लगे रहते हैं-एक ही दंडे के सहारे ये नहीं रहते हैं, क्यों कि एक ही दंडे से इनका अति विशाल होने के कारण संभालना अशक्य होता है। ऐसे प्रिय-

---

હોય છે. એટલે કે જે છત્રો બળદેવ અને વાસુદેવ ઉપર ધરવામાં આવે છે. તે છત્રોના સળિયાઓ ઘણી જ પાસે પાસે હોય છે, જાડાઈ અને લંબાઈમાં સરખા હોય છે, તથા બે સળિયાઓ વચ્ચેનું અંતર પણ સરખું હોય છે તથા તે સળિયા લાંબા ટૂંકા નહીં હોવાને કારણે, એક સરખા હોવાને કારણે પર-સ્પર જોડાયેલ હોય છે, તેથી તે છત્ર અવિરલ, સમ અને સંહિત હોય છે. અને તે સઘળાં છત્રોનો પરીઘ ગોળ હોવાને કારણે તે પૂર્ણચન્દ્ર જેવાં લાગે છે. તથા તે છત્રો પર અનેક તેજસ્વી મણીઓ અને રત્નો જડેલાં હોય છે તેથી તેમાંથી જે કિરણ જાળ નિકળે છે તે સૂર્યની કિરણજાળ જેવી લાગે છે, કારણ કે તે આસપાસમા મંડલાકારે પથરાયા કરે છે. તે છત્રો ઘણાં વિશાળ હોવાથી તેને આધાર આપવાને અનેક દંડા રાખ્યા હોય છે. એક જ દંડાને આધારે તે રહી શકતાં નથી, કારણ કે તે છત્રો એટલાં વિશાળ હોય છે કે એક જ દંડા વડે તેને સંભાળવા અશક્ય થઈ પડે છે. એવા પ્રકારનાં છત્રોથી

महाछत्रैः ' धरिज्जंतेहिं ' धार्यमाणैः ' विरायंता ' विराजमानाः । ये एतादृशा-स्तेऽपि काम भोगातृप्ता एव मरणधर्ममुपनमन्तीति योगः ॥ सू० ७ ॥

पुनः कीदृशास्ते ? इत्याह— ' ताहिय ' इत्यादि—

मूलम्—ताहिय पवरगिरिकुहर-विहरण-समुट्ठियाहिं निरु-वहयचमरिपच्छिमसरीरसंजायाहिं अमइल-सियकमल-विमुकुलुज्जलियरययगिरि—सिहरविमलससिकिरण-सरिसक-होयनिम्मलाहिं पवणाहयचवलचलिय—सललियनच्चिय-वीइपसरिय-खीरोदगपवर-सागरुप्पूर-चवलाहिं माणससर-पसर-परिचियावास-विसय-वसाहिं कणगगिरि-सिहर-संसि-याहिं ओवाउप्पाय-चवल-जविय-सिग्घवेगाहिं हंसवधूयाहिं चेव नानामणिकणग-महारिह-तवणिज्जुज्जल-विचित्तदंडाहिं सललियाहिं नरवइसिरिसमुदयप्पगासणकराहिं वरपट्टणु-ग्गयाहिं समिद्धरायकुलसेवियाहिं कालागुरुपवरकुंदुरुक्कतुरुक्क धूववासविसिट्ठगंधुद्धूयाभिरामाहिं चिल्लियाहिं उभओ पासंपि चामराहिं उक्खिप्पमाणाहिं सुहसीयलवायवीयियंगा अजिया अजियरहा हलमुसलकणगपाणी संखचक्कगयसत्तिणंदग-धरा पवरुज्जलसुकय-विमलकोथुभ-किरीडधारी कुंडल उज्जो-इयाणणा पुंडरीयणयणा एगावलिकंठ राइयवच्छा सिरिवच्छ सुलंछणा वरजसा सव्वोउय-सुरभि-कुसुमरइयपलंब-सोहंत

माण छत्रों से ये विराजमान रहते हैं। ऐसे ये बलदेव और वासुदेव भी कामभोगों से अतृप्त बने रहते हैं और इसी स्थिति में मरणधर्म को प्राप्त करते हैं ॥ सू०७ ॥

શોભતા બળદેવ અને વાસુદેવ, પણ કામભોગોથી અતૃપ્ત રહે છે એ સ્થિતિમાં મરણ પામે છે. ॥ સૂ–૭ ॥

वियसंत-विचित्तवणमाल-रइयवच्छा अट्ठसयविभत्तलक्खण-पसत्थसुंदर - विराइयंगमंगा मत्तगयवरिंद-ललिय - विक्कम विलसिय-गईकडिसुत्तकनील पीय—कोसेज्जवाससा पवरदित्ततेया सारयणवथणिय-महुरगंभीर--णिद्धघोसा नरसीहा सीहविक्कमगई अत्थमिय पवररायसीहा सोम्मा बारवई पुण्ण चंदा पुव्वकयतवप्पभावा निविट्ठसंचियसुहा अणेगवास सयमाउव्वंतो भज्जाहियजणवयप्पहाणाहिं लालियंता अउल-सद्दफरिस-रसरूवगंधे य अणुभवित्ता ते वि उवण-मंति मरणधम्मं अवितित्ता कामाणं ॥ सू० ८ ॥

टीका:— 'ताहिय' ताभिश्च वक्ष्यमाणविशेषणविशिष्टाभिश्चामराभिरुत्क्षिप्यमानाभिः सुख शीतलवातवीजिताङ्गावलदेववासुदेवा', इति सम्बन्धः। कथम्भूताभिश्चामराभिः ? इत्याह— 'पवरगिरिकुहरविहरणसमुद्धियाहिं' प्रवर-गिरिकुहरविहरणसमुद्धृताभिः=प्रवरगिरिणां यानि कुहराणि=गह्वराणि तेषु यद्

फिर वे कैसे होते हैं सो कहते हैं—'ताहि य' इत्यादि०।

टीकार्थः— (ताहि य उक्खिप्पमाणाहिं चामराहिं सुहसीयल-वाय वीइयंगा) इन वक्ष्यमाण विशेषणों से विशिष्ट ढोले गये चामरों की सुखप्रद शीतल वायु से जिनका अंग वीजित होता रहता है ऐसे बलदेव और वासुदेव भी काम से अतृप्त ही मरण को प्राप्त करते हैं-ऐसा संबंध यहां भी लगा लेना चाहिये। अब सूत्रकार चामरों के विशेषणो को स्पष्ट करते हैं — (पवरगिरिकुहरविहरणसमुद्धियाहिं) जब चमरी गाय उत्तम पर्वतों की गुफाओं में विचरण करती हैं तब वह

હજી તેઓ કેવા હોય છે તેનું વધુ વર્ણન કરે છે—"ताहिय" ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—"ताहि य उक्खिप्प माणाहिं चामराहिं सुहसीयलवायवीइ यंगा" આ પ્રમાણેના વિશેષણોવાળા, ચામરોવડે ઢોળવામાં આવતા આનંદદાયક શીતળવાયુ વડે જેમના અંગો વાયુનું સેવન કરી રહેલાં છે એવા તે બળદેવ અને વાસુદેવ પણ કામભોગથી અતૃપ્ત રહીને જ મૃત્યુને પંથે પળે છે એવો સંબંધ અહી પણ સમજી લેવો. હવે સૂત્રકાર ચામરોનાં વિશેષણોની સ્પષ્ટતા કરે છે. "पवरगिरिकुहरविहरणसमुद्धियाहिं" જ્યારે ચમરી ગાય ઉત્તમ પર્વતોની

विहरणं चमर्य्याख्यगवीनां विचरणं तस्मिन् काले समुद्धृताः कण्टकवृक्ष संलग्नभयाद् ऊर्ध्वीकृता यास्तास्तथा, ताभिः, 'निरुवहयचमरिपच्छिमसरीर-संजायाहिं' निरुपहतचमरीपश्चिमशरीरसञ्जाताभिः = निरुपहतानां = नीरोगाणां चमरीणां=गो विशेषाणां पश्चिमशरीरे=पुच्छप्रदेशे सञ्जाताभिः = समुत्पन्नाभिः 'अमइलसियकमलविमुकुलुज्जलियरययगिरिसिहरविमलससिकिरणसरिस कलधोयनिम्मलाहिं' अमलिनसितकमलविमुकुलोज्ज्वलितरजतगिरिशिखर—विमल-शशिकिरणसदृशकलधौतनिर्मलाभिः तत्र 'अमइलसियकमल' अमलिनसित-कमलम्=अमलिन=अम्लानं शीतातपादिभिः यत् सितकमलं=श्वेतकमलं पुण्डरीकं तच्च विमुकुलं=विकसितं तथा 'उज्जलियरययगिरिसिहर' उज्ज्वलितरजतगिरि शिखरम्=उज्ज्वलितं=भास्वरं यद् रजतगिरिशिखरं तथा विमलशशिकिरणाः = विमलाः=निर्मला ये शशिनः=चन्द्रस्य किरणाश्च तत्सदृशाः कलधौतवत्=शुद्धरजतव-न्निर्मलाः=धवलायास्तास्तथा ताभिः—अम्लानविकसितश्वेतकमलोज्ज्वलरजतपर्वत-शिखरविमलचन्द्रकिरणशुद्धरजतवदुज्ज्वलाभिरित्यर्थः । तथा 'पवणाइयचव-

---

उस समय कण्टकमय वृक्षों में लग जाने के भय से अपनी पूंछ को ऊंचा उठा लेती है—इसलिये यहां प्रकट किया रहा है कि जो चामर चमरी गायकी पूंछ में उत्पन्न होने के कारण प्रवरगिरि के कुहरों में भ्रमण काल के समय में ऊचे उठाये गये थे तथा (निरुवहयचमरीपच्छिमसरीर-संजायाहिं) जो निरुपहत—निरोग अवस्थावाली चमरी गायों की पूंछ में उत्पन्न हुए हैं, तथा (अमइलसियकमलविमुकुलुज्जलिय रययगिरि-सिहरविमलससिकिरणसरिसकलधोयनिम्मलाहिं) जो शीत आतप आदिसे म्लान नहीं हुए विकसित श्वेत कमल के समान, भास्वर, रजत गिरि के शिखर के समान, निर्मलचंद्र की किरणों के समान, एवं शुद्ध चांदी के समान निर्मल होते हैं। तथा (पवणा हयचवल चलिय सललि-

---

ગુફાઓમાં ફરતી હોય છે ત્યારે કાંટાળાં વૃક્ષોમા ભરાઇ જવાની બીકે તે પોતાની પૂંછડીને ઊંચી રાખે છે. તે કારણે અહીં એમ બતાવવામાં આવ્યું છે કે જે ચામર ચમરી ગાયની પૂછડીમા ઉત્પન્ન થવાને કારણે ઉત્તમ પર્વતની ગુફા-ઓમાં ભ્રમણ કરતી વખતે ઊંચા ઉઠાવેલા હતા, તથા "निरुवहयचमरी-पच्छिमसरीरसंजायाहिं" જે નીરોગી શરીર વાળી ચમરી ગાયની પૂંછડીમાં ઉત્પન્ન થયેલ છે, તથા "अमइल-सियकमल-विमुकुलुज्जालिय-रययगिरिसिंहर-विमलससि-किरणसरिसकलधोयनिम्मलाहिं" જે શીત, તાપ આદિના ઝાંખા ન પડેલ વિકસિત શ્વેત કમળ સમાન, ભાસ્વર, રજતગિરિના શિખર સમાન, નિર્મળ ચન્દ્રનાં કિરણો સમાન, અને શુદ્ધ ચાંદીના જેવાં નિર્મળ હોય છે,

लचलियसललियनच्चियवीयपसरियखीरोदगपवरसागरुप्पूरचवलाहिं ' पवनाहत-चपलचलितसललितनर्तितवीचिप्रसृतक्षीरोदकप्रवरसागरोत्पूरचपलाभिः = तत्र पवनेन = वायुना आहतः = घट्टितः, अतएव चपलं यथास्यात्तथा चलितः सललितं=सविलसितं च नर्तितः=गतिविशेषं प्राप्तः, तथा वीचिभिः=तरङ्गैः प्रसृतः क्षीरोदकप्रवरसागरस्य = क्षीर सागरस्य य उत्पूरः=जलसमूहस्तद्वत् चपलाभिः =चञ्चलाभिः बहुलधवलतरङ्गयुक्तक्षीरसागरनीरप्रवाहवत्प्रतीयमानाभिः, अथ हंसवधूभिरुपमयन्नाह ' माणससरपसरपरिचियावासविसयवेसाहिं ' मानससरः प्रसरपरिचितावासविशदवेषाभिः=मानससरसः प्रसरे=विस्तृतप्रदेशे परिचितः=अभ्यस्त आवासः=निरन्तरनिवासः, अतएव विशदः=धवलश्च वेषो=वर्णो यासां तास्तथाविधाभिः, ' कणगगिरिसिहरसंसियाहिं ' कनकगिरिशिखरसंश्रिताभिः = सुमेरुतटविहारिणीभिः, अतएव ' ओवाउप्पायचवलजवियसिग्घवेगाहिं ' अव-

यनच्चियइयपसरीयखीरोदगपवरसागरुप्पूरचवलाहिं) वायु से आहत होने के कारण अत्यंत चपल बने हुए और इसी से जो मानो विलास-सहित होकर नृत्य कर रहा है, तथा तरङ्गोने जिसे विशेष विस्तृत कर दिया है ऐसे क्षीरसागर के प्रवाह के समान जो चंचल हैं अर्थात् अत्यंत धवल तरंगों से युक्त क्षीरसागर के प्रवाह के जैसे जो दिखलाई दे रहे हैं। तथा (माणससरपसरपरिचियावासविसयवेसाहिं) जो हंसवधू के समान प्रतीत हो रहे हैं, हंसी मानसरोवर में रहती है-इसी विषय को लेकर सूत्रकार कहते हैं कि मानसरोवर के विस्तृत प्रदेश में अभ्यस्त निरन्तर निवास के वश से जिन हंसवधुओं का वर्ण धवल हो गया है, और (कणगगिरिसिहरसंसियाहिं) जो सुमेरुपर्वत के तटों पर विहार करती हैं, तथा (ओवाउप्पायचवलजवियसिग्घवेगाहिं)

तथा " पवणाहयचवल-चलिय-सललिय-नच्चियवीइ-पसरिय-खीरोदगपवर-सागरुप्पूरचवलाहिं " પવન આવવાને કારણે ચપલ બનેલ અને તે કારણે જાણે વિલાસી બનીને નૃત્ય કરતાં હોય તેવાં તથા તરંગોએ જેને વધારે વિસ્તૃત કરી નાખેલ છે એવા ક્ષિર સાગરના પૂર સમાન જે ચંચળ છે.—એટલે કે સફેદ તરંગોથી યુક્ત ક્ષીરસાગરના પ્રવાહ જેવા જે કોઈ દેખાઈ રહ્યાં છે, તથા " माणससर-पसर-परिचियावासविसय-वेसाहि " જે હંસલીઓના જેવા લાગે છે, હંસલી માનસરોવરમાં રહે છે. તે વિષયને અનુલક્ષીને સૂત્રકાર કહે છે કે માનસરોવરના વિસ્તૃત પ્રદેશમાં હંમેશાં રહેવાને કારણે ને હંસલીઓના રંગ શ્વેત થઈ ગયો હોય છે, અને—" कणगगिरिसिहरसंसियाहिं " જે સુમેરુ પર્વતનાં શિખરો પર વિહાર કરે છે, તથા " ओवाउप्पायचवलजवियसिग्घ-

पातोत्पात चपल जवित शीघ्रवेगाभिः=अवपातः-ऊर्ध्वीभूयाधःपतनम्, उत्पातः= अधोभूत्वोर्ध्वगमनं, तयोः चपलः=चञ्चलः जवितः=वेगयुक्तः अतएव शीघ्रःवेगो= गतिर्यासां तास्तथा ताभिः 'हंसवधूयाहिं चेव' हंसवधूभिरिव=हंसीभिरिव- हंसीवत्प्रतीयमानाभिरित्यर्थः। पुनः कथम्भूताभिश्चामराभिः ? इत्याह—'णाणा- मणिकणगमहरिहतवणिज्जुज्जविचित्तदंडाहिं' नानामणि ·कनक महार्हतपनी- योज्ज्वलविचित्रदण्डाभिः-तत्र नानाविधामणयः = चन्द्रकान्तादयः कनकं=पीत- वर्ण सुवर्ण तथा महार्हं=बहुमूल्यं यत् तपनीयं च=रक्तवर्ण सुवर्ण तैरेतैरुज्ज्वलाः= भास्वराः विचित्राः = मणिसुवर्णादीनां सम्मिश्रितकान्तिभिश्चित्रः विचित्रा दण्डा यासां तास्तथा ताभिः विविधमणिखचितरक्तपीतसुवर्णदण्डयुक्ताभिः, यथा सुवर्ण- गिरिशिखरे स्थिता हंस्यः शोभमाना समुल्लसति तथा सुवर्णगिरिस्थानीय सुवर्ण- दण्डोपरिस्थिताभिः धवलत्वात् हंसीभिरितिभावः। तथा 'सललियाहिं' सललि-

---

अवपात-ऊँचे जाने में जिन की गति बहुत अधिक वेग को लिये हो रही है ऐसी (हंसवधूयाहिं चेव) हस वधूओं के समान जो चामर अपनी शुभ्रता के कारण ज्ञात हो रहे हैं। तथा (णाणामणिकणगमह- रिह तवणिज्जुज्जलविचित्तदंडाहिं) जिन चामरों के दंड चंद्रकान्त आदि नाना प्रकार की मणियों की कांति से, पीतसुवर्ण की प्रभा से, एवं बहुमूल्य तपे हुए रक्तवर्ण वाले सुवर्णकी आभासे-इन सबकी परस्पर मिश्रित कान्ति च्छटा से-अधिक उज्जल और रँग विरँगे मालूम दे रहें हैं, अर्थात् जिस प्रकार सुमेरुपर्वत के तट पर स्थित हँस कामनियाँ सुहावनी लगती हैं उसी प्रकार ये चामर भी सुवर्णगिरि के शिखर-तट जैसे दंडों पर स्थित होने के कारण अपनी धवलता के कारण हंसनियों के समान प्रतीत होते हैं (सललियाहिं) ये चामर

वेगाहिं" ઊંચેથી નીચે આવવામા અને નીચેથી ઊંચે જવામા જેની ગતિ ઘણી ઝડપી હોય છે એવી" हंसवधूयाहि चेव " હંસવધૂઓ (હંસલીઓ) જેવાં જે ચામરો પોતાની શ્વેતતાને કારણે લાગે છે. તથા " णाणामणिकणगमहरिह- तवणिज्जुज्जलविच्चित्तदंडाहिं " જે ચામરોના દંડો ચન્દ્રકાન્ત આદિ વિવિધ પ્રકારના મણીઓની કાંતિથી, પીતસુવર્ણની પ્રભાથી, અને તપાવેલા બહુમૂલ્ય- વાન રક્તવર્ણના સુવર્ણની આભાથીએ બધાની પરસ્પર મિશ્રિત કાન્તિથી-અધિક ઉજ્જવળ અને રંગ બે રંગી લાગે છે, એટલે કે જેમ સુમેરુ પર્વતનાં શિખરો પર રહેલી હંસલીઓ સુંદર લાગે છે એ જ પ્રમાણે તે ચામરો પણ સુવર્ણ ગિરિનાં શિખર જેવાં દંડો ઉપર આવેલ હોવાથી પોતાની શ્વેતતાને કારણે હંસલીઓ જેવાં લાગે છે. " सललियाहिं " તે ચામરો લાલિત્ય વાળાં હતાં.

ताभिः = लालित्ययुक्ताभिः, 'नरवइ सिरिसमुदयप्पगासणकराहिं' नरपति श्री समुदयप्रकाशकराभिः=राजलक्ष्मी प्रकर्ष सूचिकाभिः, 'वरपट्टणुग्गयाहिं' वरपत्त नोद्गताभिः = शिल्पिप्रधाननगरनिर्मित्ताभिः, 'समिद्धरायकुलसेवियाहिं' समृद्धराजकुलसेविताभिः = पितृपितामहादि परम्परया समागताभिः, तैः परिधृताभिरित्यर्थः, 'कालागुरुपवरकंदुरुक्कतुरुक्कधूवतवासविसिट्ठगंधुद्धूयाभिरामाहिं' कालागुरुप्रवरकुन्दुरुष्कतुरुष्कधूपविशिष्टगन्धोद्धूताभिरामाभिः = तत्र काला-गुरुः=कृष्णागुरुः प्रवरं=प्रधानं-सर्वोत्तमं, कुन्दुरुष्कं=चीडाख्यगन्धद्रव्यं, तुरुष्कं= तुरुष्कदेशोद्भवं-सिह्लकाभिधगन्धद्रव्यं 'लोबान' इति भाषा प्रसिद्धम्, इत्येतल्ल-क्षणा यो धूपाः=धूपविशेषास्तेषां यो वासः=वासना तेन विशिष्टः=विस्पष्टो गन्धः सः उद्धूतः=परितो विसारी तेन अभिरामाः=मनोज्ञा यास्तास्तथा ताभिः, नाना-विधधूपगन्धयुक्ताभिरित्यर्थः 'चिल्लियाहिं' देदीप्यमानाभिः देशीशब्दोऽयम्,

---

लालित्य से युक्त थे। तथा (नरवइसिरिसमुदयप्पगासणकराहिं) जिनके ऊपर ये ढोरे जाते हैं उनकी ये राजलक्ष्मी के प्रकर्ष के सूचक होते हैं। तथा (वरपट्टणुग्गयाहिं) साधारण स्थानों में ये नहीं बनाये जाते हैं किन्तु जो शिल्पिप्रधान नगर होते हैं उन्हीं में ये निर्मित होते हैं। तथा (समिद्धरायकुलसेवियाहिं) बलदेव और वासुदेव पर जो चामर ढोरे जा रहे थे-वे उनकी वंशपरंपरा से चले हुए आ रहे थे। (कालागुरुपवरकुंदुरुक्क तुरुक्कधूववासविसिट्ठगंधुद्धूयाभिरामाहिं) ये चामर कालागुरु उत्तम चीडा नामकगंधद्रव्य तथा लोबान को जलाकर उनकी गंध से वासित किये हुए थे, अतः इनकी चारों ओर सुगंध निकल कर फैल रही थी उससे ये बड़े मनोहर लगते थे। तथा (चिल्लियाहिं)

તથા "नरवइसिरिसमुदयप्पगासणकराहिं" જેમની ઉપર તે ઢોળાય છે, તેમની રાજલક્ષ્મીની વિપુલતાના તે સૂચક હોય છે. તથા "वरपट्टणुग्गयाहिं" સાધા-રણ સ્થાનોમાં તે બનતા નથી પણ જે શિલ્પ પ્રધાન નગરો હોય છે, તેમાં જ તે ચામરો બનાવવામાં આવે છે. તથા "समिद्धरायकुलसेवियाहिं" બળદેવ અને વાસુદેવ પર જે ચામરો ઢોળવામાં આવતાં તે તેમની વંશપરંપરાથી ચાલ્યા આવતાં હતા. "कालागुरु-पवरकुंदुरुक्क-तुरुक्क-धूववास-विसिट्ठ-गंधुद्धूयाभि-रामाहिं" તે ચામરોને કાળા અગરુ, ઉત્તમ ચીડા નામનું સુગંધીદાર દ્રવ્ય, તથા લોબાનનો ધૂપ દઈને તેમના ગંધથી સુગંધ યુક્ત બનાવ્યાં હતાં, તેથી તેમની સુગંધ ચોમેર ફેલાઈ રહી હતી તેથી તે મનોહર લાગતાં હતાં. તથા

'उभओ पासंपि' उभयोरपि पार्श्वयोः, 'उक्खिप्पमाणाहिं' उत्क्षिप्यमाणाभिः= वीज्यमानाभिः–सञ्चाल्यमानाभिरित्यर्थः, 'चामराहिं' चामराभिः=बालव्यजनैः, चामरशब्दःस्त्रीलिङ्गोऽपि 'चामरं चमराऽपि च' इति मेदनी कोषात्, 'सुहसीयलवाय' सुख शीतलवाताभिः सूत्रे लुप्तविभक्तिकं पदम्, सुखदः शीतलश्च वातः=वायुर्यासां तास्तथा ताभिः 'वीइयंगा' वीजीताङ्गाः=वीजीतान्यङ्गानि येषां ते तथा 'अजिया' अजिताः=अन्यैरपराजिताः 'अजियरहा' अजितरथाः=अपराजितरथाः 'हलमुसलकणगपाणी' हलमुसलकनकपाणयः= हलं च मुसलं च कनकं=कनकाभरण वलय इत्यर्थः=हस्ते येषां ते तथा हलमुसल कनक पाणयो बलदेवाः। वासुदेवाश्च 'संख चक्कगयसत्तिणंदगधरा' शङ्ख चक्रगदाशक्ति नन्दनधराः=शङ्ख =पाञ्चजन्याभिधःचक्रं=सुदर्शनाख्यं, गदा=कौमोदकी शक्तिः=शस्त्रविशेषः, नन्दकश्च=खड्गः, एतान् धरन्ति ये ते तथा, वासुदेवविशेषणमिदं, 'पवरुज्जलसुकयविमलकोथुभ किरीडधारी' प्रवरोज्ज्वलसुकृतविमलकौस्तुभकिरीटधारिण =प्रवरोज्ज्वलः =

ये अपनी कान्ति से बहुत अधिक देदीप्यमान हो रहे थे। ऐसे ये (चामराहिं) चामर कृष्ण और बलदेव की (उभओ पासपि) आजू बाजू में–दोनों पार्श्वभागो में–ढोले जा रहे थे। (सुहसीयल वायवीइयंगा) इनसे निर्गत सुखद और शीतल वायु से इनका शरीर वींजा जाता था (अजिया) ये बलदेव और वासुदेव अन्य व्यक्तियों द्वारा अपराजित थे। (अजियरहा) इनके रथ को रोकने की किसी भी व्यक्ति में शक्ति नहीं थी, इसलिये ये अजित रथ थे। (हलमुसलकणगपाणी) बलदेव के हाथ में हल मुसल तथा सोने के आभरण अर्थात् कडे रहते थे। पांचजन्य नामका शंख, सुदर्शन नामका चक्र, कौमोदकी नामकी गदा, शक्ति नामका शस्त्र और नंदक नामकी तलवार, ये सब कृष्ण वासुदेव के पास रहते थे। अत्यंत भास्वर, (पवरुज्जलसुकयविमलको-

---

"चिल्लियाहिं" तेओ तेमनी कान्तिथी घणा ज तेजस्वी लागतां हतां. एवा ते "चामराहिं" चामरो कृष्ण अने बळदेवनी "उभयो पासंपि" आजुबाजुए बन्ने पडखे ढोळवामां आवतां हतां. "सुहसीयलवायवीईयंगा" तेनाथी उत्पन्न थतो शीतळ अने सुखद वायु तेमनां शरीरपर वींझातो हतो. "अजिया" ते बळदेव अने वासुदेव बीजा लोको द्वारा अपराजित हता. "अजियरहा" तेमना रथोने रोकवानी ताकात कोई पण व्यक्तिमां न हती. तेथी तेओ अजितरथ हता. "हलमुसलकणगपाणी" बळदेवना हाथमां हळ, मुसळ अने सोनाना कडां रहेतां हतां पांचजन्य नामनो शंख, सुदर्शनचक्र, कौमोदकी नामनी गदा, शक्ति नामनुं शस्त्र अने नंदक नामनी तलवार ए बधुं कृष्ण वासुदेव पासे रहेतुं हतुं. "पवरुज्जलसुकय–विमल–कोथुभ–किरीडधारी"

अतिभास्वरः सुकृतः=सुष्ठु रचितो विमलः=स्वच्छो यःकौस्तुभो मणिविशेपस्तं तथा किरीटं=मुकुटं च धारयन्ति ये ते तथा इदमपि वासुदेव विशेपणम् । 'कुंडल उज्जोवियाणणा' कुण्डलोद्द्योतिताननाः=कुण्डलैः=कर्णभूपणैः-उद्द्योतितं=प्रकाशित-माननं=मुखं येषां ते तथा, 'पुंडरीयणयणा' पुण्डरीकनयनाः = कमलाक्षाः' एगा-वलिकंठरइयवच्छा' एकावलीकण्ठरचितवक्षसः=एकावलीकण्ठे रचिताः=कण्ठाव-लम्बिनी सतीकृता वक्षसि=वक्ष स्थले येषां ते तथा 'सिरिवच्छसुलंछणा' श्री-वत्ससुलाञ्छनाः=श्रीवत्स.=श्रीवत्सःस्वस्तिकविशेषः स एव शोभनं लाञ्छनं येषां ते तथा 'वरजसा' वरयशसः=विश्रुतकीर्तयः 'सव्वोउयसुरभिकुसुमरइय--पलंव सोहंत-वियसत-विचित्तवणसालरइय-वच्छा' सर्वर्तुकसुरभिकुसुमरचित--प्रलम्ब शोभमानविकसद्विचित्रवनमाला रचितवक्षसः=सर्वर्तुकैः=सर्वर्तुभवैः सुरभिकुसुमैः= सुगन्धिपुष्पैः रचिताः=निर्मिता प्रालम्बशोभमाना-प्रलम्बमानत्वेन सुशोभना

शुभकिरिडधारी) अत्यन्त भास्वर अच्छी तरह से रचित, तथा स्वच्छ ऐसा कौस्तुभ रत्न तथा किरीट-मुकुट इन्हें कृष्ण वासुदेव धारण करते थे। तथा (कुंडल उज्जोइयाणणा) इन दोनों भाईयों का मुख कर्णा-भूषणों से सदा प्रकाशित रहता था। (पुंडरीयणयणा) इनके नयन पुंडरिक- (श्वेतकमल) जैसे शोभायमान थे। (एगावलिकंठरइयवच्छा) कंठ में जो ये एकावली हार पहिने हुए थे वह छाती तक लटकता था। (सिरिवच्छ सुलंछणा) श्रीवत्स नामक स्वस्तिक विशेष चिह्न इनके वक्षस्थल में था (वरजसा) चारों तरफ इनकी कीर्त्ति फैली हुई थी, (सव्वोउयसुरभिकुसुमरइयपलंबसोहंतवियसंतविचित्तवणमालरइयवच्छा) इनके वक्षःस्थल पर जो वनमाला लटक रही थी वह समस्त ऋतु संबंधी सुरभितपुष्पों से गुथी हुई थी, एवं बहुत लंबी थी, इसलीये बड़ी

અત્યંત ભાસ્વર-સુંદર રીતે તૈયાર કરેલ, સ્વચ્છ કૌસ્તુભ રત્ન તથા કિરીટમુ-ગટ કૃષ્ણવાસુદેવ ધારણ કરતા હતા. તથા "कुडलउज्जोइयाणणा" તે બન્ને ભાઈઓનાં મુખ કર્ણભૂષણોથી સદા પ્રકાશિત રહેતાં હતાં, "पुंडरीयणयणा" તેમનાં નયન પુંડરીક (સફેદ કમળ) જેવાં સુંદર હતાં. "एगावलीकंठरइयवच्छा" કંઠમાં જે એક સરવાળો હાર પહેર્યો હતો તે છાતી સુધી લટકતા હતા. "सिरिवच्छसुलंछणा" તેમના વક્ષસ્થળ ઉપર શ્રી વત્સ નામનું સ્વસ્તિક વિશેષ ચિહ્ન હતું, "वरजसा" તેમની કીર્તિ ચોમેર વ્યાપી હતી, "सव्वोउय-सुर-भिकुसुमरइय-पलब-सोहंत-वियसंत-विचित्तवणमाल-रइयवच्छा" તેમના વક્ષ.સ્થળ પર જે પુષ્પમાળા લટકતી હતી તે બધી ઋતુઓના સુગંધિદાર ફૂલો વડે ગુંથેલી હતી, અને બહુ લાંબી હતી, તેથી તે ઘણી સુંદર લાગતી હતી, તથા

विकसन्ती–विकसायमाना विचित्रा=नानारूपकुसुमग्रथितत्वाच्चित्ररूपा या वनमाला सा रचिता वक्षसि=वक्षःस्थले येषां ते तथा, 'अट्ठसयविभत्तलक्खणपसत्थ सुंदरविराइयंगुवंगा' अष्टशतविभक्तलक्षणप्रशस्तसुन्दरविराजिताङ्गोपाङ्गा = अष्टशतविभक्तलक्षणैः–अष्टोत्तरशतप्रकारलक्षणैः प्रशस्तैः = श्लाघनीयैः सुन्दरैः=नयनाह्लादजनकैः विराजितान्यङ्गोपाङ्गानि येषां ते तथा अष्टशतशुभलक्षणलक्षित शरीरा इत्यर्थः, 'मत्तगयवरिंदललियविक्कमविलसियगई' मत्तगजवरेन्द्रललित विक्रमविलसितगतयः=मत्तगजवरेन्द्रस्य=ऐरावतस्येव ललितः-सुविलासः यो विक्रमः चङ्क्रमण–गमनं तद्वत् , विलसिता=विलासयुक्ताः गतिर्येषां ते तथा 'कडिसुत्तगनीलपीयकोसेज्जवाससा' कटिसूत्रकनीलपीतकौशेयवाससः = कटिसूत्रकानि = कटिसूत्रप्रधानानि नीलपीतानि कौशेय वासांसि=कौशेयवस्त्राणि 'रेशमीवस्त्र' इति भाषा प्रसिद्धानि येषां ते तथा नीलाम्बरा बलदेवाः, पीताम्बराः वासुदेवाः इति बोध्यं 'पवरदित्ततेया' प्रवरदीप्ततेजसः = महातेजस्विनः, 'सारयण-

सुहावनी लगती थी, तथा विकसायमान थी, तथा विविध प्रकार के पुष्पों से ग्रथित होने के कारण वह रँग विरँगी थी, । (अट्ठसयविभत्तलक्खणपसत्थसुंदरविराइयंगुव्वंगा) प्रशस्त–श्लाघनीय–एवं सुन्दर–नेत्रों को आह्लादजनक ऐसे एक सौ आठ (१०८) भिन्न२प्रकार के लक्षणों से जिनके अंग और उपांग सुशोभित होते थे, तथा (मत्तगयवरिंद ललियविक्कमविलसियगई) ऐरावन के विलासयुक्त गमन के समान जिनकी गति विलास सहित होती थी, तथा (कडिसुत्तगनीलपीयकोसेज्जवाससा) जिनके पहिरे हुए नीले पीले रेशमी वस्त्रों (पीत अम्बर धारी वासुदेव एवं नील अम्बर धारी बलदेव होते हैं) पर कटिसूत्र बहुत ही अधिक सुहावना प्रतीत होता है–अर्थात् जिन के नीले पीले रेशमी वस्त्र और कटिसूत्र प्रधान होते हैं। तथा (पवरदित्तत्तेया) जो

વિકસિત હતી, તથા વિવિધ જાતનાં ફૂલોમાથી ગુથેલી હોવાથી રંગબેરંગી હતી. "अट्ठसयविभत्त–लक्खणपसत्थ–सुदर–विराइयंगुव्वंगा" પ્રશસ્ત–વખાણવાલાયક અને સુંદર નેત્રોને આનંદદાયક એવા એક સો આઠ (૧૦૮) જુદા જુદા પ્રકારનાં લક્ષણોથી જેમનાં અંગ ઉપાંગો શોભતાં હતાં, તથા "मत्तगयवरिदललियविक्कमविलसियगई" ઐરાવતના વિલાસયુક્ત ગમન સમાન જેમની ગતિ વિલાસયુક્ત હતી, તથા "कडिसुत्तगनीलपीयकोसेज्जवाससा" જેમણે પહેરેલા વાદળી અને પીળાં વસ્ત્રો "પીતાંબર ધારી વાસુદેવ અને નીલાંબર ધારી બળદેવ" પર કટિસૂત્ર અત્યંત સુંદર લાગતું હતુ. તથા "पवरदित्ततेया" જે મહાતેજસ્વી હતા તથા "सारयणव–थणिय–महुर–गभीर–णिद्ध घोसा"

वथणियमहुरगंभीरणिद्धघोसा ' शारदनवस्तनितमधुरगम्भीरस्निग्धघोषाः = शारदं=शरत्कालिकं यन्नवस्तनितं = नूतनो मेघध्वनिः तद्वन्मधुरः-कर्णसुखकरः गम्भीरः स्निग्धः=स्नेहजनकः घोषः=शब्दो येषां ते तथा, 'नरसीहा' नरसिंहाः= नरेषु सिंहाइव, एतत्साधर्म्यमाह—' सीहविक्कमगई ' सिंहविक्रमगतयः= सिंहस्येव विक्रमः=पराक्रमः गतिश्च येषां ते तथा ' अत्थमियपवररायसीहा ' अस्तमित प्रवरराजसिंहाः=अस्तमिताः=अस्तं प्रापिताः पराजिताः प्रवराः-विशिष्टाः राजसिंहाः=शूरराजानो यैस्ते तथा। ' सोम्मा ' सौम्याः=सौम्यरूपाः ' बारवई-पुण्णचंदा ' द्वारावती पूर्णचन्द्राः=द्वारकापुर्याः आह्लादकत्वात् पूर्णचन्द्र स्वरूपाः, ' पुव्वकयतवप्पभावा ' पूर्वकृततपःप्रभावात् = पूर्वभवकृततपो माहात्म्यात् ' नि-विट्ठसंचियसुहा ' निविष्ट सञ्चितसुखाः=निविष्टानि=लब्धानि सञ्चितानि=पूर्व-भवोपार्जितानि सुखानि यैस्ते तथा ' अणेगवाससयमाउव्वंतो ' अनेक वर्षशता-युष्मन्तःवर्षसहस्राद्यायुष्काः, 'भज्जाहिय जाणवयप्पहाणाहिं ' भार्याभिश्च जनपद-

महातेजस्वी होते हैं तथा (सारयणवथणियमहुरगंभीरणिद्धघोसा) जिनका बोलना शरदकालीन नवीनमेघध्वनि के जैसा कर्णसुखकर एवं स्निग्ध-स्नेहजनक होता है, तथा (नरसीहा) जो मनुष्यों के बीच में सिंह के जैसे होते हैं तथा (सीहविक्कमगई) जिनका पराक्रम और गमन सिंह के समान होता है, तथा (अत्थमियपवररायसीहा) जो अपने पराक्रम से-प्रवर राजसिंहों को अस्तमित-पराजित-कर देते हैं। तथा जो (सोम्मा) सौम्यरूप होते हैं, एवं (बारवईपुण्णचंदा) द्वारकापुरी के आह्लादक होनेके कारण जो पूर्णचन्द्रस्वरूप होते हैं (पुव्वकयतवप्पभावा-निविट्ठसंचियसुहा) तथा-जो पूर्वकृत तप के प्रभाव से पहिले भवों में उपार्जित सुखों को प्राप्त करते हैं, तथा (अणेगवाससयमाउव्वंता) जो सैकड़ो वर्षो की आयुवाले होते हैं, तथा (भज्जाहिय जणवयप्पहाणा-

જેમના શબ્દો શરદઋતુના મેઘધ્વનિ જેવા મધુર અને સ્નિગ્ધ-સ્નેહ જનક હતા, તેથી " नरसीहा " જે માણસોની વચ્ચે સિંહ સમાન હતાં તથા " सीह-विक्कमगई " જેમની ગતિ અને જેમનું પરાક્રમ સિંહ સમાન હતાં, તથા " अत्थमियपवररायसीहा " જે પોતાના પરાક્રમ વડે શ્રેષ્ઠ રાજસિંહોને મહાત કરતા હતા તથા જે " सोम्मा " સૌમ્ય હતા, અને " बारवई पुण्णचंदा " દ્વારિકાનગરીને આનંદ આપનાર હોવાને કારણે જે પૂર્ણચન્દ્ર હતા, " पुव्वकय तवप्पभावा निविट्ठसञ्चियसुहा " તથા જે પૂર્વે કરેલાં તપના પ્રભાવથી આગ-ળના ભવોમા ઉપાર્જિત સુખો પ્રાપ્ત કરે છે તથા " अणेगवाससयमाउव्वंतो " જે સેંકડો વર્ષના આયુષ્ય વાળા હોય છે, તથા " भज्जाहियजणवयप्पहाणाहिं "

प्रधानाभिः=देश रत्न रूपाभिः = 'लालियंता' लाल्यमानाः = विलास्यमानाः 'अतुलसद्दफरिसरसरूवगंधेयअणुभवित्ता' अतुलशब्दरसरूपगन्धांश्च अनुभूय 'ते वि' तेऽपि=तादृशा अपि 'अवितित्ता कामाण' अवितृप्ताः कामानां=कामभोगेषु तृप्तिरहिता एव 'उवणमंति मरणधम्मं' मरणधर्ममुपनमन्ति ॥ सू० ८ ॥

पुनः केऽब्रह्मसेविनः ? इत्याह 'भुज्जो मंडलिय' इत्यादि—

मूलम्—भुज्जो मंडलियणरवरिंदा सबला सअंतेउरा सपरिसा सपुरोहियाऽमच्चडंडणायगसेणावइ – मंतिणीइ – कुसला णाणामणि-रयण-विउलधणधण्णसंचय-निहिसमिद्धकोसा, रज्जसिरिविउलमणुभवित्ता विक्कोसंता बलेणमत्ता ते वि उवणमंति मरणधम्मं अवितत्ता कामाणं ॥ सू० ९ ॥

टीका—'भुज्जो' भूय =पुनरपि 'मंडलिय णरवरिंदा' माण्डलिकनरवरेन्द्राः=मण्डलाधिपतयः (सबला) सबलाः=सेना सहिताः 'स अंतेउरा'

हि लालियंता) जो जनपदप्रधानभूत देशों में रत्नरूप से मानी गई अर्थात्–सर्वोत्कृष्ट स्त्रियों के साथ आनंद करते हैं-वैषयिक सुखों को भोगते हैं (तेवि) ऐसे वे बलदेव और वासुदेव भी (अतुलसद्दफरिसरसरूवगंधे य अणुभवित्ता) अतुल शब्द, स्पर्श, रस रूप, एवं गंध रूप विषयोंका अनुभव करके भी (अवितत्तकामाणं) कामभोगों की तृप्तिसे विहीन ही (उवणमंतिमरणधम्मं) मरणधर्मको प्राप्त करते हैं ॥सू०८॥

अब सूत्रकार " और कौन अब्रह्मसेवी होते हैं " इस बात को कहते हैं—'भुज्जो मंडलियणरवरिंदा' इत्यादि० ।

टीकार्थः—(भुज्जो मंडलिय णरवरिंदा) फिर जो मंडलाधिपति

लालियंता" જે મુખ્ય મુખ્ય દેશોમાં રત્નસમાન ગણાતી એટલે કે અનુપમ સ્ત્રીઓ સાથે આનંદ કરે છે વૈષયિક સુખોને ભોગવે છે "ते वि" એવા તે બળદેવ અને વાસુદેવ પણ "अतुलसद्दफरिसरसरूवगंधे य अणुभवित्ता" અનુપમ શબ્દ, સ્પર્શ રસ, રૂપ અને ગંધ રૂપ વિષયોનો ઉપભોગ કરવા છતાં પણ "अवितत्तकामाणं" કામભોગોથી અતૃપ્ત એવી હાલતમાં જ "उवणमति मरणधम्मं" મૃત્યુ પામે છે ॥ સૂ ૮ ॥

હવે સૂત્રકાર બતાવે છે કે બીજા અબ્રહ્મસેવી કોણ હોય છે? "भुज्जो मंडलियणरवरिंदा" ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ–"भुज्जो मंडलियणरवरिंदा" અને જે માંડલિકો હોય છે, તેઓ કેવાં

सान्तः पुराः=सस्त्रीकाः ' सपरिसा ' सपरिषदः=सपरिवाराः 'सपुरोहिया मच्च-डंडणायगसेणावइमंतिणीइकुसला ' सपुरोहितामात्य-दण्डनायकसेनापति मन्त्रि-नीतिकुशलाः = तत्र पुरोहिताः = शान्तिकर्मकारिणः अमात्याः=मन्त्रिणः दण्ड-नायकाः=कोट्टपालादयः सेनापतयः मन्त्रिणश्च कीदृशास्ते ? इत्याह-नीतिकुशलाः नीतौ=सामदामादि रूपायां कुशलाः=निपुणाः, तैः सहिताः ' णाणामणिरयण विउलधणधण्णसंचयनिहिसमिद्धकोसा ' नानामणिरत्नविपुलधनधान्यसञ्चय-निधि समृद्धकोशाः = चक्रवर्तिवर्णने कृतव्याख्यानमिदम् । ' विउलं ' विपुलां = महतीं ' रज्जसिरिं ' राज्यश्रियं=राज्यलक्ष्मीम् ' अणुभवित्ता ' अनुभूय=उपभुज्य ' विक्कोसंता ' विक्रोशन्तः=अन्यान् पीडयन्तः ' बलेण मत्ता' बलेन मत्ताः-बलग-र्विताः, ' ते वि' तेऽपि-मांडलिकादयः, 'अवितत्ता कामाणं' कामानामवितृप्ताः= कामोपभोगेषु तृप्तिरहिता एव, 'उवणमंति मरणधम्मं' मरणधर्ममुपनमन्ति॥सू०९॥

होते हैं, वे कैसे होते हैं ? सो कहते हैं— (सबला) सेना सहित होते हैं, (सअंतेउरा) अंतःपुरसे जो युक्त होते हैं, (सपरिसा) परिवार सहित होते हैं, (सपुरोहियामच्चंडडणायगसेणावइमंतिणीइकुसला) जिनके शांतिकर्म कराने वाले पुरोहित अमात्य, दंडनायक और सेना-पति साम दान आदि रूप राजनीति में कुशल हुआ करते हैं। तथा— (णाणामणिरयणविउलधणधण्णसंचयनिहिसमिद्धकोसा) नानामणि-यों से, रत्नों से, विपुल धन धान्य के संचय से और निधियों से जिन का कोश समृद्ध रहता है, तथा जो (विउलं) विपुल (रज्जसिरिं) राज्यश्री को (अणुभवित्ता) भोग करके (विक्कोसंता) दूसरे व्यक्तियों को रातदिन पीडित किया करनेवाले तथा (बलेण मत्ता) अपने बल से गर्वित बने हुए (ते वि) इस प्रकार के वे भी मांडलिक आदि राजा

હોય છે, તે કહે છે-" सबला " તેઓ સેનાયુક્ત હોય છે, " स अंतेउरा " અંતઃપુરથી યુક્ત હોય છે, " सपरिवारा ".પરિવાર યુક્ત હોય છે, "सपुरोहिया मच्चंडणागसेणावइमंतिणीइकुसला " જેમના શાંતિ કર્મ કરાવનારા પુરોહિત અમાત્ય દંડનાયક અને સેનાપતિ સામ, દામ, આદિ રૂપ રાજનીતિ જાણકાર હોય છે. તથા " णाणामणिरयणविउलधणधण्णसंचयनिहिसमिद्धकोसा " વિવિધ મણિયો, રત્નો, વિપુલ ધન-ધાન્ય આદિના સંચયથી તથા નિધિયોથી જેમનો ખજાનો સદા સમૃદ્ધ રહે છે તથા જે ' विउलं " વિપુલ " रज्जसिरिं " રાજ્ય લક્ષ્મીનો " अणुभवित्ता " ઉપભોગ કરે છે, " विक्कोसंत्ता " બીજા લોકોને રાતદિવસ પીડનારા તથા "बलेण मत्ता " પોતાના બળથી ગર્વિષ્ટ બનેલા એવા

अथ युगलिकानामपि तदेव दर्शयति—' भुज्जो उत्तरकुरु ' इत्यादि—

मूलम्—भुज्जो उत्तरकुरु—देवकुरु—वणविवर—पायचारिणो नरगणा भोगुत्तमा भोगलक्खणधरा भोगसस्सिरीया पसत्थ सोमपडिपुण्णरूवदरिसणिज्जा सुजायसव्वंगसुंदरंगा रत्तुप्पलपत्तकंतकरचरणकोमलतला सुपइट्ठियकुम्मचारुचलणा आणुपुव्वसुसंहयंगुलया उण्णय—तणु—तंब—निद्ध—नखा संठियसुसिलिट्ठगूढगोंफा एणीकुरुविंदवत्तावट्टाणुपुव्वजंघा समुग्गनिमग्गगूढजाणू गयससणसुजायसंनिभोरू वरवारणमत्ततुल्लविक्कमविलासियगई वरतुरगसुजायगुज्झदेसा आइण्णहयोव्वनिरुवलेवा पमुइयवरतुरयसीहअइरेगवट्टिय कडीगंगावत्तगदाहिणावत्ततरंगभंगुररविकिरणबोहियविकोसायंत — पम्ह — गंभीरवियडनाभी साहयसोणंदमुसलदप्पणनिगरियवरकणगच्छरुसरिसवरवइरवलियमज्झा उज्जगसमसंहियजच्चतणुकसिणनिद्धआदिज्जलडहसुकुमाल मउयरोमराई, झसविहगसुजायपीणकुच्छी झसोदरा पम्ह वियडणाभी संनयपासा संगयपासा सुंदरपासासुजायपासामितमाइय पीणरइयपासा अकरंडुय कणगरुयगनिम्मलसुजायनिरुवहयदेहधारी कणगसिलातलपसत्थसमतलउवइयविच्छिण्णपिहुलवच्छा जुयसण्णिभ — पीणरइय

(अवितत्ता कामाणं) कामभोगों में अतृप्त बने रहकर ही (मरणधम्मं उवणमंति) मरणधर्म को प्राप्त करते हैं ॥ सू०९ ॥

“ते वि” ते मांडलिक आदि राजाओ पण “अवितत्ताकामाणं” कामभोगोथी अतृप्त रहीने ज “मरण धम्मं उवणमंति” मृत्यु पामे छे ॥ सू. ९ ॥

पीवर पउट्ठसंठिय सुसिलिट्ठ विसिट्ठलट्ठसुणिचिय थणथिरसुविद्धसंधीपुरवरफलिहवट्टिय भुजा ॥ सू० १० ॥

टीका:—' भुज्जो ' भूयः=पुनरपि ' उत्तरकुरुदेवकुरुवणविवरपायचारिणो ' उत्तरकुरु–देवकुरु – वनविवरपादचारिणः = उत्तरकुरूणां देवकुरुणां च क्षेत्र विशेषाणां यानि वनविवराणि=वनस्थली कन्दरादिस्थानानि तत्र वाहनाभावात् पादैः=चरणैश्चरन्ति ये ते तथा, नरगणाः=युगलिकाः, 'भोगुत्तमा' भोगोत्तमाः= भोगप्रधानाः ' भोगलक्खणधरा ' भोगलक्षणधराः=स्वस्तिकादि भोगसूचकलक्षणवन्तः, ' भोगसस्सिरिया ' भोगसश्रीकाः=भोगशोभाशालिनः ' पसत्थसोम्मपडिपुण्णरूवदरिसणिज्जा ' प्रशस्तसौम्यप्रतिपूर्णरूपदर्शनीयाः=प्रशस्तं सौम्यम्=अतिमनोज्ञं प्रतिपूर्णं=सुपूर्णं रूपम् = आकृतिर्येषां ते तथा ' सुजायसव्वंगसुदरंगा '

अब सूत्रकार " भोगभूमियों के जीवों की भी यही हालत होती हैं " यह कहते हैं–' भुज्जो उत्तरकुरुदेवकुरु '० इत्यादि० ।

टीकार्थः—(उत्तरकुरुदेवकुरुवणविवरपायचारिणो) उत्तरकुरु तथा देवकुरु ये भोगभूमियां हैं । इन भोगभूमियों में वाहन–सवारी–के अभाव से पैरों से ही वहां की वनस्थलियों में–कन्दरा आदि स्थानों में-भ्रमण किया करते हैं । (नरगणा) ये युगलिक मनुष्यगण (भोगुत्तमा) उत्तम भोगवाले होते हैं । (भोगलक्खणधरा) स्वस्तिक आदि जो भोगसूचक चिन्ह हैं उनसे ये विशिष्ट होते हैं । अतः वे (भोगसस्सिरीया) भोगों को भोगना इसी में ये अपनी शोभा मानते हैं । (पसत्थसोम्मपडिपुण्णरूवदरिसणिज्जा) अतिमनोज्ञ पूर्णरूप से ये दर्शनीय-

---

હવે સૂત્રકાર " ભોગ ભૂમિયોના જીવોની પણ એ જ હાલત હોય છે " તે બતાવે છે " भुज्जो उत्तरकुरु देवकुरु " ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—"उत्तरकुरुदेवकुरुवणविवरपायचारिणो" ઉત્તર કુરુ તથા દેવકુરુ, એ ભોગ ભૂમિયો છે. તે ભોગ ભૂમિયોમાં વાહનને અભાવે પગપાળા જ મુસાફરી થઈ શકે છે. તે પ્રદેશમા રહેતા ' नरगणा " યુગલિકો " भोगुत्तमा " ઉત્તમ ભોગ વિલાસ સેવનારા હોય છે. " भोगलक्खणधरा " સ્વસ્તિક આદિ જે ભોગ સૂચક ચિહ્નો હોય છે તેમનાથી તેઓ યુક્ત હોય છે. તેથી તેઓ " भोगसस्सिरीया " ભોગોનો ઉપભોગ કરવામાં જ પોતાની શોભા માને છે " पसत्थ सोम्मपडिपुण्णरूवदरिसणिज्जा " તેઓ અતિશય મનોહર અને સર્વાંગ સુંદર હોય છે. " सुजायसव्वंगसुदरंगा " તેમનાં દરેક શારીરિક અંગ સુંદર અને

सुजातसर्वाङ्गसुन्दराङ्गाः = सुपुष्टसुन्दराऽवयवाः 'रत्तुप्पलपत्तकंतकरचरणकोमल-तला' रक्तोत्पलपत्रकान्तकरचरणकोमलतलाः = रक्तोत्पलस्य पत्रमिव कान्तानि= सुन्दराणि करचरणानां कोमलानि तलानि येषां ते तथा रक्तकमलदलतुल्य सुकोमलसुरक्त हस्तपादतलाः 'सुपइट्ठियकुम्मचारुचलणा' सुप्रतिष्ठितकूर्म-चारुचरणाः = सुप्रतिष्ठितौ = शोभनाकृतिकौ कूर्मवत्=उन्नतत्वेन कच्छपपीठवत् चारु=सुन्दरौ चरणौ येषां ते तथा, तथा 'अणुपुव्वसुसंहयंगुलिया' अनुपूर्वसुसं-हताङ्गुलिकाः=अनुपूर्वं=अनुक्रमेण=गुरुलघुक्रमेण सुसंहताः=सुघटिता अङ्गुलयः= हस्तपादाङ्गुलयो येषां ते तथा गुरुलघुन्यूनाधिकदोषरहिताङ्गुलिकाः 'उण्णय-तणुतंबनिद्धनखा' उन्नततनुताम्रस्निग्धनखाः = तत्र उन्नताः = मध्योन्नताः तनवः=प्रतला स्ताम्राः=ताम्रवर्णाः स्निग्धाः=सुकोमला कान्तियुक्ताश्च नखा येषां ते तथा, 'संठियसुसिलिट्ठगूढगोफा' संस्थित सुश्लिष्टगूढगुल्फाः = संस्थितौ= सम्यक् संस्थानवन्तौ सुश्लिष्टौ=पुष्टत्वात् सुसंहतौ अतएव गूढौ=अलक्षितौ गुल्फौ= घुटिके येषां ते तथा 'एणीकुरुविंदवत्तावट्टाणुपुव्वजंघा' एणी कुरुविन्दवत्ता

बड़े सुन्दर होते हैं। (सुजायसव्वंगसुंदरंगा) इनके प्रत्येक शारीरिक अवयव सुन्दर एवं पुष्ट होते हैं। (रत्तुप्पलपत्तकंतकर चरणकोमलतला) इनके हाथ और पैरों के तलिये रक्तकमल के पत्ते के समान लाल और कोमल होते हैं। (सुपइट्ठियकुम्मचारुचरणा) इनके दोनों चरण शोभन आकृतिवाले एवं कूर्म की पीठ की तरह उन्नत होने से बड़े सुहावने होते हैं (अणुपुव्वसुसंहयंगुलिया) हाथ और पैरों की अंगुलिया इनकी गुरू लघु के क्रम से सुसंगठित रहती हैं, अर्थात् इनके हाथ पैरों की अगुलियां गुरु, लघु-तथा न्यूनाधिक दोष से रहित होती हैं। (उण्णयतणुतंबनिद्धनखा) नख इन्हों के मध्य में उन्नत, पतले और ताम्रवर्ण के होते हैं। तथा कोमल और कान्ति सहित होते हैं। (संठियसुसिलिट्ठगूढगोंफा) इनके दोनों घुटने सुसंस्थान वाले, पुष्ट

પુષ્ટ હોય છે "रतुप्पलपत्तकंतकरचरणकोमलतला" તેમની હથેળી તથા પગનાં તળિયાં લાલ કમલ પત્ર સમાન લાલ રંગના અને કોમળ હોય છે. "सुपइट्ठियकुम्मचारुचरणा" તેમના બન્ને પગ સુંદર ઘાટવાળા, તથા કાચબાની પીઠ જેવા ઉન્નત હોવાથી ઘણા શોભિત હોય છે "अणुपुव्वसुसंहयगुलिया" તેમના હાથપગની આંગળીઓ સુસંગઠિત હોય છે એટલે કે ગુરુતા લઘુતા આદિ દોષોથી રહિત હોય છે, સપ્રમાણ હોય છે "उण्णयतणुतंबनिद्धनखा" તેમના નખ મધ્યમા ઉન્નત, પાતળા, તામ્રવર્ણા, કોમળ અને કાન્તિયુક્ત હોય છે. "संठिय सुसिलिट्ठगूढगोंफा" તેમની બન્ને ઘૂંટણો સંપ્રમાણ, પુષ્ટ અને સંહત તથા

वृत्तानुपूर्वजङ्घाः=तत्र-एणी=हरिणी, तस्याश्चेह जङ्घा ग्राह्या, ते इव, तथा कुरु-विन्दः=तृणविशेषः, 'वत्ता'-अयं-देशीशब्दः स्त्रीलिङ्गः सूत्रवलनकं सूत्रवेष्टन-यन्त्रमित्यर्थः 'ताकला' 'तकली' इति भाषा प्रसिद्धा, ते इव वृत्ते=वर्त्तुले अनुपूर्वे=आनुपूर्व्येण-अनुक्रमेण ऊर्ध्वोर्ध्वस्थूले जङ्घे येषां ते तथा। 'समुग्ग-निसग्गगूढजाणू' समुद्गनिमग्नगूढजानवः=समुद्गः=सपिधानःपिटकस्तद्वत् निमग्ने= पुष्टत्वादन्तः संलीने अत एव गूढे=अलक्षिते जानुनी येषां ते तथा सुपुष्टत्वादनु-पलक्ष्य जानुका इत्यर्थः, 'गयससण सुजायसंनिभोरू' गजश्वसनसुजातसंनिभो-रवः-गजश्वसनं = हस्तिशुण्डादण्डः सः सुजात=सुसंस्थानयुक्तः तस्यसंनिभे= सदृशे ऊरुणी=जानूपरिभागौ येषां ते तथा। 'वरवारणमत्ततुल्लविक्कमविलासि-यगई' वरवारणमत्ततुल्यविक्रमविलासितगतयः = गजेन्द्रः स चासौ मत्तः =

होने से संहत तथा अलक्षित होते हैं। अर्थात् दिखलाई नहीं पड़ते है (एणीकुरुविंदवत्तावट्टाणु पुव्वजंघा) इनकी दोनों जंघाएँ हिरणी की जंघाओं के समान तथा कुरुविंद तृणविशेष के समान एवं वत्ता-तकली के समान वृत्त-गोल२होती हैं। और क्रमशः वे ऊपर२स्थूल रहती है। (समुग्गनिसग्गगूढजाणू) इनके दोनों जानु पिधान-ढक्कन-सहित पिटारे के समान पुष्ट होने के कारण भीतर ही भीतर छुपे हुए होते हैं अर्थात् गहरे होते हैं इसीलिये गूढ रहते हैं। (गय-ससण-सुजाय-संनिभोरू) सुसंस्थानयुक्त हस्तिशुण्डादंड के समान जिनकी दोनों उरू-साथलें होती हैं, अर्थात्-जानु के उपर का भाग जिनका सुसंस्थान युक्त हाथी के शुण्डादंड के समान होता है (वर-वारण-मत्त-तुल्ल-विक्कम-विलासिय-गई) मदमत्त गजेन्द्र के सदृश जिनका विक्रम-पराक्रम और

અલક્ષિત હોય છે, એટલે કે નજરે પડતી નથી. "एणीकुरुविंदवत्तावट्ट णुपुव्वजघा" તેમની બંને જંઘાઓ હરણીની બંને જંઘાઓ સમાન તથા કુરુવિંદ (તૃણવિશેષ) સમાન અને તકલી સમાન ગોળ ગોળ હોય છે, અને તે ઉપર જતાં ધીમે ધીમે વધારે જાડી થતી જાય છે. "समुग्गनिसग्गगूढजाणू" તેમના બન્ને જાનુઓ ઢાંકણાથી યુક્ત પટારાના જેવાં પુષ્ટ હોવાને કારણે અંદરને અંદર છુપાયેલા રહે છે-એટલે કે ઊંડાં હોવાને કારણે ગૂઢ રહે છે. "गय-ससण-सुजायसंनिभोरू" જેમના બંને સાથળો સુઘટિત હસ્તિશુણ્ડાદંડ સમાન હોય છે, એટલે કે જાનુની ઉપરનો ભાગ સુવ્યવસ્થિત હસ્તિસૂંઢ જેવો હોય છે "वर-वारण-मत्त-तुल्ल-विक्कम-विलासिय-गई" મદોન્મત્ત ગજેન્દ્રનાં જેવું જેમનું પરાક્રમ હોય છે, અને તેને અનુરૂપ જ જેમની વિલાસયુક્ત ગતિ

मदान्वितस्तेन तुल्यः=सदृशो विक्रमः=पराक्रमः, तद्वदेव विलासिता=विलास-युक्ता गति येषां ते तथा अत्र गजस्य पराक्रमेण गत्या च सादृश्यं प्रदर्शितम्, तथा 'वरतुरगसुजायगुज्झदेसा' वरतुरगसुजातगुह्यदेशाः = वरतुरगस्येव = प्रशस्ताऽश्वस्येव सुजातः=सुसंस्थितः लघुत्वेन गुप्त इत्यर्थः, गुह्यदेशो येषां ते तथा 'आइण्णहयोव्व निरुवलेवा' आकीर्णहयइव = जातिमानश्व इव निरूपलेपाः= मललेपविवर्जिताः 'पमुइयवरतुरयसीहअइरेगवट्टियकडी' प्रमुदिततुरगसिंहा-तिरेकवर्तितकटयः=प्रमुदिताः = प्रहृष्टा वरतुरगाः = जात्यश्वाः सिंहाः = केस-रिणस्तेभ्योऽतिरेकेण = आधिक्येन वर्तिता = वर्तुला कटिः = कटिप्रदेशो येषां ते तथा 'गंगावत्तगदाहिणावत्ततरंगभंगुररविकिरणबोहियविकोसायंतपम्ह-गंभीरवियडनाभी' गङ्गाऽऽवर्तकदक्षिणाऽऽवर्ततरङ्गभङ्गुररविकिरणबोधितविकोशा-यमानपद्मगम्भीरविकटनाभयः, तत्र — गङ्गावर्तकाः = गङ्गा नद्या जलभ्रमः, स च दक्षिणावर्तः तरङ्गभङ्गुरः तरङ्गैर्भङ्गुरः = वक्रश्च तद्वत्, तथा रविकिरणैः= सूर्यकिरणैर्बोधितं=विकासितं विकासावस्थां प्राप्नुवत् इत्यर्थः, अत एव-विकोशा-

---

उसी अनुरूप ही जिनकी विलासयुक्त गति होती है, तथा (वर-तुरग-सुजाय-गुज्झदेसा) प्रशस्त घोड़के गुह्यभागके समान जिनका गुह्यभाग लघु होनेके कारण गुप्त रहता है। (आइण्णहयोव्वनिरुवलेवा) तथा जातिमान् अश्वकी तरह वह गुह्यभाग जिनका मलके लेपसे विवर्जित रहता है। (पमुइयवरतुरयसीय अइरेगवट्टियकडी) अत्यंत हर्ष संपन्न जात्यश्वकी तथा सिंहकी कटिसे भी अधिक गोल जिनकी कटि होती है, तथा (गंगावत्तग दाहिणावत्त तरंगभंगुर रविकिरण बोहियविकोसायंतपम्हगंभीरविय-डनाभी) दक्षिणावर्त एवं तरङ्गोसे भंगुर गंगा नदी के जलभ्रम-जलावर्त्त के समान, तथा--सूर्यकिरणों से मुकुलित अवस्था को छोड़कर विका-सावस्था को प्राप्त हुए पद्म के समान गंभीर और विकट सुन्दर जिनका

હોય છે, "वरतुरग--सुजायगुज्झदेसा" તેમનો ગુહ્ય ભાગ પ્રશસ્ત ઘોડાના ગુહ્યભાગ સમાન લઘુ હોવાને કારણે ગુપ્ત રહે છે, "आइण्णहयोव्व निरुव-लेवा" જાતવાન ઘોડાના ગુહ્યભાગની જેમ તેમનો ગુહ્ય ભાગ પણ મળના લેપથી રહિત હોય છે. "पमुइयवरतुरयसीयअइरेगवट्टियकडी" અતિશય હર્ષસંપન્ન. જાતવાન ઘોડા તથા સિંહની કટિ કરતા પણ જેમની કટિ વધારે ગોળ હોય છે, તથા "गंगावत्तग-दाहिणावत्त तरंग-भंगुर-रविकिरण-बोहिय विकोसायतपम्हगंभीरवियडनाभी" દક્ષિણના પવનોથી તથા તરંગોથી ભંગુર ગંગા નદીના જલભ્રમ-જળ વમળ સમાન, તથા બીડાયેલી અવસ્થાનો ત્યાગ કરીને સૂર્યના કિરણોને કારણે વિકાસાવસ્થાને પામેલ કમળ સમાન ગંભીર

यमान मुकुलावस्थां विमुञ्चत् यत् पद्मं तद्वद् गम्भीरा विकटा = सुन्दरा च नाभि येषां ते तथा, 'साहय सोणंद मुसलदप्पणनिगरियवरकणगच्छरूसरिसवरवइर वलियमज्झा' संहतसौनन्दमुसलदर्पणनिगरितवरकनकत्सरुसदृशवरवज्र वलित-मध्याः = तत्र संहतं = संकोचितं सौनन्दं = त्रिकाष्ठिका 'तिपाई' इतिप्रसिद्धं मुसलं=प्रसिद्धं, दर्पणं = दर्पणगण्डः-दर्पणदण्डः निगरितवरकनकत्सरुः=निगरितं= सर्वथा शोधितम्, अतएव-वरकनकं=जात्यसुवर्णं तस्य त्सरुः = खड्गमुष्टिश्चेत्येतैः सदृशो वरवज्रवच्चवलितः = वक्रः कृशश्च मध्यः=तनुमध्यभागो येषां ते तथा प्रतल कटय इत्यर्थः, 'उज्जगसमसंहियजच्चतणुकसिणणिद्धआदिज्जलडह सुकुमालमउयरोमराई' ऋजुकसमसंहितजात्यतनुकृष्णस्निग्धाऽऽदेयलहड सुकुमालमृदुकरोमराजयः = तत्र ऋजुकाः=अकुटिलाः समाः=समुचित-प्रमाणाः संहिताः=सुघनाः, जात्यतनवः = स्वभावतोऽतिसूक्ष्माः कृष्णाः = कृष्णवर्णाः स्निग्धाः=चिक्कणः आदेयाः=प्रशस्ताः लडहाः=सुन्दराः सुकुमालाः-कमलवत्कोमलाः मृदुकाः= अति कोमलाः रोमराजय =रोम्णां श्रेणयो येषां ते तथा, 'झसविहगसुजायपीणकुच्छी' झषविहगसुजातपीनकुक्षयः = झषविहगवत्-मत्स्यवत् पक्षिवच्च

नाभिप्रदेश होता है। तथा-(साहय सोणंदमुसलदप्पणनिगरियवरकणगछरु सरिस वरवइर वलियमज्झा) जिनका मध्यभाग संकोचित तिपाई के समान, दर्पणदण्ड के समान, एवं शोधित जात्यस्वर्ण की खड्गमुष्टि के समान, तथा उत्तम वज्र के समान वक्र और कृश होता है। तथा (उज्जग-सम-सहिय-जच्च-तणु-कसिण-णिद्ध-आदिज्ज-लडह-सुकुमाल-मउय-रोमराई) जिनकी रोमराजि अकुटिल, समुचितप्रमाणोपेत, घनीभूत, स्वभावतःअतिसूक्ष्म, काली, चिकनी, आदेय, सुन्दर, कमल के समान कोमल और अत्यंत कोमल होती है। (झसविहगसुजायपीणकुच्छी) तथा-जिनकी कुक्षि-उदर का एक देश मत्स्य की और पक्षी

અને વિકટ-સુંદર જેમનો નાભિ પ્રદેશ હોય છે, તથા "साहयसोणंदमुसल दप्पणनिगरियवरकणगछरुसरिसवरवइरवलियमज्झा" જેમનો મધ્ય ભાગ સંકોચિત તિપાઈ સમાન, દર્પણું દંડ સમાન, તાવેલા સુવર્ણની તલવારની મૂઠ સમાન, તથા ઉત્તમ વજ્ર સમાન વક્ર અને પાતળો હોય છે. "उज्जग-सम-संहिय-जच्च-तणु-कसिण-णिद्ध-आदिज्ज-लडह-सुकुमाल-मउय-रोमराई" તથા જેમની રોમરાજિ અકુટિલ, સમપ્રમાણુ, ઘનીભૂત કુદરતી રીતે જ અતિ સૂક્ષ્મ, કાળી, સુંવાળી, આદેય, સુંદર, કમળ સમાન કોમળ અને અત્યંત કોમળ હોય છે "झसविहगसुजायपीणकुच्छी" તથા જેમની કુક્ષિ (ઉદરનો એક

सुजातः=सुन्दरः पीनः=पुष्टश्च कुक्षिः=उदरैकदेशो येषां ते तथा। तथा 'झषोयरा' झषोदराः-झषस्योदरवदुदरं=येषां ते तथा कृशोदरा इत्यर्थः, 'पम्हवियडणाभी' पद्मविकटनाभयः=पद्मवत्=कमलकोषवत् विकटा=सुन्दरा नाभि येषां ते तथा, 'संनयपासा' सन्नतपार्श्वा=पुष्टत्वादधो नमत्पार्श्वभागाः 'संगयपासा' सङ्गतपार्श्वाः=सुमिलितपार्श्वभागाः, अतएव 'सुंदरपासा' सुन्दरपार्श्वाः 'सुजायपासा' सुजातपार्श्वाः = सुसंस्थितपार्श्वाः 'मियमाइयपीणरइयपासा' मितमात्रिकपीतरतिदपार्श्वाः=मितौ=मानोपेतौ, मात्रिकौ = मात्रायुक्तौ-परिमाणसंपन्नौ पीनौ= सुपुष्टौ रतिदौ = रमणीयौ पार्श्वभागौ येषां ते तथा 'अकरंडुयकणगरुयगनिम्मलसुजायनिरुवहयदेहधारी' अकरण्डुकनकरुचकनिर्मलसुजातनिरुपहतदेहधारिणः = तत्र अकरण्डुकं = पुष्टत्वादनुपलक्ष्यपृष्ठपार्श्वाद्यस्थिकं तथा कनकरुचकनिर्मलं, कनकरुचकं=सुवर्णाभरणं तद्वत् निर्मलं सुजातं शोभनं निरुपहतं च=नीरोगं देहं=शरीरं धारयन्ति ये ते तथा। तथा 'कणगसिलातलपसत्थसम

की कुक्षि के समान सुन्दर और पुष्ट होती है। तथा (झसोयरा) जिनका उदर मत्स्य के उदर के समान कृश होता है। तथा (पम्हवियडणाभी) जिनकी नाभि कमल के कोष की तरह गंभीर होती है। तथा (संनयपासा) पुष्ट होने के कारण जिनके दोनों पार्श्वभाग नीचे की ओर झुके रहते हैं इसीलिये (संगयपासा) जो परस्परमें मिले हुए जैसे प्रतीत होते हैं और बड़े सुहावने लगते हैं तथा (सुजायपासा) जिनके दोनों पार्श्व भागोंका आकार भी बडा सुहावना लगता है, तथा (मियमाइय पीणरइय पासा) वे दोनों पार्श्वभाग मान और प्रमाणसे युक्त और पीन पुष्ट होते हैं तथा रमणी होते हैं। तथा(अकरंडु-कण-गरुयग-निम्मल सुजाय -निरुवहय-देहधारी) पुष्ट होने के कारण जिनकी रीढको और पार्श्व-भाग की अस्थियां दिखलाई नहीं देती हैं, तथा जो सुवर्णाभरण के

ભાગ) મત્સ્ય તથા પક્ષીની કુક્ષિ સમાન સુંદર અને પુષ્ટ હોય છે. તથા "झसोयरा" જેમનું ઉદર મત્સ્યના ઉદર સમાન કૃશ હોય છે. તથા "पम्हवियडणाभी" જેમની નાભિ કમળના જેવી ગંભીર હોય છે, તથા "संनयपासा" પુષ્ટ હોવાને જેમના બન્ને પાર્શ્વ ભાગો નીચેની બાજુએ ઝુકેલા રહે છે, અને તેથી "संगयपासा" આપસમાં મળી ગયા હોય એવા લાગે છે તથા ઘણા સુંદર લાગે છે. તથા "सुजायपासा" તેમના બંને પાર્શ્વ ભાગો પડખાંનો આકાર પણ ઘણો સુંદર લાગે છે, તથા "मियमाइयपीनरइयपासा" તે બંને પાર્શ્વભાગો પ્રમાણ અને માનથી યુક્ત-પ્રમાણસરનાં, અને પીન-પુષ્ટ અને રમણીય હોય છે. "अकरंडु-कण-गरुयग-निम्मल-सुजाय-निरुवहय-देहधारी" શરીરે પુષ્ટ હોવાને કારણે જેમની કરોડ તથા પાંસળીનાં હાડકા દેખાતાં નથી

तलउवइयविच्छिण्ण पिहुलवच्छा ' कनकशिलातल-प्रशस्त समतलोपचित विस्तीर्ण पृथुलवक्षसः=कनकशिलातलं = सुवर्णशिलापट्टकमिव प्रशस्तं समतलम्=अविषमं उपचितं=पुष्टं-विस्तीर्णं=विशालं तथा पृथुलं=स्थूलं वक्षः=वक्षः स्थलं येषां ते तथा 'जुयसंणिभपीणरइय-पीवर-पउट्ठ-संठिय-सुसिलिट्ठ-विसिट्ठलट्ठ-सुणिचिय-घण थिर सुबंध, संधी ' तत्र ' जुयसंणिभ ' युगसन्निभौ=युगकाष्ठतुल्यौ ' पीण ' पीनौ=स्थूलौ ' रइय ' रतिदौ=रमणीयौ पीवरौ=पुष्टौ ' पउट्ठ ' प्रकोष्ठौ=हस्तमणिबन्धप्रदेशौ-तथा ' संठिय ' संस्थिताः=संस्थानविशेषयुक्ता. ' सुसिलिट्ठ ' सुश्लिष्टाः=सुमिलिताः ' विसिट्ठलट्ठ ' विशिष्टलष्टाः=सुमनोहराः ' सुणिचिय ' सुनिचिताः = सुसंगठिताः घनाः ' थिर ' स्थिराः=सुदृढाः सुबन्धाः =शोभनावयवसन्निवेशयुक्ताः सन्धयः = अस्थि सन्धानानि येषां ते तथा, ' पुरवरफलिह-वट्टियभुया ' पुरवरपरिघवर्तित भुजाः=पुरवरपरिघवत्=नगरद्वारकपाटरोधनकाष्ठवद् वर्तितौ=वर्तुलौ भुजौ=बाहू येषां ते तथा । एतादृशास्तेऽपि कामभोगैरतृप्ता एव मरणधर्ममुपनमन्तीति-सम्बन्धः ॥ सू० १० ॥

समान निर्मल, सुन्दर रोगरहित शरीर के धारी होते हैं (कणगसिला-तलपसत्थसमतलउवइयविच्छिण्णपिहुलवच्छा) तथा जिनका वक्ष-स्थल सुवर्णशिला के पट्टक समान प्रशस्त एवं समतल वाला होता है उपचित-पुष्ट होता है, विस्तीर्ण होता है तथा पृथुल—स्थूल—मोटा—होता है (जुयसंणीभपीण-रइयपीवरपउट्ठसंठियसुसिलिट्ठविसिट्ठलट्ठसुणि-चियघणथिरसुबंधसंधी) इनका मणिबंध प्रदेश जुआ के समान स्थूल, रमणीय और पुष्ट होता है । तथा इनके हाड़ों की संधियाँ संस्थान-विशेष से युक्त, परस्पर अच्छी तरह मिली हुई, मनोहर, सुसंगठित, घनीभूत, सुदृढ़ एवं अच्छी अवयवों की रचना से युक्त होती है । (पुरवरफलिहवट्टियभुया) इनके दोनों बाहु नगर के द्वार के उत्तम

" જેઓ સૂવર્ણના આભૂષણો જેવું નિર્મળ, સુંદર અને નીરોગી શરીર ધરાવે છે, " कणगसिलातलपसत्थसमतलउवइयविच्छिण्णपिहुलवच्छा " તથા જેમની છાતીનો ભાગ સુવર્ણશિલા જેવો પ્રશસ્ત સમતલ, ઉપચિત-પુષ્ટ, વિસ્તીર્ણ વિશાળ તથા પૃથુલ-મોટો હોય છે, "जुयसंणिभ-पीण-रइय-पीवर-पउट्ठ-संठिय सुसिलिट्ठ-विसिट्ठ-लट्ठ-सुणिचिय-घणथिर-सुबंधसंधी " તેમના ખભા ધૂંસરી જેવા સ્થૂળ, રમણીય અને પુષ્ટ હોય છે. તથા તેમનાં અસ્થિયોના સાંધા સુવ્યવસ્થિત અરસપરસ સારી રીતે જોડાયેલ, મનોહર, સુસંગઠિત, ઘનીભૂત, સુદૃઢ, અને અવયવોની સુંદર રચના વાળા હોય છે " पुरवरफलिहवट्टियभुया " તેમની બંને ભુજા નગરના દરવાજાના ઉત્તમ ભોગળો જેવી ગોળાકાર હોય છે. એવા

पुनस्ते कीदृशाः ? इत्याह–'भुयगीसर' इत्यादि ।

मूलम्–भुयगीसर-विउल-भोग-आयाण-फलिह-उच्छूढदीहबाहू-रत्ततलोवइय-मउय-मंसल-सुजाय-लक्खणपसत्थ-अच्छिद्दजालपाणी पीवर-सुजाय-कोमल-वरंगुली तंबतलिणसुइरुइल निद्धणखा निद्धपाणिलेहा चंदपाणिलेहा सूरपाणिलेहा संखपाणिलेहा चक्कपाणिलेहा दिसा सोवत्थियपाणिलेहा रवि ससि-संख-वरचक्कदिसा सोवत्थिय-विभत्त-सुरइय--पाणिलेहा वरमहिसवराहसीह-सद्दूलरिसह नागवर-पडिपुण्ण-विउल-खंधा चउरंगुलप्पमाणकंबुवरसरिसगीवा अवट्ठिय–सुविभत्त–चित्त समंसुउवचियमंसल--पसत्थ--सद्दूल-विउल--हणुया ओयचिय सिलप्पवालबिंबफलसंनिभाऽधरोट्ठा पंडुर-ससि-सकल-विमल संखगोखीर–फेणकुंददगरयमुणालिया धवल–दंतसेढी अखंड दंता अफुडियदंता अविरलदंता सुणिद्धदंता सुजायदंता एगदंतसेढिव्व अणेगदंता हुयवहनिद्धंत–धोयतत्ततवणिज्जरत्ततलतालुजीहा गरुलायय उज्जुतुंगनासा अवदालियपुंडरीय णयणा विकोसियधवलपत्तलच्छा आणामिय – चावरुइल किण्हब्भराइ--संठिय-संगयाययं-सुजाय-भूमगा--अल्लीणपमाणजुत्तसवणा सुस्सवणा पीयमंसलकवोलदेसभागा अविरुग्गय बालचंदसंठियमहानिलाडा उडुवइ–पडिपुण्ण–सोम्मवयणा छत्तागारुत्तमंगदेसा घणनिचिय सुबद्धलक्खणुण्णय-कूडागार निभपिंडियग्ग-सिराहुयवहनिद्धंत - धोयतत्ततवणिज्जरत्तकेसंत-

---

परिघा (भोगल) के समान गोल२होते हैं। ऐसे ये भोगभूमिके मनुष्य भी कामभोगोंसे अतृप्त होकर ही मरण धर्मको प्राप्त करते हैं ॥सू०१०॥

તે ભોગભૂમિનાં લોકો- પણ કામ ભોગોથી અતૃપ્ત રહીને જ મૃત્યુ પામે છે ॥સૂ૧૦॥

केसभूमी सामलि-पोंडघण-निचियच्छोडिय-मिउविसय पसत्थसुहुमलक्खणसुगंधिसुंदरभुयमोयगभिंग-नीलकज्जलपहिट्ठ भमरगण-निद्धनिउरंब-निचियकुंचिय – पयाहिणावत्तमुद्धसिरया सुजाय-सुविभत्त-संगयंगा-लक्खणवंजणगुणोववेया पसत्थवत्तीसलक्खणधरा हंसस्सरा कोचस्सरा दुंदुहिस्सरा सीहस्सरा मेहस्सरा ओघस्सरा सुस्सरा सुस्सरनिग्घोसा वज्जरिसह नारायसंघयणा समचउरंससंठाणसंठिया घायउज्जोवियंगमंगा पसत्थछवी निरायंका कंकगहणी कवोयपरिणामा सउणिपोसापिट्ठंतरोरुपरिणया पउमुप्पल--सारसगंध–साससुरभिवयणा अणुलोमवाउवेगा अवदायनिद्धकोसा विग्गाहियउण्णाय कुच्छीअमयरसफलाहारी तिगाउय समुच्छियातिपलिओवमट्ठितिया तिण्णिय पलिओवमाइं परमाउं पालइत्ता तेवि उवणमंति मरणधम्मं अवित्तिता कामाणं ॥ सू० ११ ॥

टीका:–'भुयगी–सर–विउल–भोग–आयाण–फलिह–उच्छूढदीहबाहू' तत्र–'भुयगीसर' भुजगेश्वरः=सर्पराजस्तस्य यो विपुलो भोगः=महान् कायः तद्वत् तथा 'आयाण' आनं=आदीयत इत्यादानम्=आदेयः=सुन्दरो यः 'फलिह' परिघः=कपाटरोधनकाष्ठं, स च 'उच्छूढ' उत्क्षिप्तः=स्वस्थानाद् वहिर्निष्कासितः, तद्वत् 'दीह' दीर्घौ बाहू येषां ते तथा भुजगतुल्यपरिघतुल्यलम्बमान-

---

फिर ये भोगभूमि के जीव कैसे होते हैं ? इसी विषय को सूत्रकार पुनःस्पष्ट करते हैं—'भुयगीसर ०' इत्यादि ०।

टीकार्थः—(भुयगीसर–विउलभोग–आयाण–फलिह–उच्छूढदीह. बाहू) सर्पराज के विपुल शरीर के समान तथा अपने स्थान से बहार किये हुए सुन्दर परिघा के समान, जिनकी दोनों भुजाये दीर्घ–लबी

ते ભોગભૂમિના જીવો કેવા હોય છે, તેનુ સૂત્રકાર હજી વધુ સ્પષ્ટીકરણ કરે છે " भुयगीसर " ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ–' भुयगीसर–विउल–भोग–आयाणफलिह–उच्छूढदीह–बाहू" જેમની બન્ને ભુજાઓ સર્પરાજના વિશાળ શરીર જેવી, તથા તેના સ્થાનેથી બહાર કાઢવામાં

भुजाइत्यर्थः, 'रत्ततलोवइयमउयमंसलसुजायलक्खणपसत्थअच्छिद्दजालपाणी' तत्र- 'रत्ततल' रक्ततलौ=लोहितकरतलौ 'उवइय' उपचितौ=पुष्टौ 'मउय' मृदुकौ=कोमलौ 'मंसल' मांसलौ=अदृष्ट नाडी जालौ 'सुजाय' सुजातौ= सुनिष्पन्नौ 'लक्खणपसत्थ' लक्षण प्रशस्तौ=अनेक शुभलक्षणैः प्रकृष्टौ 'अच्छिद्दजाला- अच्छिद्रजालौ = परस्परं मिलितत्वात् छिद्ररहिताङ्गुलिसमुदायवन्तौ पाणी= हस्तौ येषां ते तथा 'पीवरसुजायकोमलवरंगुलि' पीवरसुजातकोमलवराङ्गु- लयः = सुपुष्टसुन्दरकोमलाङ्गुलिवन्तः 'तंबतलिणसुइरुइलनिद्धणखा' ताम्रत- लिनशुचिरुचिरस्निग्ध नखाः=ताम्राः = रक्ताः तलिनाः=प्रतलाः शुचयः=निर्मलाः रुचिराः=कान्तिमन्तः स्निग्धाश्च=चिक्कणा नखा येषां ते तथा, 'निद्धपाणिलेहा' स्निग्धपाणिरेखाः = चिक्कणहस्तरेखावन्तः 'चंदपाणिलेहा' चन्द्रपाणिरेखाः= चन्द्रः=चन्द्राकारा पाणौ रेखा येषां ते तथा 'सूरपाणिलेहा' सूरपाणिरेखाः=

होती हैं तथा—(रत्ततलोव इयमउयमंसलसुजायलक्खणपसत्थ अच्छिद्दजालपाणी) जिनके दोनों हाथ लोहित तलियों वाले, पुष्ट भरे हुए- कोमलतासे युक्त, मांसल-पुष्टअदृष्टनाडीजालवाले, अच्छे रूपमें निष्पन्न हुए, अनेक शुभलक्षणों से प्रशस्त एवं छिद्ररहित अंगुलियों वाले होते हैं तथा- (पीवरसुजायकोमलवरंगुली) इनकी जो अंगुलियां होती हैं वे सुपुष्ट, सुन्दर एवं कोमल होती हैं। (तंबतलिणसुइरुइलनिद्धनखा) इन अंगुलियों के जो नख होते हैं वे ताम्र वर्णवाले होते हैं तलिन- पतले होते हैं, निर्मल होते हैं, कान्तिमान् होते हैं तथा स्निग्ध-चिकने होते हैं। (णिद्धपाणिलेहा) हाथों में जो रेखाएँ होती हैं वे भी चिकनी होती हैं। (चंदपाणिलेहा) तथा इनके हाथों की ये रेखाएँ कितनीक तो चन्द्राकार होती हैं (सूरपाणिलेहा) कितनीक सूर्य के आकार की होती

પરિઘા (ભોગળો) સમાન દીર્ઘ-લાંબી હોય છે, તથા "रत्ततलोवइयमउयमंसल- सुजाय-लक्खण-पसत्थ-अच्छिद्द-जालपाणी" જેમના બંને હાથ લાલ હથેળીવાળા, પુષ્ટ, કોમળ, માંસલ-નસો તથા કેશવાહિનીઓની જાળ ન દેખી શકાય તેવા સુઘટિત, અનેક શુભ લક્ષણોથી પ્રશસ્ત, અને છિદ્ર રહિત આંગળીયો વાળા હોય છે, તથા "पीवर-सुजाय-कोमल-करंगुली" તેમના હાથની આંગળિયો સુપુષ્ટ, સુંદર અને કોમળ હોય છે. "तंवतलिणसुइरुइलनिद्धनखो" તે આંગ- ળિયોના નખ તામ્રવર્ણા હોય છે 'तलिन-પાતળા હોય છે નિર્મળ હોય છે, સુંવાળા અને કાન્તિ યુક્ત હોય છે "णिद्धपाणिलेहो" તેમના હાથમા જે રેખાઓ હોય છે તે પણ સ્નિગ્ધ, સુંવાળી હોય છે. "चंदपाणिलेहा" તેમના ઉપરની કેટલીક રેખાઓ ચન્દ્રાકાર, "सूरपाणिलेहा" કેટલીક સૂર્યાકાર, કેટલીક

सूर्याकारहस्तरेखावन्तः 'संखपाणिलेहा' शङ्खपाणिरेखाः=शङ्खाकारहस्तरेखा-वन्तः 'चक्कपाणिलेहा' चक्रपाणिरेखाः=चक्राकारहस्तरेखावन्तः 'दिसासोवत्थि-यपाणिलेहा' दिक्स्वस्तिकपाणिरेखाः=दिक्स्वस्तिकः=दक्षिणावर्तस्वस्तिकः=दक्षिणास्वस्तिकः तदाकारा पाणिरेखा येषां ते तथा 'रविससिसंखवरचक्कदिसासोवत्थियविभत्तसुरइयपाणिलेहा' रविशशिशङ्खवरचक्रदिक्स्वस्तिकविभक्तसुरचित-पाणिरेखाः=सूर्यचन्द्रशङ्खचक्रदक्षिणावर्तस्वस्तिकलक्षणाः विभक्ताः=स्पष्टाः सुरतिदाः सुखदाः पाणिरेखाः=हस्तरेखा येषां ते तथा 'वरमहिसवराहसीहसद्दूलरिसहनागवरपडिपुण्ण-विउल-खंधा' वरमहिषवराहसिंहशार्दूलऋषभनागवरप्रतिपूर्ण-विपुल-स्कन्धाः=तत्र वरमहिषाः=पुष्टशरीरमहिषाः वराहाः शूकराः सिंहाः=प्रसिद्धाः शार्दूलाः=व्याघ्रविशेषाः ऋषभाः=बलीवर्दाः नागवराः=प्रधानहस्तिनः तेषामिव प्रतिपूर्णः=परिणद्धो विपुलः=विशालः स्कन्धो येषां ते तथा 'चउरंगुलप्पमाण-कंबुवरसरिसगीवा' चतुरङ्गुलिप्रमाणकम्बुवरसदृशग्रीवाः — चतुरङ्गुलिप्रमाणा कम्बुवरेण=प्रधानशङ्खेन सदृशी=तुल्या च ग्रीवा=येषां ते तथा, 'अवट्ठिय सुविभ-

---

हैं, तथा (संखपाणिलेहा) कितनिक शंख के आकार जैसी होती हैं। (चक्कपाणिलेहा) कितनीक ऐसी होती हैं कि जिनका आकार चक्र के जैसा होता है। तथा (दिसासोत्थियपाणिलेहा) कितनीक ऐसी होती है जो दक्षिणावर्त स्वतिक के आकार में रहती हैं। इस तरह इनके हाथों की सूर्य, चंद्र, शंख, चक्र तथा दक्षिणावर्तस्वतिक के आकार की ये रेखाएँ स्पष्ट होती हैं और सुख देनेवाली होती हैं। तथा-(वरमहिस वराह – सीहसदूलरिसहनागवरपडिपुण्णविउलखंधा) इनके जो स्कंध होते हैं वे पुष्टशरीरवाले महिष, वराह, सिंह, बैल, प्रधान हाथी इनके स्कंधों के समान परिणद्ध-पुष्ट और विशाल होते है। तथा (चउरंगुल-प्पमाणकंबुवरसरिसगीवा) चार अगुल प्रमाणवाले उत्तम शंख के समान इनकी ग्रीवा होती है। (अवट्ठिसुविभत्तचित्तसमंसू) तथा

"संखपाणिलेहा" शंखाकार, "चक्कपाणिलेहा" केटलीक चक्राकार, અને "दिसा-सोत्थियपाणिलेहा" केटलीक दक्षिणावर्त स्वस्तिकना આકારની હોય છે તેમના હાથની તે ચન્દ્રાકાર આદિ રેખાઓ સ્પષ્ટ અને સુખદ હોય છે તથા "वर-महिस-वराह-सीह-सद्दुलरिसह-नागवर-पडिपुण्ण-विउलखधा" તેમના ખભા પુષ્ટ શરીર વાળા પાડા, વરાહ, સિંહ, બળદ અને ગજેન્દ્રના સ્કંધો જેવાં પુષ્ટ અને વિશાળ હોય છે તથા "चउरंगुलप्पमाणकंबुवरसरिसगीवा" તેમની ગ્રીવા ચાર અંગુલ પ્રમાણુ વાળા ઉત્તમ શંખ જેવી હોય છે. "अवट्ठिय-

त्तचित्तसमंसू' अवस्थितसुविभक्तचित्रश्मश्रूकाः – अवस्थितानि=सम्यक्तया यथास्थानं जातानि सुविभक्तानि=शोभनतया विभागेन स्थितानि चित्राणि=शोभया विस्मयजनकानि श्मश्रूणि येषां ते तथा। 'उवचियमंसलपसत्थ सद्दूलविउलहणुया' उपचितमांसलप्रशस्तशार्दूलविपुलहनुकाः=उपचित=पुष्टः अतएव मांसलः=मांसयुक्तः प्रशस्तः तथा शार्दूलस्येव विपुलश्च हनुः=ओष्ठाऽधोभागो येषां ते तथा 'ओयवियसिलप्पवालबिंबफलसंनिभाधरोट्ठा' ओयवियशिलाप्रवालबिम्बफलसन्निभाधरोष्ठा='ओयविय' इति विशिष्टपरिकर्मितं सुसंस्कृतं यच्छिलाप्रवालं=विद्रुमः, तथा बिम्बफलं च ताभ्यां सन्निभः=सदृशो रक्तोऽधरोष्ठो येषां ते तथा 'पंडुरससिसकल–विमलसंखगोखीर – फेणकुंददगरयमुणालिया – धवलदंतसेढी' पाण्डुरशशिशकलविमलशङ्खगोक्षीरफेनकुन्ददकरजोमृणालिकाधवलदन्तश्रेणयः=तत्र–पाण्डुरं=श्वेतं यत् शशिशकलं=चन्द्रखण्डं तथा विमलशङ्खः प्रतीतः गोक्षीरं=गोदुग्धं फेनः=नदीजलादिफेनः कुन्दं=श्वेतपुष्पविशेषः दकरजः=जलबिन्दुः मृणालिका=

इनकी दाढी के जो बाल होते हैं वे अच्छी तरह से जहां जिन्हें उत्पन्न होना चाहिये वहां उत्पन्न होते हैं, अच्छी तरह विभागरूप से स्थित रहते हैं, और अपनी शोभा से विस्मयजनक होते हैं। तथा (उवचियमंसलपसत्थसद्दूलविउलहणुया) इनके होठों के नीचे का जो भाग होता है वह पुष्ट होता है, मांसल होता है, प्रशस्त–सुहावना होता है और सिंह की दाढी के समान विपुल–विस्तृत होता है। (ओयवियसिलप्पवालबिंबफलसंनिभाधरोट्ठा) तथा इनके जो अधरोष्ठ होते हैं वे अच्छी तरह परिकर्मित किये हुए मूंगे के समान और बिम्बफल–कुंदरु के समान रक्त होते हैं (पंडुरससिसकलविमल संखगोखीरफेणकुंददगरयमुणालियाधवलदंतसेढी) तथा–इनका जो दांतों की पंक्ति होती है वह शुभ्रचंद्रमा के खंड जैसी, निर्मल शंख जैसी, गाय के दूध जैसी,

---

सुविभत्तचित्तसमंसू" तथा तेमनी दाढीना वाळ ज्यां जेमने उगवुं जोईए त्यां ज उगेला होय छे, सारी रीते विभाजित होय छे, अने तेमनी शोभा अद्भुत होय छे, तथा "उवचियमंसल पसत्थसद्दूलविउल हणुया" तेमना होठनी नीचेनो भाग पुष्ट, मांसल, शोभितो, अने सिंहनी दाढीना जेवो विपुलविस्तृत होय छे 'ओयवियसिलप्पवालबिंबफलसंनिभाधरोट्ठा" तेमना अधर–होठ सारी रीते तैयार करेल परवाळा जेवा तथा बिम्बफळ–कुंदरा जेवां लाल होय छे 'पंडुरससि–मकल–विमल–संख–गोखार–फेग कुंददगरयमुणालिया धवलदंतसेढी" तेमनी दंत पक्तिओ शुभ्र चंद्र खंड जेवी, निर्मळ शंख जेवी गायना दूध जेवी, नदी जळ आदिना फीण जेवी, श्वेत पुष्प जेवी, जळनां

कमलनालतन्तुश्च तद्वद्धवला दन्तश्रेणी=दन्तपङ्क्तिर्येषां ते तथा अखंडदन्ताः= परिपूर्णदन्ताः 'अफुडियदंता' अस्फुटितदन्ताः=अनुपहतदन्ताः अविरलदन्ताः= अच्छिद्रदन्ताः सुघनदन्ता इत्यर्थः 'सुणिद्धदंता' सुस्निग्धदन्ताः 'अरुक्षदन्तवन्तः सुजायदन्ता' सुजातदन्ताः = सुसंस्थितदन्ताः 'एगदंतसेढिव्वअणेगदंता' एकदन्तश्रेणिरिव अनेकदन्ता येषां द्वात्रिंशद्दन्ता अपि सुश्लिष्टत्वादेकदन्तवद् दृश्यन्ते इत्यर्थः । 'हुयवहनिद्धंतधोयतत्ततवणिज्जरत्ततलतालुजीहा' हुतवह-निर्ध्मातधौततप्ततपनीयरक्ततलतालुजिह्वाः = हुतवहेन = वह्निना निर्ध्मातं = तापितं धौतं=विशोधितं तप्तं च यत्तपनीयं=सुवर्णं तेन तुल्यं रक्ततलं=रक्तवर्णं तालु-

---

नदी जल आदि के फेन जैसी, श्वेतपुष्पविशेष जैसी, जल की बिन्दु जैसी, तथा मृणालिका-कमल नाल के तन्तु जैसी धवल होती है (अखंडदंता) तथा इनके दांत परिपूर्ण होते हैं-(अफुडियदंता) तथा ये अस्फुटित दांतोवाले होते हैं-उबड़ खाबड़-इनके दांत नहीं होते है। और न टूटे फूटे ही होते है (अविरलदंता) तथा इनके दांत अच्छिद्र होते हैं-दूर २ नहीं होते है। अर्थात्-परस्पर में एक दूसरे दांत के साथ मिले हुए रहते है। तथा (सुणिद्धदंता) ये दांत इनके रूक्षता से विहीन होते हैं अर्थात् चिकने होते हैं (सुजाय दंता) बहुत अच्छी तरहसे ये संस्थित-मसूडों में गढे हुए रहते हैं (एगदंतसेढिव्वअणेगदंता) यद्यपि ये दांत इनके बत्तीस ही होते हैं फिर भी परस्पर में सुश्लिष्ट होने के कारण एक दांत की तरह ही दिखते है तथा- (हुयवहनिद्धंतधोयतत्त-तवणिज्ज रत्ततलतालुजीहा) जिनकी तालु एवं जिह्वा वह्नि से तपाये गये

બિન્દુ જેવી, તથા કમળનાલના તંતૂ જેવી, ધવલ હોય છે "अखंडदंता" તેમના દાંત પરિપૂર્ણ હોય છે. ઓછા કે વધારે હોતા નથી 'अफुडियदंता" તેમના દાંત અસ્ફુટિત હોય છે—પોલાણ વાળા હોતા નથી અને તૂટેલા પણ હોતા નથી. "अविरलदंता" તથા તે દાંત પાસે પાસે હોય છે દૂર દૂર હોતા નથી. એટલે કે પરસ્પર એક બીજા સાથે અડકીને રહેલા હોય છે, તથા "सुणिद्धदंता" તેમના બે દાત રૂક્ષતાથી રહિત એટલે કે સુંવાળા હોય છે. "सुजायदंता" તે ઘણી સારી રીતે પેઢાંમા રહેલા હોય છે "एगदंतसेढिव्व अणेगदंता" જો કે તેમને બત્રીસ દાંત હોય છે, છતા પણ પરસ્પર એવી રીતે અડોઅડ આવેલા હોય છે કે તે એક દાત હોય તેવા દેખાય છે. તથા "हुयवहनिद्धंतधोयतत्ततवणिज्जरत्ततलतालुजीहा" જેમનું તાળવું અને જીભ આગમા તપાવેલ શુદ્ધ સુવર્ણના જેવાં લાલ સપાટી વાળા હોય છે. તથા

जिह्वं येषां ते तथा 'गरुलाययउज्जुतुंगनासा' गरुडायतऋजुतुङ्गनासाः=गरूडस्येव आयता=दीर्घा ऋज्वी=सरला तुङ्गा=समुन्नता नासा येषां ते तथा अवदालियपुंडरीयणयणा' अवदालितपुण्डरीकनयनाः=विकसितसितकमलतुल्यनेत्राः 'विकोसियधवलपत्तलच्छा' विकोशितधवलपत्रलाक्षाः=विकोसिते=विकसिते प्रसन्ने सदा प्रमुदितत्त्वात्तेषां, धवले=श्वेते पत्रले=पक्ष्मवती च अक्षीणि=नेत्रे येषा ते तथा। 'आणामिय चावरुइलकिण्हब्भराइसंठियसंगयाययसुजायभूमगा' आनामितचापरुचिरकृष्णाभ्रराजिसंस्थितसङ्गतायतसुजातभ्रुवः = आनामितौ = वक्रीकृतौ चापौ = धनुषी तद्वत्रुचिरे कृष्णाभ्रराजिसंस्थिते=कृष्णमेघरेखासदृशे सङ्गते=समुचिते आयते=दीर्घे सुजाते=स्वभावतःसुन्दराकारे च भ्रुवौ येषां ते तथा। 'अल्लीणपमाणजुत्तसवणा' आलीनप्रमाणयुक्तश्रवणाः = आलीनौ=स्तब्धौ प्रमाणयुक्तौ=समुचितप्रमाणौ श्रवणौ=कर्णौ येषां ते तथा एतावदेव न किन्तु 'सुस्सवणा' सुश्रवणाः = शब्दग्रहणशक्तिसम्पन्नकर्णयुक्ताः, 'पीणमंसलकवोलदेसभागा' पीन

शुद्ध तप्त सुवर्ण के समानरक्त तलवाली होती है। तथा (गरुलायग उज्जतुंगनासा) जिनकी नासिका गरुड़ की नासिका के समान दीर्घ, सरलऔर समुन्नत होती है। तथा (अवदालियपुंडरीयणयणा) जिनके नेत्र विकसित शुभ्र कमल के समान होते हैं। तथा-(विकोसियधवलपत्तलच्छा) जिनकी दोनों आंखे विकसित धवलवर्णोपेत, एवं पक्ष्मवाली होती हैं। (आणामियचावरुइलकिण्हब्भराइ संठियसंगयायसुजायभूमगा) तथा जिनकी भोंहें वक्रीकृत धनुष्य के समान रुचिर, कृष्णमेघपंक्ति के जैसी अत्यंतकाली, संगत-लंबी २ एवं स्वभावतःआकार में सुन्दर होती हैं (अल्लीणपमाणजुत्तसवणा) तथा-जिनके दोनों कान स्तब्ध और समुचित प्रमाणवाले होते हैं (सुस्सवणा) तथा-शब्दग्रहण करने की शक्तिसे संपन्न होनेके कारण जिनके दोनों कान सच्चे अर्थमें सुश्रवण

"गरुलायगउज्जतुंगनासा" જેમની નાસિકા ગરુડની ચાંચ જેવી લાંબી, સરલ અને ઉન્નત હોય છે તથા "अवदालियपुंडरीयणयणा" જેમનાં નયન વિકસિત શ્વેત કમળ જેવા હોય છે, તથા "विकोसियधवलपत्तलच्छा" જેમની બંને આંખો વિકસિત, શ્વેતવર્ણની અને પક્ષ્મવાળી હોય છે. "आणामिय चावरुइल किण्हब्भराइसंठियसंगया यय सुजायभूमगा" તથા તેમની ભ્રમરો વક્ર ધનુષ્યના જેવી મનોહર, કાળાં વાદળોની પંક્તિ સમાન અત્યંત કાળી, સંગત-લાંબી અને સ્વભાવિક રીતેજ દેખાવામાં સુંદર હોય છે. "अल्लीणपमाणजुत्तसवणा" તથા જેમના બને કાન સ્તબ્ધ અને પ્રમાણસરના હોય છે. "सुस्सवणा" શબ્દ-સાંભળવાની શક્તિવાળા હોવાને કારણે જે ખરા અર્થમાં સુશ્રવણ છે,

मांसलकपोलदेशभागाः=पीनौ = पीवरौ-मांसलौ= पुष्टौ च कपोलदेशभागौ = कपोलौ येषां ते तथा 'अचिरुग्गय-वालचंद-संठियमहानिलाडा ' अचिरोद्गत वालचन्द्रसंस्थितमहाललाटा = अचिरोद्गतः=अष्टदिवसमात्रोदितः=अष्टमीतिथिसम्बन्धीत्यर्थः, अतएव वालचन्द्रः अपूर्णचन्द्रः अर्द्धचन्द्र इत्यर्थः, तत्संस्थितं = तत्संस्थानयुक्तं तदाकारकं महत् = विशालम् अष्टाङ्गुलप्रमाणं ललाटं येषां ते तथा अर्द्धचन्द्राकारललाटा इत्यर्थः । 'उडुवइपडिपुण्णसोम्मवयणा' उडुपतिमतिपूर्णसौम्यवदनाः=पूर्णचन्द्रवदाह्लादकमुखाः 'छत्तागारुत्तमंगदेसा' छत्राकारोत्तमाङ्गदेशाः = छत्रवद्वृत्तोन्नतमस्तकाः 'घणनिचियसुबद्धलक्खणुण्णकूडागारनिभपिंडियग्गसिरा' घननिचितसुबद्धलक्षणोन्नतकूटाकारनिभपिंडिकाग्रशिरसः =घनवत्=लोहमुद्गरवन्निचितं=सम्भृतं सुबद्धं=स्नायुभिः लक्षणोन्नतं = विशिष्टलक्षणयुक्तं तथाकूटाकारनिभं=प्रासादशिखरसदृशं वर्तुलत्वात् पिण्डिकेव अग्रशिरः = मस्तकाग्रभागो येषां ते तथा सुन्दरलक्षणयुक्तसुविशालवर्तुलमस्तकाग्रभागा

हैं ऐसे कानों से जो युक्त होते हैं। तथा-(पीणमंसलकवोलदेसभागा) जिनके दोनों कपोल पीवर, और मांसल होते हैं (अचिरुग्गयवालचंदसंठियमहानिला) तथा-जिनका महाललाट अष्टमी के अर्धचन्द्र के समान आकार का होता है अर्थात् आठ अगुल प्रमाण आकार वाला होता है। (उडुवइपडिपुण्णसोम्मवयणा) तथा जिनका मुख, पूर्णचन्द्र के समान आल्हादकारक होता है। (छत्तागारुत्तमंगदेसा) तथा-मस्तक छत्र की तरह वृत्त-गोल और उन्नत होता है (घणनिचियसुबद्धलक्खणुण्णयकूडागारनिभपिंडियग्गसिरा) तथा मस्तक का अग्रभाग लोहमुद्गर की तरह निचित-गाढ़-भरा हुआ-तथा स्नायुओं से अच्छी तरह जकड़ा हुआ, तथा अनेक विध विशिष्ट लक्षणों से युक्त तथा प्रासाद के शिखर के समान उन्नत तथा पिण्डिका-पिंडी के जैसा-गोल

એવા કાન વડે જે યુક્ત હોય છે. "पीणमंसलकवोलदेसभागा" જેમના બંને ગાલ પીવર, અને માંસલ હોય છે. "अचिरुग्गयवालचंदसंठियमहानिलाडा" તથા જેમના વિશાળ લલાટ આઠમના ચંદ્રના જેવા આકારના હોય છે એટલે કે આઠ આંગળ પહોળા હોય છે "उडुवइपडिपुण्णसोम्मवयणा" તથા જેમનુ મુખ પૂર્ણચન્દ્રના જેવું આહ્લાદ કારક હોય છે, "छत्तागारुत्तमंगदेसा" તેમનું માથું છત્રના જેવું ગોળ અને ઉન્નત હોય છે. "घणनिचय सुबद्धलक्खणुण्णय कूडागार पिंडियग्गसिरा" તથા તેમના મસ્તકનો અગ્ર ભાગ મગદળના જેવો નિચિત-ગાઢ-ભરેલો તથા સ્નાયુઓ વડે સારી રીતે બંધાયેલો; તથા અનેક પ્રકારના ખાસ લક્ષણોથી યુક્ત તથા પ્રાસાદની ટોચ જેવો ઉન્નત તથા પિંડીના

इत्यर्थः, 'हुतवहनिद्धंधोयततत्तवणिज्जरत्तकेसंतकेसभूमी' हुतवहनिर्ध्मातधौततप्ततपनीयरक्तकेशान्तकेशभूमयः=तत्र हुतवहेन=वह्निना निर्ध्मातं=तापितम् अतएव-धौतं=विशोधितं तप्त च यत्तपनीयं=सुवर्ण तद्वद् रक्ताः=रक्तवर्णाः केशान्ताः=केशसमीपस्था केशभूमीः मस्तकत्वचा येषां ते तथा तप्तसुवर्णसदृशरक्तवर्ण शिरस्त्वक् सम्पन्नाः। 'सामलिपोंडघणनिचियच्छोडियमिउविसयपसत्थसुहुमलक्खणसुगंधसुंदरभुयमोयगभिंगनीलकज्जलपहिट्ठ भमरगणनिद्धनिउरंबनिचियकुंचियपयाहिणावत्तमुद्धसुद्धसिरया' शाल्मलीपोंडघननिचितघोटितमृदुविशदप्रशस्तसूक्ष्मलक्षणसुगन्धसुन्दरभुजमोचकभृङ्गनीलकज्जलप्रहृष्टभ्रमरगणस्निग्धनिकुरुम्बनिचितकुञ्चितप्रदक्षिणावर्त्तमूर्धशिरोजाः, तत्र-'सामलि' शाल्मलि=वृक्षविशेस्तस्य यत् 'पोंडं' फलं तच्च 'घणनिचिय' घणनिचितम् = आभ्यन्तरभागसंभृततयाऽति कठिनं तत् 'छोडिय' छोटितं=विदारितं तद्वत् 'मिउ' मृदवः=कोमलः 'विसय' विशदाः=सुस्पष्टताः 'पसत्थ' प्रशस्ताः=श्रेष्ठाः 'सुहुम' सूक्ष्माः=प्रतलाः 'लक्खण' लक्षणाः=शुभ लक्षणयुक्ताः सगन्धयः=सुरभिगन्धविशिष्टाः=मनोहराः

---

२ होता है। (हुयवहनिद्धंतधोयतत्ततवणिज्जरत्तकेसंतकेसभूमी) तथा जिनकी केशान्तभूमि-मस्तक की त्वचा-अग्नि से तपाये हुए शुद्ध तप्त सुवर्ण जैसी रक्तवर्णवाली होती है (सामलिपोंडघणनिचयच्छोडियमिउविसयपसत्थसुहुमलक्खणसुगंधसुंदरभुयमोयगभिंगनीलकज्जलपहिट्ठभमरगणनिद्धनिउरंब निचियकुंचियपयाहिणावत्तमुद्धसिरया) तथा जिनके केश, शाल्मलिवृक्ष के-रुआं से भीतर से भरे हुए तथा कठिन बने हुए विदारित फल के समान मृदु होते हैं, शाल्मली वृक्ष का फल जब पक जाता है तो वह कठिन हो जाता है, और उसकी भीतर की भरी हुई रुई बहुत अधिक चिकनी हो जाती है। यह बड़ी नरम और चिकनी रहती है। इसलिये सूत्रकार ने उसके साथ वालों को उपमित किया है।

જેવા ગોળ ગોળ હોય છે "हुयवहनिद्धंतधोयनत्ततवणिज्जरत्तकेसंतकेसभूमि" તથા જેમની કેશાન્તભૂતિ-માથાની ત્વચા-અગ્નિથી તપાવેલા શુદ્ધ સુવર્ણ જેવા લાલ વર્ણની હોય છે "सामलिपोंडघणनिचयच्छोडियमिउविसयपसत्थसुहुमलक्खणसुगंधसुंदरभुमोयगभिंगनीलकज्जलपहिट्ठभमरगणनिद्धनिउरंबनिचियकुंचियपयाहिणावत्तमुद्धसिरया" તથા જેમના કેશ. શાલ્મલિ વૃક્ષના, (શીમળો) અંદરથી રૂંવાટીથી ભરેલા તથા કઠણ બનેલ કાપેલાં ફળ સમાન મૃદુ હોય છે. શીમળાના ફળ જ્યારે પાકે છે ત્યારે કઠણ થઈ જાય છે, અને તેની અંદર રહેલ રૂંવાટી ઘણી મુલાયમ થઇ જાય છે. તે ઘણી નરમ અને સુંવાળી રહે છે. તેથી સૂત્રકાર તે રૂંવાટી સાથે કેશની સરખામણી કરે છે. તેમના કેશ વિશદ-સુસ્પષ્ટ, પ્રશસ્ત-

तथा 'भुयमोयग' भुजमोचकः=कृष्णवर्णो रत्नविशेषः 'भिंग' भृङ्गाः=चूर्णिताङ्गारः 'कोलसा' इति भाषा प्रसिद्धः, नीलः=नीलमणिः, 'नीलम' इति प्रसिद्धः, कज्जलम्=अञ्जनं 'पहिट्ठभमरगण' प्रहृष्टभ्रमरगण=प्रमुदित भ्रमरसमूहश्च, इत्येतैः सदृशाः स्निग्धाः=कृष्णकान्तयः 'निउरंब' निकुरम्बाणि=समूहरूपाः निचिताः=संबद्धाः 'कुंचिय' कुञ्चिताः=कुटिलाः 'पयाहिणावत्त' प्रदक्षिणावर्त्ताश्च=दक्षिणावर्त्तयुक्ता 'मुद्धसिरया' मूर्धशिरोजाः=मस्तककेशा येषां ते तथा। 'सुजायसुविभत्तसंगयंगा' सुजातसुविभक्तसंगताङ्गाः=सुनिष्पन्नसुस्पष्टसमुचितशरीरावयवाः, 'लक्खणवंजणगुणोववेया' लक्षणव्यञ्जनगुणोपपेताः = लक्षणानि = स्वस्तिकादीनि व्यञ्जनानि=मषतिलकादीनि गुणानि-सौभाग्यादीनि तैरुपेताः 'पसत्थबत्तीसलक्खणधरा' प्रशस्तद्वात्रिंशल्लक्षणधरा.? =प्रशस्तानि यानि द्वात्रिंशल्लक्षणनि छत्र कमलादिरूपाणि येषां ते तथा, द्वात्रिंशल्लक्षणानि यथा—

तथा उनके केश विशद–सुस्पष्ट, प्रशस्त–श्रेष्ठ, सूक्ष्म पतले, शुभलक्षणों से युक्त, अच्छी गंधवाले और मनोहर होते हैं। तथा इनका वर्ण कृष्णवर्ण नामक रत्नविशेष के जैसा, भृग–चूर्णित कोलसा के जैसे, नील–नीलमणि जैसे, कज्जल–अंजन के जैसे और प्रमुदित भ्रमरों के समूह जैसे, काले होते हैं। ये केश मस्तक में विरले नहीं होते हैं–किन्तु समुदाय रूप में सघन रहते हैं। एक दूसरे से संबद्ध होते है, कुटिल–घुंघराले होते हैं और दक्षिणावर्त्त वाले होते हैं। (सुजायसुविभत्तसंगयंगा) इनके शारीरिक अवयव सुनिष्पन्न, सुस्पष्ट एवं समुचित संनिवेशवाले होते हैं (लक्खणवंजणगुणोववेया) स्वस्तिक आदि लक्षणों से मषा, तिलक आदि व्यंजनों से एवं सौभाग्य आदि सद्गुणों से ये युक्त होते हैं। (पसत्थबत्तीसलक्खणधरा) प्रशस्त बत्तीस लक्षणों को ये

શ્રેષ્ઠ, સૂક્ષ્મ–પાતળા, શુભલક્ષણો વાળા, સુંદર ગંધવાળા અને મનોહર હોય છે. તથા તેમનો રંગ કૃષ્ણવર્ણ નામના રત્ન જેવો. કોલસાની રજ જેવો, નીલમણી જેવો, કાજળ જેવો, અને પ્રમુદિત ભ્રમરવૃન્દ જેવો કાળો હોય છે તે કેશ મસ્તક ઉપર વિખરાયેલાં હોતાં નથી પણ સમુદાય રૂપે સઘન હોય છે, એક બીજા સાથે મળેલા હોય છે, ગુંચળાં વાળાં હોય છે, અને દક્ષિણાવર્ત વાળા (જમણી તરફ વળેલાં) હોય છે. "सुजायसुविभत्तसंगयंगा" તેમનાં શરીરનાં અંગો સુડોળ, સુસ્પષ્ટ અને પ્રમાણસરનાં હોય છે. "लक्खणवंजणगुणोववेया" સ્વસ્તિક આદિ લક્ષણોથી, મસ, તિલક આદિ વ્યંજનોથી અને સૌભાગ્ય આદિ સદ્ગુણોથી તેઓ યુક્ત હોય છે, "पसत्थबत्तीसलक्खणधरा"

" छत्रं १ तामरसं[1] २ धनू ३ रथवरो४ दम्भोलि[2] ५ कूर्मा ६ ऽ ङ्कुशाः ७ ।
वापी ८ स्वस्तिक ९ तोरणानि १० य सरः ११ पञ्चाननः[3] १२ पादपः १३ ॥
चक्रं१४ शङ्ख१५ गजौ१६ समुद्र१७ कलशौ१८ प्रासाद१९ मत्स्यौ२० यवौ२१
यूप[4]२२ स्तूप[5]२३ कमण्डलू२४ न्यवनिभृत्[6] २५ सच्चामरो२६ दर्पणम् २७ ॥१॥
उक्षा[7]२८ पताका२९ कमलाभिषेक[8]३० सुदाम[9] ३१ केकी[10] ३२ घनपुण्यभाजाम् ॥

'हंसस्सरा' हंसस्वराः=हंसवत्स्वराः–स्निग्धत्वात् 'कोंचस्सरा' क्रौञ्चस्वराः= क्रौञ्चपक्षिवत्स्वराः–सूक्ष्ममृदुत्वात्, 'दुंदुहिस्सरा' दुन्दुभिवत्स्वराः–गम्भीरत्वात्

धारण करने वाले होते हैं। प्रशस्त बत्तीस लक्षणों के नाम इस प्रकार हैं– (१) छत्र, (२) कमल, (३) धनुष, (४) उत्तमरथ, (५) दम्भोलि–वज्र, (६) कूर्म–कच्छप, (७) कुश, (८) वापी, (९) स्वस्तिक, (१०) तोरण, (११) तालाब, (१२) पंचानन-सिंह, (१३) पादप, (१४) चक्र, (१५) शंख, (१६) गज, (१७) समुद्र, (१८) प्रासाद, (१९) मत्स्य, (२०) यव, (२१) यूप–स्तंभ (२२) स्तूप, (२३) कमंडलु, (२४) अवनिभृत्–पहाड़–पर्वत, (२५) सुन्दर चामर, (२६) दर्पण, (२७) उक्षा–बैल, (२८) पताका, (२९) अभिषेकयुक्त लक्ष्मी (३०) सुदाम–सुन्दरमाला (३१) केकी–मयूर और (३२) पुष्प (हंसस्सरा) इनका स्वर स्निग्ध होने से हंस के स्वर के समान होता है। (कोंचस्सरा) सूक्ष्म और मृदु होने के कारण क्रौंचपक्षी के

શ્રેષ્ઠ બત્રીસ લક્ષણો ધારણ કરનાર હોય છે. શ્રેષ્ઠ બત્રીસ લક્ષણોનાં નામ આ પ્રમાણે છે—

(૧) છત્ર (૨) કમલ (૩) ધનુષ (૪) ઉત્તમરથ (૫) દમ્ભોલિ-વજ્ર (૬) કૂર્મ કાચબો (૭) અંકુશ (૮) વાપી (૯) સ્વસ્તિક (૧૦) તોરણ (૧૧) તળાવ (૧૨) પચાનનસિંહ (૧૩) પાદપ (વૃક્ષ) (૧૪) ચક્ર (૧૫) શંખ (૧૬) ગજ (૧૭) સમુદ્ર (૧૮) પ્રાસાદ (૧૯) મત્સ્ય (૨૦) યવ (૨૧) યૂપ–સ્તંભ (૨૨) સ્તૂપ (૨૩) કમંડલુ (૨૪) અવનિભૂતપહાડ (૨૫) સુંદર ચામર (૨૬) દર્પણ (૨૭) ઉક્ષા–બળદ (૨૮) પતાકા (૨૯) અભિષેક યુક્ત લક્ષ્મી (૩૦) સુદામ–સુંદર માળા (૩૧) કેકી-મયૂર (૩૨) પુષ્પ 'हंसस्सरा" તેમનો સ્વર મૃદુ હોવાથી હંસના જેવો હોય છે, "कोंचस्सरा" સૂક્ષ્મ અને મૃદુ હોવાથી ક્રૌંચ પક્ષીના સ્વર જેવો હોય છે, "दुंदुहिस्सरा" ગંભીર હોવાથી દુંદુભિના અવાજ

१, तामरसं=कमलम्२ । २ दम्भोलिः=वज्रम्५ । ३ पञ्चाननः=सिंह१२ । ४ यूपः=स्तम्भ२२ । ५ स्तूपः='चोंतरा' इति भाषा प्रसिद्धा-२३ । ६ अवनिभृत= पर्वतः२५ । ७ उक्षा=बलीवर्दः२८ । ८ कमलाभिषेकः–अभिषेकयुक्ता लक्ष्मीः३० । ९ सुदाम=माला३१ । १० केकी=मयूरः३२ ।

'सीहस्सरा', सिंहस्वराः-सिंहवत्स्वराः-अव्याहतप्रवर्धमानत्वात्, न तु खरवद्, हीनस्वराः, 'मेघस्सरा' मेघस्वराः=मेघवत्स्वराः-दूरदेशव्यापित्वात् 'ओघस्सरा' ओघस्वराः-, अत्रुटितस्वराः, 'सुस्सरा' सुस्वराः-कर्णसुखजनकत्वात् 'सुस्सरनिग्घोसा' सुस्वरनिर्घोषाः-सुस्वरः=प्रियः निर्घोषः=शब्दो येषां ते तथा मधुरभाषिण इत्यर्थः, 'वज्जरिसहनारायसंघयणा' वज्र - ऋषभ-नाराचसंहननाः, तत्र नाराचम्=उभयतो मर्कटबन्धः, ऋषभः=तदुपरि वेष्टनपट्टः, वज्रं=कीलिका-उभयस्यापि भेदकमस्थि ॥ उक्तञ्च—

" रिसहो उ होइ पट्टो, वज्जं पुण कीलिया वियाणाहि।
उभओ मक्कडबंधो नारायं तं वियाणाहि ॥ १ ॥ " इति,

स्वर के जैसा होता है। (दुंदुहिस्सरा) गंभिर होने से दुंदुभि के स्वर जैसा होता है, (सीहस्सरा) अव्याहतरूप से प्रवर्धमान होने के कारण सिंह के स्वर जैसा, (मेहस्सरा) दूर २ देश तक में भी व्याप्त होने के कारण मेघकी ध्वनि जैसा होता है। (ओघस्सरा) वह स्वर बीच में टूटता नहीं है, (सुस्सरा) तथा कानों को सुखकारी होता है। तथा—(सुस्सरनिग्घोसा) वे जो भी शब्द बोलते है वे भी बड़े प्रिय होते हैं, अर्थात् ये मधुरभाषी होते हैं (वज्जरिसहनारायसंघयणा) इनका वज्र ऋषभ नाराच संहनन होता है और (समचउरंससंठाणसंठिया) समचतुरस्र संस्थान होता है। जो संहनन उभयतः मर्कटबंधसे, ऋषभ-उसके उपर वेष्टनपट्ट से एवं वज्र-कीलीका से युक्त होता है उसका नाम वज्रऋषभनाराच संहनन है। यही बात गाथा द्वारा प्रदर्शित की गई है।

જેવો હોય છે, "सीहस्सरा" અવિરત પ્રવર્ધમાન હોવાને કારણે સિંહના સ્વર જેવો, અને "मेहस्सरा" દૂર દૂર સુધી ફેલાતો હોવાથી મેઘના ધ્વનિ જેવો લાગે છે "ओघस्सरा" તે સ્વર વચ્ચે તૂટતો નથી અને "सुस्सरा" કર્ણને સુખદ લાગે છે તથા 'सुस्सरनिग्घोसा" તેઓ જે શબ્દો બોલે છે તે પણ ઘણા મધુર હોય છે એટલે કે મીઠા બોલા હોય છે "वज्जरिसह नारायसंघयणा" તેમનું વજ્ર ઋષભ નારાચ સંહનન હોય છે અને "समचउरंससंठाण संठिया" સમચોરસ સંસ્થાન હોય છે જે સંહનન બંને તરફ મર્કટ બંધથી, ઋષભ-તેના ઉપર લપટાયેલા પટ્ટથી અને વજ્ર-કીલિકાથી યુક્ત હોય છે તેનું નામ वज्रऋषभनाराचसंहनन છે. એ જ વાત ગાથા દ્વારા દર્શાવવામાં આવી છે—

एवं रूपं संहननम्—अस्थिरचनाविशेषो येषां ते तथा। 'समचउरंससंठाण संठिया' समचतुरस्रसंस्थानसंस्थिताः = तत्र समाः = अन्यूनाधिकाः चतस्रः अस्रयः चतुर्दिग्विभागोपलक्षिताः शरीरावयवा यत्र तत्, समचतुरस्रत्वं च पर्यङ्कासनोपविष्टस्य दक्षिणस्कन्धाद् वामजानुपर्यन्तं, तथा वामस्कन्धाद् दक्षिण जानुपर्यन्तं समत्वं, तदेव संस्थानं = शरीररचनाविशेषः, तेन संस्थिताः= युक्ता स्ते तथा 'छायउज्जोवियंगमंगा' छायोद्योतिताङ्गोपाङ्गाः – छायया = शरीर कान्त्या उद्योतितानि देदीप्यमानानि अङ्गोपाङ्गानि येषां ते तथा देदीप्यमानशरीराः, 'पसत्थच्छवी' प्रशस्तच्छवयः=सुन्दराकृतयः 'निरायंका' निरातङ्काः = रोगरहिताः 'कंकगहणी' कङ्कग्रहणाः=कङ्कस्य=पक्षिविशेषस्येव ग्रहणं—गुदाशयो येषां ते तथा—नीरोगवर्चस्का 'कवोयपरिणामा' कपोतपरिणामाः=कपोततुल्या

जैसे—" रिसहो उ होइ पट्टो, वज्जं पुण कीलिया वियाणाहि।
उभओ मक्कडबंधो, नारायं तं वियाणाहि" ॥ १ ॥

जिस संस्थान में चतुर्दिग्विभागोपलक्षित शारीरिक अवयव न्यूनाधिकतारूप दोष से वर्जित होते हैं—अर्थात्—पर्यङ्कासन से उपविष्ट पुरुष के दक्षिणस्कंध से लेकर वामजानुपर्यंत और वामस्कंध से लेकर दक्षिण जानु पर्यंत जो समानता रूप से शारीरिक अवयवों की रचना है उसका नाम समचतुरस्रसंस्थान है। (छायउज्जोवियंगमंगा) इनके शारीरिक अवयव अपने शरीर की कांतिरूप छाया से सदा देदीप्यमान बने रहते हैं (पसत्थच्छवी) इनकी आकृति बड़ी मनोज्ञ सुन्दर होती है। (निरायंका) इन्हें कोई भी रोग नहीं होता है। (कंकगहणी) इनका गुदाशय—गुह्यप्रदेश पक्षी के गुह्यभाग की तरह लेपरहित मलवाला होता है। (कवोयपरिणामा) इनका आहार कबूतर के आहार के परिपाक जैसा

" रिसहो उ होइ पट्टो वज्जं पुण कीलिया वियाणाहि।
उभओ मक्कडबंधो, नारायं तं वियाणाहि" ॥ १ ॥

જે વ્યવસ્થામાં ચારે દિશાને અનુલક્ષીને શારીરિક અવયવો ન્યૂનતા અથવા અધિકતાના દોષથી રહિત હોય છે, એટલે કે પર્યંકાસને બેઠેલા પુરૂષના જમણા ખભાથી લઈને ડાબા ઢીંચણ સુધી અને ડાબા ખભાથી લઈને જમણા ઢીંચણ સુધી સમાન રૂપે શારીરિક અવયવોની જે રચના હોય છે તેને સમચતુરસ્રસંસ્થાન કહે છે " छायउज्जोवियंगमंगा " તેમનાં શરીરનાં અંગો તેમના શરીરની કાંતિરૂપ છાયાથી સદા દેદીપ્યમાન બની રહે છે " पसत्थच्छवी " તેમની આકૃતિ ઘણી મનોજ્ઞ-સુંદર હોય છે " निरायंका " તેમને કોઈ રોગ થતો નથી. " कंकगहणी " તેમનો ગુદાશય-ગુહ્યભાગ પક્ષીના ગુહ્યભાગની જેમ લેપરહિત મળવાળો હોય છે. " कवोयपरिणामा " તેમનો આહાર કબૂતરના

ऽऽहारपरिपाकाः 'सउणिपोसा' शकुनिपोसाः-शकुनेरिव=पक्षिण इव पोसः= अपानस्थानं निरूपलेपतया येषां ते तथा, निरूपलेपगुदाशयाः, 'पिट्ठं तरोरुपरिणया' पृष्ठान्तरोरुपरिणताः = पृष्ठं = पृष्ठदेशः, अन्तरे = पृष्ठोदरयोरन्तराले पार्श्वावित्यर्थः उरू = जङ्घे च, इत्येते परिणताः = सुदृढा येषां ते तथा 'पउमुप्पलसरिसगंधसाससुरभिवयणा' पद्मोत्पलसदृशगन्धश्वाससुरभिवदनाः-तत्र - पद्मं = कमलम् उत्पलं = नीलकमलं च तत्सदृशो गन्धो यस्य स तथाभूतो यः श्वासः तेन सुरभि=सुगन्धयुक्तं वदनं=मुखं येषां ते तथा 'अणुलोमवाउवेगा' अनुलोमवायुवेगाः = अनुकूलशरीरोद्भववायुवेगवन्तः 'अवदाय निद्धकेसा' अवदातस्निग्धकेशाः = अवदाताः कान्तियुक्ताः स्निग्धाः=चिक्कणाः केशाः=रोमाणि येषां ते तथा, 'विग्गहियउण्णयकुच्छी' वैग्रहिकोन्नतकुक्षयः= वैग्रहिको=शरीरानुरूपौ उन्नतौ=पुष्टौ कुक्षी=उदरदेशौ येषां ते तथा शरीरानुरूपपुष्टोदराः 'अमयरसफलाहारी' अमृतरसफलाहारिणः = अमृततुल्यरस

होता है। (सउणिपोसा) पक्षी की तरह इनका अपानस्थान मल के उपलेप से रहित होता है। (पिट्ठंतरोरुपरिणया) इनके पृष्ठ और उदर के अंतराल-पार्श्वभाग एवं जंघाएँ सुदृढ होती हैं, (पउम्मुप्पलसरिसगंधसाससुरभिवयणा) पद्म-कमल, उत्पल-नील कमल, इनके जैसे गंधवाला इनका श्वास होता है। उस श्वास से सुगंध युक्त इनका मुख होता है। (अणुलोमवाउवेगा) इनकी शारीरिक वायु का वेग इनके अनुकूल ही रहता है-प्रतिकूल नहीं। (अवदायनिद्धकोसा) इनके केश-रोम अवदात कान्तियुक्त एवं चिकने होते हैं (विग्गहियउण्णयकुच्छी) इनके पेट के दोनों आजु वाजु के भाग शरीर के अनुरूप ही पुष्ट रहते हैं। (अमयरसफलाहारी) ये अमृत के जैसे रस-

---

આહાર જેવો નિર્દોષ હોય છે "सउणिपोसा" પક્ષીની જેમ તેમનો ગુપ્તભાગ મળથી ખરડાયા વિનાનો હોય છે. "पिट्ठंतरोरुपरिणया" તેમની પીઠ અને ઉદરની અંદરનો તથા પાસેનો ભાગ અને જંઘાઓ મજબૂત હોય છે. "पउम्मुप्पलसरिस गंधसास सुरभिवयणा" પદ્મ-કમળ, અને ઉત્પલ-નીલકમળ જેવી ગંધવાળો તેમનો શ્વાસ હોય છે. તે શ્વાસથી તેમનું મુખ સુગંધયુક્ત થાય છે. છે. "अणुलोमवाउवेगा" તેમના શરીરના વાયુનો વેગ તેમને અનુકૂળ જ રહે છે-પ્રતિકૂળ રહેતો નથી. "अवदायनिद्धकोसा" તેમના રોમ અવદાત-કાન્તિ યુક્ત અને મુલાયમ હોય છે. "विगाहियउण्णय कुच्छी" તેમના પેટની આજુ-બાજુના બંને ભાગ શરીરને અનુરૂપ જ પુષ્ટ રહે ।. "अमयरसफलाहारी"

युक्तानि यानि फलानि तेषामाहारिणः, 'तिगउय समुच्छिया' त्रि गव्यूत समुच्छ्रिताः=त्रि गव्यूतिपरिमाणोन्नतशरीराः, तिपलिओवमट्ठिइया' त्रिपल्योपम-स्थितिकाः=त्रिपल्योपमकालस्थितिमन्तः 'तिन्नि य पलिओवमाइं परमाउं पालइत्ता' त्रीणि च पल्योपमानि परमायूंषि=परमायुष्यकालं पालयित्वा-उपभुज्य 'ते वि' तेऽपि=उत्तरकुरुदेवकुरुनिवासिनो युगलिका मनुष्या अपि, 'कामाणं अवितित्ता' कामानामवितृप्ताः – अवितृप्तकामभोगा एव, 'उवणमंति मरणधम्मं' मरणधर्ममुपनमन्ति–इति पूर्ववत् ॥ सू० ११ ॥

साम्प्रतं तेषां स्त्री विषयेप्याह—'पमया वि' इत्यादि–

मूलम्—पमयाविय तेसिं हुंति सोम्मा सुजायसव्वंग-सुंदरीओ पहाणमहिलागुणेहिं जुत्ता अइकंत–विसप्पमाण मउयसुकुमाल--कुम्मसंठिय-सिलिट्ठचलणा उज्जुमउयपीवर सुसंहतंगुलीओ अब्भुण्णाय । रइयतलिण-तंबसुइ-निद्ध-नखा रोमरहियवट्टसंठिय-अजहण्ण–पसत्थलक्खण–अकोप्प

वाले फलों का आहार करते हैं। (तिगाउयसमुच्छिया) तीन कोशका इनका शरीर होता है। (तिपलिओवमाइं परमाउं पालइत्ता) तीन पल्य की इनकी उत्कृष्ट आयु होती है। इस प्रकार की स्थिति से युक्त बने हुए ये उत्तरकुरु और देवकुरु के निवासी मनुष्य भी तीन पल्य की उत्कृष्ट अपनी आयु का भोग करके भी (कामाणं अवितत्ता) काम-सुखों में अतृप्त बने रहते हैं। अर्थात्–तीन पल्य कालतक कामसुखों-को भोगते रहते हैं फिर भी इनकी कामसुखों को भोगने की लालसा शांत नहीं हो पाती हैं। अन्त में (ते वि) वे भी काम से अतृप्त ही मरण धर्मको प्राप्त करते हैं ॥ सू०११ ॥

તેઓ અમૃત જેવાં રસવાળા ફળોનો આહાર કરે છે. "तिगाउयसमुच्छिया" ત્રણ ગાવનું તેમનું શરીર હોય છે. "तिपलिओवमाइं परमाउं पालइत्ता" ત્રણ પલ્યનું તેમનું ઉત્કૃષ્ટ આયુષ્ય હોય છે. આ પ્રકારની સ્થિતિ વાળા તે ઉત્તર કુરુ અને દેવકુરુ નિવાસી લોકો પણ ત્રણ પલ્યનું પોતાનું આયુષ્ય ભોગવવા છતાં પણ "कामाणां अवितत्ता" કામ ભોગોથી અતૃપ્ત રહે છે. એટલે કે ત્રણ પલ્ય કાળ સુધી કામ ભોગો ભોગવ્યા છતાં પણ કામભોગો ભોગવવાની તેમની લાલસા શાંત થઇ શકતી નથી છેવટે "ते वि" તેઓ પણ કામભો-ગોથી અતૃપ્ત રહીને જ મૃત્યુ પામે છે. ॥ સૂ–૧૧ ॥

जंघजुयला सुणिम्मिय सुणिगूढजानु मंसलपसत्थ-सुबद्धसंधी कयली-खंभाइरेग-संठियनिव्वणसुकुमालमउय-कोमल-अ-विरल-समसंहियसुजायवट्टपीवरनिरंतरोरू अट्ठावयवीइपट्ट संठियपसत्थ-विच्छिण्ण पिहुल-सोणीवयणरयामप्पमाणदु-गुणिय-विसाल-मंसल-सुबद्ध-जहणवर--धारिणीओ वज्जवि-राइयपसत्थलक्खणनिरोदरीओ तिवलिवालियतणुनमिय मज्झियाओ उज्जुय-समसंहिय-जच्चतणुकसिण निद्धआदे-ज्जलडहसुकुमालमउय सुविभत्तरोमराईओ गंगावत्तगदाहि-णावत्ततरंग-भंगुररविकिरणतरुणबोहिय विकोसायंतपउम-गंभीर विगडनाभीओ अणुब्भडपसत्थसुजाय पीणकुच्छीओ सन्नयपासासंगयपासा सुंदरपासा सुजायपासा मियमाइय पीणरइयपासा अकरंडुयकणगरुयगानिम्मलसुजाय निरुवहय-गायलट्ठीओ कंचणकलसप्पमाणसमसंहितलट्ठचूचुय आमे-लगजमल, जुयलवट्टियपओहराओ भुयंग-अणुपुव्व -तणुय गोपुच्छवट्टसमसंहिय-नमिय-आदेज्जलडहबाहातंबनहा मंस-लग्गहत्था कोमलपीवरवरंगुलीया ॥ सू० १२ ॥

टीका—'तेसिं' तेषाम् = उत्तरकुरुदेवकुरुनिवासियुगलिकानां 'पमया-विय' प्रमदा अपि च=स्त्रियोऽपि 'होंति' भवन्ति । कीदृश्यो भवन्ति ? इत्याह

अब सूत्रकार इन युगलिकों की स्त्रियों के विषय में कथन करते हैं 'पमया वि य तेसिं' इत्यादि०।

टीकार्थ-(तेसिं) उन उत्तरकुरु निवासी युगलिकों की (पमयाविय) स्त्रियां भी (होंति) ऐसी होती हैं। कैसी होती हैं? सो कहते हैं-(सोम्मा)

હવે સૂત્રકાર એ યુગલિકોની સ્ત્રીઓનું વર્ણન કરે છે "पमया वि य तेसिं" ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ-"तेसिं" તે ઉત્તર કુરુ અને દેવકુરુ નિવાસી યુગલિકોની "पमयाविय" સ્ત્રીઓ પણ "होंति" એવી જ હોય છે, તે સ્ત્રીઓ કેવી હોય છે? તો

–' सोम्मा ' सौम्याः = सौम्यवदनाः ' सुजायसव्वंगसुंदरीओ ' सुजातसर्वाङ्ग-सुन्दर्यः=सुजातानि=सुनिष्पन्नानि सर्वाण्यङ्गानि सुन्दराणि यासां तास्तथा ' पहाण महिला गुणेहिं जुत्ता ' प्रधानमहिलागुणैर्युक्ताः=हावभावविलासादि स्त्रीगुणैर्युक्ताः ' अतिकंतविसप्पमाणमउय–सुकुमालकुम्मसंठियसिलिट्ठचलणा ' अतिकान्त विसर्पमाणमृदुकसुकुमारकूर्मसंस्थितश्लिष्टचरणाः=अतिकान्तौ = अतिसुन्दरौ विसर्पन्तौ गमनक्रियायुक्तौ मृदुकसुकुमारौ=अत्यन्तकोमलौ कूर्मसंस्थितौ=उन्नतत्वात् कच्छपपृष्ठतुल्यसंस्थानौ तथा श्लिष्टौ=समिलितौ चरणौ यासां तास्तथा ' उज्जुमउयपीवरसुसंहयंगुलीओ ' ऋजुमृदुकपीवरसुसंहताङ्गुल्यः–तत्र–ऋजवः–सरलाः, मृदुकाः=कोमलाः, पीवराः=पुष्टाः सुसंहताः=अन्तर रहिताः अङ्गुल्यो यासां ताः तथा सरलकोमलपीनसुसङ्गठितपादाङ्गुलिकाः ' अब्भुण्णयरइयतलिणतंबसुइनिद्धनखा ' अभ्युन्नतरतिदतलिनताम्रशुचिस्निग्धनखाः = अभ्युन्नताः = मध्योन्नता रतिदाः=

इनका मुख सौम्य होता है (सुजायसव्वंगसुंदरीओ) इनके समस्त अंग सुनिष्पन्न और सुन्दर होते हैं। (पहाणमहिलागुणेहिं संजुत्ता) हाव, भाव विलास आदि प्रधान स्त्रियोचित गुणों से युक्त होती हैं (अतिकंतविसप्पमाणमउयसुकुमालकुम्मसंठियसिलिट्ठचलणा) इनके दोनों चरण अतिशय सुंदर होते हैं, गमन क्रिया में थकते नहीं हैं, मृदुक सुकुमार–अत्यंत कोमल होते हैं, उन्नत होने के कारण कच्छप की पीठ के समान आकार वाले होते हैं एवं सुसंमिलित होते हैं। (उज्जुमउयपीवरसुसंहयंगुलीओ) इन चारणों की अंगुलियां ऋजु–सरल, मृदुक–कोमल, पीवर–पुष्ट और सुसंहत–अन्तरहित होती है । (अब्भुण्णयरइयतलिणतंबसुइणिद्धणखा) इन अंगुलियों के नख मध्यभाग में उन्नत, रतिद–

કહે છે કે "सोम्मा" તેમનાં મુખ સૌમ્ય હોય છે, " सुजायसव्वंग सुंदरीओ " તેમનાં સઘળાં અંગો સુઘટિત અને સુંદર હોય છે. " पहाण महिला गुणेहिं संजुत्ता " હાવ, ભાવ, વિલાસ આદિ મુખ્ય મુખ્ય સ્ત્રીયોચિત ગુણોવાળી હોય છે. " अतिकंतविसप्पमाणमउयसुकुमालकुम्मसंठियसिलिट्ठचलणा " તેમના બંને ચરણ અતિશય સુંદર હોય છે. ચાલતા થાકતાં નથી. તે અત્યંત કોમળ હોય છે, ઉન્નત હોવાને કારણે કાચબાની પીઠના જેવા આકાર વાળા હોય છે અને સુસમિલિત હોય છે. " उज्जुमउय पीवरसुसहयगुलीओ" તે ચરણોની આંગળિયો ઋજુ–સરલ, કોમળ, પુષ્ટ અને સુસંહત–અન્તરહિત હોય છે. " अब्भुण्णयरइय तलिणतंबसुइणिद्धणखा " તે આગળીયોના નખ મધ્ય ભાગમાં ઉન્નત, रतिद्–મનોજ્ઞ, तलिन–પાતળા, ताम्र–લાલ, शुचि–સ્વચ્છ અને स्निग्ध–

मनोज्ञाः तलिनाः=प्रतलाः ताम्राः=ताम्रवर्णाः शुचयः=स्वच्छाःस्निग्धाः=चिक्कणाः नखा यासां तास्तथा। 'रोमरहियवट्टसंठियअजहण्णपसत्थलक्खणअकोप्पजंघजुयला' रोमरहितवृत्तसंस्थितअजघन्यप्रशस्तलक्षणाऽकोप्यजङ्घायुगलाः = रोमररहितं=निर्लोमकं वृत्तसंस्थितं=वर्तुलाकारम् अजघन्यम्=उत्तमं प्रशस्तलक्षणं=सौभाग्यचिह्नयुक्तम्, अकोप्यं=सर्वप्रियं च जङ्घायुगलं यासां तास्तथा, 'सुणिम्मियसुणिगूढजाणुमंसलपसत्थसुबद्धसंधी' सुनिर्मितसुनिगूढजानुमांसलप्रशस्तसुबद्धसन्धयः=तत्र सुनिर्मितौ=शोभनसंस्थानविशिष्टौ सुनिगूढौ = दुर्लक्ष्यौ जानुनोः=जानुद्वयस्य मांसलौ=पुष्टौ प्रशस्तौ=सुन्दराकारौ सुबद्धौ=सुदृढौ सन्धी=सन्धान स्थाने यासां तास्तथा 'कयली-खंभाइरेग-संठिय-निव्वण-सुकुमाल-मउय कोमल अविरल - समसंहियवट्टपीवरनिरंतरोरू' कदलीस्तम्भातिरेकसंस्थितनिर्व्रणसुकुमार मृदुककोमलाऽविरलसमसंहितवृत्तपीवरनिरन्तरोरवः = तत्र कदली स्तम्भादतिरेकेण = अतिशयेन शोभनाऽऽरोहाऽवरोहसुपेशलसुकोमलत्वादिगुणप्रकर्षरूपेण संस्थितौ-सुन्दरसंस्थानवन्तौ निर्व्रणौ = निरुपहतौ सुकुमारमृदुककोमलौ-अत्यन्त-

---

मनोज्ञ, तलिन-पतले, ताम्र-लाल, शुचि-स्वच्छ एवं स्निग्ध-चिकने होते हैं। (रोमरहिवट्टसंठिय-अजहण्णपसत्थलक्खण-अकोप्पजंघजुयला) इनका जंघा युगल रोगरहित, वर्त्तुलाकार वाला अजघन्य-उत्तम सौभाग्यचिह्नों से युक्त एवं अकोप्पसर्वप्रिय होता है (सुणिम्मियसुणिगूढजाणु मंसलपसत्थसुबद्धसंधी) इनकी दोनों जानु की संधियां शोभन संस्थान विशिष्ट, तथा सुनिगूढ होती है। पुष्ट और सुंदराकार से युक्त होती हैं। मजबूत होती हैं। (कयलीखंभाइरेगसंठियनिव्वण सुकुमाल मउय कोमल अविरल समसंहियवट्टपीवरनिरंतरोरू) इनकी दोनों जानु का उपरितन भाग कदली के स्तंभ से भी अधिक सुन्दर संस्थानवाला होता है। निर्व्रण-घाव आदि की निशानी से विहीन

સુવાળા હોય છે. "रोमरहियवट्टसंठिय-अजहण्ण-पसत्थ-लक्खण-अकोप्प-जंघजुयला" તેમની બન્ને જંઘાઓ રોમ રહિત, ગોળાકાર, अजघन्य-ઉત્તમ, સૌભાગ્ય ચિહ્નોથી યુક્ત અને अकोप्प સર્વપ્રિય હોય છે, "सुणिम्मिय-सुणिगूढ जाणुमंसलपसत्थ सुबद्धसंधी" તેમની બન્ને જંઘાઓના સાંધાનો ભાગ સુડોળ, વ્યવસ્થિત તથા સુનિગૂઢ હોય છે. તે જંઘાઓ પુષ્ટ અને સુંદર આકારની હોય છે અને મજબૂત હોય છે. "कयली खंभाइ रेगसंठिय-निव्वण-सुकुमालमउय-कोमल-अविरल-समसहियवट्टपीवरनिरंतरोरु" તેમની બન્ને જંઘાઓની ઉપરનો ભાગ કદલીના સ્તંભથી પણ વધારે સુંદર આકારનો હોય છે, "निर्व्रण" ઘાવ આદિની નિશાની વિનાનો હોય છે, અત્યંત કોમળ હોય છે, अविरल

कोमला अविरलौ=परस्परमिलितौ समसंहितौ=उचितप्रमाणयुक्तौ वृत्तौ=वर्तुलौ पीवरौ=पीनौ निरन्तरौ=परस्परसम्बद्धौ ऊरू=जानूपरितनभागौ यासां तास्तथा 'अट्ठावयवीइ-पट्ट-संठियपसत्थ वित्थिण्णपिहुलसोणी' अष्टापदवीचिपृष्ठ संस्थित-प्रशस्तविस्तीर्णपृथुलश्रोण्यः=अष्टापदस्य=द्यूतविशेषस्य वीचय इव वीचयः=तरङ्गाकृतिरेखाः तद्युक्तं यत् पट्टं-फलकः, तद्वत् संस्थिता = तत्संस्थानयुक्ता तदाकृतिका प्रशस्ता विस्तीर्णा पृथुला=विशाला श्रोणिः=कटिभागा यासां तास्तथा 'वयणायामप्पमाणदुगुणियविसालमंसलसुबद्धजहणवरधारिणीओ' वदनायामप्रमाणाद्विगुणितविशालमांसलसुबद्धजघनवरधारिण्यः = वदनस्य = मुखस्य यः आयामः विस्तारस्तस्य यत् प्रमाणं तस्माद्विगुणितं चतुर्विंशत्यङ्गुलमित्यर्थः, विशालं=तथा मांसलं=पुष्टं सुबद्धं=शैथिल्यवर्जितं जघनवरं=वरजघनं=कट्याः पुरोभागं धारयन्ति यास्तास्तथा 'वज्जविराइयपसत्थलच्छणनिरोदरीओ' वज्र

होना हैं। अत्यंत कोमल होता है। अविरल-परस्पर मिला हुआ होता है। समसंहित-उचितप्रमाण से युक्त होता है। वृत-वर्तुल-गोल होता है। पीवर-पीन-पुष्ट होता है। निरन्तर परस्पर संबद्ध होता है। (अट्ठावयवीइपट्टसंठियपसत्थवित्थिण्णपिहुलसोणी) इनका कटिभाग द्यूतविशेष की वीचियों के समान तरङ्गाकृति रेखाओं से युक्त फलक के जैसे आकार वाला होता है, प्रशस्त होता है, विस्तीर्ण होता है तथा पृथुल विशाल होता हे। (वयणायाजप्पमाणदुगुणियविसालमंसलसुबद्ध जहणवरधारिणीओ) इनकी कटिका पुरोभाग-जघन प्रदेश-मुख के विस्तार के प्रमाण से द्विगुणित होता है-अर्थात्-चौबीस अंगुलका होता है, विशाल-पृथुल, एवं मांसल-पुष्ट होता है। सुबद्ध-शैथिल्य विहीन- होता है। (वज्जविराइयपसत्थलच्छणनिरोदरिओ) इनका

પરસ્પર જોડાયેલ હોય છે, समसंहित-યોગ્ય પ્રમાણવાળો-પ્રમાણસરનો હોય છે, ગોળ હોય છે, पीवर-પુષ્ટ હોય છે, અને निरन्तर-પરસ્પર સંબદ્ધ હોય છે. "अट्ठावयवीइपट्ट-संठिय-पसत्थ-वित्थिण्ण-पिहुलसोणी" તેમનો કટિભાગ દ્યુત વિશેષની વીચિયોના સમાન તરંગાકૃતિ રેખાઓથી યુક્ત ફલકના જેવા આકારવાળો હોય છે, પ્રશસ્ત હોય છે, વિસ્તીર્ણ હોય છે તથા પૃથુલ-વિશાળ હોય છે "वयणायामप्पमाणदुगुणिय विसालमंसलसुबद्धजहणवरधारिणीओ" તેમની કટિનો આગળનો ભાગ જઘન પ્રદેશ-મુખના વિસ્તાર કરતાં બે ગણા માપનો હોય છે, એટલે કે ચોવીસ આંગળનો હોય છે, વિશાળ અને માંસલ પુષ્ટ હોય છે, સુબદ્ધ શૈથિલ્ય વિહીન હોય છે, "वज्जविराइय पसत्थ-लच्छणनिरोदरीयो" તેમના ઉદરનો ભાગ વજ્ર જેવો સુંદર, એટલે કે

विराजितप्रशस्तलक्षणं निरोदर्यः =वज्रवद् विराजितं = मध्यमतलं प्रशस्तलक्षणं= शुभलक्षणविशिष्टम् अति प्रतलत्वान्निर्गतमिवोदरं यासां तास्तथा कृशोदर्य इत्यर्थः तिवलिवलियतणुनमियमज्झियाओ ' त्रिवलिवलिततनुनमितमध्यिकाः = त्रिव लिभीः = उदरस्थरेखात्रयरूपाभिः वलित१ः = वलनयुक्त२ः= तनुनमित४ः = किञ्चिदवनताः४, मध्यं = मध्यभागः=कटिप्रदेशो यासां तास्तथा ' उज्जुयसम सहिय जच्चतणुकसिणनिद्धआदेज्जलडहसुकुमालमउयसुविभत्तरोमराईओ ' तत्र ' उज्जुय ' ऋजुकानि ' समसंहिय ' समानि-तुल्यानि संहितानि = घनानि ' जच्च ' जात्यानि-स्वाभाविकानि 'तणु' तनूनि=सूक्ष्माणि 'कसिण' कृष्णानि ' निद्ध ' स्निग्धानि=अरूक्षाणि ' आदेज्ज ' आदेयानि=श्लाघनीयानि ' लडह' इति सुन्दाराणि ' सुकुमालमउय ' सकुमारमृदुकानि=अत्यन्त कोमलानि ' सुवि-भत्त ' सुविभक्तानि=यथास्थानशोभितानि च यानि रोमाणि तेषां राजयः = पङ्क्तयो यासां तास्तथा ' गंगावत्तगदाहिणावत्ततरंगभंगुररविकिरणतरुणबोहित

उदरभाग वज्र के जैसा सुन्दर, अर्थात्-मध्य में पतला होता है। शुभ लक्षणों से विशिष्ट होता है। तथा अतिपतला कृश-होने के कारण अनुदर-निर्गत उदर जैसा होता है — अर्थात् ये कृशोदरी होती हैं। (तिवलिवलियतणुनमियमज्झियाओ) इन का मध्यभाग उदरप्रदेश त्रिवलियों से वलित-युक्त - होता है। और तनुनमित - कुछ झुका हुआ सा रहता है। (उज्जुयसमसंहिय जच्चतणु कसि-णनिद्धआदेज्जलडहसुकुमालमउयसुविभत्तरोमराईओ) इन की रोमराजि ऋजु-सरल, सम एकसी संहित घनीभूत, जात्य-स्वाभाविक, तनु-पतली, कृष्ण-काली, निद्ध-स्निग्ध, चिकनी-रुक्षतारहित, आदेय-श्लाघनीय, लडह-सुन्दर सुकुमारमृदुक-अत्यंत कोमल तथा सुविभक्त-यथास्थान शोभित होती है। (गंगावत्तग-दाहिणावत्त-तरंग-भंगुर-रवि-

મધ્યમાં પાતળો હોય છે અને શુભ લક્ષણોવાળો હોય છે, તથા અતિશય પાતળો હોવાથી અનુદર-પેટ જ ન હોય તેવો હોય છે એટલે કે તે સ્ત્રીઓ કૃશોદરી હોય છે " तिवलिवलियतणुनमियमज्झियाओ " તેમનો મધ્યભાગ-ઉદર પ્રદેશ ત્રિવલિયો વાળો હોય છે, અને સહેજ ઝુકેલો રહે છે. " उज्जुय समसंहिय-जच्च-तणु-कसिण-निद्ध-आदेज्ज-लडह-सुकुमाल-मउय-सुविभत्तरोम-राईओ " તેમની રોમરાજિ ઋજુ-સરલ, સમ-એક સરખી, સંહિત-ઘનીભૂત, જાત્ય-સ્વાભાવિક, તનુ-પાતળી, કાળી, સુવાળી, આદેય-વખાણવા યોગ્ય, લડહ-સુંદર સુકુમાર, મૃદુક-અતિ કોમળ તથા સુવિભક્ત-યથાસ્થાન શોભિત હોય છે, (" गंगावत्तगदाहिणावत्त तरंगभंगुररविकिरणतरुणबोहिय-अकोसायंतपउमगं

अकोसायंतपउमगंभीरविगडनाभीओ' गङ्गावर्तकदक्षिणावर्ततरङ्गभङ्गुर – रवि – करणतरुणबोधितविकोशायमानपद्मगम्भीरविकटनाभिकाः, तत्र गङ्गावर्त्तकः ङ्गानद्याजलभ्रमः, स च दक्षिणावर्त्तः तरङ्गभङ्गुरः– तरङ्गैः भङ्गुरः वक्रश्च, तद्वत्, तथा रविकिरणैः=सूर्यकिरणै र्बोधितं विकासितं=विकासावस्थां प्राप्नुवदित्यर्थः, अतएव विकोशायमानं मुकुलावस्थां विमुञ्चत् यत् पद्मं तद्वद् गम्भीरा विकटा–सुन्दरा च नाभिर्यासां तास्तथा। 'अणुब्भडपसत्थसुजायपीणकुच्छी' अनुद्भटप्रशस्तसुजातपीनकुक्ष्यः=अनुद्भटौ=उद्भटरहितौ समौ, प्रशस्तौ सुजातौ सुसंस्थितौ पीनौ सुपुष्टौ कुक्षी=उदरोभयभागौ यासां तास्तथा 'संनयपासा' संनतपार्श्वाः = पुष्टत्वादधोनमत्पार्श्वभागाः, 'संगयपासा' सङ्गतपार्श्वाः=सुमिलितपार्श्वभागाः, अतएव 'सुंदरपासा' सुन्दरपार्श्वाः = मनोहरपार्श्वभागाः, 'सुजायपासा' सुजातपार्श्वाः=सुसंस्थितपार्श्वा, 'मियमाइयपीणरइयपासा' मित-

---

किरण तरुणबोहिय अकोसायंतपउमगंभीरविगडनाभीओ) इनकी नाभि तरंगों से वक्र बने हुए ऐसे दक्षिणावर्तवाले गंगानदी के जलभ्रम–भँवर के समान होती है। तथा सूर्य की किरणों के संपर्क से अपनी मुकुलित अवस्था का परित्याग कर विकसित अवस्था को प्राप्त हुए पद्म के समान गंभीर होती है और विकट बड़ी सुन्दर होती है। (अणुब्भडपसत्थसुजायपीणकुच्छी) इनके उदर के दोनों पार्श्वभाग अनुद्भट–अनुल्वण–बराबर–एक से होते हैं। प्रशस्त–सुहावने होते हैं। सुजात–अच्छे संस्थानवाले होते हैं। पीन–पुष्ट होते हैं। (संनयपासा) तथा पुष्ट होने के कारण इनके दोनों तरफ के वे पार्श्वभाग नीचे की ओर झुके हुए रहते हैं। (संगयपासा) वे दोनों उनके पार्श्वभाग परस्पर में संगत–मिले रहते हैं। अतएव वे (सुंदरपासा) बड़े सुन्दर होते हैं। तथा (सुजायपासा) अच्छे संस्थान से युक्त कहे जाते हैं। (मियमा-

---

भीरविगडनाभीओ" तेमनी नाभि तरंगोथी वक्र बनेल दक्षिणावर्त वाळा गंगा नदीना जलभ्रम–वमळ जेवी होय छे, अने सूर्यना किरणोना संपर्कथी पोतानी बीडायेली अवस्था छोडीने विकसित थयेलां कमळना जेवी गंभीर अने विकटा अत्यंत सुंदर होय छे "अणुब्भडप-सत्थसुजायपाणकुच्छी" तेमना उदरनी बाजुना बन्ने भागो (कुक्षीओ) एक सरखा होय छे, प्रशस्त, पुष्ट अने सुडोळ होय छे "संनयपासा" ते बन्ने कुक्षी पुष्ट होवाने कारणे नीचेनी बाजु झुकेला रहे छे "संगयपासा" तेमनी ते बन्ने कुक्षीओ परस्परमां संगत– मळेली होय छे, तेथी ते "सुंदरपासा" घणी सुंदर होय छे तथा "सुजायपासा" सुघटित होय छे. "मियमाइयपीण–

मात्रिक पीनरतिदपार्श्वाः-मितौ-मानोपेतौ मात्रिकौ परिमाणसम्पन्नौ पीनौ=सुपुष्टौ रतिदौ - रमणीयौ पार्श्वभागौ यासां तास्तथा 'अकरंडुयकणगरुयगनिम्मल सुजायनिरुवहयगायलट्ठी' अकरण्डुककनकरुचकनिर्मलसुजातनिरुपहत गात्रयष्टयः तत्र अकरंडुका = पुष्टत्वादनुपलक्ष्यपृष्ठपार्श्वास्थिकाः, तथा कनकरुचकनिर्मला = सुवर्ण समानकान्तिमतीसुजाता निरुपहता = रोगरहिता च गात्रयष्टि र्यासां तास्तथा ' कंचणकलसप्पमाणसमसंहितलट्ठचूचुय आयेलग जमल जुयल वट्टियपओहराओ' काञ्चनकलशप्रमाणसमसंहितलष्टचूचकाऽऽमेलक यमलयुगलवर्तितपयोधराः=तत्र काञ्चनकलशप्रमाणौ=उन्नतत्वेन वर्तुलत्वेन च सुवर्णघटाकारौ समौ=तुल्यौ संहितौ=अनिपतितत्वेनाऽशिथिलौ लष्टचूचकामेलकौ=मनोहरकृष्णस्तनमुखशिखरे यमलौ=सहोत्पन्नौ युगलौ=युग्मौ वर्तितौ=वर्तुलौ, पयोधरौ=स्तनौ यासां तास्तथा 'सुयगअणुपुव्वतणुयगोपुच्छवट्टसमसंहियनामिय आदे-

इयपीणरइयपासा) इसीलिये उनके वे दोनों पार्श्वभाग मित-मान से युक्त, मात्रिक-प्रमाणसंपन्न, पीन-सुपुष्ट एवं रतिद-रमणीय लगते हैं। (अकरंडुयकणगरुयगनिम्मलसुजायनिरुवहयगायलट्ठी) पुष्ट होने के कारण उनकी न तो पीठकी हड्डियां दिखती है और न दोनों पार्श्वभागों की। इनका शरीर सुवर्ण के समान कान्तिवाला एवं रोगरहित होता है। (कंचणकलसप्पमाण समसंहितलट्ठचूचुय आमेलग जमलजुयलवट्टिय-पयोहराओ) इनके दोनों स्तन उन्नत और गोल होने के कारण सुवर्ण-निर्मित घट के आकार जैसे होते हैं-कमती वढती नहीं। संहित अशिथिल होते हैं। नीचे की ओर झुके हुए नहीं रहते साम्हने उठे हुए रहते हैं। इनके दोनों चूचुक मनोहर एवं अत्यंत काले मुखवाले होते हैं। ये साथ २ उत्पन्न होते हैं। गोल रहते हैं, (सुयंग अणुपुव्वतणुय-

रइयपासा" તે કારણે તેમની બન્ને કુક્ષીઓ મિતમાત્રિક સપ્રમાણ, પીન-સુપુષ્ટ અને રતિદ-રમણીય લાગે છે "अकरंडुयकणगरुयगनिम्मल सुजाय निरुवहयगायलट्ठी" તે પુષ્ટ હોવાને કારણે તેમની પીઠના હાડકાં દેખાતા નથી અને છાતીના હાડકાં પણ દેખાતાં નથી, તેમના શરીર સુવર્ણની જેવી કાંતિવાળા અને નીરોગી હોય છે "कंचण कलसप्पमाणसमसंहितलट्ठचूचुयआमेलगजमलजुयलवट्टिय पयोहराओ' તેમના બન્ને સ્તન ગોળ અને ઉન્નત હોવાને કારણે, સોનાના ઘડા જેવા લાગે છે, બન્ને સ્તન બરાબર સરખા હોય છે-નાના મોટા હોતા નથી,, સહિત-અશિથિલ હોય છે નીચેની બાજુ નમેલા રહેતાં નથી પણ ઉન્નત હોય છે તેમની બન્ને ડીંટીઓ મનોહર અને અત્યંત શ્યામ મુખવાળી હોય છે. તે બન્ને સાથે જ ઉત્પન્ન થાય છે અને ગોળાકારના હોય છે.

ज्जलउडवाहा ' भुजङ्गानुपूर्वतनुक गोपुच्छवृत्तसमसंहितनमितादेयलडहवाहवः = भुजङ्गवत् = सर्पवत् आनुपूर्वेण तनुकौ = क्रमशः कृशो तथा गोपुच्छवद् वृत्तौ = वर्तुलौ समसंहितौ=समत्वयुक्तौ सुगुंठितौ च नमितौ=सुदीर्घलम्बमानौ आदेयौ= श्लाघनीयौ ' लडह ' इति सुन्दरौ वाहू=भुजौ यासां तास्तथा ' तंवनहा ' ताम्र-नखाः-रक्तवर्णनखसम्पन्नाः ' मंसलग्गहत्था ' मांसलाग्रहस्ताः-मांसलौ-पुष्टौ अग्रहस्तौ-हस्ताग्रभागौ ' पोंचा ' इति प्रसिद्धौ यासां तास्तथा, तथा ' कोमल पीवरवरंगुलीया ' कोमल पीवरवराङ्गुलिकाः, तेऽपि मरणधर्ममुपनमन्तीतिव-क्ष्यमाणेन सम्बन्धः ॥ सू-१२ ॥

पुनस्ताः कीदृश्यः ? इत्याह—' निद्धपाणि लेहा ' इत्यादि-

मूलम्—निद्धपाणिलेहा ससि-सूरसंखचक्कवर-सोत्थिय विभत्त - सुरइय-पाणिलेहा पीणुण्णय कक्खवत्थिप्पएस

गोपुच्छवट्टसमसंहियनामिय आदेज्जलउडवाहा) इनकी दोनों भुजाएँ सर्प की तरह क्रमशः कृशहुई होती है। तथा गाय की पूंछ की तरह वर्तुल होती हैं। सम-एकसी तथा संहित-संगठित होती हैं। नमित-घुटनों तक लंबी रहती हैं। आदेय-देखने में प्रशंसनीय एवं वड़ी सुहा-वनी लगती हैं। (तंवनहा) इनकी अंगुलियों के नख लाल वर्ण वाले होते हैं। तथा (मंसलग्गहत्था) इनका पोंचा मांसल-पुष्ट होता है। तथा (कोमलपीवरवरंगुलीया) इनकी हाथों की अंगुलियां कोमल पीवर-पुप्ट एवं वर-उत्तम होती हैं। ऐसी ये स्त्रियां भी कामभोग से अतृप्त ही मरणधर्म को प्राप्त करती हैं। ऐसा संवंध आगे के वाक्य से जोड लेनां चाहिये ॥ सू०१२ ॥

" भुयंग-अणुपुव्व-तलुय गोपुच्छवट्ट-समसंहिय-नामिय-आदेज्जल-उडवाहा " તેમની બન્ને ભુજાઓ સર્પની જેમ ક્રમશ કૃશ થતી જાય છે, તે ભુજાઓ ગાયની પૂંછડી જેવી વર્તુળ સમ-એક સરખી, તથા संहित-સુગઠિત, ઘુંટણો સુધી લાંબી, અને આદેય-પ્રશસ્ત, અને શોભિતી લાગે છે " तवनहा " તેમની આંગળીઓના નખ લાલ રંગના હોય છે, તથા " मसलग्गहत्था " તેમના પોંચા માંસલ-પુષ્ટ હોય છે, તથા " कोमलपीवरवरंगुलिया " તેમના હાથની આંગળિયો પીવર-પુષ્ટ અને ઉત્તમ હોય છે. એવી તે યુગલિક સ્ત્રીઓ પણ કામભોગથી અતૃપ્ત રહીને જ મૃત્યુ પામે છે એવો સંબંધ આગળનાં વાક્યો સાથે સમજી લેવો. ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥

पडिपुण्णगल्लकवोल-चउरंगुल-सुप्पमाण-कंबुवरसरिस-गीवा मंसल--संठिय--पसत्थहणुया दालिमपुप्फप्पगासपीवर-पलंबकोंचियवराधरा सुंदरोतरुट्ठा दहिदगरय कुंदचंदवासंति मउल-अच्छिद्द - विमलदसणा रत्तुप्पलरत्तपउमपत्तसुकुमाल तालुजीहा कणवीरमउलकुडिल अब्भुण्णयउज्जुतुंगनासा सारयनवकमल--कुमुय--कुवलयदल--निगर--सरिस--लक्खण पसत्थ-निम्मल--कंतनयणा--आनामिय-चावरुइल किण्हब्भ-राइसंठिय--संगयायय---सुजाय---तणु--कसिण---निद्धभूमगा अल्लीण--पमाण- जुत्तसवणा सुस्सवणा पीणमट्ठ–गंडलेहा चउरंगुल - विसाल - समनिडाला कोमुईरयणियर - विमल पडिपुण्णा सोम्मवयणा छत्तुण्णयउत्तमंगा अविकल सुसि-णिद्ध-दीह-सिरया छत्त २ ज्झय २ जुव३ थूभ ४ दामाणि ५ कमंडलु ६ कलस ७ वावि ८ सोत्थिय ९ पडाग १० जव ११ मच्छ १२ कुम्भ १३ रहवर १४ मयर १५ अंक १६ थाल १७ अंकुस १८ अट्ठावय १९ सुपइट्ठ २० अमर २१ सिरिया-भिसेय २२ तोरण २३ मेइणि २४ उदधिवर २५ पवरभवण २६ गिरिवर २७ वरायंस २८ सुललियगय २९ वसभ ३० सीह ३१ चामर ३२ पसत्थ बत्तीसलक्खणधराओ हंसस-रिच्छगईओ कोइलमहुरागिराओ कंता सव्वस्स अणुमयाओ, ववगयवली-पलिय-वंगदुवण्ण- वाहि दोभग्ग--सोयमुक्काओ उच्चत्तेणय नरथोवूणमूसियाओ सिंगारागारचारुवेसा सुंदर-थणजहणवयणकरचलणणयणा लावण्णरूवजोव्वणगुणोव-

वेया, णंदणवणविवरचारिणीओ ओव्वअच्छराओ उत्तर-कुरुमाणुसच्छराओ आच्छेर गयेच्छणिज्जाओ तिण्णिपलिओवमाइं परमाउं पालइत्ता ताओ वि उवणमंति मरणधम्मं अतित्ता कामाणं ॥ सू०१३ ॥

टीका—'निद्धपाणिलेहा' स्निग्धपाणिरेखाः = सुस्पष्टहस्तरेखाः 'ससिसूरसंखचक्कवरसोत्थियविभत्तसुविरइयपाणिलेहा' शशि—सूर्य—शङ्ख—चक्रवर स्वस्तिकविभक्तसुरतिदपाणिरेखाः = चन्द्रसूर्यशङ्खचक्रदक्षिणावर्त्तस्वस्तिकलक्षणाः विभक्ताः=सुस्पष्टाः रतिदाः=सुखदाः पाणिरेखाः=हस्तरेखा यांसां तास्तथा। 'पीणुण्णयकक्खवत्थिप्पदेसपडिपुण्णगलकवोला' पीनोन्नतकक्षवस्तिप्रदेशप्रतिपूर्णगलकपोलाः = पीनावुन्नतौ च कक्षौ = वाहुमूलौ वस्तिः = नाभ्यधोभाग स्तथा प्रतिपूर्णौ गलकपोलौ यासां तास्तथा 'चउरंगुलसुप्पमाणकंवुवरसरिसगीवा' चतुरंगुलसुप्रमाणकम्बुवरसदृशग्रीवाः = चतुरंगुलप्रमाणा कम्बुवर—

फिर वे कैसी होती हैं सो कहते हैं—'निद्धपाणिलेहा' इत्यादि०।

टीकार्थः—(निद्धपाणिलेहा) इनके दोनों हाथों की रेखाएँ स्निग्धसुस्पष्ट होती है। (ससिसूरसंखचक्कवरसोत्थियविभत्तसुविरइयपाणिलेहा) उनके हाथों में शशि—चंद्र रवि, शंख, चक्र और दक्षिणावर्त्त स्वस्तिक, इन आकार की रेखाएँ होती हैं। और ये सब रेखाएँ सुस्पष्ट रहती हैं, सुखद होती हैं। (पीणुण्णयकक्खवत्थिप्पदेसपडिपुण्णगलकवोला) इनकी दोनों कक्षाएँ—वाहुमूल—पीन—पुष्ट और उन्नत होता है। वस्ती नाभि का अधोभाग भी ऐआ ही होतीं है। तथा गला और कपोल ये दोनों इनके प्रतिपूर्ण—भरे हुए रहते हैं। (चउरंगुलसप्पमाणकंबूवर—

તે યુગલિક સ્ત્રીઓનું વધુ વર્ણન કરે છે—"निद्धपाणिलेहा" ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—"निद्धपाणिलेहा" તેમના બન્ને હાથની રેખાઓ સ્નિગ્ધ—સુસ્પષ્ટ હોય છે. "ससिसूरसंखचक्कवरसोत्थियविभत्तसुविरइयपाणिलेहा" તેમના હાથોમાં ચંદ્ર,સૂર્ય,શંખ,ચક્ર,દક્ષિણાવર્ત સ્વસ્તિક આદિના આકારની રેખાઓ હોયછે. તે બધી રેખાઓ સુસ્પષ્ટ અને સુખદ હોય છે "पीणुण्णयकक्खवत्थिप्पदेसपडिपुण्णगलकवोला" તેમની બન્ને કૂખો પુષ્ટ અને ઉન્નત હોય છે. વસ્તિ—નાભિની નીચેનો ભાગ પણ એવો જ હોય છે, તથા તેમનું ગળું અને ગાલ પ્રતિપૂર્ણ ભરાવદાર હોય છે. "चउरंगुलसुप्पमाणकंबूवरसरिसगीवा" તેમની ગ્રીવા

सदृशी=प्रधानशङ्खतुल्या च ग्रीवा यासां तास्तथा 'मंसलसंठियपसत्थहणुया' मांसलसंस्थितप्रशस्तहनुकाः = मांसलः-पुष्टः संस्थितः = सुसंस्थानयुक्तः आम्रफलाकारः प्रशस्तः=सुन्दरो हनुः=ओष्ठाधोभागो यासां तास्तथा। 'दालिमपुप्फप्पगासपीवरपलंबकोंचिय वराधरा = दाडिमपुष्पप्रकाशपीवरप्रालम्बवराधराः=तत्र-दाडिमपुष्पप्रकाशः = दाडिमपुष्पसमप्रभो रक्त इत्यर्थः, पीवरः = पुष्टः प्रालम्बः = ईषल्लम्बमानः कुञ्चितः = वलितः वरः = प्रशस्तोऽधरो यास तास्तथा' सुंदरोत्तरुट्ठा' सुन्दरोत्तरोष्ठा=सन्दरउत्तरोष्ठउपरितन ओष्ठो यासां तास्तथा 'दधिदगरयकुंदचंदवासंतिमउलअच्छिद्दविमलदसणा' दधिदकरजः कुन्दचन्द्र वासन्तीमुकुलाछिद्रविमलदशनाः=तत्र-दधिदकरजः = जलबिन्दुः कुन्दः= पुष्पविशेषः चन्द्रः=प्रतीतः वासन्तीमुकुलः=वासन्तीनामक पुष्प कुड्मलश्च इत्येतैः सदृशाः शुक्लाः अछिद्राः=अविरलाः सुमिलिता दशनाः=दन्ताः यासां तास्तथा 'रत्तुप्पलरत्तपउमपत्तसुकुमालतालुजीहा' रक्तोत्पलरक्तपद्मपत्रसुकुमारतालुजिह्वाः

सरिसगीवा) इनकी गर्दन चार अंगुल की तथा प्रधान-उत्तम शंख के जैसी होती है। (मंसलसंठियपसत्थहणुया) इनके ओष्ठ का अधोभाग रूप दाढी मांसल-मजबूत पुष्ट, संस्थित-आम्र फल के जैसी सुन्दर आकार वाली और प्रशस्त-सुहावनी होती है। (दालिमपुप्फप्पगासपीवरपलंबकोंचियवराधरा) इनका अधरोष्ठ दाडिम-अनार के पुष्प के समान लाल वर्ण वाला होता है। पीवर-मांसादि से भरा हुआ होने के कारण पुष्ट होता है। तथा प्रालम्ब-कुछ २ लम्बासा रहता है। कुञ्चित-वलित एवं प्रशस्त होता है। (सुंदरोत्तरुट्ठा) जिनके ऊपर का ओष्ठ सुन्दर होता है। (दधिदगरयकुंदचंदवासंतिमउलअच्छिद्दविमलदसणा) इनके निर्मल दांत-दही, जलबिन्दु, कुंदपुष्प, चन्द्र, वासन्ती पुष्पकी कली, इनके जैसे शुभ्र होते हैं। विरले नहीं होते हैं किन्तु अविरल-परस्पर में मिले हुए रहते हैं। (रत्तुप्पलरत्तपउमपत्तसुकुमालतालुजीहा)

ચાર આંગળની તથા ઉત્તમ શંખ જેવી હોય છે. "मंसलसंठियपसत्थहणुया" તેમના હોઠના નીચેના ભાગરૂપ દાઢી માંસલ મજબૂત, સંસ્થિત-આમ્રફળના જેવા સુંદર આકારવાળી અને પ્રશસ્ત સુંદર હોય છે. "दालिमपुप्फप्पगासपीवरपलंबकोंचियवराधरा" જેમનો અધરોષ્ઠ દાડમના ફૂલ જેવો લાલ રંગનો, પુષ્ટ, તથા સહેજ લંબાયેલો રહે છે. તે અધરોષ્ઠ કુંચિત-વળેલો અને ઉત્તમ હોય છે "सुंदरोत्तरुट्ठा" તેમનો ઉપરનો હોઠ સુંદર હોય છે. "दधिदगरयकुंदचंदवासंतिमउलअच्छिद्दविमलदसणा" તેમના નિર્મળ દાંત દહીં, જળબિંદુ, કુંદપુષ્પ, ચન્દ્ર અને વાસન્તી પુષ્પની કળી, જેવા સફેદ હોય છે. તે દાંત છૂટા છૂટા હોતા નથી પણ પરસ્પરમાં મળીને આવેલા હોય છે. "रत्तुप्पलरत्तपउमपत्त सुकुमालतालुजीहा" તેમનું તાળવું અને જીભ લાલ

=तत्र रक्तोत्पलं = रक्त कमलं तद्वत् रक्तपद्मपत्रवच्च सुकुमारं तालुजिह्वं यासां तास्तथा, 'कणवीरमउलकुडिल अब्भुण्णय उज्जुतुंगनासा' करवीरमुकुलाऽकुटिलाऽभ्युन्नतऋजुतुङ्गनासाः = करवीरमुकुलं = कर्णिकारकलिका तद्वत् अकुटिला=अवक्रा अभ्युन्नता=अभितः उन्नता ऋज्वी=सरला तुङ्गा=मध्योन्नता च नासा=नासिका यासां तास्तथा 'सारयनवकमलकुमुयकुवलयदलनिगरसरिसलक्खणपसत्थ निम्मलकंतनयणा' शारदनवकमल कुमुदकुवलयदलनिकरसदृशलक्षणप्रशस्तनिर्मलकान्तनयनाः = शारदं = शरत्कालिकं यत् कमलं = सूर्यविकासिपद्मं, कुमुदं=चन्द्रविकासिपद्मं कुवलयदलं=नीलकमलपत्रं च तेषां निकरः=समूहः तेन सदृशे लक्षणप्रशस्ते=प्रशस्तलक्षणोपेते निर्मले=उज्ज्वले कान्ते=मनोहरे च नयने यासां तास्तथा 'आनामिय चावरुइल किण्हब्भराइ संठिय संगया यय सुजाय-तणुकसिणनिद्धभूमगा' आनामितचापरुचिरकृष्णाभ्रराजिसंस्थितसंगतसुजाततनु-कृष्णस्निग्धभ्रुवः-आनामितौ=वक्रीकृतौ चापौ = धनुषी तद्वत् रुचिरे कृष्णा-भ्रराजिसंस्थिते=कृष्णोग्ररेखासदृशे संगते=समुचिते आयते=दीर्घे सुजाते-स्वभा-

तालु और जिह्वा जिनका रक्त कमल के समान, तथा रक्तपद्मपत्र के समान सुकुमार होती है। (कणवीरमउलकुडिल अब्भुण्णयउज्जुतुंग-नासा नासिका कर्णिकार कनेर-की कलिका-कली-के समान अकुटिल तथा अभ्युन्नत, ऋज्वी-सरल, और तुङ्ग-मध्य में उन्नत होती है। (सारयनवकमल कुमुयकुवलयदलनिगरसरिसलक्खणपसत्थनिम्मलकं-तनयणा। जिनके दोनों नयन शरदकालसंबंधि सूर्यविकासी कमल के तथा चन्द्र विकासी पद्म के, कुवलय दल के, नील कमल के पत्रके समूह जैसे होते हैं। प्रशस्त लक्षणों से युक्त, निर्मल-उज्ज्वल, एवं कान्त-मनोहर होते हैं। (आनामियचावरुइल किण्हब्भराइसंठियसंग-यायगसुजायतणुकसिणनिद्धभूमगा) जिनकी दोनों भोहे वक्रीकृत धनुष

કમળ જેવી તથા લાલ કમળ પત્ર જેવી સુકુમાર હોય છે, "कणवीरमउल-कुडिलअब्भु ण्णयउज्जुतु गनासा" તેમની નાસિકા કરેણની કળી જેવી અકુ-ટિલ તથા ઉન્નત, ऋज्वी-સરળ અને तुङ्ग-મધ્યમાં ઊંચી હોય છે, "सारय-नवकमलकुमुयकुवलय - दलनिगर-सरिस - लक्खणपसत्थ-निम्मल- कतनयणा" જેમનાં બન્ને નયન શરદઋતુના સૂર્ય વિકસિત કમળ તથા ચન્દ્ર વિકસિત પદ્મની પાંખડીઓ જેવા તથા નીલકમલના પત્રસમૂહ જેવાં, પ્રશસ્ત લક્ષણો-વાળાં, નિર્મળ-ઉજ્જવળ, અને મનોહર હોય છે. "आनामियचावरुइल-किण्हब्भराइस ठियस गयाययसुजायतणुकसिण निद्धभूमगा" જેમની બન્ને- ભ્રમરો વક્રીકૃત ધનુષ્યના જેવી મનોહર, શ્યામ વાદળોના સમૂહ જેવી, સંસ્થિત,

वतः सुन्दरे तनू=प्रतले कृष्णे=कृष्णवर्णे स्निग्धे=चिक्कणे भ्रुवौ यासां तास्तथा।
'अल्लीणपमाणजुत्तसवणा' आलीनप्रमाणयुक्तश्रवणाः = आलीनौ=स्तब्धौ प्रमाणयुक्तौ=समुचितप्रमाणौ श्रवणौ=कर्णौ यासां तास्तथा एतावदेव न? किन्तु "सुस्सवणा' सुश्रवणाः = शब्दग्रहणशक्तिसम्पन्नयुक्ताः, 'पीणमट्ठगंडलेहा' पीनमृष्ट गण्डरेखाः=पीना=पुष्टाःमृष्टा=मसृणा सुकुमारा गण्डरेखा=कपोल पाली यासां तास्तथा 'चउरंगुलविसालसमनिडाला' चतुरंगुलविशालसमललाटा = चतुरंगुलं=चतुरंगुलप्रमाणं विशालं=विस्तीर्णं समं=समतलं ललाटं यासां तास्तथा 'कोमुई रयनियरविमलपडिपुण्णसोम्मवयणा' कौमुदी रजनीकर विमलप्रतिपूर्ण सौम्यवदनाः=कौमुदी=कार्तिकी पूर्णिमा तस्या यो रजनीकर=चन्द्र तद्वत् विमलं=निर्मल प्रतिपूर्णं सौम्यं=सुभगं वदनं यासां तास्तथा कार्तिकीपूर्णचन्द्रवदनाः, 'छत्तुण्णयउत्तमंगा' छत्रोन्नतोत्तमाङ्गाः=छत्रवत्समुच्छ्रितमस्तकाः 'अकविलसुसिणिद्धदीहसिरिया' अकपिलसुस्निग्धदीर्घशिरोजाः = अकपिला = अपि

केसमान रुचिर, कृष्णमेघराजि के समान, संस्थित, संगत-उचित आकारयुक्त, आयत-दीर्घ, सुजात-स्वभावतः सुन्दर, तनु-पतली, कृष्ण-कृष्णवर्णोपेत, और स्निग्ध-चिकनी होती हैं। (अल्लीणपमाणजुत्तसवणा) आलीण-स्तब्ध एवं समुचित प्रमाण से युक्त इनके दोनों कान होते हैं। (सुस्सवणा) तथा ये दोनों ही कान शब्दग्रहण करने की शक्ति से युक्त होते हैं। (पीणमट्ठगंडलेहा) इनकी कपोलपाली पीन-पुष्ट और मृष्ट—सकुमार होती है। (चउरंगुलविसाल समनिडाला) इनका विस्तीर्ण ललाट चार अंगुल प्रमाणवाला होता है तथा सम-समतल होता है। (कोमुईरयनियर विमल पडिपुण्ण सोम्मवयणा) इनका मुख कार्तिकी पूर्णिमा के चंद्रमंडल के समान निर्मल तथा पूर्ण होता है। सुभग होता है। (छत्तुण्णयउत्तमंगा) समुच्छ्रित विस्तारित छत्र के समान इनका मस्तक उन्नत होता है। (अकविल सुसिणिद्ध-

संगत-सुडोળ, આયત-લાંબી, સુજાત-કુદરતી રીતે જ સુંદર, તનુ-પાતળી, કાળા રંગની અને સ્નિગ્ધ-મુલાયમ હોય છે "अल्लीणपमाणजुत्तसवण्णा" તેમના બન્ને કાન સ્તબ્ધ અને સપ્રમાણ હોય છે. "सुस्सवणा" તે બન્ને કાનની શ્રવણશક્તિ ઘણી સરસ હોય છે. "पीणमट्ठगंडलेहा" તેમના ગાલ પુષ્ટ અને સુકુમાર હોય છે. "चउरंगुलविसालसमनिडाला" તેમનું વિશાળ લલાટ ચાર આંગળ પહોળું અને સમતલ હોય છે "कोमुई-रय-नियरविमल पडिपुण्णसोम्मवयणा" તેમનું મુખ કાર્તકી પૂનમના ચન્દ્રમંડળ જેવું નિર્મળ તથા પૂર્ણ હોય છે "छत्तुण्णयउत्तमंगा" વિસ્તીર્ણ છત્ર સમાન ઉન્નત તેમનું મસ્તક હોય છે. "अकविलसुसिणिद्धदीहसिरया" તેમનાં માથા પરના

शङ्गाः कृष्णा इत्यर्थः सुस्निग्धाः=सुकोमलाः दीर्घाश्च शिरोजाः=केशा यासां तास्तथा ' छत्त १ ज्झय २ जूव ३ थूभ ४ दामणि ५ कमंडलु ६ कलस ७ वावि ८ सोत्थिय ९ पडाग १० जव ११ मच्छ १२ कुम्म १३ रहवर १४ मगर १५ अंक १६ थाल १७ अंकुस १८ अट्ठावय १९ सुपइट्ठ २० अमर २१ सिरियाभि-सेय २२ तोरण २३ मेइणि २४ उदहिवर २५ पवरभवण २६ गिरिवर २७ वरायंस २८ सुललियगय २९ वसभ ३० सीह ३१ चामर ३२ पसत्थ वत्तीस-लक्खणधराओ ' छत्र १ ध्वज २ यूप ३ स्तूप ४ दामनी ५ कमण्डलु ६ कलश ७ वापी ८ स्वस्तिक ९ पताका १० यव ११ मत्स्य १२ कूर्म १३ रथवर १४ मकरा १५ ऽङ्क १६ स्थाला १७ ऽङ्कुशा १८ ऽष्टापद १९ सुप्रतिष्ठा २० ऽमर २१ श्रीकाभिषेक २२ तोरण २३ मेदिन्यु २४ दधिवर २५ प्रवरभवन २६ गिरिवर २७ वरादर्श २८ सुललितगज २९ वृषभ ३० सिंह ३१ चामर ३२ प्रशस्त द्वात्रिंशल्लक्षणधराः, तत्र—' छत्त ' छत्रं १ ' ज्झय ' ध्वजः २ ' जूव ' यूपः=दारुस्तम्भविशेषः ३ ' थूभ ' स्तूपः= ' चौंतरा ' इति भाषा प्रसिद्धः४, ' दामिणि ' दामनी = रज्जुः–तदाकाररेखेत्यर्थः ५ कमण्डलुः = प्रसिद्धः ६,

---

दीहसिरया) इनके मस्तक के केश बिलकुल काले होते हैं। सुस्निग्ध-सुकोमल एवं दीर्घ–लंबे होते हैं। (छत्त १ ज्झय २ जूव ३ थूभ ४ दाम-णि ५ कमंडलु ६ कलस ७ वावि ८ सोत्थिय ९ पडाग १० जव ११ मच्छ १२ कुंभ १३ रहवर १४ मगर १५ अंक १६ थाल १७ अंकुस १८ अट्ठा-वय १९ सुपइट्ठ २० अमर २१ सिरियाभिसे य २२ तोरण २३ मेइणि २४ उदहिवर २५ पवरभवण २६ गिरि वर २७ वरायंस २८ सुललिय-गय २९ वसभ ३० सीह ३१ चामर पसत्थं वत्तीसलक्खणधराओ) ये इन प्रशस्त वत्तीस ३२ लक्षणों को धारण करती हैं—छत्र १–ध्वजा २, यूप–स्तंभ ३, स्तूप–चोतरा ४, दामनी–रस्सी ५, कमण्डलु

વાળ તદ્દન કાળાં, સુકોમળ અને લાંબાં હોય છે. " छत्त १ ज्झय २ जूव ३ थूभ ४ दामणि ५ कमंडलु ६ कलसं ७ वावि ८ सोत्थिय ९ पडाग १० जव ११ मच्छ १२ कुंभ १३ रहवर १४ मगर १५ अंक १६ थाल १७ अंकुस १८ अट्ठावय १९–सुपइट्ठ २० अमर २१ सिरियाभिसेय२२ तोरण २३ मेइणि २४ उदहिवर २५–पवरभवण २६ गिरिवर २७ वरायंस २८ सुललियगय २९ वसभ ३० सीह ३१ चामर ३२ पसत्थवत्तीसलक्खणधराओ " તે યુગલિક લલનાઓ આ પ્રમાણે ૩૨ (બત્રીસ) ઉત્તમ લક્ષણો ધારણ કરે છે—

(૧) છત્ર (૨) ધ્વજા (૩) યૂપ–સ્તંભ (૪) સ્તૂપ–ચબૂતરો (૫) દામની-દોરડું, (૬) કમંડળ, (૭) કળશ (૮) વાપી (૯) સ્વસ્તિક (૧૦) પતાકા

' कलस ' कलशः= घटः ७ ' वावि ' वापी ८ ' सोत्थिय ' स्वस्तीकः९ 'पडाग' पताका १० ' जव ' यवः ११ ' मच्छ ' मत्स्यः १२ ' कुम्म ' कूर्मः-कच्छपः १३, रथवरः-प्रधानरथः १४ ' मगर ' मकरः १५, अङ्कः=रत्नाकरचिह्नविशेषः १६, ' थाल ' स्थालः=पात्रविशेषः १७ अङ्कुशः १८ ' अट्ठावय ' अष्टापदं= द्यूतफलकं १९ ' सुपइट्ठ ' सुप्रतिष्ठकं=स्थापनकं पात्रविशेषः २० अमरः=देव-विशेषः २१ ' सिरियाभिसेय ' श्रीकाभिषेकः २२ तोरणं २३ ' मेइणि ' मेदिनी=पृथ्वी २४ उदधिवरः २५ ' पवरभवण ' प्रवरभवनं २६ गिरिवरः २७ ' वरायंस ' वरादर्शः=प्रशस्तदर्पणः २८ सुललियगय ' सुललितगजः २९ 'वसभ' वृषभः ३०, ' सीह ' सिंहः ३१ चामरं ३२ च इत्येतानि प्रशस्तानि द्वात्रिंशल्लक्षणानि तेषां धरा यास्तास्तथाः, ' हंससरिच्छगईओ ' हंससदृशगतयः, ' कोइल-महुरगिराओ ' कोकिलमधुरगिरः=कोकिलमधुरस्वराः, 'कंता' कान्ताः=मनोज्ञाः, ' सव्वस्स अणुमयाओ ' सर्वस्याऽनुमताः – सवजनप्रियाः ' ववगयवलीपलिय-

---

६, कलश ७, वापी ८, स्वस्तिक ९, पताका, १०, यव, ११, मत्स्य १२, कूर्म-कच्छप १३, रथवर-प्रधानरथ १४, मकर १५, अंक-रत्न के आकार जैसा चिह्न १६, स्थाल-थाल १७, अंकुश १८, अष्टापद-द्यूतफलक १९, सुप्रतिष्ठक-ठोंणा २०, अमरदेवविशेष २१, अभिषेक करती हुई लक्ष्मी २२, तोरण २३, मेदिनी-पृथ्वी २४, उदधिवर-समुद्र २५, उत्तमभवन २६, उत्तमपर्वत २७, सुन्दर दर्पण २८, सुललितगज २९, वृषभ-बैल ३०, सिंह ३१, और चामर ३१। (हंससरिच्छगई) इनकी गति-चाल-हँस की गति जैसी होती है। (कोइलमहुरगिराओ) उनकी वाणी-कोयल की वाणी जैसी मधुर होती है। (कंता) ये अत्यंत मनोज्ञ होती हैं। (सव्वस्स अणुमयाओ) समस्त जनों को प्रिय लगती हैं।

---

(૧૧) યવ (૧૨) મત્સ્ય, (૧૩) કૂર્મ-કાચબો, (૧૪) ઉત્તમ રથ (૧૫) મગર (૧૬) અંક-રત્નના આકારનું ચિહ્ન (૧૭) થાળ (૧૮) અંકુશ (૧૯) અષ્ટાપદ-દ્યુતફલક, (૨૦) સુપ્રતિષ્ઠ-ઠોંણા (૨૧) અમર-દેવવિશેષ (૨૨) અભિષેક કરતી-લક્ષ્મી (૨૩) તોરણ (૨૪) મેદિની-પૃથ્વી, (૨૫) ઉદધિવર-સમુદ્ર (૨૬) ઉત્તમ ભવન (૨૭) ઉત્તમ પર્વત (૨૮) સુંદર દર્પણ (૨૯) સુંદર ગજ (૩૦) વૃષભ (૩૧) સિંહ અને (૩૨) ચામર. "हंससरिच्छगई" તેમની ચાલ હંસની ચાલ જેવી હોય છે, "कोइलमहुरगिराओ" તેમની વાણી કોયલની વાણી જેવી મીઠી હોય છે, "कंता" તે અત્યંત મનોહર હોય છે, અને "सव्वस्स अणुमयाओ" સઘળા લોકોને પ્રિય લાગે છે. "ववगयवली पलियवंग-

वंगदुव्वणवाहिदोभग्गसोयमुक्काओ ' व्यपगतवलीपलित व्यङ्गदुर्वर्णव्याधि-दौर्भाग्यशोकमुक्ताः=व्यपगता=नष्टा वली = चर्मशिथिलता तथा पलितं=केशशुक्लत्वं व्यङ्गं=अङ्गविकलता दुर्वर्णः=वैरूप्यं व्याधिः शरीरव्यथा, दौर्भाग्यं=वैधव्यं शोकः=खेदश्च एतैर्मुक्ताः = रहिता यास्तास्तथा ' उच्चत्तेण य नरथोवूणमूसियाओ ' उच्चत्वेन च नरस्तोकेनोच्छ्रिताः=उच्चत्वेन शरीरोच्चत्वेन च नरेभ्यः=पुरुषेभ्यः स्तोकोनं=किञ्चिन्न्यूनं यथास्यात्तथा उच्छ्रिताः=उच्चायास्ताः तथा-पुरुषप्रमाणात् किञ्चिदल्पप्रमाणोन्नताः, ' सिंगाराऽऽगारचारुवेसा ' शृङ्गाराऽऽगारचारुवेषाः, शृङ्गाररस्य=शृङ्गाररसस्य आगारमिव=गृहमिव चारुः=सुन्दरः वेषः=वस्त्रादिविभूषा यासां तास्तथा ' सुंदर थणजहणवयणकरचलणणयणा ' सुन्दरस्तनजघनवदनकरचरणनयनाः = सुन्दराणि स्तन-जघन-वदन-कर-चरण - नयनानि यासां तास्तथा ' लावण्णरूवजोव्वणगुणोववेया ' लावण्यरूपयौवनगुणोपेताः=लावण्यं = शरीरसौन्दर्यवैशिष्ट्यं निखिलावयवातिरेकिस्वरूपशोभाविशेषः रूपं

(ववगयवलीपलियवंगदुव्वणवाहिदोभग्ग सोयमुक्काओ) इनकी चमडीमें शिथिलता कहीं नहींआती है। बालों में सफेदी नहीं आती है। इनका कोई भी अंग विकल नहीं होता है। विरूपता इनमें बिलकुल नहीं होती है। व्याधि का इनमें अभाव होता है। वैधव्य रूप दौर्भाग्य से रहित होती हैं। शोक और खेद से वर्जित होती हैं। (उच्चत्तेण य नरथोवूण-मूसियाओ) ऊँचाई में ये मनुष्यों से कुछ ही कम होती हैं। (सिंगारागारचारुवेसा) शृंगाररस के घर जैसा इनका सुन्दर वेष-वस्त्रादि वेष-भूषा होता है। (सुन्दर थणजहणवयणकरचलणणयणा) इनके स्तन, जघन, वदन, कर, चरण, और नयन सुन्दर होते हैं। (लावण्णरूवजो-व्वणगुणोववेया) इनमें लावण्य, रूप, यौवन एवं गुण असारण होते हैं।

दुव्वणवाहिदोभग्गसोयमुक्काओ " તેમની ચામડીમાં શિથિલતા આવતી નથી, વાળ સફેદ થતા નથી, તેમને કોઈ પણ અંગે ખોડ હોતી નથી, તેમનામાં વિરૂપતા બિલકુલ હોતી નથી, વ્યાધિ તેમને પીડતી નથી કારણ કે તેઓ નીરોગી હોય છે, તેઓ વૈધવ્ય રૂપ દુર્ભાગ્યથી રહિત હોય છે. અને શોક અને ખેદથી રહિત હોય છે. " उच्चत्तेण य नरथोवूण मूसियाओ " મનુષ્યો કરતાં તેમની ઊંચાઈ થોડી હોય છે. " सिंगारागारचारुवेसा " તેમની વેષભૂષા શ્રૃંગાર રસના ઘર જેવી હોય છે. " सुंदरथणजहणवयणकरचलण-णयणा " તેમના સ્તન, જંઘા, વદન, કર, ચરણ, અને નયન સુંદર હોય છે. " लावण्णरूवजोव्वणगुणोववेया " તેમનામાં લાવણ્ય, રૂપ, યૌવન અને ગુણ

= नासिका नयनाद्याकारः यौवनं = तरुणावस्था, गुणाः=औदार्यमाधुर्यसौकुमार्यादयस्तैरुपेताः = युक्ता या स्ताःस्तथा, 'णंदणवणविवरचारिणीओव्वअच्छराओ' नन्दनवनविवरचारिण्यइवाप्सरसः = नन्दनवनप्रदेशसञ्चरणशीला अप्सरस इव, उत्तरकुरुमाणसच्छराओ ' उत्तरकुरुमानुषाप्सरसः = उत्तरकुरुषु मानुषस्वरूपा अप्सरसः 'अच्छरगपेच्छणिज्जाओ' आश्चर्य प्रेक्षणीयाः=अद्भुतरूपत्वादाश्चर्येण प्रेक्षणीयाः, तिण्णि पलिओवमाइं परमाउं पालइत्ता ' त्रीणि पल्योपमानि परमायुः पालयित्वा ' ता अपि – उत्तरकुरुदेवकुरुवनविवरनिवासी नरगणप्रमदा

शारीरिक विशिष्ट सौन्दर्य का नाम लावण्य है। यह लावण्य समस्त अवयवों के सौन्दर्य से भी परे स्वरूप की शोभा विशेष रूप होता है। नासिका, नयन, आदि की समुचित जो आकार रचना है वह रूप है। तरुण अवस्था का नाम यौवन है। औदार्य, माधुर्य सौकुमार्य आदि का नाम गुण है। (णंदणवणविवरचारिणीओव्व अच्छराओ उत्तरकुरुमाणसच्छराओ) नंदनवन में विचरनेवाली अप्सराओं के समान ये उत्तर-कुरू की भूमि में मनुष्य रूपिणी अप्सराएँ हैं। (अच्छरगपेच्छणिज्जाओ) अद्भुतरूप शालिनी होने के कारण ये आश्चर्य से देखने योग्य होती हैं, अर्थात्—इनको देखने से मनुष्य को बहुत अधिक आश्चर्य होता है। कारण इनकी रूप संपत्ति ऐसी अद्भुत होती है जो मनुष्यों में और जगह नहीं पाइ जाती है। (तिण्णिपलिओवमाइं परमाउं पालइत्ता-ताओ वि अवितित्ता कामाणं उवणमंति मरणधम्मं) इनकी उत्कृष्ट स्थिति तीन पल्य की होती है। इतने कालतक ये देवकुरु उत्तरकुरु

અસાધારણ હોય છે. શારિરિક વિશિષ્ટ સૌંદર્યને લાવણ્ય કહે છે તે લાવણ્ય સમસ્ત અવયવોના સૌંદર્ય ઉપરાંત સ્વરૂપની વિશિષ્ટ શોભારૂપ હોય છે. નાસિકા, નયન આદિની સુડોળ આકાર વાળી રચનાને રૂપ કહે છે. તરુણ અવસ્થાને યૌવન કહે છે ઉદારતા, માધુર્ય, કોમળતા આદિ ગુણ ગણાય છે. " णंदणवणविवरचारिणीओव्वअच्छराओ उत्तरकुरुमाणसच्छराओ " નંદન વનમાં વિચરતી અપ્સરાઓ જેવી તે ઉત્તરકુરુની ભૂમિમાં મનુષ્યરૂપિણી અપ્સરાઓ છે. " अच्छरगपेच्छणिज्जाओ " અદ્ભુત સૌંદર્યવાળી હોવાને કારણે તે સ્ત્રીઓ આશ્ચર્યથી જોવા જેવી હોય છે, એટલે કે તેમને જોઇને મનુષ્યોને અત્યંત આશ્ચર્ય થાય છે કારણ કે તેમનું રૂપ એટલું બધું અપૂર્વ હોય છે. કે તે રૂપ મનુષ્યોમાં કોઇ પણ જગ્યાએ જોવા મળતું નથી " तिण्णिपलि-ओवमाइं परमाउ पालइत्ता ताओ वि अवितित्ता कामाणं उवणमंति मरणधम्मं " તેમની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ત્રણ પલ્યની હોય છે. એટલા સમય સુધી તે દેવકુરુ

अपि, 'अवितित्ता कामाणं' अतृप्ता कामानाम्=कामोपभोगेऽतृप्ता एव 'उवणमंति-मरणधम्मं' उपनमन्ति मरणधर्म-म्रियन्त इत्यर्थः ॥ सू०१३ ॥

एतावताऽब्रह्माख्यचतुर्थाधर्मद्वारस्य 'ये च कुर्वन्ति' इति पञ्चममन्तर्द्वारं-निरूपितम्। साम्प्रतं पूर्वमनुक्तं 'यथाकृतम्' इति तृतीयमन्तर्द्वारं 'यत्फलं ददाति' इति चतुर्थमन्तर्द्वारं च वर्णयन्नाह—'मेहुण' इत्यादि—

मूलम्—मेहुणसन्नासं पगिद्धाय मोहभरिया सत्थेहिं हणंति एक्कमेक्कं विसय-विस-उदीरएहिं अवरे परदारेहिं हम्मंति विसुणिया धमनासं सयणविप्पणासं च पाउणंति परस्स दाराओ जे अविरया। मेहुणसण्णा संपगिद्धाय मोहभरिया अस्साहत्थी गवाय महिसा मिगाय मारिंति एक्कमेक्कं। मणुयगणा वानरा य पक्खी य विरुज्झंति मित्ताणि खिप्पं भवंति सत्तू। समयधम्मे गणे य भिंदाति पारदारी धम्मगुणरयाय बंभयारी खणेग उल्लोट्टंति चरित्ताओ। जसमंता सुव्वया य पावंति अजसकित्तिं। रोगत्ता वाहिया वड्ढंति रोयवाही, दुवेय लोए दुराराहगा भवंति इहलोए चेव परलोए परस्स दाराओ जे अविरया। तहेव केइ परस्स दारं गवेसमाणा गहिया य हयायवद्धारुद्धा य एवं जावगच्छंति विउल मोहाभिभूयसण्णा। मेहुण मूला य सव्वंति तत्थ तत्थ वत्तपुव्वा संगामा जणक्खयकरा

निवासिनी स्त्रियां कामसुखों को भोगती रहती हैं। परन्तु फिर भी उनसे ये तृप्त नहीं होती हैं। इस तरह कामभोगों में अतृप्त बनकर ही ये अन्त में मृत्यु को प्राप्त हो जाती हैं॥ सू०१३ ॥

નિવાસિની લલનાઓ કામભોગો ભોગવ્યા કરે છે, છતાં પણ તેમનાથી તેઓ તૃપ્તિ અનુભવતિ નથી. આ પ્રમાણે કામભોગથી અતૃપ્ત રહીને જ તેઓ મૃત્યુ પામે છે. ॥ સૂ. ૧૩ ॥

सीयाए दोवईएयकए, रूप्पिणीए पउमावईए ताराए कंचणाए रत्तसुभद्दाए अहिन्नियाए सुवण्णगुलियाए किन्नरीए य सुरूव विज्जुमईए रोहिणीए य, अण्णे य एवमाइया बहवो महिलाकए सुव्वंति अइक्कंतासंगामा गाम धम्ममूला। अबंभसेविणो इहलोए तावनट्ठा परलोए य नट्ठा महया मोहतिमिरंधयारे घोरे तसथावरसुहुम बायरेसु पज्जत्तमपज्जत्तसाहारणसरीरपत्तेय सरीरेसु य अंडय पोयय जराउय रसय संसेइम संमुच्छिम उब्भिज्ज उववाइएसु य नरग तिरियदेवमाणुसेसु जरामरणरोगसोगबहुलेसु पलिओवमसागरोवमाइं अणादीयं अणवदग्गं दीहमद्धं चाउ-रंतसंसारकंतारं अणुपरियट्टंति जीवा महामोहवससंनिविट्ठा॥१४

टीका—'मेहुणसण्णासंपगिद्धाय' मैथुनसंज्ञासम्प्रगृद्धाश्च=मैथुनाऽऽसक्ताः 'मोहभरिया' मोहभृताः=अज्ञानपूर्णाः, 'विसयविसउदीरएहिं वषयविषोदीरकैः=

इस तरह यहां तक सूत्रकार ने अब्रह्म नामके चतुर्थ द्वार का यह पांचवा अन्तर्द्वार कहा, अब वे पूर्व में अनुक्त "यथा कृतम्" इस तृतीय अन्तर्द्वार को और "यत्फलं ददाति" इस चतुर्थ अन्तर्द्वार को प्ररूपित करते हैं—'मेहुणे सण्णा संपगिद्धाय' इत्यादि०।

टीकार्थः—(मेहुणसण्णा संपगिद्धा य) जो प्राणी मैथुन संज्ञा में आसक्ति से युक्त होते हैं अर्थात् मैथुन में अत्यंत आसक्त रहते हैं वे

આ રીતે અહીં સુધી સૂત્રકારે અબ્રહ્મ નામના ચોથા અધર્મદ્વારનું પાંચમું અન્તર્દ્વાર વર્ણવ્યું. હવે જેનું વર્ણન કરવાનું બાકી રાખ્યું હતું તે "यथा कृतम्" નામના ત્રીજા અન્તર્દ્વારનું તથા "यत्फलं ददाति" તે ચોથા અન્તર્દ્વારનું પ્રરૂપણ કરે છે—"मेहुणसन्ना-संपगिद्धा य" ઈત્યાદિ

ટીકાર્થ—"मेहुणसण्णा संपगिद्धाय" જે જીવો મૈથુનમાં અત્યંત આસક્ત રહે છે તેઓ "मोहभरिया" તે મૈથુનરૂપ કર્મના મોહથી ભરપૂર

शब्दादि विषयविषयस्य प्रवर्तकैः 'सत्थेहिं' शस्त्रैः 'एकमेक्कं' एकैकं = प्रत्येकं 'हणंति' घ्नन्ति। 'अवरे' अपरे=केचित् 'परदारेहिं' परदारैः=परस्त्रीभिः 'हम्मंति' हन्यन्ते=मार्यन्ते, 'परदारै'-रित्यत्र कर्त्तरि तृतीया। यद्वा हेतौ तृतीया-परदारान् निमित्तीकृत्य अन्यैर्बलवद्भिः पारदारिकैर्हन्यन्ते। 'विसुणिया' विश्रुताः=पारदारिकत्वेन प्रसिद्धाः सन्तः केचित् 'धणणासं' धननाशं = 'सयणविप्पणासं' स्वजनविप्रणाशं=स्वजनवियोगं 'पाउणंति' प्राप्नुवन्ति, अयं भावः-राजपुरुषास्तत्रागत्य परदारिकाणां धनं गृह्णन्ति, परदारिकं बद्ध्वा दण्डनार्थं दण्डस्थानं नयन्ति च। यद्वा-परदारप्रसादनार्थं स्वकीयं पित्राद्युपार्जितं धनं परदारेभ्यः प्रय-

---

(मोहभरिया) उस मैथुनरूप कर्म के मोहसे भरे हुए होने के कारण, अथवा-विवेक से विकल बने रहने के कारण (विसयविस उदीरएहिं-सत्थेहिं एक्कमेक्कं हणंति) शब्दादि विषयरूप विषय के प्रवर्त्तक शास्त्रों से आपस में एक दूसरे को मार डालते हैं। (अवरे) कितनेक प्राणी (परदारेहिं हम्मंति) परस्त्रियों द्वारा मार दिये जाते हैं। अथवा परस्त्री को निमित्त करके अन्य बलशाली पारदारिक पुरुषों द्वारा मैथुनसंज्ञा में आसक्त मतिवाले व्यक्ति मार दिये जाते हैं। (विसुणिया) पारदारिक परस्त्री-लम्पट रूप से प्रसिद्ध हुए कितनेक मनुष्य (धणणासं) अपने धनके विनाश को और (सयणविप्पणासं) आत्मीयजनों के विनाशको (पाउणंति) प्राप्त करते हैं। तात्पर्य इसका यह हे की परस्त्रीलंपट व्यक्ति के पास राजपुरुष आकर उसके धन को छींन लेते हैं। और बांधकर उसे दंड देने के निमित्त कारागार में ले जाते हैं। अथवा-परस्त्री को प्रसन्न करने के लिये पारदारिक मनुष्य अपने पिता आदि द्वारा उपार्जित

હોવાને કારણે અથવા વિવેક રહિત બની જવાને કારણે 'विसयविसउदीरएहिं सत्थेहिं एक्कमेक्कं हणंति" શબ્દાદિ વિષયરૂપ વિષના પ્રચારક શસ્ત્રો વડે અંદરો અંદર લડીને એક બીજાને મારી નાખે છે. "अवरे" કેટલાક લોકો "परदारेहिं हम्मंति" પરસ્ત્રીઓ દ્વારા હણાય છે અથવા પરસ્ત્રીને કારણે બીજા બળવાન પરસ્ત્રીગમન કરનારા પુરૂષો દ્વારા મૈથુન સેવનમાં આસક્ત પુરુષોને મારી નાખવામાં આવે છે. "विसुणिया" પરસ્ત્રી લંપટ ગણાતા કેટલાક પુરુષો "धणणासं" પોતાના ધનનો નાશ અને "सयण विप्पणासं" આત્મીય જનોનો નાશ "पाउणंति" નોતરે છે. તેનો ભાવાર્થ એ છે કે પરસ્ત્રીગામી પુરુષની પાસેથી રાજપુરુષો તેમનું ધન જપ્ત કરે છે, અને તેને બાંધીને શિક્ષા કરવાને માટે કેદખાનામાં લઈ જાય છે. અથવા પરસ્ત્રીને રીઝવવા માટે પરસ્ત્રીગામી પુરુષ પોતાના પિતા આદિ દ્વારા ઉપાર્જિત ધન તે

च्छन्ति, तत्र प्रतिबन्धकान् स्वजनानपि पारदारिका निघ्नन्तीति । के इत्याह–'परस्सदाराओ जे अविरया' परस्य दारेभ्यो येऽविरताः=परस्त्री प्रसङ्गान्न विरताः परस्त्रीसङ्गपरायणाइत्यर्थः । तथा 'मेहुणसण्णासंपगिद्धाय' मैथुनसञ्ज्ञासम्प्रगृद्धाश्च 'मोहभरिया' मोहभृताः = मोहग्रस्ताः 'अस्साहत्थीगवाय' अश्वाः हस्तिनो गावश्च 'महिसा' महिषाः 'मिगाय' मृगाश्च 'एक्कमेक्कं' एकैकं = प्रत्येकं परस्परमित्यर्थः 'मारेंति' मारयन्ति । 'मणुयगणा' मनुजगणा 'वानराय' वानराश्च 'पक्खीय' पक्षिणश्च 'विरुज्झंति' विरुध्यन्ते=परस्परं विरोधं प्राप्नुवन्ति । तथा मैथुनसेवनात् 'मित्ताणि' मित्राणि 'खिप्पं' क्षिप्रं=शीघ्रं 'सत्तू' शत्रवो भवन्ति, पुनश्च 'समयधम्मगणेयभिंदंति' समयधर्मगणांश्च

किये हुए द्रव्य को उसके लिये दे देते हैं, और जो इस विषय में उनके लिये कोई आत्मीय बंधु प्रतिबंधक होता है उसे वे मार डालते हैं। (परस्सदाराओ जे अविरया) यह सब कुकृत्य वे ही व्यक्ति करते हैं। जो पर की स्त्रीयों के सेवन करने रूप अकृत्य से विरत नहीं होते हैं। तथा–इसी तरह (मेहुणसण्णासंपगिद्धा य) मैथुनसंज्ञा में आसक्त (मोहभरिया) मैथुनसंज्ञा से विमोहित मतिवाले अज्ञानी प्राणी (अस्साहत्थी गवा य महिसा मिगा य) अश्व, हस्ती, गाय, महिष, मृग हैं वे भी (एक्कमेक्कं मारेंति) आपस में एक दूसरे को मार डालते हैं। इसी तरह (मणुयगणा) मनुष्यगण (वानराय) बंदर एवं (पक्खीय) पक्षी भी (विरुज्झंति) एक दूसरे का विरोध करते हैं तथा (मित्ताणि खिप्पं भवंति सत्तू) इसी कर्म के सेवन से मित्रजन भी शीघ्र शत्रु बन जाते हैं। फिर जो पारदारिक परस्त्री में आसक्त–होते हैं वे (समय)

સ્રીને આપી દે છે, અને તેના એ પરસ્રીગમનના કૃત્યમાં જે કોઈ સંબંધીઓ આડખીલી રૂપ થાય છે તેમને મારી નાખે છે. "परस्सदाराओ जे अविरया" જે લોકો પરસ્રીગમન રૂપ કુકૃત્યથી વિરક્ત થઇ શકતા નથી તે લોકો જ આ બધાં કુકૃત્યો કરે છે. તથા એ જ પ્રમાણે "मेहुणसण्णा सपगिद्धाय" મૈથુન સંજ્ઞામાં આસક્ત, "मोहभरिया" મૈથુન સંજ્ઞામાં વિમોહિત મનવાળા અજ્ઞાની "अस्साहत्थी गवा य महिसा मिगा य" અશ્વ, હાથી, ગાય, ભેંસ, મૃગ, આદિ પ્રાણીઓ પણ "एक्कमेक्कं मारेंति" આપસમાં લડીને એક બીજાને મારી નાખે છે. એ જ રીતે "मणुयगणा" મનુષ્યો, "वानरा य" વાનરો, "पक्खी य" અને પક્ષીઓ પણ એક બીજાનો વિરોધ કરે છે "मित्ताणि खिप्पं भवंति सत्तू" એ કર્મના સેવનથી મિત્રો પણ જલ્દી તેમના શત્રુ બની જાય છે. વળી પરસ્રીમાં આસક્ત લોકો "समय" પોતાના સિદ્ધાંતોનો,

भिन्दन्ति=समयान् = सिद्धान्तान् धर्मान्=श्रुतचारित्रलक्षणान्-गणान्-समसामाचारिजनसमूहान् विनाशयन्ति 'परदारी' परदारिणः=परस्त्रीसक्ताः। तथा 'धम्मगुणरयाय' 'धर्मगुणरताश्च = सदाचारपरायणाः 'बंभयारी' ब्रह्मचारिणः 'खणेण' क्षणेनैव = अल्पकालेनैव - बहुकालरक्षितादपि 'चरित्ताओ' चारित्रात् 'उल्लोट्टंति' उल्लोटयन्ति=निपतन्ति। 'जसमन्तो' यशस्विनः 'सुव्वया य सुव्रताश्च = व्रतपरिपालकाः अपि 'अजसकित्ति' अयशःकीर्तिं= 'पावेंति' प्राप्नुवन्ति। 'रोगत्ता' रोगार्त्ता=क्षयादिरोगग्रस्ताः 'वाहिया' व्याधिताः=कुष्ठादिपीडिताः 'रोयवाही' रोगव्याधीन् 'वड्ढंति' वर्धयन्ति तेन 'दुवेयलोए दुराराहगा भवंन्ति' द्वयोश्च लोकयोर्दुराराधकाः = आत्मविराधका

अपने सिद्धान्तों को, (धम्मे) श्रुतचारित्र रूप धर्मको, एवं (गणे य) समान सामाचारी वाले गण को (भिंदंति) नष्ट कर डालते हैं। तथा-(धम्मगुणरया य) जो धर्मगुण रत-सदाचारपरायण (बंभयारी) ब्रह्मचारी होते हैं वे भी (खणे णं) क्षण भर में (चरित्ताओ) बहुनकाल के सुरक्षित अपने चरित्र से इसी एक दुर्गुण के वश से (उल्लोटंति) निपतित हो जाते हैं। तथा (जसमंतो) जो यशस्वी एवं (सुव्वया य) व्रतों के आराधक होते हैं वे भी इसी कारण (अजसकित्ति) अपकीर्त्ति को (पावेंति) प्राप्त करते हैं (परस्स दाराओ जे अविरया) इस परदार सेवन से जो प्राणी अविरत होते है वे (रोगत्ता) क्षयादि रोगों से ग्रस्त हो जाते है और (वाहिया) कुष्ठ आदि व्याधियों से पीड़ित होते रहते हैं, इतना ही नहीं फिर आगे के लिये वे रोगों को और व्याधियों को बढा भी लेते हैं। इस तरह (दुवे य लोए इहलोए परलोए चेव)

"धम्मे" श्रुत ચારિત્ર રૂપ ધર્મને અને "गणे य" સમાન સામાચારીવાળા સમૂહોનો "भिंदंति" નાશ કરી નાખે છે. તથા "धम्मगुणरया य" જે લોકો ધર્મગુણ રતસદાચાર પરાયણ, "बंभयारी" બ્રહ્મચારી હોય છે, તેઓ પણ "खणेण" ક્ષણવારમા "चरित्ताओ" લાંબા સમયથી સુરક્ષિત રાખેલા પોતાના ચારિત્રથી એ, એક જ દુર્ગુણને અધીન થઈને "उल्लोटंति" ભ્રષ્ટ થઈ જાય છે, તથા "जसमंतो" જે યશસ્વી અને "सुव्वया य" વ્રતોના આરાધક હોય છે, તેઓ પણ એજ કારણે "अजसकित्ति" અપકીર્તિ "पावेंति" પ્રાપ્ત કરે છે. "परस्सदाराओ जे अविरया" એ પરસ્ત્રીગમનમાં જે જીવો સતત આસક્ત રહે છે તેઓ "रोगत्ता" ક્ષયાદિ રોગોના પંજામાં સપડાય છે અને "वाहिया" કુષ્ઠ આદિ વ્યાધિઓથી પીડાયા કરે છે એટલું જ નહીં પણ ભવિષ્યમા તેમના તે રોગો અને વ્યાધિઓ વધતા જાય છે. આ રીતે તેઓ "दुवेय लोए-परलोए चेव" બન્ને લોકમાં આલોકમાં અને પરલોકમાં

भवन्ति। कयोर्द्वयोर्लोकयोः इत्याह इहलोए चेव परलोए' इहलोके चैव=इह-जन्मनि परलोके च परजन्मनि। के ते? इत्याह—'परस्स दाराओ जे अविरया' परस्य दारेभ्यो येऽविरताः=परस्त्रीपरायणाः। 'तहेव' तथैव 'केइ' केचित् 'परस्स दारं गवेसमाणा' परस्य दारान् गवेषमाणाः = परस्त्रियमन्वेषयन्तः, 'गहिया य' गृहीताश्च जनैः 'हयाय' हताश्च=ताडिताः 'वद्धरुद्धा य' वद्ध-रुद्धाश्च=रज्ज्वादिभिर्बद्धाः सन्तः पञ्जरादौ निरुद्धाश्च एवं 'जाव गच्छन्ति' यावत्-अधोगतिं प्राप्नुवन्ति 'अत्र यावत्पदग्रहणेन तृतीयाध्ययनस्थितः 'गहियाय वद्धरुद्धा य' इत्यारभ्य 'नरए गच्छंति णिरभिरामे' इत्येतदन्तः पाठोत्र-बोध्य इति सूचितम्। के ते इत्याह—ये 'मोहाभिभूयसण्णा' मोहाभिभूतसंज्ञाः= मोहेन=अज्ञानेन कामान्धतया वा अभिभूता-परीभूता नष्टा संज्ञा=सदसद्विवेकप्रज्ञा

दोनों लोकों में-इस लोक और परलोक (दुराराहगा) आत्म विरोधक (भवंति) बनते हैं। तथा (तहेव) इसी प्रकार (केइ परस्सदारं गवेसमाणा) जो परस्त्री की गवेषणा करने में रत रहते हैं वे यदि उस कार्य को करते समय (गहिया य) पकड़ लिये जाते हैं तो (हयाय) बहुत बुरी तरह ताडित किये जाते हैं। और) (वद्ध रुद्धा य) रस्सी आदि से बांधे जाकर पंजर आदि में बंध कर दिये जाते हैं। (एवं) इस तरह (जाव) यावत् यहां यावत् शब्द से तृतीय अध्ययन में कथित "गहिया य वद्धरुद्धाय" इस पाठ से लगाकर "नरए गच्छंति-णिरभिरामे) यहांतक का पाठ लिया गया है। जिससे यह समझाया गया है कि अन्त में ऐसे जीवोंकी वडी दुर्दशा होती है और वे मर कर नरक में जाते हैं। क्योंकि (विउलमोहाभूयसण्णा) ऐसे मनुष्यों का विपुल अज्ञान से अथवा कामान्धता से सद सद्विवेक बिलकुल नष्ट होना

"दुराराहगा" આત્મવિરોધક "भवति" બને છે. "तहेव" એ જ પ્રમાણે "केइ परस्सादारं गवेसमाणा" જે પરસ્ત્રીની શોધમાં લીન રહે છે, તેઓ જો તે કાર્ય કરતી વખતે "गहिया य" પકડાઈ જાય તો "हयाय" ઘણી જ ખરાબ રીતે તેમને મારવામાં આવે છે, અને "वद्धरुद्धाय" દોરડાં આદિથી જકડીને પાંજરાં આદિમાં પૂરી દેવામાં આવે છે. "एवं" આ રીતે "जाव" यावत्-અહીં यावत् શબ્દ વડે ત્રીજા અધ્યયનમા કહેલ "गहिया-य वद्धरुद्धाय" થી લઈને "नरए गच्छंति णिरभिरामे" સુધીનો પાઠ લેવામાં આવેલ છે તેમાં એ સમજાવવામાં આવ્યું છે કે છેવટે તે જીવોની દશા બૂરી થાય છે અને તેઓ મરીને નરકમાં જાય છે, કારણ કે "विउलमोहा भूयसण्णा" એવા મનુષ્યોનો સદસદ્‌વિવેક, અજ્ઞાનથી અથવા કામાંધતા ને લીધે બિલકૂલ

येषांते तथा। तथा 'मेहुणमूला य' मैथुनमूलाश्च स्त्री हेतव एवेत्यर्थः 'तत्थ तत्थ' तत्र तत्र लोके शास्त्रे च 'वत्तपुव्वा' वृत्तपूर्वाः=भूतपूर्वाः 'जगक्खयकरा' जन क्षयकराः=जनसंहारकारकाः-रामरावणादीनां 'संगामा' संग्रामाः 'सुव्वंति' श्रूयन्ते। कस्याः कस्याः स्त्रियो-निमित्तं संग्रामा जाताः? इत्याह—

'सीयाए दोवईए कए' सीतायाः द्रौपद्याश्चकृते-सीताद्रौपदीनिमित्तमित्यर्थः एवं 'रुप्पिणीए पउमावई-ताराए कंचणाए रत्तसुभद्दाए अहिन्नियाए सुवण्णगुलियाए किन्नरीए य सुरूवविज्जुमईए रोहिणीए य' रुक्मिण्याः, पद्मावत्याः, तारायाः, काञ्चनायाः, रक्तसुभद्रायाः, अहिंनिकायाः सुवर्णगुटिकायाः, किन्नर्याश्च

जाता है। तथा (मेहुणमूला य तत्थ तत्थ वत्तपुव्वा जगक्खयकरा संगामा सुव्वंति) लोक और शास्त्र में जितने भी पहिले राम रावण आदि के जनक्षय कारक संग्राम हुए सुने जाते है वे सब मैथुनमूलक ही हुए हैं। इन सब लोक और शास्त्र प्रसिद्ध यत्र तत्र हुए संग्रामों का मूल कारण एक स्त्री हुई है॥

अब सूत्रकार इसी बात को विशेष स्फुट करते हैं किस २ स्त्री के निमित्त संग्राम हुए हैं इस विषक को कहते हैं-'सीयाए' इत्यादि।

टीकार्थः-(सीयाए, दोवईए य कए) सीता और द्रौपदी के निमित्त (रुप्पिणीए, पउमावईए, ताराए, कंचणाए, रत्तसुभद्दाये अहिन्नियाए सुवण्णगुलियाए, किन्नरीए, सुरूव विज्जुमईए, रोहिणीए य) रुक्मिणी के निमित्त, पद्मावती के निमित्त, तारा के निमित्त, कांचना के निमित्त, रक्त सद्भद्रा के निमित्त, सुवर्ण गुटिका के निमित्त, किन्नरी के निमित्त,

---

નાશ પામ્યો હોય છે. તથા "मेहुणमूला य तत्थ तत्थ वत्तपुव्वा जणक्खयकरा संगामा सुव्वंति" આ સૃષ્ટિમાં રામ રાવણ આદિ વચ્ચેના માણસોનો ક્ષય કરનારા જે સંગ્રામો થયા છે. તથા શાસ્ત્રોમાં જે સંગ્રામો વર્ણવ્યામાં આવે છે તે બધાનું મૂળ કારણ મૈથુન જ છે. તે બધા લોકપ્રસિદ્ધ તથા શાસ્ત્રપ્રસિદ્ધ સ્થળે સ્થળે થયેલા સંગ્રામોનું મૂળ કારણ કોઈ ને કોઈ સ્ત્રી જ હતી.

હવે સૂત્રકાર એ બાબતનું વધુ સ્પષ્ટિકરણ કરે છે-કયી કયી સ્ત્રીઓને કારણે સંગ્રામો થયા તે બતાવે છે— 'सीयाए" ઈત્યાદિ.

ટીકાર્થ.—"सीयाए, दोवईए य कए" સીતા અને દ્રૌપદીને કારણે "रुप्पिणीए, पउमावईए, ताराए, कचणाए, रत्तसुभद्दाए, अहिन्निगाए सुवण्णगुलियाए,-किन्नरीए, सुरूवविज्जुमईए, रोहिणीए य"-રુકમણીને નિમિત્તે, પદ્માવતીને નિમિત્તે, તારામતીને નિમિત્તે. કાંચનાને નિમિત્તે, રક્તસુભદ્રાને નિમિત્તે, અહિંનિકાને નિમિત્તે, સુવર્ણ ગુટીકાને નિમિત્તે, કિન્નરીને નિમિત્તે, સૌંદર્યવતી

सुरूपविद्युन्मत्याः, रोहिण्याश्च, तत्तत्स्थानप्रसिद्धायाः कृते संग्रामा अभूवन्। आसां चरितं तु तत्तद्ग्रन्थेभ्योऽवसेयम्। 'अण्णे य एवमाइया बहवो महिलाकए' अन्ये चैवमादिकाः = एवं प्रकाराः=बहवः-अनेके महिलाकृते=स्त्रीनिमित्तं 'अतिक्कंता' अतिक्रान्ताः=भूतपूर्वाः 'गामधम्ममूला' ग्रामधर्ममूलाः= मैथुन मूलकाः 'संगामा' संग्रामा जाता इति, 'सुव्वंति' श्रूयन्ते=लोके शास्त्रे च। ते चाब्रह्मसेविनः 'इहलोए तावनट्ठा' इहलोके तावन्नष्टाः = परस्त्रीगमनेनाऽऽत्मविराधका जाताः, 'परलोए य नट्ठा' परलोके च नष्टाः असद्गतिं प्राप्ताः केन केन प्रकारेण परलोको नष्टाभवन्तीत्याह—इतो मृत्वा 'महयामोहतिमिरंधयारे' महामोहतिमिरान्धकारे-महामोह एव तिमिरान्धकार=गाढान्धकारो यत्र स तथा तस्मिन् घोरे=भयङ्करे एतादृशे नरके गच्छन्ति। ततो निःसृत्य 'तसथावरसुहुमबायरेसु' त्रसस्थावरसूक्ष्मबादरेषु' तथा 'पज्जत्तमपज्जत्तग-

---

सरूप विद्युन्मती के निमित्त और रोहिणी के निमित्त संग्राम हुए हैं (अण्णे य एवमाइया बहवो) तथा इसी तरह के और भी अनेक (अइकंता) भूतपूर्व संग्राम (महिलाकए) इसी मैथुन सेवन निमित्तक हुए (सुव्वंति) लोक और शास्त्र में सुने गये हैं। (अबंभसेविणो इहलोए तावनट्ठा परलोए य नट्ठा) ये अब्रह्मसेवीजन इसलोक में तो नष्ट होते ही है, साथ २ में परलोक में भी नष्ट होते हैं, अर्थात् परस्त्री सेवन से जीव इसलोक में आत्मविराधक होकर परलोक में भी असद्गति को प्राप्त करते हैं। जब वे यहां से मरते हैं तब (महया मोह तिमिरंधयारे) महामोहरूप गाढ अंधकार से आच्छादित हुए (घोरे) भयंकर नरक में जाकर उत्पन्न होते है। वहां से जब वे निकलते हे तब

विद्युन्मतीने निमित्ते, अने रोहिणीने निमित्ते संग्रामो थया हता, "अण्णेय-एवमाइया बहवो" तथा ते प्रकारना बीजा पण अनेक "अइक्कंता" भूतकाळना संग्रामो "महिलाकए" ए ज मैथुन सेवनने निमित्ते थयानुं "सुव्वंति" लोकोमां तथा शास्त्रोमा सांभळवामा आवे छे

"अबंभसेविणो इहलोए तावनट्ठा परलोए य नट्ठा" ते मैथुन-सेवी लोको आ लोकमां तो नाश दुर्दशा पामे ज छे पण परलोकमां पण नष्ट थाय छे, एटले के परस्त्रीसेवनथी लोको आ लोकमा आत्मविराधक थईने परलोकमां पण दुर्गति प्राप्त करे छे, ज्यारे तेओ अहींथी मरण पामे छे त्यारे "महया मोहतिमिरंधयारे" महामोहरूप गाढ अंधकारथी छवायेला "घोरे" भयंकर नरकमां जईने उत्पन्न थाय छे. त्यांथी नीकळीने तेओ

साहारणसरीरपत्तेयसरीरेसु' पर्याप्ताऽपर्याप्तकसाधारणशरीरप्रत्येकशरीरेषु च जन्ममरणं कुर्वन्ति । ततोऽपि निःसृत्य 'अंड य पोयय जराउय रस य-संसेइम संमुच्छिम उब्भिज्ज उववाइएसु य' तत्र अण्डजाः=पक्षि मत्स्यादयः 'पोयज' पोतजाः=हस्त्यादयः 'जराउय' जरायुजाः=मनुष्यादयः, 'रस य' रसजाः=विकृतरसेषु समुत्पन्नाः 'संसेइम' संस्वेदिमाः=संस्वेदात् जाता यूका मत्कुणादयः 'संमुच्छिम' संमूच्छिमाः=संमूर्च्छिन जाताः दर्दुरादयः 'उब्भिज्ज' उद्भिज्जाः=पृथिवीमुद्भिद्य जाताः=शलभादयः 'उववाइय' औपपातिकाः=देव नारकादयश्च, इत्येतेषु च 'नरगतिरियदेवमाणुसेसु' नरकतिर्यग्देवमानुशेषु कीदृशेषु ? इत्याह—'जरामरणरोगसोगबहुलेसु' जरामरणरोगशोकबहुलेषु-

(तसथावरसुहुमाबायरेसु) त्रस, स्थावर, सूक्ष्म, बादर इन कायों में, तथा (पज्जत्तमपज्जत्तसाहारणपत्ते य सरीरेसु य) पर्याप्तक अपर्याप्तक, साधारण-शरीर, प्रत्येक शरीर इन पर्यायों में जन्म मरण करते हैं। वहां से भी निकल कर वे (अंड य पोयय जराउय रस य संसेइम संमुच्छियउब्भि-ज्जउववाइएसु य) अंडज जीवों में-पक्षी मत्स्य आदिकों में, पोतजजीवों में हस्ती आदिकों में, जरायुज में-जरा से पैदा होने वाले मनुष्य आदिकों में, रसज जीवों में-विकृत रसोंमें उत्पन्न होने वाले कृमि आदि जीवोंमें, संस्वेदिमोंमें पसीनेसे होनेवाले यूका, मत्कुण आदि जीवोंमें, संमूर्च्छिम जन्मवाले दर्दुर (मेढक) आदि जीवों में, उद्भिज्ज जीवों में-पृथिवि को भेदकर उत्पन्न होने वाले शलभ आदि जीवों में औपपातिक जन्म धारी देव और नारकियों में उत्पन्न होते हैं। तथा वे (जरामरणरोगसोग बहुलेसु नरगतिरियदेवमाणुसेसु) जरा, मरण, रोग, शोक बहुल, नरक,

"तसथावरसुहुमबायरेसु" त्रसકાય, સ્થાવરકાય, સૂક્ષ્મકાય અને બાદરકાયોમા તથા "पज्जत्तमपज्जत्तसाहारणसरीरपत्तेयसरीरेसु य" પર્યાપ્તક, અપર્યાપ્તક, સાધારણ શરીર, પ્રત્યેક શરીર આદિ પર્યાયોમા જન્મ મરણ અનુભવે છે. ત્યાંથી પણ નીકળીને તેઓ "अंडय-पोयय-जराउय-रसय ससेइम-संमुच्छिय-उब्भिज्जउववाइएसु य" અંડજ જીવોમાં-પક્ષી મત્સ્ય આદિમાં, પોતજ જીવોમાં હાથી આદિમાં જરાયુજમાં મનુષ્ય આદિકોમાં રસજ જીવોમાં વિકૃત રસોમા ઉત્પન્ન થનાર કૃમિ આદિ જીવોમા, संस्वेदिमों માં-પરસેવાથી ઉત્પન્ન થનાર જૂ, માંકડ આદિ જીવોમાં, સમૂચ્છિમ જન્મવાળા દેડકા આદિ જીવોમાં, ઉદ્ભિજ્જજીવોમા-પૃથ્વીને ભેદીને ઉત્પન્ન થનાર તીડ આદિ જીવોમાં, ઔપપાતિક દેવ અને નારકીઓમાં ઉત્પન્ન થાય છે. તથા તેઓ "जरामरण-रोगसोगबहुलेसु नरगतिरियदेवमाणुसेसु" જરા, મરણ, રોગ અને વિપુલ

चोत्पद्यन्ते, तत्र 'पलिओवमसागरोवमाइं' पल्योपमसागरोपमानि = पल्योपमसागरोपमकालं यावत् केचित्परिभ्रमन्ति। ये तु 'अणादियं' अनादिकं= आदिवर्जितं 'अणवदग्गं' अनवदग्रम्=अनन्तं 'दीहमद्धं' दीर्घाऽध्वान=दीर्घमार्गं 'चाउरंतसंसारकंतारं' चतुरन्तसंसारकान्तारं = देवमनुष्यनारकतिर्यग्लक्षणचतुर्गतिकसंसारमहारण्यं, 'महामोहवससंनिविट्ठा जणा' महामोहवशसंनिविष्टाजनाः=महामोहवशंगता अब्रह्मसेविना जनाः 'अणुपरियट्टंत्ति' अनुपर्यटन्ति=अनन्तकालपर्यन्तंपरिभ्रमन्ति ॥ सू० १४ ॥

पूर्वोक्तं निगमयन्नाह—'एसो सो' इत्यादि—

मूलम्—एसो सो अबंभस्स फलविवागो इहलोइओ परलोइओ य अप्पसुहो बहुदुक्खो महब्भओ बहुरयप्पगाढो दारुणो कक्कसो असाओ वाससहस्सेहिं मुच्चइ, नय अवेदइत्ता अत्थिहु मोक्खो त्ति। एवमाहंसु नायकुलनंदणो महप्पा जिणो उ वीरवरनाम धेज्जा कहेसि य अबंभस्स-फलविवागं।

तिर्यंच देव एवं मनुष्यों में जन्मते हैं। इनमें (पलिओवमसागरोवमाइं) कितनेक जीव पल्योपमप्रमाण कालतक और कितनेक सागरोपम प्रमाण काल तक घूमते रहते हैं। और कितनेक ऐसे भी होते हैं जो (महामोहवससंनिविट्ठा) महामोह के वशवर्ती होकर (अणादियं अणवदग्गं) अनादि अनंत (दीहमद्धं) उत्सर्पिणी अवसर्पिणीरूप दीर्घमार्ग युक्त (चाउरंतसंसारकंतारं) देव-मनुष्य नरक एवं तिर्यञ्चगतिरूप चारगतिवाले संसार कांतार में अनंतकालतक (अणुपरियट्टंति) परिभ्रमण करते रहते हैं ॥ सू०१४ ॥

શોકમય નરક, તિર્યંચ, દેવ અને મનુષ્ય યોનિમાં જન્મ પામે છે, તેમાના "पलिओवमसागरोवमाइं" કેટલાક જીવો પલ્યોપમ પ્રમાણકાલ સુધી અને કેટલાક સાગરોપમ પ્રમાણ કાળ સુધી તે યોનિયોમાં ભ્રમણ કર્યા કરે છે. અને કેટલાક જીવો એવા પણ હોય છે કે જે "महामोहवससंनिविट्ठा" મહામોહને અધીન થઈને "अणादियं अणवदग्गं" અનાદિ અનંત "दीहमद्धं" ઉત્સર્પિણી અવસર્પિણી રૂપ દીર્ઘમાર્ગ યુક્ત "चाउरंतसंसारकंतारं" દેવ, મનુષ્ય, નરક અને તિર્યંચ એ ચાર ગતિવાળા સંસાર કાંતારમાં અનંતકાળ સુધી "अणुपरियट्टंति" પરિભ્રમણ કર્યા કરે છે. ॥ સૂ. ૧૪ ॥

एयं तं अबंभपि चउत्थं सदेव मणुयासुरस्स लोगस्स पत्थणिज्जं एवं चिरपरिचियमणुगयं दुरंतं तिबेमि ॥सू०१५॥

॥ चउत्थं अहम्मदारं समत्तं ॥

टीका—'एसो सो' एष सः पूर्वोक्तः 'अबंभस्स फलविवागो' अब्रह्मणः फलविपाकः 'इह लोइओ' ऐहलौकिकः—मनुष्यभवापेक्षया, 'परलोइओ य' पारलौकिकश्च नरकाद्यपेक्षया 'अप्पसुहो' अल्पसुखः — क्षणमात्रसुखजनकत्वात्- 'बहुदुक्खो' बहुदुक्खः—प्रचुरदुःखहेतुत्वात् 'महब्भयो' महाभयः—वधबन्धन जन्ममरणादिभयोत्पादकत्वात् 'बहुरयप्पगाढो' बहुरजः प्रगाढः—कर्मदलिकबहु- त्वात् 'दारूणो' दारूणः—चतुर्गतिसंसारभ्रामकत्वात् 'कक्कसो' कर्कशः दशविधं-

---

अब इस पूर्वोक्त अब्रह्म विषय का उपसंहार करते हुए सूत्रकार कहते हैं—'एसो सो' इत्यादि० ।

टीकार्थ—(एसो सो) यह पूर्वोक्त (अबंभस्स) अब्रह्म-कुशील सेवन का (फलविवागो) फलरूपविपाक (इहलोइयपरलोइओ य) मनुष्य भव की अपेक्षा तथा नरकादि गति की अपेक्षा (अप्पसुहो) क्षणमात्र सुख का जनक होने से अल्पसुखरूप है तथा (बहुदुक्खो) प्रचुर दुःख का हेतु होने से महादुःखप्रद है, (महब्भओ) वध, बंधन, जन्म, मरणादि के भय का उत्पादक होने से महाभय स्वरूप है। (बहुरयप्पगाढो) ऐसे कर्म करने वालो को कर्मों की स्थिति और अनु- भाग बहुत अधिक मात्रामें बंधाता है इसलिये वह बहुरजःप्रगाढरूप है। (दारूणो) चतुर्गति रूप संसारमें ऐसे जीवोंका ही भ्रमण होता है-अतः

હવે આ પૂર્વોક્ત અબ્રહ્મ વિષયનો ઉપસંહાર કરતા સૂત્રકાર કહે છે— "एसो सो" ઈત્યાદિ

ટીકાર્થઃ—"एसो सो" આ પૂર્વોક્ત "अबंभस्स" અબ્રહ્મ-કુચારિત્ર સેવનનો "फलविवागो" ફલવિપાક "इहलोइयपरलोइओ य" મનુષ્ય ભવની અપેક્ષાએ "अप्पसुहो" ક્ષણમાત્ર સુખનો જનક હોવાને કારણે અલ્પસુખ- રૂપ છે, તથા "बहुदुक्खो" અત્યંત દુઃખનો હેતુ હોવાથી મહાદુઃખપ્રદ છે, "महब्भओ" વધ, બંધન, જન્મ, મરણ આદિ ભયનો ઉત્પાદક હોવાથી મહાભય સ્વરૂપ છે, "बहुरयप्पगाढो" એવા કર્મો કરનારને કર્મોની સ્થિતિ અને અનુભાગ બહુ જ વધારે પ્રમાણમા બંધાય છે તેથી તે બહુ રજઃપ્રગાઢ- રૂપ છે, "दारुणो" એવા જીવોને જ ચાર ગતિ રૂપ સંસારમાં ભ્રમણ કરવુ

क्षेत्रवेदनाजनकत्वात् 'असाओ' असातः=असातवेदनीयः-कर्मोत्पादकत्वात् 'वाससहस्सेहिं' वर्षसहस्रैः = अनेकपल्योपमसागरोपमादिकालोपभोगेन 'मुच्चइ' मुच्यते। तदेव व्यतिरेकमुखेनाह—नय अवेदइत्ता' नवाऽवेदयित्वा= उपभोगं विना न 'योक्खोत्ति' मोक्षोऽस्ति। 'एवं' उक्तरीत्या 'आहंसु' ऊचुः= कथितवन्त भूतपूर्वास्तीर्थङ्करगणधरादयः। तथा—तदनुसारेणैव 'नायकुलनंदणो' ज्ञातकुलनन्दनः—सिद्धार्थकुलानन्दकरः 'महप्पा' महात्मा=परमात्मरूपः 'जिणो'

चतुर्गतिरूप संसारमें भ्रमण करवानेका कारण होनेसे यह दारुण है। (कक्कसो) दश प्रकार की क्षेत्रवेदना का जनक होने से यह फलविपाक कर्कश है। (असाओ) असातवेदनीयरूप होने से यह असात है-अर्थात् असाता वेदनीय कर्म के उदय से यह उत्पन्न होता है इसलिये असाता-वेदनीयकर्म के द्वारा उत्पाद्य होने के कारण यह स्वयं असातस्वरूप है। अथवा इस प्रकार के कर्म करने वाले जीव जो फलविपाक भोगते है। उस समय वे असातावेदनीय कर्म का बंध करते है,-कारण फलविपाक भोगते समय उनकी आत्मा में दुःख शोक-ताप आदि भाव होते हैं इन भावों से जीव असातावेदनीय कर्म का आस्रव करता है। इस अपेक्षा से असातावेदनीय कर्म का उत्पादक होने से यह फलविपाक असातरूप माना गया है। (वाससहस्सेहिं) यह फलविपाक जीव पल्यो पमकालतक भोगने से (मुच्चइ) छूटता है। (नयअवेदइत्ता अत्थि हु मोक्खो त्ति) इस फलविपाक का उपभोग किये विना यह नहीं छूटता है।

પડે છે, તેથી ચાર ગતિવાળા સંસારમાં ભ્રમણ કરાવનાર હોવાથી તે દારુણ છે. "कक्कसो" દસ પ્રકારની ક્ષેત્ર વેદનાનો જનક હોવાથી તે ફલવિપાક કર્કશ-કઠોર છે. "असाओ" અસાત વેદનીય રૂપ હોવાથી તે અસાત છે-એટલે કે અસાતાવેદનીય કર્મના ઉદયથી તે ઉત્પન્ન થાય છે, તેથી અસાતા વેદનીય કર્મદ્વારા ઉત્પાદ્ય હોવાને કારણે તે પોતે અસાતસ્વરૂપ છે. અથવા આ પ્રકારનાં કર્મ કરનારા જીવો જે ફલવિપાક ભોગવે છે, તે ભોગવતી વખતે અસાતા-વેદનીય કર્મનો બંધ બાંધે છે, કારણ કે ફલવિપાક ભોગવતી વખતે તેમના આત્મામાં દુઃખ શોક તાપ આદિ ભાવ હોય છે, તે ભાવોથી જીવ અસાતા-વેદનીય કર્મનો આસ્રવ કરે છે. આ અપેક્ષાએ અસાતાવેદનીય કર્મનો ઉત્પાદક હોવાથી આ ફળવિપાક અસાતરૂપ માન્યો છે. "वाससहस्सेहिं" આ ફલવિપાક પલ્યોપમ કાળ સુધી અથવા સાગરોપમ કાળ સુધી ભોગવ્યા પછી જ જીવ 'मुच्चइ" તેનાથી મુક્ત થાય છે. 'नय अवेइत्ता अत्थि हु मोक्खो त्ति" આ ફળવિપાકનો ઉપભોગ કર્યા વિના તે મુક્ત થઇ શકતો નથી. "एवं"

जिनः वीरवरनामधेयः–प्रख्यातनामा भगवान् श्रीमहावीरोऽपि 'अबंभस्स' अब्रह्मणः 'फलविवागं' फलविपाकं 'कहेसिय' कथितवांश्च 'एयं तं' एत त्तत्=उपदर्शित स्वरूपम् 'अबंभ' अब्रह्म–अब्रह्मनामकं 'चउत्थं' चतुर्थमधर्म-द्वारं 'सदेवमणुयासुरस्स लोगस्स' सदेवमनुजासुरस्य लोकस्य 'पत्थणिज्जं' प्रार्थनीयम्। एवं 'चिरपरिचिथं' चिरपरिचितम्, अनादि कालादनुभूयमानम् 'अणुगयं' अनुगतं=प्राणिनां पृष्टतोलग्नं, दुरन्तं–दुःखावसानं च। 'त्ति बेमि' इति ब्रवीमि, एतद् जम्बूस्वामिनं प्रति सुधर्मस्वामि वाक्यम् ॥ सू० १५ ॥

इति श्रीप्रश्नव्याकरणस्य सुदर्शन्याख्यायां व्याख्यायां हिंसादि पञ्चास्रवद्वारेषु अदत्तादानाख्यं चतुर्थमधर्मद्वारं समाप्तम् ॥ ३ ॥

(एवं) इस प्रकार का कथन (आहंसु) भूतपूर्व तीर्थंकर गणधरादिक देवों का है। और इसी प्रकार से अब्रह्म के फलविपाक उन्हीं तीर्थंकरों के कहे अनुसार (नायकुलनंदणो) सिद्धार्थकुलको आनंद देनेवाले (महप्पा जिणो उ) महात्मा जिनेन्द्र (वीरवरनामधेज्जा) वीरवरने-श्री वर्धमानस्वामी ने भी (अबंभस्स) अब्रह्म के (फलविवागं) फलविपाक को (कहेसिय) कहा है (एयं तं) यह वह (अबंभं) अब्रह्म नाम का (चतुत्थं) चतुर्थ अधर्मद्वार (देवमणुयासुरस्स लोगस्स) देव मनुष्य और असुर लोक इन सब के यह (पत्थणिज्जं) प्रार्थनीय है, अर्थात् इस अब्रह्म का ये देवादि सेवन करते हैं। (एवं) इस प्रकार यह (चिर-परिचियं) जीवों के पीछे अनादिकाल से लगा हुआ चला आने के कारण (अणुगयं) अनुभूयमान है और (दुरंतं) इसका अवसान (अन्त)से दुरन्त

આ પ્રકારનું કથન "आहंसु" ભૂતપૂર્વ તીર્થંકર ગણધરાદિક દેવોનું છે. અને તે રીતે જ અબ્રહ્મના ફલવિપાકનું કથન તે તીર્થંકરોના કહેવા પ્રમાણે: "नायकुल-नंदणो" સિદ્ધાર્થના કુળને આનંદ દેનાર "महप्पाजिणो उ" મહાત્મા જિનેન્દ્ર "वीरवरनामधेज्जा" વીરવર શ્રી વર્ધમાન સ્વામીએ પણ "अबंभस्स" અબ્રહ્મનો "फलविवागं" ફળવિપાક "कहेसिय" કહેલ છે. "एयंतं" આ તે "अबंभं" અબ્રહ્મ નામનું "चउत्थं" ચોથું અધર્મદ્વાર "देवमणुयासुरस्स लोगस्स" દેવ. મનુષ્ય, અને અસુર તે બધાને તે "पत्थणिज्जं" પ્રાર્થનીય છે, એટલે કે દેવાદિ તે અબ્રહ્મનું સેવન કરે છે "एवं" આ રીતે તે "चिरपरिचियं" જીવોની પાછળ અનાદિ કાળથી ચાલ્યું આવે છે તેથી "अणुगय" અનુભૂય-

है नाना प्रकार के दुःखो का दाता है। (त्ति बेमि) ऐसा हे जंबू! मैं कहता हूं। इस प्रकार सुधर्मास्वामीने जंबूस्वामी को इसके विषय में समझाया है ॥ सू०१५ ॥

॥ चतुर्थ अधर्मद्वार समाप्त ॥

માન છે, અને " दुरंतं " તેનું અવસાન દુરંત છે–નાના પ્રકારના દુઃખો દેનારૂ છે. " त्तिबेमि " એવું હે જંબૂ! હું કહુ છું. આ જમ્બૂસ્વામીને સુધર્મસ્વામીએ અબ્રહ્મના વિષે સમજાવ્યું છે. ॥ સૂ. ૧૫ ॥

ચોથું આસ્રવ (અધર્મ)દ્વાર સમાપ્ત થયું.

अथ पञ्चमाध्ययनम् ।

अथ चतुर्थास्रवद्वारसमाप्त्यनन्तरं पञ्चममास्रवद्वारं प्रारभ्यते, अस्य पूर्वेण सहायमभिसंबन्धः । अनन्तराध्ययनेऽब्रह्मस्वरूपं प्रोक्तं, तच्च परिग्रहे सत्येव भवतीति परिग्रहस्वरूपं निरूप्यते—'जम्बू' इत्यादि ।

मूलम्—जंबू ! एत्तो परिग्गहो पंचमो उ नियमा णाणामणिकणगरयण महरिह परिमल-सुपुत्तदार-परिजण--दासीदास-भयग-पेस्स--हय-गय-गो--महिस--उट्ट--खर-अय--गवेलग--सीया-सगड-रह-जाण-जुग्ग-संदण-सयणासण-वाहण-कुविय-धण-धन्न-पाणभोयणाच्छायण-गंधमल्ल-भायण-भवणविहिं चेव बहुविहियं भरहं णगणगर-णियम-जणवय-पुरवर--दोणमुह-खेड--कब्बड-मंडव-संवाह-पट्टण-सहस्सपरिमंडियं थिमियमेणीयं एगच्छत्तं ससागरं भुंजिऊण वसुहं अपरिमियमेणंततण्हमणुगयमहिच्छ-सारनिरयमूलो, लोभकलिकसायमहक्खंधो, चिंतासयनिचिय विउलसालो, गारवपविरल्लियग्गविडवो, नियडितया पत्तपल्लवधरो, पुप्फफलं जस्स कामभोगा आयासविसूरणाकलहपकंपियग्ग-सिहरो नरवइसंपूजिओ, बहुजणस्स हिययदइओ, इमस्स मोक्खवरमुत्तिमग्गस्स फलिहभूओ चरिमं अहम्मदारं ॥सू०१॥

पांचवा आस्रवद्वार प्रारंभ—

चतुर्थ आस्रवद्वार की समाप्ति के बाद अब पांचवा आस्रव द्वार प्रारंभ होता है । इसका पूर्व आस्रव द्वार के साथ इस प्रकार से संबंध है—चतुर्थ द्वार में जो अब्रह्म का स्वरूप कहा है वह अब्रह्म, परिग्रह के होने पर ही होता है इसलिये सूत्रकार इस द्वार में परिग्रह का स्वरूप

પાંચમા આસ્રવ–દ્વારનો પ્રારંભ

ચોથું આવસ્ર દ્વાર પૂરૂં કર્યા પછી હવે પાંચમા આસ્રવ દ્વારનું વર્ણન શરૂં થાય છે. તેનો આગળના આસ્રવદ્વાર સાથે આ પ્રકારનો સબંધ છે–

ચોથા દ્વારમાં અબ્રહ્મનું જે સ્વરૂપ કહ્યુ છે તે અબ્રહ્મ, પરિગ્રહ હોય તો જ થાય છે તેથી સૂત્રકાર આ દ્વારમા પરિગ્રહના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે–

टीका—'जंबू' इत्यादि—

सुधर्मा स्वामी पञ्चमास्रवद्वारस्वरूपं जिज्ञासमानं जम्बूस्वामिनं प्रति प्राह— 'जंबू' हे जम्बूः। 'एत्तो' इतश्चतुर्थास्रवद्वारादनन्तरं 'परिग्गहो' परिग्रहः— परिग्रहणं परिगृह्यते मूर्च्छारूपेण मूच्छापरिग्गहोवुत्तो इति वचनात् धर्मोपकरणं विनेत्यर्थ इति वा परिग्रहः = परिग्रहतरुर्नाम वक्ष्यमाणविशेपणानुरोधात् परिग्रहशब्दोऽत्र परिग्रहतरुपरको द्रष्टव्यः। 'पंचमो' पञ्चमआस्रवो 'णियमा' नियमात्-निश्चयेन भवति, नान्यःकश्चनातः परः आस्रवः। अयं परिग्रहःकथम्भूतः? इत्याह—'णाणामणि' इत्यादि। 'णाणामणि–कणग–रयण–महरिह–परिमल–सपुत्तदार–परिजण–दासी–दास–भयग– पेस्स–हय–गय–गो–महिस–उट्ट–खर–

निरूपित करते हैं—'जंबू एत्तो' इत्यादि०।

टीकार्थ—श्री सुधर्मा स्वामी पांचवें आस्रव द्वार के स्वरूप को जानने की इच्छवाले श्री जंबूस्वामी से कहते हैं—(जंबू) हे जम्बू! (एत्तो) चतुर्थ आस्रव द्वार के बाद (परिग्गहो पंचमो आसवो णियमा) परिग्रह पांचवां आस्रव द्वार नियम से है। इसके बाद और कोई-आस्रव द्वार नहीं है यह बात "नियम" शब्द से सूत्रकार ने प्रदर्शित की है 'ग्रहण करना' अथवा 'जो मूर्च्छाबुद्धि से ग्रहण किया जावे' वह परिग्रह है क्यों कि शास्त्र में मूर्च्छाको परिग्रह कहा है ऐसी इस परिग्रह शब्द की व्युत्पत्ति है। इस व्युत्पत्ति के अनुसार यह परिग्रह शब्द यहां परिग्रह रूप वृक्ष के अर्थ वाला जानना चाहिये क्यों कि इसे स्पष्ट करने के लिये जो सूत्रकार विशेषण इसी सूत्र में कह रहे हैं वे इसी बात की पुष्टि करते हैं। (णाणामणि-कणग–रयण–महरिय–परिमल–सपुत्तदार–परिजण–दासी–दास–भयग–पेस्स–हय-गो

"जंबू एत्तो" ઇત્યાદિ.

પાંચમા આસ્રવનું સ્વરૂપ જાણવાની ઇચ્છાવાળા જંબૂસ્વામીને શ્રી સુધર્મા સ્વામી કહે છે–"जंबू" હે જંબૂ! "एत्तो" ચોથા આસ્રવ દ્વાર પછી "परिग्गहो पंचमो आसवो णियमा" નિયમ પ્રમાણે જ પાંચમુ આસ્રવ દ્વાર પરિગ્રહ આવે છે ત્યાર પછી બીજું કોઈ પણ આસ્રવદ્વાર નથી તે બાબત "नियम" શબ્દથી સૂત્રકારે બતાવેલ છે "ગ્રહણ કરવુ" અથવા 'જે ગ્રહણ કરાય તે પરિગ્રહ છે, એવી આ પરિગ્રહ શબ્દની વ્યુત્પત્તિ છે. તે વ્યુત્પત્તિ પ્રમાણે આ પરિગ્રહ શબ્દ અહીં પરિગ્રહરૂપ વૃક્ષના અર્થવાળો સમજવાનો છે કારણ કે તે વાતને સ્પષ્ટ કરવાને માટે સૂત્રકાર જે વિશેષણો આ સૂત્રમાં કહી રહ્યા છે તે જ એ વાતને ટેકો આપે છે "णाणामणि–कजय–रयण–महरिह–परिमल–सपुत्तदार–परिजण–दासी–दास–भयग–पेस्स–हय–गो·

अय–गवेलग–सीयासगड–रह–जाण–जुग्ग–संदण–सयणा–सण–वाहण–कुविय–धण–धन्न–पाण–भोयण–च्छायण–गंध–मल्ल–भायण–भवणविहिं ' नानामणि–कनक–रत्न–महार्ह–परिमल–सपुत्रदार–परिजन–दासी–दास–भृतक–प्रैष्य–हय–गज–गो–महिषो–ष्ट्र–खरा–ऽज–गवेलक – शिविका –शकट–रथ–यान–युग्य–स्यन्दन–शयनाऽऽसन–वाहन–कुप्य–धन–धान्य–पान–भोजना–ऽऽच्छादन–गन्ध–माल्य–भाजन–भवनविधिम्। तत्र– ' णाणामणि ' नानामणयः–नाना=अनेक प्रकारा ये मणयः=चन्द्रकान्तादयः, ' कणग ' कनकं=सुवर्णं ' रयणं ' रत्नानि=कर्केतनादीनि, ' महरिह परिमल ' महार्ह परिमलाः – बहुमूल्यसुगन्धिपदार्थाः, तथा ' सपुत्तदार ' सपुत्रदाराः–पुत्रसहिताः स्त्रियः, तथा ' परिण ' परिजन–परिवारः=पौत्रादिरूपः, ' दासीदासं ' दासीदासं=दास्यो दास्यश्च ' भयग ' भृतकाः=कर्मकराः, ' पेस ' प्रैष्याः–प्रयोजनेषु प्रेषणीयाः, ' हय ' हयाः–अश्वाः ' गय ' गजाः ' गो ' गावः ' महिस ' महिषाः ' उट्ट ' उष्ट्राः, ' खर ' खराः गर्दभाः 'अय' अजाः 'गवेलग' गवेलका=मेषाः, 'सीया' शिबिकाः, 'सगड' शकटानि=गन्त्र्यः, ' रह ' रथाः 'जाण' यानानि यानपात्राणि 'जुग्ग' युग्यानि-गोलदेश प्रसिद्ध जम्पानविशेषाः ' संदण ' स्यन्दनाः–रथविशेषाः, ' सयणासण ' शयनासनानि=शय्या आसनानि च ' वाहण ' वाहनानि–' तामजाम ' इति देशी

–महिस–उट्ट–खर–अय–गवेलग–सीया–सगड-रह–जाण-जुग्ग–संदण–सयणा–ऽऽसण–वाहण–कुविय–धण–धण्ण–पाण–भोयणच्छायण–गंध–मल्ल–भायण–भवण–विहिं) चन्द्र कान्त आदि विविध प्रकार के मणि, कनक–सुवर्ण, कर्केतनादि रत्न, बहुमूल्य परिमल–सुगंधित पदार्थ, पुत्रसहित स्त्रीजन, पौत्रादिरूप परिजन, दासी दास, भृतक–कर्मकर, प्रयोजन के अवसर पर भेजने योग्य प्रेष्य, हय–अश्व, गज–हाथी, गाय, महिष, ऊँट, खर–गधा, अज–बकराबकरी, गवेलक–मेष–मेंढा, शिबिका-पालखी, शकट–गाड़ी, रथ, यानपात्र, युग्य–गोलदेश प्रसिद्ध जम्पाविशेष स्यंदन–रथ, शय्या, आसन, वाहन–तामजान, कुप्य–गृह के उपकरण

महिस–उट्ट–खरअय–गवेलग–सीया–सगड–रह–जाण–जुग्ग–संदण–सयणा– ऽऽसण–वाहण–कुविय–धण–धण्ण–पाण–भोयण –च्छायण–गंध–मल्ल–भायण–भवण–विहिं " चन्द्रकान्त આદિ વિવિધ પ્રકારના મણિ, કનક–સુવર્ણ કર્કેતન આદિ રત્ન, બહુમૂલ્ય પરિમલ–સુગંધિત પદાર્થો, સપુત્ર સ્ત્રીજન, પૌત્રાદિરૂપ પરિજન, દાસ-દાસી, ભૃતક–કારીગર, પ્રયોજનને માટે મોકલવામાં આવનાર પ્રેષ્ય (દૂત) હય–અશ્વ, ગજ–હાથી, ગાય, ભેંસ ઊંટ, ખર–ગધેડાં, અજ–બકરા બકરી, ગવેલક ઘેટાં, શિબિકા–પાલખી, શકટ–ગાડું. રથ, યાનપાત્ર, યુગ્ય, સ્યંદન–રથ

भाषा प्रसिद्धानि, 'कुविय' कुप्यानि-गृहोपकरणानि आसन्दीपल्यङ्कादीनि 'धण' धनानि-गणिमादीनि 'धन्न' धान्यानि-शाल्यादीनि, 'पाण' पानानि=दुग्धादीनि, 'भोयग भोजनानि - अशनादीनि 'आच्छायग' आच्छादनानि-वस्त्रक म्बलादीनि, 'गंध' गन्धा - कोष्ठपुटादि सुगन्धिद्रव्यविशेषाः, 'मल्ल' माल्यानि = पुष्पदीनि 'गंध' गन्धा -कोष्टपुटादि सुगन्धिद्रव्यविशेषाः, 'मल्ल' माल्यानि=पुष्पादीनि, 'भायण' भाजनानि-स्थलीकटोरादीनि, 'भवण' भवनानि-प्रासादगृहादीनि, एतेषां द्वन्द्वः, तेषां यो 'विहि' विधिः-विधानम्-उपार्जनादि लक्षणं, तं 'चेव' एव=अपि, एव शब्दोऽप्यर्थकः, तमपि 'वहुविहियं' बहुविधिकम्-अनेकप्रकारम् 'भुंजिऊण' भुक्त्वा=उपभुज्य इत्यग्रेण संबन्धः, तथा 'भरहं' भरतं = भरतक्षेत्रं च भुक्ता = कीदृशं भरतक्षेत्रमित्याह ? — 'नग नगर' इत्यादि। 'नगनगरनिगमजणवयपुरवरदोणमुहखेडकब्बडमडंबसंवाहण-पट्टणसहस्सपरिमंडियं' नग-नगर-निगम-जनपद-पुरवर-द्रोणमुखखेट-कर्वट-मडम्ब-संवाह-पत्तन सहस्रपरिमण्डितम्, तत्र-'णग' नगाः-पर्वताः 'णगर' नगराणि करवर्जितपुराणि, 'निगम' निगमाः=वणिग्निवासस्थानानि, 'जणवय' जनपदाः=देशाः 'पुर वर' पुरवराणि=नगरश्रेष्ठानि राजधान्यादीनि, 'दोणमुह'

कुरसी पलंग आदि, गणिमादिक धन, शाल्यादिक धान्य, दुग्धादिरूप पान, भोजन, वस्त्र, कम्बल आदि आच्छादन, कोष्ठपुट आदि सुगंधित द्रव्यविशेष, पुष्प, स्थाली कटोरा आदि भाजन, प्रासाद गृह आदि भवन, इन सब पदार्थों को उपार्जन आदि करने रूप (वहुविहियं चेव) अनेक प्रकार की विधि को भी (भुंजिऊण) भोग, करके, तथा (नगनगर-निगमजणवय पुरवर-दोणमुह-खेड-कब्बड-मडंब-संवाह-पट्टणसहस्स परिमंडियं) नग-पर्वत, नगर-अष्टादश प्रकार के कर से रहित पुर, वणिग्जनों के निवास स्थानरूप निगम, जनपद-देश, राजधानी आदि

શય્યા, આસન, વાહન, કુપ્ય-ખુરસી પલંગ આદિ ઘરનું રાચ રચીલું, સોના મહોર આદિ ધન, ચોખા આદિ ધાન્ય, દૂધ આદિ પેય દ્રવ્યો, ભોજન, વસ્ત્ર, કામળ આદિ ઓઢવાનાં સાધનો, કોષ્ઠપુટ આદિ સુગંધિત દ્રવ્યો, પુષ્પ, થાળી વાટકા આદિવાસણો, પ્રાસાદ ગૃહ અને ભવન, એ સઘળા પદાર્થોનું ઉપાર્જન કરવારૂપ "बहुविहियं चेव" અનેક પ્રકારે તેનો "भुंजिऊण" ઉપભોગ કરીને, તથા "नगनगरनिगमजणवय - पुरवर - दोणमुह - खेड- कब्बडभमडंब-संवाह-पट्टण-सहस्स-परिमडियं" નગ-પર્વત, નગર અઢાર પ્રકારના કરથી રહિત શહેર, વેપારીઓના નિવાસસ્થાનરૂપ નિગમ, જનપદ-દેશ, રાજધાની

द्रोणमुखानि= जलपथ स्थलपथगम्याः पुरविशेषाः, 'खेड' खेडानि-धूलीप्राकार युक्तानि, 'कव्वड' कर्बटानि=कुत्सितनगराणि 'मडंब' मडम्बानि-दूर दूर वसति युक्ताः प्रदेशाः, 'संवाह' संवाहाः=यत्र कृषका धान्यादिकमानीय स्थापयन्ति ते 'पट्टण' पत्तनानि-जलस्थल पथान्यतरपथयुक्तानि निवासस्थलानि, एतेषां द्वन्द्वः, एषां यत्सहस्रं तेन मण्डितं-शोभितं यत्तत्तादृशं, तथा 'थिमियमेयणीयं' स्तिमितमेदिनीकं-स्तिमिता = स्वचक्रपरचक्रभयवर्जिता, मेदिनी-भूमिर्यस्मिन् तत्तादृशम् , तथा 'एगच्छत्तं' एकच्छत्रम्-एकराजकमित्यर्थः, चक्रवर्त्तिपदप्राप्तेः प्राक् माण्डलिकत्वे एतादृशं भरतक्षेत्रं परिभुज्येत्यर्थः, तथा 'ससागरं' सागरसहिताम् 'वसुहं' वसुधां-समग्रां पृथ्वीं च चक्रवर्तिपदप्राप्त्यनन्तरं भुक्त्वा, एतद्भोगेऽपीत्यर्थः, 'अपरिमियमणंततण्हमणुगयमहिच्छसारनि-

---

श्रेष्ठनगर, जलपथ, स्थलपथ इन दोनों से गम्य स्थान रूप पुरविशेष धूली प्राकार से युक्त खेड, कुत्सितनगररूप कर्बट, दूर दूर बसति से युक्त प्रदेशरूप मडंब, संवाह-जहां पर कृषकजन धान्यादि लाकर रखते हैं ऐसे प्रदेश, जल पथ तथा स्थलपथ इन दोनों मे किसी एक पथ से युक्त पत्तन, इन सब की हजारों की संख्या से मंडित, तथा (थिमियमेयणीयं) स्वचक्र और परचक्र के भय से वर्जित भूमि से युक्त तथा (एगच्छत्तं) एक राजा वाले, चक्रवर्त्ति पद की प्राप्ति के पहिले माण्डलिकपनेमें नगनगरादि सहित (भरह) भरतक्षेत्र को भोग करके, तथा (ससागरं वसुहं भुंजि ऊण) चक्रवर्ति पद की प्राप्ति के अनन्तर समुद्रसहित समस्त पृथ्वीनो षटखंड मंडित भरतक्षेत्र को भी भोग करके (अपरिमियमणंततण्हमणुगयमहिसारनिरयमूलो) अपरिमित-प्रमाण

આદિ શ્રેષ્ઠ નગર, જળમાર્ગે તથા જમીનમાર્ગે પ્રવેશ કરી શકાય એવું શહેર ધૂળના કિલ્લા વાળું ખેડ, કુત્સિત નગર રૂપ કર્બટ જેની આસપાસ ઘણે દૂર સુધી ગામો ન હોય એવુ મડંબ, સંબાહ-જ્યાં ખેડૂતો ધાન્યાદિ લાવીને રાખે એવા પ્રદેશો, જળમાર્ગ તથા સ્થળમાર્ગ એ બન્નેમાંથી એક માર્ગ વાળુ પત્તન, એ બધાની હજારોની સંખ્યાથી યુક્ત, તથા "थिमिय मेयणीय" સ્વચક્ર અને પરચક્રના ભયથી રહિત ભૂમિવાળા તથા "एगच्छत्त" એક રાજાવાળા, ચક્રવર્તિ પદ પ્રાપ્ત કર્યા પહેલાં માંડલિક રાજા તરીકે પર્વતો તથા નગરો સહિત "भरह" ભરતક્ષેત્ર પર સત્તા ભોગવીને, તથા "ससागर वसुहं भुंजिऊण" ચક્રવર્તિ પદ પ્રાપ્ત કર્યા પછી સમુદ્ર સહિત આખી પૃથ્વીને-છ ખંડ વાળા ભરત ક્ષેત્રને પણ ભોગવીને "अपरि-मियमणंत-तण्ह-मणुगय-महिसार-निरयमूलो", અપરિ-

रयमूलो ' अपरिमितानन्ततृष्णानुगतमहेच्छासारनिरयमूलः, अपरिमिता=प्रमाण-रहिता याऽनन्ततृष्णा तयाऽनुगता या महेच्छा = अप्राप्तार्थाभिलाषरूपा तस्याः सारः=स्थिरांशरूपो यो निरयो दुर्गतिः स एवं मूलं यस्य परिग्रहतरो यः सः तथोक्तः, पुनः कीदृशः परिग्रहतरुरित्याह—' लोभकलिकसायमहक्खंधो ' लोभ-कलिकषायमहास्कन्धः=लोभः, कलिः=युद्धम्, कषायः – क्रोधमानमायारूपश्च महान् स्कन्धो यस्य सः, यद्यपि कषाय ग्रहणेनैव लोभो गतार्थः, तथापि तस्य प्राधा-न्य ख्यापनार्थं पृथगुपादानम् । तथा ' चिंतासयनिचिय विउलसालो ' चिन्ताशत-निचितविपुलशालः–चिन्ताशतानि निचितानि-एकत्रीकृतान्येव विपुलाः–विशालाः शालाः–शाखा यस्य सः ' चिन्तागतरूपविपुलशाखासमन्वितः । तथा–' गारव पविरल्लियग्ग विडवो ' गौरवपविरल्लियाग्रविटपः – ' गारव ' गौरवाणि= ऋद्धिरससातरूपाण्येव ' पविरल्लिय ' विस्तारवन्तः, अयं देशीशब्दः ' अग्ग-विडव ' अग्र विटपाः=शाखामध्यभागाग्राणि यस्य सः, तथा ' नियडितया पत्त पल्लवधरो ' निकृतित्वक्पत्रपल्लवधरः–निकृतिः–माया, सैव ' तयापत्तपल्लव '

रहित–ऐसी अनंततृष्णा से अनुगत अप्राप्त अर्थ की अभिलाष रूप महेच्छा का सार–स्थिरांशरूप जो निरय–दुर्गति है वह दुर्गति ही जिस परिग्रहरूप तरु का मूल है (लोभकलिकसायमहक्खंधो) तथा जिसके महान् स्कंध, लोभ–लालच, कलि–युद्ध एवं क्रोध, मान, माया, कषाय ये हैं । यद्यपि कषाय के ग्रहण से लोभ का ग्रहण हो जाता है फिर भी उसका जो यहां पृथक् रूप से ग्रहण किया गया है उसका तात्पर्य उसकी प्रधानता दिखलाने का है । तथा (चिंतासयनिचियविउल सालो) जिसकी विशाल शाखाएँ एकत्रीभूत सैंकड़ो चिन्तएँ हैं । तथा (गारवपविरल्लियग्ग-विडवो) ऋद्धि रससातरूप गौरव ही जिसके विस्तार युक्त अग्रविटप है– शाखा के मध्यभाग एव अग्रभाग हैं । (नियडितयापत्तपल्लवधरो) निकृति–

मित–પ્રમાણુ રહિત તૃષ્ણાથી અપ્રાપ્ત વસ્તુ પ્રાપ્ત કરવાની અભિલાષા રૂપ મહે-ચ્છાનો સાર–સ્થિરાંશરૂપ જે દુર્ગતિ છે તે દુર્ગતિ જ તે પરિગ્રહરૂપી વૃક્ષનું મૂળ છે, " लोभकलिकसायमहक्खंधो " લોભ,–લાલચ, કલિ–યુદ્ધ અને ક્રોધ, માન, માયા, કષાય આદિ તે વૃક્ષના મહાન સ્કંધો છે. જો કે કષાયમાં લોભનો સમાવેશ થઈ જાય છે છતાં પણ તેને અહીં અલગ રીતે ગ્રહણ કરવામાં આવેલ છે તેનો હેતુ તેની પ્રધાનતા બતાવવાનો તથા " चिंतासय निचिय विउल सालो " સેંકડો એકત્રિત ચિંતાઓ તેની શાખાઓ છે તથા " गारव पविरल्लि-यग्गविडवो " ઋદ્ધિરસ સાતરૂપ ગૌરવ જ તેના વિસ્તાર યુક્ત અગ્રવિટપ છે– શાખાના મધ્ય ભાગ અને અગ્રભાગ છે. " नियडितयापत्तपल्लवधरो " નિકૃતિ–

त्वक्पत्रपल्लवाः, तेषां धर'-धारकः । तथा 'जस्स' यस्य परिग्रहतरोः 'काम-भोगा' कामाभोगा एव 'पुप्फफलं' पुष्पफलानि । तथा-'आयासविसूरणा-कलहपकंपियग्गसिहरो' आयासविसूरणाकलहप्रकम्पिताग्रशिखरः-आयासः= शरीरश्रमः, विसूरणा=मानसी पीडा, कलहः=वचनभण्डनम्, एत एव प्रकम्पित-मग्रशिखरम्=अग्रभागो यस्य सः, तथा 'नरवइसंपूजिओ' नरपतिसंपूजितः= भूपतिपरिसेवितः, तथा -'बहुजणस्स हियदइओ' बहुजनस्य हृदयदयितः-अनेकजनवल्लभः इत्यर्थः, तथा-अयं परिग्रह तरुः-'इमस्स' अस्य-प्रत्यक्षस्य 'मोक्खवरमुत्तिमग्गस्स' मोक्षवरमुक्तिमार्गस्य-मोक्षस्य वरः-श्रेष्ठो यो मुक्तिरूपो निर्लोभतारूपो मार्गः=उपायस्तस्य 'फलिहभूओ' अर्गलाभूतः-मोक्षस्यावरोधक-काष्ठभूतो वर्त्तते, इत्येव स्वरूपं 'चरमं अहम्मदारं' चरममधर्मद्वारम्=अन्तिम-मधर्मद्वारम् । एतत्कथनेन यादृशेति प्रथममन्तरद्वारमुक्तम् ॥ सू० १ ॥

मायाचारी ही जिसकी छाल है, पत्र हैं और पल्लव हैं । (जस्स पुप्फफलं-कामभोगा) कामभोग ही जिसके पुष्प और फल हैं । (आयासविसूर-णाकलहपकंपियग्गसिहरी) आयास शारीरिकश्रम विसूरणा-मानसिक पीडा, और कलह, ये ही जिस के प्रकंपित अग्रभाग हैं (नरवइसंपूजिओ) तथा यह परिग्रहरूप वृक्ष भूपतियों द्वारा परिसेवित है,-और (बहुजण-स्सहियदइओ) अनेक जनों को अत्यंत प्यारा है, (इमस्स मोक्खवर मुत्तिमग्गस्स फलिहभूओ) तथा यह परिग्रहरूप वृक्ष मोक्ष के श्रेष्ठ मुक्तिरूप-निर्लोभतारूप-मार्ग का अर्गला रूप है । (चरिमं अहम्मदारं) ऐसा यह पांचवां अन्तिम अधर्मद्वार है ।

भावार्थ—परिग्रह नाम ममत्वभाव का है । इसकी दूसरी संज्ञा मूर्च्छा भी है । इस मूर्च्छारूप तृष्णा का अन्त नहीं है । परिग्रह के

માયાચારી જ તેની છાલ પાન અને પલ્લવ છે "जस्स पुप्फफलं कामभोगा" કામભોગ જ તેનાં પુષ્પ અને ફળ છે. "आयास विसूरणाकलहपकंपियग्ग सिहरो" આયાસ-શારીરિકશ્રમ, વિસૂરણા-માનસિક પીડા અને કલહ, એ જ તેના ડોલાયમાન અગ્રભાગો છે "नरवइ सपूजिओ" તથા આ પરિગ્રહરૂપ વૃક્ષનું નૃપો સેવન કરે છે અને "बहुजणस्स हिययदइओ" તે અનેક લોકોને અત્યંત પ્રિય લાગે છે, "इमस्स मोक्खवरमुत्तिगस्स फलिहभूओ" તથા આ પરિગ્રહ રૂપ વૃક્ષ મોક્ષના શ્રેષ્ઠ મુક્તિરૂપ-નિર્લોભતારૂપ માર્ગના આડે આંગ-ળીયા જેવું છે. "चरिमं अहम्मदारं" એવું આ પાંચમું અધર્મ દ્વાર છે.

ભાવાર્થ—મમત્વ ભાવને પરિગ્રહ કહે છે. તેનું નામ મૂર્ચ્છા પણ છે. આ મૂર્ચ્છારૂપ તૃષ્ણાનો પાર જ હોતો નથી. પરિગ્રહના પંજામા ફસાયેલ જીવ

फंदे में फँसा हुआ प्राणी अपनी अनंत तृष्णाओं की पूर्ति करने में ही लगा रहता है। उसकी कोई भी तृष्णा शांत नहीं होती हैं। यदि कदाचित् कोई तृष्णा शांत भी हो जावे तो दूसरी तृष्णा उसके समक्ष मुँह फाड़कर आ जाती है, और उसकी पूर्ति करने में यह लग जाते है। इस तरह करते २ यह प्राणी उनकी पूर्ति करने में आसक्ति से बंध होता जाता है और अपना विवेक खो बैठता है। विवेक का खो बैठना परिग्रह है। यहां पर सूत्रकार ने इस परिग्रहरूप पंचम आस्रव द्वार का वर्णन वृक्ष के रूपक से किया है। परिग्रही जीव छोटी, बड़ी, जड़, चेतन, बाह्य या आन्तरिक चाहे जो वस्तु हो, और कदाचित् न भी हो तो भी उसमें बंध जाता है। नाना प्रकार के मणि आदि पदार्थों को भरतखंड की पूर्ण विभूति को भोग करके भी परिग्रही जीव की तृष्णा अनवरत अशांत ही रहती है। इस वृक्ष की जड़, स्कंध, विशाल शाखाएँ, अग्रविटप, छाल, पत्र, पल्लव, पुष्प, फल, आदि क्या २ हैं यह सब विषय ही इस सूत्र में विवेचित किया गया है। इस तरह के कथन से सूत्रकार ने परिग्रह का यादृश नामका जो प्रथम अन्तर्द्वार है उसका वर्णन किया हैं, क्यों कि इस द्वार में स्वरूप का कथन होता है, वह यहां पर अच्छी तरह से दिखला दिया गया है ॥सू० १॥

પોતાની અનંત તૃષ્ણાઓ પૂરી કરવામાં જ મંડયા રહે છે. તેની કોઇ પણ તૃષ્ણા શાંત પડતી નથી જો કોઈ તૃષ્ણા શાંત પડી તો તેની જગ્યાએ બીજી તૃષ્ણા મોઢું ફાડીને તૈયાર થઇ જાય છે, અને તે સંતોષવાને તે જીવ પ્રવૃત્ત થાય છે. આમ કરતાં કરતાં તેની પૂર્તિ કરવામાં આસક્તિથી બંધાઇ જાય છે અને પોતાની વિવેક બુદ્ધિ ગુમાવી દે છે. વિવેકને ખોઈ નાખવો તે પરિગ્રહ છે. અહીં સૂત્રકારે પરિગ્રહ નામના પાંચમા આસ્રવ દ્વારનું વર્ણન પરિગ્રહને વૃક્ષનું રૂપક દઈને કર્યું છે. પરિગ્રહી જીવ, નાની, મોટી, જડ, ચેતન, બાહ્ય કે આંતરિક ગમે તે પ્રકારની ચીજમાં આસક્ત બની જાય છે. વિવિધ પ્રકારના મણિ આદિ પદાર્થોનો તથા ભરતખંડની સંપૂર્ણ સંમૃદ્ધિનો ઉપભોગ કરીને પણ પરિગ્રહી જીવની તૃષ્ણા સતત અશાંત જ રહે છે આ પરિગ્રહરૂપ વૃક્ષનાં મૂળ, થડ, વિશાળ શાખાઓ, અગ્રવિટપ, છાલ, પાન, પલ્લવ, પુષ્પ, ફળ વગેરે શું શુ છે, તે બધાનું વિવેચન આ સૂત્રમાં કરવામાં આવ્યું છે. આ પ્રમાણેના કથન વડે સૂત્રકારે પરિગ્રહના યાદૃશ (કેવા પ્રકારનુ) નામના પહેલાં અંતર્દ્વારનું વર્ણન કર્યું છે, કારણ કે આ દ્વારમા સ્વરૂપનુ કથન થાય છે. તે સ્વરૂપનું વર્ણન અહીં સુંદર રીતે કરવામાં આવ્યું છે. ॥ સૂ-૧ ॥

अधुना यन्नामेति द्वितियमन्तरद्वारमाह—

मूलम्—तस्स नामाणि गोणाणि हुंति तीसं, तं जहा— परिग्गहो १, संचयो २, चयो ३, उवचयो ४, निहाणं ५, संभारो ६, संकरो ७ एवं आयारो ८, पिंडो ९. दव्वसारो १०, तहा महिच्छा ११, पडिबंधो १२, लोहप्पा १३, महद्दी १४, उवगरणं १५, संरक्खणा य १६, भारो १७, संपायुपायको १८, कलिकरंडी १९, पवित्थरो २०, अणत्थो २१, संथवो २२ अगुत्ती २३, आयासो २४, अविओगो २५, अमुत्ती २६, तण्हा २७, अणत्थगो २८, असत्थी २९. असंतोसे ३०, त्तिविय, तस्स एयाणि एवमादी नामधेज्जाणि हुंतितीसं ॥ सू० २॥

टीका—'तस्य य' इत्यादि—

'तस्स' तस्य—परिग्रह नामक पञ्चमाधर्मद्वारस्य च 'नामाणि' नामानि 'इमानि—अनुपदं वक्ष्यमाणानि 'गोणाणि' गौणानि—गुणनिष्पन्नानि 'हुंति' भवन्ति, कियत्संख्यकानि भवन्ति? इत्याह—'तीसं' त्रिंशत्संख्यकानीति, 'तंजहा' तद्यथा—'परिग्गहो' परिग्रहः - परिगृह्यते इति परिग्रहः—हिरण्य सुवर्ण धनधान्यादि', १ 'संचयो' संचयः—धनधान्यादि राशीनां समूही करणम् २ 'चयो' चयः—एकैकमितिकृत्वाऽऽदानम् ३, 'उवचयो' उपचयः—एकैकमितिकृत्वाऽऽदत्तानां धनधान्यादिनां राशिकरणम् ४, 'निहाणं' निधानं भुम्यादौ

अब "यन्नाम" इस द्वितीय अन्तर्द्वार को सूत्रकार कहते हैं— 'तस्स नामाणि' इत्यादि०।

टीकार्थ—(तस्स) इस परिग्रह के (गोणाणि नामाणि तीसं हुंति) गुण निष्पन्न तीस नाम हैं। (तंजहा) वे इस प्रकार हैं—(परिग्गहो १, संचयो २, चयो ३, उवचयो ४, निहाणं ५, संभारो ६, संकरो ७, एवं-

હવે "यन्नाम" એ બીજા અન્તર્દ્વારનું સૂત્રકાર વર્ણન કરે છે—
"तस्स नामाणि" ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—"तस्स" આ પરિગ્રહનાં "गोणाणि नामाणि तीसं हुंति" ગુણાનુસાર ત્રીસ નામો છે. "तं जहा" તે ત્રીસ નામો આ પ્રમાણે છે—"परिग्गहो १ संचयो २ चयो ३ उवचयो ४ निहाणं ५ संभारो ६ संकरो ७ एवंआयारो ८

निधानरूपेण स्थापनम् ५, 'संभारो' संभारः-संभ्रियते संभरणं वा संभारः-कोष्ठादौ भरणमित्यर्थः ६, 'संकरो' संकरः-संकीर्यते=संपिण्डयते इति, सङ्करः-सुवर्ण रजतादीन् वह्नौ परिद्रव्य पाशकादिरूपकरणम् ७, 'एव आयारो' एवमाचारः-

आयारो ८, पिंडो ९, दव्वसारो १०, तहा महिच्छा ११, पडिबंधो १२, लोहप्पा १३, महद्दी १४, उवगरणं १५, संरक्खणा य १६, भारो १७, संपायुपायको, १८, कलिकरंडी १९, पवित्थरो २०, अणत्थो २१, संथवो २२, अगुत्ती २३, आयासो २४, अविओगो २५, अमुत्ती २६, तण्हा २७, अणत्थगो २८, आसत्थी २९, असंतोसे ३०, त्ति वि य, तस्स एयाणि एवमाई नामधेज्जाणि हुंति तीसं) हिरण्य, सुवर्ण, धन, धान्य आदि, पदार्थ ग्रहण किये जाते हैं इसलिये ये परिग्रह हैं अतः इसका प्रथम नाम परिग्रह है १। धन धान्य आदिकी राशियां इसमें एकत्रित की जाती है अतः इस अपेक्षा इसका दूसरा नाम संचय है २। परीग्रही जीव एक एक करके वस्तुओं का संग्रह या ग्रहण करता है, इस अपेक्षा इसका तीसरा नाम चय है ३। उपचय शब्द का अर्थ वृद्धि है, क्रम क्रम करके कमाये गये धन धान्य आदि पदार्थों का इस उपचय में वर्धन होता है इसलिये इसका चौथा नाम उपचय है ४। जमीन आदि में धनादिद्रव्य को परिग्रहि जीव गाड़ दिया करते हैं, ताकि चौर आदि से उसकी रक्षा होती रहे, इसलिये इसका पांचवा नाम निधान है ५, कोष्ठ आदि में जो वर्द्धित धान्य आदि पदार्थ भरकर रख दिये जाते हैं,

पिंडो ९ दव्वसारो १० तहा-महिच्छा ११ पडिबंधो १२ लोहप्पा १३ महद्दी १४ उवगरणं १५ संरक्खणाय १६ भारो १७ सपायुपायको १८ कलिकरंडी १९ पवित्थरो २० अणत्थो २१ संथवो २२ अमुत्ती २३ आयासो २४ अविओगो २५ अमुत्ती २६ तण्हा २७ अणत्थगो २८ आसत्थी २९ असंतोसे ३० त्ति वि य तस्स एयाणि एवमाई नामधेज्जाणि हूंति तीसं" (१) હિરણ્ય, સુવર્ણ, ધન, ધાન્ય આદિ પદાર્થો ગ્રહણ કરવામાં આવે છે તેથી તે પરિગ્રહ છે તેથી તેનું નામ 'પરિગ્રહ' છે (૨) ધન ધાન્ય આદિના ઢગલા તેમાં એકત્ર કરાતા હોવાથી તેનું બીજું નામ 'સંચય' છે (૩) પરિગ્રહી જીવ એકે એકે વસ્તુ-ઓનો સંગ્રહ કરે છે અથવા તેને ગ્રહણ કરે છે, તેથી તેનું ત્રીજું નામ 'ચય' છે. (૪) ઉપચય શબ્દનો અર્થ વૃદ્ધિ થાય છે. ક્રમે ક્રમે કમાયેલ ધન ધાન્ય આથિ પદાર્થનું આં ઉપચયમા વર્ધન થાય છે, તેથી તેનું ચોથું નામ 'ઉપ-ચય' (૫) ચોર આદિથી રક્ષણ કરવા માટે ધન આદિ દ્રવ્યને પરિગ્રહી લોકો દાટી દે છે. તેથી તેનું પાંચમું નામ 'નિધાન' છે (૬) કોઠી આદિમાં વધેલ

एवम्-यथा धनप्राप्तिर्भवेदेवम्, आचारः-आचरणम् ८, 'पिंडो' पिण्डः=धन-धान्यादीनां समुदायः ९, 'दव्वसरो' द्रव्यसारः-द्रव्याणामेव सर्वोत्कृष्टपदार्थ-त्वेन परिज्ञानम् १०, 'तहा' तथा 'महिच्छा' महेच्छा-अपरिमितवाञ्छा ११, 'पडिवंधो' प्रतिबन्धः-आसक्तिकारकः १२, 'लोहप्पा' लोभात्मा-लोभ-

अतः इसका नाम संभार है। परिग्रही जीव धान्य आदि पदार्थों को कोष्ठ आदि में भरकर रख देता है-ताकि आवश्यकता पड़ने पर वे काम में लाये जा सकें-इसलिये इसका छठा नाम संभार है ६। परिग्रही जीव सुवर्ण आदि द्रव्यके अधिक हो जाने पर उनका अग्नि में गलवा-कर पाशा करवा लेता है, इसलिये इसका सातवां नाम संकर है ७। धन कमाने की लालसा से परिग्रही जीव ऐसा आचरण करताहै कि जिससे धन का लाभ अधिकमात्रा में होता रहे, इसलिये इसका आठवा नाम एवमाचार है ८। पिण्ड इसका नाम इसलिये है कि इस में धन धान्यादि पदार्थों का समुदाय पिण्डरूप से घर में रहा करता है ९। परिग्रही जीव धनादि पदार्थों को ही सर्वोत्तम मानता है इसलिये इनका नौवां नाम द्रव्यसार है १०। परिग्रही जीव की इच्छाएँ आकाश की तरह अनंत हुआ करती हैं इसलिये इस का नाम महेच्छा है ११। मणुष्यों में इस परि-ग्रह से ही पर के द्रव्यों में आसक्ति जगती है इसलिए इसका नाम प्रतिबंध है १२। परिग्रही जीव में लोभ की मात्रा बहुत अधिक होती

ધાન્ય આદિ પદાર્થ ભરીને રાખી મૂકાય છે, તેથી તેનું નામ 'સંભાર' છે. પરિગ્રહી જીવ ધાન્યાદિ પદાર્થોને કોઠી આદિમાં ભરી રાખે છે કે જેથી જરૂર પડે ત્યારે તેનો ઉપયોગ કરી શકાય, તેથી તેનું છઠ્ઠું નામ 'સંભાર' છે (૭) પરિગ્રહી જીવ સુવર્ણ આદિ દ્રવ્ય વધી જાય છે ત્યારે તેને અગ્નિમાં ગળાવીને તેના પાશા પડાવી લે છે, તેથી તેનું સાતમું નામ 'સંકર' છે. (૮) ધન કમાવાની લાલસાથી પરિગ્રહી જીવ એવુ આચરણ કરે છે કે જે આચરણથી ધન પ્રાપ્તિ વધુ પ્રમાણમાં થતી રહે, તેથી તેનું આઠમું નામ એ-વમાચાર છે. (૯) તેનું નવમું નામ 'પિંડ' એ કારણે છે કે પરિગ્રહી જીવ ધન ધાન્યાદિ પદાર્થોનો જથ્થો પિંડરૂપે ઘરમાં રાખ્યા કરે છે. (૧૦) પરિ-ગ્રહી જીવ ધનાદિ પદાર્થોને જ સર્વોત્તમ માને છે, તેથી તેનું દસમું નામ 'દ્રવ્યસાર' છે. (૧૧) પરિગ્રહી જીવોની ઈચ્છાઓ આકાશની જેમ અનંત હોય છે, તેથી તેનું નામ "મહેચ્છા" છે. (૧૨) આ પરિગ્રહને કારણે જ પર દ્રવ્યમાં માણસોને આસક્તિ પેદા થાય છે તેથી તેનું નામ 'પ્રતિબંધ' છે. (૧૩) પરિગ્રહી જીવમાં લોભની માત્રા ઘણી જ વધારે હોય છે, તેથી તે

स्वभावः १३, 'महट्ठी' महार्त्तिः, महार्त्तेःकारणत्वात् १४, 'उवकरणं' उपकरणं= सामग्री १५, 'संरक्खणय' संरक्षणा च-शरीरादीनां संरक्षणमित्यर्थः १६, 'भारो' भार-अष्ट कर्मभारकारणम् १७, 'संपायुपायगो' संपातोपायकः-संपातानां- दुर्गतौ प्रस्थितानाम् उपायको मार्गभूतः१८, 'कलिकरंडो' कलिकरण्डः-कलीनां= कलहानां करण्ड इवपात्रविशेष इव कलिकरण्डः १९, 'पवित्थरो' प्रविस्तरः- धनधान्यादिविस्तारः २०, 'अणत्थो' अनर्थः-अनर्थकारणत्वात् २१, 'संथवो'

है, इसलिये यह परिग्रह लोभात्मा लोभ स्वभाव है १३। इस परिग्रह से जीव को बड़ी से बड़ी आर्त्तियों का सामना करना पड़ता है अतः उन आर्त्तियों का करण होने से यह परिग्रह महार्तिरूप है १४। इस परिग्रह के प्रभाव से ही विविध प्रकार की सामग्री जीव एकत्रित करता है अतः इसका नाम उपकरण है १५। परिग्रही जीव अपनेशरीर आदि पदार्थों की रक्षा करने में विशेष सावधान रहता है। इसलिये इसका नाम संरक्षण है १६। परिग्रही जीव के परिणामों की संक्लेश-ता के कारण अष्टविध कर्मों का बंध बहुत तीव्र होता है इसलिये इसका नाम भार है १७। परिग्रही जीव का पतन दुर्गति में होता है अतः दुर्गति में पतन होने का यह मार्गभूत है इसलिये इसका नाम संपातोपायक है १८। परिग्रही जीव के अनेक शत्रु उत्पन्न हो जाते है हर एक के साथ कलह आदि होने लगते हैंइसलिये यह परिग्रह कलहों का एक प्रकार का करण्डपिटारा है-इसलिये इसका नाम कलहकरण्ड है १९। परिग्रही जीव अपने धन धान्य आदि पदार्थों का विस्तार करने

પરિગ્રહ લોભાત્મા લોભ સ્વભાવ છે. (૧૪) આ પરિગ્રહને લીધે જીવોને મોટામાં મોટી આફતોનો સામનો કરવો પડે છે, તેથી એ આર્તિયો (આફતો) નું કારણ હોવાથી તેપરિગ્રહ મહાર્તિરૂપ છે (૧૫) તે પરિગ્રહના પ્રભાવથી જ વિવિધ પ્રકારની સામગ્રી જીવ એકત્રિત કરે છે, તેથી તેનું નામ 'उपकरण' છે. (૧૬) પરિગ્રહી જીવ પોતાના શરીર આદિ પદાર્થોના રક્ષણને માટે વધારે સાવચેત રહે છે, તેથી તેનું નામ 'संरक्षण' છે. (૧૭) પરિગ્રહી જીવની વૃત્તિઓની સંકુચિત-તાને કારણે અષ્ટવિધ કર્મોનો બંધ ઘણો જ તીવ્ર હોય છે, તેથી તેનું નામ 'भार' છે. પરિગ્રહી જીવ દુર્ગતિમાં પડે છે. દુર્ગતિમાં પતન કરાવવાના રાહરૂપ હોવાને કારણે તેનું નામ 'संपातोपायक' છે (૧૯) પરિગ્રહી જીવના અનેક શત્રુઓ પેદા થાય છે. દરેકની સાથે તેને કલહ આદિ થયા કરે છે. તે કારણે તે પરિગ્રહ કલહોના એક પ્રકારના કરંડિયા જેવો હોવાથી તેનું નામ 'कलहकरण्ड' છે. (૨૦) પરિગ્રહ જીવ પોતાના ધન ધાન્ય આદિ પદાર્થોનો

संस्तवः=परिचयः–परिचयकारणत्वात् २२, 'अगुत्ती' अगुप्तिः=तृष्णाया अगोपनम् २३, 'आयाओ' आयासः =दुःखम्, आयासहेतुत्वात्परिग्रहोऽप्यायासः–उक्तः २४, 'अविओगो' अवियोगः–धनादरपरित्यागः२५ 'अमुत्ती' अमुक्तिः-अनिर्लोभता २६, 'तण्हा' तृष्णा–धनादेराकाङ्क्षा २७, 'अणत्थगो' अनर्थकः-अनर्थकारणत्वात् २८, 'आसत्थी' आसक्तिः–मूर्च्छा, तत्कारणत्वात् २९,

में लगा रहता है इसलिये इसका नाम प्रविस्तर है २०। परिग्रह अनेक अनर्थों का कारण रहता है इसलिये इसका नाम अनर्थ है २१। परिग्रही जीवको अनेक जीवों के साथ संस्तवपरिचय रहता है। इसलिये परिचय का कारण होने से इसका नाम संस्तव है २२। इसमें तृष्णा का गोपन नहीं होता है–अतः इसका नाम अगुप्ति है २३। परिग्रह की ज्वाला में जलते हुए जीव को बहुत अधिक आयासों दुःखों को भोगना पड़ता है इसलिये उनका हेतु होने से परिग्रह का नाम भी आयास है २४। परिग्रही जीव में लोभ की अधिक से अधिक मात्रा होने के कारण वह धनादिक का परित्याग दान आदि सत्कृत्यों में भी नहीं कर सकता है इसलिये इसका नाम अवियोग है २५। इस परिग्रही जीव में निर्लोभता नहीं होती है इसलिये इसका नाम अमुक्ति है २६। धनादिक के आगमन–आय की आकांक्षा परिग्रही जीव के सदाकाल रहती है इसलिये इसका नाम तृष्णा है २७। परिग्रह अनेक अनर्थों का कारण है इसलिये इसका नाम अनर्थक है २८। मूर्च्छा का कारण होने से इसका

વિસ્તાર કરવામાં લાગ્યો રહે છે, તેથી તેનું નામ 'प्रविस्तार' છે (૨૧) પરિગ્રહ અનેક અનર્થોનું કારણ બને છે, તેથી તેનું નામ 'अनर्थ' છે. (૨૨) પરિગ્રહી જીવનો અનેક જીવની સાથે 'सस्तव' પરિચય થતો રહે છે, તેથી પરિચયનું કારણ હોવાથી તેનું નામ 'सस्तव' છે. (૨૩) તેમાં તૃષ્ણાનું ગોપન થતું નથી, તેથી તેનું નામ 'अगुप्ति' છે. (૨૪) પરિગ્રહની જવાળામાં જળતા જીવોને ઘણા વધારે આયાસો-દુઃખો ભોગવવા પડે છે. તેથી તે આયાસોના કારણરૂપ હોવાથી પરિગ્રહનું નામ પણ "आयास" છે (૨૫) પરિગ્રહી જીવોમાં લોભની માત્રા વધારેમાં વધારે હોવાને કારણે તેઓ દાન આદિ સત્કૃત્યોમાં ધનનો પરિત્યાગ કરી શકતા નથી. તેથી તેનું નામ 'अवियोग' છે. (૨૬) તે પરિગ્રહી જીવમાં નિર્લોભતા હોતી નથી, તેથી તેનું નામ 'अमुक्ति' છે (૨૭) ધનાદિ પદાર્થો મેળવવાની આકાંક્ષા પરિગ્રહી જીવને સદાકાળ રહેછે, તેથી તેનું નામ 'तृष्णा' છે. (૨૮) પરિગ્રહ અનેક અનર્થોને માટે કારણરૂપ હોય છે, તેથી તેનું નામ 'अनर्थक' છે. (૨૯) મૂર્ચ્છા 'આસક્તિ' નું કારણ

'असंतोसेत्ति वि य' असंतोषः ३०, इत्यपि च 'तस्स' तस्य-परिग्रहस्य 'एयाणि' एतानि 'एवमादि' एवमादीनि-उक्तप्रकाराणि 'नामवेज्जाणि' नामधेयानि=नामानि 'हुंति, भवन्ति 'तीसं' त्रिंशत्। परिग्रहस्य परिग्रहाद्य-संतोषान्तानि त्रिंशन्नामधेयानि भवन्तीत्यर्थः। अनेन 'यन्नामेती' द्वितीयमन्तर-द्वारमुक्तम् ॥सू०२॥

अथ यथा ये परिग्रहं कुर्वन्ति तानाह—'तं चपुणे' इत्यादि—

मूलम्—त चं धुण परिग्गहं ममायंति लोभघत्था भवणवर विमाणवासिणो परिग्गह रुईयी परिग्गहे विविहकरणबुद्धी देवनिकाया य असुरभुयगसुवन्नविज्जुजलण—दीव—उदहि दिसि—पवण—थणिय-अणपन्नियपणपन्निय इसिवाइय भूयवा-इय कंदिय महाकंदियकुहण्ड पतंग देवा पिसाय-भूय-जक्ख-रक्खर—किंनर किंपुरिस-महोरगगंधव्वा य तिरियवासी। पंच-

---

नाम आसक्ति है २९। परिग्रही जीव को जीवनभर सुखप्रद संतोष नहीं होता है अतः असंतोषका हेतु होने से इसका नाम भी असंतोष है ३०। इस प्रकार इस परिग्रह के ये पूर्वोक्त प्रकार से तीस नाम हैं। इस तरह इस सूत्र द्वारा सूत्रकार ने "यन्नाम" यह द्वितीय अन्तर-द्वार कहा है।

भावार्थ—परिग्रह नामके पंचम आस्रव द्वार के कितने नाम गुण निष्पन्न हो सकते हैं यह बात सूत्रकार ने इस सूत्र द्वारा प्रदर्शित की है। परिग्रह से लेकर असंतोष पर्यन्त जो ये तीस नाम प्रकट किये हैं वे कहीं तो कारण में कार्य के उपचार से और कहीं कार्य में २ कारण के उपचार से बनाये गये हैं, ऐसा जानना चाहिये ॥ सू० २ ॥

હોવાથી તેનું નામ 'आसक्ति' છે. (૩૦) પરીગ્રહી જીવને જીવનભર સુખપ્રદ સંતોષ થતો નથી, તેથી અસંતોષના કારણરૂપ હોવાથી તેનું નામ 'असंतोष' છે. આ પ્રમાણે પરિગ્રહના પૂર્વોક્ત ત્રીસ નામ છે. આ રીતે આ સૂત્રદ્વારા સૂત્રકારે 'यन्नाम' નામના બીજા અન્તર દ્વારનું કથન કર્યું છે.

ભાવાર્થ—પરિગ્રહ નામના પાંચમા આસ્રવ દ્વારના ગુણ પ્રમાણે કેટલાં નામ હોઇ શકે છે તે બાબત સૂત્રકારે આ સૂત્રમાં દર્શાવી છે. પરિગ્રહથી લઈને અસંતોષ સુધીના જે ત્રીસ નામો પ્રગટ કર્યા છે તેમાનાં કેટલાક કારણમાં કાર્યના ઉપચારથી અને કેટલાક કાર્યમાં કારણના ઉપચારથી બનાવવામાં આવેલ છે, એમ સમજવાનું છે. ॥ સૂ-૧ ॥

विहा जोइसिया य देवा वहस्सइ चंदसूर सुक्कसणिच्छरा राहुधूमकेउ बुहा य अंगारका य तत्ततवणिज्जकणगवण्णा जेयगहा जोइसियम्मि चारं चरंति, केऊय गइरइया अट्ठावीसति विहा य नक्खत्त देवगणा णाणासंठाणसंठियाओ य तारगाओ, ठियलेस्साचारिणो य अविस्सामभंडलगई। उवरिचरा-उड्ढलोगवासी दुविहा वेमाणिया य देवा सोहम्मीसाण-सणंकुमार–माहिंद–बंभलोगलंतक–महासुक्कसहस्सार-आणयपाणय आणच्चुया कप्पवरविमाणवासिणो–सुरगणा। गेवेज्जा अणुत्तरा य दुविहा कप्पातीया विमाणवासी महिड्डिया उत्तमा सुरवरा एवं चेते चिउव्विहासपरिसा वि देवा ममायंति। भवण वाहणजाणविमाणसयणासणाणि य णाणाविहवत्थभूसणाणि य पवरपहरणाणि य णाणामणि पंचवण्णदिव्वं य भायणाविहिं नाणाविहकामरूववेउव्विय अच्छरगणसंघाए दीवसमुद्दे दिसाओ विदिसाओ चेइआणि य वणसंडे पव्वए गामनगराणि य आरामुज्जाणकाणणाणि य कूवसरतलायवाविदीहिं य देवकुलसभप्पवावसहिमाइयाइं कित्तणाणि य परिगिण्हित्ता परिग्गहं विउलदव्वसारं देवा वि सइंदगा न तित्तिं न तुट्ठिं उवलभंति, अच्चंत विउललोभाभिभूयसन्ना।

वासहर इक्खुगारवट्टपव्वयकुंडलरुयगवरमाणुसुत्तरकालोदहिलवणसलिलदहपतिरातिकरअंजणकसेलदहिमुह ओवाशुप्पायकंचणकविचित्तजमकवरसिहरिकूडवासी ॥सू०३॥

टीका—'तं च पुण परिग्गहं' तं च पुनः परिग्रहं 'पुनः' शब्दोऽत्र

वाक्यालङ्कारे, उपर्युक्तं त्रिंशद्विधं परिग्रहं 'ममायंति' ममायन्ते=परिग्रहममत्वं कुर्वन्ति, ममत्वं कुर्वन्तीत्याह — 'लोभघत्था' लोभग्रस्ताः, के के च ते ? इत्याह—'भवणवरविमाणवासिणो' भवनवरविमानवासिनः=' भवन ' इत्यत्र 'वासिनः' इत्यस्य सम्बन्धात् भवनवासिनः=भवनपतयः, अत आरभ्य यावद् वरविमानवासिनः=अनुत्तरविमानवासिनः, भवनपतिवानव्यन्तर – ज्योतिष्क-वैमानिकाश्चतुर्विधा अपि देवा इत्यर्थः, कीदृशास्ते ? इत्याह—'परिग्गहरुई'

अब सूत्रकार जिस प्रकार से जो जीव इस परिग्रह को करते हैं उनका कथन करते हैं-' तं च पुण ' इत्यादि ।

टीकार्थ—(तंच पुण परिग्गहं लोभघत्था ममायंति) इस उपर्युक्त तीस प्रकार के नाम वाले परिग्रह में लोभ से ग्रस्त हुए जीव ममत्व करते हैं । वे जीव कौन २ से हैं ? सूत्रकार अब इस बात को प्रदर्शित करते हैं-(भवणवरविमाणवासिणो) भवनवासी देव, वानव्यन्तरदेव, ज्योतिष्कदेव और वैमानिक देव ये चारों प्रकार के देव परिग्रह में ममत्व करते हैं-अर्थात्-परिग्रह प्राप्त करके भी इन्हें संतोष नहीं होता है । (भवणवरविमाणवासिणो) यहां पर इस पद से भवनवासी और वरविमानवासी ऐसा शाब्दबोध होता है । भवनवासी शब्द से असुरकुमार आदि देव तथा वरविमानवासी शब्द से अनुत्तरविमानवासी देव अभिहित हुए हैं । इस तरह देवों के इन दो निकायों का वर्णन-कथन-आने से इनके बीच के वानव्यन्तर और ज्योतिष्क इन दो

હવે સૂત્રકાર એ પ્રગટ કરે છે કે કયા જીવ કઇ રીતે પરિગ્રહ કરે છે-" तं च पुण " ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ-"तं च पुण परिग्गहंलोभघत्था ममायंति" ઉપર કહેલ ત્રીસ નામ વાળા પરિગ્રહમાં લોભને વશ થયેલ જીવો મમત્વ કરે છે. તે જીવો કયા કયા છે ? હવે સૂત્રકાર તે દર્શાવે છે " भवणवरविभाणवासिणो " ભવનવાસી દેવ, વાનવ્યન્તર દેવ, જ્યોતિષ્ક દેવ, અને વમાનિક દેવ, એ ચારે પ્રકારના દેવ પરિગ્રહમાં મમત્વ કરે છે-એટલે કે પરિગ્રહમાં પ્રાપ્ત કરવા છતાં પણ તેમને સંતોષ થતો નથી " भवणवरविमाणवासिणो " અહીં આ પદથી ભવનવાસી અને ઉત્તમ વિમાનવાસી એવો અર્થ સમજાય છે. ભવનવાસી' શબ્દથી અસુરકુમાર દેવ આદિ તથા ' ઉત્તમવિમાનવાસી ' શબ્દથી અનુત્તર વિમાનવાસી દેવ ગ્રહણ થાય છે આ પ્રમાણે દેવોના તે બે નિકાયોનું (પ્રકારનું) વર્ણન આવવાથી તેમની વચ્ચેના વાનવ્યન્તર અને જ્યોતિષ્ક એ બે નિકાયો (જાતો)

परिग्रहरुचयः–परिग्रहे रुचि–आसक्तिर्येषां ते तथोक्ताः, तथा 'परिग्गहो' परिग्रहे–परिग्रहविषये 'विविहकरणबुद्धी' विविधकरणबुद्धयः–विविधानि करणानि क्रियाः बुद्धिश्च येषां ते तथोक्ताः, परिग्रहोपार्जनमतय इत्यर्थः, एतादृशा इन्द्रसहिता देवाःपरिग्रहं परिगृह्य न तृप्तिं, न तुष्टिमुपलभन्ते, इत्यग्रेण सम्बन्धः, तत्र 'देवनिकाया य'देवनिकायाश्च वक्ष्यमाणा ता नेव भवनपत्यादीन् नामनिर्देशपुरस्सर माह–'असुर' असुराः=असुरकुमाराः 'भुयग' भुजगाः=नागकुमाराः 'सुवन्न' सुपर्णाः–सुपर्णकुमाराः, 'विज्जु' विद्युतः–विद्युत्कुमाराः 'जलण' ज्वलनाः–अग्निकुमाराः 'दीव' द्वीपाः–द्वीपकुमाराः 'उदहि' उदधिकुमाराः 'दिसि' दिशाकुमाराः 'पवण' पवनाः=वायुकुमाराः 'थणिय' स्तनितकुमाराः, एते भवनपतयः ?, तथा–'अणपन्नि य 'अनपन्नि काः 'अप्रज्ञप्तिकाः' 'पणपन्नि य' पणपन्निकाः (पञ्चप्रज्ञप्तिका) 'इसिवाइ य' ऋषिवादिका 'भूयवाइय' भूतवादिकाः 'कंदि य' क्रन्दिताः 'महाकंदिय' महाक्रन्दिता 'कुहंड' कुष्माण्डाः 'पतंगदेव' पतङ्गदेवाः, एतेऽष्टौ व्यन्तरनिकायदेवाः २, असुराद्यारभ्य पतङ्गदेवपर्यन्तानामितरेतरयोगद्वन्द्वः । तथा 'पिसाय' पिशाचाः 'भूय' भूताः 'जक्ख' यक्षा 'रक्खस' राक्षसाः 'किंनर' किन्नराः 'किंपुरिस' किम्पुरुषाः

निकायों का बोध स्वयं हो जाता है। इसलिये यहां चारों प्रकार के देव गृहीत हुए हैं। क्यों कि ये देव (परिग्गहे विविह करणबुद्धी) परिग्रह के विषय में इनकी विविध प्रकार की क्रियाएँ होती हैं, तथा उसमे इनकी बुद्धि भी सदा सचेष्ट रहती है। अर्थात् परिग्रह के उपार्जन करने में इनकी मति खूब निपुण होती है। इस तरह इन्द्रसहित ये चारों प्रकार के देवनिकाय परिग्रह को प्राप्त करके भी उसमें तृप्ति से विहूने ही बने रहते हैं। (देवनिकाया य–असुर–सुयग–सुवन्न–विज्जु–जलण –दीव उदहि–दिसि–पवण–थणिय–अणपन्निय–पणपन्निय–इसिवाइय–भूयवाइय–कंदिय–महाकंदिय–कुहण्ड–पयंग–देवा पिसायभूय–जक्ख–

નો બોધ આપો આપ થઇ જાય છે તે કારણે અહીં ચારે પ્રકારના દેવો ગ્રહણ કરેલ છે, કારણ કે તે દેવો "परिग्गहरुई" પરિગ્રહમા રુચિ–આસક્તિ વાળા હોય છે, અને "परिग्गहे विविहकरण बुद्धी" પરિગ્રહના વિષયમાં તેમની વિવિધ પ્રકારની ક્રિયાઓ થાય છે, અને તેમા તેમની બુદ્ધિ પણ સદા સચેષ્ટ રહે છે એટલે તે પરિગ્રહને પ્રાપ્ત કરવામાં તેમની બુદ્ધિ ઘણી જ નિપુણ હોય છે. આ રીતે ઈન્દ્ર સહિત તે ચારે પ્રકારના દેવનિકાય પરિગ્રહને પ્રાપ્ત કરીને પણ તેનાથી અતૃપ્ત રહે છે. "देवनिकाया य–असुर–सुयग–सुवन्न–विज्जु–जलण–दीवउदहि–दिसि–पवण–थणिय–अणपन्निय–पणपन्निय–इसिवाइय–भूयवाइय–कंदिय–

' महोरग ' महोरगाः ' गंधव्वा ' गन्धर्वाश्च, एतेषां द्वन्द्वः । एतेऽष्टौ व्यन्तरभेदाः एते हि ' तिरियवासी ' तिर्यग्वासिनः-मनुष्यलोकवासिनः, तथा ' पंचविहा ' पञ्चविधाः=चन्द्रसूर्य-ग्रह-नक्षत्र-तारारूपाः, 'जोइसियाय' ज्योतिषिकाश्च देवाः, ते के ? इत्याह—'बहस्सइचंदसूरसुक्कसणिच्छरा '- बृहस्पतिचन्द्रसूरशुक्रशनैश्चराः, तथा 'राहुधूमकेउबुहा य' राहुधूमकेतुबुधाश्च तथा-'अंगारका य'अङ्गारकश्च 'मंगलनामको ग्रहविशेष ' कीदृशः ? एषः ? इत्याह—' तत्ततवणिज्जकणगवण्णा' तप्त-

---

रक्खस-किंनर-किंपुरिस-महोरग-गंधव्वा य तिरियवासी) अब सूत्रकार उन देवनिकायों को नामनिर्देश पूर्वक प्रकट करते हैं, उनमें वे सब से पहिले भवनपतियों के भेदों के नामों को कहते हैं-असुरकुमार, नागकुमार, सुपर्णकुमार, विद्युत्कुमार, ज्वलन-अग्निकुमार, द्वीपकुमार, उदधिकुमार, दिशाकुमार, वायुकुमार और स्तनितकुमार ये दश प्रकारके भवनपति हैं। तथा अप्रज्ञप्तिक, पञ्चप्रज्ञप्तिक, ऋषिवादिक, भूतवादि कंदित, महाक्रंदित कूष्मांड, पतंगदेव, आठप्रकार के ये व्यन्तर निकाय के देव हैं। तथा पिशाच, भूत, यक्ष, राक्षस, किन्नर, किंपुरुष, महोरग, गंधर्व ये आठ व्यन्तर देवों के भेद हैं । ये व्यन्तरदेवतिर्यग्लोक-मनुष्यलोक वासी हैं। तथा- (पंचविहा जोइसियाय देवा बहस्सइ चंदसूरसुक्कसनिच्छरा) चन्द्र, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र एवं तारा ये पांच प्रकार के ज्योतिषिक देव हैं। इन में जो ग्रह जाती के देव हैं उनके ये बृहस्पति चंद्र, सूर्य, शुक्र, शनैश्चर तथा (राहुधूमकेउ बुहा य अंगारगा य) राहु, धूम,केतु, बुध

महाकंदिय-कुहण्ड-पयंग-देवा पिसायभूय-जक्ख-रक्खस-किंनर-किंपुरिस-महोरग गंधव्वाय तिरियवासी " હવે સૂત્રકાર તે દેવ નિકાયોને નામના નિર્દેશ સહિત પ્રગટ કરે છે. તેમનામાંથી સૌથી પહેલા ભવનપતિયોના ભેદોનાં નામો બતાવે છે—અસુરકુમાર, નાગકુમાર, સુપર્ણકુમાર, વિદ્યુતકુમાર. જવલનઅગ્નિકુમાર, દ્વીપકુમારા ઉદધિકુમાર, દિશાકુમાર, વાયુકુમાર અને સ્તનિતકુમાર, એ દસ પ્રકારના ભવનપતિ છે તથા અપ્રજ્ઞપ્તિક, પંચપ્રજ્ઞપ્તિક, ઋષિવાદિક, ભૂતવાદિક, કંદિત, મહાકંદિત, કૂષ્માંડ, અને પતંગદેવ, એ આઠ પ્રકારના વ્યન્તર નિકાય દેવો છે. તથા પિશાચ, ભૂત, યક્ષ, રાક્ષસ, કિન્નર, કિંપુરુષ, મહોરગ અને ગંધર્વ, એ આઠ વ્યન્તરદેવ તિર્યગ્લોક-મનુષ્યલોક વાસી છે. તથા " पंचविहा-जोइसियाय देवा वहस्सइ चंद सूर सुक्कसनिच्छरा " ચન્દ્ર, સૂર્ય, ગ્રહ, નક્ષત્ર અને તારા એ પાંચ પ્રકારના જ્યોતિષિક દેવો છે, તેમાં ગ્રહ જાતિના જે દેવો છે તેમના બૃહસ્પતિ ચંદ્ર, સૂર્ય, શુક્ર, શનિ તથા "राहुधुमकेउ-वुहा य अंगा-

पनीयकनकवर्णः=तप्तं यत्तपनीयकनकं=तपनीयसुवर्णं तस्य वर्ण इव वर्णोयस्य स-तथोक्तः-अग्नौ परितापनेन सुवर्णस्य यादृशो वर्णो भवति, तादृश वर्ण युक्त इत्यर्थः, आर्षत्वात्सूत्रे बहुवचनम् । तथा एभ्य इतरे ' जे गहा ' ये ग्रहाः सम्प्रतिकाल-प्रसिद्धा नेपच्युलहर्षलादयः, ' जोइसम्मि ' ज्योतिषि-ज्योतिश्चक्रे ' चारं चरंति ' -परिभ्राम्यन्ति, ते ग्रहाः, तथा ' केउ य ' केतवश्च-ज्योतिष्कविशेषा ये जगतः शुभाशुभनिमित्तमवलम्ब्योदयं प्राप्नुवति ' पुंछडियातारा ' ' चोटीवाला तारा ' इत्यादि नाम्ना भाषाप्रसिद्धाः, कीदृशा एते ? इत्याह ' गइरइया ' गतिरतिकाः-गमनशीलाएकराशितोऽन्यराशौ गमनस्वभावाः । एते चन्द्रसूर्यग्रहास्त्रिविधाज्यो-तिष्कदेवा उक्ताः । तथा ' अट्ठावीसइविहा य ' अष्टाविंशतिविधाश्च ' नक्खत्तदेव-गणा ' नक्षत्रदेवगणा :, कीदृशाः ? इत्याह—तथा 'णाणासंठाणसंठियाओय'

और अंगारक-मंगल ये भेद हैं । यहअंगारक (तत्ततवणिज्जकणगवण्णा) तप्ततपनीय-तपाये हुए सुवर्ण के वर्ण के जैसा वर्ण वाला है । अर्थात्-अग्नि में तपाने से सुवर्ण का जैसा रंग होता है वैसा ही इसका रंग है। तथा (जे य गहा जोइसियम्मि चारं चरंति) इनसे अतिरिक्त जो इस समय में प्रसिद्ध नैपच्युल हर्षल आदि ग्रह हैं कि जो ज्योतिश्चक्र में परिभ्रमण करते हैं वे ग्रह तथा-(केऊ य) केतु ग्रह जो जगत के शुभ अशुभ निमित्त को लेकर उदित होता है और जिसे " पूंछडिया-तारा " चोटीवाला तारा " इत्यादि नाम से लोग कहा करते हैं ये सब ही (गइरइया) गमनशील है-एक राशि से अन्यराशि पर गमन करने के स्वभाववाले हैं। ये उक्त (तिविहा) तीन प्रकार के चंद्र, सूर्य, ग्रहरूप ज्योतिषी देव तथा (अट्ठावीसइ विहा) अट्ठाईस प्रकार के (नक्खत्तदेवगणा) नक्षत्र (णाणासंठाणसंठियाओ) नाना

रगाय " રાહુ, ધૂમકેતુ, બુધ અને અંગારક-મંગળ એ પ્રકારો છે. તે અંગા-રક-મંગળ " तत्ततवणिज्जकणगवण्णा " તપાવેલા સુવર્ણના રંગ જેવા વર્ણ-વાળો છે. તથા " जे य गहा जोइसियम्मि चारं चरंति" તે સિવાયના હાલના સમયમાં પ્રસિદ્ધ નેપચ્યુન, હર્ષલ આદિ ગ્રહો કે જે જ્યોતિશ્ચક્રમાં પરિભ્રમણ કરે છે તે ગ્રહો તથા " केऊय " કેતુગ્રહો જે જગતના શુભ અશુભ નિમિત્ત દર્શાવવાને ઉગે છે અને જેને પૂછડિયા તારાને નામે ઓળખે છે, એ બધા જ " गहरइया " ગમનશીલ છે-એક રાશિમાંથી અન્ય રાશિમાં ગમન કરવાના સ્વભાવવાળા છે તે ઉપરોક્ત " तिविहा " ત્રણ પ્રકારના ચન્દ્ર, સૂર્ય અને ગ્રહરૂપ જ્યોતિષી દેવ, તથા " अट्ठावीसइविहा " અઠયાવીસ પ્રકારના " नक्खत्त देवगणा " नक्षत्र, " णाणासंठाणसंठियाओ " વિવિધ પ્રકારના સંસ્થાનોમાં

नानासंस्थानसंस्थिताश्च ' ताराओ ' तारकाः, कथं भूतास्तारकाः ? इत्याह— ' ठियलेस्सा ' स्थितलेश्याः-स्थिताः स्थिराः लेश्याः-दीप्तयः यासां ताः, नक्षत्रतारकाणामेकस्थानस्थितिमत्त्वात्, यद्वा — मनुष्यक्षेत्राद् बहिरवस्थितत्वात् स्थितलेश्यावत्त्वं तासाम्, ' चारिणो य ' चारिश्च यः=संचरणशीलाःचन्द्रसूर्यग्रहाश्च, ' अविस्संतमंडलगई ' अविश्रान्तमण्डलगतयः-अविश्रान्ता-विश्रामवर्जिता मण्डलेन-चक्रवालेन गति र्येषां ते तथा=सततपरिभ्रमणशीलाः सन्तीत्यर्थः, एते

प्रकार के संस्थान से संस्थित ऐसे तारागण कि जिनकी (ठियलेस्सा) लेश्या-दीप्ति-स्थिर है। ये नक्षत्र और तारागण एक स्थान में स्थित हैं, अथवा मनुष्यलोक से बाहर ये अवस्थित हैं-गति रहित हैं-इसलिये यहां इन्हें स्थिर दीप्ति वाला कहा गया है। तथा (चारिणो य अविस्साममंडलगई) संचरणशील चंद्र, सूर्य, ग्रह ये सब सतत परिभ्रमण शील हैं। तात्पर्य इसका यह है कि ये पांच प्रकार के ज्योतिषी देव मानुषोत्तर नामक पर्वत रूप जो मनुष्य लोक है उस मनुष्यलोक में सदा भ्रमण कीया करते हैं। उनका भ्रमण मेरुपर्वत के चारों ओर होता है। मेरु के समतलभूभाग से सातसौ नव्वे योजन की ऊँचाई पर ज्योतिश्चक्र क्षेत्र का आरंभ होता है। जो वहां से ऊँचाइमें एक सौ दश योजन परिमाण है और तिरछा असंख्यात द्वीप समुद्र परिमाण है। उस में दश योजन की ऊँचाई पर अर्थात् उक्त समतल से आठ सौ योजन की ऊँचाई पर सूर्य के विमान है, वहां से अस्सी योजन की ऊँचाई पर अर्थात् समतल से आठ सो अस्सी योजन की ऊँचाई पर

રહેલા " ठियलेस्सा " સ્થિર તેજવાળાં તારાગણો છે, તે નક્ષત્રો અને તારાગણ એક જ સ્થાને રહેલા છે, અથવા તેઓ મનુષ્યલોકની બહાર આવેલા છે-ગતિરહિત છે તે કારણે અહીં તેમને સ્થિર દીપ્તિ (તેજ) વાળા બતાવ્યા છે તથા " चारिणो य अविस्साममंडलगई " સંચરણશીલ ચંદ્ર સૂર્ય. ગ્રહ એ બધા સતત પરિભ્રમણશીલ છે. તેનું તાત્પર્ય એ છે કે એ પાચ પ્રકારના જ્યોતિષીદેવ માનુષોત્તર નામના પર્વતરૂપ જે મનુષ્યલોક છે, તે મનુષ્યલોકમાં સદા પરિભ્રમણ કર્યા કરે છે. તેમનું ભ્રમણ મેરુ પર્વતની ચારે તરફ થાય છે મેરુના સમતલ ભૂભાગથી સાતસો નેવું જોજનની ઊંચાઈ પર જ્યોતિશ્ચક્રના ક્ષેત્રનો આરંભ થાય છે. જે ત્યાથી ઊંચાઇમા એકસો દસ યોજન પરિમાણ છે અને તિરકસ ઊંચાઇ અસખ્યાત દ્વીપ સમુદ્ર પરિમાણ છે. તેમાં દસ યોજનની ઊંચાઇએ એટલે કે ઉપરોક્ત સમતલ ભૂમિથી આઠસો યોજનની ઊંચાઇ પર સૂર્યનાં વિમાન છે, ત્યાંથી એંસી યોજનની ઊંચાઈ પર અથવા સમતલથી આઠસો એંસી યોજનની ઊંચાઈ પર ચન્દ્રના વિમાન છે ત્યાંથી

चंद्र के विमान हैं। वहां से बीस योजन पर की उँचाई तक में अर्थात् समतल से नवसौ योजन की उँचाई तक में ग्रह, नक्षत्र और तारे हैं। चंद्र के ऊपर बीस योजन की ऊँचाई में पहिले चार योजन की ऊँचाई पर नक्षत्र हैं, इसके बाद चार चार योजन की ऊँचाई पर बुधग्रह, बुधग्रह से तीन योजन की ऊँचाई पर शुक्र, शुक्र से तीन योजन ऊँचे गुरु, गुरु से तीन योजन ऊचे मंगल और मंगल से तीन योजन ऊँचे शनैश्चर हैं। इस प्रकार यह चन्द्र के ऊपर का बीस योजन का क्षेत्र नक्षत्र आदिकों द्वारा घिरा हुआ रहता है। इस तरह इससे हमें यह बात जानने में देरी नहीं लगती है कि मनुष्य क्षेत्र में जो काल का-मुहूर्त-अहोरात्र-पक्ष, मास आदि का जितना भी व्यवहार होता है वह सबइस ज्योतिश्चक्र की चाल से ही होता है। यह ज्योतिश्चक्र की चाल उस ढाईद्वीपरूप मनुष्यक्षेत्र में अविश्रान्त रूप से ही होती रहती है। मनुष्य क्षेत्र के बाहर के ज्योतिष्क विमानस्थिर हैं। ये वहां स्वभावतः इधर उधर भ्रमण नहीं करते। इसी कारण से उनकी लेश्या और उनका प्रकाश भी एक रूप-स्थिर है। अर्थात् वहां राहु आदि की छाया पड़ने से ज्योतिष्कों का स्वाभाविक पीतवर्ण ज्यों का त्यों बना रहता है। और उदय अस्तन होने के कारण

વીસ યોજનની ઊંચાઈ પર એટલે કે સમતલથી નવસો યોજનની ઊંચાઈ સુધીમાં ગ્રહો, નક્ષત્રો અને તારા છે. ચન્દ્રથી ઉપરની વીસ યોજનની ઊંચાઈમાં પહેલાં ચાર યોજનની ઊંચાઇ પર નક્ષત્રો છે, ત્યાર બાદ ચાર યોજનની ઊંચાઈ પર બુધ નામનો ગ્રહ છે. બુધ ગ્રહથી ત્રણ યોજનની ઊંચાઇ પર શુક્ર છે. શુક્રથી ત્રણ યોજન ઊંચે ગુરુ છે. ગુરુથી ત્રણ યોજન ઊંચે મંગળ છે, મંગળથી ત્રણ યોજન ઊંચે શનિ છે. આ પ્રમાણે ચન્દ્રની ઉપરનું વીસ યોજનનું ક્ષેત્ર નક્ષત્ર આદિ દ્વારા ઘેરાયેલું રહે છે. આ રીતે આપણને એ વાત સમજતા વાર લાગે તેમ નથી કે મનુષ્યક્ષેત્રમાં જે કાળનો મુહૂર્ત, દિવસ રાત, પખવાડિયાં, માસ આદિનો-જે વ્યવહાર થાય છે તે સઘળો આ જ્યોતિશ્ચક્રની ચાલથી જ થાય છે. તે જ્યોતિશ્ચક્રની ચાલ આ અઢીદ્વીપરૂપ મનુષ્ય ક્ષેત્રમાં અવિરત ચાલ્યા કરે છે. મનુષ્ય ક્ષેત્રની બહારનાં જ્યોતિષ્ક વિમાન સ્થિર છે તેઓ ત્યાં સ્વભાવિક રીતે જ આમ તેમ ભ્રમણ કરતાં નથી. એ જ કારણે તેમની લેશ્યા અને તેમનો પ્રકાશ પણ સ્થિર છે. એટલે કે ત્યાં રાહુ આદિની છાયા પડવાથી જ્યોતિષ્કોનો સાધારણ પીળો રંગ એવોને એવો રહે છે. અને ઉદય અસ્ત ન થવાને કારણે તેમનો પ્રકાશ પણ એક સરખો

पञ्चविधा ज्योतिषिकदेवाः ३। अथ वैमानिकानाह—' उवरिचरा ' उपरिचराः—तिर्यग्लोकस्योपरिवर्तिनः, ' उड्ढलोगवासिणो ' ऊर्ध्वलोकवासिनः ' वेमाणिया य देवा ' वमानिकाश्च देवा ' दुविहा ' द्विविधाः=द्विप्रकाराः, कल्पोपपन्न कल्पातीत भेदात्। तत्र—कल्पोपपन्ना द्वादशधा, तानाह—' सोहम्मी—साण—सणंकुमार—माहिंद-बंभलोग—लंतग—महासुक्क—सहस्सार—आणय—पाणय—आरण—च्चुया ' सौधर्मेशान सनत्कुमारमाहेन्द्रब्रह्मलोकलान्तकमहाशुक्र—सहस्रारानतप्राणतारणाच्युताः, एते ' कप्पवरविमाणवासिणो ' कल्पवरविमानवासिनः—कल्पोपपन्नाः, ' सुरगणा ' सुरगणाः। अथ कल्पातीतानाह—' गेवेज्जा ' ग्रैवेयकाः ' अणुत्तरा ' अनुत्तरा-

---

उनका प्रकाश भी एकसा स्थिर ही रहता है। इस प्रकार यह पांच प्रकार के ज्योतिषिक देवों के विषय में भावार्थ रूप से यत् किञ्चित् कथन किया हैं। अब सूत्रकार वैमानिक देवों के विषय में कहते हैं–(उवरि-चिरा उड्ढलोगवासी वेमाणिया देवा दुविहा) तिर्यग्लोक हैं। ये वैमानिक के ऊपर जो ऊर्ध्वलोक है उसमें ये देव रहते हैं। इनका नाम वैमानिक देव कल्पोपपन्न और कल्पातीत के भेद से दो प्रकार के होते हैं। इनमें कल्पोपपन्न बारह प्रकार के हैं, वे ये हैं–(सोहम्मी–साण–सणंकुमार–माहिंद–बंभलोग–लंतग–महासुक्क– सहस्सार–आणय–पाणय–आरण–ऽच्चुया) सौधर्म, ईशान, सनत्कुमार, माहेन्द्र, ब्रह्मलोक, लान्तक, महा-शुक्र, सहस्रार, आनत, प्राणत, आरण और अच्युत। इन (कप्पवरवि-विमाणवासिणो सुरगणा) कल्पवरविमानों में रहनेवाले सुरगण कल्पा-पपन्न कहलाते हैं। (गेवेज्जा अणुत्तरा य दुविहा कप्पातीया विमाण-

---

જ સ્થિર રહે છે આ પ્રમાણે પાંચ પ્રકારના જ્યોતિષિક દેવોને વિષે ભાવાર્થ રૂપે થોડું કથન કરવામા આવ્યું છે, હવે સૂત્રકાર વૈમાનિક દેવો વિષે કહે છે–" उवरिचरा उड्ढलोगवासी वेमाणियादेवा दुविहा " તિર્યગ્લોકની ઉપર જે ઉર્ધ્વ લોક છે તેમાં તે દેવો રહે છે, અને તેમને વૈમાનિક કહે છે. તે વૈમાનિક દેવોના બે ભેદ છે–કલ્પાતીત અને કલ્પોપપન્ન તેમાંના કલ્પોપપન્ન નીચે પ્રમાણે બાર પ્રકારના છે–" सोहम्मी–साण–सणंकुमार–माहिंद–बंभलोग–लंतग–महासुक्क–सहस्सार –आणय–पाणय–आरणऽच्चुया " સૌધર્મ, ઇશાન, સનત્કુમાર, માહેન્દ્ર, બ્રહ્મલોક લાન્તક, મહાશુક્ર, સહસ્રાર, આનત, પ્રાણત, આરણ અચ્યુત એ " कप्पवर-विमाणवासिणो सुरगणा " કલ્પવર વિમાનોમાં રહેનાર સુરગણને કલ્પોપપન્ન કહે છે. " गेवेज्जा अणुत्तरा य दुविहा कप्पातीया विमाणवासी महड्ढिया उत्तमा

श्चेति 'दुविहा' द्विविधाः 'कप्पातीया' कल्पातीताः 'विमाणवासी' विमानवासीनः-अनुत्तरविमानवासिनः 'महड्डिया' महर्द्धिकाः 'उत्तमा' उत्तमाः-श्रेष्ठाः सुखराः=सर्वदेवेषु प्रधानाः, 'एवं च' इत्युक्तप्रकारेण 'चउव्विहा' चतुर्विधाः-भवनपतिवानव्यन्तरज्योतिष्कवैमानिकरूपा, 'सपरिसावि' सपरिषदोऽपि-न केवलमेते किन्तु एषां परिषदोऽपीत्यर्थः, देवाः 'ममायंति' ममायन्ते=ममत्वं कुर्वन्ति। कस्मिन् विषये ममत्वं कुर्वन्तीति तान्याह—'भवणवाहण-जाणविमाणसयणासणाणि य' भवनवाहनयानविमानशयनासनानि च, तथा 'नाणाविह वत्थभूसणाणि य' नानाविधवस्त्रभूषणानि च 'पवरपहरणाणि य'

वासीमहड्डिया उत्तमा सुरवरा एवं चेते चउव्विहा सपरिसा वि देवा ममायंति) कल्पातीत के दो भेद हैं (२) ग्रैवेयक विमानवासी और (२) अनुत्तर विमानवासी इनमें जो पांच अनुत्तर विमानों में-विजय, वैजयन्त, अपराजित और सर्वार्थ सिद्ध इनमें-रहनेवाले देव हैं वे महर्द्धिक कहलाते हैं और सब देवों में उत्तम-श्रेष्ठ-एवं प्रधान माने जाते हैं। कल्पोपपन्न देवों में स्वामिसेवक भाव होता है। कल्पातीत में नहीं। ये तो सभी इन्द्रवत् होने से अहमिन्द्र कहलाते हैं। मनुष्यलोक में किसी निमित्त पर कल्पोपपन्न देव ही आते हैं-कल्पातीत नहीं। इस प्रकार भवनपति, वानव्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिकरूप चारों प्रकार के देव अपनी २ परिषदासहित इन भवन आदि पदार्थों में ममत्व करते हैं। सूत्रकार अब इन्हीं ममत्व के विषयभूत पदार्थों को कहते हैं —(भवण-वाहण-जाणविमाण-सयणासणाणि) भवन, वाहन, यान, विमान, शयन, आसन तथा- (नाणाविहवत्थभूसणाणि य)

सुरवरा एवं चउव्विहा सपरिसा वि देवा ममयंति" કલ્પાતીતના બે ભેદ છે. (૧) ગ્રૈવેયક વિમાનવાસી અને (૨) અનુત્તર વિમાનવાસી. તેમાંનાં વિજય, વૈજયન્ત, જયન્ત, અપરાજિત અને સવાર્થ સિદ્ધ, એ પાંચ અનુત્તર વિમાનોમાં રહેનાર જે દેવો છે તેમને મહર્દ્ધિક કહે છે, તે દેવો બધા દેવોમા શ્રેષ્ઠ ગણાય છે. મનુષ્યલોકમાં કોઇ પણ નિમિત્તે કલ્પોપપન્ન દેવો જ આવે છે, કલ્પાતીત આવતા નથી. આ રીતે ભવનપતિ, વાનવ્યન્તર, જ્યોતિષ્ક અને વૈમાનિક, એ ચાર પ્રકારના દેવો પોત પોતાની પરિષદ સાથે તે ભવન આદિ પદાર્થોમાં સમત્વ રાખે છે સૂત્રકાર હવે તે મમત્વના વિષય રૂપ પદાર્થો દર્શાવે છે—
"भवण-वाहण-जाण-विमाण-सयणा-सणाणि" ભવન. વાહન, યાન, વિમાન, શયન, આસન, તથા "नाणाविहवत्थभूसणाणि य" વિવિધ વસ્ત્રો, આભૂષણો

प्रवरप्रहरणानि च=प्रवराणि–श्रेष्ठानि यानि प्रहरणानि–आयुधानि तानि च, तथा–'णाणामणिपंचवण्णदिव्वं च भायणविहिं' नानामणिपञ्चवर्णदिव्यं च भाजन–विधिम्–नानामणीनां–चन्द्रकान्तसूर्यकान्तादिमणीनां ये पञ्चवर्णास्तै र्दिव्यं श्रेष्ठं विविधभाजनसमूहम्, तथा–'णाणाविहकामरूववेउव्विय अच्छरगणसंघाए य' नानाविधकामरूपविकुर्वितास्परोगणसंघातांश्च – नानाविधानि– अनेकप्रकाराणि यानि कामरूपाणि स्वेच्छारूपाणि तानि विकुर्वितानि यैस्ते तथाभूता येऽप्सरो–गणास्तेषां संधातास्तान्=अप्सरः समूहानित्यर्थः, तथा 'दीवसमुद्दे' द्वीपसमुद्रान्, 'दिसाओ विदिसाओ' दिशाविदिशाः 'चेइयाणि' चैत्यानि=वृक्षान् कल्पतरु–रूपान् 'वनसंडे' वनषण्डानि–अनेकविधवृक्षसमूहान् 'पव्वते' पर्वतान् 'गाम–नगराणि य' ग्रामनगराणि च, तथा 'आरामुज्जाणकाणणाणि य' आरामो–द्यानकाननानि च–आरामाः–उपवनानि, उद्यानानि=पुष्पप्रधानवनानि,काननानि अरण्यानि,एतेषामितरेतरयोगद्वन्द्वः, तथा – 'कूवसरतलागवाविदीहिय देवकुलसभप्पवावसहिमाइयाइं' कूपसरस्तडागवापीदीर्घिकादेवकुलसभाप्रपा

नानाविध वस्त्र, आभूषण, (पवरपहरणाणि य) श्रेष्ठ आयुध, (नाना–मणि पंचवण्णदिव्वं य) चन्द्रकान्त, सूर्यकान्त आदि नानामणियों के पंचवर्णवाले श्रेष्ठ भाजन, तथा (णाणाविहकामरूववेउव्वियअच्छरग–णसंघाए य) नाना प्रकार के स्वेच्छानुसार जिन्हों ने रूपों को बनाया है ऐसी अप्सराओं का समूह (दीवसमुद्दे) द्वीप, समुद्र (दिसाओ–विदिसाओ) दिशा, विदिशा, (चेइयाणि) कल्पवृक्षरूप चैत्यवृक्ष, (वन–संडे) अनेक विध वृक्षसमुह (पव्वए) पर्वत (गामनगराणि य) ग्राम, नगर, (आरामूज्जाणकाणणाणि य) आराम–उपवन, उद्यान–पुष्पप्रधान–वन, कानन–अरण्य, (कूवसरतलागवावीदीहियदेवकुलसभप्पवावसहि-

---

"पवरपहरणाणि य" શ્રેષ્ઠ આયુધો, "नानामणि पचवण्णदिव्व य" ચન્દ્રકાન્ત, સૂર્યકાન્ત આદિ વિવિધ મણિયોના પાંચ વર્ણવાળાં પાત્રો, તથા "नाणाविह कामरूव–वेउव्विय–अच्छरगणसंघाए य" જેમને ઇચ્છાનુસાર વિવિધ રૂપો ધારણ કર્યા છે એવી અપ્સરાઓનો સમૂહ, "दीवसमुद्दे" દ્વીપ, સમુદ્ર दिसाओ विदिसाओ" દિશાઓ વિદિશાઓ, "चेइयाणि" કલ્પવૃક્ષરૂપ ચૈત્યવૃક્ષ, "वन संडे" અનેક વિધ વૃક્ષ સમૂહ, "पव्वए" પર્વતો, "गामनगराणि य" ગામો નગરો, "आरामुज्जाणकाणणाणि य" આરામ સ્થાનો-ઉપવન, ઉદ્યાન, પુષ્પ, પ્રધાન વન, કાનન-અરણ્ય, "कूवसरतलागवावीदीहियदेवकुलसभप्पवावसहि माइयाइं" કૂવા, સરોવર, તળાવો,-કમળયુક્ત અગાધ જળાશય, વાવ, દીર્ઘિકા

वसत्यादिकानि, तत्र-कूपः-प्रसिद्धः, सरः-प्रसिद्धम्, तडागः-सपद्माऽगाधजलाशयः, वापी - आयतजलाशयविशेषः - दीर्घिका-चतुष्कोणजलाशयरूपा- ' देवकुलानि ' देवगृहाः-सभाप्रसिद्धा, प्रपाः-पानीयशालाः, वसतयः=सामान्यगृहाणि, एतान्यादौ येषां तानि तथोक्तानि, ' बहुकाइं' बहुकानि बहूनि ' कित्तणानि च ' कीर्तनानि च " अयं देवो दिव्यदेवऋद्धि सम्पन्नः " इत्येवं प्रशंसा वाक्यानि च परिग्रहत्वेन ममायन्ते। ततश्च प्रकृतं ' परिग्गहं ' परिग्रहं, कीदृशं परिग्रहम् ? ' विउलदव्वसारं ' विपुलद्रव्यसारं=विपुलानि द्रव्याण्येव सारो यस्मिंस्तं तथोक्तं, ' परिगिण्हित्ता ' परिगृह्य ' सइंदगा ' सेन्द्रकाः-इन्द्रसहिताः ' देवा वि ' देवा अपि ' न तित्तिं ' न तृप्तिं-नैवेच्छाविनिवृत्तिं ' न तुट्ठिं ' न तुष्टिम्=नापि सन्तोषम् 'उवलभंति ' उपलभन्ते=प्राप्नुवन्ति, आकाङ्क्षाया निराबाधत्वात् । अयं भावः-देवा हि महर्द्धयो वाञ्छितार्थलाभे समर्थाःदीर्घायुषश्च भवन्ति परन्तु तेऽपि परिग्रहविषये न संतोषं प्राप्नुवन्ति इतरेषां पुनः का कथा ?॥

माइयाइं) कूवा सर, तडाग-पद्मसहित अगाध जलाशय, वापी, दीर्घिका-चतुष्कोणवाली बावडी, देवकुल-देवगृह, सभा, प्रपा-प्याऊ, वसति-सामान्यघर, इत्यादि और भी बहुत सी वस्तुए हैं जिनमें इन देवों का ममत्व होता है। तथा (बहुयाइं कित्तणाणि य) अनेक विध कीर्तनों में "यह देव दिव्य ऋद्धि संपन्न है" इत्यादि रूप प्रशंसा वाक्यों में इनका परिग्रहरूप से ममत्व होता है। (विउलदव्वसारंपरिग्गहं परिगिण्हित्ता सइंदगा देवा वि न तित्तिं न तुट्ठिं अच्चंत विउललोभाभिभूयसन्ना उवलभंति) इस प्रकार विपुल सार वाले परिग्रह को ग्रहण करके इन्द्रसहित देव भी इच्छाविनिवृत्तिरूप तृप्ति को तथा संतोष रूप तुष्टि को आकांक्षा की निराबाधता के कारण प्राप्त नहीं कर पाते हैं। तात्पर्य इसका यह है कि महर्द्धिक देव यद्यपि इच्छित अर्थ के लाभ करने में समर्थ

ચોખૂણુ વાવડી, દેવકુલ-દેવગૃહ, સભા, પ્રપા-હવાડા, વસતિ-સામાન્ય ઘર, વગેરે વસ્તુઓમાં તથા એ સિવાયની બીજી પણ અનેક વસ્તુઓમાં દેવો મમત્વ રાખે છે. તથા "बहुयाइं कित्तणाणि य" અનેક પ્રકારની પ્રશંસામાં "આ દેવ દિવ્ય ઋદ્ધિ વાળા છે" ઇત્યાદિરૂપ પ્રશંસાના શબ્દોમાં તેમનું પરિગ્રહરૂપે મમત્વ હોય છે. "विउलदव्वसार परिग्गह पगिण्हित्ता सइंदगा देवा वि न तित्तिं न तुट्ठिं अच्चंतविउललोभामिभूयसन्ना उवलभंति" આ પ્રમાણે વિપુલ સારવાળા પરિગ્રહને ગ્રહણ કરવા છતાં પણ ઈન્દ્ર સહિત દેવો પણ ઇચ્છામાથી નિવૃત્તિ રૂપ તૃપ્તિને તથા સંતોષ રૂપ તુષ્ટિને આકાક્ષાની અપરિમિતતાને કારણે પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. કહેવાનુ તાત્પર્ય એ છે કે મહર્દ્ધિક દેવો જો કે ઈચ્છિત વસ્તુ પ્રાપ્ત કરવાને સમર્થ તથા લાંબા આયુષ્ય વાળા હોય છે તો પણ તેઓ

पुर्वोक्ता देवाः कथम्भूता ? इत्याह- 'अच्चंतविउललोभाभिभूयसण्णा' अत्यन्तविपुललोभाभिभूतसंज्ञाः - अत्यन्तः-अतिशयः विपुलो यो लोभस्तेन अभिभूता संज्ञा=संज्ञानं=मनो येषां ते तथोक्ताः=संग्रहैकशीला इत्यर्थः, के ते देवाः ? इत्याह-' वासहरइक्खुगार वट्ट पव्वयकुंडल-रुचग वरमाणुसोत्तर-कालोदधि लवण-सलिल-दहपति-रतिकर अंजणक-सेल-दहिमुह-वपातुप्पाय-कंचणक—चित्तविचित्त—जमक—वरसिहरकूडवासी' वर्षधरेषुकारवृत्तपर्वतकुण्डल रुचक वरमानुषोत्तरकालोदधिलवणसलिलहृदपतिरतिकराञ्जनकशैलदधिमुखावपातोत्पात - काञ्चनक - चित्रविचित्र - यमकवरशिखरकूटवासिनः=तत्र - वर्षधराः-हिमवदादि पर्वताः, इषुकाराः=धातकीखण्डपुष्करवरद्वीपार्धयोः पूर्वापरार्द्धयो मर्यादाकारिणो दक्षिणोत्तरायताः पर्वतविशेषाः, वृत्तपर्वताः=शब्दापाति विकटापातिगन्धापातिमाल्यवन्नामका वर्तुलवैढ्यपर्वताः, कुण्डलाः-जम्बूद्वीपादे-

एवं दीर्घायुष्क होते हैं, परन्तु वे भी परिग्रह के विषय में संतोष से रहित ही रहते हैं। अतः जब इन देवों की यह दशा है तो फिर अन्य देवों की बात ही क्या कही जा सकती है। ये सब देव अत्यंत बहुत बडे लोभ से अभिभूत-युक्त संज्ञा-मनोवृत्ति वाले होते हैं, अर्थात्-संग्रहशील होते हैं। (वासहरइक्खुगार वट्ट पव्वयकुंडलरुयगवरमाणुसुत्तरकालोदहीलवणसलिलदहपतिरतिकर अंजणकसेलदहिमुह- ओवायुप्पायकंचणकविचित्तजमकवरसिहरिकूडवासी) तथा हिमवत् आदि वर्षधरों में, इषुकारो में-घातकीखंड तथा आधे पुष्करवरद्वीप के पूर्वार्ध और पश्चिमार्ध रूप दो भागों की मर्यादाकारी तथा दक्षिणोत्तर तक लंबे ऐसे पर्वतों में, वृत्तपर्वतो में शब्दापाति, विकटापाति, गन्धापाति तथा माल्यवान् इन नामके वर्तुल वैताढ्य पर्वतों में, कुंडलों में ग्यारह जम्बू

પરિગ્રહના વિષયમા સંતોષ રહિત જ રહે છે તો જ્યારે એ દેવોની એવી હાલત છે તો બીજા દેવોની તો વાત જ શી કરવી ! એ બધા દેવો અત્યંત લોભી વૃત્તિના હોય છે, એટલે કે તેઓ સંગ્રહશીલ હોય છે. "वासहर-इक्खुगारवट्ट-पव्वय-कुंडल-रुयगवर-माणुसुत्तर-कालोदहि- लवणसलिल- दहहपति रतिकर-अंजणकसेलदहिमुहओवायुप्पायकंचणकविचित्त जमकवरसिहरि कूडवासी" તથા હિમવત્ આદિ વર્ષધરોમાં ઇષુકારોમાં, ધાતકી ખંડ તથા અર્ધા પુષ્કવરવર દ્વીપના પૂર્વાર્ધ અને પશ્ચિમાર્ધરૂપ બે ભાગોની મર્યાદા દર્શાવતા તથા દક્ષિણથી ઉત્તર સુધી લાંબા એવા પર્વતોમાં, વૃતપર્વતોમાં-શબ્દાપાતિ, વિકટાપાતિ, ગંધાપાતિ, તથા માલ્યવાન એ નામના વર્તુલ વૈતાઢ્ય પર્વતોમાં કુંડલોમાં-અગિયાર જંબૂદ્વીપથી કુંડલા નામના દ્વીપની અંદર આવેલ કુંડલા-

कादशकुण्डलनामकद्वीपान्तर्वर्तिनः कुण्डलाकाराः पर्वताः, रुचकवराः=जम्बू-द्वीपात् त्रयोदश रुचक वर नामक द्वीपान्तर्गत मण्डलाकाराः पर्वताः, मानुषोत्तराः=मनुष्यक्षेत्रसीमाकारणोमण्डलाकारिपर्वताः, कालोदधिः=द्वितीयः समुद्रः, लवणः-लवणसमुद्रः, सलिलाः=सलिलानि सन्त्यासु सलिलाः, गङ्गादिमहानद्यः, ह्रदपतयः-नदप्रधानाः पद्ममहापद्मादि महाह्रदाः, रतिकराः=नन्दीश्वरनामकाष्टमद्वीपचक्रवाल विदिक्चतुष्टयव्यवस्थिताः सहस्रयोजनोच्छ्रिताः दशशतगव्यूतभूमिगतमूलभागाः, सर्वत्र समाश्चत्वारो झल्लरी संस्थानवन्तः पर्वताः, अञ्जनक शैलाः=अञ्जन-पर्वताः= नन्दीश्वरचक्रवालमध्यभागवर्त्तिनो दिक् चतुष्टयसंस्थिता अञ्जनरत्नमया-श्चत्वारः पर्वताः, सर्वे कृष्णवर्णाः सन्ति। तथा-दधिमुखाः=अञ्जनकचतुष्टय पार्श्व-वर्ति पुष्करिणीषोडशमध्यभागवर्त्तिनः षोडशश्वेतपर्वताः, तथा-अवपातोत्पाताः=

द्वीप से वे कुंडलनामक द्वीप के अन्तवर्ती कुण्डलाकारवाले पर्व-तों में, रुचकवरपर्वतों में-जंबूद्वीप से तेरहवां रूचकवर नामका जो—द्वीप है उसके अन्तर्गत मंडलाकार पर्वतों में, मानुषोत्तर पर्वतों में-मनुष्य क्षेत्र की सीमा करने वाले मंडलाकार पर्वतों में, कालोदधि नामके द्वीतीयसमुद्र में, लवणसमुद्र, में गंगा आदि महानदियों में, नद-प्रधानों में पद्म, महापद्म आदि महा ह्रदों में, रतिकरों में-जो नंदीश्वर नाम के आठवें द्वीप की चार विदिशाओं में स्थित हैं एक हजार योजन ऊँचे है तथा एक हजार कोशतक जिनका मूलभाग पृथ्वी में है-अदृश्य है, और जो सर्वत्र सम हैं ऐसे झल्लरी के आकारवाले चार पर्वतों में, अंजनक गिरियों में नंदीश्वर द्वीप के मध्यभाग में रहे हुए, चार पर्वतों में कि जो अंजन रत्नमय होने से काले हैं और चारों दिशाओं में स्थित हैं दधिमूखों में-चारों अंजनगिरियों के पासमें रही हुई सोलह पुष्करि-

કાર પર્વતોમાં, રુચકવર પર્વતોમાં-જંબૂદ્વીપથી તેરમો જે રુચકવર નામનો દ્વીપ છે તેની અંદર મંડલાકાર પર્વતોમાં, માનનુષોત્તર પર્વતોમાં, મનુષ્ય ક્ષેત્રની સીમા કરનારા માંડલાકાર પર્વતોમાં, કાલોદધિ નામના બીજા સમુદ્રમાં, લવણ સમુદ્રમાં, ગંગા આદિ મહા નદીઓમાં; નદ પ્રધાનોમાં-પદ્મ, મહાપદ્મ આદિ મહા હ્રદોમાં, રતિકરોમાં-નંદીશ્વર નામના આઠમાં દ્વીપની ચાર વિદિશાઓમાં રહેલ, એક હજાર યોજન ઊંચા તથા એક હજાર કોશ સુધીનો જેનો મૂળ-ભાગ પૃથ્વીમાં છે-અદૃશ્ય છે, અને જે સર્વત્ર સમાન છે, એવા ઝાલરના આકારના ચાર પર્વતોમાં, અંજનગિરિયોમાં-નંદીશ્વર દ્વીપના મધ્ય ભાગમાં આવેલ ચાર પર્વતોમાં કે જે અજન રત્નમય હોવાથી કાળા છે. અને ચારે દિશાઓમાં ઉભેલા છે, દધિમુખોમાં-ચારે અંજનગિરિયોની પાસે આવેલ

अवपतन्ति वैमानिका देवा येषु तेऽवपाताः, यत्रावपत्य वैमानिका देवा मनुष्य-क्षेत्रेषु समागच्छन्ति, उत्पतन्ति येभ्यस्ते उत्पाताः, येभ्य उत्पत्य भवनपतयो मनुष्यक्षेत्रे समागच्छन्ति, अवपाताश्चोत्पाताश्चेति द्वन्द्वः, तिगिच्छकूटादयः पर्वता इत्यर्थः, तथा-काञ्चनकाः=उत्तरकुरुमध्ये देवकुरुमध्ये च प्रत्येकं पञ्चानां महाह्रदादीनां प्रत्येकमुभयोः पार्श्वयोः दशदश काञ्चनकपर्वताः सन्ति, इति सर्वं संकलनया द्विशतसंख्यकाः काञ्चनकपर्वता भवन्ति। तदा-चित्रविचित्रौ=निषध नामक वर्षधर समीपवर्त्तिनौ शीतोदाभिधानमहानद्युभयतटवर्त्तिनौ चित्रविचित्रकूटाभिधानपर्वतौ, यमकवरौ=नीलवद् वर्षधर प्रत्यासन्नौ शीताभिधानमहानद्युभयत-टवर्तिनौ यमकवरनामकौ पर्वतौ, शिखरिणः=समुद्रमध्यवर्तिनो गोस्तूभादि-पर्वताः,कूटाः=चन्दनवनकूटादय-, एतेषां द्वन्द्वः, एषु वस्तु शीलं येषां ते तथोक्ताः, देवाः परिग्रहे तृप्तिं न लभन्ते ॥ सू० ३ ॥

णियों के मध्यभाग में जो सोलह सोलह श्वेत पर्वत हैं उनमें, अवपात-पर्वतों में-जहाँ उतर कर वैमानिक देव मनुष्य क्षेत्र में आते हैं उन स्थानों में (ये स्थान तिगिच्छकूट आदि नाम वाले पर्वत कहलाते हैं) कांच-नपर्वतों में-ये पर्वत उत्तरकुरु तथा देवकुरु के बीच में हर एक पांच महाह्रदों के प्रत्येक के दोनों कोनों पर दश दश हैं। इस तरह से ये दोनों दोसौ की संख्या में हैं उन पर्वतों में, चित्रविचित्र कूट नाम के पर्वतों में-ये दोनों पर्वत निषध नामके वर्षधर के समीप में हैं, तथा शीतोदा नामकी महानदी के दानों तट पर वर्तमान नील वर्षधर के पास रहे हुए तथा शीता महा नदी के दोनों तट परवर्तमान ऐसे यम-कवर नाम के पर्वतों में, शिखरी-समुद्रमध्यवर्ती गोस्तूभ आदि पर्वतों में,

---

સોળ પુષ્કરણિયોનાં મધ્ય ભાગમાં જે સોળ સોળ શ્વેત પર્વત છે તેમાં, અવ-પાત પર્વતોમાં-જ્યાં ઉતરીને વૈમાનિક દેવો મનુષ્ય ક્ષેત્રમા આવે છે એ સ્થા-નોમાં, ઉત્પાત પર્વતોમા-જ્યાં ઉતરીને ભવનપતિ મનુષ્યક્ષેત્રમાં આવે છે તે સ્થાનેમાં (તે સ્થાનો તિગિચ્છકૂટ આદિ નામના પર્વતો કહેવાય છે) કાંચનક પર્વતોમાં-તે પર્વતો ઉત્તરકુરુ તથા દેવકુરુની વચમાં દરેક પાંચ મહાહ્રદોમાંના પ્રત્યેકના બને ખૂણા પર દશ દશ છે, અને એ રીતે તે બંને બસોની સંખ્યામાં છે, તે પર્વતોમાં, ચિત્રવિચિત્રકૂટ નામના પર્વતોમા-એ બને પર્વતો નિષધ નામના વર્ષધરની પાસે છે, તથા શીતોદા નામની મોટી નદીના બંને કિનારા પર આવેલા છે, નીલ વર્ષધરની પાસે આવેલ તથા શીતા મહાનદીના કિનારા પર આવેલ યમકવર નામના પર્વતોમાં શિખરી-સમુદ્રની વચ્ચેના ગોસ્તૂભ આદિ

तथा चन्दनवनकूट आदिकों में इनके वसने का स्वभाव होता है। ऐसे ये चारों प्रकार के देव परिग्रह में तृप्ति धारण नहीं करते हैं।

भावार्थ—भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी एवं कल्पवासी, इस प्रकार से ये देवों के मूल चार भेद हैं इनमें भवनपति देवों के असुरकुमार आदि दश भेद, व्यन्तरनिकाय के-पिशाच, भूत आदि सोलह भेद, ज्योतिष्क निकाय के सूर्य, चन्द्र आदि पांचभेद, तथा कल्पवासियों के कल्पोपपन्न और कल्पातीत ऐसे दो भेद हैं। सौधर्म ईशान आदि बारह कल्पों में रहने वाले कल्पोपपन्न, और नवग्रैवेयक तथा पंच अनुत्तर विमानों में रहने वाले कल्पातीत हैं। मनुष्यक्षेत्र में रहने वाले ज्योतिषी देव भ्रमणशील हैं तथा मनुष्यक्षेत्र से बाहिर के ज्योतिषी देव अवस्थित हैं। इन सब देवों के भवन, वाहन आदि विशिष्ट प्रकार का परिग्रह रहता है। उसके रहने पर भी इनकी भावना फिर अधिक परिग्रह की ओर संग्रहशील रहती है। इन सब देवों का हिमवन् आदि पर्वतों में रहने का होता है। सब प्रकार की इन्हें सुखसामग्री प्राप्त रहती है फिर भी इनकी वाञ्छा परिग्रह की ओर से तृप्त नहीं होती है। संतोषवृत्ति इनके चित्त में नहीं जगती है ॥ सू० ३ ॥

પર્વતોમાં ચન્દનવનકૂટ આદિમાં વસવાનો જેમનો સ્વભાવ છે એ ચારે પ્રકારના દેવો પણ પરિગ્રહથી તૃપ્ત થતાં નથી.

ભાવાર્થ—ભવનવાસી, વ્યન્તર, જ્યોતિષી અને કલ્પવાસી, એ રીતે દેવોના મૂળ ચાર ભેદ છે. તેમાં ભવનપતિ દેવોના અસુરકુમાર આદિ દશ ભેદ, વ્યન્તર દેવોના પિશાચ, ભૂત આદિ સોળ ભેદ, જ્યોતિષી દેવોના સૂર્ય, ચન્દ્ર આદિ પાંચ ભેદ, તથા કલ્પવાસીઓના કલ્પોપપન્ન, અને કલ્પાતીત એવા બે ભેદ. સૌધર્મ, ઇશાન આદિ બાર કલ્પોમાં રહેનાર કલ્પોપપન્ન, અને નવગ્રૈવેયક તથા પાંચ અનુત્તર વિમાનોમાં રહેનાર કલ્પાતીત દેવો છે. મનુષ્ય ક્ષેત્રમાં રહેનારા જ્યોતિષીદેવો ભ્રમણશીલ છે તથા મનુષ્ય ક્ષેત્રની બહારના જ્યોતિષી દેવો સ્થિર છે. એ બધા દેવોનો ભવન, વાહન આદિ વિશિષ્ટ પ્રકારનો પરિગ્રહ રહે છે. તે બધી વસ્તુઓ હોવા છતાં પણ તેમની વૃત્તિ અધિક પરિગ્રહને માટે સંગ્રહશીલ રહ્યા કરે છે, તે બધા દેવોનું નિવાસસ્થાન હિમવાન આદિ પર્વતો છે. તેમને બધા પ્રકારની સુખસામગ્રીઓ મળે છે છતા પણ પરિગ્રહ માટેની તેમની વાસના તૃપ્ત થતી નથી. તેમના ચિત્તમાં સંતોષ વૃત્તિ જાગતી નથી ॥સૂ. ૩॥

'रट्ठिया' राष्ट्रियाः 'पुरोहिया' पुरोहिताः 'कुमारा' कुमाराः 'दंडणायगा' दण्डनायकाः 'गणनायगा' गणनायकाः 'माडंबिया' माडम्बिकाः 'सत्थवाहा' सार्थवाहाः 'कुडंबिया' कौटुम्बिकाः, 'अमच्चा' अमात्याः, 'एए' एते चातुरन्तचक्रवर्त्याद्यमात्यान्ताः तथा 'अन्ने य एवमाई' अन्ये च एवमादयः=पूर्वोक्तेभ्यः इतरे च तत्सदृशा ये नराः 'परिग्गहं' परिग्रहं 'संचिणंति' संचिन्वन्ति -परिग्रहस्य संचयं कुर्वन्तीत्यर्थ कीदृशं परिग्रहम् ? इत्याह-'अणंतं' अनन्तम्-अपरिमाणत्वात्, 'असरणं' अशरणं-रक्षणासमर्थत्वात्, 'दुरंतं' दुरन्तं=पर्यवसानदारुणम् 'अधुवं' अध्रुवं-विनश्वरम्, 'अनिच्चं' अनित्यम्,=अस्थिरम्, 'असासयं' अशाश्वतं=प्रतिक्षणं विशरणशीलम्, 'पावकम्मणेमं' पापकर्मनेमं-

---

वासुदेव हैं, बलदेव हैं, माण्डलिक हैं, ईश्वर हैं, तलवर हैं, सेनापति हैं, इभ्य हैं, श्रेष्ठी हैं, राष्ट्रिय हैं, पुरोहित हैं, कुमार हैं, दंडनायक हैं, गणनायक हैं, माडम्बिक हैं, सार्थवाह हैं, कौटुम्बिक हैं, अमात्य हैं, तथा इनसे भिन्न जो और भी इन्हीं जैसे मनुष्य हैं वे सब परिग्रह का संचय करते हैं। अब सूत्रकार विशेषणों द्वारा परिग्रह में विशेषता प्रकट करते हैं वे कहते हैं कि यह परिग्रह (अणंतं) अपरिमित होने से अनंत है। (असरणं) रक्षा करने में असमर्थ होने से अशरणरूप है। (दुरंतं) अन्त में इसका विपाक जीवों को बहुत ही भयंकर रूप में भोगना पड़ता है-इसलिये दुरन्तविपाक वाला होने के कारण यह दुरन्त है। (अधुवं) विनश्वर स्वभाव वाला होने के कारण यह अध्रुव है। (अणिच्चं) अस्थिर होने से यह अनित्य है। (असासयं) प्रतिक्षण खिरने का स्व-

---

વાસુદેવ છે, બળદેવ છે, માંડલિક છે, ઈશ્વર છે, તલવર છે, સેનાપતિ છે, ઇભ્ય છે, શ્રેષ્ઠી છે, રાષ્ટ્રિય છે, પુરોહિત છે, કુમાર છે, દંડનાયક છે, ગણનાયક છે, માડમ્બિક છે, સાર્થવાહ છે, કૌટુમ્બિક છે, અમાત્ય છે, તથા તે સિવાયના બીજા પણ તેમના જેવા જે લોકો છે તે બધા પરિગ્રહનો સંચય કરે છે. હવે સૂત્રકાર વિશેષણો દ્વારા પરિગ્રહમા વિશેષતા પ્રગટ કરવાને માટે કહે છે કે-આ પરિગ્રહ 'अणंतं" બેહદ હોવાથી અનત છે. "असरणं" રક્ષા કરવાને અસમર્થ હોવાથી અશરણરૂપ છે, "दुरंतं" જીવોને તેનો વિપાક (ફળ) બહુ જ ભયંકર રીતે ભોગવવુ પડે છે-તેથી દુરન્ત વિપાકવાળો હોવાને કારણે તે દુરન્ત છે. "अधुवं" નાશવંત સ્વભાવનો હોવાથી તે અધ્રુવ છે, "अणिच्च" અસ્થિર હોવાથી તે અનિત્ય છે, "असासय" પ્રતિક્ષણ હાથમાંથી ખરી પડવાના સ્વભાવવાળો હોવાથી તે આશાશ્વત છે;

पापकर्मणां=विनष्टज्ञानावरणीयादिकर्मणां मूलमित्यर्थः, तथा 'अवकिरियव्वं' अवकरितव्यम्,-त्याज्यम्, 'विणासमूलम्' विनाशमूलम्=ज्ञानादिगुणनाशकारकम्, 'वहवधपरिकिलेसवहुलं' वधवन्धपरिक्लेशवहुलम्=वधो-हिंसनं, वन्धो-बन्धनम्, तज्जनिता परिक्लेशास्तापाः वहुलाः=प्रचुरा यस्मिंस्तं तथोक्तम्, तथा -'अणंतसंकिलेसकारणं' अनन्तसंक्लेशकारणम्-अनन्ता ये संक्लेशाः=दुःखानि-तेषां कारणम्। एतादृशं परिग्रहं चक्रवर्त्यादयस्तद्भिन्नाश्च नराः संचिन्वन्ति। ते-पूर्वोक्ताः 'लोभघत्था' लोभग्रस्ताः 'तं धणकणग रयणनिचयं' तं धनकनक रत्ननिचयं 'पंडियाचेव' पिण्डयन्तश्चैव संसारं=चतुर्गतिलक्षणम्, 'अतिवयंति'

भाव वाला होने के कारण यह अशाश्वत है। (पावकम्मनेमं) ज्ञानावरणीय आदि कर्मों का कारण मूल होने से यह पापकर्म का नेमभूत है। (अवकिरियव्वं) मुमुक्षुओं को छोड़ने योग्य होने के कारण यह अवकरितव्यं-त्याज्य है। (विणासमूलं) ज्ञानादिगुणों के नाश का हेतु होने से यह विनाशमूल है। (वहवंधपरिकिलेसवहुलं) इसके भीतर वध-हिंसा, बंध-बंधन, और परिक्लेश-संताप ये सब वहुत अधिक रूप में हुए हैं। (अणंतकिलेसकारणं) इसीलिये यह जीवों को अनंतसंक्लेश कारण होता है। ऐसे इस परिग्रह को चक्रवर्ती जन आदि तथा इनसे भिन्न जो और मनुष्य हैं वे संचित करते रहते हैं। क्यों कि ये समस्त ही जन (लोभघत्था) लोभरूप कषाय से ग्रसित होते हैं। (तं घणकणगरयणनिचयं) इसी कारण उस धन, कनक एवं रत्न के निचय को (पंडियाचेव) संग्रह करने में ही लगा रहा करते हैं। इसी कारण

"पावकम्मनेमं" જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોનું મૂળ કારણ હોવાથી તે પાપકર્મોના નિમિત્ત રૂપ છે, "अवकिरियव्वं" મુમુક્ષોને તે છોડવા યોગ્ય હોવાથી તે "अवकरितव्यं" ત્યાજ્ય છે, "विणासमूलं" જ્ઞાનાદિ ગુણોના નાશ ને માટે કારણ રૂપ હોવાથી તે વિનાશમૂળ છે. "वहबंधपरिकिलेसकारणं" તેની અંદર વધ-હિંસા, બંધ-બંધન, અને પરિકલેશ-સંતાપ. એ બધુ વધારે પ્રમાણમાં રહેલ છે "लोभघत्था" તે કારણે તે જીવોને અનંત સંક્લેશ-સંતાપનું કારણ બને છે. એવા તે પરિગ્રહનો ચક્રવર્તિ આદિ તથા તે સિવાયના બીજા જે માણસો હોય છે, તેઓ સંચય કરતા રહે છે, કારણ કે તે સઘળા લોકો "तं धणकणगरयणनिचयं" તે કારણે તેઓ ધન, કનક, અને રત્નના સમૂહના "पंडियाचेव" સંગ્રહ કરવામાં જ લીન રહે છે. એ જ

अतिव्रजन्ति-प्राप्नुवन्तीत्यर्थः, कीदृशं संसारम् ? इत्याह—'सव्वदुक्खसंनिलयणं' सर्वदुःखसंनिलयनम्=सर्वदुःखानां संनिलयनम्=आश्रयभूतम्। तथा-' परिग्गहस्स य अट्ठाए ' परिग्रहस्य च अर्थाय=परिग्रह लक्षिकृत्येत्यर्थः,, 'बहुजणो' बहुजनः= जनसमुदायः ' सिप्पसयं ' शिल्पशतं=आचार्योपदेशगम्यमनेकविधं शिल्पं ' सिक्खते ' शिक्षते । तथा ' सुनिउणइओ ' सुनिपुणाः=शिक्षार्थिनां सुनैपुण्याधायकाः ' लेहाइयाओ ' लेखादिकाः=लेख आदौ यासां तास्तथोक्ता', ' सउणरुयावसाणाओ ' शकुनरुतावसानाः=शकुनानां=पक्षिणां रुत जल्पितमवसानेऽन्ते यासां तास्तथोक्ताः, 'गणियप्पहाणाओ' गणितप्रधानः=गणितं प्रधानं यासु तास्तथोक्ताः, ' बावत्तरिं ' द्विसप्तति ' कलाओय ' कलाश्च शिक्षते । तथा-' रतिजणणे ' रतिजननान्=रतिं=रागं जनयन्ति ये ते रतिजननास्तांस्तथोक्तान ' चउसट्ठिं च महिला गुणे ' चतुः षष्ठिं च महिलागुणान्=वात्स्यायन प्रोक्तान् नृत्यगीतादीन् , तथा 'सिप्पसेवं' शिल्पसेवां=शिल्पेन सेवा तां तथोक्ताम् , येन शिल्पेन राजसेवा

परिग्रही जीव (सव्वदुक्खसंनिलयणं) समस्त दुःखों के आश्रयभूत इस (संसार) चतुर्गतिरूप संसार में (अतिवयंति) भटकते रहते हैं। तथा (परिग्गहस्सय अट्ठाए बहुजणो सिप्पसयं सिक्खए) इस परिग्रह के निमित्त को लेकर ही बहुत से लोग कलाचार्य के उपदेश से प्राप्त होने वाले अनेक शिल्पों को सीखते हैं तथा (सुनिउणाओ लेहाउयाओ सउणरुयावसायाओ गणियप्पहाणाओ बावत्तरिकलाओ) अपने में अच्छी तरह से निपुणता बढाने वाली लेखकला से लेकर शकुनरुत पर्यंय ७२ बहत्तर कलाओं को जिने कि में गणितप्रधान होता है सीखते हैं तथा (रइजणणे चउसट्ठिं च महिलागुणे) रागजनक नृत्य, गीत आदि स्त्रीयों से संबंध रखने वाली चौसठ कलाओं को कि जिनके प्रदर्शक वात्स्यायन ऋषि

કારણે પરિગ્રહી જીવ " सव्वदुक्खसंनिलयणं " સમસ્ત દુઃખોના આશ્રયભૂત આ " संसारं " ચાર ગતિવાળા સંસારમાં " अतिवयंति " ભટકયા કરે છે, તથા " परिग्गहस्सय अट्ठाए बहु जणो सिप्पसय सिक्खए " આ પરિગ્રહને નિમિત્તે જ ઘણા લોકો કલાચાર્યના ઉપદેશથી પ્રાપ્ત થતી અનેક કળાઓ શીખે છે, તથા "सुनिउणाओ लोहाइयाओ स ऊणरुयोवसायाओ गणियप्पहाणाओ बावत्तरिकलाओ" પોતાની નિપુણતા સારી રીતે વધારનારી લેખન કળાથી લઈને શકુનરુત સુધીની ૭૨ બોતેર કલાઓ કે જેમા ગણિત મુખ્ય હોય છે. તે બધી કળાઓ શીખે છે, તથા "रइजणणे चउसट्ठिंय महिलागुणे" રાગ જનક નૃત્ય, ગીત આદિ સ્ત્રીઓ સાથે સંબંધ રાખનારી ચોસઠ કલાઓ શીખે છે. એ કલાઓના પ્રદર્શક વાત્સ્યાયન ઋષિ હતા. તથા " सिप्पसेवं " એવી શિલ્પ વિદ્યાઓ શીખે છે કે જેને પ્રભાવે

ऽवसरो लभ्यते तत् शिल्पं 'शिल्पसेवा' इत्युच्यते, तथा 'असिमसिकिसिवाणिज्जं' असिमषीकृषिवाणिज्यम्=असिःखड्गाभ्यासः, मसिः=मसिकृत्यमक्षरलेखनादि, कृषिः=कर्षणक्ष्, 'वाणिज्जं' वाणिज्यम्=वणिक्कर्म, एतेषां समाहारद्वन्द्वः, तत् 'ववहारं' व्यवहारं=व्यवहारशास्त्रम्, तथा 'अत्थसत्थं' अर्थशास्त्रम्, अर्थोपायप्रतिपादकं कौटिल्यबार्हस्पत्याद्यशास्त्रम्, 'इसुसत्थं' इषुशास्त्रम्=धनुर्वेदं 'च्छरुप्पगयं' त्सरुप्रगतं=खड्गमुष्टिग्रहणोपायं, तथा 'विविहाओ' विविधाः 'जोगजुंजणाओ य' योगयोजनाश्च=वशीकरणादिप्रयोगांश्च शिक्षते। तथा

हुए हैं सीखते हैं। तथा (सिप्पसेवं) ऐसी शिल्प विद्या को सीखते हैं कि जिसके बल पर उन्हें राजा की सेवा करने का अवसर प्राप्त हो जाता है। तथा असि, मषी, कृषि एवं वाणिज्यव्यापार, (ववहारं) व्यवहार शास्त्र इन कर्मों को सीखते हैं। तलवार वगैरह अस्त्र शस्त्रादि से आजीविका चलाना इसका नाम असिकर्म है। लेखन आदि करके जीवन निर्वाह करना इसका नाम मषीकर्म है। खेती किसानी करके जीविका चलाना इसका नाम कृषिकर्म है। व्यापार धंदा करना इसका नाम वाणिज्य कर्म है। जिससे लोक व्यवहार चलता है वह व्यवहारशास्त्र है। परिग्रही जीव (अत्थसत्थं) अर्थशास्त्र का भी अध्ययन करते हैं। इस अर्थ शास्त्र के प्रणेता कौटिल्य, बृहस्पति आदि हुए हैं। इसके अध्ययन से व्यापारिक क्षेत्र में व्यापारियों को पैसेकी आयके साधन कैसे२ क्या२ होते हैं इस सब विषय का बोध हो जाता है। इसी परिग्रह की ममता से जीव (इसुसत्थं) धनर्वेद को (छरुप्पगयं) तलवार आदि के चलाने की कला को तथा (विविहाओ जोगजुंजणाओ) वशीकरण आदि

તેમને રાજાની સેવા કરવાની તક મળે તથા અસિ, મષી, કૃષિ અને વાણિજ્ય વ્યાપાર, 'ववहारं' વ્યવહાર શાસ્ત્ર વગેરે કાર્યો શીખે છે. તલવાર આદિ અસ્ત્ર શસ્ત્રાદિથી નિર્વાહ ચલાવવો તેનું નામ અસિકર્મ છે, લેખન આદિ કરીને જીવન નિર્વાહ ચલાવવો તેનું નામ મષીકર્મ છે ખેતી કરીને નિર્વાહ ચલાવવો તેનું નામ કૃષિકર્મ છે. વ્યાપાર રોજગાર કરવો તેનું નામ વાણિજ્ય કર્મ છે જેનાથી લોકવ્યવહાર ચાલે છે તે વ્યહારશાસ્ત્ર છે પરિગ્રહી જીવ "अत्थसत्थ" અર્થશાસ્ત્રનું પણ અધ્યયન કરે છે. તે અર્થશાસ્ત્રના પ્રણેતા કૌટિલ્ય, બૃહસ્પતિ આદિ થયા છે. તેનો અભ્યાસ કરવાથી વ્યાપારના ક્ષેત્રમાં પૈસા કમાવવાના સાધનો કેવા કેવાં હોય છે, અને કયાં કયાં હોય છે. એ બધી બાબત વેપારીઓને જાણવા મળે છે એ જ પરિગ્રહની મમતાથી જીવ "इसुसत्थं" ધનુર્વેદ, "छरुप्पगयं" તલવાર આદિ વાપરવાની કળા, તથા

'अन्नेसु एवमाइएसु' वहूसुकारणसएसु' अन्येषु एवमादिकेषु बहुषु कारणश तेषु=शिल्पादिभिन्नेषु परिग्रहोपादानशतेषु 'जावजीवं' यावज्जीवं 'नडिज्जए' निमज्जते=निमग्नो भवति। तथा 'संचिणंति मंदवुद्धी' संचिन्वन्ति मन्दवुद्धय· परिग्रहम्। तथा 'परिग्गहस्सेव य अट्ठाए करेंति' परिग्रहस्यैव च अर्थाय कुर्वन्ति, 'पाणाणवहकरणं' प्राणानां वधकरम्=परिग्रहं कर्तुं प्राणिनां वधं कुर्वन्तीत्यर्थः, तथा—'अलियनियडिसाइसंपओगे' अलीकनिकृतिसाति संप्रयोगान्, अधिकम्—असत्यम्, निकृतिः—मधुरवचनादिभिराश्वास्य वञ्चनम्, सातिसंप्रयोगः—विगुणद्रव्येषु द्रव्यान्तर संयोज्य प्रशस्तगुणभ्रमोत्पादनम्, एतेषां द्वन्द्वः, तांस्तथोक्तान्, 'परदव्व अभिज्झं' परद्रव्याभिध्याम्—परद्रव्येषु=परधनेषु

अनेकविध प्रयोगों को भी (सिक्खए) सीखते हैं। (अन्नेसु य एवमाइएसु) तथा इसी तरह के और भी इन शिल्पादिकों से भिन्न अनेक (बहुकारणसएसु) परिग्रह के सैंकड़ों कारणों में परिग्रह को अर्जन करने की लालसावाला प्राणी (जावजीवं) जीवन पर्यंत (नडिज्जए) मग्न होता रहता है। (संचिणंति मंदवुद्धी) इसलिये इस कथन से यही निष्कर्ष निकलता है कि जो मंदवुद्धि होते हैं वे ही उत्कट परिग्रह का संचय करते हैं। तथा (परिग्गहस्सेव य अट्ठाए पाणाणवहकरणं करेंति) परिग्रह के निमित्त ही प्राणी प्राणियों के प्राणों का वध करते हैं तथा (अलियनियडि–साइ संपओगे) इस परिग्रह को लक्ष्य करके ही वे (अलियं) असत्यभाषण करते हैं (नियडि) मधुर २ भाषणों से दूसरों को विश्वास दिलाकर फिर उन्हें ठगते हैं, (साइसंपओगे) ओछी कीमत की वस्तु में बहुमूल्यवाली वस्तु को मिलाकर उसे अधिक मूल्यवाली बनादिया

"विविहाओ जोगज्जुजणाओ" વશીકરણ આદિ અનેક વિધ પ્રયોગો પણ શીખે "अन्नेसु य एवमाइएसु" તથા તે કળાઓ સિવાયના એ જ પ્રકારના બીજા અનેક "बहुकारणसएसु" પરિગ્રહોના સેંકડો કારણોમાં પરિગ્રહને પ્રાપ્ત કરવાની લાલસા વાળા જીવો "जावजीवं" આખુ જીવન "नडिज्जए" લીન રહે છે. "संचिणंति मंदवुद्धी" તેથી આ કથનથી એ જ ફલિત થાય છે તથા કે જે લોકો મંદબુદ્ધિવાળા હોય છે તેઓ જ ઉત્કટ પરિગ્રહનો સંચય કરે છે. તથા "परिग्गहस्सेव य अट्ठाए पाणाणवहकरणं करेंति" પરિગ્રહને નિમિત્તે જ પ્રાણી અથવા પ્રાણીઓના પ્રાણોનો વધ કરે છે, તથા "अलिय–नियडि–साइ संपओगे" આ પરિગ્રહને લક્ષ્ય કરીને જ તેઓ "अलियं" અસત્ય બોલે છે, "नियडि" મીઠાં મીઠાં વચનોથી બીજામાં પોતાના પ્રત્યે વિશ્વાસ જમાવીને પાછળથી તેને ઠગે છે "साइसंपओगे" ઓછી કીમતની વસ્તુનું ભારે કીમતની વસ્તુ સાથે મિશ્રણ કરીને તેનો વધારે ભાવ ઉપજાવે છે, "परदव्व

'अभिज्झा' अभिध्या-आसक्तिस्तां तथोक्ताम्, तथा 'सपरदारगमणासेवणाए' स्वदारगमनसेवनायाम् 'आयासविसूरणं' आयासखेदं, स्वदारगमने आयासं-शारीरं मानसं च श्रमम्, परदारासेवने खेदम्=परदाराप्राप्तौ मनः खेदं च कुर्वन्तीत्यर्थः, तथा 'कलहभंडणवेराणि य' कलहभण्डनवैराणि च तत्र-कलहो-वाचिकं युद्धम्, भण्डनम्-परदोषोद्घाटनं गालीप्रदानं वा, वैरं=चित्तेऽमर्षोऽनुबन्धः, तथा 'अवमाणविमाणणाओ' अपमानविमानने, अपमानं-विनयध्वंसः, विमानना=तिरस्करणम्, एतानि सर्वाणि परिग्रहस्यैवार्थाय कुर्वन्ति। तथा 'इच्छमहिच्छप्पिवासससययतिसिया' इच्छामहेच्छापिपासासततृषिताः, तत्र इच्छा=अभिलाषमात्रम्, महेच्छा=महाभिलाषश्चक्रवर्त्यादिपदानां पिपासा=विषयसुखपानेच्छा, ताभ्यः तृषिता इव तृषिताः तथा 'तण्हागेहिलोभघत्था' तृष्णागृद्धिलोभग्रस्ताः, तृष्णा=अप्राप्तद्रव्यस्य लाभेच्छा' गृद्धिः=प्राप्तद्रव्यासक्तिः, लोभः=चित्तविमोहनम्, तैर्ग्र-

करते हैं। (परदव्वअभिज्झं) दूसरों के द्रव्य में आसक्ति भाव करते हैं। (सपरदारगमणा सेवणाए आयास विसूरणं) अपनी स्त्री के सेवन में शारीरिक एवं मानसिक परिश्रम करते हैं, परस्त्री के अप्राप्ति में मनखेद किया करते हैं। तथा (कलहभंडणवेराणिय) कलह-वाचिक युद्ध, भंडन-असभ्य शब्दों का प्रयोग-गाली देना आदि, वैर-चित्त में क्रोध करना तथा (अवमाणविमाणणाओ) दूसरों का अपमान करना, तिरस्कार करना ये सब बातें इस एक परिग्रह के निमित्त ही पापियों द्वारा की जाती हैं। तथा (इच्छमहिच्छप्पिवाससययतिसिया) परिग्रही जीव इच्छाओं से, बड़ी २ अभिलाषाओं से, एवं विषय सुखपान की कामनाओंसे सदा तृषित व्यक्ति की तरह तृषित ही बने रहते हैं। तथा (तण्हागेहिं लोभघत्था) तृष्णा-अप्राप्त-द्रव्य को प्राप्त करने की भावना, गृद्धि-प्राप्तद्रव्य में

अभिज्झं" બીજાનાં દ્રવ્યમાં આસક્તિ રાખે છે. "सपरदारगमणासेवणाए आयासविसूरणं" પોતાની સ્ત્રીને સેવવાનો શારીરિક અને માનસિક પરિશ્રમ કરે છે, અને પરસ્ત્રીની અપ્રાપ્તિથી મનમાં ખેદ અનુભવે છે. તથા "कलहभंडणवेराणिय" કલહ-વાગ્યુદ્ધ, ભંડન-ગાળો આદિ અસભ્ય શબ્દોનો ઉપયોગ વૈર-મનમાં ક્રોધ કરવો તથા "अवमाणविमाणणाओ" બીજાનું અપમાન, તિરસ્કાર વગેરે બધી બાબતો એક પરિગ્રહને કારણે જ લોકો દ્વારા કરાય છે, તથા "इच्छमहिच्छप्पिवाससयतिसिया" પરિગ્રહી જીવ ઇચ્છાઓથી, મોટી મોટી અભિલાષાઓથી, અને વિષય સુખપાનની કામનાઓથી સદા તૃષિત માણસની જેમ તૃષિત જ રહ્યા કરે છે. તથા "तण्हागेहि लोभघत्था" તૃષ્ણા-અપ્રાપ્ત દ્રવ્યને પ્રાપ્ત કરવાની ભાવના, ગૃદ્ધિ-પ્રાપ્ત દ્રવ્યમાં વધારે પડતી આસક્તિ અને

स्ताः=व्याप्ताः, तथा ' अत्ताण अणिग्गहिया ' आत्मनाऽनिगृहीताः=अवशीकृता-त्मानः ' करेंति ' कुर्वन्ति । किं कुर्वन्ति ? इत्याह—' कोहमाणमायालोभे ' क्रोधमानमायालोभान्, कीदृशान् ? 'अकित्तणिज्जे' अकीर्तनियान्–अवाच्यान् । तथा ' परिग्गहे चेव ' परिग्रहे एव ' हुंति ' भवन्ति, ' नियमा ' नियमात्–निश्चयतः, कानि कानि भवन्ति ? त्याह ' सल्ला ' शल्यानि = मायानिदानमिथ्या-दर्शनरूपाणि त्रीणि, ' दण्डा य ' दण्डाश्च–दुष्प्रणिहितमनोवाक्कायरूपाः, ' गार-वाय ' गौरवाणि च=ऋद्धिरससातरूपाणि च ' कसायसण्णा य ' कषायसंज्ञाश्च, कषायाः=प्रतिताः, संज्ञाः=आहार मैथुनभयपरिग्रहादयः, तथा–' कामगुण-अण्हगा य' कामगुणाश्रवाश्च कामगुणाः=शब्दादयस्त एव आश्रवाः=आश्रवद्वाराणि ' इंदिय ' इन्द्रियाणि=असंवृत्तानि इन्द्रियाणि, ' लेसाओ ' लेश्याः=अप्रशस्ता

अधिक आसक्ति, लोभ–लालच, इन सब से घिरे रहते हैं (अत्ताणा अणिग्गहिया) इन की आत्मा इनके वश में नहीं हो पाती है । और इस तरह ये परिग्रह की ममता में फँसकर (कोहमाणमायालोभे) क्रोध, मान माया और लोभ जैसी कषायों को कि जो (अकित्तणिज्जे) शब्दों से प्रकट नहीं की जा सकती हैं (करेंति) करते रहते हैं । (परिग्गहे चेव हुंति नियमा सल्ला, दंडा य गार वा य कसायसण्णा य कामगुणअण्हगा य इंदिय लेसाओ सयगसंपओगा सचित्ताचित्तमीसगाइं दव्वाइं अणंत-गाइं परिघेतुं इच्छंति) इस परिग्रह में ही नियम से माया, मिथ्यादर्शन और निदान, ये तीन शल्य रहते हैं । मन, वचन और काय की दुष्ट-तारूप व्यापार रहता है । ऋद्धि रस सातरूप गौरव रहता है । अनंता-नुबंधी आदि कषायें, आहार, भय, मैथुन, और परिग्रह ये चार संज्ञाऐं,

---

લોભ, એ બધાથી ઘેરાયેલ રહે છે. " अत्ताण अणिग्गहिया " તેમનું મન તેમના કાબૂમા હોતું નથી, અને આ રીતે પરિગ્રહની મમતામાં ફસાઈને " कोहमाण मायालोभे " ક્રોધ, માન, માયા અને લોભ જેવા કષાયો કે જે "अकित्तणिज्जे" શબ્દો દ્વારા પ્રગટ કરી શકાતા નથી. " करेंति " તેમનું સેવન કરે છે " परि-ग्गहे चेव हुति नियमा सण्ला, दंडाय गारवा य कसाय सण्णाय कामगुणअण्ह-गाय इंदियलेसाओ सयणसंपओगा सचित्ताचित्तमीसगाइं दव्वाइं अणंतगाइ परिघेतु इच्छंति " આ પરિગ્રહમાં જ નિયમથી જ માયા, મિથ્યાદર્શન અને નિદાન, એ ત્રણ શલ્ય રહે છે. મન, વચન અને કાયની દુષ્ટતારૂપ પ્રવૃત્તિ રહે છે ઋદ્ધિ રસ સાતરૂપ ગૌરવ રહે છે. અનંતાનુબંધી આદિ કષાયો, આહાર ભય, મૈથુન અને પરિગ્રહ એ ચાર સંજ્ઞાઓ, શબ્દાદિ વિષયરૂપ આસ્રવ,

लेश्याश्च भवन्ति । तथा – ' सयणसंपओगा ' स्वजनसंप्रयोगाः=स्वजनैः=पुत्रदारादिभिः सह संप्रयोगः=संयोगाश्च भवन्ति । ते चक्रवर्त्यादयः ' अणंतगाइं ' अनन्तकानि=पर्यवसानरहितानि ' सचित्ताचित्तमीसगाइं ' सचित्ताचित्तमिश्रकाणि =तत्र सचित्तानि सजीवानि=पुत्रादीनि अचित्तानि=अजीवानि=हिरण्यसुवर्णरत्नादीनि, मिश्रकाणि=सचित्ताचित्तरूपाणि हिरण्यसुवर्णाद्याभरणसहितानि पुत्रकलत्रा-

---

शब्दादि विषयरूप आस्रव, इन्द्रियों की अनर्गल प्रवृत्तियां, कृष्ण, नील आदि अप्रशस्त लेश्याएँ रहती हैं । अर्थात् परिग्रह पाप के सद्भाव में ही नियमतः मायादि शल्यों का सद्भाव जोवों में पाया जाता है । मन वचन आदि योगों की प्रवृत्ति इसी के होने पर अशुभ रूप में रहती हैं। गौरवों का अस्तित्व तथा कषायों की सत्ता एवं आहार आदि चार प्रकार की संज्ञाओं का सद्भाव इस एक परिग्रह की मौजूदगी में ही जीवों में पाये जाते हैं । इंद्रियों की स्वच्छंद प्रवृत्ति एवं कृष्ण आदि अशुभ लेश्याओं का संबंध इसी परिग्रह से जीवों में पाया जाता है । तथा स्वजन आदि के साथ का संबंध भी इसी परिग्रह के ऊपर निर्भर है । चक्रवर्ती आदि सभी मनुष्य यही चाहते हैं कि हमारे पास अनंत सचित्त, अचित्त और मिश्र परिग्रहरूप द्रव्य बना रहे । पुत्र आदि सचित्त परिग्रह, हिरण्य, सुवर्ण, रत्न आदि अचित्त परिग्रह, एवं हिरण्य, सुवर्ण, रत्न आदि के आभरण सहित पुत्रादि मिश्र परिग्रह है। तात्पर्य इसका यही है कि चक्रवर्ती से लेकर छोटे से छोटा प्राणी यही चाहता रहता है कि

ઈન્દ્રિયોની અનર્ગલ પ્રવૃત્તિયો, તથા કૃષ્ણ, નીલ આદિ અપ્રશસ્ત લેશ્યાઓ રહે છે એટલે કે પરિગ્રહ પાપની હાજરીમાં નિયમથી માયાદિ શલ્યોનો સદ્‌ભાવ જીવોમાં આવે છે. તે હોય તો મન વચન આદિ યોગોની પ્રવૃત્તિયો અશુભ રૂપે રહે છે. ગૌરવોનું અસ્તિત્વ તથા કષાયોની સત્તા, તથા આહાર આદિ ચાર પ્રકારની સંજ્ઞાઓ આદિનો સદ્ભાવ એક પરિગ્રહની હાજરી હોય તો જ જીવોમાં જોવા મળે છે ઈન્દ્રિયોની સ્વચ્છંદી પ્રવૃત્તિ અને કૃષ્ણ આદિ અશુભ લેશ્યાઓનું અસ્તિત્વ આ પરિગ્રહને કારણે જ જીવોમાં હોય છે. તથા સ્વજન આદિ સાથેનો સંબંધ પણ આ પરિગ્રહ પર આધાર રાખે છે. ચક્રવર્તિ આદિ સઘળા લોકો એ જ ચાહે છે કે અમારી પાસે અનંત સચિત્ત, અચિત્ત અને મિશ્ર પરિગ્રહરૂપ દ્રવ્ય કાયમ રહે પુત્ર આદિ સચિત્ત પરિગ્રહ છે. હિરણ્ય, સુવર્ણ રત્ન આદિ અચિત્ત પરિગ્રહ છે. અને સુવર્ણ, રત્ન આદિના આભૂષણો સહિત પુત્રાદિ, તે મિશ્ર પરિગ્રહ છે. તેનું તાત્પર્ય એ છે કે ચક્ર-

दीनि, ' दव्वाइं ' द्रव्याणि ' परिघेत्तुं ' परिग्रहीतुम् इच्छन्ति । ' सदेवमणुयासुरम्मि लोगे ' सदेवमनुजासुरे लोके ' लोभपरिग्गहो ' लोभपरिग्रहः=लोभात्परिग्रहो लोभरूपो वा परिग्रही भवति, ' जिणवरेहिं ' जिनवरै 'भणिओ' भणितः=प्रोक्तः ' नत्थि ' नास्ति 'एरिसो ' ईदृशः=परिग्रहसदृशोऽन्यः कश्चिदपि 'पासो' पाशः=बन्धनम् , ' पडिबंधो ' प्रतिबन्धः=प्रतिरोधः । अयं परिग्रहः ' सव्वलोए' सर्वलोके=त्रिषु लोकेषु ' सव्व जीवाणं ' सर्वजीवानाम्=सर्वप्राणिनाम् ' अत्थि ' 'अस्ति=विद्यते । सूक्ष्मजीवानामपि परिग्रहसंज्ञा भवतीति सर्वशब्दग्रहणम् ॥सू.४॥

जो भी परिग्रहरूपवस्तु जितनी भी मात्रा में हमारे पास है वह ज्यों कि त्यों बनी रहे-नष्ट न हो, और उतनी मात्रा से भी फिर अधिक मात्रा में वृद्धिंगत होती रहे तो अच्छी बात है (सदेवमनुयासुरम्मि लोगे) देवलोक में, मनुष्यलोक में, तथा असुर लोक में (लोभपरिग्गहो) लोभ परिग्रह-लोभ से परिग्रह अथवा लोभरूप परिग्रह-होता है। (जिणवरेहिं भणिओ) ऐसा जिनेन्द्र देवोंने कहा है । (नत्थि एरिसोपासो -पडिबंधो सव्वलोए सव्वजीवाणं अत्थि) इस परिग्रह के जैसा दूसरा और कोई भी पास-बंधन, तथा प्रतिबंध-प्रतिरोध-आत्मकल्याण रोधक पदार्थ नहीं है। यह परिग्रह तीनों लोकों में समस्त जीवों के है । प्रश्न-सूक्ष्म जीवों के यह परिग्रह किस रूप में है ? उत्तर-यह परिग्रह उनमें परिग्रह संज्ञा रूप में है । इसी बात को कहने के लिये सूत्र में 'सर्व' शब्द का ग्रहण किया है।

वर्तिथी लઇને નાનામાં નાનો જીવ એ જ ચાહે છે કે જે કોઇ પરિગ્રહરૂપ જેટલા પ્રમાણમાં અમારી પાસે છે તે તેમને તેમ રહે-નાશ ન પામે, અને છે તે કરતાં પણ તેમા વધારો થતો રહે તો બહુ જ સારૂં "सदेवमनुयासुरम्मिलोगे" દેવલોકમાં, મનુષ્યલોકમાં તથા અસુરલોકમા "लोभ परिग्गहो" લોભ પરિગ્રહ-લોભથી પરિગ્રહ અથવા લોભરૂપ પરિગ્રહ હોય છે, "जिणवरेहिं भणिओ" એવુ જિનેન્દ્ર દેવોએ કહેલ છે " नत्थि एरिसो पासो पडिबंधो सव्वलोए सव्वजीवाणं अत्थि " આ પરિગ્રહ જેવું બીજું કોઇ પણ બંધન નથી, તથા પ્રતિરોધક—આત્મકલ્યાણ રોધક પદાર્થ નથી. આ પરિગ્રહ ત્રણે લોકમાં સઘળા જીવોને હોય છે.

પ્રશ્ન—સૂક્ષ્મ જીવોમાં આ પરિગ્રહ કેવી રીતે છે ?

ઉત્તર—આ પરિગ્રહ તેમનામાં પરિગ્રહ સંજ્ઞારૂપે છે એ વાત દર્શાવવાને માટે સૂત્રમાં ' सर्व ' શબ્દનો પ્રયોગ કર્યો છે.

भावार्थ—अढ़ाई द्वीप के भीतर ही मनुष्यों का निवास है, अतः सभी मनुष्य चाहे वे चक्रवर्ती आदी विशिष्ट व्यक्ति भी क्यों न हों इस परिग्रह संचय की तृष्णा से रहित नहीं हैं। सभी अपनी २ योग्यता और पद के अनुसार इसके संचय में लगे रहते हैं। कोई भी जीव इस बात का विचार नहीं करता कि इस परिग्रह के संचय का अंतिम परिणाम कैसा होता है। जीव जीतने भी कष्टों को भोगता है वह इस परिग्रह के संचय निमित्त ही भोगता है, क्यों कि यह परिग्रह स्वयं अनंतक्लेशों का घर है। इस परिग्रह को लोभकषाय के आवेश में ही जीव संचित कीया करते हैं। यह महान् से महान् अनर्थों की जड़ कही गई है। पुरुष संबंधी ७२ बहत्तर कलाएँ तथा स्त्री संबंधी ६४ चौसठ कलाओं को प्राणी इसी परिग्रह के निमित्त सीखता है। असि, मषी, कृषि, आदि कर्म इसी के लिये मनुष्यों को करने पड़ते हैं। एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र को इसी की लालसा से बद्ध होकर हडपना चाहता है। मनुष्यों में दानवता का रूप इसी की कृपा से आता है। आदमीयत को भुलानेवाली यही एक चीज है। माया मिथ्या आदि शल्यों का घर यही एक परिग्रह है। इसकी ज्वाला में झलता हुआ प्राणी सदा हेय और उपादेय के विवेकसे विहीन बना रहता है। मन वचन और काय

ભાવાર્થ—અઢી, દ્વીપની અંદર જ માણુસોનો વસવાટ છે, સઘળા મનુષ્યો ભલે ચક્રવર્તિ આદિ વિશિષ્ટ વ્યક્તિ હોય તો પણુ તેઓ પરિગ્રહ સંચયની તૃષ્ણા વિનાના હોતા નથી. બધા પોત પોતાની યોગ્યતા અને પદ પ્રમાણે તેના સંચમ, પ્રયત્નશીલ રહે છે. કોઇ પણ જીવ એ વાતનો વિચાર કરતો નથી કે આ પરિગ્રહના સંચયનુ આખરી પરિણામ કેવુ હોય છે. જીવ જેટલાં કષ્ટો ભોગવે છે તે આ પરિગ્રહના સંચયને માટે જ ભોગવે છે, કારણુ કે આ પરિ-ગ્રહ પોતે જ અનંત કલેશોનું ધામ છે. આ પરિગ્રહનો લોભ (કષાય) ના આવેગમાંજ જીવ સંચય કર્યા કરે છે તે મોટામાં મોટા અનર્થોનું મૂળ ગણાય છે. પુરુષ સંબંધી ૭૨ બોતેરકલાઓ તથા સ્ત્રી વિષયક ૬૪ચોસઠ કલાઓ માણસો આ ગ્રપરિહને નિમિત્તેજ શીખે છે. અસી, મષી, કૃષિ આદિ કર્મો પણ તેનેજ માટે લોકોને કરવા પડે છે તેની લાલસાએ જ એક રાષ્ટ્ર બીજા રાષ્ટ્રને ગળી જવા માગે છે. મનુષ્યમાં દાનવતા તે પરિગ્રહને કારણે જ આવે છે, માનવતાને ભુલાવનારી તે એક ચીજ છે. તે પરિગ્રહ જ માયા મિથ્યા આદિ શલ્યોનું ધામ છે. તેની જ્વાળામાં ફસાયેલ જીવો સદા હેય અને ઉપાદેયના વિવેકથી રહિત બની જાય છે. આ પરિગ્રહને કારણે જ મન, વચન અને કાયાની કુટિલ

'ये यथा कुर्वन्तीति द्वार मुक्तम्' अथ परिग्रहो यादृशं फलं ददाति तदुच्यते–'परलोगम्मि' इत्यादि—

मूलम्—परलोगम्मि य नट्ठा तमपविट्ठा महयामोहमोहियमई तमोसंधयोर तसथावर सुहुमबायरेसु पज्जत्तमपज्जत्तग एवं जाव परियट्टंति जीवा लोभवससंनिविट्ठा। एसो सो परिग्गहस्स फलविवागो इहलोइओ परलोइओ अप्पसुहो बहुदुक्खो

की कुटिल प्रवृत्ति इसी परीग्रह के प्रभाव से जीवन को तहस नहस करती रहती है। कषायों की उत्कटता इसीके कारण जीवन में उतरती है। आहार आदि संज्ञाएँ इसी के प्रभाव से जीवन के पीछे पड़ी रहती हैं। गारव और इन्द्रिकों की स्वच्छंद प्रवृत्ति का कारण इसी परिग्रह की कामना है। कर्मों का अधिकरूप में आस्रव और कृष्णादि अशुभलेश्याओं का संवध इसी परिग्रह के बल पर होता है। संसारका कोई भी प्राणी यह नहीं जानता है कि मेरे पास जितना भी परिग्रह है उसका वियोग हो। भले ही मुनिजन इसकी कामना न करें-फिर भी प्रत्येक सचेतन व्यक्ति सचित्त आदि परीग्रह की पोट से वंधा ही रहता है। समस्तलोक में इस परिग्रह का अल्पाधिकरूप में साम्राज्य छाया हुआ है। यही आत्मकल्याण का निरोधक है। इसीलिये श्रावक जन इसका प्रमाण और मुनिजनसकल संयमी जीव–इसका सर्वथा परिहार कर देते हैं ॥सू० ४॥

પ્રવૃત્તિયો જીવનને બરબાદ કરે છે. તેને જ કારણે જીવનમા કષાયોની ઉત્કટતા ઉતરે છે તેના જ પ્રભાવથી આહાર આદિ સંજ્ઞાઓ જીવનમાં પીછો પકડયા કરે છે. ગારવ (અભિમાન) અને ઈન્દ્રિયોની સ્વચ્છંદી પ્રવૃત્તિયોનું કારણ આ પરિગ્રહની કામના જ છે. આ પરિગ્રહને કારણેજ કર્મોનો અધિક પ્રમાણમાં આસ્રવ અને કૃષ્ણાદિ અશુભ લેશ્યાઓનો સંબંધ થાય છે. સંસારમાં કોઈ પણ જીવ એ નથી ચાહતો કે તેની પાસે જેટલો પરિગ્રહ હોય તેનો વિયોગ થાય. કદાચ મુનિજન તેની કામના ન કરે, તો પણ પ્રત્યેક સચેતન વ્યક્તિ સચિત્ત આદિ પરિગ્રહના સંચયથી બંધાયેલ રહે છે. સમગ્ર લોકમાં આ પરિગ્રહનુ થોડા કે વધુ પ્રમાણમા સામ્રાજ્ય જામેલુ છે. તે જ આત્મકલ્યાણનું નિરોધક છે. તેથી શ્રાવકોએ તેની મર્યાદા બાંધવી જોઇએ અને મુનિજનોએ-સકલ સંયમી જીવે-તેનો તદ્દન ત્યાગ કરવો જોઈએ ॥ સૂ. ૪ ॥

महब्भओ वहुरयप्पगाढो दारुणो कक्कसो, असाओ वाससहस्सेहिं मुच्चइ, न य अवेदइत्ता अत्थि हु मोक्खोत्ति एवमाहंसु नायकुलनंदणो महप्पा जिणो वीरवरनामधेज्जो कहेसि य परिग्गहस्स फलविवागं। एसो सो परिग्गहो पंचमो नियमा नाणामणिकणगरयणमहरिह० जीव इमस्स मोक्खवरमुत्तिमग्गस्स फलिहभूओ ॥ सू० ५ ॥

॥ चरिमं अहम्मदारं समत्तं ॥

'टीका—'परलोगम्मि' इत्यादि—

जीवाः=प्राणिनः लोभवससंनिविट्ठा' लोभवशसंनिविष्टाः=लोभवशेन परिग्रहे संनिविष्टाः=अभिनिविष्टाः=लोभवशपरिग्रहग्रहिलाः 'परलोगम्मि' परलोके=जन्मान्तरविषये चकारात् इहलोके च 'नट्ठा' नष्टाः-विनष्टाः सुगतिनाशात् सत्पथभ्रंशाच, तथा 'तमं' तमः=अज्ञानान्धकारं 'पविट्ठा' प्रविष्टा 'महया मोहमोहि-

---

पूर्व में 'ये यथा कुर्वन्ति' यह द्वार कहा अब सूत्रकार परिग्रह जिस प्रकार का फल देता है इस विषय को कहते हैं—'परलोगम्मि य' इत्यादि ०।

टीकार्थ—(लोभवससंनिविट्ठा जीवा) लोभ के वश से परिग्रह के वशवर्ती बने हुए जीव (परलोगम्मि य नट्ठा) अपने परभव को भी नष्ट कर डालते हैं। अर्थात् उनका यह लोक तो नष्ट हो ही जाता है, साथ में परभव भी उनका बीगड़ जाता है। क्यों कि ऐसे जीवों को सुगति की प्राप्ति नहीं होती है, तथा इसभव में वे सत्पथ से विहीन बने रहते हैं। तथा (तमपविट्ठा) अज्ञानरूप अंधकार में प्रविष्ट होकर

આગળ "ये यथा कुर्वन्ति" તે અન્તર્દ્વાર વર્ણવ્યું હવે સૂત્રકાર પરિગ્રહ કેવું ફળ આપે છે, તે બતાવે છે–"परलोगम्मिय" ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—"लोभवससंनिविट्ठा जीवा" લોભને અધીન થઈને પરિગ્રહને તાબે થયેલા જીવો "परलोगम्मि य नट्ठा" પોતાના પરભવને પણ નષ્ટ કરી નાખે છે, એટલે કે તેમનો આ લોક બરબાદ થાય છે જ, પણ સાથે સાથે તેમનો પરભવ પણ બગડે છે કારણ કે એવા જીવોને સુગતિ પ્રાપ્ત થતી નથી, અને આ ભવમાં તેઓ સન્માર્ગથી દૂર જ રહે. તથા "तमपविट्ठा" અજ્ઞાન

यमई ' महामोहमोहितमतयः–महामोहेन–प्रकृष्टोदयचारित्रमोहनीयेन मोहिता मतिर्येषां ते तथोक्ताः, ' तमोसंधयारे ' तमिस्रान्धकारे, तमिस्रा=रजनी तद्वद् योऽन्धकारो आज्ञानान्धकारस्तस्मिन् 'तस थावरसुहुमबायरेसु ' त्रसस्थावरसूक्ष्म-वादरेषु तया ' पज्जत्तमपज्जत्तग एवं जाव ' पर्याप्तापर्याप्तक एवं यावत् अत्र–यावच्छब्दादिदं संग्राह्यम्–पर्याप्तापर्याप्तकसाधारणप्रत्येकशरीरेषु तथा-अण्डज पोतज –रसज–जरायुज–संस्वेदजोद्भिज्जोपपातिकेषु नारकतिर्यग्देवमनुष्येषु यथासम्भवं जरामरणरोगवहुलेषु पल्योपमसागरोपमाणि यावत् आनादिकमनवदग्रं दीर्घम-ध्वानं चातुरन्तसंसारकान्तार ' परियट्टंति ' पर्यटन्ति । ' एसो सो ' एष सः

(महयामोहमोहियमई) उनकी मति प्रकृष्ट चारित्र मोहनीय कर्म के उदय से मोहित बनी रहती है। इससे वे न तो एकदेशरूप चारित्र अंगीकार कर सकते हैं और न सकलरूप चारित्र ही। अतः ऐसे प्राणी (तमोसंधयारे) रात्रि के गाढ अंधकार जैसे अज्ञानान्धकार में ही पड़े रहते हैं । (तसथावरसुहुमबायरेसु) और त्रस, स्थावर, सूक्ष्म, बादर इनमें तथा (पज्जत्तमपज्जत्तग) पर्याप्तक अपर्याप्तक (एवंजाव) इसी प्रकार यावत् शब्द से साधारण प्रत्येक शरीर इन जीवों में तथा अंडज, पोतज, रसज, जरायुज, संस्वेदज, उद्भिज्ज जीवों में एवं औप-पातिक देव और नारकियों में (परियट्टंति) जन्म मरण करते हैं। स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु और कर्ण ये पांच इन्द्रियां जिन जीवों में होती हैं वे त्रस हैं। त्रस नामकर्म के उदय से यह पर्याय जीवों को प्राप्त होती है। सिर्फ एक स्पर्शन इन्द्रिय जिन जीवों में होती है वे

રૂપી અંધકારમાં પ્રવેશ કરીને " महया मोहमोहियमई " તેમની મતિ પ્રકૃષ્ટ ચારિત્ર મોહનીય કર્મના ઉદયથી મોહિત થયેલી રહે છે. તેથી તેઓ અંશતઃ ચારિત્ર અંગીકાર કરી શકતા નથી અને સકલરૂપ (સંપૂર્ણ) ચારિત્ર પણ અંગીકાર કરી શકતા નથી. તેથી એવા જીવો " तमोसधयारे " રાત્રિના ગાઢ અંધકાર જેવા અજ્ઞાનાન્ધકારમાં જ પડ્યા રહે છે, " तसथावरसुहुमबाय-रेसु " અને ત્રસ, સ્થાવર. સૂક્ષ્મ, અરે બાદરમાં, તથા " पज्जत्तमपज्जत्तग " પર્યાપ્તક, અપર્યાપ્તક, " एवं जाव " એ જ પ્રમાણે यावत् શબ્દથી સાધારણ પ્રત્યેક શરીર જીવોમાં; તથા અંડજ, પોતજ, રસજ, જરાયુજ, સંસ્વેદજ, ઉદ્ભિજ્જ જીવોમા અને ઔપપતિક દેવ અને નારકીઓમાં "परियट्टंति" પરિભ્રમણ કર્યા કરે છે. જન્મ મરણ કર્યા કરે છે જે જીવોને સ્પર્શન, રસના, ઘ્રાણ, ચક્ષુ અને કર્ણ, એ પાંચ ઇન્દ્રિયો હોય છે તેમને ત્રસ કહે છે ત્રસ નામ કર્મના

स्थावर हैं। स्थावर नाम कर्म के उदय से हि यह पर्याय जीवों को प्राप्त होती हैं। द्वीन्द्रिय से लेकर पंचेन्द्रियतक के जीव ही त्रस माने गये हैं। सूक्ष्म नाम कर्म के उदय से जीव सूक्ष्म होता है। सूक्ष्म और बादर ये दो भेद एकेन्द्रिय जीवों के होते हैं। बादर नामकर्म के उदय से जीव बादर पर्यायवाला होता है। बादर नामकर्म के उदय से जीवों को ऐसे शरीर की प्राप्ति होती है कि जो शरीर चर्म चक्षुओं का विषयभूत बनता है। इसके विपरीत सूक्ष्म नाम कर्म होता है। जिन जीवों की अपनी योग्य पर्याप्तियां पूर्ण हो गई होती हैं वे पर्याप्तक जीव हैं। तथा जिनकी ये पर्याप्तियां पूर्ण जब तक नहीं होती हैं वे अपर्याप्तक जीव हैं। जिन अनंत जीवों का एक ही साधारण शरीर होता है वे साधारण जीव हैं और जिन जीवों का भिन्न २ शरीर होता है वे वे प्रत्येक जीव हैं। साधारण नामकर्मके उदयसे जीव साधारण और प्रत्येक नामकर्मके उदय से जीव प्रत्येक शरीर होता है। अंडेसे जो जीव उत्पन्न होते हैं वे अंडज कहलाते हैं। जैसे मयूर, कबूतर, आदि जीव। जो किसी प्रकारके आवरण से वेष्टित न होकर ही पैदा होते हैं वे पोतज हैं जैसे हाथी शशक, नेवला, चूहा शेर वगैरह जीव। आसव अरिष्ट तथा बिगडे हुए आचार, मुरब्बा

ઉદયથી જીવોને તે પર્યાય (યોનિ) પ્રાપ્ત થાય છે જે જીવોને ફક્ત એક સ્પર્શન ઇન્દ્રિય જ હોય છે, તેમને સ્થાવર કહે છે સ્થાવર નામ કર્મના ઉદયથી જ તે પર્યાય જીવોને પ્રાપ્ત થાય છે. દ્વીન્દ્રિયથી લઈને પચેન્દ્રિય સુધીના જીવોને જ 'ત્રસ' માનવામાં આવે છે સૂક્ષ્મ નામ કર્મના ઉદયથી જીવ સૂક્ષ્મ થાય છે. સૂક્ષ્મ અને બાદર એ બે ભેદ એકેન્દ્રિય જીવોના હોય છે. બાદર નામકર્મના ઉદયથી જીવ બાદર પર્યાયવાળા થાય છે. બાદર નામ કર્મના ઉદયથી જીવોને એવા શરીરની પ્રાપ્તિ થાય છે કે તે શરીરો ચર્મચક્ષુઓ વડે જોઈ શકાય છે. તેનાથી ઉલ્ટુ સૂક્ષ્મ નામકર્મ છે જે જીવોની યોગ્ય પર્યાપ્તિયો પૂરી થઈ ગઇ હોય છે તે જીવો પર્યાપ્તક કહેવાય છે તથા તેમની તે પર્યાપ્તિયો જ્યાંસુધી પૂરી થતી નથી ત્યાંસુધી તેઓ અપર્યાપ્તક જીવો છે જે અનંત જીવોનું એકજ સાધારણ શરીર હોય છે, તે સાધારણ જીવો છે, અને જે જીવોનાં ભિન્ન ભિન્ન શરીર હોય છે, તે પ્રત્યેક જીવ કહેવાય છે સાધારણ નામ કર્મના ઉદયથી જીવ સાધારણ શરીર થાય છે અને પ્રત્યેક નામકર્મના ઉદયથી જીવ પ્રત્યેક શરીર થાય છે. ઇંડામાથી ઉત્પન્ન થતા જીવોને અંડજ કહે છે, જેવાં કે મોર કબૂતર આદિ જીવ જે જીવો કોઈ પણ પ્રકારના આવરણથી ઢંકાયા વિના જ જન્મે છે-એટલે કે બચ્ચાં રૂપે જન્મે છે તેમને પોત જ કહે છે, જેમકે હાથી, સસલુ, નોળિયો, ઉંદર, સિંહ વગેરે જીવો. આસવો, અરિષ્ટો, બગડેલાં

आत्मप्रदेशैः सहोपचित्य 'चउव्विहगईपेरंतं' चतुर्विधगतिपर्यन्तम्, चतुर्विधा=चतुःप्रकारा गतिः=नरकादिरूपा पर्यन्तो=विभागो यस्य स तं तथोक्तं संसारम् 'अणुपरियट्टंति' अनुपर्यटन्ति=परिभ्रमन्ति ॥ १ ॥

ये च प्राणिनोधर्मं न श्रृण्वन्ति, तथा ये च श्रुत्वापि प्रमाद्यन्ति=प्रमादं कुर्वन्ति ते उभयेऽपि 'अकयपुण्णा' अकृतपुण्याः=प्राणातिपातादिपापपरायणत्वात् हीन-पुण्या 'अनंतए' अनन्तकान्=अनन्तान् 'सव्वगइपक्खंदे' सर्वगतिप्रस्कन्दान्=नरकनिगोदादि चतुर्गतिभ्रमणानि 'काहिंति' करिष्यन्ति ॥ २ ॥

ये च मिथ्यादृष्टिकाःअबुद्धिकाः=विवेकबुद्धिविकला बद्धनिकाचितकर्माणः

हैं- 'एएहिं, इत्यादि।

(एएहिं) इन हिंसा आदिरूप (पंचहिं) पांच (आसवेहिं) आस्रवों के आचरण करने से जीव (अणुसमयं) प्रतिक्षण (रयं आचिणित्तु) ज्ञानावरणीय आदि कर्ममल का बंद करके-आत्मप्रदेशों के साथ एक क्षेत्रावगाहरूप संबंध करके (चउविहगइपेरंतं) नरकादिरूप चार प्रकारकी गतिवाले (संसारं) संसार में (अणुपरियट्टंति) परिभ्रमण किया करते हैं ॥ १ ॥ (जे य न सुणंति धम्मं) जो प्राणी श्रुतचारित्ररूप धर्म का श्रवण नहीं करते है तथा (सोऊण य जे पमायंति) जो सुनकर के भी प्रमाद पतित होते रहते हैं, ये दोनों (अकयपुण्णा) प्राणातिपात आदिकों में परायण रहने के कारण हीन पुण्यवाले हैं। (अनंतए सव्वगईपक्खंदे काहिंति) अतः अनंतरूप में नरकनिगोद आदि चारोगतियों में परिभ्रमण करते रहेंगे ॥ २ ॥ (जे नरा मिच्छादिट्ठी अबुद्धीया मनु-

---

ઉપસંહાર કરીને પોતાના વિચારે દર્શાવે છે—"एए हिं" ઇત્યાદિ—

"एएहिं" હિંસા આદિ રૂપ "पंचहि" તે પાંચ "आसवेहिं" આસ્રવોને આચરવાથી જીવો "अणुसमय" પ્રત્યેક ક્ષણે "रयं आचिणित्तु" જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મમલનો બંધ બાધીને-આત્મ પ્રદેશોની સાથે એક ક્ષેત્રાવગાહરૂપ સંબંધ કરીને "चउविहगइपेर" નરકાદિ રૂપ ચાર ગતિ વાળા "संसारं" સંસારમાં "अणुपरियट्टंति" પરિભ્રમણ કર્યા કરે છે ॥ ૧ ॥

"जेय न सुणंति धम्म" જે જીવો શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મનું શ્રવણ કરતાં નથી, તથા "सोऊण च जे पमायंति" સાભળીને પણ જે પ્રમાદમાં ડૂબેલા રહે છે, તે બન્ને "अकयपुण्णा" પ્રાણાતિપાત આદિમાં લીન રહેવાને કારણે પુન્યહીન હોય છે, "अनंतए सव्वगई पक्खंदेकाहिंति" તેથી અનન્તરૂપે નરકનિગોદ આદિ ચારે ગતિયોમા પરિભ્રમણ કર્યા કરશે. ॥૨॥

बद्धं=स्वात्मप्रदेशेषु संश्लेषितं, निकाचितं=दृढतरं बद्धम्=उपशमनादिकरणानाम-विषयीकृतं कर्म यैस्ते तथोक्ताः; नराः गुरुणा बहुविधम्=अनेकप्रकारम्=विविध-हेतुदृष्टान्तपूर्वकम् अनुशिष्टमपि=उपदिष्टमपिधर्मं=श्रुतचारित्रलक्षणं शृण्वन्ति किन्तु न च कुर्वन्ति=न च समाचरन्ति ॥ ३ ॥

'जे' ये मनुष्याः सर्वदुःखानां=जन्मजरामरणादिरूपाणां 'विरेयणं' विरेचनं=कोष्ठशुद्धिरूपविरेचनमिवविरेचनं निवारकं 'गुणमहुरं' गुणमधुरं गुणैः=आत्मविकासिगुणैर्मधुरं=मिष्टम्, एत्तादृश 'जिणवयणं' जिनवचनं=वचनं=जिन-वचनरूपम् 'आसहं' औषध 'मुहा' मुधा=उपकारबुद्ध्या 'जं' यत् 'नेच्छइ' नेच्छन्ति=नपिबन्ति ते 'कि काउं' किं कर्तुं 'सक्का' शक्ताः=समर्था भवन्ति

थ्यमिथ्यादृष्टि होते हैं विवेक बुद्धिसे विहीन होते हैं तथा (बद्धनिकाइय-कम्मा) निकाचित कर्मो का बंध किए हुए होते हैं, ऐसे मनुष्य बहुविहं (अणुदिट्ठंपि) गुरुओं द्वारा विविधहेतु तथा दृष्टान्त आदिसे बहुत प्रकारसे सामझाये गये भी श्रुत चारित्ररूप (धम्मं) धर्मको (सुणंति) सुन तो लेते हैं परन्तु (न य करेंति) उसे अपने आचरण में नहीं लाते हैं ॥३॥ रोगी होकर भी जो रोग निवारणार्थ औषधि का पान नहीं करते हैं तो जैसे वे अपने रोग को दूर करने में समर्थ नहीं हो सकते हैं इसी तरह (ये) जो संसारी प्राणी (सव्व दुक्खाण विरेयणं (जरा, मरण आदि समस्त दुःखों को जड़मूल से उखाड देने वाले तथा (गुणमहुर) आत्मविकासी गुणो से मीठे ऐसे (जिणवयणं) जिनेन्द्र प्रभु के वचन रूप (ओसह) औषध को (मुहा) उपकार बुद्धि से (पाउं नेच्छइ) नहीं पाते हैं वे (किं काउं सक्का) कुछ भी करने के लिये समर्थ नहीं हो सकते हैं।

"जे नरा मिच्छादिट्ठी अबुद्धीया" જે મનુષ્યો મિથ્યાદૃષ્ટિ વાળા હોય છે, વિવેકબુદ્ધિ વિનાના હોય છે તથા "बद्धनिकाइयकम्मा" નિકાચિત કર્મોના બંધ વાળા હોય છે, એવા મનુષ્યો "बहुविह अणुदिट्ठंपि" ગુરુઓ દ્વારા વિવિધ હેતુ તથા દૃષ્ટાંતો આદિ દ્વારા બહુજ સમજાવવામાં આવે છે છતાં પણ શ્રુતચારિત્રરૂપ "धम्मं" ધર્મનું "सुणति" શ્રવણ તો કરે છે, પણ "न य करेति" પણ તેને પોતાના આચરણમાં ઉતરતા નથી ॥૩॥

જેમ રોગી માણસ રોગના નિવારણ માટે ઔષધિ ન પીવે તો તેનો રોગ દૂર કરવાને શક્તિમાન થતો નથી, એ જ પ્રમાણે "ये" જે સંસારી "सव्वदुक्खाणविरेयणं" જરા, મરણ આદિ સઘળા દુઃખોને નિર્મૂળ કરનાર તથા "गुणमहुरं" આત્મવિકાસી ગુણોથી મધુર એવાં "जिणवयणं" જિનેન્દ્ર ભગવાનનાં વચનરૂપ "ओसहं" ઔષધને "मुहा" ઉપકાર બુદ્ધિથી "पाउं-नेच्छइ" પ્રાપ્ત કરતા નથી, તેઓ "किं काउंसक्का" કંઇ પણ કરવાને સમર્થ

अपि तु नैव किमपि । ये औषधं न पिबन्ति ते रोगनिवारणे कथमपि समर्था न भवन्तीति भावः । सूत्रे ' नेच्छइ ' इत्यत्रैकवचनमार्षत्वात् ॥ ४ ॥

भावेन=अन्तःकरणेन. पञ्चैव च प्राणातिपाताद्यास्रवद्वाराणि ' उज्झिऊणं ' उज्झित्वा=त्यक्त्वा तथा पञ्चैव च प्राणातिपातादिविरमणलक्षणानि संवरद्वाराणि ' रक्खिऊण ' रक्षित्वा=पालयित्वा=कर्मरजोविप्रमुक्ताः सन्तः सिद्धिवरां=सिद्धीनां मध्ये वरा श्रेष्ठा सकलकर्मक्षयलभ्या भावसिद्धिस्तां तथोक्ताम् , अतएव अनुत्तरां सर्वोत्तमा ' जंति ' यान्ति-अपुनरावृत्तिं सिद्धिगतिं गच्छन्तीत्यर्थः ॥ ५ ॥

इति श्रीविश्वविख्यात-जगद्वल्लभ-प्रसिद्धवाचकपञ्चदशभाषाकलितललितकलापालापक-प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक-वादिमानमर्दक-श्रीशाहूछत्रपतिकोल्हापुर राजप्रदत्त-' जैनशास्त्राचार्य ' पदभूषित-कोल्हापुरराजगुरु-बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकरपूज्यश्री-घासीलाल - व्रतिविरचितायां दशमाङ्गस्य श्री प्रश्नव्याकरणसूत्रस्य सुदर्शन्याख्यायां व्याख्यायां हिंसादिपञ्चास्रवद्वाररूपः प्रथमो विभागः समाप्तः ॥ १ ॥

विरेचन औषधि जिस प्रकार कोष्ठ की शुद्धि कर देती है उसी प्रकार प्रभु के वचनरूप औषध भी कोष्ठरूप आत्मा की शुद्धि विधायक होती हैं, इसलिये इन्हें विरेचक चूर्ण के जैसा कहा है ॥ ४ ॥ जो भव्य जीव (भावेणं पंचेव उज्झिऊणं) भावपूर्वक इन पूर्वोक्त प्राणातिपात आदि पांच आस्रव द्वारों को छोड़ करके और (पंचेव रक्खिऊण) प्राणातिपातादिविरमणरूप पांच संवरद्वारों पाल करके (कम्मरयविप्पमुक्का) कर्मरूप रज से सर्वथा रहित हो जाते हैं. वे (अनुत्तरं सिद्धवरं जंति) अपुनरावृत्तिरूप सर्वोत्तम भावसिद्धि सिद्धिगति-को प्राप्त करते हैं ॥५॥

॥ ये पांच आस्रव- ' अधर्म ' द्वार समाप्त हुए ॥

॥ प्रश्नव्यारण सूत्र का प्रथम विभाग समाप्त ॥

થઈ શકતા નથી જેમ વિરેચન ઔષધિ કોઠો સાફ કરી નાખે છે તેમ પ્રભુના વચનરૂપી ઔષધ પણ આત્મ રૂપી કોઠાની શુદ્ધિ કરનાર છે, તેથી તેને વિરેચન ચૂર્ણ સમાન કહેલ છે ॥ ૪ ॥

જે ભવ્ય જીવો " भावेणं पंचेव उज्झिऊणं " ભાવ પૂર્વક તે પૂર્વોક્ત પ્રાણાતિપાત આદિ પાંચ આસ્રવ દ્વારોને છોડીને, " पंचेव रक्खिऊण " પ્રાણાતિપાતાદિ વિરમણરૂપ પાંચ સંવરદ્વારોનું પાલન કરીને " कम्मरयविप्पमुक्का " કર્મરૂપ રજથી તદ્દન રહિત થઈ જાય છે. તેઓ " अनुत्तरं सिद्धिवरं जंति " જ્યાંથી આ સંસારમાં પાછા આવવું પડતું નથી એવુ સર્વોત્તમ ભાવસિદ્ધિ-સિદ્ધિગતિ-મોક્ષ-પ્રાપ્ત કરે છે, ॥૫॥

॥ પાંચ આસ્રવદ્વાર સમાપ્ત ॥

॥ પ્રશ્નવ્યાકરણ સૂત્રનો પહેલો વિભાગ સમાપ્ત ॥

—द्वितीयो भागः—

अत्र प्रथमभागे पञ्चास्रवा वर्णिताः, द्वितीयभागे तु तत्प्रतिपक्षभूतान् पञ्च संवरानभिधित्सुः। श्रीसुधर्मास्वामी तेषु प्रथममहिंसालक्षणसंवरद्वारं विवृण्वन् शिष्यमामन्त्र्येदमाह—' जम्बू ' इत्यादि—

मूलम्—जंबू ! एत्तो संवरदाराइं पंच वोच्छामि आणुपुव्वीए।
जह भणियाणि भगवया, सव्वदुक्खविमोक्खणट्ठाए ॥१॥
पढमं होइ अहिंसा १, बितियं सच्चवयणं इति पण्णत्तं।
दत्तमणुन्नाय३ संवरो य बंभचेर४ मपरिग्गहत्तं५ च ॥२॥
तत्थ पढमं अहिंसा, तसथावरसव्वभूयखेमकरी।
तीसे सभावणाए किंचिवोच्छं गुणुद्देसं ॥ ३ ॥

ताणि उइमाणि सुव्वय ! महव्वयाइं लोगहियसव्वयाइं सुयसागरदेसियाइं तवसंजममहव्वयाइं सीलगुणवरव्वयाइं सच्चज्जवव्वयाइं नरगतिरियमणुयदेवगइविवज्जगाइं सव्व जणसासणगाइं कम्मरयविदारगाइं भवसयविणासगाइं दुहसयविमोयगाइं -सुहसयपवत्तगाइं कापुरिसदुरुत्तराइं सप्पुरिसनिसेवियाइं निव्वाणगमणमग्गसग्गप्पणायगाइं संवरदाराइं पंच कहियाणि भगवया ॥ सू० १ ॥

द्वितीय विभाग प्रारंभ—

प्रथम विभाग में पांच आस्रवों का वर्णन किया गया है। अब इस द्वितीय विभाग में इन पांच आस्रवों के प्रतिपक्षभूत पांच संवरों को कहने की कामनावाले श्री सुधर्मास्वामी सब से पहिलें उनमें से अहिंसालक्षण संवरद्वार का विवेचन करने के निमित्त जंबूस्वामी को

બીજોભાગ—

પહેલા વિભાગમાં પાંચ આસ્રવોનું વર્ણન કરાયું છે હવે આ બીજા વિભાગમાં તે પાંચ આસ્રવોથી વિરૂદ્ધના પાંચ સવરો વિષે વર્ણન કરવાની ઇચ્છાવાળા શ્રી સુધર્માસ્વામી સૌથી પહેલાં તેઓમાંના અહિંસાલક્ષણ સંવરદ્વારનું

टीका—'जंबू' इत्यादि—

हे जम्बूः । – इतः संवरद्वाराणि पञ्च वक्ष्यामि आनुपूर्व्या यथा भणितानि भगवता सर्वदुःखविमोक्षणार्थाय ॥ १ ॥

प्रथमं भवत्यहिंसा, द्वितीयं सत्यवचनमिति प्रज्ञप्तम् ।
दत्तानुज्ञातसंवरश्च, ब्रह्मचर्यपरिग्रहत्वं च ॥ २ ॥
तत्र प्रथममहिंसा, त्रसस्थावरसर्वभूतक्षेमकरी ।
तस्या सभावनायाः, किञ्चिद् वक्ष्यामि गुणोद्देशम् ॥ ३ ॥ इति छाया ।

तत्र हे जम्बूः । इतः=आस्रवद्वारकथनानन्तरं 'आणुपुव्वीए' आनुपूर्व्या–अनुक्रमेण पञ्च 'संवरदाराइं' संवरद्वाराणि, संव्रियते=निरुध्यते कर्म कारणं प्राणातिपातादिकं येनात्मपरिणामेन .स संवरस्तस्य द्वाराणि = उपायभूतानि= अहिंसादीनि 'वोच्छामि' वक्ष्यामि=कथयिष्यामि । नाहं स्वबुद्ध्या वक्ष्यामि, किन्तु भगवता महावीरेण सर्वप्राणिनां 'सव्वदुक्खविमोक्खणट्ठाए' सर्वदुःख–

संबोधन करके प्रथमसूत्र कहते हैं—'जंबू' इत्यादि० ।

टीकार्थ—(जंबू) हे जंबू ! (एत्तो) आस्रवद्वार कहने के बाद में अब (आणुपुव्वीए) अनुक्रम से (पंच संवरदाराइं) पांच संवरद्वारों को (वोच्छामि) कहूंगा । जिस आत्मपरिणाम से कर्मो के आस्रव के कारणभूत प्राणातिपातादिक परिणाम रोक दिये जाते हैं उसका नाम संवर है । उसके उपायभूत द्वार अहिंसादिक परिणाम हैं । इन्हीं परि– णामों का नाम संवर द्वार है । मैं इन संवरद्वारों का कथन अपनी बुद्धि के अनुसार नहीं करूँगा–किन्तु (भगवया) भगवान् महावीर ने (सव्वदुक्खविमोक्खणट्ठाए) समस्त प्राणियों के दुःखो को दूर करने के

વિવેચન કરવાને માટે જબૂસ્વામીને સંબોધીને પહેલું સૂત્ર કહે છે—

"जंबू" ઇત્યાદિ

"जंबू" હે જમ્બૂ! "एत्तो" આસ્રવદ્વાર વિષે વર્ણન કર્યા પછી હવે હું "आणुपुव्वीए" અનુક્રમે 'पंचसंवरदाराइ" પાંચસંવર દ્વારો "वोच्छामि" કહીશ. જે આત્મપરિણામથી કર્મોના આસ્રવના કારણભૂત પ્રાણાતિપાતાદિક પરિણામને રોકવામાં આવે છે તેનું નામ સંવર છે તેના ઉપાયરૂપ દ્વારો અહિંસા વગેરે પરિણામ છે એ જ પરિણામોને સંવરદ્વાર કહે છે હુ તે સંવરદ્વારોનું વર્ણન મારી બુદ્ધિ પ્રમાણે કરીશ નહીં–પણ "भगवया" ભગવાન મહાવીરે "सव्व दुक्खविमोक्खणट्ठाए" સમસ્ત પ્રાણીઓના દુઃખો દૂર કરવાને

विमोक्षणार्थाय 'जह' यथा-यद्रूपाणि भणितानि, तथैव वक्ष्यामि ॥ १ ॥ पंच संवर द्वाराणि वक्ष्यामीति प्रतिज्ञाय तन्नामान्याह-'पढमं होइ अहिंसा' इत्यादि। पञ्चसंवर द्वारेषु 'पढमं' प्रथममहिंसा संवरद्वारं भवति, द्वितीयं सत्यवचननामकं, तृतीयं दत्तानुज्ञातग्रहणलक्षणं, चतुर्थं ब्रह्मचर्यं, च=पुनः पञ्चममपरिग्रहत्वं संवर-द्वारम् ॥२॥ पञ्च संवरद्वारनामान्युक्तानि, संप्रति प्रथममहिंसासंवरद्वारं वर्णयितु-माह-'तत्थ पढम अहिंसा' इत्यादि-

'तत्थ' तत्र संवरपञ्चकमध्ये प्रथमं संवरद्वारमहिंसा भवति, सा हि 'तसथावरसव्वभूयखेमकरी' त्रसस्थावरसर्वभूतक्षेमकरी=त्रसस्थावरादि सर्व

लिये (जह) जिस रूप से इनका (भाणियाणी) प्ररूपण किया है उसी तरह से मैं इनका प्ररूपण-वर्णन करूँगा ॥ १ ॥

अब वे पांच संवर द्वार कौन २ से हैं? सूत्रकार उनका क्रमशः नामनिर्देश करने के लिये कहते हैं-'पढमं होइ अहिंसा' इत्यादि।

उन पांच संवर द्वारों में से (पढमं) सब से पहिला संवर द्वार (अहिंसा होइ) अहिंसा है। (बितियं) दूसरा संवर द्वार (सच्चवयणं) सत्यवचन है (दत्तमणुन्नाय) तीसरा संवर द्वार दत्तानुज्ञातग्रहण है। चौथा संवर द्वार (बंभचेरं) ब्रह्मचर्य है। और पांचवा संवर द्वार (अपरिग्गहत्तं) अपरिग्रहत्व है ॥ २ ॥ इस प्रकार पांच संवर द्वारों के नाम कह कर अब सूत्रकार सर्वप्रथम अहिंसा रूप संवर द्वार को वर्णन करने के विये तीसरी गाथा कहते हैं-(तत्थ) इन पांच संवर द्वारों के बीच में (पढमं) पहिला संवरद्वार (अहिंसा) अहिंसा

માટે "जह" જે રીતે તેનું "भाणियाणि" પ્રરૂપણ કર્યું છે. એજ રીતે હું તેનું પ્રરૂપણ-વર્ણન કરીશ. ॥ १ ॥

હવે તે પાંચ સંવરદ્વાર કયાં કયાં છે? તેનો અનુક્રમે નામ નિર્દેશ કરવાને માટે સૂત્રકાર કહે છે—"पढमं होइ अहिंसा" ઇત્યાદિ

તે પાંચ સંવદ્વારોમાં" "पढमं" સૌથી પહેલું સંવરદ્વાર "अहिंसा होइ અહિંસા છે, "बितियं" બીજું સંવરદ્વાર "सच्चवयणं" સત્ય વચન "दत्तमणुन्नाय" ત્રીજું સંવરદ્વાર દત્તાનુગ્રહણ છે, ચોથું સંવરદ્વાર "बंभचेरं" બ્રહ્મચર્ય છે, અને પાંચમું સંવરદ્વાર "अपरिग्गहत्तं" અપરિગ્રહત્વ છે ॥२॥

આ પ્રમાણે પાંચ સંવરદ્વારોનાં નામ કહીને હવે સૂત્રકાર સૌથી પહેલાં સંવરદ્વાર અહિંસાનું વર્ણન કરવાને માટે ત્રીજી ગાથા કહે છે "तत्थ" એ પાંચ સંવરદ્વારોમાં "पढमं" પહેલું સંવરદ્વાર "अहिंसा" અહિંસા છે.

जीवानां कुशलकारिणी । 'तीसे' तस्या अहिंसायाः 'सभावणाए' सभा-वनायाः=भावनापञ्चकसहितायाः 'किंचि' किंचित् 'गुणुद्देसं' गुणोद्देशं-गु-णानां परिचयं हे जम्बूः । अहं त्वां प्रति 'वोच्छं' वक्ष्ये=कथयिष्यामि ॥ ३ ॥ पूर्वोक्तमेवार्थं विशदयन्नाह-'ताणि उ इमाणि' इत्यादि-'सुव्वय' हे सुव्रत ! =शोभनव्रतशालिन् ! जम्बूः ! यानि संवरशब्देनोक्तानि 'ताणि उ' तानि तु इमानि=वक्ष्यमाणानि सन्ति । तानि कीदृशानि ? इत्याह-'महव्वयाइं' महा-व्रतानि=करणत्रययोगत्रयेण यावज्जीवं सर्वविषयनिवृत्त्याऽणुव्रतापेक्षया वा महान्ति=बृहन्ति यानि व्रतानि सावद्यविरतिलक्षणानि तानि तथोक्तानि, पुनः 'लोगहियसव्वयाइं' लोकहितसद्व्रतानि=लोकेभ्यः=षड्जीवनिकायरूपेभ्यो

है (तस थावरभूयखेमकरी) यह अहिंसा त्रस और स्थावर आदि समस्त जीवों की कुशल कारिणी है। (स भावणाए तीसे) में उस पांच भाव-नाओं सहित अहिंसा के (किंचि) कुछ (गुणुद्देसं) गुणों का परिचय हे जंबू ! तुमको (वोच्छं) कहूँगा ॥ ३ ॥

इसी पूर्वोक्त अर्थको सूत्रकार अब विशदरूपमें समझाते हैं-(सुव्वय!) हे शोभनव्रतशालिन् जंबू ! जो संवर शब्द से कहे गये हैं (ताणिउइ-माणि) वे इस प्रकार से हैं-(महव्वयाइं) ये महाव्रतरूप हैं-इन संवररूप महाव्रतों में हिंसा आदि पांचों पाप कृत, कारित, अनुमोदना तथा मन, वचन और काय से यावज्जीव-जीवनपर्यंत-छोड़ दिये जाते हैं, इसलिये ये बड़े व्रत कहलाते हैं। अथवा अणुव्रतों की अपेक्षा ये अहिंसा सत्य आदि संवररूप व्रत महाव्रत कहलाते हैं, अर्थात् इन

"तसथावरभूयखेमकरी" ते अहिंसा त्रस, स्थावर वगेरे समस्त જીવોનું કલ્યાણ કરનારી છે. "सभावणाए तीसे" હે જંબૂ! તે પાચ ભાવનાઓ સહિત અહિંસાના "कि चि" કેટલાક "गुणुद्देसं" ગુણોનો પરિચય હું તમને "वोच्छं" કહીશ ॥૩॥

એ જ પૂર્વોક્ત અર્થને હવે સૂત્રકાર લંબાણ પૂર્વક સમજાવે છે- "सुव्वय !" હે સુંદર વ્રતધારી જંબૂ ! જે સંવરો કહેવામાં આવ્યા છે "ताणि उ इमाणि" તે આ પ્રકારે છે-"महव्वयायं" તે મહાવ્રતરૂપ છે-તે સંવરરૂપ મહાવ્રતોમાં હિંસા આદિ પાચે પાપો મન, વચન અને કાયાથી કર-વાનું, કરાવવાનું અને તેને અનુમોદવાનુ જીવનપર્યંત છોડી દેવામા આવે છે. તે કારણે તે મહાવ્રતો કહેવાય છે અથવા અણુવ્રતોની અપેક્ષાએ. અહિંસા, સત્ય આદિ સંવરરૂપ વ્રતોને મહાવ્રતો કહેવામાં આવે છે, એટલે કે તે મહા-

हितानि=हितकराणि यानि सद्व्रतानि=श्रेष्ठव्रतानि तानि तथोक्तानि, तथा-'सुय-सागरदेसियाइं' श्रुतसागरदेशितानि-श्रुतं=कल्पव्यवहारादिरूपं, तदेव गंभीरत्वादिगुणैः सागरः श्रुतसागरस्तत्र देशितानि=प्रोक्तानि यानि तानि तथोक्तानि, तथा-'तव संजमवयाइं' तपः संयमव्रतानि=तपः-अनशनादि, पूर्वकर्मनिर्जरण-फलम्, संयमः=पृथिव्यादि संरक्षणलक्षणोऽभिनवकर्माग्रहणफलः, तद्रूपाणि यानि

महाव्रतों में सर्व सावद्य योगों का त्याग जीवन पर्यंत कर दिया जाता है। इसीलिये ये संवर द्वार (लोगहियसव्वयाइं) लोकहित सद्व्रत हैं-लोकहित के लिये सद्व्रत-श्रेष्ठ व्रत है अर्थात्-त्रसकाय, पृथिवीकाय, अप्काय तेजस्काय, वायुकाय, वनस्पति काय, इन छह निकाय रूप लोक का इनसे हित सधता है, इसलिये ये सद्व्रत हैं अर्थात् इन संवरद्वारों में प्रवृत्त हुआ साधु सदा छह काय के जीवों की रक्षा करने में तत्पर रहता है, ऐसी वह कोई भी प्रवृत्ति नहीं करता है कि जिससे छह काय के जीवों की विराधना हो। ये संवर द्वार (सुयसागरदेसियाइं) श्रुत-सागर देशित हैं-गंभीरत्वादि गुणों से सागर जैसे कल्पव्यवहारादिश्रुत में ये कथित हुए हैं। तथा ये संवर द्वार (तवसंजममहव्वयाइं) तपः संयम महाव्रत रूप हैं-अनशन आदि जो बारह प्रकार की तपस्याएँ हैं उनका नाम तप है। ये तप पूर्वसंचित कर्मों की निर्जरा कराते हैं अर्थात्-इनका यही फल है कि इनके आचरण से पूर्वसंचित कर्मों की निर्जरा होती है। पृथिव्यादि छह काय के जीवों की रक्षा करना इसका

વ્રતોમા જીવન પર્યંત સર્વે સાવદ્યયોગોનો ત્યાગ કરવામા આવે છે તેથી તે સંવરદ્વાર "लोगहियसव्वयाइं" લોકહિત સદ્વ્રત છે-લોકહિતને માટે સદ્વ્રત શ્રેષ્ઠ વ્રત છે, એટલે કે ત્રસકાય પૃથિવીકાય, અપ્કાય, તેજસ્કાય, વાયુકાય, અને વનસ્પતિકાય એ છ નિકાયરૂપ લોકનું તેનાથી હિત સધાય છે, તેથી તે સદ્વ્રતો છે. એટલે કે એ સંવરદ્વારોમાં પ્રવૃત્ત થયેલ સાધુ સદા છકાયના જીવોની રક્ષા કરવાને તત્પર રહે છે, જેથી છકાયના જીવોની વિરાધના થાય એવી કોઇ પણ પ્રવૃત્તિ તે કરતો નથી. તે સંવરદ્વાર "सुयसागरदेसियाइं" શ્રુતસાગર દેશિત છે-ગંભિરતા આદિ ગુણોથી 'કલ્પવ્યવહારાદિશ્રુતમા' તેમને સાગર જેવાં કહેલ છે. તથા તે સંવરદ્વાર "तव संजममहव्वयाइं" તપઃ સંયમ મહાવ્રતરૂપ છે-અનશન આદિ બાર પ્રકારની જે તપસ્યાઓ છે તેને તપ કહે છે તે તપ પૂર્વ સંચિત કર્મોની નિર્જરા કરાવે છે, એટલે કે તેનું એજ ફળ મળે છે કે તે આચરવાથી પૂર્વસંચિત કર્મોની નિર્જરા થાય છે પૃથિવીકાય આદિ છકાયના જીવોનું રક્ષણ કરવુ તેને સંયમ કહે છે, તેમાં

व्रतानि तानि तथोक्तानि, तथा- 'सीलगुणवरव्वयाइं' शीलगुणवरव्रतानि= शीलं=चित्तसमाधिः गुणाः=विनयादयः तैर्वराणि=श्रेष्ठानि यानि व्रतानि तानि तथोक्तानि- 'सच्चज्जवव्वयइ' सत्यार्जवव्रतानि, तत्र-सत्यम्=मृषावादवर्जनम्, आर्जवम्=मायावर्जनम्, तद्रूपाणि यानि व्रतानि तानि तथोक्तानि, तथा- 'नरगतिरियमणुयदेवगतिविवज्जगाइं' नरकतिर्यङ्मनुजदेवगतिविवर्जकानि= नरकतिर्यङ्मनुजदेवाभिधाश्चतस्रोगतीर्विवर्जयन्ति मोक्षगतिप्रापकत्वेन यानि तानि तथोक्तानि, तथा- 'सव्वजिणसासणगाइं' सर्वजिनशासनकानि=सर्वजिनैः शिष्यन्ते =उपदिश्यन्ते याणि तानि तथोक्तानि, तथा-'कम्मरयवियारगाइं' कर्मरजोवि-

---

नाम संयम है, इसमें प्रवृत्त साधु के नवीन कर्मों का आगमन रुक जाता है अर्थात् नवीन कर्मों के आस्रव का निरोध होना यहि इस संयम का फल है। इसलिये ये संवरद्वार तपसंयम रूप महाव्रत हैं। तथा ये संवरद्वार-(सीलगुणवरव्वयाइं) शील गुणवर व्रतरूप हैं-चित्त की समाधि का नाम शील है, विनय आदि का नाम गुण है। इनसे श्रेष्ठ जो व्रत हैं तद्रूप ये संवर द्वार हैं। (सच्चज्जवव्वायाइं) सत्य-मृषावादका परित्याग, आर्जव-माया का त्याग, इन रूप जो व्रत हैं तद्रूप ये संवरद्वार हैं। (नरगतिरियमणुयदेवाइविवज्जगाइं) इनकी आराधना से आराधक जीव को मोक्षगति कीप्राप्ति होती है इसलिये ये संवर द्वार [नरक, तिर्यञ्च, मनुष्य और देव, इन चारों गतियों से अपने आराधक जीव को दूर कर देते हैं इसलिये ये नरक तिर्यक् मनुज देवगति विवर्जक हैं। (सव्वजिणसासणगाइं) इन संवरद्वारों का उपदेश अभीतक जितने भी जिन हो

પ્રવૃત્ત થયેલ સાધુને નવાં કર્મોનુ આગમન અટકી જાય છે. એટલે કે નવાં કર્મોના અસ્રવનો નિરોધ થવો એ જ આ સયમનું ફળ છે, તેથી તે સંવર. દ્વાર તપ સયમરૂપ મહાવ્રત છે તથા તે સવરદ્વાર-"सीलगुणवरव्वयाइं" શીલગુણવરવ્રત રૂપ છે-શીલ એટલે ચિત્તની સમાધિ, વિનય આદિ ગુણો કહેવાય છે, તેમના વડે શ્રેષ્ઠ જે વ્રતો છે તે પ્રકારના ને સવરદ્વાર છે. "सच ज्जवव्वयाइ" સત્ય-મૃષાવાદનો પરિત્યાગ, આર્જવ-માયાનો ત્યાગ, એ પ્રકારનાં જે વ્રતો છે તે તે પ્રકારના તે સંવરદ્વાર છે. "नरगतिरियमणुयदेवाइ-विवज्जगाइं" તેમની આરાધનાથી આરાધક જીવને મોક્ષગતિ પ્રાપ્ત થાય છે તેથી તે તે સંવરદ્વાર પોતાની આરાધના કરનાર જીવોને નરક, તિર્યંચ, મનુષ્ય અને દેવ એ ચારે ગતિમા જતા રોકે છે, તેથી તેઓ નરક, તિર્યંચ, મનુષ્ય અને દેવગતિના વિવર્જક છે.

दारकाणि=कर्म=ज्ञानावरणाद्यष्टप्रकारकं, तदेव जीवस्य गुण्ठनेन मालिन्यापादकत्वेन रजः=धूलिः, तद् विदारयन्ति=निवारयन्ति यानि तानि तथोक्तानि, तथा-'भवसयविणासगाइं' भवशतविनाशकानि = भवशतानि = जन्मशतानि विनाशयन्ति यानि तानि तथोक्तानि, भवपरम्पराविच्छेदकानीत्यर्थः, अत एव 'दुहसयविमोयगाइं' दुःखशतविमोचकानि=दुःखशतानि विमोचयन्ति यानि तानि तथोक्तानि, तथा - 'सुहसयपवत्तगाइं' सुखशतवर्तकानि=सुखशतानि प्रवर्तयन्ति यानि तानि तथोक्तानि, तथा-'कापुरिसदुरुत्तराइं' कापुरुष

चुके हैं उन सबने दीया है। (कम्मरयविदारगाइं) ये संवरद्वार कर्मरज के विदारक हैं-ज्ञानावरण आदि आठ प्रकार की कर्मरूप धूलि को ये उडाने-नष्ट करने वाले हैं। ज्ञानावरण आदि कर्मों को धूलि की उपमा इसलिये दी है कि धूलि जिस प्रकार मलिनता आदि करती है उसी प्रकार ये कर्म भी जीव में व्यवहार नय की अपेक्षा से मलिनता करते है, अर्थात् ज्ञानादिक गुणों का आवरण आदि कर देने से जीव में अज्ञान आदि विभाव भावों के वर्धक होते हैं। (भवसयविणासगाइं) ये संवरद्वार भवशतविनाशक हैं-अर्थात्-इनकी आराधना करने से आराधक, जीवों के जो इनकी आराधना के विना सैकडों भव-जन्म-होने वाले थे वे सब नष्ट हो जाते हैं। (दुक्खसयविमोयगाइं) भवपरंपरा इनके प्रभाव से विच्छिन्न हो जाती है, इसीलिये इन्हें दुःखशत विमोचक कहा है। (सुह सयपवत्तगाइं) जब सैकड़ों दुःख इनकी

"सव्व जिणसासणगइं" આજ સુધીમા જેટલા જિનેશ્વરો થઈ ગયાં તે બધાએ તે સંવરદ્વારોનો ઉપદેશ આપ્યો છે "कम्मरयविदारगाइ" તે સવરદ્વાર કર્મરજનો નાશ કરનાર છે-જ્ઞાનાવરણ આદિ આઠ પ્રકારનાં કર્મરૂપી રજનો નાશ કરે છે જ્ઞાનવરણ આદિ કર્મોને ધૂળ-રજની ઉપમા દેવાનું કારણ એ છે કે ધૂળ જેમ મલિનતા આદિ કરે છે તેમ એ કર્મો પણ જીવમા વ્યવહાર નયની અપેક્ષાએ મલિનતા કરે છે, એટલે કે જ્ઞાનાદિક આદિ ગુણોનું આવરણ કરી નાખવાથી જીવમા અજ્ઞાન આદિ ઉલટા ભાવોના વર્ધક થાય છે. "भवसयविणासगाइं" તે સંવરદ્વાર ભવશત વિનાશક છે-એટલે કે તેમની આરાધના કરવાથી આરાધક જીવોના તેમની આરાધના કર્યા વિના જે સેકડો ભવ થવાના હતા તે બધા નષ્ટ થઇ જાય છે "दुक्खसयविमोयगाइ" તેમના પ્રભાવથી ભવોની પરંપરા છેદાઈ જાય છે, તે કારણે તેમને દુ:ખ શત વિમોચક દર્શાવ્યા છે. "सुहसयपवत्तगाइं" જો તેમની આરાધનાથી સેંકડો

दुरुत्तराणि=कापुरुषैः=कातरैः दुःखेन उत्तीर्यन्ते यानि तानि तथोक्तानि=कापुरुषैः प्रतिप-तुमशक्यानीत्यर्थः, तथा- 'सप्पुरिसनिसेवियाइं' सत्पुरुषैर्निषेवितानि=आश्रितानि, तथा-'निव्वाणगमणमग्गसग्गपणायगाइं' निर्वाणगमनमार्गस्वर्गप्रणायकानि=निर्वाणं=मोक्षस्तस्य गमने मार्ग इव मार्गा यानि तानि निर्वाणगमनमार्गाणि, तथा-स्वर्गं प्रकर्षेण नयन्ति जीवान् यानि तानि स्वर्गप्रणायकानि, उभयोः कर्मधारयस्तानि तथोक्तानि, पञ्चसंवरद्वाराणि 'भगवया' भगवता महावीरेण 'उ' तु-निश्चयेन 'कहियाणि' कथितानि=प्रोक्तानि, अत इमान्यवश्यं श्रद्धेयानीति भावः ॥ सू०१ ॥

इति प्रथमसंवरद्वार प्रस्तावना ।

आराधना से विनष्ट हो जाते हैं तो यह बात भी निश्चित हो जाती है कि ये सैकड़ों सुखों के प्रवर्त्तक होते हैं। जब इनका इतना विशिष्ट प्रभाव है तो फिर क्या है हरएक प्राणी इनकी आराधना करने लगेगा- इसके लिये सूत्रकार कहते हैं कि ये संवरद्वार (कापुरिसदुरुत्तराइं) का पुरुष दुस्तर हैं-जो कायरपुरुष हैं-उनके द्वारा तो धारण करने के लिये अशक्य हैं। परन्तु (सप्पुरिसनिसेवियाइं) सत्पुरुषों से ये सेवित-आचरित होते हैं, अर्थात् जो सत्पुरुष हैं-अन्तरात्मा जीव है-वे ही उन्हें धारण करते हैं। अधिक क्या कहा जाय ये संवरद्वार (निव्वाणगमणमग्ग-सग्गप्पयाणगाइं) मोक्ष के गमन में मार्गरूप है, अगर जीव में इतनी योग्यता नहीं हो तो स्वर्ग में प्रयाण कराने वाला जरूर होता है। इस प्रकार के (ये पंच संवरदाराइं कहियाणि) पांच संवर द्वार भगवान महावीर ने कहे हैं। इसलिये प्रत्येक भव्य जीव को इन्हे अपनी श्रद्धा का विषय अवश्य बनाना चाहिये। ॥सू०१॥

દુઃખ નષ્ટ થઈ જાય છે તો એ વાત પણ નક્કી થઈ જાય છે કે તે સેકડો સુખના પ્રવર્તક થાય છે જ્યારે તેમનો આટલો બધો વધારે પ્રભાવ છે તો દરેક પ્રાણી તેની આરાધના કરવા માંડશે. તેથી સૂત્રકાર બતાવે છે તે તે સંવરદ્વાર " का पुरिसदुरुत्तराइ " કાપુરુષદુરુત્તર છે-જે કાયર પુરૂષો છે-બહિ-સાત્મા જીવ છે, તેમના દ્વારા તે ધારણ કરવાને માટે અશકય છે. પણ " सप्पुरिसनिसेवियाइं " પણ સત્પુરૂષો વડે તેનું સેવન-આચરણ કરાય છે. વધુ શું કહું ! તે સંવરદ્વાર " निव्वाणगमणमग्ग सग्गप्पयाणगाइं " મોક્ષગમનના માર્ગ-રૂપ છે, જો જીવમાં એટલી યોગ્યતા હોય તો તે તેને માટે અવશ્ય સ્વર્ગ પ્રાપ્તિ કરાવનારા નિવડે છે, આ પ્રકારના તે " पंच संवरदाराइं कहियाणि " પાંચ સંવરદ્વાર ભગવાન મહાવીરે કહેલ છે. તો દરેક ભવ્યજીવે તેમને અવશ્ય પોતાની શ્રદ્ધાનો વિષય બનાવવો જોઈએ. ॥ સૂ. ૧ ॥

अथ प्रथमसंवरनिरूपणायाह-'तत्थ पढमं' इत्यादि--

मूलम्-तत्थ पढमं अहिंसा जा सा सदेव मणुयासुरस्स लोगस्स भवइ दीवो ताणं सरणं गई पइट्ठा, निव्वाणं १, निव्वुई २, समाही३, संती४, कित्ती५, कंती६, रइय७, विरइय८, सुयंग९, तित्ती१०, दया११, विमुत्ती१२, खंती१३, सम्मत्ताराहणा१४, महंती१५, बोही१६, बुद्धी१७, धितीय१८, समिद्धी१९, रिद्धी२०, विद्धी२१, ठिई २२, पुट्ठी२३, नंदा २४, भद्दा २५, विसुद्धी २६, लद्धी २७, विसिट्ठदिट्ठी२८, कल्लाणं २९, मंगलं३०, पमाओ ३१, विभूई३२, रक्खा ३३, सिद्धवासो३४, अणासवो ३५, केवलीण-ठाणं ३६, सिवं ३७, समिई३८, सील ३९, संजमो४०,त्ति य, सीलघरो ४१, संवरोय४२, गुत्ती४३, ववसाओ ४४, उस्सओ४५, जन्नो४६, आयतणं४७, जंतण ४८, मप्पमाओ४९, अस्साओ५०, वीसासो५१, अभओ५२. सव्वस्स५३, वि अमघाओ, चोक्ख ५४, पवित्तो ५५, सुई ५६. पूया ५७, विमल५८, पभासा ५९, य, निम्मल ६० तरत्ति। एवमादीणि नियगुणनिम्मियाइं पज्जव-नामाणि होंति अहिंसाए भगवईए ॥ सू० २ ॥

टीका-' तत्थ ' इत्यादि-

' तत्थ ' तत्र=तेषु पञ्चसु संवरद्वारेषु मध्ये ' पढमं ' प्रथमम्=आद्यम् ' अहिंसा ' अहिंसालक्षणं संवरद्वारं भवति। अहिंसा कीदृशी? इत्याह-' जा सा ' या सा सुप्रसिद्धा-अहिंसा ' सदेवमणुयासुरस्स लोगस्स ' सदेवमनुजासुरस्य

इस प्रकार यह प्रथम संवर द्वार की प्रस्तावना है। अब सूत्रकार

આ પ્રમાણે આ પ્રથમ સંવરદ્વારની પ્રસ્તાવના છે હવે સૂત્રકાર પ્રથમ

लोकस्य 'दीवो' द्वीपो भवति, अयं भावः-संयोगवियोगचिन्तासन्तानवितान तरङ्गायमाणमोहमहावर्त्तपर्त कषायश्वापदकदर्थितमथ्यमानगात्राणामत्राणानां प्राणानामियमहिंसाऽऽश्वासस्थानरूपो द्वीपो भवति, तथा-' ताणं ' त्राणम्, आपद्भ्यो रक्षणात्त्राणस्वरूपाऽस्ति । तथा-' सरणं ' शरणम्-विविदविपदव्याकुलानामाश्रय-

---

प्रथम संवरद्वार के निरूपण के लिये सूत्र कहते हैं—' तत्थ पढमं ' इत्यादि० ।

टीकार्थ—(तत्थ) उन पांच संवरद्वारों में से (पढमं अहिंसा) पहिला संवरद्वार अहिंसा है। (जा सा सदेवमणुयासुरस्स लोगस्स-दीवो भवइ) यह सुप्रसिद्ध अहिंसा देवलोक, मनुष्यलोक और असुर-लोक के लिये एक द्वीप जैसी है। इसका तात्पर्य यह है कि संयोग और वियोग की सन्तानपरंपरारूप तरङ्गो से यह मोहमहावर्तरूप गर्त कि जिसमें समस्त संसारी जीव सर्वथा मग्न हो रहे हैं, व्याप्त हो रहा है उसमें पड़े हुए इन संसारी जीवों को कषायरूप श्वापद-हिंसक जानवर रातदिन दुःखित करते रहते हैं और उनके शरीर को मथते रहते हैं। वहां उनकी रक्षा करने वाला कोई नहीं है। इस तरह अशरणभूत हुए इन प्राणीयों की रक्षा करने वाली यह एक अहिंसा ही है। अतः यह अहिंसा उनके लिये आश्वासन के स्थानरूप एक द्वीप के जैसी है। तथा (ताणं) जीवों की यह आपत्ति विपत्ति से रक्षा करती है इसलिये यह त्राणरूप है। तथा (सरणं) अनेक विपदाओं से घिरे हुए जीवों

સંવરદ્વારનાં નિરૂપણને માટે સૂત્ર કહે છે-" तत्थ पढम " ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ-"तत्थ" તે પાંચ સંવરદ્વારોમાંથી पढमं अहिंसा " પહેલું સંવરદ્વાર અહિંસા છે. " जा सा सदेवमणुयासुरस्स लोगस्स दीवो भवइ " તે સુપ્રસિદ્ધ અહિંસા દેવલોક, મનુષ્યલોક, અને અસુરલોકને માટે એક દ્વીપ જેવી છે. તેનો ભાવાર્થ એ છે કે સંયોગ અને વિયોગરૂપ સંતાન પરંપરા રૂપ મોજાંઓ વડે આ મોહ મહાવર્તરૂપ ખાઈ કે જેમાં સર્વે સંસારી જીવો સંપૂર્ણ રીતે મગ્ન થઈ ગયેલા છે, ડૂબી ગયા છે, તે સંસારી જીવોને કષાયરૂપ શ્વાપદ હિંસક પશુ નિશદિન દુઃખી કરે છે અને તેમનાં શરીરને વલોવ્યા કરે છે ત્યાં તેમનું રક્ષણ કરનાર કોઈ નથી. આ રીતે નિરાધાર એવાં તે પ્રાણીઓની રક્ષા કરનાર આ એક અહિંસા જ છે તેથી આ અહિંસા તેમને માટે આશ્રય સ્થાનરૂપ એક દ્વીપ સમાન છે તથા " ताणं " તે જીવોનુ આપત્તિ-વિપત્તિ સામે રક્ષણ કરે છે તેથી તે ત્રાણરૂપ છે તથા " सरणं " અનેક વિપદાથી ઘેરાયેલા જીવોને

स्थानम्, 'गई' गतिः=गम्यते=मोक्षार्थिभिराश्रीयते इति गतिः= प्राप्यस्थानं तथा-'पइट्ठा' प्रतिष्ठा प्रतिष्ठन्ते-आसते यस्यां सर्वे गुणाः सा प्रतिष्ठा=सर्वगुणानामाधारस्वरूपा। साम्प्रतमहिंसायाः गुणनिष्पन्नानि षष्टिनामान्याह 'निव्वाणं' इत्यादि-'निव्वाणं' निर्वाणं=मोक्षः, तद्धेतुत्वात् १, 'निव्वुई' निर्वृतिः=स्वास्थ्यम्-कर्मव्याधिवर्जितत्वात् २, 'समाही' समाधिः=समता, समभावहेतुत्वात् ३, 'संती' शान्तिः=द्रोहवर्जितत्वात् ४, 'कित्ती' कीर्त्तिः=यशः तद्धेतुत्वात् ५,

---

को यह एक उत्तम आश्रय स्थान रूप है। तथा (गई) जो मोक्ष के अभिलाशी जीव हैं वे इसका आश्रय करते हैं इसलिये उनकी अपेक्षा यह गतिरूप है। तथा (पइट्ठा) संसार में जितने भी सद्गुण हैं उन सब की प्रतिष्ठा-आधारभूत यही एक अहिंसा है, इसके अभाव में अन्य विद्यमान सद्गुणों की प्रतिष्ठा-कीमत-नहीं होती है। अब सूत्रकार इस अहिंसा भगवती के गुण-निष्पन्न साठ नामों को कहते हैं। उनमें पहिला नाम (निव्वाणं) निर्वाण-मोक्ष है। क्यों कि यह उसकी हेतुभूत होती है १। दूसरा नाम इसका (निव्वुई) निवृत्ति है, निवृत्ति शब्द का अर्थ स्वास्थ्य है- कर्मों के आत्यंतिक अभाव होने से ही जीवों को प्राप्त होता है २। अहिंसा का तीसरा नाम (समाही) समाधि है, समाधि का अर्थ समता है, यह अहिंसा समभाव की कारण होती है इसलिये कारण में कार्य के उपचार से इसे स्वयं समाधिरूप कह दिया है ३। अहिंसा का चौथा नाम (संति) शान्ति है,-क्यों कि जहां द्रोह

માટે તે એક આશ્રયસ્થાનરૂપ છે. તથા "गई" મોક્ષના અભિલાષી જે જીવો છે તેઓ તેનો આશ્રય લે છે, તેથી તેમની અપેક્ષાએ તે ગતિરૂપ છે, તથા "पइट्ठा" સંસારમાં જેટલા સદ્‌ગુણ છે તે બધાના આધાર રૂપ આ એક અહિંસા જ છે, તેના અભાવે બીજાં વિદ્યમાન સદ્‌ગુણોની કોઇ પ્રતિષ્ઠા-કિંમત થતી નથી. હવે સૂત્રકાર આ અહિંસા ભગવતીના ગુણ પ્રતિપાદિત સાઠ નામો બતાવે છે. તેમાં પહેલું નામ "निव्वाणं" નિર્વાણ-મોક્ષ છે. કારણ કે તે તેના કારણરૂપ હોય છે. (૧) તેનું બીજું નામ "निव्वुई" નિર્વૃત્તિ છે, નિર્વૃતિ શબ્દનો અર્થ સ્વાસ્થ્ય થાય છે-કર્મોનો અત્યંત અભાવ હોવાથી તે જીવોને થાય છે. (૨) અહિંસાનું ત્રીજું નામ "समाही" સમાધિ છે, સમાધિનો અર્થ સમતા છે, આ અહિંસા સમભાવનું કારણ હોય છે તેથી કારણમાં કાર્યના ઉપચારથી તેને સ્વયં સમાધિરૂપ કહેવામાં આવેલ છે. (૩) અહિંસાનું ચોથુ નામ "संती" શાન્તિ છે, કારણ કે જ્યાં દ્રોહનો અભાવ હોય છે ત્યાંજ શાંત હોય છે. અહિં-

'कंती' कान्तिः=प्रसन्नता तद्धेतुत्वात् ६, 'रई य' रतिः=आनन्दस्तज्जनकत्वात् ७, 'विरई य' विरतिः=विरागः सावद्यकर्मवर्जितत्वात् ,=' सुयंग ' श्रुताङ्गा=श्रुतं= श्रुतज्ञानाङ्गं कारणं यस्याः सा तथोक्ता, उक्तमपि-" पढमं नाणं तओ दया " इति ९, ' तित्ती ' तृप्तिः=संतोषः-सर्वप्राणिसंतोषजनकत्वात् १०, दया=प्राणिरक्षा-उपमर्दनवर्जितत्वात् ११, ' विमुत्ती ' विमुक्तिः-विरुच्यन्ते प्राणिनः सकलवध-

---

का अभाव होता है वहीं शांति होती है, अहिंसा में द्रोह का लेश भी नहीं होता है, इसलिये इसे शांति शब्द से व्यवहृत किया गया है ४। (कित्ती) यशकी हेतुभूत होने से इसका पांचवां नाम कीर्ति है। अहिंसक जीव की कीर्ति का सर्वत्र विस्तार होता है यह बात सुप्रसिद्ध ही है ५। (कंती) प्रसन्नता की हेतुभूत होने से इसका नाम कान्ति भी है ६। (रई य) आनन्द की उत्पादक होने से इसका नाम रति है ७। (विरई य) सावद्यकर्मों से वर्जित होने के कारण इसका नाम विरति भी है ८। (सुयंग) इस अहिंसा का कारण श्रुतज्ञान होता है इसलिये इसका नाम श्रुताङ्ग है। क्योंकि ऐसा कहा है कि पहिले ज्ञान होता है बाद में दया ९। (तित्ती) समस्त प्राणियों के लिये यह संतोष-जनक होती है इसलिये इसका नाम तृप्ति है १०। इस अहिंसा में प्राणियों की रक्षा होती है इसलिये प्राणियों के प्राणों के उपमर्दन कृत्य से रहित होने के कारण यह (दया) दयारूप है ११। इसके प्रभाव से प्राणी समस्त प्रकार के वध एवं बंधनों से छूट जाता है

સામા દ્રોહનું નામ માત્ર પણ હોતું નથી તેથી તેને શાન્તિ શબ્દથી વર્ણવેલ છે. (૪) "कित्ती" યશના કારણ રૂપ હોવાથી 'તેનું પાંચમું નામ કીર્તિ છે અહિંસક જીવની કીર્તિ સર્વત્ર ફેલાય છે તે વાત સુપ્રસિદ્ધ છે. (૫) " कंती " પ્રસન્નતાના કારણરૂપ હોવાથી તેનું નામ કાન્તિ પણ છે (૬) "रईय" આનંદ ઉત્પન્ન કરનાર હોવાથી તેનુંનામ રતિ છે (૭) "विरईय" સાવદ્ય કર્મોથી રહિત હોવાથી તેનું નામ વિરતિ પણ છે. (૮) "सुयंग" આ હિંસાને કારણે શ્રતજ્ઞાન થાય છે, તેથી તેનું નામ શ્રુતાંગ 'છે, કારણ કે પહેલા જ્ઞાન થાય છે, અને ત્યાર પછી દયા એવું ભાંખેલ છે (૯) " तित्ती " સમસ્ત પ્રાણીઓને માટે તે સંતોષ જનક હોય છે તેથી તેનું નામ તૃપ્તિ છે (૧૦) આ અહિંસાથી પ્રાણીઓની રક્ષા થાય છે, તેથી પ્રાણીઓનાં પ્રાણસંહારનાં કૃત્યથી તે રહિત હોવાથી તે " दया " દયારૂપ છે. (૧૧) તેના પ્રભાવથી પ્રાણીઓ સમસ્ત પ્રકારના વધ અને બંધનોમાંથી મુક્ત થાય છે, તેથી સકળ વધબંધનોથી પ્રાણીઓને મુક્ત કરાવનાર હોવાથી

वन्धनेभ्यो यया सा तथोक्ता,-सकलवधवन्धनविमोचकत्वात् १२, 'खंत्ती' क्षान्तिः=क्रोधादिनिग्रहकारकत्वात् १३, 'सम्मत्ताराहणा' सम्यक्त्वाराधना= सम्यक्त्वं-सम्यग्बोधरूपमाराध्यते यया सा तथोक्ता,-जिनशासनाराधनकारणत्वाद् १४, 'महई' महती=सर्वधर्मानुष्ठानश्रेष्ठत्वात् १५, 'वोही' वोधिः-सर्वज्ञोक्तधर्मप्राप्तिरूपत्वात् १६, 'बुद्धी' बुद्धिः, परदुःखाववोधकत्वात् १७, 'धिई' धृतिः, म्रियमाणजीवस्याभयप्रदायकत्वात्, यद्वा-धृतिश्चित्तदार्ढ्यम्, अहिंसया चित्ते दार्ढ्यस्य समुत्पद्यमानत्वात् १८, 'समिद्धी' समृद्धिः, आनन्दजनकत्वात्

इसलिये प्राणीयों की सकल वध वन्धनों से विमोंच का होने के कारण इसका नाम (विमुत्ती) विमुक्ती है १२। यह समस्त क्रोधादि कषायों की निग्रह कारिका है इसलिये इसका नाम (खंती) क्षान्ति है १३। सम्यक् बोधरूप सम्यत्त्व इसके होने पर ही आराधित होता है, अर्थात् यह जिनशासन की कारण होती है इसलिये इसका नाम (सम्मत्ताराहणा) सम्यत्त्वाराधना है १४। धर्मके समस्त अनुष्ठानों में यह श्रेष्ठ है इसलिये इसका नाम (महती) महती है १५। सर्वज्ञप्रतिपादित धर्मकी प्राप्तिरूप होने से इसका नाम (वोही) वोधि है १६। परदुःखों की अववोधिका होने से, अर्थात् परकीय दुःखों को बतलाने वाली होने से इसका नाम (बुद्धी) बुद्धि है १७। मरते हुए जीवों को इसके प्रभाव से अभय की प्राप्ति होती है इसलिये इसका नाम (धिई) धृति है। अथवा-धृति शब्द का अर्थ चित्त की दृढता है, सो अहिंसा से चित्त में दृढ़ता उत्पन्न होती है यह बात निर्विवाद है १८। आनन्द

તેનું નામ "विमुत्ती" વિમુક્તિ છે, (૧૨) તે સમસ્ત ક્રોધાદિક કષાયોનો નિગ્રહ કરનારી છે, તથી તેનું નામ "खंती" क्षान्ति છે. (૧૩) સમ્યક્બોધ રૂપ સમ્યકત્વ તે વિદ્યમાન હોય તો જ આરાધાય છે, એટલે કે તે જિનશાસનની આરાધનાનાં કારણરૂપ હોય છે તેથી તેનું નામ "सम्मत्ताराहणा" સમ્યકત્વારાધના છે. (૧૪) ધર્મના સમસ્ત અનુષ્ઠાનોમાં તે શ્રેષ્ઠ છે તેથી તેનું નામ "महती" મહતી છે (૧૫) સર્વજ્ઞ પ્રતિપાદિત ધર્મની પ્રાપ્તિરૂપ હોવાથી તેનું નામ "वोही" બોધિ છે. (૧૬) પરદુઃખોની અવબોધિકા હોવાથી એટલે કે પારકાનાં દુ.ખો બતાવનારી હોવાથી તેનું ન.મ "बुद्धी" બુદ્ધિ છે (૧૭) મરતાં જીવોને તેના પ્રભાવથી અભયની પ્રાપ્તિ થાય છે, તેથી તેનુ નામ"धिई" ધૃતિ છે. અથવા ધૃતિ શબ્દનો અર્થ ચિત્તની દૃઢતા છે. તો અહિંસાથી ચિત્તમાં દૃઢતા ઉત્પન્ન થાય છે તે વાત નિર્વિવાદ છે. (૧૮) આનંદની જનક હોવાથી

१९, 'रिद्धी' ऋद्धिः, लक्ष्मीहेतुत्वात् २०, 'विद्धी' वृद्धिः, तीर्थङ्करादिपुण्यप्रकृतिपुञ्जसंपादकत्वात् २१, 'ठिई' स्थितिः-साद्यपर्यवसितमोक्षस्थितिसम्पादकत्वात् २२, 'पुट्ठी' पुष्टिः-पुण्यपुष्टिकारकत्वात् २३, 'नंदा' नन्दा=नन्दयति आनन्दयतीति नन्दा, स्वर्गापवर्गसुखप्रापकत्वात् २४, 'भद्दा' भद्रा=भन्दते=कल्याणं करोतीति भद्रा २५, 'विसुद्धी' विशुद्धिः-पापमलविशोधकत्वात् २६; 'लद्धी' लब्धि=केवलज्ञानकेवलदर्शनादि लब्धहेतुत्वात् २७, 'विसिट्ठदिट्ठी' विशिष्टदृष्टिः=प्रधानदर्शनमतमित्यर्थः, उक्तं च—

की जनक होने से इसका नाम (समिद्धी) समृद्धि है १९। लक्ष्मी की हेतुभूत होने से इसका नाम (रिद्धी) ऋद्धि है २०। इसके प्रभाव से तीर्थकर आदि पुण्य प्रकृतियों का जीवों को बन्ध होता हे इसलिये इसका नाम (विद्धि) वृद्धि है २१। इसके आचरण करने से मोक्ष में प्राप्त हुए जीवों की स्थिति आदि अनन्त होती है इसलिये इसका नाम (ठिई) स्थिति है २२। पुण्य की पुष्टि का कारण होने से इसका नाम (पुट्ठी) पुष्टि है २३। स्वर्ग और मोक्षके सुख जीवों को इसकी कृपा से प्राप्त होते हैं अतः वे उन सुखों की प्राप्ति से वहां आनन्द करते हैं इसलिये इसका नाम (नंदा) नन्दा है २४। यह जीवों का कल्याण कराती है इसलिये इसका नाम (भद्दा) है २५। पापमल का इससे विशोधन होता है इसलिये इसका नाम (विसुद्धी) विशुद्धी है २६। केवलज्ञान, केवलदर्शन, आदि लब्धियां इसके ही प्रभाव से होती हैं, इसलिये इसका नाम (लद्धी) लब्धि है २७। (विसिट्ठदिट्ठी) अहिंसा

તેનું નામ "समिद्धी" સમૃદ્ધિ છે. (૧૯) લક્ષ્મીના કારણરૂપ હોવાથી તેનું નામ "रिद्धी" ઋદ્ધિ છે. (૨૦) તેના પ્રભાવથી તીર્થંકર આદિ પુણ્યપ્રકૃતિઓનો જીવોને બંધ થાય છે તેથી તેનું નામ "विद्धी" (૨૧) તેના આચરણથી મોક્ષ પ્રાપ્ત કરેલ જીવોની સ્થિતિ આદિ અનંત થાય છે, તેથી તેનું નામ "ठिई" સ્થિતિ છે (૨૨) પુણ્યની પુષ્ટિનું તે કારણ હોવાથી તેનું નામ "पुट्ठी" પુષ્ટિ છે (૨૩) તેની કૃપાથી જીવોને સ્વર્ગ અને મોક્ષનાં સુખો પ્રાપ્ત થાય છે, તેથી તે સુખોની પ્રાપ્તિથી તેઓ ત્યાં આનંદ કરે છે તે કારણે તેનું નામ "नंदा" છે (૨૪) તે જીવોનું કલ્યાણ કરાવે છે. તેથી તેનું નામ "भद्दा" ભદ્રા છે. (૨૫) પાપમળની તેનાથી વિશુદ્ધિ થાય છે, તેથી તેનું નામ "विसुद्धी" વિશુદ્ધિ છે (૨૬) કેવળજ્ઞાન, કેવળદર્શન આદિ લબ્ધિઓ તેના પ્રભાવથી જ જીવોને પ્રાપ્ત થાય છે, તેથી તેનું નામ "लद्धी" લબ્ધિ છે. (૨૭) "विसिट्ठ दिट्ठी" અહિંસા જ પ્રધાન દર્શન છે તેથી તેનું નામ

" किं तया पठितया, पद्कोटया पलालभूतया ।
यत्र यत् न ज्ञातं, परस्य पीडा न कर्त्तव्या " ॥ १ ॥ इति ॥

पदकोटिमित्तानेकशास्त्राध्ययनैःकिम् ? यत्र दया न वर्तते । दयावर्जितानि सकलान्यपि शास्त्राणि पलालभूतानीत्यर्थः २८, ' कल्लाणं ' कल्याणम् , कल्यं मोक्षस्तत्प्रापकत्वात् २९, मंगलम् दुरितोपशमनकारकत्वात् ३०, ' पमोओ ' प्रमोदः=हर्षजनकत्वात् ३१, ' विभूई विभूतिः-सकलसंपत्तिहेतुत्वात् ३२, ' रक्खा ' रक्षा जीवरक्षणस्वभावात् ३३, ' सिद्धावासो ' सिद्धावासः=साद्यपर्य

ही प्रधान दर्शन है इसलिये इसका नाम विशिष्ट दृष्टि है २८ ।

कहा भी है—

" किं तया पठितया, पद्कोटया पलाल भूतया ।
यत्र यत् न ज्ञातं, परस्य पीडा न कर्त्तव्या ॥ १ ॥

" पद् कोटि परिमित अनेक शास्त्रों के अध्ययन से क्या लाभ हो सकता है जब कि जीव को इतना ही ज्ञान न हो पावे कि पर प्राणी को पीड़ा नहीं करना चाहिये ॥ १ ॥

दयोपदेश विहीन शास्त्र पलाल जैसे निःसार है २८ । मोक्ष-प्रदान कराने वाली होने से इसका नाम (कल्लाणं) कल्याण है २९ । पापों का-इससे उपशमन होता है इसलिये यह (मंगलं) मंगलरूप है ३० । हर्ष की जनक होनेसे यह (पमाओ) प्रमादरूप है ३१ । सकल संपत्तियों की हेतुभूत होने से इसका नाम (विभुई) विभुति है ३२ । (सक्खा) जीवों

વિશિષ્ટ દૃષ્ટિ છે કહ્યુ પણ છે—

" किं तया पठितया, पदकोटया पलालभूतया ।
यत्र यत् न ज्ञातं, परस्य पीडा न कर्त्तव्या ॥ १ ॥

" કોટિ પદો વાળાં અનેક શાસ્ત્રોનો અભ્યાસ કરવા છતાં પણ જો જીવને એટલું પણ જ્ઞાન ન પ્રાપ્ત થાય કે બીજા પ્રાણીઓને પીડવા જોઈએ નહીં, તો તેનાં અધ્યયનથી શો લાભ ? ॥ ૧ ॥

દયાના ઉપદેશ વિનાનાં શાસ્ત્રો પલાલ જેવાં નિઃસાર છે. (૨૮) મોક્ષ પ્રાપ્ત કરાવનાર હોવાથી તેનું નામ " कल्लाणं" કલ્યાણ છે. (૨૯) તેના વડે પાપોનો ક્ષય થાય છે તેથી તે " मंगलं " મંગળરૂપ છે (૩૦) હર્ષની જનક હોવાથી તે " पमोओ " પ્રમોદરૂપ છે. (૩૧) સકળ સંપત્તિઓના કારણરૂપ હોવાથી તેનું નામ " विभूई " વિભૂતિ છે. (૩૨) " रक्खा " જીવોની રક્ષા કરવાનો તેનો સ્વભાવ હોવાથી તેનું નામ રક્ષા છે. (૩૩) તેની આરાધના

वसितमोक्षगतिनिवासहेतुत्वात् ३४, 'अणासवो' अनाश्रवः-कर्मागमननिरोधकत्वात् ३५, 'केवलीणं ठाणं' केवलिनां स्थानम्-तेषामाश्रयभूतत्वात्, अहिंसकस्यैवकेवलज्ञानं समुत्पद्यते इत्यर्थः ३६, 'सिवं' शिवम्-उपद्रववर्जितत्वात् ३७, 'समिई' समितिः-सम्यक्प्रवृत्तिः, तद्रूपत्वात् ३८, 'सील' शीलं=समाधिः, तद्धेतुत्वात् ३९, 'संजमोत्ति य' संयमइति च-संयम'-हिंसा निवृत्तिस्तद्धेतुत्वात् ४०, 'सीलघरो' शीलगृहम्-शीलं=सदाचारो, यद्वा ब्रह्मचर्यं, तस्य गृहं=

की रक्षा करने का ही इसका स्वभाव है इसलिये इसका नाम रक्षा है ३३। इसकी आराधना करते२ ही जीव सिद्धों के आवास में सिद्धिगति नामक स्थान विशेष में निवास करने लग जाता है इसलिये इसका नाम (सिद्धावासो) सिद्धावास है ३४। (अणासवो) कर्मों के आगमन द्वार की यह निरोधिका है इसलिये इसका नाम अनास्रव है ३५। (केवलीणं ठाणं) केवलज्ञानी-इसका आश्रय करते हैं इसलिये इसका नाम केवलि स्थान है। अर्थात् जो अहिंसक होता है उसे ही केवल ज्ञान उत्पन्न होता हैं ३६। अहिंसक जीव को कहीं से भी किसी भी प्रकार के उपद्रव प्राप्त नहीं हो सकते हैं इसलिये उपद्रववर्जित होने से इसका नाम (सीव) शिव है ३७। सम्यक् प्रवृत्ति का नाम समिति है, यह अहिंसा समितिरूप होती हैं इसलिये इसका नाम (समिई) समिति है ३८। शील-समाधि-का यह कारण होती है इसलिये इसका नाम (सील) शील है ३९। (संजमो त्ति य) संयम-हिंसा की निवृत्ति होनारूप संयम की यह साधक है इसलिये इसका नाम संयम है। ४०। शील-सदाचार अथवा ब्रह्मचर्यकी यह स्थान है इसलिये इसका नाम

કરતા કરતાં જ જીવ સિદ્ધોના આવાસમાં સિદ્ધિગતિ નામના સ્થાનમાં નિવાસ કરવા લાગે છે તેથી તેનું નામ "सिद्धावासो" સિદ્ધાવાસ છે. (૩૪) "अणासवो" કર્મોના આગમન દ્વારની તે નિરોધક છે, તેથી તેનું નામ અનાસ્રવ છે. (૩૫) "केवलीण ठाणं" કેવળજ્ઞાની તેનો આશ્રય છે તેથી તેનું નામ કેવળી સ્થાન છે એટલે કે જે અહિંસક હોય છે તેને જ કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત થાય છે (૩૬) અહિંસક જીવને કોઈ પણ સ્થળેથી કોઈ પણ પ્રકારના ઉપદ્રવ થઈ શકતા નથી. તેથી ઉપદ્રવ રહિત હોવાથી તેનું નામ "सिव" શિવ છે (૩૭) સમ્યક્ પ્રવૃત્તિને સમિતિ કહે છે. આ અહિંસા સમિતિરૂપ હોય છે તેથી તેને "समिई" સમિતિ કહે છે (૩૮) શીલ-સમાધિના તે કારણરૂપ હોય છે તેથી તેનું નામ "सील" શીલ છે. (૩૯) "संजमोत्तिय" સંયમ-હિંસાથી નિવૃત્ત થવા રૂપ સંયમની તે સાધક છે, તેથી તેનું નામ સંયમ છે. (૪૦) શીલ સદાચાર અથવા બ્રહ્મચર્યનું તે સ્થાન છે તેથી તેનું નામ "सीलघरो"

स्थानम् ४१, 'संवरो य' संवरश्च=कर्मागमकारणसंवरणात् ४२, 'गुत्ती' गुप्तिः =जीवस्याशुभप्रवृत्तिनिरोधकत्वात् ४४, 'ववसाओ' व्यवसायः-वि=विशिष्टोऽवसायः=अध्यवसायः-आत्मपरिणामः ४४,'उस्सओय' उच्छ्रयश्च-द्रव्यभावोन्नतिहेतुत्वात् ४५, 'जण्णो' यज्ञः-स्वर्गादिसद्गतिदायकत्वात् ४६, 'आयतणं' आयतनम्-गुणानामाश्रयः ४७, 'जयणं' यत्नः-निरवद्यानुष्ठानत्वात् ४८, 'अप्पमाओ' अप्रमादः=प्रमादवर्जनम् ४९, 'अस्साओ' आश्वासः-परतृप्तिहेतु-

---

(सीलघरो) शीलगृह है ४१। कर्मोंके आगमन भूत कारणों का वह निरोध कर देती है इसलिये इसका काम (संवरो) संवर है ४२। इसके आचरण करने से जीवों की अशुभ प्रवृत्ति रुक जाती है इसलिये इसका नाम (गुत्ति) गुप्ति है ४३। यह आत्मा का विशिष्ट प्रकार का एक परिणाम है इसलिये इसका नाम (ववसाओ) व्यवसाय-वि-अवसाय अध्यवसाय है ४४। यह द्रव्य और भाव इन दोनों की उन्नति कराने वाली होती है इसलिये इसका नाम (उस्सओ य) उच्छ्रय है ४५। स्वर्ग आदि सद्गति की प्राप्ति जीवों को इसके सेवन करने से होती है इसलिये इसका नाम (जण्णो) यज्ञ है ४६। सभी सद्गुणों का यही एक आश्रयस्थानभूत है इसलिये इसका नाम (आयतणं) आयतन है ४७। यह निरवद्य अनुष्ठानरूप है इसलिये इसका नाम (जयणं) यत्न है ४८। इस प्रमाद असावधानताका परित्याग हो जाताहै इसलिये इसका नाम(अप्पमाओ)अ-

---

શીલગૃહ છે (૪૧) કર્મના આગમન રૂપ કારણોનો તે નિરોધ કરી નાખે છે તેથી તેનું નામ "संवरो" સંવર છે (૪૨) તેને આચરવાથી જીવોની અશુભ પ્રવૃત્તિ અટકી જાય છે તેથી તેનું નામ "गुत्ति" ગુપ્તિ છે (૪૩) તે આત્માનું વિશિષ્ટ પ્રકારનું એક પરિણામ છે, તેથી તેનું નામ "ववसाओ" વ્યવસાય-વિ. અવસાય-અધ્યવસાય છે (૪૪) તે દ્રવ્ય અને ભાવ, એ બન્નેની ઉન્નતિ કરનારી છે તેથી તેનું નામ "उस्सओय" उच्छ्रय છે. (૪૫) તેના સેવનથી જીવોને સ્વર્ગ આદિ સદ્‌ગતિની પ્રાપ્તિ થાય છે, તેથી તેનું નામ "जण्णो" યજ્ઞ છે. (૪૬) સઘળા સદ્‌ગુણોનું તેજ એક આશ્રયસ્થાન છે, તેથી તેનું નામ "आयतणं' આયતન છે (૪૭) તે નિરવદ્ય અનુષ્ઠાનરૂપ છે તેથી તેનું નામ "जयणं" યત્ન છે. (૪૮) તેમાં પ્રમાદ-અસાવધાનતાનો પરિત્યાગ થઈ જાય છે, તેથી તેનું નામ "अप्पमाओ" અપ્રમાદ છે (૪૯) પર પ્રાણીઓને તે તૃપ્તિના કારણરૂપ હોય છે, તેથી તેનું નામ "अस्साओ" આશ્વાસ છે. (૫૦)

त्वात् ५०, 'वीसाओ' विश्वासःप्राणिनां प्रतीतिजनकत्वात्, यद्वा-प्राणिप्राण-स्याविरुद्धसमाचरणलक्षणः ५१, 'अभओ' अभयः-निर्भयहेतुत्वात् ५०, 'सव्वस्सवि-अमाघाओ' सर्वस्यापि सकलप्राणिगणस्य अमाघातः-मा=लक्ष्मीः, सा च द्वेधा-धनलक्ष्मीः प्राणलक्ष्मीश्च, तस्या घातो हननं माघातो, न माघातः अमाघातः-अमारिः स्वपदद्वारा प्राणिनां प्राणत्राणकरणात् ५४, 'चोक्ख' चोक्षा=पवित्रादपि पवित्रा-कर्ममलापहारकत्वात् ५४, 'पवित्ता' पवित्रा=आत्मनैर्मल्यहेतुत्वात् ५५,

---

प्रमाद है ४९। पर प्राणियों को यह तृप्ति का कारण होतीहै इसलिये इसकानाम (अस्साओ) आश्वास है ५०। प्राणियों में यह प्रतीति उत्पन्न करा देती है इसलिये इसका नाम (वीसाओ) विश्वास है। अथवा प्राणियों के प्राणों के विरुद्ध आचरण इसमें नहीं होता है इसलिये भी इसका नाम विश्वास है ५१। प्राणियो को यह भयरहित बना देती है। इसलिये निर्भय की हेतु होने से इसका नाम अभय है ५२। दूसरे जीवों की मा-धन-लक्ष्मी और प्राणरूपलक्ष्मी का इसमें घात नहीं होता है इस लिये इसका नाम (अमाघाय) अमाघात है। मा शब्द का अर्थ लक्ष्मी होता है-धन रूप लक्ष्मी और प्राणरूप लक्ष्मी के भेद से यह लक्ष्मी दो प्रकार की होती है। अहिंसा से इन दोनों का संरक्षण होता है यह बात प्रत्यक्ष है इसलिये इसका नाम अमाघात है ५३। यह अहिंसा पवित्र वस्तुओं से भी है अतिपवित्र है इसलिये इसका नाम (चोक्खा) चोक्षा है ५४। इससे आत्मा के ऊपर जमा हुआ अनादिकाल का मैल-विभाव परिणति दूर हो जाती है। अतःआत्मा निर्मल-अपने स्वरूप में मग्न-हो

પ્રાણીઓમા તે પ્રતીતિ ઉત્પન્ન કરે છે, તેથી તેનું નામ "वीसाओ" વિશ્વાસ છે અથવા પ્રાણીઓનાં પ્રાણોનાં વિરૂદ્ધનું આચરણ તેમાં થતું નથી, તેથી પણ તેનું નામ વિશ્વાસ છે (૫૧) પ્રાણીઓને તે ભય રહિત કરે તેથી નિર્ભ-યતાને માટે કારણભૂત હોવાથી તેનુ નામ "अभय" છે (૫૨) બીજાં જીવોની મા-ધન-લક્ષ્મી અને પ્રાણરૂપ લક્ષ્મીનો તેમાં ઘાત થતો નથી, તેથી તેનું નામ "अमाघाय" अमाघात છે. 'मा' શબ્દનો અર્થ લક્ષ્મી થાય છે-ધનરૂપ લક્ષ્મી અને પ્રાણરૂપ લક્ષ્મી, એ રીતે તેના બે પ્રકાર પડે છે. અહિંસાને એ બંનેનું સરક્ષણ થાય છે તે વાત પ્રત્યક્ષ છે (૫૩) તે અહિંસા પવિત્ર વસ્તુઓ કરતા પણ વધારે પવિત્ર છે, તેથી તેનું નામ "चोक्खा" चोक्षा છે. (૫૪) તેનાથી આત્મા ઉપર જામેલો અનાદિકાળનો મેલ-વિભાવ પરિણતિ-દૂર થઈ જાય છે, તેથી આત્મા પોતાનાં નિર્મળ સ્વરૂપમાં મગ્ન થઈ જાય છે. તે કારણે

'सुई' शुचिः=भावशौचहेतुत्वात् ५६, 'पूया' पूजा=भावार्चना-प्राण्युपमर्दन-रहितत्वात् ५७ 'विमल' विमला-मिथ्यात्वाविरत्यादिमलवर्जितत्वात्, ५८, 'पभासा य' प्रभासा च-प्रकाशरूपा केवलज्ञानज्योतीरूपत्वात्, सर्वप्राणिनां सुखप्रकाशकत्वाच्च ५९, 'निम्मलत्तरा' निर्मलतरा-सकलकर्ममलवर्जितत्वात् ६०, 'त्ति एवमादीणि' इत्येवमादीनि 'नियगुणनिम्मियाइं' निजगुणनिर्मितानि=गुणलक्षितानि 'पज्जवनामाणि' पर्यायनामानि=तत्तद्धर्माश्रिताभिधानानि, 'हुंति' भवन्ति 'अहिंसाए भगवईए' अहिंसाया भगवत्याः ॥ सू०२ ॥

जाती है-इसलिये इस आत्माकी निर्मलता का कारण होने से इस अहिंसा का नाम (पवित्ता) पवित्र है ५५। भावशुचिता का कारण होने से इसका नाम (सुई) शुचि है ५६। इस अहिंसा में प्राणियों के प्राणों का उपमर्दन नहीं होता है अतः यह भावपूजारूप होने से इसका नाम (पूया) पूजा-भावपूजा है ॥ ५७ इसकी जो आराधना करते हैं वे मिथात्व अविरति आदि मलों से वर्जित हो जाते हैं इसलिये इसका नाम (विमल) विमला है ५८। यह अहिंसा केवलज्ञानरूप ज्योति स्वरूप होने से (पभासा य) एक प्रकाशरूपा है। इसलिये इसका नाम प्रभास है ५९। इसकी प्रादुर्भूत होते ही आत्मा से सकल कर्मों का अभाव हो जाता है अतः इसकानाम (निम्मलतरा) निर्मलतरा है ६०। (एवमादीणि नियगुणनिम्मियाइ पज्जवनामाणि होंति अहिंसाए भगवईए) इस प्रकार इस अहिंसा भगवती के ये साठ नाम गुणानुसार हैं। ये नाम इस अहिंसा भगवती के पर्यायवाची-तत्तद्धर्म की अपेक्षा को लेकर-शब्द हैं ॥ सू० २ ॥

આત્માની નિર્મળતા માટે કારણભૂત હોવાથી તે અહિંસાનુ નામ "पवित्ता" પવિત્રતા છે (૫૫) ભાવ શુચિતાના કારણરૂપ હોવાથી તેનું "सुई" शुचि છે. (૫૬) આ અહિંસામા પ્રાણીઓના પ્રાણોનું ઉપમર્દન થતું નથી તેથી તે ભાવપૂજારૂપ હોવાથી તેનુ નામ "पूया" પૂજા ભાવપૂજા છે (૫૭) જે તેની આરાધના કરે છે તેઓ મિથ્યાત્વ, અવિરતિ આદિ મળોથી રહિત થઇ જાય છે, તેથી તેનુ નામ "विमल" विमला છે. (૫૮) આ અહિંસા કેવળ જ્ઞાન રૂપ જ્યોતિસ્વરૂપ હોવાથી "प्रभासाय" એક પ્રકાશરૂપ છે, તેથી તેનુ નામ प्रभास છે, (૫૯) તેનો પ્રાદુર્ભાવ થતા જ આત્મામાંથી ધીરે ધીરે સઘળા કર્મોનો અભાવ થઇ જાય છે, તેથી તેનુ નામ "निम्मलतरा" निर्मलतरा છે. (૬૦) 'एवमादीणि नियगुणनिम्मयाइ पज्जवनामाणि होति अहिंसाए भगवईए" આ પ્રમાણે આ અહિંસા ભગવતીના ગુણ પ્રમાણે સાઠ નામ છે. તે નામો આ અહિંસા ભગવતીના પર્યાયવાચી-તે તે ધર્મની અપેક્ષાએ શબ્દ છે ॥સૂ-૨॥

संप्रति अहिंसामाहात्म्यमाह—

मूलम्—एसा भगवई अहिंसा, जा सा भीयाणं पिव सरणं पक्खीणं पिव गयणं, तिसियाणं पिव सलिलं, खुहियाणं पिव असणं, समुद्दमज्झेव पोयवहणं, चउप्पयाणं च आसमपयं, दुहट्टियाणं च ओसहिबलं, अडवीमज्झे च सत्थगमणं, एत्तो विसिट्ठतरिया अहिंसा जा सा पुढवीजल अगणि मारुयवणस्सइ - बीय — हरिय — जलचर— थलचर—खहयर तस—थावर—सव्वभूयखेमकरी ॥ सू० ३ ॥

टीका—'एसा भगवई' इत्यादि—

एषा=जिनशासनप्रसिद्धा—अहिंसा भगवती या सा 'भीयाणं पिव सरणं' भीतानामिव शरणम्=भय भीतानां प्राणिनां त्राणाय गृहमिवास्ति, 'पक्खीणं—पिव गयणं' पक्षिणामिव गगनम्=पक्षिणां गगनमिव, यथा पक्षिणां गमने गगन-माधारो भवति, तथैव सर्वधर्माणामियमहिंसाऽऽधारः। 'तिसियाणं पिव सलिलम्=

अब सूत्रकार इस अहिंसा के माहात्म्य को प्रदर्शित करते हैं— 'एसा भगवई' इत्यादि०।

टीकार्थ-(एसा) जिनशासन में प्रसिद्ध यह (अहिंसा भगवई) अहिंसा भगवती (जा सा) जो वह अहिंसा (भीयाणं पिव सरणं) भयभीत हुए प्राणियों की रक्षा करने के लिये घर जैसी है। (पक्खीणं पिव गगणं) तथा जिस प्रकार पक्षियों को गमन करने में आधारभूत आकाश होता है उसी तरह समस्त धर्मों की आधारभूत यह अहिंसा ही है। (तिसियाणं पिव सलिलं) जिस प्रकार तृषित व्यक्तियों की

હવે સૂત્રકાર આ અહિંસાનું મહાત્મ્ય દર્શાવે છે—"एसा भगवई" ઇત્યાદિ.

"एसा" જિનશાસનમાં પ્રસિદ્ધ તે "अहिंसा भगवई" અહિંસા ભગવતી, "जा सा" જે "भियाणं पिव सरणं" ભયભીત બનેલ પ્રાણીઓની રક્ષા કરવાને માટે ઘર સમાન છે, "पक्खीण पिव गगणं" તથા જેમ પક્ષીઓને ગમન કરવામાં આકાશ આધારભૂત થાય છે, એજ પ્રમાણે સમસ્ત ધર્મોને માટે આધારભૂત આ અહિંસા જ છે, "तिसियाणं पिव सलिलं" જેમ તર-

तृषितामिव सलिलम्=जलम्, प्राणरक्षकत्वात्, 'खुहियाणं पिव असणं' क्षुधितानामिवाशनम्=क्षुधार्तप्राणिनां कृतेऽशनं भोजनमिव, अन्नप्राणाः इति वचनात्। तथा-' समुद्दमज्झे व पोयवहणं ' समुद्रमध्ये इव पोतवहनम्-यथा समुद्रमध्ये नौः प्राणिनां त्राणाय भवति, तथैव संसारसमुद्रमध्ये इयमहिंसा प्राणिनां त्राणाय पोतायते इति भावः। तथा-'चउप्पयाणं च आसमपयं ' चतुष्पदानां च आश्रमपदम्-यथा चतुष्पदप्राणिनां कृते गोष्ठं विश्रामस्थानं तथैवाहिंसापि सर्वप्राणिनां

प्राणरक्षा का साधनभूत जल होता है उसी प्रकार यह अहिंसा भी प्राणियों के प्राणों की रक्षा का एक साधन है। (खुहियाणं पिव असणं) "अन्न ही प्राण है" इस उक्ति के अनुसार जिस प्रकार भूख से पीडित हुए प्राणियों के लिये भोजन एक मात्र आधारभूत होता है उसी प्रकार यह अहिंसा भी जीवों की रक्षा करने का एक सर्वोत्तम साधन है। (समुद्दमज्झेव पोयवहणं) समुद्र के बीज में नौका जिस प्रकार प्राणियों की रक्षा करने वाली होती है उसी प्रकार संसार समुद्र के बीच में पतित हुए प्राणियों की रक्षा करने के लिये यह अहिंसा ही एक सर्वोत्तम द्रढ नौका जैसी है। (चउप्पयाणं च आसमपयं) चतुष्पद-जानवरों के लिये जिस प्रकार विश्रामस्थल गोष्ठ होता है उसी प्रकार यह भगवती अहिंसा भी सर्वप्राणियों के लिये सर्वोत्तम विश्रामस्थल है। (दुहट्ठियाणं च ओसहिबलं) रोगग्रस्त व्यक्तियों को जिस प्रकार औषधि का सहारा होता है उसी प्रकार कर्मरोगग्रस्त भव्य जीवों के

સ્યાઓની પ્રાણરક્ષા માટે પાણી સાધનરૂપ બને છે, એ જ પ્રમાણે આ અહિંસા પણ પ્રાણીઓના પ્રાણ બચાવવાનું એક સાધન છે. " खुहियाणं पिव असणं " " અન્ન જ પ્રાણ છે " તે કથન પ્રમાણે જેમ ક્ષુધાથી પીડાતા પ્રાણીઓ માટે ભોજન જ એક માત્ર આધાર હોય છે એ જ પ્રમાણે આ અહિંસા પણ જીવોનું રક્ષણ કરવાનું એક સર્વોત્તમ સાધન છે " समुद्दमज्जेव पोय वहणं " સમુદ્રની વચ્ચે જેમ નૌકા પ્રાણીઓનું રક્ષણ કરે છે તેમ સંસાર સાગરમાં ડૂબેલા પ્રાણીઓની રક્ષા કરવાને માટે આ અહિંસા જ મજબૂત નૌકા જેવી છે. " चउप्पयाणं च आसमपयं " ચતુષ્પદ-જાનવરોને માટે જેમ ગોષ્ઠ (વાડો) વિશ્રામસ્થાન હોય છે એ જ પ્રમાણે આ ભગવતી અહિંસા પણ સમસ્ત પ્રાણીઓને માટે સર્વોત્તમ વિશ્રામસ્થાન છે " दुहट्ठियाणं च ओसहि बलं " રોગીને જેમ ઔષધિનો સહારો હોય છે તેમ કર્મરોગગ્રસ્ત ભવ્ય જીવોને

विश्रामस्थानम् । तथा-' दुहट्टियाणं च ओसहिबलं ' दुःखस्थितानां च ओषधिबलम्-रोगग्रस्तानां प्राणिनां कृते यथौषधम् तथैव कर्मरोगग्रस्तानां कृतेऽहिंसौषधम् , तथा-' अडवीमज्झे च सत्थगमण' अटवीमध्ये इव सार्थगमनम्—यथा—अटवीमध्ये सार्थेन सह गमनं सुखकरं भवति, तथैव मोक्षमार्गप्रस्थितानामहिंसा । किमधिकम् ? 'एत्तो' इतः-एभ्यः पूर्वोक्तेभ्योऽपि अहिंसा ' विसिट्ठतरिया ' विशिष्टतरिकाविशिष्टतरा । 'जा सा' या साअहिंसा 'पुढवी–जल-अगणि-मारुय-वणस्सइ-बीय-हरिय-जलचर-थलचर-खहयर-तस-थावर-सव्वभूय-खेमकरी ' पृथिवी—जलाग्नि मारुत-वनस्पति-बीज-हरित-जलचर-स्थलचर-खेचर-त्रस-स्थावरसर्वभूतक्षेमकरी। पृथिव्यादिषट्कायजीवानां कल्याणकारी वरीवर्त्ति दयाभगवती ॥सू-४॥

अहिंसा ही एक परम औषधीरूप है। (अडवीमज्झे वसत्थगमणं) जंगल के बीच में जिस प्रकार सार्थ–समुदाय–के साथ चलना सुखप्रद होता है उसी प्रकार मोक्षमार्ग में प्रस्थित हुए मनुष्य को यह अहिंसा है अर्थात्–सार्थ का काम देती है। और अधिक क्या कहें– (एत्तो) इस पूर्वोक्त उपमानों से भी (विसिट्ठतरिया) अहिंसा विशिष्टतर है। क्यों की (जा सा अहिंसा) यह जो अहिंसा है वह (पुढवी जल–अगणि–मारुय–वणस्सइ–बीय–हरिय-जलचर-थलचर-खहयर तस-थावर सव्वभूयखेमकरी) पृथिवी, जल, अग्नि, वायु, वनस्पति, बीज, हरित, जलचर, थलचर, खेचर, त्रस और स्थावर इन सब भूतों की–पृथिव्यादि छह काय के जीवों की–कल्याणकरी–रक्षा करने वाली है।

भावार्थ–इस अहिंसा भगवती के समक्ष संसार के सभी विशिष्ट जड़ पदार्थ तुच्छ हैं। क्यों कि उनसे जीवों की यथार्थरूप में रक्षा नहीं

માટે અહિંસા જ એક મોટા ઔષધરૂપ છે. " अडवीमज्झे वसत्थ गमण " જેમ જંગલની વચ્ચે સાર્થ–સમુદાયની સાથે જવાનું સુખકારી હોય છે તે જ પ્રમાણે મોક્ષ માર્ગે પ્રયાણ કરતા મનુષ્યોને માટે અહિંસા સાર્થની ગરજ સારે છે. વધારે શું કહુ ! ' एत्तो " પૂર્વ કથિત ઉપમાનો કરતાં પણ "विसिट्ठतरिया" અહિંસા અધિકતર છે કારણ કે " जा सा अहिंसा " આ જે અહિંસા છે તે " पुढवीजलअगणि–मारुय–वणस्सइ –वीय –हरिय–जलयर– खहयर – तस – थावर सव्वभूय– खेमकरी " પૃથિવી, જલ, અગ્નિ. વાયુ, વનસ્પતિ, બીજ, હરિત, જલચર, થલચર, ખચર, ત્રસ, અને સ્થાવર તે બધા ભૂતોની પૃથિવ્યાદિ છ કાયનાં જીવોની કલ્યાણકારી–રક્ષા કરનારી છે.

ભાવાર્થ—આ ભગવતી અહિંસાની આગળ સંસારના સઘળા વિશિષ્ટ જડ પદાર્થો તુચ્છ છે કારણ કે તેમનાથી યથાર્થ રીતે જીવોની રક્ષા થતી નથી જો

अथ ये महापुरुषैरियमहिंसोपलब्धा सेविता च तानाह—'एसा भगवई' इत्यादि—

मूलम्—एसा भगवई अहिंसा जा सा अपरिमिय नाण दंसणधरेहिं सीलगुण—विणय—तव—संजम नायगेहिं तित्थकरेहिं सव्वजगजीववच्छलेहिं तिलोगमहिएहिं जिणचंदेहिं सुट्ठु दिट्ठा, ओहि जिणेहिं विण्णाया, उज्जुमईहिं विदिट्ठा विउलमईहिं विदिता, पुव्वधरेहिं अधीया, वेउव्वीहिं पइण्णा, आभिणिबोहियनाणीहिं सुयनाणीहिं मणपज्जवनाणीहिं केवलणाणीहिं आमोसहिपत्तेहिं खेलोसहिपत्तेहिं विप्पोसहिपत्तेहिं जल्लोसहिपत्तेहिं सव्वोसहिपत्तेहिं बीयबुद्धिएहिं कोट्ठबुद्धीहिं पयाणुसारीहिं संभिण्णसोएहिं सुयधरेहिं मणबलिएहिं वयबलिएहिं कायबलिएहिं नाणबलिएहिं दंसणबलिएहिं चरित्तबलिएहिं खीरासवेहिं महुआसवेहिं सप्पियासवेहिं अखीण महाणसिएहिं चारणेहिं विज्जाहरेहिं चउत्थभत्तिएहिं छट्ठभत्तिएहिं दसमभत्तिएहिं एवं दुवालसचउदससोलस--अद्धमास--मास--दोमास तिमास-चउमासपंचमास-छम्मासभत्तिएहिं उक्खित्तचरएहिं एवं निक्खित्तचरएहि अंतचरएहि पंतचरएहिं लूहचरएहिं समुदाणि-

---

होती है। यदि यथार्थरूप में जीवों की रक्षा करने वाली—अभयप्रदान करने वाली यदि कोई सर्वोत्तम वस्तु है तो वह एक अहिंसा ही है ॥सू०३॥

अब सूत्रकार जिन महा पुरुषों ने इस भगवती अहिंसा की प्राप्ति

યથાર્થ રીતે જીવોની રક્ષા કરનારી—અભયપ્રદાન કરનારી કોઇ પણ સર્વોત્તમ વસ્તુ હોય તો તે એક માત્ર અહિંસા જ છે. ॥ સૂ-૩ ॥

હવે સૂત્રકાર જે મહાપુરુષોએ આ ભગવતી અહિંસાની પ્રાપ્તિ તથા સેવા

चरएहिं अण्णगिलाइएहिं मोणचरएहिं संसट्ठकप्पिएहिं तज्जायसंसट्ठकप्पिएहिं उवनिहिएहिं सुद्धेसणिएहिं संखादत्तिएहिं दिट्ठलाभिएहिं अदिट्ठलाभिएहिं आयंबिलिएहिं पुट्ठलाभिएहिं आयंबिलिएहिं पुरिमड्ढिएहिं एक्कासणिएहिं निव्विइएहिं भिन्नपिंडवाइएहिं परिमियपिंडवाइएहिं अंतहारेहिं पंताहारेहिं अरसाहारेहिं विरसाहारेहिं लूहाहारेहिं तुच्छाहारेहिं अंतजीविहिं पंतजीविएहिं लूहजीविहिं उवसंतजीविएहिं पसंतजीविहिं विवित्तजीविहिं अखीरमहुसप्पिएहिं असज्जससासिएहिं पडिमट्ठाइएहिं ठाणुक्काडिएहिं वीरासणिएहिं णेसज्जिएहिं डंडायइएहिं लगंडसाईहिं एगपासिएहिं आयावएहिं अवाउडएहिं अणिट्ठुयएहिं अकंडुयएहिं धुयकेसमंसुलोमनहेहिं सव्वगायपडिकम्मविप्पमुक्केहिं समणुचिन्ना, सुयधरविदियत्थकायवुद्धिणो धीरमइबुद्धिणो य जे ते आसीविसउग्गतेयकप्पा निच्छयववसाय पज्जत्तकयमइया णिच्चं सज्झायज्झाणा अणुवद्धधम्मज्झाणपंचमहव्वयचरित्तजुत्ता, समिया समिईसु, समियपावा, छव्विह जगवच्छला, निच्चमप्पमत्ता, एएहिं अन्नेहिं य जा सा अणुपालिया भगवई ॥ सू० ४ ॥

टीका—' एसा भगवई ' इत्यादि—

' एसा भयवई अहिंसा ' एषा भगवती अहिंसा=एषा पूर्वोक्ता भगवती=पूजनीया सर्वज्ञप्ररूपिताऽहिंसैव सम्यगहिंसाऽस्ति, न तु सर्वज्ञेतरकल्पिता । 'जा'

की है, तथा सेवा की है उन महापुरुषों को प्रकट करते हैं—' एसा भगवई ' इत्यादि ।

टीकार्थ—(एसा भगवई अहिंसा) यह पूर्वोक्त भगवति अहिंसा सर्वज्ञ द्वारा प्ररुपित अहिंसा–ही सच्ची अहिंसाहै, सर्वज्ञ से भिन्न इतर

કરી છે તે મહાપુરુષોના નામ પ્રગટ કરે છે–" एसा भगवई " ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ–' एसा भगवई अहिंसा" આ પૂર્વોક્ત ભગવતી અહિંસા–સર્વજ્ઞ દ્વારા પ્રરૂપિત અહિંસા જ સાચી અહિંસા છે, સર્વજ્ઞ સિવાયના બીજા છદ્મસ્થ

या=जिनसिद्धान्तोक्ता अहिंसा 'सा' सा 'अपरिमियनाणदंसणधरेहिं' अपरिमितज्ञानदर्शनधारकैः 'सीलगुणविणयतवसंजमनायगेहिं' शीलगुणविनयतपः संयमनायकैः, शीलं=चित्तसमाधानं तदेवगुणस्तं, तथा विनयतपः संयमांश्च स्वस्य परेषां च नयन्ति=प्रापयन्ति ये ते तैस्तथोक्तैः 'तित्थंकरेहिं' तीर्थङ्करैः=चतुर्विधसंघनायकैः 'सव्वजगजीववच्छलेहिं' सर्वजगज्जीववत्सलैः—सकलप्राणि कारुण्योपेतैः,=योगक्षेमकारिकत्वात्, 'तिलोगमहिएहिं' त्रिलोकमहितैः=त्रिलोकपूजितैः=तीर्थंकरनामकर्मणो जगत्पूजनीयत्वात्, 'जिणचंदेहिं' जिनचन्द्रैः=जिनानां सामान्यजिनानां मध्ये चन्द्रा इव तैः, कारुणिकनिशाकरैरित्यर्थः, 'सुद्दुदिट्ठा' सुष्ठु दृष्टा=केवलालोकैः कारणतः स्वरूपतः कार्यतश्च सम्यग् विनिश्चिता,

छद्मस्थ प्राणियों द्वारा कथित अहिंसा सच्ची अहिंसा नहीं है— इस तरह (जा) जिन सिद्धान्तोक्त जो अहिंसा है (सा) वह (अपरिमियनाणदंसणधरेहिं) अपरिमित—अनंत—ज्ञान और दर्शन के धारण करने वाले (सीलगुणविणयतवसंजमनायगेहिं) शील रूपगुण विनय एवं तप, इनका स्वयं आचरण करने वाले और परको आचरण कराने वाले (तित्थंकरेहिं) तीर्थंकर—चतुर्विध संघ का नेतृत्व करनेवाले (सव्वजगजीववच्छलेहिं) समस्त जगत के जीवों के प्रतिवात्सल्यभाव रखने वाले और (तिलोगमहिएहिं) तीर्थंकर नामकर्म जगत्पूज्य होने के कारण तीनों लोकों द्वारा पूजे जाने वाले, ऐसे (जिणचंदेहिं) जिन चंद्रोंने सामान्य जिनों की बीच में चंद्रमा के तुल्य तीर्थंकर महाप्रभुओं ने यह अहिंसा भगवती को पूर्वोक्त प्रकार से (सुद्दुदिट्ठा) अपने केवलालोक से कारण स्वरूप को, एवं कार्य की अपेक्षा को लेकर अच्छी

જીવો દ્વારા કથિત અહિંસા સાચી અહિંસા નથી આ રીતે "जा" જિનસિદ્ધાંતોક્ત જે અહિંસા છે "सा" તે "अपरिमियनाणदंसणधरेहिं" અપરિમિત—અનંત—જ્ઞાન અને દર્શનના ધારક "सीलगुणविणयतवसंजमनायगेहिं" શીલરૂપગુણ, વિનય અને તપનું જાતે આચરણ કરનારા અને બીજાને તેનું આચરણ કરાવનારા "तित्थकरेहिं" તીર્થંકર—ચતુર્વિધ સંઘનું નેતૃત્વ કરનારા "सव्वजगजीववच्छलेहिं" જગતના સમસ્ત જીવો પ્રત્યે વાત્સલ્યભાવ રાખનારા અને "तिलोगमहिएहिं" તીર્થંકર નામકર્મ જગત્પૂજ્ય હોવાને કારણે ત્રણે લોક દ્વારા પૂજાનારા, એવા "जिणचंदेहिं" જિનચંદ્રોએ—સામાન્ય જિનોની અંદર ચંદ્રમા સમાન તીર્થંકર મહાપ્રભુઓએ આ ભગવતી અહિંસાને પૂર્વોક્ત રીતે "सुद्दुदिट्ठा" પોતાના કેવલાલોકથી કારણ સ્વરૂપે, અને કાર્યની અપેક્ષાએ સારી રીતે દેખી છે—નિશ્ચિત કરી છે. તેમણે તેના બાહ્ય અને અભ્ય-

तत्र गुरूपदेशः, कर्मक्षयोपशमादि बाह्याभ्यन्तरं कारणमस्याः प्रमत्तयोगात्प्राणव्यपरोपणलक्षणहिंसाप्रतिपक्षरूपं स्वरूपम्, स्वर्गापवर्गप्राप्तिलक्षणं च कार्यम्, इति। तथा-'ओहिजिणेहिं' अवधिजिनैः=विशिष्टावधिज्ञानिभिः 'विण्णाया' विज्ञाता=भेदप्रभेदैर्विदिता, तथा 'उज्जुमईहिंवि' ऋजुमतिभिरपि=मननं मतिः-संवेदनमित्यर्थः, ऋज्वीसामान्यग्राहिणी मतिर्बुद्धिर्येषां ते ऋजुमतयः=अर्धतृतीयाङ्गुलन्यूनमनुष्यक्षेत्रवर्ति संज्ञि पञ्चेन्द्रियमनोद्रव्यप्रत्यक्षीकरणहेतुमनःपर्यायज्ञानभेदवन्तस्तैरपि, 'दिट्ठा' दृष्टा, तथा-'विउलमईहिं' विपुलमतिभिः=पर्यायशतोपेता चिन्तनीय घटादिवस्तुविशेषग्राहिणी मति बुद्धि र्येषां ते विपुलमतयस्तैः विदिता=

तरह देखी है-निश्चित की है। उन्हों ने इसके बाह्य और आभ्यन्तर कारण गुरुपदेश, कर्मक्षयोपशम आदि कहे हैं। इसका स्वरूप-प्रमत्तयोग से जो प्राणव्यपरोपणरूप हिंसा का स्वरूप है उससे विपरीत स्वरूप प्रकट किया है। तथा स्वर्ग और अपवर्ग की प्राप्ति होना इसका कार्य कहा है। (ओहिजिणेहि विण्णाया) विशिष्ट अवधि ज्ञानियों द्वारा यह अहिंसा भगवती भेद प्रभेदों सहित विदित हुई है। तथा (उज्जुमईहि विदिट्ठा) ऋजुमति मनः पर्यय ज्ञानियों द्वारा यह प्रत्यक्ष रूप में देखी गई है। जो विषय को सामान्यरूप से जानता है वह ऋजुमतिमनः पर्यय है। यहां पर ऐसी आशका नहीं करना चाहिये कि "जब ऋजुमति सामान्यग्राही है तब तो वह दर्शन ही हुआ-उसे ज्ञान क्यों कहा क्यों कि यह सामान्यगाही है" इसका तात्पर्य इतना ही है कि वह विशेषोको जानता है पर विपुलमति जितने विशेषों को नहीं जानता। अर्धतृतीयअङ्गुल न्यून-अर्थात् ढाई अंगुल कम मनुष्य क्षेत्र में रहे

न्तर કારણ ગુરૂપદેશ, કર્મક્ષયોપશમ આદિ બતાવેલ છે. તેનું સ્વરૂપ-પ્રમત્ત-યોગથી જે પ્રાણ હરનાર હિંસાનું સ્વરૂપ છે તેના કરતાં ઉલટું સ્વરૂપ પ્રગટ કરેલ છે તથા સ્વર્ગ અને અપવર્ગની પ્રાપ્તિ થવી તે તેનું કાર્ય કહેલ છે. "ओहिजिणेहिं विण्णाया" વિશિષ્ટ અવધિજ્ઞાનીઓ દ્વારા તે ભગવતી અહિંસા ભેદ, પ્રભેદો સહિત સમજવામાં આવેલ છે. તથા "उज्जुमईहिं विदिट्ठा" ઋજુમતિ મનઃ પર્યયજ્ઞાનીઓ દ્વારા તે પ્રત્યક્ષ રૂપે જોવામાં આવેલ છે. જે વિષયને સામાન્ય રીતે જાણે છે તે ઋજુમતિ મનઃ પર્યય છે. અહીં એવી શંકા ન કરવી જોઈએ કે "જો ઋજુમતિ સામાન્યગ્રાહી છે તો તે "દર્શન" જ ગણાય તેને જ્ઞાન કેમ કહ્યું? કારણ કે તે સામાન્યગ્રાહી છે" તેનો ભાવાર્થ એટલો જ છે કે તે વિશેષોને જાણે છે પણ વિપુલમતિ જેટલા વિશેષોને જાણતો નથી. "अर्धतृतीयअङ्गुलन्यून" એટલે કે અઢી આંગળ

विशेषतो दृष्टा, एते उभयेऽपि मनः पर्ययज्ञानिनः। तथा—'पुव्वधरेहिं' पूर्वधरैः=उत्पादाग्रायणीयवीर्यादि चतुर्दश पूर्वधरैः(अधीया) अधीता=श्रुतनिबद्धा पठिता, तथा 'वेउव्वीहिं' वैकुर्विकै=वैक्रियलब्धिधारिभिः, 'पइण्णा' प्रतीर्णा=निस्तीर्णा—आजन्मपरिपालितेत्यर्थः, तथा—'आभिणिबोहियनाणीहिं' आभिनिबोधिकज्ञानिभिः, अभि=अर्थाभिमुखः—अविपर्ययरूपत्वात्, नि=नियतोऽसंशयरूपत्वात्, बोधः=संवेदनम्=अभिनिबोधः, स एव आभिनिबोधिकम्, ज्ञायतेऽनेनेति ज्ञानम्, आभिनिबोधिकं च तज्ज्ञानम्—आभिनिबोधिकज्ञानम्—इन्द्रिय नोइन्द्रिय निमित्तो बोध इत्यर्थः, सोऽस्ति येषां तैस्तथोक्तैः, मतिज्ञानवद्भिरित्यर्थः,

---

हुए संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों के मनोद्रव्यों को यह ऋजुमति साक्षात् जानता है। यह ज्ञान का मनःपर्ययएक भेद है। (विउलमहिं विदिया) मनः पर्यय ज्ञानका दूसरा भेदविपुलमति है। इस विपुलमति मनः पर्ययज्ञानवाला पदार्थो को ऋजुमति की अपेक्षा विशुद्धतर आदि रूप से जानता है। क्यों कि यह मति पर्यायशतोपेत होती है, तथा चिन्तनीय घटादि वस्तुओं में सूक्ष्मतर आदि रूप से वर्तमानधर्मों को जानती है। उन ऐसे विपुलमति मन.पर्यय ज्ञानियों द्वारा यह भगवती अहिंसा ऋजुमति की अपेक्षा अधिक और विशेषरूप से विदित—ज्ञात—दृष्ट हुई है। तथा (पुव्वधरेहिं अधीया) उत्पादपूर्व, अग्रायणीपूर्व, वीर्यप्रवाद आदि चतुर्दशपूर्व के धारी महात्माओं ने-श्रुतज्ञानियों ने—श्रुत में निबद्ध हुई इस अहिंसा भगवती को पढा है। (वेउव्वीहिं-वेइण्णा) वैक्रियलब्धिधारी, मुनिजनों ने इसे आजन्म पाला है। (आभिणिबोहियनाणीहिं, सुयनाणीहिं, मणपज्जवनाणीहिं केवलनाणीहिं)

ઓછા મનુષ્યક્ષેત્રમા રહેલ સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય જીવોનાં મનોદ્રવ્યોને તે ઋજુમતિ સાક્ષાત જાણે છે. મન:પર્યયજ્ઞાનનો આ એક ભેદ છે " विउलमईहिं विदिआ" મન.પર્યય જ્ઞાનનો બીજો ભેદ વિપુલમતિ છે આ વિપુલમતિ મન પર્યય જ્ઞાનવાળો પદાર્થોને ઋજુમતિના કરતા વધારે વિશુદ્ધ રૂપે જાણે છે કારણ કે મતિપર્યાય શતોપેત હોય છે, તથા કલ્પનીય ઘટાદિ વસ્તુઓમાં સૂક્ષ્મતર આદિ રૂપે વર્તમાન ધર્મોને જાણે છે એવા તે વિપુલમતિ મન પર્યયજ્ઞાનીઓ દ્વારા આ ભગવતી અહિંસા ઋજુમતિના કરતાં અધિક અને વિશેષ રૂપે વિદિત —જ્ઞાત—દૃષ્ટ થઈ છે તથા " पुव्वधरेहिं अधीया " ઉત્પાદપૂર્વ, અગ્રાયણીપૂર્વ, વીર્યપ્રવાદ આદિ ચૌદ પૂર્વના ધારક મહાત્માઓએ-શ્રુતજ્ઞાનીઓએ—શ્રુતમાં ગૂંથાયેલ આ ભગવતી અહિંસાનું અધ્યયન કર્યું છે, " वेउव्वीहिं वेइण्णा " વૈક્રિયલબ્ધિધારી મુનિજનોએ તેનુ આજન્મ પાલન કર્યું છે ' आभिणिबोहियनाणीहिं सुयनाणीहिं, मणपज्जवनाणीहिं केवलनाणीहिं ' ઇન્દ્રિય અને નોઇ-

तथा-' सुयनाणीहिं ' श्रुतज्ञानिभिः=श्रुतम्-आचाराङ्गादि, तद्वेदिभिरित्यर्थः, तथा-' मणपज्जवनाणीहिं ' मनःपर्यवज्ञानिभिः-मनसो मन्यमानमनोद्रव्याणां पर्यवः=परिच्छेदो मनः-पर्यवः, स एव ज्ञानम्, मनःपर्यवज्ञानम्, तदस्ति येषां ते तथोक्तास्तैः, तथा-' केवलनाणीहिं ' केवलज्ञानिभिः=केवलमेकमसहायमनन्तं परिपूर्ण यद् ज्ञानं तत्केवलज्ञानं, तदस्यास्ति येषां ते तथोक्ताः, तथा-' आमोसहिपत्तेहिं ' आमर्शौषधिप्राप्तैः,-आमर्शः=शरीरसंस्पर्शः, स एवौषधिः-सर्वरोगापहारित्वात्-तपश्चरणप्रभावो लब्धिविशेषस्तां प्राप्ता ये ते तथोक्तास्तैः, तथा-' खेलोसहिपत्तेहिं ' श्लेष्मौषधिप्राप्तैः-श्लेष्मा एव ओषधिर्भवति यत्र लब्धौ सा

इन्द्रिय और नो इन्द्रिय इनसे उत्पन्न जो ज्ञान होता है उसका नाम आभिनिबोधक ज्ञान है। ' अभि ' और ' नि ' ये दो उपसर्ग यह प्रकट करते हैं कि यह ज्ञान सन्मुख रखे हुए नियमित क्षेत्रवर्ती पदार्थ को ही जान सकता है। इस आभिनिबोधिक ज्ञानियों द्वारा मतिज्ञान-धारियों द्वारा, तथा आचारांग आदि श्रुत के जानने वालों द्वारा, तथा मनःपर्यवज्ञानियों द्वारा,-मनवाले-संज्ञि प्राणी-किसी भी वस्तु का चिन्तवन मनसे करते हैं। चिन्तवन के समय चिन्तनीय वस्तु के भेद के अनुसार चिन्तवनकार्य में प्रवृत्तमन भिन्न २ आकृतियों को धारण करता रहता है वे आकृतियां ही मन की पर्यायें हैं, और उन मानसिक आकृतियों को साक्षात् जानने वाला ज्ञान मनःपर्यव ज्ञान हैं, इस मनःपर्यव ज्ञान को धारण करने वाले मुनिजनों द्वारा, तथा केवल ज्ञानियों द्वारा-असहाय, एक, अनन्त, परिपूर्ण यह केवल शब्द का अर्थ है, ऐसा जो ज्ञान होता हैं वह केवल ज्ञान है, यह ज्ञान जिस आत्मा में होता है उसका नाम केवलज्ञानि है ऐसे केवल ज्ञानि आत्माओं द्वारा

न्द्रिय वडे उत्पन्न थयेल जे ज्ञान छे तेनुं नाम आभिनिबोधक ज्ञान छे "अभि" अने " नि (' ए बने उपसर्गो ए प्रगट करे छे के ते ज्ञान सन्मुख राखेल नियमित क्षेत्रवर्ती पदार्थने ज जाणी शके छे ते अभिनिबोधिक ज्ञानीओ द्वारा, मतिज्ञानधारीओ द्वारा तथा आचारांग आदि सूत्रोना जाणकार द्वारा तथा मन पर्यय ज्ञानीओ द्वारा-मनवाळां-संज्ञी प्राणी-कोइ पण वस्तुनुं मन वडे चिन्तवन करे छे चिन्तवनने वखते जेनु चिन्तवन करवामां आवे छे ते वस्तुना भेद प्रमाणे चिन्तनकार्यमा प्रवृत्त थयेल मन जुदी जुदी आकृतियोने धारण करतुं रहे छे, ते आकृतियो ज मननी पर्यायो छे. अने ते मानसिक आकृतियोने प्रत्यक्ष जाणनार ज्ञान मन पर्यय ज्ञान छे, ते मनः पर्यय ज्ञानने धारण करनार मुनिओ द्वारा, तथा केवळज्ञानीओ द्वारा-असहाय, एक. अनन्त, परिपूर्ण ते " केवल " शब्दना अर्थो छे, एवुं जे ज्ञान छे तेने केवळ·

श्लेष्मौषधिस्तां प्राप्ता अधिगता ये ते तैस्तथोक्तैः, तथा 'जल्लोसहिपत्तेहिं' जल्लौषधिप्राप्तैः. जल्लः= शरीरसमुद्भवश्चमलः,स एवौषधिस्तां प्राप्ता ये तैस्त्तथोक्तैः, तथा 'विप्पोसहिपत्तेहिं' विप्रुडोपधिमाप्तैः, विप्रुषः=मुखविन्दवः, त एव ओषधिर्विप्रुडोषधिस्तां प्राप्तास्तैस्तथोक्तैः, तथा-'सव्वोसहिपत्तेहिं' सर्वम्=कर्णवदननासिकानयनजिह्वासमुद्भवं मलं तदेव ओषधिस्ताम्प्राप्तास्तैस्तथोक्तैः, तथा-'वीयबुद्धिएहिं' वीजबुद्धिकः, वीजमिव विविधार्थाधिगमरूपमहातरुजननाद् बुद्धिर्येषां ते वीजबुद्धयस्तैस्तथोक्तैः, अय भावः-उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सदित्यादिवदर्थप्रधानं पदमर्थपदं, तेनैकेनापि वीजभूतेनाधिगतेन येऽन्य प्रभूतमप्यर्थमनुसरन्ति ते वीजबुद्धय उच्यन्ते, तथा 'कोट्ठबुद्धिएहिं' कोष्ठबुद्धिकैः-कोष्ठप्रक्षिप्तधान्यमिव येषां सूत्रार्थौ सुचिरमपि तिष्ठतस्ते कोष्ठ बुद्धयस्तैस्तथोक्तैः, 'पयाणुसारीहिं' पदानुसारिभिः=पदेन सूत्रावयवेन एकेनोपलब्धेन तदनुकूलानि पदशतान्यनुसरन्ति ये ते पदानुसारिणस्तैस्तथोक्तैः, तथा 'संभिन्नसोएहिं' संभिन्नश्रोतोभिः-संभिन्नानि समानार्थग्राहीणि श्रोतांसि=इन्द्रियाणि येषां ते संभिन्नश्रोतसस्तैस्तथोक्तैः, 'ये एकतरेणापीन्द्रियेण सर्वेन्द्रिय गम्यान् विषयान् अवगच्छन्ति ते संभि-

---

(समणुचिन्ना) सेवित हुई है, ऐसा संबन्ध आगे से जोड़ लेना चाहिये। तथा (आमोसहिपत्तेहिं, खेलोसहिपत्तेहिं, जल्लोसहिपत्तेहिं, विप्पोसहिपत्तेहिं, सव्वोसहिपत्तेहिं, वीयबुद्धिएहिं, कोट्ठबुद्धिएहिं, पयाणुसारीहिं, संभिन्नसोएहिं) आमर्शौषधिलब्धि जिन्हें प्राप्त हो चुकी है, श्लेष्मौषधि लब्धि जिन्हें प्राप्त हो चुकी है, जल्लौषधि लब्धि जिन्हें प्राप्त हो चुकी हैं, विप्रुडोषधि लब्धि जिन्हें प्राप्त हो चुकी है, सर्वोषधि लब्धि जिन्हें प्राप्त हो चुकी है, तथा बीजबुद्धि लब्धि-बीज समान बुद्धि वाली लब्धि जिन्हें प्राप्त हो चुकी है, कोष्ठ बुद्धिलब्धि जिन्हें प्राप्त हो चुकी है, पदानुसारी लब्धि जिन्हें प्राप्त हो चुकी है, संभिन्न-श्रोतस लब्धि जिन्हें प्राप्त हो चुकी है, उनके द्वारा सेवित हुई है, तथा

જ્ઞાની કહે છે. એવાં કેવળજ્ઞાની આત્માઓ દ્વારા "समणुचिन्ना" સેવાયેલી છે એવો સબંધ આગળના વાકય સાથે જોડી લેવાનો છે. તથા "आमोसहिपत्तेहिं, खेलोसहिपत्तेहिं, जल्लोसहिपत्तेहिं. विप्पोसहिपत्तेहिं, सव्वोसहिपत्तेहिं, बीयबुद्धिएहिं, कोट्ठबुद्धिएहिं, पयाणुसारीहिं, संभिन्नसोएहिं" આમર્શૌષધિલબ્ધિ જેમને પ્રાપ્ત થઇ ગઇ છે જલ્લૌષધિલબ્ધિ જેમને પ્રાપ્ત થઈ ગઈ છે, વિપ્રુડૌષધિલબ્ધિ જેમને પ્રાપ્ત થઈ ગઇ છે, તથા બીજબુદ્ધિ લબ્ધિ-બીજના સમાન બુદ્ધિવાળી લબ્ધિ જેમને પ્રાપ્ત થઇ ગઇ છે કોષ્ઠબુદ્ધિ લબ્ધિ જેમને પ્રાપ્ત થઇ ગઈ છે પદાનુસારી લબ્ધિ જેમને પ્રાપ્ત થઇ ગઇ છે, સંભિન્નશ્રોતસ લબ્ધિ જેમને પ્રાપ્ત થઇ ચુકી છે, તેઓ વડે (અહિંસા સેવાયેલ છે. તથા

न्नश्रोतस उच्यन्ते, तथा– 'सुयधरेहिं' श्रुतधरैः=आचाराङ्गादिसूत्रधारकैः, तथा– 'मणवलिएहिं' मनोवलिकैः–दृढमनस्कैः–नानाविधपरीषहोपसर्गसंपातेऽपि येषां मनो धर्मात्किञ्चिन्मात्रमपि न चलति तैरित्यर्थः, 'वयवलिएहिं' वचोवलिकैः= वाग्बलयुक्तैः दुर्वादिसार्थापदार्थनिराकरणसमर्थवाणीबलोपेतैरित्यर्थः, 'कायवलिएहिं' कायबलिकैः=परीषहोपसर्गसहनसमर्थकायबलयुक्तैरित्यर्थः 'नाणवलिएहिं' ज्ञानबलिकैः–ज्ञानेन मत्यादिना बलिनस्तैस्तथोक्तैः–दृढज्ञानयुक्तैरित्यर्थः, 'दंसणवलिएहिं' दर्शनबलिकैः–दर्शनं–निःशङ्कितादितत्त्वश्रद्धानरूपं, तेन बलवन्तस्तैस्तथोक्तैः, 'चरित्तवलिएहिं' चारित्रबलिकैः, चारित्रं=षट्कायसंयमः, तद्रूपं यद्बलम्, तद्वद्भिरित्यर्थः, तथा 'खीरासवेहिं' क्षीरास्रवैः=क्षीरास्रवलब्धिधरैः, येषां वचनमाकर्ण्यमानं मनः शरीरसुखोत्पादनाय प्रभवति ते क्षीरास्रवा उच्यन्ते, तथा 'महुआसवेहिं' मध्वास्रवैः=शर्कराद्यपेक्षयापि मधुरं द्रव्यं मधु 'शहद' इति भाषाप्रसिद्धं, तदिव वचनम् आस्रवन्ति=णिस्सरयन्ति ये ते मध्वास्रवास्तैस्तथोक्तैः, तथा 'सप्पिआसवेहिं' सर्पिरास्रवैः=सर्पिः=अत्यन्तसुरभियुक्तं स्नेहयुक्तं च घृतमिव वचनमास्रवन्ति=निस्सारयन्ति ये सर्पिरास्रवास्तैस्तथोक्तैः, तथा 'अक्खीणमहाणसिएहिं' अक्षीणमहानसिकैः=महानसम्=अन्नपाकस्थानं, तदाश्रितत्वादन्नमपि महानसमुच्यते अक्षीणं महानसं येषां ते अक्षीणमहानसिकास्तैस्तथोक्तैः, येषामसाधारणान्तरायक्षयोपशमादल्पमात्रमपि पात्रपतितमन्नं गौतमादीनामिव लक्षसंख्यकेभ्योऽपि दीयमानं

(सुयधरेहिं) जो आचरांग आदि श्रुत के धारक हैं उनके द्वारा सेवित हुई है तथा (मणबलिएहिं, वयबलिएहिं, कायबलिएहिं) जो मनबल से युक्त हैं, वाग्बल से युक्त हैं, कायबल से युक्त हैं उनके द्वारा सेवित हुई है। तथा (नाणबलिएहिं, दंसणबलिएहिं चरित्तबलिएहिं) मत्यादिक ज्ञान से जो बलिष्ठ हैं, दर्शनबलिक हैं, चारित्रबलिक है उनके द्वारा सेवित हुई है, तथा (खीरासवेहिं, महुआसवेहिं, सप्पियासवेहिं, अखीणमहाणसिएहिं) क्षीरास्रवलब्धिधारी हैं, मध्वास्रवलब्धिधारी हैं अक्षीणमहानस ऋद्धिधारी हैं, उनके द्वारा सेवित हुई हैं, तथा (चार-

---

"सुयधरेहिं" આચારાંગ આદિ સૂત્રના જેઓ ધારક છે તેમના દ્વારા તે સેવાયેલ છે, તથા "मणवलिएहिं, वयबलिएहिं, कायबलिएहिं" જે મનોબળવાળા છે, વાગ્બળ વાળા છે, અને કાયબળવાળા છે તેમના દ્વારા તે સેવાયેલ છે, તથા "नाणबलिएहिं, दंसणबलिएहिं, चरित्तबलिएहिं" મત્યાદિક જ્ઞાન વડે જે બલિષ્ઠ છે, જે દર્શનબળયુક્ત તથા ચારિત્રબળયુક્ત છે તેમના વડે તે સેવાયેલ છે, તથા "खीरासवेहिं, महुआसवेहिं, सप्पियासवेहिं, अखीणमहाणसिएहिं" ક્ષીરાસ્રવ લબ્ધિધારી, મધ્વાસ્રવલબ્ધિધારી, સર્પિરાસ્રવલબ્ધિધારી અક્ષીણમહાનસઋદ્ધિધારી દ્વારા જે સેવાયેલ છે, તથા "चारणेहिं विज्जाहरेहिं" ચરણઋદ્ધિ ધારી

स्वयमेवाभुक्तं न क्षीयते ते अक्षीणमहानसा उच्यन्ते । तथा 'चारणेहिं' चारणैः= चरणं-गमनं तद्विद्यते येषां ते चारणाः चरणमिहविशिष्टमाकाशगमनागमनं-गृह्यते, ते द्विविधाः विद्याचारणाः जङ्घाचारणाश्च, तत्र-विद्याबलेन समुत्पन्नाकाश-गमनागमनलब्धिमन्तो विद्याचारणाः। इयं लब्धिर्निरन्तरपष्ठपष्ठतपश्चरण-कर्तुर्जायते। तथा ये मुनयश्चारित्रतपोविशेषप्रभावेण जङ्घोपरि हस्तस्थापनमात्रेण गगनगम-नागमनलब्धिसंपन्ना भवन्ति ते जङ्घाचारणा उच्यन्ते। इयं लब्धिर्निरन्तराष्टमाष्ट-मतपश्चरणकर्त्तुर्जायते। तत्र-विद्याचारणा जम्बूद्वीपापेक्षयाऽष्टमं नन्दीश्वरनाम-द्वीपं जङ्घाचारणाश्च त्रयोदशं रुचकवरद्वीपं गन्तुं समर्थाः। विद्याचारणाःप्रथमो-त्पातेन मानुषोत्तरं पर्वतं गच्छन्ति, द्वितीयेनोत्पातेन नन्दीश्वरम्, प्रतिनिवर्तमाना एकेनैवोत्पातेन स्वस्थानमागच्छन्ति । तथा-मेरुं गच्छन्तः प्रथमेनोत्पातेन नन्दन-वनं गच्छन्ति, द्वितीयेनोत्पातेन पण्डकवनम्, ततः प्रतिनिवर्तमाना एकेनोत्पातेन स्वस्थानमागच्छन्ति । जङ्घाचारणा हि एकेनोत्पातेन जम्बूद्वीपापेक्षया त्रयोदशं-रुचकवरद्वीपं गच्छन्ति। प्रतिनिवर्तमाना एकेनोत्पादेन नन्दीश्वरमायान्ति द्विती-येन स्वस्थानम् । यदि पुनर्मेरुशिखरं जिगमिषवस्तदा प्रथमेनोत्पातेन पण्डकव-नमधिरोहन्ति । प्रतिनिवर्त्तमानाश्च एकेनोत्पातेन नन्दनवनमागच्छन्ति, द्वितीयेन स्वस्थानम्। तथा 'विज्जाहरेहिं' विद्याधरैः, रोहिणीप्रज्ञप्त्यादिविद्याधारकैः= तथा 'चउत्थभत्तिएहिं' चतुर्थभक्तिकैः=एकोपवासकारकैः, 'छट्ठभत्तिएहिं' षष्ठभक्तिकैः, उपवासद्वयकारकैः, 'अट्ठमभत्तिएहिं' अष्टमभक्तिकैः=उपवासत्रय-कारकैः, तथा-'दसमभत्तिएहिं' दशमभक्तिकैः=उपवासचतुष्टयकारकैः, 'एवं

णेहिंविज्जाहरेहिं) चारणऋद्धिधारी हैं, रोहिणीप्रज्ञप्त आदि विद्या के धारी हैं उनके द्वारा सेवित हुई है । तथा (चउत्थभत्तिएहिं, छट्ठभत्तिएहिं, अट्ठ-मभत्तिएहिं दसमभत्तिएहिं एवं दुवालस-चउदस-सोलस-अद्धमास-मास -दोमास-तिमास-चउमास-पंचमास-छम्मास भत्तिएहिं) चतुर्थभक्तिक -जो एक उपवास करने वाले हैं, षष्ठिभक्तिक- दो उपवास के करने वाले हैं, अट्ठमभक्तिक-तीन उपवास करने वाले हैं, दसभक्तिक-चार उपवास

રોહિણીપ્રજ્ઞપ્તિ આદિ વિદ્યાના ધારક દ્વારા જે સેવાયેલ છે, તથા "चउत्थभ-त्तिएहिं, छट्ठभत्तएहिं, अट्ठमभत्तिएहिं, दसमभत्तिएहिं एवं दुवालस-चउदस-सोलस -अद्धमास-मास-दोमास-तिमास-चउमास-पंचमास-छम्मास भत्तिएहिं" ચતુર્થ-ભક્તિ-જે એક ઉપવાસ કરનાર છે, ષષ્ઠભક્તિક-જે બે ઉપવાસ કરનાર છે, અઠ્ઠમભક્તિક-ત્રણ ઉપવાસ કરનારા, દસમભક્તિક-ચાર ઉપવાસ કરનારા, એજ પ્રમાણે દ્વાદશ-પાંચ ઉપવાસ, ચતુર્દશ-છ ઉપવાસ, ષોડશ-સાત ઉપવાસ, અને

दुवालस–चउदस–सोलस–अद्धमास–मास–दोमास–तिमास–चउमास – पंचमास छम्मासभत्तिएहिं' एवं द्वादशचतुर्दश षोडशार्द्धमास मासद्विमासत्रिमासचतुर्मासपञ्च-मासषण्मासभक्तिकैः= द्वादशादि षण्मासान्तभक्ततपश्चरणयुक्तैः, तथा–'उक्खित्तचरएहिं' उत्क्षिप्तचरकैः=उत्क्षिप्तं=गृहस्थेन स्वप्रयोजनाय पाकपात्रादुद्धृतमन्य-पात्रास्थापितमेवान्नादिकं चरन्ति+अभिग्रहविशेषात्तद्गवेषणाय गच्छन्तीति-उत्क्षिप्तचरकास्तैः=दायकेन पूर्वमेवपाकभाजनादुद्धृतस्य गवेषकैरित्यर्थः, तथा 'निक्खीत्तचरएहि' निक्षिप्तचरकैः–निक्षिप्तं=गृहस्थेन स्वार्थं पाकपात्रादुद्धृत्यान्यपात्रे स्थापितमन्नादिकं चरन्ति=तथाविधाभिग्रहवशात्तद्गवेषणाय गच्छन्तोति निक्षिप्त चरकास्तैः=पाकपात्रोद्धृतान्यपात्रस्थापिताहारग्रहणाभिग्रहवद्भिरित्यर्थः। तथा–'अंतचरएहिं' अन्तचरकैः=अन्तं=नीरसं तक्रमिश्रितं पर्युषितं च वल्लचणकाद्यन्नं-चरन्ति=गवेषयन्ति, ये ते तथा तैस्तथोक्तैः अन्ताहारग्रहणाभिग्रहवद्भिरित्यर्थः। तथा–'पंतचरएहिं' प्रान्तचरकैः=प्रान्तं=पुराणकुलत्थवल्लचणकाद्यन्नं चरन्ति= गवेषयन्ति ये ते तथा तैस्तथोक्तैः=प्रान्ताहारग्रहणाभिग्रहवद्भिरित्यर्थः। तथा–'लूहचरएहिं' रूक्षचरकैः= रूक्षभोजनग्रहणाभिग्रहवद्भिः, तथा-'समुदाणचरएहिं' समुदानचरकैः=उच्चावचकुलेषु सामान्यरूपेण भिक्षाग्रहणशीलैः, तथा–'अण्णगिलाइएहिं' अन्नग्लायकैः–अन्नेन=अभि यह विशेषात् पर्युषितान्नभोजनेन ग्लायक=ग्लानिमापन्न कृश इत्यर्थस्तैः। तथा–'मोणचरएहिं' मौनचरकैः=मौनं-मौनव्रतं तेन चरन्ति ये ते मौनव्रतकाः, तथाविधाभिग्रहवशाद् भिक्षाविशुद्धिप्रश्ना-

---

के करने वाले हैं, इसी तरह द्वादश–पांच उपवास, चतुर्दश–छह उपवास, षोडश–सात उपवास, एवं अर्द्धमास, मास, द्विमास, त्रिमास, चतुर्मास,पञ्चमास, षण्मासभक्तिक–छ महीने के उपवास करनेवाले हैं उनके द्वारा यह सेवित हुई है, तथा (उक्खित्तचरएहिं, एवं निक्खिचरएहिं, अंतचरएहिं, पंतचरएहिं, लूहचरएहिं, समुदाणिचरएहिं, अण्णगिलाइएहिं, मोणचरएहिं) उत्क्षिप्तचरक हैं, निक्षिप्तचरक, अंतचरक हैं, प्रान्तचरक हैं, रूक्षचरक हैं, समुदानचरक हैं, अन्नग्लायक हैं, मौनचरक हैं,

---

અર્ધમાસ, માસ, બે માસ, ત્રણ માસ, ચાર માસ, પાંચ માસ, અને षण्मासभक्तिक–૭ માસના ઉપવાસ કરનારા દ્વારા તે સેવાયેલ છે. તથા 'उक्खित्तचरएहिं, एव निक्खितचरएहिं, अंतचरएहिं, पतचरएहिं, लुहचरएइं, समुदायचरएहिं, अण्णगिलाएहिं, मोणचरएहिं" જે ઉત્ક્ષિપ્તચરક છે, જે નિક્ષિપ્તચરક છે, જે અંતચરક છે, ને પ્રાન્તચરક છે, જે રૂક્ષચરક છે, જે સમુદાનચરક છે, જે અન્નગ્લાયક છે, જે મૌનચરક છે. તેઓના દ્વારા તે સેવાયેલ છે. તથા "संस–

तिरिक्तं मौनमास्थाय संचरणशीलाः, तथा-' संसट्ठकप्पिएहिं ' संसृष्टकल्पिकैः-' संसृष्टेन हस्तेन भाजनेन च दीयमानमन्नादि ग्राह्य' मित्येवंरूपः कल्प आचारो येषां ते संसृष्टकल्पिकास्तैस्तथोक्तैः, तथा-' तज्जायसंसट्ठकप्पिएहिं ' तज्जातसंसृष्टकल्पिकैः=यत्प्रकारं देयद्रव्यं तज्जातेन-तत्प्रकारेण द्रव्येण संसृष्टे हस्तभाजने ताभ्यां दीयमानं ग्राह्यमित्येवंरूपःकल्पः=समाचारो येषां ते तज्जातसंसृष्टकल्पिकास्तैस्तथोक्तैः, तथा ' उवनिहियएहिं ' उपनिहितकैः=उपनिहितं=दायकेन स्वयं भोक्तुं समीपे स्थापितम्, तेन चरन्ति ये ते उपनिहितकास्तैस्तथोक्तैः तथा=' सुद्धेसणिएहिं ' शुद्धैषणिकैः-शङ्कादिदोषपरिहारतः पिण्डग्रहणं शुद्धैषणा, तद्वन्तः शुद्धैषणिकास्तैस्तथोक्तैः, तथा' संखादत्तिएहिं ' संख्यादत्तिकैः=संख्याप्रधानाभिः पञ्चपादिपरिणाममवतीभिः दत्तिभिः सकृद्भक्तादिपात्रपातलक्षणाभिश्चरन्ति ये ते संख्यादत्तिकास्तैस्तथोक्तैः, तथा=' दिट्ठलाभिएहिं' दृष्टिलाभिकैः=दृष्टस्य=दृष्टिगोचरीभूतस्यैवान्नपानादेः लाभो येषां ते दृष्टिलाभिकास्तैस्तथोक्तैः, तथा-' अदिट्ठलाभिएहिं ' अदृष्टलाभिकैः=अदृष्टस्यापि पाकगृहमध्यान्निर्गतस्य कर्णात् श्रुतस्य भक्तादेरदृष्टाद्वा पूर्वमनुपलब्धाद् दायकाद् लाभो येषामस्ति तेऽदृष्टलाभिकास्तैस्तथोक्तैः, तथा=' पुट्ठलाभिएहिं' पृष्टलाभिकैः=पृष्टस्य=हे साधो ! किं ते दीयते इत्यादि रूपेण प्रश्नविषयी कृतस्य यो भिक्षाप्राप्तिरूपो लाभस्तद्ग्राहग्राहिलैः, तथा-'आयंबिलिएहिं' आचामाम्लिकैः=आचामाम्लव्रतयुक्तैः, तथा—' पुरिमड्ढिएहिं ' पूर्वार्द्धिकैः=पारणायामपि पूर्वार्द्धदिनेऽशनपानादि प्रत्याख्यानशीलैः, तथा-' एक्कासणिएहिं ' एकाशनिकैः, पारणायामपि एकाशनव्रतधारिभिः,

---

उनके द्वारा सेवित है। तथा (संसट्ठकप्पिएहिं, तज्जायसंसट्ठकप्पिएहिं, उवनिहिएहिं, सुद्धेसणिएहिं, संखादत्तिएहिं, दिट्ठलाभिएहिं, अदिट्ठलाभिएहिं, पुट्ठलाभिएहिं, आयंबिलिएहिं, पुरिमड्ढिएहिं) संसृष्टकल्पिक हैं, तज्जातसंसृष्टकल्पिक हैं, उपनिहितक हैं, शुद्धैषणिक हैं, संख्यादत्तिक हैं, दृष्टिलाभिक हैं, अदृष्टिलाभिक हैं, पृष्टलाभिक हैं, आचामाम्लव्रतयुक्त हैं, पूर्वार्द्धिक हैं, उनके द्वारा यह अहिंसा पाली गई है। तथा (एक्कासणिएहिं, निव्विइएहिं, भिन्नपिंडवाइएहिं, परिमियपिंडवाइएहिं-

---

ट्ठकप्पिएहिं, तज्जायसंसट्ठ कप्पिएहिं, उवनिहिएहिं, सुद्धेसणिएहिं, संखादत्तिएहिं दिट्ठलाभिएहिं, अदिट्ठलाभिएहिं, पुट्ठलाभिएहिं, आयंबिलिएहिं पुरिमड्ढिएहिं " જે સંસૃષ્ટ કલ્પિક છે તજ્જાત સંસૃષ્ટ કલ્પિક છે, ઉપનિહિતક છે, શુદ્ધેષણિક સંખ્યાદત્તિક છે, દૃષ્ટિલાભિક છે, અદૃષ્ટલાભિક છે, પૃષ્ટલા-ભિક છે, આચામામ્લ વ્રત યુક્ત છે, પૂર્વાર્દ્ધિક છે, તેમના દ્વારા આ અહિંસા પાળવામાં આવે છે તથા " एक्कासणिएहिं, निव्विइएहिं, भिन्नपिंडवाइएहिं, परिमियपिंडवाइएहिं, अंताहारेहिं,

तथा-' निव्विइएहिं ' निर्विकृतिकैः=विकृतिभ्यो घृतादिपदार्थेभ्यो निर्गता ये ते निर्वृतिकास्तैस्तथोक्तैः-विकृतिप्रत्याख्यानशीलैरित्यर्थः, तथा ' भिण्णपिंडवाइएहिं ' भिन्नपिण्डपातिकैः-भिन्नस्य=त्रुटितस्य पिण्डस्य=सक्तुकादिरूपस्य मोदकस्य स्वतो भिन्नात् पिण्डात् यः पातः-पात्रे पतनं येषां ते भिन्नपिण्डपातिकास्तैस्तथोक्तैः, तथा' परिमियपिंडवाइएहिं ' परिमितपिंडपातिकैः-परिमितो द्रव्यादिः पिण्डपातो भक्तादिलाभो येषामस्ति, ते परिमितपिंडपातिकास्तैस्तथोक्तैः, तथा-' अंताहारेहिं ' अन्ताहारैः=अन्तं=नीरसं तक्रमिश्रितपर्युषितं च वल्लचणकाद्यन्नमाहरन्ति ये ते तैः, तथा-' पंताहारेहिं ' प्रान्ताहारैः=प्रान्तं=पुरातनकुलत्थवल्लचणकाद्यन्नम् आहरन्ति ये ते तैः, तथा-' अरसाहारेहिं ' अरसाहारैः =अरसो रसवर्जित आहारो येषां तेऽरसाहारास्तैस्तथोक्तैः-हिङ्ग्वादि संस्कार वर्जिताहारग्रहणवद्भिः, तथा-' विरसाहारेहिं ' विरसाहारैः-विरसं=विगतरसं पुराणधान्यौदनादि आहरन्तीति विरसाहारास्तैः, ' लूहाहारेहिं ' रूक्षाहारैः=रूक्षं घृतादिवर्जितमाहरन्तीति रूक्षाहारास्तैस्तथोक्तैः, तथा ' तुच्छाहारेहिं ' तुच्छाहारैः=तुच्छं=बदरीचूर्णादिकं कुलत्थकोद्रवादिकं च आहारन्ति ये ते तुच्छाहारास्तैः, तथा-' अंतजीवीहिं ' अन्तजीविभिः-अन्तेन जीवन्ति ये तेऽन्तजीविनस्तैः, ' पंतजीविहिं ' प्रान्तजीविभिः ' लूहजीविहिं ' रूक्षजीविभीः=' तुच्छजीविहिं ' तुच्छजीविभि', तथा ' उवसंतजीविहिं ' उपशान्तजीविभिः-अशनादीनां प्राप्तव-

---

अंताहारेहिं, पंताहारेहिं, अरसाहारेहिं, विरसाहारेहिं, लूहाहारेहिं, तुच्छाहारेहिं, अंतजीविहिं, पंतजीविहिं, लूहजीविहिं, तुच्छजीविहिं, उवसंतजीविहिं, पसंतजीविहिं, विवित्तजीविहिं, अखीरमहुसप्पिएहिं, अमज्जमंसासिएहिं) एकाशनिक हैं, विकृतिप्रत्याख्यानशील हैं, भिन्नपिंडपातिक हैं, परिमितपिंडपातिक हैं, अन्ताहार वाले हैं, प्रान्ताहार वाले हैं, अरसाहार वाले हैं, विरसाहार वाले हैं, रूक्ष आहार करने वाले हैं, तुच्छाहार वाले हे, अंतजीवी हैं, प्रान्तजीवी हैं, रूक्षजीवी हैं, तुच्छ जीवी हैं, उपशान्त जीवी हैं प्रशान्त जीवी हैं, विविक्त जीवी हैं, अक्षीर मधुस-

---

पंताहारेहिं, अरसाहारेहिं, विरसाहारेहिं, लूहाहारेहिं, तुच्छाहारेहिं, अंतजीविहिं, पंतजीविहिं, लूहजीविहिं, तुच्छजीविहिं, उवसंतजीविहि, पसत्थजीविहिं विवित्तजीविहिं, अखीरमहुसप्पिएहि, अमज्ज मंसासिएहिं " જે એકાશનિક છે, વિકૃતિ પ્રત્યાખ્યાનશીલ છે, ભિન્નપિંડ પાતિક છે, પરિમિતપિંડ પાતિક છે, અન્તહાર વાળા છે, પ્રાન્તાહાર વાળા છે, અરસાહારવાળા છે, વિરસાહાર વાળા છે, રૂક્ષ આહાર કરનારા છે, તુચ્છ આહાર કરવા વાળા છે, અન્તજીવી છે, પ્રાન્તજીવી છે, રૂક્ષજીવી છે, તુચ્છજીવી છે, ઉપશાન્તજીવી છે, પ્રશાન્તજીવી છે, વિવિક્ત-

प्राप्तौ च सत्यामुपशान्ततया जीवन्ति ये ते उपशान्तजीविनस्तैस्तथोक्तैः बहिर्वृत्त्यावदनचक्षुरुपादीनामम्लानत्वमुपशान्तत्वम्। तथा 'पसंतजीविहिं' प्रशान्तजीविभिः-अन्तर्वृत्त्या क्रोधादीनामुपशमनं प्रशान्तत्वम्। तथा-'विवित्तजीविहिं' विविक्तजीविभिः=विविक्तैः दोषवर्जितैरन्नादिभिर्जीवन्ति ये ते विविक्तजीविनस्तैस्तथोक्तैः, तथा-'अखीरमहुसप्पिएहिं' अक्षीरमधुसर्पिष्कैः-क्षः क्षीरं=दुग्धं, मधु-शर्करादिमधुरद्रव्यम्, सर्पिः=घृतम्, एतानि न सन्ति अशनतया येषां तेऽक्षीरमधुसर्पिष्कास्तैस्तथोक्तैः, तथा-'अमज्जमंसासिएहिं' अमद्यमांसाशिकैः-मद्यमांसं च येषामाहारो नास्तीति भावः, मांसाहारवर्जकैःतथा-'ठाणाइएहिं' स्थानातिगैः=स्थानं=कायोत्सर्गादिकमतिशयेन गच्छन्ति=प्राप्नुवन्ति ये ते स्थानातिगाः कायोत्सर्गकारिणस्तैः 'पडिमट्ठाइएहिं' प्रतिमास्थायिकैः-प्रतिमया = एकरात्रिक्यादिकया कायोत्सर्गविशेषेणैव तिष्ठन्तीत्येवं शीला ये ते प्रतिमास्थायिनस्तैस्तथोक्तैः, तथा 'ठाणुक्कडुएहिं' स्थानउत्कुटुकैः=स्थानमुत्कुटुकं येषां ते स्थानोत्कुटुकास्तैस्तथोक्तैः, तथा-'वीरासणिएहिं' वीरासनिकैः=सिंहासनोपविष्टस्य भुविन्यस्तपादस्य अपनीतसिंहासनस्येव यदवस्थानं तद् वीरासनं, तदस्ति येषां ते वीरासनिकास्तैः, तथा-'णेसज्जिएहिं' नैषधिकैः, निषद्या=समपुततयाऽवस्थानं, तया चरन्ति ये ते नैषधिकास्तैस्तथोक्तैः, तथा-डंडाइएहिं' दण्डायत्तिकैः=दण्डा इव भून्यस्ततया आयतं शरीरं दण्डायतं तदस्ति येषां ते दण्डायतिकास्तैस्तथोक्तैः, दण्डासनकारिभिरित्यर्थ, तथा-'लगंडसाइएहिं' लगण्डशायिकैः=लगण्डं=वक्र काष्ठं, तद्वत् मस्तकस्य पार्ष्णीनां 'एड़ी' इति लोकप्रसिद्धानां च भुविलगनेन

पिष्क हैं, अमद्यमांसाशिक (मद्यमांसादिक का सेवन नहीं करनेवाले) हैं. उन्होंने उनका सेवन किया है। तथा जो (ठाणाइएहिं, पडिमट्ठाइएहिं, ठाणुक्कडिएहिं. वीरासणिएहिं, णेसज्जिएहिं डंडाईएहिं, लगण्डसाईएहिं, एगपासगेहिं, आयावएहिं; अप्पावडेहिं; अणिट्ठुभएहिं, अंकुडुयएहिं, धुयकेसमंसलोमनहेहिं, सव्वगायपडिकम्मविप्पमुक्केहिं समणुचिन्ना) स्थानातिग हैं, प्रतिमास्थायिक है, स्थानोत्कुटिक हैं, वीरासनिक हैं, नैषधिक हैं, दण्डायतिक हैं, लगण्डशायिक हैं, एकपार्श्वक हैं; आतापक हैं; अप्रावृत

જીવી છે, અક્ષીર મધુ સર્પિષ્ક છે અમદ્યમાંસાશિક છે, તેમણે તેનું સેવન કર્યું છે તથા જે 'ठाणाइएहिं, पडिमट्ठाइएहिं, ठाणुकडिएहिं, वीरासणिएहिं, णेसज्जिएहिं, डंडाइएहिं, लगणुसाईएहि एगपासगेहिं, आयावएहिं, अप्पावडेहिं, अणिट्ठभएहिं अंकडुयएहिं, धुयकेसमंसलोमनहेहिं, सव्वगायपडिकम्मविप्पमुक्केहिं समणुचिन्ना" સ્થાનાતિગ છે, પ્રતિમાસ્થાયિક છે, સ્થાનોત્કુટિક છે, વીરાસનિક છે, નૈષધિક છે, છે, દંડાયતિક છે, લગુંડશાયિક છે, એક પાર્શ્વક છે, અતાપક છે, અપ્રાવૃત્ત

पृष्टस्य चाल्यनेन ये शेरते ते लगण्डशायिनस्तैः, तथा–' एगपासिगेहिं ' एकपार्श्विकैः–एक एव पार्श्वो भूमौ शयनावस्थायां येषां ते एकपार्श्विकाः=एकपार्श्वशायिनस्तैः, तथा ' आयावएहिं ' आतापकैः=आतपन्ति ये ते आतापकाः=शीतोष्णाद्यातापनाकारिणस्तैः, तथा–' अवाउडएहिं ' अप्रावृतैः=हेमन्ते प्रावरणरहितैरित्यर्थः, ' अणिट्ठुयएहिं ' अनिष्ठीवकैः=मुखश्लेष्मणामपरिष्ठापकैरित्यर्थः, तथा ' अकंडुयएहिं ' अकण्डूयकैः=गात्रकण्डूयनाकारकैरित्यर्थः, तथा–' धुयकेसमंसुलोमनहेहिं ' धूतकेशश्मश्रुलोमनखैः=धूताः=संस्कारापेक्षयात्यक्ताः केशाः श्मश्रूणि=' दाढी ' इति प्रसिद्धानि=लोमानि=रोमाणि नखाः=यैस्ते तथोक्तास्तैः, संस्कारवर्जितकेशश्मश्रुरोमनखधारिभिरित्यर्थः, तथा–' सव्वगायपडिकम्मविप्पमुक्केहिं ' सर्वगात्रप्रतिकर्मविप्रमुक्तैः=सर्वगात्राणां यत्प्रतिकर्म=संस्कारस्तेन विमुक्तास्तैः=सर्वविधगात्रसंस्कारवर्जितैः, आभिनिबोधिकज्ञानिनमारभ्य सर्वगात्रप्रतिकर्मविप्रमुक्तैरनेकमहापुरुषैरियमहिंसा भगवती, 'समणुचिण्णा' समनुचीर्णा=आसेविता।

हैं, अनिष्ठीवक हैं, अकण्डूयक हैं, धूत केशश्मश्रुनखवाले (संस्काररहित केश श्मश्रुनखरोमवालेने) हैं, तथा सर्वगात्रप्रतिकर्म विमुक्त है ऐसे इन आभिनिबोधिक ज्ञानियों से लेकर सर्वगात्रप्रतिकर्म विमुक्त तक के अनेक महापुरुष के यह अहिंसा भगवती आसेवित हुई है। आमशौंषधि आदि का अर्थ इस कार है-तपश्चरण के प्रभाव से मुनिजनों को ऐसी लब्धि उत्पन्न हो जाती है कि जिससे उनके शरीर का स्पर्श ही समस्त रोगों का अपहारक हो जाता है। इस लब्धि के धारी जो मुनिजन होते हैं वे आमशौंषधि प्राप्त कहे जाते हैं। इसी तरह तपश्चरण से श्लेष्मौषधिलब्धि प्राप्त होती है। इसी लब्धी में मुनिजनों का श्लेष्मा ही (कफ) औषधि का काम करता है। जल्ल नाम शरीर से उत्पन्न हुए मैल का है। जिनका मैल ही औषधि

છે, અનિષ્ઠીવક છે, અકંડૂયક છે, ધૃતકેશશ્મશ્રુ નખવાળા છે, તથા સર્વગાત્ર પ્રતિકર્મ વિમુક્ત છે, એવા તે આભિનિબોધિક જ્ઞાનીઓથી શરૂ કરીને સર્વગાત્ર પ્રતિકર્મ વિમુક્ત સુધીના અનેક મહાપુરુષો દ્વારા ભગવતી અહિંસાનું સેવન થયું છે. " अमर्शौषधि " વગેરેનો અર્થ નીચે પ્રમાણે છે—

તપસ્યાના પ્રભાવથી મુનિજનોને એવી લબ્ધિ પ્રાપ્ત થાય છે કે જેના પ્રભાવથી તેઓના શરીરનો સ્પર્શ જ સમસ્ત રોગોનો નાશ કરે છે આ લબ્ધિવાળા જે મુનિ હોય છે તેમને " अमर्शौषधि प्राप्त " મુનિ કહેવાય છે. એ જ પ્રમાણે તપશ્ચર્યાના પ્રભાવથી ' श्लेष्मौषधिलब्धि ' પ્રાપ્ત થાય છે આ લબ્ધિથી મુનિજનોનું શ્લેષ્મા જ ઔષધિનું કામ કરે છે શરીરમાંથી ઉત્પન્ન થયેલ મેલને ' जल्ल ' કહે છે, જેમનો મેલ જ ઔષધિની ગરજ સારે છે તેઓ

का काम देता है वे जल्लौषधि प्राप्त मुनिवर हैं। मुख से निर्गत थूक की छोटी २ बिन्दुओं का नाम विप्रुड है। तपस्या के प्रभाव से ये मुख की बिन्दुएँ जिनकी रोगों को नष्ट करदेती हैं वे मुनिजन विप्रुडोषधि प्राप्त कहे जाते हैं। मुनिजनों की विशिष्ट तपस्या के अनुष्ठान से कर्ण, वदन, नासिका, जिह्वा और नयन इन सब इन्द्रियों का मैल औषधि का काम देता है। इस लब्धि का नाम सर्वौषधि लब्धि है। यह लब्धि जिन मुनिजनों को प्राप्त होती है उनका नाम सर्वौषधि लब्धि प्राप्त है। जिस प्रकार बीज से विशाल काय तरु उत्पन्न हो जाता है उसी तरह जिस एक पद वाली बुद्धि से विविध अर्थों का बोध मुनिजनों को हो जाता है। इसका नाम बीजबुद्धि है। यह बुद्धि भी विशिष्ट तपस्या के प्रभाव से ज्ञानावरणीय कर्म के विशिष्ट क्षयोपशम से मुनिजन प्राप्त करते हैं। तात्पर्य इसका इस प्रकार है कि जैसे मानों इस लब्धि के धारी मुनिजन को "उत्पाद व्यय ध्रौव्ययुक्तं सत्" (तत्त्वार्थ सूत्र २९ वां सूत्र) इस सूत्र का बोध हो गया, ऐसे पद अर्थपद कहलाते हैं, बीज-भूत इस एक ही अर्थपद के अवगत होने पर वे अपनी बुद्धि के प्रभाव से अन्य और भी विशेष अर्थ का बोध कर लिया करते हैं। जिस

"જલ્લૌષધિ પ્રાપ્ત" મુનિવરો કહેવાય છે મોઢામાંથી નીકળતા થૂકનાં નાનાં નાનાં બિંદુઓને 'विप्रुड' કહે છે. તપસ્યાના પ્રભાવથી જેમના મુખના એ બિન્દુઓ રોગોનો નાશ કરી નાખે છે તેવા મુનિવરોને 'विप्रुडौषधि प्राप्त' કહે છે. મુનિજનોની વિશિષ્ટ તપસ્યાના આચરણથી, કાન, મુખ, નાક, જીભ અને આંખો એ બધી ઈન્દ્રિયોનો મેલ ઔષધિ જેવું કામ આપે છે. આ લબ્ધિને" सर्वौषधिलब्धि " કહે છે આ લબ્ધિ જે મુનિવરોને પ્રાપ્ત થાય છે તેમનું નામ "सर्वौषधिलब्धिप्राप्त" છે. જેમ બીજમાંથી વિશાળકાય વૃક્ષ ઉત્પન્ન થાય છે, એ જ પ્રકારે જે એક પદ વાળી બુદ્ધિથી મુનિજનોને વિવિધ અર્થોનો બોધ થાય તે, તેનુ નામ 'बीजबुद्धि' છે તે બુદ્ધિ પણ વિશિષ્ટ તપસ્યાના પ્રભાવથી જ્ઞાનાવરણીય કર્મના વિશિષ્ટ ક્ષયોપશમથી મુનિજનો પ્રાપ્ત કરે છે તેનું તાત્પર્ય એવુ છે કે-જેવુ એ લબ્ધિના ધારક મુનિવરને "उत्पाद-व्ययध्रौव्ययुक्तं सत्" "तत्त्वार्थसूत्र २९ मु सूत्र" આ સૂત્રનો બોધ થઈ ગયો, એવા પદને અર્થપદ કહે છે, બીજભૂત આ એક જ અર્થપદનો બોધ થતાં તેઓ પોતાની બુદ્ધિના પ્રભાવથી વળી બીજાં વિશેષ અર્થનો પણ બોધ કરી લીધા કરે છે. જેમ કોષ્ઠ-કોઠીમા નાખેલું અનાજ લાંબા સમય સુધી

प्रकार कोष्ठ-कोठी में प्रक्षिप्त अनाज बहुत समयतक सुरक्षित रहा करता है उसी प्रकार प्राप्त इस लब्धि के प्रभाव से अवगत सूत्र और अर्थ ये दोनों बहुत समय तक मुनिजनों को धारणारूप में स्थिर रहते हैं-वे उन्हें विस्मृत नहीं होते। यह बुद्धि जिन मुनिजनों को प्राप्त हो जाती है वे कोष्ठबुद्धि के धारी मुनिजन हैं। सूत्रावयव रूप एक ही पद के उपलब्ध होने पर जो सैकड़ों पदों का अनुसरण कर लेते हैं वे मुनि-जन पदानुसारी लब्धि के धारी कहे जाते हैं। जिस लब्धि से एक ही किसी इन्द्रिय से मुनिजन सर्वेन्द्रियगम्य विषयों को जान लेते हैं उस लब्धि का नाम संभिन्नश्रोतस् है। यह लब्धि जिन मुनिजनों को प्राप्त होती है वे मुनिजन संभिन्नश्रोता हैं। आचारांग आदि सूत्रों के पाठी जो मुनिजन होते हैं वे श्रुतधर कहे जाते हैं। अनेक प्रकार के परीषह और उपसर्गों के आने पर भी जिन मुनिजनों का मन धर्म से थोड़ा सा भी विचलित नहीं होता है उनका नाम मनोबलिक है। जो मुनि जन अपनी वाणी के द्वारा दुर्वादियों द्वारा प्ररूपित मिथ्याप्ररूपणाओं को ध्वस्त करने में समर्थ बनते हैं उन मुनियों को वचोबलिक कहा जाता है। जो मुनिजन कठिन से कठिन परीषह और उपसर्गों को सहन कर-नेमें शक्ति शाली होते हैं वे कायबलिक हैं। मत्यादि ज्ञान से जिनका

સુરક્ષિત રહે છે તેમ પ્રાપ્ત થયેલી આ લબ્ધિના પ્રભાવથી અવગતસૂત્ર અને અર્થ તે બન્ને ઘણા સમય સુધી મુનિજનોને ધારણા રૂપે સ્થિર રહે છે-તેમને તે ભૂલતો નથી. આ બુદ્ધિ જે મુનિજનોને પ્રાપ્ત થાય છે તેઓ કોષ્ટબુદ્ધિના ધારક મુનિવરો છે. સૂત્રના અવયવરૂપ એક જ પદ ઉપલબ્ધ થતાં જેઓ સેંકડો પદોનું અનુસરણ કરી લે છે, તેવા મુનિજનોને પદાનુસારીલબ્ધિના ધારક કહેવાય છે જે લબ્ધિના પ્રભાવથી કોઇ એક જ ઇન્દ્રિય વડે મુનિજન સર્વેન્દ્રિયગમ્ય વિષયોને જાણી લે છે તે લબ્ધિનું નામ સંભિન્નશ્રોતસ છે. આ લબ્ધિ જે મનિજનોને પ્રાપ્ત થાય છે તે મુનિજન સંભિન્નશ્રોતા કહેવાય છે, આચારાંગ આદિ સૂત્રોનુ પઠન કરનારા જે મુનિજન હોય છે તેમને શ્રુતધર કહે છે. અનેક પ્રકારના પરીષહ અને ઉપસર્ગો નડવા છતાં પણ જે મુનિજ-નોનું મન ધર્મમાંથી તલભાર પણ વિચલિત થતું નથી તેમને મનોવલિક કહે જે મુનિજનો દુર્વાદીઓ દ્વારા પ્રરૂપિત મિથ્યા પ્રરૂપણાઓનું ખંડન કરવાને સમર્થ થાય છે તે મુનિવરોને વચોવલિક કહે છે જે મુનિજનો આકરામાં આકરા પરીષહો અને ઉપસર્ગોને સહન કરવાને શક્તિમાન હોય છે તેઓ

आत्मबल चढ़ावढ़ा होता है वे ज्ञानबलिक हैं। निःशंकित आदि अपने अंगों से युक्त जिनका तत्त्वश्रद्धानरूप दर्शन होता है और इस दर्शन से जिनकी आत्मा बलिष्ठ बनी रहती है वे दर्शनबलिक हैं। षट्काय के जीवों का संरक्षण करना इसका नाम संयम है, इस संयमरूपचारित्र के बल से जिनकी आत्मा बलशाली होती है वे चारित्रबलिक हैं। जिनके मुख से निकला हुआ वचन सुनते ही मन और शरीर को सुखोत्पादक होता है वे क्षीरास्रवलब्धि के धारी मुनिजन हैं। मिसरी आदि मिष्ट द्रव्य से भी अधिक मिष्ट–मधु शहद होता है, शहद जैसा मीठा जो वचन निकालते हैं बोलते हैं वे मध्वास्रव लब्धि के धारी मुनिजन कहलाते हैं। सर्पिरास्रवलब्धि के प्रभाव से मुनिजनों का वचन अत्यंतसुरभि–युक्त एवं स्नेहयुक्त घृत के जैसा बोलने पर सुनने वालों को लगता है। महानस शब्द का अर्थ भोजन बनाने का स्थान है, उसके आश्रित होने से भोजन को भी महानस कहते हैं। जिनमुनिजनों को यह अक्षीण-महानस नामकी लब्धि उत्पन्न हो जाती है उनके असाधारण, अन्तराय के क्षयोपशम से अल्पमात्र भी पात्रपतित अन्न गौतमादिक ऋषियों की तरह एक लाख व्यक्तियों को दे देने पर भी जब तक वह स्वयं न खालेवे

कायवलिक કહેવાય છે મત્યાદિ જ્ઞાનથી જેનું આત્મબળ વૃદ્ધિ પામ્યું હોય છે તેમને જ્ઞાનવલિक કહે છે, નિઃશંકિત આદિ અંગો વડે યુક્ત જેમનું તત્ત્વ-શ્રદ્ધાનરૂપ દર્શન હોય છે અને એ દર્શનથી જેમનો આત્મા બળવાન બનેલા હોય છે તેવા મુનિવરોને दर्शनवलिक કહે છે. છકાયના જીવોનું રક્ષણ કરવું તે સંયમ કહેવાય છે તે સંયમરૂપ ચારિત્રના બળથી જેમનો આત્મા બળવાન હોય છે તેમને चारित्रवलिक કહે છે જેમના મુખમાંથી નીકળેલ વચન સાંભ-ળતાં જ મન અને શરીરને સુખ થાય છે તેમને क्षीरास्रवलब्धि ધારી મુનિ કહેવાય છે. સાકર વગેરે મિષ્ટ દ્રવ્યો કરતાં પણ વધારે મિષ્ટ મધ હોય છે મધ જેવાં મીઠાં વચન જે બોલે છે તેવા મુનિજનોને मध्वास्रवलब्धि ધારક કહેવાય છે સર્પિરાસ્રવલબ્ધિના પ્રભાવથી મુનિજનોનાં વચન અત્યંત સુરભિ-વાળા તથા સ્નિગ્ધ ઘીના જેવાં શ્રોતાજનોને લાગે છે महानस શબ્દનો અર્થ ભોજન બનાવવાનુ સ્થાન છે, તેનું આશ્રિત હોવાથી ભોજનને પણ મહાનસ કહે છે. જે મુનિજનોને આ अक्षीणमहानस નામની લબ્ધિ ઉત્પન્ન થાય છે તેમના અસાધારણ અન્તરાયના ક્ષયોપશમથી સહેજ પણ પાત્રમાં પડેલું અન્ન ગૌતમાદિ ઋષિયોની જેમ એક લાખ વ્યક્તિઓને આપી દેવા છતાં પણ જ્યાં સુધી તેઓ પોતે ખાઇ લેતાં નથી ત્યાં સુધી પૂરૂ થતું નથી. તેનો ભાવાર્થ

–तबतक समाप्त नहीं होता है। तात्पर्य इसका यह है कि इस लब्धि धारी मुनिजनों के पात्र में दिया थोड़ा भी अन्न लाखों मुनिजन भी उससे आहार कर ले वें परन्तु वह तबतक समाप्त नहीं होता है कि जबतक वह लब्धि धारी उसे स्वयं नहीं खा लेता है। इसी प्रकार इसके दाता के विषय में भी समझ लेना चाहिये। यह लब्धि गौतमादि ऋषि-जनों को थी। चारणलब्धि का यह मतलब है कि जिस लब्धि के प्रभाव से आकाश में मुनिजनों का आना जाना होता है। चरण–गमन–यह गमन जिनके होता है उनका नाम चारण है। इस लब्धि के धारी मुनि-जन दो प्रकार के होते हैं–(१) विद्याचारण (२) जंघाचरण। जिन्हें विद्या के बल से यह आकाश में गमनागमनरूपलब्धि उत्पन्न होती है वे विद्याचारण मुनिजन है। यह लब्धि उन मुनिराजों को उत्पन्न होती है जो निरन्तर षष्ठ षष्ठ की तपश्चर्या करते रहते हैं। तथा जो मुनि चारित्ररूप तपविशेष के प्रभाव से ऐसी लब्धि संपन्न बन जाते हैं कि वे जंघा के ऊपर हाथ रखते ही आकाश में उड़ जाते हैं, इसी लब्धि का नाम जंघा चारण है। यह लब्धि उन मुनिराजों को प्राप्त होती हैं जो निरन्तर अष्टम अष्टम की तपस्या करते हैं। इनमें जो विद्याचा-रण मुनिजन होते हैं वे इसके बल पर जंबूद्वीप की अपेक्षा से आठवां

એ છે કે આ લબ્ધિધારી મુનિવરોનાં પાત્રમા પડેલ અન્ન, તેમાંથી લાખો મુનિજનો આહાર લે તો પણ જ્યાં સુધી તે લબ્ધિધારી મુનિ પોતે જ તે ખાઇ જતા નથી ત્યાં સુધી તે સમાપ્ત થતું નથી આ પ્રમાણે તેના દાતાને વિષે પણ સમજી લેવુ આ લબ્ધિ ગૌતમાદિ ઋષિજનોને પ્રાપ્ત થયેલ હતી. “ चरणलब्धि ” એવા પ્રકારની લબ્ધિ છે કે જેના પ્રભાવથી મુનિજનો આકા-શમા અવર જવર કરી શકે છે, चरण–ગમન–તે ગમન– તે જેમનું હોય છે તેમને चारण કહે છે આ લબ્ધિધારી બે પ્રકારના મુનિજન છે (૧) विद्याचरण (२) जंघाचरण જેમને વિદ્યાના પ્રભાવથી આકાશમાં ગમનાગમતરૂપ લબ્ધિ પ્રાપ્ત થાય છે તેઓ “ વિદ્યાચારણ ” મુનિજન કહેવાય છે. આ લબ્ધિ નિરંતર છઠ, છઠની તપસ્યા કરનાર મુનિજનોને પ્રાપ્ત થાય છે. તથા જે મુનિયો ચારિત્રરૂપ તપ વિશેષના પ્રભાવથી એવી લબ્ધિયુક્ત થઇ જાય છે કે તેઓ જંઘા પર હાથ મૂકતા જ આકાશમા ઉડી જાય છે, એ લબ્ધિનુ નામ જઘા-ચારણ છે. નિરન્તર અઠમ અઠમની તપસ્યા કરનાર મુનિજનોને આ લબ્ધિ પ્રાપ્ત થાય છે તેઓમા જેઓ વિદ્યાચારણ મુનિજન છે તેઓ તેના પ્રભાવથી જંબૂદ્વીપની અપેક્ષાએ આઠમો જે નંદીશ્વર નામનો દ્વીપ છે ત્યાં સુધી જઇ

जो नंदीश्वर नाम की द्वीप है वहां तक आ जा सकते हैं। तथा जो-जंघाचारण मुनिजन हैं वे तेरहवां द्वीप जो रुचकवर द्वीप हैं वहां तक आ जा सकते हैं। विद्याचरण प्रथम उडान में मानुषोत्तर पर्वत तक चले जाते हैं, और दूसरी उडान में नंदीश्वर द्वीप तक, फिर वे जब वहां से होते हैं तो एक ही उडान में अपने स्थान पर वापिस आ जाते हैं। तथा मेरु पर जाते हुए वे प्रथम उत्पात से नंदनवन तक जाते हैं और द्वितीय उत्पात से पण्डक वनतक जाते हैं, फिर वे जब वहां से वापिस होते हैं तो एक ही उत्पात में अपने स्थान पर आ जाते हैं। जंघाचारण जो मुनि-जन होते हैं वे जंबूद्वीप की अपेक्षा एक ही उडान में तेरहवें रुचकवर द्वीप में पहुँच जाते हैं, और वहां से वापिस होते समय एक ही उडान में नंदीश्वरद्वीप में आ जाते हैं। और दूसरी उडान में अपने स्थान पर आ पहुँचते हैं। यदि वे सुमेरुपर्वत पर जाने के अभिलाषी होते हैं तब प्रथम उत्पातमें पंडकवन में जाते हैं। फिर वापिस होते समय एक ही उत्पात से नंदनवन में और द्वितीय उत्पातमें अपने स्थान पर आ जाते हैं। रोहिणी प्रज्ञप्ति आदि विद्याओं के जो धारण करने वाले होते हैं वे विद्याधारक हैं। एक उपवास का नाम चतुर्थभक्त, दो उपवास का नाम षष्ठभक्त, तीन उपवासका नाम अष्टभक्त, चार उपवास का नाम दश-

આવી શકે છે, તથા જે જંઘાચરણ મુનિજનો છે તેઓ તેરમો રુચકવર નામનો દ્વીપ છે ત્યાં સુધી જઇ આવે શકે છે. વિદ્યાચારણ પહેલાં ઉડ્ડયનમાં માનુષોત્તર પર્વત સુધી ચાલ્યા જાય છે, બીજાં ઉડ્ડનમાં નંદીશ્વર દ્વીપ સુધી જાય છે પછી જ્યારે તેઓ ત્યાંથી પાછા ફરે છે ત્યારે એક જ ઉડ્ડયનમાં પોતાના સ્થાને આવી જાય કરે તથા મેરુ જતાં તેઓ પહેલા ઉડ્ડયનમાં નંદનવન સુધી જાય છે. અને બીજા ઉડ્ડયને પંડક વન સુધી જાય છે. પછી જ્યારે તેઓ ત્યાંથી પાછા આવે છે. ત્યારે એક જ ઉડ્ડયનમાં પોતાના સ્થાને આવી જાય છે. જંઘા-ચરણ મુનિજન જંબૂદ્વીપની અપેક્ષાએ એક જ ઉડ્ડયનમાં તેરમાં રુચકવર દ્વીપમાં પહોંચી જાય છે, અને ત્યાથી પાછા ફરતા એક જ ઉડ્ડયને તેઓ નંદીશ્વર દ્વીપમા આવી જાય છે. અને બીજાં ઉડ્ડયને પોતાને સ્થાને પહોંચી જાય છે. જો તેઓ સુમેરુ પર્વત પર જવાની ઈચ્છા કરે તો પહેલાં ઉત્પાતથી પંડક વનમાં જાય છે, પછી પાછાં ફરતી વખતે એક જ ઊત્પાતે નદન વનમાં અને બીજે ઉત્પાતે પોતાનાં સ્થાનમાં આવી જાય છે રોહિણી પ્રજ્ઞપ્તિ આદિ વિદ્યાઓ ધારણ કરનારને વિદ્યાધારક કહે છે. એક ઉપવાસને ચતુર્થભક્ત, બે ઉપવાસને ષષ્ઠભક્ત, ત્રણ ઉસવાસને અષ્ટમભક્ત, ચાર ઉપવાસને દશમભક્ત,

मभक्त, पांच उपवास का नाम द्वादशभक्त, छह उपवास का नाम चतुर्दश भक्त, सात उपवास का नाम षोडशभक्त, है। इन उपवासों को जो मुनिजन करते हैं वे चतुर्थ भक्तिक आदि मुनिजन हैं। इसी तरह जो अर्धमास आदिके उपवासों को करते हैं वे अर्धमास आदि भक्तिक हैं। जो मुनिजन इस प्रकार का अभिग्रह विशेष धारण कर लेते हैं कि हम उसी आहार को लेवेंगे कि जो आहार गृहस्थ ने अपने प्रयोजन के लिये पाकपात्र से उठाकर दुसरे पात्र में नहीं रखा होगा। इस प्रकार का अभिग्रह बद्ध होकर जो आहार की गवेषणा करने के लिये अपने स्थान से बहिर्गमन करते हैं वे उत्क्षिप्त चरक मुनिराज हैं। तथा जो इस प्रकार का अभिग्रह करके आहार लेने के लिये अपने स्थान से जाते हैं कि मैं वही आहार ग्रहण करूँगा जो गृहस्थ ने अपने लिये पाक पात्र से निकाल कर दूसरे पात्र में रखा होगा। इस प्रकार के अभिग्रह को धारण कर जो आहार की गवेषणा करने के लिये अपने स्थान से बाहर भ्रमण करते हैं वे निक्षिप्तचरक है। तथा जो मुनिजन अन्त-नीरस, तक्रछाछमिश्रित और पर्युषित (बासी) वल्ल, चणक-चना आदि

પાંચ ઉપવાસને દ્વાદશભક્ત, છ ઉપવાસને ચતુર્દશભક્ત, સાત ઉપવાસને ષોડષભક્ત, કહે છે. એ ઉપવાસો કરનાર જે મુનિજનો છે તે ચતુર્ભક્તિક આદિ મુનિજનો કહેવાય છે. એ જ પ્રમાણે જે અર્ધમાસ આદિ સમયના ઉપવાસો કરે છે તેમને अर्धमासभक्तिक આદિ કહે છે. જે મુનિજન એવા પ્રકારનો અભિગ્રહ ધારણ કરે છે કે અમે એવો જ આહાર લઈશું કે જે ગૃહસ્થે પોતાના ઉપયોગને માટે રાંધવાના વાસણમાંથી લઈ ને બીજાં પાત્રમાં નહીં રાખ્યો હોય આ પ્રમાણે અભિગ્રહ બાંધીને જે આહારની શોધમાં પોતાને સ્થાનેથી બહાર નીકળે છે તેમને उत्क्षिप्तचरक મુનિરાજ કહે છે. તથા જે મુનિરાજ એવા પ્રકારનો અભિગ્રહ ધારણ કરીને પોતાને સ્થાનેથી આહાર લેવા નીકળે છે કે "હું એવો જ આહાર વહોરીશ કે જે ગૃહસ્થે રાંધવાનાં પાત્ર માંથી પોતાના ઉપયોગ માટે બીજાં પાત્રમાં કાઢી રાખ્યો હોય. આ પ્રકારનો અભિગ્રહ કરીને જે આહારની શોધ કરવાને માટે પોતાને સ્થાનેથી બહાર નીકળે છે તે મુનિજન निक्षिप्तचरक કહેવાય છે. તથા જે મુનિરાજ अन्त-नीरस, છાશમિશ્રિત અને पर्युषित-वासी વલ્લ, ચણાક-ચણા આદિ આહાર લેવાનો અભિગ્રહ ધારણ કરીને તેની શોધ કરે છે તેઓ अन्तचरक છે. તથા

आहार लेने का अभिग्रह धारण कर उसकी गवेषणा करते हैं वे अन्त-चरक हैं। तथा प्रान्तचरक वे मुनिराज हैं जो पुराने वल्ल, चणक एवं कुलत्थी आदि अन्न को लेने का अभिग्रह बद्ध होकर गोचरी करते हैं। तथा जो रूक्ष भोजन ही मैं लूंगा, इस प्रकार की प्रतिज्ञा धारण करते हैं। जो ऊँचे नीचे कुलों में सामान्य रूप से भिक्षा ग्रहण करने के स्वभाववाले होते हैं वे समुदानचरक हैं अन्नग्लायक-अन्नसे, अर्थात् अभिग्रह विशेष के कारण वासी अन्न खाने से ग्लान अर्थात् कृश-दुबले जो है वे अन्नग्लायक हैं। भिक्षा विशुद्धि के सिवाय जो मौन-व्रत को धारण कर आहार के लिये जाते हैं वे मौनचरक साधु हैं। तथा जिनका ऐसा कल्प होता है कि जो आहार हमें संसृष्ट-भरे हुए हाथ और भाजन-पात्र से दिया जावेगा वही मैं लूंगा वे संसृष्ट कल्पिक हैं। तथा-तज्जातसंसृष्ट कल्पिक वे मुनिजन हैं जो इसप्रकार का नियम लेते हैं कि जिस प्रकार का देयद्रव्य देने योग्यहै वह उसी प्रकार के द्रव्य से संसृष्ट हस्त भाजन से दिया जावेगा तो ही लेगें। जो इस प्रकार का नियम धारण करते हैं कि दाता ने जिस आहार को अपने आप अपने पास खाने के लिये रखा होगा वही हम लेगें। इस प्रकार के अभिग्रह वाले

प्रान्तचरक મુનિરાજ તેમને કહે છે કે જેઓ જૂનાં વાલ, ચણા, કળથી આદિ અન્ન લેવાનો અભિગ્રહ કરીને ગોચરી કરે છે તથા જે એવી પ્રતિજ્ઞા ધારણ કરે છે કે હું રૂક્ષ (લૂખું) ભોજન જ લઈશ તેમને रूक्षचरक કહે છે. જે એક સરખી રીતે ઊંચા તથા નીચા કુળમાં ભિક્ષા ગ્રહણ કરવાના સ્વભાવવાળા છે તેઓ समुदानचरक છે. अन्नग्लायक-ખાસ અભિગ્રહને કારણે વાસી અન્ન ખાવાથી ગ્લાન એટલે કે કૃશ-દુબળા પડી ગયેલાં હોય તેમને અન્નગ્લાયક કહે છે. ભિક્ષા વિશુદ્ધિના સિવાય, જે સાધુ મૌનવ્રત ધારણ કરીને આહારને માટે જાય છે તેમને मौनचरक કહે છે. તથા જેમનો એવો નિશ્ચય-ધારણા હોય છે કે "જે આહાર અમને संसृष्ट-ભરેલા હાથ તથા ભાજન પાત્રમાંથી વહોરાવાશે તેજ અમે લઈશું" એવા મુનિઓને संसृष्टकल्पिक કહે છે તથા જે મુનિજનો એવા પ્રકારનો નિયમ કરે છે કે વહોરાવવાનું જે દ્રવ્ય હોય તે એજ પ્રકારના દ્રવ્યથી ભરેલ પાત્રમાંથી વહોરાવવામાં આવશે તો જ લઈશ, તે મુનિજનોને तज्जातसंसृष्टकल्पिक કહે છે. જે મુનિજનો એવો નિયમ ધારણ કરે છે કે દાતાએ પોતે જ પોતાને ખાવા માટે જે આહાર પોતાની પાસે રાખ્યો હોય તે જ હું લઈશ આ પ્રકારના અભિગ્રહ ધારી મુનિઓ उपनि-

उपनिहितक हैं। शंका आदि दोषों के परिहार से शुद्ध आहार का ग्रहण करना इसका नाम शुद्धैषणा है। इस शुद्धैषणा से जो संपन्न होते हैं वे शुद्धैषणिक हैं। अर्थात् शंका आदि दोषों से रहित शुद्ध आहार को ग्रहण करने का जिनका अभिग्रह होता है वे शुद्धैषणिक हैं। संख्याप्रधानवाली दत्तियों से जो गोचरी के लिये जाते हैं अर्थात् दाता के हाथ से देते समय साधु के पात्र में भक्तपान आदि का जो एक वार अविच्छिन्नरूप से गिरना उसे दत्ति कहते हैं, इस प्रकार की पाँच छ आदि दत्तियों के लेने का अभिग्रह जिन्हें होता है वे संख्यादत्तिक हैं। जिन साधुओं को ऐसा नियम होता है कि हम उसी आहार को लेंगे जो हमारे दृष्टि गोचर होगा। इस प्रकार के नियमवाले साधु दृष्टिलाभिक कहे जाते हैं। तथा अदृष्टलाभिक वे साधुजन हैं जो पाकगृह के भीतर से निकले हुए ऐसे भोजन को कि जो दृष्टि में तो आया नहीं है केवल कान से ही उसका नाम सुन लिया है उसे लेनेका नियम धारण करते हैं। अथवा—'पूर्व में अनुपलब्ध दाता से ही मैं भिक्षा लूंगा' इस प्रकार का जो नियमविशेष रखते हैं वे अदृष्टलाभिक मुनि हैं। 'हे साधो! मै आप के लिये क्या दूं अर्थात् आपके लिये किस वस्तु की इस समय चाहना है' इस प्रकार दाता के द्वारा प्रश्नविषयीकृत वस्तु

हितक કહેવાય છે. શુદ્ધૈષણા એટલે શંકા આદિ દોષો રહિત શુદ્ધ આહાર ગ્રહણ કરવો તે આ શુદ્ધૈષણાયુક્ત મુનિજનોને શુદ્ધૈષણિક કહે છે એટલે કે શંકા આદિ દોષોથી રહિત શુદ્ધ આહાર ગ્રહણ કરવાનો જેમનો અભિગ્રહ છે તેઓ શુદ્ધૈષણિક છે, સંખ્યા પ્રધાનવાળી દત્તિયોથી જે ગોચરીને માટે જાય છે એટલે કે દાતાના હાથથી આપતી વખતે સાધુના પાત્રમા ભક્ત-પાન આદિનું ધારાવળી તૂટ્યા વિના એક વખતમાં જેટલું પ્રવાહી રેડાય તેને દત્તિ કહે છે આ પ્રકારની પાંચ, છ આદિ દત્તિયો લેવાનો જેમનો અભિગ્રહ હોય છે તેમને સંખ્યાદત્તિક કહે છે જે સાધુઓને એવો નિયમ હોય છે કે જે આહાર અમારી નજરે પડશે તે જ આહાર અમે લઈશું, એવા નિયમ વાળા સાધુઓને દૃષ્ઠિલાભિક કહે છે. તથા અદૃષ્ઠિલાભિક મુનિજનો તેમને કહે છે કે જેઓ રસોડામાંથી બહારકાઢવામાં આવેલ એવું ભોજન સ્વીકારે છે કે જે નજરે પડયું હોતુ નથી પણ તેનું નામ જ કર્ણે પડયું હોય છે અથવા "અગાઉ જેની પાસેથી દાન ગ્રહણ ન કર્યું હોય એવા દાતા પાસેથી જ દાન ગ્રહણ કરીશ" એવા મુનિને અદૃષ્ટલાભિક કહે છે. "હે મુનિરાજ! હું આપને માટે શું આપુ " એટલે કે " આપ અત્યારે શી વસ્તુ લેવા માગો છો " આ

को लेने का जिनके अभिग्रह होता है वे पृष्टलाभिक मुनि हैं जो आचामाम्लव्रत (आयंबिल) से युक्त होते हैं वे आचाम्लिक मुनि हैं। पारणा के दिवस भी जो पूर्वार्द्ध के समय खाने पीने का त्याग कर देते हैं वे पुरिमड्ढ-पूर्वार्द्धिक मुनि हैं। तथा जो पारणा के दिन भी एकाशनव्रत के धारी होते हैं वे एकाशनिक हैं। जो घृत आदि पदार्थरूप विकृतियों से विहीन ही भोजन लेते हैं वे निर्विकृतिक मुनि हैं। 'पात्र में गिरने पहिले जो भिक्षा की वस्तु सक्तुकादि रूप मोदक आदि पिण्ड अर्पित करते समय बीच में ही फूटकर पात्र मे पड़ेगी उसे ही मैं लूंगा' इस प्रकार जो नियम धारण करते है वे भिन्नपिंडपातिक मुनि है। 'इतनी ही वस्तु -भक्ष्यपदार्थ-खाने योग्य हम भोजन में खावेंगे' ऐसा नियम जिन साधुओं के होता है वे परिमितपिंडपातिक मुनि हैं। नीरस, तक्र (छाछ)-मिश्रित और पर्युषित वल्ल चणक आदि अन्न का जो आहार करते हैं वे अन्ताहारी मुनि हैं। पुरानी कुलथी, वल्ल, चना आदि अन्न का जो आहार करते हैं वे प्रान्ताहारी मुनि है। जो रसवर्जित आहार लेते हैं-अर्थात् जो मुनि हिंग आदि के वघार से वर्जित आहार को लेने के नियमवाले होते हैं वे अरसाहारी हैं। जिनमें रस नहीं होता ऐसे

પ્રમાણે દાતા દ્વારા પ્રક્ષવિપર્યીકૃત વસ્તુ લેવાનો જેમને અભિગ્રહ હોય છે તેમને પૃષ્ટલાભિક મુનિ કહે છે જે મુનિ આચામામ્લવ્રત યુક્ત હોય છે તેમને આચામામ્લિક મુનિ કહે છે પારણાંને દિવસે પણ જે પૂર્વાદ્ધ મધ્યાહ્ન પહેલાં ખાવાપીવાનો ત્યાગ કરે છે તેમને પરિમડ્ઢ-પૂર્વાદ્ધિક મુનિ કહે છે. તથા જે પારણાને દિવસે પણ એકાસન વ્રત ધારી હોય છે તેમને એકાશનિક કહે છે. જે ઘી આદિ પદાર્થરૂપ વિકૃતિયોથી રહિત ભોજન લે છે તેમને નિર્વિકૃતિક મુનિ કહે છે "પાત્રમાં પડયા પહેલાં જે ભિક્ષાની વસ્તુ-સક્તુ કાદિરૂપ મોદક આદિ પિંડ અર્પણ કરતી વખતે વચ્ચેજ ભાંગી જઈને પાત્રમાં પડશે તેને જ હું લઈશ" આ પ્રકારનો નિયમ ધારણ કરનાર મુનિને ભિન્નપિંડપાતિક મુનિ કહે છે. "આટલી જ વસ્તુ ખાદ્ય પદાર્થ-હુ ભોજનમાં ખાઈશ" એવો નિયમ ધારણ કરનાર મુનિજનોને પરિમિતપિંડપાતિક કહે છે. નીરસ, છાશ-મિશ્રિત, અને પર્યુષિત વાસી વાલ, ચણા આદિ અન્નનો આહાર કરનાર મુનિજનોને અન્તાહારી કહે છે. જૂની કળથી, વાલ ચણા આદિ અન્નનો આહાર કરનાર મુનિઓને પ્રાન્તાહારી કહે છે. જે રસરહિત આહાર લે છે એટલે કે જે મુનિ હિંગ આદિના વઘારથી રહિત આહાર લેવાના નિયમવાળા હોય છે

पुराने धान्य ओदन आदि अन्न से निष्पन्न हुए आहार को लेनेका जिनका नियम होता है वे विरसाहारी मुनि हैं। घृतादि के संबंध से वर्जित हुए रूखे लूखे आहार को लेनेका जिनका नियम होता है वे रूक्षाहारी मुनि हैं। बदरी फल बोर के पिसे हुए चूर्ण आदि का, तथा कुलथी कोद्रव आदि से बने हुए आहार का जो सेवन करते हैं वे तुच्छाहारी मुनि हैं। इसी तरह अन्त आहार से जो जीते हैं वे अन्तजीवी, प्रान्त आहार से जो जीते हैं वे प्रान्तजीवी, रूक्षाहार से जो जीते है वे रूक्षजीवी, तुच्छाहार से जो जीते है वे तुच्छजीवी मुनि है। अशन आदि की प्राप्ति होने पर अथवा नहीं होने पर जिनकी बाहिरी चेष्टा में-मुख में चक्षुरादि इन्द्रियों में म्लानता नहीं आती है वे उपशान्तजीवी मुनि है। तथा अन्तरंग में जिन साधुओं के आहार आदि की अप्राप्ति में क्रोधादि कषायों का उपशमन रहता है वे प्रशान्तजीवी मुनि हैं। दोषवर्जित अन्नादि के खाने से ही जो अपना जीवन निर्वाह करते है वे विविक्तजीवी मुनि है। क्षीर-दुग्ध, मधु-शर्करा आदि मधुरद्रव्य और सर्पि-घृत, इनपदार्थोंका जो आहार नहीं करते हैं वे अक्षीरमधुसर्पिष्क मुनि हैं। मद्य और मांस का आहार नहीं करने अमद्यमांसाशिक मुनि कहलाते हैं। जो अतिशयरूप

તેમને अरसाहारी કહે છે. જેમાં રસ હોતો નથી એવા જૂના ધાન્ય, ચોખા આદિ અન્નમાંથી તૈયાર થયેલ આહાર લેવાના નિયમવાળા મુનિઓને विरसाहारी કહે છે. ઘી વિનાનો લૂખો આહાર લેવાનો જેમનો નિયમ છે તેમને रूक्षाहारी मुनि કહેછે. બોર આદિ ફળોનું ચૂર્ણ આદિ તથા કળથી, કોદરા વગેરેમાથી બનેલાઆહારનું જે સેવન કરે છે તેમને तुच्छाहारी કહે છે, એજ પ્રમાણે અન્ત આહારથી જે જીવે છે તેમને अन्तजीवी, પ્રાન્ત આહારથી જે જીવે છે તેમને प्रान्तजीवी, રૂક્ષ આહારથી જે જીવે છે તેમને रूक्षजीवी અને તુચ્છ આહારથી જે જીવે છે તેમને तुच्छजीवी मुनि કહે છે ભોજન આદિ પ્રાપ્ત થાય કે ન થાય છતાં પણ જેમની મુખમુદ્રામાં, ચક્ષુરાદિ ઈન્દ્રિયોમા મ્લાનતા દેખાતી નથી તેમને उपशान्तजीवी मुनि કહે છે. તથા અન્તરંગમાં જે સાધુઓને આહારાદિની અપ્રાપ્તિમાં ક્રોધાદિ કષાયોનું ઉપશમન રહે છે તેઓ प्रशान्तजीवी मुनि છે, દોષા રહિત અન્નાદિ ખાઈને જ જે પોતાનો જીવન નિર્વાહ ચલાવે છે તેમને विविक्तजीवी मुनि કહે છે. ક્ષીર-દૂધ, મધુ-સાકર આદિ મધુર દ્રવ્ય તથા સર્પિ-ઘૃત એ પદાર્થોનો જે આહાર નથી કરતા તેમને अक्षीरमधुसर्पिष्क मुनि કહે છે. મદ્ય અને માંસનો જે આહાર કરતા નથી તેમને अमद्यमांसाशिक मुनि

में कायोत्सर्ग आदि तपश्चरण करते हैं वे स्थानातिग मुनि हैं। एक रात्रिकी आदि प्रतिमाधारण कर कार्योत्सर्ग विशेषरूप में ही रहते हैं वे प्रतिमास्थायी मुनि हैं। जिनका स्थान उत्कुटुक होता है, अर्थात् जो उत्कुट आसन से बैठते हैं वे स्थानोत्कुटुक हैं। सिंहासन पर बैठे हुए व्यक्ति का कि जिसके दोनों पैर नीचे टिके हुए हों जब वे सिंहासन नीचे से हटा लिया जाता है तो वह उस समय उसी स्थिति में-अर्थात्-अपनी पूर्व की स्थिति में ही रहे तो उस आसन का नाम वीरासन है। इस आसन को जो आचरित करते हैं वे वीरासनिक मुनि हैं। जिस आसन में दोनों पुत समानरूप से जमे रहते है उस आसन का नाम निषद्या है। इस निषद्या से जो बैठते हैं वे नैषधिक है। दंड की तरह जिनका शरीर भूमिपर आयत-लंबा-जिस आसन में रहता है-उसका नाम दंडायत आसन है। इस आसन को जो आचरित करते हैं वे दण्डायतिक हैं। अर्थात्-जिस में जमीन पर दंड की तरह लंबा होकर सोया जाता है उस आसन को जो मुनि करते हैं वे दण्डायतिक मुनि कहलाते है। जिस आसन में दोनों पैरों की एड़ी और मस्तक का पृष्ठभाग जमीन पर लगा रहता है, तथा पीठ का भाग जमीन से उठा

કહે છે. જે અતિશય પ્રમાણમાં કાયોત્સર્ગ આદિ તપશ્ચરણ કરે છે તેમને સ્થાનાતિગ મુનિ કહે છે. જે એક રાત્રિની આદિ પ્રતિમા ધારણ કરીને કાયોત્સર્ગના વિશેષરૂપમાં રહે છે તેમને प्रतिमास्थायी મુનિ કહે છે. જેમનું સ્થાન ઉત્કુટુક હોય છે, એટલે કે જે ઉત્કુટુક આસને બેસે છે તેમને स्थानोत्कुटुक મુનિ કહે છે. સિંહાસન પર બેઠેલ વ્યક્તિ કે જેના બન્ને પગ નીચે ટેકવેલા હોય, તેની નીચેથી સિંહાસન ખસેડી લેવામાં આવે છતાં પણ તે જો પોતાની એજ સ્થિતિમાં-એટલે કે પોતાની અગાઉની સ્થિતિમાં રહે તો તે આસનને વીરાસન કહે છે. આ આસનનું સેવન કરનાર મુનિને वीरासनिक કહે છે. જે આસનમાં બંને પુત સમાન રીતે દૃઢ રહે છે તે આસનનું નાથ નિષદ્યા છે. આ નિષદ્યાથી જે બેસે છે તેને नैषद्यिक કહે છે દંડની જેમ જેમનું શરીર જમીન પર આયત-લંબાયેલ સ્થિતિમા જે આસનમાં રહે છે તે આસનને दंडायत आसन કહે છે. આ આસન કરનારને दण्डायतिक મુનિ કહે છે. એટલે કે જેમાં જમીન પર દંડની જેમ લાંબા થઈને સૂઇ જવાય છે, તે આસન જે મુનિ કરે છે તેમને दण्डायतिक મુનિ કહે છે જે આસનમાં બન્ને પગની એડી તથા મસ્તકનો પાછળનો ભાગ જમીન પર લાગી રહે છે તથા પીઠનો

तथा-' सुयधरविदितत्थकायवुद्धिणो ' श्रुतधरविर्दितार्थकायवुद्धयः=श्रुतधराः-श्रुतज्ञानिनस्तैर्विदितो ज्ञातोऽर्थकः यः=तत्त्वज्ञानराशिः श्रुतसमूहो यया सा श्रुतधरविदितार्थकाया, तादृशी बुद्धिर्येषां ते तथोक्ताः, तथा-' धीरमइवुद्धिणो

रहता है-उस आसन को लगंडासन कहते हैं। इस आसन से जो मुनि शयन करते हैं वे लगंडशायी मुनि हैं। सोते समय जो एक ही करवट से सोते हैं-करवट: नहीं बदलते हैं-ऐसे मुनि एक पार्श्विक हैं। जो साधुजन, शीत, उष्ण आदि की आतापना लेते हैं वे आतापक मुनि हैं। हेमन्त ऋतु में जो प्रावरण से रहित होते हैं वे अप्रावृत मुनि हैं। जो मुनि अपने मुख के श्लेष्मा के अपरिष्ठापक होते हैं वे अनिष्ठीवक मुनि हैं। जो मुनि शरीर में खुजली चलने पर भी उसे नहीं खुजाते हैं वे मुनि अकण्डूयक हैं। तथा जो अपने केशों का मूछ दाढी आदि के वालों का-तथा नखों का संस्कार नहीं करते हैं-जैसे हैं वैसा ही उन्हें रखे रहते हैं ऐसे मुनि धृत-केशश्मश्रुलोमनखवाले कहलाते हैं यह जिन कल्पिक मुनियोंका तथा जो मुनि अपने समस्त शरीर का संस्कार नहीं करते हैं वे मुनि सर्व, गात्रप्रतिकर्मविमुक्त हैं। तथा (सुयधरविदियत्थकायवुद्धिणो) श्रुतज्ञानियों द्वारा तत्त्वज्ञानराशिरूप श्रुतसमूह जिसके प्रभाव से विदित होता है ऐसा जिन्हीं की बुद्धि है तथा (धीरमइवुद्धिणो) अवग्रहादिरूपमति

ભાગ જમીનથી અદ્ધર રહે છે, તે આસનને લગુડાસાન કહે છે. તે આસને જે મુનિ શયન કરે છે તેમને लगंडशायी મુનિ કહે કહે છે. સૂતી વખતે જે એકજ પડખે શયન કરે છે-પડખુ ફેરવતા નથી-તેવા મુનિઓ एकपार्श्विक કહેવાય છે. જે મુનિજનો શીત, ગરમી આદિની આતાપના લે છે તેમને आतापक મુનિ કહે છે, હેમન્ત ઋતુમાં જે પ્રાવરણથી રહિત હોય છે. તેમને अप्रावृत મુનિ કહે છે. જે મુનિ પોતાના મુખના શ્લેષ્માના અપરિષ્ઠાપક હોય છે તેમને अनिष्ठीवक કહે છે જે મુનિ શરીરમાં ખુજલી ચળ આવવા છતાં પણ તેને ખજવાળતા નથી તેમને अकण्डूयक મુનિ કહે છે. જે મુનિ પોતાના કેશના-મૂછ, દાઢી આદિના વાળના તથા નખના સંસ્કાર (છેદન) કરતા નથી, જેવા હોય તેવાજ તેને રહેવા દે છે, એવા મુનિઓને धृतकेशश्मश्रुलोमनखा કહે છે. તથા જે મુનિ પોતાના સમસ્ત શરીરનાં સંસ્કાર કરતા નથી તે મુનિઓને सर्वगात्रप्रतिकर्मविमुक्त" કહે છે તથા "सुयधर विदियत्थकायवुद्धिणो" શ્રુતજ્ઞાનીઓ દ્વારા તત્ત્વજ્ઞાનરાશિ શ્રુતસમૂહ જેના પ્રભાવથી વિદિત થાય છે એવી જેમની બુદ્ધિ છે તથા "धीरमइवुद्धिणो" જેમની

य ' धीरमतिवुद्धयश्च=धीरा–स्थिरामतिः अवग्रहादिका, बुद्धिः=औत्पत्तिक्या-येषां ते तथोक्ताः, तथा ' जे ते ' ये ते, ' आसीविसउग्गतेयकप्पा' आशीविषोग्रतेजः कल्पाः=आशीविषाः=सर्पास्ते च ते उग्रतेजसः घोरविषधराश्च आशीविषोग्रतेजसस्तत्तुल्याः ये ते-आशीविषोग्रतेजः कल्पाः ! तथा 'निच्छयववसायप-ज्जत्तकयमईया ' निश्चयव्यवसायपर्याप्तकृतमतयः=निश्चयः=वस्तुनिर्णयो, व्यवसायः= उद्यमः पुरुषकारइति यावत् तद्विषये पर्याप्ता=परिपूर्णा कृता=विहिता मतिर्बुद्धिर्यैस्ते तथोक्ताः=सकलवस्तुनिर्णायिका इत्यर्थः तथा–' णिच्चं सज्झायज्झाणा ' नित्यं स्वाध्यायध्यानाः–नित्यं–सर्वदा स्वाध्यायो–वाचनादिकम् , ध्यान=दुर्ध्यानतश्चित्तनिरोधरूपं येषां तथोक्ताः, अतएव ' अणुवद्धधम्मज्झाणा ' अनुबद्धधर्मध्यानाः= अनुवद्धं–धाराप्रवाहन्यायेन निरन्तरं धृतं धर्मध्यानम्–आज्ञाविचयापायविचयविपाकविचयसंस्थानविचयरूपं यैस्ते, तथा–'पंचमहव्वयचरित्तजुत्ता' पञ्चमहाव्रतचारित्र-युक्ताः=पञ्चमहाव्रतानि=प्राणातिपातादि विरमणलक्षणानि तद्रूपं यच्चारित्रं तेन

एवं औत्पत्तिकी आदि बुद्धि जिनकी धीर–स्थिर है, तथा (जे ते आसीविसउग्गतेयकप्पा) जो सर्प के समान उग्रतेज वाले है, (निच्छुयववसायपज्जत्तकयमइया) निश्चयवस्तुनिर्णय करने में एवं उद्यम–पुरुषार्थ करनेमें जिन्होंने अपनी बुद्धि को परिपूर्ण बना लिया है, अर्थात् जो अच्छी तरह से समस्त वस्तुओं का निर्णय करने वाले हैं तथा (निच्चं सज्झायज्झाणा) जो नित्य ही वाचनादिरूप स्वाध्याय में एवं आर्त्तरौद्ररूप दुर्ध्यान से चित्त निरोधरूप ध्यान में मग्न रहते हैं, इसीलिये (अणुबद्धधम्मज्झाणा) धारा प्रवाह न्याय से जिनका निरन्तर आज्ञाविचय, अपायविचय, संस्थानविचय रूप धर्मध्यान होता रहता है, तथा (पंचमहव्वय चरित्तजुत्ता) जो प्राणातिपातादि विरमणरूप पंचमहाव्रतों से

અવગ્રહાદિરૂપ મતિ અને ઔત્પત્તિકી આદિ બુદ્ધિ ધીર–સ્થિર છે, તથા " जे ते आसी विसउग्गतेयकप्पा " જે સર્પના સમાન ઉગ્ર તેજવાળા છે, " निच्छय ववसाय पज्जत्तकयमइया " નિશ્ચયવસ્તુ નિર્ણય કરવામાં અને ઉદ્યમ–પુરુષાર્થ કરવામાં જેમણે પોતાની બુદ્ધિને પરિપૂર્ણ બનાવી લીધી છે, એટલે કે જે સારી રીતે સમસ્ત વસ્તુઓનો નિર્ણય કરનાર છે, તથા " निच्चं सज्झाय-ज्झाणा " જે નિત્યવાચનાદિરૂપ સ્વાધ્યાયમાં અને આર્ત્તરૌદ્રરૂપ દુર્ધ્યાનમાંથી ચિત્તનિરોધરૂપ જ્ઞાનમાં લીન રહે છે, તેથી ' अणुबद्धधम्मज्झाणा " ધારા પ્રવાહ ન્યાયથી જેમનું નિરન્તર આજ્ઞાવિચય, અપાય વિચય, સંસ્થાન વિચયરૂપ ધર્મ-ધ્યાન રહ્યાં કરે છે, તથા " पंचमहव्वयचरित्तजुत्ता " જે પ્રાણાતિપાતાદિ વિર-

युक्ता येते तथा–' समियासमिईसु ' समिताः समितिषु=ईर्यादिपञ्चसमितिभिर्युक्ता इत्यर्थः, तथा–' समियपावा ' शमितपापाः=शमितं=शान्तं पापं=प्राणातिपातादि-रूपं येषां ते तथोक्ताः, तथा ' छव्विहजगवच्छला ' पड्विधजगद्वत्सलाः=पड् जीवनिकायहिता इत्यर्थः, तथा–येते ' णिच्चमप्पमत्ता ' नित्यमप्रमत्ताः=सर्वदा प्रमादरहिता सन्ति, ' एएहिय ' एतैश्च पूर्वोक्तगुणविशिष्टैः, तथा–' अण्णेहि य' अन्यैश्च अनुकूललक्षणैर्गुणवद्भिर्या सा=जगत्प्रसिद्धा एषा भगवती अहिंसा ' अणुपालिया ' अनुपालिता– वाङ्मनःकाययोगैराराधितेत्यर्थः ॥ सू–४ ॥

युक्त बने हुए हैं, तथा (समिइसुसमिया (जो ईर्या आदि पांच समितियों से युक्त हैं और इसी कारण से (समिइपावा) जिन्हों के प्राणातिपातादिरूप पाप शांत हो चुके हैं, तथा (छव्विह जगवच्छला) जो सदा छहकाय के जीवों की रक्षा करने में वत्सल भाववाले होते हैं तथा (णिच्चमप्पमत्ता) जो पांच प्रमादों से नित्य रहित होते हैं (एएहिं) ऐसे इन पूर्वोक्त गुणों से विशिष्ट महात्माजनों द्वारा तथा (अण्णेहिय) इस प्रकार के लक्षणों से युक्त अन्य गुणवालों द्वारा (जा सा भगवई) यह जगत्प्रसिद्ध भगवती अहिंसा (अणुपालिया) मन, वचन, और काय, इन तीन योगों की एकाग्रता से अच्छी तरह आराधित की गई है।

भावार्थ—अहिंसा तत्व को यद्यपि प्रत्येक सिद्धान्तकारोंने अपने २ सिद्धान्तानुसार अपनाया है। परन्तु इस तत्व का बाहिरी स्वरूप विवेचन करते ही वे रह गये हैं। अन्तरंग स्वरूप विवेचन उनकी दृष्टि

મણરૂપ પાચ મહાવ્રતોથી યુક્ત થયેલ છે, તથા " समिइ सुसमिया " જે ઇર્યા આદિ પાંચ સમિતિયોથી યુક્ત છે અને એ જ કારણથી " समिइपावा " જેમનાં પ્રાણાતિપાતાદિરૂપ પાપ શાન્ત થઇ ગયાં છે, તથા " छव्विहजगवज्छला " જે સદા છકાયના જીવોની રક્ષા કરવામાં વત્સલ ભાવ વાળા હોય છે, તથા" णिच्चमप्पमत्ता " જે સદા પાંચ પ્રમાદોથી રહિત હોય છે "एएहिं" એવા એ પૂર્વોક્ત ગુણોથી યુક્ત મહાત્માજનો દ્વારા તથા " अण्णेहिय " આ પ્રકારના ગુણોથી યુક્ત અન્ય ગુણવાનો દ્વારા " जा सा भगवई " આ જગવિખ્યાત ભગવતી અહિંસા "अनुपालिया" મન, વચન, અને કાય, એ ત્રણે યોગોની એકાગ્રતાથી સારી રીતે આરાધવામાં આવી છે

ભાવાર્થ—અહિંસા તત્ત્વને જો કે દરેક સિદ્ધાન્તકારોએ પોત પોતાના સિદ્ધાન્તાનુસાર અપનાવેલ છે, પણ આ તત્ત્વના બાહ્ય સ્વરૂપનું જ વિવેચન તેમણે કર્યું છે. અન્તરંગ સ્વરૂપ વિવેચન તેમની નજરે ન પડયું. તેનું પરિ-

में नहीं आया। इसका कारण केवल यही हुआ कि उनकी अन्तरंग दृष्टि इस महनीय तत्त्व तक गहराई के साथ नहीं पहुँच पाई। इसके वास्तविक अन्तरंग स्वरूप का विवेचन यदि हमें कहीं मिलता है तो वह एक वीतराग परंपरा में ही मिलता है। इसका कारण यहाँ यह हुआ कि जिन तीर्थंकर गणधर आदिकों ने इस तत्व का विवेचन किया वे बहुत ही बड़ी सूक्ष्मदृष्टिवाले थे। ज्ञान के पूर्ण विकास से वे इतने अधिक विज्ञानी बन चुके थे कि प्रत्येक पदार्थ अपनी समस्त अवस्थाओं के साथ उनके उस विशिष्ट ज्ञान में दर्पण में प्रतिबिम्ब की तरह स्पष्ट रूप से प्रतिबिम्बित झलकता रहता था। अतः इस प्रकार के ज्ञान से उन्होंने अहिंसा भगवती के वास्तविक स्वरूप का दर्शन किया है तभी जाकर उन्होंने अपने सिद्धान्तो में इसका सूक्ष्मातिसूक्ष्म विवेचन किया है। यह विवेचन छद्मस्थों से नहीं हो सका। यही बात सूत्रकारने अपने इस सूत्र द्वारा प्रदर्शित की है वे कहते हैं कि इस अहिंसा भागवती के दर्शन उन महापुरुषोंने किये है कि जो अपरिमित केवल ज्ञान और दर्शन के अधिपति थे। शील, विनय, तप और संयम से जिन्होंने अपनी आत्मा को बिलकुल 'सौटंची के' सोने जैसा बना लिया था। जिनके पास राग द्वेष जैसे विशाल योधा पछाड़ खाकर सर्वथा विनष्ट हो चुके

ણામ કેવળ એ જ આવ્યુ કે તેમની અન્તરંગ દૃષ્ટિ આ મહાન તત્ત્વમાં ઉંડાણથી પ્રવેશી નથી. તેના વાસ્તવિક અન્તરગ સ્વરૂપનું વિવેચન આપણને વીતરાગ પરંપરા સિવાય અન્ય સિધ્ધાતોમાં મળતું નથી તેનું કારણ એ છે કે જે તીર્થંકર, ગણુધર આદિએ આ તત્ત્વનું વિવેચન કર્યું છે તેઓ બહુ જ દીર્ઘદૃષ્ટિવાળા હતા જ્ઞાનના પૂર્ણ વિકાસથી તેઓ એટલા બધા વિજ્ઞાની બની ગયા હતા કે પ્રત્યેક પદાર્થ તેની સમસ્ત અવસ્થાઓ સહિત તેમના એ વિશિષ્ટ જ્ઞાનથી જેમ દર્પણમાં પ્રતિબિંબ દેખાય તેમ સ્પષ્ટરૂપે દેખાતા હતા, તેથી એ પ્રકારનાં જ્ઞાનથી તેમણે ભગવતી અહિંસાના વાસ્તવિક સ્વરૂપનું દર્શન કર્યું હતું, તેથી જ તેઓએ પોતાના સિદ્ધાન્તોમાં તેનું સૂક્ષ્મમાં સૂક્ષ્મ વિવેચન કર્યું છે, આ વિવેચન છદ્મસ્થો વડે થઈ શકયુ નહીં એ જ વાત સૂત્રકારે પોતાના આ સૂત્ર દ્વારા પ્રદર્શિત કરી છે તેઓ કહે છે કે આ ભગવતી અહિંસાનાં દર્શન તે મહાપુરુષોએ કર્યા છે કે જેઓ અનન્ત જ્ઞાન અને દર્શનના અધિપતિ હતા, જેમણે શીલ, વિનય, તપ અને સંયમ દ્વારા પોતાના આત્માને "સો ટચના" સોના જેવો વિશુદ્ધ બનાવ્યો હતો જેમની પાસે રાગદ્વેષરૂપી સમર્થ યોદ્ધા ભોં ભેગા થઈને તદ્દન નષ્ટ થયા હતા. ત્રણેલોક જેમની

अथ ये-अहिंसारूपप्रथमसंवरद्वारं पालयितुमुद्यतास्तेषां यद्विधेयं तदाह—

मूलम्—इमं च पुढवी-दग-अगणि-मारुय-तरुगण-तसथावर-सव्वभूयसंजयदयट्ठयाए सुद्धं उंछं गवेसियव्वं अकयमकारियमणाहुयमणुद्दिट्ठं अकीयकडं नवकोडिहिं परिसुद्धं दसहिं य दोसेहिं विपमुक्कं उग्गम उप्पायणेसणासुद्धववगयचुय चइयचत्तदेहं च फासुयं च न निसिज्जकहापयोयणक्खासु ओवणियं न तिगिच्छासंतमूलभेसज्जकज्जहेउं न लक्खणुप्पाय सुमिणजोइसनिमित्त-कहकुहकप्पउत्तं न विडंभणाए न विरक्खणाए न वि सासणाए न विडंभणरक्खणसासणाए भिक्खं गवेसियव्वं, न वि वंदणाए न विमाणणाए न वि पूयणाए न वि वंदणमाणणपूयणाए भिक्खं गवेसियव्वं, न वि हीलणाए न वि निंदणाए

थे। तीन लोक जिनकी चरण सेवा कर अपने आपको धन्य मानता था। उन्हीं के आदेशानुसार उनकी शिष्यप्रशिष्य परंपरा में हुए मनः पर्यय और अवधिज्ञानधारियों ने इस अहिंसा भगवती को भेद प्रभेदों से जाना, और उसे विशेषरूप से देखा। पूर्वधरों ने इसे श्रुत-निबद्ध किया। वैक्रियलब्धिधारियों ने इस भगवती का आजन्म पालन किया। एवं आभिनिबोधिक ज्ञानियों से लेकर सर्वगात्रप्रतिकर्म विमुक्तादि अनेक महापुरुषों ने इस अहिंसा भगवती को अपनी २ शक्ति के अनुसार वहुतही अच्छी तरह से पाला है ॥ सू० ४

સેવા કરીને પોતાની જાતને ધન્ય માનતા હતા. એમના જ આદેશ પ્રમાણે તેમની શિષ્ય-પ્રશિષ્ય પરંપરા થઈ ગયેલ મનઃ પર્યયઅને અવધિજ્ઞાનીઓએ આ ભગવતી અહિંસાને ભેદ-પ્રભેદો સહિત જાણી અને તેનું વિશેષરૂપે દર્શન કર્યું. વૈક્રિય લબ્ધિધારીઓએ આ ભગવતીનું જીવનપર્યંત પાલન કર્યું. અને આભિનિબોધિક જ્ઞાનીઓથી લઈને સર્વગાત્ર પ્રતિકર્મ વિમુક્તા આદિ અનેક મહાપુરૂષોએ આ ભગવતી અહિંસાનુ પોત પોતાની શક્તિ પ્રમાણે ઘણી જ સારી રીતે પાલન કર્યું છે. ॥ સૂ. ૪ ॥

न वि गरिहणाए नवि हीलणानिंदणा गरिहणाए भिक्खं गवेसियव्वं, न वि भेसणाए न वि तज्जणाए न वि तालणाए न वि भेसणतज्जणतालणाए भिक्खं गवेसियव्वं, न वि गारवेणं न वि कुहणाए न वि वणीमगयाए न वि गारवकुहणवणीमगयाए भिक्खं गवेसियव्वं, न वि मित्तयाए न वि पत्थणाए न वि सेवणाए न वि मित्तयपत्थणसेवणाए भिक्खं गवेसियव्वं, अण्णाए अगढिए अदुट्ठे अदीणे-अविमणे अकलुणे अविसाई अपरितंतजोगी जयणघडण-करणचरियविनयगुणजोगसंपउत्ते भिक्खू भिक्खेसणाए णिरए। इमं च णं सव्वजगजीवरक्खणदयट्ठणाए पावयणं भगवया सुकहियं अत्तहियं पेच्चा भवियं आगमेसिभदं सुद्धं नेयाउयं अकुडिलं अणुत्तरं सव्वदुक्खपावाण विउसमणं॥५॥

टीका—'इमं च पुढवी' इत्यादि—

'पुढवीदगअगणिमारुयतरुगणतसथावरसव्वभूयसंजमदयट्ठयाए' पृथ्वीदकाग्निमारुततरुगणत्रसस्थावरसर्वभूतसंयमदयार्थं, तत्र—पृथिवी—प्रसिद्धा, दकं=पानीयम्, अग्निः, मारुतो—वायुः, तरुगणः=वनस्पतिसमूहः, त्रसाः=द्वीन्द्रियादयः, स्थावराः=पृथिव्यादिपञ्चकम्, एतेषां सर्वभूतानां=सर्वप्राणिनां संयमो रक्षणं

जो इस अहिंसारूपप्रथमसंवरद्वार को पालन करने के लिये उद्यत हैं उन्हें क्या करना चाहिये सो कहते हैं—'इमं च' इत्यादि।

टीकार्थ-(पुढवी-दग-अगणि-मारुय-तरुगण-तस-थावर-सव्वभूय संजम दयट्ठाए) पृथिवी, दक-जल, अग्नि, वायु, वनस्पति समूह, द्वीन्द्रियादिक पांच स्थावर, इन सब प्राणियों की रक्षा निमित्त दयारूप

જેઓ આ અહિંસારૂપ પ્રથમ સંવરદ્વારનું પાલન કરવાને માટે તૈયાર થયા છે તેમણે શું કરવું જોઈએ તે કહે છે— "इमं च" ઈત્યાદિ

ટીકાર્થ-(पुढवी, दग, अगणि, मारुय, तरुगण, तस, थावर, सव्वभूय, संजमदयट्ठाए) પૃથિવી, દક, જલ, અગ્નિ, વાયુ, વનસ્પતિ સમૂહ, દ્વીન્દ્રિયાદિક ત્રસ, પૃથિવ્યાદિક પાંચ સ્થાવર, એ બધા પ્રાણીઓની રક્ષા નિમિત્ત દયારૂપ પ્રયોજનને

तन्निमित्ता या दकाया तस्या अर्थं=प्रयोजनं तस्मै, ' इमं च ' इदं च-वक्ष्यमाणं ' सुद्धं ' शुद्धं=निर्दोषं ' उंछं' उञ्छं=स्तोकं स्तोकं ग्रहणरूपमशनादिकं ' गवेसयव्वं ' गवेषितव्यम्, यथा-लूनान्नक्षेत्रात्कणादानं तथैव साधुनाऽपि गृहस्थार्थं निष्पादितमन्नादिकंस्तोकं स्तोकं गवेषणीयमिति भावः। कीदृशम्-उञ्छं गवेषितव्यम्? इत्याह—' अकयं ' अकृतं=साधु निमित्तमनिष्पादितम्, ' अकारियं ' अकारितम्=अन्यद्वारा न कारितम्, तथा-' अणाहूयं ' अनाहूतम्=गृहस्थेन साधोरनिमन्त्रणपूर्वकं दीयमानम्, ' अणुद्दिट्ठं ' अनुद्दिष्टम्=औद्देशिकादि दोषवर्जितम्, तथा-' अकीयकडं ' अक्रीतकृत=साधूनां कृते मूल्येनानिष्पादितम्। एतदेव वर्णयन्नाह—' नवकोडोहिं ' नवकोटिभिः, न हन्ति १, न घातयति २, घ्नन्तं

प्रयोजन के लिये (इमं च) इस वक्ष्यमाण (सुद्धं उंछं गवेसियव्वं) शुद्ध-निर्दोष, आहार आदि की उंछ थोड़े २ रूप में गवेषणा करना चाहिये, अर्थात् जिस प्रकार काटे गये खेत से कणों का आदान किया जाता है उसी प्रकार साधु को गृहस्थ ने अपने लिये बनाये हुए भोजन आदि में से थोड़ी थोड़ी मात्रा में उसके यहां से आहार आदि लेना चाहिये। आहारादि (अकयं) साधु के निमित्त उसने नहीं बनाया हो और (अकारियं) न दूसरों से उसने बनवाया हो (अणाहूयं) बुलाकर-अर्थात्-निमंत्रण करके जो न दिया जाय, (अणुद्दिट्ठं) औद्देशिक आदि दोषों से जो वर्जित हो, तथा (अकीयकडं) साधुओं के निमित्त मूल्य देकर जो नहीं खरीदा गया हो तथा (नव कोडिहिं-परिसुद्धं) नवकोटियों से अर्थात् नौ प्रकार से जो परिशुद्ध हो, अर्थात् जिस आहार में साधु के निमित्त जीवों की हिंसा नहीं हुई हो, न

માટે (इमं च) इसवक्ष्यमाण, (सुद्धं उंछं गवेसियव्वं) શુદ્ધ, નિર્દોષ આહાર આદિની થોડા થોડા પ્રમાણમાં ગવેષણા કરવી જોઈએ, એટલે કે જેમ લણાયેલ ખેતરરમાંથી કણોનું આદાન કરાય છે, એ જ પ્રમાણે સાધુએ, ગૃહસ્થ દ્વારા પોતાને માટે બનાવાયેલ ભોજન આદિમાંથી થોડાં થોડા પ્રમાણમાં આહાર આદિ લેવો જોઈએ તેણે તે આહારાદિ (अकयं) સાધુને માટે બનાવ્યા હોવાં જોઈએ નહી, અને (अकारियं) બીજાની પાસે બનાવરાવ્યા હોવા જોઈએ નહીં. (अणाहुयं) બોલાવીને એટલે તે નિમંત્રીને જે ન અપાય, (अणुद्दिट्ठं) ઔદ્દેશિક આદિ દોષોથી જે રહિત હોય, તથા (अकीयकडं) સાધુને માટે મૂલ્ય આપીને તે ખરીદાયેલ ન હોય, તથા (नवकोडिहि परिसुद्धं) નવ કોટીઓ વડે-નવ પ્રકારે જે પરિશુદ્ધ હોય, એટલે કે તેણે સાધુને નિમિત્તે બીજા પાસે હિંસા

नानुजानाति ३, न पचति ४, न पाचयति ५, पचन्तं नानुजानाति ६, न क्रीणाति ७, न क्रापयति ७, क्रीणन्तं नानुजानाति ९, इत्येता नवकोटयः, आभिः 'परिसुद्धं' परिशुद्धं, तथा-'दसहिं य दोसेहिं' दशभिश्च दोषैः-शङ्कितादिदश-दोषैः 'विप्पमुक्कं' विप्रमुक्तम्, 'उग्गमउप्पायणेसणासुद्ध' उद्गमोत्पादनै-षणाशुद्धं=आधाकर्मादयः षोडश उद्गमदोषाः, धात्र्यादयश्च षोडश उत्पादना-दोषाः, तद्रूपाया एषणा=गवेषणा, तया शुद्धम्, तथा—'ववगयचुयचइय-चत्तदेहं च' व्यपगतच्युतत्याजितत्यक्तदेहं च=तत्र व्यपगताः=स्वयं पृथग्भूता आगन्तुका पिपीलिकादयः, च्युताः=मृताः स्वतः परतोवा दातव्यवस्त्वाश्रिताः

उसने साधु के निमित्त दूसरों से हिंसा कराई हो २, और न साधु के निमित्त हिंसा करने वाले की अनुमोदना की गई हो ३। तथा साधु के निमित्त जो स्वयं न पकाया हो १, दूसरों से नहीं पकवाया गया हो २ और न जिसमें पकाने वाले की अनुमोदना की गई हो ३, तथा साधु के निमित्त जो पैसा देकर न खरीदा गया हो १, न दूसरों से खरीदवाया गया हो २ और न जिसमें खरीदने वाले की अनुमोदना की गई हो ३। इस प्रकार की इन नव कोटियो से विशुद्ध आहार आदि की गवेषणा साधु को करनीं चाहिये। (दसहिय दोसेहिं विप्पमुक्कं) जो आहार शंकित आदि दश दोषों से परि वर्जित हो (उग्गम उप्पायणेसणासुद्धं) उद्गम, उत्पादनरूप एषणा-गवेषणा से शुद्ध हो-आधाकर्म आदि सोलह उद्गमदोष हैं, धात्री आदि सोलह उत्पादना दोषों हैं। इन बत्तीस दोषों से जो रहित हो तथा (ववगयचुयचइयचत्तदेहं) (व्यपगत) जिसं

કરાવી ન હોય, કે સાધુને નિમિત્તે હિંસા કરવાની અનુમોદના થઈ ન હોય, તથા સાધુને નિમિત્તે જે તેણે જાતે બનાવ્યું ન હોય, બીજા પાસે બનાવરાવ્યું ન હોય, કે જેને પકવવાની અનુમોદના અપાઈ ન હોય તથા સાધુને નિમિત્તે જે પૈસા આપીને ખરીદ કર્યું ન હોય, કે બીજા પાસે ખરીદ કરાવાયું ન હોય, કે ખરીદનારને ખરીદવાની અનુમોદના કરાઈ ન હોય, એ રીતે નવ પ્રકારે વિશુદ્ધ આહાર આદિની સાધુએ ગવેષણા કરવી જોઈએ (दसहिय दोसेहिं विप्पमुक्कं) જે આહાર શંકિત આદિ દસ દોષોથી રહિત હોય, (उग्गमउ प्पायणे सणा-सुद्धं) ઉદ્ગમ, ઉત્પાદનારૂપ એષણા-ગવેષણાથી શુદ્ધ હોય,-આધાકર્મ આદિ સોળ ઉદ્ગમ દોષ છે, ધાત્રી આદિ સોળ ઉત્પાદના દોષ છે-એ બત્રીસ દોષોથી જે રહિત હોય, તથા (ववगयचुयचइयचत्तदेह) (વ્યપગત) જે આહારમાંથી કીડી આદિ જીવો જાતે જ અલગ થઈ ગયા હોય, તથા (चुय) જીવો સ્વયં ચવ ગયા

पृथिवीकायिकादयः 'चइय' त्याजिताः=दातव्यपदार्थात् दायकेन भृत्यादि द्वारा पृथक्कारिताः, अथवा 'चत्ता' स्वयमेव दायकेन त्यक्ताः=पृथक्कृता देहाः= जीवशरीराणि यस्मादाहारात्तत् तथोक्तम्, अतएव 'फासुयं च' प्रासुकं च= व्यपगतजीवं च, एतादृशम्–आहारमशनादिकं गवेषितव्यम्। तथा कीदृशं भैक्षं न गवेषितव्यम्? इत्याह–'न निसिज्जकहापयोयणक्खासु ओवणीयं' न निषद्य कथाप्रयोजनाख्याश्रुतोपनीतं, तत्र–निषद्य आसने उपविश्य यत् कथा–प्रयोजनं=धर्मकथानिमित्तम् आख्या=श्रुतम्=आख्यान प्रतिबद्धशास्त्रं, तेन तथा–विधकथाकरणेन, यत् उपनीतम्=धर्मकथाकर्त्रे दायकेन दातुमानीतमशनादिकं, तन्न गवेषितव्यमित्यग्रेण सम्बन्धः। तथा–'न तिगिच्छामंतमूलभेसज्जकज्जहेउं' न चिकित्सामन्त्रमूलभैषज्यकार्यहेतु = चिकित्सा=रोगनिवारणलक्षणा, मन्त्रः=

आहार से पिपीलिकादिक जीव स्वयं अलग हो गए हों तथा (चुय) जीव स्वयं चव गये हों अथवा अग्न्यादि के संयोग से चवगये हों, (चइय) दाता ने भृत्यादि द्वारा पृथक् करा दिये हों, (चत्त) स्वयं दाता ने पृथक् कर दिये हों, (फासुयं च) प्रासुक ऐसा अशन आदि मुनिजनों को कल्प्य है और ऐसे ही आहार की उन्हें गवेषणा करनी चाहिये। तथा जो ऐसा न हो उसकी उन्हें गवेषणा नहीं करनी चाहिये, इसी विषयको अब सूत्रकार "न निसिज्ज" इत्यादि पदो द्वारा प्रकट करते हैं, वे कहते हैं कि (न निसिज्जकहापओयणक्खासु ओवणीयं) आसन पर बैठ कर धर्म कथा सुनाते समय यदि कोई दाता उन मुनिजन के पास देने के लिये अशनादि देय द्रव्य लाया हो तो वह उन मुनिजनों को कल्पता नहीं लेना है। तथा–(न तिगिच्छामंनमूलभेसज्जकज्जहेउं) जिस भैक्ष्य की प्राप्ति में मुनि को चिकित्सा–रोगनिवारण के निमित्त

હોય અથવા અગ્નિ આદિના સંયોગથી નાશ પામ્યા હોય, (चइय) દાતાએ નોકરાદિ દ્વારા અલગ કરાવ્યા હોય, (चत्त) દાતાએ જાતે તેમને અલગ કર્યા હોય, (फासुयंच) પ્રાસુક એવાં આહાર આદિ મુનિઓને કલ્પે છે અને એવા જ આહારની તેમણે ગવેષણા કરવી જોઈએ, તથા જે આહાર એવો ન હોય તેની ગવેષણા તેમણે કરવી જોઈએ નહીં એ જ વિષયને હવે સૂત્રકાર "न निसिज्ज" ઈત્યાદિ પદો દ્વારા પ્રગટ કરે છે તેઓ બતાવે છે કે (न निसिज्ज-कहायओयणकखासुओवणीयं) આસને બેસીને ધર્મકથા સંભળાવતી વખતે જો કોઈ દાતા તે મુનિને આપવાને માટે અશનાદિ દેયદ્રવ્ય લાવ્યો હોય તો તે નિજનોને કલ્પતા નથી, તથા (नतिगिच्छामंत मूल भेसज्जकज्जहेउं) જે આહારની પ્રાપ્તિ માટે મુનિને ચિકિત્સા–રોગ નિવારણને માટે ઈલાજ, મંત્ર–

भूतादिनिग्रहलक्षणः, मूलम् वृक्षवल्ल्यादीनां, भैषज्यं=द्रव्यसंयोगरूपम्, एतच्च-तुष्टयरूपं कार्यमेव हेतु र्यत्र तत्तथो भैक्षं न गवेषितव्यमित्यग्रेण सम्बन्धः। तथा-'न लक्खणुप्पायसुमिण जोइस निमित्तकहकुहकप्पउत्तं' न लक्षणोत्पात स्वप्न ज्योतिष निमित्तकथाकुहक प्रयुक्तं=तत्र-लक्षणं=स्त्रीपुरुषादि लक्षणं, उत्पाताः =भूकम्पादिशास्त्राणि, स्वप्नः-स्वप्नशास्त्रम्, ज्योतिषं-नक्षत्रादि शुभाशुभसूचकं शास्त्रम् निमित्तं=भूतभविष्यदादि सूचकं शास्त्रम्, कथा=कामकथा सूचकं शास्त्रम्, कुहकं=परेषां विस्मयोत्पादकप्रयोगः, एभिः प्रयोगैर्विस्मितेन दायकेन प्रयुक्तं

इलाज, मंत्र-भूतादि ग्रह के निग्रह निमित्त उपायभूत मंत्र का प्रयोग, मूल-वनौषधि, एव भैषज्य-अनेक औषधि मिश्रित दवा, ऐसी भिक्षा मुनिजनों को कल्प्य नहीं होती है। तथा न लक्खणुप्पायसुमिणजो-इसनिनित्तकहकुहकप्पउत्तं) जिस भिक्षा की प्राप्ति मुनि को लक्षणों के स्त्री पुरुष आदि के चिह्नादिकों के-दिखाने का प्रदर्शन करना पड़े, भूकंप आदि के शास्त्र का कथन करना पड़े, स्वप्नशास्त्र का, जोतिष-शास्त्र का, निमित्त शास्त्र का, काम कथा सूचक शास्त्र का, तथा दूसरों के लिये आश्चर्योत्पादक प्रयोगों का सहारा लेना पड़े, ऐसी भिक्षा मुनिजन के लिये कल्प्य नहीं है। तात्पर्य इसका यह है कि दाता को उनके हस्त आदि की रेखाओ से प्रसन्न करके, भूकंप आदि का शुभा-शुभफल कथन करके, काम वर्द्धक कथाओं को कह करके, सप्न शास्त्र का प्ररूपण करके, ज्यौतिषशास्त्र में अपनी विद्वत्ता का प्रदर्शन करके तथा आश्चर्यकारी प्रयोगों को दिखा करके यह कहना कि मैं बहुत

ભૂતાદિગ્રહના નિગ્રહને માટે ઉપાયભૂત મંત્રનો પ્રયોગ, મૂળ-વનૌષધિ, અને ભૈષજ્ય-અનેક ઔષધિ મિશ્રિત દવા, આદિ બતાવવું પડે એવો આહાર મુનિ-જનોને કલ્પે નહીં તથા (नलक्खणुप्पाय सुमिणजोइसनिमित्त कह कुहकप्पउ') જે ભિક્ષાની પ્રાપ્તિને માટે મુનિને સ્ત્રી-પુરુષ આદિના ચિહ્નાદિકોને બતાવવાનું પ્રદર્શન કરવું પડે ભૂકંપ આદિના શાસ્ત્રોનું કથન કરવુ પડે, સ્વપ્ન શાસ્ત્ર, જ્યોતિષશાસ્ત્ર, નિમિત્ત શાસ્ત્ર, કામકથા સૂચક શાસ્ત્ર, તથા બીજાને માટે આશ્ચર્યોત્પાદક પ્રયોગો વગેરેની મદદ લેવી પડે એવી ભિક્ષા મુનિજનોને કલ્પે નહીં તેનુ તાત્પર્ય એ છે કે દાતાને તેમના હસ્ત આદિનિ રેખાઓ વડે ખુશ કરીને, ભૂકંપ આદિનું શુભાશુભ ફળ કહીને, કામવર્ધન કથાઓ કહીને, સ્વપ્ન શાસ્ત્રનુ પ્રરૂપણ કરીને, જ્યોતિષશાસ્ત્રમાં પોતાની વિદ્વત્તા બતાવીને, તથા આશ્ચર્યકારક પ્રયોગો બતાવીને પોતે બહુ જ મહાન વિદ્વાન છે એવી છાપ

भैक्षं न गवेषितव्यम् । तथा-' न वि डंमणाए ' नापि दम्भनया=मायाप्रयोगेण भैक्षं गवेषितव्यम्, एवं ' नवि रक्खणाए ' नापि रक्षणया=दायकवस्तुरक्षणेन, ' न वि सासणाए ' नापि शासनया=शिक्षणेन=तव पुत्रपौत्रादिकं शिक्षयिष्या- मीति कथनेन समुदायेनाह—' न विडंभणरक्खणसासणाए ' नापि दम्भन-

बड़ा भारी विद्वान् हूं अतः मुझे यह अच्छी तरह अच्छी भिक्षा देगा, इस प्रकार के उपायों का जिस भिक्षा की प्राप्ति में सहारा लेना पडे वह भिक्षा मुनि को कल्प्य नहीं कही गई है, अर्थात् इस प्रकार की क्रिया से मुनि को भिक्षा लेने का प्रयत्न नहीं करना चाहिये । तथा (न विडंभणाए) मायाचारी का सहारा लेकर भी भिक्षा वृत्ति मुनि को नहीं करनी चाहिये, अर्थात् जिस भिक्षा की गवेषणा करने में माया का प्रयोग करना पड़े ऐसी भिक्षा भी मुनिजन को कल्प्य नहीं है । (नवि रक्खणाए, न वि सासणाए, न विडंभण रक्खणसासणाए भिक्खं यवेसियव्व) इसी तरह जिस भिक्षा की गवेषणा करने में-प्राप्ति करने में-दायक की वस्तु के संरक्षण का भार अपने ऊपर आया हो, अर्थात्-दाता यद कहे कि " महाराज ! आप इस वस्तु को देखे रहना मैं अभी आकर आपको भिक्षा देता हूं-इस प्रकार दाता अपनी वस्तु के संरक्षण करने का भार मुनि को सोंपता हो और पीछे आकर भिक्षा देता हो तो वह भिक्षा मुनि को कल्प्य नहीं है । इसी तरह जीस भिक्षा की प्राप्ति में मुनि को यह भाव जगे कि " मैं इस दाता के पुत्र पौत्र

પાડીને દાતા પાસેથી સારા પ્રમાણમાં સારી ભિક્ષાની આશા રાખવી, વગેરે ઉપાયોનો જે ભિક્ષામાં સહારો લેવો પડે તેવી ભિક્ષા સાધુઓને કલ્પે નહીં એટલે કે એ પ્રકારના ઉપાયોથી સાધુઓએ ભિક્ષા લેવાના પ્રયત્ન કરવા જોઈએ નહી. તથા (नविडंमणाए) માયાચારીની મદદ લઈને પણ મુનિએ ભિક્ષાવૃત્તિ કરવી જોઈએ નહી એટલે કે જે ભિક્ષાની પ્રાપ્તિ માટે માયાનો પ્રયોગ કરવો પડે એવી ભિક્ષા મુનિજનોને કલ્પે નહીં. (न विरक्खणाए, न विसासणाए, न विडंभण रक्खण सासणाए भिक्खं गवेसियव्वं) એ જ પ્રમાણે જે ભિક્ષાની પ્રાપ્તિમા, દાતાની વસ્તુના સંરક્ષણનો ભાર પોતાના પર આવ્યો હોય, એટલે કે દાતા એમ કહે કે " મહારાજ ! આપ આ વસ્તુંનું ધ્યાન રાખજો હું આપને ભિક્ષા આપુ છું " આ રીતે દાતા પોતાની વસ્તુના સંરક્ષણની જવાબદારી મુનિને સોંપે અને પછી આવીને ભિક્ષા અર્પણ કરે તો તે ભિક્ષા મુનિનેકલ્પે નહીં. એ જ પ્રમાણે જે ભિક્ષાની પ્રાપ્તિમાં મુનિના મનમાં એવો ભાવ જાગે કે " હું આ દાતાના પુત્ર, પૌત્ર આદિને ભણાવીશ તો મને

रक्षणशासनेन ' भिक्खं ' भैक्षं ' गवेसियव्वं ' गवेषितव्यम् । तथा-' न वि वंदणाए ' नापि वन्दनया=नापि प्रशंसया " दिग्व्यापिनो भवद्‌गुणाः पूर्वंश्रुताः, परमद्यभवानस्माभिःप्रत्यक्षीकृतः ' इत्येवं रूपया, वन्दनशब्दोऽत्र प्रशंसावाचकः, ' न वि माणणया ' नापि माननया आसनादि प्रदानेन ' न वि पूयणाए ' नापि पूजनया-दायकाय किंचिद्वस्तुप्रदानरूपया एतदेव समुदायेनाह-' न वि वंदण-माणणपूयणाए ' नापि वन्दनमाननपूजनया ' भिक्खं गवेसियव्वं ' भैक्षं गवेषित-

---

आदि को पढ़ा दूंगा तो मुझे इसके यहां से भिक्षा मिलती रहेगी " ऐसे विचार से जो भिक्षा प्राप्त हो तो वह भिक्षा भी मुनि को नहीं लेनी चाहिये । इसी तरह जिस भिक्षा की प्राप्ति में युगपत् दंभन, रक्षण और शासन इनका प्रयोग करना पड़ता हो उस तरह से भी मुनि को भिक्षा की गवेषा नहीं करनी चाहिये । तथा (न वि वंदणाए, न विमाणणाए, न वि पूयणाए, न वि वंदणमाणणपूयणाए, न वि हीलणाए, न वि निंदणाए, न वि गरिहणाए, नवि हीलणा निंदणा गरिहणाए भिक्खं गवेसियव्वं) जिस भिक्षा की गवेषणा करने में साधु को दाता की " आप की गुणराजि दिगन्ततक फैली हुई है- आपकी प्रशंसा मैं ने पहिले से ही सुन रखी है परन्तु साक्षात्कार आप का आज ही हुआ है " इस प्रकार से वंदना-प्रशंसा करनी पडे ऐसी भिक्षा साधु को कल्प्य नहीं हैं । यहां वंदन शब्द प्रशंसार्थक है । जिस भिक्षा की प्राप्ति में दाता को आसन आदि का प्रदान पूर्वक सन्मान करके अर्थात् आसनादि प्रदान द्वारा दाता को प्रसन्न करके भिक्षा की प्राप्ति करनी पडे-ऐसी भिक्षा भी साधु को लेना उचित नहीं है । इसी तरह दाता

तेने त्यांथी भिक्षा मळ्या करशे," એવા વિચારથી જે ભિક્ષા પ્રાપ્ત થાય તે ભિક્ષા પણ સાધુને કલ્પે નહીં વળી જે ભિક્ષાની પ્રાપ્તિમાં યુગપત, દંભ, રક્ષણ અને શાસનનો પ્રયોગ કરવો પડે એ પ્રકારની ભિક્ષાની પ્રાપ્તિ મુનિને કલ્પે નહીં. તથા (न वि वंदणाए, न विमाणणाए, न वि पूयणाए, न वंदणमाणणपूणयाणए, न वि हीलणाए न वि निंदणाए, न वि गरिहणाए. न वि हिलणा निंदणा गरिहणाए भिक्खं गवेसियव्वं) જે ભિક્ષાની પ્રાપ્તિ માટે સાધુને દાતાની ' આપની ગુણરાશિ દિગન્ત સુધી વ્યાપેલ છે, મે આપની પ્રશંસા પહેલેથી જ સાંભળી હતી પણ આપનો સાક્ષાત્કાર તો આજે જ થયો " એ રીતે વંદણા-પ્રશંસા કરવી પડે એવી ભિક્ષા સાધુને કલ્પે નહીં. અહીં વદન શબ્દ પ્રશંસાના અર્થમાં વપરાયો છે. આસનાદિ આપીને દાતાનું સન્માન કરવું પડે અથવા તે રીતે તેમને પ્રસન્ન કરવા પડે તે પ્રકારની ભિક્ષા પણ સાધુને કલ્પે નહીં વળી દાતાને પોતાની તરફથી

व्यम् । तथा-'नवि हीलणाए' नापि हीलनया="त्वं जात्या नीचोऽसि कथं त्वया भिक्षादीयते" इत्यादि दायक जात्युद्घाटनरूपावमाननया 'नवि निंदणाए' नापि निन्दनया="त्वं कृपणोऽसि, वनीपकोऽसि" इति दायकदोषोद्घाटनया, 'न वि गरिहणाए' नापि गर्हणया= जनसमक्षं दायकनिन्दया, समुदायेनाह- 'न वि हीलणनिंधणगरिहणाए' नापि हीलननिन्दनगर्हणया 'भिक्खं-

को अपनी और से कुछ वस्तु देकर उससे भिक्षा की चाहना रख भिक्षा की गवेषणा करने का तरीका उचित नहीं है। अर्थात् इस तरीके से भिक्षा की चाहना करना योग्य नहीं है। इसी तरह युगपत्-एक ही दाता के प्रति वन्दन, मानन और पूजन का प्रयोग कर के साधु को भिक्षा की गवेषणा करना योग्य नही है। तथा दाता की जातिका उद्घाटनरूप अवमानना करके कि "तुम तो जाति में नीच हो भिक्षा कैसे दोगे" इस प्रकार से कहकर के उसे भिक्षा देने के लिये ऋजु करना और फिर भिक्षा कि गवेषणा निमित्त उसके यहां जाना यह भी साधु का भिक्षा प्राप्ति का तरीका साधु समाचारी के योग्य नहीं है। इसी तरह "तुम कृपण हो वनीपक हो" इस प्रकार से दाता के दोषों को उद्घाटन करना और फिर उसे भिक्षा देने के लिये ऋजु करना यह भी साधु के लिये भिक्षा की गवेहणा करने का तरीका कल्प्य नहीं है। जनता के समक्ष दायककी निन्दा करके, तथा एक ही साथ एक ही (दाता दायक के प्रति हीलना, निन्दना तथा गर्हणा करके भिक्षा की गवेषणा

કોઈ વસ્તુ આપીને તેની પાસેથી ભિક્ષા મેળવવાની આશા રાખીને ભિક્ષાની ગવેષણા કરવી તે યુક્તિ પણ સાધુને માટે યોગ્ય નથી એટલે કે આ યુક્તિથી ભિક્ષા મેળવવાની ઇચ્છા રાખવી તે યોગ્ય નથી. વળી યુગપત્-એક જ દાતા પ્રતિ વન્દન, માનન, પૂજન, આદિનો પ્રયોગ કરીને ભિક્ષાની ગવેષણા કરવી તે સાધુને માટે ઉચિત નથી. તથા દાતાની જાતિના ઉલ્લેખરૂપ તિરસ્કાર કરીને દા ત. "તુ તો નીચ છે, ભિક્ષા કેવી રીતે દઈશ" આ રીતે કહીને તેને ભિક્ષા અર્પણ કરવાને માટે ઋજુ કરવો અને પછી ભિક્ષાની પ્રાપ્તિ માટે તેને ત્યા જવુ, એ ભિક્ષા પ્રાપ્તિનો ઉપાય સારા આચાર વાળા સાધુને માટે ઉચિત નથી. એ જ પ્રમાણે "તમે કંજુસ છો વનીપક છો" એ રીતે દાતાના દોષો જાહેર કરીને પછી તેને ભિક્ષા દેવા માટે ઋજુ કરવો એ ઉપાય પણ સાધુને ભિક્ષાપ્રાપ્તિ માટે કલ્પતો નથી, લોકોની સમક્ષ દાતાની નિન્દા કરીને તથા એક સાથે દાતાની હિલના (તિરસ્કાર) નિન્દા, તથા ગર્હણા કરીને ભિક્ષાની ગવેષણા કરવી તે સાધુને માટે ઉચિત નથી. એજ પ્રમાણે (न वि भेसणाए,

गवेसियव्वं ' भैक्ष गवेपितव्यम् । तथा ' नवि भेसणाए ' नापि भीषणया=दायकभयोत्पादनया, ' न वि तज्जणाए ' नापि तर्जनया-" ज्ञास्यसि रे दुष्ट ! इत्यादि तिरस्काररूपया ' न वि तालणाए ' नापि ताडनया=चपेटादिदान-रूपया, समुदायेनोच्यते—' न वि भेसणतज्जणतालणाए ' नापि भीषणतर्जन ताडनया भैक्षं गवेषितव्यम् । तथा ' नवि गारवेणं ' नापि गौरवेण ' अहं क्षत्रियोऽस्मीत्याद्यभिमानेन, ' न वि कुहणाए ' नापि कुहनया क्रोधेन, ' न वि वणिमगयाए' नापि वनीपकतया-याचकवृत्त्या, समुदायेनाह—' न वि गारव-कुहणवणिमगयाए ' नापि गौरवक्रोधवनीपकतया भैक्षं गवेषितव्यम् । तथा-' न वि मित्तयाए ' नापि मित्रतया=दायकेन सह मैत्रीभावोत्पादनेन, ' न वि पत्थणाए ' नापि प्रार्थनया, " यूयं दायकाः, याचकरक्षकाः वयं याचकाः,

---

करना साधु को योग्य नहीं है। इसी तरह (न वि भेसणाए, नवि-तज्जणाए, न वि तालणाए, न वि भेसण-तज्जण-तालणाए भिक्खं गवेसियव्वं) दायक (दाता) को भय का उत्पादन करके, " रे दुष्ट मैं तुझे बतलाऊँगा " इस प्रकार दाता का तिरस्कार करके, दायक (दाता) को मारपीट करके, तथा एक ही साथ एक ही दायक (दाता) के साथ भीषणा, तर्जना और ताडना करके भिक्षा की गवेषणा नहीं करनी चाहिये। तथा-(न वि गारवेणं न वि कुहणाए, न वि वणीमगयाए नवि गारवकुहणवणीमगयाए भिक्खं गवेसियव्वं) " मैं क्षत्रिय हूं " इत्यादि अभिमान रूप गौरव से, क्रोध से, एवं याचक वृत्ति से, तथा एक ही साथ गौरव क्रोध एवं याचक वृत्ति से भी भिक्षा की गवेषणा नहीं करनी चाहिये। (न वि मित्तयाए न वि पत्थणाए न वि सेवणाए न वि मित्तय-पत्थण-सेवणाए भिक्खं गवेसियव्वं) तथा

न वि तज्जणाए, न वि तालणाए, न वि भेसण-तज्जण-तालणाए भिक्खं गवेसियव्वं " દાતાને ભય બતાવીને " રે દુષ્ટ હું તને બતાવી દઈશ " એ રીતે દાતાનો તિરસ્કાર કરીને, દાતાને માર મારીને તથા એક સાથે દાતા પ્રત્યે ભીષણા તર્જના અને તાડના કરીને ભિક્ષાની ગવેષણા કરવી જોઈએ નહીં તથા " न वि गारवेणं, न वि कुहणाए, न वि वणीमगयाए न वि गारवकुहण-वणीमगयाए भिक्खं गवेसियव्वं " " હું ક્ષત્રીય છું " આદિ અભિમાનરૂપ ગૌરવથી, ક્રોધથી, અને યાચક વૃત્તિથી તથા એક સાથે ગૌરવ, ક્રોધ અને યાચક વૃત્તિથી પણ ભિક્ષાની ગવેષણા કરવી જોઈએ નહીં " न वि मित्तयाए, न वि पत्थणाए, न वि सेवणाए, न वि मित्तय-पत्थण-सेवणाए भिक्खं गवेसियव्वं " તથા દાતાની સાથે મિત્રતા કરીને, " આપ દાતા છો, યાચકોના

दीयतामस्मभ्य" मित्यादिरूपया, 'नवि सेवणया' नापि सेवनया=नापि सेवावृत्त्या, समुदायेनाह–'न वि मित्तयपत्थण सेवणाए' नापि मित्रता प्रार्थना सेवनया भैक्षं गवेषितव्यम्। तर्हि कथं गवेषितव्यम्? इत्याह–'अण्णाए' अज्ञात्तः='धनिकोऽयं प्रव्रजितः' इति दायकजनैरज्ञातः, 'अगड्डिए' अगृद्धः= आहारादिषु गृद्धभाववर्जितः, 'अदुट्ठे' अद्विष्टः–आहारेषु दायकेषु वा द्वेषभाववर्जितः, 'अदीणे' अदीनः=दीनतावर्जितः, 'अविमणे' 'अविमनाः=अलाभादिप्रयुक्तमानसिकविकाररहितः, 'अकलुणे' अकरुणः=स्वदुःखाप्रदर्शकः 'अविसाई' अविषादी=

दायक–दाता के साथ मित्रता करके, "आप दाता हैं—याचकों के संरक्षक हैं, हम याचक हैं अतःआप हमें भिक्षा दीजिये" ऐसी दाता से प्रार्थना करके, तथा दाता की सेवा वृत्ति करके भिक्षा की गवेषणा नहीं करनी चाहिये। इसी तरह इन तीनों बातों को एक साथ किसी दाता के साथ प्रयुक्त करके भिक्षा की गवेषणा साधु को नहीं करनी चाहिये। किन्तु (अण्णाए अगड्डीए अदुट्ठे अदीणे अविमणे अकलुणे अविसाई अपरितंतजोगी-जयण-घडण-करणचरिय विनय गुणजोग संपउत्ते भिक्खू भिक्खेसणाए णिरए) अज्ञात–दायक (दाता) जनों से "यह साधु धनिक थे और धनिक अवस्था से दीक्षित हुए हैं" इस रूप से अज्ञात बनकर अगृद्ध–आहार आदि में गृद्धभाव से वर्जित होकर, अद्विष्ट–आहार अथवा दाता में द्वेषभाव से विहीन होकर, अदीन–दीनता के भाव से रहित होकर, अविमना–भिक्षा के नहीं मिलने पर मानसिक विकार से

સંરક્ષક છો, અમે યાચક છીએ, તો આપ અમને ભિક્ષા આપો" એવી દાતાને પ્રાર્થના કરીને તથા દાતાની સેવાવૃત્તિ કરીને ભિક્ષા પ્રાપ્ત કરવી જોઇએ નહીં, એ જ રીતે એ ત્રણે બાબતોનો દાતા પાસે એક સાથે પ્રયોગ કરીને સાધુએ ભિક્ષાની ગવેષણા કરવી જોઈએ નહીં પણ "अण्णाए अगड्डिढए अदुट्ठे अदीणे अविमणे अकलुणे अविसाई अपरितंकजोगी जयणघडणकरणचरियविनयगुण जोगसंपउत्ते भिक्खु–भिक्खेसणाए णिरए" अज्ञात–"આ સાધુ ધનિક હતાં એટલે કે ધનિક સ્થિતિમાંથી દીક્ષિત થયેલ છે" એ વિષે દાતાઓથી અજ્ઞાત રહીને. અગૃદ્ધ–આહાર આદિમાં ગૃદ્ધ ભાવથી રહિત બનીને, અદ્વિષ્ટ–આહાર અથવા દાતા પ્રત્યે દ્વેષ ભાવ રહિત થઈને, अदीन–દીનતાના ભાવથી રહિત થઈને, અવિમના–ભિક્ષા ન મળવા છતાં પણ માનસિક વિકારથી રહિત થઇને અકરુણ–કોઈ પણ પ્રકારે પોતાના દુઃખને કોઇ પણ રીતે પ્રગટ નહીં કરીને,

'भिक्षालाभो भविष्यति न वे' त्यादि विषादरहितः, तथा—' अपरितंत जोगी ' अपरितान्तयोगी=अलाभादिषु तन्तनाटादि शब्दवर्जितः, तथा—' जयण-घडणकरणचरियविणयगुणजोगसंपउत्ते ' यतनघटनकरणचरितविनयगुणयोग—संप्रयुक्तः, तत्र—यतनं प्राप्तेषु संयमयोगेषु उद्यमः, घटनम्=अप्राप्तसंयमयोगप्राप्ति-चेष्टनम्, एतद् द्वयं कुरुते यः स यतनघटनकरणः, तथा—'चरितविनयः'=सेवितो येन स चरितविनयः, तथा—गुणयोगेन=समाधिगुणयोगेन संप्रयुक्तो यः स—गुण-योगसंप्रयुक्ताः, एतेषां कर्मधारयः, एतादृशो ' भिक्खू ' भिक्षुः=साधुः ' भिक्खे-सणानिरए ' भिक्षैषणानिरतः=भिक्षागवेषणायां निरतो भवेदिति सम्बन्धः, एवम्भूतेन भिक्षुणा भैक्षं गवेषितव्यमिति भावः। अथोपसंहरन्नाह—' इमं च ' इत्यादि—' इमं च णं सव्वजगजीवरक्खणदयट्ठयाए पावयणं ' इदं च खलु ' पावयणं ' प्रवचनं ' सव्वजगजीवरक्खणदयट्ठयाए ' सर्वे ये जगज्जीवाः=षड्-जीवनिकायाः, तेषां रक्षणरूपा या दया=अनुकम्पा तदर्थं—सर्वजगज्जीवरक्षणदया-र्थम् ' भगवया ' भगवता महावीरेण ' सुकहियं ' सुकथितं न्यायाबाधितत्वात्,

---

रहित होकर, अकरुण—अपने दुःख को किसी के पास किसी भी रूप में प्रकट नहीं करके, अविषादी—" भिक्षा का लाभ मुझे होगा या नहीं होगा " इस प्रकार के विषाद भाव को छोड़ करके अपरितंतजोगी-भिक्षावृत्ति नहीं मिलने पर तनतनाने की वृत्ति का परित्याग करके, तथा- यतनघटनकरण - प्राप्त संयम में उद्यमशील तथा अप्राप्त संयम की प्राप्ति करने में निरन्तर चेष्टाशील, ऐसा साधु कि जो चरित विनय-विनय से युक्त बना हुआ है, तथा गुणयोगसंप्रयुक्त-समाधिगुण के योग से जो युक्त हो रहा है ऐसा होकर भिक्षु-मुनि भिक्षैषणा में-भिक्षा की गवेषणा करने में निरत होवे। (इमं च णं पावयणं) यह प्रवचन (सव्वजगज्जीवरक्खणदयट्ठाए) षट् निकायरूप जगत के जीवों की रक्षणरूप दया के निमित्त (भगवया सुकहियं) भगवान्

अविषादी—" મને ભિક્ષાનો લાભ મળશે કે નહીં મળે " એ પ્રકારના વિષાદ ભાવને છોડીને, अपरितंतजोगी—ભિક્ષા નહીં મળતા તનતનાવ ની વૃત્તિનો પરિ-ત્યાગ કરીને, તથા यतनघटनकरण—પ્રાપ્ત સંયમમાં ઉદ્યમશીલ તથા અપ્રાપ્ત સંયમની પ્રાપ્તિ કરવામાં નિરન્તર પ્રયત્નશીલ, એવો સાધુ કે જે चरितविनय વિનયથી યુક્ત થયેલ છે, તથા गुणयोगसंप्रयुक—સમાધિ ગુણના યોગથી જે યુક્ત થયેલ છે, એવા થઈને ભિક્ષુ-મુનિ ભિક્ષાની ગવેષણા કરવાને પ્રયત્નશીલ થાય, " इमंच णं पावयणं " આ પ્રવચન " सव्वजगज्जीव रक्खणदयट्ठाए " જગતના છકાયના જીવોની રક્ષારૂપ દયાને નિમિત્તે " भगवया सुकहियं "

'अत्तहियं' आत्महितम्=आत्मनां जीवानां हितं-हितकारणात्, 'पेच्चाभावियं' प्रेत्यभाविक-प्रेत्य = जन्मान्तरे भवति=शुभफलतया परिणमतीत्येवं शीलम्, तथा-'आगमेसि भद्दं' आगमिष्यद् भद्रम्=भाविकल्याणजनकम् 'सुद्धं' शुद्धं=निर्दोषम् 'नेयाउयं' नैयायिकं=न्याययुक्तम् 'अकुडिलं' अकुटिलम् ऋजुमोक्षप्रापकत्वात्, 'अणुत्तरं' अनुत्तरम्-सर्वप्रधानत्वात्, तथा-'सव्व-दुक्खपावाण' सर्वदुःखपापानां 'विउसमणं' व्युपशनम्=उपशमकारकमिदं प्रवचनमिदं प्रवचनमिति पूर्वेण सम्बन्धः ॥ सू०५ ॥

महावीर ने कहा है-इस कथन में किसी भी तरह से युक्ति और शास्त्र से बाधा नहीं आती है। (अत्तहियं) यह जीवों का हितकारक है और (पेच्चाभावियं) परभव में शुभ फलरूप से यह परिणमता है। इसीलिये (आगमेसिभद्दं) भविष्यकाल में यह कल्याणजनक है। (सुध्धं) भगवान द्वारा प्रतिपादित होने के कारण इसमें किसी भी तरह से कोई पूर्वापरविरोधरूप दोष नहीं आता है-इसलिये शुद्ध-निर्दोष है, तथा (नेयाउयं) न्याययुक्त है। (अकुडिलं) इसकी आरा-धना करने से जीव मोक्ष को प्राप्त करलेते हैं इसलिये यह अकुटिल-ऋजु है। (अणुत्तरं) समस्त सिद्धान्तों में इसकी प्रधानता होने से यह अनुत्तर है। तथा (सव्वदुक्खपावाणविउसमणं) समस्त दुःखों का और पापों का यह उपशमकारक है।

भावार्थ—सूत्रकार इस सूत्र द्वारा यह प्रकट कर रहे हैं कि जो अहिंसारूप संवरद्वार को पालन करने के लिये उद्यत हैं उनका यह

ભગવાન મહાવીરે કહેલ છે-આ કથનમાં કોઈ પણ પ્રકારે-યુક્તિ અને શાસ્ત્રથી બાધો આવતો નથી "अत्तहिय" તે જીવોનુ હિતકર્તા છે અને "पेच्चा भाविय" પરભવમાં શુભ ફળરૂપે તે પરિણમે છે તેથી "आगमेसिभद्दं" ભવિષ્યકાળમાં તે કલ્યાણજનક છે. "सुद्ध" ભગવાન દ્વારા પ્રતિપાદિત હોવાથી તેમાં કોઇ પણ પ્રકારે કોઈ પૂર્વાપર વિરોધરૂપ દોષ આવતો નથી તેથી શુદ્ધ-નિર્દોષ છે, તથા "नेयाउयं" ન્યાયયુક્ત છે. "अकुडिल" તેની આરાધના કરવાથી જીવ મોક્ષને પ્રાપ્ત કરે છે તે કારણે તે अकुटिल-ऋजु છે, (अणुत्तर) સમસ્ત સિદ્ધાન્તોમાં તે મુખ્ય હોવાથી તે अणुत्तरं-સર્વોત્તમ છે. તથા "सव्वदुक्खपावाण विउसमणं" સમસ્ત દુઃખો તથા પાપોનું તે ઉપશમન કરનાર છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકાર આ સૂત્ર દ્વારા એ પ્રગટ કરે છે કે જેઓ અહિંસા રૂપ સંવરદ્વારનું પાલન કરવાને તત્પર છે, તેમનું એ કર્તવ્ય છે કે છકાયના

कर्त्तव्य है कि छहकाय के जीवों की रक्षा करें। क्यों कि यह लोक इन्हीं जीवों से भरा हुआ है अतः अपनी प्रत्येक प्रवृत्ति संयमित रखने से छहकाय के जीवों की रक्षा होती है। मुनिजन इस अहिंसा महाव्रत के पालक होते हैं अतः उनके लिये प्रभु का आदेश है कि वे ऐसे उञ्छ आहार आदि की गवेषणा करने में निरत रहें कि जो शुद्ध हो, अकृत, अकारित, अननुमोदित, अनाहूत, अनुद्दिष्ठ, अक्रीतकृत, नवकोटिविशुद्ध, शंकितादिदोषवर्जित, आधाकर्मादि दोषों से विहीन एवं जीवजन्तु रहित हो। ऐसा ही आहारादि उन्हें उनकी सामाचारी के अनुसार कल्पित कहा गया है। इससे विपरीत उनके अहिंसामहाव्रत के प्रतिकूल कहा गया है। इसलिये उन्हें उपाश्रय में दाता द्वारा देने के लिये लाये गये आहार को कभी नहीं लेना चाहिये। चिकित्सा आदि करके जिसभिक्षा की प्राप्ति हो वह भी उन्हें वर्जनीय कही गई है। कारण मुनिजन सिंहवृत्ति के धारक होते हैं और अयाचक-वृत्ति वाले होते हैं, इस प्रकार के व्यवहार से प्राप्त भिक्षा में सिंहवृत्ति का संरक्षण नहीं होता है। भिक्षा की गवेषणा में दंभ का आचरण नहीं होना चाहिये, दायक (दाता) की वस्तु के रक्षण का प्रश्न नहीं होना चाहिये और न कोई ऐसी बात ही होना चाहिये कि जिससे मुनि के

જીવોની રક્ષા કરે. કારણ કે આ લોક એ જ જીવોથી ભરેલ છે, તેથી પોતાની દરેક પ્રવૃત્તિ સયમિત રાખવાથી છકાયના જીવોની રક્ષા થાય છે મુનિજન આ અહિંસા મહાવ્રતના પાલક હોય છે, તેથી તેમને માટે ભગવાનનો આદેશ છે કે તેઓ એવા ઉઞ્છ આહાર આદિની ગવેષણા કરે કે જે શુદ્ધ હોય, અકૃત, અકારિત, અનનુમોદિત,, અનાહૂત, અનુદ્દિષ્ટ, અક્રીતકૃત, નવકોટિ વિશુદ્ધ શંકિત આદિ દોષ રહિત, આધાકર્માદિ દોષોથી રહિત અને જીવજન્તુ રહિત હોય. એવો આહાર જ તેમની સમાચારી અનુસાર તેમને માટે કલ્પે તેવો કહેલ છે. તેનાથી ઉલટો આહાર અહિંસા મહાવ્રતને પ્રતિકૂળ ગણાયો છે તેથી તેમણે ઉપાશ્રયમા દાતા દ્વારા અર્પણ કરવા માટે લેવાયેલ આહાર કદી લેવો જોઈએ નહીં ચિકિત્સા આદિ કરીને જે ભિક્ષાની પ્રાપ્તિ થાય તે પણ તેમને માટે ત્યાજ્ય ગણેલ છે, કારણ કે મુનિજન .સિંહવૃત્તિના ધારક હોય છે તથા અયાચક વૃત્તિ વાળા હોય છે. આ રીતે મેળવેલ આહારમાં સિંહવૃત્તિ તથા અયાચકવૃત્તિનુ સરક્ષણ થતું નથી ભિક્ષાની ગવેષણામાં દંભનું આચરણ થવું જોઈએ નહી, દાતાની વસ્તુના રક્ષણનો પ્રશ્ન ઊભો થવો જોઈએ નહી કે કોઈ વાત ન બનવી જોઈએ કે જેથી મુનિના આચારવિચારમાં અન્તર પડે.

आचार विचार में अन्तर पड़ता हो। मैं तुम्हारे पुत्र को पढादूंगा, आप के गुण दिगन्ततक व्यापक हो रहे हैं आप बड़े दानी हैं, मैं ने आप को आज ही देखा है वैसे तो आपकी कीर्ति कई बार सुन चुका हूं, ये सब बातें ऐसी हैं जो मुनि की आत्मा को हीन बनाती हैं उसे अपने कर्तव्य से गिराती हैं। इन सब बातों से जो आत्मा का पतन होता है वह सबसे बड़ी हिंसा है। इसीलिये मुनि को इस प्रकार के व्यवहार से प्राप्त होने वाली भिक्षा की गवेषणा करने का निषेध किया गया है। तथा दाता के प्रति मुनि को ऐसा भी व्यवहार नहीं करना चाहिये कि जिससे उसकी आत्मा में क्लेश भाव जगे, जैसे-"तू कृपण है, वनीपक-याचक है तू क्या भिक्षा देगा, नीच व्यक्ति जो होते हैं वे भिक्षा नहीं देते हैं" इत्यादि अपमान जनक शब्दों में एक तो भाषा समिति नहीं पलती है, तथा ऐसे व्यक्तियों में जिस किसी प्रकार से भिक्षा देने का जोश जागता है जो उस भिक्षा में शुद्धि का बाधक होता है; भिक्षा देते समय जिस आत्मा में संक्लेश जगे वह भिक्षा मुनिजनों को अग्राह्य कही गई है। जिस प्रकार फूल को बाधा न पहुंचाकर उससे भ्रमर रस पी लेता है उसी प्रकार दाता को किसी भी प्रकार का संक्लेश न

"હું તમારા પુત્રને ભણાવીશ, આપના ગુણો દિગન્ત સુધી ફેલાયેલ છે, આપ મોટા દાતા છો, આપની કીર્તિ તો મે ઘણીવાર સાંભળી છે પણ આપને જોવાનો લાભ તો આજ જ મળ્યો" આ બધી વાતો એવી છે કે જે મુનિના આત્માને હીન બનાવે છે તેને પોતાની ફરજ ચૂકાવે છે. આ બધી વાતોથી આત્માનું જે પતન થાય છે તે સૌથી મોટી હિંસા છે, તે કારણે એવા પ્રકારના વ્યવહારની પ્રાપ્ત થતી ભિક્ષા ગ્રહણ કરવાનો મુનિને માટે નિષેધ છે— તથા મુનિએ દાતા પ્રત્યે એવો વ્યવહાર પણ ન કરવો જોઇએ કે જેથી તેના આત્મામાં ક્લેશ થાય, દા. ત. "તું કૃપણ છે, વનીપક-યાચક છે, તું શું ભિક્ષા આપી શકવાનો છે, જે નીચ વ્યક્તિ હોય છે તે ભિક્ષા દેતી નથી." ઇત્યાદિ અપમાન જનક શબ્દોમાં એક તો ભાષા સમિતિનું પાલન થતું નથી, તથા એવી વ્યક્તિઓમાં ગમે તે રીતે ભિક્ષા આપવાનો જુસ્સો પેદા થાય છે, જે તે ભિક્ષાની શુદ્ધિમાં બાધક થાય છે ભિક્ષા દેતી વખતે દાતાના આત્માને ક્લેશ થતો હોય તો એવી ભિક્ષા મુનિજનોને માટે અગ્રાહ્ય-(ન સ્વિકારવાને યોગ્ય) દર્શાવેલ છે જેમ ફૂલને નુકશાન પહોંચાડ્યા વિના ભમરો તેમાંથી રસપાન કરે છે તેમ દાતાને કોઇ પણ પ્રકારનો ક્લેશ પહોંચાડ્યા વિના તેમની

अहिंसायाः पञ्च भावना भवन्तीति ताः प्रतिपादयन् प्रथमामीर्यासमितिरूपां भावनामाह—'तस्स इमा' इत्यादि—

मूलम्—तस्स इमा पंच भावणाओ पढमस्स वयस्स हुंति, पाणाइवायवेरमणं परिरक्खणट्ठयाए । पढमं-ठाण-गमण गुणजोगजुंजणजुगंतर-निवइयाए दिट्ठीए इरियव्वं कीड-पयंगतसथावरदयावरेण निच्चं पुप्फफलतयपवालकंदमूल-दगमट्टियवीयहरिय परिवज्जणए सम्मं, एवं खु सव्वे पाणा ण हीलियव्वा न नदियव्वा न गरहियव्वा न हिंसियव्वा न छिंदियव्वा न भिंदियव्वा न वहेयव्वा न भयं दुक्खं च किंचिलब्भा पावेउं जे एवं इरियासमियजोगेण भाविओ भवइ अंतरप्पा असबलमसंकिलिट्ठानिव्वणचारित्तभावणाए अहिंसए संजए सुसाहू ॥ सू० ६ ॥

पहूँचाकर उससे मुनिजन मात्रा में भिक्षा लेते हैं। इसी तरह और भी कौन २ सी प्रवृत्तियां भिक्षा की गवेषणा करने में बाधक होती हैं— वे सब इस सूत्र में प्रदर्शित की गई हैं, । मुनि को भिक्षा की गवेषणा करते समय अज्ञात, अगृद्ध, अद्विष्ट, अदीन, अविमन, अकरुण, अविषादी और अपरितांतयोगी आदि स्थिति वाला रहना चाहिये । तभी जाकर पूर्णरूप से अहिंसा महाव्रतरूप संवरद्वारपलता है ॥—॥ सू० ५ ॥

પાસેથી મુનિજન પરિમિત પ્રમાણમાં ભિક્ષા ગ્રહણ કરે છે એ જ પ્રકારે બીજી કઇ કઈ પ્રવૃત્તિયો ભિક્ષાની ગવેષણા કરવામાં બાધક થાય છે તે બધું આ સૂત્રમાં બતાવ્યું છે, ભિક્ષાની ગવેષણા કરતી વખતે મુનિએ અજ્ઞાત, અગૃદ્ધ, અદ્વિષ્ટ, અદીન, અવિમન, અકરુણ, અવિષાદી, અને અપરિતાંતયોગી આદિ સ્થિતિ વાળા રહેવું જોઈએ ત્યારે જ પૂર્ણ રીતે અહિંસા મહાવ્રતરૂપ સંવરદ્વારનું પાલન થાય છે ॥ સૂ-૫ ॥

टीका--'तस्स' इत्यादि।

'तस्स' तस्य प्रसिद्धस्य 'पढमस्स वयस्स' प्रथमस्य व्रतस्य = अहिंसा व्रतस्य 'इमा पंच' इमाः पञ्च 'भावणाओ' भावनाः=भाव्यते वास्यते आत्मा याभिस्ताः ईर्यासमित्यादयः 'हुंति' भवन्ति। किमर्थं पञ्च भावना भवन्ती ? -त्याह -' पाणाइवायवेरमणपरिरक्खणट्ठयाए ' प्राणातिपात-विरमणपरिरक्षणार्थाय = प्राणातिपातविरमणलक्षणस्य प्रथममहाव्रतस्य परिरक्षणार्थाय। तत्र

इन व्रतों को स्थिर रखने के लिये प्रत्येन व्रत की पांच २ भावनाएँ हैं सो अब सूत्रकार अहिंसाव्रत की जो पांच भावनाएं होती हैं उनमें सब से पहिली ईर्या समितिरूप पहिली भावना को प्रकट करते हैं— 'तस्स इमा' इत्यादि०।

टीकार्थ—(तस्स) उस प्रसिद्ध (पढमस्स वयस्स) प्रथमव्रत की (इमा पंच भावणाओ हुंति) ये ईर्यासमिति आदि पांच भावनाएँ होती है। क्यों कि इन भावनाओं से (पाणाइवायवेरमणपरिरक्खणट्ठाए) प्राणातिपातविरमण रूप जो अहिंसा व्रत है उसकी अच्छी तरह रक्षा होती है। तात्पर्य कहने का यह हैं कि अत्यन्त सावधानी के साथ विशेष २ प्रकार की अनुकूल प्रवृत्तियो का सेवन न किया जाय तो स्वीकार करने मात्र से ही व्रत आत्माको अपने रूप नहीं बना सकते हैं, अर्थात् वे आत्मा में चिरस्थायी नहीं रह सकते हैं, निर्दोषरूप से सावधानी के साथ उनका पालन नहीं हो सकता है–वे यथार्थरूप में आत्मा में नहीं उतर सकते। ग्रहण किये हुए व्रत जीवन को यथार्थरूप से अपने रूप में रंग सके–अपनी अटल छाप आत्मा पर जमा सकें इसलिये प्रत्येक व्रत के

એ પાંચ વ્રતોને સ્થિર રાખવા માટે પ્રત્યેક વ્રતની પાંચ પાચ ભાવના છે. હવે સૂત્રકાર અહિંસાવ્રતની જે પાંચ ભાવના છે તેમાંની સૌથી પહેલી ઈર્યા સમિતિ આદિ આ પાચ ભાવના પ્રગટ કરે છે—" तस्स इमा " ઇત્યાદિ

" तस्स " તે પ્રસિદ્ધ "पढमस्स वयस्स" પ્રથમ વ્રતની "इमा पच भावणा-हु ति " ઈર્યાસમિતિ આદિ આ પાંચ ભાવનાઓ હોય છે કારણ કે તે ભાવનાઓથી " पाणाइवायवेरमणपरिरक्खणट्ठाए " પ્રાણાતિપાત વિરમણરૂપ જે અહિંસાવ્રત છે તેની સારી રીતે રક્ષા થાય છે. કહેવાનો ભાવ એ છે કે અત્યંત સાવધાનીથી ખાસ ખાસ પ્રકારની અનુકૂળ પ્રવૃત્તિયોનું સેવન ન કરાય તો સ્વીકાર કરવા માત્રથી જ વ્રત આત્મામાં ચિરસ્થાયી રહી શકતું નથી- નિર્દોષ રીતે સાવધાનીથી તેનુ પાલન થઈ શકતું નથી. તે યથાર્થ રૂપે આત્મામાં ઉતરી શકતાં નથી. ગ્રહણ કરાયેલ વ્રતો જીવ-નને યથાર્થ રીતે પોતાના રંગે રંગી શકી-પોતાની અટલ છાપ આત્મા પર જમાવી શકે-આત્મામા ઉંડાણથી પ્રવેશી શકે, તે માટે પ્રત્યેક વ્રતને અનુકૂળ

'पढमं' प्रथमम्=ईर्यासमिति भावनामाह—'ठाणगमणगुणजोगजुंजणजुगंतरनिवइयाए' स्थानगमनगुणयोगयोजनयुगान्तर-निपातिकया-'ठाण' स्थानम् = उपवेशनमित्यर्थः, 'गमण' गमनं=चलनम्, तत्र गुणः=त्रसस्थावरोपघातवर्जनरूपः, तस्य योगः=सम्बन्धस्तं योजयति=करोति या सा स्थानगमनगुणयोगयोजना, तथा-युगान्तरे=युगप्रमाणभूभागे निपतति या सा युगान्तरनिपातिका,

---

अनुकूल पड़नेवाली थोडी बहुत प्रवृत्तियां स्थूल दृष्टि से विशेष रूप में गिनाई गई हैं। जो भावना के नाम से प्रसिद्ध हैं। यदि इन भावनाओं के अनुसार बराबर वर्ताव किया जाय तो गृहीत व्रत उत्तम औषधि के समान प्रयत्नशील के लिये सुंदर परिणाम कारक सिद्ध होते हैं। यही बात "परिरक्खणट्ठाए" इस पद द्वारा यहां ध्वनित की गई है। इन पांच भावनाओं में जो (पढमं) पहिली ईर्यासमिति नामकी जो भावना है वह इस प्रकार है (ठाणगमणगुणजोगजुंजण-जुंगंतर निवइयाए) स्व पर को क्लेश न हो इस प्रकार यत्न पूर्वक गमन करना इसका नाम ईर्यासमिति है। इसी का विशेष खुलाशा सूत्रकार इसपद द्वारा कर रहे हैं-स्थान-बैठना और गमन-चलना इनमें जिसके द्वारा इस प्रकार की प्रवृत्ति होनी चाहिये कि जिससे त्रस और स्थावर जीवोंका उपघातक न हो, इस गुणरूप संबंध को जो जोड़ने वाली हो तथा जिससे युगप्रमाण भूमिभाग का अवलोकन हो रहा हो, अर्थात् चलते २ साधु अपने आगे की युगप्रमाण भूमि का

આવનારી થોડી ઘણી પ્રવૃત્તિયો સ્થૂલ દૃષ્ટિથી વિશેષ રૂપે ગણાવવામાં આવેલ છે, જે ભાવનાને નામે પ્રસિદ્ધ છે. જો તે ભાવનાઓ પ્રમાણે બરાબર વર્તન કરાય તો ગ્રહણ કરાયેલ વ્રત પ્રયત્નશીલ વ્યક્તિને માટે ઉત્તમ ઔષધિ સમાન કાર્ય સાધક સિદ્ધ થાય છે એ જ વાત "परिरक्खणट्ठाए" પદ દ્વારા અહીં દર્શાવવામા આવી છે. એ પાચ ભાવનાઓમાં જે "पढमं" પહેલી ईर्यासमिति નામની જે ભાવના છે તે આ પ્રમાણે છે "ठाणगमणजोगजुंजणजुंगंतरनिवइयाए" પોતાને કે પરને કલેશ ન થાય તે પ્રમાણે જતન પૂર્વક ગમન કરવું તેનું નામ ઈર્યાસમિતિ છે. તેનું વધારે સ્પષ્ટીકરણ સૂત્રકાર આ પદ દ્વારા કરે છે-સ્થાન-બેસવુ અને ગમન-ચાલવાની ક્રિયામા તેમના દ્વારા એ રીતની પ્રવૃત્તિ થવી જોઈએ કે જેથી ત્રસ અને સ્થાવર જીવોની હત્યા ન થાય, આ ગુણ રૂપ સંબધને જે જોડનારી હોય તથા જેથી યુગ પ્રમાણ ભૂમિભાગનું અવલોકન થતું હોય એટલે કે ચાલતી વખતે પોતાની આગળથી યુગ પ્રમાણ ભૂમિનું

अनयोः कर्मधारयः, तया, 'दिट्ठीए' दृष्ट्या, 'कीडपयंगतसथावरदयावरेण' कीटपतंगत्रसस्थावरदयापरेण, तत्र–कीटाः=क्षुद्रजन्तवो नीलकु 'लट' शङ्खादयः, पतङ्गाः=प्रसिद्धाः, इत्यादयः, त्रसस्थावराश्चैकेन्द्रियाः, तेषु दयापरस्तेन, तथा– 'पुप्फफलतयपवालकंदमूलदगमट्टियबीयहरियपरिवज्जिएण' पुष्पफलत्वक्–प्रवाल-कन्दमूलदकमृत्तिकाबीजहरितपरिवर्जितेन–तत्र–पुष्पं फलं च प्रसिद्धम्, त्वक्= पुष्पफलादीनां त्वचा, प्रवालः=पत्राङ्कुरः, कन्दः, सूरणादिकः, मूलम् = मूलकं 'दगं' दकं=जलम्, मृत्तिका, बीजम्, हरितः=हरितकायः, एते परिवर्जिता येन स तेन, मुनिना 'निच्चं' नित्यं 'सम्मं' सम्यक्=यतनापूर्वकम्, 'ईरियव्वं' ईरितव्यं–मार्गे गन्तव्यम्। 'एवं–खु' एवं=अमुना प्रकारेण प्रवर्त्तनेन खलु तस्य मुनेः 'सव्वे' सर्वे 'पाणा' प्राणाः=प्राणिनः, 'न हीलियव्वा न हीलयितव्याः

जिससे अच्छी तरह अवलोकन कर चल रहा हो ऐसी (दिट्ठीए) दृष्टि से (कीडपयंगतसथावरदयावरेण पुप्फफलतयपवालकंदमूलदगम-ट्टियबीयहरियपरिवज्जणए णिच्चं सम्मं ईरियव्वं) लट शंख आदि क्षुद्र जन्तुरूप कीटों के ऊपर तथा पतंगों आदि जानवरों के ऊपर, एवं एके-न्द्रिय स्थावर जीवों के ऊपर दया रखने में तत्पर बने हुए, तथा पुष्प, फल' त्वक्–छाल, प्रवाल,–कोंपल–पत्राङ्कुर, सूरण आदि कंद मूल दक–सचित्त जल, मृत्तिका–सचित्तमिट्टी, बीज और हरितकाय, इन सब सचित्तपदार्थों को अपने और पर के उपयोग में लाने का जीवनपर्यंत परित्याग कर चुकने वाले ऐसे मुनिजनों को देख २ कर सदा यतना पूर्वक मार्ग में गमन करना चाहिये। (एवं खु) इस तरह यतनापूर्वक दृष्टि से देख देख कर चलने वाले मुनिजन के (सव्वेपाणा) समस्त प्राणी (ण हीलियव्वा) अवज्ञा के विषयभूत नहीं बनते हैं। (न निंदि-

---

જેથી સારી રીતે અવલોક કરીને સાધુ ચાલતા હોય એવી "दिट्ठए" દૃષ્ટિથી "कीडपयंगतसथावरदयावरेण पुप्फफलतयपवालकंदमूलदगमट्टियबीयहरियपरिवज्जणए-णिच्चं सम्मं ईरियव्वं" લટ શંખ આદિ ક્ષુદ્ર જન્તુરૂપ કીડાઓ ઉપર તથા પતંગિયાં આદિ જન્તુઓ ઉપર, અને એકેન્દ્રિય સ્થાવર જીવોની ઉપર દયા રાખવાને તત્પર બનેલ, તથા પુષ્પ, ફળ, ત્વક્–છાલ, પ્રવાલ–કોંપળ–પત્રાં-કુર, સૂરણ આદિ કંદમૂળ, આ બધા સચેત પદાર્થોને પોતાના કે બીજાના ઉપ-યોગમાં લેવાનો આજીવન પરિત્યાગ કરી નાખ્યો હોય એવા મુનિજનોને હંમેશા જોઈ જોઈને યતના પૂર્વક રસ્તા પર ચાલવું જોઈએ. "एवं खु" આ રીતે યતનાપૂર્વક નજર વડે જોઇ જોઇને ચાલનાર મુનિજનને "सव्वे पाणा"

=नावज्ञातव्या भवन्ति, मुनिः प्राणि प्राणसंरक्षणपरत्वात्तान्नावज्ञा विषयीकरोतीति भावः, एवमग्रेऽपि सर्वत्र वाक्यरचना कार्या । ' न निंदियव्वा ' न निन्दितव्या भवन्ति–परपीडावर्जनपरत्वात् , ' न गरहियव्वा ' न गर्हितव्याः भवन्ति–लोकसमक्षं दोषोद्घाटनपूर्वकं गर्हाविषयभूता न भवन्तीत्यर्थः, तथा–' न हिंसियव्वा ' न हिंसितव्याः–पादाक्रमणादिना न हन्तव्याः, भवन्ति, एवं ' न छिंदियव्वा ' न छेत्तव्याः खड्गादिना, ' न भिंदियव्वा ' न भेत्तव्याः – कुन्तादिना, ' न वहेयव्वा ' न व्यथनीयाः पीडोत्पादनादिना भवन्ति । तथा – ' न भय दुक्खं च लब्भा पावेउं ' न भयं दुखं च लभ्याः प्रापयितुम् , दुःखं भयं च प्रापयितुं योग्या न भवन्तीति भावः । एवम्=अनेन प्रकारेण ' इरिया समिइजोगेण ' ईर्यासमितियोगेन ' भाविओ ' भावितो=वासितो भवति ' अंतरप्पा ' अन्तरात्मा =जीवः, स भावितात्मा–भवतीत्यर्थः, कीदृशो भवति ? इत्याह–'असवलमसंकिलिट्ठनिव्वणचरित्तभावणाए ' अशबलासंक्लिष्ट निर्व्रणचारित्रभावनयाः, अशबला=

यव्वा) निंदा के विषयभूतनहीं बनते हैं। (न गरहियव्वा) लोगों के समक्ष दोषोद्धाटन पूर्वक गर्हा के विषयभूत नहीं बनते हैं। (न हिंसियव्वा) पादादि द्वारा आक्रमिक होकर हिंसा के विषयभूत नहीं बनते हैं, (न छिंदियव्वा) छेदन करने के विषयभूत नहीं बनते है, (न भिंदियव्वा) भेदन करने के विषयभूय नहीं बनते हैं। (न–वहेयव्वा) पीडो त्पादनादि द्वारा व्यथा कष्ट पहूँचाने के योग्य नहीं बनते हैं। (न भयं दुक्खं च किंचि लब्भा पावेउं) और न किसी भी तरह से भय और दुःख को प्राप्त कराने के योग्य बनते हैं। (एव) इस प्रकार (ईरियासमियजोगेण) ईर्या समिति के योग से (भाविओ अंतरप्पा) वासित हुआ अन्तरात्मा–जीव–भावितात्मा कहलाता है और यह—(असबलमसंकिलिट्ठनिव्वण चरित्त भावणाए) अशबल–मलिनता रहित

સમસ્ત પ્રાણી " ण हीलयव्वा " અવજ્ઞાના વિષભૂત બનતા નથી " न निंदियव्वा " નિંદાના વિષયભૂત બનતા નથી, " न गरहियव्वा " લોકોની સમક્ષ દોષોદ્ધાટનપૂર્વક ગર્હાના વિષભૂત બનતા નથી. " न हिंसियव्वा " પાદાદિ વડે આક્રમિત થઈને હિંસાના વિષયભૂત બનતા નથી, " न छिंदियव्वा " છેદન કરવાના વિષયભૂત બનતા નથી, " न भिंदियव्वा " ભેદન કરવાના વિષયભૂત બનતા નથી, " न वहेयव्वा " પીડા ઉત્પાદન આદિ દ્વારા વ્યથા પહોંચાડવાને યોગ્ય બનતા નથી. " न भयं दुक्खं च किंचिलब्भा पावेउं " અને કોઇ પણ પ્રકારે ભય અને દુ:ખ પ્રાપ્ત કરવાને યોગ્ય બનતા નથી. ' एव " આ પ્રકારે " ईरियासमियजोगेण " ઇર્યાસમિતિના યોગથી " भाविओ अंतरप्पा " યુક્ત આત્મા–જીવ–ભાવિતાત્મા કહેવાય છે અને તે "असबलमसंकिलिट्ठनिव्वणचरित्त-

मालिन्यरहिता, असंक्लिष्टा=विशुद्धयमानमनःपरिणामयुक्ता, निर्व्रणा=अक्षता या चारित्रभावना तया हेतुभूतया 'अहिंसए' अहिंसकः – सभावनाया अहिंसायाः परिपालकत्वात्, 'संजए' संयतः=सम्यग्जीवरक्षायतनोद्यतत्वात्, 'सुसाहू' सुसाधु=मोक्षसाधको मुनिर्भवति ॥ सू० ६ ॥

तथा विशुद्धयमान मनःपरिणाम से युक्त ऐसी हेतुभूत अखंड चारित्र भावना के प्रभाव से (अहिंसए) अहिंसक होता हैं, अर्थात् भावना-सहित अहिंसा का परिपालक होने के कारण वह हिंसावृत्ति से रहित होता है। तथा (संजए) अच्छी तरह से जीव रक्षा की यतना में उद्यत होने के कारण संजत होता है। और (सुसाहू) ऐसा होने के कारण ही वह साधु-सच्चा साधु-मोक्ष साधक मुनि-होता है।

भावार्थ—इस सूत्र द्वारा सूत्रकार ने अहिंसाव्रत की रक्षा और स्थिरता के निमित्त पांच भावनाओं में से ईर्या समिति नामकी प्रथम भावना कही है,। इस भावना में उन्हों ने वह प्रकट किया है कि अहिसाव्रत का आराधक प्राणी यदि भावना का निमित्त नहीं मिलता है तो उस व्रत का गहराई के साथ परिपालन नहीं हो सकता है। अहिंसा आदि व्रतों के रंग में आत्मा को रंग देनेवाली ये भावनाए ही हैं। इसलिये सच्चे अर्थ में अहिंसक बनने के लिये मुनि को सबसे पहिले ईर्या समिति का पालन करना चाहिये। इस समिति के पालन करने से

भावणाए" अशबळ-मलिनता रहित तथा विशुद्ध मन परिणामथी युक्त એવી હેતુભૂત અક્ષત-ચારિત્રભાવનાના પ્રભાવથી 'अहिंसए" અહિંસક થાય છે, એટલે કે ભાવનાપૂર્વક અહિંસાના પરિપાલક હોવાથી તે હિંસાવૃત્તિથી રહિત બને છે. તથા "संजए" સારી રીતે જીવ રક્ષાની યતનામાં તત્પર હોવાને કારણે સંયત થાય છે. અને "सुसाहू" એવા થવાને કારણે તે સુસાધુ-સાચો સાધુ-મોક્ષ સાધક મુનિ-થાય છે.

ભાવાર્થ—આ સૂત્ર દ્વારા સૂત્રકારે અહિંસા વ્રતની રક્ષા અને સ્થિરતાને માટે જે પાંચ ભાવના છે તેમાંની ઇર્યાસમિતિ નામની પહેલી ભાવના બતાવી છે આ ભાવનામા તેમણે એ પ્રગટ કર્યું છે કે અહિંસા વ્રતના આરાધક પ્રાણીને જો ભાવનાનું નિમિત્ત ન મળે તો તે વ્રતનુ સૂક્ષ્મ રીતે પાલન થઈ શકતું નથી. અહિંસા આદિ વ્રતોના રંગમાં આત્માને રંગી દેનારી આ ભાવનાઓ જ છે. તેથી સાચા અર્થમા અહિંસક બનવાને માટે મુનિએ સૌથી પહેલા ઇર્યાસમિતિનું પાલન કરવુ જોઈએ. આ સમિતિનું પાલન કરવાથી ત્રસ

द्वितीयां मनोभावनामाह—

मूलम्—बीयं च मणेण पावएण पावगं आहम्मियं दारुणं निसंसं वहबंधपरिकिलेसबहुलं जरामरणपरिकिलेससंकिलिट्ठं, न कयावि मणेण पावएणं पावगं किंचि विझायव्वं एवं मणससिइजोगेण भाविओ भवइ अंतरप्पा असबलमसंकिलिट्ठनिव्वणचरित्त भावणाए अहिंसए संजए सुसाहू ॥सू०७॥

टीका—'बीयं च' इत्यादि।

'बीयं च' द्वितीयां च पुनर्भावना मनः समितिरूपामाह—'पावएणं'

त्रस और स्थावर जीवों की रक्षा होती रहती है। उठने बैठने में गमन करने में साधु 'जीवों की विराधना न हो' इस बात की विशेष सावधानी रखता है। युगप्रमाण भूमिका अवलोकन करता हुआ आगे २ के मार्ग में बढ़ता रहता है। इस तरह उसके द्वारा न कोई प्राणी हीलयितव्य होता है न निन्दितव्य होता है न गर्हितव्य होता है, और न हिंसितव्य होता है। न छेत्तव्य होता है, न व्यथितव्य होता है और न दुःख को प्राप्त कराने के योग्य ही होता है। इस प्रकार ईर्यासमिति के योग से भावितात्मा बना हुआ मुनिजन अपने अहिंसाव्रत को निर्दोष रीति से पालन करता हुआ सच्चा अहिंसक बन जाता है। तथा इस प्रकार की प्रवृत्तिशाली होने के कारण वह सुसाधु—मोक्ष को साधन करने वाला मुनि इस अर्थ को चरितार्थ करता है ॥ सू०६ ॥

अब सूत्रकार इसव्रत की दूसरी भावना जो मनोगुप्ति है उसे प्रकट

અને સ્થાવર જીવોનું રક્ષણ થાય છે. ઉઠવા બેસવામાં તથા ગમન કરવામાં 'વધારે જીવોની વિરાધના ન થાય' તેનુ મુનિ વધારે ધ્યાન રાખે છે. યુગ પ્રમાણ ભૂમિનુ અવલોકન કરતા કરતા સાધુ માર્ગે આગળ વધે છે. આમ થવાથી તેના દ્વારા કોઈ પ્રાણી હીલયિતવ્ય, નિન્દિતવ્ય, ગર્હિતવ્ય, અને હિંસિતવ્ય થતું નથી. તેનુ છેદન થતુ નથી કે તેને વ્યથા પહોંચતી નથી, તથા દુ:ખને પામતું નથી આ રીતે ઇર્યાસમિતિના યોગથી ભાવિતાત્મા બનેલ મુનિજન પોતાના અહિંસાવ્રતનું નિર્દોષ રીતે પાલન કરતા કરતા સાચા અહિંસક થઇ જાય છે. તથા આ રીતે પ્રયત્નશીલ હોવાને કારણે તે સુસાધુ—મોક્ષને સાધનારા મુનિ, એ અર્થને ચરિતાર્થ કરે છે ॥ સૂ-૬ ॥

હવે સૂત્રકાર આ વ્રતની મનોગુપ્તિ નામની બીજી ભાવના છે તેનું સ્પ-

पापकेन=अशुभेन 'मणसा' मनसा 'पावगं' पापकम्=अशुभं भवति, 'अहम्मियं' अधार्मिकं दुर्गतिजनकत्वात्, दारुणं=विषमम्, तीव्रदुःखजनकत्वात्, 'निसंसं' नृशंसम् आत्महितघातकत्वात्, तथा-'वहबंधपरिकिलेसबहुलं' वधबन्धपरिक्लेशबहुलम्, तत्र-वधो-मारणम्, बन्धः=निगडादिबन्धः, तज्जनितः परिक्लेशः=परितापस्तेन बहुलं=व्याप्तं-संभृतम्, प्रतिसमयमसह्यसंतापजनकत्वात्, तथा -'मरणभयपरिकिलेससंकिलिट्ठं' मरणभयपरिक्लेशसंक्लिष्टम्-मरणं=प्राणवियोगस्तस्य यद् भयं तज्जनितो यः परिक्लेशः=परमसन्तापस्तेन संक्लिष्टं=संव्याप्तम्, नरकनिगोदाद्यनन्तदुःखजनकत्वात्, एतादृश-विशेषणविशिष्टं

करते हैं—'बीयं च' इत्यादि० ।

टीकार्थ—(बीयं) दूसरी मनोगुप्ति नामकी भावना इस प्रकार से है (पावएण मणेण) अशुभ मन से अशुभ होना है-अर्थात्-अशुभ-मन से जीव पाप का उपार्जन करता है। यह पाप (अहम्मियं) दुर्गति का जनक होने से अधर्म रूप है। (दारुणं) तीव्र दुःखों का उत्पदक होने से दारुण-विषम अर्थात्-कष्टकारक-होता है। तथा (निसंसं) इसमें आत्मा के हितका घात होता है इसलिये नृशंस है। (वहबंधपरिकिलेसबहुलं) वध, बंधन और इनसे उत्पन्न परिक्लेश-परिताप-से यह सदा भरा रहता है। अर्थात् प्रति समय यह असह्य संताप का जनक होता है। (मरणभयपरिकिलेससंकिलिट्ठं) मरण के भय से जनित परम संताप से यह व्याप्त रहा करता है। अर्थात्-पाप से जीव नरक निगोद आदि के अनंत दुःखों को भोगा करता है। इसलिये यह

સ્પષ્ટીકરણ કરે છે—"बीयं च" ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—"बीय" બીજી મનોગુપ્તિ નામની ભાવના આ પ્રકારની છે-"पावएण मणेण" અશુભ મનથી અશુભ થાય છે-એટલું કે અશુભ મનથી જીવ પાપનું ઉપાર્જન કરે છે આ પાપ "अहम्मियं" દુર્ગતિનું જનક હોવાથી અધર્મરૂપ છે "दारुणं" તીવ્ર દુઃખોનું ઉત્પાદક હોવાથી દારુણ-વિષમ એટલે કે કષ્ટકારક હોય છે તથા 'निसंसं" તેમાં આત્માના હિતનો ઘાત થાય છે તેથી તે નૃશંસ છે "वहबंधपरिकिलेसबहुलं" વધ, બંધન અને તેમના કારણે ઉદ્‌ભવેલ પરિકલેશ-પરિતાપથી તે સદા ભરેલ રહે છે, એટલે કે પ્રતિસમય તે અસહ્ય સંતાપ પેદા કરનાર હોય છે. "मरणभयपरिकिलेससंकिलिट्ठं" મરણના ભયથી ઉત્પન્ન થયેલ પરમ સંતાપથી તે વ્યાપ્ત રહ્યા કરે છે. એટલે કે પાપથી જીવ નરક નિગોદ આદિના અનંત દુઃખને ભોગવ્યા કરે છે. તે

पापं-पापेन मनसा भवति, अतएव-तत् 'कयावि' कदापि=कस्मिन्नपि काले 'किंचि वि' किंचिदपि=स्वल्पमपि 'पावगं' पापकम्=अशुभं न 'झायव्वं' ध्यातव्यं=न चिन्तनीयमित्यर्थः। एवम्=अमुना प्रकारेण 'अंतरप्पा' अन्तरात्मा जीवः 'मणसमिइजोगेणं' मनः समितियोगेन भावितो भवति। भावितात्मा कीदृशो भपति? इत्याह — अशबलसंक्लिष्टनिर्व्रणचारित्रभावनया हेतुभूतया अहिंसकःसंयतः सुसाधुर्भवति। एषामर्थो द्वितीयभावना व्याख्यायां द्रष्टव्यः ॥सू०७॥

पाप नरक निगोद आदि दुर्गतियों के अनंत दुःखों का जनक होने से उनसे सदा भरा रहता है ऐसा कहा गया है। इस प्रकार के विशेषणों से विशिष्ट पाप यह जीव पापयुक्त मन से करता है। ऐसा समझ कर (कयावि किंचि वि) किसी भी काल में कुछ भी थोड़ा सा भी (पावएणं मणेण) पापकारी मन से (पावगं) पाप-अशुभ (न झायव्वं) नहीं विचरना चाहिये। (एवं मणसमिइजोगेण अंतरप्पा भाविओ भवइ) इस प्रकार से अंतरात्मा-जीव मनःसमिति के योग से भावित होता है। (असबलमसंकिलिट्ठनिव्वणचरित्तभावणाए अहिंसए संजए-सुसाहू) यह भावित आत्मा मलिनता से रहित तथा विशुद्ध्यमान मनःपरिणाम से युक्त ऐसी हेतुभूत चारित्र भावना के प्रभाव से अहिंसक होता है। और संयत होता है। और ऐसा होने के कारण ही वह सच्चा साधु-मोक्ष साधक मुनि-कहलाता है ॥—

भावार्थ—मन को अशुभ ध्यान से बचाकर शुभ ध्यान में लगाना

કારણે તે પાપ નરક નિગોદ આદિ દુર્ગતિયોના અનંત દુઃખોનું જનક હોવાથી તેનાથી સદા ભરેલ રહે છે એમ કહેવામાં આવ્યું છે. આ પ્રકારના વિશેષ-ણોથી યુક્ત પાપ આ જીવ પાપયુક્ત મનથી કરે છે એવું સમજીને "कयावि किंचि वि" કોઈ પણ કાળે સહેજ પણ "पावएणं मणेण" પાપકારી મનથી "पावगं" પાપ-અશુભ "न झायव्वं" વિચારવું જોઈએ નહીં "एवं मण-समिइजोगेण अंतरप्पा भाविओ भवइ" આ પ્રકારે અંતરાત્મા-જીવ મન સમિ-તિના યોગથી ભાવિત થાય છે. "असबलमसकिलिट्ठनिव्वणचरितभावणाए अहिंसए संजए सुसाहू" તે ભાવિત આત્મા મલિનતાથી રહિત તથા વિશુદ્ધ મનઃ પરિણામથી યુક્ત એવી હેતુભૂત ચારિત્ર ભાવનાના પ્રભાવથી અહિંસક થાય છે અને સંયત બને છે. અને એવુ થવાથી જ તે સાચો સાધુ-મોક્ષ સાધક મુનિ કહેવાય છે

ભાવાર્થ-મનને અશુભ ધ્યાનથી બચાવીને શુભ ધ્યાનમાં લગાડવું તેને

तृतीयां वचनसमितिरूपां भावनामाह—'तइयं च' इत्यादि ।

मूलम्—तइयं च—वईए पावियासाए पावगं अहम्मियं दारुणं निसंसं वहबंधपरिकिलेसबहुलं जरामरणपरिकिलेससंकिलिट्ठं न कयावि वईए पावियाए पावगं किंचि वि भासियव्वं, एवं वइसमिइजोगेण भाविओ भवइ अंतरप्पा असबलमसंकिलिट्ठनिव्वणचरित्तभावणाए अहिंसओ संजओ सुसाहू ॥८॥

मनोगुप्ति है। शुभ ध्यान में लगाने का उपदेश इस लिये दिया जाता है अथवा मन को शुभ ध्यान में इसलिये लगाया जाता है कि मन स्वयं अशुभ बनने न पावे। अशुभ ध्यान के संपर्क संबंध से मन अशुभ बन जाता है। और अशुभ मन से पाप का ही उपार्जन होता है। पाप से जीवों को नाना प्रकार के कष्टों को भोगना पड़ता है। क्यों कि पाप स्वयं एक अधर्म है। अधर्म होने से ही वह आत्मा के हित का घातक बनता है। और इसी कारण से जीवों को नाना प्रकार के दुःखों को देता है। इस प्रकार विचार कर जो मुनिजन अपने मन को अशुभ ध्यान में किसी भी समय नहीं लगता है उससे बचता रहता है ऐसा वह मुनि उस मनः समिति से भावित बनकर अपने अहिंसा व्रत को निर्दोष रूप से पालन करता हुआ आदर्श अहिंसक बन जाता है। और इस प्रकार की प्रवृत्ति करने के रंग में रंगा हुआ वह— सच्चे अर्थ में साधुपद को सार्थक करता है ॥ सू० ७ ॥

મનોગુપ્તિ કહે છે શુભ ધ્યાનમા લગાડવાનો ઉપદેશ એ માટે અપાય છે અથવા મનને શુભ ધ્યાનમાં તે કારણે લગાડાય છે કે મન પોતે જ અશુભ બનવા પામે નહી અશુભ ધ્યાનના સંપર્કથી મન અશુભ બની જાય છે, અને અશુભ મનથી પાપનુ જ ઉપાર્જન થાય છે પાપથી જીવોને વિવિધ પ્રકારનાં કષ્ટો ભોગવવાં પડે છે. કારણ કે પાપ પોતે જ એક અધર્મ છે. અધર્મ હોવાથી જ તે આત્માના હિતનું ઘાતક બને છે, અને એજ કારણથી જીવોને વિવિધ પ્રકારનાં દુઃખો દે છે. આ પ્રમાણે વિચાર કરીને જે મુનિજન પોતાના મનને કદી પણ અશુભ ધ્યાનમાં લગાડતા નથી, તેનાથી બચતા રહે છે, એવા તે મુનિ તે મનઃ સમિતિથી ભાવિત બનીને પોતામા અહિંસાવ્રતનું નિર્દોષ પાલન કરીને અહિંસક બની જાય છે, અને તે રીતની પ્રવૃત્તિ કરવાના રંગે રંગાયેલ તે મુનિ સાચા અર્થમાં સાધુનાં પદને સાર્થક કરે છે ॥ સૂ. ૭॥

टीका—' तइयं च ' इत्यादि ।

' तइयं च ' तृतीयां च भावनां वचनसमितिरूपामाह–' वईए पावियाए ' वाचा पापिकया=सावद्यभाषणरूपयेत्यर्थः पापकमाधार्मिक दारुणं नृशंसं वध-

---

अब सूत्रकार इस अहिंसाव्रत की तीसरी वचन समितिरूप भावना का प्रतिपादन करने के लिये सूत्र कहते हैं—' तइयं च ' इत्यादि० ।

टीकार्थ—(तइयं) वचनसमिति रूप तृतीय भावना इस प्रकार से है–(पावियाए वईए) सावद्यभाषणरूप वाणी से (पावगं) जीव पाप का बंध करता है। यह पाप (अहम्मियं दारुणं निसंसंवह बंधपरिकिलेसबहुलं जराभरणपरिकिलेससंकिलिट्ठं भवइ) अधर्मरूप है क्यों कि इससे जीवों को दुर्गति की प्राप्ति होती हैं तथा इससे तीव्रदुःखों को जीव भोगते हैं इसलिये यह दारुण–विषम है। आत्माके हितका इससे घात होता है इसलिये यह नृशंस है। वध, बंधन और इनसे जन्य परिक्लेश–परिताप से यह पाप सदा भरा रहता है। जरा और मरण के भय से जनित संताप से यह सदा व्याप्त रहता है। ऐसा विचार कर जो मुनि (न कयावि वईए पावियाए किंचिवि पावगंभासियव्वं) इस पाप वाणी को सावद्य-भाषणरूप वचन को–किसी भी समय थोड़ा सा भी नहीं बोलते है वे इस वचनसमिति के योग से भाविनात्मा बन जाते हैं। (एवं वय-

---

હવે સૂત્રકાર આ અહિંસાવ્રતની વચન સમિતિ નામની ત્રીજી ભાવનાનું પ્રતિપાદન કરવાને માટે સૂત્ર કહે છે–" तइयं च " ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—" तइयं " વચનસમિતિરૂપ ત્રીજી ભાવના આ પ્રમાણે છે—" पावियाए वईए " સાવદ્ય ભાષણરૂપ વાણીથી " पावगं " જીવ પાપનો બંધ બાંધે છે. તે પાપ " अहम्मियं दारुणं निसंसं वहबंधपरिकिलेसबहुलं जरामरण परिकिलेससंकिलिट्ठ भवइ " અધર્મ રૂપ છે તેનાથી જીવોને દુર્ગતિની પ્રાપ્તિ થાય છે તથા તેનાથી જીવ તીવ્ર દુઃખો ભોગવે છે તેથી તે દારુણ–વિષમ છે. તેનાથી આત્માના હિતનો ઘાત થાય છે તેથી તે નૃશંસ છે વધ, બંધન અને તેના વડે ઉત્પન્ન થયેલ પરિક્લેશ–પરિતાપથી તે પાપ સદા ભરેલ રહે છે. જરા અને મરણના ભયથી જનિત સંતાપ વડે તે સદા વ્યાપ્ત રહે છે. એવો વિચાર કરીને જે મુનિ " न कयावि वईए पावियाए किंचिवि पावगं भासियव्वं " આ પાપવાણીને સાવદ્ય ભાષણરૂપ વચનને–કોઇ પણ કાળે થોડું પણ બોલતા નથી, તેઓ આ વચનસમિતિના યોગથી ભાવિતાત્મા બની જાય છે. " एवं

बन्धपरिक्लेशबहुलं जरामरणपरिक्लेश संक्लिष्टं भवति, अतएव न कदापि वाचा पापिक्या पापकं किंचिदपि भावितव्यम् । एवं वाक्समितियोगेन भावितो भवति अन्तरात्मा । भावितात्मा कीदृशो भवति ? इत्याह—अशबलासंक्लिष्ट-निर्व्रणचरित्रभावनया हेतुभूतया-अहिंसकः संयतः सुसाधुर्भवति । एषामर्थो द्वितीयभावनाव्याख्यायां द्रष्टव्यः ॥ सू० ८ ॥

समिइजोगेण भाविओअंतरप्पा असबलमसंकिलिट्ठनिव्वणचरित्त-भावणाए अहिंसओ संजओ सुसाहू भवइ) इस प्रकार वचन समिति के योग से भावितात्मा बना हुआ अंतरात्मा-जीव-अशबल, असंक्लिष्ट एवं निर्व्रण निरतिचार चारित्र की भावना से अहिंसक और संयतबन जाता है । और सच्चे रूप में साधु-मोक्ष को साधन करने वाले-इस नाम को चरितार्थ कर लेता हे ।

भावार्थ—सावद्य भाषण नहीं करना इसका नाम वचन समिति है। सावद्य भाषण करने से पाप का बंध होता है । पाप अधर्म होने से विविध प्रकार के दुःखों का दाता होता है । वध बंधन आदि विविधकष्ट जीव को इसी के उदय से भोगने पडते हैं । इसलिए साधु का कर्तव्य है कि वह कभी भी कहीं पर भी किञ्चित् रूप में भी असत्यभाषण नहीं करें । ऐसा विचार कर जो मुनि इस पापवाणी से निवृत्त हो जाते हैं वे ही अपने अहिंसाव्रत को निर्दोष रूप में पालते हैं । इस प्रकार अपने अहिंसाव्रत को पालन करने वाले साधु ही सच्चे साधु-मोक्षको साधन करने वाले कहलाते हैं ॥ सू० ८ ॥

वयसमिइजोगेण भाविओ अंतरप्पा असबलमसंकिलिट्ठनिव्वणचरित्तभावणाए अहिंसओ सजओ सुसाहू भवई ” આ પ્રકારે વચન સમિતિના યોગથી ભવિતાત્મા બનેલ અંતરાત્મા-જીવ-અશબલ, અસ ક્લિષ્ટ અને નિર્વ્રણચારિત્રની ભાવનાથી અહિ સક અને સંયત બની જાય છે. અને સાચા અર્થમાં સાધુ-મોક્ષને સાધનારા-એ નામને ચરિતાર્થ કરી લે છે.

ભાવાર્થ—સાવદ્યભાષણુ ન કરવુ તેનું નામ વચન સમિતિ છે. સાવદ્ય ભાષણુ કરવાથી પાપને બ ધ બંધાય છે પાપ અધર્મ હોવાથી વિવિધ પ્રકારના દુઃખનું જનક છે. તેના ઉદયથી વધ બ ધન આદિ વિવિધ કષ્ટ જીવને ભોગવવાં પડે છે. તેથી સાધુનુ કર્તવ્ય છે કે તે કદી પણુ, ક્યાંય પણુ, થોડા પ્રમાણુમાં પણુ અસત્ય ભાષણુ ન કરે. એવો વિચાર કરીને જે મુનિ આ પાપવાણીથી નિવૃત્ત થઈ જાય છે તેઓ જ પોતાના અહિ સાવ્રતનુ નિર્દોષ રીતે પાલન કરે છે. આ પ્રમાણે પોતાના અહિંસાવ્રતનુ પાલન કરનાર સાધુ જ સાચા સાધુ-મોક્ષને સાધન કરનાર સાધુ-કહેવાય છે ॥ સૂ. ૮ ॥

चतुर्थीमेषणा भावनामाह—' चउत्थं ' इत्यादि ।

मूलम्—चउत्थं आहारएसणाए सुद्धं उंछं गवेसियव्वं. अण्णाए अकहिए आसिट्ठे अदीणे अकलुणे अविसाई अपरितंतजोगी जयणघडणकरणचरियविनयगुणजोगसंपउत्ते भिक्खू भिक्खेसणाए जुत्ते समुदाणेऊण भिक्खायरियं उंछं घेत्तूणं आगए गुरुजणस्स पासं गमणागमणाइं यारपडिक्कमणपडिक्कंते आलोयण दायणं च दाऊण गुरुजणस्स गुरुसंदिट्ठस्स वा जहोवएसं निरइयारं च अप्पमत्ते पुणरवि अणेसणाए पयते पडिक्कमित्ता पसंते । आसीणसुह निसण्णे मुहुत्तमेत्तं च झाणसुहजोगनाणसज्झायगोवियमणे धम्ममणे अविमणे सुहमणे अविग्गहमणे समाहियमणे सद्धासंवेगनिज्जरमणे पवयणवच्छल्लभावियमणे उट्ठेऊण य पहट्ठे तुट्ठे जहराइणियं निमंतइत्ता य साहवे भावओ य विइण्णे गुरुजणेणं उवविट्ठे संपमज्जिऊण ससीसं कायं तहा करयलं असुच्छिए अगिद्धे अगरहिए अणज्झोववण्णे अणाइले अलुद्धे अणत्तट्ठिए असुरसुरं अचवचवं अदुयमविलंबियमपरिसाडियं आलोयभायणे जयमप्पमत्तेण ववगयसंजोगमणिंगालं विगयधूमं अक्खोवंजणवणाणुलेवणभूयसंजमजायामायानिमित्तं संजमभारवहणट्ठयाए भुंजेज्जा पाणधारणट्ठयाए संजएणं समियं । एवमाहारसमिइ जोगेण भाविओ अंतरप्पा असबलमसंकिलिट्ठनिव्वणचरित्तभावणाए अहिंसए संजए सुसाहू ॥ सू०९ ॥

टीका —'चउत्थं' चतुर्थी भावनामेषणारूपामाह — 'आहारएसणाए' आहारैषणया 'सुद्धं' शुद्धं=निर्दोषं 'उंछ' उञ्छं=भैक्षं 'गवेसियव्वं' गवेषितव्यम्। यथा—लूनान्नक्षेत्रात्कणादानं, तथैव साधुनापि गृहस्थार्थं निष्पादितमन्नं स्तोकं स्तोकं एवेषणीयमिति भावः। कीदृशः सन गवेषयेत्? इत्याह—'अणाए' अज्ञातः—'धनिकोऽयं प्रव्रजितः' इत्यादिरूपेण दायकैरज्ञातः, 'अकहिए' अकथितः='धनिकोऽहं प्रव्रजितः' इत्याद्यप्रकटितः, 'असिट्ठ' अशिष्टाः='उग्रवंशीयोऽयं भोगवंशीयोऽय' मिति दायकायाप्रविबोधितः, तथा—'अदीणे' अदीनः

अब सूत्रकार चौथी एषणा समितिरूप भावना को कहते हैं — 'चउत्थं' इत्यादि०।

टीकार्थ—(आहारएसणाए सुद्धं उंछं गवेसियव्वं) साधु आहारएषणा से शुद्ध—निर्दोष उञ्छ—थोडा थोडा लेने रूप भिक्षा की गवेपणा करे। तात्पर्य इसका यह है कि जैसे—लूने गये क्षेत्र से कणों का आदान होता है उसी तरह साधु को भी गृहस्थ के लिये निष्पादित अन्न की स्तोक २ अल्प २ रूप में गवेषणा करनी चाहिये। जबव ह भिक्षा की गवेपणा करे तब उसे (अण्णाए) अज्ञात होना चाहिये—दाता उसे यों न समझे- कि यह धनिक होकर प्रव्रजित हुआ है, इत्यादिरूप से दाता से उन्हें अपरिचित रहना चाहिये। (अकहिए) अकथित होना चाहिये—मैं धनिक था गरीब नही था फिर भी दीक्षित हुआ हूं इस प्रकार का अपना परिचय उसे दाता को नहीं देना चाहिये। (असिट्ठे) अशिष्ट रहना चाहिये—यह साधु उग्रवंशीय है, भोगवंशीय है, इस रूप से दाता के

હવે સૂત્રકાર એષણા સમિતિ નામની ચોથી ભાવના બતાવે છે "चउत्थं" ઈત્યાદિ

ટીકાર્થ—"आहारएसणाए सुद्धं उंछं गवेसियव्वं" સાધુ આહારૈષણાથી શુદ્ધ-નિર્દોષ उञ्छ થોડી થોડી માત્રામા ભિક્ષાની ગવેષણા કરે. તેનો ભાવાર્થ એ છે કે જેમ લણાયેલ ખેતરમાથી કણોનુ આદાન થાય છે, એ જ રીતે સાધુએ પણ ગૃહસ્થને માટે તૈયાર કરેલ અન્ન થોડી થોડી માત્રામાં ગવેષણા કરવી જોઈએ. જ્યારે તે ભિક્ષાની ગવેષણા કરે ત્યારે તેણે "अण्णाए" અજ્ઞાત રહેવું જોઈએ દાતાને તે વાતની ખબર ન પડવી જોઈએ કે તે ધનિક સ્થિતિમાંથી દીક્ષિત થયેલ છે આ પ્રકારે તેણે દાતાથી અપરિચિત રહેવુ જોઈએ. "अकहिए" અકથિત રહેવુ જોઈએ—"હુ ધનિક હતો ગરીબ ન હતો છતાં પણ મે દીક્ષા લીધેલ છે" એ પ્રકારનો પોતાનો પરિચય તેણે દાતાને દેવો જોઈએ. નહી "असिट्ठे" અશિષ્ટ રહેવું જોઈએ "આ સાધુ ઉગ્રવંશીય છે, ભોગવંશીય છે," તે પ્રકારે દાતા આગળ તેણે પ્રગટ થવું

=दीनतावर्जितः 'अकलुणे' अकरुणः=न्यग्वृत्तिरहितः, 'अविसाई' अविषादी='भिक्षालाभो भविष्यति न वे'त्यादि विषादवर्जितः, तथा-'अपरितंतजोगी' अपरितान्तयोगी-अलाभादिषु तन्तनादि शब्दवर्जितः, तथा-'जयणघडण करण चरिय विनयगुणजोगसंपउत्ते' यतन घटनकरणचरितविनयगुणयोगसंप्रयुक्तः, तत्र यतनं-प्राप्तेषु संयमयोगेषु उद्यमः, घटनं अप्राप्ति संजम-योगप्राप्तिचेष्टनम्, एतद्द्वयं कुरुते यः स यतनघटनकरणः, तथा-चरितः=सेवितो विनयो येन स चरितविनयः, तथा गुणयोगेन=समाधिगुणयोगेन संप्रयुक्तो यः सः-गुणयोग संप्रयुक्तः, एतेषां कर्मधारयः, एतादृशो 'भिक्खू' भिक्षुः=साधुः 'भिक्खेसणाए'

प्रति उसे प्रकटित नहीं होना चाहिये। (अदीणे) अदीन होना चाहिये-दीनता के भाव से रहित रहना चाहिये अपने व्यवहार से दाता के प्रति उसे दीनता का भाव प्रकट नहीं करना चाहिये। (अकलुणे) अकरुण-ओछीवृत्ति से रहित होना चाहिये। उसकी वृत्ति ऐसी न हो कि जिस से वह दाता के दृष्टि में ओछी प्रतीत हो। (अविसाई) विषाद से उसे रहित होना चाहिये-भिक्षा का लाभ होगा या नहीं होगा इस प्रकार का विषाद उसे नहीं करना चाहिये। (अपरितंतजोगी) अपरितांतयोगी-अलाभ आदि की अवस्था में उसे तनतनाट नहीं करना चाहिये। (जयण-घडण-करण-चरिय-विनयगुण-जोगसंपउत्ते) प्राप्त संयमयोग में उद्यम करना इसका नाम यतन है इस यतन को तथा अप्राप्त संयमयोग को प्राप्ति में चेष्टा करना इसका नाम घटन है, इस घटन को जो करने वाला है वह यतन घटन करण है तथा विनयगुण को पहिले से जिसने आचरित किया है एवं समाधि-

---

જોઈએ નહી. "अदीणे" અદીન રહેવું જોઈએ-દીનતાના ભાવથી રહિત રહેવું જોઈએ-પોતાના વ્યવહારથી દાતા આગળ તેણે દીનતાનો ભાવ પ્રગટ કરવો જોઈએ નહી. "अकलुणे" અકરુણ-ઓછી વૃત્તિથી રહિત થવું જોઈએ., તેની વૃત્તિ એવી ન હોવી જોઈએ કે તે દાતાની દૃષ્ટિએ ઓછી જણાય, "अविसाई" તેણે વિષાદ રહિત રહેવું જોઈએ. ભિક્ષાલાભ મળશે કે નહીં એવો વિષાદ તેણે કરવો જોઈએ નહી "अपरितंतजोगी" અપરિતંતયોગી-અલાભ આદિ અવસ્થામાં પણ તેણે તનતનાટ ન કરવો જોઈએ "जयण, घडण-करण-चरिय-विनयजोगसपउत्ते" પ્રાપ્ત સંયમ યોગમાં ઉદ્યમ કરવો તેને 'यतन' કહે છે. આ યતનને તથા અપ્રાપ્ત સંયમ યોગની પ્રાપ્તિની ચેષ્ટા કરવી તેને ઘટન-કહે છે આ ઘટનને જે કરનાર છે તે यतनघटनकरण છે. તથા વિનયગુણને પહેલેથી જ જેમણે આચર્યો છે તથા સમાધિગુણના યોગથી જે યુક્ત બનેલ

भिक्षैषणायां 'जुत्ते' युक्तः=संलग्नः 'समुदाणेऊण' समुदानीय=भिक्षार्थमनेक-गृहेषु भ्रमित्वा 'भिक्खायरियं उंछं' भिक्षाचर्यामुञ्छाम्=अल्पाल्पग्रहणरूपां भिक्षां 'घेत्तूण' गृहीत्वा गुरुजनस्य 'पासं' पार्श्वे—समीपं 'आगए' समागतः 'गमणागमणाइयारपडिक्कमणपडिक्कंते' गमनागमनातिचारप्रतिक्रमणप्रतिक्रान्तः= गमनागमनातिचाराणां प्रतिक्रमणेन=ईर्यापथिकीप्रायश्चित्तेन प्रतिक्रान्तः=निवर्तितपापः, 'गुरुजणस्स' गुरुजनस्य ' 'गुरुसंदिट्ठस्स' गुरुसन्दिष्टस्य=गुरुणा निर्दिष्टस्य रत्नाधिकस्यान्यमुनेरन्तिके वा 'जहोवएसं' यथोपदेशम्=उपदेशानतिक्रमेण 'निरइयारं' निरतिचार च 'आलोयणा दायणं च दाऊण' आलोचनादानं च दत्त्वा=यथा यथा भिक्षा गृहीता तथा तथा सर्वं समालोच्य 'अप्पमत्ते' अप्रमत्तः—प्रमादवर्जितः 'पुणरवि' पुनरपि चागामिकाले 'अणेसणाए' अनेष-

---

गुण के योग से जो युक्त बना हुआ है वह विनयगुण संप्रयुक्त कहलाता है ऐसा (भिक्खू) साधु (भिक्खेसणाए जुत्ते) भिक्षैषणा में संलग्न होकर वह (समुदाणेऊण) भिक्षार्थ अनेक घरों में घूमें, और वहां से (भिक्खायरियं उंछं) अल्प अल्प रूप में भिक्षा (घेत्तूण) ग्रहण करके फिर वह (गुरुजणस्स पासं आगए) अपने गुरुजन के पास में आवे। (गमणागमणाइयारपडिक्कमणपडिक्कंते आलोयण दायणं च दाऊण) और वह गमनागमन के अतिचारों के प्रतिक्रमण से ईर्यापथिकी प्रायश्चित्त से प्रतिक्रान्त बनें इस तरह निवर्तितपाप होकर वह (गुरुजणस्स) गुरुजन के (वा) अथवा (गुरुसंदिट्ठस्स) गुरु से संदिष्ट अन्य रत्न त्रयाधिक मुनि के (जहोवएसं) उपदेश के अनुसार जहां २ से भिक्षा उसने ली है उस उस प्रकार से सबकी (निरइयारं) निरतिचार आलोचना करे आलोचना करके (अप्पमत्ते) प्रमाद वर्जित, बना हुआ तथा

છે તે 'વિનયગુણ સંપ્રયુક્ત' કહેવાય છે એવા "भिक्खु" સાધુ "भिक्खेसणाए जुत्ते" ભિક્ષાની એષણામા 'समुदाणेऊण" ભિક્ષાને માટે અનેક ઘરે ફરે, અને ત્યાંથી "भिक्खायरिय उंछं" અલ્પ અલ્પ માત્રામા ભિક્ષા 'घेत्तूण' ગ્રહણ કરીને તે "गुरुजणस्स पास आगए" પોતાના ગુરુજનની પાંસે આવે, "गमणागमणाइयारपडिक्कमणपडिक्कंतआलोयणदायणं य दाऊण" અને તે ગમનાગમનના અતિચારોના પ્રતિક્રમણ વડે ઈર્યાપથિકી પ્રાયશ્ચિત્તથી પ્રતિક્રાન્ત થાય અને એ રીતે પાપની નિવૃત્તિ થઈને તે "गुरुजणस्स" ગુરુજનને "वा" અથવા "गुरुसंदिट्ठस्स" ગુરુથી નિર્દિષ્ટ અન્ય રત્નત્રયધારી મુનિની "जहोवएसं" ઉપદેશ પ્રમાણે જ્યાં જ્યાથી તેણે ભિક્ષા મેળવીહોય તે તે પ્રકારે તે સૌની "निरइयारं" નિરતિચાર આલોચના કરે. આલોચના કરીને "अप्पमत्ते"

णायाम्=उद्गमादिदोषरूपायाम्, 'पयए' प्रयतः=प्रयत्नवान्-तद्गतदोषपरिहारे उद्यमवानित्यर्थः, 'पडिक्कमित्ता' प्रतिक्रम्य=कायोत्सर्गं कृत्वा 'पसंते' प्रशान्तः= आहारेऽनातुरः तथा-'आसीणसुहनिसण्णे' आसीनसुखनिषण्णः, तत्र-आसीनः= उपविष्टः, सुखनिषण्णः=गमनागमनजनितपरिश्रममवेदयन् सुखपूर्वकं स्थितः, पुनः कीदृशः ? 'मुहुत्तमेत्तं च' मुहूर्तमात्रं च, 'झाणसुभजोगनाणसज्झायगोवियमणे' ध्यानशुभयोग ज्ञानस्वाध्यायगोपितमनाः, तत्र ध्यानं=धर्मध्यानादिलक्षणम्, शुभ-योगः=संयमव्यापारः, ज्ञानम्=भगवदुपदिष्टमोक्षहेतुनिरवद्यसाधुवृत्तिपरिचिन्तनम्, तथा-स्वाध्यायः=मूलसूत्रपरिगुणनम्, एतैर्गोपितं = विषयान्तरगमनेन निरुद्धं मनो येन सः, अतएव 'धम्ममणे' धर्ममनाः=श्रुतचारित्रलक्षणधर्मयुक्ताः, तथा-'अविमणे' अविमनाः=अरसविरसादिलाभेऽपि विषादवर्जितचित्तः, तथा 'सुह-

(पुणरवि अणेसणाए पयए) आगामी काल में उद्गमादि दोष रूप अने-षणा में प्रयत्नशील बना हुआ-अर्थात्-एषणागत दोषों के परिहार में सदा सावधान बना हुआ वह मुनि (पडिक्कमित्ता) कायोत्सर्ग करके (पसंते) प्रशान्त बने-आहार में आतुर न बने (आसीणसुहनिसण्णे) बैठ जावे और भिक्षा के निमित्त गमनागमन में होने वाले परिश्रम का कुछ भी ख्याल न करे प्रत्युत सुखपूर्वक-अच्छी तरह से बैठे। (मुहुत्तमेत्तं च झाणसुभजोगनाणसज्झाय गोवियमणे) उस समय वह एक मुहूर्ततक धर्मध्यानादिरूप ध्यान से, शुभयोग से, भगवान के द्वारा कथित मोक्ष की हेतुभूत निरवद्य साधुवृत्ति के विचार से, तथा मूल-सूत्र के परिगुणन से विषयान्तर में जाते हुए अपने मन को रोके और श्रुतचारित्ररूप धर्म से युक्त अपने मन को रखे। इस तरह (धम्ममग्गे) धर्म मार्ग वाला तथा (अविमणे) अविमन-अरस विरस आदि आहार

પ્રમાદ રહિત બનેલ તથા "पुणरवि अणेसणाए पयए" ભવિષ્યકાળમા ઉદ્‌ગમાદિ દોષરૂપ અનેષણામા પ્રયત્નશીલ બનીને-એટલે કે એષણાગત દોષોના ત્યાગમા સાવધાન બનીને તે મુનિ "पडिक्कमित्ता" કાયોત્સર્ગ કરીને 'पसंते' પ્રશાન્ત બને-આહારને માટે આતુર ન બને "आसीणसुहनिसण्णे" બેસી જાય અને ભિક્ષાને નિમિત્તે ગમનાગમનમા થતા પરિશ્રમનો સહેજ પણ વિચાર ન કરે પ્રત્યુત સુખ પૂર્વક-બરાબર રીતે બેસે "मुहुत्तमेत्तं च झाण सुभजोगनाणसज्झाय-गोवियमणे" તે સમયે તે એક મુહૂર્ત સુધી ધર્મધ્યાનાદિરૂપ ધ્યાનથી, શુભ યોગથી, ભગવાન દ્વારા કથિત મોક્ષની હેતુભૂત નિરવદ્ય સાધુ વૃત્તિના વિચા-રથી, તથા મૂળસૂત્રના પરિગુણનની બહારના વિષયમા પોતાના મનને જતા રોકે અને પોતાના મનને શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મમા પરોવે. આ રીતે "धम्ममग्गे" ધર્મમનવાળા તથા "अविमणे" અવિમન-અરસ, નીરસ આદિ આહાર પ્રાપ્તિમાં

मणे ' सुखमनाः=संयमानुरक्तचित्तः, तथा–' अविग्गहमणे ' अविग्रहमनाः–संक्लिष्टमनोभाववर्जितचित्तः, तथा–' समाहियमणे' समाहितमनाः=समाहितं=रागद्वेषराहित्येन आत्मनि सम्यगुपनीतं मनो येन सः, उपशान्तचित्त इत्यर्थः, तथा— ' सद्धासंवेगनिज्जरमणे ' श्रद्धासंवेगनिर्जरामना, तत्र–श्रद्धा=जिनमताभिरुचिः, संवेगः=मोक्षाभिलाषः, निर्जरा=कर्मक्षपणं च मनसि यस्य स, तत्त्वार्थश्रद्धानान्मोक्षरुचिस्ततो निर्जरा, तद्वानित्यर्थः, तथा–' पवयणवच्छल्लभावियमणे ' प्रवचनवात्सल्यभावितमनाः=प्रवचनानुरागरञ्जितचित्तः, 'उट्ठेऊण य ' उत्था य च 'पहट्ठे' प्रहृष्टः–अतिशयप्रमुदितः, अतएव–' तुट्ठे ' तुष्टः ' जहाराइणियं' यथारात्निकं=यथापर्यायं लघु पर्यायानुसारेण ' साहवे ' साधून्=समानसमाचारिकान् मुनीन् ' भावओ ' भावतः–अन्तःकरणेन ननूपर्युपरितया ' निमंतइत्ता य ' निमन्त्र्य=आहारग्रहणार्थं संप्रार्थ्य अनन्तरं ' गुरुजणेणं ' गुरुजनेन 'विइण्णे य ' वितीर्णेच=

के लाभ में भी विषाद से विहीन चित्त वाला, (सुहमणे) सुखमन–संयम में अनुरक्त चित्त वाला, तथा (अविग्गहमणे) संक्लिष्ट मनोभाव से वर्जित हृदयवाला, और (समाहियमणे) रागद्वेष से रहित होने के कारण उपशान्त मनवाला तथा (सद्धा संवेगनिज्जरमणे) श्रद्धा–तत्त्वार्थ–श्रद्धान, संवेग–मोक्ष में रुचि और निर्जराकर्मक्षपण इनमें मन रखनेवाला, (पवयणवच्छल्लभावियमणे) प्रवचनानुराग से जिसका चित्त अनुरंजित बना हुआ है ऐसा वह साधू (उट्ठेऊण य) अपने स्थान से उठकर (पहट्ठे) अतिशय प्रमुदित एवं (तुट्ठि) संतुष्ट होता हुआ (जहाराइणियं साहवे) यथापर्याय–बडे छोटे के क्रमानुसार साधुओं से भावपूर्वक (निमंतइत्ता य) आहार ग्रहण करने के लिये प्रार्थना करे। इसके बाद (गुरुजणेणं विइण्णे य) गुरुजनों बड़ो का

પણ વિષાદ રહિત ચિત્તવાળા, " सुहमणे " સુખમન–સયમમા અનુરક્ત ચિત્ત વાળા, તથા " अविग्गहमाणे " સંકિલષ્ટ મનોભાવ રહિત હૃદયવાળા, અને " समाहियमणे " રાગદ્વેષ રહિત હોવાને લીધે ઉપશાન્ત મનવાળા, તથા "सद्धा संवेगनिज्जरमणे " શ્રદ્ધા–તત્ત્વાર્થમા શ્રદ્ધા, સંવેગ–મોક્ષની રુચિ અને નિર્જરા કર્મક્ષપણુમાં મન રાખનાર " पवयणवच्छल्लभावियमणे " પ્રવચનાનુરાગથી જેનું ચિત્ત અનુરંજિત બન્યું છે એવા તે સાધુ ' ऊट्ठेऊणय' પોતાના સ્થાનેથી ઊઠીને " पहट्ठे " અતિશય આનંદિત અને " तुट्ठिं " સંતુષ્ટ થઈને " जहाराइणियं· साहवे " યથા પર્યાય–નાના મોટાના ક્રમ પ્રમાણે સાધુઓને ભાવપૂર્વક " निर्मं-तइत्ताय " આહાર ગ્રહણ કરવાને માટે વિનંતિ કરે ત્યાર બાદ " गुरुजणेणं विइणेय " ગુરુજનો વડે અપાયેલ આહાર " તમે ભોજન કરો " એવી આજ્ઞા

दत्ते सति ' भुङ्क्ष्व त्वमशनादिक ' मित्यनुज्ञाते वा सति, 'उवविट्ठे' उचितासने उपविष्टः सन् ' ससीसं कायं ' सशीर्षं कायं=सपूर्णं शरीरं, तथा='करयलं ' करतलं च ' संपमज्जिऊण ' संप्रमार्ज्य 'अमुच्छिए' अमूर्च्छितः=आहारविषये मूर्च्छारहितः ' अगिध्धे ' अगृद्धः-अप्राप्तरसेऽप्याकाङ्क्षारहितः, ' अगढिए ' अग्रथितः=रसानुगताकाङ्क्षारूपतन्तुजालैरनावद्धः, तथा-' अगरहिए ' अगर्हितः=आहारविषयै अकृताहारगर्हः, अकृतदातृगर्हश्चेत्यर्थः, तथा-' अणज्झोववण्णे ' अनध्युपपन्नः=रसविषये लोलुपतावर्जितः, तथा-' अणाइले ' अनाविलः=अकलुषः ' अलुद्धे ' अलुब्धो-लोभरहितः, तथा ' अणत्तट्ठिए ' अनात्मार्थिकः=नकेवलमात्मस्वार्थी-परमार्थकारीत्यर्थः, असुरसुरं ' सुरसुरशब्दरहितम् , ' अचवचवम् ' चपड़ चपड़

दिया हुआ आहार " तुम भोजन करो " इस प्रकार आज्ञा मिलने पर वह साधु (उवविट्ठे) उचित आसन पर बैठ कर (ससीसं कायं करयलं सपमज्जिऊण) मस्तक से लेकर अपने समस्त शरीर को और करतल को अच्छी तरह प्रमार्जित करे। प्रमार्जित करके (अमुच्छिए) आहार के विषय में अमूर्च्छि बना हुआ वह साधु (अगिद्धे) अप्राप्त रस में आकांक्षा से रहित, तथा (अगढिए) रसानुगत आकांक्षा रूप तन्तुजाल से, अनाबद्ध तथा (अगरहिए)-आहार के विषय में अथवा दाता के विषय में गर्हा करने से रहित और (अणज्झोववण्णे) रस के विषय में लोलुपता से विहीन बन कर आहार करें। उस समय वह (अणाइले) अनाविल-अकलुए और (अलुद्धे) अलुब्ध-लोभरहित होकर (अणतट्ठिए) अनात्मार्थिक-केवल आत्मस्वार्थी न बनता हुआ आहार करते समय वह (असुरसुरं) सुर सुर

મળતા તે સાધુ " उववट्ठे" યોગ્ય આસન પર બેસીને " ससीस कायंकरयलं सपमज्जिऊण " શિરથી લઈને પોતાના આખા શરીરને તથા હથેળીને સારી રીતે પ્રમાર્જિત કરીને " अमुच्छिए " આહારના વિષયમાં અમૂર્ચ્છિત બનીને તે સાધુ " अगिद्धे" અપ્રાપ્ત રસની અકાંક્ષાથી રહિત તથા "अगढिए" રસાનુગત આકાંક્ષારૂપી તન્તુજાળથી અનાબદ્ધ-મુક્ત તથા " अगरहिए " આહારના વિષયમા કે દાતાના વિષયમા ગર્હા કરવાની ક્રિયાથી રહિત તથા " अणज्झोववण्णे " રસની બાબતમાં લોલુપતા રહિત બનીને આહાર કરવો જોઈએ. તે સમયે તે " अणाइले " અનાવિલ-ક્લેશ રહિત અને" अलुद्धे " અલુબ્ધ-લોભરહિત થઈને " अणतट्ठिए " અનાત્માર્થિક-કેવળ આત્મસ્વાર્થી ન બને આહાર કરતી વખતે તે " असुरसुरं " "सुर सुर" શબ્દ ન કરે, "अचवचवं"

भावार्थ—इस सूत्र द्वारा सूत्रकार ने एषणा समिति नाम की चतुर्थ भावना का स्पष्टीकरण किया है। इसमें वस्तु का गवेषण, उसका ग्रहण तथा उपयोग, इन तीन बातों का विचार किया जाता है। उंछ आहार की गवेषणा करते समय साधु को अज्ञात, अकथित आदि रूप में रह कर ही विचरना चाहिये। आहार प्राप्त होगा या नहीं होगा' इस प्रकार के संदेहयुक्त विचार से उसे विपाद भावसंपन्न नहीं होना चाहिये। अपने द्वारा गृहीत संयम की जिस प्रकार रक्षा हो ऐसा ही प्रयत्न उसको करते रहना चाहिये तथा जो संयम भाव प्राप्त नहीं हुआ है उसकी प्राप्ति में उसका सतत उद्योगी रहना चाहिये। भिक्षा का लाभ न होने पर उसके चित्त में ग्लानि का भाव नहीं जगना चाहिये। और न क्रोधादि के आवेश में आकर तनतनाट करना चाहिये। भिक्षा प्राप्ति के निमित्त उसे अनेक गृहस्थों के घर पर जाना अनिवार्य है। वहां से वह अल्परूप में प्रत्येक घर से भिक्षा ले। जब देखे की भिक्षा की पूर्ति हो गई है तो वह वापिस उपाश्रय में आवे और गुरु के समक्ष प्राप्त भिक्षा को रखकर गमनागमनजन्य अतिचारों की प्रतिक्रमण करके शुद्धि करे। फिर गुरु के पास अथवा गुरुनिर्दिष्ट अन्य और रत्नाधिक मुनि के समीप जिस २ प्रकार से उसने गोचरी-

---

ભાવાર્થ—આ સૂત્ર દ્વારા સૂત્રકારે एषणासमिति નામની સાથે ચોથી ભાવનાનુ સ્પષ્ટીકરણ કર્યું છે તેમાં વસ્તુના ગવેષણ, તેનું ગ્રહણ, તથા ઉપયોગ, એ ત્રણ વાતનો વિચાર કરાયો છે. ઉંછ આહારની ગવેષણા કરતી વખતે સાધુએ અજ્ઞાત, અકથિત, આદિ રૂપમા રહીને જ વિચરવું જોઇએ. “આહાર પ્રાપ્ત થશે કે નહીં થાય” એવા સંદિગ્ધ વિચારથી તેણે વિષાદ કરવો જોઇએ. નહી. પોતે ગ્રહણ કરેલ સંયમની જે પ્રકારે રક્ષા થાય એવો જ પ્રયત્ન તેણે કરતા રહેવું જોઈએ તથા જે સંયમ ભાવ પ્રાપ્ત થયો નથી તેની પ્રાપ્તિ માટે પ્રયત્નશીલ રહેવું જોઈએ, ભિક્ષા પ્રાપ્ત ન થતા તેના મનમાં ગ્લાનિનો ભાવ ઉત્પન્ન થવો જોઇએ નહીં અને ક્રોધાદિના આવેશમાં આવીને તનતનાટ કરવો જોઈએ નહીં ભિક્ષા પ્રાપ્તિને માટે અનેક ગૃહસ્થોને ઘેર જવું તે તેને માટે અનિવાર્ય ગણાય છે ત્યાથી-પ્રત્યેક ઘરેથી તે થોડી થોડી ભિક્ષા ગ્રહણ કરે. જ્યારે ભિક્ષાની પ્રાપ્તિ પૂર્ણ થઇ ગયેલી લાગે ત્યારે તે ઉપાશ્રયમા આવીને ગુરુની સમક્ષ પ્રાપ્ત થયેલ ભિક્ષાને મૂકીને ગમનાગમન જન્ય અતિચારોની પ્રતિક્રમણ કરીને શુદ્ધિ કરે. પછી ગુરુની પાસે અથવા ગુરુનિર્દિષ્ટ બીજા કોઇ રત્નાધારી સાધુની પાસે તેણે જે જે પ્રકારે ગોચરી પ્રાપ્ત કરી

भिक्षा प्राप्त की है उसकी आलोचना करें। इस तरह प्रमाद वर्जित बनकर वह आगामी काल में इस बातकी विशेष सावधानी रखे की जिससे उद्गमादि दोषों का आहार में परिहार(निवारण) होता रहे। कायोत्सर्गकरके वह आहार में अनातुर बनकर शांति-सुखपूर्वक बैठ जावे। और जबतक आहार करने का समय न आवे इसके पहिले अपने मन को ध्यान, शुभयोग, ज्ञान, और स्वाध्याय में लगावे। किसी भी प्रकार का संक्लिष्ट भाव अपने मन में न आने देवे। बाद में-जब आहार का समय आ जावे तब उठकर यथापर्याय अर्थात् बडे छोटों के क्रम से समस्त साधूजनों को योग की अवक्रतापूर्वक आहार के लिये आमंत्रित करे। गुरुजन जब भोजन करने की आज्ञा प्रदान करे तब अपने सशीर्ष शरीर आदिका प्रमार्जन कर, अमूर्च्छित आदि भाव संपन्न बनकर यतनापूर्वक आगमोक्त विधि के अनुसार आहार करे। आहार करते समय इस बात का वह ध्यान रखे कि यह आहार में शरीर में बलवृद्धि के निमित्त अथवा कांति आदि बढाने के निमित्त नहीं कर रहा हूं किन्तु संयमयात्रा के निर्वाह के निमित्त संयमभार वहन करने के निमित्त, और प्राणधारण के निमित्त ही कर रहा हूं। इस प्रकार आहारसमितिके योग से यह जीव वासित हो जाता है-तो वह अपने गृहीत व्रत के अहिंसा अतिचार आदि दोषों से रक्षित करता हुआ सच्चा अहिंसक संयत

હોય તેની આલોચના કરે આ રીતે પ્રમાદ રહિત બનીને તે ભવિષ્યમાં તે વાતની વધારે કાળજી રાખે કે જેથી ઉદ્ગમાદિ દોષોનો આહારમાં ત્યાગ થતો રહે. કાયોત્સર્ગ કરીને આહાર માટે આતુર બન્યા વિના તે શાંતિથી બેસી જાય અને આહાર કરવાનો સમય ન થાય ત્યાં સુધી પોતાના મનને ધ્યાન, શુભયોગ, જ્ઞાન અને સ્વાધ્યાયમા લીન કરે, કોઇ પણ પ્રકારનો સંકિલષ્ટભાવ પોતાના મનમાં થવા દે નહીં પછી જ્યારે આહાર કરવાનો સમય થાય ત્યારે ઉઠીને પર્યાય પ્રમાણે એટલે કે મોટા-નાનાના ક્રમમાં સમસ્ત સાધુઓને વિનય પૂર્વક આહારને માટે આમંત્રે, ગુરુજન જ્યારે ભોજન લેવાની આજ્ઞા આપે ત્યારે પોતાના શિર શરીર આદિનું પ્રમાર્જન કરીને, અમૂર્च्छित આદિ ભાવયુક્ત બનીને યતના પૂર્વક આગમોક્ત વિધિ પ્રમાણે આહાર કરે આહાર કરતી વખતે તેણે તે વાતનું ધ્યાન રાખવુ કે હુ આ આહાર શરીરમાં બળ વધારવા માટે કે રૂપ વધારવા માટે કરતો નથી પણ સંયમયાત્રાના નિર્વાહને માટે સંયમભાર વહેવાને માટે, અને પ્રાણધારણને માટે જ કરૂં છું. આ પ્રમાણે આહાર સમિતિના યોગથી તે જીવ વાસિત થઈ જાય છે તો તે પોતે

शब्दरहितम् . ' अदुय ' अद्रुतम्-नातिशीघ्रम् ' अविलंबियं ' अविलम्बितम्=नातिमन्दम् 'अपरिसाडियं' अपरिशाटितम्-परिशाटनवर्जितम्, बिन्दुपातयन्नित्यर्थः, तथा-' आलोयभायणे ' आलोकभाजने=प्रकाशयुक्तपात्रे ' जयं ' यतं=यतनापूर्वकम् ' अप्पमत्तेण ' अप्रमत्तेन-सावधानेन ' ववगयसंजोगं ' व्यपगतसंयोगम्=संयोजनादोषरहितम् अधिकलवणादियुक्तवस्तुनोऽल्पलवणादियुक्तवस्तुनि संमेलनं-संयोगस्तद्रहितमित्यर्थः, ' अणिंगालम् ' अनङ्गारम्=अङ्गारदोषवर्जितं रागरहितमित्यर्थः, तथा-'विगयधूमं' विगतधूमं-धूमदोषवर्जितं द्वेषरहितमित्यर्थः, तदुक्तम्-'रागेण सइंगालं दोसेण सधूमगं वियाणाहि' इति, तथा-'अक्खोवंजणवणाणुलेवणभूयं' अक्षोपाञ्जनव्रणानुलेपनभूतम्-तत्र-अक्षस्य=शकटधुरः,उपाञ्जनम्=तैलाभ्यञ्जनम् तथा-'वणाणुलेवण' व्रणानुलेपनं=व्रणस्य=स्फोटकस्य अनुलेपनम्=औषधलेपनम्, तयोर्भूतं=सदृशं यत्तत्, तथा-संजमजायामायानिमित्तं=संयमयात्रा मात्रा निमित्तं

शब्द न करे (अचवचलं) चपड चपड शब्द न करे। (अदुयं) न बहुत जल्दी जल्दी (अविलंबियं) न बहुत धीरातथा (अपरिसाडियं) खाते समय आहार के सीथ को जमीन पर नहीं गिराता हुआ (आलोयभायणे) प्रकाशयुक्त पात्र में (जयं) यतना पूर्वक (अप्पमत्तेणं) बड़ी सावधानी के साथ (ववगय संजोग) संयोजनादि दोषरहित-अर्थात्-अधिक लवण आदि से युक्त वस्तु को अल्प लवण आदि से युक्त वस्तु के साथ न मिलाकर (अणिगालं च) अंगार दोष रहित आहारसामग्री में राग रहित तथा (विगयधूमं) धूमदोपरहित-द्वेषरहित (अक्खोवंजणवणाणु लेवणभूयं) जिस प्रकार शकट की धुरा में तैल का लगाना भारवहन के निमित्त ही किया जाता है और दूसरे किसी प्रयोजन के लिये नहीं किया जाता है तथा व्रण-घाव-पर मरहमपट्टी आदि का

"ચપડ ચપડ" શબ્દ ન કરે. "अदुयं" વધારે ઝડપથી ખાય નહીં, 'अविलंबियं' વધારે ધીમેથી ખાય નહી તથા "अपरिसाडियं" ખાતી વખતે આહારના પદાર્થને જમીન પર પડવા દીધા વિના "आलोयभायणे" પ્રકાશ વાળા પાત્રમાં "जयं" યતના પૂર્વક "अप्पमत्तेणं" ઘણી સાવધાનીથી "ववगयसंजोगं" સંયોજનાદિ દોષ રહિત-એટલે કે વધારે મીઠા આદિ વાળી વસ્તુને થોડા મીઠા આદિ વાળી વસ્તુ સાથે એકત્ર કર્યા વિના "अणिगालं च" અંગાર દોષ રહિત આહાર સામગ્રીમાં રાગ રહિત તથા "विगयधूमं" ધૂમ દોષ રહિત દ્વેષ રહિત "अक्खोवंजणवणाणुलेवणभूय" જેમ ગાડાની ધરીમાં તેલનું સિંચન ભારવહનને માટે જ કરાય છે પણ બીજા કોઈ કારણે કરાતું

संयमयात्रा-संयमपरिपालनं सैव मात्रा-आलम्बनं तन्निमित्तं=तद्धेतोः संयमयात्रानिर्वाहार्थमेवेत्यर्थ, तथा-'संजमभारवहणट्ठयाए' संयमभारवहनार्थतया=संयमभारवहनार्थम्, तथा-'पाणधारणट्ठयाए' प्राणधारणार्थतया=प्राणधारणार्थं च 'संजए ण' संयतः खलु 'समिय' सम्यक्-यतनापूर्वकं-समिकं वा=समभावेन, 'भुंजेज्जा' भुञ्जीत। यथा अक्षस्योपाञ्जनं भारवहनार्थमेव विधीयते, नान्यप्रयोजनार्थम्, यथा च व्रणानुलेपनं तन्निवृत्त्यर्थमेव विधीयते, तथैव-संयमयात्रानिर्वाहार्थं-संयमभारवहनार्थं प्राणधारणार्थं च साधुर्भुञ्जीत, न तु शरीरबलवृद्ध्यर्थं रूपलावण्यवृद्ध्यर्थं चेत्याशयः। एवम्=अमुना प्रकारेण आहारसमितियोगेन भावितो भवति अन्तरात्मा। भावितात्मा कीदृशो भवति? इत्याह-अशबलासंक्लिष्टनिर्व्रणचरित्रभावनया हेतुभूतया अहिंसकःसंयतःसुसाधुर्भवति। एषां पदानामर्थो द्वितीयभावनायां व्याख्यातस्ततोऽवगन्तव्यः॥ सू० ९॥

प्रयोग उसकी निवृत्ति के लिये किया जाता है उसी तरह (संजमजायामाया निमित्तं) संयमयात्रा के निर्वाह के लिये (संजमभार वहणट्ठाए) संयम रूप भार को ढोने के लिये और (पाणधारणट्ठयाए) प्राण धारण के लिये (संजएणं) संयत-मुनि (समिय) यतना पूर्वक समभाव से (भुंजेज्जा) आहार करे। किन्तु शारीरिक बलवृद्धि के लिये तथा रूपलावण्य की वृद्धि के लिये नहीं करे। (एवमाहारसमिइजोगेण भाविओअंतरप्पा असबलमसंकिलिट्ठ निव्वणचरित्त भावणाए अहिंसए संजए सुसाहू) इस प्रकार का आहार समिति के योग से अंतरात्मा भावित हो जाता है। भावित हुआ वह अन्तरात्मा अशबल, असंक्लिष्ट एवं निर्व्रण (निरतिचार)चरित्र की भावना के कारण अहिंसक और संयत बन जाता है, और सच्चे रूप में साधु-मोक्ष को साधन करने वाले-इस नाम को चरितार्थ कर लेता है।

નથી એજ પ્રમાણે "संजमजायामायानिमित्तं" સંયમયાત્રાના નિર્વાહને માટે "संजमभारवहणट्ठाए" સંયમરૂપી ભારનું વહન કરવાને માટે અને "पाणधारणट्ठाए" પ્રાણધારણને માટે "संजएणं" સંત-મુનિ "समियं" યતના પૂર્વક સમભાવથી "भुंजेज्जा" આહાર કરે. પણ શારીરિક બળ વધારવાને માટે તથા રૂપલાવણ્યની વૃદ્ધિને માટે ન કરે. "एवमाहारसमइजोगेण भावेण अंतरप्पा असबलमसंकिलिट्ठनिव्वाणचरित्तभावणाए अहिंसए संजए सुसाहू" આ રીતે આહાર સમિતિના યોગથી અંતરાત્મા ભાવિત થયે જાય છે. ભાવિત થયેલ તે અન્તરાત્મા અશબલ, અસંલિષ્ટ અને નિર્વ્રણ ચારિત્રની ભાવનાને કારણે અહિંસક તથા સંયત બની જાય છે, અને સાચા અર્થમાં સાધુ મોક્ષને સાધન કરનાર-તે નામને ચરિતાર્થ કરે છે.

अथ पञ्चमीं निक्षेपभावनामाह–' पंचमं ' इत्याह–

मूलम्–पंचमं पीढफलग सेज्जा संथारगवत्थपत्तकंबलदंडगरयहरण चोलपट्टगमुहपत्तिगपायपुंछणाद्धि, एयंपि संजमस्स उववूहणट्ठयाए वायातवदंसमसगसीयपरिरक्खणट्ठयाए उवगरणं रागदोसरहियं परिहरियव्वं, संजएणं निच्चं पडिलेहण पप्फोडणापमज्जणाए अहो य राओ य अप्पमत्तेण होइ सययं निक्खियव्वं च गिण्हियव्वं च भायण भंडोवहि उवगरणं। एवं आयणभंडणिक्खेवणासमिइजोगेण भाविओ भवइ अंतरप्पा असबलमसंकिलिट्ठनिव्वणचरित्त भावणाए अहिंसए संजए सुसाहू ॥ सू० १० ॥

टीका—' पंचमं ' इत्यादि—

' पंचमं ' पञ्चमीमादाननिक्षेपसमित्तिरूपां भावनामाह–' पीढफलगसेज्जासंथारगवत्थपत्तकंबलदंडगरयहरणचोलपट्टगमुहपोत्तियपायपुंछणाइं ' पीठफलकशय्यासंस्तारकवस्त्रपात्रकम्बलदण्डकरजोहरणचोलपट्टकमुखपोतिकापादप्रोञ्छनादि, तत्र–पीठं=काष्ठमयं ' पाट ' इति प्रसिद्धमासनम्–' फलक = ' बाजोट '

बन जाता है। और सुसाधु नामको सफल करता है। ॥ सू० ९ ॥

अब सूत्रकार पांचवी जो निक्षेपभावना है उसे प्रकट करने के लिये सूत्र कहते हैं—' पंचमं ' इत्यादि।

टीकार्थ—(पंचमं) पांचवीं भावना आदान निक्षेपसमितिरूप है वह इस प्रकार है (पीढफलगसेज्जासंथारगवत्थपत्तकंबलदंडगरयहरणचोल–

ગ્રહણ કરેલ અહિંસાવ્રતનું અતિચાર આદિ દોષોથી રક્ષણ કરતો થકો સાચો અહિંસક સંત બની જાય છે અને સુસાધુ નામને સફળ કરે છે ॥સૂ-૯॥

હવે સૂત્રકાર પાચમી જે નિક્ષેપ ભાવના છે તેનું વર્ણન કરવાને માટે કહે છે–" पंचमं " ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—" पंचम " પાંચમી ભાવના आदाननिक्षेपसमिति નામની છે તે આ પ્રમાણે છે–पीढ फलग सेज्जासंथारगवस्थपत्तकवल दंडगरयहरणचोलपट्टगमुहपत्तिग

इति प्रसिद्धः, शय्या=शरीरप्रमाणलक्षणा, संस्तारकः=सार्द्धहस्तद्वयप्रमाणआसन-विशेषः, वस्त्रं, पात्रं, कम्बलश्च प्रसिद्धाः, दण्डकः=रोगिभिर्वृद्धैश्च गमनागमनार्थं रक्षिता यष्टिः, रजोहरणं, चोलपट्टकः, तथा-मुखपोतिका=सदोरमुखवस्त्रिका, पादप्रोञ्छनं=प्रमार्जिका, एतान्यादौ यस्य तत्, इत्यादिकम्, 'उवगरण' उपकरणं साधोरस्ति। 'एयंपि' आहारवदेतदपि पीठफलकादिकं 'संजमस्स' संयम-स्य-सप्तदशविधस्य 'उववूयणट्टयाए' उपबृंहणार्थम्-पोषणार्थम्-भवति। अतः 'वायातवदंसमसगसीयपरिरक्खणट्टयाए' वातातपदंशमशकशीतपरिरक्षणार्थं 'संजएणं' संयतेन=मुनिना 'रागदोसरहियं' रागद्वेषरहितं यथा स्यात्तथेदम् उपकरणं 'परिहरियव्वं' परिधर्तव्यम् धारणीयमित्यर्थः। तथा 'निच्चं' नित्यं तेषां यथायोग्यं 'पडिलेहणा पप्फोडणापमज्जणाए' प्रतिलेखना प्रस्फोटनाप्रमार्जनासु-तत्र-प्रतिलेखना-उभयकालं प्रत्युपेक्षणा, प्रस्फोटना=यतनया विधूननम्, प्रमार्जना

पट्टगमुहपत्तिगपायपुंछणाइ) पीठ-पाट, फलक-बाजोट-शय्या-शरीरप्रमाण-बिछौना, संस्तारक-अढाईहाथप्रमाणआसनविशेष, वस्त्र, पात्र, कम्बल, दण्ड-रोगी अथवा वृद्ध साधुओं द्वारा अपने पास गमनागमनार्थ रक्खी हुई लकड़ी, रजो हरण, चोलपट्टक, मुखपोतिका-सदोरकमुखवस्त्रिका और पादप्रोञ्छन-प्रमार्जिका इत्यादि उपकरण साधु के हैं। (एयंपि-संजमस्स उववूहणट्टयाए) आहार की तरह ये भी सतरह प्रकार के संयम का पोषण के लिये हैं। इसलिये इनका (वायातवदंसमसग सीय-परिरक्खणट्टयाए संजएणं रागदोसरहियं परिहरियव्वं) वात-(पवन) आतप-धूप, दंश, मशक एवं शीत से रक्षित होने के लिये मुनि को रागद्वेषरहित होकर धारण करना चाहिये। तथा (निच्चं) नित्य ही (पडिलेहणा पप्फोडणा पमज्जणाए) इन उपकरणों में से भाजन भाण्ड

पायपुंछणाइ" पीठ-પાટ, फलक-બાજોઠ, शय्या-શરીરના પ્રમાણનું પાથરણું संस्तारक-અઢી હાથના માપનુ આસનવિશેષ, વસ્ત્ર, પાત્ર, કંબલ, दण्ड-રોગી અથવા વૃદ્ધ સાધુઓ દ્વારા પોતાની પાસે આવવા જવા (ટેકા માટે) રાખેલી લાકડી, રજોહરણ, ચોલપટ્ટક, मुखपोत्तिका દોરા સહિત મુહપત્તિ, અને પાદપ્રોઞ્છન-પ્રમાર્જિકા ઈત્યાદિ સાધુનાં ઉપકરણો છે. 'एयंपि सजमस्स उववूहणट्टयाए" આહારની જેમ એ પણ સત્તર પ્રકારના સંયમના પોષણ માટે છે. તેથી તેમને "वायातवदंसमसगसीयपरिरक्खणट्ठाए संजएणं रागदोसरहियं परिहरियव्वं" વાત-પવન, આતપ, તડકો, દંશ, મશક અને શીતથી રક્ષણ પામવાને માટે મુનિએ રાગદ્વેષ રહિત થઈને તેમને ધારણ કરવા જોઈએ તથા "निच्चं" હંમેશા "पडिलेहणापमज्जणाए" એ ઉપકરણોમાથી ભાજન ભાંડ અને ઉપધિની પ્રતિ

=रजोहरणादिभिः संमार्जना, तासु कृतासु-प्रतिलेखनादिकरणानन्तरमित्यर्थ- 'अहो य राओ य' अहश्च रात्रौ च 'भायणभंडोवहिउवगरण' भाजनभाण्डो- पध्युपकरणं-तत्र-भाजनं=पात्रम्, भाण्डम्=उन्दकम्, उपधिः=वस्त्रम्, एतत्त्रित- यरूपं यदुपकरणं तत्, 'अप्पमत्तेणं' अप्रमत्तेन सता 'सययं' सततं=निरन्तरं 'निक्खियव्वं' निक्षेप्तव्यं-स्थापनीयं 'गिण्हियव्वं' ग्रहीतव्य च 'होइ' भवति एवमादानभाण्डनिक्षेपणासमितियोगेन भावितो भवति अन्तरात्मा=जीवः। भावि- ताऽन्तरत्मा कीदृशो भवति ? इत्याह-अशवलासंक्लिष्टनिर्व्रणचारित्र भावनया हेतु- भूतया अहिंसकः संयतः सुसाधुर्भवति, एतेपामर्थः पूर्वमुक्तः, तत एवावगन्तव्यः॥सू१०

और उपधि की प्रतिलेखना प्रस्फोटना प्रमार्जना कर लेने पर-प्रतिलेखना दोनों समय प्रत्युपेक्षणा प्रस्फोटना, प्रमार्जना-रजोहरणादि से पुंजना करके (अहोय राओ य) दिन में और रात्रि में (भायण भंडोवही- ऊवगरणं) भाजन-पात्र, भाण्ड उन्दक, और उपधि-वस्त्र। इन उप- करणों को जमीन पर रखना पडता है, उठाना पडता है। सो ऐसी स्थिति में साधु का यह कर्तव्य है कि वह इन सबको धरते उठाते (सययं) निरन्तर (अप्पमत्तेणं) अप्रमत्त रहे। (निक्खियव्वं गिण्हि- यव्वं होइ) इन उपकरणों को जब भूमि पर धरे तब उसकी प्रमार्जना करे फिर धरे, उठावे तब उन उपकरणों की प्रमार्जना करके उठावे। इस तरह करने से जीवों की विराधना नहीं हो सकती है। यही साधु की अप्रमत्त अवस्था है। (एवं) इस तरह (आयाण भंडनिक्खवणासमिइ- जोगेण) आदान भाण्डनिक्षेपणासमिति के योग से (अंतरप्पा) जीव

લેખના પ્રસ્ફોટના પ્રમાર્જના કરી લીધા પછી-પ્રતિલેખના-બન્ને સમય પ્રત્યુપે- ક્ષણા, પ્રસ્ફોટના-યતના ખંખેરવું, પ્રમાર્જના-રજોહરણ આદિથી પૂંજવું વગેરે કર્યા પછી "अहोय राओय" દિવસે તથા રાત્રે "भायण भडोवहिउवगरणं" ભાજન-પાત્ર, भाण्ड-ઉન્દક અને उपधि-વસ્ત્ર, એ ઉપકરણોને જમીન ઉપર રાખવા પડે છે, તથા ઉપાડવા પડે છે. તો એવી પરિસ્થિતિમાં સાધુનું એ કર્તવ્ય છે કે તે એ બધાને લેતા, મૂકતા "सययं" નિરંતર "अप्पम णं" અપ્રમાદી રહે "निक्खियव्वं गिण्हियव्वं होइ" એ ઉપકરણોને જ્યારે જમીન પર મૂકે ત્યારે તેની પ્રમાર્જના કરે અને ફરીથી ત્યાથી ઉઠાવે ત્યારે તે ઉપ- કરણોની પ્રમાર્જના કરીને ઉઠાવે, આ પ્રમાણે કરવાથી જીવોની વિરાધના થઈ શકતી નથી. એ જ સાધુની અપ્રમત્ત અવસ્થા છે "एव" આ રીતે "आयाणा- भंड निक्खेवणासमिइजोगेण" આદાન ભાંડ નિક્ષેપણા સમિતિના યોગથી "अं-

सम्प्रति सूत्रकारः प्रथमसंवरद्वारमुपसंहरन्नाह–' एवं ' इत्यादि—

मूलम्–एवमिणं संवरदारं सम्मं संवरियं होइ, सुप्पणिहियं, इमेहिं पंचहिं वि कारणेहिं मणवयणकायपरिरक्खिएहिं, णिच्चं आमरणंतं च एस जोगो णेयव्वो धिइमया मइमया अणासवो अकलुसो अच्छिद्दो अपरिसाइं असंकिलिट्ठो सुद्धो सव्वजिण-मणुण्णाओ। एवं पढमं संवरदारं फासियं पालियं सोहियं तीरियं किट्टियं आराहियं आणाए अणुपालियं भवइ। एवं णायमुणिणा भगवया पण्णवियं परूवियं पसिद्धं सिद्धं सिद्ध-वरसासणमिणं आघवियं सुदेसियं पसत्थं पढमं संवरदारं समत्तं त्ति बेमि॥ सू–११ ॥

टीका—' एवमिणं ' इत्यादि—

' एवमिणं ' एवम्––उक्तक्रमेण इदम्–अहिंसालक्षणं 'संवरदारं' संवरद्वारम्=संवरस्य=अनाश्रवस्य द्वारम्=उपायः ' सम्मं ' सम्यक् ' संवरियं ' संवृतम्–संसे-

---

(भाविओ भवइ) भावित बना हुआ वह जीव हेतुभूत अशबल, असंक्लिष्ट, निर्व्रण (निरतिचार) चारीत्र की भावना से अहिंसक संयत बन जाता है। और सच्चेरूप में अपने साधुपद को सार्थक कर लेता है। निर्जन्तु भूमि पर उपकरणों का धरना और उठाना इसका नाम आदानभाण्ड–निक्षेपणा समिति है। इस समिति के योग से आत्मा–मुनि अपने अहिंसा महाव्रत की रक्षा और स्थिरता करता रहता है ॥ ॥ सू० १० ॥

अब सूत्रकार प्रथम संवर द्वार का उपसंहार करते हुए कहते हैं—

तप्पा " જીવ " भाविओ भवइ " ભાવિત બની જાય છે. ભાવિત બનેલ તે જીવ હેતુભૂત અશબલ, અસંકિલષ્ટ, નિર્વ્રણ ચારિત્રની ભાવનાથી અહિંસક સંયત બની જાય છે અને સાચા અર્થમાં પોતાના સાધુ પદને સાર્થક કરે છે. ભૂમિ પર ઉપકરણોને મૂકવા તથા ઉપાડવા તેનું નામ આદાન ભાંડ નિક્ષે-પણા સમિતિ છે. આ સમિતિના યોગથી આત્મા મુનિ–પોતાના અહિંસા મહાવ્રતની રક્ષા તથા સ્થિરતા કરતા રહે છે ॥ સૂ–૧૦ ॥

હવે સૂત્રકાર પ્રથમ સંવરદ્વારનો ઉપસંહાર કરતાં કહે છે–"एवमिणं" ઇત્યાદિ

न्तिं सत् ‘ सुपणिहियं ’ सुप्रणिहितं=सुरक्षित ‘ होइ ’ भवति । ‘ मणवयणकायप-रिरक्खिएहिं’ मनोवचनकायपरिरक्षितैः—योगत्रयपरिरक्षितैः ‘इमेहि पचहिं वि कार-णेहिं’ एभिः पञ्चभिरपि कारणैः=पूर्वोक्ताभिः पञ्चभिर्भावनाभिः ‘णिच्च’ नित्यम् ‘ आमरणंतं ’ आमरणान्तं=मरणपर्यन्तं च ‘ एसजोगो ’ एष योगः=अहिंसालक्ष-णसंवररूपव्यापारः ‘ धिइमया ’ धृतिमता=स्वस्थचित्तेन ‘ मइमया ’ मतिमता=हेयोपादेयमेधायुक्तेन ‘ नेयव्वो ’ नेतव्यः=वोढव्यःपरिपालनीय इत्यर्थः । कीदृ-शोऽयं योगः ? इत्याह—अयं योगः—‘ अणासवो’ अनाश्रवः—नूतनकर्मागमनरहित-त्वात् ‘ अकलुसो ’ अकलुषः=अशुभाध्यवसायरहितत्वात्, ‘ अच्छिद्दो ’ अच्छिद्रः—छिन्नपापस्रोतत्वात्, अपरिस्साई ’ अपरिस्रावीबिन्दुरूपेणापि कर्मजलप्रवेशरहि-

---

‘ एवमिणं ’ इत्यादि

टीकार्थ | (एवमिणं संवरदारं सम्मं संवरियं सुपणिहियं होइ) उक्त क्रमसे यह अहिंसारूप प्रथम संवरद्वार सेवित किये जाने पर सुरक्षित हो जाता है। (मणवयणकायपरिरक्खिएहिं) इसलिये मन वचन और काय इन तीनों योगों से अच्छी तरह सुरक्षित किये गये (इमेहिं पंचहिं वि कारणेहिं) इन पूर्वोक्त पांच भावनारूप कारणों से (निच्चं) नित्य (आमरणंतं) मरणपर्यंत—जीवन भर तक (एस जोगो) इस अहिंसारूप संवरद्वार का (धिइमया) स्वस्थचित्त से युक्त एवं (मइमया) हेयोपादेय की बुद्धि से संपन्न होकर मुनि को (नेयव्वो) परिपालन करना चाहिये । क्यों कि यह अहिंसारूप संवर योग (अणा-सवो) नूतन कर्मागमन को रोकने का कारण होने से अनाश्रवरूप है। (अकलुसो) अशुभ अध्यवसाय से रहित होने के कारण अकलुष रूप है। (अच्छिद्दो) इससे पापका स्रोत नष्ट हो जाता है इस कारण से यह

ટીકાર્થ–“एवमिणं सवरदार सम्मं संवरिय सुपणिहियं होइ” કહ્યા પ્રમાણેના ક્રમથી આ અહિંસારૂપ પ્રથમ સવરદ્વારનુ સેવન કરવાથી તે સુરક્ષિત થઇ જાય છે “मणवयणकायपरिरक्खिएहिं” તેથી મન, વચન અને કાય એ ત્રણે યોગોથી સારી રીતે સુરક્ષિત કરાયેલ “ इमेहिं पंचहिं विकारणेहि ” એ પૂર્વોક્ત પાચ ભાવનારૂપ કારણોથી “ निच्चं ” હમેશા “ आमरणंत ” મરણપર્યંત-આજીવન, “ एसजोगो ” આ અહિંસારૂપ સવરદ્વારનું “ धिइमया ” સ્વસ્થ ચિત્તથી અને “ मइमया ” હેયોપાદેયની બુદ્ધિથી યુક્ત થઇને મુનિએ “नेयव्वो ” પરિપા-લન કરવું જોઈએ. કારણ કે આ અહિંસારૂપ સંવરયોગ “ अणासवो નવા કર્માગમનને રોકવાને કારણભૂત હોવાથી ને અનાશ્રવ રૂપ છે “ अकलुसो ” અશુભ અધ્યવસાયથી રહિત હોવાને કારણે અકલુષરૂપ છે. “अच्छिद्दो ’ તેનાથી પાપનો પ્રવાહ નાશ પામે છે તે કારણે તે અચ્છિદ્રરૂપ છે. “ अपरिस्साई ”

तत्वात्, 'असंकिलिट्ठो' असंक्लिष्टः–असमाधिभाववर्जितत्वात् 'सुद्धो' शुद्धः= कर्ममलवर्जितत्वात् 'सव्वजिणमणुण्णाओ' सर्वजिनानुज्ञातः–सकलप्राणिहितकारकत्वात् सर्वेषामर्हतामनुमतश्चास्ति। एवम्–उक्तप्रकारेण 'पढमं संवरद्दारं' प्रथमं संवरद्वारं, 'फासियं' स्पृष्टं कायेन, 'पालियं' पालितं सततमुपयोगेन सेवितम्, 'सोहियं' शोधितम्–अतिचारवर्जनेन, 'तीरियं' तीरितं=तीरं प्रापितं पूर्णरूपेण सेवितम्, 'किट्टियं' कीर्त्तितम्=अन्येषामुपदिष्टम्, तथा 'आराहियं' आराधित–त्रिकरणत्रियोगैः सम्यगाचरितम्, 'आणाए' आज्ञया=सर्वज्ञवचनेन, 'अणुपालियं' अनुपालितं च भवति। एवम्=उक्तरूपं संवरद्वारं केन कथितम्?

अच्छिद्ररूप है। (अपरिस्साई) एक बिन्दु मात्र भी कर्मरूप जल का इस में प्रवेश नहीं हो सकता है अतः उससे रहित होने के कारण यह अपरिस्रावी है। (असंकिलिट्ठो) असमाधिरूप भाव से यह वर्जित होता है इसलिये असंक्लिष्ट है। तथा (सुद्धो) कर्ममल से सर्वथा विहीन होने के कारण यह शुद्ध है। इसीलिये यह (सव्वजिणमणुण्णाओ) समस्त अर्हंत भगवंतों को अनुमत–मान्य हुआ है क्यों कि इसीसे सकल प्राणियों का हित हुआ है। (एवं पढमं संवरदारं) उक्त प्रकार से प्रथम संवरद्वार को (फासियं) जो अपने काय से स्पर्श करते हैं (पालियं) निरन्तर ध्यान पूर्वक इसका सेवन करते हैं (सोहियं) अतिचारों से इसे रहित बनाते हैं (तीरियं) पूर्णरूप से इसें अपने जीवन में उतारते हैं (किट्टियं) दूसरों को इसे धारण करने का उपदेश देते हैं तथा (आराहियं) तीन करण तीन योगों से जो इसे अच्छी तरह आचरित करते हैं (आणाएअणुपालियं भवइ) सर्वज्ञ के वचन

એક બિન્દુ જેટલા પણ કર્મરૂપી જળનો તેમા પ્રવેશ થઇ શકતો નથી, તેથી તેનાથી રહિત હોવાને કારણે તે અપરિસ્રાવી છે, "असंकिलिट्ठो" અસમાધિ-રૂપ ભાવથી તે રહિત હોય છે તેથી તે અસંકિલષ્ટ છે. તથા "सुद्धो" કર્મ-મળથી સર્વથા રહિત હોવાને કારણે તે શુદ્ધ છે. તેથી તે "सव्वजणमणु–ण्णाओ" સમસ્ત અર્હંત ભગવાનોને માન્ય થયેલ છે, કારણ કે તેનાથી સઘળા પ્રાણીઓનું હિત થયું છે. "एव पढमं संवरदारं" ઉક્ત પ્રકારે પ્રથમ સંવરદ્વારનો "फोसिय" જે પોતાના શરીરથી સ્પર્શ કરે છે "पालिय" નિરન્તર ધ્યાનપૂર્વક તેનું પાલન કરે છે "सोहियं" અતિચારોથી તેને રહિત બનાવે છે "तीरियं" પૂર્ણ રીતે તેને પોતાના જીવનમાં ઉતારે છે, "किट्टियं" બીજાંને તે પાળવાનો ઉપદેશ આપે છે, તથા "आराहिय" ત્રણ કારણ ત્રણ યોગોથી જે તેને સારી રીતે આચરે છે "आणाए अणुपालियं भवइ" સર્વજ્ઞનાં

इत्याह—' णायमुणिणा ' ज्ञातमुनिना-प्रसिद्धक्षत्रियवंशोद्भवेन मुनिना भगवता महावीरेण ' पण्णवियं ' प्रज्ञापितम्=शिष्येभ्यः सामान्यतया कथितम् , 'परूवियं परूपितं=भेदानुभेदप्रदर्शनपूर्वकं कथितम् , 'पसिद्धं ' प्रसिद्धम्-प्रख्यातम् , सिद्धं -प्रमाणप्रतिष्ठितम् , ' सिद्धवरसासणं ' सिद्धवरशासनम्-सिद्धानां-निष्ठितार्थानां वरशासनं=प्रधानाज्ञानारूपम् , ' इणं ' इदम् ' आघवियं' आख्यातं=सर्वतो भावेन कथितम्, 'सुदेसियं' सुदेशितम्=सदेवमनुजासुरायां परिषदि सुष्ठूपदिष्टं 'पसत्थं

के अनुसार ही पालते हैं। (एवं) इस प्रकार उक्त रूप यह संवर द्वार (णायमुणिणा) प्रसिद्ध क्षत्रिय वंश में उत्पन्न हुए मुनि (भगवया भगवान् महावीर ने (पण्णवियं) प्रज्ञापित किया है-शिष्यों के लिये सामान्यरूप से कहा है। (परूवियं) प्ररूपित किया है-भेदानुभेद प्रदर्शन पूर्वक कथित किया है। इसलिये यह (पसिद्धं) प्रसिद्ध है-आचार्यादिकी परंपरा से इसका पालन करना इसीरूप में चला आ रहा है। तथा (सिद्ध) सिद्ध है-इसमें किसी भी प्रमाण से बाधा नहीं आती है अतः प्रमाणप्रतिष्ठित है। तथा (सिद्धवरसासणमिणं) जो सिद्ध हो चुके हैं-कृतकृत्य बन चुके हैं-उनका यह वर शासन रूप है सो इसी को (आघवियं) प्रभु महावीर ने कहा है। और (सुदेसियं) इसका उप-देश उन्हों ने देव, मनुज एवं असुरों सहित परिषदा में अच्छी तरह दिया है। (पसत्थं) यह प्रथम संवर द्वार समस्त प्राणियों का हित-कारक होने से मंगलमय है। (पढमं संवरदारं समत्तं) इस तरह का

વચન પ્રમાણે જ પાળે છે, " एवं " આ પ્રમાણે કહ્યા પ્રમાણેનાં સ્વરૂપનું તે સંવરદ્વાર "णायमुणिणा" પ્રસિદ્ધ ક્ષત્રિય વંશમા ઉત્પન્ન થયેલ મુનિ "भगवया" ભગવાન મહાવીરે " पण्णवियं " પ્રજ્ઞાપિત કરેલ છે-શિષ્યોને માટે સામાન્ય રૂપે કહ્યુ છે " परूवियं " પ્રરૂપિત કરેલ છે-ભેદાનુભેદ બતાવીને કહેલ છે તેથી તે " पसिद्धं " પ્રસિદ્ધ છે-આચાર્યાદિની પરંપરા દ્વારા આ જ રીતે તેનું પાલન કરવાનું ચાલ્યું આવે છે એવું " सिद्धं " સિદ્ધ થયેલ છે-તેમાં કોઈ પણ પ્રમાણથી બાધા (મુશ્કેલી) આવતી નથી તેથી તે પ્રમાણપ્રતિષ્ઠિત છે. તથા " सिद्धवरसासणमिणं " જે સિદ્ધ થઇ ગયા છે, કૃતકૃત્ય બની ગયાં છે-તેમનું તે શ્રેષ્ઠ શાસન રૂપ છે કારણ કે તે " आघवियं " મહાવીર પ્રભુએ કહેલ છે. " सुदेसियं " તેનો ઉપદેશ તેમણે દેવ, માનવ અને અસુરો સહિતની પરિષ-દોમા સારી રીતે આપેલ છે " पसत्थं " આ પ્રથમ સંવરદ્વાર સમસ્ત પ્રાણી-ઓને માટે હિતસાધક હોવાથી મંગળમય છે. " पढमं संवरदारं समत्तं " આ

'पसस्त' प्रशस्त–सर्वप्राणिहितकरत्वान्मङ्गुलमयम्, पढमं संवरदारं' प्रथमसंवरद्वारं 'समत्तं 'समाप्तम्, 'त्तिबेमि' इति ब्रवीमि--अस्यार्थःपूर्वमुक्तः ॥ सू० ११ ॥

॥ इति प्रथमं संवरद्वारं समाप्तम् ॥

॥ इति श्री विश्वविख्यात–जगद्वल्लभ – प्रसिद्धवाचकपञ्चदशभाषाकलितललितकलापालापक–प्रविशुद्धगद्यपद्यनेकग्रन्थनिर्मापक– वादिमानमर्दक–श्रीशाहू छत्रपतिकोल्हापुरराजप्रदत्त 'जैनशास्त्राचार्य' पदभूषित–कोल्हापुरराजगुरु–बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य- जैनधर्मदिवाकरपूज्यश्री घासीलालव्रतिविरचिता श्री प्रश्नव्याकरणसूत्रसुदर्शन्याख्यायां व्याख्यायां संवरात्माके द्वीतीये–भागेऽहिंसानामकं प्रथमं संवरद्वार समाप्तम् ॥ १ ॥

यह प्रथम संवर द्वार समाप्त हुआ! (त्ति बेमि) हे जंबू। जैसा मैं ने भगवान् महावीर के मुख से इसे सुना है वैसा ही यह मैंने तुम से कहा है–अपना कल्पना से इसमें कुछ भी नहीं कहा है ॥

भावार्थ—प्रथम संवरद्वार का उपसंहार करते हुए सूत्रकार कहते हैं कि इस संवरद्वार को प्रत्येक मुनिजन के लिये अच्छी तरह उपयोग पूर्वक पांचभावनाओं सहित यावज्जीव पालन करना चाहिये। इसके पालन करने में यदि कोई परीषह और उपसर्ग आवें तो उन्हें धैर्यपूर्वक सहलेना चाहिये, क्यों कि यह संवर द्वार नवीन कर्मो के आस्रव को रोकता है। इसके पालन करने से अशुभ अध्यवसाय उत्पन्न नहीं होने पाते हैं। पापों का स्रोत इसके प्रभाव से बंध हो जाता है। यह

પ્રકારનું આ પ્રથમ સવરદ્વાર સંપૂર્ણ થયુ. "त्तिबेमि" હે જમ્બૂ! જેવુ મે ભગવાન મહાવીરના મુખેથી સાભળ્યું છે એવું જ તે મેં તમને કહ્યું છે—મારી કલ્પનાથી તેમા મેં કઈ પણ કહ્યુ નથી.

ભાવાર્થ—પ્રથમ સંવરદ્વારનો ઉપસંહાર કરતાં સૂત્રકાર કહે છે કે આ સંવરદ્વારનું પ્રત્યેક મુનિએ સારી રીતે ઉપયોગ પૂર્વક પાચ ભાવનાઓ સહિત જીવનપર્યંત પાલન કરવું જોઈએ તેનું પાલન કરતાં જો કોઈ પરીષહ તથા ઉપસર્ગ નડે તો ધૈર્યથી તેને સહન કરી લેવા જોઈએ, કારણ કે આ સંવરદ્વાર નવીન કર્મોનો આસ્રવ થતો રોકે છે તેનુ પાલન કરવાથી અશુભ અધ્યવસાય ઉત્પન્ન થવા પામતો નથી તેના પ્રભાવથી પાપોના પ્રવાહથી બધ થઈ જાય છે

अपरिस्रावी आदि विशेषणों वाला है। अर्हत भगवंतों ने इसे अपने जीवन में उतार कर ही समस्त जीवों को इसे धारण-सेवन करने का आदेश दिया है। भगवान् महावीर ने भी ऐसी ही इस प्रथम संवर-द्वार की प्रशंसा की है। और तीर्थंकर परंपरा के अनुसार ही उन्हों ने इसे पालन करने आदि का आदेश दिया है। तथा इसका देवमनुष्यादि सहित परिषदा में उपदेश दिया है, अतः यह प्रमाणप्रतिष्ठित है। और मंगलमय है ॥ सू० ११ ॥

॥ इस प्रकार यह प्रथम संवरद्वार समाप्त हुआ ॥

તે અપરિસ્રાવી આદિ વિશેષણો વાળું છે અર્હંત ભગવાને તેને પોતાના જીવનમા ઉતારીને જ સમસ્ત જીવોને તેને ધારણ કરવાનો-તેનું સેવન કરવાનો આદેશ આપ્યો છે ભગવાન મહાવીરે પણ આ પ્રથમ સંવરદ્વારની એવી જ પ્રશંસા કરી છે અને તીર્થંકર પરંપરા અનુસાર જ તેમણે તેનું પાલન કરવા આદિનો આદેશ દીધો છે તથા તેનો દેવ, મનુષ્યાદિ સહિતની પરિષદોમાં ઉપદેશ આપ્યો છે, તેથી તે પ્રમાણભૂત છે અને મંગળમય છે ॥ સૂ-૧૧ ॥

આ રીતે આ પ્રથમ સંવરદ્વાર સમાપ્ત થાય છે

॥ सत्यवचनं नाम द्वितीयं संवरद्वारम् ॥

गतं प्राणातिपातविरमणं, सम्प्रति सत्यवचनं प्रारभ्यते। अस्य पूर्वाध्ययनेन सहायं सम्बन्धः-पूर्वं प्राणातिपातविरतिरभिहिता, सा तु अलीकवचनविरत्यैव संभवति, इत्येनेन संबन्धेनायातं सत्यवचनाख्यं द्वितीयमध्ययनं प्रारभ्यते, तस्येदमादिमं सूत्रम्-' जंबू एत्तो बितियं च ' इत्यादि—

मूलम्—जंबू ! एत्तो बिइयं च सच्चवयणं सुद्धं सुइयं सिवं सुजायं सुभासियं सुकहियं सुव्वयं सुदिट्ठं सुपइट्ठियं सुपइट्ठियजसं सुसंजमियवयणबुइयं सुरवरनरवसभपवर—बलवग सुविहिय-जण-बहुमयं परमसाहुधम्मचरणतवनियम—परिग्गहिय सुगइ-पहदेसगं च लोगुत्तमं च वयमिणं विज्जाहरगगणगमणविज्जाणसाहगं सग्गमग्गसिद्धिपहदेसगं अवितहं तं सच्चं उज्जुयं अकुडिलं भूयत्थं अत्थओ विसुद्धं उज्जोयगं पभासगं भवइ, सव्वभावाण-जीवलोगे अविसंवाइजहत्थमहुरं पच्चक्खं

सत्यवचन नामक द्वितीय संवरद्वार प्रारंभ—

प्राणातिपातविरमण नाम का संवरद्वार कहा जो चुका है। अब सत्यवचन नामका द्वितीय संवरद्वार प्रारंभ होता है। इसका पूर्व अध्ययन के साथ संबंध इस प्रकार से है—जबतक अलीकबचनों से जीव की विरति नहीं होगी-तबतक प्राणातिपात का विरमण संभव नहीं हो सकता। इसी संबंध को लेकर सूत्रकार ने इस द्वितीय सत्य-वचन नामक अध्ययन को प्रारंभ करते हैं। इसका यह प्रथमसूत्र है—

સત્ય વચન નામનું બીજા સંવરદ્વારનો પ્રારંભ

પ્રાણાતિપાત વિરમણ નામનું પહેલા સંવરદ્વારનું વર્ણન પૂર્ણ થયું. હવે સત્યવચન નામના બીજા સંવરદ્વારના વર્ણનની શરૂઆત થાય છે. તેનો આ પ્રકારે આગળના અધ્યયન સાથે સંબંધ છે. જ્યાં સુધી અસત્ય વચનોથી જીવની વિરતિ થતી નથી ત્યાં સુધી પ્રાણાતિપાતનું વિરમણ સંભવી શકતું નથી એ સંબંધને દર્શાવીને સૂત્રકારે આ દ્વિતીય સત્યવચન નામના અધ્યયનનો પ્રારંભ કરે છે. તેનું પહેલુ સૂત્ર આ પ્રમાણે છે-"जंबू! एत्तो बिइयं च" ઈ૦

देवयं च जंतं अच्छेरकारगं अवत्थंतरेसु बहुएसु माणुसाणं सच्चेणं महासमुद्दमज्झे वि चिट्ठंति, न निमज्जंति मूढाणिया वि पोया सच्चेण य उदगसंभमंमि वि न वुब्भंति, न य मरंति याहं च ते लब्भंति, सच्चेण य अगणि संभमंमि वि न डज्झंति उज्जुगा मणुस्सा । सच्चेण य तत्ततेल्लतउलोहसीसकाइं छिव्वंति, धरेंति न डज्झंति मणुस्सा । पव्वयकडगाहिं मुच्चंते न य मरंति सच्चेण य परिग्गहिया असिपंजरगया समराओ वि णिइंति अणहाय सच्चवाई, वहबंधाभिओगवेरघोरेहिं पमुच्चंति य, अमित्तमज्झाहिं निइंति अणहाय सच्चवाई । सा देव्वाणि य देवयाओ करेंति सच्चवयणे रयाणं ॥सू०१॥

टीका—' जंबू ' इत्यादि—

सुधर्मा स्वामी जंबू स्वामिनं प्रत्याह—हे जम्बूः ! ' एत्तो ' इतः—प्रथमसंवरद्वारानन्तरम् ' बिइयं च ' द्वितीयं खलु संवरद्वारं ' सच्चवयणं ' सत्यवचनम्=सद्भ्यो—मुनिभ्यो गुणेभ्यः पदार्थेभ्यो वा हितम्=उपकारकं सत्यम्, उक्तंच—

' जंबू ! एत्तो बिइयं च ' इत्यादि ।

टीकार्थ—श्री सुधर्मा स्वामी जंबूस्वामी से कहते हैं (जंबू!) हे जंबू ! (एत्तो) इस प्रथमसंवरद्वार के बाद यह (बिइयं च) दूसरा संवर द्वार सत्य नामका है सो मैं इसे कहता हूं, तुम सुनो—(सच्च वयणं) " सद्भ्यो हितं " सत्यं अर्थात् सत् का मुनिजन का अथवा गुणों का या पदार्थों का जो वचन हित—उपकारक होता है वह सत्य वचन है। कहा भी है—

ટીકાર્થ—શ્રી સુધર્માસ્વામી જંબૂ સ્વામીને કહે છે "જંબૂ !" હે જંબૂ ! "एत्तो" આ પહેલા સંવરદ્વાર પછી ' बिइयं च " બીજું સત્ય નામનું જે સંવરદ્વાર છે તેનું હું વર્ણન કરૂં છું તે તમે સાંભળો. " सच्चवयण " " सद्भ्यो हितं " સત્ય એટલે કે સત્‌નું મુનિજનનું અથવા ગુણોનું અથવા પદાર્થોનું જે વચન હિત—ઉપકારક હોય છે તે સત્યવચન ગણાય છે કહ્યું પણ છે—

" सच्चं हियं सयामिह संतो मुणउ गुणा पयत्था वा " छाया—सत्यं हितं सतामिह, सन्तो मुनयो गुणाः पदार्था वा " इति, सत्सु तिष्ठतीति वा, सत्यम्, सत्यं च तद्वचनं च सत्यवचनम्, परमाणत्राणपरायणं हितकर सुखावहमनुद्वेगजनकं सुधावत्स्वादीयं वचनं सत्यवचनमित्यर्थः । कीदृशं सत्यवचनम् ? तदाह–' सुद्धं ' शुद्धं–निर्दोषत्वात्, ' सुचियं ' शुचिकं पवित्रत्वात्, ' सिवं ' शिवं=मोक्षजनकत्वात्, ' सुजायं ' सुजातं–शुभविवक्षया समुत्पन्नत्वात्, 'सुभासिय' सुभाषितम्–

" सच्चं हियं सयामिह, संतो मुणउ गुणा पयत्था वा " ।

संतों का हित जिससे होता है वह सत्य मुनि होते हैं या गुण अथवा पदार्थ होते हैं। सत्य की दूसरी व्युत्पत्ति इस प्रकार से भी है " सत्सु तिष्ठतीति सत्यं, सत्यं च तद्वचनं च सत्यवचनं " जो वचन सज्जन पुरुषों में रहता हैं वह सत्यवचन है। यह सत्यवचन पर के प्राणों के त्राण करने में परायण होता है, सब के हितकारी होता है, सुखदायक होता है, उद्वेगजनक नहीं होता है, और सुधा के जैसे स्वादीय–अत्यंत मधुर होता है। (सुद्धं) सत्यवचन में किसी भी प्रकार का दोष नहीं होता है–अतः निर्दोष होने से यह शुद्ध है (सुइयं) इसमें किसी भी प्रकार की अपवित्रता नहीं होती है अतः यह पवित्र होने से शुचिक है। (सिवं) इस वचन से जीवों को मोक्ष की प्राप्ति होती है–इसलिये मोक्षजनक होने से यह शिवरूप है। (सुजायं) हार्दिक शुभ भावना से प्रेरित होकर ही ऐसा वचन बोला जाता है

" सच्चं हि यं सयामिह, संतो मुणउ गुणा पयत्था वा "

સંતોનું હિત જેનાથી થાય છે તે સત્ય છે, મુનિ અથવા ગુણ અથવા પદાર્થ એ પ્રકારનાં સત્ય છે. સત્યની બીજી વ્યુત્પત્તિ આ પ્રમાણે પણ છે–" सत्सु तिष्ठतीति सत्यं, सत्यं च तद्वच च सत्यवचनं " સજ્જન પુરુષોમાં જે વચન રહે છે તે સત્યવચન છે. તે સત્યવચન અન્યનાં પ્રાણોનું રક્ષણ કરવાને સમર્થ હોય છે, બધાને માટે હિતકારી હોય છે, સુખદાયક હોય છે, ઉદ્વેગજનક હોતું નથી, અમૃત જેવું અતિશય મીઠું હોય છે. " सुद्धं " સત્યવચનમાં કોઇ પણ પ્રકારનો દોષ હોતો નથી, તેથી નિર્દોષ હોવાથી તે શુદ્ધ છે. " सुइयं " તેમાં કોઇપણ પ્રકારની અપવિત્રતા હોતી નથી તેથી તે પવિત્ર હોવાથી શુચિક છે. " सिवं " તે વચનથી જીવોને મોક્ષની પ્રાપ્તિ થાય છે, તેથી મોક્ષજનક હોવાથી તે શિવરૂપ છે. " सुजायं " હાર્દિક શુભ ભાવનાથી પ્રેરાઈને જ એવું વચન બોલાય છે. તેથી શુભ ભાવનામાંથી ઉદ્ભવેલ હોવાથી તે સુજાત છે.

प्रमोदजनकत्वात्, तथा ' सुकहियं ' सुकथितम्—वीतरागप्रतिपादितत्वात्, 'सुव्वयं' सुव्रतं—सर्वव्रतप्रधानत्वात्, तथा—' सुदिट्ठं ' सुदृष्टम्—अतीन्द्रियार्थदर्शिभिरपवर्गादिहेतुतया दृष्टत्वात्, ' सुपइट्ठियं ' सुप्रतिष्ठितम्—समस्तप्रमाणैरुपपादितत्वात्, 'सुपइट्ठियजसं' सुप्रतिष्ठितयशः—सुप्रतिष्ठितं यशो यस्य तत्, लोकत्रयप्रसिद्धत्वात्, तथा—' सुसंजमियवयणवुइय ' सुसंयमितवचनोदितं—सुसंयमितं=सम्यग्नियन्त्रितं यद्वचनं तेनोदितं=कथितम्, निर्दोषवचनैः कथितमित्यर्थः, तथा ' सुरवर नरवसभपवरबलवगसुविहिय जणबहुमय ' ' सुरवरनरवृषभप्रवरबलवत्सुविहितजनबहुमतम् —सुरवराणाम् —इन्द्रादीनां, नरवृषभाणां = चक्रवर्ती-

---

अतः शुभ विवक्षा से समुत्पन्न होने के कारण यह सुजात है। (सुभासियं) यह प्रमोद का जनक होता हैं इसलिये यह सुभाषित हैं (सुकहियं) इसका प्रतिपादन वीतराग आत्माओं ने किया है इसलिये यह सुकथित है (सुव्वयं) सर्वव्रतों में इसकी प्रधानता मानी गई है इसलिये यह सुव्रतरूप है। (सुदिट्ठं) अतीन्द्रिय अर्थों को जानने वाले सर्वज्ञ प्रभुओं ने इसे अपवर्ग (मोक्ष) आदि के हेतु रूप से देखा है इसलिये यह सुदृष्ट है। (सुपइट्ठियं) समस्त प्रमाणो द्वारा उपपादित होने से यह सुप्रतिष्ठित हैं। (सुपइट्ठियजसं) तीनों लोकों में इस वचन का यश सुप्रसिद्ध है इसलिये यह सुप्रतिष्ठिन यशवाला है। (सुसंजमियवयणवुइयं) इसे सत्यवचन को वे ही मनुष्य बोल सकते हैं कि जिनका वचन सुसंयमित होता है अच्छी तरह से नियंत्रित होता है। (सुरवरनरवसभपवरबलवगसुविहियजणबहुमयं) यह वचन इन्द्रादिक उत्तम देवों को,

---

" सुभासियं " ते प्रमोद उत्पन्न करनारु होवाथी सुभाषित छे. " सुकहियं " वीतराग आत्माओए तेनुं प्रतिपादन कर्युं छे, तेथी ते सुकथित छे. " सुव्वयं " सर्वे व्रतोमां ते मुख्य मनायुं छे तेथी ते सुव्रत छे. " सुदिट्ठं " अतीन्द्रिय अर्थोने जाणनारा सर्वज्ञ प्रभुओए ते अपवर्ग आदिना हेतुरूपथी जोयुं छे, तेथी ते सुदृष्ट छे. " सुपइट्ठियं " समस्त प्रमाणो द्वारा तेनुं प्रतिपादन थयेलु होवाथी ते प्रमाणभूत-सुप्रतिष्ठित छे. " सुपइट्ठियजसं " त्रणे लोकमां आ वचननो यश सुप्रसिद्ध छे तेथी ते सुप्रतिष्ठित यशवाळुं छे. " सुसंजमियवयणवुइयं " आ सत्य वचन ए ज माणसो बोली शके छे के जेमनां वचन सुसंयमित होय छे-सारी रीते नियंत्रित होय छे. " सुरवर नरवसभपवरबलवगसुविहियजणबहुमयं " आ वचन ईन्द्र आदि उत्तम देवोने

दीनां, प्रवरबलवताम्—वासुदेवप्रतिवासुदेवादि योद्धृपुरुषाणां, तथा—सुविहितजनानां=महापुरुषाणां च बहुमतं समतं यत्तत्, तथा—' परमसाहुधम्मचरणं ' परमसाधुधर्मचरणम्=परमसाधूनां = उत्कृष्टक्रियावतां मुनीनां धर्मचरणं=धर्मानुष्ठानं यत्तत्, तथा—'तवनियमपरिग्गहियं ' तपो नियमपरिगृहीतम्=तपो नियमाभ्यां परिगृहीतम्=अङ्गीकृतं यत्तत्तथा, तपोनियमौ हि सत्यवादिनामेव भवतो नेतरेषाम्, तथा—' सुगइपथदेसगं ' सुगतिपथदेशकं=सुगतेः पन्थाः सुगतिपथः, तस्य देशकम्, प्रज्ञापकम्, च=पुनः ' इणं ' इदं ' लोगुत्तमं ' लोकोत्तमं=लोकेषु=लोकत्रयेषु उत्तमं=श्रेष्ठम् ' वयं ' व्रतम् अस्ति । तथा—इदं सत्यवचनं ' विज्जाहरगगणगमणविज्जाण ' विद्याधरगगनगमनविद्यानां=विद्याधराणां या गगनगमनविद्यास्तासां ' साहगं ' साधकं—सत्यवादिनामेव विद्याः सिध्यन्तीत्याशयः, तथा—' सग्गमग्गसिद्धिपहदेसगं ' स्वर्गमार्गसिद्धिपथदेशकं=स्वर्गमार्गसिद्धिपथयोर्देशकं=निर्देशकं यत्तत्तथा, तथा—' अवितहं ' अवितथं=मिथ्याभावरहितं यत् ' तं ' तत्

चक्रवर्ती आदि श्रेष्ठ पुरुषों को, बलदेव, प्रतिवासुदेव आदि सुभट-योद्धाओं को और महापुरुषरूप सुविहितजनों को बहुमान्य हुआ है। (परसाहुधम्मचरणतवनियमपरिग्गहियसुगइपहदेसगं च इणं लोगुत्तमं च वयं) उत्कृष्ट क्रिया शाली मुनिजनों का यह धर्माचरण—धर्मानुष्ठान है। तथा—तप और नियमों से ये परिगृहीत होना है—अर्थात्—तप और नियम सत्यवादी के ही होते है। इतर जीवों के नहीं। सुगति के पथ का यह प्रज्ञापक—निर्देशक होता है। और तीनों लोकों में यह सत्यवचन श्रेष्ठ व्रत हैं। तथा—यह सत्यवचन (विज्जाहरगगण—गमणविज्जाणसाहगं) विद्याधरों की गगन में गमन करने वाली जो विद्याएँ हैं उनका साधक है। (सग्गमग्गसिद्धिपहदेसगं) स्वर्ग के मार्ग का और सिद्धि के पथ का प्रदर्शक है। (अवितहं) अवितथ—मिथ्याभाव

ચક્રવર્તી આદિ શ્રેષ્ઠ પુરુષોને, વાસુદેવ, પ્રતિવાસુદેવ આદિ સુભટોને અને મહાપુરુષ સુવિહિત જનોને બહુ જ માન્ય છે. "परसाहुधम्मचरणतवनियमपरिग्गहियसुगइपहदेसगं च इणं लोगुत्तमं च वयं" શ્રેષ્ઠ ક્રિયાશાળી મુનિજનોનું તે ધર્માચરણ—ધર્માનુષ્ઠાન છે તથા તપ અને નિયમોથી તેઓ પરિગૃહીત થાય છે—એટલે કે તપ અને નિયમ સત્યવાદીઓ માટે જ શક્ય હોય છે અન્યને માટે નહીં સુગતિના માર્ગનું તે પ્રજ્ઞાપક—નિર્દેશક હોય છે, અને ત્રણે લોકમાં આ સત્ય વચન શ્રેષ્ઠ વ્રત છે તથા આ સત્યવચન "विज्जाहारगगणगमण विज्जाण साहगं" વિદ્યાધરોની આકાશમા ગમન કરવાની જે વિદ્યાઓ છે, તેમનું સાધક છે. "सग्गमग्गसिद्धिपहदेसगं" સ્વર્ગના માર્ગનું પ્રદર્શક છે.

'सच्चं' सत्यम्=सत्यवचननामकं द्वितीयं संवरद्वारम्। पुनः कीदृशम्? इत्याह—'उज्जुयं' ऋजुकम्—सरलभावप्रवर्तकत्वात्, तथा 'अकुडिलं' अकुटिल=कुटिलभाववर्जितत्वात्, तथा—'भूयत्थं' भूतार्थम्=वास्तविकम्, तथा 'अत्थओ' अर्थतः—परमार्थतः विशुद्धम्, तथा—जीवलोके 'सव्वभावाणं' सर्वभावानां—जीवादिसकलपदार्थानाम् 'उज्जोयगं' उद्योतकं=प्रकाशकम्, अतएव 'पभासगं' प्रभापकं=प्रतिपादकं भवति, पुनः 'अविसंवाइ' अविसंवादि=अविरुद्धवादि, तथा 'जहत्थमहुरं' यथार्थमधुरम्, यथार्थमिति कृत्वा मधुरं यथार्थमधुरं वास्तविकमधुरमित्यर्थः, तथा—'पच्चक्खं देवयं च' प्रत्यक्षं दैवतं च, सत्यं प्रत्यक्षो देव इत्यर्थः। एतादृशं 'जं' यत् सत्यम्, 'तं' तत् 'अच्छेरकारगं' आश्चर्यकारकं भवति,

---

से रहित है। (तं सच्चं) ऐसा सत्यवचन नामका द्वितीय संवरद्वार (उज्जुयं) सरल भाव का प्रवर्त्तक होने से ऋजुक हैं। तथा (अकुडिलं) इसमें भावों की कुटिलता नहीं होती है इसलिये कुटिल भावों से वर्जित होने के कारण यह अकुटिल है (भूयत्थं) यथार्थ अर्थ का इसके द्वारा प्रतिपादन होता है इसलिये यह भूतार्थ है। (अत्थओ विसुद्धं) परमार्थ दृष्टि से यह विशुद्ध है इसलिये यह अर्थतो विशुद्ध है। तथा—(सव्वभावाणं उज्जोयगं) जीवलोकमें यह समस्त जीवादिपदार्थों का प्रकाशक है इसलिये यह (पभासगं भवइ) उनका प्रतिपादक (प्रभावक) भी है। यह सत्यवचन (अविसंवाइ) अविरुद्ध रूपसे अपने स्वरूपको कहने वाला है इसलिये (जहत्थमहुरं) वास्तवीकरूप में मधुर है। और (पच्चक्खं देवयं च) प्रत्यक्षदेव है—साक्षात् देव जैसा है (जं तं) जो यह सत्यवचन

"अवितहं" અવિતથ—મિથ્યાભાવથી રહિત છે. "तं सच्चं" આવું સત્ય નામનું બીજું સંવરદ્વાર "उज्जुयं" સરલ ભાવનું પ્રવર્તક હોવાથી ઋજુક છે. તથા "अकुडिलं" તેમાં ભાવોની કુટિલતા હોતી નથી તેથી કુટિલ ભાવોથી રહિત હોવાને કારણે તે અકુટિલ છે. "भूयत्थं" યથાર્થ અર્થનું તેના દ્વારા પ્રતિપાદન થાય છે તેથી તે ભૂતાર્થ છે. "अत्थओ विसुद्धं" પરમાર્થ દૃષ્ટિથી તે વિશુદ્ધ છે તેથી તે "अर्थतोविशुद्ध" છે. તથા "सव्वभावाणं उज्जोयगं" જીવલોકમાં તે સમસ્ત જીવાદિ પદાર્થોનું તે પ્રકાશક છે તેથી તે "पभासगं भवइ" તેમનું પ્રતિપાદક પણ છે. આ સત્યવચન "अविसंवाइ" અવિરુદ્ધરૂપે પોતાના સ્વરૂપને કહેનારૂં છે. તેથી "जहत्थमहुरं" વાસ્તવિક રીતે મધુર છે, અને "पच्चक्खदेवयं च" પ્રત્યક્ષ દેવ છે—સાક્ષાત્ દેવ જેવું છે "जं तं" આ જે સત્યવચન છે તે "अच्छेरकारगं अवत्थं-

'माणुस्साणं' मनुष्याणां कुत्र ? 'बहुएसु' बहुकेषु-अनेकेषु 'अवत्थंतरेसु' अवस्थान्तरेषु = अवस्थाविशेषेषु । तदेवाश्चर्यकारित्वमाह—'सच्चेणं' सत्येन 'महासमुद्दमज्झे वि' महासमुद्रमध्येऽपि 'चिट्ठंति' तिष्ठन्ति, न निम—ज्जन्ति=न ब्रुडन्ति, 'मूढाणिया वि' मूढानीका अपि=मूढाः=नियतदिग्गमनं प्रति मूढतां प्राप्ता-अनीकाः=नाविकाः येषां ते तथोक्ताः अपि 'पोया' पोता= नावः 'सच्चेण य' सत्येन च 'उदगसंभमम्मि' वि' उदकसंभ्रमेऽपि=आ-वर्तेऽपि 'न बुड्डंति' न ब्रुडन्ति, तथा-तत्रस्था जना अपि 'नय मरंति' न च म्रियन्ते, 'थाहं' स्ताघं=तलं च ते 'लम्भंति' लभन्ते । तथा—'सच्चेण य सत्येन च 'अगणिसंभमम्मि वि अग्निसंभ्रमेऽपि=ज्वालामालासंकुलेऽप्यनले 'उ-ज्जुगा' ऋजुकाः=सत्यवादिनो 'मणुस्सा' मनुष्या 'न डज्झंति' न दह्यन्ते= न दग्धा भवन्ति । तथा-'मणुस्सा' सत्यवादिनो मनुष्याः 'सच्चेण य'

है वह (अच्छेरकारगं अवत्थंतरेसु बहुएसु माणुसाणं) अनेक अवस्थाओं में मनुष्यों के लिये आश्चर्य पैदा करने वाला है, जैसे-(सच्चेणं महा-समुद्दमज्झे वि चिट्ठंति न निमज्जंति मूढा णियाविपोया) जिननौकाओं के नाविक जन जब नियत दिशाओं में जाने के ज्ञान से विकल हो जाते हैं तब उनकी वे नौकाएँ महासमुद्र के बीच में भी इस सत्य के बल पर ही तैर जाती हैं डूबती नहीं है। (सच्चेण य उदगसंभमंमि वि न बुडंति न य मरंति, थाहं च ते लम्भंति) सत्य के प्रभाव से, जल की भमर में फँसे हुए भी मनुष्य न डूबते हैं और न मरते हैं प्रत्युत उन्हें वहां भी थाह मिल जाती है। (सच्चेण य अगणि संभमंमि वि न डज्झंति उज्जुगा मणुस्सा) सत्य का ही ऐसा प्रभाव है कि जिससे ज्वालाओं से धधकती हुई अग्नि में भी ऋजुक सत्यवादी-मनुष्य जलता

तरेसु बहुएसु माणुसाणं" અનેક અવસ્થામા મનુષ્યોને માટે આશ્ચર્ય પેદા કરનાર છે, જેમકે "सच्चेण महासमुद्दमज्झे वि चिट्ठंति न निमज्जंति मूढा णियावि पोया" જે નૌકાઓના નાવિકો જ્યારે નિયત દિશામાં જવાના જ્ઞાનથી રહિત થાય છે ત્યારે તેમની તે નૌકાઓ મહાસમુદ્રની વચ્ચે પણ આ સત્યના પ્રભાવથી ડૂબતી જ અટકે છે "सच्चेण य उदगसंभमंमि वि न बुडंति न य मरंति, थाहं च ते लम्भंति" સત્યના પ્રભાવથી પાણીના વમળમા ફસાયેલ મનુષ્ય પણ ડૂબતાં નથી કે મરતાં નથી. એટલે કે ત્યાં પણ તેને રક્ષણ મળી જાય છે "सच्चेण य अगणिसंभमंमि वि न डज्झंति उज्जुगा मणुस्सा" સત્યનો જ એવો પ્રભાવ છે કે જ્વાળાઓ વડે પ્રજ્વલિત અગ્નિમાં ઋજુક-સત્યવાદી

सत्येन च 'तत्ततेल्लतउलोहसीसगाइं' तप्ततैलत्रपुलौहशीशकानि, तैलं प्रसिद्धम् त्रपु=रङ्गम्, लौहम्=अयं, शीशकं प्रसिद्धम्, तप्तानि=उत्कलितानि यानि तैल-त्रपुलौहशीशकानि तानि तथोक्तानि 'छिवंति' स्पृशन्ति, 'धरेंति' धारयन्ति हस्ते किन्तु तेन 'न डज्झंति' न दह्यन्ते। तथा- 'सच्चेण परिग्गहिया' सत्येन परि-गृहिता मनुष्याः, 'पव्वयकडगाहिं' पर्वतकटकेभ्यः=पर्वतप्रदेशेभ्यः 'मुच्चंते' मुच्यन्ते=पात्यन्ते, तथापि 'न य मरंति' न च म्रियन्ते। तथा-'सच्चवाई' सत्यवादिनः 'असिपंजरगया वि' असिपञ्जरगता अपि=चतुर्दिक्षु खड्गहस्तशत्रु-पुरुषपरिवेष्टिता अपि सर्वतः खड्गेषु पतत्स्वपीत्यर्थः; 'अणहाय य' अनघा एव= अक्षतशरीराएव 'समराओ' समरात्, 'णियंति' निर्यान्ति=निर्गच्छन्ति। तथा 'सच्चवाई' सत्यवादिनः पुरुषाः 'वहबंधाभिओगवेरघोरेहिं' वधबन्धाभियोग

नहीं है। (सच्चेण य मणुस्सा तत्ततेल्लतउलोहसीसगाइं) सत्य से मनुष्य तप्त उबलते हुए तेल को, पिघले हुए रांगे को, लाल हुए लोहे को, गले हुए शीशे को (छिवंति) छू लेते हैं, अर्थात्-शीतल करता है (धरेंति) उन्हें हाथमें ले लेता हैं, परन्तु (न डज्झंति) वे उनसे जलते नहीं हैं। (पव्वयकड-गाहिं मुच्चंते न य मरंति सच्चेणं परिग्गहिया) सत्यवादी मनुष्य को यदि पर्वत के ऊपर से भी नीचे धकेल दिया जावे तो भी वह सत्य के प्रभाव से मरता नहीं है-सर्वथा बच जाता है। इसी तरह जो (सच्चवाई) सत्यवादी मनुष्य होते हैं वे (असिपंजरगया) चारों ओर से युद्ध में तलवारों को लिये हुए अपने शत्रुओं द्वारा घेर भी लिये जावें तो भी वे (अणहाय) अक्षत शरीर ही (णिइंति) चाहें कितनी ही तलवारों के वार उन पर पड़ रहे हों, और वे उस युद्धभूमि में सुर-क्षित निकल आते हैं। और (वहबंधाभिओगवेरघोरेहिं पमुच्चंति य)

માણુસ બળતા નથી "सच्चेण य मणुस्सा तत्ततेलतउलोहसीसगाइं" સત્યથી માણુસ ઉકળતા તેલને, લાલચોળ લોઢાને અને ઓગાળેલ સીસાનો પણ સ્પર્શ કરી શકે છે. "धरेंति" તેમને હાથમાં લઈ લે છે પણ "न डज्झति" તેઓ તેનાથી દાઝતા નથી "पव्वयकडगाहिं मुच्चंते न य मरंति सच्चेण परिग्गहिया" સત્યવાદી મનુષ્યને જો પર્વતના ઉપરથી નીચે ધકેલી દેવામાં આવે તો પણ સત્યના પ્રભાવથી મરતો નથી-તેનો વાળ પણ વાંકો થઈ શકતો નથી. આ રીતે જે "सच्चवाई" સત્યવાદી મનુષ્યો હોય છે "असिपंजरगया" યુદ્ધમાં ચોમેરથી હાથમા તલવાર ધારણ કરેલ શત્રુઓ વડે ઘેરાઇ જાય તો પણ 'अणहाय" અક્ષત શરીરે જ "णिइति" ગમે તેટલી તલવારોના ઘા તેના પર પડવા છતા પણ તે રણમેદાનમાંથી સુરક્ષિત બહાર આવે છે. આને તે

वैरघोरैः- वधो=घातः वन्धः=निगड़ादि वन्धः, 'अभिओगो' अभियोगः-अपराधारोपः, वैरघोरः=घोरशत्रुता; एतेषामितरेतरयोगद्वन्द्वः, एभ्यः 'पमुच्चंति' प्रमुच्यन्ते, च= पुनः 'अमित्तमज्झाहिं' अमित्रमध्यात्=शत्रुमध्यात्='अणहा य' अनघाश्च=अक्षतशरीराश्च, 'निइति' निर्यान्ति=निर्गच्छन्ति। उक्तमपि—

"सत्येनाग्निर्भवेच्छीतोऽगाधाम्बुधिरपि स्थलम्।
नासिश्छिनत्ति सत्येन सत्यान्न दशते फणी ॥ इति।

तथा 'देवयाओय' देवताश्च 'सच्चवयणे रयाणं' सत्यलचने रतानां=: सत्यवादिनां मणुष्याणां 'सादेव्वाणि' सादिव्यानि=सांनिध्यानि 'करेंति' कुर्वन्ति।

वध-घात, बंध निगड़ (वेडी)आदि बंधन अभियोग अपराधारोप, एवं घोर शत्रुता. इनसे भी बच जाते हैं। (अमित्तमज्झाहिणिइंति अणहा य सच्चवाई) यदि कदाचित् ये शत्रुओं के बीच में आ भी जावें तो भी शत्रु उनका कुछ भी बिगाड नहीं कर पाते हैं-उनके बीच से वे अन-अक्षत शरीर ही निकल आते हैं। कहा भी है—

"सत्येनाग्निर्भवेच्छीतोऽगाधाम्बुधिरपि स्थलम्।
नासिश्छिनत्ति सत्येन, सत्यान्न दशते फणी॥"

सत्यवादी पुरुषों के समक्ष अग्नि शीतल हो जाती है, अगाध-समुद्र भी स्थल जैसा हो जाना है, तलवार की धार भोंथरी हो जाती है और फणी-सर्प उसे डस नहीं पाता है।

अधिक क्या कहा जाय (सच्चवयणे रयाणं) जो सत्यवचन में रत होते हैं उन सत्यवादी मनुष्यों का (देवयाओ य) देवता (सादि-

---

"वह बंधाभिओगवेरघोरेहिं पमुंचंति य" વધ-ઘાત, બંધ-નિગડ આદિ બંધન, અભિયોગ-અપરાધારોપ, અને ઘોર શત્રુતા એ બધાથી પણ બચી જાય છે "अमित्तमज्झाहिंणिइ ति अणहाय सचवाई" જો કદાચ તે શત્રુઓની વચ્ચે આવી જાય તો પણ શત્રુ તેને કાંઇ ઇજા કરી શકતા નથી-તેમની વચ્ચેથી તે અક્ષત શરીરે જ બહાર નીકળી જાય છે કહ્યુ પણ છે—

"सत्येनाग्निर्भवेच्छीतोऽगाधाम्बुधिरपि स्थलम्।
नासिच्छिनत्ति सत्येन सत्यान्न दशते फणी॥"

સત્યવાદી પુરુષો પાસે અગ્નિ શીતળ થઈ જાય છે, અગાધ સમુદ્ર પણ સ્થળ સમાન થઈ જાય છે, તલવારની ધાર બૂઠી થઈ જાય છે અને સર્પ તેને ડંસ દઇ શકતો નથી

વધુ શુ કહું "सचवयणे रयाणं" સત્ય વચનમાં જે લીન રહે છે તે સત્યવાદી મનુષ્યોનું "देवयाओय" દેવતા "सादिव्वाणि करेंति" સાનિધ્ય

सत्यवादिनां वचनमनन्यथाकर्तुं देवास्तत्सान्निधौ तिष्ठन्तीति भाव । उक्तमपि—

प्रियं सत्यं वाक्यं हरति हृदयं कस्य न जने ।
गिरं सत्यां लोकः प्रतिपदमिमामर्थयति च ॥
सुरा सत्याद् वाक्याद् ददति मुदिताः कामितफलम् ।
अतः सत्याद् वाक्याद् व्रतमभिमत्तं नास्ति भुवने ॥ १ ॥" इति ॥ सू० १ ॥

व्वाणि करेंति) सान्निध्य करते है, अर्थात् सत्यवादी के वचनों को अनन्यथा-सत्य करने के लिये देव उनके निकट रहते हैं। कहा भी है—

"प्रियं सत्यं वाक्यं हरति हृदयं कस्य न जने,
गिरं सत्यां लोकः प्रतिपदमिमामर्थयति च ।
सुराःसत्याद् वाक्याद् ददति मुदिताःकामितफलम्,
अतःसत्याद् वाक्याद् व्रतमभिमतं नास्ति भुवने ॥ १ ॥

प्रिय सत्य वचन किस सहृदय व्यक्ति के हृदय को हरण नहीं कर लेता है। अर्थात् सबके हृदय को हरण कर लेता है। लोक हर एक समय हर एक बात में इस सत्य वचन के ही अभिलाषी होते हैं। सत्यवचन से देवता भी प्रसन्न रहते हैं, और वे सत्यवादी के इच्छित मनोरथ की पूर्ति करते रहते हैं। इसलिये सत्यवचन के समान अभिमतव्रत लोक में और कोई नहीं है।

भावार्थ—सूत्रकार ने इस द्वितीय संवर द्वार में सत्यवचन रूप महाव्रत के स्वरूप का कथन किया है। क्यों कि प्रथम संवरद्वार के साथ

સેવે છે, એટલે કે સત્યવાદીનાં વચનોને અનન્યથા-સાચા પાડવાને માટે દેવો તેમની પાસે રહે છે. કહ્યુ પણ છે—

" प्रियं सत्यं वाक्यं हरति हृदयं कस्य न जने,
गिरं सत्यांलोकः प्रतिपदमिमामर्थयति च ।
सुराः सत्याद् वाक्याद् ददति मुदिताः कामितफलम्,
अतः सत्याद् वाक्याद् व्रतमभिमतं नास्ति भुवने ॥ १ ॥"

પ્રિય સત્યવચન કઇ સહૃદયી વ્યક્તિનું મન હરતું નથી! એટલે કે સૌનાં મનને હરી લે છે. લોકો દરેક વખતે દરેક વાતમાં આ સત્ય વચનના જ અભિલાષી હોય છે. સત્ય વચનથી દેવતા પણ પ્રસન્ન રહે છે અને તેઓ સત્યવાદીના ઇચ્છિત મનોરથો પૂરા કરે છે. તે કારણે સત્ય વચન જેવું શ્રેષ્ઠ વચન જગતમાં બીજું કોઈ પણ નથી

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ બીજા સંવરદ્વારમાં સત્ય વચન નામના મહાવ્રતના સ્વરૂપનું વર્ણન કર્યું છે. કારણ કે પ્રથમ સંવરદ્વાર સાથે તેનો ગાઢ

इसका धनिष्ट संबंध है और वह इस प्रकार से है कि जब तक जीव अलीक (असत्य) वचनों से निवृत्त नहीं होता तबतक वह प्राणातिपात विरमण रूप प्रथमसंवरद्वार का आराधक नहीं बन सकता है। यह सत्यवचन शुद्ध, शुचिक, शिव, सुजात आदि अनेक विशेषणों से संपन्न होता है। सत्यवादी की सर्वत्र प्रतिष्ठा होती है। इन्द्रादिक देवों को, तथा चक्रवर्ती आदि श्रेष्ठ पुरुषों को सत्यवचन बहुमान्य होते हैं। समस्त विद्याओं की सिद्धि इन्हीं सत्यवचनों से होती है। स्वर्ग, मोक्ष की सिद्धि के यह पथ प्रदर्शक होता हैं। सत्य होकर भी जो अप्रिय होते हैं वे वचन सत्यवादि को बोलने योग्य नहीं होते हैं। किन्तु प्रिय सत्यवचन ही सत्यवादी बोला करते हैं। सत्यवादियों के समक्ष संसार की समस्त शक्तियां नतमस्तक हो जाया करती हैं अर्थात्–शिर झुकाता है। मनसा वाचा कर्मणा जो इस सत्य की आराधना में लीन होते हैं वे इस भव में तो सुखी होते ही हैं परन्तु परभव में भी उन्हें सुखों की प्राप्ति होती हैं। तप नियम से सब सत्यवचन से ही शोभित और फलप्रद होते हैं। परिणामों में जिनके जितनी अधिक सरलता होगी उनके वचनों में उतनी अधिक सत्यता होगी। सत्यवादियों के देवता तक सेवक होते हैं। सत्य में सावद्यभाषण का सर्वथा परित्याग हो जाता है। इन वचनों

સંબંધ છે. તે આ પ્રકારે છે જ્યાં સુધી જીવ અસત્ય વચનોથી મુક્ત થતો નથી ત્યાં સુધી તે પ્રાણાતિપાત વિરમણરૂપ પ્રથમ સંવરદ્વારનો આરાધક બની શકતો નથી. આ સત્ય વચન શુદ્ધ, શુચિક, શિવ, સુજાત આદિ અનેક વિશેષણોથી યુક્ત હોય છે સત્યવાદીની હંમેશ પ્રતિષ્ઠા થાય છે. ઈન્દ્રાદિક દેવોને તથા ચક્રવર્તી આદિ શ્રેષ્ઠ પુરુષોને સત્યવચન બહુ માનને યોગ્ય લાગે છે. એ સત્ય વચનથી જ સઘળી વિદ્યાઓ સિદ્ધ થાય છે. સ્વર્ગ, મોક્ષની પ્રાપ્તિમાં તે માર્ગદર્શક હોય છે. સત્ય હોવા છતા પણ અપ્રિય લાગે તેવાં વચનો સત્યવાદીઓએ બોલવાં જોઈએ નહી, પણ સત્યવાદી પ્રિય સત્ય વચન જ બોલે છે. સત્યવાદીઓ આગળ સંસારની સમસ્ત શક્તિઓ માથું નમાવે છે. મન, વચન અને કાયાથી જે આ સત્યની આરાધનામાં લીન રહે છે તેઓ આ ભવમાં તો સુખી થાય છે પણ પરભવમા પણ તેમને સુખની પ્રાપ્તિ થાય છે. તપ નિયમ એ સૌ સત્ય વચનથી જ શોભે છે અને ફળદાયી નિવડે છે. પરિણામોમાં જેમની જેટલી વધારે સરળતા હશે તેટલી તેમના વચનોમા વધારે સત્યતા હશે. દેવતા પણ સત્યવાદીઓની સેવા કરે છે. સત્યમાં સાવદ્ય ભાષણનો સર્વથા પરિત્યાગ થઈ જાય છે. આ વચનોથી જીવને સૌથી મોટો આધ્યાત્મિક

मूलम्—तं सच्चं भगवं तित्थयरसुभासियं दसविहं चोद्दसपुव्वीहिं पाहुडत्थविइयं, महरिसीण य समयप्पइन्नं, देविंदनरिंदभासियत्थं वेमाणियसाहियं, महत्थं, मंतोसहि विज्जासाहणत्थं, चारणगणसमणसिद्धविज्जं, मणुयगणाणं वंदणिज्जं, अमरगणाणं अच्चणिज्जं, असुरगणाणं पूयणिज्जं, अणेगपासंडिपरिग्गहियं, जं तं लोगम्मि सारभूयं, गंभीरयरं महासमुद्दाओ, थिरयरगं मेरुपव्वयाओ, सोमयरगं चंदमंडलाओ, दित्तयरं सूरमंडलाओ, विमलयरं सरयनहयलाओ, सुरभियरं गंधमायणाओ, जे वि य लोगम्मि अपरिसेसा मंतजोगा जवा य विज्जा य जंभगा य अत्थाणि य सत्थाणि य सिक्खाओ आगमा य सव्वाइं वि ताइं सच्चे पइट्ठियाइं ॥२॥

टीका—'तं' इत्यादि—

'तं' तत्=पूर्वोक्त महामहिमान्वितं 'भगवं' भगवत्=पूज्यं 'सच्चं' सत्यं-सत्यनामकं द्वितीयं महाव्रतं 'तित्थयरसुभासियं' तीर्थकरसुभाषितं 'दसविहं'

से जीव को सब से बड़ा आध्यात्मिक दृष्टि से यह लाभ होता है कि उसके नवीन कर्मों का आगमन रुक जाता है और संचित कर्मों की निर्जरा होने लगती है। इसीलिये वीतरागप्रभु ने इन्हें उपादेय कहा है और महाव्रत की कोटि में रखा है ॥ सू० १ ॥

'तं सच्चं भगवं' इत्यादि०।

टीकार्थ—(तं सच्चं तित्थयरसुभासियं) पूर्वोक्त महिमा से समन्वित वह सत्य नामका द्वितीय महाव्रत तीर्थंकर प्रभु के द्वारा कहा गया

દૃષ્ટિએ લાભ એ થાય છે કે તેનું નવા કર્મનું આગમન અટકી જાય છે, અને સંચિત કર્મોની નિર્જરા થવા માંડે છે. તે કારણે વીતરાગ પ્રભુએ તેમને ઉપાદેય તરીકે બતાવ્યાં છે અને મહાવ્રતની કોટિમાં મૂક્યાં છે ॥ સૂ૦ ૧ ॥

"तं सच्चं भगवं" ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ—"तं सच्चं भगवं तित्थयरसुभासियं" પૂર્વોક્ત મહિમાથી યુક્ત તે સત્ય નામનું બીજું મહાવ્રત તીર્થંકર પ્રભુદ્વારા જ કહેવાયેલ છે. તે "दसविहं" દશ

दशविधं स्थानाङ्गस्य दशमस्थाने प्रोक्तम्। तथाहि—

"जणवय १ सम्मय २ ठवणा ३, नाम ४ रूवे ५ पडुच्च सच्चे ६ य।
ववहार ७ भाव ८ जोगे ९ दसमे ओवम्मसच्चे य १० ॥

छाया—जनपद १ संमत २ स्थापना ३ नाम ४ रूपं ५ प्रतीत्यसत्यं ६ च।
व्यवहार ७ भाव ८ योगः ९ दशममौपम्यसत्यं च १० ॥ इति।

तत्र–जनपदसत्यम्–यथा वङ्गदेशे गौरिति 'गाभी' शब्देन व्यपदिश्यते ॥ १ ॥ संमतसत्यम्–संमतं च तत्सत्यं च–संमतसत्यम् = लोकसंमत्या प्रसिद्धं, तथाहि–कुमुदकुवलयोत्पलतामरसानां समानेऽपि पङ्कसंभवे सर्वसम्मतमरविन्दमेव पङ्कजम् ॥ २ ॥ स्थापनासत्यम्–यथा–एक संख्यायाः पुरतो विन्दुद्वयस्थापनेन

है। यह (दसविहं) दश प्रकार होता है, इसके ये दश प्रकार स्थानांग के दशम स्थान में इस प्रकार कहे हैं—

जनपदसत्य १, संमतसत्य २, स्थापनासत्य ३, नामसत्य ४, रूपसत्य ५, प्रतीत्यसत्य ६, व्यवहारसत्य ७, भावसत्य ८, योगसत्य ९, और उपमासत्य १० ॥

तत्तद्देशवासी मनुष्यों के व्यवहार में जो शब्द रूढ हो रहा है वह जनपदसत्य है जैसे बंगाल में गाय को "गाभी" कहते हैं। अतः "गाभी" यह शब्द जनपदसत्य है १। बहुत मनुष्यों की संमति से जो शब्द साधारण में रूढ़ हो उसे सम्मतिसत्य कहते हैं, जैसे कुमुद, कुवलय, उत्पल तथा तामरस इनमें पंक संभावता की समानता होने पर भी सर्वसम्मति से अरविन्द को ही पंकज मानना, अर्थात् कुवलय, उत्पल आदि सब ही पंकज हैं फिर भी पंकज शब्द अरविन्द में ही रूढ़ हुआ है। इसलिये अरविन्द को ही पकज मानना यह सम्मत-

---

પ્રકારનું છે તેના તે દશ પ્રકાર સ્થાનાગનાં દશમાં સ્થાનમાં આ પ્રમાણે કહેલ છે.

(૧) જનપદ સત્ય (૨) સંમત સત્ય (૩) સ્થાપના સત્ય (૪) નામસત્ય (૫) રૂપસત્ય (૬) પ્રતીત્ય સત્ય (૭) વ્યવહાર સત્ય (૮) ભાવસત્ય (૯) યોગ સત્ય અને (૧૦) ઉપમાસત્ય.

(૧) દેશવાસી મનુષ્યોના વ્યવહારમાં જે શબ્દ રૂઢ થઇ ગયો હોય તે દેશવાસી માટે જનપદ સત્ય છે જેમકે ગાયને બગાળામા "ગાભી" કહે છે તેથી "गाभी" શબ્દ જનપદ સત્ય છે. (૨) વધારે માણસોની સંમતિથી જે શબ્દ સાધારણ રીતે રૂઢ થાય તે સંમતિ સત્ય કહેવાય છે. જેમકે કુમુદ કુવલય, ઉત્પલ, તથા તામરસ તેઓમા પક સભવતાની સમાનતા હોવા છતાં પણ અરવિંદને જ પંકજ માનવુ, એટલે કે કુવલય, ઉત્પલ, આદિ બધાં પંકજ છે છતા પણ પંકજ શબ્દ અરવિંદમા જ રૂઢ થયો છે. તે કારણે અરવિંદને જ

शतम् , बिन्दुत्रयस्थापनेन सहस्रं भवति ॥ ३ ॥ इति स्थापनासत्यम्॥ नामसत्यम् यथा–कुलमवर्द्धयन्नपि कुलवर्द्धन इत्यादि ॥ ४ ॥ रूपसत्यम्–यथा–साधुरूप-धारणेन साधुरिति ॥ ५ ॥ प्रतीत्यसत्यम्–यथा मध्यमां प्रतीत्य=आश्रित्य अना–मिका ह्रस्वा, कनिष्ठिकामाश्रित्य तु दीर्घा। इति प्रतीत्यसत्यम् ॥ ६ ॥ व्यवहार-

---

सत्यहैं २। भिन्न वस्तुमें भिन्न वस्तुके आरोप करनेवाले वचनको स्थापना सत्य कहते हैं, जैसे एक के आगे दो बिन्दुओं की स्थापना करके उसे १०० कहना, तथा बिन्दुत्रय की स्थापना करके उसे एक हजार कहना३। दूसरी कोई अपेक्षा न रखकर केवल व्यवहार के लिये किसी का संज्ञाकर्म करना इसका नाम नामसत्यहै–जैसे किसी लडके को कुलवर्धन रखलेना। कुल वर्धन का तात्पर्यहोता है–कुल को बढाने वाला, परन्तु व्यवहार चलाने कें लिये जो संज्ञाकर्म किया जाता है–नाम रखा जाता है–उसमें इसकी अपेक्षा सापेक्ष नहीं हुआ करती है, इसी का नाम नामसत्य है ४। पुद्गल के रूपादिक अनेक गुणों में से रूप की प्रधानता को लेकर जो वचन कहा जाता है उसे रूप सत्य कहते हैं–जैसे केशोंको काला कहना, अथवा रूप स्वरूप धारण की मुख्यता को लेकर जो वचन कहा जाता है वह भी रूपसत्य है– जैसे–साधु के स्वरूप को धारण करने वाले व्यक्ति को साधु कहना ५। किसी विवक्षित पदार्थ की अपेक्षा से दूसरे पदार्थ के स्वरूप का कथन करना इसे प्रतीत्यसत्य या आपेक्षिकसत्य

પંકજ માનવુ તે સંમત સત્ય છે. (૩) ભિન્ન વસ્તુમા ભિન્ન વસ્તુનો આરોપ કરનાર વચનને સ્થાપના સત્ય કહે છે જેમકે એકની સામે બે બિન્દુઓની સ્થાપના કરીને તેને સો (૧૦૦) કહેવા તથા ત્રણ બિન્દુઓની સ્થાપના કરીને હજાર (૧૦૦૦) કહેવાં. (૪) બીજી કોઇ પણ અપેક્ષા રાખ્યા વિના ફક્ત વ્યવહારને માટે જ કોઇને કોઇ સંજ્ઞા આપવી તેને નામ સત્ય કહે છે. જેમકે કુળને વધારે નહીં છતાં પણ કોઇનું નામ કુળવર્ધન રાખવુ. કુળવર્ધનનો અર્થ થાય છે કુળને વધારનાર, પણ વ્યવહાર ચલાવવાને માટે જે નામ રાખવામા આવે છે તેમાં કોઇ અપેક્ષા સાપેક્ષ થતી નથી, તેનુંજ નામ નામસત્ય છે (૫) પુદ્ગલનાં રૂપાદિક અનેક ગુણોમાંથી રૂપની પ્રધાનતાને લીધે જે વચન કહેવાય તેને રૂપસત્ય કહે છે, જેમકે વાળને કાળા કહેવાં, અથવા રૂપ–સ્વરૂપ ધારણની મુખ્યતાને લઈ ને જે વચન કહેવામાં આવે છે તે પણ રૂપસત્ય છે. જેમ કે સાધુનાં સ્વરૂપને ધારણ કરનાર વ્યક્તિને સાધુ કહેવાં તે રૂપસત્ય છે. (૬) કોઈ વિવક્ષિત પદાર્થની અપેક્ષાએ બીજા પદાર્થના સ્વરૂપનું કથન કરવું તેને પ્રતીત્ય સત્ય અથવા આપેક્ષિક સત્ય કહે છે. જેમ કે વચલી આગળીના કરતાં

सत्यम् – यथा गिरिगततृणादेर्दहनेऽपि घटगत – जलस्य गलनेऽपि गिरिर्दह्यते घटो गलतीति व्यवहारो भवति ॥ ७ ॥ भावसत्यम्–यस्मिन् वस्तुनि यस्य धर्मस्याधिक्यम्, तदपेक्षया सत्यम्=भावसत्यम्, यथा व्यवहार–पञ्चवर्णसंभवेऽपि बकः शुक्लः शुको हरित इत्यादि॥८॥ योगसत्यम्=योगेन=वस्तुसंयोगेन सत्यं–योगसत्यम् यथा–छत्रयोगाच्छत्री दण्डयोगाद् दण्डीति ॥ ९ ॥ औपम्यसत्यम्=उपमासत्यम्–यथा–चन्द्रवन्मुखम्, समुद्रवत्तडाग इत्यादि ॥ १० ॥ इति । तथा 'चोद-

---

कहते हैं जैसे मध्यमा की अपेक्षा अनामिका अङ्गुली को ह्रस्वकहना और कनिष्ठिका अंगुली की अपेक्षा दीर्घ कहना ६ । नैगम आदि नयों की प्रधानता से जो वचन बोला जाता है उसे व्यवहार सत्य कहते हैं, जैसे पर्वत के ऊपर की घास आदि के जलने पर ऐसा कहना कि पर्वत जल रहा है, घटसे जल के निकलने पर ऐसा कहना कि घड़ा गल रहा है, यह सब व्यवहार सत्य है, क्यों कि व्यवहार में ऐसे वचनों को सत्य माना गया, है ७। जिस वस्तु में जिस धर्म की अधिकता हो उसको लेकर जो वचन कहा जाय वह भावसत्य है, जैसे पांचों वर्णो की संभवता होने पर भी बगले को शुक्ल कहना, तोते को हरा कहना। वस्तु के संयोग से जो वचन बोला जाता है वह योगसत्य है, जैसे छत्ता के संबंध से पुरुष को छत्री कहना, दण्ड के संबंध से दण्डी कहना ९। दूसरे प्रसिद्ध सदृश पदार्थ को उपमा कहते हैं, इसके आश्रय से जो वचन बोला जाता है वह उपमासत्य है, जैसे चन्द्र के समान मुख, समुद्र के समान तडाग होता है, ऐसा वचन कहना। (चोद्दस पुव्वीहिं

અનામિકા આંગળીને નાની કહેવી અને ટચલી આંગળીની અપેક્ષાએ તેને મોટી કહેવી (૭) નૈગમ આદિ નયોની પ્રધાનતાથી જે વચન બોલવામા આવે છે તે વચનને વ્યવહાર સત્ય કહે છે જેમ કે પર્વત ઉપરનાં ઘાસ આદિને આગ લાગે તો પર્વત સળગી રહ્યો છે તેમ કહેવું, ઘડામાંથી પાણી ટપકતું હોય તો ઘડો ટપકે છે તેમ કહેવું, એ બધાં વ્યવહાર સત્ય ઉદાહરણ છે, કારણ કે વ્યવહારમા એવા વચનોને સત્ય માનવામા આવે છે (૮) જે વસ્તુમાં જે ધર્મની વિશેષતા હોય તેને લઈને જે વચન કહેવાય તે ભાવ સત્ય છે જેમ કે પાંચે વર્ણોની સભવિતતા હોવા છતાં પણ બગલાંને સફેદ કહેવા, પોપટને લીલા કહેવા તે ભાવસત્ય છે. (૯) વસ્તુના સયોગથી જે વચન બોલાય છે તે યોગસત્ય છે જેમકે છત્રીના સંબંધથી પુરુષને છત્રી કહેવુ, દંડના સંબંધથી દંડી કહેવું (૧૦) બીજા પ્રસિદ્ધ સદૃશ પદાર્થને ઉપમા કહે છે, તેનો આશ્રય લઇને જે વચન બોલાય છે તે ઉપમા સત્ય છે. જેમ કે ચન્દ્રમાના સમાન મુખ, સમુદ્રના જેવુ તળાવ હોય છે, એવા વચન કહેવા તે ઉપમા સત્ય છે " ચોદ્દસ

सपुव्वीहिं' चतुर्दशपूर्विभिः 'पाहुडत्थविइयं' प्राभृतार्थविदितम्-पूर्वगतांशविशेषाभिधेयतया सत्यवादपूर्वनाम्ना ज्ञातम्, तथा-'महरिसीणं य' महर्षीणां च 'समयपइण्णं' समप्रदत्तं समयेन-सिद्धान्तेन प्रदत्तं=वितीर्णं, महर्षिभिः सिद्धान्तरूपतया गृहीतमित्यर्थः, तथा 'देविंदनरिंदभासियत्थं' देवनरेन्द्रभाषितार्थम् देवानाम्=इन्द्रादीनां नरेन्द्राणां=चक्रवर्तिप्रभृतीनां भाषितः=प्रतिभाषितोऽर्थः=प्रयोजनं यस्य तत्, तथा-'वेमाणियसाहियं' वैमानिकसाधितं वैमानिकैः=वैमानिकदेवैः साधितं=साधनाविषयीकृतं, सेवितमित्यर्थः, तथा-'महत्थं' महार्थम्=महान् अर्थः =प्रयोजनं यस्य तत्, तथा 'मंतोसहिविज्जासाहणत्थं' मन्त्रौषधिविद्यासाधनार्थम्= मन्त्रौषधिविद्यानां साधनमर्थः=प्रयोजनं यस्य तत्, तेन विना तत्सिद्ध्यभावात्, तथा-'चारणगणसमणसिद्धविज्जं' चारणगणश्रमणसिद्धविद्यम्=चारणगणानां=

पाहुडत्थविइयं) इस सत्य को चतुर्दश पूर्वधारियों ने प्राभृतार्थ रूप से विदित किया है अर्थात् पूर्वगत अंशविशेष की अभिधेयता से सत्यवादपूर्व इस नाम से जाना है, (महरिसीण य समयपइण्णं) महर्षियों ने इसे सिद्धान्तरूप से स्वीकार किया है, (देवनरिंदभासियत्थं) इन्द्रादिकों के लिये तथा चक्रवर्ती आदि (राजाओं) के लिये इसका प्रयोजन उपादेयरूप से कहा गया है. (वेमाणियसाहियं) वैमानिक देवों ने इस सत्य को अपनी साधना का विषयभूत बनाया है अर्थात् इसका सेवन किया है (महत्थं) यह महान् अर्थ-प्रयोजन वाला है (मंतोसहिविज्जासाहणत्थं) मन्त्रऔषधि एवं विद्याओं का साधन इसका प्रयोजन है क्यों कि सत्य के विना मंत्रादि सिद्ध नहीं होते है, (चारणगणसमणसिद्धविज्जं) इसी के प्रभाव से इसी चारणगणों को आकाशगा-

---

पुव्वीहिं पाहुडत्थविइयं" આ સત્યને ચૌદ પૂર્વધારીઓએ પ્રાભૃતાર્થરૂપે વિદિત કર્યું છે એટલે કે પૂર્વગત અંશવિશેષની અભિધેયતાથી સત્યવાદ પૂર્વ એ નામથી જાણ્યું છે "महरिसीणं य समयपइण्ण" મહર્ષિઓએ તેને સિદ્ધાંતરૂપે સ્વીકાર્યું છે "देवनरिंद भासियत्थं" ઇન્દ્રાદિકોને તથા ચક્રવર્તી આદિ નરેન્દ્રોને માટે તેનું પ્રયોજન ઉપાદેયરૂપે કહેવાયું છે, "वेमाणियसाहियं" વૈમાનિક દેવોએ આ સત્યને પોતાની સાધનાનો વિષય બનાવ્યો છે એટલે કે તેનું સેવન કર્યું છે, "महत्थं" તે મહાન અર્થ-પ્રયોજનવાળું છે "मंतोसहिविज्जासाहणत्थं" તે મંત્ર-ઔષધિ અને વિદ્યાઓનું સાધન તેનું પ્રયોજન છે કારણ કે સત્ય વિના મંત્રાદિ સિદ્ધ થતા નથી, "चारणगणसमणसिद्ध विज्जं" તેના પ્રભાવથી ચારણ ગણોને આકાશગામિની વિદ્યાની તથા શ્રમણોને

विद्याचारणादीनां श्रमणानां च सिद्धविद्या=आकाशगामिनी वैक्रियादि रूपा च यस्मात्तत्तथोक्तम्, तथा-'मणुयगणाणं' मनुजगणानां 'वंदणिज्जं' वन्दनीयं=स्तवनीयम्, तथा-'अमरगणाणं' अमरगणानां=देवानाम् 'अच्चणिज्जं' अर्चनीयम्=सत्कारयोग्यम्, तथा-'असुरगणाणं च' असुरगणानां च 'पूयणीयं' पूजनीयं=प्रशंसनीयम्, तथा 'अणेगपाखंडिपरिग्गहियं' अनेकपाखण्डि-परिगृहीतम्=अनेकधर्मानुयायीभिरपि स्वीकृतं 'जं' यत्सत्यं 'तं' तत् 'लोकम्मि' लोके 'सारभूयं' सारभूतं= सारभूतं=सर्वप्रधानत्वात् पुनस्तत्सत्यं कीदृशम्? इत्याह-'गंभीरयरं महासमुद्दाओ' गंभीरतरं महासमुद्रात्, अक्षोभ्यत्वात्, तथा-'थिरयरगं मेरुपव्वयाओ' स्थिरतरकं मेरुपर्वतात्=निश्चलत्वात्, तथा-'सोम्मयरगं चंदमंडलाओ' सौम्यतरकं चन्द्रमण्डलात्-संतापशमनहेतुत्वात्, तथा-'दित्तयरं सूरमंडलाओ' दीप्ततरं सूरमण्डलात्=यथावद्वस्तुप्रकाशकत्वात्,

---

मिनी विद्या की तथा श्रमणों को वैक्रियादिरूप विद्याओं-लब्धियों की सिद्धि होती है। (मणुयगणाणं वंदणिज्जं) मनुष्यों के लिये यह सत्य वंदनीय है, (अमरगणाणं अच्चणिज्जं) अमरगणों के लिये यह अर्चनीय है, तथा (असुरगणाणं पूयणिज्जं) असुरगणों के लिये यह पूजनीय प्रशंसनीय है (अणेगपाखंडिपरिग्गहियं) अनेक धर्मानुयायियों ने भी इसको स्वीकार किया है। (जं तं लोगम्मि सारभूयं) ऐसा यह सत्यव्रत लोकमें सर्वप्रधान होने से सारभूत है। (गंभीरयरं महासमुद्दाओ) यह सत्य अक्षोभ्य होने से महासमुद्र की अपेक्षा अत्यंत गंभीर है। (थिरयरं मेरुपव्वयाओ) निश्चल होनेसे मेरुपर्वत की अपेक्षा अत्यंत स्थिर है (सोम्मयरगं चंदमंडलाओ) संताप के शमन का हेतु होने से चंद्रमंडल की अपेक्षा अत्यंत सौम्य है। (दित्तयरं सूरमंडलाओ) यथावत् वस्तु का प्रकाशक होने से यह सत्य सूर्य मंडल की अपेक्षा अधिक

વૈક્રિયાદિરૂપ વિદ્યાઓ-લબ્ધિઓની પ્રાપ્તિ થાય છે. "मणुयगणाणं वंदणिज्जं" મનુષ્યોને માટે આ સત્ય વંદનીય છે તથા "असुरगणाण पूयणिज्जं" અસુરગણોને માટે તે પૂજનીય-પ્રશંસનીય છે "अणेगपाखंडि परिग्गहियं" અનેક ધર્મોના અનુયાયીઓએ પણ તેનો સ્વીકાર કર્યો છે, "जं त लोगम्मि सारभूयं" એવું આ સત્યવ્રત લોકમાં સર્વ પ્રધાન હોવાથી સારભૂત છે. "गंभीरयरं महासमुद्दाओ" આ સત્ય અક્ષોભ્ય હોવાથી સમુદ્ર કરતાં પણ વધારે ગંભીર છે. "थिरयरं मेरुपव्वयाओ" નિશ્ચલ હોવાથી તે મેરુપર્વત કરતા પણ વધારે સ્થિર છે "सोम्मयरगं चंदमंडलाओ" સંતાપનું શમન કરનાર હોવાથી ચન્દ્ર-મંડળ કરતાં પણ વધારે સૌમ્ય છે "दित्तयरं सूरमंडलाओ" વસ્તુના સાચા સ્વરૂપનું પ્રકાશક હોવાથી આ સત્ય સૂર્યમંડળ કરતાં પણ વધારે સ્થિર છે.

तथा-'विमलयरं सरयनहयलाओ' विमलतरं. शरन्नभस्तलात्=शरत्कालिकं गगन-तलादप्यधिकं निर्मलं, मालिन्यरहितत्वात्, तथा-'सुरभियरं गंधमायणाओ' सुरभितरं गन्धमादनात्=गन्धमादनपर्वतात् अयं हि-नीलवद् वर्षधरपर्वतस्य दक्षिणदिशि, मेरोर्वायव्यकोणे, शीतोदानद्युत्तरकूलवर्तिनो गंधिलावतीनाम्नोऽ-ष्टमविजयस्य पूर्वदिशि, तथा-उत्तरकुरूणां सर्वोत्कृष्टभोगभूमिकक्षेत्रात् पश्चिम-दिशि महाविदेहक्षेत्रस्थो गजदन्तसंस्थानसंस्थितो गन्धमादननामा वक्षस्कार-पर्वतोऽस्ति। गन्धेन स्वयं माद्यति मदयति वा स्वनिवासिदेवदेवीनां मनांसीति गन्धमादनः। यथा पिष्यमाणानां संचूर्ण्यमानानाम्-उत्कीर्यमाणानां विकीर्यमा-

---

दीप्त है। (विमलयरं सरयनहयलाओ) मलिनता से विहीन होने के कारण शरत्कालिक आकाशतल की अपेक्षा अधिक निर्मल है। तथा (सुरभियरं गंधमायणाओ) जनों के हृदयों को आकर्षण करने वाला होनेके कारण यह सत्य गंधमादन नामक पर्वत की अपेक्षा अत्यन्त सुग-न्धित है। यह गंधमादन नाम का वक्षस्कार पर्वत नीलवर्षधर पर्वत की दक्षिणदिशा में, मेरु के वायव्यकोण में, शीतोदानदी के उत्तर तट पर रहे हुए गन्धिलावती नामक अष्टमविजय की पूर्वदिशा में, तथा उत्तर-कुरु के सर्वोत्कृष्ट भोगभूमिकक्षेत्र से पश्चिमदिशा में महाविदेहक्षेत्र में है। इसका संस्थान आकार-गजदंत जैसा है अर्थात्—गजदंत के आकार में यह स्थित है। अपनी गंध से स्वयं को सुगंधित करता है तथा अपने ऊपर रहने वाले देवदेवियों के मन को मदो-न्मत्त बना देता है उसका नाम गंधमादक है ऐसा यह पर्वत है। जैसे पिसते हुए, फैले हुए, अथवा एक वर्तन से दूसरे वर्तन

"विमलयरं सरयनहयलाओ" મલિનતાથી રહિત હોવાથી તે શરદઋતુનાં આકાશતળ કરતાં પણ વધારે નિર્મળ છે. "सुरभियरं गंधमायणाओ" માણ-સોનાં ચિત્તનું આકર્ષણ કરનાર હોવાથી આ સત્ય ગંધમાદન નામના પર્વત કરતાં પણ અધિક સુગન્ધિત છે. તે ગન્ધમાદન નામનો વક્ષસ્કાર પર્વત નીલ-વર્ષધર પર્વતની દક્ષિણ દિશામાં, મેરુ, વાયવ્ય કોણમાં, શીતોદા નદીના ઉત્તર કિનારે રહેલ ગન્ધિલાવતી નામના અષ્ટમવિજયની પૂર્વ દિશામા, તથા ઉત્તર કુરુના સર્વોત્કૃષ્ટ ભોગભૂમિક ક્ષેત્રની પશ્ચિમ દિશામા મહાવિદેહ ક્ષેત્રમાં છે. તેનો આકાર ગજદંત જેવો છે એટલે કે તે ગજદંતના આકારે ઉભો છે પોતાની ગંધવડે જે પોતે વાસયુક્ત બને છે અને પોતાની ઉપર વાસ કરતા દેવદેવીઓના મનને જે મદોન્મત્ત કરી નાંખે છે, તેનું નામ ગંધમાદન છે.

णानां भाण्डाद् भाण्डान्तर वा संह्रियमाणानां कोस्टपुटानां यावत्तगरपुटादीनां मनोज्ञा उदारा गन्धा अभिनिःस्रवन्ति, तदपेक्षयाऽप्युदारगन्धयुक्तोऽयं पर्वतः। ततोऽप्यधिकतरसुरभिमत्सत्यमिति भावः, जनानां हृदयावर्जकत्वात्। तथा— 'जे वि य' येऽपि च 'लोगम्मि' लोके 'अपरिसेसा' अपरिशेषाः=सकलाः 'मंतजोग,' मन्त्रयोगाः—मन्त्राः—हरिणैगमेषिदेवादि मन्त्राः—योगा वशीकरणादि-प्रयोजना द्रव्यसंयोगाः, 'जवा य' जपाश्च—मन्त्रविद्याजपनानि 'विज्जा य' विद्याश्च=रोहिणीप्रज्ञाप्त्यादयः, 'जंभका य' जृम्भकाश्च=तिर्यग्लोकवासिनोऽन्न जृम्भकादि भेदेन दशविधा देवविशेषाः 'अत्थाणिय' अस्त्राणि च—बाणादीनि 'सत्थाणिय' शस्त्राणि च खड्गानि 'सिक्खाओ य' शिक्षाश्च—कलाग्रहणादीनि 'आगमा य' आगमाश्च सन्ति। 'सव्वाइं वि ताइं' सर्वाण्यपि तानि 'सच्चे' सत्ये 'पइट्ठियाइं' प्रतिष्ठितानि, सत्यमाश्रित्यैव सर्वाणि तिष्ठन्तीति भावः ॥२॥

में रखे जाते हुए सुगंधित तगर आदि द्रव्यों की मनोज्ञ उदार गंध चारों ओर फैलाति हैं उससे भी अधिक उदार गंध से युक्त यह पर्वत है। इस पर्वत से भी अधिकतर सुगंधि संपन्न यह सत्य है। (जे वि य लोगम्मि अपरिसेसा मंतजोगा जवा य विज्जा य जम्भगा य अत्थाणि य सत्थाणि य सिक्खाओ आगमा य सव्वाइं वि ताइं सच्चे पइट्ठियाइं) तथा लोक में जो भी समस्त मन्त्र—हरिणैगमेषिदेवादिमंत्र, और योग वशीकरण आदि प्रयोजनवाले द्रव्यसंयोग हैं, मंत्रविद्या के जाप हैं, रोहिणीप्रज्ञप्ति आदि विद्याएँ हैं, तिर्यग्लोकवासी अन्नजृंभक पानजृंभक आदि दशप्रकार के देवविशेष हैं, बाणादिक अस्त्र, खड्ग आदि शस्त्र, कलाग्रहण आदि शिक्षाएँ और आगम हैं वे सब इस सत्य के ही आश्रय से हैं।

એવો તે પર્વત છે. જેમ ઘસાતા ફેલાતા અથવા એક પાત્રમાંથી બીજા પાત્રમાં રેડાતા સુગંધિત તગર આદિ દ્રવ્યોની મનોજ્ઞ ઉદાર ગન્ધ ચારે તરફ ફેલાય છે, તે કરતાં પણ વધારે ઉદાર ગંધવાળો આ પર્વત છે. તે પર્વત કરતાં પણ ઘણું જ વધારે સુગંધિયુક્ત આ સત્ય છે. " जे विय लोगम्मि अपरिसेसा मंत-जोगा जवाय विज्जा य जंगमाय अत्थाणिय सत्थाणिय सिक्खाओ आगमा य सव्वाइं विताइं सच्चे पइट्ठियाइं " તથા લોકમાં જે કોઇ મંત્ર—હરિણૈગમેષિ-દેવાદિ મંત્ર, અને યોગ—વશીકરણ આદિ પ્રયોજનવાળા દ્રવ્યસંયોગ છે, મંત્ર-વિદ્યાના જાપ છે, રોહિણીપ્રજ્ઞપ્તિ આદિ વિદ્યાઓ છે, તિર્યગ્લોકવાસી અન્નજૃંભક, પાનજૃંભક, આદિ દશ પ્રકારના દેવવિશેષ છે, બાણાદિ અસ્ત્ર, તલવાર આદિ શસ્ત્ર, કલાગ્રહણ આદિ શિક્ષાઓ અને આગમ છે, તે બધું આ સત્યને જ આશ્રયે છે

सत्यमपि कीदृश न वक्तव्यं, कीदृशं वक्तव्य ? मित्याह—' सच्चंपि य ' इत्यादि—

मूलम्—सच्चं पि य संजमस्स उवरोहकारगं किंचि न वत्तव्वं, हिंसासावज्जसंपउत्तं, भेयविकहकारगं, अणत्थवाय कलहकारगं, अणज्जं, अववायविवायसंपउत्तं वेलंबं, ओजधेज्जबहुलं निल्लज्जं, लोयगरहणिज्जं, दुद्दिट्ठं, दुस्सुयं,

भावार्थ—यह सत्य तीर्थंकरो का सुभाषित है। इसे व्यवहार दृष्टि-से जनपद सत्य आदि के भेद से यह दश प्रकार का कहा है। पूर्वधरों ने इस सत्य को सत्यप्रवादपूर्व के नाम से अभिहित किया है। ऋषियों ने इसे सिद्धान्त का रूप दिया है। देवेन्द्र नरेन्द्र आदि कों के भाषण का महत्त्व इसी सत्य के सहारे माना गया है। मंत्र औषधि आदि विद्याओं की साधना सत्य के प्रभाव से सफलित होती है। आकाशगामिनी विद्या-चारणऋद्धि-एवं वैक्रियलब्धि ये, सब इसी सत्य के प्रभाव से जीवों को प्राप्त होती हैं। मनुष्य, देव एवं असुर, सब के लिये यह वंदनीय है। अनेकधर्मानुयायियों ने भी इसे मान्य किया है। समस्त वस्तुओं में यह एक सारभूत-श्रेष्ठ-वस्तु है। इसका प्रभाव अनिर्वचनीय है। महासमुद्र आदि की अपेक्षा भी यह गंभीरतर आदि धर्मों वाला है। लोक में जितने भी मंत्र योग आदि हैं वे सब इसी सत्य के सहारे टिके हुए हैं ॥ सू० २ ॥

ભાવાર્થ—આ સત્ય તીર્થંકરોનું સુભાષિત છે. વ્યવહાર દૃષ્ટિએ જનપદ સત્ય આદિના ભેદથી તે દશ પ્રકારનું બતાવ્યું છે, પૂર્વધરોએ આ સત્યને સત્યપ્રવાદ પૂર્વના નામથી ઓળખાવ્યું છે. ઋષિઓએ તેને સિદ્ધાન્તનું રૂપ આપ્યું છે. દેવેન્દ્ર નરેન્દ્ર વગેરેના ભાષણની મહત્તા આ સત્યની મદદથી જ મનાયેલ છે. મંત્ર ઔષધિ આદિ વિદ્યાઓની સાધના આ સત્યના પ્રભાવથીજ સફળ થાય છે. આકાશગામિની વિદ્યા–ચારણઋદ્ધિ અને વૈક્રિયલબ્ધિ એ બધું આ સત્યના પ્રભાવથી જ જીવોને પ્રાપ્ત થાય છે. માનવ, દેવ અને અસુર સૌને માટે તે વંદનીય છે. અનેક ધર્મના અનુયાયીઓએ પણ તેને માન્ય કર્યું છે સમસ્ત વસ્તુઓમા તે એક સારભૂત–શ્રેષ્ઠ વસ્તુ છે. તેનો પ્રભાવ અવર્ણનીય છે મહાસાગર આદિનાં કરતાં પણ તે વધારે ગંભીરતા આદિ ગુણોવાળું છે. જગતમાં જેટલા મંત્ર યોગ આદિ છે તે બધા આ સત્યને આધારે જ ટકેલાં છે ॥૨॥

असुणियं । अप्पणो थवणा परेसिं निंदा—न तंसि मेहावी, ण तंसि धण्णो न तंसि पियधम्मो, न तंसि कुलीणो, न तंसि दाणवई, न तंसि सूरो, न तंसि पडिरूवो, न तंसि लट्ठो, न पंडिओ, न बहुस्सुओ, न वि य तंसि तवस्सी, ण यावि परलोगणिच्छियमईऽसि, सव्वकालं जाइकुलरूव-वाहिरोगेण वावि जं होइ वज्जणिज्जं दुहओ उवयारमइक्कंतं एवंविहं सच्चंपि न वत्तव्वं । अह केरिसयं पुणाइ सच्चं तु भासियव्वं ? जं तं दव्वेहिं पज्जवेहि य गुणेहिं कम्मेहिं बहुविहेहिं सिप्पेहिं आगमेहि य नामक्खाय निवाय उवसग्ग-तद्धियसमाससंधिपयहेउ—जोगिय—उणाइ—किरिया—विहाण धाउसरविभत्तिवन्नजुत्तं तिकल्लं दसविहंपि सच्चं जह भणियं तह य कम्मुणा होइ । दुवालसविहा होइ, भासा वयणं पि य होइ सोलसविहं । एवं अरहंतमणुन्नायं समिक्खियं संजएणं य कालम्मि वत्तव्वं । इमं च अलिय—पिसुण—फरुस-कडुय-चवल-वयणपरिरक्खणट्ठयाए पावयणं भगवया सुकहियं, अत्तहियं, पेच्च भावियं, आगमेसिभद्दं, सुद्धं नेयाउयं, अकुडिलं, अणुत्तरं, सव्वदुक्खपावाणविउ. समणं ॥सू० ३॥

टीका—' सच्चं पि य ' सत्यमपि च तत् ' संजमस्स ' संयमस्य ' उवरोह-कारगं ' उपरोधकारकं-बाधकं भवेत् , तत् ' किं वि ' किमपि ' न वत्तवं ' न वक्तव्यम् । किं भूतं तत्—सत्यं यन्न वक्तव्यम् ? इत्याह—' हिंसा सावज्जसंपउत्तं '

किस प्रकार का सत्य नहीं बोलना चाहिये और किस प्रकार का

કેવા પ્રકારનું સત્ય બોલવું ન જોઈએ અને કેવા પ્રકારનું બોલવું જોઈએ ?

बोलना चाहिये? इस बात को सूत्रकार कहते हैं—' सच्चंपि य ' इत्यादि ०।

टीकार्थ—(सच्चं पि य संजमस्स उवरोहकारगं किंचि न वत्तव्वं) सत्य होने पर भी जो वचन संयम का बाधक हो वह मुनिजन को थोडा सा भी नहीं बोलना चाहिये। सत्य होने पर भी जो वचन संयम के बाधक होते हैं वे इस प्रकार से हैं-(हिंसासावज्जसंपउत्तं) हिंसा और सावद्य जो वचन हैं वे सत्य होनेपर भी संयम के बाधक होने के कारण नहीं बोलना चाहिये। हिंसा का तात्पर्य यहां प्राणिवध से और सावद्य का तात्पर्य पापयुक्त संलाप से है। इन सहित जो वचन होते हैं वे हिंसासावद्य संप्रयुक्त वचन हैं। जिन सत्यवचनों से प्राणियों के प्राणों का वध होता हो, तथा जिनसे पाप में जीवों की प्रवृत्ति होती हो ऐसे वचन सत्यमहाव्रती के लिये कभी भी भाषण करने योग्य नहीं है। (भेयविकहकारगं) इसी तरह जो सत्यवचन चारित्र के ध्वंसक हो, राजकथा आदि से संबध रखते हों, तथा (अणत्थवायकलहकारगं) जिन सत्य वचनों का कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं होता हो अर्थात् जो निरर्थक हो, जिन सत्य वचनों से परस्पर में वाद विवाद और कलह बढता हो, तथा

તે વાત સૂત્રકાર બતાવે છે—" सच्चं पि च " ઈત્યાદિ.

" सच्चं पि य संजमस्स उवरोहकारगं किं चि न वत्तव्वं " સત્ય હોવા છતાં પણ જે વચન સંયમમાં બાધક હોય તે મુનિજને જરા પણ બોલવું જોઈએ નહીં. સત્ય હોવા છતાં પણ જે વચન સંયમમાં બાધક હોય છે તે આ પ્રમાણે છે–" हिंसा सावज्जसंपउत्तं " હિંસા અને સાવદ્ય જે વચન છે તે સત્ય હોવા છતા પણ સંયમનાં બાધક હોવાથી બોલવાં જોઈએ નહીં હિંસા એટલે આ જગ્યાએ પ્રાણિવધ સમજવો અને સાવદ્યનો અર્થ પાપયુક્ત સંલાપ છે. હિંસા અને સાવદ્યયુક્ત જે વચનો છે તે હિંસાસાવદ્ય સંપ્રયુક્ત વચન કહેવાય છે. જે સત્ય વચનોથી પ્રાણીઓનાં પ્રાણોનો વધ થતો હોય તથા જે વચનોથી પાપમાં જીવોની પ્રવૃત્તિ થતી હોય એવાં વચન સત્યમહાવ્રતીને માટે કદી પણ બોલવાને યોગ્ય હોતાં નથી, " भेयविकहकारगं " એ જ પ્રમાણે જે સત્ય વચન ચારિત્રના ઘાતક હોય, રાજકથા આદિ સાથે સંબંધ રાખતા હોય, તથા " अणत्थवायकलहकारगं " જે સત્ય વચનોનું કોઈ પ્રયોજન સિદ્ધ થતું ન હોય એટલે કે જે નિરર્થક હોય, જે સત્ય વચનોથી પરસ્પરમાં વાદવિવાદ અને કલહ વધતો હોય તથા " अणज्जं " જે

हिंसासावद्य संप्रयुक्तं, तत्र-हिंसा=प्राणिवधः, सावद्यम्=पापयुक्तसंलापादि, ताभ्यां संप्रयुक्तं=सहितं यत्तत्, पुनः किंभूतम्? 'भेयविकहकारकं' भेदविकथाकारकम्, भेदः = चारित्रभेदः, विकथा = राजकथादिः, तत्कारकं यत् तत्, तथा- 'अणत्थवायकलहकारकं' अनर्थवादकलहकारकम् = तत्र - अनर्थो = निरर्थको यो वादः सोऽनर्थवादः=निष्प्रयोजनो जल्पः, कलहो=विग्रहः, तत्कारकं यत्तत्, तथा-'अणज्जं' अन्याय्यम्=न्यायवर्जितम्, तथा 'अववायविवायसंपउत्तं' अपवाद विवादसंप्रयुक्तम्, अपवादः=परदूषणकथनं, विवादः=वाक्कलहः, ताभ्यां संप्रयुक्तं यत्तत्, तथा 'वेलंबं' विडम्बकं=परविडम्बनाकारकम्, तथा-'ओजधेज्ज बहुलं' ओजो धैर्यबहुलम्-ओजः=अहंकारः,आवेशो वा, धैर्यं=धृष्टता, ताभ्यां बहुलं=व्याप्तम्, अत एव 'निल्लज्जं' निर्लज्जं=लज्जा रहितम्, पुनः 'लोग-गरहणिज्जं' लोकगर्हणीयम्=साधुजननिन्दितम्, येन सत्येन परस्य हिंसा मर्मो-द्घाटनादिकं वा भवेत्तत् 'दुद्दिट्ठं' दुर्दृष्टम्=असम्यग्दृष्टम्, 'दुस्सुय' दुःश्रुतम्=

(अणज्जं) जो न्यायानुकूल न हों, (अववायविवाय संपउत्तं) अपवाद, विवाद से युक्त हों वे भी नहीं बोलना चाहिये। पर के दूषणों का कहना यह अपवाद है, वाक्कलह का नाम विवाद है। इसी तरह (वेलंबं) जो पर की विडम्बना के कारक हों तथा (ओजधेज्जबहुलं) जिन सत्य वचनों के बोलने में बोलने वाले का अहंकार भाव ज्ञात होता हो अथवा आवेश प्रकट होता हों, धृष्टता ज्ञात होती हो ऐसे वचन भी नहीं बोलना चाहिये। तथा (निल्लज्जं) जिन सत्यवचनों के बोलने में लज्जा जाती हो और (लोकगरहणिज्जं) साधुजन जिन वचनों की निंदा करते हो ऐसे वचन सत्य होने पर भी नहीं बोलना चाहिये। तथा (दुद्दिट्ठं) जिन सत्य वचनों से परप्राणी की हिंसा अथवा मर्मका उद्धा-

---

ન્યાયાનુકૂળ ન હોય, "अवायविवायसंपउत्तं" અપવાદ, વિવાદથી યુક્ત હોય તે પણ બોલવા જોઈએ નહિ પારકાં દૂષણોને કહેવાં તે અપવાદ છે અને વાણીના કલહને વિવાદ કહે છે, એ જ પ્રમાણે "वेलंब" જે પરની વિડબના કરનાર હોય તથા "ओजधेज्जबहुल" જે સત્ય વચનો બોલવાથી બોલનારનો અહંકાર ભાવ જણાતો હોય અથવા આવેશ પ્રગટ થતો હોય, ધૃષ્ટતા જણાતી હોય, એવાં વચન પણ ન બોલવાં જોઈએ તથા "निल्लज्ज" જે સત્ય વચન બોલવામા લજ્જા જતી હોય અને "लोयगरहणिज्जं" સાધુજન જે વચનોની નિંદા કરતાં હોય એવાં વચન સત્ય હોય તો પણ બોલવાં જોઈએ નહીં, તથા "दुद्दिट्ठं" જે સત્ય વચનથી પર પ્રાણીની હિંસા થતી હોય, અથવા

असम्यक् श्रुतम्, तथा-'असुणियं' अज्ञातम्=असम्यग्ज्ञातम्, एतादृशं सत्यमपि न वक्तव्यमिति भावः। पुनः कीदृशं सत्यं न वक्तव्यम्? इत्याह—'अप्पणो थवणा' आत्मनः स्तवना=प्रशंसा यत्र भवेत्तत्, स्वस्तुतिरूपं यत्सत्यं तत्र वक्तव्यमित्यर्थः। तथा-'परेसिं निंदा' परेषां निन्दा- अन्येषां विषये सत्याऽपि निन्दा यस्मिन् भवेत्तन्न वक्तव्यमिति भावः, कथम्? इत्याह-'न तंसि मेहावि' न त्वमसि मेधावी=अपूर्वश्रुतदृष्टग्रहणशक्तियुक्तः प्राज्ञो मेधावीत्युच्यते, एतादृशस्त्वं नासि तथा-'णं तंसि धण्णो' न त्वमसि धन्यः=धनवान्, धन्यवादपात्रं वा, 'णं तंसि पियधम्मो' न त्वमसि प्रियधर्मा=धर्मपरायणः, तथा-'न तंसि कुलीनो' न त्वमसि कुलीनः=उच्चकुलीनः=उच्चकुलजातः, 'न तंसि दाणवई'

टन होता हो वे दुर्दृष्ट वचन हैं और (दुस्सुयं) जो अच्छी तरह से सुने गये हो वे दुःश्रुत वचन हैं, तथा (असुणियं) जो अच्छी तरह से जानने में नहीं आये हो वे असम्यक् ज्ञात वचन हैं, इन दुर्दृष्टादि वचनों को चाहे ये वचन सत्य भी हों तो भी नहीं बोलना चाहिये। (अप्पणो थवणा परेसिं निंदा) इसी तरह जिन सत्यवचनों में आत्मप्रशंसा-आत्मश्लाघा भरी होवे, और जिन सत्यवचनों में पर की निंदा होती हो वे सत्यवचन भी नहीं बोलना चाहिये, किस प्रकार नहीं बोलना चाहिये सो कहते हैं-(न तंसी मेहावी) तुम मेधावी नहीं हो, अर्थात् जो व्यक्ति अपूर्व, अश्रुत एवं अदृष्ट पदार्थ को ग्रहण करने की शक्ति से युक्त होता है उसका नाम मेधावी है ऐसे मेधावी तुम नहीं हो, तथा (ण तंसि धण्णो) तुम धनवान् या धन्यवाद के पात्र नहीं हो, (न तंसि पियधम्मो) तुम प्रियधर्मा-धर्मपरायण-नहीं हो, (न तंसि-

---

મર્મ ખૂલ્લો પડતો હોય તેવાં વચનો દુર્દષ્ટ વચન છે અને "दुस्सुयं" જે બરાબર સાંભળાયું ન હોય તે દુઃશ્રુતવચન કહેવાય છે, તથા "असुणियं" જે બરાબર જાણવામાં આવ્યું ન હોય તેના વિષે વચન બોલવા તે અસમ્યક્ જ્ઞાત વચન છે, એ દુર્દષ્ટ આદિ વચનો સત્ય હોય તો પણ બોલવા જોઈએ નહીં "अप्पणो थवणा परसेनिंदा" એ જ પ્રમાણે સત્ય વચનોમાં આત્મપ્રશંસા આત્મશ્લાઘા-ભરી હોય તથા જે સત્ય વચનોમાં બીજાની નિંદા થતી હોય તે સત્ય વચન પણ બોલવાં જોઈએ નહીં. કઈ રીતે બોલવાં ન જોઈએ તે હવે કહે છે-"न तंसि मेहावी" તમે મેધાવી નથી. જે વ્યક્તિ અપૂર્વ, અશ્રુત અને અદૃષ્ટ પદાર્થને ગ્રહણ કરવાની શક્તિવાળી હોય છે તેને મેધાવી કહે છે. તથા "ण तं सि धण्णो" તમે ધનવાન યા ધન્યવાદને પાત્ર નથી "न तं सि पियधम्मो" તમે ધર્મપરાયણ નથી, "न तं सि कुलीणो" તમે કુલીન નથી.

न त्वमसि दानपतिः=दाता, 'न तंसि सूरो' न त्वमसि शूरः=पराक्रमशाली, 'न तंसि पडिरूवो' न त्वमसि प्रतिरूपः=सुन्दरः, 'न तंसि लट्ठो' न त्वमसि लष्टः=सौभाग्यवान्, 'न पंडिओ' न पण्डितः=विद्वान् त्वमसि, न च त्वं 'बहुस्सुओ' बहुश्रुतः=बहुविद्योऽसि, 'न विय तंसि तवस्सी' नापी च त्वमसि तपस्वी 'ण यावि परलोगणिच्छिमईऽसि' परलोके निश्चिता संशयरहिता मतिर्यस्य सः= परलोकनिश्चितमतिश्चापि त्वं नासि। मेधादिवर्जितान् प्रत्यपि एवंरूपा निन्दा न कर्तव्येति भावः। किं बहुना, 'जाइकुलरूववाहिरोगेण वा वि' जातिकुलरूप व्याधिरोगेण वाऽपि-वा=अथवा जातिः=मातृवंशः, कुलं=पितृवंशः, रूपं=सौन्दर्यं, व्याधिः=चिरस्थायि कुष्ठादिः, रोगः=शीघ्रघातो ज्वरादिः, एतेषामितरेतरयोगद्वन्द्वः, तेन कारणेनापि जात्यापि कारणमवलम्ब्यापि 'जं' तत् 'सव्वकालं'

कुलीणो) तुम कुलिन नहीं हो, (न तंसि दाणवई) तुम दानपति-दाता नहीं हो, (न तंसि सूरो) तुम पराक्रमशाली नहीं हो, (न तंसि-पडिरूवो) तुमप्रतिरूप-सुन्दर-नहीं हो, (न तंसि लट्ठो) तुम लष्ट-सौभाग्यसंपन्न नहीं हो, (न पंडिओ) तुम पंडित नही हो (न बहुस्सुओ) तुम बहुश्रुत-अनेक विद्याओं के वेत्ता नहीं हो, और (न वि य तंसि तवस्सी) न तुम तपस्वी हो। और (न यावि परलोगणिच्छियमई सि) न तुम परलोक में संशय रहित मतिवाले ही हो," इस प्रकार के वचन अविवेकी व्यक्तियों से नहीं कहना चाहिये, क्यों कि इस प्रकार के वचनों से उनकी निंदा होती है। (सव्वं कालं जाइकुलरूववाहिरोगेण जं होइ वज्जणिज्जं) इसी तरह जाति-मातृवंश, कुल-पितृवंश, रूप-सौंदर्य, व्याधि-चिरस्थायी कुष्ठादि, तथा शीघ्रघातक ज्वरादि रोग, इन

'न तंसि दाणवई" तमे दाता नथी, 'न तंसि सूरो" तमे पराक्रमी नथी "न तंसि पडिरूवो" तमे सुंदर नथी "न तंसि लट्ठो" तमे लष्ट सौभाग्यशाळी नथी, "न पंडिओ" तमे पंडित नथी, "न बहुस्सुओ" तमे बहुश्रुत-अनेक विद्याओना जाणकार नथी, अने "न वि य तं सि तवस्सी" तमे तपस्वी नथी, अने "न यावि परलोगिणच्छियमईसि" तमे परलोकने विषे संशयरहित मतिवाळा नथी" ए प्रकारना वचनो माणसोए बोलवां जोईए नहीं कारण के ते प्रकारनां वचनोमा तेमनी "श्रोतानी निंदा थाय थाय छे "सव्व कालं जाइकुलं रूववाहिरोगेण जं होइ वज्जणिज्जं" ए ज प्रकारे जाति-मातृवंश, कुळ-पितृवंश रूप-सौंदर्य, व्याधि-कायमी कोढ वगेरे तथा शीघ्रघातक जवरादि रोग ए बधां कारणोने लईने पण कदी एवां

सर्वकालं=सर्वदा 'वज्जणिज्ज' वर्जनीय=त्याज्यं लोके 'होइ' भवति, 'एवं विहं' एवंविधं 'दुहओ' उभयतः= लोकतः शास्त्रतश्च, 'उवयारमइक्कंतं' उपचार मतिक्रान्तं=व्यवहारविरुद्धं 'सच्चंपि' सत्यमपि 'न वत्तव्वं' न वक्तव्यम्।

'अह' अथ 'केरिसयं' कीदृशं तु 'पुणाइं' पुनः 'सच्चं भासियव्वं' सत्यं भाषितव्यम्? आह-'जं तं' यत्तत् 'दव्वेहिं' द्रव्यैः=त्रिकालवर्तिभिः पुद्गलादिभिः 'पज्जवेहिं' पर्यवैः नवपुराणादिभिः क्रमवर्तिभिर्धर्मैः, च=पुनः 'गुणेहिं' गुणैः=सहभूतैर्वर्णादिभि, 'कम्मेहिं' कर्मभि=कृष्यादि व्यापारै,

---

सब कारणों को लेकर भी कभी ऐसे वचन नहीं कहना चाहिये कि तुम्हारा मातृवंश अच्छा नहीं है, पितृवंश तुम्हारा शुद्ध नहीं है, तुममे सौंदर्य नहीं है, तुम व्याधि संपन्न हो-कुष्ठी आदि हो। तात्पर्य-इसका यही हैं कि मातृवंशादि से विहीन तथा कुष्ठादि संपन्न व्यक्तियों से ऐसे वचन नहीं कहना चाहिये। क्यों कि इस प्रकार के वचनों से उन्हें दुःख होता है। (दुहओ उवयारमइक्कंतं) इसी तरह जो वचन लोक तथा आगम, ऐसे दोनों की अपेक्षा व्यवहार विरुद्ध हों (एवंविहं सच्चं पि-न वत्तव्वं) ऐसे वचन सत्य होने पर भी नहीं बोलना चाहिये। (अह-केरिसयं पुणाइं सच्चं तु भासियव्वं) अब सूत्रकार यह कहते है कि साधुजनों को-महाव्रताराधक संयमी जनों को-किस प्रकार के सत्य-वचन बोलना चाहिये-(जं तं) जो वचन (दव्वेहिं) त्रिकालवर्ती पुद्ग-लादि द्रव्यों से (पज्जवेहिं) नवीन पुरानी आदि क्रमवर्ती पर्यायों से (गुणेहिं) द्रव्य के साथ अविनाभाव रूप संबंध रखने वाले वर्णादि गुणों

વચન ન કહેવા જોઈએ કે "તમારો માતૃવંશ સારો નથી, તમારો પિતૃવંશ શુદ્ધ નથી, તમારામાં સૌંદર્ય નથી, તમે વ્યાધિયુક્ત કોઢ વગેરે રોગયુક્ત-છો" તેનું તાત્પર્ય એ છે કે જેનો માતૃવંશ આદિ હીન હોય, કોઢ આદિ રોગોથી જે યુક્ત હોય તેને તેવાં વચનો કહેવાં જોઈએ નહી, કારણ કે તેવાં વચનોથી તેને દુ:ખ થાય છે-"दुहओ अवयारमइक्कंतं" એ જ પ્રમાણે જે વચન લોક તથા આગમ, બંનેની અપેક્ષાએ વ્યવહાર વિરૂદ્ધ હોય "एवं विहं सच्चंपि न वत्तव्वं" એવા વચન સત્ય હોય તો પણ બોલવાં જોઈએ નહીં "अहकेरिसय पुणाइ सच्चंतु भासियव्वं" હવે સૂત્રકાર એ બતાવે છે કે સાધુજનોએ-મહાવ્રતારાધક સંયમીજનોએ કેવા પ્રકારના સત્યવચન બોલવાં જોઈએ "जं तं" જે વચન "दव्वेहिं" ત્રિકાલવર્તી પુદ્ગલાદિ દ્રવ્યોથી "पज्ज-वेहिं" નવી જુની આદિ ક્રમવર્તી પર્યાયોથી "गुणेहि" દ્રવ્યની સાથે અવિ-નાભાવરૂપ-સંબંધ રાખનાર વર્ણાદિ ગુણોથી "कम्मेहिं" કૃષ્યાદિ વ્યાપાર રૂપ

तथा–' बहुविहेहिं सिप्पेहिं ' बहुविधैः शिल्पैः= आचार्याधिगतैः चित्रकर्मादिभिः क्रियातिशेषैः, ' आगमेहि ' आगमैः=सिद्धान्तैश्च युक्तं सत्यं वक्तव्यम् । पुनः कीदृशं सत्यं वक्तव्यम् ? इत्याह—' नामक्खाय निवाय उवसग्गतद्धियसमाससंधि पयहेउजोगियउणाइकिरियाविहाणधाउसरविभत्तजुत्त ' नामाख्यातनिपातो–पसर्गतद्धितसमाससन्धिपदहेतुयौगिकोणादिक्रियाविधानधातुस्वरविभक्तियुक्तं —– तत्र–नाम–व्युत्पन्नमव्युत्पन्नं च द्विविधं, तत्र–व्युत्पन्नं–जिनदत्तजिनदासादि, अव्युत्पन्नं–डित्थडवित्थादि, आख्यातम्=क्रियापदं भूतभविष्यद्वर्तमानरूपम्,

---

से (कम्मेहिं) कृष्यादि व्यापाररूप कर्मों से (बहुविहेहिं सिप्पेहिं) आचार्याधिगत चित्रकर्मादिरूप क्रिया विशेषों से, तथा (आगमेहिय) आगम–सिद्धान्तों–से युक्त हों ऐसे सत्यवचन बोलना चाहिये । (नामक्खायनिवायउवसग्गतद्धियसमाससंधियहेउजोगियउणाइकिरिया विहाणधाउसरविभत्तिवन्नजुत्तं) इसी तरह, नाम, आख्यात, निपात, उपसर्ग, तद्धित, समास, सन्धि, पद, हेतु, योग, उणादिप्रत्यय, क्रिया–विधान, धातु, स्वर, विभक्ति और वर्ण इनसे युक्त हो (तिकल्लं दसविहं पिसच्चं) त्रिकाल विषयवाला जनपद सत्य आदि दस प्रकार का भी सत्यवचन बोलना चाहिये । व्युत्पन्न और अव्युत्पन्न के भेद से नाम दो प्रकार का होता है। जिनदत्त, जिनदास आदि नाम व्युत्पन्न नाम हैं, और डित्थ, डवित्थ आदि नाम अव्युत्पन्न नाम हैं । आख्यात नाम क्रियापद का है । यह भूत भविष्यत् और वर्तमान के भेद से तीन प्रकार का होता है, जैसे–अभवत्, भविष्यति और भवति । अर्थ में

કર્મોથી, " बहुविहेहिं सिप्पेहिं " આચાર્યાધિગત ચિત્રકર્માદિરૂપ ક્રિયાવિશેષોથી, તથા " आगमेहिय " આગમ–સિદ્ધાતોથી યુક્ત હોય એવાં સત્યવચન બોલવાં જોઈએ. " नामक्खायनिवाय—उवसग्गतद्धिय—समाससंधिपयहेउजोगिय—-उणाइ किरियाविहाणधाउसरविभत्तिवन्नजुत्तं " એ જ પ્રમાણે નામ, આખ્યાત, નિપાત, ઉપસર્ગ, તદ્ધિત, સમાસ, સન્ધિ, પદ, હેતુ, યોગ, ઉણાદિ, પ્રત્યય, ક્રિયાવિ-ધાન, ધાતુ, સ્વર, વિભક્તિ, અને વર્ણ એ બધાથી યુક્ત હોય " तिकल्लं दस-विहं पि सच्चं " ત્રિકાળ વિષયવાળાં જનપદ સત્ય આદિ દશ પ્રકારનાં પણ સત્યવચન બોલવાં જોઈએ. વ્યુત્પન્ન અને અવ્યુત્પન્ન ભેદથી નામ બે પ્રકારના હોય છે. જિનદત્ત, જિનદાસ આદિ વ્યુત્પન્ન નામ છે, અને ડિત્થ, ડવિત્થ આદિ અવ્યુત્પન્ન નામ છે. આખ્યાત નામ ક્રિયાપદનુ છે. તે ભૂત ભવિષ્ય અને વર્તમાનના ભેદથી ત્રણ પ્રકારના છે, જેમકે अभवत् (થયો) भविष्यति (થશે)

निपाताः=अर्थद्योतकाः खलु इवादय, उपसर्गाः=प्रपरादयः, तद्धिताः=अपत्याद्यर्थाभिधायकप्रत्ययान्ताः शब्दाः, यथा—नाभेरपत्यंनाभेयः ऋषभः, सिद्धार्थस्यापत्यं सैद्धार्थो महावीरः ' इति । समासः=अनेकपदानामेकीकरणम्, स चाव्ययीभावादिभेदादनेकविधः, सन्धिः=वर्णान्तं संधां नाम्, यथा 'श्रावकोऽत्रे'-त्यादि,

---

विशेषता के द्योतक जो होते हैं वे निपात हैं जैसे खलु इव आदि शब्द, प्र, परा आदि उपसर्ग कहलाते हैं। इनके संबंध से एक ही धातुके अर्थ में भिन्नता आ जाती है, जैसे 'हृ' धातु के साथ जब 'प्र' उपसर्ग का संबंध होता है-तब उसका अर्थ प्रहार हो जाता है, और जब 'आ' का संबंध होता है तब आहार हो जाता है, इत्यादि। अपत्य आदि अर्थ के अभिधायक जो प्रत्यय है वे प्रत्यय वाले शब्द यहां तद्धित शब्द से गृहीत हुए हैं जैसे-"नाभेःअपत्यं पुमान् नाभेयः" यहां नाभि शब्द से तद्धित प्रत्यय होने पर नाभेय बनता है तथा सिद्धार्थ शब्दसे अण् प्रत्यय होने पर 'सैद्धार्थ' बनता है, ये तद्धित शब्द हैं। इसी प्रकार और भी तद्धित शब्द जान लेना चाहिये। परस्पर संबंध रखने वालें दो वा दो से अधिक पदोंकी बीच की विभक्ति का लोप करके मिले हुए अनेक पदों का नाम समास है। समास अव्ययी भाव आदि के भेद से अनेक प्रकार का होता है। संधि शब्द का अर्थ मेल होता है-अर्थात्-वर्णों की

અને ભવતિ (છે). જે શબ્દો અર્થમાં વિશેષતાને દર્શાવે છે તેમને निपात કહે છે. જેમ કે "खलु" "इव" આદિ શબ્દ. "प्र" "परा" આદિ ઉપસર્ગો છે. તેમના ઉપયોગથી એક જ ધાતુના અર્થમાં ફેર પડી જાય છે, જેમકે "हृ" ધાતુ સાથે જ્યારે "प्र" ઉપસર્ગ મૂકવામાં આવે છે ત્યારે તેનો અર્થ "પ્રહાર" થઈ જાય છે, અને જ્યારે તેની આગળ "आ" ઉપસર્ગ મૂકવામાં આવે ત્યારે તેનો અર્થ "આહાર થઈ જાય છે, અપત્ય આદિ અર્થને દર્શાવનાર જે પ્રત્યયો છે તે પ્રત્યયવાળા શબ્દોને અહીં "तद्धित" શબ્દથી કહેલ છે, જેમ કે-" नाभेः अपत्यं पुमान् नाभेयः" "नाभि" શબ્દને તદ્ધિત પ્રત્યય લાગવાથી "नाभेय" શબ્દ બન્યો છે, તથા 'सिद्धार्थ' શબ્દને 'अण्' પ્રત્યય લાગતા "सौद्धार्थ" બને છે, તે તદ્ધિત શબ્દો છે. આ પ્રકારે જ બીજા તદ્ધિત શબ્દો પણ સમજી લેવા પરસ્પર સંબંધ રાખનાર બે કે બેથી વધારે પદોની વચ્ચેની વિભક્તિનો લોપ કરીને જોડાયેલાં અનેક પદોને સમાસ કહે છે અવ્યયી ભાવ આદિ ભેદથી સમાસ અનેક પ્રકારના છે. 'સંધિ' શબ્દનો અર્થ 'જોડાણ' થાય છે-એટલે કે વર્ણોની અતિ

पदं=सुबन्तं तिङन्तं च–यथा–' जिनः भवति ' इत्यादि, हेतुः=साध्यऽऽविनाभूतत्वलक्षणः, यथा–' पर्वतोऽयं वह्निमान् धूमा ' दित्यादि, यौगिकं=योगनिष्पन्नं पदं ' पद्मनाभो नीलकान्तः ' इत्यादि–उणादिः उणादिप्रत्ययनिष्पन्नं पदम्, ' करोति चित्रकार्यमिति कारूः' साध्नोतिस्त्रपर–कार्यमिति साधुः ' इत्यादि. क्रियाविधानं = कृदन्तप्रत्ययनिष्पन्नं ' पाठकः, पाचकः, पाकः ' इत्यादि–रूपं पदम्, धातवः=क्रियावाचिनो भ्वादयः, स्वराः= अकारादयः षड्जादयः,

---

अति समीपता होने पर उनके मेल से जो ध्वनि में विकार होता है उसका नाम संधि है–जैसे ' श्रावकः अत्र ' ऐसी स्थिति में ' श्रावकोऽत्र ' ऐसी संधि होती है, इस संधि का नाम पूर्वरूप संधि है। सुबन्त और तिङन्त को पद कहते हैं, जैसे–' जिनः ' यह सुबन्त पद है और ' भवति ' यह तिङन्त पद है। जो साध्य के साथ अविनाभाव संबंध से बंधा होता है उसका नाम हेतु है, जैसे धूमवाला होने से यह पर्वत अग्निवाला है, यहां पर साध्य–अग्नि है और उसके विना नहीं होने वाला धूम है। योग से जो शब्द निष्पन्न होते हैं वे यौगिक शब्द हैं, जैसे पद्मनाभ, नीलकान्त आदि शब्द। उणादि प्रत्यय से जो शब्द बनते हैं वे उणादि हैं, जैसे–कारु (शिल्पी) साधु आदि शब्द। धातु के अन्त में प्रत्यय लगाकर जो शब्द बनते हैं वे कृदन्त हैं, जैसे–पाठक, पाचक, पाक आदि शब्द। क्रिया के वाचक जो भू आदि शब्द हैं वे धातु कहलाते हैं। दूसरे वर्णो की सहायता के विना जिनका उच्चारण होता है ऐसे

સમીપતા હોય ત્યારે તેમના જોડાણથી ધ્વનિમાં જે વિકાર ઉત્પન્ન થાય છે તેને સન્ધિ કહે છે. જેમ કે " श्रावकः अत्र " ની " श्रावकोऽत्र " એ પ્રકારની સન્ધિ થાય છે, આ સન્ધિને પૂર્વરૂપ સન્ધિ કહે છે. सुबन्त અને तिङन्त ને પદ કહે છે, જેમ કે–' जिनः " તે સુબન્ત પદ છે અને " भवति " તે તિંગન્ત પદ છે, જે સાધ્યની સાથે અવિનાભાવ સબંધથી બંધાયેલ હોય છે. તેને હેતુ કહે છે. જેમ કે ધૂમવાળો હોવાથી આ પર્વત અગ્નિવાળો છે, અહીં સાધ્ય અગ્નિ છે, અને તેના વિના ન પેદા થનાર ધુમાડો છે યોગથી જે શબ્દો બને છે તેમને યૌગિક શબ્દ કહે છે. જેમ કે પદ્મનાભ, નીલકાન્ત, આદિ યૌગિક શબ્દો છે " उणादि " પ્રત્યયથી જે શબ્દો બને છે તે " उणादि " કહેવાય છે, જેમ કે કારુ (શિલ્પી) સાધુ આદિ શબ્દ ધાતુને અન્તે પ્રત્યય લગાડીને જે શબ્દ બને છે તેને કૃદન્ત કહે છે, જેમકે પાઠક, પાચક. પાક આદિ શબ્દ ક્રિયાના વાચક " भू " આદિ જે શબ્દો છે તેમને ધાતુ કહે છે. બીજાં વર્ણોની મદદ વિના જેનું ઉચ્ચારણ થાય છે એવાં 'अ'

वा, विभक्तयः=स्वाद्यस्तिवादयश्च, वर्णाः = कवर्गादयः, एभिर्युक्तं 'तिकल्लं' त्रैकाल्यं=त्रिकालविषयं 'दसविहं पि' दशविधमपि जनपदादिरूपं 'सच्चं' सत्यं=वक्तव्यम्। तथा यत्सत्यं 'जह' यथा=येन प्रकारेण 'भणियं' भणितम् उच्चारितं 'तह य' तथा च=तेनैव प्रकारेण 'कम्मुणा' कर्मणापि—कार्येणापि परिणतं 'होइ' भवति, तत्सत्यं वक्तव्यमिति भावः, तथा—'दुवालसविहा' द्वादशविधा=प्राकृत संस्कृतमागधपिशाचसौरसेनापभ्रंशभेदात् षड्विधा, सा पुनः गद्यपद्यभेदाद् द्विविधेति द्वादशविधा 'भासा' भाषा 'होइ' भवति, तथा— 'वयणं पि य' वचनमपि च 'होइ' भवति 'सोलसविहं' षोडशविधत्वमेवं विज्ञेयम्—

अकार आदि शब्द, अथवा षडज आदि स्वर स्वर कहलाते हैं। 'सु, औ, जस्, आदि विभक्तियां तथा 'तिप्, तस्, झी' आदि प्रत्यय ये सब विभक्तियां कहलाती हैं, और कवर्ग आदि वर्ग कहलाते हैं। (जह-भणियं तह य कम्मुणा होइ) तथा जो सत्य जिस प्रकार से कहा गया है वह सत्य उसी प्रकार से कार्य से भी परिणत हो जाता है ऐसा सत्य बोलना चाहिये। तात्पर्य इसका यह है कि जिस सत्य को, बोलने वाला व्यक्ति कार्य रूप में परिणत कर सके ऐसा सत्य बोलना चाहिये। (दुवालसविहा होइ भासा) भाषा बारह प्रकार की होती है—वह इस प्रकार से—प्राकृत, संस्कृत, मागधी, पैशाची, सौरसेनी और अपभ्रंश। यह छहों प्रकार की भाषा गद्य और पद्य के भेद से बारह प्रकार की हो जाती है। (वयणं पिय होइ सोलसविहं) वचन के सोलह प्रकार होते हैं, वे इस प्रकार से हैं—

કાર આદિ શબ્દ અથવા षड्ज આદિ સ્વરને સ્વર કહે છે, "सु, औ, जस्" આદિ વિભક્તિયો તથા "तिप् तस् झी" આદિ પ્રત્યય એ સૌને વિભક્તિયો કહે છે, (ગુજરાતીમા એ, ને, થી, નો, ની, નું, ના, માં આદિ વિભક્તિના પ્રત્યયો છે) અને 'क ख' આદિ વર્ણો કહેવાય છે "जहभणियं तहय कम्मुणा होइ" તથા જે સત્ય જે પ્રકારે કહેવાયું હોય તે સત્ય તે જ પ્રકારે કાર્યમાં પણ પરિણમતું હોય તેવું સત્ય બોલવું જોઈએ, તેનું તાત્પર્ય એ છે કે જે સત્યને બોલનાર વ્યક્તિ કાર્ય રૂપે અમલમાં મૂકી શકે તેવું સત્ય બોલવું જોઈએ, "दुवालसविहा होइ भासा" ભાષા બાર પ્રકારની હોય છે તે આ પ્રમાણે છે–પ્રાકૃત, સંસ્કૃત, માગધી, પૈશાચી, સૌરસેની, અને અપભ્રંશ આ છ પ્રકારની ભાષા ગદ્ય અને પદ્યના ભેદથી બાર પ્રકારની થઇ જાય છે, "वयणं पिय होइ सोलसविहं" વચનના સોળ પ્રકાર હોય છે, તે નીચે પ્રમાણે છે.

" वयणतियं[3] लिंगतियं[6] कालतियं[9] तह परोक्खपच्चक्खं[10][11]। उवणीयाइ-चउक्कं[15] अज्झत्थं[16] चेव सोलसमं मे "

छाया–वचनत्रिकं लिङ्गत्रिकं कालत्रिकं तथा परोक्ष–प्र-त्यक्षम् । उपनीतादि चतुष्कमध्यात्मं चैव षोडशम् ॥ इति, तत्र–वचनम् = एकवचनं द्विवचनं बहुवचनं च, यथा–' घटः घटौ घटाः ' ' भवति, भवतः भवन्ती ' त्यादि । त्रिलिङ्गम्= स्त्रीपुंनपूंसकरूपम्, यथा–' प्रकृतिः आत्मा, मनः ' इत्यादि । कालत्रिकं भूतभविष्यद् वर्तमानरूपम्, यथा ' अभूद्, भविष्यति, भवति इति । तथा–परोक्षम्=भूता–नद्यतनकालिकमिन्द्रियागोचरम्–यथा–ऋषभो बभूवे ' त्यादि । प्रत्यक्षम्–वर्तमा-

" वयणतियं३ लिंगतियं६ कालतियं९ तहपरोक्ख१० पच्चक्खं ११ ।
उवणीयाइ चउक्कं १५, अज्झत्थं चेव सोलसमम् ॥१ ॥ "

एकवचन, द्विवचन और बहुवचन ३ । पुंल्लिंग, स्त्रीलिंग और नपुं–सकलिंग ६ । भूतकाल, भविष्यत्काल और वर्तमानकाल ९ इस प्रकार ये सब वचन के वचन. लिङ्ग और काल तीन तीन होते हैं, इस तरह वचन के ये नौ भेद हो जाते हैं९ । ' घटः, घटौ, घटाः ' ये घट शब्द के एकवचन, द्विवचन और बहुवचन है ३ । इसी तरह " भवति भवतः भवन्ति " इनमें भी जानना चाहिये ३ । ' प्रकृतिः, आत्मा, मनः, ये शब्द के तीन लिङ्ग हैं, प्रकृतिः स्त्रीलिङ्ग, और मनः, यह नपुंसकलिङ्ग है ६ । अभूत्, भविष्यति भवति ये तीन काल हैं 'अभूत्' यह भूत काल है, ' भविष्यति ' यह भविष्यत् काल है और ' भवति ' यह वर्तमान काल है ९ । भूतकालीन एवं अनद्यतनकालीन वचन इन्द्रिय के अगोचर होता

" वयणतिय ३ लिंगतियं ६ कालतियं ९ तह परोक्ख १० पच्चक्खं ११ ।
उवाणीयाइचउकं १५ अज्झत्थं चेव सोलसमं ॥ १ ॥ "

એકવચન, દ્વિવચન અને બહુવચન ૩, પુલ્લિંગ, સ્ત્રીલિંગ અને નપુંસકલિંગ ૬, ભૂતકાળ, ભવિષ્યકાળ અને વર્તમાનકાળ ૯, આ રીતે તે બધા વચનના પ્રકારો, લિંગ (જાતિ) અને કાળ ત્રણ ત્રણ હોય છે આ રીતે વચનના તે નવ ભેદ થાય છે, " घट, घटौ, घटा· તે 'घट' શબ્દના એક વચન, દ્વિવચન અને બહુવચન છે ૩ એજ પ્રમાણે " भवति भवत· भवन्ति " એ રૂપોમાં પણ સમજવાનું છે ૩, " प्रकृति आत्मा मन· " તે ત્રણે જુદી જુદી જાતિ(લિંગ) ના શબ્દો છે પ્રકૃતિ સ્ત્રીલિંગ છે આત્મા પુલ્લિંગ છે અને મન નપુંસકલિંગ છે ૬, વર્તમાન, ભૂત અને ભવિષ્ય એ ત્રણ કાળ છે 'अभूत् " તે ભૂતકાળ છે, " भविष्यति " તે ભવિષ્યકાળ છે અને " भवति " તે વર્તમાનકાળ છે ૯, ભૂતકાલીક અને ભવિષ્યકાલીન વચનો ઇન્દ્રિયને અગોચર

नकालिकमिन्द्रियगोचरम्–यथा–' मुनिरयं शास्त्रं पठतीत्यादि । तथा–उपनीतादि चतुष्कं वचनम् , तत्र–उपनीतवचनम्=गुणारोपणवचनम् , यथा–' रूपवानयं मनस्वी ' त्यादि । अपनीतवचनं=गुणापनयनवचनम् , यथा–' दुःशीलोऽयं दुर्वचनोऽय ' मित्यादि । उपनीतापनीतवचनम्=कंचिद् गुणमारोप्य कोऽपि गुणोऽपनीयते येन वचनेन तदुपनीतापनीतवचनम् , यथा–' रूपवानयं किन्तु दुःशीलः ' इत्यादि । एतद्विपर्ययेणअपनीतोपनीतवचनमपि भवति । येन वचनेन पूर्वं कमपि गुणमपनीय पश्चादपर कोऽपि गुण उपनीयते तदपनीतोपनीतवचनम् , यथा–' दुःशीलोऽयं किन्तुरूपवा' नित्यादि । तथा–षोडशं वचनम्–' अज्झत्थं' अध्या-

---

है, जैसे " ऋषभो बभूव " यह वाक्य परोक्ष अर्थको विषय करनेवाला होने से परोक्ष माना जाता है १० । जो वाक्य वर्तमान काल को विषय करता है वह प्रत्यक्ष वाक्य माना जाता है जैसे "मुनिरयं शास्त्रं पठति" यह प्रत्यक्ष वाक्य है ११। उपनीतवचन १२, अपनीतअवचन १३, उपनीतापनीतवचन १४ और अपनीतोपनीतवचन १५, इस प्रकार ये उपनीतादि चार हैं । इनमें जो वचन गुणों का आरोपण करता है वह उपनीत वचन है–जैसे " यह मनस्वी अच्छे रूप वाला है १ । जो वचन गुणों का अपनयन करता है वह अपनीत वचन है–जैसे यह दुःशील है २। जो वचन किसीगुणको आरोपित करके किसी गुण का अपनयन करता है वह उपनीतापनीतवचन है, जैसे यह रूपवाला तो है परन्तु दुःशील है ३ । इसी तरह जो किसी गुण का अपनयन करके गुण का आरोपक होता है वह वह अपनीतोपनीतवचन है; जैसे यह दुःशील

હોય છે, જેમકે " ऋषभो बभूव " " ઋષભ થઈ ગયો " આ વાકય પરોક્ષ અર્થને વિષય કરનારૂં હોવાથી પરોક્ષ મનાય છે ૧૦ જે વાકય વર્તમાન કાળને વિષય કરે છે તે પ્રત્યક્ષ મનાય છે " મુનિ આ શાસ્ત્ર વાંચે છે ૧૧ (૧૨) ઉપનીતવચન, (૧૩) અપનીતવચન, (૧૪) ઉપનીતાપનીતવચન અને (૧૫) અપનીતોપનીતવચન એ રીતે ઉપનીતાદિ ચાર વચન છે (૧) તેમાં ગુણોનું આરોપણ કરનાર વચનને ઉપનીત વચન કહે છે જેમ કે " આ મનસ્વી સારા રૂપવાળો છે " (૨) જે વચન ગુણોનું અપનયન કરે છે તે અપનીત વચન છે, જેમ કે " આ દુઃશીલ છે " (૩) જે વચન કોઈ ગુણનું આરોપણ કરીને કોઈ ગુણનું અપનયન કરે છે તે ઉપનીતાપનીત વચન છે, જેમકે " તે રૂપાળો છે પણ દુઃશીલ છે " એ જ રીતે જે વાકય કોઈ ગુણનું અપનયન કરીને કોઈ ગુણનું આરોપણ કરતું હોય તે અપનીતોપનીત વચન છે

त्मम्=आत्मानमधिकृत्य यद्वचनं तदध्यात्मवचनम् यथा – ज्ञानस्वरूपोऽयमात्मे-त्यादि । इति षोडशविधं वचनम् । एवम्=उक्तरूपं सत्यम् 'अरहन्तमणुण्णायं' अर्हदनुज्ञातम्=तीर्थङ्करोपदिष्टं 'समिक्खियं' समीक्षितं=पर्यालोचितं सदेव 'संजएण' संयतेन=साधुना 'काले य, काले च अवसरे समागते एव 'वत्तव्वं' वक्तव्यम् । भगवदाज्ञाबहिर्भूतं स्वयमपर्यालोचितं वचनं साधुनाऽवसरं विना न वक्तव्यमिति भावः । अथोपसंहारमाह=' इमं च' इत्यादि—

'इमं च' इदं च=पूर्वैरनन्ततीर्थकरगणधरैः प्रोक्तमिदं=प्रत्यक्षं 'पावयणं' प्रवचनम् , 'अलिय-पिसुणफरुस-कडुय-चवलवयणपरिरक्खणट्ठयाए' अलीकपि-शुन-परुष-कटुक-चपलवचनपरिरक्षणार्थं-तत्र अलीकम् असद्भूतार्थं पिशुनं=पर-

तो है परन्तु अच्छे रूप वाला है ४। वचन का सोलहवां भेद यह है, जो अध्यात्म होता है, जो आत्मा को अधिकृत करके बोला जाता है जैसे "यह आतमा ज्ञान स्वरूप है" इत्यादि १६ ।(एवं अरहंत मणुण्णायं) इस प्रकार इन सोलह तरह के वचनों को बोलने में तीर्थंकर प्रभु की आज्ञा है । और जो वचन (समिक्खियं) पर्यालोचित हैं अर्थात् अच्छी तरह से विचार करके निकाले गयेहो ऐसे वचन (संजएण) साधु को (कालम्मि) अवसर आने पर (वत्तव्वं) बोलने चाहिये, परन्तु जिन वचनों को बोलने की प्रभु की आज्ञा नहीं है और जो अपर्यालोचित हों ऐसे वचन साधु को नहीं बोलना चाहिये । अब इसका उपसंहार करते हुए सूत्रकार कहतें हैं-(इमं च पावयणं) पूर्वकालिक अनंत तीर्थ-करों के द्वारा कहा हुआ यह प्रत्यक्षीभूत प्रवचन (अलिय-पिसुण-फरुस-कडुय-चवलवयणपरिरक्खणट्ठयाए) अलीक, पिशुन, परुष,

જેમ કે 'આ કુશીલ તો છે પણ સુંદર રૂપવાળો છે" (૧૬) વચનનો સોળમો ભેદ તે છે કે જે અધ્યાત્મ હોય છે, જે આત્માને ઉદ્દેશીને બોલાય છે. જેમ કે "આ આત્મા જ્ઞાનસ્વરૂપ છે" ઇત્યાદિ, "एवं अरहंत मणुण्णायं" આ રીતે તે સોળ પ્રકારના વચનો બોલવાની તીર્થંકર પ્રભુની આજ્ઞા છે. અને જે વચન "समिक्खियं" પર્યાલોચિત છે-સારી રીતે વિચાર કરીને ઉચ્ચા-રાયા હોય, એવાં વચન "सजएण" સાધુએ "कालम्मि" અવસર આવતા "वत्तव्वं" બોલવા જોઈએ, પણ જે વચનો બોલવાની ભગવાનની આજ્ઞા નથી, અને જે અપર્યાલોચિત હોય તેવાં વચનો સાધુએ બોલવા જોઈએ નહીં. હવે તેનો ઉપસંહાર કરતા સૂત્રકાર કહે છે — 'इमंच पावयणं" પૂર્વકાલીન અનંત તીર્થંકરો દ્વારા કહેવાયેલ આ પ્રત્યક્ષીભૂત પ્રવચન, "अलिय-पिसुण-फरुस-कडुय-चवल-वयण-परिरक्खणट्ठयाए" અલીક-અસત્ય, પિશુન,પરુષ-

दोषसूचकं,परुषं=परमर्मोद्धाटकं,कटुकम्=उद्‌वेगजनकम् .चपलम्=असमीक्ष्य प्रोक्तं यद् वचनं तस्मात्-मुनीनां परिरक्षणा म् , अर्थात्-मुनिभिरीदृशं वचनं न वाच्यमिति हेतोः 'भगवया' भगवता 'सुकहियं' सुकथितम् । कथम्भूतं प्रवचनं सुकथितम् ? इत्याह-'अत्तहियं' आत्महितम्-आत्मनो हितकारकम् , 'पेच्चाभावियं' प्रेत्य भाविकं=जन्मान्तरेऽपि शुभफलदायकम् , अतएव 'आगमेसिभद्दं' आगमिष्यद् भद्रम्=भविष्यत्कल्याणकारकम् , तथा-'सुद्धं' शुद्धं=निर्दोषत्वात् , पुनः 'नेयाउयं' नैयायिकं=न्याययुक्तम् , वीतरागभाषितत्वात् , तथा-'अकुडिलं' अकुटिलम्=ऋजुभावजनकत्वात् , 'अणुत्तरं' अनुत्तरम्=सर्वश्रेष्ठत्वात् , तथा-सव्वदुक्खपावाणं' सर्वदुःखपापानां=सकलदुःखजनकज्ञानावरणीयाद्यष्टविधकर्मणां 'विउसमणं' व्युपशमनम्=सर्वथाप्रशमनकारकम् । एतादृशं प्रवचनं भगवता कथितमित्यर्थः ॥ सू-२ ॥

कटुक, चपल, वचनों से मुनिजकों की रक्षा होती रहे इस अभिप्राय से (भगवया) भगवान् ने (सुकहियं) अच्छी तरह से प्रतिपादित किया है। असद्भूत अर्थ को कहने वाला वचन अलीक, पर दोष सूचकवचन-पिशुन. पर के मर्मका उद्धाटक वचन परुष, उद्वेग को पैदा करने वाला वचन कटुक, और बिना विचारे बोला गया वचन चपल कहलाता है। यह प्रवचन (अत्तहियं) आत्मा का हितकारक है तथा (पेचाभावियं) जन्मान्तर में भी शुभफल का देनेवाला है। (आगमेसिभद्दं) इसीलिये इसे भविष्यत् में कल्याणकारक कहा गया है। (सुद्धं) इस प्रवचन में किसी भी प्रकार का पूर्वापरविरोधरूप दोष नहीं होने से ये शुद्ध हैं। (नेयाउयं) यह वीतराग द्वारा भाषित होने के कारण न्याययुक्त है। तथा (अकुडिलं) इससे ऋजुभाव उत्पन्न हो जाता है इसलिये यह अकुटिल है। (अणुत्तरं) इस के जैसा उत्तम और कोई

કઠોર, કડવાં, ચપલ વચનોથી મુનિજનોનિ રક્ષા થયા કરે તે ઉદ્દેશથી "भगवया" ભગવાને "सुकहियं" સારી રીતે પ્રતિપાદન કર્યું છે અસદ્‌ભૂત અર્થને કહેનારૂં વચન અલીક, પરદોષ સૂચક વચન પિશુન, બીજાનાં મર્મને ખુલ્લો પાડતુ વચન પરુષ, ઉદ્વેગ પેદા કરનાર વચન કટુક અને વિચાર્યા વિના બોલાયેલ વચન ચપલ કહેવાય છે આ પ્રવચન "अत्तहियं" આત્માને માટે હિતકારક છે તથા "पेच्चाभावियं" જન્માંતરમાં પણ શુભ ફળ દેનારૂ છે. "आगमेसिभद्दं" તે કારણે તેને ભવિષ્યમાં કલ્યાણકારક દર્શાવ્યું છે. "सुद्धं" આ પ્રવચનમાં કોઈ પણ પ્રકારે પૂર્વાપરવિરોધરૂપ દોષ નહીં હોવાથી તે શુદ્ધ જે. "नेयाउयं" તે વીતરાગ દ્વારા કહેવાયેલ હોવાથી ન્યાયયુક્ત છે. તથા "अकुडिलं" તેનાથી ઋજુભાવ-સરળતા-ઉત્પન્ન થાય છે તેથી તે અકુટિલ છે, "अणुत्तरं" તેનાજેવુ શ્રેષ્ઠ બીજું કઈ પણ નથી તેથી તે અનુત્તર છે.

नहीं है इसलिये यह अनुत्तर है। और यह (सव्वदुक्खपावाणं विउसमणं) अनेक विध दुःखों के देने वाले ज्ञानावरणीयादि अष्टप्रकार के कर्मों का सर्वथा उपशम करने वाला है। ऐसे विशेषणों से विशिष्ट इस प्रवचन को भगवान ने कहा है।

भावार्थ—सूत्रकार ने इस सूत्र द्वारा यह प्रकट किया हैं कि सत्य होने पर भी किस प्रकार के वचन नहीं बोलना चाहिये और किस प्रकार के वचन बोलना चाहिये। उन्हों ने कहाहै कि जिन सत्यवचनों से संयम में बाधा आवें वे वचन कभी नहीं कहना चाहिये, क्यों कि ऐसे वचन सत्य होने पर भी असत्य के जैसे होने से हेय त्याज्य हैं। जिन सत्य वचनों से हिंसा हो जावे, पाप में जीवों की प्रवृत्ति हो जावे, चारित्र से भ्रष्ट हो जावे, अथवा अपने चारित्र में किसीप्रकार की बाधा उपस्थित हो जावे, राजकथा आदि का प्रसंग जिनमें होवे, जो प्रयोजन शून्य हों, जिनसे कलह उत्पन्न हो जावे, न्यायानुकूल जो न हों, अपवाद विवाद से जो युक्त हो, पर की विडम्बनाकारक हो, जिनके बोलने में अपनी आत्मप्रशंसा भरी हो, अथवा किसी प्रकार का आवेश भाव झलकता हो, सुनने वालो को जिनमें अपनी धृष्टता प्रकाशित

અને તે "सव्वदुक्खपावाणं विउसमणं" અનેક પ્રકારનાં દુઃખો દેનાર જ્ઞાનાવરણી આદિ આઠ પ્રકારના કર્મોનો સર્વથા ઉપશમ કરનાર છે, એવાં વિશેષણોથી યુક્ત આ પ્રવચન ભગવાન મહાવીર દ્વારા કથિત છે.

ભાવાર્થ.-સૂત્રકારે આ સૂત્ર દ્વારા એ સ્પષ્ટ કર્યું છે કે સત્ય હોય તો પણ કેવા પ્રકારનાં વચન બોલવાં જોઈએ, તેમણે એ બતાવ્યુ છે કે જે સત્ય-વચનોથી સંયમમાં બાધા નડે, તેવા વચનો કદી પણ ન બોલવાં જોઈએ; કારણ કે તેવાં વચનો સત્ય હોય તો પણ અસત્ય જેવાં હોવાથી હેય છે. જે સત્યવચનોથી હિંસા થઈ જાય , જીવોની પાપમાં પ્રવૃત્તિ થાય, ચારિત્રમાં ભ્રષ્ટતા આવે, અથવા પોતાના ચારિત્રમાં કોઈ પ્રકારની બાધા ઉપસ્થિત થાય, જેમાં રાજકથા આદિનુ વર્ણન આવે, જે પ્રયોજન વિનાનું હોય, જેનાથી કલહ પેદા થાય, જે ન્યાયાનુકૂળ ન હોય, જે અપવાદ વિવાદથી યુક્ત, પારકાની વિડંબના કરનાર હોય, જે બોલવામા આત્મશ્લાઘા થતી હોય, અથવા કોઇ પ્રકારનો આવેશ ભાવ જણાતો હોય, જેમા સાંભળનાર આગળ પોતાની

होती हो, जिनके बोलने में लज्जा की भी लाज जाती हो, लोक में जो निन्दित माने जाते हों, पर के मर्म को जो छेदते हों, दुर्दृष्ट, दुःश्रुत एवं जो अज्ञात हों ऐसे सत्यवचन भी नहीं बोलना चाहिये। तथा भाषासमिति के विरोधी होने से ऐसे वचन भी नहीं कहना चाहिये कि जो दूसरों की निंदा कारक हों, कर्णकटु तथा दुःखप्रद हों, जैसे-तू महामूर्ख है, मेधावी नहीं है, धर्मप्रिय नहीं है इत्यादि। तथा जो द्रव्य जैसा है, जैसे आकार का है, जिस क्षेत्र काल आदि से संबंध रखता है, ऐसा ही उसका प्रतिपादन करनेवाला अविसंवादी वचन जो होता है वह वचन द्रव्य से युक्त कहलाता है, इसी प्रकार उस द्रव्य में जो पर्यायें हो रही हों, अथवा- जिस पर्याय से वह युक्त हो-उस पर्याय का प्रदर्शक वचन पर्याय से युक्त वचन कहलाता है। गुणों की अपेक्षा को लेकर जो वचन बोला जाता है वह गुण से युक्त वचन कहलाता है। कृष्यादि व्यापारों को लेकर जो वचन कहे जाते हैं वे कर्मयुक्त वचन कहलाते हैं। "ये शिल्पी है ये चित्रकार हैं" इत्यादि जो क्रियाविशेषों को लेकर जो वचन कहे जाते हैं वे बहुविधशिल्पयुक्त वचन कहलाते हैं। तथा सिद्धान्त के अनुसार जो वचन कहे जाते हैं वे सिद्धान्तयुक्त वचन कहलाते हैं। इसी तरह नाम आदि से युक्त जो

धृष्टतानुं प्रदर्शन थतुं होय, जे बोलवामा लाज लोपाती होय, जगतमा जे निन्दापात्र मनातां होय, बीजाना मर्मने जे छेदता होय, दुर्दृष्ट, दुश्रुत, अने जे अज्ञात होय एवां सत्यवचन पण बोलवां जोईए नहीं तथा भाषासमितिना विरोधी होवाथी एवां वचनो पण न बोलवां जोईए के जे बीजानी निन्दाकारक होय, कर्णकटु तथा दुःखप्रद होय जेम के "तुं महा-मूर्ख छे, मेधावी नथी, धर्मप्रिय नथी" इत्यादि, तथा जे द्रव्य जेवुं छे जेवा आकारनुं छे, क्षेत्र काळ आदि साथे संबध राखे छे, एवुं ज तेनुं प्रतिपादन करनारां अविसंवादी जे वचनो होय छे ते वचनो द्रव्ययुक्त कहेवाय छे ए ज प्रमाणे ते द्रव्यमां जे पर्यायो थई रही छे, अथवा जे पर्यायथी ते युक्त होय, ते पर्यायने दर्शावनारुं वचन पर्याययुक्त वचन कहेवाय छे. गुणोनी अपेक्षाए जे वचन बोलाय छे ने गुणयुक्त वचन कहेवाय छे. कृष्यादि व्यापारोनी अपेक्षाए जे वचन बोलाय छे ते कर्मयुक्त वचन कहेवाय छे. "तेओ शिल्पी छे, तेओ चित्रकार छे" इत्यादि क्रिया-विशेषोनी अपेक्षाए जे वचन कहेवाय छे ते बहुविध शिल्पयुक्त वचन कहेवाय छे. ए ज प्रमाणे नाम आदिथी युक्त जे वचन कहेवाय छे ते

सम्प्रति सत्यवचनस्य पञ्च भावनाः प्रतिपादयन् पूर्वं समितियोगलक्षणां प्रथमां भावनामाह-' तस्स इमा ' इत्यादि—

मूलम्—तस्स इमा पंच भावणाओ बीयस्स वयस्स अलियवयण-वेरमण-परिरक्खणट्ठयाए । पढमं सोऊण संवरट्ठं परमट्ठं सुट्ठु जाणिऊण न वेगियं, न तुरियं, न चवलं न कडुयं, न फरुसं, न साहसं, न य परस्स पीलाकरं सावज्जं सच्चं च मियं च गाहगं च सुद्धं संगयमकाहलं च समीक्खियं संजएण कालम्मिय वत्तव्वं । एवं अणुवीइ-समिइजोगेण भाविओ भवइ अंतरप्पा संजयकरचरणनयण-वयणो सूरो सच्चज्जवसंपण्णो ॥ सू०४ ॥

टीका—' तस्स ' तस्य प्रसिद्धस्य ' बीयस्स वयस्स ' द्वितीयस्य व्रतस्य इमाः=वक्ष्यमाणाः पञ्च ' भावणाओ ' भावनाः ' अलियवयणवेरमणपरिरक्खण-

---

वचन कहेजाते हैं वे नामादियुक्त वचन कहलाते हैं। इस प्रकार के ये सत्यवचन संयम आदि के बाधक नहीं होते है। ऐसे वचन सत्यव्रती बोल सकता हैं। तथा वह प्राकृत आदि भेद से बारह प्रकार की भाषा और एकवचन आदि के भेद से सोलह प्रकार का वचन भी बोल सकता है। इस प्रकार के वचन बोलने में प्रभु की आज्ञा है। ऐसे वचन बोलने में किसी भी जीव को बाधा नहीं पहुँचती है ॥ सू०३ ॥

अब सूत्रकार सत्यवचन की पांच भावनाओं को कहने के अभिप्राय से सर्वप्रथम वे अनुविचिन्त्य समिति नाम की प्रथम भावना

નામાદિયુક્ત વચન કહેવાય છે, આ પ્રકારનાં તે સત્યવચનો સંયમ આદિમાં બાધક થતા નથી. એવા વચન સત્યવ્રતી બોલી શકે છે. તથા તે પ્રાકૃત આદિ ભેદથી બાર પ્રકારની ભાષા અને એક વચન આદિ ભેદથી સોળ પ્રકારના વચન પણ બોલી શકે છે, આ પ્રકારના વચન બોલવાની પ્રભુની આજ્ઞા છે. એવાં વચનો બોલવાથી કોઇપણ જીવને બાધા પહોંચતી નથી ॥ સૂ. ૩ ॥

હવે સુત્રકાર સત્યવચનની પાંચ ભાવનાઓ દર્શાવવાને માટે સૌથી પહેલાં તેઓ અનુવિચિન્ત્ય સમિતિ નામની પહેલી ભાવનાનું વર્ણન કરે છે-

ट्ठयाए ' अलीकवचनविरमणपरिरक्षणार्थम्—मृषावादविरमणव्रतपरिरक्षणार्थं सन्ति। तासु ' पढमं ' प्रथमां समितियोगलक्षणां भावनामाह—' सोऊण ' श्रुत्वा=सुगुरु समीपे समाकर्ण्य, तथा—' परमट्ठं ' परमार्थं—परमतत्त्वं प्रथमभावनारहस्यं ' संवरट्ठं ' संवरार्थं—संवरस्य—मृषावादविरतिलक्षणस्य अर्थं=प्रयोजनं—मोक्षलक्षणम्, अथवा-संवरः=कर्मनिरोधएव अर्थः प्रयोजनं यस्य स तं तथोक्तम्, यद्वा—संवरस्य=प्रस्तुतसंवराध्ययनस्य अर्थं=वाच्यं ' सुट्ठु ' सुष्ठु—सम्यक् ' जाणिऊण ' ज्ञात्वा न=नैव 'वेगियं' वेगितं=नदीप्रवाह वद्वेगयुक्तं वचनं वक्तव्यमित्यग्रेण सम्बन्धः, तथा—न नैव ' तुरियं ' त्वरितं—वात्यावत् त्वरायुक्तं वचनचाञ्चल्यात्, न=नैव

कहते हैं—' तस्स इमा ' इत्यादि०।

टीकार्थ—(तस्स बीयस्स वयस्स इमा पंच भावणाओ) उस प्रसिद्ध द्वितीय महाव्रत की ये वक्ष्यमाण पांच भावनाएँ (अलियवयणवेरमण परिरक्खणट्ठयाए) उस अलीकवचन विरमणरूप सत्यव्रत की रक्षा के लिये हैं। उनमें (पढमं) प्रथम भावना इस प्रकार है-(परमट्ठं संवरट्ठं सोऊण) सुगुरु के समीप प्रथम भावना के रहस्य को कि जो रहस्य मृषावाद विरतिरूप प्रयोजन वाला है, अथवा कर्मनिरोधरूप संवर ही जिसका प्रयोजन है, अथवा इस प्रस्तुत संवराध्ययन के वाच्यार्थ को सुनकरके (सुट्ठु जाणिऊण) अच्छी तरह जान करके (न वेगियं) नदी के प्रवाह की तरह वेगयुक्त वचन साधु को नहीं बोलना चाहिये इस प्रकार "वत्तव्वं" शब्द का संबंध सब के साथ लगा लेना चाहिये। (न तुरियं) वात्या—वधूरे—की तरह त्वरायुक्त वचन चंचलता से युक्त

" तस्स इमा " ઈત્યાદિ—

ટીકાર્થ—" तस्स वीयस्स वयस्स इमा पंच भावणाओ " તે પ્રસિદ્ધ બીજા મહાવ્રતની આ વક્ષ્યમાણ પાંચ ભાવનાઓ " अलियवयणवेरमणपरिरक्खणट्टयाए " તે અલીક-અસત્ય-વિરમણરૂપ સત્યવ્રતની પરિરક્ષાને માટે છે. તેમાં " पढमं " પહેલી ભાવના આ પ્રમાણે છે-" परमट्ठं संवरट्ठं सोऊण " સદ્‌ગુરુ પાસે પહેલી ભાવનાનું રહસ્ય કે જે મૃષાવાદ વિરતિરૂપ પ્રયોજનવાળું છે, અથવા કર્મ નિરોધરૂપ સંવર જ જેનું પ્રયોજન છે, અથવા આ પ્રસ્તુત સંવરાધ્યયનનો વાચ્યાર્થ સાંભળીને ' सुट्ठुजाणिऊण " સારી રીતે જાણીને " न वेगियं " નદીના પ્રવાહની જેમ વેગયુક્ત વચન સાધુએ બોલવાં જોઈએ નહીં આ રીતે " વક્તવ્ય " શબ્દનો સંબંધ બધા સાથે જોડી લેવો " न तुरियं " વાત્યા—વધુરા—ની જેવું ત્વરાયુક્ત " न चवलं " ઘોડાની ગતિ

'चवलं' चपलं=हयगमनवच्चपलभावसमन्वितम्, न=नैव 'कडुयं' निम्बवत् कटुकम् अर्थतः, न=नैव 'फरुसं' परुषं-कठोरं-पाषाणवत्कठोरभावयुक्तं, तथा न=नैव 'साहसम्'- उन्मत्तवत् अविचारितं, तथा-'न य' न च 'परस्स' परस्य पीडाकरं=दुःखजनकं 'सावज्जं' सावद्यं=सपाप वचन वक्तव्यम्। उक्त-दोषदुष्टं वचनं न वक्तव्यमित्यर्थः। तर्हि कीदृशं वचनं वक्तव्यम्? इत्याह-'सच्चं च=सद्भूतार्थत्वात् 'हियं च-परिणामसुखजनकत्वात्, 'मियं' मितं च, परि-मिताक्षरत्वात्, तथा-'गाहगं' ग्राहकं=श्रोतुरर्थप्रतीतिजनकत्वात्, प्रीतिजनक-त्वाच्च, 'सुद्धं' शुद्धं-वेगितत्वादिदोषरहितत्वात, तथा-'संगयं' संगतम्=युक्तियुक्तत्वात्, 'अकाहलं' अकाहलं=मन्मनाक्षररहितत्वात्, च=पुनः 'समि-क्खियं' समीक्षित=पूर्वं बुद्धया पर्यालोचितत्वात्, एतादृशं वचनं 'संजएण'

(न चवले) घोड़े के गमन की तरह चपलभाव से युक्त (न कडुयं) नीम की तरह अर्थतः कटुक, इसी तरह (फरुसं) पाषाण की तरह कठोर (न साहसं) उन्मत्त के वचन की तरह अविचारित, और (न य परस्स पीलाकरं) पर को पीडाजनक (सावज्जा) सावद्य-पापयुक्त ऐसे वचन नहीं बोलना चाहिये। किन्तु जो वचन (सच्चं च) सद्भूत अर्थ को विषय करने वाले होने से सत्य हों, (हियं च) परिणाम में सुखजनक होने से हितकारक हों, (मियं च) परिमित अक्षरों से युक्त होने से जो मित हों, (गाहगं च) श्रोता को अर्थ की प्रतीति एवं प्रीति के कराने वाले होने से ग्राहक हों, (सुद्धं) वेगित्वादि दोषों से रहित होने से शुद्ध हों, तथा (संगयं) संगतयुक्ति युक्त हों, (अकाहलं) अकाहल हो मन्मन अक्षर से रहित हों, (समिक्खियं) समीक्षित हों-बुद्धि से पहिले जिनका विचार अच्छी तरह कर लिया

જેવું ચપળભાવ યુક્ત વચન, "न कडुयं" નીમનાં જેવું એટલે કે કટુક, એ જ રીતે "फरुसं" પથ્થર જેવું કઠોર "न साहसं" ઉન્મત્તનાં વચન જેવું અવિચારી, અને "न य परस्स पीलाकरं" બીજાને પીડાજનક "सावज्जा" સાવદ્ય-પાપયુક્ત વચન બોલવાં જોઈએ નહીં. પણ જે વચન "सच्चं च" યથાર્થ અર્થને વિષય કરનાર હોવાથી સત્ય હોય, "हियं च" પરિણામે સુખજનક હોવાથી હિતકારક હોય "मियं च" પરિમિત અક્ષરોવાળું હોવાથી જે મિત હોય, "गाहगं च" શ્રોતાને અર્થની પ્રતીતિ અને પ્રીતિ કરાવનાર હોવાથી ગ્રાહ્ય હોય, "सुद्धं" વેગિત્વ આદિ દોષરહિત હોવાથી શુદ્ધ હોય, તથા "संगयं" સંગત-યુક્તિયુક્ત હોય, "अकाहलं" અકાહલ હોય-મન્મન અક્ષરો વિનાનું હોય, "समिक्खियं" સમીક્ષિત હોય-બુદ્ધિથી જેનો પહેલાં

संयतेन=साधुना 'कालम्मि य' काले च=अवसरे 'वत्तव्वं' वक्तव्यम्। एवम्=अनेन प्रकारेण 'अणुवीइ समिइजोगेण' अनुविचित्यसमितियोगेन अनुविचित्य=पर्यालोच्य या समितियोगेन=भाषारूपासमितिः, तस्या योगेन 'भाविओ' भावितःअन्तरप्पा' अन्तरात्मा=जीवः-'संजयकरचरणनयणवयणो' संयतकरचरणनयनवदनः संयतं = सम्यग्यतनायुक्त करचरणनयनवदनं यस्य स तथोक्तःसन् समाहितेन्द्रियः सन्नित्यर्थः, 'सूरो' शूरः=पराक्रमशाली, 'सच्चज्जवसंपन्नो' सत्यार्जवसंपन्नः-सत्यम्=अमृषा आर्जवम्=ऋजुता, ताभ्यां संपन्नो-युक्तो भवति। इत्येषाप्रथमा भावना ॥ सू-४ ॥

गया हो ऐसे हों, ऐसे ही वचन साधु को अवसर आने पर-जब तब नहीं किन्तु बोलने का जब समय उपस्थित हो तब बोलना चाहिये। (एवं) इस प्रकार (अणुवीइसमिइ जोगेण) अनुविचिन्त्य भाषासमिति के योग से-विचार कर बोलने रूप भाषासमिति के संबंध से (भाविओ अंतरप्पा) भावित हुआ जीव (संजयकरचरणनयणवयणो) अच्छी तरह यतना से युक्त कर-हाथ, चरण-पैर, नयन-नेत्र एवं वदन-मुख वाला बनकर, अर्थात् समाहित इन्द्रियों वाला होकर (सूरो) पराक्रमशाली बन जाता है, अर्थात् सत्यमहाव्रत की आराधना में आये हुए उपसर्गों और परीषहों को जीतने में शक्तिशाली हो जाता है। तथा (सच्चज्जवसंपन्नो भवइ) सत्य और ऋजुता से संपन्न बन जाता है।

भावार्थ—अहिंसा व्रत की तरह सत्यव्रत की भी पांच भावनाएँ हैं। उनमें पहिली भावना अनुविचिन्त्य भाषा समिति है। विचार-

---

સારી રીતે વિચાર કરી લીધો હોય, એવાં વચનો જ સાધુએ અવસરે-ગમે ત્યારે નહીં, પણ બોલવાનો સમય ઉપસ્થિત થાય ત્યારે બોલવાં જોઈએ. "एवं" આ પ્રકારે "अणुवीइ समिइ जोगेण" અનુવિચિન્ત્ય ભાષા સમિતિના યોગથી -વિચાર કરીને બોલવારૂપ ભાષા સમિતિના સંબંધથી "भाविओ अंतरप्पा" ભાવિત બનેલ જીવ "संजयकरचरणनयणवयणो" સારી રીતે યતનાયુક્ત હાથ, પગ, નેત્ર અને મુખવાળા થઈને, અથવા સમાહિત ઈન્દ્રિયોવાળા થઈને "सूरो" પરાક્રમશાળી બની જાય છે એટલે કે સત્ય મહાવ્રતની આરાધનામાં નડેલ ઉપસર્ગો અને પરીષહોને જીતવાને સમર્થ બની જાય છે, તથા "सच्चज्जवसंपन्नो भवइ" સત્ય અને ઋજુતાથી યુક્ત બની જાય છે.

ભાવાર્થ—અહિંસાવ્રતની જેમ સત્યવ્રતની પણ પાંચ ભાવનાઓ છે. તેમાં પહેલી ભાવના અનુવિચિન્ત્ય ભાષાસમિતિ છે. વિચારપૂર્વક બોલવું તેને અનુ-

अथ क्रोधनिग्रहरूपां द्वितीयां भावनामाह--'बीयं कोहो' इत्यादि

मूलम्--बीयं कोहो ण सेवियव्वो, कुद्धो चंडिक्किओ माणुसो अलियं भणेज्ज, पिसुणं भणेज्ज, फरुसं भणेज्ज, अलियं पिसुणं फरुसं भणेज्ज, कलहं करेज्ज, वेरं करेज्ज, विगहं करेज्ज, कलहं वेरं विगहं करेज्ज, सच्चं हणेज्ज, सीलं हणेज्ज, विणयं हणेज्ज सच्चं सीलं विणयं हणेज्ज, वेसो भवेज्ज, वत्थुं भवेज्ज, गम्मो भवेज्ज, वेसो वत्थुं गम्मो भवेज्ज, एवं अन्नं च एवमाइयं

पूर्वक बोलना इसका नाम अणुविचिन्त्य भाषण है। यह भाषा समिति-रूप है। सत्य में और भाषा समिति में कुछ भेद कहा गया है वह यह है कि हरएक के साथ संभाषण व्यवहार में विवेक रखना तो भाषा समिति है। और अपने समशील साधु पुरुषो के साथ संभाषण व्यवहार में हित मित और यथार्थवचन का उपयोग करना सत्यव्रतरूप यतिधर्म है। इस भावना से इस सत्यव्रत की स्थिरता होती है। बोलते समय साधु को वेग से, त्वरा से और चपलता से नहीं बोलना चाहिये। और न विना विचारे ही बोलना चाहिये। बोलने का जब समय आवे तब ही सत्य, हित, मित वचन बोलना चाहिये। अविचारित और अस्पष्ट वचन नहीं बोलना चाहिये। इस तरह की वचन प्रवृत्ति में सावधान बना हुआ साधु सत्यव्रत को सुशोभित करता हुआ प्रत्येक अपनी कर चरण आदि की प्रवृत्ति को यतनापूर्वक करता रहता है ॥सू०४॥

વિચિન્ત્ય ભાષણ કહે છે. તે ભાષાસમિતિરૂપ છે. સત્યમા અને ભાષાસમિતિમાં કેટલાક ભેદ બતાવવામા આવ્યા છે તે એવા પ્રકારના છે કે દરેકની સાથે વાતચીતમાં વિવેક રાખવો એ તો ભાષાસમિતિ છે અને પોતાના સમશીલ સાધુજનો સાથે વાતચીતમાં હિત, મિત અને યથાર્થ વચનનો ઉપયોગ કરવો તે સત્યવ્રતરૂપ યતિધર્મ છે આ ભાવનાથી તે સત્યવ્રત દૃઢ થાય છે બોલતી વખતે સાધુએ વેગથી ત્વરાથી અને ચપલતાથી બોલવુ જોઈએ નહીં. વિના વિચાર્યે પણ બોલવુ જોઈએ નહી જ્યારે બોલવાનો અવસર આવે ત્યારે જ સત્ય, હિત, મિત વચન બોલવાં જોઈએ અવિચારિત અને અસ્પષ્ટ વચન બોલવાં જોઇએ નહીં. આ પ્રકારની વચન પ્રવૃત્તિમાં સાવધાન બનેલ સાધુ સત્ય વ્રતને સુશોભિત કરતા, પોતાની-કરણ ચરણ આદિની પ્રત્યેક પ્રવૃત્તિને યતનાપૂર્વક કરતા રહે છે ॥ સૂ૦ ૪ ॥

भणेज्ज, कोहग्गिसंपलित्तो, तम्हा कोहो न सेवियव्वो। एवं खंतीइ भाविओ भवइ अंतरप्पा संजयकरचरणनयण-वयणो सूरो सच्चज्जवसंपन्नो ॥ सू० ५ ॥

टीका—'बीयं' द्वितीयां भावनामह—'कोहो' क्रोधः=क्षमादिअक्षान्ति=अक्षान्तिपरिणतिरूपो 'न सेवियव्वो' न सेवितव्यः। कथं न सेवितव्यः? इत्याह—'कुद्धो' क्रुद्धः=क्रोधयुक्तः, 'चंडिक्किओ' चाण्डिक्यितः=चाण्डिक्यं=रौद्ररूपत्वं संजातमस्य चाण्डिक्यितः=रौद्ररूपयुक्तः 'मणुसो' मानुषः 'अलियं' अलीकम्=असत्यं 'भणेज्ज' भणेत्=भाषेत, तथा—'पिसुणं' पिशुनं=परदोषसूचकं वचनं भणेत्, 'फरुसं' परुषं=परमर्मोद्घाटकं भणेत्, तथा—'अलियं पिसुणं फरुसं' अलीकं पिशुनं परुषमेतत्त्रितयमपि भणेत। तथा—कलहं=वाग्युद्धं 'करेज्ज' कुर्यात्, 'वेरं' वैरं=शत्रुतां 'करेज्ज' कुर्यात्, 'विगहं' विकथां=विगतार्थां

अब सूत्रकार क्रोधनिग्रहरूप द्वितीयभावना को प्रकट करते हैं—'बीयं कोहो' इत्यादि,

टीकार्थ—क्रोध निग्रहरूप जो द्वितीय भावना है उसमें (कोहो न सेवियव्वो) क्रोध का सेवन नहीं किया जाता है। क्यों कि जो (कुद्धो मणुसो) क्रोधयुक्त पुरुष होता है वह (चंडक्किओ) रौद्ररूप से युक्त बन जाता है। ऐसा मनुष्य (अलियं भणेज्ज) झूठ बोल देता है (पिसुणं भणेज्ज) पर के दोषो के सूचक वचन बोल देता है (फरुसं भणेज्ज) दूसरों के मर्मको छेदने वाले वचनों को कह देता है, तथा (अलियं पिसुणं फरुसं भणेज्ज) अलीक, पिशुन और परुष, इन तीनों तरह के वचनों का भी प्रयोग कर देना है। (कलहं करेज्ज) परस्पर में वाग्युद्ध

હવે સૂત્રકાર ક્રોધનિગ્રહરૂપ બીજી ભાવનાનું સ્પષ્ટીકરણ કરે છે. "वीय कोहो" ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ—ક્રોધનિગ્રહરૂપ જે બીજી ભાવના છે તેમા "कोहो न सेवियव्वो" ક્રોધનુ સેવન ન કરવુ જોઇએ કારણ કે જે "कुद्धो मणुसो" ક્રોધી પુરુષો હોય છે તેઓ "चंडक्किओ" રૌદ્રરૂપવાળા બની જાય છે એવો મનુષ્ય "अलिय भणेज्ज" જૂઠું બોલી નાંખે છે. "पिसुण भणेज्ज" બીજાના દોષ-દર્શક વચનો બોલી નાખે છે "फरुस भणेज्ज" બીજા લોકોનાં મર્મને છેદ-નાગ વચનો બોલી જાય છે, તથા "अलिय पिसुणं फरुस भणेज्ज" અસત્ય પિશુન અને પરુષ, એ ત્રણે પ્રકારના વચનોનો પ્રયોગ કરી નાખે છે "कलहं

शास्त्रविरुद्धां कथां=वार्त्तां कुर्यात्, 'कलहं वेरं विगहं' कलह वैरं विकथां च कुर्यात्, तथा-'सच्चं' सत्यं=सद्भूतार्थं 'हणेज्ज' हन्यात्=नाशयेत्, 'सीलं' शीलं=सदाचार हन्यात्, 'विणयं' विनयं-विनीतभावं हन्यात्। तथा-क्रोध-युक्तो मानवः 'वेसो' द्वेष्यः-सर्वेषामप्रियो 'भवेज्ज' भवेत्, तथा-'वत्थुं' वास्तु=गृहं, दोषगृहं=दोषपात्रं 'भवेज्ज' भवेत्, तथा-'गम्मो' गम्यः=अना-दरस्थानं भवेत्, तथा-'वेसो वत्थुं गम्मो द्वेष्यो वास्तुगम्य एतत्त्रितयोऽपि भवेत्। 'एयं' एतत्=पूर्वोक्तम्, 'अन्नं' अन्यच्च 'एवमाइयं' एवमादिकम्=

भी ठान देता है, (वेर करेज्जा) दूसरों से शत्रुता भी कर लेता है, तथा (विगहं करेज्जा) जो कथा शास्त्र से विरुद्ध होती है उसे भी कह देता है। तथा (कलहं वेरं विगहं करेज्ज) कलह वैर और विकथा, इन तीनों को भी करता है। तथा (सच्चं हणेज्ज) सत्य-सद्भूत अर्थ का अपलाप कर देता है। तथा (सीलं हणेज्ज) शील-सदाचार को नष्टकर देता है, (विणयं हणेज्ज) विनीत भाव को धिक्कार देता है। तथा (सच्चं सीलं विणयं हणेज्ज) सत्य शील और विनय, इन तीनों को नष्ट कर देता है। तथा (वेसो भवेज्ज) जो मानव क्रोध से युक्त होता है वह दूसरो को अप्रिय बन जाता है, (वत्थुं भणेज्ज) द्वेष पात्र बन जाता हैं और (गम्मो भवेज्ज) सब के अनादरणीय होता है। (वेसो वत्थुं गम्मो भवेज्ज) वह दूसरों को अप्रिय द्वेषपात्र और अनादर इन तीनों का स्थान बन जाता है। इन पूर्वोक्त वचनो को तथा (एवं अन्नं च एवमाइयं) इसी प्रकार के और भी दूसरी तरह के असत्य-

---

करेज्ज" પરસ્પરમાં વાગ્યુદ્ધ પણ વહોરે છે "वेरं करेज्जा" બીજા લોકો સાથે શત્રુતા પણ કરે છે, તથા "विगहं करेज्जा" તથા જે કથા શાસ્ત્રની વિરુદ્ધ હોય છે તે પણ કરે છે તથા "कलहं, वेरं विगहं करेज्ज" કલહ, વૈર અને વિકથા એ ત્રણે કરે છે તથા "सच्चं हणेज्ज" સત્ય-યથાર્થ અર્થનો અપલાપ કરી નાખે છે, "सील हणेज्ज" શીલ-સદાચારનો નાશ કરી નાખે છે, "विणयं हणेज्ज" વિનીત ભાવને ધિક્કારે છે, તથા "सच्च सीलं विणयं हणेज्ज" સત્ય, શીલ અને વિનય એ ત્રણેને નષ્ટ કરી નાખે છે. તથા "वेसो भवेज्ज" જે માનવ ક્રોધયુક્ત બને છે તે બીજાને અપ્રિય થાય છે, "वत्थुं भवेज्ज" દ્વેષપાત્ર બને છે અને "गम्मो भवेज्ज" બધાને માટે અનાદરપાત્ર બને છે "वेसो वत्थ गम्मो भवेज्ज" તે બીજાને અપ્રિય દ્વેષપાત્ર અને અના-દરપાત્ર એ ત્રણેનું સ્થાન બને છે. એ પૂર્વોક્ત વચનો તથા "एवं अन्नं च

एवं जातीयं वचनं ' कोहग्गिसंपलित्तो ' क्रोधाग्निसंप्रदीप्तो नरो ' भणेज्ज ' भणेत्=कथयेत्, ' तम्हा ' तस्मात् कारणात् ' कोहो न सेवियव्वो ' क्रोधो न सेवितव्यः। एवम्=अनेन प्रकारेण' खंतीइ ' क्षान्त्या=उपशमेन ' भाविओ ' भावितः ' अंतरप्पा ' अन्तरात्मा=जीवः संयतकरचरणनयनवदनः शूरः सत्यार्जवसंपन्नो भवति ॥ ५ ॥ इति द्वितीया भावना ॥ २ ॥

वचनों को (कोहग्गिसंपलित्तो भवेज्ज) क्रोधाग्नि से संतप्त हुआ मनुष्य कह दिया करता है। (तम्हा कोहो न सेवियव्वो) इसलिये क्रोध का कभी भी संयमीजन को सेवन नहीं करना चाहिये। (एवं-खंतीइ भाविओ अंतरप्पा) इस प्रकार क्षान्तिपरिणति से वासित हुआ जीव (संजयकरचरणनयणवयणो) संयत कर, चरण, नयन वदन वाला हो जाता हैं और (सूरो) अपने सत्यव्रत की आराधना में परा-क्रमशाली होता हुआ (सच्चज्जवसंपन्नो भवइ) सत्य और आर्जव इन दोनों से संपन्न बन जाता है।

भावार्थ—सूत्रकार ने इस सूत्र द्वारा सत्यव्रत की दूसरी भावना का वर्णन किया है। वह भावना क्रोध निग्रह रूप है। क्षान्तिपरिणति क्रोध की होती है। मनुष्य पर जब इसका आवेश आ जाता है तो उसकी आकृति बदलजाती है उसका रूप रौद्र हो जाता हैं। इस स्थिति में उस का वचन व्यवहार सत्यधर्म से प्रतिकूल हो जाता है। वह इसके आवेश में यद्वा तद्वा बोलने लग जाता है। उसको इस बात का

एवमाइयं " એ જ પ્રકારનાં બીજાં પણ અસત્ય વચનો " कोहग्गिसंपलित्तो भवेज्ज " ક્રોધાગ્નિયુક્ત મનુષ્ય બોલી જાય છે " तम्हा कोहो न सेवियव्वो " તે કારણે સંયમી લોકોએ કદી પણ ક્રોધ કરવો જોઈએ નહીં " एवं खंतीइ भाविओ अंतरप्पा " આ રીતે ક્ષાન્તિપરિણતિથી ભાવિત થયેલ જીવ " संजय करचरणनयणवयणो " સંયત, હાથ, પગ, નયન, વદનવાળો થઈ જાય છે અને "सूरो" પોતાના સત્યવ્રતની આરાધનામાં પ્રરાક્રમ " सच्चज्जवसंपन्नो भवइ " સત્ય અને આર્જવ, એ બન્નેથી યુક્ત બની જાય છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્રદ્વારા સત્યવ્રતની બીજી ભાવનાનું વર્ણન કર્યું છે. તે ભાવના ક્રોધનિગ્રહરૂપ છે. ક્ષાન્તિપરિણતિથી ઉલટી પરિણતિ ક્રોધની હોય છે, મનુષ્ય પર જ્યારે તેનો આવેશ આવે છે ત્યારે તેની આકૃતિ બદ-લાઇ જાય છે, તે રૌદ્રરૂપ ધારણ કરે છે, આ પરિસ્થિતિમાં તેનાં વચનો તથા વ્યવહાર સત્ય ધર્મથી પ્રતિકૂળ થઇ જાય છે. તે તેના આવેશમાં ગમે તેવું

अथ तृतीयां लोभनिग्रहरूपां भावनामाह—' तइयं लोहो ' इत्यादि ।

मूलम्—तइयं लोहो न सेवियव्वो, लुद्धो लोलो भणेज्ज अलियं । खेत्तस्स वेत्थुस्स वा कएण लुद्धो लोलो भणेज्ज

भान नहीं रहता है कि इन हमारे वचनों से दूसरे प्राणियों के प्राणों पर क्या बीतेगी । झूठ बोलने में उसे थोडा सा भी संकोच नहीं होता। दूसरे की चुगली करने से वह नही चुकता–पर के ऊपर असत्यदोषा-रोप करने से वह पीछे नहीं हठता। हर किसी के साथ कलह करता रहता है। शत्रुता करने में वह बड़ा निपुण होता है । शास्त्र विरुद्ध बोलने की इसे थोड़ी सी भी चिन्ता नहीं होती। जो पदार्थ जिस रूप में होता है उसे उस रूप में कहने में इसे शर्म आती है। विनीतभाव की इसकी दृष्टि में कोई कीमत नहीं होती है । जब यह क्रोधरूपी अग्नि से संतप्त हो उठता है-तब इसकी परीस्थिति पूर्वोक्त प्रकार से तो होती है परन्तु इससे अधिक भी कभी २ बन जाती है । ऐसी स्थिति में इसका कोई हितैषी नहीं रहता है। सब ही इसका अनादर करने लगते हैं। इसलिये इस क्रोध का परिहार करना चाहिये । इस प्रकार विचार कर जो मुनिजन क्षान्ति परिणति से इस क्रोध को जीतते हैं अर्थात् क्रोध नहीं करते हैं वे ही इस द्वितीयभावना से अपने अन्तःकरण को वासित कर सत्यव्रत को स्थिर बना लेते हैं ॥ सू० ५ ॥

બોલવા લાગે છે. તેને તે વાતનું પણ ભાન રહેતું નથી કે મારાં વચનોથી બીજાં પ્રાણીઓના જીવને કેટલુ દુઃખ થાય છે. અસત્ય બોલવામાં તેને જરા પણ સંકોચ થતો નથી બીજાની નિંદા કરતાં પણ તે અટકતો નથી–અન્યની ઉપર અસત્ય દોષારોપ કરતા તે પાછો હઠતો નથી હરકોઈ સાથે તે કલહ કરતો રહે છે દુશ્મનાવટ કરવામાં તે નિપુણ હોય છે શાસ્ત્રવિરૂદ્ધ બોલવામાં તેને જરા પણ દુઃખ થતું નથી જે પદાર્થ જે રૂપે હોય છે તે રૂપે તેને કહેવામા તેને શરમ લાગે છે. તેની દૃષ્ટિએ વિનીત ભાવની કોઇ કીમત હોતી નથી. જ્યારે ક્રોધરૂપી અગ્નિથી સંતપ્ત થઇ જાય છે ત્યારે તેની હાલત પૂર્વોક્ત પ્રકારની તો થાય જ છે પણ તેનાથી અધિક પણ કોઇ કોઇ વાર બને છે એવી સ્થિતિમાં તેનો કોઇ હિતૈષી રહેતો નથી સૌ તેનો અનાદર કરવા માંડે છે. તેથી તે ક્રોધનો ત્યાગ કરવો જોઇએ. આ રીતે વિચારીને જે મુનિજન ક્ષાન્તિ પરિણતિથી એ ક્રોધને જીતે છે, એટલે કે ક્રોધ કરતા નથી, તેઓ જ આ બીજી ભાવનાથી પોતાના અંતઃકરણને ભાવિત કરીને સત્યવ્રતને સ્થિર કરી લે છે॥સૂ૦૫॥

अलियं १, कित्तीए लाभस्स वा कएण लुद्धो लोलो भणेज्ज अलियं २, इड्डीए सोक्खस्स वा कएण, लुद्धो लोलो भणेज्ज अलियं ३, भत्तस्स पाणस्स वा कएण, लुद्धो लोलो भणेज्ज अलियं ४, पीढस्स फलगस्स वा कएण, लुद्धो लोलो भणेज्ज अलियं ५, सेज्जाए संथारगस्स वा कएण, लुद्धो लोलो भणेज्ज अलियं ६, वत्थस्स पत्तस्स वा कएण, लुद्धो लोलो भणेज्ज अलियं ७, कंवलस्स पायपुंछणस्स वा कएण, लुद्धो लोलो भणेज्ज अलियं ८, सीसस्स सीसणीए वा कएण, लुद्धो लोलो भणेज्ज अलियं ९, अन्नेसु एवमाइसु बहुसु कारणसएसु लुद्धो लोलो भणेज्ज अलियं १० तम्हा लोहो न सेवियव्वो, एवं मुत्तीए भाविओ भवइ अंतरप्पा संजयकरचरणनयणवयणो सूरो सच्चज्जवसंपन्नो॥६॥

टीका—'तइयं' तृतीयां भावनामाह–'लोहो न सेवियव्वो' लोभो न सेवितव्यः। लोभसेवनेन किं भवेत्? इत्याह–'लुद्धो' लुब्धो=लोभयुक्तो नरो 'लोलो' लोलः=चञ्चलः=सन् 'अलियं' अलीकं=कूटवचनं 'भणेज्ज' भणेत्= कथयेत्। केन निमित्तेन लुब्धोऽलीकं भणेत्? इत्याह—'खेत्तस्स' क्षेत्रस्य

अब सूत्रकार तृतीय भावना जो लोभनिग्रह रूप है उसे प्रकट करते हैं—'तइयं लोहो' इत्यादि०।

टीकार्थ-(तइयं) लोभ निग्रहरूप तृतीय भावना इस प्रकार से है–(लोहो न सेवियव्वो) लोभ सेवन करने योग्य नहीं है। क्यों कि (लुद्धो लोलो अलियं भणेज्ज) लोभ के सेवन करने से प्राणी लुब्ध कहलाता है, और वह लोभ युक्त बना हुआ मनुष्य चञ्चल चित्त होकर

હવે સૂત્રકાર લોભનિગ્રહ નામની ત્રીજી ભાવનાનું વર્ણન કરે છે "तइयं लोहो" ઈ.

ટીકાર્થ—"तइयं" લોભનિગ્રહરૂપ ત્રીજી ભાવના આ પ્રમાણે છે–"लोहो न सेवियव्वो" લોભ સેવન કરવાને યોગ્ય નથી. કારણ કે "लुद्धो लोलो अलियं भणेज्ज" લોભનું સેવન કરવાથી પ્રાણી લુબ્ધ કહેવાય છે, અને તે લોભયુક્ત મનુષ્ય ચંચળ ચિત્તવાળો થઈને કૂટ વચન બોલી શકે છે, "खेत्तस्स वत्थुस्स

' वत्थुस्स ' वास्तुनः=वासभूमेर्वा ' कएण ' कृतेन–कृते इत्यर्थः, अत्र हेत्वर्थे तृतीया, एवं सर्वत्र ज्ञेयम् । लुब्धो लोलोऽलीकं भणेत् ॥ १॥ तथा–' कित्तीए ' कीर्त्तेः ' लाभस्स ' लाभस्य वा कृते लुब्धो लोलोऽलीकं भणेत् ॥ २ ॥ 'इड्ढीए' ऋद्धेः=संपत्तेः ' सोक्खस्स' सौख्यस्य वा कृते लुब्धो लोलोऽलीकं भणेत् ॥ ३ ॥ भक्तस्य पानस्य वा कृते लुब्धो लोलोऽलीकं भणेत् ॥ ४ ॥ ' पीढस्स ' पीठस्य ' फलगस्स ' फलकस्य वा कृते लुब्धो लोलोऽलीकं भणेत् ॥ ५ ॥ तथा— ' सेज्जाए ' शय्यायाः ' संथारगस्स ' संस्तारकस्य वा कृते लुब्धो लोलोऽलीकं भणेत् ॥ ६ ॥ ' वत्थस्स ' वस्त्रस्य=चोलपट्टादेः ' पत्तस्य ' पात्रस्य वा कृते लुब्धो

कूट वचन बोल सकता है (खेत्तस्स वत्थुस्स वा कएण लुद्धो लोलो अलिय भणेज्ज) कूटवचन–झूठवचन बोलने के निमित्त ये ऐसे होते हैं–वह लोभी मनुष्य चञ्चलचित्त होता हुआ खेत अथवा निवासभूमि–गृह के निमित्त झूठवचन कह सकता है (कित्तीए लाभस्स वा कएण लुद्धो लोलो अलिय भणेज्ज) अपनी कीर्ति अथवा लाभ के निमित्त असत्य-भाषण कर सकता है (इड्ढीए सोक्खस्स वा कएण लुद्धो लोलो अलियं भणेज्ज) ऋद्धि–संपत्ति अथवा सौख्यके निमित्त असत्यवचन बोल सकता है । (भत्तस्स पाणस्स वा कएण लुद्धो लोलो अलियं भणेज्ज) आहार अथवा पानी के निमित्त असत्यवचन कह सकता है (पीढस्स फलगस्स वा कएण लुद्धो लोलो अलियं भणेज्ज) पाट अथवा बाजोठ के निमित्त असत्यवचन कह सकता है; (संज्जाए संथारगस्स वा कएण लुद्धो लोलो अलियं भणेज्ज) शय्या अथवा संस्तारक के लिये वह लोभ चंचलचित्त होकर असत्य बोल सकता है (वत्थस्स पत्तस्स वा कएण

वा कएण लुद्धो लोलो अलिय भणेज्ज " तेने कूट वचन–असत्य वचन બોલવાનાં નિમિત્ત આવાં હોય છે–તે લોભી મનુષ્ય ચંચલ ચિત્ત થતા ખેતર અથવા નિવાસભૂમિ–ઘરને નિમિત્તે અસત્ય વચન કહી શકે છે " कित्तीए लाभस्स वा कएण लुद्धो लोलो अलियं भणेज्ज " તે પોતાની કીર્તિ અથવા લાભને માટે અસત્ય બોલી શકે છે " इड्ढिए सोक्खस्स वा कएण लुद्धो लोलो अलिय भणेज्ज " ઋદ્ધિ સંપત્તિ અથવા સુખને માટે તે અસત્ય વચન બોલી શકે છે " भत्तस्स पाणस्स वा कएण लुद्धो लोलो अलियं भणेज्ज " આહાર અથવા પાણીને માટે તે અસત્ય વચન કહી શકે છે ' पीढस्स फलगस्स वा कएण लुद्धो लोलो अलियं भणेज्ज " પાટ અથવા ફલકને નિમિત્તે તે અસત્ય વચન બોલી શકે છે. " संज्जाए सथारगस्स वा कएण लुद्धो लोलो अलियं भणेज्ज " શય્યા અથવા સંસ્તાર માટે તે લોભી ચંચલ ચિત્ત થતાં અસત્ય બોલી શકે છે. " वत्थस्स

लोलोऽलीकं भणेत् ॥७॥ 'कंबलस्स' कम्बलस्य 'पायपुंछगस्स' पादप्रोञ्छनस्य वा कृते लुब्धो लोलोऽलीकं भणेत् ॥८॥ तथा 'सीसस्स' शिष्यस्य 'सीसणीए' शिष्याया वा कृते लुब्धो लोलोऽलीकं भणेत् ॥९॥ 'अन्नेसु' अन्येषु 'एवमाइएसु' एवमादिकेषु=एवं प्रकारेषु बहुषु कारणशतेषु प्राप्तेषु लुब्धो लोलोऽलीकं भणेत् ॥ १० ॥ 'तम्हा' तस्मात् कारणात् लोभो न सेवितव्यः । एवम्-अमुना प्रकारेण 'मुत्तीए' मुक्त्या=निर्लोभतारूपया भावितः 'अंतरप्पा' अन्तरात्मा=जीवः संयतकरचरणनयनवदनः शूरः सत्यार्जवसंपन्नो भवति ॥ सू० ६ ॥

॥ इति तृतीया भावना ॥

लुद्धो लोलो अलियं भणेज्ज) इसी तरह वस्त्र अथवा पात्र के लिये चंचल चित्त बना हुआ वह लोभी झूठ वचन बोल सकता है (कंबलस्स पायपुंछणस्स वा कएण लुद्धो लोलो अलियं भणेज्ज) कम्बल अथवा पादप्रोंछन के निमित्त को लेकर वह चंचल चित्त बना हुआ लोभी मृषावादि कह सकता है (सीसस्स सीसणीए वा कएण लुद्धो लोलो अलियं भणेज्ज) शिष्य अथवा शिष्या के निमित्त लुब्ध वह चंचलचित्त होकर मृषाभाषण करता है (अन्नेसु एवमाइएसु बहुसु कारणसएसु लुद्धो लोलो अलिय भणेज्ज) इसी तरह और भी इनसे सैकडों कारणों को निमित्त करके वह लोभी चंचल चित्त होकर झूठ बोल सकता है (तम्हा लोहो न सेवियव्वो) इसलिये लोभ सेवन करने योग्य नहीं है। (एवं मुत्तीए भाविओ अंतरप्पा) इस प्रकार निर्लोभतारूप तृतीय भावना से वासित हुआ अंतरात्मा-जीव (संजयकरचरणनयनवयणो) अपने कर, चरण, नयन और मुखकी प्रवृत्ति को यत्नाचार से संयमित

पत्तस्स वा कएण लुद्धो लोलो अलियं भणेज्ज" એ જ પ્રમાણે વસ્ત્ર કે પાત્રને માટે ચંચલ ચિત્ત થયેલ તે લોભી અસત્ય વચન બોલી શકે છે. "कंबलस्स पायपुछणस्स वा कएण लुद्धो लोलो अलियं भणेज्ज" કમ્બલ કે પગલૂછણીયા માટે તે ચંચલ ચિત્ત બનેલ લોભી મૃષાવાદ કહી શકે છે "सीसस्स सीसणीए वा कएण लुद्धो लोलो अलियं भणेज्ज" શિષ્ય અથવા શિષ્યાને નિમિત્તે લુબ્ધ તે ચંચલ ચિત્ત મૃષાભાષણ કરી શકે તે. "अन्नेसु एवमाइएसु बहुसु कारण सएसु लुद्धो लोलो अलियं भणेज्ज" આ રીતે આ સિવાયનાં સેંકડો કારણોને નિમિત્તે તે લોભી ચંચલચિત્ત થઈને અસત્ય બોલી શકે છે. "तम्हा लोहो न सेवियव्वो" તેથી લોભ સેવન કરવાયોગ્ય નથી "एव मुत्तीए भाविओ अंतरप्पा" આ રીતે નિર્લોભતારૂપ ત્રીજી ભાવનાથી ભાવિત બનેલ અંતરાત્મા-જીવ "संजयकरचरणनयणवयणो" પોતાના હાથ, પગ, નયન અને મુખની પ્રવૃત્તિને યતનાપૂર્વક સંયમિત કરી લે છે. અને "सूरो" પોતાના સત્યવ્રતના પાલનમાં

अथ चतुर्थीं धैर्यभावनामह-' चउत्थं ' इत्यादि---

मूलम्--चउत्थं न भीइयव्वं, भीयं खु भया अइंति लहुअं, भीओ अवितिज्जओ मणूसो, भीओ भूएहिं घिप्पइ, भीओ अन्नं पि हु भेसेज्जा; भीओ तवसंजमं पि हु मुएज्जा, भीओ य

कर लेता है और (सूरो) अपने सत्यव्रत के पालन में पराक्रमशाली बन कर (सच्चज्जवसंपन्नो भवइ) सत्य और आर्जव धर्म से संपन्न हो जाता है।

भावार्थ--सूत्रकार ने इस सूत्र द्वारा सत्यव्रत की तृतीय भावना को कहा है। इस तृतीय भावना का नाम लोभनिग्रह है। लोभ के निग्रह करने के लिये विचारधारा इसमें प्रकट की है। ' लोभ ही पाप का बाप है ' ऐसा ख्याल कर लोभ के फंदे में नहीं फँसना चाहिये। जो लोभी होता हैं वह लुब्धक कहलाता है। लोभी का चित्त हरएक वस्तु की प्राप्ति के निमित्त चंचल हो उठता है। लोभी व्यक्ति अपनी स्वार्थसिद्धि के निमित्त झूठ बोल सकता है। खेत, मकान, ऋद्धि, सुख, भक्त, पान आदि को निमित्त लेकर असत्य भाषण करता है। अतःलोभ का निग्रह करना ही उचित है इस प्रकार भावना भा कर जो इस लोभ को परित्याग से अपनी आत्मा को वासित बनाता है वह अपने सत्यमहाव्रत को स्थिर कर लेता है। उसकी प्रत्येक प्रवृत्ति संयमित होती है॥ सू० ६॥

પરાક્રમશાળી બનીને ' સચ્ચજ્જવસપન્નો ભવઇ " સત્ય અને આર્જવ ધર્મથી યુક્ત થઇ જાય છે

ભાવાર્થ--સૂત્રકારે આ સૂત્રમા સત્યવ્રતની ત્રીજી ભાવનાનું વર્ણન કર્યું છે. આ ત્રીજી ભાવનાનું નામ લોભનિગ્રહ છે. લોભનો નિગ્રહ કરવાને માટે વિચારધારા આમા પ્રગટ કરી છે " લોભ જ પાપનો બાપ છે. " આવો વિચાર કરીને લોભની જાળમાં ફસાવું જોઈએ નહીં, જે લોભી હોય છે તે લુબ્ધક કહેવાય છે લોભીનું ચિત્ત દરેક વસ્તુની પ્રાપ્તિ માટે ચંચલ થઈ જાય છે. લોભી વ્યક્તિ પોતાનો સ્વાર્થ સાધવાને માટે અસત્ય બોલી શકે છે ખેતર, મકાન, સંપત્તિ સુખ, આહાર, પાણી આદિને નિમિત્તે પણ તે અસત્યવચનો બોલે છે તેથી લોભનો નિગ્રહ કરવો તે જ યોગ્ય છે એવા પ્રકારની ભાવના સેવીને જે આ લોભના પરિત્યાગથી પોતાના આત્માને વાસિત બનાવે છે, તેઓ પોતાના સત્ય મહાવ્રતને સ્થિર કરી લે છે તેમની દરેક પ્રવૃત્તિ સંયમિત હોય છે॥ સૂ૦ ૬॥

भरं न नित्थरेज्जा, सप्पुरिसनिसेवियं च मग्गं भीओ न समत्थो अणुचरिउं। तम्हा न भीइयव्वं भयस्स वा वाहिस्स वा रोगस्स वा जराए वा मच्चुस्स वा अन्नस्स वा एवमाइयस्स। एवं धिज्जेण भाविओ अंतरप्पा संजयकरचरणनयणवयणो सूरो सच्चज्जवसंपन्नो ॥ सू० ७ ॥

टीका—'चउत्थं' चतुर्थीं भावनामाह—'न भीइयव्वं' न भेतव्यं=भयं न कर्तव्यम्। कथं भयं न कर्तव्यम्? इत्याह–'भीयं' भीतं भययुक्तं प्राणिनं खलु 'भया' भयानि 'लहुयं' लघुकं=शीघ्रम् 'अइंति' आयन्ति=प्राप्नुवन्ति, तथा 'भीओ' भीतः 'मणुसो' मनुष्यः 'अबितिज्जओ' अद्वितीयः=असहायो भवति, अयं भावः–भीतो मनुष्यो न कस्यापि सहायको भवति, न कोऽपि तस्य सहायको वा भवति। तथा–'भीओ' भीतो मनुष्यः 'भूएहिं' भूतैः= प्रेतैः 'घिप्पइ' गृह्यते, भूताविष्टो भवतीत्यर्थः। तथा–भीतः 'अन्नं पि' अन्यमपि 'भेसेज्जा' भीषयते। तथा–भीतः 'तवसंजमं पि' तपः संयममपि=

अब सूत्रकार चौथी भावना जो धैर्य भावना है उसे कहते हैं— 'चउत्थं' इत्यादि०।

टीकार्थ –(चउत्थं) वह चौथी धैर्य भावना इस प्रकार से है (न भाइयव्वं) भय नहीं करना चाहिये। क्यों कि (भीयंखु भया अइंति लहुअं) जो भययुक्त होता है उस प्राणी के पास निश्चय से भय शीघ्र आते हैं। (भीओ अबितिज्जओ मणूसो) तथा जो भय से डरता है ऐसा मनुष्य अद्वितीय होता है–वह न किसी की सहायता कर सकता है और न कोई दूसरा मनुष्य उसका ही सहायक होता है। (भीओ भुएहिं घिप्पइ) भीत मनुष्य को भूत पकड़ लेते हैं। भीओ अन्नं पि हु भेसेज्जा) भय से भीत हुआ मनुष्य दूसरों को भी भययुक्त

હવે સૂત્રકાર ચોથી ધૈર્યભાવના નામની ભાવના વિષે કહે છે–" चउत्थं " ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—'चउत्थं" તે ચોથી ધૈર્યભાવના આ પ્રમાણે છે–"न भीइयव्वं' ભય પામવો જોઇએ નહીં કારણ કે "भीयं खु भया अइंति लहुअं" જે બીકણ હોય છે તે વ્યક્તિ પાસે ચોક્કસ ભય શીઘ્ર આવે છે "भीओ अवितिज्जओ मणूसो" તથા જે ભયથી ડરે છે એવો મનુષ્ય અદ્વિતીય હોય છે–તે કોઇને મદદ કરી શકતો નથી અને કોઇ બીજો મનુષ્ય તેનો સહાયક થતો નથી. " भीओ भूएहिं घिप्पइ " ભયભીત મનુષ્યને ભૂત પકડી લે છે " भीओ अन्नं पि हु भेसेज्जा" ભયભીત મનુષ્ય બીજા લોકોને પણ ભયભીત કરે છે, તથા " भीआ

तपः संयमं चापि 'मुएज्जा' मुञ्चति=परित्यजति। तथा–भीतः 'भरं' भारम् =कार्यभारं 'न नित्थरेज्जा' न निस्तारयति=न निर्वाहयति। तथा–'सप्पुरिस-निसेवियं' सत्पुरुषनिषेवितं च 'मग्गं' मार्गं भीतो न 'समत्थो' समर्थः= पर्याप्तः 'अणुचरिउं' अनुचरितुम्, सत्पुरुषासेवितं मार्गं भयत्रस्तो न गन्तुं शक्नोतीति भावः। 'तम्हा' तस्माद् हेतोः 'भयस्स वा' भयस्य=भीते र्वा 'वाहिस्स' व्याधेः=क्रमेण प्राणापहारिणः कुष्ठादे र्वा, 'रोगस्स' रोगस्य= शीघ्रतया प्राणापहारिणो ज्वरादे र्वा 'जराए' जरायाः वा 'मच्चुस्स' मृत्यो र्वा 'अन्नस्स' अन्यस्य=एभ्य इतरस्य वा 'एवमाइयस्स' एवमादिकस्य–एवं

बना देता है, तथा (भीओ तवसंजमं पिहुमुएज्जा) वह तप संयम का भी परित्याग कर देता हैं। (भीओ य भरं न तित्थरेज्जा) भीत मनुष्य शक्ति से इतना अधिक विहीन बन जाता है, अर्थात् उसमें इतनी अधिक मानसिक दुर्बलता आ जाती है कि जिसकी वजह से वह किसी भी कार्यभार को वहन नहीं कर सकता, अर्थात् किसी भी काम को वह पूरा नहीं कर सकता। (सप्पुरिसनिसेवियं च मग्गं भीओ न समत्थो अणुचरिउं) सत्पुरुष जिस मार्ग का सेवन करते आये हैं उस मार्ग पर चलने के लिये भी वह विचारा समर्थ नहीं हो सकता हैं। (तम्हा न भीइयव्वं भयस्स वा वाहिस्स वा रोगस्स वा जराए वा मच्चुस्स वा अन्नस्स वा एवमाइयस्स) इसलिये कीसी भी प्रकार के भय के, क्रम २ से प्राणों को अपहरण करनेवाली व्याधि के, अथवा कुष्ठादिके, शीघ्रता से प्राणों:का अपहरण करनेवाले ज्वर आदि रोग के, वृद्धावस्था के, तथा मृत्यु के अथवा इन्हीं जैसी अन्य और कोई

तवसंजमं पिहुमुएज्जा" ते तप संयमनो पण परित्याग करी दे छे "भीओ य भरं न तित्थरेज्जा" भयभीत माणुसे एटला बधा शक्तिहीन थई जाय छे, एटले के तेनामां एटली बधी मानसिक दुर्बळता आवी जाय छे के जेना कारणे ते कोई पण कार्यनो बोजो उठावी शकतो नथी एटले के कोई पण कामने ते पूरुं करी शकतो नथी. "सप्पुरिसनिसेवियं च मग्गं भीओ न समत्थो अणुचरिउं" सत्पुरुषो जे मार्गनुं सेवन करता आव्या छे, ते मार्गे चालवाने पण ते समर्थ बनी शकतो नथी. "तम्हा न भीइयव्वं भयस्स वा वाहिस्सवा रोगस्स वा जराए वा मच्चुस्स वा अन्नस्स वा एवमाइयस्स" तेथी कोई पण प्रकारना भयथी, क्रमे क्रमे प्राणोने हरी लेनार व्याधिना, अथवा कुष्ठादिना, शीघ्रताथी प्राण हरी लेनार ज्वर आदि रोगना, वृद्धावस्थाना तथा मृत्युना अथवा तेमना जेवी कोई पण प्रका-

विधस्य भयजनकस्य वस्तुनो वशात् न 'भीइयव्वं' भेतव्यम् एवम्=अनेन प्रकारेण 'धिज्जेग' धैर्येण 'भाविओ' भावितः 'अंतरप्पा' अन्तरात्मा=जीवः संयतकरचरणनयवदनः शूरः सत्यार्जवसंपन्नो भवति ॥ ७ ॥

॥ इति चतुर्थी भावना ॥

अथ पञ्चमीं मौनभावनामाह-'पंचमं' इत्यादि—

मूलम्-पंचमं हासं न सेवियव्वं। अलियाइं असंतगाइं जंपंति हासइत्ता परपरिभवकारणं च हासं, परपरिवायप्पियं च हासं, परपीलाकारगं च हासं, भेयविमुत्तिकारगं

भयजनक वस्तु के वश से नहीं डरना चाहिये। (एवं धेज्जेण भाविओ अंतरप्पा संजय करचरगनयणवयणो सूरो सच्चज्जवसंपन्नो भवइ) इस प्रकार धैर्य से भावित हुआ जीव अपने कर, चरण, नयन एवं वदन की प्रवृत्ति को संयमित रखता हुआ सत्यव्रत के पालनमें पराक्रमशाली बन जाता है और सत्य एवं आर्जव भाव से संपन्न हो जाता है।

भावार्थ—सूत्रकार ने इस सूत्र द्वारा सत्यव्रत की चौथी भावना कहा है। इस भावना का नाम धैर्यभावना है। इस भावना में धैर्य के अभाव में क्या २ हानि होती है और धैर्य रखने से क्या २ लाभ होते हैं, इन सब बातोंका विचार किया जाता है। इन विचारों से आत्मा जब धैर्य शाली बन जाती है तो वह अपने द्वारा गृहीत सत्यव्रत को पूर्णरूप से सुरक्षित रखति हुइ स्थिर बना लेती है ॥ सू०७॥

રની ભયજનક વસ્તુના ભયથી ડરવું જોઈએ નહીં, "एवं धेज्जेण भाविओ अंतरप्पा संजयकरजरणनयणवयणो सूरो सच्चज्जवसंपन्नो भवइ" આ પ્રકારે ધૈર્યથી ભાવિત થયેલ જીવ પોતાના કર, ચરણ, નયન, અને વદનની પ્રવૃત્તિને સંયમિત રાખીને સત્યવ્રતના પાલનમા પરાક્રમશાળી બની જાય છે અને સત્ય તથા આર્જવના ભાવયુક્ત બની જાય છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ વ્રતદ્વારા સત્યવ્રતની ચોથી ભાવના બતાવી છે. તે ભાવનાનું નામ ધૈર્યભાવના છે. આ ભાવનાનું વર્ણન કરતા ધૈર્યના અભાવે કયી કયી હાનિ થાય છે. અને ધૈર્ય રાખવાથી કયા કયા લાભ થાય છે તે બધાનો વિચાર કરાયો છે. આ વિચારોથી આત્મા જ્યારે ધૈર્યવાન બને છે ત્યારે તે પોતે ગ્રહણ કરેલ સત્યવ્રતને સંપૂર્ણ રીતે સુરક્ષિત અને સ્થિર બનાવી લે છે ॥ સૂ૦ ૭ ॥

हासं, अण्णाण्णजणियं च होज्ज हासं, अण्णोण्णगमणं च होज्ज मम्मं, अण्णोण्णगमणं च होज्ज कम्मं कंदप्पाभिओग-गमणं च होज्ज हासं, आसुरियं किब्बिसत्तणं च जणेज्ज हासं, तम्हा हासं न सेवियव्वं। एवं मोणेण य भाविओ भवइ, अंतरप्पा संजयकरचरणनयणवयणो सूरो सच्चज्जवसंपन्नो ॥ सू० ८ ॥

टीका—'पंचमं' पञ्चमीं भावनामाह–'हास' हास्यं नोकषायमोहोदयात्सनिमित्तमनिमित्तं वा विवृतवर्णपुरस्सरं मुखव्यादानं हास्यम्, न 'सेवियव्वं' सेवितव्यम्। किमर्थं न सेवितव्यम्? इत्याह–'हासइत्ता' हासयितारः–परिहासकारिणः 'अलियाइं' अलिकानि=सद्भूतार्थगोपनरूपाणि 'असंतगाइं' असत्कानि=

अब सूत्रकार पंचमी मौन भावना को कहते हैं—'पचमं, इत्यादि ०।

टीकार्थ—(पंचमं) पांचवी मौन भावना इस प्रकार है। (हासं न सेवियव्वं) इस भावना में हास्य के सेवन का परित्याग कर दिया जाता है। जब जीव को हास्यनो कषाक मोंह का उदय होता है तब वह हास्य का निमित्त मिले अथवा न भी मिले तो भी वह ही-ही करता हुआ हँसने लग जाता है। हँसते समय उसका मुख खुल जाता हैं दांत स्पष्ट दिखलाइ देने लगते है। संयमी जन को इस हास्य का सेवन नहीं करना चाहिये। क्यों कि (हासइत्ता) जो परिहास करने वाले व्यक्ति होते हैं वे (अलिअइं असंतगाइ जंपंति) सद्भूत

હવે સૂત્રકાર પાંચમી મૌનભાવના બતાવે છે—" पंचमं " ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ—" पंचमं " પાંચમી મૌનભાવના આ પ્રમાણે છે—" हासं न सेवियव्वं " આ ભાવનામાં હાસ્યનો પરિત્યાગ કરાય છે. જ્યારે જીવને 'हास्य-नोकषाय' મોહનો ઉદય થાય છે ત્યારે તે હાસ્યનું નિમિત્ત મળે કે ન મળે છતાં પણ તે 'હી–હી' કરતો હસવા મંડી જાય છે. હસતી વખતે તેનું મુખ ઉઘડી જાય છે અને દાંત સ્પષ્ટ રીતે દેખાય છે. સંયમી જને આ હાસ્યનું સેવન કરવું જોઈએ નહીં કારણ કે " हासइत्ता " જે પરિહાસ કરનાર વ્યક્તિ હોય છે તે " अलिआइं असतगाइं जंपंति " યથાર્થ અર્થને છૂપાવનાર અને

असद्भूतार्थानि वचनानि 'जंपंति' जल्पन्ति=ब्रुवते। हास्यकारिणो द्वितीयमहाव्रतनाशका भवन्तीत्यर्थः। कीदृशं हास्यम्? इत्याह-'परपरिभवकारणं=परापमानहेतुकं च हास्यं भवति। तथा-'परपरिवायप्पियं' परपरिवादप्रियं=परपरिवादः=अन्यदूषणाविधानं प्रिय इष्टो यस्मिंस्तत्तादृशं च हास्यं भवति। तथा-'परपीलाकारगं' परपीडाकारकं च हास्यं भवति। तथा-'भेयविमुत्तिकारगं' भेदविमूर्त्तिकारकं=भेदः=चारित्रभङ्गः: विमूर्त्तिः=विकृतनयनवदनादित्वेन विकृतशरीराकृतिस्तयोः कारकं च हास्यम्। 'अण्णोण्णजणियं च होज्ज हासं' अन्योन्य-

अर्थको गोपन करने वाले एवं असद्भूत अर्थ को प्रकट करने वाले वचनों को बोला करते हैं। सत्यमहाव्रत में सद्भूत अर्थका प्रकाशन और असद्भूत अर्थ का प्रकट करना हेय कहा है, अतःहास्य में जब इस प्रकार की परिस्थिति रहती हैं कि उसमें असद्भूत अर्थ का प्रकटन और सद्भूत अर्थ का गोपन होता है, तो द्वितीय महाव्रत का संरक्षण इस अवस्था में कैसे हो सकता है नहीं हो सकता, इसलिये हास्य का त्याग कहा गया है। (परपरिभवकारणं च हासं) हास्य पर के अपमान का कारण होता है। (परपरिवायप्पियं च हासं) हास्य में पर के दूषण का कथन करना प्रीय लगता है। (परपीलाकारगं च हासं) हास्य में इस बातका भी ध्यान नहीं रहता है कि इस हास्य से अन्य को कष्ट हो रहा है। (भेयविमुत्तिकारगं च हास) हास्य चारित्र के भंग का हेतु हो जाता है। इसमें नयन वदन आदि शारीरिक अवयव विकृत बन जाते हैं। (अण्णोण्णजणिय च होज्ज हासं) हास्य

અસદ્ભૂત અર્થને પ્રગટ કરનારાં વચનો બોલ્યા કરે છે. સત્યમહાવ્રતમાં સદ્ભૂત અર્થનું ગોપન તથા અસદ્ભૂત અર્થનુ પ્રકાશન હેય ગણાવેલ છે. તો હાસ્યમાં જ્યારે એવા પ્રકારની પરિસ્થિતિ રહે છે કે તેમાં અસદ્ભૂત અર્થ પ્રગટ કરાય છે અને સદ્ભૂત અર્થનું ગોપન કરાય છે, તો એ પરિસ્થિતિમા દ્વિતીય મહાવ્રતનું રક્ષણ કેવી રીતે થઈ શકે? થઇ શકે જ નહીં માટે હાસ્યનો પરિત્યાગ કરવો જોઇએ એમ સૂત્રકારે બતાવ્યુ છે. "परपरिभवकारणं च हासं" હાસ્ય અન્યના અપમાનનુ કારણ બને છે. "परपरिवायप्पिय च हासं" હાસ્યમાં અન્યના દૂષણોનું કથન કરવુ પ્રિય લાગે છે. "परपीलाकारग च हासं" હાસ્યમાં તે વાતનું પણ ભાન રહેતું નથી કે તે હાસ્યથી કોઈ બીજાને કષ્ટ થઇ રહ્યુ છે. "भेयविमुत्तिकारगं च हासं" હાસ્યને લીધે ચારિત્રનો લોપ થાય છે. તેમાં નયન, વદન આદિ શરીરના અવયવો વિકૃત થઇ જાય છે. "अण्णोण्णजणिय च होज्ज हासं" હાસ્ય બે કે વધારે માણસ અન્યોન્ય મળ-

जनितं=परस्परकृतं च भवति हास्यम्, तथा हास्ये 'अण्णोण्णगमणं' अन्योन्य-गमनं=परस्पराधिगमनीय च 'मम्मं' मर्म=प्रच्छन्नपारदार्यादिदुश्चेष्टितं भवति। तथा-'अण्णोण्णगमणं' अन्योन्यगमनं=परस्परविज्ञेयं च 'कम्म' कर्म=लोकनिन्दादिरूपं 'होज्ज' भवति। हास्येन प्रच्छन्नमपि कर्म प्रकाशितं भवतीति भावः। तथा-'कंदप्पाभिओगगमणं' कन्दर्पाभियोगगमनम्=कन्दर्पाः=कान्दर्पिका देवविशेषा हास्यकारिणो भण्डप्रायाः, अभियोगाः=आज्ञाकारिणो देवाः, तेषु गमनं=गमनकारणम्=तत्तद्देवविशेषेषूत्पत्तिकारण च भवति हास्यम्। हास्यकारी साधुश्चारित्रलेशाद्देवत्वं प्राप्तोऽपि तत्र कान्दर्पिकेषु आभियोगिकेषु देवेषूत्पद्यते न तु महर्द्धिकेषु इत्यर्थः। तथा-'आसुरियं' असुरत्वं 'किव्विसत्तणं' किल्बिपत्वं=चाण्डालप्रायदेवविशेषत्वं च 'जणेज्ज' जनयेत् 'हासं' हास्यम्। यतो हास्यादीदृशी गतिर्भवति जीवस्य, 'तम्हा' तस्मात् 'हासं' हास्यं न सेवितव्यम्।

आपस में दो आदि जन मिलने से होता है। (अण्णोण्णगमणं च होज्ज मम्मं) इस हंसी में परदाररमण आदि दुश्चेष्टायें प्रच्छन्न रहा करती हैं। तथा (अण्णोण्ण गमणं च होज्ज कम्मं) इसी हंसी में परस्पर में होनेवाले दुष्कृत्यों से उनकी लोक में निंदा होती है उसे बाहर वे अपने मुख यद्यपि नहीं कहा करते हैं फिर भी आपस की हँसी से ही उनका दुष्कृत्य लोकों के समक्ष प्रकाशित हो जाता है। (कंदप्पाभिओग-गमणं) तथा हास्यकारी साधू चारित्र के लेश से यदि देवगति में उत्पन्न होवे तो भी वह भांड जैसे कान्दर्पिक तथा आज्ञाकारी आभियोगिक देवों में उत्पन्न होता है महर्द्धिक देवों में नहीं। (आसुरियं किव्विसत्तणं चजणेज्ज हासं) यह हास्य चांडालप्राय असुरदेवों में किल्बिषजाति के देवों में उत्पत्ति का कारण होता है। (तम्हा हासं न सेवियव्वं) इस-

---

વાથી થાય છે. "अण्णोण्णगमणं च होज्ज मम्मं" એ હાસ્યમાં પરદારરમણ આદિ દુશ્ચેષ્ટાઓ પ્રચ્છન્ન રહેતી હોય છે તથા "अण्णोण्णगमणं च होज्ज कम्मं" આ હાસ્યમાં અન્યોન્ય થતાં દુષ્કૃત્યોને લીધે તેની લોકમાં નિંદા થાય છે, તેને તેઓ પોતાનાં મુખથી બહાર કહ્યા કરતાં નથી તો પણ અન્યોન્યની હંસી-મજાકથી જ તેમનું દુષ્કૃત્ય લોકો સમક્ષ જાહેર થઇ જાય છે "कंदप्पाभिओगगमण" તથા હાસ્યકારી સાધુ જો દેવગતિમાં ઉત્પન્ન થાય તો પણ ચારિત્રતાની ન્યૂનતાને કારણે તેઓ ભાંડ જેવા કાંદર્પિક તથા આજ્ઞાકારી આભિયોગિક દેવોમા ઉત્પન્ન થાય છે, મહર્દ્ધિક દેવોમાં નહીં. "आसुरियं किव्विसत्तणं च जणेज्ज हासं" તે હાસ્ય ચાંડાલ આદિ જાતિમાં અસુરદેવોમાં કિલ્વિષજાતિના દેવોમાં ઉત્પત્તિનું કારણ બને છે. "तम्हा हासं न सेवियव्वं" તે

एवम्=अनेन प्रकारेण हास्यवर्जनरूपेण, 'मोणेण' मौनेन=वचनसंयमेन 'भाविओ' भावितः 'अंतरप्पा' अन्तरात्मा=जीवः संयतकरचरणनयनवदनः शूरः सत्यार्जवसंपन्नो भवति ॥ सू० ८ ॥

लिये जब हास्य से जीव की ऐसी गती होती है कि वह इस हास्य का सेवन नही करे। (एवं) इस प्रकार (मोणेण य भाविओ अंतरप्पा संजय करचरणनयणवयणो सूरो सच्चज्जवसंपन्नो भवइ) हास्यवर्जनरूप मौन से-वचन संयम से-भावित हुआ जीव अपने कर, चरण, नयण और वदन-मुख की प्रवृत्ति को संयमित बनाता हुआ सत्यव्रत के पालन में पराक्रमशाली बन जाता है और सत्य एवं आर्जवभाव से संपन्न हो जाता है।

भावार्थ—सूत्रकार ने इस सूत्र द्वारा पांचवी मौन भावना का स्वरूप कहा है। मौन भावना का तात्पर्य हास्य का परित्याग करना है। हांसी करने वाला प्राणी झूठ वचन का प्रयोग भी प्रसंगवश करता है। तथा इस कृत्य से दूसरों का अपमान भी होता है। हास्य मनोविनोद का कारण होता है सही परन्तु संयमी के लिये हास्य से मनोविनोद करने की क्या आवश्यकता है। हास्य से दूसरों के मनों में चोट पहुँचे इससे और अधिक अशोभनीय बात क्या हो सकती है। अध्यात्म के मार्ग में हँसी मजा करने का सर्वथा परित्याग कहा है। हास्य में पर के दूषणों का कथन प्रिय लगता है। यह हास्य नो

કારણે-હાસ્યથી જીવની એવી ગતિ થાય છે તેથી જીવનું તે કર્તવ્ય છે કે તે હાસ્યનું સેવન ન કરે. "एवं" આ પ્રકારે "मोणेण य भाविओ अंतरप्पा संजयकरचरणनयणवयणो सूरो सच्चज्जवसंपन्नो भवइ" હાસ્ય ત્યાગરૂપ મૌનથી વચન સંયમથી ભાવિત થયેલ જીવ પોતાના કર, ચરણ, નયન અને વદનની પ્રવૃત્તિને સંયમિત કરીને સત્યવ્રતના પાલનમાં પરાક્રમશાળી બની જાય છે અને સત્ય તથા આર્જવ ભાવથી યુક્ત બની જાય છે.

ભાવાર્થ-સૂત્રકારે આ સૂત્રદ્વારા પાચમી મૌન ભાવનાનું સ્વરૂપ બતાવ્યું છે. મૌન ભાવનાનું તાત્પર્ય હાસ્યનો પરિત્યાગ છે. હાંસી કરનાર માણુસ પ્રસંગવશાત્ અસત્ય વચનનો પ્રયોગ પણ કરે છે, તથા તે કૃત્યથી બીજાનું અપમાન પણ થાય છે હાસ્ય-મનોવિનોદને માટે કારણ જરૂર હોય છે. પણ સંયમીને હાસ્યની મદદથી મનોવિનોદ કરવાની શી આવશ્યકતા છે? હાસ્યને કારણે અન્યનાં દિલમાં ચોટ લાગે તેનાથી વધારે ખરાબ વાત બીજી કઈ હોઈ શકે? અધ્યાત્મ માર્ગમાં હંસી મજાકનો સર્વથા ત્યાગ બતાવ્યો છે. હાસ્યમાં બીજાનાં

द्वितीयं संवरद्वारमुपसंहरन्नाह–' एवमिणं ' इत्यादि—

मूलम्–एवमिणं संवरस्स दारं सम्मं संचरियं होइ सुप्पणिहियं इमेहिं पंचहिं वि कारणेहिं मणवयणकायपरिरक्खिएहिं निच्चं आमरणंतं च एस जोगो णेयव्वो धिइमया मइमया अणासवो अकलुसो अच्छिद्दो अपरिस्सावी असंकिलिट्ठो सव्वजिणमणुन्नाओ । एवं बीयं संवरदारं फासियं पालियं सोहियं तीरियं किट्टियं अणुपालियं आणाए आराहियं भवइ, एवं

कषाय के उदय से होता है। जिससे चारित्र का भंग होता है। दूसरे व्यक्तियों की गुप्त चेष्टाएँ भी इस हास्य के द्वारा प्रकट हो जाया करती हैं। यद्यपि चारित्र का इससे पूर्णरूप से भंग नहीं भी होता है–तो भी साधु इसके प्रभाव से महर्द्धिक देवों में उत्पन्न नहीं होता है। कान्दर्पिक आभियोगिक आदि देवों में ही उत्पन्न होता है, अतः हास्य का सेवन करना सत्यव्रती के लिये सर्वथा त्याज्य है, ऐसा समझ कर जो इसका परित्याग कर देता है वह सत्यव्रती अपने व्रत को पूर्णरूप से स्थिर कर पालन करता है। इस प्रकार हास्य जन्य दोषों का विचार कर हास्यवर्जनरूप वचनसंयम से अपनी आत्मा को भावित करके साधु अपने व्रताराधन में पराक्रमशाली बन जाता है और गृहीत सत्यव्रत को पूर्णरूप से सुरक्षित कर स्थिर बना लेता है ॥ सू० ८ ॥

દૂષણો જાહેર કરવા તે પ્રિય લાગે છે, તે હાસ્ય નોકષાયના ઉદયથી થાય છે, જેના કારણે ચારિત્રનો ભંગ થાય છે, બીજી વ્યકિતઓની ગુપ્ત ચેષ્ટાઓ પણ તે હાસ્ય દ્વારા પ્રગટ થયા કરે છે ભલે તેનાથી ચારિત્રનો પૂર્ણતઃ ભંગ થતો ન હોય, તે છતાં પણ સાધુ તેના કારણે મહર્દ્ધિક દેવોમાં ઉત્પન્ન થતો નથી. કાન્દર્પિક, અભિયોગિક આદિ દેવોમાં જ ઉત્પન્ન થાય છે તેથી હાસ્યનું સેવન કરવુ તે સત્યવ્રતીને માટે સર્વથા ત્યાજ્ય છે, એવું સમજીને જે તેનો પરિત્યાગ કરે છે, તે સત્યવ્રતી પોતાના વ્રતને સંપૂર્ણ રીતે સ્થિર કરે છે. અને તેનુ પાલન કરે છે આ રીતે હાસ્યમાથી ઉદ્‌ભવતા દોષોનો વિચાર કરી હાસ્ય વર્જનરૂપ વચનસંયમથી પોતાના આત્માને ભાવિત કરીને સાધુ પોતાના વ્રતની આરાધનામાં સમર્થ બની જાય છે અને ગ્રહણ કરેલ સત્યવ્રતનું સંપૂર્ણ રીતે સુરક્ષિત કરીને સ્થિર બનાવી લે છે ॥ સૂ૦ ૮ ॥

नायमुणिणा भगवया पन्नवियं परूवियं पसिद्धं सिद्धवरसासणमिणं आघवियं सुदेसियं पसत्थं। बीयं संवरदारं सम्मत्तंत्ति बेमि॥सू० ९॥

॥ इय पण्हावागरणे बीयं संवरदारं सम्मत्तं ॥

टीका—' एवं ' पूर्वोक्तप्रकारेण ' इणं ' इदं ' संवरस्स ' संवरस्य ' दारं ' द्वारं=सत्यवचनं नाम द्वितीयं द्वारमित्यर्थः, ' सम्मं ' सम्यक् ' संचरियं ' संचरितं सत् 'होइ' भवति, ' सुप्पणिहियं ' 'सुप्रणिहितं=समाराधितम्। तथा–'इमेहिं' एभिः ' पंचहिं वि ' पञ्चभिरपि ' कारणेहिं ' कारणैः=भावनाभिः, कीदृशैः कारणैः ? इत्याह–' मणवयणकायपरिरक्खिएहिं ' मनोवचनकायपरिरक्षितैः=मनोवाक्कायपरिरक्षितपञ्चभावनाभिरित्यर्थः, ' निच्चं ' नित्यम् ' आमरणंतं च ' आमरणान्तं=मरणपर्यन्तं च ' एस जोगो ' एष योगः=सत्यवचनरूपो योगः 'णेयव्वो'

इस प्रकार सत्यव्रत की स्थिरता के निमित्त पांच भावनाओं को कहकर अब सूत्रकार इस द्वितीय संवरद्वार का उपसंहार करते हुए कहते हैं–' एवमिणं , इत्यादि ।

टीकार्थ—(एवं) पूर्वोक्त प्रकार से (इणं) यह (संवरदारं) सत्यवचन नामक द्वितीय संवरद्वार (सम्मं–संचरियं) अच्छी तरह से पाले जाने पर (सुप्पणिहियं) सुरक्षित (होइ) हो जाता है । (इमेहिं पंचहिं वि कारणेहिं मणवयणकायपरिरक्खिएहिं) इसलिये मन वचन और काय इन तीन योगों से अच्छी तरह सुरक्षित किये गये इन पांचभावनारूप कारणों से (निच्चं) सदा (आमरणंतं च) जीवनभरतक (एसजोगो) यह सत्यवचनरूप योग (धिइमया मइमया) स्वस्थचित्त से एवं हेयो-

---

આ રીતે સત્યવ્રતની સ્થિરતાને માટેની પાંચ ભાવનાઓ વર્ણવીને હવે સૂત્રકાર આ બીજા સંવરદ્વારનો ઉપસંહાર કરતા કહે છે–" एवमिण " ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—" एवं " પૂર્વોક્ત પ્રકારે " " इणं " આ " संवरस्सदारं " સત્ય વચન નામનું બીજું સંવરદ્વાર " सम्मं-संचरियं " સારી રીતે પળાય તો " सुप्पणिहियं " સુરક્ષિત " होइ " થઇ જાય છે " इमेहिं पंचहिं वि कारणेहिं मणवयणकायपरिरक्खिएहिं " તે કારણે મન, વચન અને કાય એ ત્રણે યોગોથી સારી રીતે સુરક્ષિત કરાયેલ આ પાંચ ભાવનારૂપ કારણોથી " निच्चं " સદા " आमरणं तं च " જીવન પર્યન્ત " एसजोगो " આ સત્યવચનરૂપ યોગ " धिइमया मइमया " સ્વસ્થ ચિત્તે અને હેયોપાદેયના વિવેકથી યુક્ત થયેલ મુનિજનોએ " णेयव्वो " પાલન કરવા યોગ્ય છે. કારણ કે આ સત્યમહાવ્રત

नेतव्यः=पालनीयः 'धिइमया' धृतिमता 'मइमया' मतिमता-मेधाविना कथंभूतोऽयं योगः ? इत्याह-'अणासवो' अनाश्रवः 'अकलुसो' अकलुषः 'अच्छिद्दो' अच्छिद्रः 'अपरिस्सावी' अपरिस्रावी 'असंकिलिट्ठो' असंक्लिष्टः 'सव्वजिणमणुण्णाओ' सर्वजिनानुज्ञातश्च। एवम्=एतादृशमिदं 'बीयं' द्वितीयं 'संवरदारं' संवरद्वारं 'फासियं' स्पृष्टं 'पालियं' पालितं 'सोहियं' शोधितं 'तीरियं' तीरितं 'किट्टिय' कीर्त्तितम् 'आराहियं' आराधितम् 'आणाए' आज्ञया यथावत् 'अणुपालियं' अनुपालितं 'भवति। एवम्=अमुना प्रकारेण 'णा-

पादेय के विवेक से युक्त हुए मुनिजन को (णेयव्वो) पालन करने योग्य है, क्यों कि यह सत्य महाव्रतरूप योग (अणासवो) नूतनकर्मों के आस्रव को रोकने वाला होने से अनास्रव रूप है, (अकलुसो) अशुभ अध्यवसाय से रहित होने के कारण अकलुषरूप हैं (अच्छिद्दो) पाप का स्रोत इससे बंद हो जाता है इसलिये अच्छिद्ररूप है, (अपरिस्सावी) एक बिन्दुमात्र भी कर्मरूप जल इसमें प्रविष्ट नहीं हो सकता है इसलिये यह अपरिस्रावी है, (असंकिलिट्ठो) असमाधिरूप भावसे यह वर्जित होता है इसलिये असंक्लिष्ट है। (सव्वजिणमणुण्णाओ) इसीलिये यह समस्त भूत, भविष्यत्, और वर्तमान काल के तीर्थंकरों को मान्य हुआ है। (एवं) इस उक्त प्रकार से (बीयं) द्वितीय संवर द्वार को जो मुनिजन (फासियं) अपने शरीर से स्पर्श करते हैं, (पालियं) निरन्तर ध्यानपूर्वक इसका सेवन करते हैं, (सोहियं) अतिचारों से इसे रहित बनाते हैं, (तीरियं) पूर्णरूप से इसे अपने जीवन में उतारते हैं, (किट्टियं) दूसरों को इसे धारण करने का उपदेश देते

રૂપ યોગ "अणासवो" નવાં કર્મોના આસ્રવને રોકનાર હોવાથી અનાસ્રવરૂપ "अकलुसो" અશુભ અધ્યવસાયરહિત હોવાથી અકલુષરૂપ "अच्छिद्दो" પાપનો સ્રોત તેનાથી બંધ થઈ જાય છે તેથી અચ્છિદ્રરૂપ છે, "अपरिस्सावी" એક બિન્દુ પણ કર્મરૂપી જળ તેમાં પ્રવેશી શકતુ નથી, તેથી તે અપરિસ્રાવી છે, "असंकिलिट्ठो" અસમાધિરૂપ ભાવથી તે રહિત હોય છે તેથી તે અસંક્લિષ્ટ છે. "सव्वजिणमणुण्णाओ" તેથી તે સમસ્ત ભૂત, ભવિષ્ય અને વર્તમાનકાળના તીર્થંકરોએ માન્ય કરેલ છે. "एवं" આ કહ્યું તે પ્રકારે "बीयं" બીજા સંવરદ્વારને જે મુનિજન "फासियं" પોતાના શરીરથી સ્પર્શે છે, "पालियं" નિરન્તર ધ્યાનપૂર્વક તેનું સેવન કરે છે, "सोहियं" અતિચારોથી રહિત બનાવે છે, "तीरियं" પૂર્ણ રીતે તેને પોતાના જીવનમાં ઉતારે છે. "किट्टियं" અન્યને તેનું સેવન કરવાનો ઉપદેશ આપે છે, તથા "अणुपा-

यमुणिणा ' ज्ञातमुनिना भगवता महावीरेण ' पण्णवियं ' प्रज्ञापितं ' परूवियं ' प्ररूपित ' पसिद्धं ' प्रसिद्धम् ' सिद्धवरसासणमिणं ' सिद्धवरशासनमिदम् 'आघवियं ' आख्यातं ' सुदेसियं ' सुदेशितं ' पसत्थं ' प्रशस्तं ' बीयं संवरदारं ' द्वितीयं संवरद्वारं ' समत्तं ' समाप्तम् । एषां सर्वेषां पदानां व्याख्या प्रथमसंवरद्वारोपसंहारे द्रष्टव्या । ' त्तिबेमि ' इति ब्रवीमि-अस्यार्थः पूर्वमुक्तः ॥सू-९॥

॥ इति श्री विश्वविख्यात-जगद्वल्लभ - प्रसिद्धवाचकपञ्चदशभाषाकलितललितकलापालापक-प्रविशुद्धगद्यपद्यनेकग्रन्थनिर्मापक- वादिमानमर्दक-श्रीशाहू छत्रपतिकोल्हापुरराजप्रदत्त ' जैनशास्त्राचार्य ' पदभूपित-कोल्हापुरराजगुरु-बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य- जैनधर्मदिवाकरपूज्यश्री घासीलालव्रतिविरचितायां श्री प्रश्नव्याकरणसूत्रस्य सुदर्शन्याख्यायां व्याख्यायां संवरात्माके द्वीतीये-भागे सत्यवचननामकं द्वितीय संवरद्वारं समाप्तम् ॥ २ ॥

हैं तथा (अणुपालियं) त्रिकरण त्रियोगों से जो इसका अच्छी तरह से आचरण करते हैं वे (अणाए आराहियं भवइ) इसकी आराधना सर्वज्ञ भगवान् के वचनों से ही करते हैं ऐसा जानना चाहिये । (एवं) इस प्रकार से यह उक्तरूप संवरद्वार (णायमुणिणा) प्रसिद्धक्षत्रियवंश में उत्पन्न हुए मुनि भगवान् महावीर ने (पण्णवियं) प्रज्ञापित किया है शिष्यों के लिये सामान्य रूप से कहा है । (परूवियं) प्ररूपित किया है-भेदानुभेदप्रदर्शन पूर्वक कथित किया है । इसलिये यह (पसिद्धं) प्रसिद्ध है-आचार्यादिपरंपरा से इसका पालन इसी रूप से चला आ रहा है अतः निर्दोष है । तथा (सिद्धवरसासणमिणं) भूतकाल में जितने भी सिद्ध हो चुके हैं उनका यह उत्कृष्ट शासनरूप है सो (आघवियं)

लियं " त्रिકરણ યોગોથી જેઓ તેમનું સારી રીતે આચરણ કરે છે તેઓ " अणाए आराहियं भवइ " તેની આરાધના સર્વજ્ઞ ભગવાનનાં વચનોથી જ કરે છે એમ સમજવું, " एवं " આ પ્રકારે આ (વર્ણવ્યા પ્રમાણેનું) સંવર-દ્વાર " णायमुणिणा " પ્રસિદ્ધ ક્ષત્રિય વંશમા જન્મેલા મહાવીર ભગવાને " पण्णवियं " પ્રજ્ઞાપિત કર્યું છે. શિષ્યોને માટે સામાન્ય રૂપે કહ્યુ છે. ' परूवियं " પ્રરૂપિત કર્યું છે. ભેદાનુભેદ દર્શાવીને વર્ણવ્યું છે. તેથી તે " सिद्धं " પ્રસિદ્ધ છે. આચાર્યાદિ પરંપરાથી તેનુ આ રૂપેજ પાલન થતું આવ્યું છે, તેથી તે નિર્દોષ છે તથા " सिद्धवरसासणमियं " ભૂતકાળમાં જેટલા સિદ્ધો થઇ ગયા છે તેમના ઉત્કૃષ્ટ શાસનરૂપ વળી " ओघवियं " તેનુ કથન ભગવાન

इसी का कथन भगवान् महावीर प्रभुने किया है और (सुदेसियं) ऐसा ही उपदेश इसका उन्होंने देव, मनुज एवं असुरों सहित परिषदा में दिया है। (पसत्थं) यह द्वितीय संवरद्वार समस्त प्राणियों का हितकारक होने से प्रशस्त-मंगलमय है। (बीयं संवरदारं समत्तं) इस तरह का यह द्वितीय संवरद्वार समाप्त हुआ। (त्तिबेमि) हे जंबू मैंने जैसा यह श्री महावीर प्रभु के मुख से सुना है उसी तरह का यह तुमसे कहा है। अपनी तरफ से इसमें कुछ भी कल्पित करके नहीं कहा है॥

भावार्थ—दूसरे संवर द्वार का उपसंहार करते हुए सूत्रकार कह रहे हैं कि इस द्वितीय संवरद्वार को कि जिसका नाम सत्यमहाव्रत है जो मुनिजन इन कथित पंच भावनाओं की दृढ़ता पूर्वक पालते हैं-जीवन भरतक-इसके अनुसार अपनी कर, चरण आदि की प्रवृत्ति को करते रहते हैं उनके अशुभ अध्यवसाय रुक जाते हैं, नवीन कर्मों का बंध होता नहीं है। पापों का स्रोत इसके प्रभाव से उनका रुक जाता है यह अपरिस्रावी आदि विशेषणों वाला है। त्रिकालवर्ती समस्त अरिहंत भगवंतों ने इसका स्वयं पालन किया है, और जीवों को इसके पालने का उपदेश आदेश उन्हों ने परिषदा में दिया है। भगवान महावीर ने

મહાવીરે કરેલ છે અને "सुदेसियं" તેમણે તેનો આ પ્રમાણે જ ઉપદેશ દેવ, મનુષ્ય અને અસુરો સહિતની પરિષદોમાં આપ્યો છે. "पसत्थं" આ દ્વિતીય સંવરદ્વાર સઘળા પ્રાણીઓનું હિત કરનાર હોવાથી પ્રશસ્ત-મંગળમય છે. "बीयं संवरदारं समत्तं" આ બીજું સંવરદ્વાર સમાપ્ત થયું "त्तिबेमि" હે જંબૂ! મેં જેવું મહાવીર પ્રભુના મુખથી સાંભળ્યું છે, મારી તરફથી તેમાં કલ્પિત કાંઈ પણ ઉમેરીને તે કહેવાયું નથી.

ભાવાર્થ--બીજા સંવરદ્વારનો ઉપસંહાર કરતાં સૂત્રકાર કહે છે-સત્ય મહાવ્રત નામના બીજા સંવરદ્વારનું જે મુનિજન ઉપરોકત પાંચ ભાવનાઓનું જીવન પર્યંત દૃઢતાપૂર્વક પાલન કરે છે, તેના પ્રમાણે પોતાની કર ચરણ આદિની પ્રવૃત્તિ કર્યા કરે છે તેમના અશુભ અધ્યવસાય અટકી જાય છે, તેમને નવાં કર્મોનો બંધ બંધાતો નથી, તેના પ્રભાવથી તેમનો પાપોનો સ્રોત અટકી જાય છે, તેથી તે અપરિસ્રાવી આદિ વિશેષણોવાળું છે. ત્રિકાલવર્તી સમસ્ત અરિહંત ભગવાનોએ તેનું પોતે પાલન કર્યું છે, અને તેના પાલનનો પરિષદોમાં જીવોને ઉપદેશ આપ્યો છે ભગવાન મહાવીરે પણ તેમના પ્રમાણે જ

भी उन्हीं के अनुसार इस द्वितीय संवरद्वार की प्रशंसा की है स्वयं भी इसका पालन किया है। अतः यह मंगलमय है। निर्दोष है। बाधा-वर्जित है। इसे धारण कर प्रत्येक संज्ञी पर्याप्त पंचेन्द्रिय मनुष्य को अपना जीवन सफल बनाना चाहिये। इस प्रकार जंबू स्वामी से श्री सुधर्मा स्वामी ने कहा ॥ सू-९ ।

॥ द्वितीय संवरद्वार समाप्त ॥

આ બીજા સંવરદ્વારની પ્રશંસા કરી છે અને જાતે પણ તેનું પાલન કર્યું છે તેથી તે મંગળમય છે, નિર્દોષ છે, બાધારહિત છે, તેને ધારણ કરીને પ્રત્યેક સંજ્ઞી પર્યાપ્તિ પંચેન્દ્રિય મનુષ્યે પોતાનું જીવન સફળ બનાવવું જોઈએ. આ પ્રમાણે શ્રી સુધર્માસ્વામીએ જંબૂસ્વામીને કહ્યુ ॥ સૂ૦ ૯ ॥

॥ બીજું સંવરદ્વાર સમાપ્ત ॥

अथ तृतीय संवरद्वारं प्रारभ्यते

पूर्वस्मिन्नध्ययरे मृषावादविरमण नामकं द्वितीयं संवरद्वारं प्रोक्तम्, तच्चादत्तादानविरमणं विना न संभवतीत्यतः क्रमप्राप्ते तृतीयेऽध्ययनेऽदत्तादानविरमणनामकं तृतीयं संवरद्वारमभिधीयते—'जंबू' इत्यादि—

मूलम्—जंबू ! दत्तमणुन्नायसंवरो नाम होइ तइयं सुव्वय ! महव्वयं गुणव्वयं परदव्वहरणपडिविरइकरणजुत्तं अपरिमियमणंततण्हाणुगय—महिच्छमणवयणकलुस—आयाणसुनिग्गहियं, सुसंजमियमणहत्थपायनिहुयं निहुयं निग्गंथं, णोट्ठियं, निरुत्तं, निरासवं, निब्भयं, विमुत्तं उत्तमनरवसभ—पवर—बलवग—सुविहियजणसंमयं—परमसाहुधम्मचरणं, जत्थ य गामागर—नगर—निगम—खेड—कब्बड—मडंब—दोणमुह—संबाह—पट्टणासमगयं च किंचि दव्वं मणि—मुत्त—सिलप्पवाल-कंस-दूस-रययवरकणग-रयणमाइं पडियं पम्हट्ठं विप्पणट्ठं न कप्पइ कस्सइ कहेउं वा गेण्हेउं वा अहिरन्न सुवण्णाएणं समलेट्ठु कंचणेणं अपरिग्गहसंबुडेणं लोगम्मि विहरियव्वं ॥ सू० १ ॥

टीका—'सुव्वय' सु=शोभनं व्रतं=चारित्रपालनरूपं यस्य तत्संबुद्धौ हे सुव्रत !=शोभनव्रतशालिन् ! 'जंबू' हे जम्बूः ! इदं प्रारभ्यमाणं 'तइयं' तृती-

---

तृतीय संवरद्वार प्रारंभ

पूर्व अध्ययनमें मृषावाद विरमण नाम का जो दूसरा संवरद्वार कहा गया है, अदत्तादानविरमण के विना नहीं हो सकता है, इसलिये सूत्रकार क्रमप्राप्त इस तृतीय अध्यय में अदत्तादानविरमण नाम का

ત્રીજા સંવરદ્વારનો પ્રારંભ

આગળના અધ્યયનમાં મૃષાવાદ વિરમણ નામના બીજા સંવરદ્વાર વિષે જે કહેવામા આવ્યું તેનું પાલન અદત્તાદાન વિરમણ વિના થઈ શકતું નથી. તેથી સૂત્રકાર અનુક્રમે આવતા આ તૃતીય અધ્યયનમાં અદત્તાદાન વિરમણ

यमध्ययनं 'दत्तमणुन्नायसंवरो' दत्तानुज्ञातसंवरः=दत्तं=दायकैर्वितीर्णम् अन्नपानादिकम्, अनुज्ञातं=प्रातिहारकपीठफलकादिकं च ग्राह्यमित्येवंरूपः संवरो-दत्तानुज्ञातसंवरो नाम 'होइ भवति। 'महव्वयं' महाव्रतमिदम्, तथा-'गुणव्वयं' गुणव्रतं=गुणानाम् ऐहिकपारलौकिकोपकाराणां कारणभूतं व्रत-गुणव्रतम्। कीदृशमिदम्? इत्याह-'परदव्वहरणपडिविरइकरणजुत्तं' परद्रव्यहरणप्रतिविरतिकरणयुक्तं=परेषां यद् द्रव्यं=धनं तस्य यद् हरणम्=आदानं, तत्प्रति या विरतिः=विरमणं तस्याः कारणम्=आचरणं, तेन युक्तं=सहितम्, परद्रव्यादानविमुखकारकमित्यर्थः, तथा—'अपरिमियमणंततण्हाणुगयमहिच्छमणवयणकलुसआयाणसुनिग्गहियं' अपरिमितानन्ततृष्णानुगतमहेच्छमनोवचनकलुषादानसुनिगृहीतम्=अपरि-

---

तीसरा संवरद्वार कहते हैं-'जंबू' इत्यादि।

टीकार्थ—(सुव्वय) हे शोभन व्रत शालिन जंबू! (तइयं) यह प्रारभ्यमाण तृतीय अध्ययन (दत्तमणुन्नायसंवरो) दत्तानुज्ञात संवर नामका है। इस दत्तानुज्ञात (दिया हुआ) में दाता के द्वारा वितीर्ण अन्नपान का तथा अनुज्ञात पीठफलक आदि के लेने का विधान किया गया है। यह (महव्वयं) दत्तानुज्ञातसंवर महाव्रत है। (गुणव्वयं) तथा गुणव्रतहै-इह लोक संबंधी तथा परलोकसंबंधी गुणों का यह कारणभूत व्रत है। अथवा समस्तव्रतों का यह उपकारक है इसलिये गुणव्रत है (परदव्वहरणपडिविरइकरणजुत्तं) इस व्रत के आराधन से जीव का आचरण दूसरों के द्रव्य को ग्रहण करने की प्रवृत्ति से सर्वथा विरक्त होता है (अपरिमियमणंततण्हाणुगयमहिच्छमणवयणकलुस-आयाणसुनिग्गहियं) तथा इस महाव्रत की आराधना से, विद्यमान-

---

નામના ત્રીજા સંવરદ્વારનું વર્ણન કરે છે—"जंबू" ઈત્યાદિ.

ટીકાર્થ—"सुव्वय" હે શોભનવ્રતશાળી જંબૂ! "तइयं" આ શરૂ કરેલ ત્રીજું અધ્યયન "दत्तमणुन्नायसंवरो" દત્તાનુજ્ઞાન સંવર નામનું છે. દત્તાનુજ્ઞાત (દીધેલુ) માં દાતાદ્વારા વિતીર્ણ અન્નપાન તથા અનુજ્ઞાત પીઠફલક આદિ લેવાનું વિધાન કરેલ છે. તે "महव्वयं" દત્તાનુજ્ઞાન સંવર મહાવ્રત કહેવાય છે. "गुणव्वयं" તથા ગુણવ્રત છે—આલોક અને પરલોક સંબંધી ગુણોનું કારણભૂત આ વ્રત છે, અથવા સમસ્ત વ્રતોને માટે તે ઉપકારક હોવાથી તેને ગુણવ્રત કહ્યુ છે. "परदव्वहरणपडिविरइकरणजुत्तं" આ વ્રતની આરાધના કરવાથી અન્યનું દ્રવ્ય ગ્રહણ કરવાની પ્રવૃત્તિથી જીવો સર્વથા વિરક્ત રહે છે. "अपरिमियमणंत तण्हाणुगयमहिच्छ मणवयणकलुस-आयाणसुनिग्गहियं" નજરે ચડતા દ્રવ્યને પ્રાપ્ત કરવાની જે અસીમ તથા અક્ષય સ્પૃહા—લાલસા થાય છે

मिता=परिमाणरहिता, अनन्ता=अक्षया या तृष्णा=स्पृहा=विद्यमानद्रव्याव्ययेच्छा, तयाऽनुगते ये महेच्छे=अविद्यमानद्रव्यलाभविषये महेच्छायुक्ते मनोवचने=मनोवाणी च, ताभ्यां यत् कलुषं=परधनविषयत्वेन पापरूपम् आदानं=ग्रहणं तत्सुनिगृहीतं =सुनियन्त्रित यत्र तम्, तथा-' सुसंजमियमणहत्थपायनिहुय ' सुसंयमितमनोहस्तपादनिभृतं-सुसंयमितेन सम्यग्नियन्त्रितेन मनसा हस्तौ पादौ च परद्रव्यादानव्यापारात् निवृतौ=उपरतौ यत्र तत्। उक्तविशेषणद्वयेन परद्रव्यादाने मनोवाकायनिरोधः प्रदर्शितः। पुनः कथंभूतमिदम् ? इत्याह-' निग्गंथं ' निर्ग्रन्थं=निर्गतो बाह्याभ्यन्तरो ग्रन्थो यस्मात्तत्, बाह्याभ्यन्तरग्रन्थिरहितमित्यर्थः, तथा-'णेट्ठिगं'

द्रव्य के अव्यय होने की जो अपरिमित एवं अक्षय स्पृहालालसा होती है वह, तथा इस स्पृहा-लालसा-से जो बड़ी २ और अविद्यमान द्रव्य के लाभ विषयक इच्छाओं की परंपरा चलती है कि जिससे मनवचन की पर धन को लेने-ग्रहण करने की जो कलुषित प्रवृत्ति होती रहती है वह सुनियन्त्रित हो जाती है। तथा जब मन की परधन को हरण करने की कलुषित विचारधारा सुनियन्त्रित हो जाती है फिर (सुसंजमियमणहत्थपायनिहुयं) उस मन के नियन्त्रित होते ही परद्रव्य के ग्रहण करने के निमित्त जो हाथ पैरों का व्यापार होता है वह भी उपरत-बंद हो जाता है। इस तरह इन दोनों विशेषणों से यह कहा है कि इस महाव्रत के सेवन करने से, परद्रव्यहरण करने के लिये जो मनवचन और काय का व्यापार पहिले होता था वह सर्वथा बंद हो जाता है। (अदत्तादानविरमणसंवर) यह दत्तानुज्ञात संवर कैसा है सो कहते हैं-(निग्गंथं) इस महाव्रत की आराधना से बाह्य और

તથા તે લાલસાથી બીજાં અવિદ્યમાન દ્રવ્યની પ્રાપ્તિ માટેની મોટી મોટી ઇચ્છાઓની જે પરંપરા ચાલે છે કે જેથી મન વચનની પારકાનું ધન લેવાની જે દોષપૂર્ણ પ્રવૃત્તિ ચાલુ રહે છે તેનું આ મહાવ્રતની આરાધનાથી નિયન્ત્રણ થાય છે, તથા જ્યારે પારકાનું ધન હરી લેવાની મનની કલુષિત વિચારધારા સુનિયન્ત્રિત થઈ જાય છે ત્યારે ' सुसंजमियमणहत्थपायनिहुय " તે મનનું નિયમન થતાં જ પારકાનુ દ્રવ્ય ગ્રહણ કરવા માટે હાથ-પગની જે પ્રવૃત્તિ ચાલે છે તે પણ બંધ પડી જાય છે આ રીતે એ બન્ને વિશેષણોથી એ દર્શાવવામાં આવ્યું છે કે આ મહાવ્રતનું સેવન કરવાથી પરદ્રવ્ય લેવાને માટે મન, વચન અને કાયાની જે પ્રવૃત્તિ પહેલા ચાલતી હતી તે તદ્દન બંધ પડી જાય છે. " अदत्तादानविरमणसंवर " આ દત્તાનુજ્ઞાત સંવર કેવું છે તે હવે કહે છે— " निग्गंथं " આ મહાવ્રતની આરાધનાથી બાહ્ય અને આભ્યન્તર પરિગ્રહ દૂર

नैष्ठिकं=सर्वधर्मप्रकर्षपर्यन्तवर्त्ति, ' निरुत्तं ' निरुक्तं-सर्वज्ञैरुपादेयत्वेन निरुक्तम्, अव्यभिचरितं वा तथा-निरासवं ' निराश्रवं=कर्मादानरहितम्, ' निब्भयं ' निर्भयं=नृपादिभयरहित ' विमुत्तं ' विमुक्तं=लोभदोषादिरहितम्, तथा-' उत्तमनरवसभ-पवरबलवग-सुविहियजणसंमयं ' उत्तमनरवृषभ-प्रवरबलवत्सुविहितजनसम्मतम्-उत्तमाः=उत्कृष्टा ये नरवृषभाः-नरश्रेष्ठाः=जिनाः तथा-प्रवरबलवन्तः= चक्रवर्तिवासुदेवादयः, सुविहितजनाः=साधुलोकास्तेषां संमतम्=अभिमतं यत्तत्तथा तथा-' परमसाहूधम्मचरणं ' परमसाधुधर्मचरणं=परमसाधूनाम्=उत्कृष्टपतस्विनां धर्मचरणं=धर्मपालनम् यत्तत्तथा, एतादृशमिदं दत्तानुज्ञातसंवरद्वारम्। अत्र तृतीये

आभ्यन्तर परिग्रह दूर हो जाता है, अर्थात् यह व्रत बाह्य और आभ्यन्तर की ग्रन्थि से रहित होना है तथा (णेट्ठियं) समस्तधर्मों के प्रकर्षपर्यन्त यह रहता है, एवं (निरुत्तं) सर्वज्ञ प्रभुने इसे उपादेयरूप से कहाहै, अथवा यह अव्यभिचरित है, अर्थात् जितना भी सकलसंयमी का धर्म है उसके साथ यह अविनाभावी है। (नीरासवं) इसमें नवीन कर्मों का आदान नहीं होता है। (निब्भयं) नृपादि का भय इसके आचरण में साधु को नहीं रहता है इसलिये यह निर्भय है। (विमुत्तं) लोभ दोष आदि से यह रहित होता है। (उत्तमनरवसभ, पवरबलवग-सुविहियजणसंमयं) उत्कृष्ट जो नरवृषभ-जिनदेव हैं तथा बलदेव वासुदेव आदि जो प्रवरबलवंत व्यक्ति है, तथा सुविहितजन जो साधु लोक हैं, इन सब के लिये यह मान्य है। तथा (परमसाहुधम्मचरणं) परमसाधुजनों-उत्कृष्टतपस्विजनों का यह धर्मोचरणरूप हैं। (अदत्तादानविरमण) ऐसा यह दत्तानुज्ञातसंवरद्वार है। इस

થઇ જાય છે એટલે કે આ વ્રત બાહ્ય અને આભ્યન્તરની ગ્રન્થિથી રહિત હોય છે, તથા " णेट्ठियं " તે સમસ્ત ધર્મોનુ પ્રકર્ષપર્યન્ત છે, અને " निरुत्तं" સર્વજ્ઞ પ્રભુએ તેને ઉપાદેયરૂપે બતાવ્યું છે, અથવા તે અવ્યભિચરિત છે, એટલે કે સંયમીના જેટલા કર્તવ્યો છે તેની સાથે તે સુસંગત છે ' निरासवं " તેનાથી નવીન કર્મો બંધાતા નથી " निब्भयं " તેને આચરવામાં સાધુને નૃપાદિનો ભય રહેતો નથી તેથી તે નિર્ભય છે. " विमुत्तं ' લોભ, દોષ આદિથી તે રહિત હોય છે " उत्तमनरवसभ, पवरबलवग-सुविहिय जणसंमयं " જે શ્રેષ્ઠ નરવૃષભ-જિનદેવ છે, તથા બળદેવ વાસુદેવ આદિ જે પ્રબળ બળવાન પુરુષો છે, તથા સુવિહિત જન જે સાધુલોક છે, તે સૌને માટે તે માન્ય છે. તથા " परमसाहुधम्मचरणं " જે પરમ સાધુજનો ઉત્કૃષ્ટ તપસ્વીજનોને માટે તે ધર્માચરણરૂપ છે, એવું આ અદત્તાદાન વિરમણ-દત્તાનુજ્ઞાત સંવરદ્વાર છે. આ

संवरे साधुभिः किं कर्तव्यम् ? इत्याह–' जत्थ य ' यत्र च–तृतीयसंवरद्वारे ' गामागर–नगर–निगम–खेड–कव्वड–मडंब–दोणमुह–संवाह–पट्टणासमगयं च =ग्रामाकर–नगरनिगम–खेट–कर्वट–मडम्ब–द्रोणमुख–संवाध–पत्तनाश्रमगतं च–ग्रामाकरनगरनिगमखेटकर्वटमडम्बद्रोणमुखसंवाधपट्टनाश्रमाणां व्याख्या पूर्वमुक्ताः, तद् गत च ' किंचिदव्व ' किंचिद्द्रव्यं = किमपिद्रव्यम्, तदेवाह–'मणिमुत्त-सिलप्पवालकंस – दूस–रयक – वरकणग – रयणमाइ ' मणिमुक्ताशिला–प्रवाल कांस्य–दूष्य–रजत–वरकनक– रत्नादि– मणिः–पद्मरागादिः, मुक्ता=मुक्ताफलं, ' शिला ' वहुमूल्यपाषाणखण्डम्, प्रवालं=विद्रुमः ' मूंगा ' इति भाषाप्रसिद्धः, ' कंस ' कांस्यं–' कांसा ' इति प्रसिद्धम् ' ' दूष्यं ' वस्त्रविशेषः, रजतं='चान्दी' इतिभाषाप्रसिद्धावरकनकं = धात्वन्तरापेक्षया श्रेष्ठं सुवर्ण, रत्नं=कर्केतनादिकम् आदि यस्य तत्तथाभूतं द्रव्य 'पडियं' पतितं–वस्त्राञ्चलादेः, 'पम्हट्टं' प्रस्मृतं=कुत्रापि विस्मृतं ' विप्पणट्टं' विप्रणष्टं=गवेषकद्भिरपि न प्राप्तम्, तथाभूतं मणिमुक्तादिकं

तृतीय संवरद्वार में साधुजनों को क्या करना चाहिये इसके लिये सूत्र-कार कहते हैं-(जत्थ य) इस तृतीय संवरद्वार में (गामागरनगर-निगमखेडकव्वड मडंब दोणमुहसंवाहपट्टणासमगयं च) साधुजनों को ग्राम, आकर, नगर, निगम, खेट, कर्वट, मडम्ब, द्रोणमुख, संवाह, पट्टन, आश्रम, इन स्थानों में, रही हुई (किंचि दव्वं) कुछ भी वस्तु (मणिमुत्तसिलप्पवालकंसदूसरयकवरकणगरयणमाइं) मणि, मुक्ता, शिला, प्रवाल, कांस्य, दूष्य–वस्त्रविशेष, रजत–चांदी, सुवर्ण, रत्न आदि वस्तु (पडियं) किसी की गिर गई हो, (पम्हट्ठं) भूली हुई हो, (वि-प्पणट्ठं) ढूंढने पर भी नहीं मिली हो, (न कप्पइ कस्सइ कहेउं वा गे-

---

તૃતીય સંવરદ્વારમાં સાધુજનોએ શું કરવુ જોઈએ તે બતાવવાને માટે સૂત્રકાર કહે છે–" जत्थ य " આ ત્રીજા સંવરદ્વારમા " गामागारनगरनिगम खेडकव्वड मडंवदोणमुहसवाहपट्टणसमगयं च " સાધુજનોએ ગ્રામ, નગર, આકર નિગમ, ખેટ, કર્બટ, મડમ્બ, દ્રોણમુખ, સવાહ, પટ્ટન, આશ્રમ, એ સ્થાનોમાં રહેલી " किंचि दव्वं " કોઇ પણ વસ્તુ " मणिमुत्तसिलप्पवालकंसदूसरयकवर कणगरयणमाइं " મણિ, મુક્તા, શિલા, પ્રવાળ, કાસ્ય, દૃષ્ય એક પ્રકારનું વસ્ત્ર, રજત–આદિ, સુવર્ણ રત્ન આદિ વસ્તુઓ " पडियं " કોઇની પડી ગઈ હોય, " पम्हट्ठ " કોઇ ભૂલી ગયુ હોય, " विप्पणट्ठं " શોધવા છતા પણ જડી ન હોય, " न कप्पइ कस्सइ कहेउंवा गेण्हेउंवा " તેને લેવાનું સંયત કે અસં-

द्रव्यं न 'कस्सइ' कस्यापि संयतस्याऽसंयतस्य वा 'कहेउ' कथयितुं वा, 'गेण्हेउं' स्वयं ग्रहीतुं परेण ग्राहयितुं वा 'न कप्पइ' न कल्पते, साधोर्निवृत्तित्वात्। परद्रव्यं दृष्ट्वा साधुना किं कर्तव्यम्, ? इत्याह-'अहिरण्णसुवण्णएणं' अहिरण्यसुवर्णकेन=हिरण्यसुवर्णवर्जकेन 'समलेट्ठुकंचणेण' समलेष्टुकाञ्चनेन=समः=तुल्यः लेष्टुः=मृत्खण्डं काञ्चनं=सुवर्णं च उपेक्षणीयतया यस्य तेन तथोक्तेन=मृत्खण्डे सुवर्णे च समभाववतेत्यर्थः, 'अपरिग्गहसंवुडेण' अपरिग्रहसंवृतेन=नास्ति परग्रहो यस्य सोऽपरिग्रहः, अत एव संवृतः=ममत्वभाववर्जितस्तेन तथोक्तेन साधुना 'लोगम्मि' लोके मर्त्यलोके 'विहरियव्वं' विहर्त्तव्यम्, साधुभिरुक्तरीत्या विहरणीयमिति भावः ॥ सू० १ ॥

ण्हेउं वा) और न स्वय लेना चाहिये उसको संयत अथवा असंयत से लेने के लिये नहीं कहना चाहिये। क्योंकि इस प्रकार की प्रवृत्ति मुनिमार्ग में कल्पित नहीं कही है। कारण कि साधु (अहिरण्णसुव्वण्णेणं) हिरण्य और सुवर्ण इन सब से निवृत्तिवाला होता है साधु को न हिरण्य की चाहना होती है और न सुवर्ण की। (समलेट्ठुकंचणेणं) उसकी दृष्टि में तो उपेक्षणीय होने के कारण मृत्खंड मिट्टी का ढेला और कांचन दोनों बराबर होते हैं। अर्थात् वह इन दोनों में समभाव वाला होता है। (अपरिग्गहसंवुडेणं) इस तरह ममत्वभाव से वर्जित होने के कारण अपरिग्रह से युक्त होते हैं साधु को इस प्रकार का होकर इस लोक में विचरना चाहिये।

भावार्थ—संसार में निर्भय होकर विचरण करने के लिये सब से उत्कृष्ट साधन यदि कोई है कि जिससे लोगों की दृष्टि का आकर्षण हो

यतने કહેવું ન જોઈએ, અને પોતે લેવી જોઇએ નહી કારણ કે એવા પ્રકારની પ્રવૃત્તિ મુનીમાર્ગમાં ઉચિત ગણાવી નથી. કારણ કે સાધુ "अहिरण्ण सुव्वण्णेणं" હિરણ્ય અને સુવર્ણ એ બધાની નિવૃત્તિ હોય છે. સાધુને હિરણ્યની ઇચ્છા હોતી નથી કે સુવર્ણની ઇચ્છા હોતી નથી "समलेट्ठुकंचणेण" તેની દૃષ્ટિએ ઉપેક્ષા પાત્ર હોવાથી માટીનું ઢેફું અને કાંચન બન્ને સમાન છે એટલે કે બન્નેમાં તે સમભાવવાળો હોય છે. "अपरिग्गहसंवुडेणं" આ રીતે મમત્વભાવથી રહિત હોવાથી તે અપરિગ્રહી હોય છે. સાધુએ એ પ્રકારે અપરિગ્રહવ્રત યુકત બનીને આ લોકમા વિચરવું જોઈએ

ભાવાર્થ—સંસારમા નિર્ભય થઈને ફરવાને માટે જો કોઇ સર્વશ્રેષ્ઠ સાધન હોય કે જેનાથી લોકોની દૃષ્ટિ આકર્ષાય અને સાધુત્વ પર વિશ્વાસ જામે તો

और साधुत्व पर विश्वास-श्रद्धा जमे-तो वह एक अपरिग्रहत्व का ही सिद्धान्त है। इसमें अन्तरंग और बहिरंग, इन दोनों प्रकार के परिग्रह का सैधान्तिक दृष्टि से परित्याग होता है। साधु के पास-निर्ग्रन्थ मुनि के पास इन दोनो प्रकार के परिग्रह का अभाव होता है। बाहिरी दृष्टि में जो कुछ उसके पास में है वह सब संयमधर्मोपकरण है, परिग्रह नहीं है। सूत्रकार ने यही बात साधु के लिये इस तृतीय संवरद्वार में समझाई है। पूर्व अध्ययन में-द्वितीय अध्ययन में मृषावाद का नौकोटियों से साधु को जो त्याग करना कहा है वह तबतक पूर्णरूप से पालित नहीं हो सकता कि जबतक अन्तरंग और बहिरंग का त्याग नहीं हो जाता। अपरिमित अनंत तृष्णाओं पर अंकुश करने वाली यही एक अपरिग्रहता है। मन, वचन और काय की परके द्रव्य को आदान (ग्रहण) करने की प्रवृत्ति पर रोक लगा देने वाली यही अपरिग्रहता है। इस अपरिग्रहता की छत्रच्छाया में पलने वाला साधु नवीन कर्मों के बंध से रहित हो जाता है, तथा सबका विश्वासपात्र बन जाता है। उसे किसी भी प्रकार का किसी का भय नहीं रहता है। ग्राम आकर आदि किसी भी स्थान में भूली हुई, पड़ी हुई, रखी हुई, किसी भी तरह की वस्तु वह न स्वयं लेता है और न दूसरों से उसे लेने को कहता है।

તે એક માત્ર અપરિગ્રહત્વનો સિદ્ધાંત જ છે. તેમાં આંતરિક તથા બાહ્ય એ બન્ને પ્રકારના પરિગ્રહનો સૈદ્ધાન્તિક દૃષ્ટિએ પરિત્યાગ થાય છે. સાધુની પાસે નિર્ગ્રન્થ મુનિની પાસે આ બન્ને પ્રકારના પરિગ્રહનો અભાવ હોય છે બાહ્ય રીતે જોતા તેમની પાસે જે કંઇ હોય છે તે બધું સયમ ધર્મોપકરણ છે, પરિગ્રહ નથી, સૂત્રકારે એ જ વાત સાધુને માટે આ ત્રીજા સંવરદ્વારમાં સમજાવી છે. આગળના અધ્યયનમાં બીજા અધ્યયનમાં મૃષાવાદનો નવ પ્રકારે ત્યાગ કરવાનું સાધુઓને જે કહેવામાં આવ્યું છે તેનું અતરંગ તથા બહિરંગ પરિગ્રહનો ત્યાગ ન થાય ત્યાં સુધી પાલન થઇ શકતું નથી. અપરિમિત-અનંત તૃષ્ણાઓ પર અંકુશ રાખનાર આ એક અપરિગ્રહતા જ છે આ અપરિગ્રહતા જ, મન, વચન અને કાયાથી અન્યનું દ્રવ્ય પડાવી લેવાની પ્રવૃત્તિ પર બ્રેક (અંકુશ) નું કામ કરે છે આ અપરિગ્રહતાની છત્રછાયામાં રહેતો સાધુ નવાં કર્મોનાં બંધથી રહિત બની જાય છે તથા સૌને માટે વિશ્વાસપાત્ર બની જાય છે. તેને કોઈનો પણ કોઇ પણ પ્રકારનો ભય રહેતો નથી. ગ્રામ, આકર આદિ કોઇ પણ સ્થાનમાં ભૂલથી રહેલી, પડી રહેલી, મૂકી રાખેલી કોઇ પણ પ્રકારની વસ્તુ તે પોતે લેતો નથી કે લેવાનુ બીજાને કહેતો નથી. આ વ્રતને લીધે

पुनर्मुनिकर्त्तव्यमाह—'जंपिय' इत्यादि—

मूलम्—जं पि य होज्जा हि दव्वजायं खलगयं खेत्तगयं रन्नमंतरगयं वा किंचि पुप्फफलतयप्पवालकंदमूलतणकट्ठसक्कराइं अप्पं वा बहुं वा अणुं वा थूलं वा न कप्पइ उग्गहे अदिण्णम्मि गेण्हेउ। जे हणि हणि उग्गहे अणुण्णाविय गेण्हियव्वं. वज्जेयव्वो य सव्वकालं अचियत्तघरप्पवेसो अचियत्तभत्तपाणं अचियत्तपीढफलगसेज्जासंथारगवत्थपायकंबल-दंडग-रयहरण--निसेज्ज चोलपट्टग मुहमोत्तियपायपुंछणाइभायणभंडोवहिउवगरणं। परपरिवाओ परस्स दोसो परववएसेण जं च गेण्हेंति, परस्स नासेइ जं च सुकयं दाणस्स य अंतराइयं, दाणविप्पणासो पेसुण्णं चेव मच्छरियं च ॥२॥

टीका—'जं पि य' यदपि च 'होज्जा' भवेत्, हि=निश्चित 'दव्वजायं' द्रव्यजातं, तदेवाह= 'खलगयं' खलगतं=खलं धान्यराशीकरणभूमिस्तत्र गतं=स्थितं, तथा—'खेत्तगयं' क्षेत्रगतम्=क्षेत्रस्थितं 'रन्नमंतरगयं' अरण्यान्तर्गतं=वनान्तः स्थितं वा 'किंचि' किञ्चित्=किमपि 'पुप्फफलतयप्पवालकंदमूल-

---

इस व्रत से साधु की आत्मा समस्त वस्तुओं में असारता के दर्शन कर लेने से ढेला और कांचन में समान बुद्धि वाला बन जाता है ॥ सू–१ ॥

सूत्रकार पुनः मुनिजन के ही कर्तव्य को कहते हैं–'जंपि य' इ०

टीकार्थ—(जंपि य होज्जा हि दव्वजायँ) जो कुछ भी द्रव्य हो चाहे व (खलगयं) खलिहान में पड़ा हो चाहे (खेत्तगयं) खेत में पड़ा हो, या (रन्नमंतरगयं वा) जंलग में पड़ा हो (किंचि)

સાધુનો આત્મા સમસ્ત વસ્તુઓમાં અસારતાનું દર્શન કરી લેવાથી સોનું અને માટીના ઢેફાને સમાન ભાવે જોનાર બની જાય છે ॥ સૂ૦ ૧ ॥

સૂત્રકાર ફરીથી મુનિજનનાં કર્તવ્યો જ દર્શાવે છે–"जंपि य" ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—"जंपि य होज्जा हि दव्वजायं" જે કોઇ પણ દ્રવ્ય હોય, ભલે તે "खलगयं" ખળામાં પડ્યું હોય ભલે "खेत्तगय" તે ખેતરમાં પડ્યું હોય, "रन्नमतरगयं वा" જંગલની અંદર પડ્યું હોય. "किं चि" ગમે તે

तणकट्ठसक्कराइ ' पुष्पफलत्वक् प्रवालकन्दमूलतृणकाष्ठशर्करादि, तत्र-पुष्प-फले प्रतीते, त्वक्=त्वचा, प्रवालोऽङ्कुरः, कन्दः=सूरणादिः, मूलम्=मूलकादि, तृणं काष्ठं च प्रतीतम्, शर्कराः=' कंकर ' इति भाषा प्रसिद्धाः, एतान्यादौ यस्य तत्तथोक्तं द्रव्यम् अप्पं ' अल्पं=स्तोकं वा ' वहुं ' वहु=प्रचुरं वा ' अणुं ' अणु=आकारेण सूक्ष्मं वा ' थूलं ' स्थूलम्-आकारेण बृहद् वा, तत् ' न कप्पइ ' न कल्पते ' उग्गहे ' अवग्रहे ' अदिण्णे ' अदत्ते तत्तद्वस्तुस्वामिनिदेशमप्राप्येत्यर्थः, ' गेण्हेउं ' ग्रहीतुम्, किन्तु ' जे ' यद् ग्राह्यं भवेत्, तत् ' हणि हणि ' अहन्य-हनि=प्रतिदिनम् ' उग्गह ' अवग्रहं-तत्स्वामिनिदेशम्, ' अणुणवि य ' अनु-ज्ञाप्य=प्राप्य ' गेण्हियव्वं ' ग्रहीतव्यम्। तथा ' सव्वकालं ' सर्वकालं=सर्वदा ' अचियत्तघरप्पवेसो ' अप्रीतिकारकगृहप्रवेशः ' वज्जेयव्वो ' वर्जितव्यः तथा-

---

कुछ भी हो जैसे (पुप्फफलतयप्पवालकंदमूलतणकट्ठसक्कराइ) चाहे वह वस्तु पुष्परूप में हो, फलरूप में हो, छालरूप में हो, प्रवाल-कोंपल रूप में हो, सूरण आदि कंद रूप में हो, मूलक आदि रूप में हो, तृण काष्ठ आदि के रूप हो चाहे कंकर आदि के रूप में भी क्यों न हो। ये सब वस्तुएँ वहां (अप्पं वा) थोड़ी हो या (वहुं वा) बहुत हो (अणुं वा) आकार से छोटी हो या (थूलं वा) बड़ी हो, किसी भी तरह से वह इन वस्तुओं को (न कप्पइ उग्गहे अदिण्णम्मि गेण्हेउ) विना उनके मालिक की आज्ञाप्राप्त किये किसी भी रूप में लेना नहीं कल्पता है। तथा (जे) जो वस्तुएँ साधु के लिये ग्राह्य हैं वे भी (हणि हणि) प्रतिदिन (उग्गहे अणुणावि य) उनके स्वामी की आज्ञा प्राप्त कर ही (गेण्हियव्वं) ग्रहण करने योग्य हैं। तथा (वज्जेयव्वो य सव्वकाल

द्रव्य होय, " पुप्फफलतयप्पवालकंदमूलतणकट्ठसक्कराइ " भले ते वस्तु पुष्परूपे होय, फ़ळरूपे होय, छालरूपे होय, प्रवाल-कुंपळना रूपमा होय, सूरण आदि कंदरूपे होय, मूळ आदि रूपमां होय, तृण काष्ठ आदिरूपे होय, भले कांकरा आदिरूपे होय, ते बधी वस्तुओ त्यां " अप्पं वा" थोडी होय के "बहुं वा " वधारे होय, " अणु वा " कदमां नानी होय के " थूलगं वा " मोटी होय, कोई पण रीते ए वस्तुओने " न कप्पइ उग्गहे अदिण्णम्मि गेण्हे उं " तेना मालिकनी आज्ञा लीधा विना कोइ पण रीते तेने ग्रहण करवानुं मुनिने कल्पतुं नथी तथा ' जे " वस्तुओ साधुओने ग्रहण करवा योग्य छे ते पण " हणिहणि " प्रतिदिन " उग्गहे अणुणा वि य " तेमना मालिकनी आज्ञा लइने ज " गेण्हियव्वं " ग्रहण करवा योग्य छे. तथा " वज्जेयव्वो य सव्व-

'अचियत्तभत्तपाणं' अप्रतीतिकारकभक्तपान वर्जितव्यम्, अविश्वासभाजनस्य भक्तपानं न ग्राह्यमित्यर्थः, तथा–'अचियत्तपीढफलगसेज्जासंथारगवत्थपाय-कंबलदंडगरओहरणनिसेज्जचोलपट्टगमुहपोत्तियपायपुंछणाइभायणभंडोवहिउवगरणं' अप्रतीतिकारकपीठफलकशय्यासंस्तारकवस्त्रपात्रकम्बलदण्डकरजोहरणनिषद्याचोलप-ट्टकसदोरकमुखवस्त्रिका पादप्रोञ्छनादिभाजनभाण्डोपध्युपकरणं वर्जितव्यम्, अविश्वासभाजनस्य पीठफलकादिकं न ग्राह्यमित्यर्थः, तथा 'परपरिवाओ' परपरिवादः–काक्वा परदोषप्रकटनम्, वर्जितव्य, 'परस्स' परस्य 'दोसो' दोषश्च वर्जनीय, परोक्षे निन्दा, प्रत्यक्षे दोषकथनम्, इत्युभयं च

अचियत्तघरप्पवेसो) जो अपनी प्रतीति–विश्वास–नहीं करता हो उसके घर पर साधु को सर्वदा नहीं जाना चाहिये, तथा (अचियत्त-भत्तपाणं) जो अपनी प्रतीति नहीं करता हो उसके यहां से साधु को भक्तपान नहीं लेना चाहिये। इसी तरह (अचियत्तपीढफलगसेज्जासं-थारगवत्थपायकंबल दंडगरओहरणनिसेज्जचोलपट्टगमुहपोत्तियपायपुं-छणाइ) जो व्यक्ति अपने ऊपर विश्वास नहीं रखता हो उसके द्वारा प्रदत्त–(दिया हुआ) पीठ, फलक, शय्या, संस्तारक, वस्त्र, पात्र, कम्बल, दण्डक,, रजोहरण, निषद्या, चोलपट्टक, सदोरकमुखवस्त्रिका, पादप्रो-ञ्छन आदि, तथा (भायणभंडोवहिउवगरणं) भाजन, भांड, उपधि, ये सब उपकरण नहीं लेना चाहिये। (परपरिवाओ) तथा काकुरूप से साधु को पर के दोषों को प्रकट नहीं करना चाहिये। तथा (परस्स-दोसो) परोक्ष में निंदा करना और साम्हने दोषों को कहना ये दोनों

कालं अचिजत्तघरप्पवेसो" જે પોતાનો વિશ્વાસ ન કરતો હોય, તેના ઘરે સાધુએ કદી જવું જોઈએ નહીં, તથા "अचियत्तभत्तपाणं" જે પોતાના પર વિશ્વાસ ન મૂકતો હોય તેને ત્યાંથી સાધુએ આહાર પાણી સ્વીકારવા જોઇએ નહીં એ જ રીતે "अचियत्तपीढफलगसेज्जासथारगवत्थपायकंवलदंडगरओ-हरणनिसेज्जचोलपट्टगमुहपोत्तियपायपुछणाइ" જે વ્યક્તિ પોતાના પર વિશ્વાસ ન રાખતી હોય તેના દ્વારા અપાયેલ પીઠ, ફલક, શય્યા, સંસ્તારક, વસ્ત્ર, પાત્ર કંબળ, દંડક, રજોહરણ, નિષદ્યા, ચોલપટ્ટક, દોરાસહિત મુહપત્તિ, પાદ પ્રોગ્છન આદિ તથા "भायणभंडोवहिउवगरणं" ભાજન, (પાત્રા ભાંડ, ઉપાધિ, એ બધાં સાધનો લેવાં જોઇએ નહીં "परपरिवाओ" તથા કાગડાની જેમ સાધુ-ઓએ બીજાના દોષો પ્રગટ કરવા જોઇએ નહીં તથા "परस्सदोसो" પરોક્ષ રીતે નિંદા કરવાની તથા સામે જ દોષો કહેવાની પ્રવૃત્તિ સાધુએ છોડવી

वर्जनीयम्। तथा-' परववएसेण ' परव्यपदेशेन बालग्लानादीनां निमित्तेन 'जं च' यच्च=अशनादिकं, ' गेण्हेइ ' गृह्णाति=वैयावृत्त्यकारकः, तदन्यैर्नोपभोक्तव्यम् । बालग्लानादिनिमित्तमानीतं वस्तु यद्यवशिष्टं भवेत्, तथा तद् वस्तु स्वामिनिदेशेन संभोक्तव्यमित्यर्थः, ' परस्स ' परस्य तथा ' जं च ' यच्च ' सुकयं' सुकृतं= पुण्यादिकं ' नासेइ ' नाशयति, अपह्नुते, येन वचनादिना परकृतपुण्यादेरपह्नुतिर्भवति, तद् वर्जितव्यमित्यर्थः, तथा-' दाणस्स य ' दानस्य च ' अंतराइयं ' अन्तरायिकम्=येन वचनादिना दानान्तरायो भवेत्तद् वर्जनियम्, तथा-' दाणविप्पणासो ' दानविप्रणाशः-येन वचनादिना दानस्य विनाशो भवति, तद् वर्जनीयम्, तथा-' पेसुन्नं चेव ' पैशुन्य=परोक्षे परदोषाविष्करणं 'चुगली ' इति भाषा प्रसिद्धं चेव ' मच्छरित्तं च ' मात्सर्यम्=ईर्ष्या च वर्जनीयम् ॥ सू०२ ॥

बातें भी साधु को छोड़ देनी चाहिये। तथा-(परववएसेण जं च गेण्हंति) बाल ग्लान आदि के निमित्त से जो अशन आदि वैयावृत्यकारक साधु लाया होवे वह दूसरे साधुओं को अपने उपयोग में नहीं लेना चाहिये। तात्पर्य इसका यह है कि बाल ग्लान आदि अवस्थापन्न साधुजन के लिये जो वस्तु लाई गई हो वह उनके उपयोग से यदि बच जाय तो वह उस वस्तु के स्वामी की आज्ञा लेकर ही दूसरे साधुओं को अपने उपयोग में लानी चाहिये। तथा (परस्स जं च सुकयं) जिस वचन से दूसरे के सुकृत आदि पुण्यकर्मों का अपह्नुव होता हो ऐसा वचन साधु को त्याग कर देना चाहिये। तथा (दाणस्स अंतराइयं) जिस वचन से दान में अंतराय हो जावे तो ऐसा वचन भी नहीं कहना चाहिये। तथा (दाणविप्पणासो) जिस वचन से दान का विनाश होता हो ऐसा वचन भी नहीं बोलना चाहिये। तथा (पेसुण्णं) साधु को

જોઈએ. તથા " परववएसेण जं च गेण्हंति " બાલગ્લાન આદિને નિમિત્તે જે આહાર આદિ વૈયાવૃત્યકારક સાધુ લાવ્યા હોય તે બીજા સાધુઓએ પોતાના ઉપયોગમાં લેવો જોઈએ નહી તેનું તાત્પર્ય એ છે કે બાલ ગ્લાન આદિ અવસ્થાપન્ન સાધુજનને માટે જે વસ્તુ લાવવામાં આવી હોય તે તેઓએ વાપર્યા પછી વધે તો તે વસ્તુના માલિકની આજ્ઞા લઈને જ બીજા સાધુઓએ તેને પોતાના ઉપયોગમાં લેવી જોઈએ તથા " परस्स जं च सुकयं" જે વચનોથી બીજાનાં સુકૃત આદિ પુન્યકર્મોનો નાશ થતો હોય તેવાં વચનો સાધુએ બોલવા જોઈએ નહીં, એટલે કે તેવા વચનો બોલવાનું સાધુએ બંધ કરવુ જોઈએ તથા " दाणस्स अंतराइय " જે વચનથી દાનમાં અંતરાય નડે એવાં વચનો પણ કહેવાં જોઈએ નહી. તથા " दाणविप्पणासो " જે વચનોથી દાનનો વિનાશ થતો હોય તે વચનો પણ બોલવાં જોઈએ નહીં. તથા "पेसु-

कीदृशो मुनिरिदं व्रतं नाराधयती ? त्याह—' जे वि य ' इत्यादि—

मूलम्—जे वि य पीढफलगसेज्जासंथारगवत्थपायकंबल-दंडगरयहरणनिसेज्ज चोलपट्टगमुहपोत्तियपाय पुंछणाइ भायण भंडोवहिउवगरणं असंविभागी असंगहरुई, तवतेणे य वइतेणे य रूवतेणे य आयारतेणे य भावतेणे य सद्दकरे झंझकरे कलहकरे वेरकरे विकहकरे असमाहिकरे सया अप्पमाणभोई सययं अणुबद्धवेरे य निच्चरोसी से तारिसए नाराहए वयमिणं ॥ सू० ३ ॥

टीका—' जे वि य ' योऽपि च मुनिः ' पीढफलगसेज्जासंथारगवत्थपाय-कंवलचोलपट्टगरयहरणमुहपोत्तियपायपूछणाइभायणभंडोवहिउवगरणं ' पीठ-फलकशय्यासंस्तारकवस्त्रपात्रकम्वलचोलपट्टकरजोहरणमुखवस्त्रिकापादमोञ्छनादि - भाजनभाण्डोपध्युपकरणम्=एषणागुणविशुद्धिलब्धं पीठफलकादिकं लब्ध्वेति गम्यते, तस्य असंविभागी=अविभागकारी—आचार्यग्लानादिभ्यः पीठफलकादीन् अविभज्यैव स्वार्थबुद्धया स्वयमुपभोक्ता भवति स इदं व्रतं नाराधयतीत्यग्रेण

किसीकी चुगली नहीं करना चाहिये। तथा (मच्छरियं) साधु को इर्ष्या-भाव का भी परित्याग कर देना चाहिये ॥ सू–२ ॥

किस प्रकार का मुनि इस व्रत की आराधना नहीं कर सकता है इस बात को कहते हैं—' जे वि य ' इत्यादि० ।

टीकार्थ—(जे वि य) जो मुनि एषणागुण की विशुद्धि से प्राप्त पीठ, फलक, शय्या, संस्तारक, वस्त्र, पात्र, कंबल, दंड, रजोहरण, निषद्या, चोलपट्टक, सदोरकमुखवस्त्रिका, पादप्रोञ्छन आदि, तथा भाजन, भांड, उपधि, इन सब उपकरणों को प्राप्त करके उनका विभाग

णं" સાધુએ કોઈની ચાડી કરવી જોઈએ નહી તથા "मच्छरियं" સાધુએ ઈર્ષ્યાભાવનો પણ પરિત્યાગ કરવો જોઈએ ॥ સૂ–૨ ॥

કેવા મુનિ આ વ્રતની આરાધના કરી શકતા નથી તે વાત હવે સૂત્ર-કાર કહે છે—" जे वि य" ઈત્યાદિ

ટીકાર્થ–"जे वि य" જે મુનિ એષણા ગુણની વિશુદ્ધિથી પ્રાપ્ત થયેલ પીઠ ફલક, શય્યા સંસ્તારક, વસ્ત્ર, પાત્ર, કંબલ, દંડ રજોહરણ, નિષદ્યા, ચોલપટ્ટ, દોરા સહિતની મુહપત્તિ, પાદપ્રોંછન આદિ તથા ભાજન, ભાંડ, ઉપધિ એ બધાં

सम्बन्धः। तथा-'असंगहरुई' असंग्रहरुचिः-न सग्रहे रुचिर्यस्य स तथोक्तः-गच्छोपग्रहकरस्य एषणादोषरहितस्य लभ्यमानस्य वस्त्रपात्रादिकस्य स्वार्थ-परायणत्वेन-'मम प्रचुरं वस्त्रपात्रादिक विद्यते किमन्येषां 'चिन्तया' इति वि-चिन्त्य संग्रहबुद्धिवर्जित इत्यर्थः। अत्र मूर्छया संग्रहकरणं निषिद्धम्। तथा 'तव-तेणे' तपः स्तेनः=तपश्चौरः=यथा स्वभावतः कृशशरीरकश्चिदनगारं दृष्ट्वा कश्चित्पृच्छति-'भो मुने! यो मासक्षपणको मुनिः श्रूयते स भवानेव' तदा स स्वमानाद्यर्थमाह—'साधवः क्षपका एव भवन्ति' अथवा तूष्णीमास्ते, स तपः-

---

नहीं करता है-अर्थात् आचार्य, ग्लान आदि मुनिजनों को इन पीठ, फलक आदि का विभाग न करके स्वार्थबुद्धि से जो स्वयं इनका उप-भोक्ता होता है, वह साधु इस व्रत की आरधना नहीं कर सकता है। तथा (असंगहरुई) जिसकी संग्रह में रुचि नहीं होती है, अर्थात् जो साधु स्वार्थ में परायण होने के कारण इन पीठ फलक, वस्त्र, पात्र आदि उपकरणों को कि जो अपने गच्छ के उपकारक और एषणादोष से विशुद्ध हैं मिलते हुए भी इस भावना से कि मेरे पास तो ये वस्त्र पात्रादि उपकरण हैं मुझे दूसरों की चिन्ता से क्या काम है" इस विचार से संग्रह करने की बुद्धि से वर्जित होता है वह साधु इस व्रत का आराधक नहीं हो सकता है। मूर्च्छा भाव से ही संग्रह करने का निषेध है। तथा जो साधु (तवतेणे य) इसी तरह जो तपः स्तेन है, अर्थात् जैसे कोई साधू स्वभावतः कृश शरीर हो और कोई दूसरा इस प्रकार पूछे कि हे मुने! जो मास क्षपण आदि करने वाले तपस्वी मुनि-

---

ઉપકરણોને પ્રાપ્ત કરીને તેના વિભાગ કરતા નથી એટલે કે આચાર્ય, ગ્લાન આદિ મુનિજનોને માટે એ પીઠ, ફલક આદિના વિભાગ કર્યાં વિના સ્વાર્થ બુદ્ધિથી પોતે જ તેનો ઉપભોગ કર્યા કરે છે, તે સાધુ આ વ્રતની આરાધના કરી શકતો નથી. તથા "असंगहरुई" જેની સંગ્રહમાં રુચિ હોતી નથી, એટલે કે જે સાધુ સ્વાર્થ પરાયણ હોવાથી એ વસ્ત્ર, ફલક, પાત્ર, વસ્ત્ર, આદિ ઉપકરણો, કે જે પોતાના ગચ્છના ઉપકારક અને એષણાદોષથી રહિત છે. તેની પ્રાપ્તિ થવા છતાં પણ "મારી પાસે તો આ વસ્ત્ર. પાત્રાદિ ઉપકરણ છે મારે બીજાની ચિન્તા શા માટે કરવી જોઈએ?" એવી ભાવનાથી સંગ્રહ કરવાની બુદ્ધિથી રહિત થઇ જાય છે, તેવો સાધુ પણ આ વ્રતનો આરાધક થઇ શકતો નથી. મૂર્ચ્છાભાવથી જ સંગ્રહ કરવાનો નિષેધ છે. તથા જે સાધુ "तवतेणेय" એ જ રીતે તપચોર છે, દાખલા તરીકે કોઈ સાધુ સ્વાભાવિક રીતે જ દુબળા શરીર વાળો હોય અને તેને જોઇને બીજુ કોઈ એમ પૂછે કે-"હે મુનિ! માસખમણ આદિ કરનાર મુનિજન વિષે સાભળવામાં આવ્યું

स्तेनः प्रोच्यते, 'वइतेणे' वचः स्तेनः=वाक्चौरः-यथा-कंचित् व्याख्यातार साधुमवलोक्य कश्चित् पृच्छति—'व्याख्यानवाचस्पति र्यः श्रुतः स भवानेव' इति पृष्टः स ब्रूते- 'मुनयस्तादृशा भवन्त्येव' यद्वा मौनमास्ते, इत्येव यः परस्य ख्यातिं स्वात्मनि स्थापयति स वाक्स्तेनः, 'रूवतेणे य' रूपस्तेनश्च=एतद्विषयेऽपि पूर्ववद्योजना कर्तव्या। तथा 'आयारे चेव' आचारे=साधुसमाचार्यादि

राज सुने जाते हैं वे आप ही हैं क्या? इस प्रकार सुनकर वह अपने मान के निमित्त ऐसा कहे कि साधु तो तपस्वी ही होते हैं, अथवा सुनकर चुप रहे, इस प्रकार से वर्तन करने वाला वह मुनि तपश्चौर-(तप का चोर) कहा जाता है। (तप का चोर) तपश्चौर-मुनि इस व्रत की आराधना करनेवाला नहीं होता है। इसी तरह (वइतेणे) व्याख्यान करते हुए किसी मुनिराज को देखकर कोई उससे इस प्रकार पूछे कि जो व्याख्यानवाचस्पति मुनिराज सुने जाते हैं वे आप ही हैं क्या? इस प्रकार सुनकर वह मुनिराज उसके समाधान निमित्त यह कह दे कि महानुभाव! मुनिजन तो व्याख्यानवाचस्पति ही होते हैं, अथवा कुछ न कह कर चुप रहे इस प्रकार का व्यवहार करनेसे वह मुनि वचन का चोर वचस्तेन-माना जाता है, क्यों कि उसने पर की ख्यातिको अपनेमें स्थापित किया है, इस तरहसे पर कि ख्यातिको अपनेमें स्थापित करने वाला साधु वाक् चौर कहा जाता है। इसी तरह (रूवतेणे) रूपस्तेन की भी व्याख्या जान लेनी चाहिये, अर्थात्-विशिष्ट रूप

છે તે શું આપ જ છો?" આ પ્રકારનો પ્રશ્ન સાંભળીને તે પોતાના માનને માટે એવું કહે કે "સાધુ તો તપસ્વી હોય જ છે" અથવા તે વાત સાંભળીને મૌન રહે, એ પ્રકારનું વર્તન કરનાર મુનિને તપચોર કહે છે. તપચોર મુનિ આ વ્રતની આરાધના કરી શકતો નથી એ જ રીતે "वइतेणे" વ્યાખ્યાન કરતા કોઈ મુનિરાજને જોઈને કોઇ તેમને આ પ્રમાણે પૂછે કે વ્યાખ્યાન વાચસ્પતિ જે મુનિરાજ ગણાય છે તે શું આપ જ છો? આ પ્રમાણે સાંભળતા તેના સમાધાનને માટે એમ કહે છે કે "હે મહાનુભાવ! મુનિજન તો વ્યાખ્યાન વાચસ્પતિ જ હોય છે" અથવા તેને કંઈ પણ જવાબ ન આપતાં ચૂપ રહે, એવા પ્રકારના મુનિને વચસ્તેન-વચનચોર કહેવાય છે, કારણ કે તેણે બીજાની ખ્યાતિનું પોતાનામાં આરોપણ કર્યું છે- આ રીતે પારકાની ખ્યાતિનું પોતાનામાં આરોપણ કરનાર સાધુને વચનચોર કહેવાય છે, એ જ પ્રમાણે "रूवतेणे" રૂપસ્તેન-રૂપચોરની વ્યાખ્યા પણ સમજવી. એટલે કે વિશિષ્ટ રૂપયુક્ત કોઇ સાધુની ખ્યાતિ સાંભળીને કોઇ

विषये स्तेनः=चौरः,यथा=स यः 'उत्कृष्टाचारवान् साधुः श्रूयते, स भवानेव?' तदा वक्ति 'साधुस्तु-उत्कृष्टाचारवान् भवन्त्येव' मौनं वा समालम्बते इत्येवं स्वात्मनि अविद्यमानामुत्कृष्टाचारवतां स्थापयन्साधुराचारस्तेनो भवति, तथा-'भावतेणे य' भावस्तेनश्च=भावस्य=श्रुतज्ञानादि विशेषस्य स्तेनः=चौरो भाव-

---

संपन्न किसी साधु की ख्याति सुनकर कोई रूपवान् मुनि से ऐसा पूछे कि महाराज! जिनकी रूप में ख्याति हम सुन रहे हैं वे आप ही हैं क्या? तो इस प्रकार की बात सुनकर वह ऐसा कहे कि साधुजन तो विशिष्टरूप शाली होते ही हैं, अथवा कुछ न कहे-चुपचाप रह जावे, तो "मौनं सम्मतिलक्षणं" के हिसाब से पर के विशिष्ट रूपशालित्व का अपने में आरोप करने की भावना से वह रूपस्तेन कहलावेगा। इस तरह जो साधु रूपस्तेन होता है वह इस व्रत को नहीं पाल सकता है। इसी तरह (आयारतेणे) जो साधु समाचारी आदिके विषयमें स्तेन होता है वह आचारस्तेन कहा जाता है, जैसे किसी साधुकी आचार विषय में उत्कृष्ट ख्याति सुनकर दूसरा कोई ऐसा पूछे कि भो मुने! जिन साधु-राजकी आचार में विशेष ख्याति सुनी जाती हैं क्या वे आपही है?, इस प्रकार सुनकर वह साधु प्रत्युत्तर रूप में ऐसा कहे कि महानुभाव! साधु तो उत्कृष्ट आचार वाले होते ही हैं, इस प्रकार कहने वाला साधु आचारस्तेन कहलाता है, क्यों कि इस तरह की स्थिति से उसने

માણુસ કોઇ રૂપવાન મુનિને એવું પૂછે કે "મહારાજ! અમે રૂપને વિષે જેની ખ્યાતિ સાંભળી છે તે મુનિ શુ આપ જ છો?" આ પ્રકારની વાત સાંભળીને તે એવું કહે છે કે સાધુજન તો વિશિષ્ટ રૂપયુક્ત હોય જ છે" અથવા કંઇ પણ જવાબ ન આપે તો "મૌનને સંમતિનું લક્ષણ" માનીને બીજાના વિશિષ્ટ રૂપનું પોતાની અંદર આરોપણ કરવાની ભાવનાથી તે રૂપચોર કહેવાય છે આ રીતે જે સાધુ રૂપચોર હોય છે તે આ વ્રતને પાળી શકતો નથી. આ રીતે "आयारतेणे" જે સાધુ સમાચારી આદિ બાબતમાં ચોર હોય છે તે આચાર ચોર કહેવાય છે. જેમ કે કોઈ સાધુની આચારની બાબતમા ઉત્કૃષ્ટ ખ્યાતિ સાભળીને બીજી કોઈ વ્યક્તિ તેને એવું પૂછે કે "હે મુનિ! જે મુનિરાજની આચારમા ખાસ ખ્યાતિ સંભળાય છે, તે શું આપ પોતે જ છો?" આ પ્રમાણે સાંભળીને જે મુનિ એવો પ્રત્યુત્તર વાળે કે મહાનુભાવ! સાધુઓ તો ઉત્કૃષ્ટ આચારવાળા જ હોય છે" આમ કહેનાર સાધુને આચારચોર કહેવાય છે કારણ કે આ પ્રકારની પરિસ્થિતિમાં તેણે પોતાનામાં જે

स्तेनः, कस्यापि श्रुतविशेषस्यापूर्वं व्याख्यानं कस्यापि मुखादुपश्रुत्य जनसमक्षे स्वकीयत्वेन तं ख्यापयन् साधुर्भावस्तेन उच्यते। तथा यः साधुः 'सद्दकरे' शब्दकरः=प्रहररात्रिगमनानन्तरं यो महता महता शब्देन भाषते स शब्दकर उच्यते। 'झंझकरे' झञ्झाकरः=येन कार्येण गणस्य भेदो भवति तत्कार्यकारी 'कलहकरे' कलहकरः=वाचिकभण्डनकारी 'वेरकरे' वैरकरः=परस्परशत्रुभावोत्पादकः, तथा-'विकहकरे' विकथाकरः=स्त्र्यादिकथाकारी, 'असमाहिकारगे' असमाधिकारकः=स्वपरचित्तोद्वेगकारकः, तथा-'सया' सदा 'अप्पमाणभोई'

अपने में अविद्यमान उत्कृष्ट आचारवत्ता स्थापित की है अतः जो ऐसे आचारस्तेन होते हैं उनसे इस महाव्रत की आराधना नहीं हो सकती है, (भावतेणे) जो श्रुतज्ञान आदि भाव की चोरी करता है वह भावस्तेन कहलाता है, जैसे किसी के मुख से किसी साधु का श्रुत विशेषसंबंधी अपूर्व व्याख्यान सुनकर कहता है कि यह व्याख्यान तो मेरा ही दिया हुआ है, इस प्रकार का भावस्तेन साधु भी इस महाव्रत की आराधना नहीं कर सकता है। इसी तरह (सद्दकरे) जो साधु एक प्रहर रात्रि के चले जाने के बाद बड़े जोर २ से बोलता है उसका नाम शब्दकर है। (झंझकरे) जिस कार्य से गण में भेद हो जाय उस काम को करने वाला साधु झंझाकर है। (कलहकरे) आपस में जो वाक्कलह कर बैठता है उसका नाम कलहकर है, (वेरकरे) परस्पर में जो शत्रुता का उत्पादक होता है वह वैरकर है, (विकहकरे) स्त्री आदि विकथाओं को करनेवाला साधु विकथाकर है, (असमाहिकरे)

અવિદ્યમાન છે તે ઉત્કૃષ્ટ આચારવત્તાનું આરોપણ કર્યું છે. તેથી જે સાધુઓ એવાં આચાર ચોર હોય છે તેમનાથી આ મહાવ્રતની આરાધના થઈ શકતી નથી. "भावतेणे" જે શ્રુતજ્ઞાન આદિ ભાવની ચોરી કરે છે તે ભાવચોર કહેવાય છે. જેમ કે કોઇના મોઢે કોઇ સાધુનુ કોઈ શાસ્ત્ર સંબંધી અપૂર્વ વ્યાખ્યાન સાંભળીને જે સાધુ એમ કહે કે આ વ્યાખ્યાન તો મે જ આપેલુ છે" આ પ્રકારનો ભાવચોર સાધુ પણ આ વ્રતની આરાધના કરી શકતો નથી એ જ પ્રમાણે "सद्दकरे" શબ્દકર- જે સાધુ એક પ્રહર રાત્રિ પસાર થયા પછી ઘણા જોરથી બોલે છે તેને શબ્દકર કહે છે, "झझकरे" જે કાર્યથી સમૂહમાં ભેદભાવ થાય તે કાર્ય કરનાર સાધુ ઝંઝાકર કહેવાય છે, "कलहकरे' આપસમા જે વાક્કલહ કરી બેસે છે તેને કલહકર કહે છે, "वेरकरे' આપસમાં જે વેર પેદા કરાવનાર હોય તે વેરકર કહે છે, "विकहकरे" સ્ત્રી આદિ વિકથાઓ કરનાર સાધુને વિકથાકર કહે

अप्रमाणभोजी=द्वात्रिंशत्कवलाधिकाहारी, 'सययं' सततं=निरन्तरम् 'अणुवद्ध-वैरे' अनुवद्धवैरः=अव्यवच्छिन्नवैरभावः, च=पुनः 'निच्चरोसी' नीत्यरोषी=सदाकोपशीलः, 'से तारिसए' स तादृशः साधुः 'नाराहए' नाराधयति 'इण' इदम्=पूर्वोक्तं, व्रतम्=अदत्तादानविरतिस्वरूपम् ॥ सू० ३ ॥

कः पुनरिद व्रतमाराधयितुं समर्थः? इत्याह—'अह केरिसए' इत्यादि-

मूलम्–अह केरिसए पुणाई आराहए वयामिणं? जे से उवहि भत्तपाणसंगहणदाणकुसले अच्चंत बाल दुब्बल गिलाण वुड्ढखवगपवत्तयआयरिय उवज्झाए सेहे साहम्मिए तवस्सिकुलगणसंघे य चेइयट्ठे निज्जरट्ठी वेयावच्चं अणिस्सियं दसविहं बहुविहं करेइ, नय अवियत्तस्स घरं पविसइ, न य अचियत्तस्स भत्तपाणं गिण्हइ, न य अचियत्तस्स सेवइ पीढफलग--सेज्जा- संथारग--वत्थपाय-कंबल--दंडगर-ओहरण-निसज्जचोलपट्टगमुहपोत्तियपायपुंछणाइ -- भायण

अपने और पर के चित्त में उद्वेगभाव पैदा कर देने वाला साधु असमाधिकारक है, (सया अप्पमाणभोई) सदा बत्तीसग्रास से अधिक भोजन करने वाला साधु अप्रमाणभोजी कहलाता है (सययं अणुवद्ध-वेरे य) जिसका वैर भाव कभी भी शांत न हो वह साधु अननानु-बद्ध वैर कहलाता है, (निच्चरोसी) जो नित्य ही कुपि स्थिति में रहता है वह नित्यरोषी कहलाता है। (से तारिसए) इस प्रकार तप-स्तेन आदि विशेषणवाला साधु (इणं वयं नाराहए) इस महाव्रत की आराधना नहीं कर सकता है ॥ ३ ॥

છે, "असमाहिकरे" પોતાના તથા અન્યના ચિત્તમાં ઉદ્વેગ પેદા કરનાર સાધુને અસમાધિકારક કહે છે, "सया अप्पमाणभोई" સદા બત્રીશ કોળિયા કરતાં વધારે આહાર લેનાર સાધુને અપ્રમાણ ભોજી કહે છે, "सययं अणुवद्धवेरेय" જેની વેર ભાવના કદી પણ શાન્ત ન થાય તે સાધુને સતતાનુબદ્ધ વૈર કહેવાય છે, "निच्चरोसी" જે હંમેશાં ક્રોધમાં જ રહે છે તેને નિત્યરોષી કહે છે, "से तारिसए" આ રીતે તપચોર આદિ વિશેષણો વાળો સાધુ "इणंवयं नाराहए" આ મહાવ્રતની આરાધના કરી શકતો નથી ॥ ૩ ॥

भंडोवहिउवगरण, नय परिवाय परस्स जंपइ, न यावि दोसे परस्स गेण्हइ, पर ववएसेण वि न किंचि गेण्हइ, ण य विपरिमाणइ कंचिजणं, ण यावि णासेइ दिण्णसुनयं, दाऊण य काऊण य ण होइ; पच्छातावीए, संविभाग-सीले, संगहोवग्गहकुसले, से तारिसए आराहेइ वयमिणं ॥ सू०४ ॥

टीका—'अह' अथेति प्रश्ने, 'केरिसए' कीदृशः साधुः 'पुणाइं' 'वयमिणं' व्रतमिदम्=अदत्तादानविरमणरूपमिदं व्रतम्, 'आराहए' आराधयति ? इति प्रश्ने सति प्राह-'जे से' यः सः 'उवहिभत्तपाणसंगहणदाणकुसले' उपधिभक्तपानसंग्रहणदानकुशलः=तत्र उपधिः=वस्त्रपात्रादिः, भक्तपाने प्रसिद्धे तेषां संग्रहणे=आदाने साधर्मिकेभ्यो दाने च कुशलो विधिज्ञो मुनिः। 'अच्चंतवाल दुब्बलगिलाण वुड्ढ खवगपवत्तय आयरिय उवज्झाए सेहे साहम्मिए तवस्सि कुल गण संघे य' अत्यन्त बाल्दुर्बलग्लानवृद्धमासक्षपकप्रवर्त्तकाचार्योपाध्याये शैक्षे-

---

अब सूत्रकार इस महाव्रत की आराधना करने के लिये कैसा साधु समर्थ हो सकता है ? यह कहते हैं-'अह केरिसए' इत्यादि०।

टीकार्थ -(अह केरिसए पुणाई वयमिणं आराहए ?) कैसा साधु इस अदत्तादानविरमणरूप महाव्रत की आराधना कर सकता है ? इसके उत्तर में कहते हैं (जे से) जो साधु (उवहिभत्तपाण संगहणदाणकुसले) उपधि वस्त्र पात्र आदि, एवं भक्तपान, इनको अपने साधर्मिक साधुओं के लिये लेने में और उन्हें इन वस्तुओं के देने में कुशल-विधिज्ञ-होता है, तथा (अच्चंतबालदुब्बलगिलाणवुड्ढखवगपवत्तय आयरियउवज्झाए) जो संघ में अत्यंत बाल हैं--आठ वर्ष के

હવે આ મહાવ્રતની આરાધના કરવાને માટે કેવો સાધુ સમર્થ હોઇ શકે છે તે સૂત્રકાર બતાવે છે " अह केरिसए" ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ-"अह केरिसए पुणाईवयमिणं आराहए?" કેવો સાધુ આ અદત્તાદાન વિરમણરૂપ મહાવ્રતની આરાધના કરી શકે છે? તેના જવાબથાં સૂત્રકાર કહે છે-"जे से" જે સાધુ "उवहिभत्तपाणसंगहणदाणकुसले" ઉપધિ, વસ્ત્ર, પાત્ર આદિ અને આહાર પાણી, પોતાના સાધર્મિક સાધુઓને માટે લેવામાં અને તેમને તે વસ્તુઓ દેવામાં કુશળ-વિધિજ્ઞ-હોય છે, તથા "अच्चंतबाल दुब्बलगिलाणवुड्ढखवगपवत्तयआयरियउवज्झाए" જે જે સંઘમાં અત્યંત બાળ છે-આઠ વર્ષના બાળ સાધુ છે, તથા જે દુર્બલ છે-કમજોર હોવાથી

साधर्मिके तपस्विकुलगणसङ्घे, तत्र अत्यन्तबालः=चष्टवर्षीयोबालः, अत्यन्त दुर्बलः=कृशाङ्गत्वेन स्वकार्यकरणाक्षमः, 'गिलान' ग्लानः=व्याध्यादिना भिक्षाटनादावसमर्थः, 'वुड्ढ' वृद्धः=स्थविर ज्ञानवृद्धः, पर्यायवृद्धः, वयोवृद्धश्च, 'खवग' क्षपकः=मासक्षपणाद्युग्रतपःकारित्वेन प्रवचनप्रभावकः, 'पवत्तय' प्रवर्त्तकः-प्रशस्तयोगेषु यथायोग्यतया साधून् प्रवर्त्तयतीति प्रवर्त्तकः, आचार्यः=गणनेता-यो हि शास्त्रानुसारेण स्वयमाचरति, अन्यांश्चाचारयति स आचार्यः, तदुक्तम्-

"आचिनोति च शास्त्राणि, आचारं ग्राहयत्यपि।
स्वयमाचरते यस्मात्तस्मादाचार्य उच्यते" इति।

उपाध्यायः-उप-समीपे आगतान्=शिष्यान् सूत्रार्थमध्यापयति यः स उपाध्यायः, एतेषां समाहारद्वन्द्वः, तस्मिन्, तथोक्ते, तथा 'सेहे' शैक्षे=नव-दीक्षिते साधौ, तथा-'साहम्मिए' साधर्मिके=श्रुतलिङ्गप्रवचनैः समानश्रद्धावान्

बालक साधु हैं तथा जो दुर्बल हैं—कम जोर होने से जो अपने कार्य करने में अक्षम है, जो ग्लान हैं-व्याधि आदि के निमित्त को लेकर जो भिक्षावृत्ति आदि करने में असमर्थ हैं, जो वृद्ध हैं-स्थविर-जरा से जर्जरित शरीर वाले हैं ज्ञान की अपेक्षा दीक्षापर्याय की अपेक्षा और आयु की अपेक्षा जो वृद्ध-बडे हैं, जो क्षपक हैं मासक्षपक आदि उग्र तपस्या करनेवाले हैं, जो प्रवर्तक हैं-प्रशस्त-योगोंमें साधुजनों को उनकी योग्यता के अनुसार प्रवृत्ति कराने वाले हैं,-जो आचार्य हैं-गण के नेता हैं-अर्थात्-साधु संबंधी आचार को जो स्वयं पालते हैं, और दूसरे साधुओं से पलाते हैं, जो उपाध्याय हैं-अपने पासमें आये हुए साधुओं को-शिष्यजनों को जो सूत्र पढाते हैं, जो (सेहे) शिष्य हैं-नव दीक्षित साधुजन हैं, जो (साहम्मि) साधर्मिक हैं-श्रुत लिङ्ग और प्रवचन-प्ररूपणा इनको लेकर जिनकीश्रद्धा समान है जो

જે પોતાનાં કામ કરવાને અસમર્થ છે, જે ગ્લાન છે વ્યાધિ આદિ ને કારણે જે ભિક્ષાવૃત્તિ આદિ કરવાને અસમર્થ છે, જે વૃદ્ધ છે-સ્થવિર-જરાને કારણે જર્જરિત શરીરવાળાં છે, જ્ઞાનની અપેક્ષાએ, દીક્ષા પર્યાયની અપેક્ષાએ અને આયુની અપેક્ષાએ જે વૃદ્ધ-મોટા છે, જે ક્ષપક છે-માસખમણ આદિ ઉગ્ર તપસ્યા કરનાર છે, જે પ્રવર્તક છે-પ્રશસ્ત યોગોમા સાધુજનોને તેમની યોગ્યતા અનુસાર પ્રવૃત્તિ કરાવનાર છે, જે આચાર્ય છે-ગણના નેતા છે એટલે કે સાધુના આચારોને જે જાતે પાળે છે અને બીજા સાધુઓ પાસે પળાવે છે, જે ઉપાધ્યાય છે-પોતાની પાસે આવેલા સાધુઓને-શિષ્યજનોને જેઓ સૂત્રો ભણાવે છે, જે "सेहे" શિષ્યો છે-નવદીક્ષિત સાધુઓ છે, જે "सा-

साधर्मिक उच्यते, तस्मिन्, तथा-'तवस्सि कुलगणसंघे य' तपस्विकुलगणसंघे च, तत्र-तपस्वी=विकृति वर्जकः, चतुर्थभक्तादिकारी वा, कुलम् = एकगुरुकशिष्य-समूदायरूपम्, गणः=कुलसमुदायः,संघः=गणसमुदायरूपः, एतेषां समाहारद्वन्द्वः, तस्मिंस्तथोक्ते च, अत्र सर्वत्र विषयार्थे सप्तमी, तेन तत्तद्विषयक मित्यर्थः, 'चेइ-यट्ठे' चैत्यार्थ -चैत्यं=ज्ञानं 'चितीसंज्ञाने' इत्यस्मात् संपदादित्वाद् भावे क्विपि 'चित्' संज्ञानं सम्यग्ज्ञानं, चिदेव चैत्य, स्वार्थे ष्यञ्, तदेव अर्थः-प्रयोजनं यस्य स तथोक्तः सम्यग् ज्ञानाभिलापीत्यर्थः तथा-'निज्जरट्ठी' निर्जरार्थी-

(तवस्सिकुलगणसंघे य) तपस्वी हैं-विकृति (विगय) के त्यागी हैं अथवा चतुर्थ भक्त आदि तपस्याओं के करने वाले हैं, तथा जो एक ही गुरु के शिष्यों का समुदाय है वह कुल है, कुल के समुदाय का नाम गण है, गणसमुदाय को संघ कहते हैं सो इन सबकी (चेइयट्ठे) सम्यक् ज्ञान की प्राप्ति का अभिलाषी तथा (निज्जरट्ठी) कर्मों की निर्जरा का इच्छुक मुनि (अणिस्सियं) इहलोक और परलोक संबंधी आकांक्षा रहित होकर (दसविहं) दश प्रकार की (बहुविहं) भक्त-पान आदि विविध प्रकार से (वेयावच्च करेइ) वैयावृत्त्य करता है-उनकी सहायता करता है वह इस महाव्रतको पाल सकता है।

यहां जो 'चेइयट्ठे' पद आया है उसकी छाया 'चैत्यार्थ' ऐसी है। संज्ञानार्थक चित् धातु से "संपदादित्वात्" इस सूत्र द्वारा भाव में क्विप्' प्रत्यय होने पर चित् ऐसा शब्द बन जाता है, इस का अर्थ संज्ञान-सम्यग्ज्ञान-होता हैं। फिर स्वार्थ में 'ष्यञ्' प्रत्यय होने पर

म्मि" સાધર્મિક છે, જે "तवस्सि कुलगणसंघे य" તપસ્વી છે, વિકૃતિ-"विगय" ના ત્યાગી છે, અથવા ચતુર્થભક્ત આદિ તપસ્યા કરનાર છે, તથા જે એક જ ગુરુનો શિષ્ય સમુદાય "कुल" છે, કુલના સમુદાયને ગણ કહે છે, ગણના સમુદાયને સંઘ કહે છે તો એ સૌની "चेइयट्ठे" સમ્યક્‌જ્ઞાનની પ્રાપ્તિના અભિલાષી તથા "निज्जरट्ठी" કર્મોની નિર્જરા માટે ઉત્સુક મુનિ 'अणि-स्सियं" આલોક અને પરલોક સંબંધી આકાંક્ષા રહિત થઈને "दसविहं" દસ પ્રકારની "बहुवियं" આહાર પાણી આદિ વિવિધ પ્રકારે "वेयावच्चं करेइ" વૈયાવૃત્ય કરે છે-તેમની જે સાધુ સહાયતા કરે છે તે આ મહાવ્રત પાળી શકે છે.

અહીં જે "चेइयट्ठे" પદ આવ્યુ છે તેની છાયા "चैत्यार्थ" છે. સંજ્ઞા નાર્થક 'चित्' ધાતુથી "क्विप्" પ્રત્યય લાગતા 'चित्' એવો શબ્દ બની જાય છે, તેનો અર્થ સંજ્ઞાન-સમ્યગ્ જ્ઞાન-થાય છે છતાં સ્વાર્થમાં 'ष्यञ्' પ્રત્યય લાગતા ચૈત્ય શબ્દ સિદ્ધ થઈ જાય છે. તો ચિત્ જ ચૈત્ય છે એવો

कर्मनिर्जराभिलाषी, 'अणिस्सियं' अनिश्रितं=कीर्त्यादिनिरपेक्षम् इहलोकपरलोकाद्याशंसारहितमित्यर्थः, 'बहुविहं' बहुविधम् = भक्तपानादिभिर्बहुप्रकारकं, 'दसविहं' दशविधं आचार्यादिदशविधस्थानकं, 'वेयावच्चं' वैयावृत्यं=भक्तपानादिभिः साहाय्यं 'करेइ' करोति।

ननु अत्यन्तबालदुर्बलादि सङ्घान्तानां चतुर्दशानां वैयावृत्त्यस्थानतया प्रथम-

---

चैत्य शब्द सिद्ध हो जाता है-तब चित् ही चैत्य है ऐसा अर्थबोध होता है। यह चैत्य-सम्यग्ज्ञान-ही जिसका प्रयोजन है वह चैत्यार्थ है, इस प्रकार का अर्थ होने से इसका तात्पर्य यह होता है कि जो साधु सम्यग्ज्ञ,न की अभिलाषा वाला है। "अणिस्सियं" यह पद क्रिया-विशेषण के रूप में प्रयुक्त हुआ है। जिसका सारांश है कि वह साधु इन बाल आदि मुनिजनों का वैयावृत्य करते समय यह भावना न रखे कि मुझे कीर्ति आदि की प्राप्ति अथवा इहलोक संबंधी सुखों आदि की प्राप्ति इनकी सेवा करने से होगी। "बहुविधं" यह वैयावृत्य का विशेषण है जो यह कहता है कि वैयावृत्य तप भक्तपान आदि से अनेक प्रकार का है। शास्त्रों में वैयावृत्य के भेद दस कहे हैं। कारण आचार्य, उपाध्याय, स्थविर, तपस्वी, शैक्ष, ग्लान, साधर्मिक, कुल, गण और संघ ये दस स्थान सेवाके हैं। इसलिये इनकी सेवा रूप यह वैयावृत्य भी दश प्रकार का कहा गया है।

शंका—इस "अच्चंतबाल" आदि पद में तो अत्यंतबाल से

અર્થબોધ થાય છે તે ચૈત્ય-સમ્યગ્ જ્ઞાન જ જેનુ પ્રયોજન છે તે ચૈત્યાર્થ છે, તે પ્રકારનો અર્થ થવાથી તેનુ તાત્પર્ય તે થાય છે કે જે સાધુ સમ્યગ્ જ્ઞાનની અભિલાષા વાળા છે. "अणिस्सियं" આ પદ ક્રિયાવિશેષણના રૂપમાં વપરાયું છે. તેનું તાત્પર્ય એ છે કે તે સાધુ તે બાલ આદિ મુનિઓનું વૈયાવૃત્ય કરતી વખતે એવી ભાવના ન રાખે કે મને કીર્તિ આદિની પ્રાપ્તિ અથવા આલોક તથા પરલોક સંબંધી સુખોની પ્રાપ્તિ તેમની સેવાથી થશે. "बहुविधं" તે વૈયાવૃત્યનું વિશેષણ છે જે એ બતાવે છે કે વૈયાવૃત્ય તપ આહાર પાણી આદિ અનેક પ્રકારના છે. શાસ્ત્રોમાં વૈયાવૃત્યના દસ ભેદ બતાવ્યા છે. કારણ કે આચાર્ય, ઉપાધ્યાય, સ્થવિર, તપસ્વી, શૈક્ષ, ગ્લાન સાધર્મિક, કુલ, ગણ અને સંઘ એ દશ સેવાના સ્થાન છે તેથી તેમની સેવારૂપ આ વૈયાવૃત્ય પણ દશ પ્રકારનું કહેલ છે.

શંકા—આ "अच्चतबाल" આદિ પદમાં અત્યંત બાળથી લઈને સંઘ

मुक्तत्वाद् दशविधं वैयावृत्यमिति कथनं कथं न विरुध्यते ? अत्रोच्य वैयावृत्त्यस्य स्थानं दशविधं व्याख्याप्रज्ञप्ति (श. २५ उ. ७) व्यवहारसूत्र, उ. १०) द्यागमेषु सर्वत्र प्रसिद्धं, तत्रैव तद्बहिर्भूतानामन्तर्भावः, तथाहि-अत्यन्तबाल दुर्बलयोर्ग्लानेसमावेशः, तयोस्तत्संनिहितत्वेनोक्तत्वात् भक्तपानानयनादावक्षमत्वेन तत्सादृश्याच्च। क्षपक-प्रवर्त्तकयोराचार्ये संनिवेशः,तयोस्तत्संनिहितत्वेनोक्तत्वात्-

लेकर संघ तक चौदह वैयावृत्य के स्थान होते हैं अतः वैयावृत्य के स्थान होने से वैयावृत्य भी चौदह प्रकार का ही होना चाहिये फिर यहां जो उसमें दश विधता प्रकट की है सो यह कथन परस्पर में क्या विरुद्ध नहीं है ? अवश्य विरुद्ध है।

उत्तर—शंका ठीक है, परन्तु विचार करने पर इसका समाधान अच्छी तरह से हो जाता है-वैयावृत्य के ये दशपकार के ही स्थान व्याख्याप्रज्ञप्ति (श. २५ उ. ७) व्यवहारसूत्र (उ. १०) आदि आगमों में सर्वत्र प्रसिद्ध हैं। इनमें ही इनसे बहिर्भूत भेदों का अन्तर्भाव हो जाता है। जैसे जो साधु अत्यन्तबाल एवं दुर्बल हैं इन दोनों का समावेश ग्लान साधुओं में हो जाता है क्यों कि ये उन्हीं जैसे होते हैं इसीलिये उनका पाठ उनके साथ रखा है। जिस प्रकार ग्लान साधु भक्तपान आदि के लाने में असमर्थ होता है उसी प्रकार से ये भी हैं। इस तरह इनमें परस्पर में सदृशता आने से इन दोनों का समावेश ग्लान में हो जाता है। इसी तरह से जो क्षपक और प्रवर्त्तक हैं उनका

સુધી વૈયાવૃત્યના ચૌદ સ્થાનો થાય છે, તો તે બધાં વૈયાવૃત્યનાં સ્થાન હોવાથી વૈયાવૃત્ય પણ ચૌદ પ્રકારનાં થવાં જોઈએ છતાં અહીં તેનાં દસ પ્રકાર બતાવ્યા છે તો તે કથન શુ પરસ્પરમાં વિરોધાભાસ દર્શાવતુ નથી ? અવશ્ય વિરોધાભાસ દર્શાવે છે.

ઉત્તર--શંકા બરાબર છે પણ વિચાર કરતાં તેનું સારી રીતે સમાધાન થઈ જાય છે. વૈયાવૃત્યનાં એ દશ પ્રકારનાં જ સ્થાન વ્યાખ્યાપ્રજ્ઞપ્તિ (શ. ૨૫ ઉ-૭) વ્યવહારસૂત્ર (ઉ-૧૦) આદિ આગમોમાં સર્વત્ર પ્રસિદ્ધ છે. તેમનામાંજ તેમનાથી બાહ્ય ભેદોનો સમાવેશ થઈ જાય છે જેમ કે જે સાધુ અત્યંત બાલ અને દુર્બળ છે તે બંનેનો સમાવેશ ગ્લાન સાધુઓમાં થઇ જાય છે, કારણ કે તેઓ તેમના જેવાં જ હોય છે તેથી તેમનો પાઠ તેમની સાથે રાખ્યો છે જેમ ગ્લાન સાધુ આહાર પાણી આદિ લાવવાને અસમર્થ હોય છે તેમ તેઓ પણ અસમર્થ છે. એજ રીતે તેઓની વચ્ચે પરસ્પરમાં સમાનતા આવવાથી તે બંનેનો સમાવેશ 'ગ્લાન' માં થઈ જાય છે, એ જ રીતે જે

प्रवचनप्रभावकत्वेन तत्साहश्याच्च। एवं च वैयावृत्त्यस्य-आचार्यादि स्थानभेदेन दशविधत्वकथनमविरुद्धम्।

यत्तु-'चेइयट्ठे' इत्यस्य व्याख्यानम्-"चैत्यानि=जिनप्रतिमाः, एतासां योऽर्थः=प्रयोजनं यस्य स तथा, तत्र" इति टीकान्तरे लभ्यते तद्भ्रान्तिमूलकम्, वैयावृत्त्यस्य जिन प्रतिमां प्रति विधानाभावात्। जिनप्रतिमाया अपि वैयावृत्त्य स्वीकारे व्याख्याप्रज्ञप्त्याद्यागमेषु वैयावृत्त्यस्य दशविधत्वप्ररूपणं विरुध्यते-तद्ग्रहणेन वैयावृत्त्यस्यैकादशसंख्याऽति प्रसङ्गात्।

अन्तर्भाव आचार्य में कर दिया जाता है। जिस प्रकार आचार्य प्रवचन के प्रभावक होते हैं उसी प्रकार से ये दोनों भी होते हैं, अतः उनके जैसे इन्हें प्रभावक होने से परस्पर में इनमें सदृशता आ जाती है यही बात प्रकट करने के लिये सूत्रकार ने इन दोनों का पाठ आचार्य के पास रखा है। इस तरह से विचार करने से वैयावृत्य के स्थान दस ही प्रकार के सिद्ध होते हैं, इसलिये इनके भेद से वैयावृत्य में दश-विधत्व कथन विरुद्ध नहीं है ऐसा जानना चाहिये।

तथा-जो "चेइयट्ठे" इस पदका व्याख्यान-"चैत्यानां अर्थः प्रयोजनम् यस्य सः चैत्यार्थः" चैत्य जिन प्रतिमा है प्रयोजन जिसको ऐसा साधु" ऐसा कहते हैं-उनका यह व्याख्यान भ्रान्ति मूलक है। कारण जिन प्रतिमा के प्रति वैयावृत्य करने का विधान नहीं है। यदि यह विधान माना जावे तो फिर व्याख्याप्रज्ञप्ति आदि आगमों में जो वैया-वृत्य के ये पूर्वोक्त दश भेद माने गये हैं उनमें विरोध आता है, क्यों

ક્ષપક અને પ્રવર્તક છે તેમનો સમાવેશ આચાર્યમાં કરી દેવાય છે. જેમ આચાર્ય પ્રવચનના પ્રભાવક હોય છે તેમ તેઓ બંને પણ હોય છે, તથા તેમના જેવા તેઓ પ્રભાવક હોવાથી પરસ્પરમાં તે બાબતની સમાનતા આવી જાય છે એ જ વાત પ્રગટ કરવાને માટે સૂત્રકારે તે બનેનો પાઠ આચાર્ય સાથે કર્યા છે. આ રીતે વિચાર કરતા વૈયાવૃત્યનાં દસ પ્રકારનાં જ સ્થાન સિદ્ધ થાય છે, તેથી તેમના ભેદને કારણે વૈયાવૃત્યમા દશ વિધતાનું કથન વિરૂદ્ધ પડતું નથી એમ સમજવુ જોઈએ.

તથા- જે "ચેઇયટ્ઠે" આ પદનું વ્યાખ્યાન "चैत्याना अर्थः प्रयोजनम् यस्य सः चत्यार्थ." ચૈત્ય જિન પ્રતિમાં છે તેનું પ્રયોજન જેને છે એવો સાધુ" એવું જે કહે છે તેમનું તે કથન ભ્રાન્તિમૂલક છે કારણ કે જિન પ્રતિમાનું વૈયાવૃત્ય કરવાનું વિધાન નથી જો આ વિધાન માની લેવામા આવે તો વ્યાખ્યાપ્રજ્ઞપ્તિ આદિ આગમોમા વૈયાવૃત્યનાં જે પૂર્વોક્ત દસ ભેદ બતાવ્યા છે

किञ्च—ज्ञानादिगुणरहितायाः जडात्मिकाया जिनप्रतिमायाभक्तपानादि साहाय्यानपेक्षणान्नास्ति वैयावृत्यस्थानप्राप्तियोग्यता, अत एव-वैयावृत्त्यदशविधत्वप्रतिपादकागमविरोधवारणार्थमाचार्ये जिनप्रतिमायाः समावेशनमपि भ्रान्तिमूलकमेव।

इह चैत्यशब्दस्य ज्ञानार्थकत्वमागमानुकूलम्, वैयावृत्त्येन श्रुतादिज्ञानं जायते लभ्यते वर्धते च, तथा तीर्थंकरनामगोत्रकर्मोपार्जितं भवति। तीर्थंकरत्वं च केवलज्ञानानान्तरीयकम्, अतः ज्ञानार्थी वैयावृत्त्यं करोतीत्यर्थः सम्यगेव, उक्त-

कि जिन प्रतिमा वैयावृत्य नामका एक और ग्यारहवां भेद उत्पन्न हो जाता है। दूसरी बात एक यह भी है कि जो जिन प्रतिमा होती है उसमें वैयावृत्य के स्थान प्राप्ति की योग्यता हो नहीं है, क्यों कि उसमें ज्ञानादिगुण तो कोई हैं ही नहीं वह तो जड़ पत्थरकी बनी हुई होती है, उसे भक्तपान आदि द्वारा सहायता पहुँचाने रूप वैयावृत्य की क्या आवश्यकता है ? । तथा जो वैयावृत्य में दशविधत्व का प्रतिपादन करने वाला आगम है उसमें विरोध न आवे इस अभिप्राय से प्रेरित होकर जो आचार्य में जिन प्रतिमा का समावेश करते हैं उनका ऐसा करना भी भ्रान्तिमूलक ही है। चैत्य शब्द में ज्ञानार्थकताकी यह हमारी मान्यता आगमनुकूल है, क्यों कि वैयावृत्य से श्रुतज्ञान की प्राप्ति होती है, और उसकी वृद्धि होती है। तीर्थंकर नामगोत्र कर्मका उपार्जन होता है तीर्थंकर प्रकृति का बंध जिस जिव के हो जाता है वह अवश्य ही केवलज्ञान का अधिकारी बन जायगा। क्यों कि यह प्रकृति केवल

તેમાં વિરોધ આવી જાય છે, કારણ કે જિન પ્રતિમા વૈયાવૃત્ય નામનો એક અગ્યારમો ભેદ ઉત્પન્ન થઇ જાય છે. અને બીજી એક એ પણ વાત છે કે જે જિન પ્રતિમા હોય છે તેમા વૈયાવૃત્યના સ્થાન પ્રાપ્તિની યોગ્યતા જ નથી, કારણ કે તેમાં જ્ઞાનાદિ કોઈ ગુણ તો છે જ નહીં-તેતો જડ પથ્થરની બનેલી છે, તો આહાર પાણી દ્વારા તેને સહાયતા પહોંચાડવાની શી આવશ્યકતા છે? તથા વૈયાવૃત્યમાં દશવિધાતાનું પ્રતિપાદન કરનાર જે આગમ છે તેમાં વિરોધાભાસ ન લાગે તે અભિપ્રાયથી પ્રેરાઈને જે આચાર્યમાં જિન પ્રતિમાનો સમાવેશ કરે છે, તેમનું તે પ્રમાણે કરવું તે પણ ભ્રાન્તિમૂલક જ છે. ચૈત્ય શબ્દમા જ્ઞાનાર્થકતાની અમારી આ માન્યતા આગમાનુકૂલ છે, કારણ કે વૈયાવૃત્યથી શ્રુતજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ થાય છે, અને તેની વૃદ્ધિ થાય છે. તથા તીર્થંકર નામગોત્ર કર્મનું ઉપાર્જન થાય છે. તીર્થંકર પ્રકૃતિનો બંધ જે જીવને બંધાય છે તે અવશ્ય કેવળ જ્ઞાનનો અધિકારી બનશે. કારણ કે તે કેવળજ્ઞા-

श्रीउत्तराध्ययनसूत्रे–" वेयावच्चेणं भंते ! जीवे किं जणयइ ? वेयावच्चेणं तित्थयर नामगोय कम्मं निबंधइ ॥ " (उत्त०अध्य, २९)

टीकार्थ–' न य ' न च ' अचियत्तस्य ' अप्रीतिकस्य=प्रीतिरहितस्य प्रतीतिरहितस्य वा साध्वागमनमनिच्छत इत्यर्थः, ' घरं ' गृहं ' पविसइ ' प्रविशति, न च अप्रतीतिकस्य ' भत्तपाणं ' भक्तपानं ' गेण्हइ ' गृह्णाति, न च अप्रीतिकस्य अप्रतीतिकस्य वा पीठफलकशय्यासंस्तारकवस्त्रपादकम्बलदण्डकम्बलरजोहरण-निषद्याचोलपट्टकसदोरकमुखवस्त्रिका पादप्रोञ्छनादि भाजनभाण्डोपध्युपकरणं,

---

ज्ञान की अविनाभाविनी है। तीर्थंकर प्रकृति नियमतः केवलज्ञान को उत्पन्न करनेवाली होती है, इसलिये ज्ञानार्थी होकर वैयावृत्य करता है ऐसा अर्थ हमारा निर्दोष ही है। उत्तराध्ययन सूत्र में यही बात कही है —" वेयावच्चेणं भंते। जीवे किं जणयइ ? वेयावच्चेणं तित्थयर नामगोयं कम्मं निबंधइ " (उत्तराध्य. अ. २९ बोल ४३)

तथा जो साधु (न य अचियत्तस्स घरं पविसइ) साधु के अपने घर पर आने से अप्रीति अथवा अप्रतीति–अविश्वास वाला होता है वह अचियत्त कहलाता है–ऐसे व्यक्ति के घर में साधु प्रवेश नहीं करता है, तथा (न य अचियत्तस्सभत्तपाणं गिण्हइ) उस अप्रीति और अप्रतीति–अविश्वास वाले के घर से भक्त पान नही लेता है, और (न य अचियत्तस्स पीढ फलगसेज्जासंथारगवत्थपायकंबल दंडग रओहरण निसेज्ज चोलपट्टगमुहपोत्तियपायपुंछणाइभायणभंडोवहि उवगरणं सेवइ) न उस अप्रीति और अप्रतीति वाले के पीठ,फलक,शय्या,

---

નની અવિનાભાવિની પ્રકૃતિ છે. તીર્થંકર પ્રકૃતિ સ્વાભાવિક રીતે જ કેવળજ્ઞાનને ઉત્પન્ન કરનારી હોય છે, તેથી જ્ઞાનાર્થી થઈને વૈયાવૃત્ય કરે છે એવો અમે દર્શાવેલો અર્થ નિર્દોષ જ છે. ઉત્તરાધ્યયન સૂત્રમાં એ જ વાત કરી છે–" वेयावच्चेणं भंते ! जीवे किं जणयइ ? वेयावच्चेणं तित्थयरनामगोयं कम्मं निबंधइ " (ઉત્તરાધ્ય. અ ૨૯ બોલ ૪૩) તથા જે સાધુ "न य अचियत्तस्स घरं पविसइ" સાધુ પોતાને ઘેર આવવાથી જે વ્યક્તિ અપ્રીતિ અથવા અવિશ્વાસ વાળો થાય છે તે અચિયત્ત કહેવાય છે–એવી વ્યક્તિના ઘરમાં સાધુ પ્રવેશ કરતા નથી, તથા " न य अचियत्तस्स भत्तपाणं गिण्हइ " તે અપ્રીતિ અને અવિશ્વાસવાળાના ઘરેથી આહારપાણી લેતા નથી, અને " न य अचियत्तस्स पीढफलग सेज्जासंथारगवत्थपायकंबलदंडगरजोहरणनिसेज्जचोलपट्टगमुहपोत्तिय पायपुंछणाइभायणभंडोवहिउवगरण सेवइ " તે અપ્રીતિ અને અવિશ્વાસ-વાળાનાં

'सेवइ' सेवते, न च 'परस्स' परस्य 'परिवायं' परिवादं=निन्दां 'जंपइ' जल्पति, 'न यावि' न चापि परस्य 'दोसे' दोषान् 'गेण्हइ' गृह्णाति, परदोषदर्शी न भवतीत्यर्थः, तथा-'परववएसेण वि' परव्यपदेशेनापि=बालग्लानादिनिमित्ते नापि स्वार्थमन्यार्थं वा 'न किंचि' न किञ्चिद् औषधभैषज्याद्यपि, 'गेण्हइ' गृह्णाति, तथा 'ण य' न च 'विपरिणामेइ' विपरिणमयति=धर्माद् गुर्वादिभ्यश्च विमुखी करोती 'कंचि जणं' कञ्चिदपि जनं शिष्यादिकम्। 'न यावि' न चापि 'णासेइ नाशयति 'दिण्णसुकयं' दत्तसुकृतम्, दत्तम्=अभयदानादिकं, सुकृत=व्रतप्रत्याख्यानादिकं अपि तु तदनुमोदयतीत्यर्थः, परकृतं शुभकृत्यं न प्रच्छादयन्ति, तथा-'दाऊण य' दत्त्वा च देय वस्तु, 'काऊण य' कृत्वा च

संस्तारक, वस्त्र, पादकंबल, दंडक, रजोहरण, निषद्या, चोलपट्टक, सदोरकमुखवस्त्रिका, पादप्रोञ्छन आदि तथा भाजन, भाण्ड, उपधि, उपकरण, इनका सेवन करता है, (न य परिवायपरस्स जंपइ) दूसरों की निंदा नहीं करता है, (न यावि परस्स दोसे गेण्हइ) दूसरों के दोषों को नहीं देखता है, (पर ववएसेणवि न किंचि गेण्हइ) बाल, ग्लान आदि के निमित्त से लाये हुए औषध, भैषज्य आदि कुछ भी वस्तु अपने अथवा दूसरे के काम में नहीं लेता है, (ण य विपरिणामेइ कंचि जणं) धर्म से तथा अपने गुरुजनों से जो शिष्यादिकों को विमुख नहीं करता है, (ण यावि णासेइ दिण्ण सुकयं) दत्त-अभय दानादिक का, सुकृत-व्रत प्रत्याख्यान आदि का जो नाश नहीं करता हैं किन्तु उनकी अनुमोदना ही करता है, अर्थात् परकृत शुभकृत्यों को जो आच्छादित नहीं करता है (दाऊण य काऊण य ण य पच्छात्ता-

---

પીઠ, ફલક, શય્યા સંસ્તારક, વસ્ત્ર, પાદકંબલ, દંડક, રજોહરણ, ચોલપટ્ટક, દોરા સાથેની મુહપત્તિ, પાદપ્રોંછન આદિ તથા ભાજન, ભાંડ, ઉપધિ આદિ ઉપકરણનું સેવન કરતો નથી, "न य वि परिवायपरस्स जंपइ" બીજાની નિંદા કરતો નથી, "न या वि परस्स दोसे गेण्हइ" બીજાના દોષોને જોતો નથી, "परववएसेण वि न किंचि गेण्हइ" બાળ, ગ્લાન આદિને નિમિત્તે લાવેલા ઔષધ, ભૈષજ્ય, આદિ કોઈ પણ વસ્તુ પોતાના અથવા બીજાના ઉપયોગમાં લેતો નથી, "ण य विपरिणामेइ किंचि जणं" જે શિષ્યાદિને ધર્મથી કે ગુરૂજનોથી વિમુખ કરતો નથી, "ण यावि णासेइ दिण्ण सुकयं" દત્ત-અભયદાનાદિકનું સુકૃત-વ્રત પ્રત્યાખ્યાન આદિનો જે નાશ કરતો નથી-પણ તેની અનુમોદના જ કરે છે, એટલે કે અન્ય વડે કરાયેલ શુભકૃત્યોને જે ઢાંકતો નથી "दाऊणय काऊणय ण य पच्छात्ताविए होइ" દેય વસ્તુને દઈને અને

वैयावृत्त्यादिकार्यं, 'ण होइ' न भवति 'पच्छातावीए' पश्चात्तापिकः=पश्चात्तापकारी । तथा-'संविभागसीले' संविभागशीलः-लब्धभक्तादेः संविभागकारी 'संगहोवग्गहकुसले' संग्रहोपग्रहकुशलः, तत्र-संग्रहः=शिष्यादिपरिवर्द्धनम्, उपग्रहः=तेषामेव भक्तश्रुतादिदानपूर्वकमुपष्टम्भनम्, तत्र कुशलो दक्षो भवति, 'से तारिसे' स तादृशः साधुः 'इण' इदम् = अदत्तादानविरमणरूपं 'वयं' व्रतम् 'आराहेइ' आराधयति, नान्यः ॥ सू० ४ ॥

विए होइ) देयवस्तु को देकर एवं वैयावृत्य आदि कार्य को करके जो पश्चात्ताप नहीं करता है, (संविभागसीले) लब्ध भक्तादिक का जो संविभागकारी होता है, और (संगहोवग्गहकुसले) शिष्यादि के परिवर्द्धन में और उनके भक्त श्रुत आदि दानपूर्वक उपष्टंभन में दक्ष होता है, (से तारिसे) ऐसा वह साधु (इणं वयं आराहेइ) इस अदत्तादानविरमणरूप व्रत को आराधित करता है, दूसरा नहीं ॥

भावार्थ—सूत्रकार ने इस सूत्र द्वारा यह समझाया है कि किस प्रकार का कार्य करने वाला साधु इस महाव्रत का आराधक होता है। उनका कहना है कि जो साधु पीछे के दूसरे सूत्र में कही गई बातों के अनुसार आचरण करता है वही साधु इस महाव्रत का आराधक बनता है, वे बातें इस प्रकार से हैं—जो साधु उपधि और भक्तपान के संग्रहण एवं दान करने में दक्ष होता है, अत्यंत बाल, दुर्बल, ग्लान, वृद्ध, क्षपक, प्रवर्त्तक, आचार्य, उपाध्याय आदि का वैयावृत्य करता है।

વૈયાવૃત્ય આદિ કાર્ય કરીને જે પશ્ચાત્તાપ કરતા નથી, "संविभागसीले" પ્રાપ્ત આહારાદિના જે સંવિભાગકારી હોય છે, અને "संगहोवग्गहकुसले" શિષ્યાદિના પરિવર્ધનમાં અને તેમના ભક્ત શ્રુત આદિ દાન પૂર્વક ઉપષ્ટંભનમાં દક્ષ હોય છે "से तारिसे" એવો તે સાધુ "इणं वयं आराहेइ" આ અદત્તાદાન વિરમણરૂપ વ્રતનું આરાધન કરી શકે છે, બીજા કરી શકતા નથી,

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્ર દ્વારા સમજાવ્યું છે કે કેવું કાર્ય કરનાર સાધુ આ મહાવ્રતનો આરાધક થાય છે. તેમનું એવું કથન છે કે જે સાધુ આગળ બીજા સૂત્રમાં બતાવેલ વાત અનુસાર આચરણ કરે છે તે જ સાધુ આ મહાવ્રતનો આરાધક બને છે તે વાતો આ પ્રમાણે છે—જે સાધુ ઉપધિ અને ભક્તપાન (આહારપાણી) નો સંગ્રહ અને દાન કરવામાં દક્ષ હોય છે, અત્યંત બાળ, દુર્બલ, ગ્લાન, વૃદ્ધ ક્ષપક, પ્રવર્ત્તક, આચાર્ય ઉપાધ્યાય આદિની વૈયાવંચ-વૈયાવૃત્ય કરે છે, અપ્રીતિક જનને ત્યાં ગોચરીને માટે જતો નથી, તેના દ્વારા

अप्रीतीकजन के घर पर गोचरी के लिये नहीं जाता है, उनके द्वारा प्रदत्त पीठ फलक आदि का उपयोग नहीं करता है' दूसरों कि निंदा नहीं करता हैं, पर के दोषों की तरफ दृष्टिपात नहीं करता हैं, पर के व्यपदेश से अपने लिये तथा दूसरों के लिये कुछ भी वस्तु नहीं लेता है, गुर्वादिक से उनके शिष्यादिकों का भेद नहीं कराता है, अभयदानादिक को दे करके, वैयावृत्य को करके जो पीछे से पछताता नहीं है, संग्रहशील होता है-संविभागकारी होता है, शिष्यादि संपत्ति बढाने में कुशल होता है ऐसा साधु ही महाव्रत का आराधक होता है। वैयावृत्य जो आचार्य आदि की करता हैं-उसमें उसका अभिप्राय अपने में ज्ञानवृद्धि और कर्मो की निर्जरा होनेका होता है। वैयावृत्य आचार्य आदि दस प्रकार के स्थान सेव्य होने के कारण दस प्रकार का है। सूत्र में यद्यपि चौदह प्रकार के वैयावृत्य के स्थान प्रकट किये हैं पर अत्यंत बाल और दुर्बल इन साधुओं का अन्तर्भाव ग्लान में एवं क्षपक और प्रभावक साधुओं का अन्तर्भाव आचार्य में कर दिया जाता है, इसलिये इस प्रकार से ये दस ही होते हैं। मुख्य रूप से जिसका कार्य आचार और व्रत ग्रहण कराने का होता है वह आचार्य है, मुख्यरूप से जिसका कार्य मूल सूत्र का अभ्यास कराने का होता

અપાયેલ પીઠ, ફલક આદિનો ઉપયોગ કરતો નથી અન્યની નિંદા કરતો નથી અન્યના દોષો તરફ નજર નાખતો નથી બીજાનું નિમિત્ત બતાવીને પોતાને માટે તથા અન્યને માટે કોઈ પણ વસ્તુ લેતો નથી, ગુર્વાદિક સાથે તેમના શિષ્યાદિકોમાં ભેદભાવ પડાવતો નથી, અભયદાન આદિ દઈને, વૈયાવૃત્ય કરીને જે પાછળથી પસ્તાતો નથી, સંગ્રહશીલ હોય છે-સંવિભાગકારી હોય છે, શિષ્યાદિરૂપ સંપત્તિ વધારવામાં કુશળ હોય છે, એવો સાધુ જ આ મહાવ્રતોનો આરાધક થઈ શકે છે. તે આચાર્ય આદિની જે વૈયાવંચ કરે છે તેમા તેનો હેતુ પોતાના જ્ઞાનની વૃદ્ધિ તથા કર્મોની નિર્જરા કરવાનો જ હોય છે. વૈયાવૃત્ય આચાર્ય આદિ દસ પ્રકારનાં સેવાને પાત્ર સ્થાન હોવાથી દસ પ્રકારનું છે. સૂત્રમાં જો કે ચૌદ પ્રકારના વૈયાવૃત્યના સ્થાન બતાવ્યાં છે પણ અત્યંત બાળ અને દુર્બળ સાધુઓનો સમાવેશ ગ્લાનમાં. અને ક્ષપક અને પ્રભાવક સાધુઓનો સમાવેશ આચાર્યમાં કરી દેવામાં આવેલ છે, તેથી આ રીતે તેના દસ પ્રકાર જ થાય છે મુખ્યત્વે જેનું કાર્ય આચાર અને વ્રત ગ્રહણ કરાવવાનું હોય છે તે આચાર્ય કહેવાય છે. મુખ્યત્વે જેનું કાર્ય મૂળ સૂત્રનો અભ્યાસ

अथोपसंहारमाह—' इमं च ' इत्यादि ।

मूलम्—इमं च परदव्वहरणवेरमणपरिरक्खणट्टयाए पावयणं भगवया सुकहियं अत्तहियं पेच्चाभावियं आगमेसिभद्दं सुद्धं नेयाउयं अकुडिलं अणुत्तरं सव्वदुक्खं पावाणं विउसमणं॥सू०५॥

टीका—' इमं च ' इदं च-पूर्वैरनन्ततीर्थंकरगणधरैः प्रोक्तमिदं प्रत्यक्षं ' पावयणं ' प्रवचनं ' परदव्वहरणवेरमपरिरक्खणट्टयाए ' परद्रव्यहरणविरमणपरिरक्षणार्थं=परद्रव्यहरणविरमणस्य=अदत्तादानविरमणव्रतस्य परिरक्षणार्थं =

है वह उपाध्याय है, जो विगय आदि के त्यागरूप तपों को तपता है वह तपस्वी है, जो नवदीक्षित होकर शिक्षण प्राप्त करने का उम्मीदवार होता है वह शैक्ष है, रोग आदि से जिसका शरीर क्षीण हो गया हो वह ग्लान है, एक ही दीक्षाचार्य का शिष्यपरिवार कुल है, जूदे २ आचार्यों के शिष्यरूप साधु यदि परस्पर सहाध्यायी होने से समान-वाचना वाले हों तो उनका समुदाय गण है, गण का समुदाय संघ कहलाता है । जो प्रव्रज्याधारी होता है वह साधु है । श्रुतलिंग और प्रवचन में जो समान हों वे साधर्मिक हैं ॥ सू० ४ ॥

अब सूत्रकार इस प्रकरण का उपसंहार करते हुए कहते हैं—' इमं च ' इत्यादि

टीकार्थ—(इमं च परदव्वहरणवेरमणपरिरक्खट्टयाए पावयणं भगवया सुकहियं) पूर्व में अनंत तीर्थंकरों एवं गणधर देवों द्वारा कहा

કરાવવાનું હોય છે તે ઉપાધ્યાય કહેવાય છે જે વિગય આદિના ત્યાગરૂપ તપો કરે છે તે તપસ્વી કહેવાય છે, જે નવદીક્ષિત થઈને શિક્ષણ પ્રાપ્ત કરવાને માટે ઉમેદવાર હોય છે તેને શૈક્ષ કહે છે. રોગ આદિથી જેનું શરીર ક્ષીણ થઇ ગયું હોય તેને ગ્લાન કહે છે એક જ દીક્ષાચાર્યના શિષ્ય પરિવારને કુલ કહે છે, જુદા જુદા આચાર્યોના શિષ્યરૂપ સાધુ જો પરસ્પર સહાધ્યાયી હોવાથી સમાન વાચનાવાળા હોય તો તેમના સમુદાયને ગણ કહે છે. ગણના સમુદાયને સંઘ કહે છે. જે પ્રવ્રજ્યા (દીક્ષા) ધારી હોય તે સાધુ કહેવાય છે. શ્રુતલિંગ અને પ્રવચનમાં જે સમાન હોય તે સાધર્મિક કહેવાય છે. ॥ સૂ૦ ૪ ॥

હવે સૂત્રકાર આ પ્રકરણનો ઉપસંહાર કરતા કહે છે–"इमं च" ઈત્યાદિ.

ટીકાર્થ–"इमं च परदव्वहरणवेरमणपरिरक्खट्टयाए पावयणं भगवया सुकहियं" પૂર્વે અનંત તીર્થંકરો અને ગણધરો દ્વારા કહેવાયેલ આ પ્રત્યક્ષી-

रक्षणनिमित्तं 'भगवया' भगवता 'सुकहियं' सुकथितं=सविस्तरं प्ररूपितम्। कथं भूतं प्रवचनं भगवता सुकथितम्? इत्याह—'अत्तहियं' आत्महितम्=आत्मनो हितकारकम्, तथा-'पेच्चाभावियं' प्रेत्यभाविकं=जन्मान्तरेऽपि शुभफलदायकम्, अत एव-'आगमेसिभद्दं' आगमिष्यद् भद्रं=भविष्यकाले-कल्याणकारकम्, तथा 'सुद्धं' शुद्धं=निर्दोषत्वात्, पुनः-'नेयाउयं' नैयायिकम्, वीतरागभाषितत्वात्-तथा-'अकुडिलं' अकुटिलम्=ऋजुभावजनकत्वात् 'अणुत्तरं' अनुत्तरम्-सर्वश्रेष्ठत्वात्, तथा 'सव्वदुक्खपावाण' सर्वदुःखपापानां=सकलदुःखजनकज्ञानावरणीयाद्यष्टविधकर्मणां 'विउसमणं' व्युपशमनं=सर्वथा प्रशमनकारकम्। एतादृशं प्रवचनं भगवता सुकथितमित्यर्थः ॥ सू० ५ ॥

अस्य तृतीयव्रतस्य पञ्चभावनाः प्रतिपादयन् सम्प्रति विविक्तवसतिवासाभिधां प्रथमां भावनामाह—'तस्स इमा' इत्यादि।

मूलम्—तस्स इमा पंचभावणाओ तइयस्स वयस्स हुंति, परदव्वहरणवेरमणपरिरक्खणट्टयाए। पढमं देवकुलसभा-प्पवा-

---

गया यह प्रत्यक्षीभूत प्रवचन, परद्रव्यविरमणरूप महाव्रत की परिरक्षा के निमित्त भगवान् ने विस्तारपूर्वक प्ररूपित किया है। यह प्रवचन (अत्तहियं) आत्मा का हितकारक है, (पेच्चाभावियं) जन्मान्तर में भी शुभफल का प्रदाता है, इसीलिये यह (आगमेसिभद्दं) भविष्यत् काल में कल्याण कारक कहा गया है। (सुद्धं) यह निर्दोष होने से शुद्ध है, (नेयाउयं) वीतराग प्रभु द्वारा भाषित होने से न्यायसंपन्न है, (अकुडिलं) ऋजुभावका जनक होनेसे अकुटिल है, (अणुत्तरं) सर्वश्रेष्ठ होनेसे अणुत्तर है तथा (सव्वदुक्खपावाणं विउसमणं) सकल दुःखजनक ज्ञानावरणीय आदि अष्टविध कर्मोंका सर्वथा प्रशामनकारक है॥ सू०५ ॥

ભૂત પ્રવચન. પરદ્રવ્ય વિરમણરૂપ મહાવ્રતની પરિરક્ષાને નિમિત્તે ભગવાને વિસ્તારપૂર્વક પ્રરૂપિત કરેલ છે આ પ્રવચન "अत्तहिय" આત્માનું હિતકારક છે, "पेच्चाभाविय" જન્માન્તરમા પણ શુભ ફળનું દેનારૂં છે, તેથી તે "आगमेसिभद्दं" ભવિષ્યકાળમાં કલ્યાણકારક બતાવવામાં આવ્યું છે. "सुद्धं", તે નિર્દોષ હોવાથી શુદ્ધ છે, "नेयाउयं" વીતરાગ પ્રભુદ્વારા કથિત હોવાથી ન્યાયયુકત છે, "अकुडिलं" ઋજુભાવનું જનક હોવાથી અકુટિલ છે, "अणुत्तरं" સર્વશ્રેષ્ઠ હોવાથી અનુત્તર છે તથા "सव्वदुक्खपावाणं विसमणं" સકળ દુઃખજનક જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ પ્રકારના કર્મોનું સર્વથા પ્રશમનકારક છે. સૂ.૫

वसहिरुक्खमूल-आराम-कंदराऽऽगर-गिरिगुहा-कम्मंतुज्जाण-जाण-साला-कुवियसाला-मंडव-सुन्नघर-सुसाणलेण आवणे अन्नम्मि य एवमाइयम्मि दग-मट्टिय--बीय-हरिय--तसपाण असंसत्ते अहाकडे फासुए विवित्ते पसत्थे उवस्सए होइ विहरियव्वं । आहाकम्मबहुले य जेसे आसि य संमज्जिओसित्तसोहिय छाण दुमणलिंपण अणुलिंपण जलणभंडचालणं अंतोबाहिं मज्झे य असंजमो जत्थ वट्टइ, संजयाणं अट्ठा वज्जेयव्वे हु उवस्सए से तारिसे सुत्तपरिकुट्ठे । एवं विविक्त वासवसहि समिइ जोगेण भाविओ भवइ अंतरप्पा, निच्चं अहिगरणकरणकारावण पावकम्म विरए दत्तमणुण्णाय उग्गहरुई ॥ सू० ६ ॥

टीका-' तस्स ' तस्य=प्रसिद्धस्य ' तइयस्स वयस्स ' तृतीयस्य व्रतस्य= अदत्तादानविरमणनामकतृतीयव्रतस्य ' इमा ' इमाः-वक्ष्यमाणाः ' पंच भावणाओ ' पञ्चभावनाः ' परदव्वहरणवेरमणपरिरक्खणट्ठयाए ' परद्रव्यहरणविरमण-परिरक्षणार्थाय अदत्तादानविरमणव्रतस्य रक्षानिमित्तं ' हुंति ' भवन्ति । तासु ' पढमं ' प्रथमां=विविक्तवसतिवासलक्षणां भावनामाह-साधुभिः क्वविहर्तव्यमिति,

---

अब सूत्रकार इस तृतीय व्रत की पांच भावनाओं को समझाने की इच्छासे सब से प्रथम विविक्तवसतिवास नाम की पहिली भावना को प्रकट करते हैं--' तस्स इमा ' इत्यादि० ।

टीकार्थ--(तस्स) उस प्रसिद्ध (तइयस्स वयस्स) तृतीय अदत्ता-दान विरमण व्रत की (इमा) ये वक्ष्यमाण (पंच भावणाओ हुंति) पांच भावनाएँ हैं। ये भावनाएँ (परदव्वहरणवेरमणपरिरक्खणट्ठयाए) इस

હવે સૂત્રકાર આ ત્રીજા વ્રતની પાંચ ભાવનાઓ સમજાવવાને માટે સૌથી પ્રથમ વિવકતવસિતવાસ નામની પહેલી ભાવનાને પ્રગટ કરે છે-"तस्स इमा" ઈ.

ટીકાર્થ—" तस्स " તે પ્રસિદ્ધ " तइयस्स वयस्स " ત્રીજા અદત્તાદાન વિરમણ વ્રતની " इमा " આ પ્રમાણે " " पंच भावणाओ ति" પાચ ભાવ-નાઓ છે એ ભાવનાઓ " परदव्वहरणवेरमणपरिरक्खणट्ठयाए " આ અદત્તા-

तदेव स्पष्टयति-' देवकुल-सभा-प्पवा-वसह-रुक्खमूल-आरामकंदराऽऽगर-गिरिगुहा-कम्मंतु-ज्जाण-जाणसाला-कुवियसाला-मंडव-सुन्नघर--सुसाण-लेण आवणे ' देवकुलसभामपाऽऽवसथवृक्षमूलारामकन्दराऽऽकरगिरिगुहाकर्मान्तोद्यानयानशाला कुप्यशालामण्डपशून्यगृहश्मशानलयनापणे-तत्र-देवकुलम्=व्यन्तरादि देवगृहम् , सभा=सभागृहं यत्र समये समये मन्त्रणार्थं जना आगत्य संमिलन्ति तत् , मपा=पानीयशाला, आवसथः=परिव्राजकगृहम् , वृक्षमूलं-प्रसिद्धम् , आरामः माधवीलतादिपरिमण्डितोरमणीयो वनविशेपः, कन्दरा=दरी, आकरो=लौहाद्युत्पत्तिस्थानम् , गिरिगुहा-प्रतीता, कर्मान्तः=लौहाकारादिशाला ' कारखाना ' ' मील ' ' जीण ' इत्यादि नाम्ना प्रसिद्धं स्थानम् । उद्यानम्=उपवनम् , यान-

---

अदत्तादान विरमण व्रत की परिरक्षा के निमित्त कही गई हैं (पढमं) उनमें प्रथम भावनो इस प्रकार है-इस प्रथम भावना का नाम विविक्त-वसतिवास है । इसमें साधुओं को कहां निवास करना चाहिये यह प्रकट किया गया है, (देवकुलसभा-प्पवा-वसह-रुक्खमूल-आराम-कंदरागार-गिरिगुहा-कम्मंतु-ज्जाण-जाणसाला-कुवियसाला-मंडव-सुन्नघर-सुसाण-लेण-आवणे) देवकुल में-व्यन्तर आदि देवों के स्थान में, सभा में-जहां पर मंत्रणा के लिये आकर समय २ पर मनुष्य एकत्रित होते हैं ऐसे स्थान में, प्रपा में-पानीयशाला में, आवसथ में-परिव्राजकों के घरों में, वृक्षमूल में-तरु के नीचे में, आराम में-माधवीलता आदि से परिमंडित रम्यवन में, कन्दरा में-गुफा में, आकर में-लोहादिक धातुओं के उत्पत्ति स्थान में, गिरिगुहा में-पर्वत की गुफा में, कर्मान्त में-लोहकार आदि की शाला में, कारखाना-मील-इत्यादि नाम से प्रसिद्ध

દાન વિરમણ વ્રતની પરિરક્ષાને માટે બતાવવામા આપી છે. " पढमं " તેમાંની પહેલી ભાવનાનું નામ ' વિવિક્તવસતિવાસ ' તેમાં સાધુઓએ ક્યાં વાસ કરવો તે બતાવ્યુ છે " देवकुल सभा-प्पवा-वसह-रुक्खमूल-आराम-कदरागार-गिरिगुहा-कम्मंतु-ज्जाण-जाणसाला-कुवियसाला-मंडव-सुन्नघर-सुसाण-लेण-आवणे" દેવકુલમાં-વ્યન્તર આદિ દેવોનાં સ્થાનમા, સભામાં જ્યાં મંત્રણાને માટે આવીને વખતોવખત માણસો એકઠા થાય છે એવા સ્થાનમાં, પ્રપામાં-પાનીયશાળમા. આવસથમાં-પરિવ્રાજકોનાં ઘરોમા, વૃક્ષમૂળમા-ઝાડની નીચે, આરામમાં-માધવી લતા આદિથી આચ્છાદિત રમ્યવનમા, કન્દરામાં-ગુફામાં, આકરમાં-લોઢું આદિ ધાતુઓની ખાણુમાં, ગિરિગુહામાં-પર્વતની ગુફામા. કર્માન્તમા-લુહાર આદિની શાલામાં, કારખાના-મીલ આદિ નામે પ્રસિદ્ધ સ્થાનોમાં, ઉદ્યાનમાં-બાગમા,

शाला=रथादिगृहम्, कुप्यशाला=गृहोपकरणशाला, मण्डपः=विश्रामस्थानम्, शून्यगृहं=प्रसिद्धं, श्मशानम्=प्रसिद्धम्, लयनं=गृहम्, आपणः=पण्यस्थानम्, 'हाट' इति भाषा प्रसिद्धम्, एषां समाहार द्वन्द्वस्तस्मिंत्तथोक्ते, अर्थात्–देवकुलादिरूपेऽष्टादशविधे, तथा–'अन्नमिय' अन्यस्मिंश्च 'एवमाइयंमि' एवमादिके=एवं विधे कथं भूते ? इत्याह–'दगमट्टिय–बीय–हरिय–तस पाण असंसत्ते' दकमृत्तिका बीजहरितत्रसप्राणसंसक्ते–दकम्=जलम्, मृत्तिका=प्रतीता, बीजानि=शाल्यादीनि, हरितानि=दूर्वादीनि त्रसप्राणाः=द्वीन्द्रियादयः, तैरसंसक्ते=रहिते, पुनः कीदृशे ? 'आहाकडे' यथाकृते=गृहस्थेन स्वार्थं निर्मिते 'फासुए' प्रासुके =निर्दोषे 'विविक्ते=स्त्रीपशुपण्डकरहिते, अत एव–'पसत्थे' प्रशस्ते=श्रेष्ठे साधुनिवासयोग्ये 'उवस्सए' उपाश्रये–साधुभिः 'विहरियव्वं' विहर्त्तव्यं= आश्रयितव्यं 'होइ' भवति। एतादृशे उपाश्रये साधुभिर्निवासः कर्तव्य इत्यर्थः।

स्थान में, उद्यान में–उपवन में, यानशाला में–रथादि गृह में, कुप्यशाला में–गृहोपकरण रखने के स्थान में, मंडप में–विश्राम स्थान में–शून्य गृह में–सूने घर में, श्मशान में–मरघट में, लयन में–पर्वत की तलहटी में निर्मित पाषण घर में, आपण में–हाट में (अन्नमि य एवमाइयम्मि) तथा इसी तरह के दूसरे स्थान में कि जो (दगमट्टिय–बीय–हरिय–तसपाण असंसत्त) जल, मृत्तिका, बीज, दूर्वा, द्वीन्द्रियादिक त्रस, इन से रहित हो, तथा (अहाकडे) जिस गृहस्थ ने अपने निमित्त बनवाया हो, एवं जो (फासुए) निर्दोष हो, तथा (विवित्त) स्त्री, पशु, पंडक से रहित हो और (पसत्थे) प्रशस्त–साधुजनों के निवास योग्य हो (उवस्सए) ऐसे उपाश्रय में (होइविहरियव्वं) साधुओं को रहना चाहिये। (अहा-

---

યાનશાલામાં-રથાદિ ગૃહમાં, કુપ્યશાલામાં–ગૃહોપકરણ રાખવાની જગ્યામાં, મંડપમાં–વિશ્રામ સ્થાનમાં, શૂન્યગૃહમાં–સૂના ઘરમાં, સ્મશાનમાં (મરઘરમાં), લયનમાં–પર્વતની તળેટીમાં રચેલ પાષાણઘરમાં, આપણમાં–હાટમાં, "अन्नम्मि य एवमाइयम्मि" તથા એજ પ્રકારનાં અન્ય સ્થાનોમાં કે જે "दगमट्टिय–बीय –हरिय–तसपाणअसंसत्ते" જળ, માટી, બીજ. દૂર્વા, દ્વિન્દ્રીયાદિક ત્રસ એ બધાથી રહિત હોય, તથા "अहाकडं" જે ગૃહસ્થે પોતાને માટે બનાવરાવ્યું હોય, અને જે "फासुए" નિર્દોષ હોય, તથા "विवित्त" સ્ત્રી, પશુ, પંડકથી રહિત હોય, અને "पसत्थे" પ્રશસ્ત–સાધુજનોના નિવાસને માટે યોગ્ય હોય "उवस्सए" એવા ઉપાશ્રયમાં "होइ विहरियव्वं" સાધુઓએ રહેવું જોઈએ "अहाकम्मबहुले य जेसे" અને જે ઉપાશ્રય આધાકર્મ બહુલ હોય

अथ कथम्भूते उपाश्रये साधुभिर्न वस्तव्यम् ? इत्याह–' आहाकम्मबहुले ' आधाकर्मबहुलः=आधानम्–आधातया, अर्थात् साध्वर्थं यत्पट्कायोपमर्दनरूपं कर्म तेन बहुलो व्याप्तो ' जे ' यः एवं विध उपाश्रयो ' से ' स वर्जयितव्यः। अनेन अदत्तादानविरमणलक्षणमूलगुणाशुद्धेः परिहारः उक्तः। स दोषवसत्युपभोगेन मूलगुणहानिर्भवतीति भावः। तथा ' जत्थ ' यत्र–' अंतो ' अन्तर्भागे ' बाहिं ' बहिर्भागे, ' मज्झे य ' मध्ये च ' आसियसम्मज्जि ओसित्त सोहियछाणदुमणलिंपण अणुलिंपण जलणभंडचालण ' आसक्ति संमार्जितोत्सिक्तशोधितछाणधवलनलेपनानुलेपनज्वलनभाण्डचालनम्–तत्र–आसिक्तम्=आसेचनम्=उदकादिच्छोटनमित्यर्थः, सम्मार्जितम्=शलाका हस्तेन=मार्जन्येत्यर्थः, कचवरसंशोधनम्, शोधितं=भित्त्यादि संलग्नजालाद्यपनयनेन शुद्धीकृतं ' छाण ' छाणं=छगणनं–गोमयेन संस्करणम्, दुमणं ' धवलनं–सेटिकादिना भित्त्यादेरुज्ज्वलीकरणम्,

---

कम्मबहुले य जे से) और जो उपाश्रय आधाकर्म बहुल हो–साधु के निमित्त षट्कायमर्दनरूप कर्म से व्याप्त हो–इसमें साधु को नहीं बसना चाहिये। क्यों कि ऐसे उपाश्रय में रहेने से साधु के इस अदत्तादान–विरमणरूपमूलगुण की शुद्धि नहीं रहती है। और नहीं रहने से इस मूलगुण की शुद्धि रहती हैं। तात्पर्य इसका यह है कि सदोषवसति के उपभोग से साधु के मूलगुणों की हानि होती है यही बात "अहाकम्मबहुलेय जे से" इस सूत्रांश द्वारा प्रदर्शित की गई है। तथा (जत्थ अंतो बहिं मज्झे य) जो उपाश्रय भीतर में बाहिर में और मध्यभाग में (आसियसंमज्जि ओसित्तसोहिय-छाण–दुमणलिंपण-अणुलिंपण–जलणभंडचालणं) पानी से छिड़का हुआ हो, बुहारु-संमार्जनी से जहां का कूडा कचरा साफ कर दिया गया हो, भीत आदि पर लगे हुए जाले जहाँ उतार दिये गये हों, जो गाय के गोबर से लीपा गया हो, चुने आदि से

સાધુને નિમિત્તે છકાય મર્દનરૂપ કર્મથી વ્યાપ્ત હોય, તેમાં સાધુએ રહેવું જોઇએ નહીં કારણ કે એવા ઉપાશ્રયમાં રહેવાથી સાધુના આ અદત્તાદાન વિરમણરૂપ મૂળ ગુણોને હાનિ થાય છે, એજ વાત " अहाकम्म–बहुले य जेसे " આ સૂત્રાંશ દ્વારા પ્રગટ કરેલ છે તથા " जत्थ अंतो बहिं मज्झे य " જે ઉપાશ્રય અંદર, બહાર અને મધ્ય ભાગમાં " आसियसंमज्जिओसित्तसोहियछाण दुमणलिंपणअणुलिंपणजलणभंडचालणं " પાણી છાંટેલ હોય, સાવરણીથી જ્યાંનો કચરો સાફ કર્યો હોય, દીવાલ આદિ પર લાગેલા જાળાં જ્યાંથી ઉતારી લીધા હોય, જે ગાયના છાણથી લીંપેલ હોય, ચુના વગેરેથી જેની દીવાલો

'लिंपणं' लेपनम्=मृत्तिकामिश्रितगोमयादिना रन्ध्रादिपूरणेन सकृल्लेपनम्, 'अणुलिंपणं' अनुलेपनम्=शोभार्थं पुनः पुनर्लेपनम्, ज्वलनं=शीतापनोदनाय वह्नेः प्रज्वलीकरणम्, भाण्डचालनम्=गृहस्थितभाण्डानामपरत्र स्थापनम्, उपलक्षणमेतदन्यवस्तूनामपि, एतेषां समाहारद्वन्द्वः, एतद्रूपः—'असंजमो' असंजमः=जीवविराधनारूपः साधुनिमित्तं 'वट्टइ' वर्तते 'से तारिसे' स तादृशः 'सुत्तपरिकुट्ठे' सूत्रपरिक्रुष्टः—आगमनिषिद्धः, 'हु' निश्चयेन 'उवस्सए' उपाश्रयः 'संजयाणं' संयतानाम् 'अट्ठा' अर्थाय 'वज्जेयव्वो' वर्जितव्यः। संयमिभिरेतादृशे जीवविराधनायुक्ते उपाश्रये न कदापि वस्तव्यमिति भावः। प्रथमभावनामुपसंहरन्नाह—'एवं' एवम्-उक्तरूपेण 'विवित्तवासवसहिसमिइजोगेणं' विविक्तवासवसतिसमितियोगेन—विवक्ता=स्त्रीपशुपण्डकरहिता जनरहिता वा या

जिसकी भींते पोतकर उज्ज्वल कर दी गई हों, जिसमें छेद वगैरह गोवरमिश्रित मिट्टी से पूर दिये गये हों, तथा जो बार २ सुन्दर दिखाने के निमित्त गोमयादि मिश्रित मृत्तिका से लीपा गया हो, जहां शीत को दूर करने के लिये अग्नि जल रही हो और जहां से रक्खे हुए गृहस्थ-जनों के वर्तन उठा २ कर दूसरी जगह रखे जा रहे हों इस प्रकार का (असंजमो वट्टइ) जीवविराधना रूप असंयम जहां साधु के निमित्त हो रहा हो (से तारिसे) इस प्रकार का जो (सुत्तपरिकुट्ठे) आगम से निषिद्ध है (उवस्सए) वह उपाश्रय (संजयाणं अट्ठा) साधुओं के लिये (वज्जेयव्वो) वर्जनीय है, अर्थात् इस प्रकार के उपाश्रय में साधु को नहीं वसना चाहिये। अब सूत्रकार प्रथम भावना का उपसंहार करते हुए कहते हैं—(एवं) उक्तरूप से इस (विवित्तवासवसहिसमिइ-जोगेण) विविक्तवासवसतिसमिति के योग से – स्त्री पशु पंडक से

ઉજ્વળ બનાવવામાં આવી હોય, જેમાંના છિદ્રો આદિ છાણમિશ્રિત માટીથી પૂરી દીધાં હોય, તથા જે સુંદર દેખાય તે માટે વારંવાર છાણ આદિ મિશ્રિત માટીથી લીંપવામાં આવેલ હોય, જ્યાં શીત દૂર કરવાને માટે અગ્નિ બળતો હોય, અને જ્યાંથી ગૃહસ્થોનાં વાસણ ઉપાડી ઉપાડીને બીજી જગ્યાએ મૂકવામાં આવતાં હોય, આ પ્રકારનો "असंजमोवट्टइ" જીવ વિરાધનારૂપ અસંયમ જ્યાં સાધુને નિમિત્તે થઈ રહ્યો હોય, 'से तारिसे" આ પ્રકારનું જે "सुत्त-परिकुट्ठे" આગમદ્વારા નિષિદ્ધ છે, "उवस्सए" તે ઉપાશ્રય "संजयाणं अट्ठा" સાધુઓને માટે 'वज्जेयव्वो" વર્જનીય છે એટલે કે તે પ્રકારના ઉપાશ્રયમાં સાધુએ રહેવુ જોઈએ નહીં. હવે સૂત્રકાર પહેલી ભાવનાનો ઉપસંહાર કરતા કહે છે–"एवं" ઉપર કહ્યા પ્રમાણે આ "विवित्तवासवसहिसमिइजोगेण"

वासवसति=निवासस्थानं तद्विषया या समितिः=सम्यक् प्रवृत्तिस्तया यो योगः= सम्बन्धस्तेन 'भाविओ' भावितः—वासितः 'अंतरप्पा' अन्तरात्मा=जीवः 'निच्चं' नित्यं=सदा 'अहिगरणकरणकारावणपावकम्मविरए' अधिकरणकरण-कारणपापकर्मविरतः—अधिक्रियते=अधिकारी क्रियते दुर्गतावात्मा येन तदधिकर-णम्=आसिञ्चनादिरूपं सावद्यानुष्ठानम्, तस्य यत्स्वयंकरणमन्यतो वा कारणम् —उपलक्षणादनुमोदनं च तदेव पापकर्म=तस्माद् विरतो=निवृत्तो यः सः तथोक्तः, तथा—'दत्तमणुण्णाय उग्गहरुई' दत्तानुज्ञातोद्ग्रहरुचिः 'तत्र—दत्तस्य = दात्रा वितीर्णस्य एषणीयस्य अनुज्ञातस्य=तीर्थकरगणधरैर्दत्ताज्ञस्य देवकुलादेः उद्ग्रहे= ग्रहणे रुचिः=प्रीतिर्यस्य स तथोक्तः अदत्तानज्ञुातवसतेरपरिभोक्तेत्यर्थः, 'भवइ' भवति ॥ सू०६ ॥

रहित ऐसे एकान्त निवास स्थान में वसने रूप समिनि के संबंध से (भाविओ अंतरप्पा) भवित जीव (निच्चं) सदा (अहिगरणकरण कारावणपावकम्मविरए) आसिंचनादि सावद्यानुष्टान के करने, कराने और उसकी अनुमोदनारूप पापकर्म से निवृत्त बना रहता है। तथा (दत्तमणुण्णाय उग्गहरुई) दाता से वितीर्ण, एवं तीर्थंकर गणधर आदि देवों द्वारा वसने के लिये अनुज्ञात हुए ऐसे देवकुल आदि स्थान के ग्रहण में प्रीतिवाला होने से वह दत्तानुज्ञात वसति के ग्रहण की रुचि वाला अर्थात् अदत्त अननुज्ञात वसनि का अपरिभोक्ता होता है।

भावार्थ—अदत्तादानविरमणव्रत की रक्षा और सुस्थिरता के निमित्त सूत्रकार इस सूत्र द्वारा इसकी पांच भावनाओं में से विविक्तवास-वसति नाम की प्रथम भावना का स्वरूप प्रकट करते हुए कहते हैं

વિવિક્તવાસવસતિ સમિતિનાં યોગથી સ્ત્રી, પશુ, પંડકથી રહિત એવા એકાન્ત નિવાસ સ્થાનમાં વસવારૂપ સમિતિના સંબંધથી " भाविओ अतरप्पा " ભાવિત જીવ " निच्चं " સદા " अहिगरणकरणकारावणपावकम्मविरए " આસિંચનાદિ સાવદ્ય અનુષ્ઠાન કરવાથી, કરાવવાથી અને તેની અનુમોદનારૂપ પાપકર્મથી નિવૃત્ત થઇ જાય છે. તથા " दत्तमणुण्णायउग्गहरुई " દાતાની વિતીર્ણ, અને તીર્થંકર ગણધર આદિ દેવોદ્વારા વસવાને માટે અનુજ્ઞા મળેલ એવા દેવકુલ આદિ સ્થાન ગ્રહણ કરવામાં પ્રીતિયુકત હોવાથી તે દત્તાનુજ્ઞાત વસતિને ગ્રહણ કરવાની રુચિવાળો એટલે અદત્ત અનનુજ્ઞાત વસતિનો ઉપભોગ કરનાર બને છે

ભાવાર્થ—અદત્તાદાન વિરમણ વ્રતની રક્ષા અને સુસ્થિરતાને નિમિત્તે સૂત્રકાર આ સૂત્રદ્વારા તેની પાંચ ભાવનાઓમાંથી " વિવિકતવાસવસતિ " નામની પહેલી ભાવનાનું સ્વરૂપ પ્રગટ કરતાં બતાવે છે કે સાધુઓએ દેવકુલ આદિ

कि साधु को देवकुल आदि स्थानो मे जो कि उसके निमित्त को लेकर नहीं बने हुए होते हैं ठहरना चाहिये या किसी उपाश्रय में। यह उपाश्रय साधु के निमित्त बना नहीं होना चाहिये, गृहस्थ ने इसे अपने निमित्त बनाया हो ऐसा होना चाहिये। साधु के निमित्त बनाने में साधु को सावद्यानुष्ठान कराने रूप असंयम का दोष लगता है। स्त्री पशु पण्डक से इस स्थान को वर्जित होना चाहिये। तथा 'साधु महाराज आ रहे हैं' इस ख्याल से साधु का निमित्त लेकर वह पानी से छिड़का हुआ नहीं होना चाहिये, वहां के जाले वगैरह उतारे हुए नहीं होना चाहिये। गोबर आदि से लीप पोत कर उसे साफ सुथरा किया गया नहीं होना चाहिये। उसमें की शीत को दूर करने के लिये वहां अग्नि वगैरह जलाकर उसे गरम किया हुआ नहीं होना चाहिये, इत्यादि जिस रूप से आगम में साधु के लिये निवास योग्य वसति रहने के लायक कही गई है वह उस रूप का होना चाहिये। तभी जाकर यह प्रथम भावना पल सकती है। और इस तरह की प्रवृत्ति करने वाला साधु अपने अदत्तादानविरमणव्रत की रक्षा और सुस्थिरता कर सकता है। सूत्र में जो अधिकरण शब्द आया है उसका व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ "दुर्गति में जाने योग्य आत्मा जिसके बल पर बनता है"

સ્થાનો, કે જે તેમને નિમિત્તે બનાવ્યાં હોતા નથી, તેમાં વસવું જોઈએ અથવા તો કોઈ ઉપાશ્રયમા વસવુ જોઇએ. તે ઉપાશ્રય સાધુને નિમિત્તે બનાવેલ હોવાં જોઇએ નહી, પણ ગૃહસ્થે પોતાને નિમિત્તે જ તે બધાવેલાં હોવા જોઈએ. સાધુને નિમિત્તે બનાવવામા સાધુને સાવદ્ય અનુષ્ઠાન કરાવવા રૂપ અસંયમનો દોષ લાગે છે સ્ત્રી, પશુ પડકથી તે સ્થાન રહિત હોવું જોઇએ. તથા "સાધુ મહારાજ પધારવાના છે" એવા ખ્યાલથી સાધુને નિમિત્તે તેના પર પાણી છંટાવ્યુ હોવું જોઇએ નહીં, ત્યાંના જાળાં વગેરે ઉતારેલ હોવાં જોઈએ નહીં છાણ આદિથી લીપીને તેને સ્વચ્છ અને સુઘડ બનાવ્યો હોવો જોઇએ નહીં. ત્યાંની શીતને દૂર કરવા માટે ત્યાં અગ્નિ વગેરે સળગાવીને તેને ગરમ કરેલ હોવો જોઇએ નહીં, ઇત્યાદિ પ્રકારે જે રીતે આગમમાં સાધુને માટે યોગ્ય નિવાસ બતવવામાં આવેલ છે તે પ્રકારનુ તે નિવાસસ્થાન હોવું જોઇએ. ત્યારે આ પહેલી ભાવના સફળ થાય છે અને તે પ્રકારની આ પ્રવૃત્તિ કરનાર સાધુ પોતાના અદત્તાદાન વિરમણવ્રતની રક્ષા અને સુસ્થિરતા રાખી શકે છે. સૂત્રમાં જે અધિકરણ શબ્દ આવ્યો છે તેનો વ્યુત્પત્તિ પ્રમાણે મળતો અર્થ "જેના પ્રભાવથી આત્મા દુર્ગતિમાં જવાને પાત્ર બને છે" તે પ્રમાણે થાય છે. આ

द्वितीयां भावनामाह—' बीयं ' इत्यादि :

मूलम्—बीयं आरामुज्जाणकाणणवणप्पदेसभागे जं किंचि-इक्कडं वा कढिणगं वा जंतुगं वा परमेरकुच्चकुसडब्भप्पलाल-मूयगवल्लयपुप्फफलतयप्पवालकंदमूलतणकट्ठसक्कराइं गेण्हइ सेज्जोवहिस्स अट्ठा, न कप्पइ उग्गहे अदिण्णम्मि गेण्हिउं, जे हणि हणि उग्गहं अणुण्णविय गेण्हियव्वं । एवं उग्गहसमिइजोगेण भाविओ भवइ अंतरप्पा णिच्चं अहिकरणकरण-कारावणपावकम्मविरए दत्तमणुण्णाय उग्गहरुई ॥ सू० ७ ॥

टीका—बीयं द्वितीयाम् अनुज्ञातसंस्तारकग्रहणरूपां भावनामाह तत्र–'आरा-मुज्जाणकाणणवणप्पदेसभागे ' आरामोद्यानकाननवनप्रदेशभागे–तत्र–आरामः =

इस प्रकार है। आसिञ्चनादिकर्म ऐसे ही है, क्यों की ये सावद्यानुष्ठान हैं। करना, कराना और अनुमोदना करना इनका व्रतादि के विचार में समानकोटि का स्थान कहा गया है, अतः साधु के लिये आसिञ्चनादि कर्म यदि साधु के निमित्त को लेकर किये जा रहे हैं तो वह भी सावद्यानुष्ठानरूप असंयम का भागी घनता है। अतः साधु को ऐसे सावद्यानुष्ठानरूप असंयमभावसे दूर रहनेका प्रभुका आदेश है ॥सू० ६॥

अब सूत्रकार द्वितीयभावना को प्रकट करते हैं—' बीयं आरामुज्जाण०' इत्यादि०।

टीकार्थ—(बीयं) इस व्रत की दूसरी भावना अनुज्ञातसंस्तारक-ग्रहण रूप है। वह इस प्रकार है–(आरामुज्जाणकाणणवणप्पदेसभागे)

સિંચનાદિ કર્મ એવાં જ છે, કારણ કે તે સાવદ્ય અનુષ્ઠાન છે કરવું, કરાવવું અને અનુમોદના આપવી એ ત્રણેનું વ્રતાદિકના વિચારમાં સમાન કોટિનું સ્થાન આપ્યું છે, આસિંચનાદિ કર્મ જો સાધુને નિમિત્તે કરવામાં આવતાં હોય તો તે સાધુને માટે પણ સાવદ્યાનુષ્ઠાનરૂપ અસંયમના ભાગીદાર બને છે. તેથી પ્રભુનો એવો આદેશ છે કે સાધુઓએ તેવાં સાવદ્યાનુષ્ઠાનરૂપ અસંયમ ભાવથી દૂર રહેવું જોઈએ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

હવે સૂત્રકાર બીજી ભાવનાને પ્રગટ કરે છે–"વીયં આરામુજ્જાણ" ઈત્યાદિ.

ટીકાર્થ—" વીયં " આ વ્રતની બીજી ભાવના "અનુજ્ઞાત સંસ્તારક ગ્રહણ રૂપ છે, તે આ પ્રમાણે છે–" आरामुज्जाणकाणणवणप्पदेसभागे " આરામ–

माधवीलतादिपरिमण्डितवनविशेषः, उद्यानम्=उपवनम् , काननं=सामान्यवृक्षोपेतं वनम् , वनम्=नगरदूर वर्त्तिवनम् , एतेषां यः प्रदेशः=स्थानं तस्य यो भागः=एक देशस्तत्र स्थितं 'इक्कडं' 'ढाढूंण' इति भाषा प्रसिद्धं तृणविशेषं वा=अथवा 'कढिणगं' कठिनकं='रोइस' इति भाषा प्रसिद्धं तृणविशेषः वा, यद्वा-'जंतुगं' जन्तुकं=जलाशयोत्पन्नतृणविशेषम् , वा=अथवा 'परमेरकुच्चकुसडब्भप्पलालमूयगवल्लयपुप्फफलतयप्पवालकंदमूलतणकट्ठसक्कराइं' परमेरकूर्चकुशदर्भपलालमूयकवल्वजपुष्पफलत्वक्प्रवालकन्दमूलतृणकाष्ठशर्करादि, तत्र-पराः=तृणविशेषः, मेराः=मुञ्जसरिकाः कूर्चानि यैस्तृणविशेषैः भित्तौ सेटिकावलेपनार्थं कूर्चा (कूँची) निर्मीयन्ते ते तृणविशेषाः कुशाः= ह्रस्वाकारास्तृणविशेषाः, दर्भाः=दीर्घाकाराः कुशाएव दर्भा उच्यन्ते, पलालः='पुआल' इति भाषाप्रसिद्धः, मूयकः='मोतिगा' इति भाषा प्रसिद्धस्तृणविशेषः; वल्वजः=दर्भजातीयतृणविशेषः, पुष्पफलत्वक्प्रवालकन्दमूलतृणकाष्ठशर्कराः प्रतीताः, एता आदौ यस्य तत्तथोक्तं 'जं

आराम-माधवीलता आदि से परिमंडित वनविशेष में, उद्यान-उपवन में, कानन-सामान्य वृक्षों से युक्त वन में, वन-नगर से दूरवर्ती जंगल में, अर्थात् इन स्थानों के प्रदेशों के एकदेश में, स्थित (जं किंचि) जो कुछ (इक्कडं वा) ढाढूंण-तृणविशेष, अथवा (कढिणगं वा) कठिनक-रोइस नामक तृणविशेष, अथवा (जंतुगं वा) जंतुक-जलाशय में-उत्पन्न हुए जतुक नाम के तृणविशेष, (पर-मेर-कुच्च-कुस-डब्भ-प्पलाल-मूयग-वल्लय-पुप्फ-फल-तय-प्पवाल-कंद-मूल--तण-कट्ठ--सक्कराइं) पर नाम के तृणविशेष, कुश नामक तृणविशेष, दर्भनामक तृणविशेष, पलाल नामक तृणविशेष, मोतिग नामक तृणविशेष; वल्वज-दर्भ-जाति का तृणविशेष, पुष्प, फल, त्वक्-छाल, प्रवाल-

---

માધવીલતા આદિથી આચ્છાદિત વનમાં, ઉદ્યાન-બાગમાં, કાનન-સામાન્ય વૃક્ષોથી યુક્ત વનમાં, વન-નગરથી દૂર આવેલા જંગલમાં, એટલે કે તે સ્થાનોના પ્રદેશોમાંના એક દેશમાં, સ્થિત "जं किंचि" જે કોઇ "इक्कडं वा" ઢાઢૂંણ-એક પ્રકારનું ઘાસ, અથવા "कढिणगं वा" કઠિનક-રોઇસ નામનું એક પ્રકારનું ઘાસ અથવા "जंतुगं वा" જંતુક-જળાશયમાં પેદા થયેલ જંતુક નામનું ઘાસ "पर, मेर, कुच, कुस, डब्भ, प्पलाल, मूयग, वल्लय, पुप्फ, फल, तय, प्पवाल, कंद, मूल, तण, कट्ठ, सक्कराइं" પર નામનું ઘાસ, મેર-મુંજ નામનું ઘાસ, કુશ નામનું ઘાસ, દર્ભ નામનું ઘાસ પલાલ નામનું ઘાસ, મોતિંગ નામનું ઘાસ, વલ્વજ-દર્ભની જાતનું ઘાસ, પુષ્પ, ફળ, ત્વક્-છાલ, પ્રવાલ-કુંપળ,

किंचि ' यत्किञ्चित् ' सेज्जोवहिस्स ' शय्योपधेः=शय्योपकरणस्य ' अट्ठा ' अर्थाय=हेतवे ' गेण्हइ ' गृह्णाति, तत् ' उग्गहे ' अवग्रहे=आज्ञायाम् ' अदिण्णे ' अदत्ते=अदत्तायाम् , अर्थात् तत्तद्वस्तु स्वामिन आज्ञायामप्राप्तयां सत्यां ' गेण्हिउं ' ग्रहीतुं साधूनां ' न कप्पइ ' न कल्पते, ' जे ' यत्=यस्मात् कारणात् ' हणिहणि ' अहन्यहनि प्रतिदिनम् ' उग्गहं ' अवग्रहम् 'अणुण्णविय' अनुज्ञाप्य=प्राप्य तत्तद्वस्तु साधुभिः ' गेण्हियव्वं ' ग्रहीतव्यं भवति । उपसंहरन्नाह–एवम्=अनेन प्रकारेण ' उग्गहसमिइजोगेण ' अवग्रहसमितियोगेन–अवग्रहः=शय्योपध्यर्थं तृणाद्यादानस्य तत्तत्स्वामिन आज्ञा तत्र या समितिः=सम्यक्प्रवृत्तिस्तया यो योगः=संबन्धस्तेन भावितो=वासितः ' अंतरप्पा ' अन्तरात्मा=जीवो नित्यम् , ' अहिकर-

---

कोंपल, कन्द, मूल, तृण–सामान्य तृणविशेष, काष्ठ–लकड़ी, शर्करा–कंकड, इनमें से जिस किसी पदार्थ को जो (सेज्जोवहिस्स अट्ठाए गेण्हइ) शय्योपकरण के निमित्त लेना है, परन्तु (उग्गहे अदिण्णम्मि गेण्हिउं न कप्पइ) इन २ वस्तुओं के स्वामी यदि उन २ वस्तुओंको लेने की आज्ञा नहीं देते हैं तो साधुको इन वस्तुओंका लेना नहीं कल्पता है (जे) इसलिये जो (हणि हणि उग्गहं अणुण्ण वि य गेण्हियव्वं) प्रतिदिन उन २ वस्तुओं को लेनेके लिये उन२ वस्तुओंके स्वामी की आज्ञा साधु को लेनी चाहिये, और आज्ञा प्राप्त हो जाने पर ही उन२ वस्तुओं को लेना चाहिये। (एव उग्गहसमिइजोगेण भाविओ अंतरप्पा निच्चं अहिकरण, करण कारावणपावकम्मविरए दत्तमणुण्णाय उग्गहरुई भवइ) इस प्रकार से अवग्रहसमितिके योग से–शय्योपधिके निमित्त तत्तद्वस्तुओं के स्वामी की आज्ञा प्राप्तकर तृणादि को के लेने में सम्यक् प्रवृत्ति के साथ संबंध

કંદ, મૂળ, તૃણ–સામાન્ય ઘાસ, કાષ્ઠ–લાકડાં, શર્કરા–કંકડ, તે બધામાંથી કોઇ પણ પદાર્થને જે "सेज्जोवहिस्स अट्ठाए गेण्हइ" શય્યા બનાવવાના સાધન તરીકે લે છે, પણ "उग्गहे अदिण्णम्मि गेण्हिउं न कप्पइ" તે તે વસ્તુઓના માલિક જો તે તે વસ્તુઓ લેવાની રજા ન આપે તો સાધુઓને તે વસ્તુઓ લેવી કલ્પતી નથી "जे" તેથી જે "हणि हणि उग्गहं अणुण्णविय गेण्हियव्वं" પ્રતિદિન તે તે વસ્તુઓ લેવાને માટે તે તે વસ્તુઓના માલિકની મંજૂરી સાધુએ લેવી જોઈએ, અને મંજૂરી મળ્યા પછી જ તે તે વસ્તુઓ લેવી જોઇએ. "एवं उग्गह समिइजोगेण भाविओ अतरप्पा निच्चं अहिकरण, करणकारावरणपावकम्म-विरए दत्तमणुण्णाय उग्गहरुई भवइ" આ પ્રમાણે અવગ્રહ સમિતિના યોગથી–શય્યોપધિને નિમિત્તે તે તે વસ્તુઓના માલિકની આજ્ઞા મેળવીને તૃણાદિકોને

णकरणकारावणपावकम्मविरए ' अधिकरणकरणकारणपापकर्मविरतः=तत्र अधिकरणम्=अननुज्ञातेक्कडादीनामादानरूपं सावद्यंकर्म तस्य यत्स्वयं करणम् अन्यतश्च कारणम् उपलक्षणादनुमोदनं च, एतद्रूपं यत्पापकर्मतस्माद् विरतो=निवृत्तो यः स तथोक्तः, तथा-' दत्तमणुण्णायउग्गहरुइ ' दत्तानुज्ञातावग्रहरुचिः=दत्तस्य=वस्तु स्वामिना वितीर्णस्य, अनुज्ञातस्य=ग्रहणार्थं कथितस्य तीर्थंकरगणधरैराज्ञप्तस्य वा तृणादिवस्तुनः उद्ग्रहः=ग्रहणं, तस्मिन् रुचिः अभिप्रायो यस्य स तथोक्तः, ' भवइ ' भवति ॥ सू० ७ ॥

से, भावित हुआ जीव सदा सावद्यानुष्ठान के करने, कराने और उसकी अनुमोदनाजन्य पापकर्म से निवृत्त बना रहता है। तथा दाता से वितीर्ण एवं तीर्थंकर गणधर आदि देवों द्वारा ग्रहण करने के लिये कथित इक्कड आदि वस्तु के ग्रहण करने के अभिप्राय वाला होता है। इस तरह उसकी अनुज्ञात संस्तारक ग्रहणरूप द्वितीय भावना सध जाती है।

भावार्थ—सूत्रकार ने इससूत्र द्वारा इस व्रत की अनुज्ञात संस्तारक ग्रहण नामक दूसरी भावना का उल्लेख किया है। इसमें यह स्पष्ट किया गया है कि साधु का कर्त्तव्य है कि वह शय्योपकरण के निमित्त आराम आदि स्थानों के किसी भी भाग से जो इक्कड आदि वस्तुए लेवे वह उनके स्वामियों की आज्ञा प्राप्त कर ही लेवे। अन्यथा उसे अदत्तादान ग्रहण करने का दोष लगेगा जो इस मूलगुण की अशुद्धि का कारण बनेगा। अतः जो शय्या संस्तारक के निमित्त इक्कड आदि तृणविशेषों

લેવાની સમ્યક્ પ્રવૃત્તિના યોગથી, ભાવિત થયેલ જીવ સદા સાવદ્યાનુષ્ઠાન કરાવવાના અને તેની અનુમોદના કરવાના પાપકર્મથી નિવૃત્ત રહ્યા કરે છે. તથા દાતા વડે વિતીર્ણ અને તીર્થંકર ગણુધર આદિ દેવો દ્વારા ગ્રહણુ કરવાને યોગ્ય કહેલ ઇક્કડ આદિ વસ્તુ ગ્રહણુ કરવાના અભિપ્રાયવાળા થાય છે. આ રીતે તેની અનુજ્ઞાત સંસ્તારક ગ્રહણુરૂપ બીજી ભાવના સાધ્ય બને છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્રદ્વારા આ વ્રતની ' અનુજ્ઞાત સંસ્તારક ગ્રહણુ' નામની બીજી ભાવનાનું સ્પષ્ટીકરણુ કર્યું છે તેમાં એ સ્પષ્ટ કરવામાં આવ્યું છે કે સાધુનુ તે કર્તવ્ય છે કે તે શય્યાના સાધન નિમિત્તે આરામ આદિ સ્થાનોના કોઈ પણુ ભાગમાંથી ઈક્કડ આદિ જે વસ્તુઓ લે તે તેના માલિકની રજા મેળવીને જ લે નહીં તો તેમને અદત્તાદાન ગ્રહણુ કરવાનો દોષ લાગે છે, જે આ મૂલગુણુની અશુદ્ધિનું કારણુ બનશે. તેથી શય્યા સંસ્તારકને નિમિત્તે ઈક્કડ આદિ પ્રકારના તૃણુ વિશેષને પ્રાપ્ત કરવાને માટે જે સાધુઓ તેના માલિકની

अथ तृतीयां भावनामाह—' तइयं ' इत्यादि—

मूलम्—तइयं पीढफलगसेज्जासंथारगट्टयाए रुक्खा न छिंदियव्वा, न य छेयण भेयणेण य सेज्जा कारियव्वा, जस्सेव उवस्सए वसेज्जा, सेज्जं तत्थेव गवेसेज्जा, न य विसमं समं करेज्जा, न य निवायपवायउस्सुगत्तं, न डंसमसगेसु खुभियव्वं, अग्गीधूमो य न कायव्वो। एवं संजमबहुले संवरबहुले संवुडबहुले समाहिबहुले धीरे काएण फासयंते सययं अज्झाणजुत्ते समिए एगे चरेज्ज धम्मं, एवं समिइजोगेण भाविओ भवइ अंतरप्पा निच्चं अहिकरणकरणकारावणपावकम्मविरए दत्तमणुन्नाय उग्गहरुई ॥ सू० ८ ॥

टीका—'तइय' तृतीयां शय्यापरिकर्मवर्जनरूपां भावनामाह—तत्र—' पीढफलगसेज्जासंथारगट्टयाए ' पीठफलकशय्यासंस्तारकार्यतायै—तत्र—पीठं=' बाजोट '

को प्राप्त करने के लिये उनके स्वामीयों की आज्ञा प्राप्तकर इन २ वस्तुओं को लेता है वह इस द्वितीय भावना का पालक होता है। इस तरह के विचार से जो साधु अपनी प्रवृत्ति करता है वह अधिकरण करण कारण पापकर्म से निवृत्त बनकर इस व्रत को इस भावना द्वारा स्थिर करने वाला हो जाता है ॥ सू० ७ ॥

अथ सूत्रकार इस व्रत की तृतीय भावना को कहते हैं—' तइयं पीढफलग०' इत्यादि०।

टीकार्थ—(तइयं) इस व्रत की तीसरी भावना शय्यापरिकर्मवर्जनरूप है। वह इस प्रकार से है–(पीढफलगसेज्जा संथारगट्टयाए)

આજ્ઞા લઈને તે વસ્તુઓ ગ્રહણ કરે છે તેઓ આ બીજી ભાવનાના પાલક હોય છે. આ પ્રકારના વિચારથી જે સાધુ પોતાની પ્રવૃત્તિ કરે છે તે અધિકરણ કરણકારણ પાપકર્મથી નિવૃત્ત થઈને આ વ્રતને આ ભાવના દ્વારા સ્થિર કરનાર બની જાય છે. ॥ સૂ૦ ૭ ॥

હવે સૂત્રકાર આ વ્રતની ત્રીજી ભાવના બતાવે છે–"तइयं पीढफलग" ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ–" तइयं " આ વ્રતની ત્રીજી ભાવના " શય્યાપરિકર્મવર્જન " નામની છે. તે આ પ્રમાણે છે–" पीढफलगसेज्जासंथारगट्टयाए " પીઠ–બાજોઠ,

इति भाषा प्रसिद्धं, फलकः='पाट' इति भाषा प्रसिद्धः, शय्या=शरीरप्रमाणा, संस्तारकाः=सार्द्धहस्तद्वयप्रमाण आसनविशेषः, तदर्थं 'रुक्खा' वृक्षाः 'छिंदियव्वा' छेत्तव्य । 'न य' न च 'छेयणभेयणेण' छेदनभेदनेन=छेदनं=तद्भूम्याश्रितवृक्षाणां कर्तनम्, भेदनं=पाषाणादीनां द्विधाकरणम्, अनयो समाहारः तेन तथोक्तेन च 'सेज्जा' शय्या 'न कारियव्वा' न कारयितव्या परः । तथा 'जस्सेव' यस्यैव गृहपतेः 'उवस्सए' उपाश्रये=वसतौ 'वसेज्जा' वसेत्, 'तत्थेव' तत्रैव 'सेज्जं' शय्यां—शयनीयं 'गवेसेज्जा' गवेषयेत्=कुर्यादित्यर्थः । च=पुनः 'नय वि समंसमं करेज्जा' विषमां भूमिं समां कुर्यात् । 'न य' न च 'निवायपवायउस्सुगत्तं' निवातप्रवातोत्सुकत्वम्—निवातं=निर्वातस्थानम्, प्रवात=प्रकृष्टवायुस्थानम्, तत्र—उत्सुकत्वम्=उत्सुकतां 'न करेज्जा'

पीठ—बाजोट, फलक—पाट, शय्या—शरीरप्रमाण, संस्तारक—ढाई हाथप्रमाण आसनविशेष, साधु संबंधी इन वस्तुओं को बनवाने के निमित्त (रुक्खा न छिंदियव्वा) वृक्षों को नहीं काटना चाहिये। और (न य छेयण—भेयणेण सेज्जा कारियव्वा) न उनके छेदन, भेदन से शय्या करवानी चाहिये। वृक्षों का कटवाना इसका नाम छेदन है और उनका फडवाना इसका ना भेदन है। तथा (जस्सेव उवस्सए वसेज्जा सेज्जं तत्थेव गवेसेज्जा) जिस गृहपति के (उवस्सए) उपाश्रय में—वसतिस्थान में साधु (वसेज्जा) बसे—रहे, (तत्थेव) वहीं पर अर्थात्—उसी मकान मालिक से अथवा उसी वस्ती से (सेज्जं गवेसेज्जा) शय्या की गवेषणा करे न य विसमं समं करेज्जा) वहां की भूमि को यदि वह विषम—ऊंची नीची होवे तो उसे सम—एकसी न करे, और (न य निवाय पवाय उस्सुगत्तं) न वह निर्वात स्थान की तथा प्रवात स्थान की

ફલક—પાટ, શય્યા-શરીરપ્રમાણુ, સસ્તારક—અઢી હાથના માપનુ એક આસન, આદિ સાધુને ઉપયોગી ચીજો બનાવવાને માટે " रुक्खा न छिंदियव्वा " વૃક્ષોને કાપવાં જોઇએ નહીં, અને " न य छेयण भेयणेण सेज्जा कारियव्वा " તેમને છેદાવી ભેદાવીને શય્યા કરાવવી જોઇએ નહી વૃક્ષોને કપાવવા એટલે તેમનું છેદન અને તેમને વેરાવવા તેનું નામ ભેદન છે, તથા " जस्सेव उवस्सए वसेज्जा सेज्जं तत्थेव गवेसेज्जा " જે ગૃહપતિના " उवस्सए " ઉપાશ્રયમાં વસતિસ્થાનમાં સાધુ " वसेज्जा " વસે રહે, " तत्थेव " ત્યાં જ એટલે કે તે જ મકાનમાલિક પાસેથી અથવા તે જ વસ્તીમાંથી " सेज्जं गवेसेज्जा " શય્યાની ગવેષણા કરે " न य विसमं समं करेज्जा " જો ત્યાંની જમીન વિષમ—ઊંચી નીચી હોય તો તેને એકસરખી ન કરે અને " न य निवाय पवाय उस्सुगत्तं "

न कुर्यात् । अयं भावः—शीतर्तौ निर्वातस्थानस्य ग्रीष्मर्तौ सवातस्थानस्य वाञ्छां न कुर्यात् । इति । 'न य' न च 'डंसमसगेसु' दंशमशकेषु सत्सु 'खुभियव्वं' क्षोभितव्यम्, दंशमशकादीनामुपद्रवे सत्यपि क्षोभो न कर्तव्य इति भावः । तथा— 'अग्गीधूमो य' अग्निर्धूमश्च=दंशमशकादीनां निवारणार्थमग्निर्धूमो वा 'न कायव्वो' न कर्तव्यः । एवम्=उक्तरूपेण 'संजमबहुले' संयमबहुलः=संयमः=षट्कायरक्षणलक्षणः, स बहुलः=प्रचुरो यस्य सतथोक्तः, तथा—'संवरबहुले' संवरबहुलः=संवरः=प्राणातिपाताद्यास्रवद्वारनिरोधः, स बहुलः=प्रचुरो यस्य सतथोक्तः, तथा—'संवुडबहुले' संवृतबहुल=संवृतं=कषायेन्द्रियजयः, तद् बहुलं प्रचुरं यस्य स तथोक्तः, तथा—'समाहिबहुले' समाधिबहुलः=समाधिः=चित्तस्वास्थ्यं, स बहुलः प्रचुरो यस्य स तथोक्तः, एतादृशो 'धीरे' धीरः=अक्षोभ्यः 'काएण' कायेन 'फासयंते' स्पृशन्=परीषहान् सहमानइत्यर्थः, तथा—'सययं'

उत्सुकता—भावना रखे अर्थात् शीतऋतु में निर्वातस्थान की और ग्रीष्म ऋतुमें हवादार स्थान की इच्छा न करे। तथा—(न डंसमसगेसु-खुभियव्वं) ठहरे हुए स्थान में दंशमशक आदि का उपद्रव होवे तो उससे उसको क्षुभित नहीं होना चाहिये। और (अग्गी धूमो न कायव्वो) न उस स्थान पर उन दंशमशक आदि को भगाने के निमित्त अग्नि वा धूआँ करवाना चाहिये। (एवं) इस प्रकार की प्रवृत्ति रखने से (संजमबहुले) षट्काय रक्षणरूप संयम की प्रचुर मात्रा से युक्त संयम बहुल, तथा (संवरबहुले) प्राणातिपात आदि आस्रव द्वार के निरोध रूप संवर की प्रचुर मात्रा से सहित होने के कारण संवर बहुल, तथा (संवुडबहुले) कषाय और इन्द्रियों के जीतने रूप संवृत की प्रचुर मात्रा से रहित होने के कारण संवृतबहुले, तथा

તે નિર્વાત સ્થાનની કે પ્રવાતસ્થાનની ઉત્સુકતા રાખે નહીં, એટલે કે શિયાળામાં પવન વિનાના સ્થાનની અને ઉનાળામાં હવા આવે તેવા સ્થાનની તેણે ઈચ્છા કરવી નહીં. તથા "न डंसमसगेसु खुभियव्व" તેમને થોભવાના સ્થાનમા ડાંસ, મચ્છર આદિનો ઉપદ્રવ હોય તો તેથી તેણે ક્ષોભ પામવો નહીં. અને "अग्गी धूमो न कायव्वो" તેમણે તે ડાંસ, મચ્છર આદિને નસાડવા માટે તે સ્થાનમાં અગ્નિ કે ધુમાડો કરાવવો જોઈએ નહીં. "एवं" આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિ રાખવાથી "संजम बहुले" છકાય રક્ષણરૂપ સંયમની અત્યંત માત્રાથી યુક્ત સંયમબહુલ તથા "सवरबहुले" પ્રાણાતિપાત આદિ આસ્રવદ્વારના નિરોધરૂપ સંવરની ઘણી માત્રાથી યુક્ત હોવાને કારણે સંવરબહુલ. તથા "संवुडबहुले" કષાય અને ઈન્દ્રિયોને જીતનાર સંવૃતની અતિ અધિક માત્રાથી યુક્ત હોવાને

सततम्=निरन्तरम्, 'अज्झप्पज्झाणजुत्ते' अध्यात्मध्यानयुक्तः=आत्मानमधिकृत्य अध्यात्मम्=आत्मालम्बनरूपं यद्ध्यानं तेन युक्तः=समन्वितः, तथा-'समिए' समितः=समितिभिर्युक्तः 'एगे' एकः= एकाकी रागद्वेषरहितः, 'धम्मं' धर्मं= श्रुतचारित्रलक्षणं 'चरेज्ज' चरेत्=आचरेत्। उपसंहरन्नाह-'एवम्' प्रकारेण 'सिज्जासमिइजोगेण' शय्यासमितियोगेन भावितोऽन्तरात्मानित्यम्, 'अहिक-रण करणकरावणपावकम्मविरए' अधिकरणकरणकारणपापकर्मविरतः-अधिकरणं= शय्यापरिकल्पनार्थं वृक्षादीनां छेदनभेदनरूपं यत्सावद्यं कर्म, तस्य यत्स्वयं कर-णम्, अन्यतश्च कारणं उपलक्षणत्वादनुमोदनं च तद्रूपं यत्पापकर्म ततो विरतो= निवृत्तो यः स तथोक्तः, तथा-दत्तानुज्ञातावग्रहरुचिः=दत्तानुज्ञातैषणीयपीठफल-कादेरुपभोगकारी भवति ॥ सू-८ ॥

(समाहियबहुले) चित्त की स्वस्थतारूप समाधि की प्रचुर मात्रा से सहित होने के कारण समाधि बहुल, बना हुआ वह साधु (फासयंते-काएणधीरे) परीषहों को सहते हुए शरीर से धीर-अक्षोभ्य बना रहता है। तथा (सययं अज्झप्पज्जाणजुत्ते) निरन्तर आत्मावलम्बन रूप ध्यान से युक्त बना हुआ वह साधु (समिए) पांच समिति के पालन से (एगे) अकेला रागद्वेष रहित होकर (धम्मं चरेज्ज) श्रुत-चारित्ररूप धर्म का आचरण करता रहता है (एवं) इस प्रकार से (सेज्जासमिइजोगेण) शय्यासमिति के योग से (भाविओ अंतरप्पा) भावित हुआ जीव (निच्चं) नित्य (अहिकरणकरणकारणपावकम्म-विरए) शय्यापरिकल्पनार्थ वृक्षादिकों के छेदन भेदन रूप सावद्य अनु-ष्ठान के करने दूसरों द्वारा कराने तथा अनुमोदना रूप पापकर्म से निवृत्त

કારણે સંવૃતબહુલ, તથા "समाहियबहुले" ચિત્તની સ્વસ્થતારૂપ સમાધિથી -અત્યંત પ્રમાણમાં યુક્ત હોવાને કારણે સમાધિબહુલ, બનેલ તે સાધુ "फासयंते काएणधीरे" પરીષહોને સહન કરતાં કરતા શરીરથી ધીર-ક્ષોભરહિત રહે છે તથા "सययं अज्झप्पज्जाणजुत्ते" નિરંતર આત્માવલંબનરૂપ ધ્યાનથી યુક્ત બનેલ તે સાધુ "समिए" પાંચ સમિતિના પાલનથી "एगे" એકલો રાગદ્વેષ રહિત થઈને "धम्म चरेज्ज" શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મનું આચરણ કર્યા કરે છે "एवं" આ રીતે "सेज्जा समिइ जोगेण" શય્યાસમિતિના યોગથી "भाविओ अंतरप्पा" ભાવિત થયેલ જીવ "निच्चं" નિત્ય "अहिकरणकरणकारणपावकम्मविरए" શય્યા-પરિકલ્પનાર્થે વૃક્ષાદિના છેદન ભેદનરૂપ સાવદ્ય અનુષ્ઠાન કરતાં, બીજા પાસે કરાવતાં તથા અનુમોદનારૂપ પાપકર્મથી નિવૃત થઈ જાય છે. તથા "दत्तम-

हो जाता हैं। तथा (दत्तमणुण्णाय उग्गहरुई भवइ) दत्तानुज्ञातावग्रह-रुचिवाला-दत्तानुज्ञातैषणीय पीठ फलक आदिका उपभोगकारी होता है।

भावार्थ—सूत्रकार ने इस सूत्र द्वारा शय्यापरिकर्मवर्जन नामक तीसरी भावना का स्पष्टी करण किया है। उन्हों ने इस में यह समझाया है कि जो साधु इस भावना को भाता है-सेवन करता है-उसका कर्त्तव्य है कि वह अपने निमित्त काटे गये वृक्ष से बने हुए पीठ फलक आदि के उपभोग करने का परित्याग कर देवे। तथा जिस गृहपति के यहां वह ठहरे वहीं पर अर्थात् उसी मकान मालिक से अथवा वस्ती से वह अपनी शय्या की गवेषणा करें। यदि वहां की भूमि नीची ऊँची होवे तो वह उसे सम न करे। यदि गर्मी के समय में किसी गृहपति की वसती में ठहरने का अवसर प्राप्त हुआ हो और वहां हवा आने का साधन न हो तो वह सवात स्थान की चाहना न करे तथा यदि शीतऋतु में किसी गृहपति के यहां या किसी उपाश्रय आदि में ठहरने का मौका आ गया होवे और वह स्थान सवात हो तो उसे निर्वात-स्थान की कामना नहीं करनी चाहिये। दंशमशक पीडित करें भी-तो भी उसे क्षुभितचित्त नहीं होना चाहिये-और न उन्हें भगाने का उसे कोई उपाय ही विचारना या करना चाहिये। इस तरह से वह

णुण्णायउग्गहरुई भवइ" દત્તાનુજ્ઞાતાવગ્રહ રુચિવાળો-દત્તાનુજ્ઞાતૈષણીય પીઠ, ફલક આદિનો ઉપભોગકર્તા બને છે

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્રદ્વારા શય્યાપરિકર્મવર્જન નામની ત્રીજી ભાવનાનું સ્પષ્ટીકરણ કર્યું છે. તેમણે તેમાં એ સમજાવ્યું છે કે જે સાધુ આ ભાવનાનું સેવન કરે છે, તેનું કર્તવ્ય એ છે કે તે પોતાને નિમિત્તે કપાયેલ વૃક્ષમાથી બનાવેલ પીઠ, ફલક આદિનો ઉપભોગ કરવાનો પરિત્યાગ કરે. તથા જે ગૃહપતિને ત્યાં તે ઉતરે ત્યા જ એટલે કે એ જ મકાનમાલિક પાસેથી અથવા વસ્તીમાંથી તે પોતાની શય્યાની ગવેષણા કરે જો ત્યાંની જમીન ઊંચી નીચી હોય તો તેને સમતલ ન કરે. જો ઉનાળાની ઋતુમાં કોઇ ગૃહપતિના આવાસમાં થોભવાની જરૂર પડી હોય અને ત્યાં હવા આવવાની વ્યવસ્થા ન હોય તો તે હવા આવે તેવા સ્થાનની ઇચ્છા ન કરે તથા જો શિયાળામાં કોઇ ગૃહપતિને ત્યાં અથવા કોઈ ઉપાશ્રય આદિમા ઉતરવાનો અવસર આવે અને તે સ્થાનમાં પવન આવતો હોય તો તેણે પવન ન આવે એવા સ્થળની ઇચ્છા જોઈએ નહીં. ડાંસ, મચ્છર આદિ સતાવે તો પણ તેણે ચિત્તમાં ક્ષોભ પામવો જોઈએ નહીં. અને તેને નસાડવાનો તેણે વિચાર કે ઉપાય કરવો જોઇએ

चतुर्थीं भावनामाह—' चउत्थं ' इत्यादि ।

मूलम्—चउत्थं साहारणपिंडवायलाभे सइ भोत्तव्वं, संजएण समियं, न सागसूवाहियं, न खद्धं, न वेगियं, न तुरियं, न चवलं, न साहसं, न य परस्स पीलाकरं सावज्जं । तह भोत्तव्वं जइसे तइयं वयं न सीयइ साहारणपिंडवायलाभे सुहुमं अदिण्णादाणविरमणवयनियमणं, एवं साहारणपिंडवायलाभे समिइजोगेण भाविओ भवइ अंतरप्पा णिच्चं अहिकरणकरणकारावणपावकम्मविरए दत्तमणुन्नाय उग्गहरुई ॥सू०९॥

टीका—' चउत्थ ' चतुर्थीम् अनुज्ञातभक्तादिभोजनलक्षणां भावनामाह—तत्र-' साहारणपिंडवायलाभे ' साधारणपिण्डपातलाभे=साधारणः=कल्पनीय उ-

---

साधु संयम बहुल आदि होकर परीषह और उपसर्गों से अडोल बनता हुआ श्रुत चारित्र रूप धर्म की आराधना में सावधान बन जाता है। इस तरह शय्यापरिकर्मवर्जन रूप शय्यासमिति के योग से भावित आत्मा शय्यापरिकल्पनार्थ वृक्षादिकों के छेदन भेदन आदि रूप सावद्य कर्म के करने कराने और अनुमोदनाजन्य पापकर्म से बच जाता है। और इस तृतीयभावना का पालक हो जाता है ॥ सू० ८ ॥

अब सूत्रकार चौथी भावना को प्रदर्शित करते हैं--' चउत्थं साहारण०' इत्यादि ० ।

टीकार्थ—(चउत्थं) चौथी भावना अनुज्ञातभक्तादि भोजनरूप है जो इस प्रकार है-(साहारणपिंडवायलाभे सइ) उच्च नीच कुल से

નહી. આ રીતે તે સાધુ સંયમબહુલ, સંવરબહુલ આદિ થઈને પરીષહો તથા ઉપસર્ગો સામે અચળ બનીને શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની આરાધનામાં સાવધાન બની જાય છે. આ રીતે શય્યાપરિકર્મવર્જનરૂપ શય્યાસમિતિના યોગથી ભાવિત આત્મા શય્યા પરિકલ્પનાર્થે વૃક્ષાદિના છેદન ભેદન આદિરૂપ સાવદ્ય કર્મ કરાવવાથી અને અનુમોદનાજન્ય પાપકર્મથી બચી જાય છે અને આ ભાવનાનો પાલક થઇ જાય છે. ॥ સૂ૦ ૮ ॥

હવે સૂત્રકાર ચોથી ભાવના બતાવે છે-" चउत्थं साहारण " ઇત્યાદિ.

" चउत्थं " ચોથી ભાવના અનુજ્ઞાત ભક્તાદિ ભોજન રૂપ છે. તે આ પ્રમાણે છે " साहारणपिंडवायलाभे सइ " ઉચ્ચ નીચ કુળમાંથી કલ્પે તેવી ભિક્ષા તથા

च्चावचकुलग्राह्यो यः पिण्डपातः भिक्षा, उपलक्षणाद् वस्त्रपात्राद्यन्योपधिरपिगृह्यते, तस्य लाभः = दायकात्प्राप्तिस्तस्मिन् ' सइ ' सति ' संजएण ' संयतेन= साधुना ' भोत्तव्वं भोक्तव्यम् = परिभोक्तव्यं । ' भोक्तव्यम् ' इत्यग्रेऽपि सर्वत्र योज्यम् , कथं भोक्तव्यम् ? इत्याह-' समियं ' सम्यक् = अदत्तादानं यथा न भवति तथेत्यर्थः । सम्यक्त्वमेवाह-' न सागसूवहियं ' न शाकसूपाधिकं=भोक्तव्यम् । शाकसूपाधिके भोजने कृते सति प्रमाणादधिकाहारो भवति, तेनादत्तादानदोषापत्तिर्भवति, तथा ' खद्धं ' प्रचुरं भोक्तव्यम् । ' न वेगियं ' न वेगितं= वेगयुक्तं वेगेन ग्रासं मुखे प्रक्षिप्य भोक्तव्यम्, 'न तुरियं' त्वरितं=त्वरायुक्तं ग्रासस्य गिलने शीघ्रतां कृत्वा भोक्तव्यम् । तथा-न ' चवलं ' चपलं=हस्तग्रीवादिकाय,

---

कल्पनीय भिक्षा तथा वस्त्रपात्र आदि उपधि का लाभ होने पर (संजएणं भोत्तव्वं) मुनि को उसे अपने खाने आदि के उपयोग में लेना चाहिये। साधु को आहार किस प्रकार से कैसा लेना चाहिये सूत्रकार अब इस बात को कहते हैं-(समियं) अदत्तादान का दोष न लगे इस प्रकार से यतना रखते हुए न साग सूवाहियं) शाक और दाल को अधिकता के साथ भोजन नहीं करना चाहिये-अर्थात्-शाक और दाल की अधिकता वाला भोजन प्रमाण से अधिक खा लिया जाता है, इसलिये बत्तीस ग्रास लेने की अपेक्षा भोजन में अधिकता आने से साधु को अदत्तादान दोष की आपत्ति आती है। (न खद्धं) उचित मात्रा में भी दाल शाक के साथ प्रचुर मात्रा में आहार नहीं करना चाहिये। तथा (न वेगियं) जल्दी२ उतावली के साथ भी भोजन नहीं करना चाहिये। तथा (न तुरियं) त्वरायुक्त होकर ग्रास के गिलने में

વસ્ત્ર પાત્ર આદિ ઉપધિનો લાભ થતાં "संजएणं भोत्तव्वं" મુનિએ તે પોતાને માટે ખાવા આદિના ઉપયોગમાં લેવું જોઈએ. હવે સૂત્રકાર એ વાત બતાવે છે કે મુનિએ ભોજન કેવી રીતે ખાવું જોઈએ અને કેવું ન ખાવું જોઈએ "समियं" અદત્તાદાનનો દોષ ન લાગે તે પ્રમાણે યતના પૂર્વક "न सागसूवहियं" શાક અને દાળની અધિકતા વાળું ભોજન કરવું નહી, એટલે કે શાક અને દાળની અધિકતા વાળું ભોજન પ્રમાણમાં વધારે ખવાય છે, તે કારણે બત્રીશ ગ્રાસ કરતાં ભોજન વધારે લેવાથી સાધુને અદત્તાદાન દોષ નડે છે. "न खद्धं" પ્રમાણમાં દાળ શાકની સાથે વધારે પ્રમાણમા પણ આહાર લેવો જોઈએ નહી, તથા "न वेगियव्वं" જલ્દી જલ્દી ઝડપથી પણ ભોજન કરવું જોઈએ નહીં, તથા "न तुरियं"ત્વરા સહિત કોળિયો ગળે ઉતારવામાં ઝડપ કરીને પણ ભોજન નહીં કરવું

चालनरूपचापल्ययुक्तं भोक्तव्यम्। न साहसम्–अप्रतिलेखितं भोक्तव्यम्, तथा–'न य' न च 'परस्स' परस्य एकेन्द्रियादेः 'पीलाकरं' पीडाकरं 'सावज्जं' सावद्यं=सचित्तं भोक्तव्यम्, एवमुपलक्षणाद्वस्त्रपात्रादिपरिभोगोऽपि ग्राह्यः। तर्हि-कथं भोक्तव्यम्? इत्याह। 'तह भोक्तव्वं' तथा भोक्तव्यं 'जह' यथा 'से' तस्य=संयतस्य 'तइयं' तृतीयं 'वयं' व्रतं अदत्तादानविरमणरूपं 'नसीयइ' न सीदति=न नश्यति यथा–अदत्तादानविरमणरूपं व्रतं न विनश्येत्तथा भोक्तव्य-मित्यर्थः, 'साहारणपिंडपायलाभे' साधारणपिण्डपातलाभे सति 'सुहुमं' सूक्ष्मं=दुर्निरीक्षम्,–पूर्णरूपेणेत्यर्थः, 'अदिण्णादाणविरमणवयनियमणं' अदत्तादानविर-

---

शीघ्रता करके भोजन नहीं करना चाहिये। तथा (न चवलं) हाथ, गर्दन आदि अवयवों को चलाते हुए भोजन नहीं करना चाहिये। तथा (न साहसं) अप्रतिलेखित भोजन नहीं करना चाहिये। और (न य परस्स पीलाकरं सावज्जं) एकेन्द्रियादिक जीवों को पीडा कारक सावद्य–सचित्त–भोजन न करना चाहिये। इसी तरह से वस्त्र पात्रादिकके परिभोग में भी यही बात समझ लेनी चाहिये। तो फिर कैसे भोजन करना चाहिये? इस बात को अब सूत्रकार प्रकट करते हैं, वे कहते हैं कि (से) उस संयत को (तह भोत्तव्वं) इस प्रकार से भोजन करना चाहिये कि (जह) जिससे (तइयं वयं) अदत्तादानविरमणरूप तीसरा व्रत (न सीयइ) नष्ट न होवे (साहारणपिंडपायलाभे) इस तरह पूर्वोक्त साधारण कल्पनीय–पिंडपात–भिक्षा की प्राप्ति होने पर (सुहुमं) सूक्ष्म रूप से अर्थात्–पूर्णरूप से (अदिण्णादाणविरमणवयनियमण) इस

જોઈએ. તથા "नचवलं" હાથ, ડોક આદિ અવયવોને ડોલાવતા ડોલાવતા પણ ભોજન કરવું જોઈએ નહીં. તથા "न साहसं" અપ્રતિ લેખિત ભોજન ન કરવું જોઈએ નહીં. અને "न य परस्स पीलाकरं सावज्जं" એકેન્દ્રિય આદિ જીવોને પીડા કારક સાવદ્ય–સચિત્ત–ભોજન ન કરવું જોઈએ એ જ રીતે વસ્ત્ર, પાત્ર આદિના પરિભોગમાં પણ એ જ વાત સમજી લેવી તો પછી કેવું ભોજન કરવું જોઈએ? તે વાતને પ્રગટ કરતાં સૂત્રકાર કહે છે કે 'से" તે સંયતે "तह भोत्तव्वं" આ પ્રમાણે ભોજન કરવું જોઈએ. "जह" જેથી "तइयं वयं" અદત્તાદાન વિરમણ રૂપ ત્રીજું વ્રત "न सीयइ" નષ્ટ ન થાય "साहारणपिंडवायलाभे" આ રીતે પૂર્વોક્ત સાધારણ કલ્પનીય પિંડપાત–ભિક્ષાની પ્રાપ્તિ થતાં "सुहुमं" સૂક્ષ્મરૂપે એટલે કે પૂર્ણરૂપે "अदि-ण्णादाणविरमणवयनियमण" અદત્તાદાન વિરણુમ વ્રત પર નિયંત્રણ–અધિકાર

मणव्रतनियमनम्=अदत्तादानविरमणव्रतस्य यद्नियमनं=नियन्त्रणं तद् भवति। एवम्=अनेन प्रकारेण 'साहारणपिंडवायलाभसमिइजोगेण' साधारणपिण्डपात-लाभसमितियोगेन=साधारणपिण्डपातलाभे या समितिः= सम्यक्प्रवृत्तिः तस्या योगेन=सम्बन्धेन भावितोऽन्तरात्मानित्यं=सदा अधिकरणकरणकारणपापकर्मविरतः =अधिकरणस्य=अननुज्ञातभक्तादिभोजनलक्षणसावद्यकर्मणोयत्करणं कारणमुपलक्ष-णत्वादनुमोदनं च तदेव यत्पापकर्म ततो विरतो=निवृत्तः, दत्तानुज्ञातावग्रहरुचि र्भवति। एतद् व्याख्या पूर्ववद्विज्ञेया॥ सू ९ ॥

अदत्तादानविरमण व्रत पर नियंत्रण-अधिकार हो जाता हैं। (एवं) इस प्रकार से (साहारणपिंडवायलाभे) साधारणपिंडपातलाभ में (समिइजोगेण) सम्यक् प्रवृत्ति के सबंध से (भाविओ अंतरप्पा) भावित अन्तरात्मा (निच्चं) नित्य-सदा (अहिकरण करणकारावण-पावकम्मविरए) अननुज्ञात भक्तादि भोजनरूप सावद्यकर्मके करने, कराने और उसकी अनुमोदनारूप पापकर्मसे विरत हो जाता है। और (दत्तम-णुण्णाय उग्गहरुई भवइ) दत्तानुज्ञात अवग्रह में रुचिशाली हो जाता है।

भावार्थ— सूत्रकार ने इस सूत्र द्वारा अदत्तादानविरमण व्रत की चौथी भावना को कहते है। इस का नाम अनुज्ञानभक्तादि भोजन है। साधु के लिये दाता द्वारा कल्पनीय भिक्षा अथवा उपधि की प्राप्ति हो जाने पर उसे किस तरह से अपने उपयोग में लाना चाहिये इसका इसमें विचार किया गया है। आहार के विचार में साधु को दाल शाक की अधिकता के साथ में आहार करने का त्याग कहा गया

થઈ જાય છે "एवं" આ પ્રકારે "साहारण पिंडवायलाभे" સાધારણ ભિક્ષાની પ્રાપ્તિ થતા "समिइजोगेण" સમ્યક્ પ્રવૃત્તિના યોગથી, "भाविओ अं-तरप्पा" ભાવિત અંતરાત્મા "निच्चं" નિત્ય "अहिकरणकरणकारावणपाव-कम्मविरए" અનનુજ્ઞાત ભક્તાદિ ભોજન રૂપ સાવદ્યકર્મ કરવાથી, કરાવવાથી, અને તેની અનુમોદના રૂપ પાપકર્મથી મુક્ત થઈ જાય છે. અને "दत्तमणुण्णाय-उग्गहरुइ भवइ" દત્તાનુજ્ઞાત અવગ્રહમા રુચિવાળો થઇ જાય છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્ર દ્વારા અદત્તાદાન વિરમણ વ્રતની ચોથી ભાવનાનુ સ્પષ્ટીકરણ કર્યું છે તે ભાવના અનુજ્ઞાત ભક્તાદિ ભોજન નામની છે. દાતા દ્વારા સાધુને કલ્પે તેવી ભિક્ષા અથવા ઉપધિની પ્રાપ્તિ થઇ જાય ત્યારે તેણે કેવી રીતે તે પોતાના ઉપયોગમાં લેવી જોઇએ તે બાબતનો આ ભાવનામા વિચાર કરવામાં આવ્યો છે. વધારે દાળ શાક સાથેનો આહાર લેવાનો સાધુએ

पञ्चमीं भावनामाह--'पत्रमं' इत्यादि

मूलम्-पंचमं साहम्मिएसु विणओ पउंजियव्वो। उवगरण पारणासु विणओ पउंजियव्वो, वायणपरियट्टणासु विणओ पउंजियव्वो। दाणग्गहणपुच्छणासु विणओ पउंजियव्वो। निक्खमणपवेसणासु विणओ पउंजियव्वो। अण्णेसु य एवमाइएसु बहुसु कारणसएसु विणओ पउंजियव्वो। विणओ वि तवो, तवो वि धम्मो, तम्हा विणओ पउंजियव्वो गुरुसु साहुसु तवस्सिसु य। एवं विणएण भाविओ भवइ अंतरप्पा निच्चं अहिकरणकरणकारावणपापकम्मविरए दत्तमणुण्णा य उग्गहरुई ॥ सू० १० ॥

है, क्यों कि ऐसा आहार प्रमाण से अधिक कर लिया जाता है, जिससे अदत्तादान का दोष आता है। आहार करते समय इस बात का विशेष ध्यान रखना योग्य है कि हाथ, पैर, गर्दन आदि अवयव अनावश्यक रूप से न चलें। आहार करते समय आहार जल्दी २ से न किया जावे। ग्रास जल्दी २ से न गिला जावे। एकेन्द्रियादिक जीवों को बाधाकारी आहार-सचित्त आहार न लिया जावे। तात्पर्य कहने का यह है कि अदत्तादानविरमणव्रत नष्ट न हो इस प्रकार से साधु को आहार करना चाहिये। इस तरह की प्रवृत्ति से इस व्रत पर पूर्ण रूप से नियंत्रण-काबू हो जाता है। वह साधु अननुज्ञात भक्तादि भोजन रूप सावद्यकर्म के करने, कराने और अनुमोदनारूप पापकर्म से विरत बन जाता है ॥सू०९॥

ત્યાગ કરવુ જોઈએ એવું તેમા દર્શાવ્યું છે, કારણ કે તેવો આહાર વધારે પ્રમાણમાં લેવાય છે તેથી સાધુને અદત્તાદાનનો દોષ લાગે છે. આહાર કરતી વખતે એ વાતનું ખાસ ધ્યાન રાખવુ જોઈએ કે હાથ, પગ ડોક આદિ અવયવો બીનજરૂરી રીતે હાલે ચાલે નહીં આહાર કરતી વખતે ઝડપથી આહાર લેવો જોઈએ નહીં, કોળિયો જલ્દી ગળાની નીચે ઉતરવો નહીં. એકેન્દ્રિયાદિજીવોને પીડાકારી આહાર-અચિત્ત આહાર લેવો જોઈએ નહી. એ કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે અદત્તાદાન વિરમણ રૂપ નષ્ટ ન થાય તે પ્રકારે સાધુએ આહાર કરવો જોઈએ આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિથી આ વ્રત પર સંપૂર્ણ રીતે અંકુશ આવી જાય છે. તે સાધુ અનનુજ્ઞાન ભક્તાદિ ભોજનરૂપ સાવદ્ય કર્મ કરતા, કરાવતા અને અનુમોદના થતા પાપકર્મથી મુક્ત થઈ જાય છે ॥ સૂ. ૯ ॥

टीका—'पंचमं' पञ्चमीं विनयभावनामाह—'साहम्मिएसु' सार्धर्मिकेषु पर्यायज्येष्ठं 'विणओ' विनयः 'पउजियव्वो' प्रयोक्तव्यः=करणीयः। तथा—'उवगारणपारणासु' उपकारणपारणयोः तत्र—उपकारणं=स्वपरयोरुपकारकरणं, तत्र—स्वस्य संयमपालनेन, परस्य ग्लानाद्यवस्थायां वैयावृत्त्यादि करणेन, पारणा=तपसः पारणा श्रुतस्य पारगमनं वा पारणा, तयोः विनयः प्रयोक्तव्यः=द्वयोरपि मृदुस्वाभावतया स्थातव्यमित्यर्थः, तथा—'वायणपरियट्टणासु' वाचनापरिवर्तनयोः=वाचना सूत्रग्रहणम्, परिवर्तना=तस्यैवगुणनम्, तयोः विनयः=वन्दनादिल—

अब सूत्रकार पांचवीं भावना को कहते हैं—'पंचमं साहम्मिएसु' इत्यादि०।

टीकार्थ—(पंचमं) इस व्रत की पांचवीं भावना विनय है—जिसका स्वरूप इस प्रकार से है—(साहम्मिएसु विणओ पउंजियव्वो) अपने समान धर्मवालों में जो दीक्षा पर्याय की अपेक्षा ज्येष्ठ हैं उनमें विनय वृत्ति रखनी चाहिये। तथा (उवगारणपारणासु विणओ पउंजियव्वो) स्व और पर के उपकार करने में और पारणा करने में विनय रखना चाहिये, संयम की आराधना करना यह निज का उपकार करना है और ग्लान आदि अवस्था में अन्य साधु का वैयावृत्य आदि करना यह पर का उपकार करना है, तपस्या का पारणा करना अथवा श्रुत के पार पहूँचना यह पारणा है इन दोनों स्थितियों में मृदु स्वभाव से रहना यही उपकारण पारणा का विनय करना है। इसी तरह (वायणपरियट्टणासु) सूत्र की वाचना में और उसके परिवर्तन करने में—स्वाध्याय

હવે સૂત્રકાર પાંચમી ભાવના બતાવે છે—"पंचमं साहम्मिएसु" ઇત્યાદિ—

ટીકા—"पंचमं" આ વ્રતની પાંચમી ભાવના વિનય છે, જેનું સ્વરૂપ આ પ્રમાણે છે—"साहम्मिएसु विणओ पउंजियव्वो" પોતાના સાધર્મીઓમાં જે દીક્ષા પર્યાયની અપેક્ષા એ મોટા હોય તેમના પર વિનયવૃત્તિ રાખવી જોઇએ. તથા "उवगारणपारणासु विणओ उउंप जियव्वो" સ્વ અને પરનો ઉપકાર કરવામાં અને પારણાં કરવામાં વિનય રાખવો જોઇએ સંયમની આરાધના કરવી તે પોતાના ઉપર ઉપકાર કર્યો ગણાય છે અને ગ્લાન આદિ અવસ્થામાં અન્ય સાધુઓનું વૈયાવૃત્ય—વૈયાવચ્ચ—કરવી તે પરના ઉપરનો ઉપકાર છે. તપનું પારણું કરવું અથવા શ્રુતને પાર પહોંચવું તે પણ પારણું છે. એ બન્ને સ્થિતિમાં મૃદુ સ્વભાવથી રહેવું તે જ પારણાનો વિનય કરવાની રીત છે. એ જ રીતે "वायणपरियट्टणासु" સૂત્રની વાચનામાં અને તેનું પરિવર્તન કરવામાં—સ્વાધ્યાય કરવામાં સાધુએ "विणओ पउजियव्वो" વંદણા

क्षणः प्रयोक्तव्यः। तथा–'दाणग्गहणपुच्छणासु' दानग्रहणप्रच्छनासु=दानं=लब्धस्यान्नादेः ग्लानादिभ्यो वितरणम्, ग्रहणम्–परेण दीयमानस्यैवान्नादेर्ग्रहणम्, प्रच्छना=विस्मृतसूत्रार्थविषये प्रश्नः, एतासु 'विणओ' विनयः=दानग्रहणयोर्गुर्वाज्ञालक्षणः, प्रच्छनायां वन्दनादिरूपः प्रयोक्तव्यः।

तथा–'निक्खमणपवेसणासु' निष्क्रमणप्रवेशनयोः = गमनागमनयोः विनयः = गमने आवश्यिकीरूपः, आगमने नैषेधिकीरूपः प्रयोक्तव्यः, किं बहुना 'अण्णेसु य' अन्येषु च 'एवमाइएसु' एवमादिकेषु=एवंविधेषु बहुषु 'कारणसएसु' कारणशतेषु विनयः प्रयोक्तव्यः। कस्मात्कारणाद् विनयः प्रयोक्तव्यः? इत्याह–'विणओवि' विनयोऽपि तपः=न केवलमनशनादिकमेव

करने में साधु को (विणओ पउंजियव्वो) वन्दनादिरूप विनय करना चाहिये। तथा (दाणग्गहणपुच्छणासु विणओ पउंजियव्वो) दान में–दाता द्वारा दिये हुए अन्नादि को का ग्लान आदि साधुओं के लिये वितरण करने में–दाता द्वारा दिये गये अन्नादिक के लेने में गुरु की आज्ञा प्राप्त करना रूप विनय, प्रच्छना में–विस्मृत हुए सूत्रार्थ को गुर्वादिकों से पूछने में–वंदनादि रूप विनय भाव रखना चाहिये। तथा (निक्खमणपवेसणासु) निष्क्रमण और प्रवेशन में–गमन और आगमन में–(विणओ पउंजियव्वो) आवश्यिकी रूप और नैषेधिकी रूप विनय करना चाहिये अर्थात्–गमन में आवश्यिकरूप और आगमन में नैषेधिकीरूप विनय भाव साधु को रखना चाहिये। (अण्णेसु एवमाइएसु सुबहुसु कारणेसु इसी तरह के और भी बहुत से सैकडों कारणों में (विणओ पउंजियव्वो) विनय भाव का आचरण करते

આદિ કરીને વિનય દર્શાવવો જોઈએ. તથા "दाणग्गहणपुच्छणासु विणओ पउंजियव्वो" દાનમાં–દાતા દ્વારા અપાયેલ અન્નાદિનું ગ્લાન આદિ સાધુઓમાં વિતરણ કરવામાં વિનય રાખવો જોઈએ. ગ્રહણ કરવામાં–દાતા દ્વારા અપાયેલ અન્ન આદિ લેવા માટે ગુરુની આજ્ઞા પ્રાપ્ત કરવા રૂપ વિનય પાળવો જોઈએ. પ્રચ્છનામા–ભૂલાઈ ગયેલ સૂત્રાર્થ ગુરુ આદિને પૂછતી વખતે વંદણા આદિ રૂપ વિનય ભાવ રાખવો જોઈએ. તથા "निक्खमणपवेसणासु" નિષ્ક્રમણ અને પ્રવેશનાં–ગમન અને આગમનમાં "विणओ पउंजियव्वो" આવશ્યિકી રૂપ નૈષેધિકી રૂપ વિનય ભાવ સાધુએ રાખવો જોઈએ, એટલે કે ગમનમાં આવશ્યિકી રૂપ અને આગમનમા નૈષેધિકી રૂપ વિનય ભાવ સાધુએ રાખવો જોઈએ. "अण्णेसुएवमाइएसु बहुसु कारणेसु" આ પ્રકાની અન્ય સેકડો બાબતોમાં પણ "विणओ पउंजियव्वो" વિનય ભાવ આચરવો જોઈએ કારણ કે "विणओ

तपः अपि तु विनयोऽपि आभ्यान्तरतपोभेदेषु पठितः, तथा—' तवो वि ' तपोऽपि ' धम्मो ' धर्मः=न केवलं संयमएव धर्मः, किन्तु तपोऽपि धर्मः, तस्य चारित्रांशत्वात्, ' तम्हा ' तस्मात् ' गुरुसु ' गुरुषु ' साहुसु ' साधुषु ' तवस्सिसु य ' तपस्विषु च विनयः प्रयोक्तव्यः। एवं विनयेन भावितोऽन्तरात्मा नित्यमधिकरणकरणकारणपापकर्मविरतोऽधिकरणस्य = अविनयरूपसावद्यकर्मणो यत्करणं कारणमुपलक्षणत्वादनुमोदनं च, एतद्रूपं यत्पापकर्म, ततो विरतो=निवृत्तो दत्तानुज्ञातावग्रहरुचि र्भवति। एतद् व्याख्यापूर्वमुक्ता ॥ सू०१० ॥

रहना चाहिये। क्यों कि विणओ वि तवो) यह विनय भी आभ्यंतर तप है-केवल अनशन आदि ही तप नही हैं। तथा (तवो वि धम्मो) चारित्र का अंश होने से तप भी धर्म है, केवल संयम ही धर्म नहीं है। (तम्हो विणओ पउंजियव्वो गुरुसु साहुसु तवस्सिसु य) इसलिये गुरुजनों के विषय में, साधुजनों के विषय में और तपस्वी जनों के विषय में विनय धर्म का व्यवहार अवश्य ही करना चाहिये। (एवं-विणएण भाविओ अन्तरप्पा निच्चं अहिकरणकरणकारावणपावकम्मविरए दत्तमणुण्णाय उग्गहरुई भवइ) इस प्रकार विनय धर्म से भावित जीव नित्य अविनयरूप सावद्यकर्म के करने, कराने और उसकी अनुमोदनारूप पापकर्म से निवृत्त हो जाता है और दत्तानुज्ञात अवग्रह में रुचिवाला बन जाता है।

भावार्थ—सूत्रकार ने इस सूत्र द्वारा अदत्तादानविरमण रूप की पांचवी भावना का स्वरूप प्रदर्शित किया है इस भावना का नाम विनय

वि तवो " આ વિનય પણ અભ્યંતર તપ છે; ઉપવાસ આદિ જ તપ નથી. " तवो वि धम्मो " ચારિત્રનો અંશ હોવાથી તપ પણ ધર્મ છે, ફક્ત સંયમ જ ધર્મ નથી " तम्हा विणओ पउजियव्वो गुरुसु तवस्सिसु य " તે કારણે ગુરુ-જનો પ્રત્યે, સાધુજનો પ્રત્યે, અને તપસ્વીજનો પ્રત્યે વિનય ધર્મનો વહેવાર અવશ્ય રાખવો જોઈએ. " एवं विणएण भाविओ अतरप्पा निच्च अहिकरण करणकारावणपावकम्मविरए दत्तमणुण्णाय उग्गहरुई भवइ " આ પ્રકારે વિનય ધર્મથી ભાવિત જીવ નિત્ય અવિનયરૂપ સાવદ્ય કર્મ કરતાં, કરાવતાં અને તેની અનુમોદનારૂપ પાપકર્મથી નિવૃત થઈ જાય છે અને દત્તાનુજ્ઞાત અવગ્રહમાં રુચિવાળો બની જાય છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્રદ્વારા અદત્તાદાનવિરમણ વ્રતની પાંચમી ભાવનાનું સ્વરૂપ દર્શાવ્યું છે. તે ભાવનાનું નામ " વિનય ભાવના " છે. દીક્ષા-

अध्ययनमुपसंहरति-' एवमिणं ' इत्यादि ।

मूलम्-एवमिणं संवरस्सदारं सम्मं चरियं होइ सुपणिहियं, इमेहिं पंचहिं वि कारणेहिं मणवयणकायपरिरक्खिएहिं निच्चं आमरणंतंच एसो जोगो नेयव्वो धिइमया मइमया अणासवो अकलुसो अच्छिद्दो अपरिस्सावी असंकिलिट्ठो सुद्धो सव्वजिण-मणुण्णाओ । एवं तइयं संवरदारं फासियं पालियं सोहियं तीरियं किट्टियं सम्मं आराहियं आणाए अणुपालियं भवइ । एवं नायमुणिणा भगवया पण्णवियं परूवियं पसिद्धं सिद्धि·

भावना है। अपने से जो दीक्षा पर्याय में ज्येष्ठ हैं, उन साधुओं में विनय धर्म का पालन करना तथा स्वयं संयम के पालन करने में और पारणा में मृदु स्वभाव रखना, इत्यादि विनय संबंधी जितनी भी क्रिया हैं उन्हें मोक्षमार्ग के साधनों में यथायोग्यरूप से पालन करते रहना उनके प्रति अविनयरूपता का भाव चित्त में नहीं आने देना यह विनय भावना है। तात्पर्य यह है कि ज्ञानादि मोक्षमार्ग और उसके साधनों के प्रति योग्यरीति से बहुमान रखना यह विनयधर्म है। इस धर्म से भावित हुआ अंतरात्मा अविनय रूप सावद्य कर्म के करने कराने, और उसकी अनुमोदना जन्य पापक्रिया से विरक्त हो जाता है और इस भावना का पालक बन जाता है ॥ सू० १० ॥

પર્યાયમાં જે પોતાનાં કરતા મોટા હોય તેમના પ્રત્યે વિનયધર્મનું પાલન કરવું, તથા નિજ સંયમનું પાલન કરવામાં તથા પારણામાં મૃદુ સ્વભાવ રાખવો, ઇત્યાદિ વિનય સંબંધી જેટલી ક્રિયાઓ છે તેમનુ મોક્ષમાર્ગનાં સાધનોમા યોગ્ય રીતે પાલન કરતા રહેવું, તેમના પ્રત્યે અવિનય ભાવને ચિત્તમાં પ્રવેશવા ન દેવો તે વિનય ભાવના ગણાય છે. તેનું તાત્પર્ય એ છે કે જ્ઞાનાદિ મોક્ષમાર્ગ અને તેનાં સાધનો પ્રત્યે યોગ્ય રીતે બહુમાન રાખવું તે વિનય ધર્મ છે. આ ધર્મથી ભાવિત થયેલ આત્મા અવિનયરૂપ સાવદ્ય કર્મ કરતા, કરાવતા અને તેની અનુમોદનાથી પરિણમતી પાપ ક્રિયાથી બચી જાય છે, અને આ ભાવનાનો પાલક બની જાય છે, ॥ સૂ. ૧૦ ॥

वरसासणमिणं आघवियं सुदेसियपसत्थं तइयं संवरदारं समत्तं त्तिबेमि ॥ सू० ११ ॥

॥इय पण्हावागरणे तइयं संवरदारं समत्तं॥

टीका—एवं पूर्वोक्तप्रकारेण 'इणं' इदं 'संवरस्स' संवरस्य 'दारं' द्वारम् अदत्तादानविरमणनामकं तृतीयं द्वारमित्यर्थः, 'सम्मं' सम्यक् 'चरियं' चरितं सत् 'होइ' भवति 'सुप्पणिहियं' सुप्रणिहितं=समाराधितम् । तथा-'इमेहिं' एभिः 'पंचहिं' वि=पञ्चभिरपि 'कारणेहिं' कारणैः=भावनाभिः, कीदृशैः कारणैः ? इत्याह-'मणवयणकायपरिरक्खिएहिं' मनोवचनकायपरिरक्षितैः=मनोवाक्कायैः परिरक्षितैः,मनोवाक्काययोगयुक्ताभिः पञ्चभावनाभिरित्यर्थः, 'निच्चं' नित्यम् 'आमरणंतं च' आमरणान्तं=मरणपर्यन्तं च 'एस जोगो' एष योगः=अदत्तादानविरमणरूपो योगः 'णेयव्वो' नेतव्यः=पालनीयः 'धिइमया' धृतिमता 'मइमया' मतिमता । कथं भूतोऽयं योगः ? इत्याह-'अणासवो' अना-

---

अब सूत्रकार इस अध्ययन का उपसंहार करते हुए कहते हैं—'एवमिणं' इत्यादि० ।

टीकार्थ—(एवं) पूर्वोक्त प्रकार से (इणं) यह (संवरस्स दारं अदत्तादानविरमण नाम का तृतीय संवरद्वार (सम्मं चरियं) अच्छी तरह से पाले जाने पर (सुपणिहियं) सुरक्षित (होइ) हो जाता है। इसलिये (मणवयणकायपरि रक्खिएहिं) मन, वचन, काय इन तीन योगों से अच्छी तरह सुरक्षित कीये गये (इमेहिं) इन (पंचहिं विकारणेहिं) पांच भावना रूप कारणों से (निच्चं) सदा (आमरणंतं च) जीवन भर तक (एस जोगो) यह अदत्तादानविरमण रूप योग (धिइमया मइमया) चित्त स्वस्थता से तथा हेयोपादेय की विवेकता से

હવે સૂત્રકાર આ અધ્યયનનો ઉપસંહાર કરતાં કહે છે-"एवमिणं" ઈત્યાદિ—

ટીકાર્થ-"एवं" પૂર્વોક્ત પ્રકારે "इणं" આ "संवरस्सदारं" અદત્તાદાન વિરમણ નામનું ત્રીજું સંવરદ્વાર "सम्मं चारियं" સારી રીતે પાળવામાં આવે તો "सुपणिहियं" સુરક્ષિત થઇ જાય છે તેથી "मणवयणकायपरिरक्खिएहिं" મન, વચન અને કાયાના યોગોથી સારી રીતે સુરક્ષિત કરાયેલ "इमेहिं" આ "पंचहिं वि कारणेहिं" પાંચ ભાવનારૂપ કારણોથી "निच्चं" સદા "आमरणं तं च" જીવન પર્યંત "एसजोगो" આ અદત્તાદાન વિરમણરૂપ યોગ "धिइमया मइमया" ચિત્તની સ્વસ્થા તથા હેયોપાદેયના વિવેકથી

स्रवः=नूतनकर्मागमनरहितत्वात्, 'अकलुसो' अकलुषः = अशुभाध्यवसायरहितत्वात्, 'अच्छिद्दो' अच्छिद्रः=छिन्नपापस्रोतस्त्वात् 'अपरिस्सावी' अपरिस्रावी=विन्दुरूपेणापि कर्मजलप्रवेशरहितत्वात्, 'असंकिलिट्ठो' असंक्लिष्टः=असमाधिभाववर्जितत्वात्, 'सुद्धो' शुद्धः-कर्ममलवर्जितत्वात्, 'सव्वजिणमणुण्णाओ' सर्वजिनानुज्ञातः=सकलप्राणिहितकारकत्वात्सर्वेषामर्हतामनुमतश्चास्ति । एवम्=एतादृशमिदं' 'तइयं' तृतीयं संवरद्वारम् 'फासियं' स्पृष्टं कायेनाचरितं, 'पालियं' पालितं-सततमुपयोगेनसेवितं 'सोहियं' शोधितं=अतीचारवर्जनेन शुद्धी

युक्त हुए मुनिजन को (नेयव्वो) पालन करने योग्य है। क्यों कि यह अदत्तादानविरमण रूप योग (अणासवो) नूतनकर्मों के आगमन से रहित होने के कारण अनास्रवरूप है, (अकलुसो) अशुभ अध्यवसाय से वर्जित होने के कारण अकलुष है, (अच्छिद्दो) पाप का स्रोत इससे छिन्न हो जाता है अतः अच्छिद्र है (अपरिस्सावी) बिन्दुरूप से भी कर्मरूपजल इसमें प्रवेश नहीं कर सकता है इसलिये यह अपरिस्रावी है। (असंकिलिट्ठो) असमाधिभाव से वर्जित होने के कारण यह असंक्लिष्ट है। (सुद्धो) कर्ममल से रहित होने के कारण शुद्ध है (सव्वजिणमणुण्णायो समस्त प्राणियों का इससे हित होता है इसलिये समस्त अरहंत भगवंतो को यह मान्य हुआ है। (एवं) ऐसा यह (तइयं) तृतीय संवर द्वार है। इस संवरद्वार को जो (फासियं) अपने शरीर से आचरित करते हैं, (पालियं) निरन्तर उपयोग पूर्वक इसे सेवित करते हैं (सोहियं) अतिचारों से इसे रहित करते हैं

युक्त मुनिजनोने "नेयव्वो" पालन करवा योग्य छे आ अदत्तादान विरमण रूप योग "अणासवो" नवा कर्मोना आगमनथी रहित होवाने कारणे अनास्रवरूप छे, "अकलुसो" अशुभ अध्यवसायथी रहित होवाने कारणे अकलुष छे, "अच्छिद्दो" पापनो स्रोततेनाथी छिन्न थइ जाय छे तेथी अछिद्र छे, "अपरिस्सावी" कर्म रूप जळनु बिंदु पण तेमां प्रवेशी शकतुं नथी तेथी ते अपरिस्रावी छे, "असकिलिट्ठो" असमाधि भाव रहित होवाने कारणे ते असंक्लिष्ट छे, "सुद्धो" कर्म मळथी रहित होवाने कारणे ते शुद्ध छे, "सव्वजिणमणुण्णाओ" समस्त प्राणीओनुं तेनाथी कल्याण थाय छे, ते कारणे समस्त अर्हंत भगवानोने ते मान्य थयेल छे, "एवं" एवुं "तइय" आ तृतीय संवरद्वार छे. आ संवरद्वाने जे "फासियं" पोताना शरीरथी आचरे छे, "पालियं" निरंतर उपयोग पूर्वक तेनुं सेवन करे छे, "सोहियं" अतिचारोथी तेने रहित करे छे. "तीरियं" पूर्ण रूपथी तेनुं सेवन करे छे. "किट्टियं" तेनुं

कृतं ' ' तीरियं ' तीरितं=तीरं प्रापितं पूर्णरूपेण सेवितं, ' किट्टियं ' कीर्त्तितम्-अन्येषामुपदिष्टम् , ' आराहियं ' आराधितम् त्रिकरणत्रियोगैः-सम्यगाचरितम् , ' आणाए ' आज्ञया=सर्वज्ञवचनानुसारेण ' अणुपालियं ' अनुपालितं भवति । एवम्=अमुना प्रकारेण ' नायमुणिणा ' ज्ञातमुनिना=ज्ञाताख्यप्रसिद्धक्षत्रियवंशोद्भवेन मुनिना भगवता महावीरेण ' पण्णवियं ' प्रज्ञापितं=शिष्येभ्यः सामान्यतया कथितं, ' परूवियं ' प्ररूपितं-भेदानुभेदप्रदर्शनपूर्वकं कथितं, 'पसिद्धं ' प्रसिद्धं=जिनवचने प्रख्यातं, ' सिद्धवरसासणमिणं ' सिद्धवरशासनमिदं, सिद्धानां=निष्ठितार्थानां वरशासनं-प्रधानाज्ञारूपम् , ' आघवियं' आख्यातं=सर्वतोभावेन कथितं,

---

(तीरियं) पूर्णरूप से इसका सेवन करते हैं (किट्टियं) दूसरों को इसके पालन करने का उपदेश देते हैं, (सम्मं) तीन करण तीन योगों से इस की भली प्रकार से (आराहियं) अनुपालना करते हैं (आणाए अणुपालियं भवइ) उन के द्वारा यह योग तीर्थंकर प्रभु की आज्ञानुसार ही पालित होता माना जाता है। (एवं) इस प्रकार से (णायमुणिणा भगवया) ज्ञातनामक प्रसिद्ध क्षत्रियवंश में उत्पन्न हुए मुनिराज भगवान महावीर ने (पण्णवियं) शिष्यों के लिये इस विषय का सामान्यरूप से समझाया है। (परूवियं) बाद में भेद प्रभेद पूर्वक उसका कथन किया है। इसीलिये (पसिद्धे) जिनवचन में यह प्रख्यात हुवा है अर्थात् जिनवचन के अनुसार ही आचार्य परंपरा से इसका पालन करना इसी रूप से चला आ रहा है। तथा (सिद्धवरसासणमिणं) भूतकाल में जितने भी सिद्ध हो चुके हैं उनका यह प्रधान आज्ञारूप शासन है। (आघवियं) ऐसा भगवान् महावीर प्रभु ने

પાલન કરવાનો અન્યને ઉપદેશ આપે છે. " सम्मं " ત્રણ કરણ ત્રણ યોગોથી તેનું સારી રીતે " आराहियं " અનુપાલન કરે છે, " आणाए अणुपालियं भवइ " તેમના દ્વારા આ યોગનું, તીર્થંકર પ્રભુની આજ્ઞા અનુસાર પાલન થાય છે એમ માનવામાં આવે છે " ' एवं " આ પ્રકારે " णायमुणिणा भगवया " જ્ઞાત નામના પ્રસિદ્ધ ક્ષત્રિય વંશમાં ઉત્પન્ન થયેલ મુનિરાજ ભગવાન મહાવીરે " पण्णविय " શિષ્યોને માટે આ વિષય સામાન્ય રૂપે સમજાવ્યો છે, " परूविय " ત્યાર બાદ ભેદ પ્રભેદ સહિત તેનું કથન કર્યું છે. તેથી " पसिध्धे " જિનવચનમાં તે પ્રખ્યાત થયેલ છે એટલે કે જિનવચન અનુસાર જ આચાર્ય પરંપરાથી તેનુ આ રીતે પાલન કરવાનું ચાલ્યું આવે છે તેથી " सिद्धवरसासणमिणं " ભૂતકાળમાં જેટલા સિદ્ધો થઈ ગયા છે તેમનું આ મુખ્ય આજ્ઞા રૂપ શાસન છે. " आघविय " એવું ભગવાન મહાવીરે સર્વ ભાવથી તેને

'सुदेसियं' सुदेशितं=सदेवमनुजासुरायां पर्षदि सुष्ठूपदिष्टम् 'पसत्थं' प्रशस्तं= सर्वप्राणिहितकरत्वान्मङ्गलमय 'तइयं संवरदारं' तृतीयं संवरद्वारं 'समत्तं' समाप्तम् । 'त्तिबेमि' इति ब्रवीमि । अस्यार्थः पूर्वमुक्तः ॥ सू० ११ ॥

इति श्रीविश्वविख्यात-जगद्वल्लभ-प्रसिद्धवाचकपञ्चदशभाषाकलितललितकला-
पालापक-प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक-वादिमानमर्दक-श्रीशाहूछत्रप-
तिकोल्हापुरराजप्रदत्त-'जैनशास्त्राचार्य' पदभूषित-कोल्हापुरराज-
गुरु-बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकरपूज्यश्री-घासीलाल-
व्रतिविरचितायां दशमाङ्गस्य श्री प्रश्नव्याकरणसूत्रस्य सुदर्शन्या-
ख्यायां व्याख्यायां संवरात्मके द्वितीयेभागेऽदत्तादान-
विरमणनामकं तृतीयं संवरद्वारं समाप्तम् ॥

सर्व भाव से इसके विषय में कहा है और (सुदेसियं) देवों, मनुजों तथा असुरों से युक्त परिषदा में इसका उपदेश दिया है। (पसत्थं) सर्वप्राणीयों का हितकारक होने से मंगलमय है (तइयं संवरदारं समत्तं) यह तृतीय संवर द्वार समाप्त हुआ (त्ति बेमि) ऐसा मैं कहता हूं। अर्थात् हे जंबू! इस तृतीय संवर द्वार का जैसा कथन मैंने साक्षात् भगवान् महावीर के मुख से सुना है वैसा ही मैंने तुम से कहा है- अपनी तरफ से इसमें मैंने कुछ भी मिश्रित नहीं किया है।

भावार्थ—इस तृतीय संवर द्वार का उपसंहार करते हुए सूत्रकार समझा रहे है कि इस तृतीय संवर द्वार का जो मुनिजन तीन करण तीनयोग से सुरक्षित की गई पांच भावनाओं से जीवन भर पालते हैं-

---

વિષે કહ્યુ છે અને 'सुदेसिय" દેવો, મનુષ્યો અને અસુરોથી યુક્ત પરિષદામાં તેનો ઉપદેશ દીધો છે "पसत्थं" સર્વે પ્રાણીઓનું હિતકરનાર હોવાથી તે મંગલમય છે, "तइय संवरदारंसमत्तं" આ તૃતીય સંવરદ્વાર સમાપ્ત થયું, त्तिवेमि" એવુ હું કહુ છુ. એટલે કે હે જંબૂ! આ તૃતીયસંવરદ્વારનું કથન જે પ્રમાણે સાક્ષાત ભગવાન મહાવીરના મુખે સાંભળ્યુ હતું તે જ પ્રમાણે તમને કહુ છુ-મારા તરફથી તેમા કંઈ પણ ઉમેરવા આવ્યું નથી.

ભાવાર્થ.—આ ત્રીજા સંવરદ્વારનો ઉપસંહાર કરતા સૂત્રકાર સમજાવે છે. કે આ ત્રીજા સંવરદ્વારનું જે મુનિજન ત્રણ કરણ ત્રણ યોગથી સુરક્ષિત કરવામાં આવેલ પાંચ ભાવનાઓ સહિત પાલન કરે છે-તે પ્રમાણે પોતાની દરેક

इसके अनुसार अपनी प्रत्येक प्रवृत्ति पर अंकुश रखते हैं उनके अशुभ अध्यवसाय रुक जाते हैं, नवीन कर्मो का उनको बंध नहीं होता है और संचित कर्मों की निर्जरा होती रहती है। पापों का स्रोत इसके प्रभावसे बंध हो जाता है। यह अपरिस्रावी आदि विशेषणोंवाला है। त्रिकालवर्ती समस्त अरिहंत भगवंतोंने इसका पालन कियाहै। उन्हीं के अनुसार भगवान् महावीर प्रभु ने भी इसका उन्हीं की मान्यतानुसार स्वरूपादि प्रदर्शन द्वारा कथन किया है। अपनी परिषदा में आये हुए समस्त जीवों को इसी प्रकार से इसका विवेचन किया है, अतः यह मंगलमय है इसे धारण कर प्रत्येक जीव को-समस्त संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त मनुष्यों को-अपना जन्म सफल बना लेना चाहिये। इस प्रकार जंबू स्वामी को इस तृतीय संवर द्वार के विषय में सुधर्मास्वामी ने समझाया है ॥ सू० ११ ॥

॥ तृतीय संवरद्वार समाप्त ॥

પ્રવૃત્તિ પર અંકુશ મૂકે છે, તેમના અશુભ અધ્યવસાય અટકી જાય છે, તેમને નવાં કર્મોનો બંધ બંધાતો નથી, અને સચિત્ત કર્મોની નિર્જરા થતી રહે છે. તેના પ્રભાવથી પાપોનો સ્રોત બંધ પડી જાય છે તે અપરિસ્રાવી આદિ વિશેષણોથી યુક્ત છે ત્રિકાલવર્તી સમસ્ત અરિહંતોએ તેનું પાલન કરેલ છે. તેમના પ્રમાણે જ ભગવાન મહાવીરે તેનું તેમની માન્યતા અનુસાર સ્વરૂપાદિ પ્રદર્શન દ્વારા કથન કર્યું છે. પોતાની પરિષદામાં આવેલ સમસ્ત જીવો સમીપ એ જ પ્રકારે તેનું વિવેચન કર્યું છે, તેથી તે મંગલમય છે. તેને ધારણ કરીને પ્રત્યેક જીવે-સમસ્ત પંચેન્દ્રિય પ્રર્યાપ્ત મનુષ્યોએ-પોતાનો જન્મ સફળ કરવો જોઇએ. આ પ્રમાણે સુધર્મા સ્વામીએ જંબૂસ્વામીને આ ત્રીજા સંવર-દ્વાર વિષે સમજાવ્યું છે. ॥ સૂ. ૧૧ ॥

॥ તૃતીય સંવરદ્વાર સમાપ્ત

॥ अथ चतुर्थ संवरद्वारं प्रारभ्यते ॥

व्याख्यातं तृतीयमदत्तादानविरमणनामकं संवरद्वारम् । अथ ब्रह्मचर्य नामकं क्रमप्राप्तं चतुर्थं संवरद्वारमभिधीयते । अस्य पूर्वेण सहायमभिसंबन्धः-पूर्वत्रादत्तादानविरमणमुक्तं' तच्च मैथुनविरमणमन्तरेण न संभवतीत्यनेन संबन्धेनायातमिदं चतुर्थं संवद्वारम् । तस्येदमादिमं सूत्रम्-' जंबू ' इत्यादि ।

मूलम्—जंबू ! एत्तो य बंभचेरं उत्तमतवनियमनाणदंसणचरित्तसमंतविणयमूलं जम नियमगुणप्पहाणजुत्तं हिमवंतमहंततेयमंतं पसत्थगंभीरथिमियमज्झं अज्जवसाहुजणाचरियं मोक्खग्गं विसुद्धसिद्धगइनिलयं सासयमव्वाबाहमपुणब्भवं पसत्थं सोम्मं सुहं सिवमचलमक्खयकरं जइवरसारक्खियं सुचरियं सुभासियं नवरिं मुणिवरेहिं महापुरिसधीरसूरधम्मियधिइमंताण य सया विसुद्धं भव्वं भव्वजणाणुचरियं निस्संकियं निब्भयं नित्तुसं निरायासं निरुवलेवं निव्वुइघरं नियमनिप्पकंपं तव-

---

चतुर्थ संवर द्वार प्रारंभ—

तृतीय अदत्तादान विरमण नामक संवरद्वार का व्याख्यान हो चुका, अब क्रम प्राप्त चतुर्थ ब्रह्मचर्य नामका संवरद्वार का व्याख्यान प्रारंभ किया जाता हैं । इसका पूर्व संवरद्वार के साथ इस प्रकार से संबंध है-जबतक मैथुन विरमण नहीं होगा तब तक तृतीय संवरद्वार की संभवता नहीं हो सकती, इसलिये उसके अनन्तर सूत्रकार अब इस चतुर्थ संवरद्वार को प्रारंभ कर रहे हैं । उसका यह सर्व प्रथम सूत्र है—'जंबू' इत्यादि ० ।

ચોથા સંવરદ્વારનો પ્રારંભ

ત્રીજા અદત્તાદાનનો વિરમણુ નામના સંવરદ્વારનું વર્ણુન પૂરૂં થયું, હવે અનુક્રમે આવતા ચોથા બ્રહ્મચર્ય નામના સંવરદ્વારનું વર્ણુન શરૂં કરવામાં આવે છે. તેનો આગળના સવરદ્વાર સાથે આ પ્રમાણે સંબંધ છે-જ્યાં સુધી મૈથુન વિરમણુ થાય નહીં ત્યા સુધી ત્રીજું સંવરદ્વાર સંભવિત થઇ શકતું નથી, તેથી તેનું કથન કર્યા પછી હવે સૂત્રકાર આ ચોથા સંવરદ્વારની શરૂઆત કરે છે. તેનું સૌથી પહેલુ સૂત્ર આ પ્રમાણે છે-" જંબૂ " ઈત્યાદિ—

संजममूलदलियणिम्मं पंचमहव्वयसुरक्खियं समिइगुत्तिगुत्तं झाणवरकवाडसुकयरक्खणमज्झप्पादिण्णफलिहं सन्नद्धबद्धोच्छइय दुग्गइपहं सुगइपहदेसगं च लोगुत्तमं च वयमिणं पउमसरतलागपालिभूयं महासगडअरगतुंबभूयं महाविडिमरुक्खक्खंधभूयं महानगरपागारकवाडफलिहभूयं रज्जुपिणद्धोव्वइंदकेऊ विसुणेगगुणसंपिणद्धं ॥ सू० १ ॥

टीका--'जंबू' हे जम्बूः । 'एत्तो य' इतश्च=अदत्तादानविरमणसंवरद्वारसमाप्त्यनन्तरं च 'बंभचेरं' ब्रह्मचर्यं नाम चतुर्थं संवरद्वारमभिधीयते । तत्किं स्वरूपमित्याह-'उत्तमतवनियमनाणदंसणचरित्तविणयमूल', उत्तमतपोनियमज्ञानदर्शनचारित्रविनयमूलम्=तत्र उत्तमाः=प्रधानाः ये तपो नियमज्ञानदर्शनचारित्रविनयाः तत्र-तपः=अनशनादिकं द्वादशविधम्, नियमा=अभिग्रहादयः, ज्ञानं=पदार्थानां विशिष्टबोधः, दर्शनम्=तत्त्वश्रद्धानरूपम्, चारित्रं=सावद्ययोगविरतिलक्षणम्, विनयः=अभ्युत्थानादिलक्षणः, एतेषां द्वन्द्वः, तेषां मूलमिवमूल कारणं यत्तत्थोक्तम्,

टीकार्थ—(जंबू) हे जम्बू! (एत्तो य) अदत्तादानविरमण नामक संवरद्वार की समाप्ति के अनन्तर अब मैं (बंभचेरं) ब्रह्मचर्य नामक चतुर्थ संवर द्वार को कहता हूं। उसका स्वरूप इस प्रकार है—(उत्तमतवनियमनाणदंसणचरित्तविणयमूलं) अनशन आदि बारह प्रकार के उत्तमतपों का, उत्तम अभिग्रह आदि रूप नियमों का, पदार्थो का विशिष्टबोध रूप उत्तमज्ञान का; पदार्थों का श्रद्धानरूप उत्तमदर्शन का सावद्ययोग विरतिरूप उत्तम चारित्र का, और अभ्युत्थान आदि रूप उत्तम विनय का, मूल की तरह यह ब्रह्मचर्य मूल कारण है, तथा—

ટીકાર્થ—“जंबू” હે જંબૂ! “एत्तो य” અદત્તાન વિરમણ નામના સંવરદ્વારની સમાપ્તિ પછી હવે હું “बंभचेरं” બ્રહ્મચર્ય નામના ચોથા સંવરદ્વારનું વર્ણન કરૂં તેનું સ્વરૂપ આ પ્રમાણે છે “उत्तमतवनियमनाणदंसणचरित्त विणयमूलं” અનશન આદિ બાર પ્રકારનાં ઉત્તમ તપનું, ઉત્તમ અભિગ્રહ આદિ રૂપ નિયમોનું, પાદાર્થોના વિશિષ્ટ બોધરૂપ ઉત્તમ જ્ઞાનનું, પદાર્થોના શ્રદ્ધાન રૂપ ઉત્તમ દર્શનનું સાવદ્યયોગ વિરતિરૂપ ઉત્તમ ચારિત્રનું, અને અભ્યુત્થાન આદિ રૂપ ઉત્તમ વિનયનું, મૂળની જેમ આ બ્રહ્મચર્ય મૂળકારણ છે. તથા

तथा-'जमनियमगुणप्पहाणजुत्तं' यमनियमगुणप्रधानयुक्तम्=तत्र-यमाः=प्राणातिपातविरमणादयः, नियमाः=अभिग्रहादयस्ते च ते गुणप्रधानाः = गुणमुख्याः-- गुणानां मध्ये यमा नियमाश्च सर्वतः श्रेष्ठ इत्यर्थः, तैर्युक्तम्, तथा-'हिमवंतमहंततेयमंतं' हिमवन्महत्तेजस्वि=हिमवानिव=पर्वतविशेष इव महद्=विशालं तेजस्वि च यत्तत्तथोक्तं, अयं भावः-यथा हिमवान् सकलपर्वतापेक्षया महान् तेजस्वी च वर्तते, तथैवेदं ब्रह्मच सकलव्रतापेक्षया विशालं तेजस्विचेति । उक्तं च—

"व्रतानां ब्रह्मचर्यंहि, निर्दिष्टं गुरुकं व्रतम् ।
तज्जन्यपुण्यसंभार, संयोगाद् गुरु रुच्यते ॥ १ ॥" इति ।

तथा--'पसत्थगंभीरथिमियमज्झं' प्रशस्तगंभीरस्तिमितमध्यं प्रशस्तं=शुभं गम्भीरम्=अगाधम्, स्तिमितं=स्थिरं च मध्यम्=अन्तः करणं यस्मिन् सति तत्तथो-

(जमनियमगुणप्पहाणजुत्तं) यह प्राणातिपात विरमण आदि यमों से एवं अभिग्रह आदि नियमों से कि जो समस्तगुणों में श्रेष्ठ माने गये हैं युक्त है, तथा (हिमवंतमहंततेयमंतं) जो हिमवान् पर्वत की तरह विशाल और तेजस्वी है, अर्थात् जिस प्रकार हिमवान् पर्वत सकल पर्वतों की अपेक्षा महान् और तेजस्वी माना जाता है, उसी प्रकार यह ब्रह्मचर्य व्रत भी सकलव्रतों की अपेक्षा विशाल तेजस्वी व्रत माना गया है। कहा भी है-

"व्रतानां ब्रह्मचर्यं हि, निर्दिष्टं गुरुकं व्रतम् ।
तज्जन्य पुण्यसंभार,-संयोगाद् गुरुरुच्यते ॥ १ ॥

व्रतों में सब से बड़ा व्रत ब्रह्मचर्य है । क्यों कि ब्रह्मचर्य के पालन करने से जो पुण्यसमूह प्राप्त होता है-उसी के संबंध से गुरु माना जाता है । अर्थात्- इसी ब्रह्मचर्य का पालक ही सच्चा गुरु कहलाता है। तथा-(पसत्थगंभीरथिमियमज्झं) इस ब्रह्मचर्य के सद्भाव से पालन

"जमनियमगुणप्पहाणजुत्तं" પ્રાણાતિપાત વિરમણ આદિ યમોથી અને અભિગ્રહ આદિ નિયમોમાંથી, કે જે સર્વ ગુણોમાં શ્રેષ્ઠ મનાય છે. યુક્ત છે. તથા "हिमवंतमहंततेयमतं" જે હિમાલય પર્વતની જેમ વિશાળ અને તેજસ્વી છે, એટલે કે જેમ હિમાલય પર્વત સઘળા પર્વતો કરતા મહાન અને તેજસ્વી મનાય છે તેમ આ બ્રહ્મચર્ય વ્રતને પણ સઘળા વ્રતોના કરતાં વિશાળ તેજસ્વી વ્રત માનવામાં આવે છે કહ્યુ પણ છે—

"व्रतानां ब्रह्मचर्यं हि, निर्दिष्टं गुरुकं व्रतम् ।
तज्जन्यपुण्यसंभार, - संयोगाद् गुरुरुच्यते ॥ १ ॥

વ્રતોમાં સૌથી મોટુ વ્રત બ્રહ્મચર્ય છે કારણ કે બ્રહ્મચર્યના પાલનથી જે પુન્ય સમૂહ પ્રાપ્ત થાય છે-તેના કારણે તેને ગુરુ મનાય છે એટલે કે આ બ્રહ્મચર્યનો પાલક જ સાચો ગુરુ કહેવાય છે. તથા "पसत्थगंभीरथि-

क्तम्, ब्रह्मचारिणोऽन्तःकरणं प्रशस्ततागाम्भीर्यस्थैर्ययुक्तं भवतीति भावः। तथा -'अज्जवसाहुजणाचरियं' आर्जवसाधुजनाचरितम्=आर्जवे=सरलभावे संलग्ना ये साधुजनास्तैराचरितम्। तथा 'मोक्खमग्गे' मोक्षमार्गः=मोक्षस्थानप्रापक इत्यर्थः तथा 'विसुद्धसिद्धिगइनिलये' विशुद्धसिद्धगतिनिलयः=विशुद्धा=रागादिदोषवर्जितत्वान्निर्मलाया सिद्धिः=कृतकृत्यता, सैव गम्यमानत्वाद् गतिस्तस्या निलयो-गृहम्=सिद्धिगतिप्रापकत्वात्सिद्धिस्थानमित्यर्थः, तथा 'सासयं' शाश्वतं=साद्यपर्यवसितशिवसुखजनकत्वात्, 'अव्वाबाहं' अव्याबाधं=शारीरिकमानसिकदुःखवर्जितत्वात् 'अपुणब्भवं' अपुनर्भवम्=पुनर्जन्मप्रतिरोधकत्वात्, 'पसत्थं' प्रशस्तम्-निर्मलत्वात्, तथा-'सोम्मं' सौम्यम्—सकलजनमनोमोदजनकत्वात्,

कर्ता का अंतःकरण शुभ, गंभीर-अगाध, एवं स्थिर हो जाता है। तथा (अज्जवसाहुजणाचरियं) यह ब्रह्मचर्य, आर्जव में-सरलभाव में-संलग्न बने हुए साधुजनों के द्वारा आचरित किया जाता है। तथा-(मोक्खमग्गे) यह ब्रह्मचर्य अपने पालनकर्ता को मोक्ष स्थान की प्राप्ति कराने वाला होता है तथा (विसुद्धसिद्धिगइ निलये) यह ब्रह्मचर्य विशुद्ध-रागादि दोषों से वर्जित होने के कारण निर्मल-जो कृतकृत्यता रूप गति है उसका घर है-सिद्धि गति का प्रापक होने से सिद्धि का स्थान है तथा (सासयं) साद्यपर्यवसित शिव सुख का जनक होने से यह ब्रह्मचर्य शाश्वत है (अव्वाबाहं) शारीरिक एवं मानसिक दुःखों से रहित होने के कारण यह ब्रह्मचर्य अव्याबाध-बाधा से रहित है। (अपुणब्भवं) इसके प्रभाव से संसार में जीव का पुनर्जन्म नहीं होता, उसका यह प्रतिरोधक है इसलिये यह अपुनर्भवरूप है। (पसत्थं) निर्मल

मियमज्झं" ते બ્રહ્મચર્યના પાલનથી તેનુ પાલન કરનારનુ અંતઃકરણ શુભ, ગંભીર, અગાધ, અને સ્થિર થઇ જાય છે. તથા "अज्जवसाहुजण चरियं" આ બ્રહ્મચર્ય, આર્જવ, સરલ ભાવમા લીન થયેલ સાધુજનો દ્વારા આચરવામા આવે છે. તથા "मोक्खमग्गे" આ બ્રહ્મચર્ય, તેનુ પાલન કરનારને મોક્ષની પ્રાપ્તિ કરાવનાર હોય છે. તથા "विसुद्धसिद्धिगइनिलये" આ બ્રહ્મચર્ય વિશુદ્ધ રાગાદિ દોષોથી રહિત હોવાને લીધે નિર્મળ-કે કૃતકૃત્યતા રૂપ ગતિ છે તેનું ઘર છે-સિદ્ધિગતિ પ્રાપ્ત કરાવનાર હોવાથી સિદ્ધિનું સ્થાન છે, તથા "सासयं" કાયમી શિવ સુખનું જનક હોવાથી આ બ્રહ્મચર્ય શાશ્વત છે "अव्वाबाहं" શારીરિક અને માનસિક દુઃખોથી રહિત હોવાને કારણે આ બ્રહ્મચર્ય અવ્યાબાધ-બાધાથી રહિત છે, "अपुणब्भयं" તેના પ્રભાવથી સંસારમાં જીવને પુનર્જન્મ લેવો પડતો નથી. તેનું તે પ્રતિરોધક છે તેથી તે અપુનર્ભવરૂપ છે.

तथा-' सुहं ' सुखं-सुखस्वरूपत्वात्, ' सिवं ' शिवम्=निरुपद्रवत्वात्, तथा-' अयलं ' अचलम्-स्पन्दनादिवर्जितत्वात्, तथा ' अक्खयकरं ' अक्षयकरम्=अक्षयो मोक्षस्तत्करम्=भवबीजाङ्कुराजननात्, तथा-' जइवरसारक्खियं ' यतिवरसंरक्षितम्=यतिवरैः= मुनिप्रधानैः तीर्थङ्करगणधरादिभिः संरक्षितं=परिपालितम्, तथा-' सुचरियं ' सुचरितम्=शोभनानुष्ठानम्, तथा-' मुणिवरेहिं ' मुनिवरैः= तीर्थंकरादिभिः ' नवरिं ' केवलं ' सुभासियं ' सुभाषितं=सुष्ठु प्रतिपादितम्, च =पुनः-इदं ब्रह्मचर्यं ' महापुरिसवीरसूरधम्मियधिइमंताण ' महापुरुषधीर शूरधार्मिकधृतिमताम्=महापुरुषाः=पुरुषश्रेष्ठा, धीरशूराः=धीराणां मध्ये शूराः=अत्यन्तसाहससंपन्नाः, धार्मिकाः=धर्मपरायणाः, धृतिमन्तो=धैर्यवन्तः, एषां कर्मधारयः, तेषां तथोक्तानाम् ' सया ' सदा=कुमारादिसर्वावस्थासु ' सुविसुद्धं ' सु-

होने से यह प्रशस्त है। (सोम्मं) समस्त मनुष्यों के मन को प्रफुल्लित करने वाला होने से यह सौम्य है। (सुहं) सुखस्वरूप होने से यह एक सुख है। (सिवमयलमक्खयकरं) उपद्रव रहित होने से यह शिवरूप है। स्पन्दनादि क्रिया से वर्जित होने के कारण यह अचल है। भवरूप बीज के अंकुरका उत्पादक नहीं होने से अक्षय-मोक्ष का कारक है अतः यह अक्षयकर है-। (जइवरसारक्खियं) मुनिप्रधान-तीर्थंकर एवं गणधर आदि देवों द्वारा पाला गया होने से यह यतिवर संरक्षित है। (सुचरियं) शोभन आचार रूप होने से यह सुचरित है। (नवरिं मुनिवरेहिं सुभासियं) केवल मुनिवरों-तीर्थंकरों द्वारा ही यह अच्छी तरह से प्रतिपादित किया गया है। तथा यह ब्रह्मचर्य महापुरिस-धीर-सूर-धम्मिय-धिइमंताण य सया विसुद्धं) महापुरुषों का, धीरों के

" पसत्थं " निर्मण હોવાથી તે પ્રશસ્ત છે. " सोम्म " સમસ્ત મનુષ્યોમાં મનને પ્રફુલ્લિત કરનાર હોવાથી તે સૌમ્ય છે. " सुहं " સુખસ્વરૂપ હોવાથી તે એક સુખ છે " सिवमयलमक्खयकर " ઉપદ્રવ રહિત હોવાથી તે શિવ-રૂપ છે સ્પન્દનાદિ ક્રિયાથી રહિત હોવાથી તે અચળ છે ભવરૂપ બીજના અંકુરનું ઉત્પાદક નહીં હોવાથી તે અક્ષય-મોક્ષકારક છે, તેથી તે અક્ષયકર " जइवरसारक्खिय " મુનિપ્રધાન-તીર્થંકર અને ગણધરો આદિ દેવો દ્વારા પળાયેલ હોવાથી તે યતિવર સંરક્ષિત છે. " सुचरियं " સુંદર આચારરૂપ તે સુચરિત છે. " नवरिं मुनिवरेहिं सुभासियं " કેવળ મુનિવરો-તીર્થંકરો દ્વારા જ તેનું સારી રીતે પ્રતિપાદન કરાયું છે તથા " महापुरिस-धीर-सूर-धम्मिय-धिइमताण य सया विसुद्धं " મહાપુરુષો, ધીરોની વચ્ચે પણ ધીર

विशुद्धं=निर्दोषम् , एषामेव ब्रह्मचर्यं निर्दोषं भवतीति भावः, तथा-' भव्वं ' भव्यं=कल्याणरूपम् , ' भव्वजणाणुचरियं ' भव्यजनानुचरितम्=भव्यजनसमाराधितम् , तथा-' निस्संकियं ' निःशङ्कितं, ब्रह्मचारी हि विषयस्पृहाशून्यत्वाज्जनानां मध्ये निःशङ्कनीयो भवतीति ब्रह्मचर्यमपि निश्शङ्कितम् , तथा ' निब्भयं ' निर्भयं, ब्रह्मचारिणो हि निर्भया भवन्ति, निर्भयताकारणत्वात् ब्रह्मचर्यमपि निर्भयम् तथा-' नित्तुसं ' निस्तुषं-विशुद्धमित्यर्थः, यथा-तुषनिर्गतं तण्डुलं शुभ्रं भवति

भी बीच में धीर कहे जाने वाले शूरों का अत्यंत साहससंपन्न व्यक्तियों के, धार्मिक पुरुषों के, और धैर्यशाली पुरुषों को यह सदा-कुमार आदि अवस्थाओं में भी सुविशुद्ध-निर्दोष रहता है। (भव्वं) यह ब्रह्मचर्य कल्याणरूप है। (भव्वजणाणुचरियं) भव्यपुरुषों द्वारा यह आराधित किया हुआ है। (निस्संकियं) यह ब्रह्मचर्य निश्शंकित होता है। क्यों कि ब्रह्मचारी विषयलालसा से शून्य होने के कारण मनुष्यों के भीतर किसी भी तरह से शंकास्पद नहीं होता है अतः यह प्रभाव उसके ब्रह्मचर्य का ही है इसीलिये यहाँ पर सूत्रकार ने निशंकित वृत्ति का कारण होने से ब्रह्मचर्य को भी निश्शंकित कहा है। इसी तरह यह ब्रह्मचर्य (निब्भयं) निर्भय होता है। क्यों कि ब्रह्मचर्य को पालन करने वाले पुरुष रत्न सर्वत्र निर्भय रहा करते हैं, अतः निर्भयता का कारण होने से ब्रह्मचर्य को निर्भय विशेषण से सूत्रकार ने विशिष्ट किया है। तथा यह ब्रह्मचर्य (नित्तुस) निस्तुष है-तुषविहीन तण्डुल जिस प्रकार शुभ्र होता है उसी प्रकार यह ब्रह्मचर्य भी विषय लालसा

તરીકે ઓળખાતા શૂરા, અત્યંત સાહસયુક્ત વ્યક્તિઓ, ધાર્મિક પુરુષો, અને ધૈર્યશાળી પુરુષોને તે સદા કુમાર આદિ અવસ્થાઓમાં પણ સુવિશુદ્ધ નિર્દોષ રહે છે. " भव्वं " આ બ્રહ્મચર્ય કલ્યાણરૂપ છે " भव्वजणाणुचरियं " ભવ્ય પુરુષો દ્વારા તેનું અરાધન થાય છે " निस्संकियं " આ બ્રહ્મચર્ય નિ શકિત હોય છે, કારણ કે બ્રહ્મચારી વિષય લાલસા રહિત હોવાથી મનુષ્યોમાં કોઈ પણ પ્રકારે શંકાને પાત્ર થતો નથી આ તેના બ્રહ્મચર્યનો જ પ્રભાવ હોવાથી અહીં સૂત્રકારે નિઃશંકિત વૃત્તિનું કારણ હોવાથી બ્રહ્મચર્યને પણ નિઃશંકિત કહ્યું છે. એ જ પ્રમાણે આ બ્રહ્મચર્ય " निब्भय " નિર્ભય હોય છે. કારણ કે બ્રહ્મચર્યનું પાલન કરનાર પુરુષો સર્વત્ર નિર્ભય રહી શકે છે તેથી નિર્ભયતાનું કારણ હોવાથી બ્રહ્મચર્યને સૂત્રકારે નિર્ભય વિશેષણ લગાડયું છે. તથા આ બ્રહ્મચર્ય " नित्तुसं " નિસ્તુષ-તુષ વિહીન (ફોતરા વિનાના) ચોખા જેમ શુભ્ર હોય છે તેમ આ બ્રહ્મચર્ય પણ વિષય લાલસા રૂપી તુષ વિહીન

तथवेदं ब्रह्मचर्यमपि शुभ्रमिति भावः, तथा-' निरायासं ' निरायासं=खेदाजनकम्, ' निरुवलेवं ' निरुपलेपम्-विषयस्नेहवर्जितम् , तथा-' निव्वुइघरं ' निर्वृतिगृहम्=निर्वृतेः=चित्तसमाधेः गृहं=स्थानम् , ' नियमनिप्पकंपं ' नियमनिष्प्रकम्पं=नियमेन=निश्चयेन, निष्प्रकम्पं=अविचलम्-निरतिचारत्वात् , तथा-' तव-

रूप तुष से विहीन होने के कारण बिलकुल शुभ्र-पवित्र है। (निरायासं) इसके पालन करने से किसी भी प्रकार का पालनकर्त्ता को आयास- अर्थात्-कष्ट नहीं उठाना पड़ता है इसलिये खेद का अजनक होने से यह निरायासरूप है। (निरुवलेवं) वैषयिक पदार्थों की ओर ब्रह्मचारी के चित्त में थोड़ा सा भी स्नेह-रागभाव नहीं होता है, अतः विषय स्नेहवर्जित होने से यह ब्रह्मचर्य निरुपलेप है। (निव्वुइघरं) ब्रह्मचारी के हि चित्त की स्वस्थता रहती है, क्यों कि विषयों की ओर उसकी लालसा नहीं जाती हैं, अतः उस संबंध को लेकर उसके चित्त में असमाधिरूप आकुल व्याकुल परिणति नहीं रहती है इसलिये यह ब्रह्मचर्य चित्त समाधि का एक घर है। (नियमनिप्पकंपं) अतिचारों से विहीन होने के कारण यह ब्रह्मचर्य नियम से-निश्चय से निष्प्रकम्प- अविचलित होता है। तात्पर्य यह है कि गृहस्थों के ब्रह्मचर्य व्रत में अतिचार लग सकने के कारण उनका वह ब्रह्मचर्य विचलित नहीं होता है परन्तु सकल संयमी जनों का ब्रह्मचर्य अतिचारों से विहीन होता है, इसलिये यह यहां अविचलित कहा गया है। (तवसंजम-

હોવાથી તદ્દન શુભ્ર પવિત્ર છે "निरायास" તેનુ પાલન કરવાથી પાલન કર્તાને કોઇ પણ પ્રકારનો આયાસ-ખેદ એટલે કે કષ્ટ ઉઠાવવો પડતું નથી તેથી ખેદનું જનક ન હોવાને કારણે તે નિરાયાસરૂપ છે." निरुवलेवं " વૈષયિક પદાર્થોની તરફ બ્રહ્મચારીના ચિત્તમાં જરી પણ સ્નેહ-રાગભાવ થતો નથી, તેથી વિષયસ્નેહ રહિત હોવાથી બ્રહ્મચર્યને નિરુપલેપ છે " निव्वुइघरं " બ્રહ્મચારીના ચિત્તની સ્વસ્થતા રહે છે, કારણ વિષયોની પ્રત્યે તેને લાલસા થતી નથી તે સંબંધને લીધે તેના ચિત્તમા અસમાધિરૂપ આકુળ વ્યાકુળતાના રૂપ પરિણતિ રહેતી નથી તેથી આ બ્રહ્મચર્ય ચિત્ત સમાધિનું એક ઘર છે. " नियमनिप्पकंपं " અતિચારોથી રહિત હોવાને કારણે આ બ્રહ્મચર્ય અવશ્ય નિષ્પ્રકમ્પ-અવિચલિત હોય છે તેનું તાત્પર્ય એ છે કે ગૃહસ્થોના બ્રહ્મચર્ય વ્રતમા અતિચાર લાગી શકે છે તે કારણે તેમનું બ્રહ્મચર્ય અવિચલિત હોતું નથી, પણ સકળ સંયમીજનોનુ બ્રહ્મચર્ય અતિચારોથી રહિત હોય છે, તે

संजममूलदलियणिभं ' तपःसंयममूलदलिकनिभम्=तपः संयमयोः मूलदलिकं=मूलद्रव्यम्=मूलधनमित्यर्थः, तस्य निभं=सदृशं यत्तत्तथा, तथा-' पंचमहव्वयसुरक्खियं ' पञ्चमहाव्रतसुरक्षितं=पञ्चमहाव्रतानां मध्यस्थितत्वेन सुष्ठुरक्षितमिव यत्तत्तथोक्तम्, तथा ' समिइगुत्तिगुत्तं ' समितिगुप्तिगुप्तम्-समितिभिः=ईर्यासमित्यादिभिः, गुप्तिभिः=मनोगुप्त्यादिभिश्च गुप्तम्=रक्षितम्, तथा-'झाणवरकवाडसुकयरक्खणं ' ध्यानवरमेव=धर्मध्यानमेव कपाटम्-तेन सुष्ठु=शोभनतया कृत रक्षणं यस्य तत्, तथा-' अज्झप्पदिण्णफलिहं' अध्यात्मदत्तपरिघम्=अध्यात्ममेव=सद्भावएव कपाटदृढीकरणार्थं दत्तः परिघ-अर्गला रक्षायै यस्य तत्, तथा-' संनद्धवद्धोच्छइयदुग्गइपहं ' संनद्धवद्धावच्छादितदुर्गतिपथम्—संनद्धोवद्धआच्छादितश्च अर्थात् सर्वतो निरुद्धो दुर्गतिपथो=दुर्गतिमार्गो येन तत्तथोक्तम्, तथा-' सुगइप-

मूलदलियणिभं) तप और संयम का यह ब्रह्मचर्य मूल धन जैसा है। (पंचमहव्वयसुरक्खियं) जिस प्रकार पांच पुरुषों के बीच में रहा हुआ पुरुष सुरक्षित रहता है उसी प्रकार यह ब्रह्मचर्य भी पांच महाव्रतों के बीच में स्थित होने के कारण सुरक्षित के जैसा है। (समिइगुत्तिगुत्तं) ईर्यासमिति आदि पांच समितियों से एवं मनोगुप्ति आदि तीन गुप्तियों से भी इसकी सदा रक्षा होती रहती है इसलिये यह समिति और गुप्तियों से भी गुप्त-सुरक्षित कहा गया है। तथा (झाणवरकवाड सुकयरक्खणं) इसकी रक्षा सदा धर्मध्यान रूप मजबूत किवाड़ों से भी बहुत अच्छी तरह होती रहती है (अज्झप्पदिण्णफलिहं इसकी रक्षा के निमित्त इन किवाडों में मजबूती लाने वाला अर्गला जैसा अध्यात्म-सद्भाव वहां काम करता है। (सन्नद्धवद्धोच्छइयदुग्गइपहं) यह ब्रह्मचर्य अपने पालक के दुर्गतिमार्ग को सर्वथा रोक देता है, (सुगइ-

કારણ તેને અહીં અવિચલિત દર્શાવ્યું છે " तवसंजममूलदलियणिभं " તપ અને સંયમનું આ બ્રહ્મચર્ય મૂળધન સમાન છે " पचमहव्वयसुरक्खियं " જે રીતે પાંચ પુરુષોની વચ્ચે રહેતો પુરુષ સુરક્ષિત રહે છે, તે જ પ્રમાણે આ બ્રહ્મચર્ય પણ પાચ મહાવ્રતોની વચ્ચે રહેલ હોવાથી સુરક્ષિત છે. " समिइ-गुत्तिगुत्तं ""ઇર્યા સમિતિ આદિ પાચ સમિતિઓથી અને મનોગુપ્તિ આદિ ત્રણ ગુપ્તિથી પણ તેનુ સદા રક્ષણ થતું રહે છે, તે કારણે તે સમિતિ અને ગુપ્તિઓથી પણ ગુપ્ત-સુરક્ષિત કહેવાયુ છે તથા " झाणवरकवाडसुकय रक्खणं " તેનું રક્ષણ હંમેશા ધર્મ ધ્યાનરૂપી મજબૂત કમાડોથી પણ ઘણું સારી રીતે રીતે થયા કરે છે " अण्झप्पदिण्णफलिहं " તેની રક્ષાને નિમિત્તે તે કમાડોમાં મજબૂતી લાવનાર આગળીયા જેવુ અધ્યાત્મ-સદ્ભાવ ત્યા કામ આપે છે. " सन्नद्धवद्धोच्छइयदुग्गइपहं " આ બ્રહ્મચર્ય તેનું સેવન કરનારના દુર્ગતિમાર્ગને

इदेसगं च ' सुगतिपथदेशकं च=सुगतेः=स्वर्गापवर्गस्य पन्थाः-सुगतिपथस्तस्य देशकं=दर्शकं यत्तत् तथा-' लोगुत्तमं च ' लोकोत्तमं च=लोकत्रयश्रेष्ठश्च 'वयमिणं' व्रतमिदम्-इदं ब्रह्मचर्यरूपं व्रतं 'पउमसरतलागपालियभूयं' पद्मसरस्तडागपालिभूतम् -पद्मप्रधानः सरस्तडागः-पद्मसरस्तडागः, पद्मसरस्तडागइव सुखदत्वेन प्रमोदकत्वेन हरत्वेन च समुपादेयत्वाद् धर्मोऽपि पद्मसरस्तडागः, तस्य पालिभूतं=रक्षकत्वेन पालिकल्पं यत्तत्, तथा ' महासगडअगर तुंबभूयं' महाशकटारकतुम्बभूतम्-महाशकटस्य=अरका इव=अराइव अरकाः क्षान्तादयोगुणास्तेषां तुम्बभूतम्, आधार भूतम् तथा-'महाविडिमरुक्खक्खंधभूय' महाविटपवृक्षस्कन्धभूतम्-महान्तो विटपाः शाखा

पदेसगं च) और इसे स्वर्ग और अपवर्गरूप सुगति के मार्ग को दिखलाता रहता है। इसीलिये (वयमिणं) यह व्रत (लोगुत्तमं च) लोकत्रय में श्रेष्ठ है। तथा यह व्रत (पउमसरतलाग पालिभूयं) पद्मप्रधान सरोवर और तडाग की पालि जैसा है, अर्थात् सुखद होने के कारण, प्रमोद कारक होने के कारण, और मन को हरण करने वाला होने के कारण जैसे पद्मप्रधान सरोवर और तडाग समुपादेय होते हैं उसी प्रकार सुखदाता प्रमोदक और मनोहर होने के नाते धर्म भी समुपादेय होता है-अतः धर्म भी पद्मप्रधान सरोवर और तडाग जैसा है। उस धर्म रूप सरोवर और तडाग का यह रक्षक होने के कारण पालि-पाल जैसा है। तथा (महासगडअरगतुंबभूयं) महाशकट के आरों के समान क्षान्त्यादिक गुणों का यह तुम्बभूत-आधारभूत है। तथा (महाविडिमरुक्खक्खंधभूयं) महाशाखा शाली वृक्ष के समान आश्रितों

સદંતર રોકી દે છે. "सुगइपदेसगच" અને તેને સ્વર્ગ અને અપવર્ગ રૂપ સુગતિનો માર્ગ દર્શાવતું રહે છે તેથી "वयमिणं" આ વ્રત "लोगुत्तमंच" ત્રણે લોકમાં શ્રેષ્ઠ છે. તથા આ વ્રત "पउमसरतलागपालिभूयं" કમળોથી યુક્ત સરોવર અને તળાવની પાળ જેવું છે એટલે કે સુખદ હોવાને કારણે, પ્રમોદકારક હોવાને કારણે, અને મનોહર હોવાને કારણે જેમ પદ્મપ્રધાન સરોવર અને તળાવ સમુપાદેય હોય છે તે જ પ્રકાર સુખદાતા, પ્રમોદક અને મનોહર હોવાને કારણે ધર્મ પણ સમુપાદેય હોય છે. તેથી ધર્મ પદ્મયુક્ત સરોવર અને તળાવ જેવો છે. તે ધર્મરૂપ સરોવર અને તળાવનું તે (બ્રહ્મચર્ય રક્ષક હોવાથી પાળ જેવું છે તથા "महासगडअरगतुंबभूय" મહા શકટ-ગાડા-ની ધરીના સમાન ક્ષાન્ત્યાદિ ગુણોનું તે તુમ્બભૂત છે. તથા "महाविडिमरुक्ख-क्खंधभूयं" મહા શાખાવાળા વૃક્ષની જેમ આશ્રિતોનુ પરમ સુખકારી હોવાથી

यस्य स महाविटपः,स चासौ वृक्षश्च आश्रितानां परमोपकारकत्वसाधर्म्याद् धर्मस्तस्य स्कन्धभूतं यत्तत्तथोक्तम्, अयं भावः–यथा-स्कन्धोवृक्षशाखाऽऽधारभूतस्तथैवब्रह्मचर्यं धर्मशाखाऽऽधारभूतम्। तथा-' महानगरपागारकवाडफलिहभूयं ' महानगरप्राकारकपाटपरिघभूतम्–महानगरमिव महानगर विविधसुखहेतु साधर्म्याद् धर्मः, तस्य रक्षकत्वात् प्राकाररूपं, कपाटरूपं परिघभूतम् = अर्गलारूपम्, यत्तत्तथोक्तम् तथा–' रज्जुपिणद्धोव्वइंदकेऊ ' रज्जुपिनद्धइव इन्द्रकेतुः–यथा–रज्जुबद्धइन्द्रध्वजो महोत्सवे सर्वोपरि वर्तमानः परमशोभां जनयति, तथैवेदं सर्वव्रतश्रेष्ठं ब्रह्मचर्यम्। तथा–' विसुद्धणेगगुणसंपिणद्धं = विशुद्धानेकगुणसंपिनद्धं विशुद्धा येऽनेकगुणास्तैः संपिनद्धं संग्रथितमिदं ब्रह्मचर्यमस्ति ॥ सू०१ ॥

का परम उपकारी होने से धर्म का यह स्कंध जैसा है। अर्थात् जिस प्रकार स्कंध वृक्ष की शाखाओं का आधारभूत होता है उसी प्रकार यह ब्रह्मचर्य भी धर्म की शाखाओं का आधारभूत है। तथा (महानगरपागारकवाडफलिहभूयं) महानगर के समान विविध सुखों का हेतुभूत होने के कारण धर्मरूप नगर का यह रक्षक होने से प्राकार जैसा, कपाट जैसा और अर्गला जैसा है। तथा (रज्जुपिणद्धोव्वइंदकेऊ) जिस प्रकार रज्जु बद्ध इन्द्रध्वज महोत्सव में सर्वोपरि वर्तमान होता हुआ परम शोभा को विस्तारता है उसी तरह यह ब्रह्मचर्यव्रत भी सर्वव्रतों में श्रेष्ठ है और परम शोभा का जनक होता है। तथा (विसुद्धणेगगुणसंपिणद्धं) विशुद्ध अनेक गुणों से यह ब्रह्मचर्य अच्छी रीति से (संपिणद्धं) ग्रथित–युक्त है।

તે ધર્મના સ્કંધ જેવું છે. એટલે કે જેમ થડ વૃક્ષની શાખાઓને માટે આધાર રૂપ હોય છે એ જ પ્રકારે બ્રહ્મચર્ય પણ ધર્મની શાખાઓના આધાર રૂપ છે. તથા "महानगर पागार कवाड फलिहभूयं" મહાનગરના સમાન વિવિધ સુખોનું હેતુભૂત હોવાને કારણે ધર્મનગરનું તે રક્ષક હોવાના પ્રાકાર જેવું, કંબાટ જેવું અને અર્ગલા જેવું છે. તથા "रज्जुपिणद्धोव्वइंदकेऊ" જેમ રજ્જુ (દોરડું) બદ્ધ ઇન્દ્રધ્વજ મહોત્સવમાં સર્વોપરિ દેખાતો પરમ શોભાને વિસ્તારે છે તે જ પ્રમાણે આ બ્રહ્મચર્ય વ્રત પણ સર્વવ્રતોમાં શ્રેષ્ઠ છે અને પરમ શોભાનું જનક હોય છે તથા "विसुद्धणेगुगुणसंपिणद्धं" વિશુદ્ધ અનેક ગુણોથી આ બ્રહ્મચર્ય સારી રીતે "संपिणद्धं" ગ્રથિત–યુક્ત છે

पुनरपि ब्रह्मचर्यमाहात्म्यमाह—' जम्मिय भग्गे ' इत्यादि ।

मूलम्—जम्मि य भग्गे होइ सहसा सव्वं सेभग्गमहियचुण्णियकुसल्लियपल्लट्टपडिय-खंडियपरिसडियविणासियं विणयसीलतवनियमगुणसमूहं तं बंभं भगवंतं गहगणणक्खत्ततारगाणं च जहा उडुवई मणिमुत्तसिलप्पवालरत्तरयणागरणं च जहा समुद्दो, वेरुलिओ चेव जहा मणीणं, जह मउडो चेव भूसणाणं वत्थाणं चेव क्खोमजुयलं अरविंदं चेव पुप्फजेट्ठं गोसीसं चेव चंदणाणं हिमवंतो चेव ओसहीणं सीतोदा चेव निन्नगाणं उदहीसु जहा सयंभूरमणोरुयगवरो चेव मंडलिगपव्वयाणपवरे

भावार्थ—इस सूत्र द्वारा सूत्रकार चतुर्थ संवरद्वार का विवेचन कर रहे हैं। इसमें नौ कोटि से अब्रह्म का पूर्ण त्याग हो जाता है, इसलिये यह ब्रह्मचर्य महाव्रत कहलाता है। व्रत का तात्पर्य यही है कि दोषों को समझ कर उनके त्याग का नियम करने के बाद फिर से उनका सेवन नहीं करना। ब्रह्मचर्य व्रत को परिपालन करने के लिये अतिशय उपकारक कितने ही गुण हैं, जैसे आकर्षक स्पर्श, रस, गंध, रूप, शब्द और शरीरसंस्कार आदि में न फँसना, त्रुटियों को हटाने के लिये ज्ञानादि सद्गुणों का अभ्यास करना, एवं गुरुकी आधीनता के लिये गुरुकुल में वास करना। इस सूत्र में इसी ब्रह्मचर्य महाव्रत के गुण गौरव का व्याख्यान सूत्रकार ने किया है ॥ सू० १ ॥

ભાવાર્થ—આ સૂત્ર દ્વારા સૂત્રકાર ચોથા સંવરદ્વારનું વિવેચન કરેછે. તેમાં નવ પ્રકારે અબ્રહ્મનો સંપૂર્ણ ત્યાગ થઇ જાય છે. તેથી તે બ્રહ્મચર્ય મહાવ્રત કહેવાય છે. વ્રતનું તાત્પર્ય એ છે કે દોષોને સમજીને તેમના ત્યાગનો નિયમ કર્યા પછી ફરીથી તેનુ સેવન ન કરવું. બ્રહ્મચર્ય વ્રતનું પરિપાલન કરવાને માટે અતિશય ઉપકારક કેટલાક ગુણો છે, જેમાં કે આકર્ષક સ્પર્શ, રસ, ગંધ, રૂપ શબ્દ અને શરીર સંસ્કાર આદિમાં ફસાવું નહીં, ત્રુટિયોને દૂર કરવા માટે જ્ઞાનાદિ સદ્‌ગુણોનો અભ્યાસ કરવો, અને ગુરુની આધીનતાના સેવનને માટે ગુરુકુલમાં વાસ કરવો. આ સૂત્રમા એ જ બ્રહ્મચર્ય મહાવ્રતના ગુણ ગૌરવનું વર્ણન સૂત્રકારે કર્યું છે. ॥ ૧ ॥

एरावण इवकुंजराणं सीहो जहा मिगाण पवरो सुपन्नगाणं च वेणुदेव धरेण जहा पण्णग इंदराया कप्पाणं चेव बंभलोए, सभासु य जहा भवे सुहम्मा ठिईसु लवसत्तमऽव्वपवरा दाणाणं चेव अभओ दाणं किमिराओ चेव कंबलाणं संघयणे चेव वज्जरिसभे संठाणे चेव समचउरंसे झाणेसु य परं सुक्कज्झाणं नाणेसु य परमकेवलं तु सिद्धं लेसासु य परमसुक्कलेसा तित्थकरो चेव जहा मुणीणं वासेसु जहा विदेहे गिरिराया चेव मंदरवरे वणेसु जहा णंदणवणं पवरं दुमेसु जहा जंबू सुदंसणा वीस्सुयजसा जीयानामेणं अयं दीवो, तुरगवई गयवई रहवई नरवई जह वीसुए चेव राया रहिए चेव जहा महारहगए एवमणेगगुणा अहीणा भवंति एगम्मि बंभचेरे ॥ सू० २ ॥

टीका—'जम्मि य' इत्यादि । 'जम्मि य' यस्मिंश्च ब्रह्मचर्ये 'भग्गे' भग्ने=विराधिते सति 'सव्वं' सर्वं 'विणयसीलतवनियमगुणसमूहं' विनयशीलतपोनियमगुणसमूहः-विनयो=गुरुप्रतिपत्तिलक्षणः, शीलं=सदाचारः, तपः=अनशनादिकं द्वादशविधं, नियमः=अभिग्रहः, गुणसमूहः=ज्ञानादिगुणसमुदायः, एषां समाहारे विनयशीलतपोनियमगुणसमूहं क्रियाज्ञानं चेतिद्वयमपीत्यर्थः, सहसा=झटिति 'संभग्गमहियचुण्णिय कुसल्लियपल्लट्टपडिय खंडियपरिसडियविणासियं' संभ-

---

फिर ब्रह्मचर्य का माहात्म्य कहते हैं—'जम्मिय भग्गे' इत्यादि० ।

टीकार्थ—(जम्मिय भग्गे) जिस ब्रह्मचर्य के विराधित होने पर (सव्वं विणयसीलतवणियमगुणसमूहं) समस्त विनय, शील, तप, नियम और गुण समूह-अर्थात्-क्रिया और ज्ञान ये दोनों ही (सहसा) एकदम (संभग्गमहिय-चुण्णिय-कुसल्लिय-पल्लट्ट-पडिय-खंडिय-परिस

હવે સૂત્રકાર બ્રહ્મચર્યનું મહાત્મ્ય કહે છે– " जम्मिय भग्गे " ઇ૦

ટીકાર્થ—" जम्मिय भग्गे " જે બ્રહ્મચર્ય વિરાધના થતાં " सव्वं विणय सीलतवणियमगुणसमूहं " સમસ્ત વિનય, શીલ, તપ, નિયમ અને ગુણસમૂહ એટલે કે ક્રિયા અને જ્ઞાન એ બન્ને " सहसा " અચાનક " संभग्गमहियचुण्णियकुसल्लिय-पल्लट्ट-पडिय खंडिय-परिसडिय-विणासिय होइ " ફૂટેલા ઘડાની

ग्नमथितचूर्णितकुशल्यितपर्यस्तपतितखण्डित–परिशटितविनाशितम्=तत्र 'संभग्ग' संभग्नं=घट इव, 'महिय' मथितं=दधीव विलोडितं 'चुण्णियं' चूर्णितं=चणकवत् पिष्टम् 'कुसल्लिय' कुशल्यितम्=कु=कुत्सितम्–अन्तः प्रविष्टतोमरादि शल्यमिव शल्यं, यत् प्रविष्टं सत्, केनाप्युपायेन न निःसरति तत्कुशल्यं, तत्संजातं यस्येति कुशल्यितं दुष्टशल्ययुक्तं, यथा वक्रतया प्रविष्टेन शल्येन शरीरं विदारितं भवति, तथैव विनयादिकं विदारितं भवति, 'पल्लट्ट' पर्यस्तं=पर्वतशिखराद् स्थूलपाषाणखण्ड इव स्वस्थानाच्चलितम्, 'पडिय' पतितम्=प्रासादशिखरात्कलश इवाधोनिपतितम् 'खंडिय' खण्डितम्=दण्ड इव विभागेन च्छिन्नम्, 'परिसडिय' परिशटितं = कुष्ठाद्युपहताङ्गमिवविगलितम्, 'विणासियं' विनाशितं=विनष्टम्, 'होइ' भवति। अथोपमया ब्रह्मचर्यस्य माहात्म्यं वर्ण्यते–'तं बंभं भगवंतं' इत्यादि। 'तं'=तत्–प्रसिद्धं 'भगवंतं' भगवद्=सर्वोत्कृष्टैश्वर्यशालि 'बंभं' ब्रह्म=ब्रह्मचर्यं 'गहगणनक्खत्ततारगाणं च' ग्रहगणनक्षत्रतारकाणां च, ग्रहगणः =मङ्गलादिः, नक्षत्राणि=अश्विन्यादयः, तारका=प्रसिद्धाः, आसां मध्ये 'जहा'

डिय विणासियं होइ) घटकी तरह संभग्न टुकडे २ हो जाते हैं–नष्ट हो जाते हैं, दधि की तरह विलोडित–अस्तव्यस्त हो जाते हैं, चना आदि की तरह–चूर्णित–पिसे जाते हैं, कुशल्य–टेढे–वक्र बाण से विदारित हुए शरीर की तरह विदारित हो जाते हैं, पर्वत की चोटी से पतित पाषाणखण्ड की तरह अपने स्थान से च्युत हो जाते हैं, पतित प्रासाद की छत से गिरे हुए कलश की तरह अधोनिपतित हो जाते हैं, फाडे गये दंड की तरह खंडित होते जाते हैं, परिशटित–कुष्ठादि से उपहत अंग की तरह गलित हो जाते हैं, और विनाशित–विनष्ट–हो जाते हैं। (तं बंभं भगवंतं) सर्वोत्कृष्ट ऐश्वर्यशाली प्रसिद्ध यह ब्रह्मचर्य (गहगणनक्खत्ततारगाणं च जहा उडुवई) मंगल आदि

જેમ ટુકડે ટુકડા થઈ જાય છે,–નષ્ટ થઈ જાય છે, દહીંની જેમ વિલોડિત–અસ્તવ્યસ્ત થઇ જાય છે, ચણા આદિની જેમ ચૂરે ચૂરા થઈ જાય છે, કુશલ્ય–વક્રબાણથી વીંધાયેલ શરીરની જેમ વિદારિત થઇ જાય છે. પર્વતના શિખર પરથી પાષાણખંડની જેમ પોતાને સ્થાનેથી ભ્રષ્ટ થઇ જાય છે, પતિત–મહેલની છત ઉપરથી પડેલા કલશની જેમ અધોનિપતિત થઇ જાય છે. ચીરાયેલ લાકડીની જેમ ખંડિત થઈ જાય છે, પરિશટિત–કોઢ આદિથી ઉપહત અંગની જેમ ગલિત થઇ જાય છે અને વિનષ્ટ થઇ જાય છે. "तं बंभं भगवंतं" સર્વોત્કૃષ્ટ ઐશ્વર્યશાળી પ્રસિદ્ધ છે બ્રહ્મચર્ય "गहगणनक्खत्ततारगाणं च जहा उडुवई"

यथा 'उडुवई' उडुपतिः=चन्द्रः सर्वश्रेष्ठस्तथैतद्व्रतानां मध्ये सर्वश्रेष्ठमस्ति। तथा—'मणिमुत्तसिलप्पवालरत्तरयणागराणं' मणिमुक्ताशिलाप्रवालरक्तरत्नाकराणां=मणयः=चन्द्रकान्ताद्याः, मुक्ताफलानि=शिलाप्रवालानि विद्रुमाणि, रक्तरत्नानि=पद्मरागादीनि तेषामाकरा उत्पत्तिभूमयः, ये ते तथा, तेषां मध्ये 'जहा' यथा 'समुद्दो' समुद्रः, श्रेष्ठस्तथैवेदं व्रतानां मध्ये श्रेष्ठम्, एवं सर्वत्र संयोज्यम्। तथा—'जह चेव' यथा चैव 'मणीणं' मणीनां मध्ये 'वेरुलिओ' वैडूर्य वैडूर्यमणिः। 'जह चेव' यथा चैव 'आभूसणाणं' आभूषणानां मध्ये 'मउडो' मुकुटं। 'वत्थाणं' वस्त्राणां मध्ये 'खोमजुयलं चेव' क्षौमयुगमिव। 'अरविंदं चेव' अरविन्दमिव=कमलमिव 'पुप्फजेट्ठं' पुष्पज्येष्ठम्—पुष्पेषु अरविन्दं श्रेष्ठमित्यर्थः। 'गोसीसं चेव' गोशीर्षं हरिचन्दनमिव 'चंदणाणं' चन्दनानां मध्ये 'हिमवंतो चेव' हिमवानिव 'ओस-

---

ग्रहों में, अश्विनी आदि नक्षत्रों में, और ताराओं में जैसे चंद्रमा सर्व श्रेष्ठ माना जाता है उसी तरह सर्व व्रतों में श्रेष्ठ माना गया है। तथा (मणिमुत्तसिलप्पवालरत्तरयणागराणं च जहा समुद्दो) चन्द्रकान्त आदि मणियों की, मुक्ताफलों की, मूगों की और पद्मराग आदि रक्त-रत्नों की उत्पत्ति स्थानों में जैसे समुद्र श्रेष्ठ होता है उसी तरह यह व्रत भी सर्वव्रतों में श्रेष्ठ माना गया है। तथा—(जह चेव मणीणं वेरुलियो) जैसे मणियों में वैडूर्यमणि, (जह चेव आभूसणाणं मउडो) आभूषणों में जैसे मुकुट, (वत्थाणं खोमजुयलं चेव) वस्त्रों में जैसे क्षौम युगल, (अरविंदंचेव पुप्फजेट्ठं) पुष्पों में जैसे अरविंद (कमल)(चंदणाणं गोसीसं चेव) चंदनों में जैसे हरिचंदन, (ओसहीणं हिमवंतो चेव) औषधियों की उत्पत्ति के स्थानों में जैसे हिमवान्

મંગળ આદિ ગ્રહોમા, અશ્વિની આદિ નક્ષત્રોમાં, અને તારાઓમાં જેમ ચંન્દ્રમા સર્વશ્રેષ્ઠ મનાય છે એજ પ્રમાણે સર્વવ્રતોમાં શ્રેષ્ઠ માનવામાં આવ્યું છે. તથા " मणिमुत्तसिलप्पवालरत्तरयणागराणं च जहा समुद्दो " ચન્દ્રકાન્ત આદિ મણિઓની, મોતીની, મૂગોની અને પદ્મરાગ આદિ રક્તરત્નોની ઉત્પત્તિ કરવાના સ્થાનોમા જેમ સમુદ્ર શ્રેષ્ઠ મનાય છે. એજ પ્રમાણે આ વ્રત પણ સર્વ વ્રતોમા શ્રેષ્ઠ મનાય છે તથા " जहचेव मणीणं वेरुलिओ " જેમ મણિઓમા વૈડૂર્યમણી, " जह चेव आभूसणाणं मउडो " આભૂષણોમાં જેમ મુગુટ " वत्थाणं खोमजुयल चेव " વસ્ત્રોમાં જેમ ક્ષૌમયુગલ " अरविंदं चेव पुप्फजेट्ठं " પુષ્પોમાં જેમ અરવિંદ, " चंदणाण गोसीसं चेव " ચંદનોમાં જેમ હરિચંદન.

हिणं ' ओषधीनाम्=औषध्युत्पत्तिस्थानानां मध्ये हिमवान् पर्वत इव। ' सीतोदा चेव ' सीतोदेव=स्वनामख्याता महानदीव ' निन्नगानां ' निम्नगानाम्=नदीनां मध्ये। ' उदहीसु ' उदधिषु=समुद्रेषु ' सयंभूरमणो ' स्वयम्भूरमणः समुद्रः ' रुयगवरो चेव ' रुचकवर इव-यथा रुचकवरः=रूचकाभिधानस्त्रयोदशद्वीपवर्त्तीपर्वतविशेषः, ' मंडलिकपव्वयाणं ' माण्डलिकपर्वतानां मानुषोत्तरकुण्डलवररुचकवराभिधानां मध्ये ' पवरे ' प्रवरः श्रेष्ठः। ' एरावण इव ' ऐरावण इव ' कुंजराणं ' कुञ्जराणां मध्ये, यथा हस्तिनां मध्ये ऐरावतः प्रवर इत्यर्थः। ' जहा ' यथा ' सीहो ' सिंहः ' मिगाणं ' मृगाणाम्=अरण्यपशूनां मध्ये ' पवरो ' प्रवरः यथा- ' सुपण्णगाणं च ' सुपर्णकानां=सुपर्णकुमाराणां मध्ये ' वेणुदेवे ' वेणुदेवः प्रवरः यथा च ' पन्नग इंदराया ' पन्नगेन्द्रराजः, ' धरणे ' धरणो=धरणेन्द्रो नागकुमाराणां मध्ये प्रवरः, तथैवेदं ब्रह्मचर्यं व्रतानां मध्ये प्रवरम्। तथा-' कप्पाणं ' कल्पानां=देवलोकानां मध्ये ' बंभलोए चेव ' ब्रह्मलोक इव=पञ्चमो देवलोकः

पर्वत, (निन्नगाणं सीतोदा चेव) नदियों में जैसे सीतोदा नदी, (उदहीसु जहा सयंभूरमणो) समुद्रों में जैसे स्वयंभूरमणसमुद्र, (मंडलिगपव्वयाण रुयगवरो चेव) मांडलिक पर्वतों में जैसे रुचक वरपर्वत, (पवरे) श्रेष्ठ माना जाता है, उसी प्रकार समस्तव्रतों में यह व्रत श्रेष्ठ माना गया है। तथा (कुंजराणं एरावण इव) हाथीओं में जैसे ऐरावत हाथी श्रेष्ठ होता है (मिगाण जहा सीहो पवरो) मृगों के बीच में-जंगली जानवरों में-जैसे सिंह श्रेष्ठ होता है (सुपन्नगाणं च वेणुदेवे सुपर्णकुमारों में जैसे वेणुदेव श्रेष्ठ होता है, (जहा पन्नग इंदराया-धरणे) पन्नगों का इन्द्रराज धरणेन्द्र जैसे नागकुमारों में श्रेष्ठ होता है, (कप्पाणं चेव बंभलोए) कल्पों में जैसे पांचवा ब्रह्मलोक प्रवर होता है,

" ओसहीणं हिमवंतो चेव " ઔષધિઓનાં ઉત્પત્તિ સ્થાનોમાં જેમ હિમાલય પર્વત, " निन्नगाणं सीतोदा चेव " નદીઓમાં જેમ શીતોદા નદી, " उदही सुजहा सयंभूरमणो " સમુદ્રોમાં જેમ સ્વયંભૂરમણ સમુદ્ર " मंडलिगपव्वयाणरुयगवरो चेव " માંડલિક પર્વતોમાં જેમ રુચકવર પર્વત, " पवरे " શ્રેષ્ઠ મનાય છે, તે જ પ્રકારે સઘળા વ્રતોમાં આ બ્રહ્મચર્યવ્રત શ્રેષ્ઠ મનાય છે તથા " कुंजराणं एरावण इव " હાથીઓમાં જેમ ઐરાવત હાથી શ્રેષ્ઠ હોય છે, " मिगाणं जहा सीहो पवरो " મૃગોની વચ્ચે-જંગલી જાનવરોની વચ્ચે-જેમ સિંહ શ્રેષ્ઠ હોય તે, " सुपन्नगाणं च वेणुदेवे " સુપર્ણ કુમારોમાં જેમ વેણુદેવ શ્રેષ્ઠ હોય છે, " जहा पन्नग इंदराया धरणे " પન્નગોનો ઈન્દ્રરાજ ધરણેન્દ્ર જેમ નાગકુમારોમાં શ્રેષ્ઠ હોય છે, " कप्पाणं चेव बंभलोए " કલ્પોમાં જેમ પાંચમો

क्षेत्रस्य महत्त्वादिन्द्रियस्याति शुभपरिणामत्वाच्च प्रवरः। 'सभासुय' सभासु= प्रतिभवनविमान भाविनीषु सुधर्मसभोत्पातसभाऽभिषेकसभाऽलंकारसभाव्यव- सायसभासु च मध्ये 'जहा' यथा 'सुहम्मा' सुधर्मा सभा प्रवरा 'भवे' भवति तथैवेदं ब्रह्मचर्यं व्रतेषु प्रवरं भवति। तथा-'ठिइसु' स्थितिषु=आयुष्केषु मध्ये 'लवसत्तमव्व' लवसप्तमेव=अनुत्तरदेवभवस्थितिर्यथा प्रवरा। 'दाणाणं चेव अभओदाणं' दानानां मध्ये अभयदानमिवेदं ब्रह्मचर्यं प्रवरम्। 'कंवलाणं' कम्बलानां मध्ये 'किमिराओ चेव' कृमिराग इव-कृमिरागकम्बल इव कृमेः= रक्तकीट विशेषस्य राग इव रागो यस्य कम्बलस्य भवति स कम्बलः कृमि राग कम्बल प्रोच्यते, रक्तकम्बल इत्यर्थः, तथा-'संघयणे' संहनने=संहननमध्ये वज्र- ऋषभादीनां षण्णां संहननानां मध्ये 'वज्जरिसभे' वज्रऋषभं संहननं प्रवरम् 'संठाणे' संस्थाने=षड्विधसंस्थानमध्ये यथा 'समचउरंसं' समचतुरस्रं संस्थानं

(सभासु जहा सुहम्मा भवे सभाओं में जैसे सुधर्मा सभा श्रेष्ठ होती हैं, अर्थात् सुधर्मा सभा उत्पात सभा, अभिषेकसभा, अलंकार- सभा, व्यवसायसभा, इन सभाओं में जैसे सुधर्मा सभा सब से श्रेष्ठ मानी जाती है उसी प्रकार यह ब्रह्मचर्यव्रत भी समस्त व्रतों में श्रेष्ठ माना जाता है। तथा (ठिईसु जहा लवसत्तमव्वपवरा) आयुओं में अनुत्तरविमानवासी देवों की जैसे आयु उत्तम मानी जाती है और (दाणाणं चेव अभयो दाणं) दानों के बीच में जैसे अभयदान श्रेष्ठ माना जाता है उसी तरह यह ब्रह्मचर्यव्रत भी समस्तव्रतों में प्रधान व्रत माना जाता है। तथा (कंवलाणं किमिराओ चेव) कंबलो में जैसे रक्त कम्बल, (संघयणे चेववज्जरिसभे) छह संहननों में जैसे वज्रऋषभ- संहनन, (संठाणे चेव समचउरंसे) छह संस्थानों में जैसे समचतुर-

---

બ્રહ્મલોક શ્રેષ્ઠ હોય છે, "सभासु जहा सुहम्मा भवे" સભાઓમા જેમ સુધર્મા સભા શ્રેષ્ટ હોય છે, એટલે કે સુધર્માસભા, ઉત્પાદસભા, અભિષેકસભા, અલં- કારસભા. વ્યવસાયસભા, એ સભાઓમાં જેમ સુધર્માસભાને શ્રેષ્ટ માનવામા આવે છે; એ જ પ્રકારે આ બ્રહ્મચર્ય વ્રતને પણ સર્વે વ્રતોમા શ્રેષ્ઠ માનવામા આવે છે તથા "ठिइसु जहा लवसत्तमव्वपवरा" આયુષ્યોમાં જેમ અનુત્તર વિમાનવાસી દેવોનું આયુષ્ય જેમ ઉત્તમ મનાય છે, અને "दाणाणं चेवअभ- ओदाणं" દાનોમાં જેમ અભયદાન શ્રેષ્ટ મનાય છે, એ જ પ્રમાણે આ બ્રહ્મચર્ય વ્રત પણ સમસ્ત વ્રતોમાં શ્રેષ્ઠ મનાય છે તથા "कंवलाण किमिराओ चेव" કમળોમા જેમ રક્ત કમળ સઘયણે ચેવ વજ્જરિસભે" છ સહનનોમાં જેમ વજ્રઋષભ સહનન, "संठाणे चेव समचउरंसे" છ સંસ્થાનોમાં જેમ સમચતુરસ્ર

प्रवरं तथैव व्रतानां मध्ये इदं ब्रह्मचर्यं प्रवरम्। तथा-' झाणेसु य ' ध्यानेषु च-ध्यानमध्ये यथा ' परमसुक्कज्झाणं ' परमशुक्लध्यानं-शुक्लध्यानस्य चतुर्थपादरूपं प्रवरम् , तथा-नाणेसु य ' ज्ञानेषु च यथा परमकेवलं तु परिपूर्णविशुद्धकेवल-ज्ञानं अर्थात्-क्षायिकज्ञानं सिद्धं=प्रवरत्वेन प्रसिद्धम्., तथैवेदं ब्रह्मचर्यं व्रतानां-मध्ये प्रसिद्धम्-तथा-' लेसासु य ' लेश्यासु=कृष्णाद्यासु च यथा, ' परमसुक्क-लेस्सा ' परमशुक्ललेश्या-शुक्लध्यानस्य तृतीयभेदवर्तिनी प्रवरा । ' तित्थकरो चेव ' तीर्थकरश्चैव ' जहा ' यथा ' मुणीणं ' मुनीनां मध्ये प्रवरः ' वासेसु ' वर्षेषु क्षेत्रेषु ' जहा ' यथा ' विदेहे ' विदेहः-महाविदेहक्षेत्रं प्रवरम्, तथैवेदं व्रतं=व्रतानां मध्ये प्रवरम् । यथा जम्बूद्वीपे ' मंदरवरे ' मन्दरवरो ' गिरिराया ' गिरिराजो=मेरुपर्वतश्चैव पर्वतानां मध्ये प्रवरः, ' वणेसु ' वनेषु ' जहा ' यथा-

---

समसंस्थान प्रवर माना जाता है-उसी प्रकार यह ब्रह्मचर्य व्रतों में प्रधान व्रत माना जाता है । इसी तरह (झाणेसु वरं सुक्कज्झाणं) चार ध्यानों में जैसे परम शुक्लध्यान शुक्लध्यानका चौथा भेद, उत्तम होता है और (नाणेसु य परमकेवलं सिद्धं) आभिनिबोधिक आदि पांच ज्ञानों में जैसा केवलज्ञान उत्तम होता है (लेसासु य परमसुक्कलेसा) कृष्ण आदि छह लेश्याओं में जैसे परमशुक्ललेश्या-शुक्लध्यान के तीसरे (पाये) पादमें होनेवाली लेश्या-उत्तम होती है (जहा मुणीणं तित्थयरो) मुनियों के बीच में जैसे तीर्थंकर सर्वोत्तम होते हैं, तथा (वासेसु जहा विदेहे) क्षेत्रों में जैसे विदेहक्षेत्र सब से उत्तम क्षेत्र होता है, उसी तरह व्रतों में यह ब्रह्मचर्य व्रत सबसे प्रधान व्रत हैं । तथा—(मंदरवरे गिरि-राया) जैसे जंबूद्वीप में पर्वतों के मध्य में मंदर वर गिरिराज श्रेष्ठ है,

---

સંસ્થાન જેમ શ્રેષ્ઠ મનાય છે તેમ આ બ્રહ્મચર્ય વ્રત પણ સઘળા વ્રતોમાં મુખ્ય મનાય છે એ જ પ્રમાણે " झाणेसु वरं सुक्कज्झाणं " ચાર ધ્યાનોમાં જેમ પરમ શુકલધ્યાનનો ચોથો ભેદ ઉત્તમ હોય છે, અને " नाणेसु य परम-केवलं सिद्धं " આભિનિબોધિક આદિ પાંચ જ્ઞાનોમાં જેમ કેવળજ્ઞાન ઉત્તમ હોય છે, " लेसासु य परमसुक्कलेसा " કૃષ્ણ આદિ છ લેશ્યાઓમાં જેમ શુકલ-લેશ્યા-શુકલધ્યાનના ત્રીજા પદમાં-પાયામાં થનારી લેશ્યા-ઉત્તમ હોય છે. " जहा मुणीणं तित्थयरो " મુનિયોની વચ્ચે જેમ તિર્થંકર સર્વોત્તમ હોય છે, " वासेसु जहा विदेहे " ક્ષેત્રોમાં જેમ વિદેહ ક્ષેત્ર સર્વોત્તમ છે, એ જ પ્રમાણે આ બ્રહ્મચર્ય વ્રત સઘળાં વ્રતોમાં પ્રધાન વ્રત છે તથા " मंदरवरे गिरिराया " જેમ જંબૂદ્વીપમા પર્વતોમાં ગિરિરાજ મંદરવર શ્રેષ્ઠ છે, " वणेसु जहा णंदण-

'णंदणवणं' नन्दनवनं 'पवरं' प्रवरं 'दुमेसु' द्रुमेषु-वृक्षेषु 'जहा' यथा-'सुदंसणा' सुदर्शना-सुदर्शनाख्या 'जंबू' जम्बूः=त्रीविङ्गः वृक्षविशेषः, सा 'विस्सुयजसा' विश्रुतयशाः-यशसा विख्याता। जस्त्वा किं नाम यशः? इत्याह—'जीय' यस्याः 'नामेणं' नाम्ना अयं 'दीवे' द्वीपो=जम्बूद्वीपोऽस्ति, तथैवेदं ब्रह्मचर्यं व्रतानां मध्ये विख्यातम्। तथा-'जहा चेव' यथा चैव 'तुरगवई' तुरगपतिः=अश्वसेनायुक्तः 'गयवई' गजपतिः=गजसेनायुक्तः 'रहवई' रथपतिः-रथसेनायुक्तः 'नरवई' नरपतिः=नरसेनायुक्तो 'राया' राजा विश्रुतः, 'जहा चेव' यथा चैव 'रहिए' रथिके=रथारोहिमध्ये 'महारहगए' महारथगतः=महारथारोही विश्रुतः। तथैव व्रतानां मध्ये इदं व्रतं विश्रुतम्=प्रसिद्धम् एवम्=एवम्प्रकाराः 'अणेगगुणा' अनेकगुणाः=प्रवरत्वविश्रुतत्वादयोऽनेकेगुणा 'एगम्मि बंभचेरे' एकस्मिन् ब्रह्मचर्ये 'अहीणा' अधीनाः=स्वाधीनाः भवन्ति, एकस्मिन् ब्रह्मचर्ये समाराधिते सति सर्वे गुणाः समागत्य तस्मिन् पुरुषे समाश्रि-

---

(वणेसु जहा णंदणवणं पवरं) वनों में जैसे नंदनवन श्रेष्ठ है, (दुमेसु जहा सुदंसणा जंबूविस्सुयजसा) वृक्षों में जैसे जंबू वृक्ष प्रसिद्धयश संपन्न है कि (जीयनामेण अयं दीवो) जिसके नाम से यह द्वीप जंबुद्वीप कहलाता है, उसी प्रकार व्रतों में ब्रह्मचर्य व्रतश्रेष्ठ है। तथा (तुरगवई, गयवई, रहवई, नरवई, राया जहाचेव रहिए महारहगए, एवमणेगगुणा एगम्मि बंभचेरे अहीणा भवंति) जैसे अश्वसेनायुक्त, गजसेनायुक्त, रथसेनायुक्त, नरसेनायुक्त, राजा प्रसिद्ध होता है, तथा रथारोहियों के बीच में महारथारोही प्रख्यात होता है, उसी तरह व्रतों में यह ब्रह्मचर्यव्रत प्रख्यात है। इस तरह प्रवरत्व, विश्रुतत्व आदि अनेक गुण एक इस ब्रह्मचर्य में अधीन होते हैं, अर्थात् एक ब्रह्मचर्य के आराधित कर लेने पर समस्तगुण आकार उस पुरुष में आश्रित हो

वणं पवर" वनोमां જેમ નંદનવન શ્રેષ્ઠ છે, "दुमेसु जहा सुदंसणा जंबू विस्सुयजसा" વૃક્ષોમાં જેમ જંબૂવૃક્ષ પ્રસિદ્ધ યશ સંપન્ન છે, કે "जिय नामेण अयं दीवो" જેના નામથી આ દ્વીપ જંબૂદ્વીપ કહેવાય છે, એ જ પ્રમાણે વ્રતોમાં બ્રહ્મચર્ય વ્રત શ્રેષ્ઠ છે. તથા "तुरगवई, गयवई, रहगई, नरवई, राया, जहा चेव रहिए महारहगए, एवमणेगगुणा एगम्मि बंभचेरे अहीणा भवंति" જેમ હયદળવાળો, ગજદળવાળો, રથદળવાળો અને પાયદળવાળો રાજા પ્રસિદ્ધ હોય છે તથા રથારોહિયોની વચ્ચે મહારથારોહી પ્રખ્યાત હોય છે, એ જ પ્રમાણે વ્રતોમાં પણ બ્રહ્મચર્ય વ્રત પ્રખ્યાત છે આ પ્રમાણે શ્રેષ્ઠતા, વિશ્રુતત્વ, આદિ અનેક ગુણ આ એક બ્રહ્મચર્યને આધીન હોય છે, એટલે કે એક બ્રહ્મચર્ય

शन्तीत्यर्थः । अयमाशयः-व्रतानां मध्ये ब्रह्मचर्यं व्रतं सर्वतः श्रेष्ठम् । अतस्तदाराधकाः सर्वतः श्रेष्ठा भवन्तीति ॥ सू० २ ॥

मूलम्-जम्मि य आहियं वयमिणं सच्चं सीलं तवो य विणयो य संजमो य खंत्ती गुत्ती मुत्ती, तहेव इहलोइय परलोइयजसो य कित्ती य पच्चाओ य, तम्हा निहुएणं बंभचेरं चरियव्वं सव्वओ विसुद्धं जावज्जीवाए जावसेयट्ठी संजओत्ति, एवं भणियं वयं भगवया । तं च इमं-"पंचमहव्वयसुव्वयमूलं समणमणाइलसाहुसुचिण्णं । वेराविरामणपज्जवसाणं सव्वसमुद्दमहोदहितित्थं ॥ १ ॥ तित्थगरेहिं सुदेसियमग्गं नरगतिरिच्छविवज्जियमग्गं । सव्वपवित्तसुनिम्मियसारं सिद्धिविमाणअवंगुयदारं॥ २ ॥ देवनरिंदनमंसियपुज्जं सव्वजगुत्तममंगलमग्गं । दुद्धरिसं गुणनायगमेक्कं मोक्खपहस्स वडिंसगभूयं" ॥ ३ ॥ जेण सुद्धचरिएणं भवइ सुबंभणो सुसमणो सुसाहू सुइसी सुमुणी सुसंजए स एव भिक्खू, जो सुद्धं चरइ बंभचेरं ॥ ३ ॥

जाते है । इसलिये व्रतों के बीच में यह ब्रह्मचर्यव्रत सर्व श्रेष्ठ व्रत है, अतः इसके आराधकजन भी सर्वतःश्रेष्ठ होते है ।

भावार्थ—इस एक ब्रह्मचर्य महाव्रत के आराधित होने पर समस्त सद्गुण स्वयं आराधितहो जाते हैं और इसके विनष्ट होनेपर वे समस्त सद्गुण नष्ट हो जाते हैं। अतःसमस्त व्रतोंमें यह व्रत सर्वश्रेष्ठ है। सू०२॥

વ્રતને આચરવાથી સમસ્ત ગુણ તે પુરુષમાં આવી જાય છે. તે કારણે વ્રતો મધ્યે આ બ્રહ્મચર્યવ્રત સર્વ શ્રેષ્ઠ વ્રત છે, તેથી તેની આરાધના કરનાર વ્યક્તિ સર્વ શ્રેષ્ઠ હોય છે.

ભાવાર્થ—આ એક બ્રહ્મચર્ય વ્રતની અરાધના કરવામાં આવે તો સમસ્ત સદ્ગુણ તેની જાતે જ આરાધિત થઈ જાય છે અને તેનો નાશ થતા તે સમસ્ત સદ્ગુણોનો નાશ થઈ જાય છે. તેથી સઘળાં વ્રતોમા આ વ્રત સર્વશ્રેષ્ઠ છે ॥સૂ.૨॥

टीका—'जम्मि य' इत्यादि—

'जम्मि य' यस्मिंश्च=ब्रह्मचर्ये आराधिते 'इणं' इदं प्रव्रज्या—लक्षणं 'वयं' व्रतम् 'आराहियं' आराधितं भवति। तथा पुनरपि यदाराधितं भवति, तदाह–'सच्चं' सत्यं 'सीलं' शीलं=साध्वाचारः–'तवो य' तपश्च 'विणओ य' विनयश्च 'संजमो य' संयमश्च, तथा–'खंती' क्षान्तिः 'गुत्ती' गुप्तिः–मनोगुप्त्यादिका, 'मुत्ती' मुक्तिः–निर्लोभता 'तहेव' तथैव 'इहलोइय परलोइय' ऐहलौकिकपारलौकिकं 'जसो य' यशश्च–यशः=एकदिग्गामिनीख्यातिः 'कित्तीय' कीर्तिश्च=सर्वदिग्गामिनीप्रसिद्धिः, 'पच्चओ य' प्रत्ययश्च='साधुरयम्' एवं रूपो विश्वासः, एतत्सर्वं ब्रह्मचर्ये समाराधिते भवतीति भावः। 'तम्हा' तस्माद् हेतोः 'निहुएणं' निभृतेन=निश्चलभावेन 'बमचेरं' ब्रह्मचर्यं 'चरि-

---

'जम्मिय' इत्यादि०।

टीकार्थ—(जम्मिय आराहिए) जिस ब्रह्मचर्य व्रत के आराधित कर लेने पर (इणं वयं आराहियं) यह प्रव्रज्यारूपव्रत आराधित हो जाता है तथा–(सच्चं सीलंतवो य विणयो य संजमो य खंति, गुत्ती, मुत्ती, तहेव इहलोइय, परलोइय, जसो य कित्ती य पच्चओ य) सत्य, शील–सदाचार, (मुनि का आचार) तप, विनय, संयम, क्षान्ति मनोगुप्ति आदि तीन गुप्तियां, निर्लोभतारूप मुक्ति, तथा इहलोक संबंधी, और परलोक संबंधी यश–एक दिशामें फैलानेवाली प्रसिद्धि, कीर्ति–सब दिशा में फैलाने वाली प्रसिद्धि, तथा–प्रत्यय–"यह साधु है" इस रूप विश्वास, ये सब आराधित हो जाते हैं। (तम्हा) इसलिये (सव्वओ विसुद्धं) नौ कोटि–त्रिकरण त्रियोग से निर्मल बनाकर (निहु-

---

"जम्मिय" ઈત્યાદિ—

ટીકાર્થ–"जम्मिय आराहिए" જે બ્રહ્મચર્ય વ્રતનુ સેવન કરવાથી "इणं वयं आराहियं" આ પ્રવ્રજ્યારૂપ વ્રત આરાધિત થઈ જાય છે, તથા "सच्चं सीलं तवो य विणयो य संजमो य खंत्ती, गुत्ती, मुत्ती इहलोइय, परलोइय जसो य कित्ती य पच्चओ य" સત્ય, શીલ, સદાચાર, (મુનિનો આચાર) તપ, વિનય, સંયમ, ક્ષાંતિ, મનોગુપ્તિ આદિ ત્રણ ગુપ્તિ, નિર્લોભતારૂપ મુક્તિ, તથા આલોક સંબંધી તથા પરલોક સંબંધી યશ–એક દિશામા ફેલાનાર પ્રસિદ્ધિ, કીર્તિ–સઘળી દિશાઓમાં ફેલાનાર પ્રસિદ્ધિ, તથા પ્રત્યય–"આ સાધુ છે" એ પ્રકારનો વિશ્વાસ, એ બધા આરાધિત થઈ જાય છે. "तम्हा" તેથી "सव्वओ विसुद्धं" નવ પ્રકારે–ત્રિકરણ ત્રિયોગથી નિર્મળ બનાવીને "निहुएणं"

यव्वं ' चरितव्यम्=आसेवितव्यम् कीदृशं ब्रह्मचर्यमासेवितव्यम् ? इत्याह— ' सव्वओ विसुद्धं ' सर्वतो विशुद्धम् ? मनः प्रभृति त्रिकरणत्रियोगनिर्मलं, कियत्कालमासेवितव्यम् ? इत्याह—'जावज्जीवाए' यावज्जीवया प्रतिज्ञया यावज्जीवतया वा जीवनपर्यन्तमित्यर्थः, तथा–'जावसेयट्ठि संजओत्ति ' यावत् श्वेतास्थि संयत, इति, श्वेतानि=दुष्कर तपः करणाद्रुधिराभावेन शुक्लानि अस्थीनि यस्मिंस्तत्–श्वेतास्थि=अस्थिपञ्जरप्रायं शरीरं तत्र संयतः प्रतिबद्धो जीवो यावद् भवेत् , मरणपर्यन्तमित्यर्थः । अयं भावः–साधुना दुश्चर तपश्चरणादिना स्वशरीर रुधिरं विशोष्य मरणावधि ब्रह्मचर्यं पालनीयमिति । अथवा यावच्छ्रेयोऽर्थि संयतः' इतिच्छाया, श्रेयो मोक्षस्तदर्थयितुं शीलं यस्य स श्रेयोऽर्थी, स चासौ संयतश्चेति कर्मधारयः अयं भावः–साधुर्यावत्कालं मोक्षं न प्राप्नोति, तावत्कालं तेन ब्रह्मचर्यं पालनीयमिति । ' एवं ' इत्येवं ' भणियं ' भणितं ' भगवया ' भगवता महा-

एणं) निश्चलभाव से (बंभचेरं) इस ब्रह्मचर्य महाव्रत का (जावज्जीवाए) जीवनपर्यन्त (चरियव्वं) पालन करना चाहिये । (जाव सेयट्ठिसंजयो त्ति) यावत् श्वेतास्थि संयतः अर्थात् चाहे भले ही दुश्चर तपश्चरण आदि द्वारा अपने शरीर का खून सूक जाने से श्वेत हड्डियां ही उसमें अवशेष रह गई हो तबतक । अथवा यावत् श्रेयोऽर्थि संयत–अर्थात्–साधु को जबतक मुक्ति की प्राप्ति न हो जावे तबतक इस महाव्रत का अवश्य पालन करते रहना चाहिये । " जाव सेयट्ठि संजओ " इसकी एक तो श्वेतास्थिसंयतः " ऐसी संस्कृत छाया होती है और दूसरी– " श्रेयोऽर्थिसंयतः " ऐसी भी होती है । (एवं भणियं वयं भगवया) इस प्रकार से इस व्रत का भगवान महावीर ने जो कि अन्तिम तीर्थं-

નિશ્ચલ ભાવથી " बंभचेरं " આ બ્રહ્મચર્ય મહાવ્રતનું "जावज्जीवाए " જીવન-પર્યન્ત चरियव्वं " પાલન કરવું જોઈએ. जाव सेयट्ठिसजओत्ति " ' यावत् श्वेतास्थिसंयत' " એટલે કે કઠોર તપશ્ચરણ આદિ દ્વારા પોતાના શરીરનું લોહી સૂકાઈ જવાથી સફેદ હાડકાં જ તેમાં બાકી રહ્યા હોય એવી સ્થિતિમાં પણ આ વ્રતનું પાલન કરવું જોઈએ. અથવા यावत् श्रेयोऽर्थि संयत–એટલે કે જ્યાં સુધી સાધુને મોક્ષની પ્રાપ્તિ ન થાય ત્યાં સુધી આ મહાવ્રતનું પાલન કરતાં રહેવું જોઈએ "जाव सेयट्ठिसंजओ" તેની એક સંસ્કૃત છાયા "श्वेतास्थिसयतः " થાય છે, અને બીજી " श्रेयोऽर्थिसंयतः " એવી પણ છાયા થાય છે. " एवं भणियं वयं भगवया " આ પ્રમાણે અન્તિમ તીર્થંકર ભગવાન મહાવીરે આ વ્રતનું

पवित्रदृढकारीत्यर्थः, तथा-' सिद्धिविमाणअवंगुयदारं ' सिद्धिविमानापावृतद्वारम्=सिद्धेः-मोक्षगतेः, विमानानाम्=अनुत्तरविमानानाम् च, अपावृतम्=उद्घाटितं द्वारं=प्रवेशमुखं येन तत्तथा, स्वर्गापवर्गद्वारोद्घाटकमित्यर्थः ॥ २ ॥ पुनः कीदृशं ब्रह्मचर्यम् ? इत्याह-' देवनरिंद ' इत्यादि । 'देवनरिंदनमंसिय पुज्जं' देवनरेन्द्रनमस्यितपूज्यम्-देवाः=भवनपत्यादयः, नरेन्द्राः=चक्रवर्त्यादयस्तैः नमस्यिताः=नमस्कृता ये महापुरुषास्तेषां पूज्यम्=आदरणीयम् । तथा-' सव्वजगुत्तममंगलमग्गं ' सर्वजगदुत्तममंगलमार्गः=सर्वजगत्सु=त्रिषु लोकेषु उत्तमो मङ्गलश्च यो मार्गः उपायः, सोऽस्ति । तथा-' दुद्धरिसं ' दुर्द्धर्षम्=देवदानवैरप्यपरिभवनीयम् , 'गुणनायगं ' गुणनायकं=गुणान्=ज्ञानादिरूपान् नयति=प्रापयति यत्तत्तादृशम्=गुणधायकमित्यर्थः, तथा-' एक्कं ' एकं प्रधानम्=निरुपमम् इत्यर्थ', तथा ' मोक्खपहस्स ' मोक्षपथस्य=मोक्षमार्गस्य ' वडिंसगभूयं ' अवतंसकभूतम्=शिरोभूषणसदृशमिदं ब्रह्मचर्यमस्ति ॥ ३ ॥

इसका ही प्रभाव सब को पवित्र और सारभूत बना देता है। अर्थात् यह व्रत समस्त व्रतों को पवित्र और दृढ करने वाला है। (सिद्धिविमाणअवंगुयदारं) तथा मोक्षगति का और अनुत्तर विमानों का द्वार इससे खुल जाता है, अर्थात् स्वर्ग और अपवर्ग (मोक्ष) के द्वारका यह उद्घाटक है-खोलनेवाला है ॥ २ ॥ (देवनरिंदनमंसियपुज्जं) भवनपति आदि देवों द्वारा चक्रवर्ती आदि नरेन्द्रों द्वारा, नमस्कृत हुए ऐसे महापुरुषों के यह पूजनीय-आदरणीय है। तथा-(सव्वजगुत्तममंगलमग्गं) यह तीनों लोकों में उत्तम और मंगलकारी मार्ग है। तथा (दुद्धरिसं) देव और दानवोंसे भी यह पराजित होनेवाला नहीं है (गुणनायगं)ज्ञानादि सद्गुणों को यह प्राप्त कराने वाला है। (एक्कं) यह प्रधाननिरुपम है (मोक्खपहस्स वडिंसगभूयं) और मोक्ष मार्गका यह शिरोभूषणरूप है॥३॥

છે એટલે સ્વર્ગ અને અપવર્ગનાં દ્વારનુ તે ઉદ્ઘાટન કરનાર છે-ઉઘાડનાર છે ॥૨॥ " देवनरिंदनमंसियपुज्जं" ભવનપતિ આદિ દેવો અને ચક્રવતી આદિ નરેન્દ્રો પણ જેમને નમન કરે છે એવા મહાપુરુષોને તે પૂજનીય અને આદરણીય છે. તથા " सव्व जगुत्तममंगलमग्गं " તે ત્રણે લોકમા ઉત્તમ અને મંગળકારી માર્ગ છે, તથા " दुद्धरिसं " દેવો અને દાનવો દ્વારા પણ તે પરાજિત થાય એવું નથી, " गुणनायगं " જ્ઞાનાદિ સદ્ગુણોને તે પ્રાપ્ત કરાવનાર છે " एक्कं " તે પ્રધાન -શ્રેષ્ઠ-અનુપમ છે. " मोक्खपहस्स वडिंसगभूयं " અને મોક્ષમાર્ગનું તે શિરોભૂષણ રૂપ છે ॥ ૩ ॥

तथा—'सुद्धचरिएणं' शुद्धचरितेन=सम्यगाचरितेन 'जेण' येन=ब्रह्मचर्येण, 'भवइ' भवति 'सुबंभणो' सुब्राह्मणः=आत्मज्ञानतत्परः, 'सुसमणो' सुश्रमणः=सुतपस्वी 'सुसाहू' सुसाधुः=निर्वाणसाधकः 'सुईसी' सुऋषिः, यथावद्वस्तुदर्शकः, 'सुमुणी' सुमुनिः=जिनाज्ञाधारकः, 'सुसंजए' सुसंयतः=परमयतनापरायणः। तथा स एव 'भिक्खू' भिक्षुः=सर्वत्यागी परमपुरुषार्थसाधको वा,'जो'यः 'सुद्धं' शुद्धं 'वंभचेरं' ब्रह्मचर्यं 'चरइ' चरति=पालयति॥सू३॥

(सुद्धचरिएणं जेण सुबंभणो भवइ) अच्छी तरह आचरित हुए इस ब्रह्मचर्य से ही मनुष्य सुब्राह्मण–आत्म ज्ञान में तत्पर-होता है, (सुसमणो) सुश्रमण–सुतपस्वी, (सुसाहू) सुसाधु–निर्वाण साधक, (सुईसी) सुऋषि–यथावत् वस्तुदर्शक (सुमुणी) सुमुनि–जिनाज्ञा का आराधक, और (सुसंजए) सुसंयत परम यतना में परायण होता है। तथा (स एव भिक्खू) वही सच्चा भिक्खू है–सर्व त्यागी–अथवा–परम पुरुषार्थ साधक है, (जो सुद्धं वंभचेरं चरइ) जो इस ब्रह्मचर्य को शुद्ध रीति से पालता है।

भावार्थ—सूत्रकार ने इस सूत्र द्वारा इस ब्रह्मचर्य की गुणगरिमा (महिमा) का ही कथन किया है। वे कहते हैं कि इस एक ब्रह्मचर्य व्रतके पूर्णरूपसे आराधिक होनेपर सत्य, शील आदि जितने भी सद्गुण हैं वे सब आराधित हो जाते हैं। यह ब्रह्मचर्य पंचमहाव्रतों का मूलकारण है। अतःयावज्जीव साधु को इसका सेवन करते रहना चाहिये। जिस

"सुद्धचरिएणं जेण सुबंभणो भवइ' સારી રીતે આચરવામા આવેલ આ બ્રહ્મચર્યથીજ મનુષ્ય સુબ્રાહ્મણ–આત્મ જ્ઞાનમા તત્પર થાય છે, "सुसमणो" સુશ્રમણ–સુતપસ્વી–"सुसाहू" સુસાધુ–નિર્વાણ સાધક, "सुईसी"સુઋષિ–યથાવત્ વસ્તુ દર્શક, "सुमुणी" જિન આજ્ઞાનો આરાધક, અને "सुसंजए" સુસંયત–પરમ યતનામાં પરાયણ થાય છે, તથા "स एव भिक्खू" તે જ સાચો ભિક્ખુ છે–સર્વત્યાગી અથવા પરમ પુરુષાર્થ સાધક છે, "जो सुद्धं बंभचेरं चरइ" જે આ બ્રહ્મચર્યને શુદ્ધ રીતે પાળે છે

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્રદ્વારા બ્રહ્મચર્યના ગુણ ગૌરવનું જ વર્ણન કર્યું છે. તેઓ કહે છે કે આ એક બ્રહ્મચર્ય વ્રતનું પૂર્ણ સ્વરૂપે અરાધના કરવામાં આવે તો સત્ય, શીલ આદિ જેટલા સદ્‌ગુણો છે તેમનુ આરાધન આપોઆપ થઈ જાય છે. આ બ્રહ્મચર્ય પાંચ મહાવ્રતોનું મૂળ કારણ છે. તેથી સાધુએ જીવન–પર્યન્ત તેનું સેવન કરવુ જોઈએ. જે રીતે મૂળ વિના કોઇ પણ વસ્તુની

वीरेण चरमतीर्थङ्करेण । ' तं च ' तच्चव्रतम् ' इमं ' इदम्=अग्रे-वक्ष्यमाणस्वरूपमस्ति । तदाह तिसृभिर्गाथाभिः-

' पंचमहव्वय० ' इत्यादि ।

' पंचमहव्वयसुव्वयमूलं' पञ्चमहाव्रतसुव्रतमूलम्=पञ्च=पञ्चसंख्यकानि यानि महाव्रतानि=प्राणातिपातविरमणादि लक्षणानि, तान्येव सुव्रतानि तेषां मूलम्=कारणम् इदं ब्रह्मचर्यव्रतमस्ति । तथा-इदं ब्रह्मचर्यव्रतं, ' समणं ' शमनं=चित्तसमाधिजनकं, तथा-' अनाबिलसाधुसुचीर्णम्= अनाविलाः = अकलुषाः-निर्मलचारित्रा ये साधवस्तैः सुचीर्णं=समाराधितम्, तथा-' वेरविरामणपज्जवसाणं ' वैरविरमणपर्यवसानम्-वैरं=शत्रुभावस्तस्य विरमणं=निवृत्तिः पर्यवसानेऽन्ते यस्य तत्, ब्रह्मचर्यं हि वैरं विनिवार्य परमप्रीतिमुपजनयतीति भावः ।

उक्तं च—

सप्पो हारायए तस्स, विसं चावि सुहायए ।
बंभचेरप्पभावेणं, रिऊ मित्तायए सया ॥ १ ॥

छाया —सर्पो हारायते तस्य विषं चापि सुधायते ।
ब्रह्मचर्यप्रभावेण रिपुर्मित्रायते सदा ॥ १ ॥ इति ।

कर हुए हैं कथन किया है । (तं च इमं) इस महाव्रत का स्वरूप तीन गाथाओं से कहते हैं—

(पंचमहव्वयसुव्वयमूलं) यह ब्रह्मचर्य महाव्रतरूप सुव्रतों का मूलकारण है, (समणं) चित्तसमाधि का जनक है, (अणाइलसाहुसुचिण्णं) निर्मल चारित्रधारी साधुओं द्वारा अच्छी तरह आराधित किया हुआ है (वेरविरामणपज्जवसाणं) वैरविरोध का यह अंत करके परम प्रीती का जनक होता है । कहा भी है—

" सप्पो हरायए तस्स, विसं चावि सुहायए ।
बंभचेरप्पभावेणं, रिऊ मित्तायए सया ॥ १ ॥

કથન કર્યું છે. "तंच इम" આ મહા વ્રતનું સ્વરૂપ ત્રણ ગાથાઓ દ્વારા કહે છે.

" पंचमहव्वयसुव्वयमूलं " આ બ્રહ્મચર્ય મહાવ્રત પ્રાણાતિપાત વિરમણ આદિ પાંચ મહાવ્રતરૂપ સુવ્રતોનું મૂળકારણ છે " समणं " ચિત્ત સમાધિનું જનક છે, " अणाइल साहु सुचिण्णं " નિર્મળ ચરિત્રધારી સાધુઓ દ્વારા સારી રીતે અરાધિત થયેલ છે, " वेरविरामणपज्जवसाणं " વેર વિરોધનો અન્ત લાવીને તે પરમ પ્રીતિનું જનક થાય છે. કહ્યું પણ છે-

" सप्पो हारायए तस्स, विसं चावि सुहायए।
बंभचेरप्पभावेणं, रिऊ मित्तायए सया ॥ १ ॥

तथा—' सव्वसमुद्दमहोदहितित्थं ' सर्वसमुद्रमहोदधितीर्थम्-सर्वे च ते समुद्राः सर्व समुद्रास्तेषु महान उदधिः=स्वयम्भूरमण समुद्रस्तत्तुल्य विशालत्वात्संसारोऽपि महोदधिस्तस्य तीर्थमिव=पारगमनाय नौकेव यत्तत्तथाऽस्ति ॥ १ ॥

' तित्थगरेहिं ' इत्यादि–' तित्थगरेहिं ' तीर्थकरैः=जिनैः ' सुदेसियमग्गं ' सुदेशितमार्गम्–सुदेशितः=सुदर्शितः मार्गः=गुप्त्यादि तत्पालनोपायो यस्मिंस्तत्तथा, तथा–' नरगतिरिच्छविवज्जियमग्गं ' नरकतिर्यग्विवर्जितमार्गं–नरकस्य=नरकगतेः, तिरश्चः=तिर्यग्गतेश्च विवर्जितः=प्रतिरोधितो मार्गो गतिर्येन तादृशम्। तथा–' सव्वपवित्तसुनिम्मियसारं ' सर्वपवित्रसुनिर्मितसारं=सर्वपवित्राणि=सर्वाणि पावनानि सुनिर्मितानि=सुविहितानि साराणि=प्रधानानि येन तत्तथा, सकलव्रत-

---

सर्प उसके लिये हार जैसा बन जाता है और विष भी सुसाधु जैसा हो जाता है–जो नौ कोटि से शुद्ध ब्रह्मचर्य व्रत का पालक होता है। यह ब्रह्मचर्य का ही प्रभाव है जो शत्रु भी मित्र बन जाता है।

(सव्वसमुद्दमहोदहितित्थं) समस्त समुद्रों में अंतिम स्वयंभूरमणसमुद्र एक बहुत विशाल समुद्र है–इसके जैसे विशाल होने से संसार भी एक महोदधि जैसा है, उससे पार होने के लिये यह ब्रह्मचर्य एक नौका के समान है ॥ १ ॥ (तित्थगरेहिं सुदेसियमग्गं) तीर्थंकर भगवंतो ने इसके पालने का गुप्ति आदि रूप उपाय कहा है। (नरगतिरिच्छविवज्जियमग्गं) इसके प्रभाव से नरकगति और तिर्यञ्चगति का मार्ग रुक जाता है (सव्वपवित्तसुनिम्मियसारं) तथा

જે નવ પ્રકારે શુદ્ધ બ્રહ્મચર્ય વ્રતનો આરાધક હોય છે તેને માટે સાપ હાર જેવો બની જાય છે અને વિષ પણ અમૃત જેવું થઈ જાય છે. બ્રહ્મચર્યનો જ આ પ્રભાવ છે કે શત્રુ પણ મિત્ર બની જાય છે, " सव्वसमुद्दमहोदहितित्थ " સઘળાં સમુદ્રોમાં અંતિમ સ્વયંભૂરમણ સમુદ્ર એક ઘણો વિશાળ સમુદ્ર છે–તેના જેવો વિશાળ હોવાથી સંસાર પણ એક મહાસાગર જેવો છે, તેને પાર જવાને માટે આ બ્રહ્મચર્ય એ એક નૌકા જેવું છે ॥ ૧ ॥ " तित्थगरेहिं सुदेसियमग्गं " તીર્થંકર ભગવાનોએ તેના પાલન માટે ગુપ્તિ આદિ ઉપાય બતાવ્યા છે. " नरगतिरिच्छविवज्जियमग्गं " તેના પ્રભાવથી નરકગતિ અને તિર્યંચ ગતિનો માર્ગ અટકી જાય છે. " सव्वपवित्त सुनिम्मियसारं " અને તેનો જ પ્રભાવ સૌને પવિત્ર અને સારભૂત બનાવી દે છે, એટલે કે આ વ્રત સઘળા વ્રતોને પવિત્ર દૃઢ કરનારૂં છે " सिद्धविमाणअवंगुयदारं " તથા મોક્ષ ગતિનું અને અનુત્તર વિમાનોનું દ્વાર તેનાથી ઉઘડી જાય

ब्रह्मचारिणां किं किमनाचरणीयम् ? किं किं चाचरणीयम् ? इति दर्शयति-'इमं च' इत्यादि ।

मूलम्-इमं च रइरागदोसमोहपवड्ढणकरं किं मज्झप्पमाय दोसपासत्थसीलकरणं अब्भंगणाणि य तेल्लमज्जणाणि य अभिक्खणं कक्खसीसकरचरणवयणधोवणसंवाहणगायकम्मपरिमद्दणाणुलेवणचुण्णवासधूवणसरीरपरिमंडणबाउसिय हसियभणिय-नट्ट-गीय-वाइयनडनट्टग-जल्लमल्ल-पेच्छणवेलंबगजाणिय सिंगारागाणि अण्णाणि य एवमाइयाणि तवसंजमबंभचेरघाओवघाइयाइं अणुचरमाणेणं बंभचेरं वज्जेयव्वाइं सव्वकालं। भावेयव्वो भवइ अंतरप्पा इमेहिं तवनियमसीलजोगेहिं णिच्चकालं, किं ते, अण्हाणक अदंतधोवणसेयमल्लधारणमूणवयकेसलोयखमदमअचेलगखुप्पिवासलाघवसीतोसिणकट्ठसेज्जाभूमिनिसेज्जपरघरप्पवेसलद्धावलद्धमाणावमाणनिंदण-दंसमसकफासनियमतवगुणविणयमाइएहिं जहा से थिरतरगं होइ बंभचेरं॥सू.४॥

टीका—'इमं च' इत्यादि । 'इमं च' इदं च वक्ष्यमाणम्-अवसन्नपार्श्वस्थादीनामाचरणीयमाचारजातम्, 'रइरागदोसमोहपवड्ढणकरं' रतिरागद्वेषमो-

---

प्रकार मूल के विना किसी भी वस्तु की स्थिरता नहीं होती है-उसी प्रकार इस एक व्रत के अभाव में किसी भी व्रत की किसी भी सद्गुण की स्थिरता और शोभा नहीं होती है। इत्यादि रूप से इस सूत्र में इसकी महत्ता का प्रदर्शन किया गया है ॥ सू० ३ ॥

अब सूत्रकार ब्रह्मचारी को किस किस बात का आचरण करना

સ્થિરતા સંભવી શકતી નથી, એ જ રીતે આ એક વ્રતનો અભાવ હોય તો બીજા કોઈ વ્રત કે સદ્ગુણની સ્થિરતા અને શોભા સંભવતી નથી. ઇત્યાદિ રીતે આ સૂત્રમાં બ્રહ્મચર્ય વ્રતનું મહત્ત્વ બતાવવામાં આવ્યું છે ॥ સૂ ૩ ॥

હવે બ્રહ્મચારીએ કેવા પ્રકારનું આચરણ કરવું જોઈએ અને કેવા

हप्रवर्द्धनकरं, तत्र-रतिः=विषयानुरागः, रागः=स्वजनेषु स्नेहः, द्वेषः=शत्रुभावः, मोहः=अज्ञानम्, एषां यत्प्रवर्द्धनं=प्रवृद्धिस्तस्य करं=कारकम्, पुनः 'किंमज्झ-पमायदोस-पासत्थसील-करण' किंमध्यप्रमाददोषपार्श्वस्थशीलकरणम्-तत्र-किंमध्यं=किं=कुत्सितं मध्ये यस्य तत्तथोक्तम्-असारमित्यर्थः, तथा-प्रमाददोषः, प्रमादोऽसावधानता, सएव दोषः=प्रमाददोषः, पार्श्वस्थशील=पार्श्वस्थानां=ज्ञानाचारादि बहिर्वर्तिनां साध्वाभासानां शीलम्=अनुष्ठानं निष्कारणनित्यपिण्डपरिभोगादि, एतेषां करणम्=कारकं भवति। सम्प्रति तदेव विशदयति-' अब्भंगणाणि य' अभ्यञ्जनानि च=घृतनवनीतादिना शरीरमर्दनानि ' तेल्लमज्जणाणि य' तैलमज्जनानि च=तैलाभ्यङ्गपूर्वकस्नानानि, तथा-तथा-'अभिक्खणं' अभीक्ष्णम्-

---

चाहिये और किस किस का नहीं ? इस बात को प्रदर्शित करते हैं—' इमं च इत्यादि०।

टीकार्थ—(इमं च) यह वक्ष्यमाण अवसन्न, पार्श्वस्थ, कुशील, संसक्त, यथाछंद साधुओं का आचार (रइरागदोसमोहपवड्ढणकरं) रति-विषयों में अनुराग, राग-स्वजनों में स्नेह, द्वेष-शत्रुता, और मोह-अज्ञान, इनकी वृद्धिकरने वाला होता है और (किंमज्झ-पमाय-दोस-पासत्थ-सील-करणं) किं मध्य-असार प्रमाददोषअसावधानता-रूप दोष का, पार्श्वस्थ शील-ज्ञानाचारादि से वहिर्भूत शिथिलाचारियों के अनुष्टान का-निष्कारण नित्य पिण्डपरिभोगादिरूप स्वभाव का, जनक होता है। अब सूत्रकार इसी पार्श्वस्थ आदि के आचार को विशदरूप से समझाते हैं-(अब्भंगणाणि य) अभ्यंगन-घृत नवनीत आदिसे शरीर का मर्दन करना (तेल्लमज्जणाणिय) तेलका मालीस करना तथा

પ્રકારનું ન કરવું જોઈએ તે સૂત્રકાર બતાવે છે-' इमं च " ઇત્યાદિ-

ટીકાર્થ-" इमं च " આ પ્રમાણે જોવામાં આવતા અવસન્ન, પાર્શ્વસ્થ, કુશીલ, સંસક્ત, સ્વછંદી સાધુઓના આચાર " रइरागदोसमोहपवड्ढणकरं " રતિ-વિષયોમાં આસક્તિ, રાગ-સ્વજનો પર સ્નેહ, દ્વેષ-શત્રુતા અને મોહ-અજ્ઞાન, એ સૌની વૃદ્ધિ કરનાર હોય છે. અને " किंमज्झ-पमायदोस-पासत्थ-सीलकरणं " કિ મધ્ય-અસાર, પ્રમાદદોષ,-અસાવધાનતારૂપ દોષનું પાર્શ્વસ્થશીલ-જ્ઞાનાચારાદિથી બાહ્ય શિથિલતા ચારીઓનાં અનુષ્ઠાનનું, નિષ્કારણ નિત્ય પરિભોગાદિ રૂપ સ્વભાવનું જનક થાય છે. હવે સૂત્રકાર આ પાર્શ્વસ્થ આદિના આચારને વિસ્તારપૂર્વક સમજાવે છે-" अब्भंगणाणिय " અભ્યંજન-ઘી, માખણ આદિથી શરીરને માલીસ કરવું, " तेल्लमज्जणाणिय " તેલનું માલીસ કરીને

=वारंवारम् , ' कक्खसीसकरचरणवयणधोवणसंवाहणगायकम्मपरिमद्दणाणुलेवण-चुण्णवासधूवणसरीरपरिमंडणवाउसिय-हसिय-भणिय-नट्टगीयवाइयनड-नट्टगजल्लमल्लपेच्छणवेलंबगं ' कक्षाशीर्षकरचरणवदनधावनसंवाहनगात्रकर्मपरिमर्दनानुलेपनचूर्णवासधूपनशरीरपरिमण्डनवाकुशितहसितभणितनाट्यगीतवादितनटनर्त्तकजल्लमल्लप्रेक्षणविडम्बक तत्र-कक्षा=बाहुद्वयमूलाधोवर्त्तिस्थानम् , शीर्षं=शिरः, करचरणं=प्रसिद्धम् , वदन=मुखं, तेषां यद् धावनं=प्रक्षालनं, संबाधनं=हस्ताभ्यां पादपीडनं गात्रकर्म=शरीरपरिकर्म=संमर्दनादि कर्मपरिमर्दनं=सर्वतः शरीरमर्दनम् , तथा-अनुलेपनचूर्णवासधूपनशरीरपरिमण्डनम्, तत्र अनुलेपनम्=शरीरे चन्दनानुलेपनम्,चूर्णवासः =सुगन्धिद्रव्यचूर्णम् , धूपनम्=अगुरुधूपादिकरणम् , शरीरपरिमण्डनम्=वस्त्रादिभिः शरीरशृङ्गारकरणम् , तथा-वाकुशिकं नखवस्त्रकेशसमारचनम्=वकुशं=कर्बुरचारित्रं तदेवप्रयोजनं यस्य तद् वाकुशिकं शृङ्गारप्रयोजनकं नखकेशवस्त्रसमारचनादिकं, हसित=हासः, भणितं-स्त्रीणां विकृतभणनम् , नाट्य=नटकर्म, गीत=गानम् , वादि-

(अभिक्खणं कक्खसीस कर-चरण-वयण-धोवण-संवाहण-गायकम्मपरिमद्दणाणुलेवेण चुण्णवासधूवणसरीरपरिमंडणवाउसियहसियभणिय-नट्ट-गीय-वाइय-नड-नट्टग-जल्ल-मल्ल-पेच्छण-वेलंबगं) बारंबार कांख-मस्तक-हाथ-पैर और मुंहका धोना, दोनों हाथोंसे शरीरका दाबना, गात्रकर्म-शरीर की सफाई पर विशेष ध्यान रखना परिमर्दक-दूसरों से शरीर को रातदिन दबवाना,अनुलेपन-शरीर पर चंदन का बार २ लेप करना,चूर्णवास-सुगन्धित द्रव्यों के चूर्ण से,धूपन-अगुरु आदि के धूव से शरीर को अलंकृत करना, तथा वाकुशिक-शृंगार के प्रयोजन को लेकर नख, वस्त्र और-केशों को समारना तथा हसित-हासका हँसी मजाक-मस्करी आदि का करना, भणित-स्त्रियों के जैसा गाली आदि भाण्ड वचनों का बोलना

સ્નાન કરવું, તથા "अभिक्खण कक्खसीस, कर, चरणनयण-धोवण-संवाहण-गायकम्मपरिमद्दणाणुलेवण-चुण्ग-वासधूवण-सरीर-परिमंडणवाउसियहसिय-भणिय-नट्ट-गीय-वाइय-नड-नट्टग-जल्ल-मल्ल-पेच्छण-वेलंबग" વારંવાર બગલ, માથું, હાથ-પગ અને મોને ધોવું, બન્ને હાથથી શરીરને દબાવવું, ગાત્રકર્મ-શરીરની સ્વચ્છતા પર વધારે ધ્યાન આપવું, પરિમર્દન-બીજા પાસે શરીરને રાતદિવસ દબાવવું, અનુલેપન-વારવાર શરીરે ચંદનનો લેપ કરવો, ચૂર્ણવાસ-સુગંધિત દ્રવ્યોના ચૂર્ણથી, ધૂપન અગરૂ આદિના ધૂપથી શરીરને અલંકૃત કરવું, તથા વાકુશિક-શૃંગારને માટે નખ, વસ્ત્ર અને કેશને સમારવા તથા હસિત-ઠઠ્ઠા મશ્કરી આદિ કરવું, ભણિત-સ્ત્રીઓના જેવી ગાળો આદિ અશિષ્ટ વચનો

तम्=पटहादिवादनम् तथा-नटाः=नाटयितारः, नर्तकाः=नृत्यकारिणः, जल्लाः= चर्ममयरज्जूपरिनृत्यकारकाः, मल्लाः=मल्लयुद्धकारिणः, तेषां प्रेक्षणम्=अवलोकनम् तथा-विडम्बकाः=विदूषकाः, एषामितरेतरयोगद्वन्द्वः, वर्जयितव्या इति योगः। तथा-'जाणि य सिंगारागाराणि य' यानि च श्रृङ्गारागाणि च=श्रृङ्गाराधारभूतानि अङ्गचेष्टादीनि तानि तथा-'अण्णाणि य' अन्यानि च=एभ्यइतराणि च 'एवमाइयाणि' एवमादिकानि=एवं प्रकाराणि यानि 'तवसंजमबंभचेरघाओवघाइयाइं' तपः संयमब्रह्मचर्यघातोपघातिकानि, तत्र तपः संयमब्रह्मचर्याणां घातो देशतः, उपघातःसर्वतो जायते यद्वशात् तानि तथोक्तानि 'बंभचेरं' ब्रह्मचर्यम्, 'अणुचरमाणेणं' अनुचरता=पालयता 'सव्वकालं' सर्वकालं-सर्वदा 'वज्जेयव्वाइं' वर्जितव्यानि=त्याज्यानिभवन्ति, वर्जितव्यानीत्यस्यैकवचनविपरिणामेनान्यत्राऽप्यन्वयो बोध्यः। तथा-'भावेयव्वो य' भावितव्यश्च भवति 'अंतरप्पा' अन्तरात्मा=जीवः। कैर्भावितव्यो भवति? इत्याह-'इमेहिं' एभिः 'तवणियमसील-

नाट्य-नाटक का देखना, गीत-गान का, वादित्त-पटह आदि बजते हुए बाजों का सुनना, नट-नटों का, नर्तक-नृत्यकारी जनों का जल्ल-जल्लों का-चर्ममयरज्जु के ऊपर नाचने वालों का, मल्ल-मल्लों के-बाहु-युद्ध का प्रेक्षण-रूचिपूर्वक अवलोकन करना, तथा-विडम्बकों-विदूषकों को देखना यह सब वर्जना चाहिये तथा 'जाणिय' जो भी (सिंगारागाराणि) श्रृंगार के आधारभूत ऐसे, तथा (एवमाइयाणि अण्णाणि य) इसी तरह के और भी जो (तव संजमबंभचेरघाओवघाइयाइं) तप, संयम एवं ब्रह्मचर्य में एक देश से दूषण लगाने वाले हो अथवा सर्व-देश से उनका घात करने वाले हों, इन सब को (बंभचेर अणुचरमाणेणं) जो इस ब्रह्मचर्य महाव्रत के पालन करने वाले संयमी जन हैं उन्हें (सव्वकालं वज्जेयव्वाइं) सदा के लिये छोड़ देना चाहिये।

બોલવા, નાટકો જોવા, ગીત તથા પટહ આદિ વાજિંત્રોનો અવાજ સાંભળવો, નટોના, નૃત્ય કરનારના, ચર્મમય દોરડાઓ પર નાચનારાઓના, મલ્લોના દ્વંદ્વયુદ્ધનું નિરીક્ષણ કરવાનું, તથા વિદૂષકોને જોવાનું એ બધાનો ત્યાગ કરવો જોઈએ. તથા "जाणिय" જે કોઈ "सिंगारागाराणि" શ્રૃંગારના સાધનરૂપ એવાં તથા "एवमाइयाणि अण्णाणिय" એવાં પ્રકારનું બીજુ પણ જે કંઈ "तवसंजमबंभचेरघाओवघाइयाइं" તપ સંયમ અને બ્રહ્મચર્યમાં એક દેશથી દૂષણ લગાડનાર હોય અથવા સર્વ દેશની તેમનો ઘાત કરનાર હોય, તે બધાનો "बंभचेरअणुचरमाणेणं" જે આ બ્રહ્મચર્ય મહાવ્રતનું પાલન કરનાર સંયમી જનો છે તેમણે "सव्वकालं वज्जेयव्वाइं" સદાને માટે ત્યાગ કરવો

जोगेहिं' तपोनियमशीलयोगैः=तपः प्रभृतिव्यापारैः 'निच्चकालं' नित्यकालं= सर्वदाऽन्तरात्मा भावितव्यः। 'किंते' के ते=कथम्भूतास्ते तपोनियमशीलयोगाः? इत्याह–'अण्हाणग अदंतधोवणसेयमलजल्लधारणमूणवयकेसलोयखमदम-अचेलग खुप्पिवासलाघवसीतोसिणकट्ठ–सेज्जाभूमिनिसेज्जापरघरपवेसलद्धावलद्धमाणावमाणनिंदणदंसमसगफासनियमतवगुणविणयमाइएहिं' अस्नानकादन्तधावनस्वेदमलजल्लधारणमौनव्रतकेशलोच क्षमादमाचेलकक्षुत्पिपासालाघवशीतोष्णकाष्ठशय्याभूमिनिषद्यापरगृहप्रवेशलब्धापलब्धमानापमाननिन्दनदंशमशकस्पर्शनियमतपोगुणविनयादिकैः–तत्र–अस्नानकं=स्नानवर्जनम्, अदन्तधावनं=दन्तधावनवर्जनम्, तथा–स्वेदमलजल्लधारणं, तत्र–स्वेदः=प्रस्वेदः, मलं=स्वेदरजः संसर्गोत्समुत्पन्नं घनीभूतम्

तथा (इमेहिं तवणियमसीलजोगेहिं) इन तप, नियम और शील-सदाचार, इन सबसे उस ब्रह्मचर्य महाव्रतधारी को (अंतरप्पा) अपनी अन्तरात्मा (निच्चकालं) सर्वदा (भावियव्वो भवइ) भावित करना चाहिये। (किं ते) वे तप नियम-शील योग कौन हैं? उन्हें दिखलाते हैं-, अण्हाणग–अदंतधोवणसेय–मल्ल–जल्ल–धारण–मूणवय–केसलोय–खमदम–अचेलग–खुप्पिवासलाधवसीतोसिणकट्ठ सेज्जा भूमिनिसेज्ज-परघरप्पवेस–लद्धावलद्ध–माणोवमाण–निंदणदंसमसगफासनियमतव-गुणविणयमाइएहिं) उस साधुके तप, नियम और शील इस प्रकार के होना चाहिये–वह साधु यावज्जीव स्नान न करे, अर्थात् उस महाव्रती को जीवन भर तक स्नान करने का त्याग कर देना चाहिये, कभी भी दतौन नहीं करना चाहिये, शरीर में प्रस्वेद–पसीना आता हो, तो उसे वायु आदि करके नहीं सुखाना चाहिये। इस पसीने में आकर

જોઈએ તથા 'इमेहिं तवणियम सीलजोगेहिं એ તપ, નિયમ, અને શીલ-સદાચાર એ બધાથી તે બ્રહ્મચર્ય મહાવ્રતધારીએ "अंतरप्पा" પોતાનો અંતરાત્મા "निच्चकालं" સદા "भावियव्वो भवइ" ભાવિત કરવો જોઈએ. "किं ते" તે તપ નિયમ-શીલયોગ કેવો હોય છે તે બતાવે છે–" अण्णाणग–अदंतधोवण–सेय–मल्ल–जल्ल–धारण–मूणवय–केसलोय–खमदम–अचेलग – खुप्पिवास – लाघव सीतोसिणकट्ठसेज्जाभूमि–निसेज्ज –परघरप्पवेसलद्धावलद्धामाणावमाण निंदणदसमसगफासनियमतवगुणविणयमाइएहिं" તે સાધનનું તપ, નિયમ અને શીલ આ પ્રકારનું હોવું જોઈએ–તે સાધુ જીવન પર્યન્ત સ્નાન ન કરે એટલે કે આ મહાવ્રતધારીઓ જીવે ત્યા સુધી સ્નાન કરવાનો ત્યાગ કરવો જોઇએ, કદી પણ દાતણ કરવુ જોઇએ નહીં, શરીરે પરસેવો વળતો હોય તો પવન નાખીને તેને સૂકવવો જોઈએ નહી, તે પરસેવામાં રજકણો ચોટી ગયાં હોય તો તેને શરીર પરથી દૂર કરવાં જોઈએ નહી. કાન, નાક આદિ ઇંદ્રિયોમા

जल्लं=कर्णनासिकादि समुत्थं मलम्, तेषां धारणम्, तथा-मौनव्रतम्, केशलोचः, एतौ प्रसिद्धौ, क्षमा=क्रोधनिग्रहः, दमः=इन्द्रियनिग्रहः, अचेलकम्=धर्मोपकरणातिरिक्तवस्त्राभावः, क्षुत्पिपासे प्रसिद्धे, लाघवम्=अल्पोपाधित्वम्, शीतोष्णे प्रसिद्धे, काष्ठशय्या=काष्ठफलकशयनम्, भूमिनिषद्या=भूमावुपवेशनम्, तथा-परगृहप्रवेशलब्धापलब्धमानापमाननिन्दनानि, भिक्षार्थं परगृहप्रवेशः, तत्रापि लब्धापलब्धौ=लाभालाभौ, मानः=सम्मानः, अपमानः=अवमानना, निन्दनं=कुत्सितवचनं च, तथा-'दंशमशकस्पर्शः=दंशमशकदशनम्, तथा-नियमः=द्रव्याद्यभिग्रहः,

---

यदि रजःकण संसक्त हो गये हों तो उन्हें शरीर से नहीं छुडाना चाहिये। कर्ण, नासिका आदि इन्द्रियों में लगे हुए मैल को भी दूर नहीं करना चाहिये। मौनव्रत रखना चाहिये तथा अपने केशों का लौंच करना चाहिये। क्षमा-क्रोध का निग्रह करना दम-इन्द्रियों का निग्रह करना चाहिये। अचेलक-धर्मोपकरणों के सिवाय अतिरिक्त वस्त्र नहीं रखना चाहिये क्षुधा और पिपासा कि बाधा को सहना चाहिये। अल्प उपधि रखना चाहिये, शीत और उष्ण जन्य परीषह को सहन करना चाहिये। काष्ठ के फलक पर शयन करना चाहिये। जमीन पर बैठना चाहिये। भिक्षा के निमित्त पर घर जाना चाहिये। भिक्षा का लाभ हो अथवा न हो दोनो अवस्थाओं में समताभाव रखना चाहिये। मान और अपमान में समवृत्ति रहना चाहिये। कोई अपनी निंदा करता हो तो उसमें अक्षमता नही आनी चाहिये। दंशमशकों को दशन-रूपबाधा से उद्विग्न नहीं होना चाहिये। द्रव्यादि का अभिग्रह रूप नियम का, अनशन आदि तपस्याओं का मूलगुणों का और अभ्युत्था-

---

લાગેલા મેલને ઉખેડવો ન જોઇએ મૌનવ્રત રાખવું જોઇએ તથા પોતાના કેશનો લોચ કરવો જોઇએ. ક્ષમા-ક્રોધનો નિગ્રહ કરવો જોઈએ, દમ-ઈન્દ્રિયોનો નિગ્રહ કરવો જોઇએ. અચેલક-ધર્મનાં ઉપકરણો સિવાય વધારાનાં વસ્ત્રાદિ રાખવાં જોઈએ નહીં, ભૂખ અને તરસની મુશ્કેલી સહન કરવી જોઈએ, થોડાં જ ઉપધિ રાખવાં જોઇએ, શીત અને ઉષ્ણતા જન્ય પરિષહો સહન કરવાં જોઇએ. લાકડાની પાટ પર સૂવુ જોઈએ, જમીન પર બેસવું જોઈએ. ભિક્ષાને નિમિત્તે પર ઘેર જવું જોઈએ ભિક્ષાનો લાભ મળે કે ન મળે છતાં પણ આ બન્ને પરિસ્થતિમાં સમભાવ રાખવો જોઇએ. માન અને અપમાનમાં સમવૃત્તિથી રહેવું જોઈએ. કોઇ પોતાની નિંદા કરતું હોય તો તેથી અક્ષમતા થવી જોઇએ નહીં ડાંસ, મચ્છરના ડસરૂપ મુશ્કેલીથી ઉદ્વિગ્ન થવું જોઈએ નહીં. દ્રવ્યાદિના અભિગ્રહ રૂપ નિયમનું અનશન આદિ તપસ્યાઓના મૂળ

तपः=अनशनादि गुणाः=मूलगुणादयः, विनयः=अभ्युत्थानादिः, एषां द्वन्द्वः, एतान्यादौ येषां तैस्तथोक्तैर्योगैरयमात्मा भावितव्यः ।

अस्नानाऽदन्तधावनादीनां सहनेन नियमादीनामाचरणेन च सहात्मा संयोजितव्य इत्यर्थः । किमर्थमित्याह–'जहा' यथा–येन कृत्वा ' बंभचेरं ' ब्रह्मचर्यं ' थिरतरगं ' स्थिरतरकं=सुस्थिरं 'होइ' भवति ॥ सू० ४ ॥

नादिरूप विनय का पालन करना चाहिये । ये सब बाते साधु के आचार के अन्तर्हित रहती हैं । सो वह इन सब बातों से ओतप्रोत हुए तप, नियम और शील से अपनी आत्मा को भावित करता रहे अर्थात् अस्नान, अदन्तधावन आदि जो साधू के मूलगुण हैं उनका वह शास्त्रोक्त विधि के अनुसार पालन करता हुआ और नियमादिकों का आचरण करता हुआ अपनी आत्मा को विशुद्ध करता रहे कि (जहा से बंभचेरं थिरतरगं होइ) जिससे उसका ब्रह्मचर्य सुस्थिर बना रहे।

भावार्थ—ब्रह्मचर्य महाव्रत धारी सकल संयमी जन अपने आचार विचार को इस प्रकार का स्वच्छ और निर्मल बनावे कि जिससे उनमें अवसन्न पार्श्वस्थ कुशील आदिपना लेशमात्र भी न आने पावे । साधु पद प्राप्त करके भी विषयों में अनुराग बना रखना स्वजनों में स्नेह रखना तथा द्वेषी के प्रति द्वेषभावना रखना, आदि परिणति अवसन्न पार्श्वस्थ साधुओं की है । शारीरिक संस्कार में ही विशेष ध्यान रखना, गीत नृत्य, वादित्र आदि में चित्त की प्रवृत्ति करना, तप संयम आदि की आराधना सिर्फ लक्ष्य न होना, ये सब ब्रह्मचर्य

ગુણોનું અને અભ્યુત્થાનાદિરૂપ વિનયનુ પાલન કરવુ જોઇએ આ બધી વાતો સાધુના આચારમા આવી જાય છે તો તે એ બધી વાતોમા ઓતપ્રોત થઇને તપ, નિયમ અને શીલથી પોતાના આત્માને ભાવિત કરતો રહે એટલે કે અસ્નાન, અદન્તધાવન આદિ જે સાધુના મૂળગુણ છે તેમનુ શાસ્ત્રોક્ત વિધિ પ્રમાણે પાલન કરીને નિયમાદિનુ આચરણ કરીને તે પોતાના આત્માને વિશુદ્ધ કરતો રહે " जहा से बंभचेरं थिरतरगं होइ " જેથી તેનુ બ્રહ્મચર્ય સુસ્થિર બનતું રહે.

ભાવાર્થ—બ્રહ્મચર્ય મહાવ્રત ધારી સકલ સયમી જન પોતાના આચાર વિચારને એવા સ્વચ્છ અને નિર્મળ બનાવે કે જેથી તેમનામાં અવસન્ન પાર્શ્વસ્થ આદિ સાધુઓના આચાર વિચારની ઝલક લેશમાત્ર પણ ન આવી શકે. સાધુનુ પદ પ્રાપ્ત કરીને પણ વિષયોમા અનુરાગ ચાલુ રાખવો, સ્વજનો પ્રત્યે સ્નેહ અને દુશ્મનો પ્રત્યે દ્વેષ રાખવો આદિ પરિણતિ અવસન્ન પાર્શ્વસ્થ સાધુઓની છે શારીરિક સસ્કારોનુ જ વધારે ધ્યાન રાખવું, ગીત, નૃત્ય, વાજિંત્ર આદિમા ચિત્તને રોકવું, તપ, સંયમ આદિની આરાધનાને જ લક્ષ્ય

मूलम्—इमं च अबंभचेरवेरमणपरिरक्खणट्टयाए पावयणं भगवया सुकहियं अत्तहियं पेच्चाभावियं आगमेसिभद्दं सुद्धं नेयाउयं अकुडिलं अणुत्तरं सव्वदुक्खपावाणं विउसमणं ॥सू०५॥

टीका—'इमं च' इत्यादि—

'इमं च' इदं च 'पावयणं' प्रवचनम् 'अबंभचेरवेरमणपरिरक्खणट्ठयाए' अब्रह्मचर्यविरमणपरिरक्षणार्थं=चतुर्थमहाव्रतरक्षणनिमित्तं भगवता सुकथितम् आत्महितं, आत्महितकारकम्, आगमिष्यद् भद्रं शुद्धं नैयायिकम् अकुटिलम् अनुत्तरं सर्वदुःखपापानां व्युपशमनम्। एषामर्थः पूर्वं तृतीयसंवरद्वारे प्रोक्तः ॥सू० ५॥

के घातक हैं, अतः साधु को अपने मूल गुणों की रक्षा करते हुए तप संयम एवं ब्रह्मचर्य से अपनी आतमा को भावित करते रहना चाहिये। इस तरह से उसका ब्रह्मचर्य व्रत दृढतर हो जाता है'॥ सू० ४ ॥

फिर कहते हैं—'इमं च' इत्यादि०।

टीकार्थ—(इमं च पावयणं) यह प्रवचन (अबंभचेर वेरमणपरिरक्खणट्ठयाए भगवया सुकहियं) अब्रह्मचर्य विरमण की परिरक्षा के निमित्त भगवान् ने कहा है। (अत्तहियं) यह आत्मा का हितकारक है, (पेच्चाभावियं) परलोक में भी शुभफल का दाता है। (आगमेसि-भद्दं) इसी कारण यह भविष्यत् काल में कल्याणप्रद कहा गया है। (सुद्धं) निर्दोष होने से यह शुद्ध है। (नेयाउयं) वीतराग, सर्वज्ञ और हितोपदेशक प्रभु द्वारा भाषित होने से न्यायसंपन्न है। (अकुडिलं)

ન ગણવું, એ બધું બ્રહ્મચર્ય વ્રતનુ ઘાતક થાય છે તો સાધુએ પોતાના મૂળ ગુણોની રક્ષા કરતાં કરતા તપ, સયમ અને બ્રહ્મચર્યવ્રતથી આત્માને ભાવિત કરતા રહેવુ જોઈએ આ પ્રમાણે કરવાથી તેનું બ્રહ્મચર્યવ્રત વધારે દૃઢ થતું જાય છે ॥સૂ ૪॥

વળી સૂત્રકાર કહે છે— "इमं च" ઈત્યાદિ

ટીકાર્થ—"इम च पावयणं" આ પ્રવચન "अबभचेरविरमणपरिरक्खणट्ठयाए भगवया सुकहियं" આ બ્રહ્મચર્ય વિરમણની પરિરક્ષાને નિમિત્તે ભગવાને કહેલ છે "अत्तहियं" તે આત્માને માટે હિતકારક છે, "पेच्चाभावियं" પરલોકમાં પણ શુભ ફળ દેનારું છે "आगमेसिभद्दं" તે કારણે તે ભવિષ્યકાળમાં કલ્યાણ દાયક બતાવવમા આવ્યું છે. "सुद्ध" નિર્દોષ હોવાથી તે શુદ્ધ છે. "नेयाउयं" વીતરાગ, સર્વજ્ઞ અને હિતોપદેશક પ્રભુ દ્વારા કથિત હોવાથી ન્યાય યુક્ત છે, "अकुडिल" ઋજુભાવનુ જનક હોવાથી અકુટિલ છે,

अथ चतुर्थव्रतस्य पञ्चभावनाः प्रतिपादयन् तत्र पूर्वमसंसक्तवासवसति नाम्नीं प्रथमां भावनामाह—'एयस्स' इत्यादि—

मूलम्—एयस्स इमा पंचभावणा चउत्थवयस्स हुंति अबंभचेरवेरमणपरिरक्खणट्ठयाए । पढमं सयणासणघरदुवार अंगणआगासगवक्खसाला अहिलोयणपच्छवत्थुकपसाहण गण्हाणिकावगासा अवगासा जे य वेसियाणं अत्थंतिट्ठंति य जत्थ इत्थियाओ अभिक्खणं मोहदोसरइरागवड्ढणाओ कहिंति य कहाओ बहुविहाओ ते हु वज्जणिज्जा इत्थिसंसत्तसंकिलिट्ठा । अण्णे वि य एवमाई य अवगासा ते हु वज्जणिज्जा, जत्थ मणोविब्भमो वा भंगो वा भंसणा वा अट्टं रुद्दं च होज्जा झाणं तं तं च वज्जेज्जवज्जाभीरू अणायतणअंतपंतवासी । एवमसंसत्तवासवसहीसमिइजोगेण भाविओ भवइ अंतरप्पा आरयमणा विरयगामधम्मे जिइंदिए बंभचेरगुत्ते ॥ सू० ६ ॥

टीका—'एयस्स' एतस्य 'चउत्थवयस्स' चतुर्थव्रतस्य ब्रह्मचर्याभिधेयस्य

ऋजुभाव का जनक होने से अकुटिल है। (अणुत्तरं) सर्वश्रेष्ठ होनेसे अनुत्तर है। तथा (सव्वदुक्खपावाणं विउसमणं) समस्त दुःखोंके जनक ज्ञानावरणीय आदि अष्टविध कर्मों का यह उपशमकारक है ॥सू०५॥

अब सूत्रकार इस चतुर्थ महाव्रत की पांच भावनाओं को प्रतिपादन करने के अभिप्राय से सर्वप्रथम असंसक्तवासवसति नाम की पहिली भावना को प्रकट करते हैं—'एयस्स' इत्यादि०।

टीकार्थ—(एयस्स चउत्थवयस्स इमा पंच भावणा हुंति) इस

"अणुत्तरं" सर्व श्रेष्ठ होवाथी अनुत्तर छे, तथा 'सव्वदुक्खपावाणं विउसमणं' समस्त दुःखोना जनक ज्ञानावरणीय आदि आठ प्रकारनां कर्मोनुं तेउपशम करनार छे. सू ५

हवे सूत्रकार आ चोथा महा व्रतनी पांच भावनाओनु प्रतिपादन करवाने माटे सौथी पहेलां "असंसक्तवासवसति" नामनी पहेली भावनानुं स्पष्टीकरण करे छे— "एयस्स" इत्यादि—

टीकार्थ—"एयस्स चउत्थवयस्स इमा पंच भावणा हुंति" आ ब्रह्मचर्य

इमाः=वक्ष्यमाणाः पञ्चभावनाः, 'अबंभचेरवेरमणपरिरक्खणट्ठयाए' अब्रह्मचर्य-विरमणपरिरक्षणार्थं=चतुर्थव्रतरक्षणनिमित्तं, 'हुंति' भवन्ति। तत्र-'पढमं' प्रथमां=स्त्रीपशुपण्डकसंसक्ताश्रयवर्जनलक्षणां भावनामाह-'सयणासणघरदुवारअंगण आगासगवक्खसाला अहिलोयणपच्छवत्थुगपसाहणगण्हाणिकावगासा' शयनासन-गृहद्वाराङ्गनाकाशगवाक्षशालाऽभिलोकनपश्चाद् वास्तुकप्रसाधनकस्नानिकावकाशाः तत्र-शयनं=शय्या, आसनं-प्रसिद्धम्, गृह-गेहम्, द्वारम्=गृहद्वारम्, अङ्गणं= गृहाङ्गणम्, आकाशः=अनावृतं स्थानम्, गवाक्षो=वातायनम्, शालाः = भाण्ड-शालादयः, अभिलोकनम्=अभिलोक्यते दूरस्थितं वस्तु यदास्थाय तद् अभिलोक-नम्=उन्नतं स्थानम्, तथा-पश्चाद्-वास्तुकं=पृष्ठभागवर्त्तिगृहं, तथा-प्रसाधनकस्य मण्डनस्य स्नानिकायाः=स्नानक्रियायाश्च येऽवकाशाः=गृहाः, एषां द्वन्द्वः, एते स्त्रीसंसक्तेन संक्लिष्टा वर्जनीयाः। तथा-'जे य' ये च 'अवकासा' अवकाशा

ब्रह्मचर्य नामक चतुर्थव्रत की ये वक्ष्यमाण पांच भावनाएँ हैं। इनसे (अबंभचेरविरमणपरिरक्खणट्ठयाए) अब्रह्मचर्य विरमण रूप ब्रह्मचर्य-व्रत की अच्छी तरह से रक्षा होती है। (पढमं) इनमें स्त्री, पशु, पंडक से संसक्त वसति का वर्जन करने रूप प्रथम भावना है। वह इस प्रकार है—(सयणासणघरदुवारअंगणआगासगवक्खसाला अहि-लोयणपच्छवत्थुग) शयन-शय्या, आसन, गृह द्वार, आंगन, खुला, हुआ स्थान, झरोखा, शाला, अभिलोकन-वह स्थान कि जिसके सहारे से दूर की वस्तु देखी जा सके ऐसी ऊँची जगह पश्चाद् वास्तूक-पीछे के भाग में रहा हुआ घर, तथा (पसाहणग-ण्हाणीकावासा) मंडन घर और नहाने के घर, ये सब यदि स्त्रियों से संसक्त हों तो साधु का कर्त्तव्य है कि वह इनका परित्याग करे। तथा-(जे य अव-

---

નામના ચોથા વ્રતની આ પ્રમાણે પાંચ ભાવનાઓ છે. તેમનાથી "अबंभचेर विरमणपरिरक्खणट्ठयाए" આ બ્રહ્મચર્ય વિરમણ રૂપ બ્રહ્મચર્ય વ્રતની સારી રીતે રક્ષા થાય છે. "पढमं" તેમાં સ્ત્રી, પશુ, પંડકના સંસર્ગથી યુક્ત વસવાટનો ત્યાગ કરવા રૂપ પહેલી ભાવના છે. તે આ પ્રમાણે છે-"सयणा-सणघरदुवारअंगणआगासगवक्खसाला अहिलोयणपच्छवत्थुग" શયન--શય્યા, આસન, ગૃહ, દ્વાર, આંગણું, ખુલ્લી જગ્યા, ઝરુખો, શાલા, અભિલોકન-એવી ઉંચી જગ્યા કે જ્યાંથી દૂરની વસ્તુઓ દેખી શકાય, પશ્ચાદ્વાસ્તૂક-પાછળના ભાગમાં આવેલું ઘર, તથા "पसाहणग-ण्हाणिकावासा" મંડન ઘર અને નહાવાનાં ઘર, એ બધા સ્થાનો જો સ્ત્રીઓથી યુક્ત હોય તો તેમનો પરિ-ત્યાગ કરવો તે સાધુનું કર્તવ્ય છે. તથા "जे य अवगासा" જે સ્થાન

गृहाः=स्थानानीत्यर्थः, 'वेसियाणं' वेश्यानाम् 'अट्ठं' अर्थं=निमित्तं 'तिट्ठंति' तिष्ठन्ति=सन्ति, तथा—'जत्थ' यत्र 'इत्थियाओ' स्त्रियो हि 'अभिक्खणं' अभीक्ष्णं=मुहुर्मुहुः 'मोहदोसरइरागवड्ढणाओ' मोहदोषरतिरागवर्धनाः=मोहदोष-रइरागान् वर्द्धयन्ति यास्ताः=मोहादिवृद्धिकारिण्य इत्यर्थः, 'बहुविहाओ' बहु-विधाः-जातिकुलरूपनेपथ्यविषयाः 'कहाओ' कथाः 'कहिंति' कथयन्ति, 'ते खलु 'इत्थी संसत्तसंकिलिट्ठा' स्त्रीसंसक्तसंक्लिष्टाः = स्त्रीसंसर्गयुक्ताः गृहाः, 'वज्जणिज्जा' वर्जनीया भवन्ति। तथा-'अण्णे विय' अन्येऽपि च 'एवमाई' एवमादयः-एव प्रकारा येऽवकाशा भवन्ति, 'ते हु' ते खलु 'वज्जणिज्जा' वर्जनीया भवन्ति। किं बहुना-'जत्थ' यत्र यत्र-उत्तरत्र 'तं तं' इति वीप्सा-प्रयोगादत्रापि वीप्सा बोद्धव्या, ज्ञायते, 'मणो विब्भमो वा' मनो विभ्रमो वा =श्रृङ्गाररससमुत्पन्नं चित्तस्याऽस्थिरत्वम्, 'भंगो वा' ब्रह्मचर्यस्य सर्वभङ्गः,

---

गासा) जो स्थान (वेसियाणं अट्ठं-तिट्ठंति) वेश्याओं के निमित्त बने हुए हों तथा (जत्थ) जिन स्थानों पर बैठ कर (इत्थियाओ) स्त्रियां (अभिक्खणं) वार वार (मोहदोसरइराग वड्ढणाओ) मोह दोष रति और रागको बढानेवाली (बहुविहाओ) विविध प्रकारकी (कहाओ) कथाओंको (कहेंति) कहती हों, (ते हु) वे स्थान (इत्थी संसक्त संकिलिट्ठा) स्त्रीयोंसे संसक्त होनेके कारण साधुको उनका परित्याग कर देना चाहिये। तथा (अण्णे वि) और भी कोइ (एवमाई य अवगासा) ऐसे स्थान हों तो (ते हु) उनका भी साधु को (वज्जणिज्जा) परित्याग कर देना चाहिये। अधिक और क्या कहा जाय (जत्थ जत्थ) जिस २ स्थान पर साधु का (मणोविब्भमो) मन विभ्रम युक्त बन जावे (वा) अथवा (भंगो) उसके ब्रह्मचर्य व्रत का भंग होने की संभावना (वा) अथवा

"वेसियाणंअट्ठं-तिट्ठंति" वेश्याओने। निमित्ते બનેલાં હોય, તથા "जत्थ" જે સ્થાનો પર બેસીને "इत्थियाओ" સ્ત્રીઓ "अभिक्खणं" વાર વાર "मोहदोसरइरागवड्ढणाओ" મોહ, દોષ, રતિ અને રાગને વધાવનારી "बहुविहाओ" વિવિધ પ્રકારની "कहाओ" કથાઓ "कहेंति" કહેતી હોય "ते हु" તે સ્થાનો "इत्थी संसत्त सकिलिट्ठा" સ્ત્રીઓથી યુક્ત હોવાને કારણે સાધુઓએ તેમનો પરિત્યાગ કરવો જોઈએ તથા "अण्णे वि" એવાં બીજાં પણ કોઈ "एव माईय अवगासा" સ્થાન હોય તો "ते हु" તેમનો પણ સાધુએ "वज्जणिज्जा" પરિત્યાગ કરી દેવો જોઈએ. વધુ શું કહું! "जत्थ जत्थ" જે જે સ્થાન પર સાધુનું "मणोविब्भमो" મન વિભ્રમયુક્ત બની જાય "वा" અથવા 'भंगो" તેના બ્રહ્મચર્ય વ્રતના ભંગની શક્યતા

' भंसणा वा ' भ्रंशना वा=ब्रह्मचर्यस्य देशतो भङ्गो वा, तथा-' अट्टं ' आर्त्तम्=इष्ट संयोगाभिलाषरूपम्, ' रुद्दं ' रौद्र तदुपायभूतहिंसाऽनृतादत्तादानग्रहणानुबन्धरूपम्, ' झाणं ' ध्यानं ' होज्जा ' भवेत् ' तं तं च ' तत्तच्च ' वज्जेज्ज ' वर्जयेत्, कः ? इत्याह-यः ' वज्जभीरुः ' अवद्यभीरुः=सावद्यवसतिवासजन्यपापभीरुः, अत एव-' अणायतणअंतपंतवासी ' अनायतनान्तप्रान्तवासी न आयतनं स्त्रीपशुपण्डकानामित्यनायतनम्, स्त्रीपशुपण्डकरहितमित्यर्थः, अन्तम्=इन्द्रियाननुकूलं, पर्णकुटयादि, प्रान्तं=तदेव प्रकृष्टं श्मशानशून्यगृहवृक्षमूलादिकं वा स्थानं तत्र वस्तुं शीलं यस्यासौ-निर्दोष वसतिवासीत्यर्थः, स तादृशं स्थानं वर्जयेदिति भाव । उपसंहरन्नाह—' एवं ' एवम्=अनेन प्रकारेण ' असंसत्तवासवसइसमिइजोगेण ' असंसक्तवासवसतिसमितियोगेन=असंसक्तः=स्त्रीपशुपण्डकसंसर्गरहितो यो

(भंसणा) एक देश से वह भंग होने की संभावना हो तथा (अट्ट रुद्दं च झाणं होज्जा) इष्ट संयोगाभिलाषरूप आर्त्तध्यान, हिंसा, झूठ, चोरी आदि में आनंद मानने रूप रौद्रध्यान, उसके चित्त में जग जाने की संभावना हो, तो साधु को (तं तं च) उस स्थान का (वज्जेज्ज) परित्याग कर देना चाहिये। क्यों कि साधु (अवज्जभीरु) सावद्यवसति वास जन्य पाप से सदा भीरु-डरने वाला होता है। (अणायतणअंतपंतवासी) और वह ऐसे ही निर्दोष स्थान में ठहरता है कि जहां स्त्री, पशु, पंडक नहीं रहते हों, तथा जो अपनीं इन्द्रियों के अनुकूल न हो, किन्तु श्मशान, शून्यगृह, वृक्षमूल आदिरूप हो। इसलिये जब सिद्धान्त में निर्दोष वसति में ठहरने की आज्ञा प्रभु की हैं तो यह बातनिश्चित है कि वह सदोषवसति में न ठहरे। (एवं असंसत्तवास-

---

" वा " અથવા " भंसणा " એક દેશથી તેમાં ભંગ થવાની સંભવિતતા હોય તથા " अट्टं रुद्दं च झाण होज्जा " ઈષ્ટ સંયોગાભિલાષા રૂપ આર્ત્તધ્યાન, હિંસા, જૂઠ, ચોરી આદિમાં આનંદ માનવારૂપ રૌદ્રધ્યાન, તેના ચિત્તમાં ઉત્પન્ન થવાની શકયતા હોય તો સાધુએ " तं तं च " તે તે સ્થાનનો " वज्जेज्ज " પરિત્યાગ કરી દેવો જોઈએ. કારણ કે સાધુ ' अवज्ज-भीरू " સાવદ્ય વસતિવાસ જન્ય પાપોથી સદા ડરનાર હોય છે. " अणायतण अंतपंतवासी " અને તે એવા નિર્દોષ સ્થાનમાં રહે છે કે જ્યાં સ્ત્રી, પશુ, પંડક રહેતા હોય નહી" તથા જે પોતાની ઇન્દ્રિયોને અનુકૂળ ન હોય, પણ સ્મશાન, ખાલી મકાન, વૃક્ષમૂળ આદિ રૂપે હોય. તેથી નિર્દોષ વસતિ (વસવાટ) માં રહેવાની સિદ્ધાંતમાં પ્રભુએ આજ્ઞા આપેલી છે તો એ વાત નિશ્ચય જ છે કે તેમણે સદોષ વસતિમા રહેવું જોઈએ નહીં. " एवं असंसत्तवासवसतिसमिइजोगेण "

वासः=स्थानम् तत्र या वसतिः=निवासस्तद्रूपो यः समितियोगस्तेन 'भाविओ' भावितः=वासितः 'अंतरप्पा' अन्तरात्मा=जीवः 'आरयमणा' आरतमना-आ=समन्तात् रतं=ब्रह्मचर्ये संसक्तं मनो यस्य स तथा, पुनः-'विरयगामधम्मे' विरतग्रामधर्मः=निवृत्तो ग्रामधर्मात्=मैथुनाद् यः स तथा, अत एव-'जिइंदिए' जितेन्द्रियः=वशीकृतेन्द्रियः, 'बंभचेरगुत्ते' ब्रह्मचर्यगुप्तः=नवविध ब्रह्मचर्यसहितः दशविधब्रह्मचर्य-समाधिस्थानयुक्तो वा 'भवइ' भवति ॥सू० ६ ॥

वसति समिइजोगेण) इस प्रकार स्त्री, पशु, पंडक के संसर्ग से रहित स्थान में ठहरने रूप समिति के योग से (भाविओ अंतरप्पा) भावित अंतरात्मा-मुनि (आरयमणा) सर्व प्रकार से ब्रह्मचर्य व्रत में संसक्त मन वाला हो जाता हैं और—(विरयगामधम्मो) ग्रामधर्म-मैथुन से विरत हो जाता है। अतएव-वह (जिइंदिए बंभचेरगुत्तेभवइ) जितेन्द्रिय बनकर नवविधब्रह्मचर्य की गुप्ति से अथवा दशविध ब्रह्मचर्य समाधी स्थान से युक्त बन जाता है।

भावार्थ—इस सूत्र द्वारा सूत्रकार ने ब्रह्मचर्य व्रत को स्थिर रखने वाली पांच भावनाओं में से प्रथम स्त्रीपशु पंडक सेवित शयनासन वर्जन रूप भावना का स्वरूप स्पष्ट किया है। साधुजन को ऐसी ही वसति-स्थान में निवास करने की प्रभु की आज्ञा है कि जो निर्दोष हो। स्त्री पशु पंडक आदि के संसर्ग से रहित हो। क्यों कि ऐसे स्थान में निवास करने से साधु के ब्रह्मचर्य व्रत का देश से भंग अथवा सर्वथा भंग हो सकता है। तथा जिस स्थान पर बैठकर स्त्रियां विविध

આ રીતે સ્રી, પશુ, અને પંડકના સંસર્ગથી રહિત સ્થાનમાં રહેવા રૂપ સમિતિના યોગથી "भाविओ अंतरप्पा" ભાવિત અંતરાત્મા-મુનિ "आरयमणा" દરેક પ્રકારે બ્રહ્મચર્ય વ્રતમા દઢ મનવાળા થઈ જાય છે અને "विरयगामधम्मो" ગ્રામધર્મ-મૈથુનથી મુક્ત થઇ જાય છે. તેથી તે "जिइंदियबंभचेरगुत्ते भवइ" જિતેન્દ્રિય થઈને નવ વિધ બ્રહ્મચર્યની ગુપ્તિથી અથવા દશવિધ બ્રહ્મચર્યસમાધિ સ્થાનથી યુક્ત બની જાય છે.

ભાવાર્થ—આ સૂત્ર દ્વારા સૂત્રકારે બ્રહ્મચર્ય વ્રતને સ્થિર રાખવાની પાંચ ભાવનાઓમાંથી સૌથી પહેલી સ્રી, પશુ, પંડક સેવિત શયનાસન વર્જનરૂપ ભાવનાનું સ્વરૂપ સ્પષ્ટ કર્યું છે. સાધુજનોને એવા સ્થાનમાં વસવાની પ્રભુની આજ્ઞા છે કે જે નિર્દોષ હોય, સ્રી, પશુ, પંડક આદિના સંસર્ગથી રહિત હોય. કારણ કે એવા સ્થાનમાં વસવાથી સાધુના બ્રહ્મચર્ય વ્રતનો અંશત. ભંગ થાય છે અથવા સર્વથા ભંગ થઇ શકે છે. તથા જે સ્થાને બેસીને

द्वितीयां स्त्रीकथाविरतिनाम्नीं भावनामाह-' वीयं ' इत्यादि-

मूलम्—वीयं नारीजणस्स मज्झे न कहेयव्वा कहा विचित्ता विव्वोकविलाससंपउत्ता हास सिंगार लोइयकहव्व मोहजणणी न आवाहविवाहवरकहाविय इत्थीणं वा सुभगदुब्भगकहा चउसट्ठिं महिलागुणाणं च न देसजातिकुलरूवणामनेवत्थपरिजणकहाओ इत्थियाणं अण्णावि य एवमाइयाओ कहाओ सिंगारकलुणाओ तवसंजमबंभचेरघाओवघाइयाओ अणुचरमाणेणं बंभचेरं न कहेयव्वा न सुणेयव्वा न चिंतियव्वा। एवं इत्थीकहा विरइजोगेण भाविओ भवइ अंतरप्पा आरयमणा विरयगामधम्मे जितिंदिए बंभचेरगुत्ते ॥सू०७॥

प्रकार की शृंगार आदि वर्धक कथाएँ किया करती हों, जो स्थान वेश्याओं के लिये निर्मित हुए हो, जो मनःक्षोभ कारक हो, आर्त्तरौद्रध्यान के प्रवर्त्तक हों, ऐसे भी स्थानों में साधु को नहीं ठहरना चाहिये, किन्तु जो स्त्री आदि के संसर्ग से रहित हों, इन्द्रियों में क्षोभ कारक न हों ऐसे श्मशान, शून्य गृह आदि स्थानों में ही साधु को निवास करना चाहिये। इस प्रकार इस असंसक्तवासवसति नामक प्रथम भावना से भावित हुआ जीव ब्रह्मचर्य व्रत की सर्वप्रकार से रक्षा करता हुआ मैथुन से विरक्त होकर उसकी नौ कोटि से पूर्णपालना करने में सावधान रहना है ॥ सू०६ ॥

સ્ત્રીઓ વિવિધ પ્રકારની શૃંગાર આદિ વર્ધક કથાઓ કહેતી હોય, જે સ્થાન વેશ્યાઓ માટે જ બનાવ્યા હોય, જે મનમા ક્ષોભ કરનાર હોય, આર્ત રૌદ્ર ધ્યાન તરફ દોરનાર હોય, એવાં સ્થાનોમાં પણ સાધુઓએ વસવુ જોઈએ નહીં, પણ જે સ્થાન સ્ત્રી આદિના સંસર્ગથી રહિત હોય, ઇન્દ્રિયોમાં ક્ષોભ કરનાર ન હોય એવાં સ્મશાન, ખાલી ઘર આદિ સ્થાનોમાં સાધુએ નિવાસ કરવા જોઈએ. આ પ્રકારે આ "અસંસક્ત વાસ વસતી" નામની ભાવનાથી ભાવિત થયેલ જીવ બ્રહ્મચર્ય વ્રતની દરેક રીતે રક્ષા કરતો મૈથુનથી રહિત બનીને તેનું નવ પ્રકારે પાલન કરવામાં સાવધાન રહે છે. ॥ સૂ ૬ ॥

टीका—'बीयं' द्वितीयां स्त्रीकथाविरतिलक्षणां भावनामाह—

'नारीजणस्स' नारीजनस्य=स्त्रीपर्षदो 'मज्झे' मध्येऽन्तराले न=नैव 'कहेयव्वा' कथयितव्या 'कहा' कथा=वाक्यप्रबन्धरूपा। कथामेव विशिनष्टि- 'विचित्ता' विचित्रा=विचित्रवृत्तान्तसमन्विता, तथा-'विव्वोकविलाससंपउत्ता' 'विव्वोकविलाससंप्रयुक्ता-' विव्वोकः=अत्यभिमानवशादिष्टेऽपि वस्तुन्यनादर-करणम्, तदुक्तम्-' विव्वोकस्त्वतिगर्वेण वस्तुनीष्टेऽप्यनादरः, इति। विलासः= स्थानासनगमनानां हस्तभ्रूनेत्रकर्मणां चैव यो विशेषः स,ः तदुक्तम्-" स्थानासन-गमनानां हस्तभ्रूनेत्रकर्मणां चैव !

उत्पद्यते विशेषो यः श्लिष्टः स तु विलासः स्यात्॥" इति। विव्वोकवि-

---

अब सूत्रकार स्त्रीकथाविरति नामकी द्वितीय भावना को प्रदर्शित करते हैं—'बीयं नारीजणस्स' इत्यादि०।

टीकार्थ--(बीयं दूसरी स्त्रीकथाविरति नामकी भावना इस प्रकार से है- (नारीजणस्स मज्झे) स्त्रियों के बीच में बैठकर साधु को (कहा) कथाएँ कि जो (विचित्ता) विचित्र वृत्तान्तों से युक्त हों (विव्वोकविलाससंपउत्ता) इष्ट वस्तु में भी अनादर कराने वाली हों तथा विलासभाव बढानेवाली हों (न कहेयव्वा) नहीं करना चाहिये। अति अभिमान के वश से इष्ट वस्तु में भी अनादर करना इसका नाम विव्वोक है, तथा स्थान, आसन, गमन में एवं हस्त, भ्रू, नेत्र इन की क्रियाओं में विशेषता आना इसका नाम विलास है। ये दोनों प्रकार की विशेष चेष्टाएँ स्त्रियों में श्रृंगारभावजनित हुआ करती हैं। विव्वोक और विलास इन दोनों से जो कथाएँ युक्त हों वे साधु को

હવે સૂત્રકાર "स्त्रीकथाविरति" નામની બીજી ભાવના બતાવે છે- "बीयं नारी जणस्स" ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ—"बीयं" સ્ત્રી કથા નામની ભાવના આ પ્રમાણે છે-"नारीजणस्स मज्झे" સ્ત્રીઓની વચ્ચે બેસીને સાધુએ એવી "कहा" કથાઓ કે જે "विचित्ता" વિચિત્ર વર્ણનો વાળી હોય "विव्वोकविलाससंपउत्ता" ઇષ્ટવસ્તુમાં પણ અનાદર કરાવનારી હોય તથા વિલાસભાવ વધાવનારી હોય "न कहेयव्वा" તે કહેવી જોઇએ નહીં અતિ અભિમાનને વશ થઈને ઈષ્ટ વસ્તુનો પણ અનાદર કરવો તેને વિવ્વોક કહે છે, તથા સ્થાન, આસન, ગમનમાં અને, હાથ, ભ્રૂ નેત્ર વગેરેની ક્રિયામાં વિશેષતા આવે તે વિલાસ ગણાય છે. એ બન્ને પ્રકારની વિશેષ ચેષ્ટાઓથી સ્ત્રીઓમા શ્રૃંગાર ભાવ પેદા થાય છે. વિવ્વોક અને વિલાસ એ બન્નેથી

लासौ=स्त्रीणां श्रृङ्गारभावजनितौ चेष्टाविशेषौ, ताभ्यां संप्रयुक्ताः,तथा-'हाससिंगारलोइयकहा' तत्र हासश्रृङ्गारलौकिककथा=हास्यः=हास्यस्थायिभावो रसविशेषः, श्रृङ्गारः=रतिस्थायिभावोरसविशेष', एतत्प्रधाना या लौकिकीकथा सा तथा, 'मोहजणणी' मोहजननी=मोहोदीरिका कथा न वक्तव्या। तथा-'आवाहविवाहवरकहावि य' आवाहविहारवरकथापि च=आवाहः=अभिनवपरिणीतस्य वधूवरस्य आनयनम्, विवाहः=पाणिग्रहणम्, तत्प्रधाना या वरकथा=परिणेतृकथा साऽपि च न वक्तव्या। तथा-' इत्थीणं ' स्त्रीणां ' सुभगदुब्भगकहा ' सुभगदुर्भगकथा="इदृग्नेत्रनासिकाकपालादियुक्ता च स्त्री दुर्भगा भवति" इत्यादिरूपा कथा वा न

स्त्रियों के बीच बैठकर कभी नहीं कहना चाहिये, क्यों कि ऐसी कथाओं के कहने में रागभाव की संयुक्तता साधु के जानी जाती है। इससे उसके ब्रह्मचर्यव्रत में दोष आता है। इसी तरह (हाससिंगारलोइयकहा) जो लौकिक कथा हास्य और श्रृंगाररस प्रधान हो, तथा (मोहजणणी) मोह की जनक हो वह भी नहीं कहना चाहिये। तथा (आवाहविवाहवरकहाविय) जो कथा नव दंपतियों के आगमन से संबंध रखती हों, अर्थात्-जिस कथा का विषय नव परिणित वधू और वर के संबंध को लिये हुए तथा जिस कथा में विवाह संबंधी चर्चा हो, ऐसी आवाह और विवाह प्रधान वाली वरकथा भी साधु को नहीं कहनी चाहिये। इसी तरह (इत्थीणं वा सुभगदुब्भगकहा) स्त्रियों संबंधी सुभग दुर्भग कथा भी नहीं कहना चाहिये, अर्थात्-'इस प्रकारके नेत्र, नासिका और कपाल आदिवाली स्त्री सुभग होती है और इस प्रकारके नेत्र- नासिका,

युक्त होय तेवी कथाओ साधुओ स्त्रीओनी वच्चे बेसीने कदी पण कहेवी जोईओ नहीं, कारण के ओवी कथाओ कहेवामां राग भावनी संयुक्तता आवी जाय छे तेथी ब्रह्मचर्य व्रतमां दोष आवी जाय छे. ओ ज रीते "हाससिंगारलोइयकहा" जे लौकिक कथा हास्य अने श्रृंगार रस प्रधान होय, तथा "मोहजणणी" मोह पेदा करनार होय, ते पण कहेवी जोईओ नहीं. तथा "आवाहविवाहवरकहाविय" जे कथा नव दंपतिओना आगमन साथे संबंध धरावती होय, ओटले के जे कथानो विषय नव परिणित वधू अने वरना संबंधमां होय, तथा जे कथामां विवाह संबंधी चर्चा आवती होय, ओवी आवाह अने विवाह प्रधान वर कथा पण साधुओ कहेवी जोईओ नहीं. ओ ज प्रमाणे "इत्थीण वा सुभगदुब्भगकहा" स्त्रीओ संबंधी सुभग, विरळ कथाओ पण कहेवी जोईओ नहीं, ओटले के "आ प्रकारनां नेत्र, नाक अने कपाळवाळी स्त्री सुभग होय छे अने आ प्रकारनां नेत्र, नाक अने

वक्तव्या। तथा-'चउसट्ठीमहिलागुणा' चतुष्षष्टिर्महिलागुणा'=आलिङ्गनादीनामष्टानां प्रत्येकस्याष्टविधत्वेन ये चतुष्षष्टिसंख्यका महिलागुणास्तेऽपि च न वक्तव्याः। तथा-' देसजाइकुलरूवणामनेवत्थपरिजणकहाओ ' देशजातिकुलरूपनामनेपथ्य-परिजनकथाः तत्र-देशकथा=लाटादिदेशसम्बन्धिस्त्रीणां वर्णनम् , यथा-' लाटचः

और कपाल आदि से युक्त स्त्री दुर्भग होती है, इस प्रकार ये स्त्रीयों की सुभगता और दुर्भगता से संबंध रखने वाली कथा भी साधु को नहीं कहना चाहिये । तथा (चउसट्ठिं महिलागुणाणं च) जिस कथा में स्त्रियों के चौसठ गुणों से संबंध हो, अर्थात् स्त्रियों के चौसठ गुणों को लेकरजो कथा चलती हो वह भी साधु को नहीं कहनी चाहिये। आलि-ङ्गन आदि आठ गुण प्रत्येक आठ २ प्रकार के होते हैं, इस तरह ८×८=६४ प्रकार के महिलाओं के गुण कहे गये है। सो ये चौंसठ ६४ प्रकार के महिलाओं के गुण भी कथामें चर्चनीय नहीं होनी चाहिये। तथा (देसजाति कुलरूवणामनेवत्थपरिजणकहाओ इत्थियाणं अण्णावि य एवमाइयाओ सिंगारकलुणाओ संजमबंभचेर घाओवघाइयाओ बंभचेरं अणुचरमाणेणं न कहेयव्वा न सुणेयव्वा न चिंतियव्वा) देश,जाति, कुल, रूप,नाम, नेपथ्य, परिजन, इनसे संबंध रखनेवाली स्त्रियोंकी कथाएँ भी नहीं कहनी चाहिये-लाटादि-देश संबंधी स्त्रियों का वर्णन जिस कथामें होता है वह देश कथा है, जैसे-लाट देश की स्त्रियां बहुत ही कोमल-

કપોળ વાળી સ્ત્રી વિરલ હોય છે" આ રીતે સ્ત્રીઓની સુભગતા કે વિરલતા સાથે સંબંધ રાખતી કથા પણ સાધુએ કહેવી જોઈએ નહીં. "चउसट्ठि महिला गुणाणं च" જે કથાનો સ્ત્રીઓના ચોસઠ ગુણો સાથે સંબંધ હોય એટલે કે સ્ત્રીઓના ચોસઠ ગુણોને અનુલક્ષીને જે કથા ચાલતી હોય તે પણ સાધુએ કહેવી જોઈએ નહી આલિગન આદિ આઠ ગુણોમાનો પ્રત્યેક ગુણ આઠ આઠ પ્રકારનો હોય છે, આ રીતે ૮×૮=૬૪ પ્રકારના સ્ત્રીઓના ગુણ બતાવ્યા છે. તો તે ચોસઠ પ્રકારના સ્ત્રીઓના ગુણ પણ કથામાં ચર્ચવાને યોગ્ય નથી. તથા "देसजातिकुलरूवणाम-नेवत्थ-परिजण-कहाओ इत्थियाणं अण्णा वि य एवमाइयाओ कहाओ सिंगारकलुणाओ संजमबंभचेरघाओवघाइयाओ बंभचेरअणु चरमाणेणं न कहेयव्वा न सुणेयव्वा नचिंतियव्वा" દેશ,જાતિ કુળ,રૂપ,નામ, નેપથ્ય, પરિજન, વગેરે સાથે સંબંધ રાખનારી સ્ત્રીઓની કથાઓ પણ કહેવી જોઈએ નહી. લાટાદિ દેશની સ્ત્રીઓનાં વર્ણન જે કથામા હોય તે દેશ કથા છે, જેમકે "લાટ દેશની સ્ત્રીઓ બહુ જ મૃદુ વચન વાળી અને નિપુણ હોય

कोमलवचनाः इति निपुणा वा भवन्ती" त्यादि । जातिकथा=ब्राह्मणादिजाति संबन्धिकथा, यथा—" धिग्ब्राह्मणीर्धवाभावे या जीवन्तिमृता इव । धन्यास्मन्ये शूद्रीः पतिलक्षेऽप्यनिन्दिताः ॥

कुलकथा, यथा—अहो चौलुक्यपुत्रीणां साहसं जगतोऽधिकम् ।
पत्यौ मृते त्रिशन्त्यग्निं याः प्रेमरहिता अपि" इति । रूपकथा—
यथा—चन्द्रवक्त्रा सरोजाक्षी, सद्गीः पीनघनस्तनी ।
किंलाटीनो मता सा स्या, देवानामपि दुर्लभा ॥ १ ॥ " इति ।

वचनवाली और निपुणता युक्त हुआ करती हैं ब्राह्मण आदि जाति से संबंध रखनेवाली स्त्रियों की कथा कहना इसका नाम जाति कथा है । जैसे पति के अभाव में जीवन व्यतीत करने वाली ब्राह्मणियों को धिक्कार हैं—क्यों कि ये जीती हुईं भी एक तरह से मरी हुईं जैसी हैं । और वे शूद्र जाति की स्त्रियां धन्य हैं जो लाख पतिवाली होने पर भी निन्दित नहीं होती हैं। कुल से संबंध रखलेवाली स्त्री संबंधी कथा कुल कथा है-जैसे-अहो ! चौलुक्यवंश की स्त्रियों का साहस जगत में सबसे अधिक होता है—क्यों कि ये पति के मर जाने पर प्रेम से विहीन होती हुईं जीती २ अग्नि में जल जाती हैं। स्त्रियों के रूप से संबंध रखने वाली कथा रूप कथा है—जैसे लाटदेश की स्त्रियां चन्द्रमा के जैसी मुखवाली होती हैं कमल जैसी आंखों वाली होती हैं वाणी में इनके मिठास रहता है, इनके दोनो कूच पुष्ट और स्थूल होते हैं ।भलां ऐसी सुन्दर स्त्री किसको नहीं अच्छी लगेगी ? ऐसी स्त्रीतो देवो को भी दुर्लभ हुआ करती

છે." બ્રાહ્મણ આદિ જાતિ સાથે સંબંધ રાખનાર સ્ત્રિઓની કથા કહેવી તે જાતિ કથા કહેવાય છે. 'જેમ કે' પતિ વિના જીવન વ્યતીત કરનારબ્રાહ્મણીઓને ધિક્કાર છે, કારણ કે તેઓ જીવતી હોવા છતાં પણ એક રીતે તો મૃત જેવીજ છે " " તે શૂદ્ર જાતિની સ્ત્રિઓને ધન્ય છે કે જે લાખપતિ હોવા છતાં પણ નિંદિત થતી નથી." આ બીજી જાતિ કથાના દૃષ્ટાંતો છે. જે કુળ સાથે સબંધ રાખનારી સ્ત્રી વિષેની કથાને કુળ કથા કહે છે જેમ કે " અહો ! ચાલુક્ય વંશની સ્ત્રીઓનાં સાહસ જગતમાં સૌથી વધારે હોય છે, કારણ કે પતિનું મૃત્યુ તથા તે પ્રેમભગ્ન થવાથી જીવતી અગ્નિમાં પ્રવેશ કરી બળી મરે છે." સ્ત્રીઓના રૂપ સાથે સબંધ રાખનારી કથાઓને રૂપકથા કહે છે જેમ કે લાટ દેશની સ્ત્રિઓ ચન્દ્રમુખી હોય છે, કમળનયની હોય છે, તેમની વાણીમાં મીઠાશ હોય છે, તેમના બંન્ને કુચ પુષ્ટ અને સ્થૂળ હોય છે. એવી સુંદર સ્ત્રી કોને ન ગમે ? એવી સ્ત્રીઓ તો દેવોને પણ

नामकथा–यथा–इयं यथा नाम्ना सुंदरी, तथा–रूपगुणाभ्यामपि । नेपथ्य-कथा, यथा–" धिङ्नारीरौदीच्या वहुवसनाच्छादिताङ्गलतिकत्वात् । यद्यौवनं न यूनां चक्षुर्मोदाय संभवति ॥ " इति ।

परिजनकथा—यथा—" चेटिकापरिवारोऽपि तस्याः कान्तो विचक्षणः । भावज्ञः स्नेहवान् दक्षो विनीतः सुकुलस्तथा ॥ " इति ।

एताः कथा न कर्तव्याः । तथा–' इत्थियाणं' स्त्रीणाम् ' अण्णावि य ' अन्या अपि च ' एवमाइयाओ कहाओ ' एवमादिका कथाः या हि ' सिंगारकलुणाओ ' शृङ्गारकरुणाः=शृङ्गाररसकरुणरसयुक्ताः, तथा ' संजमबंभचेरघाओव-

---

हैं । नाम कोलेकर जिस कथा में स्त्री संवंधी सौन्दर्य का वर्णन किया जाताहै वह नाम कथा है,जैसे–यह स्त्री जैसे नाम से सुन्दर है वैसे ही यह रूप और गुणों से भी सुन्दर है, स्त्री संवंधी वेशभूषा आदी की चर्चा–जिस कथा में रहती है वह नेपथ्यकथा है, जैसे–उत्तरदिशा की स्त्रियों को धिक्कार है–जो अनेक वस्त्रों से आच्छादित रहा करती हैं, क्यों कि इसतरह रहने से इनका यौवन युवापुरुषों की आंखो को आनंदप्रदान नहीं करता है । स्त्रियों के परिजनों को लेकर जो कथाएँ कही जाती हैं वे परिजन कथाएँ हैं, जैसे–उस स्त्रि का चेटिका जन–दासी जन रूप परि वार–भी बड़ा सुन्दर, निपुण, भावज्ञ, स्नेहयुक्त, दक्ष–व्यवहार–कुशल, विनीत एवं कुलीन है। साधु को ऐसी स्त्री संवंधी देशादि कथाएँ रागभाव से युक्त होकर नहीं करना चाहिये । तथा इसी तरह की और भी स्त्रियों से संवंध रखने वाली शृंगार रस एवं करुण रस

दुर्लभ छे. नामने अनुलक्षीने जे कथामा स्त्री संबंधी सौंदर्यनुं वर्णन करायुं होय छे ते नाम कथा कहेवाय छे के " आ स्त्रीनु नाम जेटलु सुंदर छे एटली ज ते रूप अने गुणमां पण सुंदर छे. स्त्रीनी वेशभूषा आदिनी चर्चा जे कथामां होय छे ते नेपथ्य कथा कहेवाय छे. जेम के " उत्तरनी स्त्री-ओने धिक्कार छे, जे अनेक वस्त्रोथी आच्छादित रहे छे, कारण के ते प्रमाणे रहेवाथी तेमनुं यौवन युवानोनी आंखोने आनंद प्रदान करतुं नथी. " स्त्रि-ओनां परिजनोने अनुलक्षीने जे कथा कहेवाय छे ते परिजन कथाओ छे. जेम के ते स्त्रीनो दासिजन रूप परिवार पण घणो सुंदर, निपुण, भावज्ञ, स्नेहाळ, दक्ष–व्यवहार कुशळ, विनीत अने कुलीन छे " साधुए एवी स्त्री संबंधी देशादि कथाओ राग भावथी युक्त थइने कहेवी जोइए नहीं. तथा ए ज प्रकारनी स्त्रिओ साथे संबंध राखनारी शृंगार रस अने करुण रस

घाइयाओ ' संयमब्रह्मचर्यघातोपघातिकास्ताः कथाः, ' वंभचेरं ' ब्रह्मचर्यम्, 'अणुचरमाणेणं' अनुचरता न कहेयव्वा ' स्वयं कथितव्याः, न=नापि च ' सुणेयव्वा ' अन्यस्य कथयतः श्रोतव्याः न ' चिंतियव्वा' चिन्तितव्याः, न चिन्ताविषयीकर्तव्याः। एवम् ' इत्थीकहाविरइसमिइजोगेण ' स्त्रीकथाविरतिसमितियोगेन=स्त्रीणां याः कथास्ततो या विरतिस्तद्रूपो यः समितियोगस्तेन भावितोऽन्तरात्मा आरतमनाः=ब्रह्मचर्यासक्तमनाः, विरतग्रामधर्म=निवृत्तमैथुनभावः। जितेन्द्रियः=वशीकृतेन्द्रियः, ब्रह्मचर्यगुप्तः=नवविधब्रह्मचर्यगुप्तिसहितः, उत्तराध्ययनसूत्रषोडशाध्ययनोक्त दशविधब्रह्मचर्य समाधिस्थानयुक्तो वा भवति ॥ सू० ७ ॥

प्रधानकथाओं को नहीं कहना चाहिये। तथा जिन कथाओं से संयम और ब्रह्मचर्य का घात और उपघात होता हो ऐसी कथाएँ भी ब्रह्मचर्य को पालन करने वाले साधू को न स्वयं कहना चाहिये, न सुनना चाहिये और न ऐसी कथाओं का विचार ही करना चाहिये। (एवं इत्थी कहावि रइ समिइजोगेण भाविओ अंतरप्पा विरयगामधम्मे जिइंदिए बंभचेर गुत्ते भवइ) इस प्रकार से स्त्रीकथाविरतिरूप समिति के संबंध से भावित हुआ जीव ब्रह्मचर्य में आसक्त मनवाला हो जाता है और ग्रामधर्म-मैथुन क्रिया से निवृत्त हो जाता है, अतएव वह जीव जितेन्द्रिय बनकर नवविध ब्रह्मचर्य की गुप्ति से अथवा उत्तराध्ययन सूत्र के सोलहवें अध्ययन में कहे हुए दशविध ब्रह्मचर्य समाधि स्थान से युक्त बन जाता है।

भावार्थ—इस सूत्र द्वारा सूत्रकार ने ब्रह्मचर्य व्रत की द्वितीय-भावना का स्वरूप प्रकट किया है। इसमें उन्हो ने रागभाव से स्त्रीमात्र

પ્રધાન કથાઓ પણ કહેવી જોઇએ નહીં તથા જે કથાઓથી સયમ અને બ્રહ્મચર્યનો ઘાત અને ઉપઘાત થતો હોય એવી કથાઓ પણ બ્રહ્મચર્યનું પાલન કરનાર સાધુએ કહેવી ન જોઈએ, સાંભળવી ન જોઇએ અને એવી કથાઓનો વિચાર પણ કરવો જોઈએ નહિ. "एवं इत्थीकहाविरइसमिइजोगेण भाविओ अंतरप्पा विरयगामधम्मे जिंदिए वंभचेरगुत्ते भवइ" આ પ્રમાણે સ્ત્રી કથા વિરતિરૂપ સમિતિના યોગથી ભાવિત થયેલ જીવ બ્રહ્મચર્યમાં આસક્ત-મનવાળો બની જાય છે અને ગ્રામધર્મ-મૈથુનક્રિયાથી નિવૃત્ત થઈ જાય છે, તેથી તે જીવ જિતેન્દ્રિય બનીને નવવિધ બ્રહ્મચર્યની ગુપ્તિથી અથવા ઉત્તરાધ્યયન સૂત્રના સોળમાં અધ્યયનમા કહેલ દશવિધ બ્રહ્મચર્યસમાધિ સ્થાનથી યુક્ત બની જાય છે.

ભાવાર્થ—આ સૂત્ર દ્વારા સૂત્રકારે બ્રહ્મચર્ય વ્રતની બીજી ભાવનાનું સ્વરૂપ પ્રગટ કર્યું છે. તેમા તેમણે રાગભાવથી સ્ત્રી માત્રની કથાઓ કહેવાનો

तृतीयां भावनामाह—' तइयं ' इत्यादि—

मूलम्—तइयं नारीणं हसिय-भणिय-चिट्ठिय-विप्पेक्खिय गइविलासकीलियं विब्बोइ य नट्टगीयवाइय सरीर-संठाण वण्णकरचरणनयणलावण्णरूवजोवणपयोधराधरवत्थालंकार-भूसणाणि य गुज्झोवकासियाइं अण्णाणि य एवमाइयाणि तव संजमबंभचेरघाओवघाइयाइं अणुचरमाणेणं बंभचेरं न चक्खुसा न मणसा न वयसा पत्थेयव्वाइं पावकम्माइं एवं इत्थीरूव विरइ समिइजोगेण भाविओ भवइ अंतरप्पा आरयमणा विरयगामधम्मे जिइंदिए बंभचेरगुत्ते ॥सू० ८॥

टीका—'तइयं' तृतीयां स्त्रीरूपनिरीक्षणवर्जनरूपां भावनामाह—'नारीणं' नारीणां ' हसियभणियचिट्ठियविप्पेक्खियगइविलासकीलियं ' हसितभणितचेष्टितविप्रेक्षित-

---

की कथा कहने का निषेध किया है, क्यों कि ऐसी बातें कामवर्धक हुआ करती हैं, अतः ब्रह्मचारी को अपने ब्रह्मचर्य व्रत में एकदेश अथवा सर्वदेश से बाधक ऐसी कोई भी बात स्त्रियों के बीच में बैठकर नहीं करनी चाहिये। इस प्रकार उस ब्रह्मचारी का व्रत हर समय सुरक्षित बना रहता है ॥ सू०७ ॥

अब सूत्रकार इस व्रत की तृतीय भावना को कहते हैं—' तइयं नारीणं ' इत्यादि० ।

टीकार्थ—(तइयं) इस व्रत की रक्षा करने वाली तृतीय भावना स्त्री रूप निरीक्षणवर्जन करने रूप है। इस में (नारीणं) स्त्रियों के

નિષેધ કર્યો છે, કારણ કે એવી વાત કામ વર્ધક હોય છે, તેથી બ્રહ્મચારીએ પોતાના બ્રહ્મચર્ય વ્રતમાં એક દેશથી અથવા સર્વદેશથી બાધક એવી કોઈ પણ વાત સ્ત્રીઓની વચ્ચે બેસીને કહેવી જોઈએ નહીં આમ કરવાથી તે બ્રહ્મચારીનુ વ્રત સદાકાળ સુરક્ષિત બની જાય છે ॥ સૂ ૭ ॥

હવે સૂત્રકાર આ વ્રતની ત્રીજી ભાવના બતાવે છે.' तइयं नारीण "ઈત્યાદિ—

ટીકાર્થ—" तइयं " આ વ્રતનું રક્ષણ કરનારી ત્રીજી ભાવના સ્ત્રીનાં રૂપનું નિરીક્ષણ કરવાનો પરિત્યાગ કરવાની છે. તેમાં " नारीणं " સ્ત્રિઓનાં

गतिविलासक्रीडितम् , तत्र हसितं=हास्यम् , भणितं=जल्पितम् , चेष्टितम्=हस्तपादन्यासादि, विप्रेक्षितम्=निरीक्षितम् , गतिः=गमनम् , विलासः=नेत्रजनितचेष्टाविशेषः, क्रीडितं=स्वसखीभिः सह खेलनम्, एषां समाहारद्वन्द्वः, तथा-- 'बिब्बोइयनट्टगीयवाइयसरीरसंठाणवण्णकरचरणनयणलावण्णरूवजोव्वणपयोधराधरवत्थालंकारभूसणाणि य' बिब्बोकितनाटयगीतवादित्रशरीरसंस्थानवर्णकरचरणनयनलावण्यरूपयौवनपयोधराधरवस्त्रालङ्कारभूषणानि च, तत्र-बिब्बोकितं=पूर्वोक्तलक्षणोबिब्बोकः, नृत्यं=नर्तनम् , गीतं=गानम् , वादितं=वीणादिवादनम्, शरीरसंस्थानं=ह्रस्वदीर्घादिशरीराकृतिः, वर्णः=गौरत्वादिलक्षणः, तथा-करचरणनयनलावण्यम्=करचरणनयनानां लावण्यं=सौन्दर्यम् , रूपं=स्वरूपम् , योवनं=तारुण्यम् पयोधरौ=स्तनौ, अधरः=अधरोष्ठः, वस्त्राणि=प्रसिद्धानि, अलङ्काराः = हारादयः, भूषणानि=मण्डनानि, एतेषां द्वन्द्वः, तानि । तथा-गुज्झोवकासियाइं ' गुह्यावकाशिकानि=गुह्यभूतालज्जनीयत्वात् स्थगनीया अवकाशा =शरीरावयवा इत्यर्थः, त

(हसियभणियचिट्ठियविप्पेक्खियगइविलासकीलियं) हास्य का, भणित बोलने का, उनकी चेष्टाओं का, चिंतवन का, चाल का, नेत्र जनितचेष्टाविशेषरूप विलास का, अपनीसखियों के साथ उनके खेल खेलने का, तथा उनके (बिब्बोइ य नट्टगीइ-वाइय-सरीर-संठाणवण्णकरचरण-नयण-लावण्णरूवजोवणपयोधराधरवत्थालंकारभूसणाणि य) बिब्बोक का, नृत्य का, उनके द्वारा गाये गये गीतो का उनके वीणादिवादन का, उनके ह्रस्व, दीर्घ आदि शारीरिक संस्थान का उनके गौर आदि वर्ण का, कर-हाथ, चरण-पैर, नयन-नेत्र इनके लावण्य-सौन्दर्य का, रूप का, यौवन का, उनके स्तनों का, उनके अधरों का, उनके द्वारा पहरे हुए वस्त्रों का हार आदि अलंकारों का, भूषणों का तथा (गुज्झोवकासियाइं) उनके कामोद्दीपक गुप्त अंगो का, तथा (एवमाइयाणि

"हसियभणियचिट्ठियविप्पेक्खियगइविलासकीलियं" હાસ્યનું, ભણિત-બોલીનું, તેમના હાવભાવનું, ચિતવનનુ ચાલનુ, આંખોના ઇશારારૂપ વિલાસનું, પોતાની સખિયો સાથેની તેની ક્રીડાનુ, તથા તેમના "बिब्बोइय नट्टगीइवाइय सरीर-संठाणवण्णकरचरणनयणलावण्यरूवजोवणपयोधराधरवत्थालंकारभूसणाणि य" બિબ્બોકનું, નૃત્યનું તેમના દ્વારા ગવાતાં ગીતોનું, તેમના વીણાદિ વાદનનું, તેમના હ્રસ્વ, દીર્ઘ આદિ શરીર બંધારણનું, તેમના ગોરા આદિ વર્ણનું, કર-હાથ, ચરણ, નેત્ર, આદિના સૌંદર્યનું, રૂપનું, યૌવનનું તેમનાં સ્તનોનું, તેમણે પહેરેલ વસ્ત્રનું, હાર આદિ અલંકારોનું, આભૂષણોનું તથા "गुज्झोवकासियाइं" તેમના કામોત્તેજક ગુપ્ત અંગોનુ, તથા "एवमाइयाणि

एव गुह्यप्रकाशिकानि स्त्रीणां गुप्ताङ्गानीत्यर्थः। तथा-'अण्णाणि य एवमाइयाणि' अन्यानि च एवमादिकानि हसितादिसदृशान्यन्यान्यपि, 'तवसंयमबंभचेरघाओव-घाइयाइं' तपः संयमब्रह्मचर्यघातोपघातकानि, 'पावकम्माइं' पापकर्माणि 'बंभचेरं' ब्रह्मचर्यम् 'अणुचरमाणेणं' अनुचरता 'न चक्खुसा' न चक्षुषा 'न मणसा' न मनसा 'न वयसा' न वचसा 'पत्थेयव्वाइं' प्रार्थयितव्यानि=न चक्षुषा द्रष्टव्यानि, न मनसा चिन्तयितव्यानि, न वचसा प्रार्थयितव्यानीत्यर्थः। एवम्=अनेन प्रकारेण 'इत्थीरूवविरइसमिइजोगेण' स्त्रीरूपविरतिसमितियोगेन= स्त्रीणां यद् रूप ततो या विरतिस्तद्रूपो यः समितियोगस्तेन भावितोऽन्तरात्मा= जीवः 'आरयमणा' आरतमनाः=ब्रह्मचर्यासक्तचित्तो विरतग्रामधर्मो जितेन्द्रियो ब्रह्मचर्यगुप्तश्च भवति ॥सू०८॥

पावकम्माइं तवसंजमबंभचेरघाओवघाइयाइं) इसी प्रकार की और भी पाप कर्मरूप बातों का कि जो तप, संजम एवं ब्रह्मचर्य व्रत को एकदेश से अथवा सर्वदेश से घात करने वाली हों (बंभचेरं अणुचर-माणेणं) ब्रह्मचर्य व्रत की आराधना करने वाले साधु को (न चक्खुसा) राग संयुक्त होकर न आंखों से निरीक्षण करना चाहिये, (न मणसा) न मन से विचार करना चाहिये, और (न वयसा) न वचन से (पत्थेयव्वाइं) प्रार्थना करना चाहिये। (एवं इत्थीरूवविरइसमिइ जोगेण भाविओ अंतरप्पा आरयमणा विरयगामधम्मे जिइंदिए बंभचेर-गुत्ते भवइ) इस तरह से स्त्रीरूप निरीक्षण विरतिरूप समिति के योग से संबंधित जीव ब्रह्मचर्य व्रत में आसक्त मनवाला हो जाता है और ग्रामधर्म-मैथुन सेवन से निवृत्त हो जाता है। अत एव वह जीव-जितेन्द्रिय बनकर नव विध ब्रह्मचर्य की गुप्ति से अथवा दशविध ब्रह्म-

---

पावकम्माइं तवसंजमबंभचेरघाओवघाइयाइं" એ પ્રકારની બીજી પણ પાપ કર્મરૂપ વાતો કે જે તપ, સયમ અને બ્રહ્મચર્યવ્રતનો એક દેશથી અથવા સર્વદેશથી ઘાત કરનારી હોય "बंभचेरअणुचरमाणेणं" બ્રહ્મચર્યવ્રતનું પાલન કરનાર સાધુએ "न चक्खुसा" રાગ યુક્ત થઈને તેમનું નિરીક્ષણ કરવું જોઈએ નહીં, "न मणसा" મનથી વિચાર કરવો જોઈએ નહી અને "न वयसा" વચનથી ન "पत्थेयव्वाइं" પ્રાર્થના કરવી જોઈએ "एवं इत्थीरूव विरइसमिइजोगेण भाविओ अंतरप्पा आरयमणा विरयगामधम्मे जिइदिए बंभचेरगुत्ते भवइ" આ પ્રમાણે સ્ત્રીરૂપ નિરીક્ષણ વિરતિરૂપ સમિતિના યોગથી ભાવિત જીવ બ્રહ્મચર્યવ્રતમાં આસક્ત મનવાળો થઈ જાય છે, અને ગામધર્મ મૈથુનના સેવનથી નિવૃત્ત થઈ જાય છે. તેથી તે જીવ જિતેન્દ્રિય બનીને નવવિધ બ્રહ્મચર્યની ગુપ્તિથી અથવા દશવિધ

चतुर्थभावनामाह–' चउत्थं ' इत्यादि ।

मूलम्–चउत्थं पुव्वरय–पुव्वकीलियपुव्वसंगंथसंथुया जे ते आवाहविवाहचोलकेसु य तिहिसु जण्णेसु उस्सवेसु य सिंगारागारचारुवेसाहिं हावभावललियविक्खेवविलास सालिणीहिं अणुकूलपेमियाहिं सद्धिं अणुभूया सयणसंपओगा उउ सुहवरकुसुमसुरभिचंदणसुगंधवरवासधूवसुहफरिसवत्थभूसणगुणोववेया रमणिज्जा उज्जगेज्जपउरणडणट्टगजल्लमल्लमुट्ठियवेलंबगकहगपवगलासगआइक्खलंखमंखतूणइल्लतुंबवीणियतालायरपकरणाणि य बहूणि महुर–सरगीय–सुस्सराइं अण्णाणि य एवमाइयाणि तव–संजमबंभचेरघाओवघाइयाइं अणुचरमाणेणं बंभचेरं न ताइं समणेण लब्भा दट्ठुं न कहेउं न वि य सुमरेउं जे, एवं पुव्वरय पुव्वकीलिय विरइसमिइजोगेण भाविओ भवइ अंतरप्पा आरयमणा विरयगामधम्मे जिइंदिए बंभचेरगुत्ते ॥ सू० ९ ॥

टीका–'चउत्थं' चतुर्थी–पूर्वरतपूर्वक्रीडितस्मरणविरतिरूपां भावनामाह–'पुव्वरयपुव्वकीलियपुव्वसंगंथसंथुया' पूर्वरतपूर्वक्रीडितपूर्वसंग्रन्थसंस्तुताः, तत्र–पूर्वं रतम्-

---

चर्य समाधि स्थान से युक्त बन जाता है ।

भावार्थ—इस सूत्र द्वारा सूत्रकार ने ब्रह्मचर्य व्रत की तृतीय भावना का कथन किया है । इस में रागभाव से युक्त बनकर साधु को स्त्री के रूपादि निरीक्षण करने का सर्वथा त्याग करना कहागया है॥सू०८॥

સમાધિસ્થાનથી યુક્ત બની જાય છે.

ભાવાર્થ—આ વ્રતદ્વારા સૂત્રકારે બ્રહ્મચર્ય વ્રતની ત્રીજી ભાવનાનું વર્ણન કર્યું છે. તેમાં રાગ ભાવથી યુક્ત થઈને સ્ત્રીના રૂપાદિનું નિરીક્ષણ કરવાનો સાધુએ પરિત્યાગ કરવો જોઈએ તે બતાવ્યું છે ॥ સૂ. ૮ ॥

=गृहस्थावस्थाकालिकी कामरतिः, पूर्वक्रीडितम्=गृहस्थावस्थाश्रितं स्त्रीभिः सह क्रीडनम्, पूर्वसग्रन्थसंस्तुताः=पूर्वं=गृहस्थावस्थायां ये संग्रन्थाः=श्वसुरकुलसंबन्धसंबद्धाः श्यालकश्यालिकादयः श्यालकभार्यादयश्च, तथा-संस्तुता दर्शनभाषणादिभिः परिचिताः, एषां द्वन्द्वः, एते श्रमणेन न द्रष्टुं न कथयितुं न वा स्मर्तुं लभ्याः इति परेण संबन्धः। तथा-'जे ते' ये ते 'आवाहविवाहचोलकेसु' आवाहविवाहचूलकेषु, तत्र-आवाहो-वध्वावरगृहानयनम्, विवाहः=पाणिग्रहणं, चूलक

अब इस व्रत की चौथी भावना को कहते हैं--'चउत्थं पुव्वरय०' इत्यादि०।

टीकार्थ—(चउत्थं) ब्रह्मचर्य व्रत की पूर्वरत पूर्वक्रीडित स्मरण-विरतिनाम की चौथी भावना इस प्रकार है-(जे ते) जो वे (पुव्वरय पुव्वकीलियपुव्वसंगंथसंथुरा) पूर्वरत गृहस्थावस्था में जो कामकेलि की गई हो वह पूर्वरत है। गृहस्थावस्था में जो स्त्रियों के साथ क्रीडा की गई हो वह पूर्वक्रीडित है। तथा-गृहस्थावस्था में जिनके साथ श्वसुर, साले, साली, आदि का संबंध रहा हो, वे पूर्व संग्रन्थ हैं और जिनके साथ दर्शन भाषण आदि से अधिक परिचय रहा हो वे पूर्वसंस्तुत हैं। इन सब का ब्रह्मचर्य महाव्रत धारण करने बाद साधु को न स्मरण करना चाहिये, न उनका कथन करना चाहिये और न संबंधी आदि जनों को देखने की लालसा ही रखनी चाहिये। तथा (आवाहविवाह

હવે આ વ્રતની ચોથી ભાવનાનું કથન કરે છે. "चउत्थ पुव्वरय" ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—"चउत्थं" બ્રહ્મચર્ય વ્રતની ચોથી ભાવના "पूर्वरतपूर्वक्रीडित स्मरणविरति" નામની છે તે આ પ્રમાણે છે--"जे ते पुव्वरयपुव्वकीलिय पुव्वसंगंथसंथुरा" પૂર્વરત-ગૃહસ્થાવસ્થામાં જે કામક્રીડા કરાઇ હોય તે પૂર્વરત કહેવાય છે. ગૃસ્થાવસ્થામાં સ્ત્રીઓની સાથે જે ક્રીડા કરાઇ હોય તે પૂર્વક્રીડિત કહેવાય છે તથા ગૃસ્થાવસ્થામાં જેમની સાથે સસરા, સાળા, સાળી આદિનો સબંધ રહ્યો હોય ને પૂર્વ સગ્રન્થ કહેવાય છે અને જેમની સાથે દર્શન, ભાષણ આદિથી વધારે પરિચય રહ્યો હોય તેઓ પૂર્વ સસ્તુત કહેવાય છે. બ્રહ્મચર્ય મહાવ્રત ધારણ કર્યા પછી સાધુએ એ બધાનું સ્મરણ કરવુ જોઇએ નહીં, તેમની વાત કરવી જોઇએ. નહી અને સંબંધી આદિ જનોને જોવાની લાલસા રાખવી જોઇએ નહીં. તથા आवाहविवाहचोलकेसुय' આવાહ--વધૂને વરના ઘેર લાવતી વખતે, વિવાહ પ્રસંગે, તથા બાળકોના ચૂડાકર્મ સંસ્કારના

=चूडाकर्म=बालानां शिखाधारणम्, एषां द्वन्द्वः, तेषु तथोक्तेषु च=पुनः 'तिहिसु' तिथिषु=मदनत्रयोदशीप्रभृतिषु, तथा-'जण्णेसु' यज्ञेषु = नागादिपूजाप्रकरणेषु, तथा 'उस्सवेसु' उत्सवेषु=इन्द्रोत्सवादिषु च 'सिंगारागारचारुवेसाहिं' शृङ्गारागारचारुवेषाभिः=शृङ्गारस्य = शृङ्गाररसस्य आगारभूता याश्चारुवेषाः=शोभन नेपथ्यसंपन्नास्ताभिः, तथा-'हावभावललियविक्खेवविलासमालिणीहिं' हावभावललितविक्षेपविलासशालिनीभिः-तत्र हावः=कामजनितो मुखविकारः, भावः=कामजनिताः चित्तसमुन्नातिः, तदुक्तम् 'हावो मुखविकारः स्याद् भावश्चित्तसमुन्नतिः' इति। ललितम्=चेष्टाविशेषः, तदुक्तम्—

" हस्तपादाङ्गविन्यासो भ्रूनेत्रोष्ठप्रयोजितः ।
सुकुमारो विधानेन ललित तत्प्रकीर्तितम् ॥ १ ॥ " इति ।

विक्षेपः—चेष्टाविशेषः, तल्लक्षणं त्विदम्—

अप्रयत्नेन रचितो, धम्मिल्लः श्लथबन्धनः ।
एकांशदेशधरणैस्ताम्बूललवलाञ्छनम् ॥ १ ॥
ललाटैकान्तलिखितां, विषमां पत्रलेखिकाम् ।
असमञ्जसविन्यस्त मञ्जनं नयनाब्जयोः ॥ २ ॥
तथा-अनादरबद्धत्वाद् ग्रन्थेर्जघनवाससः ।
वसुधालम्बितः प्रान्तः, स्कन्धात्स्रस्तस्तथांऽशुकः ॥ ३ ॥
जघने हारविन्यासो रशनायास्तथोरसि ।
इत्यवज्ञाकृतं यत्स्यादज्ञानादिवमण्डनम् ॥ ४ ॥
वितनोति परां शोभां स विक्षेप इति स्मृतः ॥ "

विलासः-चेष्टाविशेषः, सतु-" स्थानासनगमनानां हस्तभ्रूनेत्रकर्मणां चैव। उत्पद्यते विशेषो यः श्लिष्टः स तु विलासः स्यात् ॥ १ ॥ " इति ।

चोलकेसु य) आवाह-वधू को वर के घर पर लाने के समय में, विवाह के अवसर में, बालकों के चूड़ा (चोटी) कर्म संस्कार के प्रसंग में, तथा (तिहिसु) मदनत्रयोदशी आदि तिथियों में, तथा (जण्णेसु) नागादिकों की पूजा के अवसर रूप यज्ञों में, तथा (उस्सवेसु य) इन्द्रोत्सव आदि उत्सवों में, (सिंगारागारचारुवेसाहिं) शृंगाररस की घरभूतबनी हुई तथा सुन्दर वेषभूषा से सज्जित हुई ऐसी तथा (हावभावललिय-

---

પ્રસંગમાં તથા "तिहिसु" મદન ત્રયોદશી આદિ તિથિઓમા, તથા "जण्णेसु" નાગાદિકોની પૂજાના અવસરરૂપ યજ્ઞોમા તથા "उस्सवेसु य" ઇન્દ્રોત્સવ આદિ ઉત્સવોમાં, "सिंगारागारचारुवेसाहिं" શૃંગાર રસના આગારરૂપ બનેલી તથા સુંદર વેષભૂષાથી સુસજ્જિત થયેલી તથા "हावभावललियविक्खेवविलाससा-

एभिः शालन्ते शोभन्ते यास्ताभिः, तथा-'अणुकूलपेमियाहिं' अनुकूलप्रेमिकाभिः=अनुकूलं=मनोऽभिरुचिकरं प्रेम=प्रीतिर्यासां ताभिः, एतादृशीभिः 'सद्धिं' सार्धम्, 'अणूभूया' अनुभूताः=अनुभवविषयीकृताः 'सयणसंपजोगा' शयनसंप्रयोगाः=शयनानि च संप्रयोगाः=सम्पर्काश्चेति इतरेतरयोगद्वन्द्वः, शयनसंप्रयोगाः ? इत्याह-'उ उ सुहवरकुसुमसुरभिचंदणसुगंधवरवासधूव सुहफरिसवत्थभूसणगुणोववेया' ऋतुसुखवरकुसुमसुरभिचन्दनसुगन्धवरवासधूप सुखस्पर्शवस्त्रभूपणगुणोपपेताः, तत्र-ऋतुसुखानि=कालोचितानि यानि वरकुसुमानि, तथा-सुरभिचन्दनस्य सुगन्धो शोभनामोदयुक्तो वरः=श्रेष्ठो यो वासः=गन्धः सः, तथा-धूपः, तथा-सुखस्पर्शानि यानि वस्त्राणि, तथा-भूषणानि च, तेषां ये गुणास्तैरुपपेतास्ते श्रमणेन द्रष्टुं कथयितुं स्मर्तुं वा न योग्याः। तथा-'रमणिज्जा उज्ज-गेज्जप-

---

विक्खेवविलाससालिणीहिं) हाव, भाव, ललित, विक्षेप और विलास से सुहावना स्त्रियों के साथ तथा (अणुकूलपेमियाहिं) जिनकी प्रीति मन को मुदित करने वाली होती है ऐसी (इत्थीहिं सद्धिं) स्त्रीयों के साथ भोगे गये शयन संबंधी और संपर्क संबंधो पूर्वकालिक भोगों का कि जो (उ उमुहवरकुसुमसुरभि-चंदण-सुगंध-वर-वासधूव-सुहफरिस-वत्थभूसण-गुणोववेया) कालोचित कुसुमों की सुगंधि आदि रूप गुणों से विशेष रूप में आकर्षक होते थे, सुरभिचंदन की श्रेष्ठ गंध से जो मनोमोहक बने रहते थे, कृष्णागुरु आदि सुगंधित द्रव्यों की धूप के संसर्ग से जिनमें से महक उडा करती थी तथा वस्त्र और आभूषणों के आडम्बर की छटा से जिन्हे भोगने लिए चित्त परवस लालायित बन जाया करता था, उन सब साधु को कभी भी स्मरण नहीं करना चाहिये, किसी से ऐसे भोगों की बातें नहीं करना चाहिये और न ऐसे

लिणीहिं" હાવ, ભાવ, વિક્ષેપ અને વિલાસથી શોભતી સ્ત્રીઓની સાથે તથા "अणुकूलपेमियाहिं" જેની પ્રીતિ મનને આનંદિત કરનારી હોય છે એવી "इत्थीहिं सद्धिं" સ્ત્રીઓની સાથે ભોગવેલ શયન સંબંધી કે સંસર્ગ સબંધી પૂર્વ કાલિક ભોગોનું કે જે 'उ उमुहवर-कुसुमसुरभि-चदण-सुगंध-वरसाधूवसुह फरिसवत्थ-भूसण-गुणोववेया" કાલોચિત પુષ્પોના સુગંધી આદિરૂપ ગુણોથી વિશેષ આકર્ષક થતું હતું, સુરભિ ચંદનની શ્રેઠ ગંધથી જે મનોહર બનતું હતું, કૃષ્ણાગરૂ આદિ સુગંધિત દ્રવ્યોના ધૂપના સંસર્ગથી જેનામાં મહક ઉઠયા કરતી હતી તથા વસ્ત્ર અને આભૂષણોના આડંબરની છટાથી જેને ભોગવવાને માટે મન લલચાઈ ગયાં કરતું હતું, એ બધી વાતનું સાધુએ કદીપણુ સ્મરણુ કરવું જોઈએ નહીં, કોઇની સાથે એવા ભોગોની વાત કરવી જોઈએ નહીં,

भोगों की ओर लक्ष्य ही रखना चाहिये। काम से जो मुख पर एक प्रकार की विकृति आ जाती है उसका नाम हाव है। काम से उद्‌भूत जो चित्त में एक प्रकार की उन्नति आ जाती है उसका नाम भाव है। एक विशेष प्रकार की चेष्टा का नाम ललित है। यह चेष्टा स्त्रियों के हस्त पाद, शरीर, भ्रू, नेत्र और ओष्ठ आदि में होती है। विक्षेप नाम चित्त की असावधानी का है। जब ललना जनों का चित्त इस विक्षेपनाम की चेष्टाविशेष से युक्त हो जाता है तो उनमें विशेष प्रकार की चेष्टाएँ जाग्रत होने लगती हैं जैसे वे अपनी चोटी को ढीली बांध लेती हैं। नीवी उनकी शिथिल बंध वाली हो जाती है। मस्तक पर सिन्दुर बिन्दु की जगह कज्जल की रेखा और आंखों में सिन्दूर की रेखा लगाली जाती है। अथवा आंखों में जो अंजन लगाती हैं वह भी अस्त व्यस्त रूप में लगा लेतीं है! इत्यादि सब प्रकार की उनकी मण्डन विधि अवज्ञाकृत होती है। फिर भी इस स्थिति में उनकी शोभा में न्यूनता नहीं आती है। स्थान, आसन, गमन आदि में जो एक प्रकार की विशेषता आ जाती है वह विलास है। इसी तरह (रमणिज्जा 'उज्जगेज्जपउरणडणट्टग जल्लमल्लमुट्ठिकवेलंबग-कहगपवग-लासग-आइक्खग-लंखमंख-तूणइल्ल

અને એવા ભોગોની તરફ લક્ષ્ય પણ રાખવું જોઈએ નહીં કામ ભાવથી મૂખ પર જે એક પ્રકારની વિકૃતિ આવી જાય છે તેને 'હાવ' કહે છે કામાતુર ચિત્તમાં જે એક પ્રકારની ઉન્નતિ આવી જાય છે તેને 'ભાવ' કહે છે એક વિશેષ પ્રકારની ચેષ્ટાનું નામ લલિત છે તે ચેષ્ટા સ્ત્રિઓના હાથ, પગ, શરીર ભ્રૂ, નેત્ર અને ઓષ્ઠ આદિમા થાય છે ચિત્તની અસાવધાનીને વિક્ષેપ કહે છે. જ્યારે સ્ત્રિઓનું ચિત્ત આ વિક્ષેપ નામની વિશિષ્ટ ચેષ્ટાથી યુક્ત થઇ જાય છે ત્યારે તેમનામાં વિશેષ પ્રકારની ચેષ્ટાઓ જાગૃત થવા માડે છે જેમ કે તેઓ પોતાના ચોટલાને ઢીલો બાધી લે છે. તેની નાડીનું બંધન શિથિલ થઈ જાય છે મસ્તક પર સિન્દૂરના બિન્દુની જગ્યાએ કાજળની રેખા અને આંખોમાં કાજળને બદલે સિન્દૂરની રેખા લાગી જાય છે અથવા આંખોમાં જે આંજણ આંજવામા આવે છે તે પણ અસ્તવ્યસ્ત રીતે અંજાઇ જાય છે ઇત્યાદિ બધા પ્રકારની તેમની મડનવિધિ અવગણવાને પાત્ર છે છતાં પણ એવી પરિસ્થતિમાં પણ તેમનાં રૂપમાં ન્યૂનતા આવતી નથી સ્થાન, આસન, ગમન આદિમાં જે એક પ્રકારની વિશિષ્ટતા આવી જાય છે તેનુ નામ વિલાસ છે. એ જ રીતે "रमणिज्जा—उज्जगेज्ज—पउरणडणट्टगजल्लमल्ल-मुट्ठियवेलंबग-कहगपहग-लासग आइक्खग-लंखमंख-तूणइल्ल-तुंब वीणिय तालायर-पकरणाणि य" સુંદર વાદ્ય અને

उरणडणट्टगजल्लमल्लमुट्ठियवेलंवगकहगपवगलासग- आइक्खगलंखमंखतूण-इल्ल तुंववीणिय तालायरपकरणाणि य' रमणीयातोद्यगेयप्रचुरनटनर्तकजल्लमल्लमौष्टिकविडम्बककथकप्लवकलासकाख्यायकलङ्ख-मङ्खतूणिक-तुम्ब-वीणिक-तालाचरप्रकरणानि च, तत्र-रमणीयं=मनोहरं यत् आतोद्यं=वाद्यं, गेयं=गानं, तथा प्रचुराः ये नटाः=नाटचकारकाः, नर्त्तकाः = नृत्यकारिणः, जल्लाः=चर्मरज्जुमवलम्ब्यक्रीडाकारका, मल्लाः = मल्लयुद्धकारिणः, मौष्टिकाः=मुष्टियुद्धकारिणः, विडम्बकाः=विदूषकाः, कथकाः='कत्थक' इति प्रसिद्धाः, गान्धर्वविद्याविशारदाः, प्लवकाः=कूर्दनकारकाः, लासकाः='लास्ये' ति नाटकविशेषकारिणः, आख्यायकाः=कथाकारकाः, लङ्खाः=महावंशाग्रभागमधिरुह्य क्रीडाकारिणः, मङ्खाः= चित्रफलकहस्ताः भिक्षुकाः, तूणिकाः=तूणाभिधानवाद्यविशेषवादकाः, तुम्बवी-

---

तुंव-वीणियकालायरपकरणाणि य) रमणीय वाद्य और गेय की प्रक्रिया को, तथा-नट-नाटककरने वाले नटों के नाचने वाले नर्त्तकों के, चर्म रज्जु का सहारा लेकर विविध प्रकार की क्रीडा करने वालों जल्लों के, मल्ल युद्ध करने वाले मल्लों के, मुष्टि से युद्ध करने वाले मौष्टिकों के, अनेक प्रकार के स्वांग धर कर जनता के चित्त को रंजित करने वाले विदूषकों के, विविध प्रकार की लौकिक कथा कहने वाले कथकजनों के, अथवा गाँधर्व विद्या में निपुण जनों के, कूदने, उछलने में विशेष निपुणता प्राप्त प्लवक जनों के, विशेष नाटकों को करने वाले लासक जनों के, कहानी अथवा उपन्यास को कहने वाले आख्यायक मनुष्यों के, बड़े २ वांसों के अग्रभाग पर चढ़कर विविध प्रकार की नटक्रीडा करने वाले लंखजनों के, चित्रफलक, हाथ में लेकर इधर उधर फिरने वाले भिक्षुक रूप मखजनों के, तूणनामक वाद्य विशेष को बजाने वाले

ગેયની પ્રક્રિયાને, તથા નટ-નાટક કરનાર નટોને નૃત્યકારોને. ચર્મરજ્જુની મદદથી વિવિધ પ્રકારની ક્રીડા કરનાર જલ્લોને, મલ્લયુદ્ધ કરનાર મલ્લોને, મુષ્ટિથી યુદ્ધ કરનાર મૌષ્ટિકોને, અનેક પ્રકારના વેષ લઈને જનતાનુ મનોરંજન કરનાર વિદૂષકોને, વિવિધ પ્રકારની લોકકથા કહેનાર કથાકારોને, અથવા ગાંધર્વ વિદ્યામા નિપુણ લોકોને, કૂદવામા ખાસ નિપુણતા ધરાવનાર પ્લવકોને, ખાસ ઉત્સવ પ્રસગે ખાસ નાટકો કરનાર લાસકોને, કથા અથવા નવલકથા કહેનાર આખ્યાનકારને, મોટાં મોટા વાસની ટોચે ચડીને વિવિધ પ્રકારના નાટચ પ્રયોગો કરનાર લખજનોને, ચિત્રફલક હાથમાં લઈને આમ તેમ ફરનાર ભિક્ષુકરૂપ મંખજનોને, તૂણનામના એક વાદ્યને વગાડનાર તૂણિકજનોને, તાલ

णिकाः=तुम्बवीणावादकाः, तालाचराः=तालं=हस्तघातरूपमाचरन्ति ये ते तथोक्ताः, तालवादिन इत्यर्थः, एषां द्वन्द्वः, तेषां यानि प्रकरणानि= प्रक्रियाः तानि, तथा–' बहूनि ' बहूनि=बहुविधानि, ' महुरसरगीयसुस्सराइं ' मधुरस्वरगीतसुस्वराणि=मधुरा स्वराः येषां तेषां गायकानां यानि सुस्वराणि गीतानि तानि, निष्ठान्तस्य पूर्वनिपातः, किं बहुना ' अण्णाणि य ' अन्यानि च ' एवमाइयाणि' एवमादिकानि=एवम्प्रकाराणि यानि तपः संयमब्रह्मचर्यघातोपघातकानि ' ताइं ' तानि ब्रह्मचर्यमनुचरता श्रमणेन ' न दट्ठुं ' न द्रष्टुं ' कहेउं ' न कथयितुं ' नवि य ' नापि च ' सुमरेउं ' स्मर्त्तुं ' लब्भा ' लभ्यानि=उचितानि एवं ' पुव्वरयपुव्वकीलियविरइसमिइजोगेण ' पूर्वरतपूर्वक्रीडितविरतिसमितियोगेन=तत्र, पूर्वरत पूर्वक्रीडिताभ्यां या विरतिस्तद्रूपो यः समितियोगस्तेन भावितोऽन्तरात्मा आरतमनाः=ब्रह्मचर्यासक्तमनाः=विरतग्राम्यधर्मो जितेन्द्रियो ब्रह्मचर्यगुप्तश्च भवति ९

तूणिकजनों के, तुंबडी की बींणाको बजानेवाले तुम्बवीणिकों के, ताल बजाकर जनताका चित्तरंजित करनेवाले तालचरों के, जितने भी कार्य हैं उनको, तथा–(बहूणि महुरसरगीयसुस्सराइं) और भी अनेकविध मधुर स्वर वालोंके जितने भो सुस्वर संपन्न गीत हैं उनको तथा (अण्णाणि य एवमाइयाणि) और अधिक क्या कहे इसी प्रकारके और भी जो (तवसंजमबंभचेरघाओवघाइयाइं) तप, संयम और ब्रह्मचर्य के घातक, उपघातक कार्य हैं–उन्हें (बंभचेरं अणुचरमाणेणं समणेणं) ब्रह्मचर्यका पालन करने वाले साधुजन को (न ताइं दट्ठुं) नहीं देखना कल्पता है (न कहेउं) न उनका कहना योग्य है और (न वि य सुमरेउं लब्भा) न पूर्व में देखे गये ऐसे कार्यों को याद करना ही उचित है। (एवं पुव्वरयपुव्वकीलियविरइसमिइजोगेण भाविओ अंतरप्पा आरयमणा

બજાવીને જનતાનું મનોરંજન કરનાર તાલચરો તે સૌના જેટલા કાર્યો છે તથા " बहूणिमहुरसरगीयसुस्सराइं " બીજાં પણ અનેક વિધ મધુર સ્વરવાળાના જે જે સુસ્વર યુક્ત ગીત છે તેમને તથા ' अण्णाणि य एव माइयाणि " એ પ્રકારના બીજા પણ જે " तवसंजमबंभचेरघाओवघाइयाइं " તપ, સંયમ અને બ્રહ્મચર્યના ઘાતક ઉપઘાતક કાર્યો છે તેમને " बंभचेरं अणुचरमाणेणं समणेणं " બ્રહ્મચર્યનું પાલન કરનાર સાધુજનોએ " न ताइ दट्ठु " જોવા તે કલ્પતું નથી " न कहेउं " તેનુ કથન કરવુ તે પણ આયોગ્ય છે અને " न वि य सुमरेउं लब्भा ' પૂર્વે દેખેલ તેવા કાર્યોનું સ્મરણ કરવું તે પણ અયોગ્ય છે " एवं पुव्वरय–पुव्व–कीलिय–विरइ–समिइ–जोगेण भाविओ अंतरप्पा आर-

अथ पञ्चमीं भावनामाह—' पंचमं ' इत्यादि—

मूलम्—पंचमं आहारपणीयणिद्धभोयणविवज्जए संजए सुसाहू ववगयखीरदहिसप्पिनवणीयतेलगुडखंडमच्छंडिय-महुखज्जगविगइपरिचत्तकयाहारो न दप्पणं नबहुसो न निइगं न सायसूवाधियं न खद्धं तहा भोत्तव्वं जहा से जायामायाए भवइ, न य भवइ विब्भमो य भंसणा य धम्मस्स, एवं पणीयाहारविरइसमिइजोगेणं भाविओ

विरयगामधम्मे जिइंदिए बंभचेरगुत्ते भवइ) इस प्रकार से पूर्वरत, पूर्वक्रीडीतों में विरतिरूप समिति के योग से भावित अंतरात्मा–जीव-ब्रह्मचर्य में स्थिर मन वाला बन जाता है और ग्रामधर्म से मैथुन-कृत्य से–विरक्त हो जाता है। ऐसा वह महात्मा अपनी इंद्रियों को जीत कर नवविध ब्रह्मचर्य की गुप्ति से अथवा दशविध ब्रह्मचर्य के समाधिस्थान से युक्त बन जाता है।

भावार्थ—इस सूत्रद्वारा सूत्रकार ने ब्रह्मचर्य व्रत की चौथी भावना प्रकट की है। इस में यह कहा गया है कि ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करने वाले साधु को प्रव्रज्या लेने के पहिले गृहस्थाश्रम में भोगे गये विविध प्रकार के भोगों की याद नहीं करनी चाहिये। इस भावना का नाम पूर्वरत पूर्वक्रीडीत स्मरणविरति है। इसी विषय का विशेष वर्णन इस सूत्र में किया गया है ॥ सू० ९॥

यमणा विरयगामधम्मे जिइंदिए बंभचेरगुत्ते भवइ " આ પ્રકારે પૂર્વરત, પૂર્વ-ક્રીડિતોમા વિરતિરૂપ સમિતિના યોગથી ભાવિત થયેલ અંતરાત્મા–જીવ બ્રહ્મ-ચર્યમાં આસક્ત મનવાળો બની જાય છે અને ગ્રામધર્મથી–મૈથુન ક્રિયાથી વિરક્ત થઇ જાય છે. એવો તે મહાત્મા પોતાની ઇન્દ્રિયોને જીતીને બ્રહ્મચર્યની ગુપ્તિથી અથવા દશવિધ બ્રહ્મચર્યના સમાધિસ્થાનથી યુક્ત થઇ જાય છે.

ભાવાર્થ—આ સૂત્ર દ્વારા સૂત્રકારે બ્રહ્મચર્ય વ્રતની ચોથી ભાવના પ્રગટ કરી છે તેમાં એ બતાવવામા આવ્યું છે કે બ્રહ્મચર્ય વ્રતનું પાલન કરનાર સાધુએ દીક્ષા લીધા પછી પહેલા ગૃસ્થાશ્રમમાં ભોગવેલ વિવિધ પ્રકારના ભોગોને યાદ કરવા જોઇએ નહી. આ ભાવનાનુ નામ " પૂર્વરત પૂર્વક્રીડિત સ્મરણ વિરતિ "છે. આ જ વિષયનું વધુ વર્ણન આ સૂત્રમાં કર્યું છે. ॥ સૂ. ૯ ॥

भवइ अंतरप्पा आरयमणा विरयगामधम्मे जिइंदिए बंभचेरगुत्ते ॥ सू० १० ॥

टीका—' पंचमं ' पञ्चमीं प्रणीतभोजनवर्जनरूपां भावनामाह–' आहारपणीयनिद्धभोयणविवज्जए ' आहारप्रणीतस्निग्धभोजनविवर्जनः–आहारः = अशनादिः, स च प्रणीतः=प्रगलत्स्नेहबिन्दुश्च, तथा–स्निग्धं=चिक्कणं च तद् भोजनं च=स्निग्धभोजनम् , अनयो र्द्वन्द्वः, तस्य विवर्जकः=परित्यक्ता, तथा ' संजए ' संयतः=संयमवान् ' सुसाहू ' सुसाधुः=निर्वाणसाधक योगसाधनतत्परः, तथा–' ववगयखीरदहिसप्पिनवणीयतेलगुडखंडमच्छंडियखज्जगविगइपरिचत्तकयाहारो' व्यपगतक्षीरदधिसर्पिर्नवनीततैलगुडखण्डमत्स्यण्डिकमधुखाद्यकविकृतिपरित्यक्तकृताहारः–तत्र–व्यपगताः=परिहृताः क्षीरं= दुग्धं, दधि–प्रसिद्धम् , सर्पिः=घृतम् , नवनीतं='मक्खन' इति भाषाप्रसिद्धम् , तैलं प्रसिद्धम् , गुडः=प्रसिद्धः खण्डः=शर्करा,

---

अब सूत्रकार इस व्रत की पांचवी भावना को कहते हैं—' पंचमं-आहारपणीय ' इत्यादि०।

टीकार्थ—(पंचमं) पांचवीं भावना इस व्रत की प्रणीत भोजन वर्जन रूप है, वह इस प्रकार से है-(आहारपणीयनिद्धभोयणविवज्जए) जो आहार प्रणीत–जिसमें से घृत की बिन्दुएँ नीचे टपक रही हों ऐसे कामोद्दीपक तथा स्निग्ध–रसयुक्त हो साधु को वह नहीं खाना चाहिये। क्यों कि वह (संजए) वह संयमवाला होता है और (सुसाहू) निर्वाण साधक मनोवाक्काय योग के साधन करने में तत्पर रहता है, इसलिये उसको (ववगयखीरदहिसप्पिनवणीयतेलगुडखंडमच्छंडियमंहुखज्जगविगइपरचित्तकयाहारो) दूध, दही, घृत, मक्खन, तैल, गुड,

---

હવે સૂત્રકાર આ વ્રતની પાચમી ભાવના બતાવે છે–"पंचमं आहारपणीय" ઈત્યાદિ

ટીકાર્થ–" पंचमं " આ વ્રતની પાંચમી ભાવના " प्रणीतभोजन " ત્યાગ નામની છે. તે આ પ્રમાણે છે–"आहारपणीयनिद्धभोयणविवज्जए" જે પ્રણીત, એટલે કે જેમાંથી ઘીના ટીપા નીચે ટપકતાં હોય એવો કામોદ્દીપક તથા સ્નિગ્ધરસ યુક્ત આહાર સાધુએ ખાવો જોઈએ નહીં. કારણ કે તે " संजए " સંયમી હોય છે અને "सुसाहू" નિર્વાણનાસાધક મનો વાક્કાય યોગ સાધવાને તત્પર હોય છે તેથી તેમણે " ववगय-खीर दहिसप्पि-नवणीयतेलगुडखंडमच्छंडियमहुखज्जगविगइ परचित्तकयाहारो " દૂધ, દહીં, ઘી, માખણ, તેલ, ગોળ, સાકર, ખાંડ વગેરેથી

मत्स्यण्डिका='मिश्री'ति प्रसिद्धा च यस्मात्सः, तथा-मधुप्रसिद्धम् , खाद्यकं='खाजा' इति प्रसिद्धम् , इत्यादि लक्षणाभिः विकृतिभिः परित्यक्तो यः सः, अनयोः कर्मधारयः, एतद्रूपो यः आहारः स कृतो येन स तथोक्तः, अन्त=प्रान्तभोजीत्यर्थः निष्ठान्तस्य पूर्वनिपातः, एतादृशः साधुः ' न ' नैव ' दप्पणं ' दर्पणं=दर्पकारकं भोजनं भुञ्जीत । तथा-न ' बहुसो ' बहुशः=दिनमध्येऽनेकवारं भोजनं कुर्वीत । तथा-' न निइगं ' नैत्यिकं-नित्यपिण्डं भुञ्जीत, तथा-न ' सायसूप्पाधिगं ' शाकसूपाधिकंभोजनं भुञ्जीत । तथा-' खद्धं ' प्रचुरं भुञ्जीत । कथं तर्हि भोक्तव्यम् ? इत्याह-' तहा ' तथा ' भोत्तव्वं ' भोक्तव्यम् , ' जहा ' यथा—तद् भोजनं ' से ' तस्य ब्रह्मचारिणः, ' जायमायाए ' यात्रामात्रायै, यात्रायै=संयमयात्रानिर्वाहार्थं या मात्रा=आहारपरिमाणरूपा भगवन्निर्दिष्टा सा यात्रामात्रा तस्यै,

शर्करा, मिश्री, इनसे रहित तथा मधु खाजा, इत्यादिरूप विकृतियोंसे रहित आहार करना चाहिये। अर्थात् साधुको अन्त प्रान्तभोजी होना चाहिये। जो साधु इस प्रकार का आहार लेता है वह युक्त नहीं हैं—उसे (न दप्पणं) दर्पकारक भोजन नहीं करना चाहिये (न बहुसो) न दिन में अनेक बार भोजन करना चाहिये (न निइगं) न उसे नित्य पिंड भोजी ही होना चाहिये और (न सायसूवाहिय) न उसे शाक और दाल की अधिकतावाला भोजन ही करना चाहिये (न खद्दं) न उसको प्रचुरमात्रा में भोजन करना चाहिये। किन्तु इस प्रकार से भोजन करना चाहिये कि (जहा) जिससे वह भोजन (से) उस ब्रह्मचारी की (जायामायाए भवइ) यात्रा मात्रा के लिये हो अर्थात् संयम के निर्वाह के लिये हो। यात्रामात्रा का तात्पर्य है कि संयमनिर्वाह रूप यात्रा के लिये आहार का परिमाण जितना प्रभु ने निर्दिष्ट किया है वह आहार

રહિત તથા મધ, ખાજા ઈત્યાદિ વિકૃતિઓથી રહિત આહાર કરવો જોઈએ. એટલે કે સાધુએ અન્ત પ્રાન્તભોજી થવુ જોઈએ જે સાધુ આ પ્રકારનો આહાર લે છે તેણે " न दप्पणं " દર્પકારક ભોજન લેવુ જોઈએ નહી " न बहुसो " દિવસમા અનેક વાર ભોજન લેવુ જોઇએ નહીં ' न निइगं " તેણે નિત્યપિંડ ભોજી થવુ જોઈએ નહીં, અને " न सायसूवाहियं " તેણે વધારે દાળશાક યુક્ત ભોજન લેવુ નહીં ' न खद्दं " તેણે વધારે પ્રમાણમા ભોજન કરવું જોઈએ નહી. પણ એવી રીતે ભોજન કરવુ જોઇએ કે " जहा " જેથી તે ભોજન " से " તે બ્રહ્મચારીની " जायामायाए भवइ " યાત્રમાત્રાને માટે જ હોય, એટલે કે સંયમના નિર્વાહને માટે જ હોય યાત્રામાત્રાનુ તાત્પર્ય એવુ છે કે સંયમ નિર્વાહરૂપ યાત્રાને માટે ભગવાને આહારનું જેટલુ પ્રમાણ દર્શાવ્યું

संयमयात्रार्थमित्यर्थः, ' भवइ ' भवति । एवं सति ' धम्मस्स ' धर्मस्य विषये, ' विब्भमो वा ' विभ्रमो=धातूपचयेन मनसोऽस्थिरत्वाद् भ्रान्तिश्च न भवति, तथा—धर्मस्य ' भंसणा ' भ्रंशना नाशश्च न भवति । एवम्=अनेन प्रकारेण 'पणीयाहारविरइसमिइजोगेण ' प्रणीताहारविरतिसमितियोगेन=प्रणीतो य आहारस्तस्माद् या विरतिस्तद्रूपो यः समितियोगस्तेन भावितोऽन्तरात्मा आरतमना विरतग्रामधर्मो जितेन्द्रियो ब्रह्मचर्यगुप्तश्च भवति ॥ सू०१० ॥

उतना ही होना चाहिये। ऐसा होने पर (धम्मस्स विब्भमो वा भंसणा य न य भवइ) धर्म के विषय में, धातु के उपचय से मानसिक अस्थिरता होने के कारण जो भ्रान्ति होती है वह नहीं हो सकती है, और न उसके धर्म का ध्वंस (नाश) ही हो सकता है । (एवं पणीयाहारविरइसमिइजोगेण भाविओ अंतरप्पा आरयमणा विरयगामधम्मे जिइंदिए बंभचेरगुत्ते भवइ) इस प्रकार प्रणीताहारविरतिरूप समिति के योग से भावित बना हुआ मुनि अपने द्वारा ग्रहीत ब्रह्मचर्य में संलग्न मनवाला बन जाता है और ग्रामधर्म—मैथुन से—विरत हो जाता है । इस प्रकार अपनी इन्द्रियोंको जीत कर वह महात्मा नवविध ब्रह्मचर्य की गुप्तिसे अथवा दशविध ब्रह्मचर्यके समाधिस्थानसे युक्त बन जाता है ।

भावार्थ—इस सूत्रद्वारा सूत्रकार ने ब्रह्मचर्य व्रत की पांचवीं भावना प्रकट की है । इस भावना का नाम प्रणीताहार वर्जन है । ब्रह्मचर्य व्रत धारण करने वाले साधु को ऐसा भोजन नहीं करना चाहिये जो

છે તેટલા પ્રમાણમાં જ તે આહાર હોવો જોઈએ. એવું થતાં " धम्मस्स विब्भमो वा भसणा य न य भवइ " ધર્મના વિષયમાં, ધાતુનો સંગ્રહ થવાને કારણે માનસિક અસ્થિરતા થવાથી જે ભ્રાન્તિ થાય છે, તે થઇ શકતી નથી, "एवं पणीयाहारविरइसमिइजोगेण भाविओ अंतरप्पा आरयमणा विरयगामधम्मे जिइंदिए बंभचेरगुत्ते भवइ " આ પ્રકારે પ્રણીતાહાર વિરતિરૂપ સમિતિના યોગથી ભાવિત થયેલ મુનિ પોતે ગ્રહણ કરેલ બ્રહ્મચર્ય વ્રતમાં આસક્ત મનવાળો થઇ જાય છે અને ગામધર્મ-મૈથુનથી વિરક્ત થઇ જાય છે. આ રીતે પોતાની ઈન્દ્રિયોને જીતીને તે મહાત્મા નવવિધ બ્રહ્મચર્યની ગુપ્તિથી અથવા દશવિધ બ્રહ્મચર્યના સમાધિસ્થાનથી યુક્ત બની જાય છે.

ભાવાર્થ:-આ સૂત્રદ્વારા સૂત્રકારે બ્રહ્મચર્યવ્રતથી પાંચમી ભાવનાનું સ્પષ્ટીકરણ કર્યું છે આ ભાવનાનુ નામ ' પ્રણીતાહાર વર્જન " છે. બ્રહ્મચર્યવ્રત ધારણ કરનાર સાધુએ એવુ ભોજન લેવુ ન જોઈએ કે જે કામોદ્દીપક રસ યુક્ત

अथोपसंहरन्नाह—' एवमिणं ' इत्यादि ।

मूलम्—एवमिणं संवरस्स दारं सम्मं संचरियं होइ सुप्पणिहियं इमेहिं पंचहिं वि कारणेहिं मणवयणकायपरिरक्खिएहिं णिच्चं आमरणंतं एसो जोगो णेयव्वो धिइमया मइमया अणासवो अकलुसो अच्छिद्दो अपरिस्साई असंकिलिट्ठो सुद्धो सव्वजिणमणुण्णाओ । एवं चउत्थं संवरदारं फासियं पालियं सोहियं तीरियं किट्टियं सम्मं आराहियं आणाए अणुपालियं भवइ । एवं नायमुणिणा भगवया पण्णवियं परूवियं पसिद्धं सिद्धवरसासणमिणं आघवियं सुदेसियं पसत्थं चउत्थं संवरदारं समत्तं त्तिबेमि ॥सू०११॥

॥ इय पण्हावागरणाणं चउत्थं संवरदारं समत्तं ॥

टीका—' एवं ' एवम्=पूर्वोक्तप्रकारेण ' इणं ' इदम् ' संवरस्स ' संवरस्य=चतुर्थस्य ब्रह्मचर्यनामकस्य संवरस्य ' दारं ' द्वारं 'सम्मं ' सम्यक् 'संचरियं'

कामोद्दीपक रसयुक्त हो। साधु तो अन्त प्रान्त भोजी होता है. अतः उसको दर्पकारक भोजन का परित्याग करते हुए दिन में अनेक वार भी भोजन नहीं करना चाहिये और न उसे नित्यपिंड भोजी ही होना चाहिये। अधिक भोजन संयमाचार में प्रमाद और प्रणीत रसवाला भोजन मानसिक अस्थिरताका कारण बनता है इसलिये उसे नित्य इस प्रणीताहार विरतिरूप समितिके योगसे अवश्य भावित रहनाचाहिये॥१०॥

अब सूत्रकार इस विषय का उपसंहार करते हुए कहते हैं—'एव-

હોય. સાધુ તો અન્તપ્રાન્ત ભોજી હોય છે. તેથી તેણે દર્પકારક ભોજનનો પરિત્યાગ કરવો જોઈએ દિવસમા અનેક વાર ભોજન લેવું જોઇએ નહીં અને તેણે નિત્ય પિંડ ભોજી પણ થવું જોઇએ નહીં અધિક ભોજન સંયમાચારમાં પ્રમાદ અને પ્રણીન રસવાળું ભોજન માનસિક અસ્થિરતાનુ કારણ બને છે. તેથી તેણે હંમેશા આ પ્રણીતાહાર વિરતિરૂપ સમિતિના યોગથી અવશ્ય ભાવિત રહેવું જોઇએ. ॥ સૂ. ૧૦ ॥

संचरितं=सम्यगाचरितं, ' सुप्पणिहियं ' सुप्रणिहितम्- एकाग्रतया समाराधितं ' होइ' भवति । ' इमेहिं पंचहिं वि ' एभिः=अनुपद प्रोक्तैर्पश्चभिरपि 'कारणेहिं' कारणैः=भावनारूपैः, कीदृशैः कारणैरित्याह—' मणवयणकायपरिरक्खिएहिं ' मनोवचनकायपरिरक्षितैः मनोवाक्कायैः सम्यक् समाराधितैः। कियत्कालम् ? इत्याह-' णिच्चं ' नित्यं=सर्वदा ' आमरणंतं ' आमरणान्तं=मरणपर्यन्तम् 'एसो' एषः=पूर्वोक्तो ' जोगो ' योगः=ब्रह्मचर्यरूपो ' णेयव्वो ' नेतव्यः=पालनीयः, केन ? इत्याह—' धिइमया मइमया ' धृतिमता मतिमता, कीदृशोऽयं योगः ? इत्याह—' अणासवो ' अनाश्रवः ' अकलुसो ' अकलुषः ' अच्छिद्दो ' अच्छिद्रः ' अपरिस्साई ' अपरिस्रावी ' असंकिलिट्ठो ' असंक्लिष्टः ' सुद्धो ' शुद्धः 'सव्व-

मिणं ' इत्यादि० ।

टीकार्थ—(एवमिणं) इस प्रकार से यह (संवरस्स दारं) चौथा ब्रह्मचर्य नामका संवरद्वार (सम्मं संचरियं) अच्छी तरह से पाले जाने पर (सुप्पणिहियं भवइ) स्थिर हो जाता है । इसलिये (इमेहिं पंचहिं वि कारणेहिं मणवयणकायपरिरक्खिएहिं) मन, वचन और काय, इन तीनों योगों से अच्छी तरह सुरक्षित किये गये इन पांच— भावनारूप कारणों से (निच्चं), सदा (आमरणंतं) जीवनभरतक (एसोजोगो) यह ब्रह्मचर्यरूप योग (णेयव्वो) चित्त की स्वस्थता एवं हेयोपादेय की विवेकता से युक्त हुए मुनिजन को पालन करना चाहिये। क्यों कि यह ब्रह्मचर्यरूप योग (अणासवो) नूतनकर्मों के आगमन से रहित होने के कारण अनाश्रवरूप है, (अकुलसो) अशुभ अध्यव-साय से वर्जित होनेके कारण अकलुष है, (अच्छिद्दो) पाप का स्रोत

હવે સૂત્રકાર આ વિષયનો ઉપસંહાર કરતાં કહે છે–" एवमिणं " ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—" एवमिणं " આ પ્રકારે આ " संवरस्स दारं " ચોથું બ્રહ્મચર્ય નામનુ સંવરદ્વાર " सम्मं संचरियं " સારી રીતે પાળવામાં આવે તો " सुप्पणिहियं भवइ " સ્થિર થઈ જાય છે. " इमेहिं पंचहिं वि कारणेहिं मणवयणकाय परिरक्खिएहिं " મન, વચન અને કાય, એ ત્રણે યોગથી સારી રીતે સુરક્ષિત કરાયેલ એ પાંચ ભાવના રૂપ કારણોથી " निच्च " સદા आमरणंतं " જીવન પર્યન્તના "एसो जोगो" આ બ્રહ્મચર્યરૂપ યોગ"णेयव्वो" ચિત્તની સ્વસ્થતા અને હેયોપાદેયની વિવેકતાપૂર્વક મુનિ જનોએ પાળવો જોઈએ. કારણ કે આ બ્રહ્મ-ચર્યરૂપ યોગ " अणासवो " નૂતન કર્મોનાં આગમન રહિત હોવાને કારણે અનાસ્રવ છે " अकलुसो " અશુભ અધ્યવસાયથી રહિત હોવાથી અકલુષ છે, "अच्छिद्दो" પાપનો સ્રોત તેનાથી છિન્ન થવાને કારણે અચ્છિદ્ર છે. "अपरिस्साई"

जिणमणुण्णाओ ' सर्वजिनानुज्ञातः । एवम्-अनेन प्रकारेण ' चउत्थं ' चतुर्थं ' संवरदारं ' संवरदारं ' संवरद्वारं ' फासियं ' स्पृष्टं ' पालियं ' पालितं ' सोहियं' शोधितं ' तीरियं ' तीरितं ' किट्टियं ' कीर्तितम् , ' सम्मं ' सम्यक् ' आराहियं' आराधितम् ' आणाए ' आज्ञया ' अनुपालियं ' अनुपालितं ' भवइ ' भवति । एवम्=अनेन प्रकारेण 'नायमुणिणा ' ज्ञातमुनिना=ज्ञातवंशोद्भवेन मुनिना ' भगवया ' भगवता महावीरेण ' पण्णवियं ' प्रज्ञापितं ' परूवियं प्ररूपितं ' पसिद्धं'

इससे छिन्न हो जाने के कारण अच्छिद्र है । (अपरिस्साई) बिन्दुरूप से भी कर्मरूप जल इसमें प्रवेश नहीं कर सकता है इसलिये यह अपरिस्रावी है (असंकिलिट्ठो) असमाधिभाव से वर्जित होने से यह असंक्लिष्ट है, (सुद्धो) कर्ममल से रहित होने के कारण शुद्ध है, (सव्वजिणमणुण्णाओ) समस्त प्राणियो का इससे हित होने के कारण समस्त अरहंत भगवंतों का यह मान्य हुआ है, (एवं) इस प्रकार से जो इस (चउत्थं सवरदारं) चतुर्थ संवर द्वार को (फासियं) अपने शरीर से स्पृष्ट करते हैं, (पालियं) निरन्तर उपयोगपूर्वक इस का सेवन करते हैं (सोहियं) अतिचारों से इसको रहित करते हैं, (तीरियं) पूर्णरूप से इसका सेवन करते हैं, (किट्टिय) दूसरों को इसके पालन करने का उपदेश देते हैं (सम्मं) तीन करण तीन योगों से इसकी भलीप्रकार से (आराहियं) अनुपालना करते हैं सो उनके द्वारा यह योग (आणाए अणुपालियं भवइ)) तीर्थंकर प्रभुकी आज्ञानुसार ही पालित होता है । (एवं) इस प्रकार से (नायमुणिणा भगवया महा-

---

કર્મરૂપ જળનું બિંદુ પણ તેમા પ્રવેશ કરી શકતું નથી તેથી તે અપરિસ્રાવી છે. " असकिलिट्ठो " અસમાધિ ભાવથી રહિત હોવાથી તે અસંકિલષ્ટ છે, "सुद्धो" કર્મમળથી રહિત હોવાને કારણે શુદ્ધ છે ' सव्वजिणमणुण्णाओ " સમસ્ત જીવોનું તેનાથી હિત થવાને કારણે સમસ્ત અર્હંત ભગવાનો દ્વારા તે માન્ય થયેલ છે, " एवं " આ પ્રકારે જે આ " चउत्थं संवरदार " ચોથા સંવરદ્વારને " फासियं " પોતાના શરીરથી સ્પર્શ કરે છે, " पालियं " નિરંતર ઉપયોગ પૂર્વક તેનું સેવન કરે છે, ' सोहिय " અતિચારોથી તેનું રક્ષણ કરે છે, ' तीरियं" પૂર્ણ રીતે તેનુ સેવન કરે છે, " किट्टियं " બીજાને તેનું પાલન કરવાનો ઉપદેશ આપે છે, ' सम्म " ત્રણ કરણ ત્રણ યોગથી તેનું સારી રીતે " आराहियं " અનુપાલન કરે છે, તેમના દ્વારા આ યોગનું " आणाए अणुपालियं भवइ " તીર્થંકર ભગવાનની આજ્ઞાનુસાર પાલન થાય છે " एवं " આ પ્રકારે " नाय मुणिणा भगवया महावीरेण " જ્ઞાત વંશમાં ઉત્પન્ન થયેલ મુનિ ભગવાન મહા-

पसिद्धं ' ' सिद्धवरसासणमिणं ' सिद्धवरशासनमिदम्, ' आघवियं ' आख्यातं ' सुदेसियं ' सुदेशितं ' पसत्थं ' प्रशस्तं ' चउत्थं संवरदारं ' चतुर्थं संवरद्वारं ' समत्तं ' समाप्तम् । ' त्तिबेमि ' इति ब्रवीमि । अस्य सूत्रस्य व्याख्याऽ पूर्ववद् बोध्या ॥ सू०११ ॥

॥ इति श्री विश्वविख्यात–जगद्वल्लभ – प्रसिद्धवाचकपञ्चदशभाषाकलि-
तललितकलापालापक–प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक– वादिमानमर्दक–
श्रीशाहू छत्रपतिकोल्हापुरराजप्रदत्त ' जैनशास्त्राचार्य ' पदभूषित–
कोल्हापुरराजगुरु–बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य- जैनधर्मदिवाकरपूज्यश्री
घासीलालव्रतिविरचितायां श्री प्रश्नव्याकरणसूत्रस्य सुदर्शन्या
ख्यायां व्याख्यायां संवरात्माके द्वीतीये–भागे ब्रह्मचर्यनामकं
चतुर्थं संवरद्वारं समाप्तम् ॥ ४ ॥

वीरेण) ज्ञातवंश में उत्पन्न हुए मुनि भगवान् महावीर ने (पण्णवियं) इस चतुर्थ संवरद्वार को शिष्यों के लिये सामान्यरूप से समझाया है। (परूवियं) बाद में भेद–प्रभेद पूर्वक उसका कथन किया है । (पसिद्धं) इसीलिये जिनवचन में यह प्रसिद्ध हुआ है । तथा (सिद्धवरसासण-मिणं) भूतकाल में जितने भी सिद्ध हो चुके हैं उनका यह प्रधान आज्ञारूप शासन है। (आघवियं) ऐसा भगवान् महावीर प्रभुने इसके विषय में सर्वभाव से कहा है और (सुदेसियं) देवों मनुजों तथा असुरों से युक्त परिषदा में इसका उपदेश दिया है। (पसत्थं) समस्त प्राणियों का हितकारक होने से प्रशस्त–मंगलमय है (चउत्थं संवरदारं समत्तं) यह चतुर्थ संवरद्वार समाप्त हुआ (त्तिबेमि) हे जंबू ! जैसा मैंने भगवान से सुना है वैसा ही मैं कहता हूं।

वीरे " पण्णवियं " આ ચોથા દ્વારને શિષ્યોને માટે સામાન્ય રૂપે સમજાવ્યું છે. " परूवियं " ત્યાર બાદ ભેદ પ્રભેદ પૂર્વક તેનું કથન કર્યું છે " पसिद्धं " તે કારણે જિનવચનમાં તે પ્રસિદ્ધ થયેલ છે. તથા " सिद्धवरसासणमिणं " ભૂતકાળમાં જેટલા સિદ્ધ થઈ ગયા છે તેમનું આ મુખ્ય આજ્ઞા રૂપ શાસન છે. " आघवियं " એવું ભગવાન મહાવીરે તેને વિષે સર્વ ભાવથી કહ્યું છે અને " सुदेसियं " દેવો, માણસો તથા અસુરોથી યુક્ત પરિષદામાં તેનો ઉપદેશ આપ્યો છે "पसत्थ" સમસ્ત પ્રાણીઓને માટે હિતકારક હોવાથીપ્રશસ્ત મંગળમય છે ' चउत्थ संवरदारंसमत्तं"આ ચોથું સંવરદ્વાર સમાપ્ત થયું "त्तिबेमि" હે જંબૂ! જેવું ભગવાનને મુખે સાંભળ્યુ હતુ તેવું જ તેનું કથન કરૂં છું.

भावार्थ—इस चतुर्थ संवरद्वार का उपसंहार करते हुए सूत्रकार कहते हैं कि जो मुनिजन इस चतुर्थ संवरद्वार को मन वचन और काय, इन तीन योगों से शुद्धिपूर्वक पांच भावनाओं सहित मरणपर्यंत पालते हैं उनके अशुभ अध्यवसाय रुक जाते हैं। नवीन कर्मों का बंध बंद हो जाता है। संचित कर्मों की निर्जरा होने लगती है। पापों का स्रोत रुक जाता है। यह अपरिस्रावी आदि विशेषणों वाला है त्रिकाल-समस्त अरहंत भगवंतों ने इसका पालन किया है। उन्हीं के कथनानु-सार भगवान महावीर प्रभुने भी इसका स्वरूपादि प्रदर्शन पूर्वककथन किया है। इस प्रकार श्री सुधर्मास्वामी ने अपने शिष्य अंतिम केवली श्री जंबू स्वामी को समझाया है ॥ सू०११ ॥

॥ चतुर्थ संवरद्वार समाप्त॥४॥

ભાવાર્થઃ—આ ચોથા સંવરદ્વારનો ઉપસંહાર કરતાં સૂત્રકાર કહે છે કે જે મુનિજન આ ચોથા સંવરદ્વારનો મન, વચન અને કાય એ ત્રણે યોગોની શુદ્ધિ પૂર્વક પાંચ ભાવનાઓ સહિત મરણ સુધી પાળે છે તેમનાં અશુભ અધ્યવસાય બંધ થઈ જાય છે. નવીન કર્મોનો બંધ પણ અટકી જાય છે. સંચિત કર્મોની નિર્જરા થવા માંડે છે, પાપોનો સ્રોત અટકી જાય છે. તે અપરિસ્રાવી આદિ વિશેષણો વાળું છે ત્રિકાળવર્તી સમસ્ત અર્હંત ભગવાનોએ તેનુ પાલન કરેલ છે. તેમના કથનાનુસાર ભગવાન મહાવીરે પણ તેના સ્વ-રૂપ આદિ દર્શાવીને તેનું કથન કર્યું છે. આ પ્રમાણે શ્રી સુધર્મા સ્વામીએ પોતાના શિષ્ય અંતિમ કેવલી શ્રી જંબૂસ્વામીને સમજાવ્યું છે. ॥ સૂ. ૧૧ ॥

॥ ચોથું સંવરદ્વાર સમાપ્ત ॥ ૪ ॥

॥ अथ पञ्चमं संवरद्वारं प्रारभ्यते ॥

व्याख्यातं ब्रह्मचर्य नामकं चतुर्थं संवरद्वारम्, तद्धि सर्वथा परिग्रहविरतस्यैव संभवतीति क्रमप्राप्तं परिग्रहविरमणनामकं पञ्चमं संवरद्धारमभिधीयते। तस्येदमादिमं सूत्रम्—' जंबू ' इत्यादि।

मूलम्–जंबू ! अपरिग्गहसंवुडे य समणे आरंभपरिग्गहाओ विरए कोहमाणमायालोभा, एगे असंजमे, दोचेव रागदोसा, तिण्णि य दंडा, गारवाय गुत्तीओ तिण्णि, तिण्णि य विराहणाओ, चत्तारि कसाया, झाणसण्णा, विगहा तहा य हुंति चउरो, पंच–किरियाओ, समिइ, इंदिय, महव्वयाइं य ५, छज्जीवनिकाय, छच्चलेसाओ, सत्तभया, अट्ठमया, नवचेव य बंभचेरगुत्ती, दसप्पकारे य समणधम्मे एक्कारस उवासगाणं, बारस य भिक्खूणं पडिमा, तेरस किरियाट्ठाणाइं, चउद्दस भूयगामा, पन्नरस परमाहम्मिया, सोलस गाहा सोलस य, असंजम १७, अबंभ१८, णाय१९, असमाहिट्ठाणा २०, सबला २१, य परीसहा२२ य, सूयगडज्झयणा२३, देव२४, भावणा२५, उद्देस२६, गुण२७, कप्प२८, पावसुय २९, मोहणिज्जं ३०, सिद्धाइगुणा ३१, य जोगसंगह ३२, सुरिणा ३३, तित्तीसासायणा। आदि एक्काइयं करेत्ता एगुत्तरियाए वुड्ढीए वड्ढिएसु तीसाओ जाव य भवेतिगाहिया। विरइपणिहिसु अविरईसु य अण्णेसु य एवमाइसु बहुसु ठाणेसु जिणप्पसत्थेसु अवितहेसु सासयभावेसु अवट्ठिएसु संकं कंखं निराकरित्ता सद्दहइ सासणं भगवओ अणिआणे अगारवे

अलुद्धे अमूढे मणवयणकायगुत्ते जो सो वीर-वरवयण-विरइ पवित्थर बहुविहपगारो संमत्तविसुद्धबद्धमूलो धिइकंदो विणय वेइओ निग्गयतेलोक्क विउलजसनिचियपीणपीवर-सुजाय-खंधो पंचमहव्वयविसालसालो भावणातयंतज्झाणसुभग जोगनाणपल्लववरंकुरधरो बहुगुणकुसुमसमिद्धो सीलसुगंधो अणण्हयफलो पुणो य मोक्खवरबीयसारो मंदरगिरिसिहर-चूलिया इव इमस्स मोक्खवरमुत्तिमग्गस्स सिहरभूओ संवर-पायवो चरिमं संवरदारं ॥ १ ॥

टीका—'जंबु' हे जम्बू! 'अपरिग्गहसंवुडे' अपरिग्रहसंवृतः=परिग्रहः= धर्मोपकरणातिरिक्त वस्तुग्रहणम्, धर्मोपकरणे मूर्च्छा च, तद्भिन्नोऽपरिग्रहः, तत्र-संवृतः=संलग्नो यः स चकाराद् ब्रह्मचर्यादि गुणयुक्तश्च यः स, 'समणे'

पांचवां संवरद्वार प्रारंभ

ब्रह्मचर्य नाम का चतुर्थ संवरद्वार समाप्त हो चुका। यह ब्रह्मचर्य नामका चतुर्थ संवर उसी व्यक्ति के होता है जो परिग्रह से सर्वथा विरत होता है। इसलिये क्रम प्राप्त परिग्रह विरमण नाम का पांचवां संवर द्वार कहा जाता है, उसका यह प्रथम सूत्र है—'जंबू' इत्यादि।

धर्मोपकरणों से अतिरिक्त वस्तुओं का ग्रहण करना और धर्मोपकरणों में मूर्च्छाभाव का रखना इसका नाम परिग्रह है। इस परिग्रह से जो भिन्न है वह अपरिग्रह है। (जंबू) हे जंबू! (अपरिग्गहसंवुडे य समणे) जो इस अपरिग्रह में संलग्नचित्त होता है एवं ब्रह्मचर्य आदि

પાંચમા સંવરદ્વારનો પ્રારંભ

બ્રહ્મચર્ય નામનું ચોથું સંવતદ્વાર સમાપ્ત થયું. તે બ્રહ્મચર્ય નામનો ચતુર્થ સંવર એજ વ્યક્તિને થાય છે કે જે પરિગ્રહથી સર્વથા વિરક્ત બને છે તે કારણે અનુક્રમે આવતા પરિગ્રહ વિરમણ નામના પાંચમાં સંવરદ્વારનું વર્ણન કરવામા આવે છે, તેનુ આ પહેલુ સૂત્ર છે-"જંબૂ" ઇત્યાદિ-

ધર્મોપકરણો કરતા વધારે વસ્તુઓ ગ્રહણ કરવી અને ધર્મોપકરણોમાં મૂર્ચ્છાભાવ રાખવો તેને પરિગ્રહ કહે છે. આ પરિગ્રહથી જે ઉલટુ છે તે અપરિગ્ર કહેવાય છે- "જંબૂ"! "अपरिग्गहसंवुडेय समणे" જે આ અપરિગ્રહમાં આસક્ત ચિત્તવાળા હોય છે અને બ્રહ્મચર્ય આદિ ગુણોથી યુક્ત હોય

श्रमणो भवति। एतदेव वर्ण्यते-'आरंभ परिग्गहाओ' आरम्भपरिग्रहात्-आरम्भः =पृथिव्याद्युपमर्दः, परिग्रहः=बाह्याभ्यन्तरभेदाद् द्विविधः, तत्र-बाह्यः परिग्रहः धर्मोपकरणातिरिक्तभिन्नवस्तुग्रहणं, धर्मोपकरणेषु मूर्च्छा च। आन्तरः परिग्रहस्तु-मिथ्याविरतिकषायप्रमादाशुभयोगरूपः, अनयोः समाहारद्वन्द्वः, तस्माद् 'विरए' विरतो यः स श्रमणो भवति। तथा यः 'कोहमाणमायालोभा' क्रोधमानमायालोभात्, अत्र-समाहारत्वादेकत्वम् 'विरए' विरतः स श्रमणो भवति। अथैकादि संख्यया मिथ्यात्वादि लक्षणाऽऽभ्यन्तरपरिग्रहविरतिं विशदयन्नाह—'एगे' इत्यादि, 'एगे असंजमे' एकोऽसंयमः-अविरतिलक्षणः, 'दो चेव रागदोसा' द्वौ चैव रागद्वेषौ। तथा-'तिण्णि य' त्रयश्च 'दंडा' दण्डाः, तथा-त्रीणि 'गारवा य' गौरवाणि च, 'गुत्तीओ' गुप्तयः, 'तिण्णि य' तिस्रश्च। तथा-

गुणों से युक्त होता है वही श्रमण है। यह श्रमण (आरंभपरिग्गहाओ विरए) आरंभ और परिग्रह से सर्वथा विरत होता है। पृथिवी आदि जीवों का उपमर्दन जिन क्रियाओं से होता है वे सब आरंभ हैं। परिग्रह बाह्य और आभ्यन्तर के भेद से दो प्रकार का होता है। धर्मोपकरणों से भिन्न वस्तुओं का अपनाना-पास में रखना-तथा धर्मोपकरणों पर मूर्च्छाभाव-ममत्वभाव रखना यह बाह्यपरिग्रह है। मिथ्यात्व, अविरति, कषाय, प्रमाद और अशुभयोग, ये सब अभ्यन्तर परिग्रह हैं। श्रमण वही हो सकता है जो आरंभ और बाह्याभ्यन्तर परिग्रह से सर्वथा विरत होता है। (विरए कोहमाणलोभा) इसी तरह जो क्रोध, मान, माया और लोभ, इनसे विरत होता है वही श्रमण कहलाता है। (एगे असंजमे, दो चेव रागदोसा, तिण्णि य दंडा-गारवाय, गुत्तीओ तिण्णि, तिण्णि य विराहणाओ, चत्तारिकसाया, झाणसण्णा, विगहा तहा

છે એજ શ્રમણ છે. તે શ્રમણ "आरंभपरिग्गहाओ विरए" આરંભ અને પરિગ્રહથી તદ્દન વિરક્ત હોય છે. પૃથિવી આદિ જીવોનું ઉપમર્દન જે ક્રિયાઓથી થાય છે તે સઘળાને આરંભ કહે છે પરિગ્રહના બે ભેદ છે-બાહ્ય પરિગ્રહ અને અભ્યાન્તર પરિગ્રહ ધર્મોપકરણો સિવાયની વસ્તુઓ પાસે રાખવી તથા ધર્મોપકણો ઉપર મૂર્ચ્છાભાવ. મમત્વભાવ રાખવો તે બાહ્યપરિગ્રહ છે. મિથ્યાત્વ, અવિરતિ, કષાય, પ્રમાદ અને અશુભ યોગ એ બધા આભ્યાન્તર પરિગ્રહ છે જે બાહ્ય અને આભ્યન્તર પરિગ્રહથી સર્વથા વિરક્ત હોય છે તે શ્રમણ થઈ શકે છે. "विरए कोहमाणमायालोभा" એજ પ્રમાણે જ ક્રોધ, માન, માયા અને લોભથી રહિત હોય છે તે જ શ્રમણ કહેવાય છે. "एगे असंजमे, दोचेव रागदोसा, तिण्णियदंडा-गारवाय, गुत्तीओ तिण्णि, तिण्णि य विराहणाओ,

'तिण्णि य' तिस्रश्च 'विराहणाओ' विराधनाः। तथा-'चत्तारि' चत्वारः 'कसाया' कषायाः। तथा-चत्वारि 'झाणा' ध्यानानि, 'तहा य' तथा च 'चउरो' चतस्रः 'विगहा' विकथाः, 'हुंति' भवन्ति। तथा-'पंच' पञ्च 'किरियाओ' क्रियाः, तथा-पञ्च 'समिइंदियमहव्वयाइं य' समितीन्द्रियमहाव्रतानि च। पञ्च समितयः, पञ्चेन्द्रियाणि, पञ्च महाव्रतानि च। तथा-'छज्जीवनिकाया' षड्जीवनिकायाः। छच्चलेसाओ' षड् च लेश्याः। तथा-'सत्तभया' सप्त भयानि। तथा-'अट्ठमया' अष्टमदाः। 'नव चेव य' नव चैव च 'बंभचेरगुत्तीओ' ब्रह्मचर्यगुप्तयः। 'दसप्पकारे य' दशप्रकारश्च = दशविधः, 'समणधम्मे' श्रमण धर्मः। तथा-'एक्कारस' एकादश 'उवासगाणं' उपासकानां 'बारस य' द्वादश च 'भिक्खूणं' भिक्षुणां 'पडिमा' प्रतिमाः। 'तेरस' त्रयोदश 'किरियाठाणाइं' क्रियास्थानानि। 'चउद्दस' चतुर्दश 'भूयगामा' भूतग्रामाः। ''पन्नरस' परमाहम्मिया' पञ्चदश परमाधार्मिकाः। 'सोलसगाहा

य हुंति चउरो) तथा ये जो असंयमादिक एक से लेकर तेतीस बोल है, जैसे-अविरतिरूप एक असंयम, दो राग और द्वेष तीन दण्ड, तीन गौरव, तीन गुप्ति, तीन विराधना, चार कषाय, चार ध्यान, चार संज्ञा, चार विकथा, (पंचकिरियाओ) पांच क्रिया, (समिइंदियमहव्वयाइं) पांच समिति, पांच इन्द्रिय, पांच महाव्रत, (छज्जीवनिकायछच्चलेसाओ सत्तभयाअट्ठमया नव चेव य बंभचेरगुत्ती, दसप्पकारे य समणधम्मे, एक्कारस उवासगाणं बारसय भिक्खूणं पडिमा) छहजीवनिकाय छह लेश्या, सात भय, आठ मद, नौ ब्रह्मचर्य गुप्ति, दश प्रकार का श्रमणधर्म, ग्यारहश्रावकों की, बारह भिक्षुओं की प्रतिमाएँ, (तेरस किरियाट्ठाणाइं, चउद्दसभूयग्गामा, पन्नपरसरमाहम्मिया, सोलसगाहा-

चत्तारि कसाया, झाणसण्णा विगहातहा य हुंति चउरो" तथा આ જે અસંયમાદિક એકથી લઈને તેત્રીસ બોલ છે, જેવા કે-અવિરતિરૂપ એક અસંયમ, બે રાગ અને દ્વેષ, ત્રણ દંડ, ત્રણ ગૌરવ, ત્રણ ગુપ્તિ, ત્રણ વિરાધના, ચાર કષાય, ચાર ધ્યાન, ચાર સંજ્ઞા, ચાર વિકથા, "पंच किरियाओ" પાંચ ક્રિયા "समिइंदियमहव्वयाइ" પાંચ સમિતિ પાંચ ઇન્દ્રિય, પાંચ મહાવ્રત, छज्जीवनिकाय छचलेसाओ सत्तभया अट्ठमया नवचेव य बंभचेरगुत्ती, दसप्पकारे य समणधम्मे, एक्कारस, उवासगाण बारसयभिक्खूण पडिमा" છ જીવનિકાય, છ લેશ્યા, સાત ભય આઠ મદ, નવ બ્રહ્મચર્ય ગુપ્તિ, દશ પ્રકારનો શ્રમણધર્મ, અગિયાર શ્રાવકોની, બાર ભિક્ષુઓની પ્રતિમાઓ, "तेरस किरियाट्ठाणाइं, चउद्दस-भूयगामा पन्नरसपरमाहम्मिया, सोलसगाहा सोळसा य असजम १७,

य' षोडशगाथा षोडशकानि च=गाथेति षोडशमध्ययनं येषां तानि गाथाषोड शकानि सूत्रकृताङ्गस्य प्रथमश्रुतस्कन्धाध्ययनानि, तानि च षोडशसंख्यकानि। तथा –सप्तदशविधः 'असंजमे' असंयमः। अष्टादशविधम्, 'अबंभ' अब्रह्मचर्यम्। तथा–एकोनविंशति संख्यकानि, 'णाय' ज्ञातानि=ज्ञाताध्ययनानि। विंशतिः 'असमाहिट्ठाणा' असमाधिस्थानानि, एकविंशतिः 'सबला य' शबलाश्च। द्वाविंशतिः 'परीसहा य' परीषहाश्च। तथा–त्रयोविंशति संख्यकानि, 'सूयग-डज्झयणा' सूत्रकृताध्ययनानि। चतुर्विंशतिः 'देवा' देवाः। पञ्चविंशतिः 'भावणा' भावनाः षड्विंशतिः 'उद्देस' उद्देशाः। सप्तविंशतिः 'गुण' गुणाः=अनगारगुणाः। अष्टविंशतिः 'कप्पा' कल्पाः–आचारप्रकल्पाः। एकोनविंशतिः 'पावसुय' पापश्रुतानि। त्रिंशत्–'मोहणिज्जं' मोहनीयानि= मोहनीयस्थानानि। एकत्रिंशत्–'सिद्धाइगुणा य' सिद्धादिगुणाश्च सिद्धसहभा-विगुणाः। द्वात्रिंशत्–'जोगसंगह' योगसंग्रहाः, तथा–द्वात्रिंशत्–'सुरिंदा'

सोलसा य असंजम १७, अबंभ १८, णाय १९, असमाहिट्ठाणा २०, सबला २१, य परीसहा २२ य, सूगयडज्झयणा २३) १३ क्रियास्थान, १४भूतग्राम, १५परमाधार्मिक, १६ सूत्रकृताङ्गके प्रथम श्रुतस्कंधके अध्ययन, १७ प्रकारका असंयम, १८ प्रकारका अब्रह्मचर्य, १९ ज्ञाताके अध्ययन, २० प्रकारके असमाधिस्थान, २१ प्रकारके शबल, २२ परीषह, २३ सूत्र-कृताङ्गके अध्ययन (देव २४, भावणा २५, उद्देस २६, गुण २७, कप्प २८ पावसुय २९, मोहणिज्जं ३०, सिद्धाइगुणा ३१, य जोगसंगह ३२, सुरिंदा ३३, तित्तीसासायणा) २४ देव, २५ भावना, २६ उद्देश, २७ अनगार गुण, २८ आचारप्रकल्प, २९ पापश्रुत, ३० मोहनीयस्थान, ३१ सिद्धसहभाविगुण, ३२ योगसंग्रह, ३३ सुरेन्द्र–भवनपतियोंमें २०,

---

अबंभ १८, णाय १९, असमाहिट्ठाणा २०, सबला २१, य परीसहा २२ य, सूयगडज्झयणा २३" ક્રિયાસ્થાન, ૧૪ ભૂતગ્રામ, ૧૫ પરમાધાર્મિક, ૧૬ સૂત્રકૃતાંગના પ્રથમ શ્રુતસ્કંધના અધ્યયન, ૧૭ પ્રકારના અસંયમ, ૧૮ પ્રકારનું અબ્રહ્મચર્ય, ૧૯ જ્ઞાતાનાં અધ્યયન, ૨૦ પ્રકારના અસમાધિ સ્થાન, ૨૧ પ્રકા-રના શબલ, ૨૨ પરીષહ, ૨૩ સૂત્રકૃતાંગના અધ્યયન, "देव २४, भावणा २५, उद्देस २६, गुण २७, कप्प २८, पाव सुय २९, मोहणिज्जं ३०, सिद्धा-इगुणा ३१, य जोगसंगह ३२, सुरिंदा ३३ तित्तीसासायणा" ૨૪ દેવ, ૨૫ ભાવના, ૨૬ ઉદ્દેશ, ૨૭ અણગાર ગુણ, ૨૮ આચાર પ્રકલ્પ, ૨૯ પાપશ્રુત, ૩૦ મોહનીય સ્થાન, ૩૧ સિદ્ધ સહભાવિ ગુણ ૩૨ યોગ સંગ્રહ, ૩૨ સુરેન્દ્ર,

सुरेन्द्राः, विंशतिर्भवनपतिषु, द्वादशसु कल्पेषु दश, तत्र—अष्टसु कल्पेष्वष्टौ, नवमदशमयोरेकः, एकादश द्वादशयोश्चैक इति, द्वौ ज्योतिष्केषु, चन्द्रसूर्याणामसंख्यातत्वेऽपि जातिग्रहणाद् द्वावेव, एवं द्वात्रिंशदिन्द्राः। 'तित्तीसासायणा' त्रयस्त्रिंशदाशातनाः, असंयमाद्याशातनान्तानामेषां व्याख्याऽऽवश्यकसूत्रस्यास्मत्कृतमुनितोषण्याख्यायां व्याख्यायां द्रष्टव्या। एते हि 'आदि एक्काइयं' आद्येकादिकम्=आदेः=प्रथमतः एकादिकम्=एकद्वित्र्यादिकं 'करेत्ता' कृत्वा=आश्रित्य 'एकुत्तरियाए' एकोत्तरिकया=एकः उत्तरे यस्याः सा तया 'वुड्ढीए' वृद्ध्या क्रमश एकैक वृद्ध्येत्यर्थः, 'वुड्ढिएसु' वर्द्धितेषु=वृद्धिंप्राप्तेषु सत्सु 'जाव य' यावच्च 'तिगाहिया' त्रिकाधिकाः=त्र्यधिकाः 'तीसं' त्रिंशद्=त्रयस्त्रिंशद् 'भवे' भवन्ति। अत्र 'एएसु' इति गम्यम्, एतेष्वनुपदमुक्तेषु असंयमादिषु, तथा—'विरइपणिहिसु' विरतिप्रणिधिषु=विरतयः=प्राणातिपातविरमणानि, प्रणिधयः=प्रणिधानानि चित्तैकाग्रतारूपाणि, अनयोर्द्वन्द्वः, तेषु तथोक्तेषु, तथा 'अविरइसु'

बारहकल्पो में १०=८ आठ कल्पों में ८, नवमें दसवे कल्पमें १ ग्यारहवें बारहवे १) ज्योतिषियों में जाति की अपेक्षा चंद्र और सूर्य२ इस प्रकार ३२। और आशातना ३३। इन सबकी व्याख्या आवश्यक सूत्र की पूज्यश्री घासीलालजी महाराजद्वारा की गई मुनि-तोषणी नामकी टीका में की गई है-अतः जिज्ञासुजन इस विषयको वहां से देखलें। (आदि एक्काइयं करेत्ता) इस प्रकार ये प्रथम एकादि संख्याको लेकर के क्रमशः (एगुत्तरियाए वुड्ढिए वुड्ढिएसु) एक२ की वृद्धिसे वर्द्धित होते २ (तीसाओ जाव य भवे तिगहिया) तीन अधिक तीस अर्थात् तेतीस हो जाते हैं। इन असंयमादि तेंतीस प्रकार तक के संख्या स्थानों में तथा (विरइपणिहिसु) प्राणातिपात विरमणरूप विरतियों में, चित्त की

ભવનપતિઓમાં ૨૦, બાર કલ્પોમાં ૧૦ (આઠ કલ્પોમાં ૮, નવમાં અને દશમા કલ્પમા ૧ અને અગિયાર તથા બારમાં કલ્પમાં એક) જ્યોતિષિયોમા જાતિની અપેક્ષાએ સૂર્ય અને ચંદ્ર એમ બે સુરેન્દ્ર એ રીતે કુલ ૩૨ સુરેન્દ્રો થયા. અને અશાતના ૩૩ આ બધાની વ્યાખ્યા આવશ્યક સૂત્રની પૂજ્ય શ્રી. ઘાસીલાલજી મહારાજ દ્વારા કરાયેલ મુનિતોષણી નામની ટીકામા આપેલ છે. તો જિજ્ઞાસુજન તે વિષયને તેમાથી જોઇ લે. "आदि एक्काइयं करेत्ता" આ રીતે પહેલેથી એકાદિ સંખ્યાને લઇને ક્રમશ: "एगुत्तरियाए वुड्ढिए वुड्ढिएसु" એક એક વધારતા જતાં "तीसाओ जाव य भवेतिगाहिया" તેત્રીસ થઈ જાય છે એ અસંયમાદિ તેત્રીસમાં પ્રકાર સુધીના સંખ્યા સ્થાનોમાં તથાં "विरइ पणिहिसु" પ્રાણાતિપાત વિરમણરૂપ વિરતિઓમા, ચિત્તની એકાગ્રતારૂપ પ્રણિધાનોમાં

अविरतिषु=अविरतिरूपेण भगवता कथितेषु प्राणातिपातादिषु च, तथा-'अण्णेसु य' अन्येषु च 'एवमाइएसु' एवमादिकेषु=एव विधेषु 'बहुसु ठाणेसु' बहुषु स्थानेषु=अनेकविधेषु पदार्थेषु सख्यास्थानेषु वा चतुस्त्रिंशदादिषु, कीदृशेष्वेषु? 'जिणपसत्थेसु' जिनप्रशस्तेषु=जिनकथितेषु, अतएव—'अवितहेसु' अवितथेषु=सत्येषु, पुनः-'सासयभावेसु' शाश्वतभावेषु=ओघतोऽक्षयस्वभावेषु, अत-एव-'अवट्ठिएसु' अवस्थितेषु=सर्वदा भाविषु 'संकं' शङ्कां=सन्देहं, 'कंखं' काङ्क्षा=परमतवाञ्छां 'निराकरित्ता' निराकृत्य=दूरीकृत्य श्रमणैः, 'सद्दहति' श्रद्धाति 'भगवओ' भगवतो जिनस्य 'सासणं' शासनम् कीदृशः सन् श्रमणो जिनस्य शासनं श्रद्धातीत्याह — 'अणियाणे' अनिदानः =देवर्द्ध्यादिवाञ्छारहितः, 'अगारवे' अगौरवः= ऋद्ध्यादिगौरववर्जितः, 'अलुद्धे' अलुब्धः=विषयेष्वलम्पटः 'अमूढे' अमूढः, तथा-'मणोवयणकाय

एकाग्रतारूप प्रणिधानों में (अविरइसु) भगवान के द्वारा अविरतरूपसे कथित प्राणातिपात आदिकों में तथा (अण्णेसु य एवमाइएसु) और भी इसी तरहके दूसरे (बहुसु ठाणेसु) अनेक पदार्थों में अथवा (जिणपसत्थेसु) चौंतीस आदि संख्यास्थानों में जो कि जिनकथित हैं और इसी कारण (अवितहेसु) जिन में असत्यता का थोड़ा साभी स्थान नहीं, अर्थात् सर्वथा सत्य हैं, तथा (सासयभावेसु) सामान्यकी अपेक्षा जिनका अक्षय स्वभाव है, और इसीसे (अवट्ठिएसु) जिनकी सत्ता सदा रहती है उनमें (संकं) शंका-संदेहको (कंखं) कांक्षा-परमतवांछा को (निराकरित्ता) दूर करके जो श्रमण (अनियाणे) निदान-देवर्द्ध्यादि प्राप्तिकी इच्छा से विहीन बन कर (अगारवे) ऋद्ध्यादि गौरव से रहित हो कर (अलुद्धे) विषयों में लंपटतासे रिक्त होकर और

"अविरइसु" ભગવાન દ્વારા અવિરતરૂપે કથિત પ્રાણાતિપાત આદિ તથા "अण्णेसु य एवमाइएसु" બીજાં પણ એ જ પ્રકારના 'बहुसु ठाणेसु" અનેક પદાર્થોમા અથવા "जिणपसत्थेसु" ચોત્રીસ આદિ સંખ્યા સ્થાનોમાં કે જે જિન કથિત છે અને એ જ કારણે "अवितहेसु" જેમનામા અસત્યતાનુ જરા પણ સ્થાન નથી એટલે કે જે સર્વથા સત્ય છે, તથા "सासयभावेसु" સામાન્યની અપેક્ષાએ જિનનો અક્ષય સ્વભાવ છે, અને તેથી જ "अवट्ठिएसु" જેની સત્તા સદા રહે છે, તેમનામા "संकं" શંકા-સંદેહને "कखं" કાંક્ષા-પરમત વાચનાને 'निराकरित्ता' દૂર કરીને જે શ્રમણ "अनियाणे" નિદાન-દેવર્દ્ધ્યાદિ પ્રાપ્તિની ઈચ્છાથી રહિત બનીને "अगारवे" ઋદ્ધ્યાદિ ગૌરવથી રહિત થઈને "अलुध्धे" વિષયોની લાલસાથી રહિત

गुत्ते' मनोवचनकायगुप्तश्च श्रमणो भवति। अथाऽपरिग्रहसंवरं वृक्षोपमया वर्णयन्नाह –' जो सो ' यः सः=सवरपादपो यः सः स चरमं संवरद्वारमिति योगः कीदृशः संवरपादपः इत्याह—'वीरवरवयणविरइपवित्थरबहुविहप्पगारो ' वीरवरवचन-विरतिप्रविस्तरबहुविधप्रकारः=वीरवरस्य=भगवतो महावीरस्य यद्वचनम्=आज्ञा, ततः सकाशाद् या विरतिः=परिग्रहान्निवृत्तिः सैव प्रविस्तरो विस्तरयुक्तो बहु-विधः=अनेकविधः–विचित्रविषयापेक्षया क्षायोपशमाद्यपेक्षया च पादपपक्षे मूलक-न्दाद्यपेक्षयाऽनेकविधः प्रकारः भेदो यस्य सः, तथा–'संमत्तविसुद्धवद्धमूलो ' सम्यक्त्वविशुद्धवद्धमूलः=सम्यक्त्वमेव=सम्यग्दर्शनमेव विशुद्धं = वद्धं मूल यस्य

(अमूढे) मूढता से वर्जित होकर तथा (मणवयणकायगुत्ते) मन, वचन और काय की सरलता से संपन्न बनकर (भगवओ) भगवान् जिनेन्द्र के (सासणं) शासन का (सद्दहइ) श्रद्धान करता है वही श्रमण सच्चा श्रमण है। अब सूत्रकार इस अपरिग्रहसंवर का वृक्ष की उपमा देकर वर्णन करते हैं—(जो सो) जो यह अन्तिम संवरद्वार रूप संवरवृक्ष है वह (वीरवरवयणविरइपवित्थरवहुविहप्पगारो) अन्तिम तीर्थंकर भगवान् महावीर की आज्ञा से जो परिग्रह से जीव की निवृत्ति होती है उस रूप है। यह परिग्रह से निवृत्ति ही इस वृक्ष के विस्तृत अनेक प्रकार–भेद हैं। तात्पर्य इस का यह है कि जिस प्रकार मूल, कन्द आदि की अपेक्षा को लेकर एक ही वृक्ष विविध प्रकारों वाला माना जाता है उसी प्रकार यह परित्यागरूप अपरिग्रह भी विचित्र विषयों के त्याग की अपेक्षा और कर्मों के क्षयोपशम आदि की अपेक्षा से अनेक प्रकार का होता है। (संमत्तविसुद्धवद्धमूलो) इस वृक्ष का–

બનીને અને "अमूढे" મૂઢતાથી રહિત થઈને તથા "मणवयणकायगुत्ते" મન, વચન અને કાયની સરળતાથી યુક્ત બનીને 'भगवओ' ભગવાન જિને-ન્દ્રના "सासण" શાસનનું "सद्दहइ" શ્રદ્ધાન કરે છે તે શ્રમણ જ સાચો શ્રમણ છે.

હવે સુત્રકાર આ અપરિગ્રહ સંવરને વૃક્ષની ઉપમા આપીને તેનું વર્ણન કરે છે–"जो सो" જે આ છેવટના પરિગ્રહદ્વાર રૂપ અપરિગ્રહ સંવર વૃક્ષ છે તે "वीरवरवयणविरइपवित्थरबहुविहप्पगारो" અંતિમ તીર્થંકર ભગવાન મહાવીરની આજ્ઞાથી જે પરિગ્રહથી જીવની નિવૃત્તિ થાય છે તે રૂપ છે. તે પરિગ્રહથી નિવૃત્તિ લેવી એ જ આ વૃક્ષના વિસ્તૃત અનેક પ્રકાર–ભેદ છે. તેનું તાત્પર્ય એ છે કે જેમ મૂળ, કંદ આદિની અપેક્ષાએ એક જ વૃક્ષ જેમ અનેક પ્રકારો વાળુ મનાય છે તેમ આ પરિત્યાગરૂપ અપરિગ્રહ પણ વિચિત્ર વિષ-ચોના ત્યાગની અપેક્ષાએ તથા કર્મોના ક્ષયોપશમ આદિની અપેક્ષાએ અનેક પ્રકારનુ હોય છે. "संमत्तविसुद्धबद्धमूलो" સમ્યગ્દર્શન આ વૃક્ષનું વિશુદ્ધ

सः, तथा-' धिइकंदो ' धृतिकन्दः=धृतिः=चित्तस्वास्थ्यं सैव कन्दो मूलाधोभागरूपो यस्य सः, तथा-विणयवेइओ ' विनयवेदिकः=विनय एव वेदिका=वेदिर्यस्य सः, तथा-' निग्गयतेलोक्कविपुलजसनिचियपीणपीवरसुजायखंधो ' निर्गतत्रैलोक्यविपुलयशोनिचितपीनपीवरसुजातस्कन्धः=तत्र निर्गतं=व्याप्तं त्रैलोक्ये यत्तन्निर्गतत्रैलोक्यं लोकत्रयव्याप्तमित्यर्थः, एतादृशं यद् विपुलं=विशालं यशः=ख्यातिस्तदेव निचितो=निविडः पीनो=महान् पीवर =पुष्टः सुजातः=सुनिष्पन्नः स्कन्धो यस्य सः, तथा-' पंचमहव्वयविसालसालो ' पञ्चमहाव्रतविशालशालः=पञ्चमहाव्रतान्येव विशालाः=विस्तृताः शालाः=शाखा यस्य सः, तथा-' भावणातयंतज्झाणसुभगजोगनाणपल्लववरंकुरधरो ' भावनात्वगन्तध्यानसुभगयोगज्ञानपल्लववराङ्कुरधरः, तत्र-भावनैव=अनित्यत्वादिचिन्तनलक्षणैव त्वगन्तः=त्वग्रूपोऽवयवो यस्य सः, भावनारूपत्वचासंपन्नइत्यर्थः, तथा-ध्यानम्=धर्मध्यानादि, शुभयोगाः=शुभमनोवाक्कायव्यापाराः, ज्ञानं=बोध्यः तान्येव पल्लवावराङ्कुराश्च तेषां धरो यः सः, अनयोः कर्मधारयः, तथा-' वहुगुणकुसुमसमिद्धो ' वहुगुणकुसुमसमृद्धः=वहवो ये

विशुद्ध मूल सम्यग्दर्शन है। (धिइकंदो) चित्तस्वास्थ्यरूप धैर्य ही इस का कंद है, (विणयवेइओ) विनय ही इसकी वेदिका-उत्पत्ति भूमि है। (निग्गय-तेल्लोक्कविउलजसनिचियपीणपीवरसुजायखंधो) त्रैलोक्य में व्याप्त यश ही इसका निविड, पीन-बड़ा-पोवर-पुष्ट और सुजात-सुहावना-स्कंध है। (पंचमहव्वयविसालसालो) पांच महाव्रत ही इसकी विशाल शाखाएँ हैं। (भावणातयंतज्झाणसुभगजोगनाणपल्लववरंकुर-धरो) अनित्य आदि भावनाएं ही इसकी त्वचा-छाल है, धर्मध्यान आदि ध्यान, मन, वचन और काय की शुभ प्रवृत्तिरूप, व्यापार एवं सम्यक्ज्ञान, ये सब ही इसके पत्ते और उत्तम पल्लवाङ्कुर हैं, (बहुगुण कुसुमसमिद्धो (क्षान्त्यादि अनेक गुणोंरूपी पुष्प से यह सदा समृद्ध

મૂળ છે. "धिइकंदो" ચિત્ત સ્વસ્થતારૂપ ધૈર્ય જ તેનું કંદ છે. "विणय वेइओ" વિનય જ તેની વેદિકા ઉત્પત્તિની ભૂમિકા છે "निग्गयतेल्लोक्कविउलजस निचियपीवरसुजायखंधो" ત્રિલોકમાં વ્યાપ્ત યશ જ તેનું નિવિડ, પીન-મોટું-પીવર-મજબૂત અને સુજાત-સુંદર થડ છે. "पंचमहव्वय विसालसालो" પાંચ મહાવ્રત જ તેની વિશાળ શાખાઓ છે "भावणातयंतज्झाणसुभगजोगनाण पल्लववरंकुरधरो" અનિત્ય આદિ ભાવના જ તેની છાલ છે, ધર્મધ્યાન આદિ ધ્યાન, મન, વચન અને કાયની શુભ પ્રવૃત્તિરૂપ વ્યાપાર, અને જ્ઞાન, એ સૌ તેના પત્તાં, અને ઉત્તમ પલ્લવાંકુરો છે. "बहुगुणकुसुमसमिद्धो" ક્ષાન્ત્યાદિ

गुणाः क्षान्त्यादिरूपास्त एव कुसुमानि=पुष्पाणि तैः समृद्धः, तथा 'सीलसुगंधो' शीलसुगन्धः, शीलं सदाचारो ब्रह्मचर्यं वा, तदेव शोभनो गन्धो यस्मिन् सः, तथा-'अणण्हवफलो' अनाश्रवफलः=आश्रवो=नवकर्मोदयः, न आश्रवोऽनाश्रवः, स एव फलं यस्य सः, आस्रवनिरोधरूपफलसम्पन्न इत्यर्थः, 'पुणो य' पुनश्च 'मोक्खवरबीयसारो' मोक्षवरबीजसारः=मोक्षवरः= वरमोक्षः-अव्याबाध सुखरूपः, तस्य बीजसारः-श्रेष्ठ बीजरूपः, तथा- 'मंदरगिरिसिहरचूलिया इव' मन्दरगिरिशिखरचूलिकेव मन्दगिरेः=मेरुपर्वतस्य यत् शिखरं तस्य या चूलिका=चूड़ा सेव, तथा 'इमस्स' अस्य-प्रसिद्धस्य 'मोक्खवरमुत्तिमग्गस्स' मोक्षवरमुक्तिमार्गस्य=मोक्षः=सकलकर्मक्षयलक्षण.,तदर्थो वरः=श्रेष्ठो मुक्तिरूपो=निर्लोभता रूपएव मार्गः=पन्थास्तस्य 'सिहरभूओ' शिखरभूतः एतादृशः 'संवरवरपायवो' संवरवरपादपः=संवरः=आस्रवनिरोधः, स एव वरपादप=श्रेष्ठवृक्षोऽस्ति । एतादृशमिदं 'चरिमं' चरमम् = पञ्चसु संवरद्वारेष्वन्तिमम्, 'संवरदारं' संवरद्वारम्, अस्ति ॥ सू० १ ॥

बना रहता हैं । (सीलसुगंधो) सदाचार अथवा ब्रह्मचर्य इसकी सुहावनी गंध है, अणण्हवफलो) आस्रव-नवीन कर्मों के आगमन का जो रुकना होता है वही इसका फल है—इन फलों से ही यह युक्त बना हुआ है। (पुणो य) फिर (मोक्खवरबीयसारो) अव्याबाध सुखवाले मोक्ष का यह एक श्रेष्ठ बीज है । (मंदरगिरिसिह चूलिया इव) सुमेरु पर्वत के शिखर की चूलिका के समान है (इमस्स मोक्खवरमुत्तिमग्गस्स सिहहरभूओ) इस प्रसिद्ध सकल कर्मक्षय मोक्ष का जो निर्लोभतारूप मार्ग है उसका शिखरभूत है । (संवरपायवो) इस तरह का यह संवररूप श्रेष्ठ वृक्ष है। इस प्रकार (चरिमं संवरदारं) पांच संवर द्वारोंमें यह अन्तिम संवर द्वार कहा गया है ।

અનેક ગુણો રૂપી પુષ્પોથી તે સદા સમૃદ્ધ રહે છે "सीलसुगंधो" સદાચાર અથવા બ્રહ્મચર્ય જ તેની સુંદર ગંધ છે, "अणण्हवफलो" આસ્રવ-નવા કર્મોના આગમનનું અટકવુ-એજ તેના ફળ છે એ ફળોથી જ તે યુક્ત હોય છે. "पुणोय" વળી "मोक्खवरबीयसारो" અવ્યાબાધ સુખવાળા મોક્ષનું તે એક શ્રેષ્ઠ બીજ છે "मंदरगिरिसिहरचूलियाइव" સુમેરુ પર્વતના શિખરની ટોચ સમાન છે, "इमस्स मोक्खवरमुत्तिमग्गस्स सिहरभूओ" એ પ્રસિદ્ધ સકળ કર્મક્ષય મોક્ષનો જે નિર્લોભતા રૂપ માર્ગ છે તે તેના શિખર સમાન છે. "संवरपायवो" આ પ્રકારનુ આ સંવરરૂપ શ્રેષ્ઠ વૃક્ષ છે આ પ્રકારે "चरिमं संवरदारं" પાંચ સંવરદ્વારમાનું આ અંતિમ સંવરદ્વાર કહેવાયુ છે.

भावार्थ—चतुर्थ संवर द्वार के प्ररूपण के बाद अब सूत्रकार पंचम संवर द्वारका वर्णन कर रहे हैं। इसके वर्णन करने का प्रयोजन उन्हों ने इस प्रकार कहा है कि जब तक जीव की बाह्याभ्यन्तर रूप परिग्रहसे निवृत्ति नहीं होती तब तक वह चतुर्थ संवरद्वारका पूर्ण रूप से आराधक नहीं बनता है। धर्मोपकरणों के सिवाय अन्य पदार्थों का ग्रहण करना अथवा धर्मोपकरणों में मूर्च्छाभाव रखना इसका नाम परिग्रह है। मूर्च्छा का नाम आसक्ति है। वस्तु छोटी हो, बड़ी हो, चेतन हो चाहे अचेतन हो बाह्य हो या आन्तरिक हो कैसी ही हो, चाहे न भी हो, तो भी उसमें आसक्तिसे बंधे रहना—उसकी लगन में विवेक खो बैठना परिग्रह है। इस परिग्रहसे युक्त हुआ प्राणी क्रोध, मान, माया और लोभ कषायों से बंधा रहता है। राग द्वेष उसकी आत्मा में हिलोरे लेते रहते हैं। संयमके महत्त्व की गणना उसके चित्त में नहीं होती है। प्रभु द्वारा प्रतिपादित अपरिग्रह के सिद्धान्त की प्रतिष्ठा वह विचारा नहीं कर सकता है, अतः सच्चे अर्थ में श्रमण वही है जो इस परिग्रह से दूर है—विरक्त है। अपरिग्रही जीवके लिये प्रभुका आदेश है कि वह प्रभु द्वारा प्रतिपादित शासन में न शंका करे न कांक्षा करे—

ભાવાર્થ—ચોથા સંવરદ્વારનું વર્ણન કર્યા પછી હવે સૂત્રકાર પાંચમાં સંવરદ્વારનુ વર્ણન કરે છે. તેનું વર્ણન કરવાનો હેતુ તેમણે એવો બતાવ્યો છે કે જ્યાં સુધી બાહ્ય અને આભ્યન્તર પરિગ્રહથી જીવ નિવૃત્ત થતો નથી ત્યા સુધી તે ચોથા સવરદ્વારનો પૂર્ણ રીતે આરાધક બની શકતો નથી ધર્મોપકરણો સિવાયના અન્ય પદાર્થોને અપનાવવા અથવા ધર્મોપકરણોમા (મૂર્ચ્છાભાવ) મમત્વભાવ રાખવો તેનું નામ પરિગ્રહ છે. મૂર્ચ્છા એટલે આસક્તિ. વસ્તુ નાની હોય કે મોટી હોય, જડ હોય કે ચેતન હોય, બાહ્ય હોય કે આન્તરિક હોય, ભલે ગમે તેવી હોય, ભલે ન પણ હોય, તો પણ તેમાં અસક્તિથી બંધાઈ રહેવુ—તેની લગનમા વિવેકને ગુમાવી બેસવો તે પરિગ્રહ ગણાય છે. આ પરિગ્રહ વાળો માણસ ક્રોધ, માન, માયા, અને લોભ કાષાયો વડે બંધાયેલો રહે છે. રાગદ્વેષ તેના આત્મામા તોફાન મચાવે છે. સંયમનું મહત્ત્વ તેના ચિત્તમાં નહીં જેવુ હોય છે. પ્રભુ દ્વારા પ્રતિપાદિત અપરિગ્રહના સિદ્ધાન્તની પ્રતિષ્ઠાનો તે વિચાર કરી શકતો નથી, તેથી સાચો શ્રમણ તો એ જ છે કે જે આ પરિગ્રહથી વિરક્ત છે અપરિગ્રહી જીવને માટે પ્રભુનો આદેશ છે કે તે પ્રભુ દ્વારા પ્રતિપાદિત શાસનમાં શંકા ન કરે કે કાંક્ષા ન

त्रसस्थावरादि विषयकापरिग्रहं वर्णयति—'जत्थ न' इत्यादि ।

मूलम्—जत्थ न कप्पइ गामागरणगर–खेडकव्वडमडंब-दोणमुहपट्टणासमगयं च किंचि अप्पं वा बहुं वा अणुं वा थूलं वा तसथावरकायदव्वजायं मणसा वि परिघेत्तुं न धनहिरण्णसुवण्णखेत्तवत्थुं, न दासीदास–भयक –पेसहय गयगवेलगं वा, न जाणजुग्गसयणासणाइं, न छत्तकं, न कोंडिकं, नोवाणहं, न पेहुणवीयणतालियंटगा, ण यावि अयतउयतंबसीसगकंसरयय—जायरूवमणिमुत्ताहारपुडग-संखदंतमणिसिंगसेलकायवरचेलचम्मपत्ताइं महारिहाइं परस्स अज्झोववायलोभजणणाइं परिकड्ढिउं गुणवओ; न यावि पुप्फफलकंदमूलादिकाइं सणसत्तरसाइं सव्वधण्णाइं तीहिं वि जोगेहिं परिघेत्तुं ओसहभेसज्जभोयणट्ठयाए संजयाणं किं कारणं अपरिमियणाणदंसणधरेहिं सीलगुणाविणयतव-

---

केवल इनसे विहीन होकर वह उनके द्वारा प्रतिपादित तत्त्वों में अपनी पूर्ण अडिग श्रद्धा रखे। प्रभुने जो यहां पर एक आदिसे लेकर तेतीस तक के संख्यास्थान कहे हैं, उनमें तथा अविरति आदि जो और भी स्थान कहे हैं उनमें निःशंकित भावसे श्रद्धा करनी चाहिए, तभी जा कर वह सच्चा श्रमण कहला सकता है। इत्यादि विषय को प्रतिपादन करते हुए सूत्रकारने इस अपरिग्रहरूप संवर द्वारकी विवेचना वृक्षकी उपमा समता लेकर की है ॥ सू० १ ॥

કરે. ફકત તેનાથી રહિત થઈને તે તેમના દ્વારા પ્રતિપાદિત તત્ત્વોમાં પોતાની પૂર્ણ તથા અડગ શ્રદ્ધા રાખે પ્રભુએ અહીં જે એક આદિથી લઈને તેત્રીસ સુધીના સંખ્યાસ્થાન બતાવ્યા છે તેમનામા, તથા અવિરતિ આદિ જે બીજા પણ સ્થાન બતાવ્યા છે તેમાં નિઃશંકિત ભાવથી શ્રદ્ધા રાખવી જોઈએ, ત્યારેજ તેને સાચો શ્રમણ કહી શકાય છે. ઇત્યાદિ વિષયનુ પ્રતિપાદન કરતાં સૂત્રકારે આ અપરિગ્રહ રૂપ સંવરદ્વારને વૃક્ષની ઉપમા આપીને તેનું વિવેચન કર્યું છે. સૂ૦૧

संजमनायगेहिं तित्थंकरेहिं सव्वजगजीववच्छलेहिं तिलोयमहिएहिं जिणवरिंदेहिं एस जोणी जगाणं दिट्ठा, न कप्पइ जोणी समुच्छिदोत्ति । तेण हि वज्जेंति समणसीहा ॥सू०२॥

टीका—'जत्थ' यत्र=परिग्रहविरमणलक्षणे चरमसंवरद्वारे 'गामागरणगरखेडकव्वडमडंवदोणमुहपट्टणासमगयं' ग्रामाकरनगरखेटकर्बटमडम्बद्रोणमुखपत्तनाश्रमगत च, ग्रामादीनां व्याख्या पूर्ववद् बोध्या, तेषु गतं=स्थितं च 'किंचि' किञ्चित्=किमपि वस्तु 'अप्पं वा' अल्प वा=स्वल्पमूल्यकपर्दिकादिकं वा 'बहुं वा' बहु च=बहुमूल्यं रत्नादिकं वा 'अणुं वा' अणु वा=प्रमाणतो लघु मुक्ताफलादिकं वा, 'थूलं वा' स्थूलं वा=प्रमाणत स्थूलं काष्ठादिकं वा, अत्र सर्वत्र च शब्दो वाऽर्थकः, 'तसथावरकायदव्वजायं' त्रसस्थावरकायद्रव्यजातं=तत्र-त्रसकायं=शिष्यादिकं स्थावरकायं=रत्नादिकं. तद्रूपं द्रव्यजातं 'मणसा वि' मन-

---

अब सूत्रकार त्रस स्थावरविषयक अपरिग्रह का वर्णन करते हैं—
'जत्थ न कप्पइ' इत्यादि ।

टीकार्थ-(जत्थ) जिस परिग्रहविरमणरूप अन्तिमचरमसंवरद्वार में स्थित साधु को (गामागरनगरखेडकव्वडमडंवदोणमुहपट्टणासमगयं च) ग्राम, आकर, नगर, खेट, कर्बट, मडंब, द्रोणमुख, पत्तन और आश्रम, इनमें रक्खी हुई, भूली हुई, पड़ी हुई (किंचि वि) कुछ भी चीज (अप्पं वा) चाहे वह कोंडी आदि जैसी अल्पमूल्यवाली हो (बहुं वा) चाहे रत्नादिक जैसी बहुमूल्यवाली हो (अणुं वा) चाहे छोटी हो (थूलं वा) चाहे बड़ी हो, (तसथावरकायदव्वजायं) चाहे त्रस, स्थावरकायरूप द्रव्य जात हो-शिष्यादिक त्रसकाय हैं, रत्नादिक स्थावरकाय हैं' उन्हें

હવે સૂત્રકાર ત્રસ સ્થાવર સબંધી અપરિગ્રહનું વર્ણન કરે છે—
'जत्थ न कप्पइ" ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ-'जत्थ" જે પરિગ્રહ વિરમણરૂપ અંતિમ સવરદ્વારનું આરાધન કરતા સાધુને "गामागरनगरखेडकव्वडमडवदोणमुहपट्टणासमगयं च" ગ્રામ, આકર. નગર, ખેટ, કર્બટ, મડંબ, દ્રોણમુખ, પત્તન અને આશ્રમ, તેમા રાખેલી, ભૂલથી પડી રહેલી, પડી રહેલી "किंचि वि" કોઈ પણ ચીજ "अप्पं वा" ભલે તે કોડી આદિ જેવી નજીવી કીમતની હોય, "बहुंवा" ભલે તે રત્નાદિ બહુ મૂલ્યવાન હોય, "अणुवा" ભલે નાની હોય, "थूलंवा" કે મોટી હોય, "तसथावरकायदव्वजायं" ભલે ત્રસ, સ્થાવરકાય રૂપ દ્રવ્ય જાત હોય-શિષ્યાદિક ત્રસકાય ગણાય છે, રત્નાદિક સ્થાવરકાય ગણાય

साऽपि परिवेत्तुं ' परिग्रहीतुं ' न कप्पइ ' न कल्पते इममेवार्थं विशदयति, ' हिरण्णसुवण्णखेत्तवत्थुं ' हिरण्यसुवर्णक्षेत्रवस्तु मनसाऽपि परिग्रहीतुं न कल्पते, तथा– ' दासीदासभयकपेसहयगयगवेलगं वा ' दासीदासभृतकप्रैष्यहयगजगवेलकं वा, दासीदास=प्रसिद्धम् , भृतकाः=वेतनं गृहीत्वा कार्यकराः, प्रैष्याः–कार्ये समुपस्थिते ग्रामान्तरे प्रेषणीय भृत्याः, हयाः=अश्वाः, गजाः प्रसिद्धाः, गवेलकाः=मेषाः एषां समाहार द्वन्द्वः, मनसाऽपि परिग्रहीतुं न कल्पते, तथा–' जाणजुग्गसयणासणाइं ' यान युग्यशयनासनानि, यानं=रथादिकम् , युग्यं=वाहनमात्रम् , शयन=शय्या, आसनं–प्रसिद्धम् , एतानि मनसापि परिग्रहीतुं न कल्पते । तथा– ' न छत्तकं ' न छत्रकम्=न छत्रम् , ' न कोंडिका ' न कुण्डिका=कमण्डलुः मन-

(मणसा वि परिघेत्तुं न कप्पइ) साधु को मन से भी ग्रहण करना योग्य नहीं है । अब इसी विषय को सूत्रकार विषदरूप से समझाते हैं– जो अपरिग्रही साधु है उसको (न धनहिरण्णसुवण्णखेत्तवत्थुं) हिरण्य, सुवर्ण, क्षेत्र, वास्तु तथा (न दासीदास भयक–पेस–हय–गय–गवेलगंवा) दासी, दास, भृतक, प्रैष्य, हय, गज, गवेलक तथा–(न जाण जुग्गसयणासणाइं) यान, युग्य, शयन, आसन, ये सब वस्तुएँ मन से भी चाहने योग्य नहीं होती है । ग्रामादिक शब्दों की व्याख्या पहिले संवर द्वारों में की जा चुकी है । वेतन लेकर जो काम करते हैं वे भृतक कहलाते हैं । तथा कार्य आने पर जो उसके निमित्त बाहर गाँव भेजे जाते हे वे प्रैष्य कहलाते हैं । गवेलक नाम मेष का है । रथ आदि यान और वाहनमात्र युग्य हैं । इसी तरह (न छत्तगं) धूपनिवारण करने के लिये छत्र को, (न कोडिकं) पानी आदि रखने के लिये

છે, તેમને "मणसा वि परिघेत्तुं न कप्पइ" મનથી ગ્રહણ કરવાનું સાધુને માટે યોગ્ય નથી. હવે એજ વિષયને સૂત્રકાર વિસ્તારથી સમજાવે છે-જે સાધુ અપરિગ્રહી છે તેણે " न धनहिरण्णसुवण्णखेत्तवत्थुं " હિરણ્ય, સુવર્ણ, ક્ષેત્ર, વસ્તુ તથા ' न दासीदास भयक–पेस–हय–गय–गवेलगंवा " દાસ, દાસી, ભ્રતક, પ્રૈષ્ય હય, ગજ, ગવેલક તથા " न जाणजुग्गसयणासणाइं " યાન, યુગ્ય, શયન, આસન, એ બધી વસ્તુઓ મનથી પણ ચાહવા યોગ્ય હોતી નથી. ગ્રામાદિક શબ્દોની વ્યાખ્યા આગળના સંવરદ્વારોમાં આપવામાં આવી છે પગાર લઈને કામ કરનારને "भृतक" નોકર કહે છે તથા કામ પડતાં જેમને કાર્યને નિમિત્તે બહાર ગામ મોકલાય છે તેમને ,' प्रैष्य" (દૂત) કહે છે ઘેટાને ગવેલક કહે છે રથ આદિ યાન અથવા દરેક વાહનને " युग्य " કહે છે એ જ પ્રકારે " न छत्तगं ' તડકાથી બચવા માટે છત્રને તથા " न कोडिकं "

सोऽपि परिग्रहीतुं कल्पते । तथा न ' उवाणहं ' उपानहम्—उपलक्षणत्वात्पादुका-मोजादिकं चाऽपि परिग्रहीतुं न कल्पते, तथा—न 'पेहुणवीयणतालियंटगा ' पेहुण व्यजनतालवृन्तकानि, पेहुणं=मयूरपिच्छम् , व्यजनं=वंशादि निर्मितम् , तालवृन्तकं=तालपत्रनिर्मितं व्यजनम् , एतानि ' पंखा ' इति भाषाप्रसिद्धानि, एषामितरेतरयोगद्वन्द्वः तानि मनसापि परिग्रहीतुं न कल्पन्ते, तथा—' ण यावि ' न चापि ' अयतउयतंबसीसकंसरययजायरूवमणिमुत्ताहारपुडगसंखदंतमणिसिंगसेलकायवरचेलचम्मपत्ताइं ' अयस्त्रपुताम्रसीसकांस्यरजतजातरूपमणिमुक्ताहारपुटकशङ्खदंतमणिशृङ्गशैलकाचवरचेलचर्मपात्राणि, तत्र = अयो = लोहः, त्रपु=वङ्गम् , ' कथीर ' ' रांगा ' प्रति प्रसिद्धम् , ताम्रं=प्रसिद्धम् , सीसं=' सीसा ' इति प्रसिद्धम् , कांस्यम्=त्रपुताम्रसंयोगजं द्रव्यम् , रजतम्=' चान्दी ' प्रसिद्धम् , जातरूपम्=सुवर्णम् , मणयः=इन्द्रनीलाद्याः, मुक्ताः=मुक्ताफलानि, हारपुटकं=लोहविशेषः, शङ्ख=प्रसिद्धः, दन्तमणिः=गजमस्तकसमुत्पन्नोमणिः, शृङ्ग=हरिणप्रभृतीनां

कमण्डलु भी वह नहीं रखता है । (नोवाणहं) जूते, खडाऊँ आदि भी वह रखने की इच्छातक नहीं करता है । (न पेहुण वीयण तालियंटगा) पेहुणमयूरपिच्छ,वंश शलाकादिनिर्मित बीजना, तालपत्र निर्मित व्यजन—पंखा, इन्हें भी वह रखने की मन से भी चाहन नहीं करता है । (ण यावि अय—तउय—तंबसीस—कंस—रयय—जायरूव—मणि—मुत्ता—हार—पुडग—संख—दंत—मणि—सिंग—सेल—कायवर—चेल—चम्म—पत्ताइं गुणवओ पलिकड्डिउं) लोहे का पात्र, त्रपु—रांगा का पात्र, तांबे का पात्र, सीसा का पात्र, कांसे का पात्र, चांदी का पात्र, सुवर्ण का पात्र, इन्द्रनील आदि मणि का पात्र, मुक्ताफल—मोती का पात्र, हारपुटक—लोहविशेष का पात्र, शंख का पात्र, गजमोती का पात्र, हरिण आदि पशुओं के श्रृंग

પાણી આદિ રાખવા માટે કમંડળને પણ તે રાખી શકતાં નથી. "नो वाणह" જોડા, આદિ રાખવાની તે ઇચ્છા પણ કરતાં નથી. " न पेहुणवीयणतालियंटगा " પેહુણ–મયૂરપિચ્છ, વંશ શલાકાદિ નિર્મિત વિંજણો, તાલપત્ર નિર્મિત પંખો, તેમને રાખવાની તે મનથી પણ તે ઇચ્છા કરતાં નથી. "ण चावि अय–तउय–तंब–सीस–कंस–रयय–जायरूव–मणि–मुत्ता–हार-पुडग-संख-दंत–मणि–सिंग–सेल–कावर–चेलचम्म–पत्ताइं गुणवओ परिकड्ढिउं " લોઢાનું પાત્ર, ત્રપુ–રાંગાનું પાત્ર, તાંબાનું પાત્ર, સીસાનું પાત્ર, કાંસાનું પાત્ર ચાંદીનું પાત્ર, સોનાનું પાત્ર, ઇન્દ્રનીલ આદિ મણિનું પાત્ર, મોતીનું પાત્ર, હારપુટક–લોહવિશેષનું પાત્ર, ગજમોતીનું પાત્ર, શંખનું પાત્ર, હરણ આદિ પશુઓના શિંગડાનું પાત્ર,

मान्यैः, एतादृशैः 'जिणवरिंदेहिं' जिनवरेन्द्रैः=जिनाः=अवधिज्ञानमनः पर्ययज्ञानधराश्चछद्मस्थजिनाः, तेषु वराः=श्रेष्ठाः केवलिनस्तेषामिन्द्रास्तीर्थंकर नाम कर्मोदयवर्तित्वाद्येते तैः 'एस' एषा=पुष्पफलकन्दमूलादिसर्वधान्यरूपा 'जोणी' योनिरुत्पत्तिस्थानम्, 'जणाणं' जगताम् = प्राणिनां 'दिट्ठा' दृष्टा केवलज्ञानेन, तस्मात्-कारणात्तेषां प्राणिनां 'न कप्पइ' न कल्पते 'जोणीसमुच्छिदोत्ति' योनिसमुच्छेदः इति = योनिध्वंसं कर्तुमिति, 'हि' यतः-'तेण' न हेतुना एतानि पुष्पफलादि सर्वधान्यानि 'समणसीहा' श्रमणसिंहाः श्रमणेषु सिंहाः मुनिश्रेष्टाः 'वज्जेंति' वर्जयन्ति-न संघट्टयन्ति ॥ सू० २ ॥

लोयमहिएहिं) तीनों लोकों में मान्य ऐसे (जिणवरेहिं जिनवरेन्द्रोंने- अवधिज्ञानी और मनः पर्ययज्ञानीरूप छद्मस्थजिनों में श्रेष्ठ जो केवली भगवान है, उनके भी तीर्थंकर नामकर्म के उदय से युक्त होने के कारण जो इन्द्र बने हुए है ऐसे जिनवरेन्द्रों ने (एस) ये पुष्प, फल, कन्द, मूल, आदि सर्वधान्य (जणाणं जोणीदिट्ठा) जीवों की उत्पत्तिस्थान होने से योनि-रूप देखे हैं। इसलिये सकल संयमी जन को (न कप्पइजोणी समुच्छि दोत्ति) जीवों की योनिरूप पुष्पफलादिको का ध्वंस करना कल्पित नहीं है। (तेण हि) इसलिये ये पुष्पफलादि समस्त धान्य (समणसिंहा) मुनिसिंहों के लिये (वज्जेंति) वर्जनीय हैं अतः इसी कारण वे इनकी संघट्टना नहीं करते हैं।

भावर्थ—इस परिग्रहविरमणरूप अन्तिम संवरद्वार में सूत्रकार ने सकल संयमी अपरिग्रही श्रमण के लिये यह कहा है कि वह यदि

देहिं" જિનવરેન્દ્રોએ-અવધિજ્ઞાની અને મનઃ પર્યવજ્ઞાનીરૂપ છદ્મસ્થ જિનોમાં શ્રેષ્ઠ જે કેવલી ભગવાન છે, તેમના પણ તીર્થંકર નામકર્મના ઉદયથી યુક્ત હોવાને કારણે જેઓ ઈન્દ્ર બન્યા છે એવાં જિનવરેન્દ્રોએ "एस" તે પુષ્પ, ફળ, કંદ, મૂળ આદિ સર્વ ધાન્યને "जणाण जोणी दिट्ठा" જીવોનું ઉત્પત્તિ સ્થાન હોવાથી યોનિરૂપે દેખ્યા છે. તે કારણે સકલ સંયમી જને "न कप्पइ जोणीसमुच्छिन्नेत्ति" જીવોની યોની રૂપ પુષ્પ, ફળ આદિનો ધ્વંસ કરવો કલ્પતો નથી "तेण हि" તેજ કારણે પુષ્પ, ફળ આદિ સમસ્ત ધાન્ય "समण सिहा" સિંહ સમાન મુનિઓને માટે 'वज्जेंति" ત્યાગ કરવાને યોગ્ય બતાવ્યા છે, તો તેજ કારણે તેઓ તેમને ગ્રહણ કરતા નથી.

ભાવાર્થ—આ પરિગ્રહ વિરમણરૂપ અંતિમ સંવતદ્વારમા સૂત્રકારે સકલ સંયમી અપરિગ્રહી સાધુને માટે તે બતાવ્યુ છે. કે જો તે પોતાના મૂળગુ-

पुनरप्यकल्पनीयानि प्रदर्शयति—' जंपि य ' इत्यादि ।

मूलम्—जंपि य ओदाणकुम्मासगंजतप्पण-मथु-भज्जिय-पलल-सूपसंकुलि-वेढिम-वरिसोलग- चुण्णकोसग-पिंड-सिहरिणीवट्टग-मोयक- खीर-दहि--सप्पि-नवणीय-तिल्ल-गुड--खंड-मच्छंडिय--मधु--खज्जक--वंजण--विहिमाइयं पणीयं उवस्सए परघरे रण्णे वा न कप्पइ तंपि संनिहीकाउं सुविहियाणं, जं पिय उद्दिट्ठठविय रइयग पज्जवजायपकिण्णपा-

---

अपने मूलगुणों की रक्षा करना चाहता है तो ग्राम आदि स्थानों में पड़ी हुई, भूली हुई, रखी हुई, किसी भी वस्तु को चाहे वह थोड़ी हो, बहुत हो, कीमती हो या कीमती न भी हो, उठाने का विचार तक भी नहीं करे । इसी तरह वह धातु की किसी भी वस्तु को ग्रहण करने की भी इच्छा न करे। दासीदास आदि रूप किसी भी प्रकार का वह परिग्रह रखने का विचार तक भी न करें । न वह औषध भैषज्य और आहार आदि के निमित्त फल पुष्पादिकों को अपने उपयोग में लावे । समस्त प्रकार के सचित्तपदार्थों का उसको तीनकरण तीनयोगों से परित्याग कर देना चाहिये । क्यों कि ऐसे पदार्थ ज्ञानियों ने जीवों की उत्पत्ति के योनि भूत कहे हैं । मयूरपिच्छ आदि का भी उसे रखने का प्रभु का आदेश नहीं है । लोहे वस्त्र आदि के पात्र को भी उसको रखना साधुचर्या में कल्पित नहीं हैं ॥ सू–२ ॥

ણોની રક્ષા કરવા માગતો હોય તો ગ્રામ આદિ સ્થાનોમાં પડેલી, ભૂલથી રહી ગયેલી, મૂકેલી, કોઇ પણ વસ્તુને–ભલે તે નાની હોય કે મોટી હોય, કીમતી હોય કે કીમતી પણ ન હોય, ઉપાડી લેવાનો વિચાર પણ કરવો જોઈએ નહી. એ જ પ્રમાણે તેણે ધાતુની કોઈ પણ વસ્તુને ગ્રહણ કરવાની પણ ઇચ્છા કરવી જોઇએ નહીં. દાસદાસી આદિ કોઇ પણ પ્રકારને પરિગ્રહ રાખવાનો તેણે વિચાર પણ કરવો જોઇએ નહીં તેણે ઔષધ, ભૈષજ્ય અને આહાર આદિને નિમિત્તે ફળ, પુષ્પ આદિને પોતાના ઉપયોગમાં લેવા જોઇએ નહીં સમસ્ત પ્રકારના સચિત્ત પદાર્થોને તેણે ત્રણે યોગથી પરિત્યાગ કરવો જોઈએ. કારણ કે એવા પદાર્થોને જ્ઞાનીઓએ જીવોની ઉત્પત્તિના સ્થાનરૂપ–યોનીરૂપ બતાવ્યાં છે. મયૂરપિચ્છ આદિ રાખવાનો પણ પ્રભુને આદેશ નથી. લોઢું,–વસ્ત્ર આદિનાં પાત્ર રાખવાં તે પણ સાધુને કલ્પતુ નથી. ॥ સૂ ૨ ॥

शृङ्गम् , शैलः=शिलेव शैलः=पाषाणः, काचः=प्रसिद्धः, वरचेलं=श्रेष्ठवस्त्रम्, चर्म= व्याघ्रादिचर्म एभिर्निर्मितानि पात्राणि कीदृशानीमानि ? ' महारिहाइं ' महार्हाणि बहुमूल्यानि तथा-' परस्स ' परस्य-स्वभिन्नजनस्य ' अज्झोववायलोभजणणाइं ' अध्युपपातलोभजननानि, तत्र-अध्युपपातः=ग्रहणैकाग्रचित्तता, लोभः = मूर्च्छा तयोर्जननानि=उत्पादकानि यानि तानि एतानि 'गुणवओ' गुणवतः=मूलगुणादि सम्पन्नस्य मनसापि ' परिकड्डिउं ' परिकर्षयितुम्=आदातुं न कल्पन्ते, तथा- ' न यावि ' न चापि=नैव ' संजयाणं ' संयतानां, ' ओसहभेसज्जभोयणट्ठयाए ' औषधभैषज्यभोजनार्थतया, तत्र औषधम्-एकद्रव्यनिष्पादितम् , भैषज्यम्=अनेक द्रव्यनिष्पादितम्, भोजनं च प्रतीतमेव, एषामर्थतया=प्रयोजनाय, ' पुप्फफलकंद

का पात्र, शैल-पाषाण का पात्र, काँच का पात्र, सुन्दर वस्त्र का और व्याघ्र आदि के चर्म का पात्र, वह जो साधु के मूलगुणों से युक्त है मन से रखने की चाहना नहीं करता है। अर्थात् मैं इन लोहादिकों से निर्मित हुए पात्रों को रखलूं इस प्रकार का वह विचार भी मन में नहीं लाता है, क्यों कि धातु अथवा मणि आदिकों के बने हुए पात्र (महा-रिहाइं) बहुमूल्य वाले होते हैं, तथा (परस्स अज्झोववायलोभजणणाइं) दूसरों में अध्युपपात और लोभ इनके उत्पादक होते हैं। चित्त में ग्रहण करने की एकाग्रता का बना रहना इसका नाम अध्युपपात और उनमें मूर्च्छाभाव का होना इसका नाम लोभ है। इसी तरह (संजयाणं) सकलसंयमीजनों को (ओसहभेसज्जभोयणट्ठाए) औषध एक द्रव्य से बनाई गई दवा, भैषज्य-अनेक द्रव्यों के मेल से बनाई गई दवा, तथा भोजन-आहार इनके प्रयोजन के निमित्त (पुप्फफलकंदमूलाइयाइं)

શૈલ પથ્થરનું પાત્ર, કાચનુ પાત્ર' સુંદર વસ્ત્રનું કે વ્યાઘ્રચર્મ આદિનું પાત્ર, તે પ્રકારના પાત્રને સાધુને મૂળ ગુણોથી યુક્ત હોય તેવો સાધુ રાખવાની મનમાં ઇચ્છા પણ કરતો નથી. એટલે કે આ લોહાદિકથી નિર્મિત પાત્રને ગ્રહણ કરૂં તે પ્રકારને વિચાર પણ તેના મનમા થતો નથી, કારણ કે ધાતુ અથવા મણિ આદિમાથી બનાવેલ પાત્ર " महारिहाइ " ઘણાં મૂલ્યવાન હોય છે, તથા " परस्स अज्झोववायलोभजणणाइं " બીજામા અધ્યુપપાત અને લોભના ઉત્પા-દક હોય છે તે પ્રાપ્ત કરવાની ચિત્તમાં ઉત્સૂકતા રહ્યા કરવી તેનુ નામ અધ્યુ-પપાત છે અને તેમનામા મૂર્ચ્છા ભાવ હોવો તે લોભ કહેવાય છે. એ જ પ્રમાણે " संजयाण " સકળ સયમી જનોએ " ओसहभेसज्जभोयणट्ठाए " ઔષધ-એક દ્રવ્યમાથી બનાવેલી દવા, ભૈષજ્ય અનેક દ્રવ્યોના મિશ્રણથી બના-વેલી દવા, તથા ભોજન આહાર, આદિ ઉપયોગને નિમિત્તે " पुप्फ फल कंदमूला

मूलादियाइं ' पुष्पफलकन्दमूलादिकानि प्रतीतानि, तथा-सणसत्तरसाइं ' शणसप्तदशानि=शणः=त्वक्प्रधाननालोधान्यविशेषः स सप्तदशो येषां तानि तथोक्तानि सप्तदशसंख्यकानि, ' सव्व धण्णाइं ' सर्वधान्यानि ' तीहिं वि ' जोगेहिं ' त्रिभिरपि योगैः=वाङ्मनःकायलक्षणैस्त्रिभिरपि योगैः, ' परिघेत्तुं ' परिग्रहीतुं न कल्पन्ते । ' किं कारणं ' किमर्थं परिग्रहीतुं न कल्पन्ते ? इत्याह—' अपरिमियणाणदंसणधरेहिं ' अपरिमितज्ञानदर्शनधरैः=अपरिमितानि यानि ज्ञानदर्शनानि तानि धरन्ति ये ते तैः, केवलज्ञानकेवलदर्शनधरैरित्यर्थः पुनः-' सीलगुणविणयतवसंजमनायकेहिं ' शीलगुणविनयतपः संयमनायकैः, तत्र-शीलम् = आत्मसमाधिः, गुणाः=ज्ञानादयः, विनय -अभ्युत्थानादिकः, तपः संयमो प्रतीतौ, तान्नयन्ति=वर्द्धयन्ति ये ते तैः, पुनः-तित्थंकरेहिं ' तीर्थङ्करैः-शासनप्रवर्तकैः, पुनः-' सव्व जगजीववच्छलेहिं ' सर्वजगज्जीववत्सलैः=सर्वजगतां ये जीवास्तेषु तदुपरि वत्सलैः =परमकारुणिकैः, पुनः कीदृशैः ? ' तिलोयमहिएहिं ' त्रिलोकमहितैः=लोकत्रय-

---

पुष्प, फल, कन्द, मूल आदिकों का तथा (सणसत्तरसाइं) शण-त्वक् प्रधान नालो धान्य विशेष यह है सत्रहवां जिन्हों का ऐसे (सव्वधण्णाइं समस्त धान्यों को (न यावि तीहिंविजोगेहिं परिघेत्तुं) मन, वचन और काय, इन तीनों योगों से ग्रहण करना कल्पित नहीं है । (किं कारणं) क्या कारण है कि वे नहीं कल्पता है ? इस पर कहते हैं (अपरिमियणाणदंसणधरेहिं) अपरिमित-अपार-अनंत-केवलज्ञान, केवलदर्शन, को धारण करने वाले, (सीलगुणविणयतवसंजमनायगेहिं) शील-आत्मसमाधि, ज्ञानादिगुण अभ्युत्थानादिरूप विनय, तप और संयम इनको बढाने वाले, (तित्थयरेहिं) तीर्थंकर-शासन प्रवर्तक, (सव्वजगजीववच्छलेहिं) समस्त जगत के जीवों के ऊपर परमकरुणाशील, (ति-

---

इयाइ " पुष्प, ફળ, કંદ, મૂળ, આદિને તથા " सणसत्तरसाइं " શણ-રેશાવાળી વાળીથી યુક્ત ધાન્ય વિશેષ જેમાં સત્તરમું છે એવાં " सव्वधण्णाइं " સમસ્ત ધાન્યોને " न यावि तीहिं विजोगेहिं परिघेत्तुं " મન, વચન અને કાય, એ ત્રણેના યોગથી ગ્રહણ કરવાનું કલ્પતું નથી. " किंकारणं " તે નહીં કલ્પવાનું કારણ શું છે? તો સૂત્રકાર કહે છે- " अपरिमियणाणदंसणधरेहिं " અપરિમિત-અપાર-અનંત કેવળજ્ઞાન, કેવળ દર્શનને ધારણ કરનાર " सील-गुणविणयतवसंजमनायगेहि " શીલ-આત્મ સમાધિ, જ્ઞાનાદિક ગુણ, અભ્યુત્થાનાદિકરૂપ વિનય, તપ અને સયમ, એને વધાવાનાર, " तित्थयरेहिं " તીર્થંકર શાસન પ્રવર્તક, " सव्वजगजीववच्छलेहिं " સમસ્ત જગતનાં જીવો પ્રત્યે અત્યંતકરુણાશીલ, " तिलोयमहिएहिं " ત્રણેલોકમાં માન્ય એવાં " जिणवरि

मान्यैः, एतादृशैः 'जिणवरिंदेहिं' जिनवरेन्द्रैः=जिनाः=अवधिज्ञानमनः पर्यय-ज्ञानधराश्चद्मस्थजिनाः, तेषु वराः=श्रेष्ठाः केवलिनस्तेषामिन्द्रास्तीर्थंकर नाम कर्मोदयवर्तित्वाद्येते तैः 'एस' एषा=पुष्पफलकन्दमूलादिसर्वधान्यरूपा 'जोणी' योनिरुत्पत्तिस्थानम्, 'जणाणं' जगताम् = प्राणिनां 'दिट्ठा' दृष्टा केवलज्ञानेन, तस्मात्-कारणात्तेषां प्राणिनां 'न कप्पइ' न कल्पते 'जोणीसमुच्छिन्नोत्ति' योनिसमुच्छेदः इति = योनिध्वंसं कर्त्तुमिति, 'हि' यतः-'तेण' न हेतुना एतानि पुष्पफलादि सर्वधान्यानि 'समणसीहा' श्रमणसिंहाः श्रमणेषु सिंहाः मुनिश्रेष्टाः 'वज्जेंति' वर्जयन्ति-न संघट्टयन्ति ॥ सू० २ ॥

लोयमहिएहिं) तीनों लोकों में मान्य ऐसे (जिणवरेहिं जिनवरेन्द्रोंने-अवधिज्ञानी और मनः पर्ययज्ञानीरूप छद्मस्थजिनों में श्रेष्ठ जो केवली भगवान हैं, उनके भी तीर्थंकर नामकर्म के उदय से युक्त होने के कारण जो इन्द्र बने हुए है ऐसे जिनवरेन्द्रों ने (एस) ये पुष्प, फल, कन्द, मुल, आदि सर्वधान्य (जणाणं जोणीदिट्ठा) जीवों की उत्पत्तिस्थान होने से योनि-रूप देखे हैं। इसलिये सकल संयमी जन को (न कप्पइजोणी समुच्छिदोत्ति) जीवों की योनिरूप पुष्पफलादिको का ध्वंस करना कल्पित नहीं है। (तेण हि) इसलिये ये पुष्पफलादि समस्त धान्य (समणसिंहा) मुनिसिंहों के लिये (वज्जेंति) वर्जनीय हैं अतः इसी कारण वे इनकी संघट्टना नहीं करते हैं।

भावर्थ—इस परिग्रहविरमणरूप अन्तिम संवरद्वार में सूत्रकार ने सकल संयमी अपरिग्रही श्रमण के लिये यह कहा है कि वह यदि

देहिं" જિનવરેન્દ્રોએ-અવધિજ્ઞાની અને મન. પર્યવજ્ઞાનીરૂપ છદ્મસ્થ જિનોમા શ્રેષ્ઠ જે કેવલી ભગવાન છે, તેમના પણ તીર્થંકર નામકર્મના ઉદયથી યુક્ત હોવાને કારણે જેઓ ઈન્દ્ર બન્યા છે એવા જિનવરેન્દ્રોએ "एस" તે પુષ્પ, ફળ, કંદ, મૂળ આદિ સર્વ ધાન્યને "जणाण जोणी दिट्ठां" જીવોનું ઉત્પત્તિ સ્થાન હોવાથી યોનિરૂપે દેખ્યાં છે. તે કારણે સકલ સંયમી જને "न कप्पइ जोणीसमुच्छिन्नोत्ति" જીવોની યોની રૂપ પુષ્પ, ફળ આદિનો ધ્વંસ કરવો કલ્પતો નથી "तेण हि" તેજ કારણે પુષ્પ, ફળ આદિ સમસ્ત ધાન્ય "समण सिहा" સિંહ સમાન મુનિઓને માટે "वज्जेंति" ત્યાગ કરવાને યોગ્ય બતાવ્યા છે, તો તેજ કારણે તેઓ તેમને ગ્રહણ કરતા નથી.

ભાવાર્થ—આ પરિગ્રહ વિરમણરૂપ અંતિમ સંવતદ્વારમા સૂત્રકારે સકલ સંયમી અપરિગ્રહી સાધુને માટે તે બતાવ્યુ છે. કે જો તે પોતાના મૂળગુ-

पुनरप्यकल्पनीयानि प्रदर्शयति—' जंपि य ' इत्यादि ।

मूलम्—जंपि य ओदाणकुम्मासगंजतप्पण-मथु-भज्जिय-पलल-सूपसंकुलि-वेढिम-वरिसोलग- चुण्णकोसग-पिंड-सिहरिणीवट्टग-मोयक- खीर-दहि--सप्पि-नवणीय-तिल्ल-गुड--खंड-मच्छंडिय--मधु--खज्जक--वंजण--विहिमाइयं पणीयं उवस्सए परघरे रण्णे वा न कप्पइ तंपि संनिहीकाउं सुविहियाणं, जं पिय उद्दिट्ठठविय रइयग पज्जवजायपकिण्णपा-

---

अपने मूलगुणों की रक्षा करना चाहता है तो ग्राम आदि स्थानों में पड़ी हुई, भूली हुई, रक्खी हुई, किसी भी वस्तु को चाहे वह थोड़ी हो, बहुत हो, कीमती हो या कीमती न भी हो, उठाने का विचार तक भी नहीं करे। इसी तरह वह धातु की किसी भी वस्तु को ग्रहण करने की भी इच्छा न करे। दासीदास आदि रूप किसी भी प्रकार का वह परिग्रह रखने का विचार तक भी न करें। न वह औषध भैषज्य और आहार आदि के निमित्त फल पुष्पादिकों को अपने उपयोग में लावे। समस्त प्रकार के सचित्तपदार्थों का उसको तीनकरण तीनयोगों से परित्याग कर देना चाहिये। क्यों कि ऐसे पदार्थ ज्ञानियों ने जीवों की उत्पत्ति के योनि भूत कहे हैं। मयूरपिच्छ आदि का भी उसे रखने का प्रभु का आदेश नहीं है। लोहे वस्त्र आदि के पात्र को भी उसको रखना साधु-चर्या में कल्पित नहीं हैं॥ सू-२॥

ણોની રક્ષા કરવા માગતો હોય તો ગ્રામ આદિ સ્થાનોમાં પડેલી, ભૂલથી રહી ગયેલી, મૂકેલી, કોઇ પણ વસ્તુને-ભલે તે નાની હોય કે મોટી હોય, કીમતી હોય કે કીમતી પણ ન હોય, ઉપાડી લેવાનો વિચાર પણ કરવો જોઈએ નહીં. એ જ પ્રમાણે તેણે ધાતુની કોઈ પણ વસ્તુને ગ્રહણ કરવાની પણ ઇચ્છા કરવી જોઇએ નહીં દાસદાસી આદિ કોઇ પણ પ્રકારનો પરિગ્રહ રાખવાનો તેણે વિચાર પણ કરવો જોઇએ નહીં તેણે ઔષધ, ભૈષજ્ય અને આહાર આદિને નિમિત્તે ફળ, પુષ્પ આદિને પોતાના ઉપયોગમા લેવા જોઇએ નહીં સમસ્ત પ્રકારના સચિત્ત પદાર્થોને તેણે ત્રણે યોગથી પરિત્યાગ કરવો જોઈએ. કારણ કે એવા પદાર્થોનો જ્ઞાનીઓએ જીવોની ઉત્પત્તિના સ્થાનરૂપ-યોનીરૂપ બતાવ્યાં છે. મયૂરપિચ્છ આદિ રાખવાનો પણ પ્રભુનો આદેશ નથી. લોઢું,-વસ્ત્ર આદિનાં પાત્ર રાખવાં તે પણ સાધુને કલ્પતુ નથી. ॥ સૂ ૨ ॥

ओकरणपामिच्च मीसगकीयगडं पाहुडं वा दाणट्ठ-पुण्णट्ठप-गडं समणवणीमगट्ठयाए वा कयं पच्छाकम्मं पुरेकम्मं नितिगमुदगमक्खियं अइरित्तं मोहरं सयगाहं आहडं मट्टि-ओवलित्तं अच्छेज्जं चेव अणिसिट्ठं, जं तं तिहिसु जण्णेसु उस्सवेसु य अंतो वा बहिं वा होज्ज समणट्ठयाए ठवियं ठवियं हिंसासावज्जसंपउत्ते न कप्पइ तं पि य परिघेत्तुं ॥सू०३॥

टीका—'जंपि य' इत्यादि।

'जंपि य' यदपि च 'ओदणकुम्मासगंजतप्पणमंथुभज्जियपललसूवसं-कुलिवेढिमवरिसोलगचुण्णकोसगपिंडसिहरिणीवट्टगमोयगखीरदहिसप्पिनवणीय-तिलगुडखंडमच्छंडियमधुखज्जकवंजणविहिमाइयं' ओदनकुल्माषगञ्जतर्पणमन्थु--भर्जितपललसूपशष्कुलिवेष्टिमवर्षोलकचूर्णकोशकपिण्डशिखरिणीवर्त्तकमोदकक्षीर-दधिसर्पिर्नवनीततिलगुडखण्डमत्स्यण्डिकामधुखाद्यकव्यञ्जनविध्यादिकम्, तत्र - ओदनाः-प्रसिद्धाः, कुल्माषाः = माषाईपक्वस्विन्ना मुद्गादयो वा, गञ्जः = भोज्यविशेषः, तर्पणाः = सक्तवः, मन्थुः = बदरादिचूर्णम्, भर्जितं=केवला-ग्निपक्वयवगोधूमधानादिकम्, पललम् = तिलपिष्टम्, सूपः = मुद्गादिदालिः,

फिर भी अकल्पनीय वस्तुओं को कहते हैं—'जंपिय' इ०

टीकार्थ—(जंपि य-ओदण-कुम्मास-गंज-तप्पण-मंथु-भज्जिय-पलल-सूव-संकुलि-वेढिम-वरिसोलग-चुण्णकोसग-पिंड-सिहरिणी-वट्टग-मोयग-खीर-दहि-सप्पि-नवणीय-तिल-गुड-खंड-मच्छंडिय—मधु--खज्जक—वंजण— विहिमाइयं—पणीयं) जो भी ओदन—भात, कुल्माष-माष-उड़द अथवा कुछ २ पके हुए मूंग आदि अन्न गञ्ज-भोज्यविशेष, तर्पण-सत्तू, मंथु-बदर (बेर) आदि का चूर्ण,

વળી બીજી પણ અકલ્પનીય વસ્તુઓ સૂત્રકાર બતાવે છે—"जंपिय" ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ—"जंपिय-ओदण-कुम्मास-गंज-तप्पण-मंथु-भज्जिय-पलल-सूव-संकुलिवेढिम-वरिसोलग-पिंड-सिहरिणी-वट्टग-मोयग-खीर-दहि-सप्पि-नवणीय-तिल--गुड-मच्छंडिय--मंस-खज्जक-वंजण-विहिमाइयं पणीय" જે ઓદન-ભાત, કુલ્માષ-માષ-અડદ અથવા થોડું થોડું પકાવેલું મગ આદિ અન્ન, ગઞ્જ-એક પ્રકારનું ભોજન, તર્પણ-સત્તૂ, મંથુ-બોર આદિનું ચૂર્ણ, ભર્જિત અગ્નિમાં

शष्कुली=' पूड़ी ' इति प्रसिद्धाः. वेष्टिमाः=' वेढमी ' इति प्रसिद्धाः, वर्षोलकाः= खाद्यविशेषाः, चूर्णकोशकानि=चूर्णभृताः कोषकाकृतिका भक्ष्यभेदाः ' गूंजा ' ' कचौरी ' इति भाषा प्रसिद्धा, पिण्डः = गुडादिपिण्डः, शिखरिणी =' श्रीखण्ड इति प्रसिद्धाः, वर्त्तकं=' वड़ा ' इति भाषा प्रसिद्धम् , मोदकाः=प्रसिद्धाः, क्षीरं= दुग्धम् , दधि=प्रसिद्धम् , सर्पिः=घृतम् , नवनीतम्=' मक्खन ' इति प्रसिद्धम् , तैलगुडं प्रसिद्धम् , खण्डम्=' खांड ' इति प्रसिद्धम् , मत्स्यण्डिका=' मिश्री ' इति प्रसिद्धा, मधु=प्रसिद्धम् , एते पदार्था आधाकर्मादि दोषदूषिताः साधुभिर्वर्जनीयाः। तथा—खाद्यकाः='खाजा' इति भाषा प्रसिद्धाः, व्यञ्जनानि=तक्रादीनि–रसयुक्त-शाकपदार्थो वा कढी' आदि भाषा प्रसिद्धाः, तेषां ये विधयः=प्रकाराः, एतेऽपि सदोषा वर्जनीयाः। एषां द्वन्द्वः, एते आदौ यस्य तत्तथोक्तम् , एवं विधं 'पणीयं' प्रणीतं=स्निग्धमशनं च कारणं विना वर्जनीयम् । एतत्सर्वं निर्दोषमपि-'उवस्सए'

भर्जित—अग्नि में भुंजेहुए जो गेहुं आदि धान्य—तिलपिष्ट, सूप-मूंग आदि की दाल, शष्कुली–पुड़ी, वेष्टिम–वेढमी, वर्षोलक–एक प्रकार का खाद्यविशेष, चूर्णकोशक–कचौड़ी, गूंजा, पिण्ड–गुड़ आदि, शिखरणी–श्रीखंड, वर्त्तक वड़ा, मोदक-लड्डु, क्षीर–दूध, सर्पि–घृत,नव-नीत–मक्खन, तिल, गुड़, खंड–खांड, मत्स्यण्डिका–मिश्री, मधु–शहद ये पदार्थ यदि आधाकर्म आदि दोषसे दूषित हों तो साधुपुरुषोंद्वारा सदा वर्जनीयहैं। खाजा, तक्र आदि व्यंजन, अथवा रसयुक्त साक पदार्थ जैसे कढीआदि, तथा इन भक्ष्य पदार्थोंके जो और भी भेद होते हैं वे सब भी यदि सदोष हों तो साधु को वर्जनीय हैं। तथा भोज्य ये ओदनादि रूप स्निग्ध पदार्थ निर्दोष भी हों तो भी साधु विना कारण के अपने उप-योग में इन्हें नहीं लेना चाहिये और इन सब निर्दोष भोज्यपदार्थो का

શેકેલ જવ, ઘઉં આદિ ધાન્ય,पलल–ખાંડેલ તલ, सूप–મગ આદિની દાળ, शष्कुली–પુરી, वेष्टिम–વેડમી, वर्षोलक–એક પ્રકારનું ખાદ્ય, चूर्णकोशक–કચોડી ગૂંજા, पिण्ड–ગોળ આદિ, शिखरिणी=શિખંડ, वर्त्तक–વડા, मोदक લાડૂ क्षीर–દૂધ, દહીં. સર્પિ–ઘી नवनीत–માખણ, તલ, ગોળ, खंड–ખાંડ, मत्स्यण्डिका–મિશ્રી, સાકર मधु–મધ, એ પદાર્થો જો અધાકર્મ આદિ દોષથી દૂષિત હોય તો સાધુઓએ તેમનો ત્યાગ કરવા યોગ્ય છે. તથા દારૂ અને માસતો સર્વથા ત્યાજ્ય છે ખાજા, તક્ર આદિ વ્યંજન, અથવા રસયુક્ત શાક, કઢી વગેરે પદાર્થ, તથા એ ભક્ષ્યપદાર્થોનાં બીજાં પણ જે ભેદ હોય છે, તે બધાંનો પણ જો તે સદોષ હોય તો સાધુએ ત્યાગ કરવો જોઈએ તથા ભોજનને યોગ્ય તે ઓદનાદિ સ્નિગ્ધ પદાર્થ નિર્દોષ હોય તો પણ સાધુએ કારણ વિના તેમનો

उपाश्रये=वसतौ 'परघरे' परगृहे=गृहस्थगृहे 'रण्णे वा' अरण्ये=अटव्यां वा 'सुविहियाणं' सुविहितानाम्=सुसाधूनां 'संनिहिकाउं' संनिधीकर्तुम्=स्थापयितुम्, 'न कप्पइ' न कल्पते। तथा-'जंपि य' यदपि च 'उद्दिट्टठवियरइयगपज्जवजातपक्किण्णपाओकरणपामिच्चमीसगकीयगड' उद्दिष्टस्थापितरचितकपर्यवजातप्रकीर्ण प्रादुष्करणप्रामित्यमिश्रकक्रीतकृतं, तत्र-उद्दिष्टम्=दुर्भिक्षादौ पाखण्डिनः श्रमणान् अन्यांश्च भिक्षूनुद्दिश्य यत् कल्पितं तत्, स्थापितम्='श्रमणायद्यागच्छेयुस्तदा तेभ्यो दास्यामी'ति बुद्धया रक्षितं यदशनादिकं तत्, रचितकम्=मोदकचूर्णादिकं वह्नौ प्रताप्य पुनर्मोदकरूपेण निर्मितम्, पर्यवजातं = पर्यवोऽवस्थान्तर जातो यत्र तत्, कूरादिकमुद्वरितं दध्यादिना विमिश्रितं करम्बादिकं

(उवस्सए परघरे रण्णे वा सुविहियाण संनिहीकाउं न कप्पइ) उपाश्रय में अथवा पर के घर में-गृहस्थ के घर में अथवा जंगल में साधुओं को आहार के निमित्त संग्रह करना नहीं कल्पता है। तथा (जंपि य उद्दिट्ठ वि यरइयगपज्जवजायपक्किण्णपाओकरणपामिच्चमीसग कीयगडं) जो भी आहार उद्दिष्ट हो-दुर्भिक्ष आदि के समय में पाखंडी साधुओं को एवं अन्य भिक्षुओं को उद्देश्य करके बनाया गया हो, स्थापित हो, 'श्रमण यदि आवेंगे तो उन के लिये इस आहार को मैं दूंगा' इस बुद्धि से जो पहिले से तैयार करके रख लिया गया हो, रचित हो-मोदकादिक फूटकर जो चूर्णरूप में हो गये हों उनका वह चूर्ण अग्नि से तपाकर बनाई गई पुनः मोदकरूप में परिवर्तित करदिया गया हो, जो आहार पर्यवजात हो-भात आदि में छाछ मिला कर बनाई गई रावडी की तरह साधु के उद्देश से अवस्थान्तर को प्राप्त कराया गया

ઉપયોગ કરવો જોઈએ નહીં. અને એ બધાં નિર્દોષ ભોજ્ય પદાર્થોનો "उवस्सए परघरे रण्णे वा सुविहियाण संनिहाकाउं न कप्पइ" ઉપાશ્રયમાં અથવા ગૃહસ્થાનના ઘરમાં અથવા જંગલમાં આહારને નિમિત્તે સંગ્રહ કરવાનું સાધુને કલ્પતું નથી તથા "जंपिय उद्दिट्ठ-वियरइयग-पज्जवजाय-पकिण्ण-पाओकरण पामिच्चमीसगकीयगड" જે આહાર ઉદ્દિષ્ટ હોય-દુષ્કાળ આદિના સમયમાં પાખંડી સાધુઓ અને અન્ય ભિક્ષુઓને નિમિત્તે બનાવ્યો હોય, સાધુ આદિ આવશે તો તેમને આ આહાર હું આપીશ એ વિચારથી જે પહેલેથી તૈયાર રાખ્યો હોય, રચિત હોય, લાડુ આદિનો ભૂકો થઈ ગયો હોય, અને તે ભૂકાને આગ પર તપાવીને ફરીથી તેને લાડુ આદિનાં રૂપે પરિવર્તન કરેલ હોય, જે આહાર પર્યવજાત હોય-ભાત આદિમાં છાશનું મિશ્રણ કરીને બનાવેલ રાબડીની જેમ સાધુને નિમિત્તે અવસ્થાન્તર-ભિન્નરૂપમાં લાવવામાં આવ્યો હોય,

पर्यायान्तरमापादितमित्यर्थः, एते औद्देशिकभेदाः, तथा-प्रकीर्णम्=विक्षिप्तम्-वि-छर्दितपरिक्षाटीत्यर्थः, अनेन छर्दिताभिधान-एषणादोषोऽभिहितः, तथा-प्रादुष्करणम्=प्रादुष्क्रियतेऽन्धकारस्थानात्, प्रदीपसहायेन साध्वर्थं बहिष्क्रियते यदशनादिकं तत्, प्रामित्यम्=यत्साध्वर्थमुच्छिन्नं गृहीतं शाकादिकं तत्, मिश्रकम्=मिश्रजातम्=साध्वर्थं गृहस्थार्थं च उपस्कृतम्, तथा-क्रीतकृतम्=क्रीतेन=साध्वर्थं क्रमणं कृत्वा गृहीतं यद् वस्तु तत्, एषां समाहारद्वन्द्वस्तत्तथोक्तम्, तथा 'पाहुडं वा' प्राभृतं वा=उपायनरूपेण दत्तं वा, तथा-'दाणट्ठपुण्णट्ठपगडं वा' दानार्थपुण्यार्थप्रकृतं वा=दानार्थं पुण्यार्थं च प्रकृतं=निष्पादितं वाऽशनादिकम्, तथा-'समणवणीमगट्ठयाए वा' श्रमणवनीपकार्थतया वा, तत्र-श्रमणाः=शाक्यादयः, वनीपकाः=भिक्षोपजीविनस्तेषामर्थतया=प्रयोजनाय वा 'कयं' कृतम्-तदर्थनि-

हो, ये उद्दिष्ट आदि पर्यवजात पर्यंत औद्देशिक आहार के भेद हैं। इसी तरह जो आहार देते समय प्रकीर्ण हो-फेंका गया हो, प्रादुष्कृत हो-अंधकारयुक्त स्थान से दीपादिक की सहायता द्वारा साधु कों देने के लिये बाहर लाकर रखा हो, प्रामित्य हो-जो साधु के लिये शाकादिक पदार्थ खेत आदि से उखाड़ कर या काटकर लाकर बनाया गया हो, मिश्रक हो-साधु और गृहस्थ दोनो के निमित्त जो आहार बनाया गया हो, क्रीतकृत हो-साधु के निमित्त जो आहार मोल लेकर के लाया हुआ हो, तथा (पाहुडं वा) प्राभृत हो-भेंटरूप से दिया गया हो, (दाणट्ठपुणट्ठपगडं) जो दानार्थ और पुण्यार्थ निष्पादित हों-जो आहार दान के लिये और पुण्य करने के लिये बनाया गया हो तथा जो आहार (समणवणीमगट्ठयाए वा कयं) शाक्यादिक श्रमणजनों को अथवा

આ રીતે ઉદ્દિષ્ટથી લઇને પર્યવજાત સુધીના ઔદ્દેશિક આહારના ભેદ છે એ જ રીતે આહાર આપતી વખતે પ્રકીર્ણ હોય, ફેંકવામાં આવ્યો હોય, પ્રાદુષ્યકૃત હોય-અંધારાવાળા સ્થાનમાથી દીવા આદિની મદદથી સાધુને આપવા માટે અહાર લાવીને મૂક્યો હોય, પ્રામિત્ય હોય-જે સાધુને માટે શાક આદિ પદાર્થ ખેતર આદિમાંથી ઉખાડીને કાપીને લાવીને બનાવવામાં આવ્યો હોય, મિશ્રક હોય-સાધુ અને ગૃહસ્થ બન્નેના નિમિત્તે જે આહાર બનાવાયો હોય, ક્રીતકૃત હોય-સાધુને નિમિત્તે આહાર ખરીદ્યો હોય, તથા " पाहुडंवा " પ્રાભૃત હોય. ભેટરૂપે અપાયો હોય, " दाणट्ठपुणट्ठपगडं " જે દાનાર્થે અને પુન્યાર્થે નિષ્પાદિત હોય-જે આહાર દાનને માટે અને પુન્ય કરવાને માટે બનાવાયો હોય, તથા જે આહાર "समणवणीमगट्ठयाए वा कयं" શાક્ય આદિ શ્રમણજનો

त्पादितमित्यर्थः. ' पच्छाकम्मं ' पश्चात्कर्म, पश्चाद्-दानान्तर कर्म=भाजनप्रक्षालनादि यत्राशनादौ तत्, तथा ' पुरेकम्मं ' पुराकर्म = पुरा = दानात्पूर्वं कर्म= हस्तलाघवादि यत्र तथा-' नितिग ' नैत्यिकम् = नित्यपिण्डं, दातुपोपणप्रमाणं वाऽवस्थितम्, ' उदगमक्खियं ' उदकम्रक्षितम्=उदकादिना, आदिशब्दात्-सचित्तपृथिवीकायादिभिरवगुण्ठितम्, उक्तञ्च " मक्खियमुदगाइणाउजं जुन्नं " इति। ' अइरित्तं ' अतिरिक्तम्=द्वात्रिंशत्, कवला आहारः पुरुषस्य कुक्षिपूरको भवति, स्त्रियश्चाष्टाविंशतिः कवलाः, नपुंसकस्य चतुर्विंशति कवला आहारः। ततोऽधिक आहारोऽतिरिक्तमुच्यते। तथा-' मोहरं ' मौखरम्=पूर्वसंस्तवमातापित्रादि पश्चात्संस्तवश्वशुरश्यालकादिना सह मौखर्येण=बहुभाषित्वेन यल्लभ्यते, तदशनादिकं मौखरमुच्यते। तथा ' सयंगाहं ' स्वयं ग्राहम्=दायकेनादत्तं यद्गृह्यते तत्

याचक जनों को देने के प्रयोजन से बनाया गया हो, ऐसा आहार साधु को लेना नहीं कल्पता है। इसी प्रकार जो आहार (पच्छाकम्मं) पश्चात् कर्म से युक्त हो, और (परेकम्मं) पराकर्म से युक्त हो, तथा (नितिगमुदगमक्खियं) नैत्यिक-नित्यपिंड हो, अथवा-दाता ने जिसे अपने खाने के जितना ही बनाया हो, उदक मुक्षित हो-सचित्त उदक से सचित्त पृथिवीकाय आदि से अवगुंठित हो (अइरित्तं) अतिरिक्त हो-पुरुषों की अपेक्षा से बत्तीस ग्रास से, स्त्रियों की अपेक्षा अट्ठाईस ग्रास से और नपुंसक की अपेक्षा चोईस ग्रास से जो अधिक हो, वह आहार भी मुनियों के लिये कल्पित नहीं है। इसी तरह (मोहरं) जो आहार मौखर हो-पूर्वसंस्तव मातापिता आदि के साथ तथा पश्चात्संस्तव श्वशुर श्यालक आदि के साथ अधिक बातचीत करने से प्राप्त होता हो, (सयं

અથવા યાચકજનોને દેવાને માટે બનાવાયો હોય, એવો આહાર લેવો સાધુને કલ્પતો નથી. એ જ પ્રમાણે જે આહાર " पच्छाकम्मं " પશ્ચાત્કર્મથી યુક્ત હોય અને " पुरेकम्मं " પુરા કર્મથી યુક્ત હોય તથા " नितिगमुदगमक्खियं " નૈત્યિક- નિત્ય પિંડ હોય, અથવા દાતાએ જે પોતાને ખાવા જેટલો જ બનાવ્યો હોય, ઉદક મુક્ષિત હોય--સચિત્ત પાણીથી, સચિત્ત પૃથ્વીકાય આદિથી અવગુંઠિત હોય, " अइरित्त " અતિરિક્ત હોય--પુરુષોની અપેક્ષાએ બત્રીસ ગ્રાસથી, સ્ત્રીઓની અપેક્ષાએ અઠ્ઠાવીસ ગ્રાસથી, અને નપુંસકની અપેક્ષાએ ચોવીસ ગ્રાસથી જે વધારે હોય તો તે આહાર પણ મુનિઓને કલ્પતો નથી એ જ પ્રમાણે " मोहरं " જે આહાર મૌખર હોય--પૂર્વસંસ્તવ માતા પિતા આદિની સાથે તથા પશ્ચાત્ સંસ્તવ સસરા, સાળા આદિની સાથે અધિક વાત ચીત કરવાથી પ્રાપ્ત થતો હોય, " सयंगाह " સ્વય ગ્રાહ હોય--દાતાએ જે ન

स्वहस्तेनाशनादेर्ग्रहणमित्यर्थः, अयमपरिणताभिधानदोषउक्तः। दायकस्यदानेऽपरिणतत्वात्। तथा-आहडं' आहृतम्=स्वपरग्रामादेः साध्वर्थमानीतमशनादिकमाहृतमुच्यते। तदुक्तम्—'सग्गामपरग्गामा आणियं आहडं होइ' छाया—स्वग्रामपरग्रामादानीतमाहृतं भवति। इति। तथा—'मट्टिओवलित्तं' मृत्तिकोपलिप्तम्=मृत्तिकया, उपलक्षणत्वाज्जतुगोमयादिना चोपलिप्तं सद्यदुद्भिद्यदीयते तत्, उद्भिन्नमित्यर्थः। तथा 'अच्छिज्जं' आच्छेद्यं, यदशनादिकं स्वामी भृत्यादिभ्य आच्छिद्य साधुभ्यो ददाति तदशनादिकमाच्छेद्यम्। 'चेव' चैव-चकारः पुनरर्थकः एवकारो निश्चयार्थः। 'अणिसिट्टं' अनुसृष्टम्=अनेकस्वामिकं यदशनादिकम् एक एव ददाति तदनिसृष्टम्, तथा-'जं तं' यत्तदशनादिकम्, 'तिहिसु' तिथिषु=शरत्पूर्णिमादि तिथिषु 'जण्णेसु' यज्ञेषु=नागपूजादिषु 'उस्सवेसु य' उत्सवेषु च=इन्द्रोत्सवेषु च 'अंतो व' अन्तर्वा=उपाश्रयस्याभ्यन्तरे वा, 'बहिं

गाहं) स्वयंग्राह हो-दाता ने जिसे न दिया हो किन्तु अपने ही हाथ से जो उठाकर ले लिया गया हो, (आहडं) आहृत हो-स्व और पर के ग्राम आदि से जो साधु के निमित्त लाया गया हो, (मट्टिओवलित्तं) मृतिकोपलिप्त हो जो आहार किसी कुंभ आदि में रखकर मिट्टी से, गोबर से, तथा लाख आदि से बंद किया हुआ हो और देते समय उस मिट्टी आदि को हटाकर बाहिर किया गया हो, (अच्छेज्जं चेव) अच्छेद्य हो-भृत्यादिकों से छीनकर दाता जिसे साधु के लिये दे रहा हो-जिस आहार के अनेक स्वामी हो परन्तु एक ही व्यक्ति उसको साधु के लिये दे रहा हो, ऐसा आहार भी साधु को लेना कल्पता नहीं है। तथा (जं तं) जो वह आहार (तिहिसु) शरत्पूर्णिमा आदि तिथियों के समय में (जण्णेसु) नागपूजादिक यज्ञों के समय में और

દીધો હોય પણ પોતાને જ હાથે જે ઉઠાવી લીધો હોય, "आहडं" આહૃત હોય-સ્વ અને પારકે ગ્રામ આદિમાંથી જે સાધુને નિમિત્તે લાવવામાં આવ્યો હોય, "मट्टिओवलित्तं" મૃત્તિકોપલિપ્ત હોય,-જે આહાર કોઈ પાત્ર આદિમાં મૂકીને માટીથી, ગોમયથી તથા લાખ આદિથી બંધ કરેલ હોય અને આપતી વખતે તે માટી આદિને ઉખેડી બહાર કાઢેલ હોય, "अच्छेज्जं चेव" આચ્છેદ્ય હોય-નોકર આદિકો પાસેથી છીનવીને દાતા જે સાધુને માટે આપતો હોય જે આહારના માલિક અનેક હોય પણ એક જ વ્યક્તિ તે સાધુને માટે આપી રહી હોય, એવો આહાર પણ લેવાનું સાધુને કલ્પતું નથી. તથા "जंतं" જે તે આહાર "तिहिसु" શરદપૂર્ણિમા આદિ તિથિઓના સમયે તથા "जण्णेसु"

वा ' बहिर्वा=उपाश्रयाद् बहिर्वा ' समणट्ठयाए ' श्रमणार्थतया = श्रमणनिमित्त-मित्यर्थः, ' ठवियं ' स्थापितं ' होज्ज ' भवेत् , " हिंसा सावज्जसंपउत्तं ' हिंसा-सावद्यसंप्रयुक्तम्=हिंसया=षट्कायोपमर्दनेन सावद्येन=सदोषेण कर्मणा च संप्रयुक्तं 'तंपि य' तदपि च अशनादिकं 'परिघेत्तुं' परिग्रहीतुं 'न कप्पइ' न कल्पते॥सू० ३॥

कीदृशमशनादि कल्पते ? इत्याह—' अहकेरिसयं ' इत्यादि । .

मूलम्—अह केरिसयं पुणो तं कप्पइ ? जं तं एगारसपिंडवायसुद्धं किणणहणण-पयण-कयकारियाणुमोयण--नव-कोडीहिं सुपरिसुद्धं दसहिं य दोसेहिं विप्पमुक्कं उग्गम उप्पायणेसणाहिं सुद्धं ववगयचुयचवियचत्तदेहं च फासुयं च ववगयसंजोगमणिंगालं विगयधूमं छट्ठाणनिमित्तं छकायपरि-रक्खणट्ठं हणि हणि फासुएण भिक्खेण वट्टियव्वं । जं पि य समणस्स सुविहियस्स रोगायंके बहुप्पगारम्मि समुपन्ने वायाहिग - पित्तसिंभाइरित्तकुवियतहसंणिवाए जाए तह उदयप्पत्ते उज्जलबलविउलकक्खडपगाढदुक्खे असुभकडुय फरुसचंडफलविवागमहब्भए जीवियंतकरणे सव्वसरीर परितावणकरणे न कप्पइ । तारिसे वि तह अप्पणो परस्स

(उस्सवेसु) इन्द्रोत्सवों के समय में तथा (अंतो वा बहिं वा) उपाश्रय के भीतर अथवा उपाश्रय से बाहिर (होज्जसमणट्ठयाए ठवियं) मु-नियों के निमित्त स्थापित कर रखा हो ऐसा वह (हिंसासावज्जसंपउत्तं) षट्कायोपमर्दनरूप हिंसा से एवं सदोष कर्म से संप्रयुक्त अशनादि (न कप्पइ तं पि य परिघेत्तुं) वह भी आहार साधुको लेना नहीं कल्पता है।सू३।

નાગપૂજાદિક યજ્ઞોના સમયે અને " उस्सवेसु "ઇન્દ્રોત્સવોને સમયે તથા " अंतो वा बहिवा " ઉપાશ્રયની અંદર અથવા ઉપાશ્રયની બહાર " होज्ज समणट्ठयाए ठविय " મુનિયોને માટે રાખી મૂકેલો હોય એવો તે " हिंसासावज्जसंपउत्तं " છકાય ઉપમર્દનરૂપ હિંસાથી તથા સદોષ કર્મથી યુક્ત અશનાદિ " न कप्पइ तं पि य परिघेत्तुं " તે આહાર પણ સાધુને લેવો કલ્પતો નથી ॥ સૂ. ૩ ॥

व ओसहभेसज्जभत्तपाणं च, तं पि सण्णिहिकयं । जं पि य समणस्स सुविहियस्स तु पडिग्गहधारिस्स भवइ, भायण भंडोवहि – उवगरण–परिग्गहो–पायबंधण – पायकेसरिया पायट्ठवणं च पडलाइं तिण्णि वरयत्ताणं गोच्छाओ तिन्नि य पच्छागा रओहरणचोलपट्टक मुखणंतगमादीयं एयं पि य संजमस्स उववूहणट्ठयाए वायायवदंसमसगसीयपरिरक्खणट्ठयाए उवगरणं रागदोसरहियं परिवहियव्वं संजएण णिच्चं पडिलेहणपप्फोडणपमज्जणाए अहो य राओ य अप्पमत्तेणं होइ सययं निक्खिवियव्वं च गिण्हियव्वं च भायणभंडोवहि उवकरणं ॥ सू० ४ ॥

टीका–संप्रति कीदृशमशनादिकं कल्पते ? इत्याह–' अह केरिसयं ' इत्यादि ।

' अह ' अथेति - प्रकरणान्तरद्योतकः, अथ अकल्पनीयाहारकथनानन्तर ' केरिसयं ' कीदृशं ' तं ' तत्=अशनादिकं ' कप्पइ ' कल्पते परिग्रहीतुम् ? इत्याह ' जं तं ' यत्तत् ' एगारसपिंडवायसुद्धं ' एकादशपिण्डपातशुद्धम्, एकादशभिः पिण्डपातैः = आचाराङ्गद्वितीयश्रुतस्कन्धस्थितपिण्डैषणानामकप्रथमाध्ययनस्य विधिप्रतिपादकैरेकादशभिरुद्देशैः तत्रोक्तविधानैरित्यर्थः शुद्धं तत्रोक्तदोषवर्जितमि-

---

अब सूत्रकार साधु को कैसा अशनादि कल्पता है ? सो कहते हैं—' अह केरिसयं ' इत्यादि ।

टीकार्थ—(अह) पूर्वोक्त आहार अकल्पनीय है तो (केरिसयं) किस प्रकार का आहार साधु को (कप्पइ) कल्पता है इस पर कहते हैं (एगारसपिंडवायसुद्धं जं तं) जो अशन ग्यारह पिण्डपातों से शुद्ध हो–अर्थात् आचाराङ्ग के द्वितीय श्रुतस्कंध के पिण्डैषणा नामक प्रथम अध्ययन में विधिप्रतिपादक जो ग्यारह उद्देश हैं उन से जो आहार

હવે સાધુને કેવાં અનશનાદિ કલ્પે છે તે સૂત્રકાર કહે છે–"अह केरिसयं" ઈત્યાદિ–

ટીકાર્થ—" अह " પૂર્વોક્ત આહાર અકલ્પનીય છે તો " केरिसयं " કયા પ્રકારનો આહાર સાધુને " कप्पइ " કલ્પે છે ? તો તે વિષે સૂત્રકાર કહે છે કે– " एगारसपिंडवायसुद्ध जं तं " જે આહાર અગિયાર પિંડપાતોથી શુદ્ધ હોય એટલે કે આચારાંગના દ્વિતીય શ્રુતસ્કંધના પિંડૈષણા નામના પહેલા અધ્યયનમાં વિધિ પ્રતિપાદક જે અગિયાર ઉદ્દેશ છે તેમના વડે જે આહાર શુદ્ધ

त्यर्थः, यत्तत्तथा, तथा=किणण हणणपयणकयकारियाणुमोयणानवकोडीहिं ' क्रयण हननपचनकृतकारितानुमोदननवकोटिभिः, तत्र-क्रयणं=मूल्येन ग्रहणम्, हननं= प्राणवियोजनम्, पचनम्=अग्निना, एषां यानि कृतकारितानुमोदनानि=स्वयं करणं परेण कारणं कुर्वतोऽनुमोदनम्, तान्येव नवकोटयः = नवविभागास्ताभिः ' सुपरिसुद्धं ' सुपरिशुद्धं=निर्दोषम्, तथा-' दसहिं य दोसेहिं ' दशभिश्च दोषैः शङ्कितादिभिः, 'विप्पमुक्कं' विप्रमुक्त=रहितम्, तथा-'उग्गम-उप्पायणेसणाहिं' उद्गमोत्पादनैषणाभिः तत्र-उद्गमः=आधाकर्मादिः-षोडशविधः, उत्पादना=धात्र्या-

शुद्ध हो, उन उद्देशों में जो आहार के दोष कहे गये हैं उनसे वर्जित हो, तथा (किणण-हणणपयणकय-कारियाणुमोयण-नवकोडीहिं सुपरिसुद्धं) जो आहार क्रयण; हनन और पचन, की कृत, कारित और अनुमोदनरूप नवकोटियों से परिशुद्ध हो, अर्थात् जो आहार स्वयं मूल्य देकर न खरीदा गया हो, दूसरों से मूल्य देकर न खरीदवाया गया हो और न उसकी अनुमोदना की गई हो, ३ इसी प्रकार जिस आहार के निमित्त हनन-प्राणियों के प्राणों का वियोजन स्वयं न किया हो, दूसरों से न कराया हो और न इसकी अनुमोदना की गइ हो ६, इसी तरह जो आहार अग्नि से स्वयं न पकाया गया हो, दूसरों से न पकवाया गया हो और न इसकी अनुमोदना की गई हो ९, इन नव कोटियों से निर्दोष हो, तथा (दसहिं दोसेहिं विप्पमुक्कं) शंकित आदि दश दोषों से जो रहित हो, तथा-(उग्गम-उप्पायणेसणाहिं सुद्धं) आधाकर्म आदि सोलह प्रकार के उद्गम दोषों से-धात्र्यादि सोलह प्रकार के

હોય, તે ઉદ્દેશોમાં આહારના જે દોષો બતાવ્યા છે તેમનાથી રહિત હોય, તથા " किणण-हणणपयण-कयकारियाणुमोयणनवकोडीहिं सुपरिसुद्धं " જે આહાર ક્રયણ, હનન અને પચનની કૃત, કારિત અને અનુમોદકરૂપ નવ પ્રકારે પરિશુદ્ધ હોય, એટલે કે જે આહાર જાતે કીમત આપીને ખરીદ્યો ન હોય, બીજાઓ મારફત મૂલ્ય આપીને ખરીદ કરાવાયો ન હોય, અને તેની અનુમોદના પણ ન કરાઇ હોય, એજ પ્રમાણે જે આહારને નિમિત્તે હનન-પ્રાણીઓના પ્રાણોની હત્યા પોતે ન કરી હોય, બીજાની પાસે કરાવી ન હોય, અને તેની અનુમોદના પણ ન કરાઇ હોય, એ જ પ્રમાણે જે આહાર અગ્નિ વડે પોતે રાંધ્યો ન હોય, બીજા પાસે રંધાવ્યો ન હોય અને તેની અનુમોદના પણ ન કરાઇ હોય, એ નવ પ્રકારે જે આહાર નિર્દોષ હોય, તથા " दसहिं दोसेहिं विप्पमुक्कं " શંકિત આદિ દસ દોષોથી જે રહિત હોય, તથા " उग्गम-उप्पायणेसणाहिं सुद्धं " આધાકર્મ આદિ સોળ પ્રકારના ઉદ્ગમ દોષોથી, ધાત્ર્યાદિ

दिषोडशविधा, एषणा=दशविधा, एषामितरेतरयोगद्वन्द्वः ताभिः, 'सुद्धं' शुद्धम्, तथा-'ववगयचुयचवियचत्तदेहं च' व्यपगतच्युतच्यावितत्यक्तदेहं च, तत्र-व्यपगतम्=ओघतश्चेतनापर्यायादचेतनतत्वं प्राप्तम्, च्युतम्=जीवनादिक्रियाभ्यो विनिर्गतम्, च्यावितम् = चेतनापर्यायेभ्यो पृथक्कारितम्, तथा-त्यक्तदेहम्= त्यक्तः=परित्यक्तो जीवेन देहो यस्य तत् जीवसम्बन्धरहितमित्यर्थः, एषां समाहार द्वन्द्वः, तद्, उक्तार्थं स्पष्टयति-'फासुयं च' प्रासुकं च=प्रगता असवः प्राणा यस्मात्तत्तथोक्तम्, तथा 'ववगयसंजोगं' व्यपगत-संयोगम्=संयोजनादोषवर्जितम्, 'अणिंगालं' अनङ्गारम्=अङ्गारदोषवर्जितम्, तथा-'विगयधूमं' विगत

उत्पादन दोषों से, तथा दशविध एषणा दोषों से जो शुद्ध हो, तथा-(ववगय चुयचवियचत्तदेहं च) जो आहार व्यपगत हो, च्युत हो, च्यावित हो और त्यक्त देह हो, अर्थात् व्यपगत-सामान्यरूप में जो चेतना पर्याय से रहित होकर अचेतनत्व अवस्था को प्राप्त हुआ हो-सचित्त न हो किन्तु अचित्त हो, च्युत-जीवनादि क्रियाओं से जो सर्वथा रहित हो, च्यावित-भृत्यादि द्वारा चेतना पर्यायों से पृथक् कराया गया हो और त्यक्तदेह-जीव के सम्बंध से विहीन हो। इसी बात को सूत्रकार स्पष्ट करते हैं-(फासुयं) जिस आहार को साधु अपने उपयोग में लेवे वह प्रासुक होना चाहिये। प्रासुक में "प्र" रहित अर्थ का बोधक है, असु प्राण का वाचक है-अर्थात्-जो आहार प्राणों से-जीवों से रहित होता है वह प्रासुक है। तथा (ववगयसंजोगं) संयोजनादोष से वह आहार रहित होना चाहिये। (अणिंगालं) अंगार

સોળ પ્રકારના ઉત્પાદન દોષોથી, તથા દશ પ્રકારના એષણા દોષોથી જે શુદ્ધ હોય, તથા "ववगयचुय-चवियचत्तदेहं च" જે આહાર વ્યપગત હોય, ચ્યુત હોય, ચ્યાવિત હોય, અને ત્યક્ત દેહ હોય, વ્યપગત એટલે સામાન્ય રીતે જે ચેતના પર્યાયથી રહિત થઈને અચેતનત્વ અવસ્થા પામ્યો હોય-સચિત્ત ન હોય, ચ્યુત એટલે જીવનાદિ ક્રિયાઓથી સર્વથા રહિત હોય તેવો, ચ્યાવિત એટલે નોકર આદિ દ્વારા ચેતના પર્યાયોથી અલગ કરાવેલ હોય, ત્યક્ત દેહ-જીવના સંબંધથી રહિત હોય, એવો આહાર સાધુએ લેવો જોઈએ એ જ વાતને સૂત્રકાર સ્પષ્ટ કરે છે—"फासुयं" જે આહાર સાધુ પોતાના ઉપયોગમા લે તે પ્રાસુક હોવો જોઈએ પ્રાસુકમા "प्र" રહિત અર્થનો બોધક છે, "असु" પ્રાણનો બોધક છે, એટલે કે જે આહાર પ્રાણોથી-જીવોથી રહિત હોય છે તે પ્રાસુક આહાર કહેવાય છે તથા "ववगयसंजोयं" સંયોજના દોષથી તે આહાર રહિત હોવો જોઈએ "अणिंगालं" અંગાર દોષથી રહિત

धूमं=धूमदोषवर्जितम्, एतादृशम् अशनादिकं ग्रहीतुं कल्पते । साधुभिः-कथं वर्त्तितव्यम् ? इत्याह—' छट्ठाणनिमित्त ' षट्स्थाननिमित्तम्=षट्स्थानानि=आहारकारणस्य षट्कारणानि, तेषां निमित्तं=षट्कारणार्थमित्यर्थः। षट्कारणानि-वेदनं =क्षुद्वेदनं वैयावृत्त्य=शुश्रूषा, ईर्या=गमनम्, संयमरक्षा, प्राणधारणं, धर्मचिन्तनं च उक्तञ्च—

" वेयण वेयावच्चे, इरियट्ठाए य संजमट्ठाए ।
तह पाणवत्तियाए, छट्ठं पुण धम्मचिंताए ॥ " ॥ इति ॥

तथा—' छक्कायपरिक्खणट्ठं षट्कायपरिरक्षणार्थम्, ' हणि हणि ' अहन्यहनि=प्रतिदिनम् ' फासुएण ' प्रासुकेन ' भिक्खेण ' भैक्षेण=सामुदानिकभिक्षया, ' वट्टियव्वं ' वर्तितव्यम्, प्राणधारणं कर्तव्यमित्यर्थः। तथा-' जंपि य ' यदपि

दोषों से रहित होना चाहिये और (विगयधूमं) धूमदोष से भी रहित होना चाहिये। तभी जाकर वह साधुओं के लिये कल्पित हो सकता है। (छट्ठाणनिमित्तं) छह कारणों से साधु आहार ग्रहण करते हैं-वे छह स्थानरूप कारण यह हैं--क्षुधावेदना १, वैयावृत्य २, ईर्या-गमन ३, संयमरक्षा ४, प्राणधारणा ५, और धर्मचिन्तन ६। कहा भी है-

" वेयण १, वेयावच्चे २, इरियट्ठाए ३ य संजमट्ठाए ४ ।
तह पाणवत्तियाए ५, छट्ठं पुणधम्मचिंताए ६ ॥१॥ "

तथा (छक्कायपरिक्खणट्ठं) आहारग्रहण करने से छकाय जीवों की रक्षा होती है। इसलिये साधु को (हणिहणि) प्रतिदिन (फासुएण भिक्खेण) प्रासुक भिक्षा से (वट्टियव्वं) प्राणधारण करना चाहिये-अर्थात्

હોવો જોઈએ અને " विगयधूमं " धूम દોષથી રહિત હોવો જોઈએ. ત્યારે જ તે સાધુઓને કલ્પે તેવો બને છે " छट्ठाणनिमित्त " છ કારણોથી સાધુ આહાર ગ્રહણ કરે છે-તે છ સ્થાનરૂપ કારણ આ પ્રમાણે છે-(૧) ક્ષુધા વેદના (૨) વૈયાવૃત્ય, (૩) ઇર્યા-ગમન, (૪) સંયમ રક્ષા (૫) પ્રાણધારણ અને (૬) ધર્મ ચિન્તન કહ્યું પણ છે—

" वेयण १ वेयावच्चे २ इरियट्ठाए ३ य संजमट्ठाए ४ ।
तह पाणवत्तियाए ५, छट्ठं पुणधम्मचिंताए ६ ॥ १ ॥ "

તથા " छक्कायपरिक्खणट्ठाए " આહાર ગ્રહણ કરવાથી છકાયના જીવોની પણ રક્ષા થાય છે તેથી સાધુને " हणि हणि " પ્રતિદિન " फासुएण भिक्खेण " પ્રાસુક ભિક્ષાથી " वट्टियव्वं " પ્રાણધારણ કરવો જોઈએ એટલે કે તે પૂર્વોક્ત છ સ્થાનરૂપ કારણોને ધ્યાનમા લઈ ને છકાયના જીવોની રક્ષા કરતા થકા

च औषधादि तदपि संनिधीकृतं न कल्पते इत्येवमन्वयः कर्तव्यः, कस्य न कल्पते? इत्याह—'समणस्स' श्रमणस्य=साधोः, कीदृशस्य तु श्रमणस्य न कल्पते इत्याह —'सुविहियस्स उ' सुविहितस्य तु = शोभनानुष्ठानसम्पन्नस्य, कस्मिन् सति ? इत्याह—'बहुपगारम्मि' बहुप्रकारे=अनेकप्रकारे 'रोगायंके' रोगातङ्के=रोगो ज्वरादिः, आतङ्कः:= सद्योघातीहृदयशूलादिः, अनयोः कर्मधारयः, तस्मिन् समुप्पन्ने' समुत्पन्ने, रोगातङ्कानां बहुप्रकारत्वमेव स्पष्टयति—'वायाहिगपित्त-सिंभाइरित्तकुवियतहसंणिवाए' वाताधिक्य पित्तश्लेष्मातिरिक्तकुपिततथासन्निपाते तत्र—वातधिक्यं=वातस्याधिक्यं=प्राचुर्यम्, तथा—पित्तश्लेष्मातिरिक्तं—पित्तश्लेष्मणोरतिरेकः=आधिक्यं, तत् कुपितम्=कोपावस्थां प्राप्तम्—कुपितवातपित्तकफानामाधिक्यमित्यर्थः, तथेति तथाभूतः=एतत्रितयरूपः संनिपातस्तस्मिन्, जाते= समुत्पन्ने सति 'तह' तथा—'उदयपत्ते' उदयप्राप्ते=उदयावस्थां प्राप्ते सति,

---

इन पूर्वोक्त छह स्थानरूप कारणों के ध्यान से षट्कायके जीवों की रक्षा करते हुए साधु को भिक्षा वृत्ति करना चाहिये। तथा—(जंपि य) जो औषध आदि हैं उनका भी संनिधि—संग्रह नहीं करना चाहिये सो कहते हैं—(समणस्स सुविहियस्स) सुविहित श्रमण के (बहुप्पगारम्मि रोगायंके समुप्पन्ने) बहुत प्रकार के रोगातंग उत्पन्न होने पर, जैसे— (वायाहियपित्तसिंभाइरित्तकुवियतहसंणिवाए) कुपितवात की अधिकता, कुपितपित्त और कुपितकफ की अधिकता हो तथा इन दोषों से अन्य उसे संन्निपात भी (जाए) हो गया हो, तथा ऐसा दुःख कि जो (उज्जलबलविउल कक्खड पगाढदुक्खे) उज्ज्वल—सुख के लेशसे वर्जित हो, बल—बलवान् महाकष्टकारक हो, विपुल—आत्मा के प्रतिप्रदेश में नदी वेग की तरह प्रवर्द्धमान हो कर्कश—कठोर हो और प्रगाढ—प्रतिक्षण असमाधिजनक हो (तह) तथा ऐसे रोगातंक (उदयपत्ते)

સાધુએ ભિક્ષાવૃત્તિ કરવી જોઈએ તથા "जंपिय" જે ઔષધ આદિ ગણાય છે તેનો પણ સંગ્રહ ન કરવો જોઈએ તે બાબતમાં સૂત્રકાર કહે છે કે— "समणस्स सुविहियस्स" સુવિહિત શ્રમણને "बहुप्पगारम्मि रोगायके समुप्पन्ने" અનેક પ્રકારના રોગો ઉત્પન્ન થતાં, જેવા કે "वायाहियपित्तसिंभाइरित्तकुवियतहसंणिवाए" કુપિત વાયુની અધિકતા, કુપિત પિત્ત અને કુપિત કફની અધિકતા હોય તથા એ દોષોથી તેને સન્નિપાત પણ "जाए" થઈ ગયો હોય, તથા એવું દુઃખ કે જે "उज्जलबलविउलकक्खडपगाढदुक्खे" ઉજ્જ્વલ—લેશ પણ સુખ વિનાનું હોય, અતિશય કષ્ટકારક હોય, વિપુલ—આત્માનાં પ્રતિ પ્રદેશમાં નદીના વેગની જેમ વધતુ જતું હોય, કર્કશ—કઠોર હોય અને પ્રગાઢ—પ્રતિક્ષણ અસમાધિ જનક હોય "तह" તથા એવાં રોગાતંક "उद-

कस्मिन् ? इत्याह—' उज्जलवलविउलक्कक्खडपगाढदुक्खे ' उज्ज्वलवलविपुल-कर्कशप्रगाढदुःखे, तत्र-उज्ज्वलं=सुखलेशवर्जितम् , वलं=वलवत्=महाकष्टजनकम् विपुलम्=आत्मप्रतिप्रदेशे नदीवेगवत्प्रवर्द्धमानम् , कर्कशं = कठोरम्, दुःसह्यत्वात्, प्रगाढं=प्रकृष्ट प्रतिक्षणमसमाधिजनकत्वात् यद्दुखं तस्मिन्, कथम्भूते दुःखे ? ' असुभकडुयफरुसचंडफलविवागे ' अशुभकटुकपरुषचण्डफलविपाके, अशुभः= अशुभरूपः, कटुकनिम्बरस इवानिष्टः, परुषः=परुषस्पर्शद्रव्यमिवानिष्टः, तथा-चण्डो=दारुणो यः फलविपाकस्तादृशे, पुनः–' महभये ' महाभये = महद्भयं यस्मात्तस्मिन् , महाभयजनके इत्यर्थः, पुनः–' जीवियंतकरणे ' जीवितान्तकरणे= जीवितस्य=जीवनस्य अन्तकरणं=नाशो यस्मात्तस्मिन् , प्राणनाशसमर्थे इत्यर्थः, पुनः कीदृशे ? ' सव्वसरीरपरितावणकरणे ' सर्वशरीरपरितापनकरणे=अङ्गप्रत्यङ्ग-सन्तापजनके, ' तह ' तथा ' तारिसेवि ' तादृशेऽपि=यादृशः सोढुं न शक्यते तादृशेऽपि रोगातङ्कादौ ' अप्पणो परस्स व ' आत्मनः परस्य वा निमित्तं यदपि ' ओसहभेसज्जभत्तपाणं ' औषधभैषज्यभक्तपानम् ' तं पि य ' तदपि च

उदय प्राप्त हो रहे हो (असुभकडुयफरुसचंडफलविवागे) कि जिसका फलरूपविपाक अशुभरूप ही हो, निम्बरस के जैसा कटुक अनिष्ट हो, परुस–परुष स्पर्श द्रव्य की तरह जो अरुचिकारक हो, और चंड–दारुण हो तथा (महभये) महाभयंकर हो (जीवियंनकरे) जिसमें जीवन के नाश होने की भी संभावना हो रही हो, (सव्वसरीरपरितावणकरे) अंग, प्रत्यंग में जिसके कारण असह्य संताप बढ रहा हो (तह तारिसे वि) ऐसे पूर्वोक्त प्रकार के रोगातंकों के समय में भी (अणणोपरस्सव) चाहे ये रोगातंक अपने लिये हो रहे हों चाहे दूसरे साधु के लिये हो रहे हों उस समय अपने और पर के निमित्त जो (ओसहभेसज्ज-भत्तपाणं) औषध, भैषज्य एवं भक्तपान हो (तंपि य) वह भी उस

यपत्ते" ઉદય પામ્યા હોય ' असुभकडुयफरुसचडफलविवागे " કે જેના ફળ-રૂપ વિપાક અશુભ રૂપ જ હોય, લીંબુ જેવો કટુક અનિષ્ટ હોય, પરુષ-કઠોર સ્પર્શદ્રવ્યના જેવો જે અરુચિ કારક હોય, અને ચંડ–દારુણ હોય તથા " महभये " અતિ ભયંકર હોય, " जीवियंतकरे " જેમા જીવનનો અંત આવ-વાની પણ શકયતા હોય " सव्वसरीर–परित्तावणकरे " અંગ, પ્રત્યંગમાં જેને કારણ અસહ્ય સંતાપ વધતો જતો હોય " तह तारिसे वि " ભલે તે રોગાતંક પોતાને માટે થતા હોય કે ભલે બીજા સાધુને માટે થઈ રહ્યા હોય, તે સમયે પોતાને કે અન્યને નિમિત્તે જે " ओसहभेसज्जभत्तपाण " ઔષધ, ભૈષજ્ય અને ભકતપાન હોય " तंपिय " તે પણ તે પરિગ્રહ વિરકત સાધુને " संनिहिकय"

'संणिहिकयं' संनिधीकृतं 'न कप्पइ' न कल्पते-परिग्रहविरतत्वात्तस्य। अथ यत्कल्पते तदाह-'जंपि य' यदपि च किञ्चित् 'समणस्स' श्रमणस्य 'सुविहियस्स तु' सुविहितस्य=शोभनाचारव्रतस्तु, 'पडिग्गहधारिस्स' पतद्ग्रहधारिणः=पात्रधारकस्य 'भायणभंडोवहि उवकरणं पडिग्गहो' भाजनभाण्डोपध्युपकरण-पतद्ग्रहः, तत्र-भाजनम्=उन्दकम्, भाण्डं=जलपात्रम्, उपधिःवस्त्रादिः, तद्रूपं यत् उपकरणम्=सामग्री, तथा-'पडिग्गहो' पतद्ग्रहः=भोजनपात्रं 'भवइ' भवति। तथा-'पायबंधणपायकेसरियापायट्ठवणं च' पात्रबन्धनपात्रकेसरिका-पात्रस्थापनं च, तत्र-पात्रबन्धनं='झोली' इति भाषा प्रसिद्धम्, पात्रकेसरिका=पात्रप्रमार्जिका, पात्रस्थापनं=यत्र वस्त्रखण्डे पात्रं स्थाप्यते तत्, एषां समाहार द्वन्द्वः, 'तिण्णि य' त्रीणि च 'पडलाइ' पटलानि=उपर्युपरिपात्ररक्षणसमये पात्र-परिरक्षणार्थं पात्राभ्यन्तररक्षणीयानि वस्त्रखण्डानि, तथा-'रत्तयाणं' रजस्त्राणं=

परिग्रह विरत साधु को (संनिहिकयं) संग्रह के रूप में अपने पास रखना (न कप्पइ) नहीं कल्पता है। उस परिग्रहविरत साधु के लिये अपने पास क्या २ वस्तुएँ रखना कल्पता है? सो सूत्रकार उन्हें बताते हैं—(समणस्स सुविहियस्स उ पडिग्गहधारिस्स) पात्रधारी उस सुविहित शोभनाचारसंपन्नश्रमण-साधुके पास (जंपि य) जो भी (भायणभंडोवहि उवगरणपडिग्गहो भवइ) भाजनउन्दक, भांड-जलपात्र, उपधि-वस्त्रादिरूप उपकरण, तथा पतद्ग्रह भोजन पात्र हैं ये, तथा-(पायबंधणपायकेसरिया पायट्ठवणं च) पात्रबंधन—झोली, पात्रकेसरिका-पात्रप्रमार्जिका, पात्रस्थापनवस्त्र, तथा (तिण्णियपडलाइं) तीनपटल-ऊपर ऊपर पात्रों को रखने के समय उन पात्रों की रक्षा के लिये पात्रों के भीतर रखे हुए तीन वस्त्र खंड, (रयत्ताणं) जलपात्र ढकने

સંગ્રહના રૂપમા પોતાની પાસે રાખવા "न कप्पइ" કલ્પતા નથી. તે પરિગ્રહ વિરત સાધુને માટે પોતાની પાસે કયી કયી ચીજો રાખવી કલ્પે છે? તો તે સૂત્રકાર કહે છે કે—"समणस्स सुविहियस्स उ पडिग्गहधारिस्स" પાત્રધારી તે સુવિહિત સદાચારયુકત સાધુની પાસે "जंपिय" જે કોઇ "भायणं भंडोवहि उवगरणपडिग्गहो भवइ" ભાજન-ઉન્દક, ભાંડ-જળપાત્ર, ઉપધિ-વસ્ત્રાદિરૂપ ઉપકરણ, તથા પતદ્ગ્રહ-ભોજન પાત્ર હોય તે તથા "पायबंधण पायकेसरिया पायट्ठवणं च" પાત્રબંધન-ઝોળી, પાત્રકેસરિકા પાત્ર પ્રમર્જિકા, પાત્રસ્થાપન વસ્ત્ર તથા "तिण्णयपडलाइं" ત્રણપટલ-પાત્રોને એક બીજાની ઉપર મૂકવાને વખતે તે પાત્રોની રક્ષાને માટે પાત્રોની વચ્ચે રાખેલ ત્રણ વસ્ત્રખંડ, "रयत्ताणं"

जलादिपात्राच्छादनवस्त्रखण्डम् , 'गोच्छओ' गोच्छकः=प्रमार्जिका, तथा–'तिन्नि य पच्छगा' त्रयश्च प्रच्छादकाः, 'चादर' प्रसिद्धाः, तत्र–द्वौ सूत्रनिर्मितौ, एक ऊर्णनिर्मितः, तथा–'रओहरणचोलपट्टकमुहणंतकमाईयं' रजोहरणचोलपट्टकमुखानन्तकादिकम् , तत्र–रजोहरणं प्रसिद्धम् , चोलपट्टकं परिधानवस्त्रम् , मुखानन्तकं=सदोरकमुखवस्त्रिका, एतान्यादौ यस्य तत्तथा, 'एयंपि य एतदपि च 'उवगरणं' उपकरणम् 'संजमस्स' संयमस्य=सावद्ययोगविरतिलक्षणसप्तदशविधस्य 'उववूहहणट्ठयाए' उपबृंहणार्थतायै, वृद्धयर्थमित्यर्थः, अत्र स्वार्थे तल्प्रत्ययः। तथा–'वायायवदंसमसगसीयपरिरक्खणट्ठयाए' वातातपदंशमशकशीतपरिरक्षणार्थतायै, तत्र वातातपादि संरक्षणार्थं, रागदोसरहियं ",रागद्वेषरहितं यथा भवति तथा 'णिच्चं' नित्यं 'परिवहियव्व' परिवोढव्यम्=परिधर्तव्यं, 'संजएणं' संयतेन। 'पडिलेहणपप्फोडणपमज्जणाए' प्रतिलेखनप्रस्फोटनप्रमार्जनायाम् , तत्र–प्रतिलेखनं=

का वस्त्र, (गोच्छओ) गोच्छक–प्रमार्जिका, तथा (तिण्णि य पच्छागा) तीन प्रच्छादक–चादर (इनमें २ सूतके चादर और १ ऊनका कंबल रहता है) (रओहरणचोलपट्टग–मुहणंतगमाईयं) रजोहरण, चोलपट्टक, मुखानन्तक,–सदोरकमुखवस्त्रिका आदि ये उपकरण रहते हैं सो (एयंपि य) ये उपकरण भी (संजमस्स उववूहणट्ठयाए) उस साधु के सत्रह प्रकार के संयम की रक्षा के निमित्त एवं वृद्धिके निमित्त ही होते हैं तथा– (वायायवदंसमसगसीयपरिरक्खणट्ठयाए) वात, आतप –धूप दंशमशक, और शीत से रक्षा करने के लिये है। इसलिये (संजएणं) संयत को (रागदोसरहियं) रागद्वेष से विहीन होकर (णिच्चं) सर्वदा ये धर्मोपकरण (परिवहियव्वं) धारण करना चाहिये अर्थात् अपने पास रखना चाहिये। और इनकी (पडिलेहणपप्फोडणपमज्ज-

---

જળપાત્ર ઢાકવાનું વસ્ત્ર, " गोच्छओ " ગોચ્છક–પ્રમાર્જિકા તથા " तिण्णी य पच्छागा " ત્રણ પ્રચ્છાદક–ચાદર (તેમાં બે સૂતરાઉ અને એક ઊનની કામલ હોય છે) ' रओहरण–चोलपट्टग–मुहणं–तगमाईय " રજોહરણ, ચોલપટ્ટક, મુખાનન્તક–દોરા સહિતની મુહપત્તી, આદિ ઉપકરણો રહે છે, વળી " एयंपिय " તે ઉપકરણ પણ " संजमस्स उववूहणट्ठयाए " તે સાધુના સત્તર પ્રકારના સંયમની રક્ષાને માટે અને વૃદ્ધિને માટે જ હોય છે તથા " वायायवदंसमसग सीयपरिरक्खणट्ठयाए " વાત, તડકો, દંશ મશક અને શીતથી રક્ષણ કરવાને માટે છે. તેથી " सजएणं " સંયતને " रागदोसरहियं " રાગદ્વેષથી રહિત થઈને " णिच्च " સર્વદા તે ધર્મોપકરણ " परिवहियव्व " ધારણ કરવાં જોઈએ, એટલે કે પોતાની પાસે રાખવાં જોઈએ. અને તેમની " पडिलेहण

प्रत्युपेक्षणम्=चक्षुषा निरीक्षणमित्यर्थः, प्रस्फोटनम्=यतनापूर्वकमास्फालनम्, आभ्यां सहिता या प्रमार्जना तस्यां कृतायां सत्याम् ' सययं ' सततं ' अहो य राओ य ' अह्नि च रात्रौ च, 'भायणभंडोवहि उवगरणं ' भाजनभाण्डोपध्युपकरणम् , 'अप्पमत्तेण ' अप्रमत्तेन=प्रमादवर्जितेन संयतेन ' निक्खिवियव्वं ' निक्षेप्तव्यं=यतनया स्थापयितव्यं च, ' गिण्हियव्वं च ' यतनया ग्रहीतव्यं च ' होइ' भवति । एषा-चतुर्थसमित्याराधना विज्ञेया ॥ सू० ४ ॥

णाए) प्रतिलेखनाचक्षु द्वारा अच्छी तरह अवलोकन क्रिया और प्रस्फोटन-यतना पूर्वक झटकारना रूप क्रिया तथा प्रमार्जना कर लेने पर (अहो य राओ य) दिन में तथा रात्रि में जब कभी रखने और लेने काम पडे तो इन (भायणभंडोवहिउवगरणं) भाजन, भांड और वस्त्रादि रूप उपधि को (अप्पमत्तेण) अप्रमत्त होकर साधु को (सययं) नित्य (निक्खियव्वं) यतनासे धरना चाहिये और (गिण्हियव्वं च होइ) यतना से उठाना चाहिये ।

भावार्थ—इस सूत्र द्वारा सूत्रकार ने कैसा आहार मुनि को लेना चाहिये और क्या २ सामग्री अपने पास रखना चाहिये-यह सब प्रकट किया है । आचाराङ्ग के द्वितीय श्रुतस्कंध में जो पिण्डैषणा नामका प्रथम अध्ययन है उसमें ग्यारह उद्देशों में आहार के जो दोष प्रतिपादित किये गये हैं उन दोषों से जो आहार वर्जित हो, क्रयण आदि की कृत आदि रूप नौकोटियों से जो शुद्ध हो, उद्गम, उत्पादना और एषणा से जो शुद्ध हो, व्यपगत आदि विशेषणों वाला हो; प्रासुक हो, संयोजनादोष

पप्फोडणपमज्जणाए " પ્રતિલેખના - આંખ વડે સારી રીતે અવલોકન અને પ્રસ્ફોટન-યતનાપૂર્વક ઝટકારવારૂપ ક્રિયા તથા પ્રમાર્જન કર્યા પછી " अहोय राओय " દિવસે કે રાત્રે જ્યારે પણ લેવા કે મૂકવાની જરૂર પડે ત્યારે તે " भायणभंडोवहिउवगरणं " ભાજન, ભાંડ અને વસ્ત્રાદિરૂપ ઉપધિને " अप्पमत्तेण " અપ્રમત્ત થઈને સાધુએ " सयय " સદા " निक्खियव्व " યતના-પૂર્વક મૂકવા જોઈએ અને " गिण्हियव्वं च होइ " યતનાપૂર્વક ઉઠાવવા જોઈએ

ભાવાર્થ—આ સૂત્ર દ્વારા સૂત્રકારે કેવો આહાર મુનિએ લેવો જોઈએ અને કયી કયી સામગ્રી પોતાની પાસે રાખવી જોઈએ તે બધુ બતાવ્યું છે. આચારાંગના બીજા શ્રુતસ્કંધમા જે પિંડૈષણા નામનું પહેલું અધ્યયન છે તેના અગિયાર ઉદ્દેશોમાં આહારના જે દોષોનું પ્રતિપાદન કરવામા આવ્યું છે તે દોષોથી જે આહાર રહિત હોય, ક્રયણ આદિના કૃત આદિરૂપ નવ પ્રકારે જે શુદ્ધ હોય, ઉદ્દ્ગમ, ઉત્પાતના અને એષણાથી જે શુદ્ધ હોય, વ્યપગત આદિ વિશેષણો વાળો હોય, પ્રાસુક હોય, સંયોજના દોષ વિનાનો હોય, અંગાર

से हीन हो, अंगार और धूम दोष से विगत हो ऐसा ही आहार मुनि को क्षुधा वेदना आदि छह कारणों के निमित्त को लेकर छहकाय के जीवों की रक्षा के अभिप्राय से लेना चाहिये। तथा इस परिग्रह विरत साधु के लिये कभी भी चाहे किसी भी प्रकार का कैसा ही रोगातंक उदय में आ रहा हो अपने निमित्त एवं पर के निमित्त औषधि आदि का संग्रह नहीं करना चाहिये। मुनि के लिये आगम में जिन २ धर्मोपकरणों को रखने का विधान है-वे २ धर्मोपकरण उसे शीत आतप आदि जन्य बाधा की निवृत्ति के लिये और सावद्ययोगविरतिरूप सत्रह प्रकार के संयम की रक्षा करने के लिये बिना किसी रागद्वेषपरिणति के अपने पास रखना चाहिये। उनकी प्रतिदिनयतना पूर्वक प्रमार्जना आदि करके दिन या रात्रि में उन्हें यतनापूर्वक धरना और उठाना चाहिये। सूत्र में जो " ववगयचुय चवियचत्तदेहं " यह पद आया है उसका शब्दार्थ इस प्रकार है-सामान्यरूप में जो आहार चेतन पर्याय से रहित होकर अचेतन बन जाता है। वह व्यपगत कहलाता है। विशेष रूप में जीवन आदि क्रिया से जो विनिर्गत होता है वह च्युत कहलाता है। चेतना पर्याय से जो भृत्यादि द्वारा रहित कराया जाना है वह च्यावित कहा जाता है। एवं जो जीवों के संबंध से रहित होता है वह

અને ધૂમ દોષથી રહિત હોય, એવો જ આહાર મુનિએ ક્ષુધાવેદના આદિ છ કારણોને નિમિત્તે છકાયના જીવોની રક્ષાના અભિપ્રાયથી લેવો જોઈએ. તથા એ પરિગ્રહ વિરત સાધુએ ગમે તે પ્રકારનો રોગાતંકનો ઉદય થયો હોય તો પણ પોતાને માટે કે અન્યને માટે કદી પણ ઔષધિ આદિનો સંગ્રહ કરવો જોઈએ નહીં મુનિને માટે જે જે ઉપકરણો રાખવાનું આગમમાં વિધાન છે, તે તે ઉપકરણ તેણે શીત, તડકો આદિથી નડતી મુશ્કેલીઓથી બચવા માટે અને સાવદ્યયોગ વિરતિરૂપ સત્તર પ્રકારના સંયમની રક્ષાને માટે કોઈ રાગદ્વેષ પરિણતિ વિના પોતાની પાસે રાખવાં જોઈએ તેની દરરોજ યતનાપૂર્વક પ્રમાર્જના આદિ કરીને રાત્રે કે દિવસે તેમને યતનાપૂર્વક મૂકવા તથા લેવા જોઈએ. સૂત્રમાં જે "ववगयचुयचवियचत्तदेहं" આ પદ આવે છે તેનો અર્થ આ પ્રમાણે થાય છે-સામાન્ય રીતે જે આહાર ચેતન પર્યાયથી રહિત થઈને અચેતન બની જાય છે તેને વ્યપગત આહાર કહે છે વિશેષ રૂપે જીવન આદિ ક્રિયાથી જે વિનિર્ગત થાય છે તે ચ્યુત અહાર કહેવાય છે ભૃત્યાદિ દ્વારા જે ચેતના પર્યાયથી રહિત થાય છે તે ચ્યાવિત કહેવાય છે. અને જે જીવોના સંબંધથી

मूलम्—एवं से संजए विमुत्ते निस्संगो निप्परिग्गहरुई निम्ममे निस्सिणेहबंधणे सव्वपावविरए वासीचंदणसमाणकप्पे समतिणमणिमुत्तलेट्ठुकंचणसमे समे य माणावमाणणाए समियरए समियरागदोसे समिए समिइसु सम्मदिट्ठी समे य जे सव्वपाणभूएसु से हु समणे सुयधारए उज्जुए संजए सुसाहु सरणं सव्वभूयाणं सव्वजगवच्छले सच्चभासए संसारते ठिएय संसारसमुच्छिन्ने सययं सरणाण पारए पारए य सव्वेसिं संसयाणं पवयणमयाहिं अट्ठहिं अट्ठकम्मगंठीविमोयगे अट्ठमयमहणे ससमयकुसले य भवइ, सुहदुहनिव्विसेसे अब्भितरबाहिरम्मि सया तवोवहाणम्मि य सुट्ठुज्जुए खंते दंते य हियनिरए इरियासमिए भासासमिए एसणासमिए आयाणभंडमत्तनिक्खेवणासमिए उच्चारपासवणखेल--जल्लसिंघाणपरिट्ठावणासमिए मणगुत्ते वइगुत्ते कायगुत्ते गुत्तिंदिए गुत्तबंभयारी चाई लज्जुधण्णो तवस्सी खंतीखमे जिइंदिए सोहिए अणियाणे अबहिलेस्से अममे अकिंचणे छिन्नगंथे निरुवलेवे सुविमलवरकंसभायणं चेव मुक्कतोए संखे विव निरंजणे विगयरागदोसमोहे कुम्मोइव इंदियसुगुत्ते, अच्चकणगं व जायरूवे, पुक्खरपत्तं व निरुव-

---

त्यक्त कहा जाता है। इस तरह इस सूत्र द्वारा चौथी समिति की आराधना प्रकट की गई है ऐसा जानना चाहिये ॥ सू–४ ॥

રહિત થાય છે તે ત્યકત આહાર કહેવાય છે, આ રીતે આ સૂત્ર દ્વારા ચોથી સમિતિની આરાધના પ્રગટ કરવામાં આવી છે તેમ સમજવું જોઇએ ॥ સૂ. ૪ ॥

लेवे, चंदो इव सोमयाए सूरोव्व दित्ततेये, अचले जहमंदरे गिरिवरे, अक्खोभो सागरोव्व थिमिय पुढवी विय सव्व-फासविसहे तवसावि य भासरासिच्छन्नेव जायतेए जलियहुयासणो विव तेयसा जलंते गोसीसचंदणं पिव सीयले सुगंधीय हरओ विव, समियभावे उग्घोसियसुनिम्मलं आयंसमंडलतलं व पागडभावेण सुद्धभावे, सोंडीरो कुंजरो व, वसभो व जायथामे, सीहोव्व जहा मिगाहिवे होइ दुप्पधरिसे, सारयसलिलं व सुद्धहियए भारंडे चेव अप्पमत्ते खग्गिविसाणं एगजाए खाणू व उड्ढकाए सुण्णागारेव्व अप्पडिकम्मे सुण्णागारा वणस्संतो निवायसरणप्पइवज्झामणसिव निप्पकंपे जहा खुरोचेव एगधारे जहा अहीचेव एगदिट्ठी आगासं चेव निरालंबे विहगे विव सव्वओ विप्पमुक्के कयपरानिलए जहा चेव उरए, अप्पडिबद्धो अनिलोव्व, जीवोव्व अप्पडिहयगई, गामे गामे य एगरायं णगरे णगरे पंचरायं दूइज्जंते य जितिंदिए जियपरिसहे य निब्भए विऊ सचित्ताचित्तमीसएहिं दव्वेहिं विरागयंगए संचयओ विरए मुत्ते लहुगे निरवकंखे जीवियमरणासविप्पमुक्के निस्संधं निव्वणं चरित्तं धीरे काएण फासयंते सययं अज्झप्पज्झाणजुत्ते निहुए एगे चरेज्ज धम्मं ॥ सू० ५ ॥

'एवं' इत्यादि—

टीका—'एवं' एवम् = उक्तप्रकारेण साधुधर्मनिरतः 'से संजए' स संयतः=संयमी 'विमुत्ते' विमुक्तः संग्रहकरणाद् विमुक्तः 'निस्संगो' निःसङ्गः=

आसक्तिवर्जितः ' निप्परिग्गहरुई ' निष्परिग्रहरुचिः-परिग्रहरुचिरहित इत्यर्थः, ' निम्ममे ' निर्ममः=ममत्वभाववर्जितः ' निस्सिनेहबंधणे ' निःस्नेहवन्धनः= निर्गतं स्नेहवन्धनं यस्मात्सः-स्नेहवन्धनरहित इत्यर्थः, ' सव्वपावविरए ' सर्वपापविरतः-कायिकवाचिकमानसिकसर्वविधपापवर्जित इत्यर्थः, तथा-' वासीचंदणसमाणकप्पे ' वासीचन्दनसमानकल्पः, वासी=' वसुला ' इति भाषाप्रसिद्धा, सैव-वासी=तक्षकत्वेन अपकारी, तस्मिन् तथा चन्दनमिवोपकारकत्वेन चन्दनम्= उपकारी, तस्मिंश्च अपकारके उपकारके द्वयोरपि समानः=सदृशः कल्पः=आचारो यस्य स तथोक्तः । यथोक्तम्—

" योमामपकरोत्येष, तत्त्वेनोपकरोत्यसौ ।
शिरामोक्षाद्युपायेन, कुर्वाण इव नीरुजम् ॥ १ ॥ "

' एवं से ' इत्यादि-

टीकार्थ—(एवं) इस प्रकार साधु धर्म में लवलीन बना हुआ (से संजए) वह संयमीसाधु (विमुत्ते) संग्रह करने से विमुक्त बन जाता है (निस्संगो) आसक्ति से वर्जित हो जाता है (निप्परिग्गहरुई) परिग्रह की रुचि से रहित हो जाता है (निम्ममे) ममत्वभाव से विहीन हो जाता है (निस्सिणेहबंधणे) स्नेहरूपबंधन से मुक्त बन जाता है (सव्वपावविरए) कायिक, वाचिक एवं मानसिक सर्वप्रकार के पापों से विरत हो जाता है (वासीचंदणसमाणकप्पे) तथा वासी (वसुला) के जैसे अपकारक में और चंदन के जैसे उपकारक में एकसा आचार वाला बन जाता है । जैसे कहा है—

" यो मामपकरोत्येष, तत्त्वेनोपकरोत्यसौ ।
शिरामोक्षाद्युपायेन, कुर्वाण इव नीरुजम् ॥१॥ "

ટીકાર્થ—આ પ્રકારે સાધુ ધર્મમાં લીન બનેલ " से संजए " તે સંયમી સાધુ " विमुत्ते " સંગ્રહ કરવાના કાર્યથી વિમુકત થઈ જાય છે, " निस्संगो " આસકિતથી રહિત બની જાય છે, " निप्परिग्गहरुई " પરિગ્રહની રુચિથી રહિત થઈ જાય છે, " निम्ममे " મમત્વ ભાવ વિનાનો બની જાય છે, " निस्सिणेह वंधणे " સ્નેહરૂપ બંધનથી મુકત થઇ જાય છે, " सव्वपावविरए " કાયિક, વાચિક અને માનસિક એ સર્વ પ્રકારનાં પાપોથી વિરકત થઇ જાય છે " वासी चंदणसमाणकप्पे " તથા વાંસલા " वसुला " ના જેવા અપકારક પ્રત્યે તથા ચંદનના જેવા ઉપકારક પ્રત્યે એક સરખા બની જાય છે. જેમકે કહ્યું છે-

" यो मामपकरोत्येष, तत्त्वेनोपकरोत्यसौ ।
शिरामोक्षाद्युपायेन, कुर्वाण इव नीरुजम् ॥ १ ॥

अथवा—वासी=काष्ठतक्षकशस्त्रविशेषः 'वसुला' इति प्रसिद्धः, तस्यै चन्दनसमानः=चन्दनतुल्य कल्पःआचारो यस्य स तथोक्तः, यथाचन्दनं स्वच्छेदक शस्त्रमपि सुगन्धयुक्तं करोति तथा साधुः स्वस्यापकारिण्यपि कोपं न करोति प्रत्युत तस्योपकारं करोति, उक्तञ्च—

"अपकारपरेऽपिपरे, कुर्वन्त्युपकारमेवहि महान्तः।
सुरभी करोति वासीं मलयजमिह तक्षमाणमपि ॥ १ ॥" इति।

तथा—'समतिणमणिमुत्तलेट्ठुकंचणसमे' समतृणमणिमुक्तलेष्टुकाञ्चनसमः, समा स्तुल्या स्तृणमणिमुक्ता यस्य सः। तथा—लेष्टुकाञ्चनयोः=मृत्खण्डसुवर्णयोश्च समः, अनयोः कर्मधारयसमासः। तथा—'समे य माणावमाणणाए' समश्च माना-

---

जो मेरा अपकार करता है, वह अपकार नहीं करता किन्तु नश मरोडकर नीरोग करने वाले की तरह उपकार ही करता है अथवा जिस प्रकार अपने को काटने वाले वसूला को चंदन सुगंध युक्त कर देता है उसी तरह साधु भी अपने अपकारी के ऊपर क्रोध न करके उसका उपकार ही करता है। जैसे कहा है—

"अपकारपरेऽपि परे कुर्वन्त्युपकारमेव हि महान्तः।
सुरभी करोति वासीं, मलयजमिह तक्षमाणमपि ॥ १ ॥"

जो महान् पुरुष होते हैं वे अपकार करने में तत्पर हुए प्राणियों के ऊपर भी उपकार ही करते हैं। जैसे चंदन अपनेको काटनेवाले वसूलेको भी सुगंधित कर देता है। (समतिणमणिमुत्तलेट्ठुकंचणसमे) तृण, मणि, मुक्ता मिट्टीका खंड और सुवर्ण उसकी दृष्टिमें समान ही होते हैं अर्थात् –उपेक्षाभाव की अपेक्षा से वह साधु इन सब पदार्थों को पक्षपात की

જે મારા પર અપકાર કરે છે, તે અપકાર કરતો નથી પણ નસ ચોળીને નીરોગી બનાવનારની જેમ ઉપકાર જ કરે છે. અથવા જે રીતે પોતાને કાપનાર વાંસલાને ચંદન સુગંધીદાર બનાવે છે એ જ પ્રમાણે સાધુ પણ પોતાના પર અપકાર કરનાર પર ક્રોધ કરતો નથી પણ તેના પર ઉપકારજ કરે છે. જેમ કે કહ્યુ છે કે–

"अपकारपरेऽपि परे कुर्वन्त्युपकारमेव हि महान्तः।
सुरभी करोति वासीं, मलयजमिह तक्षमाणमपि ॥१॥"

જેમ ચંદન પોતાને કાપનારને વાંસલાને પણ સુગંધિત કરે છે, તેમ જે પુરુષો મહાન હોય છે તેઓ અપકાર કરવાને તત્પર થયેલ પ્રાણીઓ પર પણ ઉપકાર જ કરે છે. "समतिण-मणि-मुत्तलेट्ठु-कंचणसमे" તૃણ, મણિ, મોતી, માટીનું ઢેકું, અને સુવર્ણ તેની નજરે સમાન જ હોય છે. એટલે કે ઉપેક્ષા ભાવની અપેક્ષાએ તે સાધુ એ બધા પદાર્થોને પક્ષપાતની નજરે જોતો

पमाननयोः, तथा-' समियरए ' शमितरजाः=शमितम्=उपशान्तं रजः=पापं यस्य सः, अथवा-शमितं रतं=विषयेष्वनुरागो यस्य सः, यद्वा-शमितो रयः=विषयौत्सुक्यं यस्य सः, तथा-समियरागदोसे ' शमितरागद्वेषः=शमितौ रागद्वेषौ यस्य सः, तथा-' समिए समिईसु ' समितः समितिषु=पञ्चसमितिपरायण इत्यर्थः, ' सम्मद्दिट्ठी ' सम्यग्दृष्टिः । तथा- ' जे य ' यश्च ' सव्वपाणभूएसु ' सर्वप्राणभूतेषु=सर्वे च ते प्राणाः=द्वीन्द्रियादित्रसाः, भूताः=स्थावरास्तेषु ' समे ' समः, ' से हु ' स खलु ' समणे ' श्रमणः ' सुयधारए ' श्रुतधारकः ' उज्जुए ' ऋजुकः=अवक्रः, अथवा-उद्युक्तः=आलस्यवर्जितः, ' संजए ' संयतः ' सुसाहू ' सुसाधुः=सुष्ठुनिर्वाणसाधनपरः, तथा सव्वभूयाणं , सर्वभूतानां षड्जीवनिकायस्य

दृष्टि से नहीं निहारता है । (माणावमाणए समे य) मान और अपमान में वह हर्ष विषाद से विहीन होता है । (समियरए) उसके पाप उपशान्त हो जाते हैं। अथवा-विषयों में अनुराग या उसका औत्सुक्यभाव उसका सर्वथा शान्त हो जाता है (समियरागदोसे) रागद्वेष शमित हो जाते हैं । (समिए समिईसु) पांच समितियों में वह समित परायण होता हुआ (सम्मद्दिट्ठी) सम्यक्दृष्टिवाला बन जाता है । और (जे य सव्वपाणभूएसु समे) समस्त द्वीन्द्रियादिक त्रस जीवों पर और स्थावररूप समस्त भूतों पर उसका भाव एकसा हो जाता है । (से हु समणे) ऐसा वह श्रमण (सुयधारए) श्रुतका धारक बन कर (उज्जुए) वक्रता या आलस्य से रहित (संजए) सम्यक् यतनावान् ही हो जाता है और (सुसाहू) हरएक प्रकारकी अपनी प्रवृत्तिको यतनाचारपूर्वक करनेके कारण वह सच्चे अर्थमें साधु-निर्वाण-मोक्षके साधन

નથી. " माणावमाणए समे य " માન અને અપમાનમાં તે હર્ષવિષાદ રહિત બની જાય છે " समियरए " તેના પાપ ઉપશાન્ત થઈ જાય છે. અથવા-વિષયો પ્રત્યેનો અનુરાગ કે તેમના પ્રત્યેની ઉત્સુકતા તદ્દન શાન્ત થઈ જાય છે. "समियरागदोसे" તેના રાગદ્વેષનું શમન થઈ જાય છે. "समिए समिईसु" પાંચ સમિતિઓમાં તે સમિત-પરાયણ થઈને " सम्मद्दिट्ठी " સમ્યક્દૃષ્ટિવાળો બની જાય છે. અને ' जे य सव्वपाणभूएसु समे " સમસ્ત દ્વિન્દ્રિયાદિક જીવો પર અને સ્થાવરરૂપ સમસ્ત ભૂતો પર તેનો સમભાવ થઈ જાય છે. "से हु समणे" એવો તે શ્રમણ "सुयधारए" શ્રુતનો ધારક બનીને "उज्जुए" વક્રતા કે આળસથી રહિત " संजए " સમ્યક્‌યતનાવાળો બની જાય છે અને " सुसाहू " પોતાની દરેક પ્રકારની પ્રવૃત્તિ યતનાચારપૂર્વક કરવાને કારણે તે સાચા અર્થમાં સાધુ-

'सरणं' शरणम् 'सव्वजगवच्छले' सर्वजगद्वत्सलः-सर्वजीवयोनिषु करुणाभावयुक्तः, 'सच्चभासए य' सत्यभाषकश्च, सत्यभाषाविवेकतत्परः तथा-'संसारंते ठिये य' संसारान्ते स्थिताश्च-भाविजन्मरहितत्वात्, इममेवार्थं शब्दान्तरेणाह 'संसारसमुच्छिन्ने' संसारसमुच्छिन्नः=संसारः=चतुर्गतिलक्षणः समुच्छिन्नो येन सः, अतएव 'सययं' सततम् 'मरणाणं' मरणानां 'पारए' पारगः=मुक्तस्योत्पत्त्यभावेन मरणाभावान्मरणपारगत्वं बोध्यम्। तथा-'पारगे य' पारगश्च 'सव्वेसिं ससयाणं' सर्वेषां संशयानाम्=सर्वसंशयोच्छेदक इत्यर्थः, तथा 'पवयणमायाहिं अट्ठहिं प्रवचनमातृभिरष्टाभिः=पञ्चसमितित्रिगुप्तिरूपाभिः=साधनभूताभिः

करनेमें तत्पर-बन जाता है। तथा (सरणं सव्वभूयाणं) समस्त भूतों का रक्षक बना हुआ वह साधु (सव्वजगवच्छले) सर्व प्रकारकी जीव योनियों के ऊपर अपार करुणाभाव से सहित हो जाता है। (सच्चभासए) उसकी भाषा में सत्यवादिता की छाप लग जाती है और वह (संसारंते ठिए) आगामी जन्मसे रहित होनेके कारण संसार के अंत में स्थित हो जाता है। इसी बातको सूत्रकार शब्दान्तरसे समझाते हैं-(संसारसमुच्छिन्ने) उस साधुका चतुर्गतिरूप संसार समुच्छिन्न हो जाता है। अत एव (सययं मरणाणपारए) वह सतत् मरण का पारगामी बन जाता है। क्यों कि मुक्त जीव की फिर संसार में उत्पत्ति नहीं होती है, इसलिये उसका मरण भी नहीं होता है, अत. इसी भाव को लेकर 'वह मरण का पारगामी बन जाता है' ऐसा कहा गया है। (सव्वेसिं संसयाणं पारए) वह समस्त प्रकारके संशयों का उच्छेदक

નિર્વાણ સાધવાને તત્પર બની જાય છે. તથા "सरणं सव्वभूयाणं" સમસ્ત જીવોનો રક્ષક બનેલ તે સાધુ "सव्वजगवच्छले" સર્વ પ્રકારની જીવ યોનિયો પર અપાર કરુણાભાવથી યુક્ત બની જાય છે. "सच्च भासए" તેની વાણીમાં સત્યવાદિતાની છાપ લાગી જાય છે અને તે "संसारंते ठिए" આવતા જન્મથી રહિત હોવાને કારણે સંસારના અન્તમાં સ્થિત થઈ જાય છે. એ જ વાતને સૂત્રકાર બીજી રીતે શબ્દાદિક ફેરફારથી સમજાવે છે-"ससारसमुच्छिन्ने" તે સાધુનો ચારગતિરૂપ સંસાર સમુચ્છિન્ન થઈ જાય છે. તેથી "सययं मरणाणपारए" તે કાયમને માટે મરણનો પારગામી બની જાય છે, કારણ કે મુક્ત જીવની સંસારમાં ફરીથી ઉત્પત્તિ થતી નથી, તેથી તેનું મરણ પણ થતું નથી. તેથી એ ભાવને કારણે "તે મરણનો પારગામી બની જાય છે" એવું કહ્યું છે. "सव्वेसिं संसयाणं पारए" તે સમસ્ત પ્રકારના સંશયોનો ઉચ્છેદક-નિવારક થઈ જાય છે.

'अट्ठकम्मगंठीविमोयगे' अष्टकर्मग्रन्थिविमोचकः=अष्टौ=अष्टसंख्यका ये कर्मग्रन्थयस्तेषां विमोचकः, तथा–'अट्ठमयमहणे' अष्टमदमथनः=अष्टमदस्थाननाशकः 'ससमयकुसलेय' स्वसमयकुशलश्च=स्वसिद्धान्तनिपुणश्च, चकारात् परसमयकुशलः 'भवइ' भवति। तथा–'सुहदुक्खनिव्विसेसे' सुखदुःखनिर्विशेषः=सुखदुःखयोर्हर्षशोकादिरहित इत्यर्थः, 'अब्भिंतरबाहिरम्मि तवोवहाणम्मि' आभ्यन्तरबाह्ये तपउपधाने, तत्र–चित्तनिरोधप्राधान्येन कर्मक्षपणहेतुत्वात्प्रायश्चित्तादिषट्कम्–आभ्यन्तरम्। बाह्यशरीरस्य परिशोषणेन कर्मक्षपणहेतुत्वादनशनादिषट्कं बाह्यम्, अनयोर्द्वन्द्वः, तस्मिन्, तप उपधाने=तपएव मोक्षमार्गस्योपष्टम्भकत्वादुपधानं तस्मिन्, 'सया' सदा 'सुट्ठुज्जए' सुष्ठुद्यतः=सम्यक्तया तदाराधने तत्पर

हो जाता है। तथा (पावयणमायाहिं अट्ठहिं) पांचसमिति, तीन गुप्ति रूप अष्ट प्रवचन माताओं के बलपर वह (अट्ठकम्मगंठीविमोयणे) आठ प्रकारके कर्मों की ग्रन्थियों को छोड़ानेवाला बन जाता है। (अट्ठमयमहणे) शुद्ध सम्यग्दर्शन का पालनकर्ता होनेके कारण वह आठ मदों का विनाशक होता है। (ससमयकुसले य) स्वसमयमें पूर्ण निष्णात बन जाता है तथा चकारसे परसमयका ज्ञाता भी बन जाता है। (सुहदुक्खनिव्विसेसे) सुख और दुःख उसे एकसे प्रतीत होने लगजाते हैं। वह उनमें हर्ष और विषाद नहीं करता है। (अब्भिंतरबाहिरम्मि तवोवहाणम्मि) चित्तनिरोधकी प्रधानतासे कर्मक्षपण के हेतुभूत होने के कारण प्रायश्चित्त आदि छह प्रकार के आभ्यन्तर तप रूप उपधान में तथा बाह्य में शरीर के परिशोषण से कर्मक्षपण के हेतु होने से अनशन आदि बारह प्रकार के बाह्य तपरूप उपधान में सदा (सुट्ठुज्जए) अच्छी तरह

"पवयणमायाहिं अट्ठहिं" પાંચ સમિતિ ત્રણગુપ્તિથી આઠ પ્રવચન માતાઓના બળથી તે "अट्ठकम्मगंठीविमोयणे" આઠ પ્રકારના કર્મોની ગાંઠોને છોડાવનાર બની જાય છે "अट्ठमयमहणे" શુદ્ધ સમ્યગ્દર્શનનો પાલનકર્તા હોવાને કારણે તે આઠ મદનો વિનાશક હોય છે "ससमयकुसले य" સ્વસમયમાં પૂર્ણ નિષ્ણાત બની જાય છે તથા ચકારથી પર સમયનો જાણકાર બની જાય છે. "सुहदुक्खनिव्विसेसे" સુખ અને દુ:ખ તેને સરખાં લાગવા માંડે છે. તે તેમાં હર્ષ કે વિશાદ કરતો નથી. "अब्भिंतरबाहिरम्मि तवोवहाणम्मि" ચિત્તનિરોધની પ્રધાનતાથી કર્મક્ષયના હેતુભૂત હોવાને કારણે પ્રાયશ્ચિત્ત આદિ છ પ્રકારનાં આભ્યન્તર તપરૂપ હોવાને ઉપધાનમાં તથા બાહ્યમાં શરીરના પરિશોષણથી કર્મક્ષયના હેતુભૂત હોવાને કારણે અનશન આદિ બાર પ્રકારના બાહ્ય તપ રૂપ ઉપધાનમા સદા "सुट्ठुज्जए" સારી રીતે તે તત્પર થઇ જાય છે, એટલે

इत्यर्थः, तथा 'खंते' क्षान्तः=क्षमावान् 'दंते य' दान्तश्च=इन्द्रियदमनकारी च, तथा-'हियनिरए' हितनिरतः=आत्मकल्याणपरायण इत्यर्थः, तथा-'इरियासमिए' ईर्यासमितः, 'भासासमिए' भाषासमितः 'एसणासमिए' एषणासमितः 'आयाणभंडमत्तनिक्खेवणासमिए' आदानभाण्डामत्रनिक्षेपणासमितः 'उच्चारपासवणखेलजल्लसिंघाणपरिट्ठावणियासमिए' 'उच्चारपासवणखेल सिंघाणसमिए' उच्चारप्रस्रवणश्लेष्मसिङ्घाणजल्लपरिष्ठापनिकासमितः, 'मणगुत्ते' मनोगुप्तः-'वयगुत्ते' वचोगुप्तः, 'कायगुत्ते' कायगुप्तः 'गुत्तिंदिए' गुप्तेन्द्रियः, 'गुत्तबंभयारी' गुप्तब्रह्मचारी, एषामर्थाः पूर्वं व्याख्याताः। तथा

वह तत्पर हो जाता है अर्थात् बाह्य और आभ्यन्तर तपों की आराधना वह बहुत अच्छी तरह से किया करता है। (खंते) सब जीवों पर वह क्षमाभाव रखता हुआ (दंते) और अपनी इन्द्रियों का दमन करता हुआ (हियनिरए) आत्मकल्याण करने में परायण बन जाता है। तथा (इरियासमिए) ईर्यासमिति से युक्त (भासासमिए) भाषासमिति से युक्त, (एसणासमिए) एषणासमिति से युक्त (आयाणभंडमत्तनिक्खेवणासमिए) आदानभांडमत्रनिक्षेपणा समिति से युक्त तथा (उच्चार पासवणखेलसिंघाणजल्लपरिट्ठावणियासमिए) उच्चारप्रस्रवणखेलसिंघाणजल्लपरिष्ठापनिका समिति से युक्त (मणगुत्ते वयगुत्ते कायगुत्ते) मनोगुप्ति, वचनगुप्ति कायगुप्ति इन तीन गुप्तियों से गुप्त-रक्षित आत्मप्रवृत्ति वाला बना हुआ (गुत्तिंदिए) अपनी इन्द्रियों पर पूर्ण अंकुश रखने वाला बन जाता है (गुत्त बंभयारी) ब्रह्मचर्यव्रत की नौ कोटि से सदा रक्षा करने वाला होता है। तथा फिर

કે બાહ્ય અને અભ્યંતર તપોની આરાધના તે બહુ સારી રીતે કર્યા કરે છે. "खंते" દરેક જીવો પર તે સમાનભાવ રાખતો "दंते" અને પોતાની ઇન્દ્રિયોનું દમન કરતો "हियविरए" આત્મકલ્યાણ કરવામાં પરાયણ બની જાય છે. તથા "इरियासमिए" ઈર્યા સમિતિથી યુક્ત "भासासमिए" ભાષાસમિતિથી યુક્ત, "एसणासमिए" એષણા સમિતિથી યુક્ત, "आयाण-भंडमत्तनिक्खेवणासमिए" આદાન ભાંડ મત્ર નિક્ષેપણા સમિતિથી યુક્ત તથા उच्चारपासवणखेळजल्लसिंघाणपरिट्ठावणियासमिए" ઉચ્ચાર પ્રસ્રવણ ખેલજલ્લ સિંઘાણ પરિષ્ઠાપનિકા સમિતિથી યુકત मणगुत्ते वयगुत्ते कायगुत्ते" મનોગુપ્તિ વચન-ગુપ્તિ અને કાયગુપ્તિ, એ ત્રણે ગુપ્તિઓથી ગુપ્ત-રક્ષિત આત્મ પ્રવૃત્તિ વાળો બનીને "गुत्तिदिए" પોતાની ઇન્દ્રિયોપર પૂર્ણ અંકુશ રાખનાર બની જાય છે. "गुत्तबंभयारी" બ્રહ્મચર્ય વ્રતની નવ કોટીએ સદા રક્ષા કરનાર

'चाई' त्यागी सर्वसङ्गत्यागात्, 'लज्जू' लज्जावान=संयमी 'धण्णो' धन्यः — सम्यग्ज्ञान सम्यग्दर्शनसम्यक्चारित्ररूपधनलाभयोग्यत्वात्, 'तवस्सी' तपस्वी=प्रशस्ततपोयुक्तत्वात्, 'खंतिक्खमे' क्षान्तिक्षमः=लब्ध्यादि सामर्थ्ये सत्यपि क्षान्त्या–क्षमागुणेन क्षमते=सहते यः स-तथोक्तः, तथा–'जिइंदिए' जितेन्द्रियः, 'सोहिए' शोधितः=शुद्धः – क्षालितमिथ्यात्वादिकर्ममलत्वात्, 'अणियाणे' अनिदानः–निदानवर्जितः, 'अवहिलेस्से' अवहिर्लेश्यः– 'अ' अविद्यमाना बहिः=संयमाद् बहिः लेश्या=अन्तः करणवृत्तिः, यस्य सोऽबहिर्लेश्यः, संयमान्तःकरण इत्यर्थः, तथा 'अममे' अममः–ममत्ववर्जितः, 'अकि-

---

(चाई) सर्व संग का परित्याग कर देने से वह त्यागी कहलाने लगता है। (लज्जू) लज्जावान् बन जाता है–वह सदा इस बात का ध्यान रखता है कि कहीं ऐसी प्रवृत्ति मुझसे न बन जावे जो संयम मार्ग के विरुद्ध होकर मुझे लजाने वाली हो। ऐसा वह संयमी (धण्णो) सम्यक् ज्ञान, सम्यक् दर्शन और सम्यक् चारित्र रूप धन लाभ के योग्य हो जाने के कारण धन्य माना जाता है। तथा (तवस्सी) प्रशस्त–तपों को आचरित करने वाला होने से तपस्वी कहलाने लगता है, तथा (खंतिक्खमे) लब्धि आदि रूप सामर्थ्यसंपन्न होने पर भी वह क्षमागुण से सब कुछ सहने वाला स्वभाव बन जाता है। इस तरह (जिइंदिए) जितेन्द्रिय, (सुद्ध) मित्थात्वादि कर्ममलक्षालित होने से शुद्ध (अणियाणे) निदान से रहित, (अवहिलेस्सो) अबहिर्लेश्य–संयमयुक्त अन्तः करण वाला (अममे) ममता से रहित (अकिंचणे)

થાય છે. તથા "चाई" સર્વ સંગનો ત્યાગ કરી દેવાથી તે ત્યાગી કહેવાવા લાગે છે. "लज्जू" તે અંદરથી તથા બહારથી દોરીના જેવો સરળ થઈ જાય છે અથવા લજ્જાવાન બની જાય છે. તે હંમેશા તે વાતની કાળજી રાખે છે કે મારાથી કદાચ એવી પ્રવૃત્તિ થઈ ન જાય કે જે સંયમ માર્ગની વિરૂદ્ધ હોવાને કારણે મારે લજાવું પડે. એવો તે સંયમી "धण्णो" સમ્યક્જ્ઞાન, સમ્યક્ દર્શન, અને સમ્યક્ ચારિત્રરૂપ ધનલાભને યોગ્ય થઈ જવાને કારણે ધન્ય મનાય છે. તથા "तवस्सी" પ્રશસ્ત તપો કરનાર હોવાથી તપસ્વી કહેવાવા લાગે છે, તથા "खंतिक्खमे" લબ્ધિ આદિરૂપ સામર્થ્ય યુક્ત હોવા છતાં પણ તે ક્ષમાગુણથી બધું સહન કરવાની વૃત્તિવાળો થઈ જાય છે. આ રીતે "जिइंदिए" જિતેન્દ્રિય, "सुद्ध" મિથ્યત્વાદિ કર્મમળનો ક્ષય થવાને કારણે શુદ્ધ, "अणियाणे" નિદાનથી રહિત, "अवहिलेस्सो" અબહિર્લેશ્ય–સંયમી અંતઃકરણવાળો "अममे" મમતાથી રહિત, "अकिंचणे" અકિંચન

चणे ' अकिञ्चनः-निर्द्रव्यः, ' छिन्नगंथे ' छिन्नग्रन्थः-बाह्याभ्यन्तरपरिग्रहरहितः, तथा-' निरुवलेवे ' निरुपलेपः=रागद्वेषवर्जितः, तथा-' सुविमलवरकंसभायणं चेव ' सुविमलवरकांस्यभाजनमिव=सुविमलं=निर्मलं यद्वरकांस्यभाजनं तदिव 'विमुक्ततोए' विमुक्ततोयः=जललेपरहित , श्रमणपक्षे सम्बन्धहेतुरनेहवर्जित इत्यर्थः तथा-' संखे विव निरञ्जणे' शंख इव निरञ्जनः, अयं भावः-यथा शंखो निरञ्जनोऽर्थाच्छुक्लो भवति, तथा साधुरपि निरञ्जनः=रागादिकृष्णतारहितो भवति। अत एव ' विगयरागदोसमोहे ' विगतरागद्वेषमोह, विगतानष्टा रागद्वेष मोहाः यस्मात् सः तथा 'कुम्मो इव' कूर्म इव इंदिए सुगुत्ते' इन्द्रियेषु गुप्तः-यथा कच्छपो ग्रीवादि स्वाङ्गानि संगोप्य गुप्तो भवति तथैव साधुरपि विषयेभ्य इन्द्रियाणि संगोप्य गुप्तो भवति। तथा-'जच्चकणगं व' जात्यकनकमिव=शुद्धकाञ्चनमिव 'जायरूवे ' जातरूपः=रागादिक्षाररहितत्वात् , स्वस्वरूपसंम्पन्नः, तथा 'पुक्खरपत्तं व '

अकिंचन भाव से युक्त, (छिन्नगंथे) बाह्य और आभ्यंतर परिग्रह से वर्जित, बना हुआ वह साधु (निरुवलेवे) राग और द्वेष से निर्लिप्त बन जाता है और (सुविमलवरकंसभायणं चेव विमुक्ततोए) निर्मल कांस्यपात्र की तरह जल से मुनिपक्ष में सम्बन्ध के हेतुभूत स्नेह से रहित होता हुआ (संखेविव निरंजणे) शंख की तरह निरंजन-शुक्ल अर्थात रागादिक की कृष्णता से रहित हो जाता है। इसिलिये वह (विगयरागदोसमोहे) राग द्वेष एवं मोह से रहित हो जाता है तथा (कुंमो इव इंदिय सुगुत्ते) कूर्म-कच्छप की तरह इन्द्रियगुप्त कहलाता है अर्थात् जिस प्रकार कच्छपग्रीवादिक अपने अवयवों को छुपाकर शरीर में गुप्त हो जाता है उसी प्रकार वह साधु भी विषयों से इन्द्रियों को हटाकर सुरक्षित बन जाता है। तथा (जच्चकणगं व जायरूवे)

ભાવથી યુક્ત, " छिन्नगंथे" બાહ્ય અને આભ્યન્તર પરિગ્રહથી રહિત બનેલ તે સાધુ "निरुवलेवे" રાગ અને દ્વેષથી અલિપ્ત બની જાય છે, અને " सुविमलवर -कंसभायणं चेव विमुक्ततोए" નિર્મળ કાંસાના પાત્રથી જેમ જળથી રહિત-મુનિપક્ષે 'અસંધના હેતુભૂત સ્નેહથી રહિત-થઈ ને " संखेविव निरंजणे " શંખના જેવા નિરંજન-સફેદ એટલે કે " विगयरागदोसमोहे " રાગાદિકની કાળાશથી રહિત થઈ જાય છે, તથા " कुमो इव इंदियसुगुत्ते " કાચબાના જેવા ઈન્દ્રિયગુપ્ત કહેવાય છે. એટલે કે જેમ કાચબો પોતાના ગ્રીવાદિક અવયવોને શરીરમાં છુપાવીને ગુપ્ત થઇ જાય છે તેમ સાધુ પણ વિષયોમાંથી ઈન્દ્રિયોને હટાવીને સુરક્ષિત બની જાય છે તથા "जच्चकणगं व जायरूवे " શુદ્ધ સુવર્ણની જેમ

पुष्करपत्रमिव–कमलपत्रमिव 'निरुवलेवे' निरुपलेपः–भोगगृद्धिलेपापेक्षया, तथा 'सोमायाए' सौम्यतया=सौम्यपरिणामेन 'चंदो इव' चन्द्र इव, तथा–'सूरोव्व' सूर इव 'दित्ततेए, दीप्ततेजाः = दीप्तं तेजो यस्य सः, तथा–'गिरिवरे मंदरे' गिरिवरो मन्दरः 'जह' यथा – इव सकलपर्वतश्रेष्ठमेरुरिव 'अचले' अचलः=परीषहादौ सत्यपि निश्चलः, तथा–'अक्खोभे' अक्षोभः=क्षोभवर्जितः–निस्तरङ्गः, 'सागरोव्व' सागर इव 'थिमिए' स्तिमितः=कषायतरङ्गवर्जितः, तथा–'पुढवी विव' पृथिवीव 'सव्वफासविसहे' सर्वस्पर्शविषहः–शुभाशुभस्पर्शेषु समचित्त इत्यर्थः' तथा–'तवसावि य' तपसाऽपि च हेतुभूतेन 'भासरासिछन्नेव' जाततेए' भस्मराशिच्छन्न इव जाततेजाः, यथा–भस्माच्छन्नो वह्निरुपरि-

शुद्ध सुवर्ण की तरह वह रागादिकरूप क्षार से रहित होने के कारण अपने निजरूप से सम्पन्न हो जाता है। (पुक्खरपत्तं व निरुवलेवे) कमल पत्र की तरह भोगों में गृद्धिरूप लेप से वह रहित बन जाता है। (सोमायाए चंदोइव) सौम्यता से वह चंद्र की तरह (सूरोव्वदित्ततेए) सूर्य की तरह वह दीप्त तेज चमकने वाला हो जाता है। तथा (गिरिवरे मंदरे जह अचले) गिरि वर सुमेरु पर्वत की तरह वह परिषह आदि के आने पर अचल सुस्थिर बना रहता है। और (अक्खोभो सागरोव्व) निस्तरंग सागर की तरह अक्षोभ–क्षोभ से रहित बन जाता है (थिमिए) स्तिमित–कषायरूपतरङ्गों से रहित बन जाता है। तथा (पुढवीविय सव्वफासविसहे) जिस प्रकार पृथवी समस्त प्रकार के स्पर्शों को सहन करती है उसी प्रकार वह भी शुभ और अशुभ स्पर्शों में समचित्त हो जाता हैं। (तवसा वि य भासरासिच्छन्नेव

તે રાગાદિક રૂપ ક્ષારથી રહિત હોવાને કારણે પોતાના નિજરૂપથી સંપન્ન થઇ જાય છે. "पुक्खरपत्तंव निरुवलेवे" કમળ પત્ર જેમ પાણીથી અલિપ્ત રહે છે તેમ તે ભોગોથી અલિપ્ત થઇ જાય છે "सोमायाए चंदो इव" સૌમ્યતામાં તે ચન્દ્રના જેવો "सूरोव्व दित्ततेए" સૂર્યની જેમ તે દીપ્ત તેજ–તેજસ્વી થઇ જાય છે તથા "गिरिवरे मंदरे जह अचले" ગિરિવર સુમેરુની જેમ તે પરીષહ આદિ નડે તો પણ અચલ, સુસ્થિર રહે છે. અને "अक्खोभो सागरोव्व" તરંગરૂપી સાગરના જેવો તે અક્ષોભ–ક્ષોભ રહિત બની જાય છે. "थिमिए" સ્તિમિત–કષાયરૂપ તરંગોથી રહિત બની જાય છે. તથા "पुढवीविय सव्व फासविसहे" જેમ પૃથ્વી બધા પ્રકારના સ્પર્શોને સહન કરે છે તેમ તે પણ શુભ અને અશુભ સ્પર્શોમાં સમભાવવાળો થઇ જાય છે. "तवसा विय भास-

दाहकत्वमप्रकाशयन्नप्यन्तर्जाज्वल्यमानो भवति, तथैव श्रमणो बहिः शुष्को रूक्षः कान्तिरहितोऽप्यन्तः स्तपोजनितदीप्त्यादेदीप्यमानो भवतीति भावः। तथा- 'जलियहुयासणो विव' ज्वलितहुताशनइव=प्रदीप्ताग्निरिव 'तेयसा' तेजसा= ज्ञानरूपतेजसा 'जलंते' ज्वलन्=दीप्यमानः, भावतमोविनाशकत्वात् 'गोसीस- चंदणंपिव' गोशीर्षचन्दनमिव 'सीयले' शीतलः=मनस्तापोपशमनात् 'सुगंधी य' सुगन्धिना, सुरभिगन्धेन शीलसौगन्ध्यात् 'हरओ विव' ह्रदक इव=जला- शय इव 'समियभावे' समिकभावः=सम एव समिकः, स भावो यस्य सः, अयं भावः—यथा ह्रदो वाताभावे तरङ्गाभावेन निम्नोन्नतराहित्येन समाकारतया परि-

---

जायतेए) भस्म राशि से छन्न अग्नि जिस प्रकार ऊपर से अपने दाह- कत्व परिणामको प्रकाशित नहीं करती हुई भी भीतरमें जाज्वल्यमान रहा करती है उसी तरहसे वह साधु भी बाहिरसे शुष्ककाय, रूक्ष और कान्तिरहित होता हुआ भी भीतरमें तपजनित दीप्तिसे देदीप्यमान होता है। तथा-(जलिय हुयासणोविव तेयसा जलंते) प्रदीप्तवह्नि जिस प्रकार अपनी प्रभा से चमकती रहती है उसी प्रकार यह भी भावतम का विनाशक होने से ज्ञानरूप तेज से चमकता रहता है। (गोसीसचंदणं- पिव सीयले) गोशीर्ष चंदन जिस प्रकार शीतल और सुगंधित होता है उसी प्रकार यह साधु भी मनस्ताप के उपशमन से शीतल होता हैं और (सुगंधीय हरओविव समियभावे) शील की सुगंधी से ह्रद की तरह समभाववाला अर्थात् जिस प्रकार जलाशय वायु के अभाव से तरंगों के उत्थान पतन से रहित होने के कारण ऊँचा नीचा नहीं

राशिच्छन्नेव जायतेए' રાખના ઢગલા નીચે રહેલી અગ્નિ જેમ ઉપરથી પોતાની દાહકતા પ્રગટ કરતી નથી છતા અંદર સળગતી પ્રકાશિત રહે છે, તેમ તે સાધુ પણ બહારથી શુષ્ક શરીર વાળો, રૂક્ષ અને કાન્તિ રહિત હોવા છતાં પણ અંદરથી તપ જનિત તેજથી દેદીપ્યમાન હોય છે. "जलिय हुयासणोविव तेयसा जलंते" પ્રદીપ્ત અગ્નિ જેમ પોતાના તેજથી ચળકતી રહે છે તેમ તે પણ ભાવતમનો વિનાશક હોવાથી જ્ઞાન રૂપ તેજથી ચમકતો રહે છે. "गो- सीसचंदणंपिव सीयले" જેમ ગોશીર્ષ ચંદન શીતલ અને સુગંધિત હોય છે તેજ પ્રકારે મનનાં તાપનું ઉપશમન થવાને કારણે શીતલ હોય છે અને "सुगं- धियहरओविव समियभावे" શીલની સુગંધથી સરોવરના સમાન સમભાવ વાળો હોય છે, એટલે કે જેમ વાયુના અભાવે તરંગોના ઉત્થાન તથા પત- નથી રહિત હોવાને કારણે સરોવરની સપાટી ઊંચીનીચી લાગતી નથી પણ

लक्ष्यते, तथैव श्रमणोऽपि मानापमानयोरननुभवात् हर्षग्लान्योरभावात्सर्वदैकरूप एव भवतीति । तथा-उग्घोसियसुनिम्मलं ' मार्जितसुनिर्मलम्=मार्जितं=तलोपरिस्थितमलापनयनेन, अतएव-सुनिर्मलं=सुप्रसन्नम् , ' आयंसमंडलतलं व ' आदर्शमण्डलतलमिव=आदर्शः=दर्पणस्तस्य यन्मण्डलतलं=मण्डलाकारं तलं तदिव 'पागडभावेण ' प्रकटभावेन=अमायित्वादनिगूहितभावेन ' सुद्धभावे ' शुद्धभावः=शुद्धः भावः स्वरूपो यस्य सः, तथा-' कुंजरो व ' कुञ्जर इव ' सोंडीरो ' शौण्डीरः= परीषहसैन्यनिर्दलनसमर्थः, ' वसभो व ' वृषभ इव ' जायथामे ' जातस्थामा= यथा वृषभो भारोद्वहने सामर्थ्ययुक्तो भवति, तथैव स्वीकृतमहाव्रतभारोद्वहने सामर्थ्यसंपन्न इत्यर्थः । तथा-' सीहो व ' सिंह इव श्रमणः, अमुमेवार्थं स्पष्टयति— ' जहा ' यथा सिंह ' मिगाहिवे , मृगाधिपः-अथ च तैः ' दुप्पधरिसे ' दुष्प्रधृ-

---

दिखता है किन्तु एकसा आकार वाला परिलक्षित होता है उसी प्रकार यह साधु भी मान और अपमान के अनुभव से रहित होने के कारण हर्ष और ग्लानि, इन दोनों प्रकार के भावों से रहित बन जाता है, अतःवह सर्वदा एक रूप में ही रहा करता है। (उग्घोसिय मंडलं आयंसमंडलतलं व पागडभावेण सुद्धभावे) मांजने से-ऊपर के मैल के हटा देने से-निर्मल बने हुए दर्पणमंडल की तरह इस का स्वरूप अमायी होने के कारण प्रकट रूप से शुद्ध रहता है । (सोंडीरो कुंजरो व) कुंजर के जैसा यह शौंडीर-परीषहरूपी सैन्य के निर्दलन करने में समर्थ-होता है । (वसभोव जायथामे) वृषभ की तरह जातस्थाम-स्वीकृत महाव्रतरूप भार के वहन करने में शक्तिशाली होता है । (सीहोव जहा मिगाहिवे होइ दुप्पधरिसे) सिंह जैसे मृगों का अधिपति और उनके द्वारा अपराभवनीय होता है उसी तरह वह साधु भी

એક સરખી લાગે છે એ જ પ્રમાણે સાધુ પણ માન અને અને અપમાનના અનુભવથી રહિત હોવાને કારણે હર્ષ અને શોક એ બન્ને પ્રકારના ભાવોથી રહિર બની જાય છે તેથી તે હંમેશા સમભાવથી જ રહે છે. " उग्घोसियमंडलं आयंसमंडलतलंव पागडभावेण सुद्धभावे " માંજવાથી – ઉપરનો મેલ દૂર કરી નાખવાથી નિર્મળ બનેલ દર્પણની જેમ તેનું સ્વરૂપ અમાયી હોવાને કારણે પ્રગટ રૂપે શુદ્ધ રહે છે. "सोंडीरो कुंजरोव" હાથીની જેમ તે શૌંડીર–પરીષહરૂપી સૈન્યનો કચ્ચરઘાણ કાઢી નાખવાને સમર્થ હોય છે. "वसभोव जायथामे "વૃષભની જેમ તે સ્વીકૃત મહાવ્રતરૂપ બોજાનું વહન કરવાને શક્તિશાળી હોય છે. " सीहोव जहा मिगाहिवे होइ दुप्पधरिसे " જેમ સિંહ મૃગોનો અધિપતિ તથા તેમનાથી

जहा ' उरगो यथा-सर्प इव ' कयपरनिलए चेव' कृतपरनिलयश्चैव=कृतः=आश्रयीकृतः परनिलयो येन सः, अयं भावः-यथा सर्पोऽन्यकृतविले तिष्ठति, तथैव श्रमणः परकृतगृहे तिष्ठति। तथा-' अनिलोव्व ' अनिल इव=पवन इव 'अप्पडिवद्धो ' अप्रतिवद्धः-अप्रतिवन्धविहारीत्यर्थः, तथा ' जीवोव्व ' जीव इव ' अप्पडिहयगई ' अप्रतिहतगतिः= सर्वदेशविहारीत्यर्थः। अत्र सर्वत्र ' चैव ' शब्दः समुच्चयार्थः, ' गामे गामे य ' ग्रामे ग्रामे च ' एगरायं' एकरात्रं 'णगरे णगरे' नगरे नगरे ' पंचरायं ' पञ्चरात्रम्, ' दूइज्जंतो ' द्रवन्=विहरन्, निवासं कुर्वन्नित्यर्थः, तथा ' जिइंदिए ' जितेन्द्रियः, ' जियपरीसहे ' जितपरिषहः, अतएव ' निब्भए ' निर्भयः ' विऊ ' विद्वान्=तत्त्वज्ञ इत्यर्थः, ' सचित्ताचित्तमीसएहिं '

है (कयपरनिलए जहा चेव उरए) सर्प की तरह वह दूसरे ने अपने निमित्त बनाये हुए घर में रहता है, अर्थात् जिस प्रकार सर्प अन्य चूहे आदि से बनाये गये बिल में रहता है उसी प्रकार साधु भी गृहस्थ के बनाये हुए घर में रहता है। (अप्पडिबद्धो अनिलोव्व) अनिल पवन-की तरह वह अप्रतिबद्ध - प्रतिबन्ध से रहित होता है अर्थात् वह साधु अप्रतिबन्ध विहारी होता है। तथा (जीवोव्व अप्पडिहयगई) जीव की तरह वह अप्रतिहत गतिवाला होता है-उसका विचरण सर्वत्र होता है-उसे कीसी भी देश में विचरण करने का निषेध नहीं होता है। (गामे गामे य एगरायं) वह हर एक ग्राम में एक रात्री तथा (णगरे णगरे य पंचरायं) तथा प्रत्येक नगर में पांच रात्रि तक (दूइज्जंते) ठहरता है। तथा (जिइंदिए) जितेन्द्रिय (जियपरिसहे य) जितपरीषह अत एव (निब्भए) निर्भय (विऊ) विद्वान्-तत्त्वज्ञ, वह

परनिलए जहा चेव उरए" सर्पनी જેમ તે બીજાએ પોતાના માટે બનાવેલાં ઘરમાં રહે છે, એટલે કે જેમ સર્પ ઉંદર આદિએ બનાવેલા દરમાં રહે છે તેમ સાધુ પણ ગૃહસ્થે બનાવેલા ઘરમાં રહે છે. "अप्पडिबद्धो अनिलोव्व" અનિલ-પવનની જેમ તે અપ્રતિબદ્ધ-પ્રતિબંધથી રહિત હોય છે-એટલે કે તે અપ્રતિબંધવિહારી હોય છે "जीवोव्व अप्पडिहयगई" જીવની જેમ તે અપ્રતિહત ગતિવાળો હોય છે. તેનું વિચરણ સર્વત્ર હોય છે. તેને કોઇ પણ પ્રદેશમાં વિચરવાનો નિષેધ હોતો નથી. "गामे गामे य एगरायं" તે દરેક ગામમાં એક રાત્રી તથા "णगरे णगरे च पंचरायं" તથા પ્રત્યેક નગરમાં પાંચ રાત્રિ સુધી "दुइज्जंते" રોકાય છે. તથા "जिइंदिए" જિતેન્દ્રિય "जियपरिसहेय" પરીષહોને જીતનાર હોવાથી "निब्भए" નિર્ભય "विऊ" વિદ્વાન-

सचित्ताचित्तमिश्रकेषु 'दव्वेहिं' द्रव्येषु 'विरागयंगए' विरागतां गतः=मूर्छा-राहित्यं प्राप्तः, 'संचयओ' सञ्चयतः-संचयकरणात् 'विरए' :विरतः 'मुत्ते' मुक्तः=बाह्याभ्यन्तरपरिग्रहरहितः, 'लहुए' लघुकः-गौरवत्रयत्यागात्, 'निरवकंखे' निरवकाङ्क्षः=आकाङ्क्षा वर्जितत्वात्, 'जीवियमरणासविप्पमुत्ते' जीवितमरणाशा-विप्रमुक्तः=जीविताशामरणाशाभ्यां रहितः, 'धीरे' धीरः=बुद्धिमान्, 'निस्संधं' सन्धिरहितं=चारित्रपरिणामव्यवच्छेदाभावात्, 'निव्वणं' निर्व्रणं=निरतिचारम् 'चरित्तं' चारित्रं=संयमं 'कायेण' कायेन=कायव्यापारेण न तु मनोरथमात्रेण 'फासयंते' स्पृशन्, तथा-'सययं' सततम् 'अज्झप्पज्झाणजुत्ते' अध्यात्मध्या-नयुक्तः 'निहुए' निभृतः=उपशान्तः 'एगे' एकः=रागादिसहायवर्जितः 'धम्मं' धर्मं=श्रुतचारित्रलक्षणं 'चरेज्ज' चरेत्=अनुपालयेत् ॥सू०५॥

साधु (सचित्ताचित्तमीसएहिं दव्वेहिं विरागयंगए) सचित्त, अचित्त और मिश्र द्रव्यों में मूर्च्छा रहितपने को प्राप्त होकर (संचयओ विरए) संचय करने से विरक्त हो जाता है और (मुत्ते) बाह्य और आभ्यंतर परिग्रह से रहित हो जाता है। इस तरह (लहुए) गौरव त्रय के त्याग से लघु बना हुआ श्रमण (निरवकंखे) आकांक्षा से वर्जित होने के कारण (जीवियमरणासविप्पमुत्ते) जीवन की आशा और मरण की भयसे रहित हो जाता है। इस प्रकार (धीरे) इन समस्त पूर्वोक्त विशेषणों से विशिष्ट बना हुआ तत्त्वज्ञ श्रमण (निस्संधं) चारित्र-परिणाम की संधि-व्यवच्छेद के अभाव से (निव्वणं) निरतिचार (चरित्तं) चारित्रसंयम को (काएण) काय के व्यापार से, नहीं की मनोरथ मात्र से (फासयंते) धारण कर (अज्झप्पज्झाणजुत्ते) अध्या-त्मध्यान में लवलीन बनता हुआ (निहुए) उपशान्त भाव से संपन्न

તત્ત્વજ્ઞ એવો તે સાધુ "सचित्ताचित्तमीसएहिं दव्वेहिं विरागयंगए" સચિત્ત, અચિત્ત અને મિશ્ર દ્રવ્યોમાં મમત્વ રહિતતાને પ્રાપ્ત કરીને "सचयओ विरए" સંગ્રહ કરવાથી વિરકત થઇ જાય છે અને "मुत्त" બાહ્ય અને આભ્યન્તર પરિગ્રહથી રહિત થઈ જાય છે. આ રીતે "लहुए" ગૌરવત્રયના ત્યાગથી લઘુ બનેલ શ્રમણ ' निरवकंखे" આકાંક્ષાથી રહિત હોવાને કારણે "जीवियमरणा सविप्पमुत्ते" જીવનની આશા અને મરણની આશાથી રહિત થઈ જાય છે આ રીતે "धीरे" તે સઘળા વિશેષણોથી યુકત બનેલ તત્ત્વજ્ઞ શ્રમણ "निस्संधं" ચારિત્ર પરિણામની સંધિ-વ્યવચ્છેદને અભાવે "निव्वणं" નિરતિચાર "चरित्तं" ચારિત્ર-સંયમને 'काएण" કાયના વ્યાપારથી-મનોરથથી જ નહીં-"फासयंते" ધારણ કરીને "अज्झप्पज्झाणजुत्ते" અધ્યાત્મધ્યાન લીન બનીને "निहुए"

ष्यः-अपरिभवनीयो ' होइ ' भवति, तथैव साधुः परीपहैरपराजितो भवति। तथा 'सारयसलिलं व' शारदसलिलमिव=शरदृतुसम्बन्धिजलमिव 'सुद्धहियए' शुद्धहृदयः =स्वच्छान्तः करण इत्यर्थः, तथा 'भारंडे चेव' भारण्ड इव=भारण्डपक्षीव ' अप्पमत्ते ' अप्रमत्तः=प्रमादवर्जित 'खग्गिविसाणं व ' खड्गिविषाणमिव खड्गी=' गेंडा' इतिप्रसिद्धो वन्यश्चतुष्पदविशेषः, तस्य विषाणं=शृङ्गमिव ' एग जाए' एकजातः-यथा-खड्गिनः शृङ्गमेकं भवति, तथैव साधुरपि रागद्वेषरहित एकाकी भवति। तथा-' खाणूव ' स्थाणुरिव ' उड्ढकाए ' ऊर्ध्वकायः कायोत्सर्गकाले, तथा ' सुण्णगारेव्व' शून्यागारमिव अप्रतिकर्मा=शरीरसंस्कारवर्जित इत्यर्थः, तथा 'सुण्णागारावणस्संतो ' शून्यागारापणस्यान्तः=शून्यस्यागारस्यापणस्य च अन्तः=मध्ये ' निवायसरणप्पदीवज्झाणमिव ' निर्वातशरणप्रदीपध्यापनमिव-निर्वातो=वातरहितो यः शरणप्रदीपः=गृहप्रदीपस्तस्य ध्यापनमिव=प्रज्वलितशिखेव ' निप्पकंपे '

देशविरति श्रावकों की अपेक्षा सकलसंयम का अधिपति और परिपहों से अपराजित होता है। (सारयसलिलं व सुद्धहियए) वह शरद् ऋतु संबंधी जल के समान स्वच्छ अंतः करण वाला होता है, (भारंडेचेव अप्पमत्ते) भारंडपक्षी के समान वह प्रमाद से वर्जित होता है, (खग्गिविसाणं व एगजाए) गेंडो के सींग के समान वह एक जात होता है-अर्थात् जैसे गेंडा का शृंग एक ही होता है उसी तरह साधु भी रागद्वेष रहित होने से एकाकी ही होता है। (खाणूव उड्ढकाए) स्थाणु जिस प्रकार उर्ध्वकाय होता है उसी प्रकार साधु भी कायोत्सर्ग के समय उर्ध्वकाय होता है। (सुण्णागारेव्व अपडिकम्मे) शून्य गृह जैसे संस्कार विहीन होता है उसी प्रकार साधु भी शारीरिक संस्कार से वर्जित होता है। (सुण्णागारावणस्संतो निवायसरणप्पईवज्झाणमिव

અજેય હોય છે તેમ સાધુ પણ દેશ વિરતિ શ્રાવકોની અપેક્ષાએ સકળ સંયમનો અધિપતિ અને પરીષહોથી અપરાજિત હોય છે. " सारयसलिलं व सुद्धहियए " તે શરદ ઋતુના જળની સમાન સ્વચ્છ અંતઃકરણવાળો હોય છે. " भारण्डे चेव अप्पमत्ते " ભારંડ પક્ષીના જેવો તે પ્રમાદ રહિત હોય છે. खग्गिविसाणं व एगजाए " ગેંડાના શિંગડાની જેમ તે એકાકી હોય છે' એટલે કે જેમ ગેંડાને એક જ શિંગડું હોય છે તે પ્રમાણે સાધુ પણ રાગદ્વેષ રહિત હોવાથી એકાકી જ હોય છે. " खाणूवउड्ढकाए " સ્થાણુ જેમ ઉર્ધ્વકાય છે તેમ સાધુ પણ કાયોત્સર્ગના સમયે ઉર્ધ્વકાય હોય છે. " सुण्णागारेव्व अपडिकम्मे " ખાલી મકાન જેમ સંસ્કાર વિહીન હોય છે તેમ સાધુ પણ શારીરિક સંસ્કાર રહિત હોય છે, " सुण्णागारावणस्संतो निवायसरणप्पइ

निष्प्रकम्पः=दिव्याद्युपसर्गसंसर्गेऽपि धर्मध्यानादौ निश्चल इत्यर्थः, जहा खुरो ' यथा क्षुरः=क्षुर इव ' एगधारे चेव ' एकधारश्चैव, यथा क्षुरएकधारस्तथैव साधुरुत्सर्गरूपैकधारो भवति, वर्द्धमानपरिणामधारकइत्यर्थः, जहा अही' यथाऽहिः=अहिरिव-सर्प इव ' एगदिट्ठी चेव ' एकदृष्टिश्चैव=मोक्षे बद्धलक्ष्य इत्यर्थः, तथा-' आगासं चेव निरालंबे ' आकाशमिव निरालम्बः । यथाऽऽकाशआलम्बनवर्जितस्तथैव श्रमणोऽपि ग्रामदेशकुलाद्यालम्बनरहित इत्यर्थः, तथा-' विहगे विव' विहग इव पक्षीव ' सव्वओ ' सर्वतः ' विप्पमुक्के विप्रमुक्तः निष्परिग्रह इत्यर्थः, तथा—' उरए

निप्पकंपे) शून्य घर और शून्य आपण-दुकानके भीतर निर्वात (वायुरहित) प्रदेश में रखे हुए दीपक की प्रज्वलित लौं जैसे निष्प्रकंप होती है उसी प्रकार साधु भी देवादिकृत उपसर्गों के आने पर भी धर्मध्यान आदि में निष्प्रकंप निश्चल बना रहता हैं। (जहाखुरो चेव एगधारे) जैसे क्षुरा उस्तरा-एक धार वाला होता है उसी प्रकार साधु भी उत्सर्गरूप एक धार वाला होता है। अर्थात्-साधु के परिणाम प्रकृष्ट विशुद्धि को लिये बढते ही रहते हैं, वे प्रतिपाती परिणामों वाले नहीं होते हैं। (जहा अही चेव एगदिट्ठीं) सर्प जिस प्रकार एक दृष्टि-वाला होता है उसी प्रकार साधु भी अपने लक्ष्यरूप एक मोक्ष में निबद्ध दृष्टिवाला होता है। (आगासं चे व निरालंबे) आकाशकी तरह वह आलंबन-सहारा से रहित होता है अर्थात् साधु को ग्राम देश, कुल आदी का आलंबन नहीं होता है। वह इन सब ग्रामादि से सर्वथा रहित ही होता है। (विहगे विव सव्वओ विप्पमुक्के) विहग-पक्षी की तरह वह सर्वतः विप्रमुक्त होता है परिग्रह से वर्जित होता

व ज्झामणमिव निप्पकंपे " ખાલી ઘર અને ખાલી દુકાનની અંદર વાયુની અસર રહિત સ્થાનમાં રાખેલ દીવાની સળગતી જ્વાળા જેમ નિષ્પ્રકંપ (સ્થિર) હોય છે તેમ સાધુ પણ દેવાદિકૃત ઉપસર્ગો નડતાં છતાં પણ ધર્મધ્યાન આદિમાં અચલ રહે છે " जहा खुरो चेव एगधारे " જેમ ક્ષુરા-અસ્રો એક ધારવાળો હોય છે તેમ સાધુ પણ ઉત્સર્ગરૂપી એક ધારવાળો હોય છે-એટલે કે સાધુની મનોવૃત્તિ પ્રકૃષ્ટ વિશુદ્ધિઓને માટે વધતી જ રહે છે, તે પ્રતિપાતિ પરિણામોવાળો હોતો નથી. " जहा अहीचेव एगदिट्ठी " જેમ સાપ એક દૃષ્ટિવાળો હોય છે તેમ સાધુ પણ પોતાના લક્ષ્યરૂપ એક મોક્ષમાંજ લીન દૃષ્ટિવાળો હોય છે " आगासं चेव निरालंवे " આકાશની જેમ તે નિરાવલંબી હોય છે એટલે કે સાધુને ગામ, દેશ, કુળ આદિનું અવલંબન હોતુ નથી. તે ગ્રામાદિ સમસ્ત અવલંબનોથી રહિત હોય છે. " विहगे विव सव्वओ विप्पमुक्के " વિહગ-પક્ષીની જેમ તે સર્વ પ્રકારે મુક્ત હોય છે-પરિગ્રહ રહિત હોય છે. " कय-

मूलम्—इमं परिग्गहवेरमणपरिरक्खणट्ठयाए पावयणं भगवया सुकहियं अत्तहियं पेच्चाभावियं आगमेसिभद्दं सुद्धं नेयाउयं अकुडिलं अणुत्तरं सव्वदुक्खपावाणं विउसमणं, तस्स इमा पंचभावणाओ चरिमस्स वयस्स हुंति, परिग्गहवेरमणरक्खणट्ठयाए ॥ सू० ६ ॥

टीका—' इमं च ' इत्यादि—

' इमं च ' इदं चापरिग्रहनामकं पञ्चमं संवरद्वारं ' परिग्गहवेरमणपरिरक्खणट्ठयाए' परिग्रहविरमणपरिरक्षणार्थतया परिग्रहविरमणस्य परिरक्षणमेव अर्थः प्रयोजनं यस्य तत् , तदेव तत्ता, तया अत्र स्वार्थे तल्, परिग्रहविरतिपरित्राणायेत्यर्थः,

---

होकर (एगे) रागादिक भावोंसे वर्जित होनेसे एक, ऐसा जो होता है वही (धम्मं) चारित्ररूप धर्मको (चरेज्ज) पालन करनेवाला हो सकता है।

भावार्थ-सूत्रकारने इस सूत्र द्वारा यह स्पष्ट किया है कि परिग्रह-विरत रूप साधु धर्म में लवलीन बने हुए मनुष्य की स्थिति कैसी हो जाती है। तथा जब वह इस स्थिति से संपन्न बनेगा तब ही पूर्णरूप से वह श्रमण धर्म के पालन करने का अधिकारी बन सकता है अन्यथा नहीं। सूत्र में यही विषय शब्दान्तरों से समझाया गया है ॥ सू०५ ॥

फिर भी कहते हैं- ' इमं च ' इत्यादि०।

टीकार्थ—(इमं च) यह अपरिग्रह नाम का पांचवां संवर द्वाररूप (पावयणं) प्रवचन (परिग्गहवेरमणपरिरक्खणट्ठयाए) परिग्रहविरमण

ઉપશાન્ત ભાવથી યુક્ત થઈ ને ' एगे" રાગાદિક ભાવોથી રહિત હોવાથી એક, એવો જે થાય છે તે જ " धम्मं " ચારિત્રરૂપ ધર્મનું "चरेज्ज" પાલન કરનાર થઈ શકે છે

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્રમાં એ સ્પષ્ટ કર્યું છે કે પરિગ્રહથી વિરક્ત થવા રૂપ ધર્મમાં લીન બનેલ મનુષ્યની સ્થિતિ કેવી થઈ જાય છે તથા જ્યારે તે આ સ્થિતિએ પહોંચે ત્યારે જ તે સંપૂર્ણ રીતે શ્રમણ ધર્મનું પાલન કરવાને પાત્ર બની શકે છે બીજી કોઈ પણ રીતે નહીં સૂત્રમાં એ જ વિષય જુદા જુદા શબ્દો દ્વારા સમજાવવામાં આવ્યો છે. ॥ સૂ ૫

વળી કહે છે—" इमं च " ઈત્યાદિ.

ટીકાર્થ–"इमं च" આ પરિગ્રહ નામના પાંચમા સંવરદ્વારનું "पावयणं" પ્રવચન " परिग्गहवेरमणपरिक्खिणट्ठयाए " પરિગ્રહ વિરમણ વ્રતની રક્ષાને માટે " भग-

'पावयणं' प्रवचन 'भगवया' भगवता 'सुकहियं' सुकथितम्; 'अत्तहियं' आत्महितम्, 'पेच्चाभावियं' प्रेत्यभाविकम् 'आगमेसिभद्दं' आगमिष्यद्भद्रं 'सुद्धं' शुद्धं 'नेयाउयं' नैयायिकम् 'अकुडिलं' अकुटिलम् 'अणुत्तरं' अनुत्तरं 'सव्वदुक्खपावाणं' सर्वदुःखपापानां 'विउसमणं' व्युपशमनम्। एषां व्याख्या पूर्वं गता। 'तस्स' तस्य—अपरिग्रहनामकस्य 'चरिमस्स' चरमस्य=अन्तिमस्य 'संवरदारस्स' संवरद्वारस्य 'इमा पंच भावणाओ' इमाः=वक्ष्यमाणाः पञ्च भावनाः 'हुंति' भवन्ति। किमर्थं भवन्ति? इत्याह—'परिग्गहवेरमणरक्खणट्ठयाए' परिग्रहविरमणरक्षणार्थतायै—अपरिग्रहपरिरक्षणार्थमित्यर्थः॥ सू० ६॥

व्रत की रक्षा के लिये (भगवया सुकहियं) भगवान् ने कहा है। यह (अत्तहियं) आत्मा का हितकारक है। (पेच्चाभावियं) परलोक में भी शुभ फल का दाता है। इसी निमित्त से यह (आगमेसि भद्दं) भविष्यत् काल में कल्याण प्रद है यह (सुद्धं) सर्वथा निर्दोष है। (नेयाउयं) वीतराग सर्वज्ञ एवं हितोपदेशक प्रभु द्वारा भाषित होने से न्याय संपन्न है। (अकुडिलं) ऋजुभाव का जनक होने से अकुटिल है। (अणुत्तरं) सर्व श्रेष्ठ होने से अनुत्तर है। तथा (सव्वदुक्खपावाणं) समस्त प्रकार के दुःख जनक ज्ञानावरणीय आदि अष्टविध कर्मों का (विउसमणं) उपशामक है। (तस्स चरिमस्स संवरदारस्स) उस अन्तिम संवरद्वार की (इमा पंचभावणाओ) ये वक्ष्यमाण पांच भावनाएं हैं जो (परिग्गहवेरमणरक्खणट्ठयाए हुंति) परिग्रह विरमण व्रत की रक्षा करने वाली होती हैं॥ सू० ६॥

वया सुकहियं" ભગવાને કહેલ છે "अत्तहिय" આત્માનું હિતકારક છે "पेच्चाभाविय" પરલોકમાં પણ શુભ ફળ દેનારૂ છે. એ જ કારણે તે "आगमेसि भद्दं" ભવિષ્યકાળમાં કલ્યાણદાયી છે, તે "सुद्धं" તદ્દન નિર્દોષ છે "नेयाउयं" વીતરાગ સર્વજ્ઞ અને હિતોપદેશક પ્રભુ દ્વારા કથિત હોવાથી તે ન્યાયયુક્ત છે. "अकुडिलं" ઋજુભાવનું જનક હોવાથી તે અકુટિલ છે "अणुत्तरं" સર્વશ્રેષ્ઠ હોવાથી તે અનુત્તર છે. તથા "सव्वदुक्खपावाणं" સમસ્ત પ્રકારના દુઃખજનક જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ પ્રકારના કર્મોનું "विउसमणं" ઉપશમન કરનાર છે. "तस्स चरिमस्स संवरदारस्स" તે અન્તિમ સંવરદ્વારની "इमा पंचभावणाओ" આ પ્રમાણે પાંચ ભાવનાઓ છે જે "परिग्गहवेरमणरक्खणट्ठयाए हुंति" પરિગ્રહ વિરમણ વ્રતની રક્ષા કરનારી હોય છે ॥ સૂ. ૬ ॥

सम्प्रति पञ्च भावना अभिधातुकामः प्रथमां भावनामाह–' पंचमं ' इत्यादि–

मूलम्–पढमं सोइंदिएण सोच्चा सद्दाइं मणुण्णभद्दगाइं, किंते, वरमुरयमुइंगपणवद्दुरकच्छभीवीण–विपंचिवल्लईबद्धी सक-सुघोस-णंदि-सूअर-परिवादिणि वंसतूणग-पव्वय-तंती-तलताल-तुडिय-निग्घोस- गीयवाइयाइं णडणट्टगजल्लमल्लमु-ट्ठिगवेलबंग-कहगपवगलासग-आइक्खग--लंख--मंख--तुणइल्ल तुंबवीणिय-तालायर-पकरणाणि य बहूणि महुरसगीयसुस्स-राइं कंची मेहलाकलावगपतरक--पतरेकपाय -- जालकघंटिय खिंखिणि रयणोरुजालय छुद्दियनेउरचलणमालियकणगनिग' डजालकभूसणसद्दाणि लीलचंकम्ममाणाणुदीरियाइं तरुणीज-णहसिय भणिय कलरिभियमंजुलाइं गुणवयणाणि य बहूणि महुरजणभासियाइं अण्णेसु य एवमाइएसु सद्देसु मणुण्णभद्द-एसु न तेसु समणेण सज्जियव्वं न रज्जियव्वं न गिज्झियव्वं न मुज्झियव्वं न विनिघायं आवज्जियव्वं न लुभियव्वं न तुसियव्वं न हसियव्वं न सइं च मइं च तत्थ कुज्जा । पुण-रवि य सोइंदिएण सोच्चा सद्दाइं अमणुण्णपावगाइं किंते, अक्कोसफरूसाखिंसण अवमाणण तज्जणनिब्भच्छणं दित्तवयण तासण उक्कूजिय रुण्णरडियकंदिय निग्घुट्ठरसियकलुणविल-वियाइं अण्णेसु य एवमाइएसु सद्देसु अमणुण्णपावएसु-न तेसु समणेणं रुसियव्वं न हीलियव्वं न निंदियव्वं, न खिंसियव्वं, न छिंदियव्वं न भिंदियव्वं, न वहेयव्वं, न दुगुंछावत्तिया वि लब्भा उप्पाएउं। एवं सोइंदियभावणाभाविओ

भवइ अंतरप्पा मणुण्णामणुण्ण सुब्भिदुब्भिरागदोसे पणिहियप्पा साहू मणवयणकायगुत्ते संवुडे पणिहिइंदिए चरेज्ज धम्मं ॥ सू० ७ ॥

टीका-'पढम' प्रथमां निःस्पृहत्वाभिधेयां भावनामाह-'सोइंदिएण' श्रोत्रेन्द्रियेण=कर्णेन 'सोच्चा' श्रुत्वा 'सद्दाइं' शब्दान्, कीदृशान् ? 'मणुण्णभद्दगाइं' मनोज्ञभद्रकान्=मनोज्ञाः=मनोहरा अतएव भद्रकाः=कर्णेन्द्रिय सुखजनकास्तान् 'किं ते' कांस्तान्=कथंभूतांस्तान् ? इत्याह-' वरमुरयमुइंगपणवदद्दुरकच्छभी वीणविपंचिवल्लइवद्धीसकसुघोसणंदिसूसरपरिवादिणि वंसतूणगपव्वयतंतीतलतालतुडियनिग्घोस-

अब सूत्रकार इस व्रत की पांच भावनाओं को प्रकट करने के अभिप्राय से सर्व प्रथम उसकी प्रथम भावना को कहते हैं--' पढमं ' इत्यादि० ।

टीकार्थ—(पढमं) इस व्रत की पहिली भावना का नाम निस्पृहता है, वह भावना इस प्रकार से है-(सोइंदिएण) श्रोत्रेन्द्रिय से, (मणुणभद्दगाइं) मनोज्ञ अतएव मधुर ऐसे (सद्दाइं) शब्दों को (सोच्चा) सुन करके साधु का कर्तव्य है कि वह कभी भी उनमें आसक्ति न करे रागभाव से उनमें न बँधे, उनमें वह गृद्धिभाव न करे और मोहित न हो तथा जो द्वेष पैदा करने वाले हों उनमें वह रुष्ट न हो। इसी विषय को सूत्रकार इन नीचे की पङ्क्तियों द्वारा स्पष्ट करते हैं-(किं ते) वे कौन २ से हैं-इस प्रकार की शंका करने वाले के प्रति वे कहते हैं कि सुनो वे इस प्रकार से हैं (वरमुरयमुयंगपणवदद्दुरकच्छभी वीण विपंचि-वल्लइ-बद्धीसक-सुघोस-णंदि-सूसर-परिवादिणिवंसतूणक-

હવે સૂત્રકાર આ વ્રતની પાંચ ભાવનાઓ પ્રગટ કરવાના ઉદ્દેશથી સૌથી પહેલાં તેની પ્રથમ ભાવના વિષે કહે છે-" पढम " ઇત્યાદિ-

ટીકાર્થ-"पढमं" આ વ્રતની પહેલી ભાવનાનું નામ નિસ્પૃહતા છે, તે ભાવના આ પ્રમાણે છે-"सोइंदिएण" શ્રોત્રેન્દ્રિયથી, "मणुण्णभद्दगाइ" મનોજ્ઞ હોવાથી મધુર લાગે છે " सद्दाइं " શબ્દો " सोचा " સાંભળીને તેમાં આસક્ત થવું જોઈએ નહીં એ સાધુનું કર્તવ્ય છે, તેમા રાગભાવ ન રાખે, તેમનામાં તેણે ગૃદ્ધિભાવ કરવો જોઇએ નહીં, મોહિત થવું જોઇએ નહીં. એ જ વિષયને સૂત્રકાર નિચેની લીટીઓ દ્વારા સ્પષ્ટ કરે છે-" किं ते " તે શબ્દો કયા કયા કયા છે. એ પ્રકારની શંકા કરનાર તે કહે છે કે સાંભળો તે આ પ્રમાણે છે-"वर-मुरय-मुयंग-पाणव-दद्दुरकच्छभी-वीण-विपंचि-वल्लइवद्धीसक-सुघोस--णंदिसूसर

गीयवाइयाइं ' वरमुरजमृदङ्गपणवदर्दुरकच्छपी वीणाविपञ्चीवल्लकी बद्धीशकसुघोषनन्दीसुस्वरपरिवादीनीवंशतूणकपर्वजतन्त्रीतलतालत्रुटितनिर्घोषगीतवादितानि, तत्र—वरमुरजाः=श्रेष्ठमृदङ्गाः, मृदङ्गाः—प्रसिद्धाः, पणवाः=लघुपटहाः, दर्दुराः=चर्मावनद्धमुखाः कलशाः कच्छपी=कच्छपाकारी वाद्यविशेषः, वीणाविपञ्चीवल्लक्य एतास्तिस्रो वीणाभेदाः, बद्धीशकं वाद्यविशेषः, सुघोषा घण्टाविशेषः, नन्दिः=द्वादशतूर्यसमुदायः, द्वादशविधतूर्याणि यथा—

" भंभा १ मुकुंद २ मद्दल ३ कडंब ४ झल्लरि ५ हुडुक्क ६ कंसाला ७ ।
कलह ८ तलिमा ९ वसो १० संखो ११ पणवो १२ यबारसमो ॥१॥" इति ।

सुस्वरपरिवादिनी=वीणाविशेषः, वंश =वेणुः, तूणको वाद्यविशेषः, पर्वजो—वंशपर्वनिर्मितो वाद्यविशेषः, तन्त्री=वीणाविशेषः, तालहस्ताः, तालाः=कांसिकाः,

---

पव्वयतंतीतल-ताल-तुडिय निग्घोसगीयवाइयाइं) वरमुरजउत्तम एक जात का मृदंग, मृदंग—सामान्य मृदंग, पणव—छोटाढोल, दर्दुरचमडे से मडे हुए मुखवाले कलश, कच्छपी—कच्छपाकार वाद्यविशेष, वीणा, विपञ्ची, वल्लकी—ये तीनों वीणा के ही भेद हैं, बद्धीशक—वाद्यविशेष, सुघोषा—एक प्रकार का वाद्यविशेष घंट, नन्दि—बारह प्रकार के बाजों का समूह वे इस प्रकार है—भंभा १, मुकुंद २, मद्दल ३, कडंब ४; झालर ५, हुडुक्क ६, कंसाल ७, कलह ८, तलिमा ९, वस १०, शंख ११, पणव १२, सुस्वरपरिवादिनि एक विशेष प्रकार कीं वीणा वंश—बांसुरी, तृणक—एक प्रकार का वाद्यविशेष जिसे हिन्दी भाषा में रमतूला कहते हैं, पर्वज—वंश के पर्वों से निर्मित किया हुआ एक प्रकार का विशेष वाद्य, तन्त्री—वीणा विशेष—जिसे हिन्दी में सारंगी कहते हैं, तल—

—परिवादिण—वंसतूणक—पव्वय—तंतीतलताल—तुडिय—निग्घोस—गीय वाइयाइं " वरमुरज—એક જાતનો ઉત્તમ મૃદંગ, મૃદંગ—સામાન્ય મૃદંગ, પણવ—નાનો ઢોલ, દર્દુર—ચામડાથી મઢેલ મુખવાળો કળશ, કચ્છપી—કાચબાના આકારનું એક વાજિંત્ર, વીણા, વિપંચી, વલ્લકી—એ ત્રણે વીણાના પ્રકારો છે, બદ્ધીશક—એક પ્રકારનું વાદ્ય, સુઘોષા—એક પ્રકારનો ખાસ ઘંટ, નન્દિ—બાર પ્રકારના વાજિંત્રોનો સમૂહ તે આ પ્રમાણે છે—(૧) ભંભા (૨) મુકુંદ, (૩) મદ્દલ, (૪) કડંબ, (૫) ઝાલર, (૬) હુડુક્ક, (૭) કંસાલ (૮) કલહ, (૯) તલીમા, (૧૦) વસ. (૧૧) શંખ, અને (૧૨) પણવ. સુસ્વર પરિવાદિની—એક પ્રકારની વીણા, વંશ—બંસરી, તૂણક—એક આકારનું ખાસ વાદ્ય જેને હિંદી ભાષામાં રમતૂલા કહે છે, પર્વજ—વાંસમાંથી બનાવેલ એક પ્રકારનું ખાસ વાદ્ય, તન્ત્રી—સારંગી, તલ—હાથ, તાલ—મંજીરા, અથવા તલતાલ—હાથોથી પડાતી તાલી,

अथवा—तलतालाः=हस्ततालाः, त्रुटित=वाद्यविशेषः, एषां यो निर्घोषो निनादः, तथा—गीतं=गानम्, वादितं=सामान्यवाद्यम्, एषां द्वन्द्वः, तानि तथोक्तानि, तथा 'णडणट्टगजल्लमल्लमुट्ठिगवेलंबग—कहगपवगलासग—आइक्खगलंखमंख-तूणइल्ल—तुंबवीणियतालायरपकरणाणि य' नटनर्तकजल्लमल्लमौष्टिकविडम्बक—कथक प्लवकलासकाख्यायकलङ्खमङ्खतूणिकतुम्बवीणिक तालाचरप्रकरणानि च, तत्र—नटाः =नाट्यकारिणः, नर्तकाः=नृत्यकारिणः, जल्लाः=चर्मरज्जूमवलम्ब्य क्रीडाकारकाः, मल्लाः=मल्लयुद्धकारिणः, मौष्टिकाः=मुष्टियुद्धकारकाः, विडम्बकाः=विदूषकाः, कथकाः='कत्थक' इतिप्रसिद्धा गान्धर्वविद्याविशारदाः, प्लवकाः=कूर्दनकारिणः, लासकाः='लास्य' इति नाटक विशेषकारिणः, अख्यायकाःकथाकारकाः, लङ्खाः=महावंशाग्रभागमधिरुह्य क्रीडाकारिणः, मङ्खाः=चित्रफलकहस्ताः क्रीडकाः,

---

हाथ, ताल—कंसिका—झांजे, अथवा तलताल—हाथों की ताल, त्रुटित—वाद्यविशेष, ईन सब के निर्घोषों—शब्दों को तथा गीतों को एवं सामान्य वाजों की आवाजों को तथा (नड़—नट्टगजल्लमल्ल—मुट्ठिग—वेलंबग—कहगपवगलासग—आइक्खग—लंखमंखतूणइल्ल तुंबवीणियतालायर पकरणाणि) नट—नाटक करने वाले नटों के, नर्तकों—नृत्य करने वालों के, जल्ल चर्म रज्जू का अवलम्बन कर के क्रीडा करने वालों के, मल्ल—मल्ल युद्ध करने वालों के, मौष्टिक—मुष्टि से युद्ध करने वालों के, विड़म्बक—विदूषकों के, कथन—गांधर्वविद्या विशारदों के, प्लवक—उछलकूद करने वाले मनुष्यों के, लासक—लास्य नामकनाटक विशेष को करने वालों के, आख्यायक—कथा कहने वालों के, लङ्ख—बड़े २ वंश के अग्रभाग पर चढ़कर विविध प्रकार के खेल करने वालों के, मंख चित्र फलकों को हाथ में लेकर खेल तमासा करने वालों के तूणिक—तूण

ત્રુટિત—એક જાતનું વાદ્ય, એ બધાના અવાજને તથા ગીતોને તથા સામાન્ય વાજિંત્રોના અવાજને તથા "नडनट्टगजल्लमल्लमुट्ठिगवेलंबगकहगपवगलासग आइक्खग—लखमंखतूण—इल्लतुववीणिय—तालायरपकरणाणि" નટ—નાટક કરનાર નટોના, નર્તકો—નૃત્યકરનારના, જલ્લ—ચામડાની દોરી પર ક્રીડા કરનારના, મલ્લ—મલ્લયુદ્ધ કરનારના, મૌષ્ટિક—મુષ્ટિયુદ્ધ કરનારના, વિડમ્બક—વિદૂષકોના, કથક—ગાંધર્વવિદ્યા વિશારદોના, પ્લવક—કૂદકા ભરનાર માણસોનાં, લાસક—લાસ્યનામના એક ખાસ પ્રકારના નાટક કરનારના, આખ્યાયક કથા કરનારના. લંખ ઉંચા ઉંચા વાંસની ટોચે ચડીને વિવિધ પ્રકારના ખેલ કરનારના, મંખ—ચિત્રનાં ફલકો હાથમાં લઈને ખેલ તમાસા કરનારના, તૂણિક—તૂણનામનું વાજિંત્ર વગા-

तूणिकाः=तूणाभिधानवाद्यविशेषवादकाः, तुम्बवीणिकाः=तुम्बवीणावादकाः, तालाचराः=तालं=हस्ताघातरूपमाचरन्ति ये ते तथोक्ताः-तालवादिन इत्यर्थः, एषां द्वन्द्वः, तेषां यानि प्रकरणानि=प्रकर्षेण करणानि तानि तथोक्तानि, कानि तानी ? त्याह—' बहूणि ' बहूनि=अनेकप्रकाराणि, ' महुरसरगीयसुस्सराणि ' मधुरस्वराणि=मधुरस्वराणां गायकानां गीतानि=गानानि च तानि सुस्वराणि। तथा-' कंचीमेहलाकलावगपतरकपयरेकपायजालकघंटियखिंखिणिरयणोरुजालयछुद्दिय नेउयचलणमालियकणगनिगडजालकभूसणसद्दाणि ' काञ्चीमेखलाकलापकप्रतरकप्रतरेकपादजालकघण्टिकाकिङ्किणी-रत्नोरु-जालक-क्षुद्रिका-नूपुर-चरणमालिका कनकनिगड--जालकभूषणशब्दान्। तत्र-काञ्ची=कटिभूषणम्, मेखलाऽपि कटिभूषणभेदः, कलापको ग्रीवाऽभरणम्, प्रतरकाणि प्रतरेकाश्च आभरणविशेषाः, पादजालकं=चरणाभरणम्, घण्टिका = प्रसिद्धा, किङ्किण्यः = क्षुद्रघण्टिकाः, रत्नोरुजालकम् रत्ननिर्मित जङ्घाभरणम्, क्षुद्रिका आभरणविशेषाः, नूपुरं=पादभूषणम्, चरणमालिकाः-पादाभरणविशेषाः, कनकनिगडाःस्वर्णभूषणविशेषाः, जालकं चाप्या-

---

नामक वाद्यविशेष को बजाने वालों के, तुम्बवीणिक-तुम्बवीणा को बजाने वालों के, तालाचर-ताली बजाने वालों के द्वारा अच्छी तरह से किये गये (बहूणि) अनेक प्रकार के (महुरसरगीयसुस्सराइं) मधुर स्वरगर्भित गीतरूप स्वरों को, तथा- (कंची मेहलाकलावग-पतर-कपय—रेक-पाय-जालक—घंटिय-खिंखिणि —रयणोरुजालयछुद्दिय-नेउयचलणमालियकणगनिगड-जालक-भूसणसद्दाणि) कांची-कटिभूषण, मेखला, कलापक-ग्रीवाभरण-प्रतरक, प्रतेरक ये दोनों एक प्रकार के आभरण विशेष होते हैं, पादजालक-चरणाभरण, घण्टिका, किङ्किणी-छोटी २ घंटिकाएँ, रत्नोरुजालक-रत्ननिर्मित जंघाभरण, क्षुद्रिका-आभरणविशेष, नूपुर-पादभूषण-बिछिया, चरणमालिका-पादाभरणविशेष, कनकनिगड-स्वर्णनिर्मितभूषणविशेष, और

ડનાર દ્વારા સારી રીતે કરવામાં આવેલ " बहूणि " અનેક પ્રકારના " महुर सरगीयसुस्सराइं " મધુર સ્વરયુક્ત ગીતરૂપ સ્વરોને તથા " कंची मेहलाकलावग-पतरक-पयरेक--पायजालक--घंटिय--खिंखिणिरयणोरुजालय—छुद्दियनेउयचलण-मालिय-कणग-निगड-जालक-भूसणसद्दाणि " કાંચી-કટિભૂષણ, મેખલા-સેર, કલાપક-ડોકનું ઘરેણું-પ્રતરક, પ્રતેરક એ બંને એક પ્રકારના ખાસ આભૂષણો છે, પાદજાલક-પગનું આભૂષણ, ઘંટિકા,-ઘૂઘરી, કિંકિણી-નાની નાની ઘૂઘરીઓ, નૂપુર-ઝાંઝર, વિછિયા, ચરણમાલિકા, એ બધા આભૂષણોના અવાજને

भूषणविशेषः, एषामितरेतरयोगद्वन्द्वः, एतान्येव भूषणानि, तेषां शब्दास्ताँस्तथोक्तान्, तथा-'लीलचंकम्ममाणुदीरियाइं' लीलाचङ्क्रम्यमाणोदीरितान्=लीलया चङ्क्रम्यमाणानां=सलीलं गच्छन्तीनाम्, उदीरितान्=भूषणजनितान् शब्दान्, तथा-'तरुणीजणहसियभणियकलरिभियमंजुलाइं' तरुणीजनहसितभणितकलरिभितमञ्जुलानि-तरुणीजनस्य यानि हसितानि भणितानि, कलरिभितानि=मधुररणनानि=मञ्जुलानि=मनोहराणि च तानि तथोक्तानि, तथा-'गुणवयणाणि य' गुणवचनानि च=कामगुणवर्द्धकवचनानि च 'बहूणि' बहूनि-अनेकविधानि तथा 'महुरजणभासियाइं' मधुरजनभाषितानि=मधुराणि यानि जनभाषितानि=तालस्वरत्युक्तानि गायकजनगानानि तानि श्रुत्वा, 'समणेण' श्रमणेन - साधुना 'तेसु' तेषु मणुण्णभद्दएसु' मनोज्ञभद्रकेषु 'सद्देसु' शब्देषु तथा 'अण्णेसु य' अन्येषु च 'एव माइएसु' एवमादिकेषु शब्देषु न 'सज्जियव्वं' न सक्तव्यम्-आसक्तिर्न कर्तव्येत्यर्थः, तथा-'न रज्जियव्वं' न रक्तव्यं-रागो न कर्तव्यः, 'न गिज्झियव्वं' न गर्धितव्यम्=गृद्धिभावो न कर्तव्यः, तथा-'न मुज्झि-

---

जालक-एक प्रकार का आभूषण विशेष, इन सब शब्दों को तथा (लीलचंकम्ममाणु दीरियाइं) लीलासहित जाती हुई स्त्रीयों के भूषणों के शब्दों को, तथा (तरुणीजणहसियभणियकलरिभियमंजुलाइं) तरुणियों के हसित, भणित, कलरिभिक और मनोहर, ऐसे (बहूणि गुणवयणाणि) अनेक प्रकार के कामगुणवर्धक वचनों को तथा (महुरजण भासियाइं) तालस्वरयुक्त गायकजनों के गानों को सुनकर के साधुको (तेसु मणुण्णभद्दएसु) उन मनोज्ञ एवं मधुर (सद्देसु) शब्दो में तथा (अण्णेसु य एवमाइएसु) इसी प्रकार के और भी दूसरे शब्दों में (न सज्जियव्वं) आसक्ति नहीं करना चाहिये, (न रज्जियव्वं) राग नहीं करना चाहिये, (न गिज्जियव्वं) गृद्धिभाव नहीं करना चाहिये, अर्थात्

તથા "लीलचंकम्ममाणुदीरियाइं" લીલાસહિત જતી સ્ત્રીઓનાં આભૂષણોનાં અવાજને તથા "तरुणीजण-हसिय-भणिय-कलरिभिय-मंजुलाइं" તરુણીઓનાં હસિત, ભણિત, કલરિભિત અને મનોહર, એવાં "बहूणि गुणवयणाणि" અનેક પ્રકારના કામ વર્ધક શબ્દોને તથા "महुरजणभासियाइं" ગાયકોનાં તાલ સ્વરયુક્ત ગીતોને સાંભળીને સાધુએ "तेसु मणुण्णभद्दएसु" તે મનોજ્ઞ અને મધુર "सद्दसु" શબ્દોમાં તથા "अण्णेसु य एवमाइएसु" એવા પ્રકારનાં બીજાં શબ્દોમાં પણ "न सज्जियव्वं" આસક્તિ કરવી જોઈએ નહીં. "न रज्जियव्वं" રાગ કરવો જોઈએ નહીં, "न गिज्झियव्वं" ગૃદ્ધિભાવ ન

यव्वं ' न मोहितव्यम्–तत्र मोहो न कर्तव्य इत्यर्थः, तथा–'विणिघायं' विनिघातः =तदर्थं चारित्रभ्रंशः, आवज्जियव्वं ' आपत्तव्यः=कर्तव्यइत्यर्थः, तथा–' न लुभियव्वं ' न लोब्धव्यम्=लोभो न कर्तव्य इत्यर्थः, ' न तुसियव्वं ' न तोष्टव्यम्–मनोज्ञशब्दादिषु प्रसन्नमनसा न भाव्यमित्यर्थः, तथा–' न हसियव्वं ' न हसितव्यम्=विस्मयेन हासो न कर्तव्यः, तथा—श्रमणः 'तत्थ' तत्र–मनोज्ञभद्रकशब्द विषये ' सइं ' स्मृतिं—स्मरणं च ' मइं ' मतिं=बुद्धिनिवेशं च ' न कुज्जा ' न कुर्यात् । ' पुणरवि य ' पुनरपि चामनोज्ञादि शब्दविषये प्रोच्यते–' सोइंदिएण' श्रोत्रेन्द्रियेण ' सोचा ' श्रुत्वा ' सद्दाइं ' शब्दान् कीदृशान् ? ' अमणुण्णपावगाइं ' अमनोज्ञपापकान्=अमनोज्ञाः=अमनोहरा अतएव–पापकाः=अशुभास्तान् ' किं ते '

ललचाना नहीं चाहिये, (न मुज्झियव्वं) उनमे मोह नहीं करना चाहिये, (न विणिघायं आवज्जियव्वं) उनके निमित्त अपने चारित्र को भ्रष्ट नहीं करना चाहिये, (न लुभियव्वं) उनमें लुभाना नहीं चाहिये, (न तुसियव्वं) उनसे प्रसन्नमन नहीं बनाना चाहिये, (न हसियव्वं) हंसना नहीं चाहिये; और (न सइं च तत्थकुज्जा) न उन मनोज्ञशब्दादिकों की याद करना चाहिये और न उनमें अपनी बुद्धि को ही लगाना चाहिये।

इसी प्रकार (पुणरवि य) फिर (सोइंदिएण) श्रोत्र इन्द्रिय से (अमणुण्णपावगाइं) अमनोज्ञ अतएव अरुचि कारक अशुभ (सद्दाइं) शब्दों को (सोच्चा) सुनकर साधु का कर्तव्य है कि वह उन पर द्वेष भी न करे–नाक मुँह न सिकोडे, इसी विषय को अब सूत्रकार इन पंक्तियों द्वारा स्पष्ट करते हैं—वे कौन से हैं इस शंका के समाधान

કરવો જોઈએ એટલે કે લલચાવુ જોઈએ નહી. " न मुज्झियव्वं " તેમનામાં મોહ કરવો જોઇએ નહીં. "न विणिघायं आवज्जियव्वं" તેમના નિમિત્તે પોતાના ચારિત્રને ભ્રષ્ટ કરવું જોઈએ નહીં, " न लुभियव्वं " તેમાં લલચાવુ જોઈએ નહીં. " न तुसियव्वं " તેમાં મનને પ્રસન્ન રાખવુ જોઇએ નહીં " न हसियव्वं " હસવુ જોઇએ નહીં, અને " न सइं च मइं ज तत्थ कुज्जा " તે મનોજ્ઞ શબ્દાદિકોને યાદ કરવા જોઇએ નહી. અને તેમાં પોતાના મનને ખેંચાવા દેવું નહીં. એજ પ્રમાણે 'पुणरवि य " વળી "सोइंदिएण " શ્રોત્રેન્દ્રિયથી " अमणुण्णपावगाइं " અમનોજ્ઞ અને તે કારણે અરુચિકારક અશુભ " सद्दाइं " શબ્દોને " सोच्चा " સાભળીને તેના પ્રત્યે દ્વેષ પણ ન કરવો જોઇએ તે સાધુનું કર્તવ્ય છે–તેના તરફના તિરસ્કારથી નાક કે મોઢુ સંકોચવું બગાડવું જોઈએ નહી, એજ વિષયને સૂત્રકાર આ પંક્તિઓ દ્વારા સ્પષ્ટ કરે છે–તે કયા કયા પ્રકારના છે તે શંકાના નિવારણના માટે તેઓ તે અમ-

काँस्तान्=कथम्भूताँस्तान् शब्दान् इत्याह— ' अक्कोसफरुसखिंसणअवमाणण-तज्जणनिब्भंछणंदित्तवयणतासणउक्कूजियरुण्णरडियकंदियणिग्घुट्ठरसियकलुणविलवियाइं ' आक्रोशपरुषखिंसनावमाननतर्जननिर्भर्त्सनदीप्तवचनत्रासनोत्कूजितरुदितरटितक्रन्दितनिर्घुष्टरसितकरुणविलपितानि—तत्र—आक्रोशः = ' रे दुष्ट ! म्रियस्वे ' त्यादिवचनम् , परुषं—रे मूर्ख ! रे चौर ! इत्यादि, खिंसनम्=निन्दावचनं 'कुशीलोऽसि, निर्लज्जोऽसी' त्यादिरूपम् , अवमाननम्=अपमानजनकवचनं, त्वङ्कारादिरूपम् , तर्जनम्=' ज्ञास्यसि रे दुष्ट ! ममावज्ञायाः फलम् ' इत्यादिरूपम्= निर्भर्त्सनम्='अपसर रे निर्दय ? मम दृष्टिपथादित्यादिरूपम् , दीप्तवचनम्=कुपितवचनम्=त्रासनम्=अन्धकारादौ फेत्कारादिरूपः शृगालादिशब्दः, उत्कूजितम्=

निमित्त वे उन अमनोज्ञ पापक शब्दों को कहते है—(अक्कोस-फरुस-खिंसण-अवमाणण- तज्जण- निब्भच्छण-दित्तवयण-तासण-उक्कूजिय-रुण्ण-रडिय-कंदिय--णिग्घुट्ट-रसिय-कलुण-विलवियाइ) ' रे दुष्ट ! मर जा ' इत्यादि प्रकार के जो शब्द होते हैं-वे आक्रोश शब्द हैं, कठोर शब्दों का नाम परुष है-जैसे-' ओ मूर्ख ! अरे ओ चौर ! ' आदि । निंदात्मक शब्दों का नाम खिंसन है, जैसे-' तु बडे खोटे स्वभाव का है, तू बड़ा वे शरम है ' इत्यादि । ' तू ' आदि शब्द अपमान जनक शब्द हैं । जिन शब्दों से दूसरों को डाटना होता है वे तर्जना शब्द है, जैसे-' ओ दुष्ट ! अवज्ञा करने का फल मैं तुझे बताऊँगा । तथा ' ओ निर्दय । मेरे सामने से हट जा ' इत्यादि प्रकार के वाक्य निर्भत्सन वाक्य कहलाते हैं । कुपित वचनों का नाम दीप्तवचन है । अंधकार आदि में फुत्कार आदि रूप शब्दों का

નોજ્ઞ પાપક શબ્દોને બતાવે છે-" अक्कोस-फरुस-खिंसण-अवमाणण-तज्जण-निब्भच्छण-दित्तवयण-तासण-उक्कूजिय-रुण्ण-रडिय-कंदिय-णिग्घुट्ठ-रसिय-कलुण-विलवियाइं " "હે દુષ્ટ ! મરી જા" ઇત્યાદિ પ્રકારના શબ્દોને આક્રોશ શબ્દ કહે છે, કઠોર શબ્દોને પરુષ શબ્દો કહે છે, જેવાં કે " એ મૂર્ખ ! અરે ઓ ચોર " આદિ પરુષ શબ્દો છે. " તું ઘણા ખરાબ સ્વભાવવાળો છે, તું ઘણો બેશરમ છે " આદિ નિંદાત્મક શબ્દોને ખિંસન કહે છે. "તું " આદિ અપમાનજનક શબ્દો છે. જે શબ્દો દ્વારા બીજાને ધમકી અપાય છે તે શબ્દોને તર્જના શબ્દો કહે છે, જેવાં કે " રે દુષ્ટ મારી અવજ્ઞા કરવાનું ફળ હું તને ચખાડીશ ". તથા " અરે નિર્દય ! મારી નજરથી દૂર થા " ઈત્યાદિ પ્રકારનાં વાક્યોને નિર્ભત્સના વાક્ય કહે છે ક્રોધયુક્ત વચનોને દીપ્ત વચન કહે છે.

अव्यक्तमहाध्वनिकरणम् , रुदितम्=साश्रुरोदनम् , रटितं=कलहायितं-कलहवाक्य-मित्यर्थः क्रन्दितम्=इष्टवियोगादौ क्रन्दम् , निर्घुष्टम्=उच्चैर्नादकरणम् , रसितम् =शूकरादिवत् शब्दकरणम् , करुणविलपितम्=पुत्रादिमृत्यौ सकरुणविलापकरणम्, एतेषामितरेतरयोगद्वन्द्वः, तानि श्रुत्वा श्रमणेन "तेसु' तेषु 'अमणुण्णपावएसु' अमनोज्ञपापकेषु=अमनोज्ञाशुभेषु, 'सद्देसु' शब्देषु तथा-'अण्णेसु य एवमाइएसु' अन्येषु च एवमादिकेषु समुपस्थितेषु शब्देषु 'न रुसियव्वं' न रोषितव्यम्-रोषो न कर्तव्यः, 'न हीलियव्वं' न हीलितव्यम्=अवज्ञा न कर्तव्येत्यर्थः, 'न निंदियव्वं' न निन्दितव्यम्=निन्दा न कर्त्तव्या, 'न खिंसियव्वं' न खिंसितव्यम्=

नाम त्रासन है। जिस प्रकार शृगाल आदि के शब्द होते है। अस्पष्ट जोर २ से बोलने का नाम उत्कूजित है। आंसू निकाल २ कर रोने का नाम रुदित है। कलहवर्धक वाक्यों का नाम रटित है। इष्ट के वियोग आदि होने पर जो रुदन करते समय वचन निकलते हैं वे क्रंदित वचन हैं। ऊँचे स्वर से जो बोलने में आते हैं वे निर्घुष्ट शब्द हैं। सूअर आदि के जैसे शब्दों का बोलना इसका नाम रसित है। पुत्र आदि के मर जाने पर जो करुण विलाप किया जाता है। और उस समय जो शब्द मुँह से निकलते हैं वे करुण विलपित हैं। ऐसे शब्दों में तथा (अण्णेसु य एवमाइएसु सद्देसु) इसी प्रकार के और भी शब्द जो (अमणुण्णपावएसु) अमनोज्ञ अशुभ हों उन शब्दों में (समणेण) श्रमण का कर्तव्य है कि वह उनमें (न रुसियव्वं) रोष न करे।

અંધકાર આદિમાં ફુત્કાર આદિરૂપ શબ્દોનું નામ ત્રાસન છે, શિયાળ આદિના અવાજ તે પ્રકારનો હોય છે. જોર જોરથી અસ્પષ્ટ બોલવુ તેને ઉત્કૂજિત શબ્દો કહે છે આંસું પાડી પાડીને રડવાના અવાજને રુદિત શબ્દ કહે છે કલહ-વર્ધક વાકયોને રટિત વાકય કહે છે. ઇષ્ટનો વિયોગ આદિ થતાં રુદનની સાથે જે વચન નીકળે છે તેને ક્રંદિતવચન કહે છે. ઊંચા આવાજથી બોલતા વચનને નિર્ઘુષ્ટ શબ્દ કહે છે. સૂઅર આદિ જેવા શબ્દો બોલવા તે રસિત શબ્દ કહેવાય છે પુત્ર આદિનુ મત્યુ થતા જે કરુણ વિલાપ કરાય છે. અને ત્યારે જે શબ્દો મોઢામાંથી નીકળે છે તે કરુણ વિલપિત કહેવાય છે. એવાં શબ્દો પ્રત્યે તથા "अण्णेसुय एवमाइएसु सद्देसु" એવા જ પ્રકારનાં બીજા શબ્દો કે જે "अमणुण्णपावएसु" અમનોજ્ઞ અને અશુભ હોય, તે શબ્દોથી "न रुसियव्वं" રોષ ન કરવો "समणेण" તે શ્રમણનુ કર્તવ્ય છે. "न हीलियव्वं" તેમની અવજ્ઞા કરવી નહીં, "न निंदियव्वं" નિંદા ન કરવી, "न

परसमक्षं च निन्दा न कर्तव्या, 'न छिंदियव्वं' न छेत्तव्यम्=अमनोज्ञ शब्दकर्त्तुर्द्रव्यस्य छेदो न कार्यः, तथा-'न भिंदियव्वं' न भेत्तव्यम्, तस्यैव न भेदः कर्त्तव्यः, 'न वहेयव्वं' न हन्तव्यम्=तस्यानिष्ट शब्दकर्तुर्वधो न कर्तव्यः, तथा-'दुगुंछावत्तियावि' जुगुप्सावृत्तिकाऽपि शब्दविषये स्वस्य परस्य वा घृणावृत्तिरपि, 'उप्पाएउं' उत्पादयितुं 'न लब्भा' न लभ्या-नोचिता, यथा-स्वस्य परस्य वा हृदि शब्दविषया जुगुप्सा प्रादुर्भवेन्न तथा कर्तव्यमिति भावः। अथ प्रथमभावनानिगमनार्थमाह—एवम्=उक्तरीत्या 'सोइंदियभावणाभाविओ' श्रोत्रेन्द्रियभावनाभावितः श्रोत्रेन्द्रियं निरोद्धव्यम्, अन्यथा-महदनर्थसंभवः, इत्येवं रूपया भावनया भावितः, 'अंतरप्पा' अन्तरात्मा=जीवो 'भवइ' भवति, ततश्च 'मणुण्णामणुण्णसुब्भिदुब्भिरागदोसे' मनोज्ञामनोज्ञसुरभिदुरभिरागद्वेषो=मनोज्ञामनोज्ञा

(न हीलियव्वं) उनकी अवज्ञा न करे, (न निंदियव्वं) निंदा न करे (न खिंसियव्वं) उन पर खिसियावे नहीं—दूसरों के समक्ष उनकी निंदा न करे (न छिंदियव्वं) जो अमनोज्ञ शब्दों करने वाला विणादि द्रव्य है उसका वह न छेदन करे और (न भिंदियव्वं) न भेदन करे (न वहेयव्वं) अनिष्ट शब्द करने वाले मनुष्य आदि का वध न करे। और (न दुगुंछा वत्तिया विलब्भा उप्पाए उं) न उन अनिष्ट शब्दों के विषय में अपने एवं पर के घृणावृत्ति उत्पन्न करने की कोशिश ही करे। अब सूत्रकार इस प्रथम भावना का उपसंहार करने के लिये कहतेते हैं-(एवं) इस प्रकार (सोइंदियभावणाभाविओ) श्रोत्रेन्द्रिय की भावना से भावित हुआ 'मुझे श्रोत्रेन्द्रिय का निरोध करना चाहिये नहीं तो बड़ा भारी अनर्थ होगा' इस प्रकार की विचारधारा से वासित हुआ (अंतरप्पा) अन्तरात्मा मुनि (मणुण्णामणुण्णसुब्भिदुब्भि रागदोसे पणिहियप्पा) मनोज्ञ रूप शुभ और अमनोज्ञ-

---

खिंसियव्वं" तेना पर खिसियाओ नहीं-बीजा पासे तेनी निंदा करवी जोइओ नहीं, "न छिंदियव्वं" अमनोज्ञ अवाज करनार वीणादि जे वस्तु होय तेनुं ते छेदन न करे, "न भिंदियव्वं" तेनुं भेदन न करे "न वहेयव्वं" अनिष्ट शब्द करनार मनुष्य आदिनो ते वध न करे, अने "न दुगुंछावत्तिया वि लब्भा उप्पाएउं" ते अनिष्ट शब्द प्रत्ये पोते तृष्णा न करे ने बीजाओमां तृष्णावृत्ति पेदा करवानी कोशिश न करे. हवे सूत्रकार आ पहेली भावनानो उपसंहार करता कहे छे-"एवं" आ रीते "सोइंदियभावणाभाविओ" श्रोत्रेन्द्रियनी भावनाथी भावित थयेल "मारे श्रोतेन्द्रिय पर अंकुश राखवो जोइओ नहीं तो घणो भारे अनर्थ थशे" ओ प्रकारनी विचारधाराथी प्रभावित थयेल "अंतरप्पा" अन्तरात्मा-मुनि "मणुण्णामणुण्णसुब्भिदुब्भिरागदोसे पणिहि-

ये सुरभिदुरभयः=शुभा शुभाः शब्दास्तेषु यद्रागद्वेषं तत्र, 'पणिहियप्पा' प्रणिहितात्मा=संवृतात्मा 'साहू' साधुः 'मणवयणकायगुत्ते' मनोवचनकायगुप्तः, 'संवुडे' संवृतः-संवरवान् 'पणिहिइंदिए' प्रणिहितेन्द्रियः-प्रणिहितः=वशीकृतः इन्द्रियो येन तथाभूतः सन् 'धम्मं' धर्मं 'चरेज्ज' चरेत् ॥ सू० ७ ॥

द्वितीयां भावनामाह—'बीयं" इत्यादि—

मूलम्—बीयं चक्खु इंदिएण पासिय रूवाणि मणुण्णभद्दगाइं सचित्ताचित्तमीसगाइं कट्ठे पोत्थे य चित्तकम्मे लेप्पकम्मे

रूप अशुभ शब्दों में रागद्वेष करने की परिणति से रहित हो जाता है। इस प्रकार की स्थिति से संपन्न हुआ (साहू) साधु (मणवयकायगुत्ते) अपने मन, वचन और काय को शुभाशुभ के व्यापार से सुरक्षित कर लेता है। और (संवुडे) संवर से युक्त बनकर (पणिहिइंदिए) अपनी श्रोत इन्द्रिय को वश में करके (धम्मं) चारित्ररूप धर्म को (चरेज्ज) पालन करने वाला बन जाता है।

भावार्थ—इस सूत्र द्वारा सूत्रकार ने परिग्रह विरमणव्रत की प्रथम भावना का विवेचन किया है। इसमें उन्होंने यह कहा है कि साधु को इष्ट श्रोत्रेन्द्रिय के विषय में ललचाना नहीं चाहिये और अनिष्ट विषय में द्वेष नहीं करना चाहिये। इस प्रकार से इस भावना से भावितमुनि अपने व्रत की रक्षा और उसकी सुस्थिरता करता हुआ संवर से युक्त बन जाता है और चारित्ररूप धर्म की परिपालना अच्छी तरह से कर सकता है॥सू०७॥

चप्पा" મનોજ્ઞરૂપ શુભ અને અશુભ શબ્દોમાં રાગદ્વેષની પરિણતિથી રહિત થઈ જાય છે. આ પ્રકારની સ્થિતિથી યુક્ત બનેલ "साहू" સાધુ "मणवयकायगुत्ते" પોતાના મન, વચન અને કાયને શુભાશુભ પ્રવૃત્તિથી સુરક્ષિત કરી નાખે છે. અને "संवुडे" સંવરથી યુક્ત બનીને 'पणिहिइंदिए" પોતાની શ્રોત્રેન્દ્રિયને વશ કરીને "धम्मं" ચારિત્રરૂપ ધર્મનું "चरेज्ज" પાલન કરનાર થઈ જાય છે.

ભાવાર્થ—આ સૂત્રદ્વારા પરિગ્રહ વિરમણ વ્રતની પહેલી ભાવનાનું વિવેચન કર્યું છે તેમાં તેમણે એ બતાવ્યું છે કે સાધુએ શ્રોત્રેન્દ્રિયના ઇષ્ટ વિષયમાં લલચાવું જોઈએ નહીં અને અનિષ્ટ વિષય પ્રત્યે દ્વેષ કરવો જોઈએ નહીં આ રીતે આ ભાવનાથી ભાવિત થયેલ મુનિ પોતાના વ્રતની રક્ષા તથા સુસ્થિરતા કરતો કરતો સંવરથી યુક્ત થઈ જાય છે, અને ચારિત્રરૂપ ધર્મનું સારી રીતે પાલન કરી શકે છે ॥ સૂ૦ ૭ ॥

सेले य दंतकम्मे य, पंचहिं वण्णेहिं अणेगसंठाणसंठियाइं गंथिमवेढिमपूरिमसंघाइमणि य मल्लाइं बहुविहाणि य नयणमणसुहकराइं वणसंडे पव्वए य गामागरनगराणि य खुड्डियपुक्खरिणी वावीदीहिय–गुंजालिय सरसरपंतिय सागरबिलपंतिय खाइय–नई–सर–तलाग–वप्पिणो फुल्लुप्पलपउमपरिमंडियाभिरामे, अणेगसउणगणमिहुणवियरिए, वरमंडवविविह भवण–तोरण–चेइय–देवकुल–सभप्पवावसह–सुकयसयणासण--सीयरह--सगडजाणजुग्गय--संदणे नरनारिगणे य सोमपडिरूवदरिसणिज्जे, अलंकिय विभूसिय, पुव्वकय तवप्पभावसोहग्गसंपउत्ते, नड–नट्टग–जल्ल–मल्ल–मुट्ठिय–वेलंबगकहग–पवग–लासग–आइक्खग लंख मंख तूणइल्ल तुंबवीणिय–तालायर पकरणाणि य बहूणि सुकरणाणि अण्णेसु य एवमाइएसु रूवेसु मणुन्नभद्दएसु न तेसु समणेण सज्जियव्वं, न रज्जियव्वं, जाव न सइं च मइं च तत्थ कुज्जा, पुणरवि चक्खुइंदिएणं पासिय रूवाइं अमणुन्नपावगाइं, किं ते ? गंडिकोढि–कुणि–उदरि--कच्छुल्ल--पइल्ल-- कुज्ज---पंगुल---वामण--अंधिल्लग--एगचक्खु विणिहय सप्पिसल्लगवाहिरोगपीलियं विगयाणि य मयककलेवराणि सकिमिणकुहियं च दव्वरासिं अन्नेसु य एवमाइएसु अमणुन्नपावगेसु न तेसु समणेण रूसियव्वं, जाव न दुगुंछावत्तियावि लब्भा उप्पाएउं, एवं चक्खुइंदियभावणाभाविओ भवइ अंतरप्पा मणुण्णामणुण्ण-

सुब्भिदुब्भिसरागदोसे पणिहियप्पा साहूमणवयणकायगुत्ते संवुडे पणिहिइंदिए चरेज्ज धम्मं ॥ सू० ८ ॥

टीका—'बीयं' इत्यादि—

'बीयं' द्वितीयां चक्षुरिन्द्रियसंवराभिधेयां भावनामाह- 'चक्खुइंदिएण' चक्षुरिन्द्रियेण 'पासिय' दृष्ट्वा 'रूवाणि' रूपाणि=आकारान् कीदृशानि ? 'मणुण्णभद्दगाइं' मनोज्ञभद्रकाणि-मनोज्ञानि=मनोहराणि च तानि भद्रकाणि=सुन्दराणि चेति कर्मधारयः, तथा-'सचित्ताचित्तमीसगाइं' सचित्ताचित्तमिश्रकाणि, तत्र-सचित्तानि=नरयुग्मादीनि, अचित्तानि=तत्प्रतिकृतिरूपाणि, मिश्रकाणि =वस्त्राभरणभूषितानि तान्येव, काष्ठपाषाणादीनि वा दृष्ट्वा तेषु श्रमणेन न सक्तव्यमित्याद्यग्रेण सम्बन्धः । कस्मिन् स्थाने दृष्ट्वा इत्याह-'कट्ठे' काष्ठे=काष्ठफलके 'पोत्थे य' पुस्ते च=पुस्तके च 'चित्तकम्मे' चित्रकर्मणि 'लेप्पक-

---

इस व्रत की द्वितीय भावना को कहते हैं-'बीयं इत्यादि० ।

टीकार्थ—(बीयं) दूसरी चक्षुरिन्द्रिय संवर नाम की भावना है वह इस प्रकार से है-(चक्खुइंदिएण) चक्षुइन्द्रिय से (मणुण्णभद्दगाइं) मनोज्ञ अतएव सुन्दर ऐसे (रूवाइं) रूपों को कि जो (सचित्ताचित्तमीसगाइं) सचित्त, अचित्त और मिश्रद्रव्य से आश्रित हो उन्हें (पासियं) देख करके साधु को चाहिये कि वह उनमें आसक्तचित्त न बनें, यह आगे से संबन्ध है । नर नारी आदि सचित्त द्रव्य हैं, इन के प्रतिकृति-फोटो अचित्तद्रव्य हैं । वस्त्र आभूषण आदि से विभूषित नर नारी आदि मिश्रद्रव्य हैं । इनके आश्रित जो मनोहर आकार होता है वह मनोज्ञ भद्रकरूप है । इन सब का आकार (कट्ठे) काष्ठ के

હવે સૂત્રકાર આ વ્રતની બીજી ભાવના બતાવે છે-"बीयं" ઇત્યાદિ-

ટીકાર્થ—"बीयं" બીજી ચક્ષુરિન્દ્રિય સંવર નામની ભાવના છે. તે આ પ્રમાણે છે-"चक्खुइंदिएण" ચક્ષુ ઇન્દ્રિયથી "मणुण्णभद्दगाइं" મનોજ્ઞ અને સુંદર એવાં "रूवाइं" રૂપોને કે જે "सचित्ताचित्तमीसगाइं" સચિત્ત, અચિત્ત અને મિશ્ર દ્રવ્યને આશ્રિત હોય, તેમને "पासियं" જોઇને તેમાં સાધુએ આસક્ત થવુ જોઈએ નહીં. નર, નારી આદિ સચિત્ત દ્રવ્ય છે. તેમની પ્રતિકૃતિ-ફોટા અચિત્ત દ્રવ્ય છે. વસ્ત્ર, આભૂષણ આદિથી વિભૂષિત નર-નારી આદિ મિશ્ર દ્રવ્ય છે. તેમના પર આધાર રાખનાર જે મનોહર આકાર હોય છે તે મનોજ્ઞ ભદ્રકરૂપ છે. તે બધાનો આકાર "कट्ठे" લાકડાના પાટીયા પર

म्मे ' लेप्यकर्मणि भित्त्यादौ, ' सेले य ' शैले=पाषाणे च ' दंतकम्मे ' दन्तकर्मणि=हस्तिदन्तादिषु यन्नरयुगादीनामाकृतिरुट्टङ्कचते तद्दन्तकर्म तस्मिंश्च ' पंचहिं वण्णेहिं' पञ्चभिर्वर्णैर्युक्तानि, 'अणेगसंठाणसंठियाइ' अनेक संस्थानसंस्थितानि' अनेकानि=अनेकप्रकाराणि यानि संस्थानानि=आकृतयस्तैः संस्थितानि=युक्तानि, तथा-' गंथिमवेढिमपूरिमसंघाइमाणि य ' ग्रन्थिमवेष्टिमपूरिमसंघातिमानि चः, तत्र-ग्रन्थिमं=ग्रन्थस्तेन निर्वृत्तं मालावत् , वेष्टिमम्=वेष्टनेन निर्वृत्तम् पुष्पगेन्दुकवत् , पूरिमं=पूरणेन निर्वृत्तं, यन्त्रे पित्तलादि रसपूरणेन निष्पादितं पुत्तलिकादिकम् , संघातिमम्=संघातेन निर्वृत्तम् , कपर्दिकादिसंघातेन निष्पादितं कुक्कुटा-

---

पटियों पर उकेरा जाता है (पोत्थे य) पुस्तकों से छापा जाता है, (चित्तकम्मे य) कागज आदि पर चित्रित किया जाता है मृत्तिका आदि में बनाया जाता है (लेप्पकम्मे) रंग आदि से भित्ति आदि पर लिखा जाता है (सेले य) पाषण के ऊपर अंकित किया जाता है (दंतकम्मे य) हाथी दांत पर खोदा जाता है। इन सब पदार्थों के ऊपर उकेरे गये उन २ आकारों को (पंचहिं वण्णेहिं) पाँच वर्णों से भरा जाकर बहुत ही सुन्दर रूप से आकर्षक बनाया जाता है। (अणेगसंठाणसंठियाइं) भिन्न २ रूप में उन चित्रों को सजाया जाता है। इसी प्रकार (गंथिमवेढिमपूरिमसंघाइमाणि य) माला की तरह गूंथ २ कर जो चित्र बनाये जाते हैं वे ग्रन्थिम, पुष्पगेंद की तरह जो वेष्टित करके चित्र बनाये जाते हैं वे वेष्टिम, किसी पदार्थ पर जो पुत्तलिकादि की तरह रंग से भरकर चित्र बन जाते हैं वे पूरिम, तथा कौडी आदि के परस्पर जोड़ने से कुक्कुट आदि के जैसा जो रूप बनाया जाता है वह संघातिम है। इन सब

ચિતરાય છે, " पोत्थेय " પુસ્તકોમાં છપાય છે. चित्तकम्मेय " કાગળ આદિ પર ચિતરવામાં આવે છે, માટી આદિથી બનાવવામાં આવે છે, " लेप्पकम्मे " રંગ આદિથી દિવાલ આદિ પર આલેખાય છે, " सेलेय " પથ્થર પર કોતરાય છે, " दंतकम्मेय " હાથીદાંત પર કોતરવામા આવે છે, તે સઘળા પદાર્થો ઉપર અંકિત કરેલ તે આકારોને "पंचहिं वण्णेहिं " પાચ રંગો લગાડીને બહુજ સુદર અને આકર્ષક બનાવાય છે. "अणेगसंठाणसंठियाइ " ભિન્ન ભિન્ન રીતે તેની સજાવટ કરાય છે એ જ રીતે " गंथिमवेढिमपूरिमसंघाइमाणि य " માળાની જેમ ગૂથી ગૂંથીને જે ચિત્રો બનાવવામા આવે છે તે ગ્રંથિમ, પુષ્પના દડાની જેમ જે ચિત્ર વેષ્ટિત કરીને બનાવાય છે વેષ્ટિમ, કોઈ પદાર્થ પર પુતળી આદિની જેમ રંગથી ભરીને જે ચિત્ર બનાવાય છે તે પૂરિમ, તથા કોડી આદિને એક બીજામા પરોવીને કૂકડા આદિ જેવો જે આકાર બનાવાય છે તે

दिस्वरूपम्, एषां द्वन्द्वः, तानि तथोक्तानि दृष्ट्वा, तथा–' बहुविधानि=अनेकप्रकाराणि च=पुनः ' अहियं ' अधिकम्–अत्यर्थं यथा स्यात्तथा 'नयणमणसुहकराइं' नयनमनःसुखकराणि = नयनयोर्मनसश्च सुखकराणि=सुखोत्पादकानि ' मल्लाइं ' माल्यानि ' माला ' इति भाषा प्रसिद्धानि तथा–' वणसंडे ' वनषण्डान्=एकजातीयानामनेकजातीयानां च वृक्षाणां समूहान्, ' पव्वए य ' पर्वतांश्च ' गामागरनगराणि य ' ग्रामाकरनगराणि च दृष्ट्वा, तथा–' खुद्दियपुक्खरिणी–वावी–दीहिय=गुंजालिय–सरसरपंतिय–सागर–विलपंतिय–खाइय–नई–सर–तलाग–विप्पिणो ' क्षुद्रिका-पुष्करिणी वापी दीर्घिका गुञ्जालिका सरः सरः पङ्क्तिका सागर–बिलपङ्क्तिका–खातिका–नदी–सरस्तडागवप्रान्, तत्र–क्षुद्रिका=लघुजलाशयविशेषः, पुष्करिणी=कमलवती वर्तुलाकारा वापी=चतुष्कोणा, दीर्घिका=लम्बाकारवापी, गुञ्जालिका=वक्राकारवापी, सरः सरः पङ्क्तिका=येषां मध्ये एकस्मात्तडागादपरस्मिँस्तडागे जलं समायाति, एतादृशजलाशयसमूहः सरसरः पङ्क्तिके-

---

को निहार कर, (देखकर) तथा (बहुविहाणि) अनेक प्रकार की (मल्लाइं) मालाओं को कि जो (अहियं नयणमणसुहकराइं) अधिक से अधिक रूप में नेत्र एवं मन को आह्लादकारक होती हों देखकर (वणसंडे) एक जातीय और अनेक जातीय वृक्षों के समूहों को (पव्वए य) पर्वतों को गामागरणगराणि) ग्राम, आकर, नगरों को (खुद्दिय पुक्खरिणी–वावी–दीहिय–गुंजालिय–सरसर–पंति य–सागर–विलपंति य–खाइय–नई–सर–तलाग–वप्पिणो) क्षुद्रिका–लघु–जलाशय, पुष्करिणी–कमलों से युक्त गोल आकारवाली बावड़ी, वापी–चार कोनों वाली बावडी, दीर्घिका –लम्बे आकार वाली बावडी, गुन्जालिका–वक्र आकारवाली बावडी, सरः सरः पंक्ति–एक तालाब से दूसरे तालावों में जल जाने वाले तालाब के समूह, सागर–समुद्र बिलपंक्ति–बिलोंके जैसे आकार वाले कूओं की,

---

સંઘાતિમ કહેવાય છે તે બધાને જોઈને તથા "बहुविहाणि" અનેક પ્રકારની "मल्लाइं" માળાઓ કે જે "अहियं नयणमणसुहकराइं" આંખ અને મનને વધારેમાં વધારે આનંદદાયક હોય છે, તેમને જોઈને "वणसंडे" એક જાતના કે અનેક જાતના વૃક્ષના સમૂહોને "पव्वएय" પર્વતોને, "गामागरणगराणि" ગામ, આકર, નગરોને "खुद्दिय-पुक्खरिणी-वावी- दीहिय-गुंजालिय सरसर-पंतिय-सागर-बिलपंतिय-खाइय नई –सर–तलाग–वप्पिणो" ક્ષુદ્રિકા–નાનું જળાશય, પુષ્કરિણી–કમળોથી યુક્ત ગોળાકારની વાવ, વાપી–ચાર ખૂણાવાળી વાવ સરસરપંક્તિ–એક તળાવમાંથી બીજા તળાવોમાં પાણી જતું હોય તેવા તળાવોનો સમૂહ, સાગર, બિલપંક્તિ–દરના

त्युच्यते, सागरः=समुद्रः, विलपङ्क्तिकाः=विलानीवविलानि=कूपास्तेषां पङ्क्तिका =कूपश्रेणिरित्यर्थः, खातिका=परिखाः, नदी=प्रसिद्धा, सरः=स्वाभाविकस्तडागः; तडागः=कृत्रिमः सरोवरः, वप्राः=धान्यक्षेत्राणि, एषामित्तरेतरयोगद्वन्द्वः, ताँस्तथोक्तान्, दृष्ट्वा, कीदृशानेतान् ? इत्याह-'फुल्लुप्पलपउमपरिमंडियाभिरामे' फुल्लोत्पलपद्मपरिमण्डिताभिरामान् तत्र फुल्लानि=विकासितानि यानि उत्पलानि=चन्द्र विकाशिकमलानि, पद्मानि=सूर्यविकासिकमलानि च तैः परितः=समन्तान्मण्डिता अतएव-अभिरामाः=मनोहरास्ताँस्तथोक्तान्, पुनः कथम्भूतान् ? 'अणेगसउणगणमिहुणविचरिए'.अनेकशकुनगणमिथुनविचरितान्=अनेकानि-बहुविधानि यानि शकुनगणमिथुनानि-पक्षिगणयुगलानि, विचरितानि-संचरितानि यत्र तान्, फुल्लोत्पलादिपदानि क्षुद्रिकादिवप्रान्तविशेषणानि। तथा-'वरमंडव-विविह-भवण-तोरण-चेइय-देवकुल-सभप्पवा-वसह-सुकयसयणासण-सीयरह-सगड-जाण-जुग्ग-संदणे' वरमण्डपविविधभवनतोरण चैत्य देवकुलसभाप्रपावसथसुकृतशयनासनशिविकारथशकटयानयुग्यस्यन्दनान्, तत्र-वरमण्डपाः=श्रेष्ठमण्डपाः, विविधभवनानि, तोरणानि प्रसिद्धानि, चैत्यानि=उद्यानानि, देवकुलानि प्रसिद्धानि,

---

श्रेणि, खातिका-परिखाएं नदी-नदियाँ, सर-सामान्यतालाब तडाग-कृत्रिम सरोवर, वप्र-धान्य के खेत जो (फुल्लुप्पलपउमपरिमंडियाभिरामे) विकाशित-उत्पलों से, चंद्रविकाशिकमलों से सब और मंडित हो रहे हों, और इसी कारण जिनसे मन में विशेष प्रफुल्लिता आती, हो, तथा जो (अणेगसउणगणमिहुणविचरिए) अनेक पक्षियों के युगल जहां विचरण कर रहे हों इन सब कों देखकर साधु इनमें आसक्ति न करे। तथा (वरमंडवविविहभवणतोरणचेइयदेवकुलसभप्पवावसहसुकयसयणासणसीयरहसगडजाणजुग्गसंदणे) वरमंडप-श्रेष्ठमंडप, विविधभवन, तोरण, चैत्य-उद्यान, देवकुल, सभा, प्रपा-पानीयशाला,

---

જેવાં આકારના કૂવાઓની હાર, ખાતિકા-ફરતી આવેલી ખાઈઓ, નદીઓ, સર-સામાન્ય તળાવો, તડાગ-કૃત્રિમ સરોવર, વપ્ર-ધાન્યના ખેતરો જે "फुल्लुप्पलपउमपरियमंडियाभिरामे" વિકસિત ઉત્પલોથી--ચંદ્રવિકાસી કમળોથી બધી તરફ ઘેરાયેલાં હોય, અને એ જ કારણે મનને વધારે પ્રફુલ્લિત બનાવતાં હોય, તથા "अणेगसउणगणमिहुणविचरिए" અનેક પક્ષીઓનાં યુગલ જ્યાં વિચરતાં હોય, તે બધુ જોઇને સાધુએ તેથી આસક્તિ કરવી જોઇએ નહીં. તથા "वरमंडव-विविहभवण-तोरण-चेइय-देवकुल-सभप्प-वावसह-सयणासण-सीयरह सगडजाणजुग्गसंदणे" વરમંડપ-શ્રેષ્ઠમંડપ, વિવિધભવન, તોરણ,-ચૈત્ય,-ઉદ્યાન, દેવકુલ, સભા, પ્રપા પરબ, આવસથ-પરિવ્રાજકોનાં સ્થાન, સારી રીતે સજાવ-

'न हसियव्वं' न हसितव्यम् , तथा-श्रमणस्तत्र 'न सइं च मइं च' न स्मृतिं च मतिं च 'कुज्जा' कुर्यात् । एतत्सर्वमस्यैव प्रथमभावनायां व्याख्यातम् । 'पुणरवि' पुनरप्युच्यतेऽश्रमणः 'चक्खुइंदिएण' चक्षुरिन्द्रियेण 'अमणुण्णपावगाइं' अमनोज्ञपापकानि 'रूवाणि' रूपाणि 'पासिय' दृष्ट्वा 'किं ते' कानि तानि-कथम्भूतानि तानि रूपाणि ? इत्याह-'गंडि-कोढि-कुणि-उदरि-कच्छुल्ल-पइल्ल-कुज्ज-पंगुल-वामण-अंधिल्लग-एगचक्खुविणिहय सपिसल्लगवाहिरोगपीलियं' गण्डिकुष्ठिकुण्युदरिकच्छुल्लश्लीपदकुब्ज पङ्गुलवामनान्धिलकैकचक्षुर्विनिहत सपिशाचकव्याधिरोगपीडितं-तत्र-गण्डी=गण्डो=हि कण्ठरोगविशेषः,स च वातपित्त श्लेष्मसन्निपातैर्जायमानत्वाच्चतुर्विधः, स यस्यास्ति स गण्डी, गण्डमालावानित्यर्थः, कुष्ठी=कुष्ठमस्यास्तीति कुष्ठी-कुष्ठरोगवान् , कुष्ठमष्टादशविधम् , तत्र महाकु-

---

आश्चर्य से हंसना नहीं चाहिये, तथा (न सइं च मइं च तत्थकुज्जा) और न उनकी याद करना चाहिये और न उनमें अपनी बुद्धि को ही लगाना चाहिये। (पुणरवि) इसी तरह (अमणुण्णपावगाइं) अमनोज्ञ अशुभ (रूवाइं) रूपों को (चक्खुइंदिएण) चक्षु इंद्रिय से (पासिय) देखकर साधु को उनमें रोष-द्वेष नहीं करना चाहिये। (किं ते!) वे अमनोज्ञ अशुभ रूप कौन २ से हैं इस प्रकार की शंका का समाधान करते हुए सूत्रकार अब उन्हें इन निम्नलिखित पदों द्वारा प्रकाशित करते हैं-(गंडि-कोढि-कुणि-उदरि कच्छुल्ल-पइल्ल-कुज्ज-पंगुल-वामण-अंधिल्लग-एगचक्खु-विणिहय सपिसल्लग-वाही-रोग-पीलियं) गंडी-गंडमाल-रोगवाले, कुष्ठी-कुष्टरोगवाले, कुणि-कुष्ठरोगी, उदररोगी, कच्छुल्लरोगी, श्लीपदरोगी, कुब्ज-कुबडा, पंगुल,

---

તેનાથી મનમાં આનંદ પામવો નહીં, " न हसियव्व " તેને જોઈને આશ્ચર્યથી હસવું ન જોઈએ, તથા " न सइ च मइं च तत्थकुज्जा " તેને યાદ કરવું જોઈએ નહીં કે તેમાં ધ્યાન પરોવવું જોઈએ નહી.

" पुणरवि " એ જ પ્રમાણે " अमणुण्णपावगाइं " અમનોજ્ઞ અશુભ " रूवाइं " રૂપોને ' चक्खुइंदिएण'' ચક્ષુઇન્દ્રિયથી " पासिय " જોઈને તેના પ્રત્યે રોષ-દ્વેષ કરવો જોઈએ નહીં, " किं ते ? " તે અશુભ રૂપ કયા કયાં છે તે શંકાનું સમાધાન કરવાને માટે સૂત્રકાર નીચેના પદો દ્વારા તેમને જાહેર કરે છે—" गंडि-कोढि-कुणि-उदरि-कच्छुल्ल- पइल्ल-कुज्ज-पंगुल-वामण-अधिल्लग-एगचक्खु-विविहय-सपिसल्लग-वाहिरोग-पीलियं " ગંડી-કંઠમાળના રોગવાળા, કુષ્ટરોગી, કુણિ-કંઠરોગવાળા, ઉદરરોગી, કચ્છુલ્લરોગી, શ્લીપદરોગી, કુબડા,

ष्ठस्य सप्तभेदाः । तद्यथा अरुण[1]-दुम्बर[2]-स्पर्शजिह्व[3]-करकपाल[4]-काकन[5]-पौण्डरीक[6] दद्रूणि[7] । इति, महत्त्वं चैषामसाध्यत्वात्। सामान्यकुष्ठस्यैकादश भेदाः, स्थूलामारुक १ महाकुष्ठे २ एककुष्ठ ३ चर्मदल ४ विसर्प ५ परीसर्प ६ विचर्चिका ७ सिध्म ८ कटिभ ९ पामा १० शतारुष्क ११ संज्ञकाः । एवं सर्वाणि कुष्ठान्यष्टादश । यद्यपि सर्वं कुष्ठं सन्निपातजमेव जायते, तथापि-वातादिदोषोत्कटतया

वामन, अंधिल्लग-जन्मान्ध, एकचक्षु-काना, विनिहतचक्षु-जन्म के बाद होने वाला अंधा, सपिसल्लक-सपिशाच-भूतादि आवेश वाला, अथवा सपिशल्यक-घसीते हुए चलने वाला हृदयरोगी, व्याधि-पीडित, इन सब को देखकर इनमें द्वेष तथा घृणा नहीं करनी चाहिये।

पूर्वोक्त पदों का अलग-अलग अर्थ इस प्रकार हैं-गंडी-वातपित्त और सन्निपात-वातादि त्रिदोष मिश्रित विकार से उत्पन्न होने के कारण चार प्रकार के कंठ रोगवाला, कुष्ठी-कुष्ठ अठारह प्रकार का होता है, जिसमें सात प्रकार के महाकुष्ठ होते हैं और ग्यारह प्रकार के सामान्यकुष्ठ होते हैं। (१) अरुण २ दुम्बर ३ स्पर्शजिह्व ४ करकपाल ५ काकन ६ पौण्डरिक और ७ दद्रु । ये असाध्य होने से महाकुष्ठ माने गये हैं । सामान्य कुष्ठ ग्यारह प्रकारके ये हैं-१स्थूलामारुक्क २ महाकुष्ठ ३ एककुष्ठ४ चर्मदल ५ विसर्प ६ परिसर्प७ विचर्चिका ८ सिध्म ९ किटिभ १० पामा शतारुष्क ११ । यद्यपि सब ही कुष्ठ सन्निपात से ही उत्पन्न होते हैं तथापि वातादिक दोषों की उत्कटता से इसमें भेद माना गया

લૂલા, વામન, જન્માધ, કાણીયા. જન્મ પછી આંધળા બનેલા, સપિસલ્લક-સપિશાચ-ભૂતાદિ વળગાડવાળા, અથવા સપિશલ્યક-ઢસડાતા ચાલના હૃદયરોગી, વ્યાધિપીડિત અને રોગ પીડિત એ બધાને જોઇને તેમના પ્રત્યે દ્વેષ અથવા ઘૃણા કરવી જોઇએ નહીં. પૂર્વોક્ત પદોનો અલગ અલગ અર્થ આ પ્રમાણે છે—"ગંડી"-વાત પિત્ત અને સન્નિપાત-વાતાદિ ત્રિદોષ મિશ્રિત વિકારથી ઉત્પન્ન થવાને કારણે ચાર પ્રકારના કંઠરોગવાળા, "कुष्ठी"-કુષ્ઠ અઢાર પ્રકારના. હોય છે, જેમાં સાત પ્રકારના મહાકુષ્ઠ હોય છે અને અગિયાર પ્રકારના સામાન્ય કુષ્ઠ હોય છે. (૧) અરુણ, (૨) દુમ્બર, (૩) સ્પર્શજિહ્વ, (૪) કરકપાલ, (૪) કાકન, (૬) પૌંડરીક અને (૭ દદ્ર એ સાતે અસાધ્ય હોવાથી મહાકુષ્ઠ ગણાય છે. અગિયાર પ્રકારના સામાન્ય કુષ્ઠ આ પ્રમાણે છે—(૧) સ્થૂલામારુક્ક, (૨) મહાકુષ્ઠ, (૩) એક કુષ્ઠ(૪) ચર્મદલ, (૫) વિસર્પ (૬) પરીસર્પ (૭) વિચર્ચિકા, (૮) સિધ્મ(૯) કિટિભ (૧૦) પામા, (૧૧) શતારુષ્ક. જો કે બધાં જ કુષ્ઠ સન્નિપાતથી જ ઉત્પન્ન થાય છે. છતા પણ વાતાદિક દોષોની પ્રબળતાને.

सभा=प्रसिद्धा, प्रपा=पानीयशाला, आवसथः=परिव्राजकवसतिः, सुकृतशयनासनानि =सुकृतानि=सुष्ठुकृतानि=विहितानि यानि शयनानि=शय्याः, आसनानि=सिंहासनानि च तानि तथोक्तानि, शिबिका='पालकी' ति प्रसिद्धा, रथः=प्रसिद्धः, शकटम्='गाड़ा' इति भाषा प्रसिद्धम्, यानम्=गमनसाधनं रथादिकम्, युग्यम्=अश्वादिवाहनम्, स्यन्दनो=रथविशेषः, एषामितरेतरयोगद्वन्द्वः, तास्तथोक्तम्, तथा 'नरनारिगणेय' नरनारिगणांश्च=स्त्रीपुरुषसमुदायांश्च, दृष्ट्वा, कथम्भूतानेतान्? इत्याह—'सोमपडिरूवदरिसणिज्जे' सोमप्रतिरूपदर्शनीयान्–सोमवत् सौम्यतया चन्द्रवत् प्रतिरूपाः=सुन्दराः, अतएव–दर्शनीयाः=द्रष्टुं योग्यस्तान् पुनः कथंभूतान्? 'अलकियविभूसिए' अलङ्कृतविभूषितान्=अलङ्कृताः=मुकुटाद्यलङ्कारैः विभूषिताः वस्त्रादिभिः सज्जिताः ये तान्, पुनः कथंभूतान्? 'पुव्वकयतवप्पभावसोहग्गसंपउत्ते' पूर्वकृततपः प्रभावसौभाग्यसंप्रयुक्तान् पूर्वकृततपः प्रभावेण प्राप्तं यत्सौभाग्यं तेन संप्रयुक्ता ये ते तथा तान् दृष्ट्वा, तथा–'नड–नट्टग जल्ल मल्लमुट्ठियवेलंवगकहग–पवग–लासग–आइक्खग–लंख–मंख–तूणइल्ल–तुंबवीणिय–तालायरपकरणाणि' नट नर्तक जल्लमल्लमौष्टिकविडम्बक– कथक–

आवसथ–परिव्राजकों के स्थान, सुकृत–अच्छी तरह से सजाये गये शयन, आसन, पालकी, रथ; गाडा, यान–गमन के साधनभूत वाहन, युग्य–अश्वादिकवाहन, स्यंदन–रथविशेष, इन सबको, तथा (नरनारिगणे य) नर और नारी के वृन्द को कि जो (सोमपडिरूवदरिसणिज्जे) चन्द्रमा के जैसा सुन्दर आकार वाला है और इसी से जो दर्शनीय बना हुआ हैं (अलंकियविभूसिए) मुकुट आदि विविध अलंकारों से एवं वस्त्रादिकों से सुसज्जित है, (पुव्वकय तवप्पभावसोहग्ग संपउत्ते) पूर्वकृत तप के प्रभाव से प्राप्त सौभाग्य से जो युक्त हैं इन सब को देखकर के तथा (नड–नट्टग–जल्ल–मुट्ठिय–वेलंबग–कहग–पवग–लासग–आईक्खग–लंख–मंख–तूण–इल्ल–तुंबवीणिय–तालायर–पकरणाणि)

टवाळां शयनस्थान, आसन, पालखी, रथ गाडा, यान-मुसाफरीना साधनरूप वाहन, युग्य- अश्वादि वाहन, स्यंदन-खास प्रकारना रथ, ए बधाने तथा "नरनारिगणेय" नर अने नारीना समूहने के जे "सोमपडिरूवदरिसणिज्जे" चन्द्रमा जेवां सुंदर आकारवाळा छे अने तेथी ज जे जोवां गमे तेवां छे, "अलंकियविभूसिए" मुगट आदि विविध अलंकारो तथा वस्त्रोथी विभूषित छे, "पुव्वकयतवप्पभावसोहग्गसंपउत्ते" पूर्वकृत तपना प्रभावथी प्राप्त थयेल सौभाग्यथी जेओ युक्त छे, ए सौने जोईने तथा "नड–नट्टग–जल्ल–मल्ल–मुट्ठिय–वेलंबग–कहग–पवग–लासग–आइक्खग–लंख–मंख–तूण–इल्ल–तुंबवीणिय –ता

प्लवक-लासकाख्यायक-लङ्ख-मङ्ख तूणिक तुम्बवीणिक तालाचर प्रकरणानि च, नटनर्त्तकादिपदानां व्याख्याऽस्यैवप्रथमभावनातोऽवगन्तव्याः, 'बहूणि' बहूनि-अनेकविधानि 'सुकरणाणि' सुकरणानि=शोभनक्रियायुक्तानि दृष्ट्वा, नटनर्तका-दीनां बहुविधान् मनोहरव्यापारान् दृष्टेत्यर्थः, तेषु तथा 'अण्णेसु य' अन्येषु चैतद्भिन्नेषु 'एवमाइएसु' एवमादिकेषु=एवंविधेषु 'मणुन्नभद्दएसु' मनोज्ञभद्रकेषु 'रूवेसु' रूपेषु=चक्षुर्ग्राह्यविषयेषु 'समणेण' श्रमणेन=साधुना 'न सज्जियव्वं' न सक्तव्यम्, न रज्जियव्वं' न रक्तव्यम् 'जाव' यावत्=यावत्करणात् 'न गिज्झियव्वं' न गर्धितव्यम्' 'न मुज्झियव्वं न मोहितव्यम्, 'न विणिघायमावज्जियव्वं' न विनिघातआपत्तव्यः तथा-'न लुभियव्वं' न लोब्धव्यम्, 'न तुसियव्वं' न तोष्टव्यम्,

---

नट,-नर्त्तक, जल्ल, मल्ल, मौष्टिक, वेलंवक, कथक, पूलवक, लासक, आख्यायिक, लख, मंख, तूणिक, तुम्बवीणिक, तालाचार, इन सब के मनोहर व्यापारों को जों (बहूणि) अनेक प्रकार के होते हैं और (सुकराणि) शोभन क्रिया संपन्न रहा करते हैं उनको देख करके, तथा (अण्णेसु एवमाइएसु रूवेसु मणुण्णभद्दएसु) और भी जो इसी प्रकार के मनोज्ञभद्रक रूप हों उन्हें देख करके (समणेण) साधु को (तेसु) उनमें (न सज्जियव्वं) आसक्त नहीं बनना चाहिये। (न रज्जियव्वं) राग नहीं करना चाहिये। यहां यावत् शब्द से (न गिज्झियव्वं) गृद्धिभाव नहीं करना चाहिये-अर्थात्-उनमें ललचाना नहीं चाहिये। (न मुज्झियव्वं) न मोह करना चाहिये, (न विणिघायं आवज्जि-यव्वं) उनके लिये चारित्र का भंग न करे, (न लुभियव्वं) लोभ न करे, (न तुसियव्वं) प्रसन्न मन नहीं होना चाहिये, (न हसियव्वं)

लायर-पकरणाणि" નટ, નર્તક, જલ્લ, મૌષ્ટિક, બેલંવક, કથક, પ્લવક, લાસક આખ્યાયિક, લંખ, મંખ, તુંણિક, તુંબવીણિક, તાલાચાર, એ બધાનાં મનોહર વ્યાપારો કે જે "बहूणि" અનેક પ્રકારના હોય છે, અને "सुकराणि" સુંદર ક્રિયા યુક્ત હોય છે, તેમને જોઈને તથા "अण्णेसु एवमाइएसु रूवेसु मणुण्ण भद्दएसु" એ જ પ્રકારનાં બીજાં પણ જે મનોજ્ઞ ભદ્રકરૂપ હોય તેમને જોઈને "समणेण" સાધુએ "तेसु" તેમનામા "न सज्जियव्व" આસક્ત થવું જોઈએ નહીં, "न रज्जियव्वं" રાગ કરવો જોઈએ નહીં, "न गिज्झियव्वं" તેમાં લલચાવું જોઈએ નહીં, "न मुज्झियव्वं" તેને માટે મોહ કરવો જોઈએ નહીં, "न विणिघायं आवज्जियव्वं" તેને માટે ચારિત્રનો ભંગ ન કરવો જોઈએ "न लुभियव्वं" લોભ કરવો જોઈએ નહીં, "न तुसियव्वं"

भेदभाग्भवतीति विज्ञेयम्। तथा–कुणिः=कुण्टः, अयं हि गर्भाधानादि दोषाद् ह्रस्वैकपादो न्यूनैकपाणिर्वा भवति। तथा – उदरी=उदररोगवान्, उदररोगा अष्टप्रकाराः तदुक्तम्—

पृथक् [१] समस्तै [२] रपिचानिलौघैः [३] प्लीहोदर [४] बद्धगुदं [५] तथैव।

आगन्तुकं [६] वेसर [७] मष्टमं तु जलोदरं चेति भवन्ति तानि ॥ इति।

एतेषु जलोदरमसाध्यं शेषाणि तु साध्यानि। तथा–कच्छुल्लः=कण्डूतिमान्, श्लीपदः=श्लीपदरोगयुक्तः, श्लीपदलक्षणमेवमुक्तम्–" प्रकुपिता वातपित्तश्लेष्माणोऽधोऽधः प्रपन्ना वक्षस्थलोरुजङ्घा–स्ववतिष्ठमानाः कालान्तरे पादमाश्रित्य शनैः शनैः शोथमुपजनयन्ति " तदेवश्लीपदमुच्यते। अन्यदप्युक्तम्–

है इन अठारह प्रकार के कुष्ठरोगवाला, कुणी–कुष्ठरोगी (२) यह रोग गर्भाधानादि के दोष से होता है। इसमें एक पैर छोटा हो जाता है या एक हाथ छोटा हो जाता है। उदररोगी–उदररोग आठ प्रकार का होता है, कहा भी है—

" पृथक् १ समस्तै २ रपि चानिलौघैः ३, प्लीहोदरं ४ बद्धगुदं ५ तथैव। आगन्तुकं ६ वेसर ७–मष्टमं तु जलोदरं ८ चेति भवन्ति तानि ॥ १ ॥ "

पृथक् १, समस्त २, अनिलौघ ३ प्लीहोदर ४ बद्धगुद ५ आगन्तुक ६ वेसर ७ जलोदर ८ उदररोग के ये ८ प्रकार हैं। इनमें जलोदर रोग असाध्य है, बाकी सब साध्य हैं। कच्छुल्ल–खुजली रोगवाला, श्लीपदरोगी–इस रोग के लक्षण इस प्रकार कहे हैं—

" कुपि ताबातपित्तश्लेष्माणोऽधोधः प्रपन्ना वक्षःस्थलोरुजङ्घा स्ववतिष्ठमानाःकालान्तरे पादमाश्रित्य शनैःशनैःशोथमुपजनयन्ति ॥ "

કારણે તેમાં ભેદ માનવામાં આવ્યાં છે. આ રીતે અઢાર પ્રકારના કુષ્ટરોગી, કુણિ–કુષ્ઠરોગી–આ રોગ ગર્ભાધાનાદિ દોષથી થાય છે. તે રોગમાં એક હાથ કે એક પગ ટૂંકો થઇ જાય છે. ઉદરરોગી-ઉદરરોગ આઠ પ્રકારના હોય છે કહ્યું પણ છે કે–

" पृथक्१ समस्तै २ रपि चानिलौघैः ३ प्लीहोदरं ४ बद्धगुदं ५ तथैव। आगन्तुकं ६ वेसर७ मष्टम तु जलोदरं ८ चेति भवन्ति तानि ॥१॥"

(૧) પૃથક્, (૨) સમસ્ત, (૩) અનિલૌધ, (૪) પ્લીહોદર (૫) બદ્ધગુદ (૬) આગન્તુક, (૭) વેસર અને (૮) જલોદર, એ આઠ પ્રકારના ઉદરરોગ હોય છે. તેમા જલોદર અસાધ્ય રોગ છે, બાકીના બધા સાધ્ય છે " कच्छुल्ल " દાદર, ખરજવું, ખસ, વગેરે ખુજલીરોગો, શ્લીપદરોગી–(હાથીપગાનો રોગી) આ રોગના લક્ષણો નીચે પ્રમાણે કહેલ છે—

" कुपिता वातपित्तश्लेष्माणोऽधोधः प्रपन्ना वक्षःस्थलोरुजङ्घास्ववतिष्ठमाना कालान्तरे पादमाश्रित्य शनैः शनैः शोथमुपजनयन्ति "

'पुराणोदकभूयिष्ठाः सर्वर्तुषु च शीतलाः।
ये देशास्तेषु जायन्ते श्लीपदानि विशेषतः॥ १॥'
पादयो र्हस्तयोर्वाऽपि जायते श्लीपदं नृणाम्।
कर्णौष्ठनासास्वपि च, क्वचिदिच्छन्ति तद्विदः॥ २॥ इति।

इदं च 'फील पाँव' हाथी पगा' इत्यादि नामभिर्लोके प्रसिद्धम्। तथा-कुब्जः=गड्डलः कुबडा' इति भाषाप्रसिद्धः। पङ्गुलः=पङ्गुः=गमनासमर्थः, वामनः=खर्वः—ह्रस्वशरीर इत्यर्थः। एते कुब्जवामनादयो मातापितृशुक्रशोणितदोषेण भवन्ति। तदुक्तम्—

यह रोग प्रकुपित होकर जब वात पित्त और कफ नीचे नीचे शारीरिक भागों में पहुँच जाते है और वक्षस्थल, उरु, जंघा, इनमें प्रवेश कर जाते हैं तब वे कालान्तर में पैर में पहूँच कर धीरे २ उसमें शोथ-सूजन को उत्पन्न कर देते हैं इसी का नाम श्लीपद रोग है, इस रोग का नाम फिलपांव हाथीपगा आदि भी है। इसके और भी लक्षण कहे हैं—

"पुराणोदकभूयिष्ठाः, सर्वर्तु च शीतलाः।
येदेशास्तेषु जायन्ते, श्लीपदानि विशेषतः॥ १॥
पादयो र्हस्तयो र्वाऽपि, जायतेश्लीपदन्नृणाम्।
कर्णौष्ठनासास्वपि च, क्वचिदिच्छन्ति तद्विदः॥ २॥

यह रोग उन देशो में विशेष कर होता है जिनदेशों में पुराना पानि अधिक रूप में भरा रहता है तथा जो सर्व ऋतुओं में शीतल रहा करते हैं, कितनेक यह भी कहते है कि यह रोग हाथ, पैर, कान,

---

જ્યારે વાત, પિત્ત અને કફ પ્રકુપિત થઈને શરીરના નીચેના ભાગોમાં પહોંચી જાય છે અને વક્ષસ્થળ, ઉરુ જંઘા આદિમાં પ્રવેશ કરે છે ત્યારે સમય જતાં પગમાં પહોંચીને ધીમે ધીમે તેમાં સોજો ઉત્પન્ન કરે છે. તે રોગનું નામ શ્લીપદરોગ છે. આ રોગનાં બીજા નામો ફિલપગા હાથીપગા આદિ પણ છે. તેનાં બીજાં લક્ષણો પણ કહેલ છે—

"પુરાણોદકભૂયિષ્ઠાઃ, સર્વર્ત્તુષુ ચ શીતલાઃ
યેદેશાસ્તેષુ જાયન્તે, શ્લીપદાનિ વિશેપતઃ॥ ૧॥
પાદયો ર્હસ્તયોર્વાઽપિ જાયતે શ્લીપદં નૃણામ્।
કર્ણૌષ્ઠ નાસાસ્વપિ ચ ક્વચિદિચ્છન્તિ તદ્વિદઃ॥ ૧॥

જે દેશોમાં પ્રાચીન પાણી વિશેષ પ્રમાણમાં ભરાઈ રહે છે તે દેશોમાં આ રોગ વધુ પ્રમાણમાં થાય છે વળી જે પ્રદેશ બધી ઋતુઓમાં શીતળ રહે છે ત્યાં પણ આ રોગ વધારે પ્રમાણમા થાય છે કેટલાક એમ પણ કહે

गर्भे वातप्रकोपेण, दोहदे वाऽपमानिते ।
भवेत्कुब्जः कुणिः पङ्गुर्मूको मन्मन एव च ॥ १ ॥ इति ।

तथा—अन्धिल्लकः=जात्यन्धः, एकचक्षुः=काणः, एतद् दोषद्वयं च गर्भगतस्य जातस्य चापि भवति । गर्भगतो यथैतद्दोषद्वयभाग्भवति, तदेवं विज्ञातव्यम्—यदा हि गर्भस्थजीवस्य नेत्रद्वयं तेजो न प्रतिपद्यते तदा स गर्भस्थो जात्यन्धो भवति । यदा चैकं नेत्रं प्रतिपद्यते नापरं, तदा स काणो भवति । तदेव

ओठ और नासिका में भी होता है । कुब्ज पंगु और वामन, ये माता पिता के शुक्र शोणित के दोष से उत्पन्न होते हैं, कहा भी है—

"गर्भे वातप्रकोपेण, दोहदे वाग्यमानिते ।
भवेत्कुब्जःकुणिःपङ्गु मुंको मन्मन एव च ॥ १ ॥

अर्थात्–गर्भ में वात के प्रकोप होने से तथा दोहद–गर्भिणी मनोरथ की तर्फ ध्यान नहीं देने से अर्थात् उसका अपमान करने से कुब्जक, कुणि–कुष्ठ–पङ्गु और लूले तथा तुतलाने वाले बालक उत्पन्न होते हैं । अंधिल जन्मान्ध, काना ये दोनों प्रकार के व्यक्ति जब गर्भ अवस्था संपन्न होते हैं तब उस समय यदि दोनों नेत्र इनमें से किसी एक के तेज को प्राप्त नहीं कर पाते हैं तो वह गर्भ जन्मान्ध होकर उत्पन्न होता है–यदि एक ही नेत्र तेज को प्राप्त कर लेता है दूसरा नहीं कर पाता तो वह उस समय काना उत्पन्न होता है । वही तेज यदि रक्तानुगत हो जाता है तो शिशु रक्ताक्ष उत्पन्न होता है, पित्तानुगत होता है तो शिशु पिङ्गाक्ष होता है और यदि श्लेष्मानुगत होता

છે કે આ રોગ હાથ, પગ, કાન, હોઠ અને નાકમાં પણ થાય છે. कुब्ज–પાંગળાપણું અને વામનતા માતાપિતાના શુક્ર તથા રક્તનાદોષથી થાય છે. કહ્યુ પણ છે-

"गर्भे वातप्रकोपेण, दोहदे वाग्यमानिते ।
भवेत्कुब्जः कुणिः पङ्गुर्मूको मन्मथ एव च ॥ १॥ "

એટલે કે ગર્ભમાં વાયુનો પ્રકોપ થવાથી તથા ગર્ભિણીનો દોહદ–મનોરથ પૂરો નહીં કરવાથી, તેના દોહદની અવગણના કરવાથી કૂબડો. કુણિ–કુષ્ટ. લૂલો, મૂંગો અથવા તોતડો બાળક જન્મે છે અંધિલ–જન્માંધ, કાણો, એ એ બન્ને પ્રકારના બાળકો જ્યારે ગર્ભમા હોય ત્યારે જો બન્ને આંખો તેજ પ્રાપ્ત કરી લેતી નથી તો તે બાળક જન્મથી જ અંધ પેદા થાય છે. જો એક જ આખ તેજ પ્રાપ્ત કરી લે છે પણ બીજી આંખ તેજ પ્રાપ્ત કરી લેતી નથી તો તે જન્મથી જ કાણો હોય છે. એ જ તેજ જો રક્તાનુગત થઈ જાય તો બાળક રક્તાક્ષ–લાલ નેત્રવાળું થાય છે, પિત્તાનુગત થઈ જાય તો બાળક પિંગાક્ષ પીળી આંખવાળો જન્મે તે, અને જો શ્લેષ્માનુગત થાય તો તે શુક્લાક્ષ પેદા

तेजो यदि रक्तानुगतं पित्तानुगतं श्लेष्मानुगत च भवति, तदा जातकः क्रमेण रक्ताक्षः पिङ्गाक्षः शुक्लाक्षश्च भवति। तथा—विनिहतः=विनिहतचक्षुष्क इत्यर्थः; उत्पत्त्यनन्तरं यस्य नेत्रद्वयं नष्टं स विनिहत उच्यते। तथा 'सप्पिसल्लग' सपिशाचकः = पिशाचगृहीत इत्यर्थः। अथवा—सर्पिशल्यकः, इतिच्छाया। तत्र—सर्पी–सर्पतीति सर्पी, सर्पणशील इत्यर्थः। अयं हि पीठे समुपविश्य तत् जङ्घायोः कट्यां च दृढं बद्ध्वा हस्तयोः पादुके आदाय, तदाश्रयणेन सर्पति= सरति, अत एवायं सर्पीत्युच्यते। अयं किल गर्भदोषात्कर्मदोषाच्च भवति। शल्यकः=हृदयशल्यादि रोगवान्। उभयोः कर्मधारयः। तथा–व्याधिरोगपीडितः= व्याधिना–चिरस्थायिपीडया, रोगेण- सद्योघातिपीडया च पीडितो यः स तथोक्तः एषां समाहारद्वन्द्वस्तत्तथोक्तम्, तथा–'विगयाणि य मयकलेवराणि' विकृतानि च मृतकलेवराणि तथा–'सकिमिणकुहियं च' सकृमिकुथितं च–सह कृमिभिः,

---

है तो वह शुक्लाक्ष उत्पन्न होता है। विनिहत–विनिहतचक्षुउत्पत्ति के बाद जिसके नेत्र फूट जाते हैं वह विनिहतचक्षुक कहलाता है ऐसे प्राणी सपिसल्लग–पिशाचगृहीत अथवा सर्पिशल्यक–सर्पी–पीठ पर बैठ कर जो उसे दोनों जंघाओं से कटि पर मजबूती के साथ बांधकर और दोनों में दो काष्ठ आदि की पादुकाओं को लेकर उसके सहारे से सरकना है उसका नाम सर्पी है ऐसे सरकने वाले व्यक्ति को कि जो गर्भदोष से और अपने कर्मके दोष से–अशुभ कर्म के उदय से उत्पन्न होता है, ऐसा शल्यक–हृदय शल्यादि रोगवाला, व्याधिरोग पीडित– व्याधिरोग से पीडित प्राणी, अर्थात्–चिरस्थायी पीडारूप व्याधिसे तथा सद्योघाति रोगरूप पीडा से जो कष्ट पा रहा है ऐसे दुःखित जीव, इन सब को देख कर इनमें द्वेष तथा घृणा नहीं करनी चाहिये। (विगयाणिय मयकलेवराणि) विकृत हुए मृतक कलेवरों को, (सकिमिण

થાય છે વિનિહત–વિનિહતચક્ષુ–જન્મ પછી જેની આંખો ફૂટી જાય છે તે વિનિહતચક્ષુ કહેવાય છે. सपिसल्लग–પિશાચગૃહિત અથવા શર્પિશલ્યક–સાર્પી–પીઠપર બેસીને અથવા બન્ને જાંઘને કટિ પર મજબૂત રીતે બાંધીને અને બંને હાથમાં બે લાકડા આદિની ઘોડી લઈને તેની મદદથી જે જમીનપર સરકે છે તેને સર્પિ કહે છે. એ રીતે સરકનાર વ્યક્તિ કે જે ગર્ભદોષથી-અશુભ કર્મના ઉદયથી ઉત્પન્ન થાયછે, "શલ્યક"–હૃદયશલ્ય આદિ રોગવાળા, વ્યાધિ રોગપીડિતવ્યાધિ રોગથી પીડાતાં પ્રાણી એટલે કે દીર્ઘકાળથી ચાલ્યા આવતા પીડારૂપ વ્યાધિથી તથા હંમેશ રોગરૂપ પીડાથી પીડાતા દુઃખી જીવો એ બધાને જોઈને તેમના પ્રત્યે દ્વેષ કે ઘૃણા કરવી જોઈએ નહીં. "विगयाणिय मयकलेवराणि" વિકૃત થયેલ મૃત શરી-

कुथितो दुर्गन्धयुक्तो यः स तथोक्तस्तं ' दव्वरासिं ' द्रव्यराशिं-पुरीषादिद्रव्यसमूहं च दृष्ट्वा 'एवमाइएसु' एवमादिकेषु=एवं प्रकारेषु 'अमणुन्नपावगेसु' अमनोज्ञपापकेषु, तथा-एभ्यः 'अन्नेसु' अन्येषु च 'तेसु' तेषु अमनोज्ञपापकेषु समुपस्थितेषु ' समणेण ' श्रमणेन-साधुना ' न रुसियव्वं ' न रोष्टव्यम् , ' जाव ' यावत्पदात् ' न हीलितव्यम् , न निन्दितव्यम् , न खिंसितव्यम्, न छेत्तव्यम् , न भेत्तव्यम् न हन्तव्यम् , इति । पट्पदानि संग्राह्याणि । तथा-श्रमणेन , दुगुंछावत्तियावि ' जुगुप्सावृत्तिकाऽपि ' न ' लब्भा ' लभ्या ' उप्पाएउं ' उत्पादयितुम् । एवम्=अ-

---

कुहियं च दव्वरासिं) कृमिसहित सडे हुए दुर्गंधित पदार्थ को और पुरीष आदि द्रव्य समूह को देख कर के इनमें तथा (अन्नेसु य एवमाइएसु) इनसे भिन्न और जो इसी तरह के (अमणुण्णपावएसु तेसु) अमनोज्ञ अशुभ पदार्थ समक्ष उपस्थित हो उनके ऊपर (समणेणं) साधुको (न रुसियव्वं) रोष नहीं करना चाहिये । यावत् पद से (न हीलियव्वं) अवज्ञा नहीं करनी चाहिये, उनकी (न निंदियव्वं) निंदा नहीं करना चाहिये, (न खिंसियव्वं) उनकी दूसरे के सामने निंदा नहीं करनी चाहिये । इसी तरह (न छिंदियव्वं) अमनोज्ञरूप आकृति का छेदन नहीं करना चाहिये । (न भिंदियव्वं) न भेदन करना चाहिये । (न वहेयव्वं) न अनिष्ट रूपवाले व्यक्तिका वध करना चाहिये । इसी प्रकार से इन पदार्थों के ऊपर साधु को (न दुगुंछा वत्तियावि लब्भा उप्पाएउं) जुगुप्सावृत्ति भी उत्पन्न करना उचित नहीं है । (एवं) इस

રોને " सकिमिणकुहियं च दव्वरासिं " કૃમિસહિત સડતા દુર્ગંધ યુક્ત પદાર્થોને અને પુરીષ આદિ દ્રવ્ય સમૂહને જોઈ ને તેમાં તથા " अन्नेसुय एवमाइएसु " એ ઉપરાત એ જ પ્રકારના બીજા " अमणुण्णपावएसु तेसु " અમનોજ્ઞ, અશુભ પદાર્થ પાસે મોજૂદ હોય તેમના પર " समणेण " સાધુએ " न रुसियव्वं " રોષ ન કરવો જોઈએ, " न हीलियव्व " તેની અવજ્ઞા ન કરવી જોઈએ, " न " निंदिव्य " તેમની નિંદા ન કરવી જોઈ એ, "न खिंसियव्व " બીજાની આગળ નિંદા ન કરવી જોઇએ, એ જ પ્રમાણે " न छिंदियव्वं " અમનોજ્ઞ દેખાવની વસ્તુનું છેદન કરાવવુ નહીં, " न भिंदियव्व ' ભેદન કરાવવુ નહીં, " न वहेयव्व " અનિષ્ટ રૂપવાળી વ્યક્તિને વધ કરાવવો જોઈ એ નહીં. એ જ પ્રમાણે એ પદાર્થો પ્રત્યે સાધુએ " न दुगुंछा--वत्तियो वि लब्भा उप्पाएउं " જુગુપ્સા વૃત્તિ પણ રાખવી તે યોગ્ય નથી " एवं " આ રીતે " चक्खुइंदिय

नेन प्रकारेण ' चक्खुइंदियभावणाभाविओ ' चक्षुरिन्द्रियभावनाभावितो ' भवइ ' भवति ' अंतरप्पा ' अन्तरात्मा=जीवः। ततश्च 'मणुण्णामणुण्णसुब्भिदुब्भिरागदोसे' मनोज्ञामनोज्ञसुरभिदुरभिरागद्वेषे, ' पणिहियप्पा ' प्रणिहितात्मा ' साहू ' साधुः ' मणवयणकायगुत्ते ' मनोवचनकायगुप्तः, ' संवुडे ' संवृतः 'पणिहिइंदिए' प्रणिहितेन्द्रियो ' धम्मं ' धर्मं ' चरेज्ज ' चरेत्। एषां पदानां व्याख्याऽस्यैव प्रथमभावनायां द्रष्टव्या॥ सू० ८ ॥

प्रकार से (चक्खु इंदिय भावणाभाविओ अन्तरप्पा) जब चक्षु इन्द्रिय की भावना से भावित अंतरात्मा होता है तब वह (मणुण्णामणुण्ण-सुब्भिदुब्भिरागदोसे पणिहियप्पा) मनोज्ञरूप चक्षुइन्द्रिय के अशुभ विषयमें रागद्वेष से रहित होने से व्यवस्थित आत्मावाला (साहू) साधु(मणवयणकायगुत्ते) अपने मन, वचन और कायरूप योगोंको शुभ अशुभके व्यापार से सुरक्षित कर लेता है और (संवुडे) संवर से युक्त बन कर (पणिहिइंदिए) अपनी चक्षुइन्द्रिय को वशमें कर के (धम्मं) चारित्र रूप धर्म का (चरेज्ज) पालक बन जाता है।

भावार्थ—सूत्रकार ने इस सूत्रद्वारा परिग्रह विरमण व्रतकी द्वितीय भावना जो चक्षु इन्द्रिय संवर नामकी है वह कही है। इस भावनामें साधु को ऐसा विचार करना समझाया गया है कि वह इस प्रकार से अपनी चक्षुरिन्द्रिय की परिणति को ऐसी विचारधारा से सुदृढरूप में बांध कर रखे कि जिससे वह चक्षुरिन्द्रिय के विषयभूत मनोज्ञ रूपमें

भावणा भाविओ अन्तरप्पा " જ્યારે અંતરાત્મા ચક્ષુ ઇન્દ્રિયની ભાવનાથી ભાવિત થાય છે ત્યારે તે " मणुण्णामणुण्णसुब्भदुब्भिरागदोसेपणहियप्पा " મનોજ્ઞરૂપ ચક્ષુ ઇન્દ્રિયના શુભ વિષયમાં અને અમનોજ્ઞરૂપ ચક્ષુ ઇન્દ્રિયના અશુભ વિષયમાં રાગદ્વેષથી રહિત થવાથી વ્યવસ્થિત આત્માવાળો "साहू" સાધુ " मणवयणकायगुत्ते " પોતાના મન, વચન અને કાયરૂપ યોગોને શુભ અશુભ પ્રવૃત્તિથી સુરક્ષિત બનાવી લે છે અને " संवुडे " સંવરથી યુક્ત બનીને " पणिहिइंदिए " પોતાની ચક્ષુ ઇન્દ્રિયને કાબૂમાં રાખીને " धम्मं " ચારિત્રરૂપ ધર્મનો " चरेज्ज " પાલક બને છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્રદ્વારા પરિગ્રહ વિરમણ વ્રતની ચક્ષુઇન્દ્રિય સંવર નામની બીજી ભાવના બતાવી છે. આ ભાવના દ્વારા સાધુને એ વિષય સમજાવવામાં આવ્યો છે કે તે એવી પોતાની ચક્ષુઇન્દ્રિયની પ્રવૃત્તિને એવા પ્રકારની વિચાર ધારાથી બાંધી રાખે કે જેથી ચક્ષુઇન્દ્રિય વડે દૃષ્ટિગત થતા

तृतीयां भावनामाह—' तइयं ' इत्यादि—

मूलम्—तइयं घाणिंदिएण अग्घाइय गंधाइं मणुन्नभद्दगाइं, किं ते ? जलयर--थलयर--सरस--पुप्फल--पाणभोयण-कुट्ठ--तगर--पत्त--चोय--दमणग--मरुय--एलारस--पक्कमांसि--गोसीस--सरसचंदण--कप्पूरलवंग--अगुरुकुंकुमकक्कोल उसीर सेसचंदण सुगंधसारंगजुत्तिवरधूववासे उउयपिंडिमणिहारिमगंधिएसु अन्नेसु य एवमाइएसु गंधेसु मणुन्नभद्दएसु न तेसु समणेन सज्जियव्वं जाव न सइं च मइं च तत्थं कुज्जा, पुणरवि घाणिंदिएण अग्घाइय गंधाणि अमणुन्नपावगाइं, किं ते? अहिमड--अस्समड--हत्थिमड—गोमड--विग--सुणग सियाल--मणुय--मज्जार--सीह--दीविय--मय--कुहिय—विणट्ठ-

---

तथा अमनोज्ञरूपमें रागद्वेष न कर सके । मनोज्ञरूप समक्ष उपस्थित हो तो उसे देख कर उसमें रागादि परिणतिसे उसे बंध नहीं जाना चाहिये और अशुभ रूप हो तो उसमें द्वेष परिणत्ति से अपने आपको दुःखित नहीं करना चाहिये । दोनों प्रकारकी विषय संनिधानता में उसको सम-भावी रहना चाहिये । जो ऐसा नहीं करताहै वह महान् अनर्थका भागी बनता है । इस प्रकार चक्षुरिन्द्रिय की भावना से भावित हुआ वह साधु अपने त्रियोगों को शुभाशुभ रूप व्यापार से सुरक्षित रखता हुआ चक्षु इन्द्रिय को वशमें कर लेता है और चारित्ररूप धर्मका पालक बन कर अपने परिग्रह विरमणरूप व्रतको सुस्थिर बना लेता है ॥ सू०८ ॥

મનોજ્ઞ તથા અમનોજ્ઞ રૂપમા તેને રાગદ્વેષ ન થાય જો તેની સમક્ષ મનોજ્ઞ પદાર્થ હાજર થાય તો તેમનામા રાગાદિ પરિણતિથી બંધાવું જોઇએ નહીં અને જો અશુભ રૂપ હોય તો તેના પ્રત્યે દ્વેષ વૃત્તિ દાખવીને પોતાની જાતને દુખી કરવી જોઈએ નહી. બન્ને પ્રકારના વિષયો સમક્ષ તેને તો સમભાવ યુકત રહેવું જોઇએ. જે તે પ્રમાણે કરતો નથી તે મહા અનર્થને પાત્ર થાય છે આ પ્રમાણે ચક્ષુન્દ્રિયની ભાવનાથી ભાવિતબનેલ તે સાધુ પોતાના ત્રણે યોગને શુભાશુભ પ્રવૃત્તિઓથી સુરક્ષિત રાખીને ચક્ષુ ઇન્દ્રિય પર કાબૂ જમાવે છે અનેચારિત્રરૂપ ધર્મનું પાલન કરીને પોતાના પરિગ્રહ વિરમણવ્રતને સુસ્થિર બનાવે છે ॥સૂ.૮॥

किमिण-बहुदुरभिगंधाइं, अन्नेसु य एवमाइएसु गंधेसु अमणुन्नपावएसु न तेसु समणेण रूसियव्वं न हीलियव्वं जाव पणिहिइंदिए चरेज्ज धम्मं ॥ सू० ९ ॥

टीका—'तइयं' तृतीयां घ्राणेन्द्रियसंवरणाभिधेयां भावनामाह—'घाणिंदिएण' घ्राणेन्द्रिएण 'मणुन्नभद्दगाइं' मनोज्ञ भद्रकान् 'गंधाइं' गन्धान् 'अग्घाइय' अघ्राय 'किंते' कान् तान्=कथम्भूताँस्तान गन्धान् ? इत्याह—'जलयर–थलयर–सरस–पुप्फफलभोयण–कुट्ठ–तगर–पत्त–चोय दमणग–मरुय–एलारस पक्कमंसि – गोसीस–सरस–चंदण–कप्पूर–लवंग– अगर–कुंकुमकक्कोल्ल–उसीर–सेस–चंदण–सुगंधसारंग–जुत्तिवरधूववासे' जलचर–स्थलचर–सरस–पुष्प-फल–पानभोजन–कुष्ठ–तगरपत्रत्वचा दमनक–मरुकैलारस–पक्कमांसी–गोशीर्ष–

अब सूत्रकार परिग्रह विरमण व्रत की तीसरी भावना को समझाते हैं—'तइयं' इत्यादि ।

टीकार्थ-(तइयं) इस व्रतकी तीसरी भावनाका नाम घ्राणेन्द्रिय संवरण है। इस भावनावाले साधु को घ्राणेन्द्रियके मनोज्ञ भद्रक गंध को सूंघ करके राग नहीं करना चाहिये और अमनोज्ञ पापक अशुभगंधों को सुंघकर द्वेष नहीं करना चाहिये। इस सूत्रमें इसी विषय को सूत्रकार विशेषरूप से स्पष्ट करते हैं (किं ते) वह मनोज्ञ भद्रक गंध कौन हैं इस प्रकार की आशंका का उत्तर देते हुए सूत्रकार कहते हैं-(जलचर–थलचर–सरस–पुप्पफल–पाणभोयण–कुट्ठ–तगर–पत्त–चोय – दमणक–मरुय–एलारस–पक्कवमंसिगोसीस–सरसचंदण – कप्पूर–लवंग – अगुरु कुंकुम–कंकोल्ल–उसीर–सेसचंदण–सुगंध–सारंग–जुत्तिवर–धूववासे)

હવે સૂત્રકાર પરિગ્રહ વિરમણ વ્રતની ત્રીજી ભાવના સમજાવે છે—"तइयं" ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ—"तइय" આ વ્રતની ત્રીજી ભાવનાનું નામ ઘ્રાણેન્દ્રિય સંવરણ છે. આ ભાવનાવાળા સાધુએ ઘ્રાણેન્દ્રિયને માટે મનોજ્ઞ ભદ્રક ગંધને સૂંઘીને તેમાં રાગ કરવો જોઈએ નહીં અને અમનોજ્ઞ પાપક અશુભ ગંધોને સૂંઘીને તેમના પ્રત્યે દ્વેષ કરવો જોઈએ નહીં. એ જ વિષયનું સૂત્રકાર વિસ્તારથી સ્પષ્ટીકરણ કરે છે. "किं ते" તે મનોજ્ઞ ભદ્રક ગંધ શેની શેની હોય છે તે પ્રશ્નનો ઉત્તર આપતા સૂત્રકાર કહે છે કે—" जलयर–थलयर–सरस–पुप्फफल–पाणभोयण–कुट्ट–तगर–पत्त–चोय–दमणक–मरुय–एलारसपक्कमसि–गोसीस–सरसचंदण–कप्पूर–लवंग–अगुरु–कुकुम–कंकोल्ल–उसीर–सेसचंदण–सुगंध सारंग जुत्तीवर

सरसचन्दन-कर्पूर-लवङ्गागुरुकुङ्कुमकक्कोलोशीरश्वेतचन्दनसुगन्धसारङ्गयुक्तिवरधूप-वासान्-तत्र-जलचराणि=जले समुत्पन्नानि पुष्पादीनि, स्थलचराणि=स्थले समुत्पन्नानि सुगन्धिपुष्पादीनि, सरसानि-रसयुक्तानि पुष्पफलपानभोजनानि, कुष्ठं=सुगन्धिद्रव्यविशेषः, तगरः, धूपविशेषः, पत्रम्=तमालपत्रम्, 'चोयं' त्वचा=सुगन्धिवृक्षत्वचा, दमनकः=पुष्पजातिविशेषः, मरुकः='मरुआ' इति भाषाप्रसिद्धो वनस्पतिविशेषः, एलारसः=एलायाः 'इलायची' इति प्रसिद्धाया रसः, 'पिक्कमंसी' पक्कमांसी-परिपक्कगन्धद्रव्यविशेषः, गोशीर्षम्=एतन्नामकं चन्दनम्=सरसचन्दनम् =श्रीखण्डचन्दनम्, कर्पूरः-प्रसिद्धः, लवङ्गानि-प्रसिद्धानि, अगुरु=धूपविशेषः, कुङ्कुमम्='केसर' इति प्रसिद्धम्, कक्कोलः=फलविशेषः, उशीरम्=वीरणमूलं 'खश' इतिप्रसिद्धम्, श्वेतचन्दनं प्रसिद्धम्, सुगन्धसारङ्गयुक्तिवरधूपवासः=सुगन्धानां=शोभनगन्धवतां सारङ्गाणां=कमलपत्राणां युक्तिर्योजनं यत्रैतादृशो यो वरधूपवासः=धूपद्रव्यविशेषः, एतेषामितरेतरयोगद्वन्द्वः, तांस्तथोक्तानाघ्राय 'समणेण' श्रमणेन-साधुना 'उउयपिंडिमणिहारिमगंधिएसु' ऋतुजपिण्डिमनिर्हारिमगन्धिकेषु=

जलचर-जल में उत्पन्न हुए सुगंधित पुष्पों की, स्थलचर-स्थल में उत्पन्न हुए खुशबूदार फूलों की, सरस-रस युक्त पुष्प, फल, पान, भोजनों की, कुष्ठ-सुगंधित द्रव्य की, तगर-धूपविशेष की, पत्र-तमालपत्र की, चोय-सुगंधित वृक्ष की छाल की, दमनक-पुष्पजाति विशेष की, मरुक-मरुआ की, इलायची के रस की, पक्वमंसी-परिपक्वगंधद्रव्य विशेष की, गोशीर्ष चंदन की, श्रीखंडचंदन की, कपूर की, लवंग-लोगो की, अगुरुधूप की, कुंकुम-केशर की, कंकोल नामक फलविशेष की, उशीर-खश की, श्वेतचंदन की, तथा जिसमें शोभन गंधवाले कमल पत्रों का योजन-संमिश्रण-हुआ हो ऐसे उत्तम धूपविशेष की, सुगंध को सूंघ करके, तथा (उउयपिंडिमणिहारिमगंधिएसु) ऐसी सुगन्ध से युक्त द्रव्यों के

धूववासे " જલચર-જળમાં ઉત્પન્ન થયેલા સુગંધિત પુષ્પોની, સ્થળચર-જમીન પર ઉત્પન્ન થયેલાં સુગંધિત ફૂલોની, સરસ-રસદાર ફુલ, ફળ, પાન, ભોજનોની કુષ્ઠ-સુગંધિત દ્રવ્યની, તગર-એક જાતના ધૂપની, પત્ર-તમાલપત્રની, ચોય-સુગંધિત વૃક્ષની છાલની, દમનક-એક જાતના ફૂલની, મરુક-ડમરાની, એલાય-ચીના રસની, પકવમંસી-એક જાતનું સુગંધિ દ્રવ્યના, ગોશીર્ષ ચંદનની, શ્રી-ખંડ ચંદનની; કપૂરની, લવીંગની, અગુરૂ ધૂપની, કુકુમ-કેશરની; કંકોલ નામના એક જાતના ફૂલની, ઉશીર-સુગંધિવાળાની શ્વેતચંદનની; તથા જેમાં સુંદર ગંધવાળા કમળ પત્રોનુ મિશ્રણ થયું હોય એવાં ઉત્તમ પ્રકારનાં ધૂપની સુગંધ સૂંઘીને તથા "उउय पिंडिमणिहारिमगंधिएसु" જે દ્રવ્યોમાં ઋતુને

ऋतुजः=कालोचितः पिण्डिमः=पिण्डिभूतो=बहुलो निर्हारिमो दूरतरप्रदेशगामी यो गन्धः, स विद्यते येषु तेषु द्रव्येषु, तथा-' अण्णेसु य एवमाइएसु गंधेसु 'अन्येषु चैवमादिकेषु गन्धेषु, कथम्भूतेषु ? इत्याह ' मणुण्णभद्दएसु' मनोज्ञभद्रकेषु 'तेसु' तेषु गन्धेषु ' न सज्जियव्वं ' न सक्तव्यम् 'जाव ' यावत्-यावत्करणात्-न रक्तव्यम्, न गर्द्धितव्यम्, न मोहितव्यम् , न विनिघातआपत्तव्यः, न लोब्धम्, न तोष्टव्यम् , न हसितव्यम्, इतिसंग्राह्यम् । तथा-श्रमणः ' तत्थ ' तत्र गन्धविषये 'सइं च मइं च' स्मृतिं च मतिं च 'न कुज्जा' न कुर्यात् । ' पुणरवि ' पुनरप्युच्यते-' घाणिंदिएण ' घ्राणेन्द्रियेण ' अमणुण्णपावगाइ ' अमनोज्ञपापकान्,

कि जिनमें सुगन्ध ऋतु के अनुकूल पिण्डीभूत होकर रह रही हो और दूर२ प्रदेशतक जिन की वह सुगंध फैल रही हो उपस्थित होने पर उन में तथा (अण्णेसु एवमाइएसु मणुण्णभद्दएसु) इन से भिन्न इसी प्रकार के और भी जो मनोज्ञ भद्रक गंधयुक्त पदार्थ हों उनके समक्ष में आने पर (समणेण) साधु को उनकी (तेसु) उन२ मनोज्ञ भद्रक गंधों में (न सज्जियव्वं जाव न सइं च मइं च तत्थ कुज्जा) आसक्त नहीं होना चाहिये-यावत् उनमें स्मृति को और अपनी मति को नहीं लगाना चाहिये । यहां यावत् शब्द से " न रज्जियव्वं न गिज्झियव्वं, न मुज्झियव्वं, न विणिघायं आवज्जियव्वं, न लुभियव्वं, न तुसियव्वं न हसियव्वं " इन पदों का संग्रह किया गया है । इनका अर्थ पहले कर दिया गया है वहां से समझ लेना चाहिये ।

इसी तरह अमनोज्ञ पाप गंध में रोष आदि न करना चाहिये इसी बात को कहते हैं-(पुणरवि) इसी तरह से (घाणिंदिएण) घ्राणेन्द्रिय

અનુકૂળ સુગંધ ભરેલી હોય અને તેમની તે સુગંધ દૂર દૂરના પ્રદેશ સુધી ફેલાતી હોય; એવાં સુગંધિત દ્રવ્યો મોજૂદ હોય તો તેમાં તથા " अण्णेसु एवमाइएसु मणुण्णभद्दएसु " ઉપરાંત તેમના જેવા જ મનોજ્ઞ ભદ્રક ગંધવાળા જે પદાર્થો હોય તે પાસે હોય તો પણ " समणेण " સાધુએ તેમની " तेसु " તે તે મનોજ્ઞ ગંધોમા " न सज्जियव्वं जाव न सइं च मइं च तत्थकुज्जा " આસક્ત થવુ જોઈએ નહીં ત્યાંથી શરૂ કરીને તેને યાદ કરવી નહીં કે તેનો વિચાર પણ કરવો નહીં ત્યાં સુધી સમજી લેવાનું છે. અહીં यावत् શબ્દથી " न रज्जियव्वं, न गिज्झियव्वं, न मुज्झियव्वं, न विणिघायं आवज्जियव्वं, न लुभियव्वं, न तुसियव्वं, न हसियव्वं " એ પદોનો અર્થ ગ્રહણ કરવાનો છે. તેમના અર્થ આગળ આવી ગયા છે તો ત્યાંથી સમજી લેવા

એ જ પ્રમાણે અમનોજ્ઞ પાપક ગંધ પ્રત્યે રોષ આદિ કરવા જોઈએ નહીં એ વાત સૂત્રકાર કહે છે-" पुणरवि " આ રીતે ' घाणिंदिएण " ઘ્રાણે-

गंधाणि ' गन्धान् ' अग्घाइय ' आघ्राय ' किं ते ' कांस्तान्=कथंभूतांस्तान् गन्धानाघ्राय ? इत्याह- ' अहिमड-अस्समड=हत्थिमड- गोमड-विग-सुणगं-सियाल-मणुय-मज्जार- सी ह- दीवियमयकुहियविणट्ठकिमिणवहुदुरभिगंधाइं ' अहिमृताश्वमृतहस्तिमृतगोमृतवृकशुनक-शृगाल-मनुज-मार्जार-सिंह द्वीपिकमृतकुथितविनिष्टक्रमिवेदवहुदुरभिगन्धान्=तत्र-अहिमृतानि=अहीनां सर्पाणां मृतानि =मृतशरीराणि, अश्वमृतानि=अश्वानां मृतशरीराणि, हस्तिमृतानि=हस्तिनां मृतशरीराणि, गोमृतानि=गवां मृतशरीराणि, तथा-वृकस्य=ईहामृगस्य ' कोक ईहामृगो वृकः ' इत्यमरः, शुनकस्य=कुक्कुरस्य' शृगालस्य ' गीदड ' इतिप्रसिद्धस्य, मनुजस्य=मनुष्यस्य, मार्जारस्य=बिडालस्य, सिंहस्य=केशरिणः, द्वीपिकस्य=चित्रकस्य च यानि मृतानि=मृतशरीराणि, कथम्भूतानीमानि ? कुथितानि=शटितानि, अतएव-विनिष्टानि=विनष्टाकृतिकानि, कृमिवन्ति=कृमिसंकुलानि, तेषां बहुदुर-

से (अमणुण्ण पावगाइं) अमनोज्ञ अशुभ (गंधाणि) गंध-दुर्गन्ध को (अग्घाइय) सुंघकर के साधु को उसमें द्वेष-अरुचि परिणाम-अरति वृत्ति नहीं करनी चाहिये। (किं ते ?) दुर्गन्ध के विषयभूत पदार्थ कौन २ से हैं इस प्रश्न का उत्तर देनेके लिये सूत्रकार उन पदार्थों में से कितनेक पदार्थों को प्रकट करते हैं-जैसे-(अहिमड-अस्समड-हत्थिमड-गोमड-विग सुणग-सियाल-मणुय-मज्जार-सीह-दीविय-मय-कुहिय विणट्ठ किमिण बहुदुरभिगंधाइं) अहिमृतक, सर्पका मृतकलेवर, घोड़े का मृतकलेवर, हस्ती का मृतकलेवर, गाय का मृतकलेवर, वृक का मृतकलेवर, कुत्ते का मृतकलेवर, शृगाल का मृतकलेवर, मनुष्य का मृतकलेवर, बिडाल का मृतकलेवर, सिंह का मृतकलेवर. चित्रक-चीते का मृतकलेवर, ये सब जब कुथित-सड़ जाते हैं, तब इनमें कीडे पड़

न्द्रियथी " अमणुण्णपावगाइं " અમનોજ્ઞ અશુભ " गंधाणि " ગંધ-દુર્ગંધને " अग्घाइय " સૂંઘીને સાધુએ તેના પ્રત્યે દ્વેષ-અરુચિનો ભાવ-અરતિવૃત્તિ કરવા જોઈએ નહીં " किं ते " દુર્ગંધ યુકત પદાર્થો કયા કયા છે તેનો ઉત્તર આપતા સૂત્રકાર તે પદાર્થોમાંથી કેટલાંક પદાર્થોનો ઉલ્લેખ કરે છે. જેમ કે " अहिमड-अस्समड-हत्थिमड-गोमड-विग सुणग-सियाल-मणुय- मज्जार-सीह-दीविय-मय-कुहिय-विणट्ठ- किमिण-बहुदुरभिगंधाइं " અહિમૃતક-મરેલા સાપનું શરીર, ઘોડાનું મૃતશરીર, હાથીનું મૃતશરીર, વરૂનું મૃતશરીર, સિંહનું મૃત શરીર, કૂતરાનુ મૃત શરીર, શિયાળનુ મૃત શરીર, માણસનું મડદુ, ચિત્તાનું મૃત શરીર, એ બધાં જ્યારે સડે છે ત્યારે તેમાં કીડા પડે છે અને

भिगन्धान्=अत्यन्तामनोज्ञगन्धयुक्तान् अघ्राय 'समणेण' श्रमणेन-साधुना 'तेसु' 'तेषु=पूर्वोक्तेषु तथा एवमाइएसु' एवमादिकेषु-एवं प्रकारेषु 'अण्णेसु य' अन्येषु च 'अमणुन्नपावगेसु' अमनोज्ञपापकेषु गन्धेषु 'न रुसियव्वं' न रोष्टव्यम्, 'न हीलियव्वं' न हीलितव्यम्, 'जाव.' यावत्-यावत्करणात्-'न निन्दितव्यम्, न खिंसितव्यम्, न छेत्तव्यम्, न भेत्तव्यम्, न हन्तव्यम्, न जुगुप्सावृत्तिकाऽपि लभ्योत्पादयितुम्। एवं घ्राणेन्द्रियभावनाभावितो भवति अन्तरात्मा =जीवः। ततश्च मनोज्ञामनोज्ञसुरभिदुरभिरागद्वेषे प्रणिहितात्मा साधुर्मनोवचनकाय-

---

जाते हैं, और उस समय उनकी दुर्गन्ध बहुत अधिक असह्य हो जाती है सो (समणेण) साधु को इनकी दुर्गन्ध में तथा (एवमाइएसु अन्नेसु तेसु अमणुण्णपावगेसु) इनसे भिन्न इसी तरह की और भी अमनोज्ञ उन अशुभ गंधों में (न रुसियव्वं न हीलियव्वं जाव पणिहिय पंचेंदिए धम्मं चरेज्ज) रोष नहीं करना चाहिये, उनकी अवज्ञा नहीं करना चाहिगे, यहां यावत् पद से "न निंदियव्वं, न खिंसियव्वं, न छिंदियव्वं, न भिंदियव्वं, न वहेयव्वं, न दुगुंछावत्तियाविलब्भा उप्पाएउं एवं घाणिंदिय भावणा भाविओ भवइ अंतरप्पा मणुण्णामणुण्ण सुब्भि-दुब्भि रागदोसे पणिहियप्पा साहू मणवयणकाय गुत्ते संवुडे) इन पूर्वोक्त समस्त पदों का संग्रह और अर्थ पहले की तरह कर लेना चाहिये। अर्थात् निंदा, खिंसा, छेदन, भेदन, नहीं करना चाहिये और न उनके विषय में साधु को जुगुप्सा-घृणा-वृत्ति ही करनी उचित है। इस प्रकार घ्राणइन्द्रिय की भावना से भवित अन्तरात्मा होता है तब वह मनोज्ञ

ત્યારે તેમની દુર્ગંધ ઘણી જ અસહ્ય થઇ પડે છે તો "समणेण" સાધુએ તેમની દુર્ગંધ પ્રત્યે તથા "एवमाइएसु अन्नेसु तेसु अमणुण्णपावगेसु" તે ઉપરાંત તે પ્રકારની અમનોજ્ઞ અશુભ દુર્ગંધો પ્રત્યે "न रुसियव्वं न हीलियव्वं जाव पणिहिय पचेंदिए धम्मं चरेज्ज" રોષ કરવો જોઇએ નહીં, તેમની અવજ્ઞા કરવી જોઇએ નહીં. અહીં યાવત્-શબ્દથી "न निंदियव्वं, न खिंसियव्वं, न छिंदियव्वं, न भिंदियव्वं, न वहेयव्वं, न दुगुंछावत्तियाविलब्भा उप्पाएउं एवं घाणिंदियभावणाभाविओ भवइ अंतरप्पा मणुण्णामणुण्णसुब्भिदुब्भिरागदोसे पणिहियप्पासाहू मणवयकायगुत्ते संवुडे" પૂર્વોક્ત એ સઘળાં પદોને ગ્રહણ કરી લેવાના છે અને આગળ બતાવ્યા પ્રમાણે તેમનો અર્થ સમજી લેવાનો છે. એટલે કે નિંદા, ખિંસા, છેદન, ભેદન કરવું જોઇએ નહીં અને તેમના પ્રત્યે સાધુએ જુગુપ્સા-ઘૃણાવૃત્તિ પણ રાખવી જોઈએ નહીં. આ રીતે જ્યારે અંતરાત્મા ઘ્રાણેન્દ્રિયની ભાવનાથી ભાવિત થાય છે ત્યારે તે મનોજ્ઞરૂપ ઘ્રાણેન્દ્રિ-

गुप्तः संवृतः, ' इत्येतेषां संग्रहः, तथा-' पणिहिइंदिए' प्रणिहितपञ्चेन्द्रियः-प्रणिहितानि=वशीकृतानि इन्द्रियाणि येन स तथोक्तः सन् ' धम्मं ' धर्मं ' चरेज्ज' चरेत्=अनुतिष्ठेत् ॥ सू० ९ ॥

रूप घ्राणेन्द्रिय के शुभ और अमनोज्ञ के अशुभ विषय में रागद्वेष करने से रहित हो जाता है। इस प्रकार की स्थिति से युक्त बना हुआ साधु अपने मन वचन और कायरूप योगों को शुभ अशुभ व्यापार से सुरक्षित कर लेता है और घ्राणेन्द्रिय के शुभाशुभ विषय में शुभाशुभ-परिणति जन्य कर्मबंधन की निवृत्तिरूप संवर से युक्त हो जाता है और (पणिहिइंदिए चरेज्ज धम्मं) वशीकृत इंद्रियों वाला होकर चारित्ररूप धर्म का पालक बन जाता है।

भावार्थ—सूत्रकार ने इस सूत्र द्वारा परिग्रह-विरमण व्रत की तीसरी भावना का उल्लेख किया है। इस भावनाका नाम घ्राणेन्द्रिय-संवरण है। इसमें साधु अपनी घ्राणेन्द्रियको सुगंध और दुर्गन्धके संवन्ध होने पर पक्षपातिनी नहीं बनता है। यदि वह ऐसा करता है तो महान् अनर्थ का पात्र होता है। उसे नवीन कर्मों का बंधक माना जाता है। सुगंध और दुर्गन्ध के विषयभूत कितनेक पदार्थों को सूत्रकार ने इस सूत्र द्वारा समझाया है। अतः चरित्रधर्म को पूर्णरूप से पालन करने के लिये साधु का कर्त्तव्य है कि वह इस प्रकार की जबर स्थिति उसके समक्ष हो तो वह समभावी बना रहे ॥ सू० ९ ॥

યના શુભ અને અમનોજ્ઞરૂપ અશુભ વિષયોમાં રાગ અને દ્વેષથી રહિત થઈ જાય છે. આ પ્રકારની સ્થિતિથી યુક્ત થયેલ સાધુ પોતાના મન, વચન અને કાયરૂપ યોગોને શુભ અશુભ વ્યાપારથી સુરક્ષિત કરી નાખે છે, અને ઘ્રાણેન્દ્રિયના શુભાશુભ વિષયમાં શુભાશુભ પરિણતિજન્ય કર્મબંધનની નિવૃત્તિરૂપ સંવરથી યુક્ત થઇ જાય છે અને " पणिहिंइंदिए चरेज्ज धम्मं " સંયમી ઈન્દ્રિયવાળો થઈને ચારિત્રરૂપ ધર્મનું પાલન કરનાર બને છે

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્રદ્વારા પરિગ્રહ વિરમણવ્રતની ત્રીજી ભાવનાનું સ્પષ્ટીકરણ કર્યું છે. તે ભાવનાનું નામ ઘ્રાણેન્દ્રિય સંવરણ છે. તેમાં એ બતાવ્યુ છે કે સુગંધ અને દુર્ગંધનો સબધ થતાં સાધુ પોતાની ઘ્રાણેન્દ્રિયને પક્ષપાતી બનાવતો નથી જો તે એવું કરે તો મહાન અનર્થને પાત્ર થાય છે, તેને નવીન કર્મનો બાંધનાર માનવામાં આવે છે. સુગધ અને દુર્ગંધયુક્ત કેટલાક પદાર્થો સૂત્રકારે આ સૂત્રમાં દર્શાવ્યાં છે તેથી ચારિત્રધર્મનું સંપૂર્ણ રીતે પાલન કરવાને માટે સાધુનું કર્તવ્ય છે કે તેણે ઘ્રાણેન્દ્રિયના વિષયભૂત સુગંધ તથા દુર્ગંધયુક્ત પદાર્થો પ્રત્યે સમભાવ રાખવો જોઈએ. ॥ સૂ૦૯ ॥

चतुर्थी भावनामाह—'चउत्थं' इत्यादि—

मूलम्—चउत्थं जिब्भिदिएण साइय रसाणिउ मणुण्ण भद्दगाइं, किं ते? उग्गाहिम विविहपाणभोयण गुलकय खंड-कय तेल्लघयकयभक्खेसु बहुविहेसु लवणरससंजुत्तेसु, बहु-प्पकारमज्जियनिट्ठाणगदालियंब सेहंब दुद्धदहि--सरयमज्ज-वरवारुणी सीहुकाविसायण सागट्ठारसबहुप्पगारेसु य भोयणेसु य मणुण्णवण्णगन्धरसफासबहुदव्वसंभिएसु अण्णेसु य एवमाइएसु रसेसु मणुण्णभद्दएसु न तेसु समणेण सज्जि-यव्वं जाव न सइं च मइं च तत्थ कुज्जा। पुणरवि जिब्भि-दिएण साइयरसाइं अमणुण्णपावगाइं, किं ते? अरसवि-विरससीयलुक्खणिज्जप्पमाणभोयणाइं दोसी वावण्णकुहिय पूइय अमणुण्णविणट्ठप्पसूय बहुदुब्भिगंधियाइं तित्तकडुय-कसाय अंबिलरसलिंदनीरसाइं अण्णेसु य एवमाइएसु रसेसु अमणुण्णपावएसु न तेसु समणेणं रुसियव्वं जाव चरेज्ज धम्मं ॥ सू०१०॥

टीका—'चउत्थं' चतुर्थी जिह्वेन्द्रिय संवरणलक्षणां भावनामाह—'जिब्भि-दिएण' जिह्वेन्द्रियेण 'मणुण्णभद्दगाइं' मनोज्ञभद्रकान् 'रसाणि उ' रसाँस्तु

अब सूत्रकार इस व्रत की चौथी भावना को कहते हैं—

'चउत्थं' इत्यादि।

टीकार्थ–(चउत्थं) चौथी भावना का नाम जिह्वेन्द्रियसंवरण है। इस भावनाके वशवर्ती हुए साधुको जिह्वा इन्द्रियके मनोज्ञभद्रक विषयमें और अमनोज्ञ अभद्रक विषय में रागद्वेष नहीं करना चाहिये–प्रत्युत समभाव

હવે સૂત્રકાર આ વ્રતની ચોથી ભાવના બતાવે છે—" चउत्थं " ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—" चउत्थं " ચોથી ભાવનાનું નામ જિહ્વેન્દ્રિય સંવરણ છે. આ ભાવનાનું પાલન કરનાર સાધુએ જિહ્વા ઇન્દ્રિયના મનોજ્ઞ ભદ્રક વિષયોમાં અને અમનોજ્ઞ અભદ્રક વિષયોમાં રાગ દ્વેષ રાખવો જોઈએ નહીં, પણ સમ-

=वक्ष्यमाणपदार्थेषु स्थितान् 'साइय' स्वादयित्वा=अविरतगृहस्थावस्थायामास्वाद्य, 'किं ते' काँस्तान्=केषु केषु पदार्थेषु स्थितॉस्तान् ? इत्याह-'उग्गहिमविविह-पाणभोयणगुलकयखंडकय तेलघयकयभक्खेसु' अवगाहिमविविधपानभोजनगुडकृतखण्डकृततैलघृतकृतभक्ष्येषु-तत्र-अवगाहिमानि अवगाहनेन=घृततैलादिषु बोलनेन पाकतो निष्पन्नानि यानि तानि पक्वान्नानि खण्डखाद्यादीनि 'अवगाहिमानि' कथ्यन्ते, तथा-विविधानि=बहुविधानि पानभोजनानि, तथा-गुडकृतानि=गुडेन निष्पादितानि, खण्डकृतानि=खण्डेन निष्पादितानि, तैलघृतानि=तैलेन घृतेन च

ही धारण करना चाहिये, इसी विषय को सूत्रकार विशेषरूप से इस सूत्र द्वारा समझाते हैं-(जिब्भिदिएण) साधु जिह्वा इन्द्रिय से (मणुण्ण भद्दगाइं रसाणिउ) मनोज्ञ-भद्रक रसको (साइय) अस्वादित करके उसमें राग आदि न करे इस प्रकार का यहां संबंध लगा लेना चाहिये, (किं ते) यह मनोज्ञ रस किन २ पदार्थों के सहारे रहता है, इस प्रकार की आशंका का उत्तर देने के निमित्त सूत्रकार यहां उन कितनेक पदार्थों के नाम निर्दिष्ट करते हैं (उग्गाहिमविविहपाणभोयणगुलकय-खंडकयतेल्लघयकयभक्खेसु) घृत, तैल आदिका जिनमें पहिले भौंन (तला जाता) दिया जाता हैं और फिर बादमें जो उनमें ही चुरोये जाकर पकाये जाते है ऐसे खाजा आदि पक्वान्न अवगाहिम कहलाते हैं तथा अनेक प्रकारका जो पान भोजन होताहै वह विविध पान भोजन कहलाता है गुड मिला कर बनाया गया ' एवं खांड मिश्रित कर बनाया गया विशेष भोजन गुड़कृत भोजन और खंडकृत भोजन कहलाता है। तैल

ભાવ જ રાખવો જોઈએ. એ જ વિષયને સૂત્રકાર વિસ્તારપૂર્વક આ સૂત્રદ્વારા સમજાવે છે " जिब्भिदिएण " સાધુએ જીભથી " मणुण्णभद्दगाइं रसाणिउ " મનોજ્ઞ-ભદ્રક રસને " साइय " આસ્વાદ કરીને તેમા રાગ આદિ કરવાં જોઈએ નહીં. " किं ते " એ મનોજ્ઞ રસ કયા કયા પદાર્થોમાં હોય છે, તે પ્રશ્નનો ઉત્તર આપતા સૂત્રકાર અહીં એવા કેટલાક પદાર્થોના નામનો ઉલ્લેખ કરે છે " उग्गाहिम-विविहपाण-भोयण-गुलकय-खंडकय-तेल्ल-घयकय-भक्खेसु" ઘી, તેલ આદિનું જેમાં પહેલાં જેમાં મોણ દેવાય છે અને પછી તેમા જ તળીને પક-વવામાં આવે છે એવા ખાજા આદિ પકવાનને અવગાહિમ કહે છે. તથા અનેક પ્રકારના જે પાન (પી શકાય તેવા) ભોજન હોય છે તેમને વિવિધ પાન ભોજન કહે છે, ગોળ નાખીને બનાવેલા ભોજનને ગુડકૃત અને ખાંડ નાખીને બનાવેલા ભોજનને ખાંડકૃત ભોજન કહે છે. તેલ અને ઘીમાં બનાવેલ લાડુ

निष्पादितानि यानि भक्ष्याणि=मोदकादीनि तानि, एषां द्वन्द्वस्तेषु तथोक्तेषु तथा 'बहुविहेसु' बहुविधेषु-विविधप्रकारेषु 'लवणरससंजुत्तेसु' लवणरससंयुक्तेषु भक्ष्येषु=शाकवटाकादिषु तथा-' बहुप्पगारमज्जिय-निट्ठाणगदालियंबसेहंबदुद्धदहि सरय-मज्जवरवारुणी सीहुकाविसायणसागट्ठारसबहुप्पगारेसु' बहुप्रकारमज्जिकानिष्ठानक दालिकाम्लसेधाम्लदुग्धदधिसरकमद्यवरवारुणी सीधुकापिशायनशाकाष्टादशबहुप्रकारेषु-तत्र-एतदास्वादनं गृहस्थावस्थासु बोध्यम्, संयमावस्थासु सर्वथा तद्वर्जनात्, बहुप्रकारा=बहुविधा, मार्जिता=रसाला=दधिशर्करादिनिष्पादितसुगन्धद्रव्यवासित-खाद्यविशेषः, श्रीखण्डेतिभाषाप्रसिद्धः, निष्ठानकं=प्रकृष्टमूल्यनिष्पादितो भक्ष्यविशेषः तदुक्तम्- 'निट्ठाणंति जा सयसहस्सं' इति, अयं भावः-यल्लक्षमुद्राभिर्निष्पाद्यते तद् भक्ष्यविशेषो निष्ठानमुच्यते। यद्वा-भक्ताद्यन्नोपसेचनेन संपादिते दध्यादिव्यञ्जने 'करबा' इतिभाषाप्रसिद्धे, तथा दालिकाम्लम्=मरीचराजिकादि संस्कृतोद्विदलनि-

---

और घृतमें बनायागया मोदकादि भोजनीय पदार्थ तैलकृत और घृतकृत भोजन कहलाता है। इन खाद्य पदार्थों में तथा और भी (बहुविहेसु) अनेक प्रकारके (लवणरससंजुत्तेसु) लवणरसमिश्रित शाक, बड़ा आदि खाद्यपदार्थ विशेष है उनमें तथा (बहुप्पगार-मज्जिय-निट्ठाणग -दालियंब-सेहंब-दुद्ध-दहि-सरय-मज्ज-वरवारुणी-सीहु-का विसा-यण-सागट्ठारस-बहुप्पगारेसु-भोयणेसु य) पहिले गृहस्थावस्था में उपयोगमें लाये गये बहुविध भोजनीयपदार्थ जैसा मार्जिता-रसाला-दधि शर्करा आदिसे निष्पादित तथा सुगंधित द्रव्यसे वासित खाद्यविशेष कि जिसे श्रीखंड कहते हैं, उनमें निष्ठानक-एक लाख रुपये लगा कर निष्पादित किये गये भक्ष्य विशेषमें अथवा मेहरी-रावडी में, दालिकाम्लमें-मरीच राई में संस्कृत हुए तथा द्विदल चना आदि के आटे-वेसन आदिसे

આદિ ખાદ્ય પદાર્થને તેલકૃત અને ઘૃતકૃત ભોજન કહે છે. એ ખાદ્ય પદાર્થોમાં તથા બીજા પણ જે " बहुविहेसु " અનેક પ્રકારના " लवणरससंजुत्तेसु " લવણરસ મિશ્રિત શાક, વડા આદિ ખાદ્ય પદાર્થો છે તેમાં તથા " बहुप्पगार -मज्जिय-निट्ठाणग-दालियंब-सेहंब-दुद्ध-दहि-सरय-मज्ज-वरवारुणी-सीहु-काविसायण-सागट्ठारसबहुप्पगारेसु भोयणेसु य " પહેલાં ગૃહસ્થાવસ્થામાં ઉપયોગમાં લીધેલ અનેક પ્રકારના ખાદ્યો જેવા કે દહીં, ખાંડ આદિમાંથી તૈયાર કરેલ તથા સુગંધિત દ્રવ્યથીયુક્ત એક ખાસ ભોજન જેને શિખંડ કહે છે. તેમાં निष्ठानक-એક લાખ રૂપીયા ખરચીને તૈયાર કરાવેલ ખાસ ભોજનમાં અથવા मेहरी-દૂધપાકમાં, દાલિકામ્લમાં-મરચાં, રાઈ, મેથી, જીરૂં આદિનો વઘાર કરેલ તથા ચણા આદિના

ष्पादितोव्यञ्जनविशेषः 'कढ' इतिभाषाप्रसिद्धो, सेधाम्लम्=खाद्यविशेषः, पक्वं सद् यदम्लेन संस्क्रियते तत्खाद्यं सेधाम्लमुच्यते । दुग्धंदधि च प्रसिद्धम्, सरकः=गुड-धातकीपुष्पादिना सिद्धः 'सरकाः' इति भाषाप्रसिद्धाः, मद्यं-पैष्टं गोधूमादिचूर्ण-निष्पन्नम्, वरवारुणी=श्रेष्ठमदिरा, सीधुः=आसवः-इक्ष्वादिजनितमद्यम्, कापिशा-यनम्=कापिशी नाम नगरी तस्यां जातं द्राक्षानिर्मितं विशिष्टमद्यम्, एतान्यपि मद्यानि गृहवस्थावस्थासु समास्वादितानि न तु संयमावस्थायामिति बोध्यम्, तथा शाका अष्टादश-अष्टादशसंख्यकाः शाकाः, एषां बहुव्रीहिसमासे तानि तथो-क्तानि, तानि च बहुप्रकाराणीतिकर्मधारयः, तेषु तथोक्तेषु 'मणुन्नवन्नगंधरसफा-सबहुदव्वसंभिएसु' मनोज्ञवर्णगन्धरसस्पर्शबहुद्रव्यसंभृतेषु=मनोहरवर्णगन्धरसस्पर्श-वद् बहुविधद्रव्यसंस्कृतेषु 'भोयणेसु' भोजनेषु च स्थितान् रसान् गृहस्थावस्था-

बनाये गये "कढी" रूप व्यंजनमें, सेंधाम्लमें पका कर के जो खटाई से संस्कृत किया गया हो, ऐसे खाद्यविशेष में, दुग्ध, दधिमें गुड़, धातकी पुष्प-महुआ-इन दोनों के मेल से बनाये गये सरका में, गोधूम-गेहूंके आटेसे निष्पन्न किये गये मद्य-पैष्ट मद्य में, वरवारुणी-उत्तम मदिरा में मुनि अवस्था में नहीं, किन्तु गृहस्थावस्थामें उपयोग में लाई गई श्रेष्ठ मदिरा वराण्डी में, सीधु-आसव इक्षु आदिके रससे बनाये गये मद्यमें, कापिशायन-कापिशी नामकी नगरी में द्राक्षाओं से बनाये विशिष्ट मद्यमें तथा अठारह प्रकार के शाकों में, इत्यादि अनेक प्रकार के भक्ष्य पदार्थों में तथा (मणुन्नवन्नगंधरसफासबहुदव्वसंभिएसु भोयणेसु य) मनोज्ञ वर्ण, गंध, रस और स्पर्शवाले अनेकविध द्रव्यों से निष्पन्न हुए भोजनों में स्थित रसों को गृहस्थावस्थामें आस्वादित करके उनमें, तथा

લોટમાંથી બનાવેલ 'કઢી' નામના વ્યંજનમાં, સેંધામ્લમાં-પકાવીને ખટાશ ઉમેરવામાં આવી હોય એવાં ખાદ્યોમાં, દૂધ, દહીંમાં ગોળ, ધાતકી પુષ્પ-મહુડા એ બન્નેના મિશ્રણથી બનાવેલ સરકામાં, ગોધૂમ-ઘઉંના લોટમાથી તૈયાર કરેલ મદ્ય-પૈષ્ટમદ્યમાં, વરવારુણી-ઉત્તમ મદિરામાં, મુનિ અવસ્થામાં નહીં પણ ગૃહ-સ્થાવસ્થામાં ઉપયોગમાં લીધેલ શ્રેષ્ઠ મદિરા-વરાંડીમાં, સીધુ-આસવ-શેરડી આદિના રસમાથી બનાવેલ મદિરામાં, કાપિશાયન-કાપિશી નામની નગરીમાં દ્રાક્ષમાંથી બનાવેલ એક વિશિષ્ટ મદ્યમાં, તથા અઢાર પ્રકારનાં શાકમાં ઈત્યાદિ અનેક પ્રકારનાં ખાદ્ય પદાર્થોમાં તથા "मणुन्नवन्नगंधरसफासबहुदव्व संभिएसु भोयणेसु य" મનોહર વર્ણ, ગંધ, રસ અને સ્પર્શવાળા અનેક પ્રકારનાં દ્રવ્યોમાંથી તૈયાર કરાવેલ ભોજનોમાં રહેલ રસોનો ગૃહસ્થાવસ્થામાં સ્વાદ

यामास्वाद्य तेषु तथा—' अन्नेसु य ' अन्येषु च = एतद्भिन्नेषु ' एवमाइएसु ' एवमादिकेषु = पूर्वोक्तसदृशेषु— ' मणुण्णभद्दएसु ' मनोज्ञभद्रकेषु रसेषु कथम्भूतेषु रसेषु ? तेषु=ये रसा अविरतगृहस्थावस्थायामास्वादितास्तेषु ' समणेण ' श्रमणेन=श्रमणावस्थास्थितेन मुनिना 'न सज्जियव्वं' न सक्तव्यम् 'जाव' यावत्=यावत्करणात्–न रक्तव्यम् , न गर्द्धितव्यम् , न मोहितव्यम् , न विनिघात आपत्तव्यः, न लोब्धव्यम् , न तोष्टव्यम् , न हसितव्यम् , एषामर्थः प्रथमभावनायामुक्तः ! न च श्रमणः ' तत्थ ' तत्र–गृहस्थावस्थोपभुक्तरसेषु ' सइं च ' स्मृतिं च=स्मरणमपि, ' मइं च ' मतिं च=श्रमणावस्थायां तदुपभोगबुद्धिमपि 'कुज्जा ' कुर्यात् । ' पुणरवि ' पुनरप्युच्यते–' जिब्भिदिएण ' जिह्वेन्द्रियेण ' अमणुन्नपा-

---

(अन्नेसु एवमाइएसु मणुन्नभद्दएसु) दूसरे और इसी प्रकारके मनोज्ञ भद्रक रसों में कि जो अविरत नित्य गृहस्थावस्था में आस्वादित किये हुए थे (समणेण) श्रमण अवस्था में स्थित हुए मुनि को (न सज्जियव्वं जाव न सइं च मइं च तत्थ कुज्जा) आसक्तचित्त नहीं बनना चाहिये यावत् उसे उनकी स्मृति नहीं करना चाहिये और उनमें अपनी कि मैं श्रमणावस्था में इनका भोग करूं इस प्रकार बुद्धि को भी नहीं लगाना चाहिये । यहां यावत् शब्द से " न रज्जियव्वं, न गिज्झियव्वं, न मुज्झियव्वं, न विणिघायं आवज्जियव्वं, न लुभियव्वं, न तुसियव्वं, न हसियव्वं " इन पूर्वोक्त पदों का ग्रहण किया गया है । इन सबका अर्थ प्रथम भावना में लिखा जा चुका है । (पुणरवि) इसी तरह फिर (जिब्भिदिएण) जिह्वा इन्द्रिय से (अमणुन्नपावगाइं रसाइं) अरुचिका-

---

લઈને તેમનામાં તથા " अन्नेसु एवमाइएसु मणुन्नभद्दएसु " એ જ પ્રકારના બીજા ભદ્રક મનોજ્ઞ રસોમાં કે જેનો ગૃહસ્થાવસ્થામાં સદા સ્વાદ લેવાતો હતો તેમાં " समणेण " સાધુ અવસ્થામાં રહેલ મુનિએ " न सज्जियव्वं जाव न सइं च मइं च तत्थ कुज्जा " " આસક્ત થવું જોઈએ નહીં " ત્યાંથી શરૂ કરીને "તેણે તેમને યાદ કરવા જોઈએ નહીં. અને હુ શ્રમણ – અવસ્થામાં તેમનો ઉપભોગ કરૂં એવો વિચાર પણ કરવો જોઈએ નહી " ત્યાં સુધીનો અર્થ ગ્રહણ કરવાનો છે.

અહીં ' यावत् ' શબ્દથી " न रज्जियव्वं, न गिज्झियव्वं, न मुज्झियव्वं, न विणिघायं आवज्जियव्वं, न लुभियव्वं, न तुसियव्वं न हसियव्वं" એ પૂર્વોક્ત પદો ગ્રહણ કરાયેલ છે એ બધાનો અર્થ પહેલી ભાવનામા અપાઇ ગયો છે " पुणरपि " એ રીતે " जिब्भिदिएण " જીભથી " अमणुन्नपावगाइं रसाइं "

चगाइं'' अमनोज्ञपापकान्=अरुचिकरान् , ' रसाइं ' रसान् 'साइय' स्वादयित्वा, ' किं ते ' कांस्तान्=कथंभूतांस्तान् रसान् । इत्याह–' अरसविरससीयलुक्खणिज्जप्पपाणभोयणाइं' अरसविरसशीतलरूक्षनिर्याप्यपानभोजनानि, तत्र–अरसानि =रसरहितानि=हिङ्ग्वादिसंस्कारवर्जितानि, विरसानि=विगतरसानि=पर्युषितानि, शीतानि=शीतलानि रूक्षाणि=घृतादिलेशवर्जितानि, निर्याप्याणि=बलवर्द्धनशक्तिरहितानि यानि पानभोजनानि तानि तथोक्तानि, तथा–' दोसीणवावन्नकुहिय-पूइय–अमणुन्नविणट्ठ–पसूय–बहुदुब्भिगंधियाइं ' दोषान्नव्यापन्नकुथितपूतिकामनोज्ञ विनष्टप्रसूतबहुदुरभिगन्धितानि, तत्र–' दोसीण ' त्ति–दोषान्नं=दोषा–रात्रिस्तत्र पक्वं यदन्नं, रात्रिपर्युषितमित्यर्थः, व्यापन्नं=विनिष्टं वर्णम् , कुथितं=कोथयुक्तम् , शटितमित्यर्थः, पूतिकम्=गन्धयुक्तम् , अत एव–अमनोज्ञम्=असुन्दरम् , विनष्टम्= अत्यन्तविकृतावस्थामाप्तम् , ततः प्रसूतः=प्रादुर्भूतो यो बहु दुरभिगन्धः=अतिदुर्गन्धः स जातो येषु तानि तथोक्तानि, तथा–' तित्तकडुयकसायअंबिलरसलिंदनीरसाइं '

रक रसों का (साइय) आस्वादन करके उनमें साधु को राग द्वेषभाव धारण नहीं करना चाहिये । (किं ते ?) अरुचिकारक रस कौन २ से हैं इस प्रश्न का समाधान करने के निमित्त सूत्रकार कहते हैं—(अरसविरससीयलुक्खणिज्जपाणभोयणाइं) अरस–हिङ्गु आदि के बघार से वर्जित, विरस—रस से विहीन–पर्युषित, शीत–शीतल–ठंडे, रूक्ष–घृतादि के लेश से रहित, निर्याप्य–बल बढाने की शक्ति से रहित, तथा (दोसीणवावन्नकुहिय पूइय अमणुन्नविणट्ठपसूयबहुदुब्भिगंधियाइं) दोसीण-रात्रिमें पकाये गये व्यापन्न–विनष्ट वर्णवाले, कुथित–सडे हुए पूतिक दुर्गंधयुक्त, अतएव मनोज्ञ–असुन्दर तथा विनष्ट–अत्यंत विकृत अवस्था वाले और इसी कारण जिनमें से अत्यंत दुर्गंध निकल रही हो ऐसे तथा जो (तित्तकडुयकसायअंबिलरसलिंदनीरसाइं) मरीच–मिर्च के जैसा

અરુચિકર રસોનું "साइय" આસ્વાદન કરીને તેમનામાં સાધુએ દ્વેષભાવ રાખવો જોઈએ નહીં. " किं ते ? " અરુચિકારક રસ કયા કયા છે એ પ્રશ્નનું સમાધાન કરવાને માટે સૂત્રકાર કહે છે—" अरसविरससीयलक्खणिज्जप्पपाणभोयणाइं " અરસ–હિંગ આદિના વઘારથી રહિત, વિરસ-રસરહિત–પર્યુષિત, શીત –શીતળ–ઠંડા, રૂક્ષ–ઘી વિનાનું, નિર્યાપ્ય–બળ વધારવાની શક્તિથી રહિત, તથા " दोसिणवावन्नकुहियपूइयअमणुन्नविणट्ठपसूयबहुदुब्भिगंधियाइं " દોસીણ –રાત્રે રાંધેલ, વ્યાપન્ન-વિનષ્ટ વર્ણવાળું–કુથિત–સડેલ, પૂતિક–દુર્ગંધવાળા, તેથી અમનોજ્ઞ–અસુંદર તથા વિનષ્ટ–અત્યંત વિકૃત અવસ્થાવાળા અને એ કારણે જેમાંથી અત્યંત દુર્ગંધ નીકળતી હોય તેવા, તથા જે " तित्तकडुयकसायअंबिल

तिक्तकटुककषायाम्लरसलिन्द्रनीरसानि = तत्र तिक्तं-मरीचवत्, कटुकं-निम्बवत्, कषायम्=आमलफलवत्, आम्लरसम्=अम्लिल 'इमली' कावत्, लिन्द्र=सशैवाल-पुराणजलवत्, नीरसं=विगतरसम् एषां द्वन्द्वस्तानि तथोक्तानि' आस्वाद्य-उपर्युक्तारसविरसादि पानभोजनस्थितानमनोज्ञपापकान् रसानास्वाद्येत्यर्थः, 'समणेण' श्रमणेन-साधुना 'तेसु' तेषु=उक्तेषु 'अमणुन्नपावएसु' अमनोज्ञपापकेषु 'रसेसु' रसेषु तथा-एभ्यः 'अन्नेसु' अन्येषु 'एवमाइएसु' एवमादिकेषु=एवं प्रकारेषु च-अमनोज्ञपापकेषु रसेषु 'न रोसियव्वं' न रोष्टव्यम्, 'जाव' यावत्करणात्-न हीलितव्यम्, 'न निंदितव्यं, न खिंसितव्यम्, न छेत्तव्यम्, न

तिक्त हो-चरपरा हो, कटुक-नीम के जैसा कडुवा हो, आमले के जैसा कषाय रसवाला हो, कच्ची कैरी-अमिया के जैसा जो खट्टा हो, लिंद्र-शैवालसहित पुराने जलके समान हो, विगतरस हो ऐसे इन उपर्युक्त अरस विरस आदि पान भोजनमें स्थित अमनोज्ञ पापक-अरुचिकारक रसों को आस्वादित करके (समणेण) मुनि को (तेसु) उन (अमणुन्नपावएसु) अमनोज्ञ पापक-अरुचिकारक-रसोंमें तथा (अण्णेसु एवमाइएसु रसेसु) इसी प्रकार के और भी इनसे भिन्न रसों में (न रुसियव्वं जाव चरेज्ज धम्मं) रोष नहीं करना चाहिये। " न हीलियव्वं, न निंदियव्वं, न खिंसियव्वं, न छिंदियव्वं, न भिंदियव्वं, न वहेयव्वं, न दुगुंछावत्तियावि लब्भा उप्पाएउं " उनकी अवज्ञा नहीं करनी चाहिये, उन्हें देखकर उनपर खिसयाना-परोक्ष में निंदा नहीं करनी चाहिये। तथा अमनोज्ञ रसस्थित द्रव्यका छेदन नहीं करना चाहिये, भेदन एवं

રસલિંદ્નીરસાઇं " મરીચ-મરચાં જેવાં તીખાં હોય, ચરપરા હોય, કટુક-લીમડા જેવાં કડવા હોય, આમળા જેવાં તુરા હોય, કાચી કેરી જેવાં ખાટાં હોય, લિંદ્ર-જે શેવાળયુક્ત પુરાણા પાણી જેવાં હોય, વિગત રસ હોય, એવાં ઉપર કહેલા અરસ વિરસ આદિ ભોજનોમાં રહેલ અમનોજ્ઞ પાપક-અરુચિકર રસોનું આસ્વાદન કરીને " समणेण " મુનિએ " तेसु " તે "अमणुन्नपावएसु" અમનોજ્ઞ પાપક-અરુચિકર રસોમાં તથા " अण्णेसु एवमाइएसु रसेसु " એ જ પ્રકારના બીજા રસોમાં પણ " न रुसियव्वं जाव चरेज्जधम्मं " રોષ કરવો જોઈએ નહીં. " न हीलियव्वं, न निंदियव्वं, न खिंसियव्वं, न छिंदियव्वं, न भिंदियव्वं, न वहेयव्वं, न दुगुंछावत्तियावि लब्भा उप्पाएउं " તેમની અવજ્ઞા ન કરવી જોઈએ, તેમને જોઈને તેમની પરોક્ષ રીતે નિંદા ન કરવી જોઈએ, તથા અરુચિકર રસવાળા દ્રવ્યનું છેદન ન કરવુ જોઈએ, ભેદન અને નાશ ન કરવો

भेत्तव्यम् न हन्तव्यम् न जुगुप्सावृत्तिकाऽपि लभ्या उत्पादयितुम्। एवं जिह्वेन्द्रियभावनाभावितो भवति अन्तरात्मा=जीवः मुनिः। ततश्च—मनोज्ञामनोज्ञसुरभिदुरभिरागद्वेषे प्रणिहितात्मा साधुर्मनोवचनकायगुप्तः संवृतः प्रणिहितेन्द्रियः—एषां संग्रहो वोध्यः 'धम्मं' धर्मं 'चरेज्ज' चरेत्=अनुतिष्ठेत् ॥ सू० १० ॥

नाश नहीं करना चाहिये। और न अपने मनमें भी उस पर जुगुप्सा वृत्ति जगे ऐसी चेष्टा ही करनी चाहिये। इस प्रकार से 'जिह्वाइन्द्रिय मुझे वशमें करनी चाहिये अन्यथा महान् अनर्थ का भागी मुझे होना पडेगा' इस प्रकारकी जिह्वा इन्द्रियकी भावना से भावित जब मुनि हो जाता है तब वह मनोज्ञरूप एवं अमनोज्ञरूप सुरभिदुरभि इस में राग द्वेष करने से रहित वन जाता है। इस प्रकारकी स्थिति से संपन्न बना हुआ साधु अपने मन, वचन, और कायरूप तीन योगों को शुभ और अशुभ के व्यापार से रहित कर लेता है और इस इन्द्रिय के संवरणसे युक्त वन जाता है। इस तरह रसनेन्द्रिय के संवरणसे युक्त होकर वह चारित्ररूप धर्मका पालन करने में सर्व प्रकारसे दृढ हो जाता है।

भावार्थ—इस सूत्रद्वारा सूत्रकारने इस व्रत की चौथी भावना का स्वरूप प्रदर्शित किया है। उसमें उन्होंने यह समझाया है कि साधुको अपनी रसना इन्द्रिय को रुचिकारक एवं अरुचिकारक रसों के आस्वादजन्य रागद्वेषके पक्षपात से रहित कर लेनी चाहिये, तभी जा कर वह रसनेन्द्रिय विजयी हो सकता है। ऐसा नहीं होना चाहिये कि

જોઈએ. પોતાના મનમા કે પારકાના મનમાં તેના પ્રત્યે જુગુપ્સાવૃત્તિ થાય તેવું વર્તન કરવું જોઈએ નહી, આ રીતે "મારે જિહ્વા ઈન્દ્રિયને વશ રાખવી જોઈએ. નહી તે મારે મહાન અનર્થને પાત્ર બનવુ પડશે." આ પ્રકારની જિહ્વા ઈન્દ્રિયની ભાવનાથી જ્યારે મુનિ ભાવિત થાય છે ત્યારે તે મનોજ્ઞરૂપ અને અમનોજ્ઞ રૂપ, સુંદર અને અસુંદર દ્રવ્યો પ્રત્યે રાગ દ્વેષથી રહિત બની જાય છે. આ પ્રકારની ભાવનાથી યુક્ત બનેલ સાધુ મન, વચન અને કાય, એ ત્રણે યોગોને શુભ અને અશુભ વ્યાપારથી રહિત કરી લે છે. અને આ ઈન્દ્રિયના સંવરણથી યુક્ત બની જાય છે. આ રીતે રસના ઈન્દ્રિયના સંવરણથી યુક્ત થઈને તે ચારિત્રરૂપ ધર્મનુ પાલન કરવામા બધી રીતે દૃઢ બની જાય છે.

ભાવાર્થ—આ સૂત્ર દ્વારા સૂત્રકારે આ વ્રતની ચોથી ભાવનાનું સ્વરૂપ પ્રગટ કર્યું છે તેમાં તેમણે સમજાવ્યું છે કે સાધુએ પોતાની રસના ઈન્દ્રિયને રુચિકર અને અરૂચિકર રસોના આસ્વાદનને કારણે ઉત્પન્ન થતાં રાગદ્વેષને પક્ષપાતથી રહિત કરવી જોઈએ, ત્યારે જ તે રસનેન્દ્રિય પર વિજય મેળવી શકે

पञ्चमीं भावनामाह—' पंचमं ' इत्यादि—

मूलम्—पंचमं पुण फासिंदिएण फासिय फासाइं मणुन्नभद्दकाइं, किं ते ? दग मंडव–हार-सेयचंदण-सीयल-विमल-जल-विविह- कुसुमसत्थर--ओसीरमुत्तिय--मुणालदोसिणा पेहुण उक्खेवग–तालियंटवीयणग - जणिय–सुहसीयले य पवणे गिम्हकाले, सुहफासाणि य बहूणि सयणाणि य आसणाणि णे य पाउरणगुणे य सिसिरकाले, अंगारप्पयावणा

रुचिकारक रस मिल जावे तो चित्तमें उसके प्रति रागभाव उद्भूत हो जावे और अरुचिकारक रस मिल जावे तो उसमें द्वेषभाव उत्पन्न हो जावें। दोनों प्रकारके रसों में समताभाव धारण करना साधु का सर्व प्रथम कर्तव्य है। इसी विषयको लेकर इस सूत्रमें रुचिकारक रसके आश्रयभूत उग्गाहिम आदि कितनेक पदार्थों को तथा अरुचिकारक रस के आश्रयभूत अरसविरस आदि पदार्थों को कहा गया है। तथा साथर में यह समझाया गया है कि गृहस्थावस्था में जिन रुचिकारक रसों का आस्वाद लिया था वे रस साधु अवस्था में स्मरण करने योग्य नहीं हैं। कारण कि उनकी स्मृति से जिह्वा इन्द्रिय में रसके प्रति लोलुपता बढ़ती है। इस प्रकार से रसना इन्द्रिय के विषय में समभाव रखनेवाला साधु चारित्र धर्मका निर्वाह अच्छी तरह से करनेवाला हो जाता है ॥सू०१०॥

છે એવું ન બનવું જોઇએ કે રૂચિકર રસ મળે તો તેના પ્રત્યે ચિત્તમાં રાગભાવ પેદા થઇ જાય છે, અને અરૂચિકર રસ મળે તો દ્વેષભાવ પેદા થાય. બન્ને પ્રકારના રસો પ્રત્યે સમભાવ રાખવો તે સાધુનું પહેલુ કર્તવ્ય છે. એ વિષયનું વર્ણન કરતાં આ સૂત્રમા રૂચિકર રસયુક્ત ઉગ્ગાહિમ આદિ કેટલાક પદાર્થોને તથા અરૂચિકર રસયુક્ત અરસવિરસ આદિ પદાર્થોને બતાવ્યા છે તથા સાથે સાથે એ સમજાવ્યું છે કે ગૃહસ્થાવસ્થામા જે રૂચિકારક રસોનો સ્વાદ લીધો હતો તે રસોનું સાધુ અવસ્થામાં સ્મરણ કરવુ તે પણ યોગ્ય નથી. કારણ કે તેને યાદ કરવાની જિહ્વા ઇન્દ્રિયમાં રસના પ્રત્યે લાલસા વધે છે. આ રીતે રસના ઇન્દ્રિયની બાબતમાં સમભાવ રાખનાર સાધુ ચરિત્ર ધર્મનું સારી રીતે પાલન કરનાર બની જાય છે. ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

य आयवनिद्धमउय-सीय उसिणलहुया य जे उउसुहफासा अंगसुहनिव्वुइकरा ते, अन्नेसु य एवमाइएसु फासेसु मणुन्न-भद्दएसु न तेसु समणेण सज्जियव्वं, न रज्जियव्वं, न गिज्झि-यव्वं, न मुज्झियव्वं, न विणिघाय आवज्जियव्वं, न लुभि-यव्वं, न अज्झोववज्जियव्वं, न तूसियव्वं, न हसियव्वं, न सइं च मइं च तत्थकुज्जा। पुणरवि फासिंदिएण फासिय फासाइं अमणुन्नपावगाइं, किं ते? अणेगवहबंध-तालणं-कण-अइभारारोवण-अंगभंजण-सुईनखप्पवेस-गायपच्छण-लक्खारसखारतेल्लकलकलंत---तउसीसककाललोह--सिंचण-हडिबंधण रज्जुनिगल-संकलन हत्थंडुयकुंभिपाकदहण-सीह-पुच्छण-सूलभेय--गयचलणमलण-करचरणकन्ननासोट्ठसीसछे-यण-जिब्भच्छेयण-वसणनयण हिययदंतभंजण-जोत्तलयकस-प्पहारपादपण्हिजाणुपत्थरनिवायपीलणक --विकच्छुअगणि विच्छुयडक्कवायायवदंसमसगनिवाए दुट्ठणिसज्जदुन्निहिया कक्खड-गुरुसीयउसिणलुक्खेसु बहुविहेसु अन्नेसु य एवमाइएसु फासेसु अमणुन्न पावगेसु न तेसु समणेण रूसियव्वं, न हीलि-यव्वं, न निंदियव्यं, न गरहियव्वं, न खिंसियव्वं, न छिंदियव्वं, न भिंदियव्वं, न वहेयव्वं, न दुगुंछावत्तियाविलब्भा उप्पाएउं एवं फासिंदियभावणाभाविओ भवइ अंतरप्पा मणुन्नामणु-न्नसुब्भिदुब्भिरागदोसपणिहियप्पा साहू मयवयणकायगुत्ते संवुडे पणिहिइंदिए चरेज्ज धम्मं ॥ सू० ११ ॥

टीका—' पुण ' पुनः ' पंचमं ' पञ्चमी स्पर्शेन्द्रियसंवरणाभिधेयां भावनामाह—' फासिदिएण ' स्पर्शेन्द्रियेण ' मणुण्णभद्दगाइं ' मनोज्ञभद्रकान् 'फासाइं' स्पर्शान् 'फासिय' स्पृष्ट्वा 'किं ते' काँस्तन्–कथम्भूताँस्तान्? इत्याह–'दगमंडव –हार–सेय चंदणसीयलविमलजलविविहकुसुमसत्थर उसीर-मुत्तियमुणालदोसिणा ' दकमण्डपहारश्वेतचन्दनशीतलविमलजलविविधकुसुमसंस्तरोशीरमौक्तिकमृणालज्योत्स्नाः, तत्र–दकमण्डपाः=उदकमण्डपाः, जल यन्त्रस्थानानीत्यर्थः, हाराः प्रतीताः, श्वेतचन्दनानि=श्रीखण्डचन्दनानि, शीतलविमलजलानि = शीतलानि = विमलानि

अब सूत्रकार इस व्रतकी पांचवी भावना कहते हैं–'पंचमं पुण' इ०

टीकार्थ—(पंचमं पुण) पाँचवीं भावना स्पर्शनेन्द्रिय संवर नाम की है। वह इस प्रकार से है–(फासिदिएण) स्पर्शन इन्द्रिय से (मणुण्ण–भद्दगाइं फासाइं) मनोज्ञ भद्रक–स्पर्शन इन्द्रिय को सुखकारक–स्पर्शों को (फासिय) स्पर्श कर के साधु को उन में रुचिभाव–रागपरिणति नहीं करना चाहिये, इस प्रकार से यहां संबंध लगा लेना चाहिये—(किं ते ?) रुचिकारक स्पर्श के विषयभूत कौन २ से पदार्थ हैं, इस प्रकार के प्रश्नका उत्तर देते हुए सूत्रकार उन कितनेक पदार्थों को नाम निर्देशपूर्वक कहते हैं—(गिम्हकाले दगमंडव–हार–सेयचंदण–सीयल विमल-जलविविहकुसुमसत्थ–ओसीर–मुत्तिय–मुणाल–दोसिणा–पेहुण–उक्खेवग–तलियंट–वीयणग–जणिय सुहसीयले य पवणे) ग्रीष्मकालमें दकमंडप–जल के फुआरे जहां जल वरसाकर स्थान को ठंडा रखते हों,–ऐसा जल यंत्र स्थान, हार श्वेतचंदन–श्रीखंडचंदन, शीतल, निर्मल

હવે સૂત્રકાર આ વ્રતની પાંચમી ભાવના બતાવે છે—

" पंचमं पुण " ઈત્યાદિ—

ટીકાર્થ—" पंचमं पुण " પાંચમી ભાવના સ્પર્શેન્દ્રિય સંવર નામની છે તે આ પ્રમાણે છે " फासिदिएण " સ્પર્શેન્દ્રિયથી " मणुण्णभद्दगाइं फासाइं " મનોજ્ઞભદ્રક સ્પર્શેન્દ્રિય સુખકારક સ્પર્શોનો " फासिय " સ્પર્શ કરીને સાધુએ તેમના પ્રત્યે રૂચિભાવ-રાગપરિણતિ કરવી જોઈએ નહીં

" किं ते ? " રૂચિકારક સ્પર્શવાળા કયા કયા પદાર્થો છે તે પ્રશ્નનો ઉત્તર આપતા સૂત્રકાર એવા કેટલાક પદાર્થોનો ઉલ્લેખ કરીને કહે છે કે—

" गिम्हकाले दगमंडव–हार–सेयचंदण सीयलविमलजल विविहकुसुमसत्थर–ओसीर ·मुत्तिय ·मुणाल–दोसिणा–पेहुण–उक्खेवग–तालियंट वीयणग–जणिय सुहसीयले य पवणे " ગ્રીષ્મ ઋતુમાં દકમંડપ જ્યાં પાણીના ફુવારા પાણીને ઉડાડીને

=निर्मलानि च यानि जलानि तानि, तथा-विविधकुसुमसंस्तराः=विविधा-नाम्=अनेकप्रकाराणां कुसुमानां=पुष्पाणां ये संस्तराः=शय्यास्ते, तथा-उशीराणि=सुगन्धितृणानि, 'खश' इति प्रसिद्धानि, मौक्तिकानि=मुक्ताफलानि, मृणालानि=पद्मनालानि, ज्योत्स्नाः=चन्द्रिकाः, एषामितरेतरयोगद्वन्द्वः, ताः, तथा-'पेहुणउक्खेवगतालियंटवीयणगजणियसुहसीयले' पिच्छोत्क्षेपकतालवृन्तव्यजनकजनितसुखशीतलान्, तत्र-पिच्छोत्क्षेपकाः=पिच्छानां=मयूरपिच्छकानां ये उत्क्षेपकाः=व्यजनानि, तालवृन्तानि=तालपत्रव्यजनानि, व्यजनकानि=वंशदलनिर्मित व्यजनानि तज्जनिताः सुखाः=सुखकराः शीतलास्तांस्तथोक्तान् 'पवणे य' पवनांश्च 'गिम्हकाले' ग्रीष्मकाले। तथा-'सुहफासाणि य' सुखस्पर्शानि च सुखः=सुखकरः स्पर्शो येषां तानि-स्पर्शसुखावहानीत्यर्थः, 'बहूनि-अनेकप्रकाराणि 'सयणाणि आसणाणि य' शयनान्यासनानि च, प्रावरणगुणांश्च=मृदुस्पर्शान् शीतापहारकानुत्तरीयांश्च 'सिसिरकाले' शिशिरकाले=शीतकाले, तथा-'अंगारप्प-

जल, विविध प्रकार के पुष्पों से रचित शय्या, उशीर-खस, मुक्ताफल, मृणाल-कमलनाल, और दोसिणाचंद्रिका-चांदनी को, तथा पेहुणउक्खेवग-मयूर के पिच्छों के बने हुए पंखों की, ताडपत्र के बने हुए पंखों की और बांस की शलाकाओं से बने हुए पंखों की, सुखदायक शीतल वायु को तथा-सुखप्रद स्पर्शवाले अनेक प्रकार के शयन और आसनों को, (सिसिरकाले) शीतलकाल में तथा (सुहफासाणि य) नरम-स्पर्शवाले शीतापहारक (बहूणि सयणाणि आसणाणि य) अनेक प्रकार के शयन और आसनों को, तथा (पाउरणगुणे य) ओढने के चद्दर आदि वस्त्रों को (अंगारप्पयावणा य) अग्नि के उष्णस्पर्श को,

જગ્યાને ઠંડી રાખના હેય, એવાં જલયંત્રવાળાં સ્થાન, હાર, શ્વેત ચંદન, શીતલ. નિર્મળ જળ, વિવિધ પ્રકારના પુષ્પો વડે બનાવેલી શય્યા, ઉશીર-ખશ, મુક્તાફળ, મૃણાલ-કમળનાળ, અને દોસિણા-ચંદ્રિકા-ચાંદનીની, તથા પેહુણ ઉક્ખેવગ-મોરનાં પીછાંના બનાવેલ પંખાના, તાડપત્રમાંથી બનાવેલ પંખાના અને વાંસની સળીઓમાંથી બનાવેલ પંખાના, સુખદાયક શીતળ વાયુનો તથા સુખપ્રદ સ્પર્શવાળાં અનેક પ્રકારનાં શયન અને આસનોનો સ્પર્શ કરવો જોઈએ નહીં તથા "सिसिरकाले" શિયાળાનાં "सुहफासाणि य" નરમ સ્પર્શવાળાં શીત દૂર કરનારાં "बहूणि सयणाणि आसणाणि य" અનેક પ્રકારના શયનો અને આસનોનો, તથા "पाउरणगुणे य" ઓઢવાનાં ચાદર આદિ વસ્ત્રોનો, "अंगारप्पयावणा य" અગ્નિના ઉષ્ણ સ્પર્શનો, "आयवनिद्धमउ-

यावणा य' शरीरस्य अङ्गारप्रतापनाश्च=वह्निनिषेवणानि च, 'आयवनिद्धमउयसी-यउसिणलहुया य' आतपस्निग्धमृदुकशीतोष्णलघुकांश्च, तत्र-आतपः=सूर्यतापः, स्निग्धाः=चिक्कणाः, मृदुकाः=कोमलाः, उष्णाः ऊष्मयुक्ताः, लघुकाः=मनोज्ञाः, एषामितरेतरयोगद्वन्द्वः, 'जे' ये 'उउसुहफासा' ऋतुसुखस्पर्शाः-ऋतुषु=हेमन्तादिषु सुखः=सुखकरः स्पर्शो येषां ते तथोक्ताः, 'अंगसुहनिव्वुइकरा' अङ्ग-सुखनिर्वृतिकराः=अङ्गसुखं=शरीरसुखं, निर्वृतिः=मनः स्वास्थ्यं च कुर्वन्ति ये ते तथोक्ताः, 'ते' तान् स्पृष्ट्वा, 'समणेण' श्रमणेन=साधुना 'तेसु' तेषु-पूर्वोक्तेषु 'मणुन्नभद्दएसु फासेसु' मनोज्ञभद्रकेषु स्पर्शेषु, तथा-एभ्यः 'अन्नेसु य' अन्येषु च 'एवमाइएसु' एवमादिकेषु 'फासेसु' स्पर्शेषु 'न सज्जियव्वं' न सक्तव्यम्=आसक्तिर्नैव कर्तव्या, तथा--'न रज्जियव्वं' न रक्तव्यम्-रागो न कर्तव्यः, 'न गिज्झियव्वं' न गर्द्धितव्यम्-गृद्धिभावो न कर्त्तव्यः, 'न मुज्झियव्वं' न मोहितव्यम्-तत्र मोहो न कर्तव्य', तथा-न 'विणिघायं' विनिघात= तदर्थं चारित्रभ्रंशः, 'आवज्जियव्वं' आपत्तव्यः-कर्त्तव्य इत्यर्थः, 'न लुभियव्वं' न लोब्धव्यम्-लोभो न कर्तव्यः, 'अज्झोववज्जियव्वं' न अध्युपपत्तव्यम्=तत्प्रा-

---

(आयवनिद्धमउयसीय उसिणलहुया य) सूर्य के ताप को, चिक्कणपदार्थ को, कोमलपदार्थ को उष्ण पदार्थ को, हलके पदार्थ को, कि (जे) जो (उउसुहफासा) ऋतु के अनुसार जिनका स्पर्श सुखजनक होता है और (अंगसुहनिव्वुइकरा) शरीर को एवं मन को आनंद प्रदान करता है, उनको शरीर से स्पर्श करके (समणेण) साधु को (तेसु) उन २ (मणुन्नभद्दएसु फासेसु) मनोज्ञभद्रक-रुचिकारक-स्पर्शों में तथा (अण्णेसु य एवमाइएसु फासेसु) इन से अतिरिक्त और भी स्पर्शो में (न सज्जियव्वं, न रज्जियव्वं, न गिज्झियव्वं, न मुज्झियव्वं, न विणिघायं आवज्जियव्वं, न लुभियव्वं, न अज्झोववज्जियव्वं, न तुसियव्वं, न

यसीय-उसिण-लहुया य" सूर्यना तापनो, मुलायम पदार्थनो, कोमळ पदार्थनो, उष्णु पदार्थनो, हलका पदार्थनो, के "जे" जे "उउसुहफासा" जे ऋतु प्रमाणे जेनो जेनो स्पर्श सुखदायक लागे छे अने "अंगसुहनिव्वुइकरा" शरीरने तथा मनने आनंद आपे छे, तेमनो शरीरथी स्पर्श करीने "समणेण" साधुओ "तेसु" ते दरेक "मणुन्नभद्दएसु फासेसु" मनोज्ञभद्रक-रुचिकारक स्पर्शोमां तथा "अण्णेसु एवमाइएसु फासेसु" ते सिवायना बीजा पण स्पर्शोमां "न सज्जियव्वं, न रज्जियव्वं, न गिज्झियव्वं, न मुज्झियव्वं, न विणिघायं आवज्जियव्वं, न लुभियव्वं, न अज्झोववज्जियव्वं, न तुसियव्वं,

प्त्यर्थं नैवाधिको यत्नो विधेयः, ' न तुसियव्वं ' न तोष्टव्यं-तत्प्राप्तौ परितोषो न कर्तव्यः, ' न हसियव्वं न हसितव्यम्-प्राप्तौ विस्मयेन हासो न कर्तव्यः। तथा श्रमणः ' तत्थ ' तत्र=पूर्वोक्तभुक्तविषये ' सइं च ' स्मृतिं=स्मरणं च ' मतिं= बुद्धिनिवेशं च ' न कुज्जा ' न कुर्यात्। ' पुणरवि ' पुनरपि उच्यते-' फासिं-दिएण ' स्पर्शेन्द्रियेण ' अमनुण्णपावगाइं ' अमनोज्ञपापकान्=अरुचिकरानित्यर्थः, ' फासाइं ' स्पर्शान् ' फासिय ' स्पृष्ट्वा ' किंते ' काँस्तान्=कथम्भूताँस्तान् ? इत्याह—'अणेगवह-वंध-तालणं-कण- अइभारारोवण-अंग-भंजण-सूईनखप्पवेस

हसियव्वं, न सइं च मइं च तत्थ कुज्जा) कभी भी आसक्ति से अपने चित्त को नहीं बांधना चाहिये, उनमें रागभाव नहीं करना चाहिये। गृद्धिभाव नहीं करना चाहिये। उन में मुग्ध नहीं होना चाहिये-उनके निमित्त अपने चारित्र का परित्याग नहीं कर देना चाहिये। उनमें लुभाना नहीं चाहिये। और न उनकी प्राप्ति के निमित्त प्रयत्न ही करना चाहिये। यदि ये अनायास प्राप्त हो भी जावें तो उनकी प्राप्ति में परि-तोष नहीं मानना चाहिये। और प्राप्ति में कोई विस्मय आश्चर्य ही नहीं करना चाहिये। तथा श्रमण को इन पूर्वोक्त अनुभवित स्पर्शों में अपनी स्मृति को एवं बुद्धि को भी नहीं लगाना चाहिये। (पुणरवि) इसी तरह फिर (फासिंदिएण) स्पर्शन इन्द्रिय से (अमणुण्णपावगाइं) अमनोज्ञपापक-अरुचिकारक-स्पर्शों को स्पर्श करके उनमें साधु को द्वेष नहीं करना चाहिये। (किं ते ?) वे अमनोज्ञ पापक स्पर्श किन २ पदार्थों में रहते हैं, इस प्रकार के प्रश्न का उत्तर देने के लिये सूत्रकार कहते हैं कि (अणेगवहबंध-तालणंकण-अइभारारोवण-

---

न हसियव्व, न सइं च मइंच तत्थ कुज्जा " કદી પણ આસક્તિથી પોતાના ચિત્તને બાંધવું નહીં, તેમનામાં રાગભાવ કરવો નહીં તેની લાલસા રાખવી નહીં તેમાં મુગ્ધ થવું નહી,-તેને ખાતર પોતાના ચારિત્રનો પરિત્યાગ ન કરવો જોઈએ તેમાં લોભાવું ન જોઈએ અને તેની પ્રાપ્તિને માટે વધુ પ્રયત્ન પણ કરવો જોઈએ નહીં. જો તે અનાયાસે મળી જાય તો તેની પ્રાપ્તિથી પરિતોષ માનવો જોઈએ નહીં તેની પ્રાપ્તિમાં વિસ્મય પણ બતાવવું જોઈએ નહીં. અને સાધુએ એ પૂર્વોક્ત અનુભવેલ સ્પર્શોનું સ્મરણ કરવું જોઈએ નહીં અને તેમનો વિચાર પણ કરવો જોઈએ નહીં. " पुणरवि " એ જ રીતે ' फासि-दिएण " સ્પર્શેન્દ્રિયથી " अमणुण्णपावगाइं " અમનોજ્ઞ પાપક-અરુચિકારક સ્પર્શોનો સ્પર્શ કરીને તેમના પ્રત્યે સાધુએ દ્વેષ કરવો જોઈએ નહીં " किं ते ? " અમનોજ્ઞ પાપક-અરુચિકારક સ્પર્શવાળા કયા કયા પદાર્થો છે, તે પ્રશ્નનો ઉત્તર આપતા સૂત્રકાર કહે છે કે " अणेगवहवध--तालणंकण--अइभारारोवण--

-गायपच्छण लक्खारस-खारतेल्ल कलकलंत तउअसीसककाललोहसिंचण हडिबंधण रज्जुनिगल-संकलहत्थंडुय-कुंभिपाकदहण-सीहपुच्छण- उव्वंधण- सूलभेय-गय-चलणमलण-करचरणकन्ननासोट्ठसीसछेयण-जिब्भछेयणवसणनयणहिययदंतभंजण-जोत्तलयकसप्पहार-पादपण्हि-जाणु-पत्थर-निवाय-पीलण-कविकच्छुअगणि-विच्छुय डक्कवायायव-दंसमंसग-निवाए' अनेकवधबन्धताडनाङ्कनातिभारारोपणाङ्गभञ्जन-सूचीनखप्रवेश-गात्रप्रतक्षण-लाक्षारस खारतैलकलकलायमानत्रपुक सीसककाललोहसेचनहडिबन्धनरज्जुनिगडसंकलहस्तान्दुक कुम्भीपाकदहनसिंहपुच्छोद्बन्धन-शूल-भेद-गजचरणमर्दन-करचरणकर्णनासोष्ठ शीर्षच्छेदनवृषणनयन हृदयदन्तभञ्जनयोत्रलत्ताकशाप्रहारपादपार्ष्णिजानुप्रस्तरनिपातपीडनकपिकच्छवग्नि-वृश्चिक- दंशवातातपदंशमशकनिपातान्, तत्र-अनेको वहुविधो यो वधः=यष्टयाद्याघातः, रज्ज्वादिभिर्बन्धः, ताडनम्=चपेटादिताडनम्, अङ्कनम्=तप्तायः शलाकादिना गात्रे चिह्नकरणम्, अतिभारारोपणम्=प्रमाणाधिकभारसमारोपणम्, अङ्गभञ्जनम्=शरीरावयवत्रोटनम्, 'सूईनखप्पवेस' सूचीनखप्रवेशः=सूचीनां नखेषु प्रवेशः=प्रवेशकरणम्,

---

अंगभंजणसूईनखप्पवेस-गायपच्छण-लक्खारस खारतेल्लकलकलंत-तउ-सीसककाललोहसिंचण-हडिबंधण-रज्जुनिगल-संकलन हत्थंडुय कुंभि-पाकदहण- सीहपुच्छण-उव्वंधण-सूलभेय-गयचलणमलण- करचरणकन्न नासोट्टसीसछेयणजिब्भछेयण-वसण-- नयणहियय-दंतभंजण- जोत्तल-यकसप्पहार -पादपण्हिजाणुपत्थरनिवायपीलणकविकच्छुअगणिविच्छु-यडक्कवायायवदंसमंसगनिवाए) वह अनेक प्रकार से यष्टयादि द्वारा आघात करने रूप वध, बंधण-रज्ज्वादि द्वारा बांधनेरूप बंधन, तालण-चपेटा-थप्पड आदि मारने रूप ताडन, अंकण-तपी हुई लोहे की सलाई से शरीर में चिह्न करने रूप अंकन, (अईभारारोवण) प्रमाण से अधिक भार का लादना, (अंगभंजण) शारीरिक अवयव को तोडना (सूईन-

---

अंगभंजण-सूईनखप्पवेस-गायपच्छण--लक्खारस-खारतेल्लकलकलंत--तउसीसककाल --लोहसिंचण-हडिबंधण- रज्जुनिगल--संकलन हत्थंडुयकुंभिपाकदहणसीहपुच्छण उव्वं-धण--सूलभेय--गयचलणमलण- करचरणकन्ननासोट्ठ सीसछेयण जिब्भछेयण--वसण-नयण- हिययदंतभंजण--जोत्तलयंकसप्पहार- पादपण्हि जाणुपत्थर निवाय पालणकवि-कच्छु--अगणिविच्छुय-डक्कवायायवदंसमसगनिवाए" ते અનેક પ્રકારની લાકડી આદિના પ્રહારરૂપ વધ, બંધણ-દોરડા આદિ બાંધવારૂપ બંધન, તાલણ-થપ્પડ આદિના માર રૂપ તાડન, અંકણ-તપાવેલા લોઢાના સળીયા વડે શરીર પર ડામ દેવારૂપ નિશાન, अइभारारोवण-વધારે પ્રમાણમાં ભાર લાદવો, अगभंजण-શરીરના અંગનું છેદન. सूईनखप्पवेस-સોયને નખમા ભોંકી દેવી, गायपच्छण-

' गायपच्छण ' गात्रप्रतक्षणं=वास्यादिना शरीरच्छोलनम् , ' लक्खारसखारतेल-कलकलंततउअ-सीसककाललोहसिंचण' लाक्षारसक्षारतैलकलकलायमानत्रपुकसी-सककाललोहसेचनम् , लाक्षारसेन=लाक्षा=जतु तस्या रसेन=तप्तेन द्रवेण क्षार तैलेन=क्षारपदार्थमिश्रिततैलेन, कलकलायमानेन=अतितप्ततया शब्दायमानेन त्रपु-केण=रङ्गेण सीसकेन=' सीसा ' इतिप्रसिद्धद्रव्येण, काललोहेन=कृष्णलोहेन च यत्सेचनम् ' हडिबंधण ' हडिबन्धनम्=खोडकक्षेपः, ' रज्जुनिगलसंकलनं' रज्जु-निगडसङ्कुलनम्=रज्जवा निगडेन च सकलनं=बन्धनम् ' हत्थंदुय ' हस्तान्दुकम्=काष्ठादिनिर्मितहस्तबन्धनसाधनेन यद्बन्धनं तद्धस्तान्दुकमुच्यते, ' कुंभिपाक ' कुम्भीपाकः=कुंभ्यां=पात्रविशेषे पाकः=पचनम् ' दहण ' दहनम्=अग्निना दाहक-रणम् , ' सीहपुच्छण ' सिंहपुच्छनं=लिङ्गत्रोटनम् , ' उब्बंधणं ' उद्बन्धनं=पाशो-लम्बनम् , ' सूलभेय' शूलभेदः, शूलेनभेदः=भेदनम् , ' गयचलणमलण ' गज-चरणमर्दकम्=गजचरणैमर्दनम् , 'करचणकन्ननासोट्ठसीसछेयण' करचरणकर्णनासो-

---

खप्पवेस) सूईयों को नखों में भोंकना, (गायपच्छण) वसूला आदि से शरीर के अवयवों को छीलना, ' लक्खारस ' तपे हुए लाखके रससे, (खारतेल्ल) क्षारपदार्थ मिश्रित तपे हुए तैल से तथा (कलकलंत) अत्यंत उकलने से पिघले हुए (तउ) त्रपु-कथीर से, (सीसक) सीसे से (काल-लोह) काले लोहे से, (सिंचण) शरीर को सींचना-शरीर पर छिडकना (हडिबंधण) खोडे में डालना, ' रज्जुनिगलसंकलन ' रस्सी और बेडी बांधना, ' हत्थंडुय ' हथकडी में बांधना ' कुंभीपाग ' कुंभी में पकाना, ' दहण ' अग्नि में जलाना, ' सीहपुच्छण ' लिङ्ग को तोडना, 'उब्बंधण' फांसी में लटकाना, ' सूलभेय ' सूलीपर चढ़ाना, ' गयचलण '-हाथी के पैरो से कुचलना, ' करचरणकन्ननासोट्ठसीसछेयण ' हाथ-पैर, कान,

---

વાંસલા આદિથી શરીરનાં અવયવોને છોલવાની ક્રિયા, लक्खारस-ગરમ લાખના રસથી खारतेल्ल-ક્ષારયુક્ત પદાર્થથી તપાવેલા તેલથી, તથા कलकलंत—અત્યંત ગરમ કરવાથી ઓગળેલા " तउ" કથીરથી, "सीसक"-સીસાથી "काललोह"-કાળાં લોઢાથી, " सिंचण "-શરીર પર રેડવાની ક્રિયા, " हडिबंधण "-હેડમાં પૂરવું, " रज्जुनिगलसंकलन "-દોરડા અને બેડી વડે બાંધવું, " हत्थंडुय "-હાથકડીમા બાંધવું, " कुंभीपाग" કુંભીમાં પકાવવું, "दहण"-અગ્નિમા બાળવું " सीहपुच्छण "-લિંગને તોડવું, "उब्बधन' ફાંસીએ લટકાવવું, "सूलभेय"-સૂળી પર ચડાવવું, " गयचलण "-હાથીના પગ તળે ચગદાવવું, " करचरण-कन्ननासोट्ठसीसछेयण " હાથ, પગ, કાન, નાક, હોઠ અને મસ્તકનું છેદન કરા-

ष्ठशीर्षच्छेदनम्=' जिब्भच्छेयण ' जिह्वाच्छेदनम् , ' वसणनयणहियय दंतभंजण ' वृषणनयनहृदयदन्तभञ्जनम्=वृषणस्य=अण्डकोशस्य, नयनयोः, हृदयस्य दन्तानां च भञ्जनम्=विनाशनम् , ' जोत्तलयकसप्पहार ' योक्त्रलताकशाप्रहारः-योक्त्रेण =रज्जुविशेषेण, लतया=वेत्रादिलतया, कशया च यः प्रहारः, प्रहारः, 'पादपण्हि-जाणुपत्थरनिवाय ' पादपार्ष्णिजानुप्रस्तरनिपातः=पादयोः=चरणयोः, पार्ष्णयोः= पादपश्चाद्भागयोः, जानुनोः=' घुटना ' इतिभाषा प्रसिद्धयोश्च प्रस्तरनिपातः= पाषाणपातः, ' पीलणं ' पीडनं=यन्त्रे पीडनम् , ' कविकच्छु' कपिकच्छुः=तीव्रक-ण्डूतिकारकवनस्पतिविशेषः, 'अगणि' अग्निः, 'विच्छुयडक' वृश्चिकदंशः 'वायातव-दंसमसगनिवाए' वातातपदंशमशकनिपातः=वातस्य आतपस्य दंशानां मशकानां च निपतनम् , एतेषां द्वन्द्वः, तांस्तथोक्तान् स्पृष्ट्वा, तथा-'दुट्ठणिसिज्ज दुन्निसी-हिया' दुष्टनिषद्यादुर्नैषेधिक्यः=दुष्टनिषद्याः क्षुद्रासनानि, दुर्नैषेधिकस्य=कष्टकर-स्वाध्यायभूमयस्ताश्चस्पृष्ट्वा, 'तेसु' तेषु-उक्तेषु 'अमणुन्नपावगेसु' अमनोज्ञपापकेषु

नासिका, होठ और मस्तक का छेदन करना, ' जिब्भच्छेयण ' जीभ का छेदन करना ' वसण-नयग-हियय-दंत-भंजण' अण्डकोष, नेत्र, हृदय और दांतोंका भांगना, 'जोत्त-लय-कस प्पहार' चमडे की रस्सी से, वेत्रा-दिलता से, तथा चाबुक से प्रहार करना, ' पादपण्हिजाणुपत्थरनिवाय ' पांव, एडी, घुटना,इन पर पत्थर का गिरना, 'पीलग' यंत्र में पीलना, 'कवि-कच्छु-अगणि-विच्छुय-डंक' करेंच की फली,अग्निऔर विच्छू का डंक- -स्पर्श, ' वायायवदंसमसगनिवाए ' शीतकाल में ठंडे पवन का लगाना उष्णकाल में धूप का लगना, तथा डांस और मच्छरों का शरीर पर गिरना इन सबके स्पर्श का अनुभव करके(दुट्ठणिसिज्जदुन्निसीहिया)कष्ट-कारकआसन और स्वाध्याय की भूमि के स्पर्श को अनुभव करके (तेसु

ववु', " जिब्भच्छेयण " જીભનું છેદન કરવું, "वसण-नयण-हियय-दंत-भंजण" અંડકોષ, નેત્ર, હૃદય અને દાંત તોડવા, " जोत्त-लय-कस-प्पहार " ચામડાની દોરીથી નેતર-આદિ લતાથી તથા ચાબુકથી ફટકારવું, " पादपण्हिजाणुपत्थर-निवाय " પગ, એડી અને ઘૂંટણ પર પત્થરનું પડવું, " पीलण "-યંત્રમાં પીલવું, "कविकच्छु-अगणि-विच्छुय डक "-કરેંચની ફળી, અગ્નિ અને વિંછીનો ડંખ, " वायायवदंसमसगनिवाए " શિયાળામાં ઠંડો પવન લાગવો, ઉનાળામા તડકો લાગવો, તથા ડાંસ અને મચ્છરોનું શરીર પર પડવું, એ બધા સ્પર્શનો શરીર પર અનુભવ કરીને " दुट्ठणिसिज्जदुन्निसीहिया " કષ્ટકારક આસન અને સ્વાધ્યાયની ભૂમિના સ્પર્શને અનુભવીને " तेसु अमणुन्नपावगेसु " તે

अरुचिकरेष्वित्यर्थः, ' फासेसु ' ' स्पर्शेषु, एभ्यः, 'अन्नेसु' अन्येषु च ' बहुविहेसु ' बहुविधेषु ' एवमाइएसु ' एवमादिकेषु—एवं प्रकारेषु ' कक्खडगुरुसीयउसिणलुक्खेसु' कर्कशगुरुशीतोष्णरूक्षेषु कर्कशाः=कठिनाः, गुरवः=भाराः, शीताः=शीतलाः, उष्णाः=तापनाः, रूक्षाः=परुषाः, एषां द्वन्द्वस्तेषु तथोक्तेषु स्पर्शेषु च ' समणेणं ' श्रमणेन–साधुना 'न रुसियव्वं' न रोष्टव्यम्=रोषो न कर्तव्य इत्यर्थः, ' न हीलियव्वं ' न हीलितव्यम्=अवज्ञा न कर्तव्या, ' न निंदियव्वं ' न निन्दितव्यम्, स्वमनसि निन्दा न कर्त्तव्या, ' न खिंसियव्वं ' न खिंसितव्यम्=परसमक्षे च निन्दा न कर्तव्या, ' न छिंदियव्वं ' न छेत्तव्यम्=छेदनं न कर्त्तव्यम्। ' न भिंदियव्वं ' न भेत्तव्यम्–भेदनं न कर्त्तव्यम्, 'न वहेयव्वं' न हन्तव्यम्=विनाशो न कर्तव्यः, तथा–तद्विषये ' जुगुंछावत्तियावि ' जुगुप्सावृत्तिकाऽपि स्वस्य परस्य वा हृदि 'उप्पाएउं' उत्पादयितु 'न लंभा' न लभ्या–नोचिता यथा पूर्वोक्तस्पर्शाश्रयविषये स्वस्य परस्य वा हृदि जुगुप्सा प्रादुर्भवेन्न तथा कर्तव्यमिति भावः।

अमणुन्नपावगेसु) उन अमनोज्ञपापक–अरुचिकारक–स्पर्शों में, तथा (एवमाइएसु बहुविहेसु कक्खडगुरुसीय उसिणलुक्खेसु) इन से भिन्न और जो कर्कश, गुरु, शीत, उष्ण, रूक्ष स्पर्श हैं उनमें (समणेणं न रुसियव्वं, न हीलियव्वं, न निंदियव्वं, न गरहियव्वं, न खिंसियव्वं, न छिंदियव्वं, न भिंदियव्वं, न वहेयव्वं, न दुगुंछावत्तियावि लब्भाउप्पाएउं साधु को रुष्ट नहीं होना चाहिये, उनकी अवहेलना नहीं करनी चाहिये। निंदा नहीं करनी चाहिये। गर्हा नहीं करनी चाहिये। उन पर खिसयाना नहीं चाहिये। उस अमनोज्ञ स्पर्श के आश्रयभूत द्रव्य का छेदन नहीं करना चाहिये। भेदन नहीं करना चाहिये। नाश नहीं करना चाहिये। और न अपने तथा परके मन में उनपर ग्लानि उत्पन्न करने

અમનોજ્ઞ પાપક-અરુચિકારક સ્પર્શોમાં, તથા " एवमाइएसु बहुविहेसु कक्खडगुरुसीयउसिणलुक्खेसु " તે ઉપરાંત બીજા પણ જે કર્કશ, ગુરુ, શીત, ઉષ્ણ, સ્પર્શ છે તેમના પ્રત્યે " समणेण न रुसियव्वं, न हीलियव्वं न निंदियव्वं, न गरहियव्वं, न खिंसियव्वं, न छिंदियव्वं, न भिंदियव्व, न, वहेयव्वं, न दुगुंछावत्तिया वि लब्भा उप्पाएउं " સાધુએ રુષ્ટ થવું જોઇએ નહીં, તેમની અવહેલના ન કરવી જોઇએ. નિંદા ન કરવી જોઇએ. ગર્હા ન કરવી જોઈએ. તેમના પર ખિસિયાવું જોઇએ નહીં. તે અમનોજ્ઞ સ્પર્શવાળાં દ્રવ્યનું છેદન કરવું જોઈએ નહીં, ભેદન કરવું જોઇએ નહીં નાશ કરવો જોઇએ નહીં અને પોતાનાં કે અન્યના મનમાં તેમના પ્રત્યે ગ્લાનિ ઉત્પન્ન કરવાની પ્રવૃત્તિ ન

सम्प्रति पञ्चमीं भावनामुपसंहरन्नाह—एवम्=अनेन प्रकारेण 'फासिंदियभावणा-भाविओ' स्पर्शेन्द्रियभावनाभावितः, 'अंतरप्पा' अन्तरात्मा-जीवो जीवः 'भवइ' भवति। ततश्च 'मणुन्नामणुन्नसुब्भिदुब्भिरागद्वेषपणिहितात्मा=मनोज्ञाऽमनोज्ञा ये सुरभिदुरभयः=शुभाशुभस्पर्शास्तेषु यद्रागद्वेषं तत्र पणिहितात्मा=संवृतात्मा, 'साहू' साधुः 'मणवयणकायगुत्ते' मनोवचनकायगुप्तः 'संवुडे' संवृतः=संवरवान् 'पणिहिइंदिए' पणिहितेन्द्रियः, पणिहितः=वशीकृत इन्द्रियो येन तथाभूतः सन् 'धम्मं' धर्मं=श्रुतचारित्रलक्षणं धर्मं 'चरेज्ज' चरेत्=अनुतिष्ठेत् ॥ सू० ११ ॥

की चेष्टा ही करना चाहिये। अब सूत्रकार इस पांचवीं भावना का उपसंहार करते हुए कहते हैं (एवं फासिंदियभावणाभाविओ अंतरप्पाभवइ मणुन्नसुब्भिदुब्भिरागोदोसे पणिहियप्पा साहू मणवयणकायगुत्ते संवुडे पणिहिइंदिए धम्मं चरेज्ज) इस प्रकार से स्पर्श इन्द्रिय की भावना से भावित जब मुनि हो जाता है तब वह मनोज्ञ रूप शुभ स्पर्श में और अमनोज्ञरूप अशुभ स्पर्श में रागद्वेष करने से रहित बन जाता है। इस तरह उनमें रागद्वेष करने से संवृतात्मा बना हुआ साधु अपने मन, वचन और कायरूप त्रियोगों को स्पर्श संबंधी शुभ अशुभ के व्यापार से रहित कर लेता है तथा इस स्पर्शन इन्द्रिय के संवरण से युक्त बन जाता है। इस प्रकार इस इन्द्रिय के संवरण से युक्त बना हुआ वह साधु चारित्ररूप धर्म की आराधना अच्छी तरह से करने लगता है।

भावार्थ—सूत्रकार ने इस सूत्र द्वारा इस परिग्रह विरमणव्रत की पांचवीं भावना का स्वरूप प्रगट किया है। इस पांचवीं भावना का

કરવી જોઈએ હવે સૂત્રકાર આ પાંચમી ભાવનાનો ઉપસંહાર કરતાં કહે છે. "एवं फासिंदियभावणाभाविओ अंतरप्पा भवइ मणुन्नामनुन्नसुब्भिदुब्भि रागदोसे पणिहियप्पा साहू मणवयणकायगुत्ते संवुडे पणिहिइंदिए धम्मं चरेज्ज" આ રીતે જ્યારે મુનિ સ્પર્શેન્દ્રિયની ભાવનાથી ભાવિત થઈ જાય છે ત્યારે તે મનોજ્ઞરૂપ શુભ સ્પર્શ પ્રત્યે તથા અમનોજ્ઞરૂપ અશુભ સ્પર્શ પ્રત્યે રાગદ્વેષથી રહિત બની જાય છે. આ રીતે તેમના પ્રત્યે રાગદ્વેષ કરવાથી નિવૃત્ત થયેલ સાધુ પોતાના મન, વચન અને કાયરૂપ ત્રણે યોગોને સ્પર્શ સંબંધી શુભ અશુભ વ્યાપારથી રહિત કરી લે છે, અને આ સ્પર્શેન્દ્રિય સંવરથી યુક્ત થઈ જાય છે. આ રીતે આ ઈન્દ્રિયના સંવરથી યુક્ત બનેલ તે સાધુ ચારિત્રરૂપ ધર્મની સારી રીતે આરાધના કરવા લાગી જાય છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્ર દ્વારા આ પરિગ્રહ વિરમણ વ્રતની પાંચમી ભાવનાનું સ્પષ્ટીકરણ કર્યું છે તે પાંચમી ભાવનાનું નામ સ્પર્શેન્દ્રિય સંવરણ

इदं संवरद्वारमुपसंहरन्नाह—'एवमिणं' इत्यादि—

मूलम्—एवमिणं संवरदारं सम्मं संवरियं होइ सुप्पणिहियं इमेहिं पंचहिं वि कारणेहिं मणवयणकायपरिरक्खिएहिं निच्चं आमरणंतं च एस जोगो नेयव्वो धिइमया अणासवो अकलुसो अच्छिद्दो अपरिस्साई असंकिलिट्ठो सुद्धो सव्वजिणमणुण्णाओ । एवं पंचमं संवरदारं फासियं पालियं सोहियं तीरियं किट्टियं अणुपालियं आणाए आराहियं भवइ। एवं णायमुणिणा भगवया पण्णवियं परूवियं पसिद्धं सिद्धवरसासणमिणं आघवियं सुदेसियं पसत्थं पंचमं संवरदारं समत्तं त्तिबेमि ॥सू१२॥

नाम स्पर्शनेन्द्रियसंवरण है । इस भावना से भावित हुए मुनिजन को स्पर्शन इन्द्रिय के विषयभूत-आठ प्रकार के स्पर्श में चाहे वह रुचिकारक हो या न हो रागद्वेष करने का सर्वथा परित्याग कर देना चाहिये । गर्मी के समय में शीतस्पर्श की शिशिरऋतु में गरमस्पर्श तथा और भी अन्य ऋतुओं में भिन्न २ प्रकार के स्पर्श की कामना साधु को नहीं करनी चाहिये । सूत्रनिर्दिष्ट दगमंडप आदि मनोज्ञभद्रक स्पर्श के विषय में और अनेक वधबंधन आदि अमनोज्ञ पापक स्पर्श के विषय हैं अतः साधु को दोनों प्रकार के स्पर्शों में समभाव संपन्न रहना चाहिये । यही स्पर्शन इन्द्रिय संवरण नाम की भावना है ॥ सू० ११॥

છે. આ ભાવનાથી ભાવિત થયેલ મુનિએ સ્પર્શેન્દ્રિય વડે અનુભવાતા આઠ પ્રકારના સ્પર્શો પ્રત્યે રાગદ્વેષનો સર્વથા પરિત્યાગ કરવો જોઇએ-ભલે તે સ્પર્શો રુચિકર હોય કે અરુચિકર હોય પણ તેમના પ્રત્યે રાગદ્વેષ રાખવા જોઇએ નહીં. ગરમીના દિવસોમા શીત સ્પર્શની શિયાળામા ઉષ્ણ સ્પર્શની અને અન્ય ઋતુઓમા જુદા જુદા પ્રકારના સ્પર્શની ઇચ્છા સાધુએ કરવી જોઇએ નહી. સૂત્રમાં દર્શાવેલ દગમંડપ આદિ મનોજ્ઞભદ્રક સ્પર્શમા તથા અનેક વધબંધન આદિ અમનોજ્ઞ પાપક સ્પર્શની બાબતમાં સાધુએ સમભાવ રાખવો જોઇએ. એ જ આ સ્પર્શેન્દ્રિય સંવરણ નામની ભાવના છે. ॥ સૂ૦૧૧ ॥

टीका—'एवमिणं' एवम्=अनेन प्रकारेण इदम्=अपरिग्रहनामकं 'संवरदारं' संवरद्वारम् 'संवरियं' संवृतं=संसेवितं सत् 'सुप्पणिहिय' सुप्रणिहितं सुरक्षितं 'होइ' भवति। 'मणवयणकायपरिरक्खिएहिं' मनोवचनकायपरिरक्षितैः=योगत्रयपरिरक्षितैः 'इमेहिं पंचहिं वि कारणेहिं' एभिः पञ्चभिरपिकारणैः=पूर्वोक्ताभिः पञ्चभिर्भावनाभिरित्यर्थः, 'णिच्चं' नित्यम् 'आमरणंतं' आमरणान्तं=मरणपर्यन्तं च 'एसजोगो, एष योगः=अपरिग्रहलक्षणसंवररूपव्यापारः 'धिइमया' धृतिमता=स्वस्थचित्तेन 'मइमया' मतिमता-हेयोपादेयबुद्धियुक्तेन 'नेयव्वो' नेतव्यः-बोढव्यः-परिपालनीय इत्यर्थः। कीदृशोऽयं योगः? इत्याह-अयं योगः 'अणासवो' अनाश्रवः-नूतनकर्मागमनरहितत्वात्, 'अकलुसो' अकलुषः-शुभाध्यवसायत्वात्, 'अच्छिद्दो' अच्छिद्रः-छिन्नस्रोतस्त्वात्, 'अपरिस्साई'

अब सूत्रकार इन पांचवें संवरद्वार का उपसंहार करते हैं-'एवमिणं' इ०

टीकार्थ—(एवमिणं संवरदारं) इस प्रकार से यह अपरिग्रह नाम का संवरद्वार (सम्मंसंवरियं) अच्छी तरह सेवित होने पर (सुप्पणिहियं) सुरक्षित हो जाता है। इसलिये (मणवयणकायपरिरक्खिएहिं) मन, वचन और कायरूप तीन योगों से परिरक्षित हुई (इमेहिं पंचहिं कारणेहिं) इन पांच भावनाओं का (णिच्चं) सदा (आमरणंतं) मरणपर्यन्त-यावज्जीव (एस जोगो) यह अपरिग्रहलक्षणसंवररूप व्यापार (धिइमया मइमया नेयव्वो) धैर्यशाली एवं हेय और उपादेय के विवेक से युक्त बुद्धिवाले साधुजन को सेवन करना चाहिये, क्यो कि यह योग (अणासवो) नवीन कर्मों के आगमन से रहित होने के कारण अनाश्रवरूप है, (अकलुसो) शुभाध्यवसायरूप होने से अकलुष है, (अच्छिद्दो) इसमें पापका स्रोत छिन्न हो जाता है इसलिये अच्छिद्र

હવે સૂત્રકાર આ પાંચમા સંવરદ્વારનો ઉપસંહાર કરે છે-

ટીકાર્થ—"एवमिणं संवरदार" આ પ્રમાણે આ અપરિગ્રહ નામના સંવરદ્વારનું 'सम्मं सवरियं" સારી રીતે સેવન થતાં "सुप्पणिहियं" સુરક્ષિત થઈ જાય છે તેથી "मणवयणकायपरिरक्खिएहिं" મન, વચન અને કાય, એ ત્રણે યોગોથી પરિરક્ષિત થયેલ "इमेहिं पंचहिं कारणेहि" એ પાંચે ભાવનાઓનું "णिच्चं" સદા "आमरणंतं" જીવન પર્યન્ત "एसजोगो" આ અપરિગ્રહસંવરરૂપ વ્યાપાર "धिइमया मइमया नेयव्वो" ધૈર્યશાળી અને હેય અને ઉપાદેયના વિવેકથી યુક્ત બુદ્ધિમાન સાધુએ સેવન કરવું જોઈએ, કારણ કે તે યોગ "अणासवो" નૂતન કર્મોના આગમનથી રહિત હોવાને કારણે અનાશ્રવરૂપ છે. "अकलुसो શુભ અધ્યવસાયરૂપ હોવાથી અકલુષ છે, "अच्छिद्दो"

अपरिस्रावी=कर्मजलप्रवेशरहितत्वात् , ' असंकिलिट्ठो ' असंक्लिष्टः=असमाधिभाववर्जितत्वात् ' सुद्धो ' शुद्धः-कर्ममलवर्जितत्वात् , ' सव्वजिणमणुण्णाओ ' सर्वजिनानुज्ञातः- सकलप्राणिहितकारकत्वात्सर्वैरर्हद्भिरङ्गीकृतश्चास्ति । एवम्=उक्तप्रकारेण ' पंचमं संवरदारं ' पंचमं संवरद्वारं ' फासियं ' स्पृष्टं कायेन, ' पालियं' पालित-सततमुपयोगेन सेवितम् ' सोहियं ' शोधितम्-अतीचारवर्जनेन 'तीरियं' तीर्ण-तीरं प्रापितं सम्यक्पालनात् , ' किट्टियं ' कीर्त्तितम्-स्तुतम्=कल्याणकारकत्वात् , ' आराहियं ' आराधितम्-त्रिकरणत्रियोगैः, सम्यगाचरितत्वात् , ' आणाए ' आज्ञया-सर्वज्ञवचनेन ' अणुपालियं ' अनुपालितं=दृढमनस्कत्वाच्च

है, (अपरिस्साई) बिन्दुमात्र भी कर्मजल इसमें प्रविष्ट नहीं हो पाता हैं इसलिये यह अपरिस्रावी है । (असंकिलिट्ठो) असमाधिभाव से रहित होने के कारण यह असंक्लिष्ट है, और (सुद्धो) कर्ममल से वर्जित होने के कारण यह शुद्ध है । (सव्वजिणमणुण्णाओ) इससे समस्त प्राणियों का हित हुआ है और आगे भी हित होगा ऐसा जानकर ही समस्त अरिहंतभगवंतों ने इसे अंगीकृत किया है । (एवं पंचमं संवरदारं) इस उक्त प्रकार से जो इस संवरद्वार को (फासियं) अपने शरीर से आचरित करते हैं (पालियं) निरन्तर उपयोगपूर्वक इसका सेवन करते हैं, (सोहियं) अतिचारों से इसे रहित करते हैं, (तीरियं) पूर्णरूप से इसका सेवन करते है, (किट्टियं) दूसरों को इसके पालन करने का उपदेश देते हैं (आराहियं) तीनकरण तीन योग से इसकी भली प्रकार से अनुपालना करते हैं, (अणाए अणुपालियं भवइ) उनके द्वारा यह योग तीर्थंकर प्रभु की आज्ञा अनुसार ही पालित

તેનાથી પાપનો સ્રોત છિન્ન થઈ જાય છે તેથી તે અચ્છિદ્ર છે, "अपरिस्साई" બિન્દુ જેટલું પણ કર્મજળ તેમાં પ્રવેશ પામી શકતું નથી, તે અપરિસ્રાવી છે, "असंकिलिट्ठो" અસમાધિભાવથી રહિત હોવાને કારણે તે અસંક્લિષ્ટ છે અને ' सुद्धो " કર્મમળ વિનાનુ હોવાથી તે શુદ્ધ છે "सव्वजिणमणुण्णाओ" તેનાથી સમસ્ત પ્રાણીઓનું હિત થયું છે અને ભવિષ્યમાં પણ હિત થશે એવુ જાણીને જ સમસ્ત અરિહંત ભગવાનોએ તેને માન્ય કરેલ છે. "एवं पंचम संवरदार " આ સૂત્રમા કહ્યા પ્રમાણે જે આ પાચમાં સવરદ્વારનું "फासियं" પોતાના શરીરથી આચરણ કરે છે, "पालियं" નિરન્તર ઉપયોગ પૂર્વક તેનું સેવન કરે છે, ' सोहियं " અતિચારોથી તેને રહિત કરે છે, "तीरियं " પૂર્ણ રીતે તેનું સેવન કરે છે "किट्टियं" અન્યને તેના પાલનનો ઉપદેશ આપે છે "आराहियं " ત્રણ કરણ અને ત્રણ યોગથી સારી રીતે તેની આરાધના કરે છે, " आणाए अनुपालियं भवइ " તેમના દ્વારા તે યોગનુ તીર્થંકર પ્રભુની

भवति । एवम्=उक्तरूपं पंचमं संवरद्वारं, 'णायमुणिणा' ज्ञातमुनिना—प्रसिद्धक्षत्रियवंशोद्भवेन मुनिना भगवता महावीरेण 'पण्णवियं' प्रज्ञापितम्=शिष्येभ्यः सामान्यतया कथितम् 'परूवियं' प्ररूपितम्=भेदानुभेदप्रदर्शनपूर्वकं कथितम्, 'पसिद्धं' प्रसिद्धम्=प्रख्यातम्, प्रमाणप्रतिष्ठितत्वात् 'सिद्धवरसासणं' सिद्धवरशासनम्=सिद्धानां—निष्ठितार्थानां=कृतकृत्यानामितियावत् वरशासनं=प्रधानाज्ञारूपम्, 'इणं' इदम् 'आघवियं' आख्यातं=सर्वतोभावेन कथितम्, 'सुदेसियं' सुदेशितम्=सदेवमनुजासुरायां सभायां सुष्ठूपदिष्टं 'पसत्थं' प्रशस्तं 'पंचमं संवरदारं' पंचमं संवरद्वारं 'समत्तं' समाप्तम् 'त्तिबेमि' इति ब्रवीमि, अस्यार्थः पूर्वमुक्तः ॥ सू-१२ ॥

हुआ माना जाता है। (एवं) इस प्रकार से (नायमुणिणा भगवया) ज्ञात नामक क्षत्रियवंश में उत्पन्न हुए मुनिराज भगवान् महावीर ने (पण्णवियं) शिष्यों के लिये इस पंचम संवर द्वार को सामान्यरूप से समझाया, (परूवियं) भेद प्रभेदपूर्वक उसका कथन किया है। (पसिद्धं) प्रमाणप्रतिष्ठित होने से जिन वचन में यह प्रख्यात हुआ है, अर्थात् जिनवचन के अनुसार ही आचार्यपरंपरा से इसका पालन करना इसी रूप से चला आ रहा है। तथा (सिद्धवरसासणमिणं) भूतकाल में जितने भी सिद्ध हो चुके हैं उनका यह प्रधान आज्ञारूपशासन है। (आघवियं) ऐसा भगवान महावीर प्रभुने सर्वभाव से इसके विषय में कहा है और (सुदेसियं) देवों, मनुजों तथा असुरों से युक्त परिषदा में इसका उपदेश दिया है। (पसत्थं) सर्व प्राणियों का हितकारक होने से मंगलमय है, इस प्रकार यह (पंचमं संवरदारं समत्तं) पंचमसंवरद्वार समाप्त हुआ, (त्तिबेमि) ऐसा मैं कहता हूं। अर्थात्

આજ્ઞા પ્રમાણે જ પાલન થયું ગણાય છે. "एवं" આ રીતે "नायमुणिणा भगवया" જ્ઞાતૃ કુળ નામના ક્ષત્રિય વંશમાં ઉત્પન્ન થયેલ મુનિરાજ ભગવાન મહાવીરે "पण्णवियं" શિષ્યોને માટે આ પાંચમાં સંવરદ્વારને સામાન્યરૂપે સમજાવ્યું છે, "परूवियं" ભેદ પ્રભેદ પૂર્વક તેનું વિવેચન કર્યું છે, "पसिद्ध" પ્રમાણ પ્રતિષ્ઠિત હોવાથી જિનવચનમા તે પ્રખ્યાત થયું છે, એટલે કે જિન વચન પ્રમાણે જ આચાર્ય પરંપરાથી તેનું આ રીતે પાલન થતું આવ્યું છે, તથા "सिद्धवरसासणमिणं" ભૂતકાળમાં જેટલા સિદ્ધો થઇ ગયા તેમનું આ પ્રધાન આજ્ઞારૂપ શાસન છે, "अघवियं" એવું ભગવાન મહાવીરે સર્વ ભાવથી તેને વિષે કહ્યું છે, અને "सुदेसियं" દેવો. મનુષ્યો અને અસુરોની પરિષદામાં તેનો ઉપદેશ દીધો છે "पसत्थं" તે સર્વે પ્રાણીઓનું હિત કરનાર હોવાથી મંગળમય છે, આ રીતે આ "पंचमं" પાંચમું "संवरदारं समत्तं" સંવરદ્વાર સમાપ્ત થયું "त्तिवेमि" એમ હું કહું છું. એટલે કે

अथ संवरपञ्चकमुपसंहरन्नाह—' एयाइं ' इत्यादि ।

मूलम्—एयाइं वयाइं पंचवि सुव्वय महाव्वयाइं हेउसय विवित्तपुक्खलाइं कहियाइं अरिहंतसासणे पंच समासेण संवरा वित्थरेण उ पणवीसई समिए सहिए संवुडे सया जयण घडण सुविसुद्धदंसणे एए अणुचरियं संजए चरमसरीरधरे भविस्सतीति ॥ सू० ॥ १३ ॥

॥ इय पंचमं संवरदारं समत्तं ॥

टीका—' एयाइं ' इत्यादि—

' सुव्वय ' सुव्रत—हे शोभनव्रत जम्बूः । ' एयाइं ' एतानि ' पंचवि ' प-

---

हे जंबू ! इस पंचम संवरद्वार का जैसा कथन मैं ने साक्षात् भगवान् महावीर के मुख से सुना है वैसा ही यह मैं ने तुमसे कहा है । अपनी तरफ से इसमें मैंने कुछ भी मिश्रित कर नहीं कहा है ।

भावार्थ—इन पूर्वोक्त पांच भावनाओं से अच्छी तरह सेवित होने पर यह अपरिग्रह नामक पांचवां संवरद्वार स्थिर हो जाता है । इसलिये मुनिजन को इसका पालन इस रूप से करना अवश्य है । समस्त तीर्थंकरों ने इसे सर्वप्राणियों का हितकारक जानकर पालित किया है । यह अनाश्रव आदि विशेषणों वाला है । भगवान् महावीर प्रभु ने भी इसके पालन करने का उपदेश परिषदा में जीवों को दिया है । ऐसा मंगलमय यह पांचवां संवरद्वार समाप्त हुआ ॥ सू० १२ ॥

" હે જંબૂ ! આ પાંચમાં સંવરદ્વારનું કથન જે પ્રમાણે મેં સાક્ષાત્ મહાવીર પ્રભુને મુખે સાંભળ્યું હતુ, એ જ પ્રમાણે તે હું તમને કહું છું. મારી તરફથી તેમાં કંઈ પણ ઉમેરવામાં આવ્યું નથી.

ભાવાર્થ—પૂર્વોક્ત પાંચ ભાવનાઓનું સારી રીતે સેવન કરવામાં આવે તો અપરિગ્રહ નામનું પાચમું સવરદ્વાર સ્થિર થઇ જાય છે તેથી મુનિજને તેનું તે રીતે પાલન કરવુ અતિ આવશ્યક છે અધા તીર્થંકરોએ તેને સઘળાં પ્રાણીઓનું હિતકારક સમજીને તેનું પાલન કરેલ છે તે અનાશ્રવ આદિ વિશેષણો વાળું છે. ભગવાન મહાવીરે પણ પરિષદાઓમા તેનું પાલન કરવાનો ઉપદેશ જીવોને આપ્યો છે. એવુ મંગળમય આ પાંચમુ સંવરદ્વાર સમાપ્ત થયું સૂ૦૧૨

अपि 'वयाइं' व्रतानि-अहिंसादीनि 'महव्वयाइं' महाव्रतानि 'हेउसयविवित्त-पुक्कलाइं' हेतुशतविविक्तपुष्कलानि=हेतुशतैः= उपपत्तिशतैः विविक्तैः=निर्दोषैः कृत्वा पुष्कलानि=वितीर्णानि 'कहियाइं' कथितानि 'अरिहंतसासणे' अर्हच्छासने-जिनप्रवचने। ते च 'संवराः' 'समासेण' समासेन सक्षेपेण 'पंच' पञ्च-पञ्चसंख्यकाः, 'वित्थरेण उ' विस्तरेण तु 'पणवीसइ' पञ्चविंशतिः-प्रतिसंवरद्वारं पञ्चपञ्चभावनासत्त्वेन पञ्चविंशतिसंख्यकाः भवन्ति। अथ संवरधारिणां भाविनी दशा वर्ण्यते-'संजए' सयतः-साधुः 'समिए' समितः-ईर्यासमित्यादिभिः पञ्चविंशतिभावनाभिर्युक्तः, 'सहिए' सहितः-ज्ञानादर्शनाभ्यां युक्तः, 'संवुडे' संवृतः=कषायेन्द्रियसंवरणयुक्तः 'सया' सदा 'जयणघडणसुविसुद्ध-

---

अब सूत्रकार पांचों संवरों का उपसंहार करते हुए कहते हैं—'एयाइं' इत्यादि।

टीकार्थ-(सुव्वय !) शोभनव्रत संपन्न हे जम्बू ! (एयाइं पंचवि महव्वयाइं) ये पांचों ही अहिंसा आदिक महाव्रत (अरिहंतसासणे हेउसयविवित्तपुक्कलाइं कहियाइं) अर्हत प्रभु के शासन में सैकडो निर्दोष युक्तियों से विस्तृत करके कहे गये हैं। (संवरा समासेण पंच) वे संवर संक्षेप से पांच हैं परन्तु (वित्थरेण उ पणवीसई) विस्तार से पांच २ अपनी२ भावनाओं से सहित होने के कारण ये पचीस हो जाते हैं। (संजए) इन संवरद्वारों का पालन करने वाला संयत (समिए) ईर्यासमिति आदि पच्चीस भावनाओं से युक्त (सहिए) ज्ञानदर्शन से सहित और (संवुडे) कषाय एवं इन्द्रियों के संवरण से युक्त होता हुआ (सया) सदा (जयणघडण सुविसुद्धदंसणे) अपने तत्त्वार्थ श्रद्धानरूप दर्शन को

હવે સૂત્રકાર પાંચે સંવરોનો ઉપસંહાર કરતાં કહે છે...."एयाइं" ઈત્યાદિ.

ટીકાર્થ—"सुव्वय !" શોભનવ્રત યુક્ત હે જંબૂ! "एयाइं पंचवि महव्वयाइं" અહિંસા આદિ તે પાંચે મહાવ્રત "अरिहंत सासणे हेउसयविवित्त पुक्कलाइं कहियाइं" અર્હંત પ્રભુના શાસનમાં સેંકડો નિર્દોષ યુક્તિયોથી વિસ્તારથી કહેવામાં આવ્યાં છે. "संवरा समासेण पंच" તે સંવર સંક્ષિપ્તમાં પાંચ છે પણ "वित्थरेण उ पणवीसई" વિસ્તારથી પોત પોતાની પાંચ પાંચ ભાવનાઓ સહિત હોવાને કારણે પચીસ થાય છે. "संजए" એ સંવરદ્વારનું પાલન કરનાર સંયત "समिए" ઈર્યાસમિતિ આદિ પચીસ ભાવનાઓથી યુક્ત "सहिए" જ્ઞાનદર્શનથી યુકત અને "संवुडे" કષાય અને ઇન્દ્રિયોના સંવરણથી યુકત થઈને "सया" સદા "जयणघडणसुविसुद्धदंसणे" પોતાના તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન